॥ श्रीः ॥

श्री वाल्मीकिमुनि प्रणीतम् ।

बालमीकीयरामायण

भाषा सातो काण्ड

अनुवादकर्ता

पं० रामेश्वरदत्त पांडेय साहित्याचार्य कृत

भाषा अनुवाद ।

प्रकाशक—

बाबू हरिनारायण वर्म्मा बुक्सेलर बनारस ने

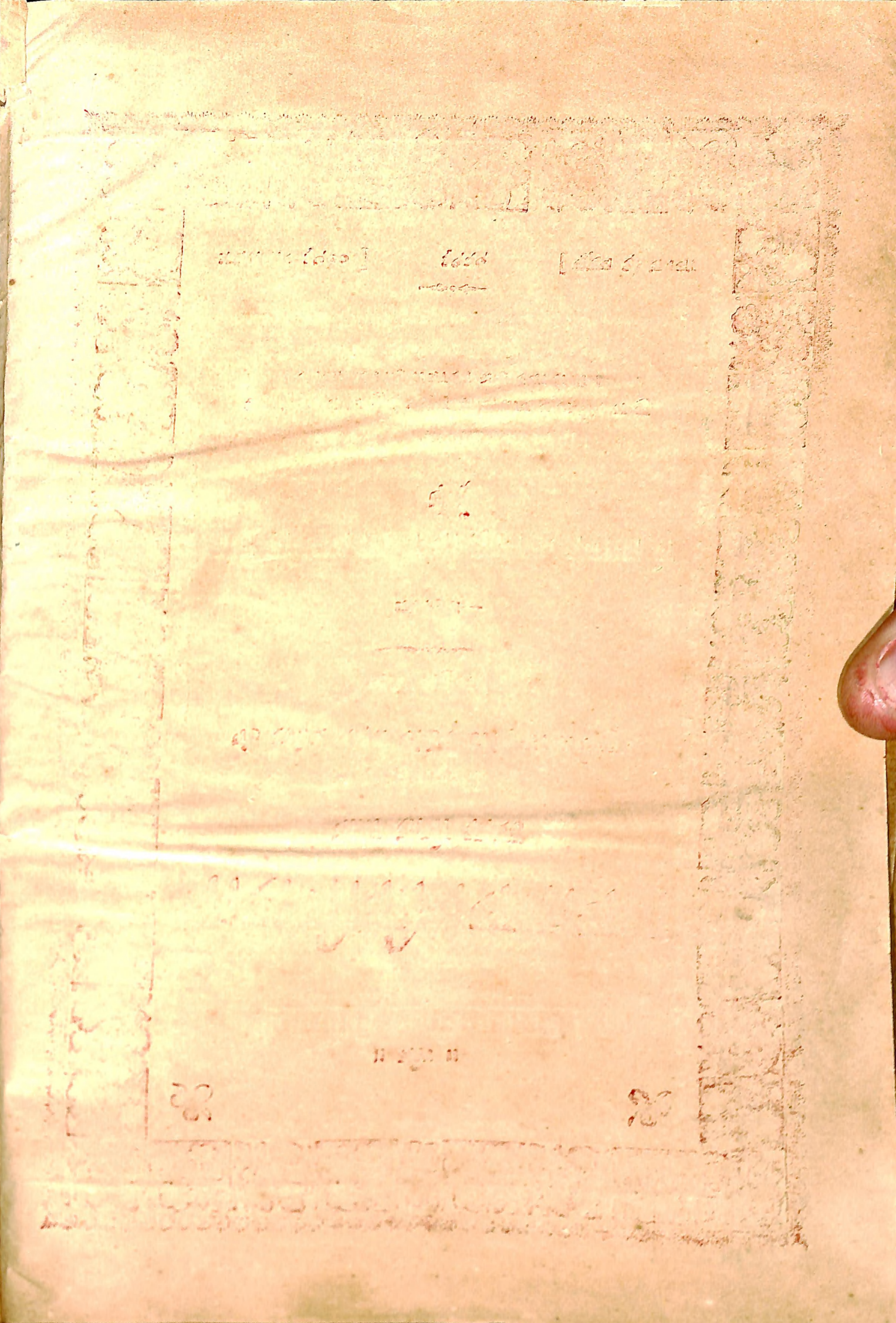
बंबई

टाईप में छपाकर प्रकाशित किया ।

अस्यपुस्तकस्य पुन मुद्रण अधिकार राजनीय मानु
सारेण प्रकाशयीत्रास्व वशे स्थापीता ।

Printed by, Manager Mahes Persad at the
Satayaram Printing works, Medagin, Benares City.

प्रथमबार १५००] १९२५ [मूल्य ६) रुपया



* श्रीगणेशाय नमः *



वाल्मीकिय रामायण महात्म्यम् ।

कलुष हारिणं सुन्दरं रामं शुभ्रमतिञ्च । वन्देहं मनसा गिरा श्री मैथिली पतिञ्च१
भजरामं सीतापतिं दुर्व्यसनानि विहाय।कुरुहरिपद भक्तिंसदा भवसागर तरणाय२
पुण्यश्री भगवत् कथाऽमृऽतांनरो दाधेति।नोलभते क्लेशं क्वचि न्नित्यं सुखं समेति
चरीकर्त्तुं मेंमंगलं जरीहर्तुं जड़ताञ्च । दरीदर्तुं दशरथ सुतो रामोनिर्धन ताञ्च
अयि भगवत्ति भारत्यरं मम सन्निधिंसमेहि । वर्द्धयस्व बुद्धिंचमे सर्वानन्दं देहि॥५॥

समस्त जगत के शरण श्रीराम जीके विना मनुष्य की कोई गति नहीं, जोश्रीराम जीके नाम स्मरणसे सकल पाप दग्ध हो जाते हैं ऐसे रामजी के कार्यों को नमस्कार है, जिस रामनाम के माहात्म्य को सुनकर काल डर जाता है संपूर्ण जगत जिस रामचन्द्र जीके आधीन है अर्थात् जोभगवान् सृष्टि पालन नाशके स्वामी हैं ऐसे श्रीरामचन्द्र जी को नमस्कार है ॥ १ ॥ श्रीजानकी जीके सहित चित्र कूट पर्वतपर निवास करने वाले और भक्तों को अभय दान देने वाले परमानन्द रामचन्द्र जीको वारवार नमस्कार है ॥ २ ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश आदि देवता जिसके आधीन होकर जगतका कार्य करते हैं ऐसे विशुद्ध आदि देव श्रीरामचन्द्र जीको नमस्कार है ॥ ३ ॥ एक समय पुष्कर क्षेत्रमें उपस्थित ऋषिमण्डल सूतजीसे हाथ जोड़कर पूछे हेभगवन्! आपसे जोकुछ प्रश्न किया उसका उत्तर पाकर अपना सन्देह निवृत्त किया, अब एक और सन्देह है कृपाकर दूर कीजिये, हेभगवन्!

धर्मके प्रवर्त्तक हमलोगों को आनन्द देनेवाले परम पवित्रतीर्थ आपही हैं । हेभगवन् आपने जो कुछ वेदविहित धर्ममार्ग बतलाये हैं वहसब कलिमें नाशको प्राप्त होजायेंगे स्थावर जङ्गम प्राणीमात्र सदा अधर्म में निरत रहेंगे और नाना प्रकार के यातनाओं को भोगेंगे । जबघोर कलियुग प्राप्त होगा तब मनुष्य अपना कर्म धर्म छोड़कर लोभग्रस्त होकर पाखण्डी होजायेंगे । कलियुग वासी मनुष्य अत्यन्त कामी छोटी शरीर वाले लोभी अपने में द्वेष करने वाले अर्थात् पिता पुत्र से स्त्री पति से भाई भाईसे विरोध करने वाले मनुष्य होंगे । कलि-युगवासी मनुष्योंकी थोड़ी आयुष्य होनेपरभी अधिक सन्तान उत्पन्न करेंगे । स्त्रियां अपने सुख विलास में सदा लीन रहेंगी वेश्याओं के समान उनका आचरण होगा और अपने पतिमें प्रेमनकर अपने पतिकी आज्ञाको न पालन कर क्रोधी दरिद्र कुरुप-भी दूसरे पुरुष में अनुराग करेंगी । कलिके पुरुष सभी झूठे लबार क्रिया हीन और वाचाल होंगे । स्नेहसंबंध यन्त्रित होकर मित्रों से याचना करेंगे पढाने वाले उपाध्याय शिष्यों से धनकी इच्छा करेंगे, पाखण्डियों के सङ्गति से पाखण्ड में सदा संलग्न रहेंगे जब घोर कलियुग का प्रवेश होगा तब उनमनुष्यों के येसब दुराचार होंगे उस समय उन मनुष्यों की निष्कृति किस प्रकार होगी । हे महामति भगवान् सुतजी, उज्वल ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न होकर यज्ञोपवीत और शिखा को त्याग कर जब ब्राह्मण अपने धर्मको छोडने वाले होंगे तबउन ब्राह्मणों कि निष्कृति किसप्रकार होगी । कलियुगमें राक्षस ब्रह्मयोनि में उत्पन्न होंगे और आपस में परस्पर विरोध रखकर भगवद धर्मके बन्धक होंगे । कलियुग वासी ब्राह्मण अपने धर्मके अनुष्ठान से रहित हो कर भगवद् धर्मके न मानने वाले होंगे, और अपने कर्मधर्म को त्यागकर उत्तम वस्त्रधारण करके अपने को श्रेष्ठ मानने वाले होंगे। और कलियुग वासी ब्राह्मण नाना प्रकारके पापकर्म में लिप्त होकर अपने कर्मोंसे रहितहो जिससमय पृथिवीपर भ्रमण करेंगे हे भगवन

उनब्रह्मणों कीनिष्कृति किसप्रकार होगी । शूद्रके दिये जलको और पक्वान्नको और शूद्रोंके साथ भोजन करने वाले अथवा शूद्रके अन्नको खाने वाले ब्रह्मणों की शुद्धि किसप्रकार होगी,हेभगवन् जिस प्रकार इन कलियुग वासी मनुष्यों पर देव देव जगद्गुरु परब्रह्म परमेश्वर प्रसन्न होकर इनका उद्धार करेंगे, हे करुणासिन्धु सूतमहर्षि वहकथा हमलोगों को सुनाइये । हेमुनिश्रेष्ठ इस हमारे सकल प्रश्नोको कहकर हमारे मनके सन्देह को छुडाइये आपके अमृत रूपीवचन से हमलोगों का यहहार्दिक क्षोभ अवश्य नाशको प्राप्तहोगा। ऋषिश्वरों के वचन को सुनकर सूतजीबोले हे ऋषिश्वरों नारदजीने जोकथा सनत्कुमार मुनिसे कहाहै वही कथा आपलोगों को सुनाताहूं, आप लोग सुनिये । सकल वेदशास्त्रों के सम्मत से संपन्न रामायण महाकाव्य को सुनने से मनुष्यों का समस्त पाप और दुष्टग्रहों का निवारण होजाता है, जिस रामायण कथा के सुनने से दुःस्वप्न नाश होजाताहै और संसार के समस्त सुखका भोग प्राप्तहोता है अन्तमें परम पद मिलता है वह रामचन्द्रके कथाको श्रवण करने से सब प्रकार के पापों से छुटकर सकल कल्याण को प्राप्त करता है । धर्म अर्थ काम मोक्ष के महाफल को देनेवाले अपूर्व पुण्य के फलको देनेवाले रामचन्द्रजीके कथा को समाहित होकर आपलोग सुनिये । श्रीभगवान् रामचन्द्रजी के रामायण कथाको सुनने से महापातक और सकल प्रकार के पातक जैसे नाशहोते हैं जसे तूल समूहको अग्निभस्म करदेता है । जो मनुष्य रामायण का पाठ निरन्तर करते हैं वही संसार के हितहैं और वही कृत कृत्यहोकर सर्वशास्त्र वेदके जानने वालेहोंते हैं । हे ऋषिश्वरो जो मनुष्य भक्तिसे इस रामायण रूपी अमृत कथाको कहते सुनते हैं उन मनुष्यों को धर्म अर्थ काम मोक्ष चारो पदार्थ मिलते हैं । जिस मनुष्य को रामायण मे महाप्रीति होगी उसके जन्मान्तर के पाप निश्चय नाशको प्राप्तहोंगे । निरन्तर पापमें लिप्त मनुष्य और पुराणों को नसुने तोभि केवल रामायण कथाको कहने व

सुनने से सबपाप छुटजाते हैं. और अन्तमें परम पदमिलता है। इसलिये हे ब्रह्मणों रामायण इसपरम काव्य को सुनिये जिसके सुनने से मनुष्य जन्म जरा आदि दोषसे रहित होकर विष्णुके समान होता है। जिसपरब्रह्म परमेश्वर के शरीर भेद होकर ब्रह्मा विष्णु महेश जगत की उत्पत्ति पालन और नाश करते हैं, उन्हीं आदि देव परब्रह्म परमेश्वर को हृदय में रखकर योगी लोग मुक्त होते हैं। जरामरण से रहित होकर अनन्त शक्ति सम्पन्न निर्गुण वेदान्त वेद्य अपने तेजसे प्रकाशित जिस भगवानकी महिमाको वेदशास्त्र सदास्तुति करता है उन भगवान को नमस्कार कर मैं रामायण के माहात्म्य को सुनताहूं। ज्येष्ठ माघ चैत्र के शुक्ल पक्षमें नवाह अर्थात् नवदिनमें समाप्त होनेवाली इस रामायण कथाको सुने। इसमनोहर अमृत रुपी रामायण कथा को परायण नवदिन में सुनने से मनुष्यों का सब पाप नाश होकर अन्तमें परम पदमिलता है। इस नवाह रामायण कथाको एकाग्रचित्त होकर कहने और सुनने से मनुष्य अपने इक्कीस कुलके सहित रामभवन में वासकरता है। यह स्वर्ग मोक्षको देनेवाले आदि काव्य रामायणको चैत माघ कार्कि के शुक्ल पक्षमें इस नवाह पारायण को ब्राह्मण के मुखसे सुने, इस घोर कलियुग में सबप्रकार के धर्मों को छोडकर अमृतरुपी रामायण कथाको नवदिन पर्यन्त सुनने से मनुष्यों के सब पापछुट जाते हैं। इसघोर कलियुग में जो ब्राह्मण नित्य रामायण का पाठ करते है उनकेपास कलियुग का वास नहीं रहताहै अर्थात् रामायण पाठके प्रभाव से वह सब प्रकारके पापों से मुक्त रहते हैं। जिसके गृहमें नित्य रामायण कथा होतीहै उसकागृह तीर्थस्वरुप जाननाचाहिये, हे ऋषिश्वरो मनुष्यकी शरीर तबतक पापमयहैं जबतक रामायण की कथा अच्छी प्रकार कानके राहसे नहीं पिया है इसकथा के श्रवण मात्रसे मनुष्य सबपापों से छुटजाता है। सूतजीने कहा, "हेऋषिश्वरों संसार में यहरामायण कथा दुर्लभहै कोटि जन्मके सञ्चित पुण्य के

उदय होने से यह कथा सुनन में मनुष्यकी भक्ति होतीहै। हे ब्रह्मणों ज्येष्ठ माघ चैत्रके शुक्ल पक्षमे इसरामायण की अमृत रुपी कथाको सुनकर गौतम ऋषिके शापसे राक्षस की शरीर से छुटकर सौदास परम पदके लाभकिया। भक्ति श्रद्धासे युक्त होकर जो मनुष्य इस रामायण कथा को कहै और सुनैंगे वह महापात्तक और उपपातक की राशिसे छुटकर परम पदको प्राप्तकरैंगे।

रामायणे माहात्म्ये प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

फिरभी भगवान् सूतजी से हाथजोड़कर ऋषिश्वरों ने कहा,-स्वामिन् ? नारद और सनत् कुमार की भेट कहां हुई, और नारदजी ने सनत् कुमार को कैसे सबप्रकार के धर्मोका उपदेश दिया और कौनसे पुण्यक्षेत्रमें वह दानों ब्रह्मवादी इकट्ठा हुये थे और नारदजीने कौन कोन धर्म उपदेशकिया हेभगवन् वहसब हमलोगों से कहने में आप समर्थ हैं कृपापूर्वक कहिये। सूतजीने कहा हेऋषिश्वरो सनक सनन्दन सनत्कुमार सनातन येचार ब्रह्माजी के पुत्रहैं, ये चारो भाई सदा एकस्वभाव में रहकर भगवान के भजन में मग्न रहते है इनपर कभी काम क्रोधादि शत्रु आक्रमण नहीं कर सकते यह चारो निरहंकार विष्णुके भक्त महात्मा और परब्रह्म परमेश्वर के चरणारविन्द में सदा लीन रहा करते हैं, हजारो सूर्यके समान तेजस्वी सत्यवादी और सदा मोक्षकीइच्छाकरने वाले हैं। एकसमय ब्रह्माके पुत्र सनकादि मुनि ब्रह्माकी सभा देखने केलिये सुमेरुगिर पर्वत के शिखर परगये, उस सुमेरु के शिखर पर विष्णुके पाद से उत्पन्न पुण्यशीला गङ्गा नदीको देखकर तेजस्वी सनकादि मुनि गङ्गाजी के शीतल जलमें स्नान करने लगे। हेब्राह्मणो इतनेमें घूमते हुये गङ्गाजीके तट पर देवर्षि नारद उपस्थितहुये। नारदजी सनकादि मुनीश्वरों को नदी में स्नान करते देखकर नारायण अच्युत अनन्त वासुदेव जनार्दन यज्ञेश यज्ञपुरुष राम विष्णु इत्यादि जगत को, पवित्र करने वाले भगवान के नामों को उच्चारण करते और लोकको तारातरण करने

वाली भगवति गंगाजीकी स्तुति करते हुये नारदमुनि सनकादि मुनियों के समीपमेंआये । तेजस्वी सनत् कुमार आदि मुनियों ने नारदजीको आते देखकर सष्टाङ्गप्रणामकिया और यथायोग्य आसन अर्घ्य पाद्यपूजन करके नारदजीकी स्तुतिकिया इसके बाद नारदमुनि वहाँबैठ, उससभाके मध्यमें नारायण परायण सनत् कुमार मुनियों में श्रेष्ठनारदजीसे पूछा । हेनारदजी अपातीनोकाल और तीनो लोक की बात जानने वाले है और आपसे बढकर हरिभक्तों में दूसरा कोई नही है, इसलिये कुछभगवान का गुण सुनाकर मुझे कृतार्थ कीजिये। ऐसाकहकर सनत् कुमार जी नारदसे पूछे कि जिसजगवान से यह समस्त स्थावर जङ्गम मय संसार उत्पन्न और नाश होता है और जिसके चरण से गङ्गा जी निकल कर संसारको पवित्र करती हैं उन परमेश्वर को जानने का क्यामार्ग है, हेभगवन् अनुग्रह पूर्वक आप मुझसेकहें । सनत्कुमार जीके प्रश्न को सुनकर नारद मुनि प्रसन्नता पूर्वक बोले हे सनत्कुमार तुम सब धन्य हो तुमारे समान भगवान का भक्त दूसरा कोई नहीं है जो तुमलोग चारोपहर श्रीनारायण जी के पूजाध्यान और चर्चामें मग्नरहते हो । हेसनत्कुमार जी जो भगवान आद्यन्त से रहित मनो वाङ् अतीत सगुण निर्गुण स्वरूप ज्ञान और अज्ञान स्वरूप धर्माधर्म स्वरूप विद्या अविद्या स्वरूप होते हुये भी सदा अपने स्वरूप में रहते हैं ऐसे श्रीनारायण जीको वारवार नमस्कार है। जो नरका सुर आदि दैत्यों को नाश करने वाले अपने भुजाके सहारे पर ब्रह्माण्ड को धारण करने वाले पृथिवी के भारको दूर करने वाले श्रीरामचन्द्रजी को नमस्कार है । जोपरमेश्वर अपने शरीर को चार स्वरूप में विभाग कर बानरों कीसेना सहित राक्षसों को मार पृथिवी का भार हटाया ऐसे श्रीरामजी को नमस्कार है । इसीप्रकार भगवान के अनेक चरित्र हैं हे सनत् कुमारजी, और उन परमेश्वर के नामों कीसंख्या करोडों वर्ष पर्यन्त मेभी कोई नहीं कहने को समर्थ है । भगवान के नामों की महिमा का वर्णन चोद हो मनु

और वडे वडे मुनियों से नहीं होसकता उसको मैं अपनी लघुवुद्धि से कैसे कर सकताहूं हे सनत्कुमार जी जिस भगवान के नाम स्मरण अथवा श्रवण मात्र से बड़ेबड़े महापातक नाशहो जाते हैं उस नाम माहात्म्य का वर्णन मैं कैसे कर सकता हूं। घोर कलियुगमें जो ब्राह्मण रामायण महाकाव्य को नित्य पढैं और सुनैगे उनको मैं नमस्कार करताहूं। ज्येष्ठ चैत्र माघके शुक्ल पक्षमें नवदिन पर्यन्त इस अमृत रूपी रामायण कथाको सुनकर गौतम के शापसे राक्षसी शरीरमें प्राप्त सौदामा रामायण के प्रभाव से राक्षस की शरीर से छूटकर मुक्तिको लाभकिया। सनत् कुमार जीनेकहा, कि सकल धर्मों के फलको देनेवाले रामायण को किसने कहाहै और सौदाम को महर्षि गौतमनें क्यों शापदिया, और रामायण के प्रभावसे कैसे सौदाम की राक्षसी शरीर छूटी, हे नारद जी दया पूर्वक इस कथाको मुझसे कहिये हे नारदजी कहने और सुनने मात्रमें यहकथा पापको नाश करने वाली है। नारदजी ने कहा- हे सनत् कुमारजी इस रामायण कथाको महर्षि वाल्मिकिजीनें अपने मुखारविन्द से गाया है नवदिन पर्यन्त सुनने वाली इस अमृत रुपी रामायण कथा को सुनिये। सत्ययुगमें धर्म कर्म विशारद सोमदत्त नामके एक ब्राह्मण रहते थे। वहसोमदत्त ब्रह्मवादि गौतममुनि से सव प्रकार के धर्मोंको शास्त्र और पुराणों को पढकर ज्ञानी और भगवानका भक्त होगये, एकसमयसोमदत्त शिवजीकी पुजामें लीन होरहेथे, उसीसमय सोमदत्त केगृहमें उनके गुरु महर्षि गौतम जी आये परन्तु पुजामें तन्मय होनेके कारण सोमदत्त गुरुको प्रणाम नकिया। तेजसम्पन्न भगवान् गौतम क्रोधितहोकर बोले हेब्राह्मण हमारे वताये कर्मों को तूप्रसन्न होकर करताहै, सर्वजगद्गुरु शिवजी की तूपूजा करताहै और मुझको अपने आश्रममें आनेसेभी प्रणाम नकिया, इस समय जोतू मेरी अवहेलना कियाहै इसके बदले राक्षस होजाओ - गुरुके मुखसे परुष वचन को सुनकर सोमदत्त हाथजोड़कर बोले,

हेभगवन आप अन्तर्यामी हैं आपमनकी बातों को जानने वाले है हेभगवन आपके समीप जो कुछ मैंने अपराध किया उसको क्षमा करने योग्य हो, गौतम जी बोले हेशिष्य जेष्ठशुक्लपक्ष में नवदिन पर्यन्त अमृत रूपी रामायण कथाको भक्तिपूर्वक बारह वर्ष सुनने से तुम मुक्त होजाआगे ॥ गुरुकी कृपाअपनें ऊपर देखकर सोमदत्तने कहा-हेभगवान् रामायाण कथामें किसके चरित्रहैं और किसने बनाया है यहसबभी संक्षेप से मुझसे कहिये, ऐसी प्रार्थना पूर्वक गुरुके चरणों को प्रणामकिया । महर्षि गौतम जी बोले हेविप्र इस अमृतरूपी रामायण कथाको वाल्मिकि मुनिनें अपने मुखार विन्दसे गाया है इस रामायण कथाको सुनकर पापसे छुटजाओगे और फिर भी अपने स्वरूप को प्राप्त करोगे जो नारायणजी देवताओं के सहाय ताके लिये रामावतार लेकर रावणआदि राक्षसों को नाश किया है उनश्री रामचन्द्रजीके पवित्र चरित्र को सुनो कार्तिक मासके शुक्ल पक्षमें नवाह रामायण कथाको सुननेसे मनुष्यों के सब पाप छूट जाते हैं, सोमदत्त को ऐसा उपदेश देकर सर्वसंपन्न गौतम अपने आश्रम को गये । ब्राह्मण सोमदत्त दुःखी होकर राक्षसी शरीर को स्वीकार कर सौदामा नामसे घूमने लगा क्षुधा और तृषा से पीडित और क्रोध परायण होकर काले सर्प के समान भयंकर स्वरूप को धारण कर घोर बनमें घूमने लगा अब नाना प्रकार के मृगाओं को और मनुष्यों को पशु पक्षियों को बानर आदि जन्तुओं को खाने लगा, उनमरेहुये जन्तुओं के रक्त विरक्त के हड्डियों से वह जङ्गल की भूमि डरावनी सी होगई । दोमहीना में सौयोजन की भूमिको जन्तुहीन करके दूसरेबनमें पहुँचा, वहांभी मनुष्यों को तथा अपनेखाने योग्य पशुओं को भक्ष करता हुआ वह सुदामा राक्षस नर्मदा नदीके किनारे पहुंचा । और वहां बास करने लगा । राक्षस को वहां रहने सेवहां के समस्त जीव व्याकुल होगये । अकस्मात् एकदिन गङ्गाजलको कन्धेपर लिये हुये और भगवान् बिश्वेश्वर की स्तुति करतेहुये भगवान् रामचन्द्रजीके गुणको गातेहुये

गर्ग मुनि आये। मुनि को समीप में आते देखकर सुदामा राक्षस अपने दोनों हाथों को आगे से उठाकर आजमुझे अच्छा आहार मिला यह कहता हुआ मुनिके पास पहुंचा। परन्तु मुनिसे उच्चारित भगवान के नामों को दूरसे ही सुनकर वह राक्षस व्यवस्थित हो गया और बोला हे महाभाग महात्मन्! आपके लिये नमस्कार है आप अपने मुखार विन्दसे जो भगवान का नाम सुनारहे हैं उस नाम स्मरण माहात्म्य से राक्षस भय भीत होकर दूरभागगया। हेमुनिनाथ! पहिले मैंने करोडों सहस्र ब्राह्मणों का नाश किया और उनके पवित्र मांससे अपना पालन किया परन्तु इससमय इस रामनाम के स्मरण कवचसे हमारा भय आपको नहीं होसकता। हेमुनि आप सदा रागद्वेष से रहित हो कर भगवान का भजन करते हैं हेभगवन्! मुझ अधम पातकी को श्रीरामचन्द्र जीके कथा प्रभाव से रक्षा कीजिये। राक्षने कहा हेमुनिनाथ मैंने कुछवर्ष पहिले गुरुका अपमान किया था जिसके बदले यह राक्षस योनि मुझे मिली इस योनिकी प्राप्ति होने से मैं क्रोधित हो कर गुरुके शरणापन्न हुआ, पीछेगुरुजी अनुग्रह पूर्वक मुझको यह सिखलाया कि वाल्मीकि मुनिने भगवान् रामचन्द्रकी कथा का निबन्ध रामायण इसनामसे प्रकाशित कियाहै, उस रामायण कथाको ज्येष्ठके शुक्लपक्ष में यत्न पूर्वक नवदिन पर्यन्त सुनने से मनुष्य सबपापों से छूटकर परम पदको प्राप्तकरता है। तुम भी रामायण कथाको सुनकर इस महापातक से छूटजाओगे। इसलिये हेमुनीश्वर मैं गुरुके वचन प्रमाण प्रतीक्षा करताहूं, अब आपके दर्शन से अवश्य मेरापातक छूट जायगा। आप कृपा पूर्वक अमृत रूपी रामायण कथा मुझे सुनाकर मेरा उद्धार कीजिये। नारदजीने सनत्कुमार आदिमुनियों से कहा कि हेमुनीश्वरो रामनाम के उत्तम माहात्म्यको राक्षस के मुखसे सुन कर गर्गमुनि विस्मित होगए। किन्तुरामनाम परायण गर्गमुनि कृपा पूर्वक सुदामा राक्षस से बोले, हेराक्षसेन्द्र हेमहाभाग यदि इसअवस्था में भी तुमारी बुद्धि भगवान के चरण कमल में लगीहै तो इस ज्येष्ठके शुक्ल

पक्षमें रामायण कथाको सुनो । हेराक्षसेन्द्र इस रामनामका ऐसा माहात्म्यहै कि श्रीरामचन्द्रजीमे जिस मनुष्यकी भक्तिहै अथवा जो मनुष्य सदा भगवान की पूजा ध्यान मे मग्न रहता है उसको ब्रह्मादिक देवता भी बाधा नहीं पहुँचा सकते । जिस रामचन्द्रजीके चरण कमल का ध्यान ब्रह्मा विष्णु महेश सदाकरते हैं और देवता सिद्ध चारण गन्धर्व जिस भगवानके गुणको सदागाते हैं उन पारब्रह्म परमेश्वर श्रीरामचन्द्र जीके कथाको सुनो । इसज्येष्ठमासके शुक्लपक्षमें अमृतरूपी रामायण कथाको नवदिन पर्यन्त सावधान होकर सुनो । गर्गमुनिके कहने अनुसार वह राक्षस नवाह रामायण कथाको सुनकर वह ब्राह्मण राक्षसी शरीर से छूटकर देवताके समान बनगया, इसरामायण कथाके प्रभाव से भगवान के चतुर्भुजी मूर्तिका साक्षादर्शन कर ब्राह्मण वैकुण्ठ लोकको गया । नारदजीने सनकादि मुनीश्वरों से कहाकि हेमुनिश्रेष्ठ जिस रामचन्द्रजीके कथाश्रवण मात्र से महापातक दग्ध होजाते हैं, जो कोई मनुष्य रामायण कथाको भक्तिपूर्वक कहते व सुनते हैं वह संपूर्ण पापों से छूटकर परागतिको प्राप्त होतेहैं । जोकोई अमृत रूपी रामायण कथाके अध्यायको अथवा अध्याय के पादको नित्य कहते सुनते हैं वह मनुष्य तत्क्षण पापों से छूटकर विष्णु लोक को जाताहैं । हेसनत्कुमार जी जो कोई सुदामा और गर्गमुनिके आख्यान को श्रद्धासे नित्य कहेंगे व सुनेंगे वह सर्व पापों से छूटकर गंगा स्नान के फलको प्राप्त करेंगे ।

इति श्री रामायण महात्म्ये राक्षस विमोचनं नामद्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

इतनी कथा को सुनकर सनत्कुमार मुनि नारद जी से पूछा, हे मुनिनाथ ! आपके मुखसे इस अमृत रूपी रामायण कथाके माहात्म्य को सुनकर हृदय गद्गद् होगया फिरभी आप इस अमृत रूपी कथाको दूसरे मासमें सुनने के फलको फिरभी कहिये । हेनारद जी इस अमृत रूपी कथाको सुनने से मन तृप्तनहीं होता है । नारदजी ने कहा हे मुनीश्वरो आपलोग धन्य हैं जो श्री रामचन्द्र जीके कथाको भक्ति

पूर्वक सुनने में उद्यत होरहे हैं, आपलोगों को अन्यमास में रामायण सुननेके फलको कहते हैं, हे सनत्कुमार जी जिनका मन श्री रामचन्द्र जीके चरितामृत कथाके महात्म्य को सुनने में लगा रहता है अथवा जिनका मन सदा आत्मविचार में लीन रहता है वैसे ब्रह्मवादी मुनीश्वर दुर्लभ हैं। हे मुनीश्वरो आपलोगोंकी प्रसन्नताके लिये पुरातन इतिहास कहते हैं सुनिये, यह इतिहास सकल पापोंको और सकल प्रकार के रोगको नाश करनेवाला है। हे सनत्कुमार जी। द्वापरके समय में चन्द्रवंशियोंमें समस्त भूमण्डल का राजा सुमति नामके हुये थे । वह सुमंति नाम राजा अत्यन्त धर्मात्मा सत्यवादी था, वह अपने विभव में इन्द्रलोक का सामना करने वाला था और निरन्तर रामपूजामें परायण और रामकथा में सदा अनुरागी था, सदा अहङ्कार रहित होकर भगवान् की पूजा और गौ ब्राह्मणों का सेवक था, अपने दण्डभागमें समदर्शी था अर्थात् पिता पुत्र शत्रुमित्र में समान भाव रखने वाला था। सकल प्राणियों पर दया रखने वाला था सदाशान्त और कृतज्ञ और कीर्तिमान् था। सुमति राजाकी स्त्री सर्वलक्षण संपन्न पतिव्रता पतिप्राण सत्यवती नाम की रही । वह दोनो स्त्री पुरुष नित्य श्रीरामचन्द्र जीके कथामें परायण अन्नदान में निरत और जलदान में परायण रहते थे । वह राजा इस पृथिवी पर असंख्य तालाब बगीचा बावली बनवाया था। रामपरायण राजा नित्यही अमृत रूपी रामायण कथा को भक्ति पूर्वक कहने सुनने में प्रवृत्त रहता था। इस प्रकार धर्मात्मा राजाकी और उनकी सत्यवती नाम स्त्री की स्तुति देवलोक में देवगण मुक्त कण्ठसे करने लगे। सुमति राजाकि धर्मज्ञता तीनो लोक में प्रगट होगई। अचानक एक समय राजाको देखने की इच्छा से अनेक शिष्यों के सहित विभाण्डक मुनि आये। राजा विभाण्डक मुनिका आगमन सुनकर स्त्रीके सहित आगेसे जाकर सन्मान पूर्वक शिष्यों समेत मुनिको अपने स्थानपर लिवा आये। अर्घ्य पाद्य आदि उपचारों से पूजन करके अपने से श्रेष्ठ आसन पर मुनिको बैठाये।

इसके उपरान्तशिष्यों सहित मुनिका आतिथ्य सत्कार करके राजा अपने मुनिके आसन से नीचेके आसन पर बैठ कर विभाण्डक मुनिसे विनय पूर्वक बोले–हे मुनिश्वर आप के आगमन और दर्शन से हम कृतकृत्य होगये। हे भगवन् सज्जनों के दर्शन मात्रसे मनुष्य सब प्रकार के दुःखों से छूटकर सुखको प्राप्त करता है।

हे मुनिश्वर वहां सज्जनों के संगति में प्रेम होताहै वहां समस्त संपत्तियां निवास करती हैं। और वहीं मनुष्य तेज कीर्ति धन और पुत्र आदि के सुखको पाता है, जिस मनुष्यका मन बड़ोंकी सङ्गति चाहताहै उसका कल्याण प्रतिदिन होता है, हे मुनिनाथ जो मनुष्य ब्राह्मण के चरण कमलको शिरोधार्य करता है वही सकल तीर्थों में स्नान करने वाला पुण्यवान है इसमें कुछभी संशयनहीं है। हे मुनिनाथ हमारा जो कुछ राज्यधन तथा स्त्री पुत्र परिवार आदि हैं वह सब आपके हैं, हे ब्रह्मन् आप जोकुछ आज्ञा देवें सो मैं करूँ। इस-प्रकार विनय पूर्वक राजा विभाण्डक मुनिसे प्रार्थना किया, विभाण्डक मुनि राजा की प्रेमभरी बातों से प्रसन्न होकर राजा के शरीर को स्पर्श करते हुये बोले-हे राजन् जोकुछ धर्म तुमने कहा वह सब तुमारे कुलोचित धर्महैं, तुमारे पूर्वजके राजाओं नेभी इसी तरह धर्मका पालन किया था,। पीछे परम पदको पहुंचे। हे राजन हम तुमसे प्रसन्न हैं, तुम भगवान के भक्तों में श्रेष्ठ हो, हे महाभाग ? तुमाग कल्याण हो इस समय जोकुछ हम तुमसे पूछैं तुम निःसन्देह उसको कहना, हे राजन् परब्रह्म परमेश्वर की लीला तथा अवतारों की चर्चा बहुत से पुराणों में है, और जहाँपुराणो की कथा होती है वहाँ समस्त देवता सकल तीर्थ और नदियां एकत्र होजाती हैं, इतने उत्कट फलको देनेवाले और पुराणों को छोड़कर रामायण कथा में तुमारी विशेष इच्छा रहती है इसका क्या कारण है, और तुम माघमासमें व्रत पूर्वक नवाह पाठ रामायण का कहते और सुनतेहो इसका क्याफल है, हे राजन् तुमारी स्त्रीभी नित्य रामचर्चा मेंलीन रहती है इसका वृत्तान्त

तुम मुझसे कहो, विभाण्डक मुनिके बचन को सुनकर राजा प्रसन्न पूर्वक हाथजोड़कर बोला हे भगवन् इस दोनों स्त्री पुरुष का चरित महानिन्दनीय और लोकमें आश्चर्य्य को देनेवाला है, हे ब्रह्मदेव आपके पूछनसे मैं अवश्य कहूँगा। हे मुनिनाथ! पूर्वजन्म में मेरा शूद्र के घर जन्म हुआ था,और मेरा नाम मालिनि था। मैं प्राणियों का सदा अनिष्ट चिन्तन करता हुआ कुमार्ग में प्रवृत्त रहता था। अपने धर्म कर्मो से सदारहित होकर अत्यन्त लोभी और देवताओं के द्रव्य अथवा यज्ञ भागका अपहरण करने वालाथा, महापातक करने वालों के संसर्ग में रहता था और देवताओं के द्रव्य से जीविका करने वाला था। गौ और ब्राह्मणों को वध करने में दूसरे के धनको चुराने में तथा प्राणियों को मारने में मुझे अत्यन्त प्रेमरहता था। सज्जनों के संग विवाद मे तथा पाप कर्ममें मेरी अधिक रूचिरहती थी। और मैं बड़ेप्रेमसे वेश्याओं के घरमें रहकर उनके सङ्ग अपने दिनको व्यतीत करता था। इसीतरह कुछदिन बेदशास्त्र की मर्यादा और बड़ों के बचन को न मान कर बहुत दुर्व्यवहार किया। पीछे परिवार वालों ने मेरे चाल चलन से दुःखी होकर मुझे घरसे बाहर करदिया। मैं अकेला वनमें घूमने लगा। मृगा आदि जङ्गली जन्तुओंके मांससे अपना पेटभरता हुआ दुःखके सहित अकेला निर्जन वनमें रहने लगा। एकसमय भूँख और प्यास तथा निद्रासे क्लेशित होकरभ्रमणकरते हुये अकस्मात् वसिष्टमुनिके आश्रम में पहुंचे। वहां एक सुन्दर सरोवर आश्रमके समीप में दीखपड़ा। जिस सरोवर पर नाना प्रकार के वृक्ष और लतायें लगी हैं. और वहां हँस आदि नाना प्रकार की पक्षियां आपसमें कलोल कररहे हैं, अनेक तरह के सुगन्धित पुष्पफूले हैं और वहां शीतल मन्द सुगन्ध वायू चल रही है, वायूके झकोरों से पुष्पोंके पराग गिरकर सरोवर के जलको आच्छादित कर दियाहै,। ऐसे पवित्र वसिष्ठ मुनिके आश्रम के समीप की शोभाको देखकर सरोवर के जलको पीलिया, कुछसमयतक विश्राम करके कन्द

मूल आदिसे अपनी क्षुधाको भी शान्त किया और उसी सरोवर पर निवास करने के लिये वृक्षोंसे गिरेहुये पत्तों को और आश्रम के सूखे काष्ठों को लेकर पर्णकुटी बनाये और उसीमें निवास करने लगे । उस वनमें व्याध स्वरुप होकर अपने जीवन पर्यन्त बहुत से मृगा आदि वन जन्तुओं को मारकर अपनी जीविका करने लगे । इसके बाद निषाद की कन्या विन्ध्यदेशसे काली नाम की यह स्त्री आई । यह भी अपने बन्धुवर्ग वालों के त्याग करदेने से दुःखित और भूख प्यास से पीडित अपने जीवन के रक्षाकी उपाय सोचती हुयी और अकेली घोर वनमें भ्रमण करती हुई दैव योगसे मेरी कुटीके पास पहुंची । ग्रीष्म काल के घामसे पीडित और क्षुधा से पीडित इस अनाथिनी को देखकर मेरे हृदय में दया देवीने प्रवेश किया, मैं दयायुक्त होकर इस को भोजन के लिये मांस तथा कन्दमूल आदि फलों को दिया और जल पीने को दिया, यह मेरे दिये हुये अन्न जलसे सन्तुष्ट होकर वहीं पर विश्राम किया, विश्राम करने के बाद मैंने इसके यथा तथ्य को पूछा-और यह अपना वृतान्त कहने लगी, कि मैं विन्ध्यदेश में मेधास्थान है मैं निषादकी कन्याहूँ मेरानाम काली है मैं पाप कर्माँ में सदा प्रवृत्त रहतीहूं दूसरे के धनको चुराने में पतिव्रताओं के साथ झगड़ा करने में मेरामन लगता है, इस हमारी करणी से दुःखि होकर हमारे परिवार वालों ने मेरा त्याग करदिया, मैं दुख की मारी अपने जीवन को बिताने की चिन्ता करती हुई इस निर्जन बन में इधर उधर घूमती हूं । राजा ने कहा हे मुनिनाथ इस प्रकार काली की दशा देखकर मैं इसको अपनी स्त्री बनाकर बसिष्ठ मुनि के पवित्र आश्रम के समीप पर्णकुटी में इसके साथ रहने लगा । इतनी कथा सुनाकर राजा ने विभाण्डक मुनि से कहा हे मुनिनाथ । एक समय बसिष्ठमुनि के आश्रम में अपनी प्राण रक्षा के लिये कुछ मांसादि लेनेको हमदोनों गये, उनमुनि के आश्रम में नवाह रामायण यज्ञ का आरंभ करते देवर्षिगण को देखा, वह ब्राह्मण मण्डली माघके महीने

में प्रतिदिन क्षुधातृषा को रोककर व्रतपूर्वक रामायण की कथा कहने व सुनने लगे। जब दैव संयोग से हमदोनों भी वहां पहुंचे तब देवर्षियों के दर्शनसे मुझेभी कुछ ज्ञान हुआ कि मै भी इस नवाह पारायण यज्ञ की कथाको सुनू। ऐसा सोचकर हमदोनो दम्पती भी कथाको नवदिन पर्यन्त श्रवण किया, भगवान के उस अमृत रूपी कथाको भक्तिपूर्वक सुनने से तत्काल हमदोनों की मृत्यु हुई। उस रामायण कथा सुनने के प्रभाव से परमेश्वर प्रसन्न होकर विमान के सहित अपने दूतों को भेजा, विमान लेकर विष्णुके दूत आये और हम दोनो स्त्रीपुरुष को विमान पर बैठाकर विष्णुलोकको लेगये, रामायण कथा सुनने के प्रभाव से करोड़ो युग पर्यन्त विष्णुलोक का सुखानुभव किया, इसके बाद विष्णुलोकसे ब्रह्मलोकमें आये उतनेही वर्षतक ब्रह्म लोक में वासकिया इसके उपरान्त शिवलोक में आये वहां भी करोड़ो युग पर्यन्त उत्तमोत्तम सुख का भोग शिवलोक में किया। इसके बाद कालक्रमसे पृथ्वीमें जन्मपाया, यहांभी रामायण कथा सुनने के प्रसाद से अतुल संपत्तिका उपभोग करताहूं। अनिच्छा पूर्वक इसकथा को सुनने मे मैने इसप्रकार अपूर्व सुखलाभ किया, अमृत रूपी इस कथा को भक्ति पूर्वक कहने व सुनने से जन्म मरण से रहित होकर मनुष्य को परमपद मिलता है। इतनी कथा सुनाकर नारदजी सनत् कुमार मुनि बोले हेसनत् कुमार जी विभाण्डक मुनि सुमति राजा के सकल वृत्तान्त को सुनकर राजाको प्रणाम किया और शिष्यों समेत अपने आश्रम को चलेगये। हेमुनीश्वरों श्रीरामचन्द्रजीके लीला से विलसित यह रामायण कथा कामधेनुके समान जानना चाहिये जिसप्रकार काम धेनु मनुष्यों की इच्छाको पूर्ण करती है उसीप्रकार यह रामायण कथा भी मनुष्योंको अर्थधर्म काम मोक्ष चारो पदार्थको देती है। माघमास मे शुक्लपक्षमें सकलधर्मों के फलको देनेवाली इस अमृत रूपीरामायण कथाको नवदिन पर्यन्त सुनना चाहिये जोकोई इस पवित्र आख्यान को कहैंगे अथवा सुनैंगे वह संपूर्ण पापोंसे छूटकर राम भवनमें निवासकरैंगे।

नारद सनत् कुमार संवादे रामायण माहात्म्ये तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

इतनी कथासुनाकर नारदमुनि सनकादिकों से कहा अब में दूसरे मास में रामायण कथा को नवाह सुनने में जो फल होता है उसको कहता हूं सुनो । यह रामायण कथा ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रअथवा स्त्री आदिके सकल पापों को नाश करनेवाली सब प्रकार के दुःखों से छुड़ानेवाली सब समयमें शुभफल देनेवाली संपूर्ण व्रतके फलको प्राप्त करानेवाली इस रामायण कथा को भक्ति पूर्वक नवदिन पर्यन्त अवश्य सुनना चाहिये । हेमुनिश्वरों ! आपलोगों की प्रसन्नता के लिये एक पुरातन इतिहास कहते हैं, इस इतिहास को कहने व सुनने से मनुष्यों के सकल पाप दग्ध होजाते हैं । विन्ध्यगिरिके वनमें एक कलिक नामका व्याधा रहताथा । वह लुब्धक परस्त्री और परधन को अपहरण करने में सदा मनको लगाये रहताथा । और वह व्याधा पराये की निन्दा और जन्तुओं को पीड़ा मे परायण रहताथा, अनेक गौ तथा ब्राह्मणों का बध नित्यप्रति करता था । हेसनत् कुमार जो कलिके इतने बड़े बड़े पाप हैं कि जिनको मैं हजारों वर्षमें भी नहीं कहसकताहूं । एक समय वह पापी कलिक यमराज के समान घूमता हुआ सौवीर नगर को पहुंचा । वह नगर धन धान्य से अत्यन्त समृद्ध था और उस नगर के स्त्री पुरुष सभी नाना प्रकार के अलङ्कारों से भूषित होकर सुख आनन्द करते थे, उस नगरका एक वडाही सुन्दर दृश्य था, हरएक प्रकार के सरोवर बनेथे उनमें इतना स्वच्छ जलथा कि वहां क्रीडा करने के लिये गंधर्वलोग सदा आया करते थे । हेमुनीश्वर वह सौवीर नगर स्वर्गके समान था । उस सौवीर नगर के उपवन में एक मनोहर विष्णुभगवान का मन्दिर था । मन्दिर के शिखर पर चारोओर सोनेके कलश रखेथे, उस उपवन में नाना प्रकार के फल और पुष्पदेने वाले वृक्ष लगेथे, एक सुन्दर सरोवर भी था, नाना प्रकार के कोकिला आदि पक्षी सदा कलोल करते थे । ऐसे सुन्दर रामभवनको देखकर कलिक ने अपने मनमें निश्चय कियाकि इसमन्दिर में हीरा मोती आदि रत्न अवश्य होंगे

यह सोचकर धन चुराने की आश से कलिक ने मन्दिर में प्रवेश किया । वहां उत्तङ्क नामके एक तपस्वी और दयालु ब्राह्मण सदा भगवान की पूजा किया करतेथे और श्रीविष्णुभगवान के चरण कमल का निरन्तर ध्यान किया करते थे, कलिक ने मन्दिर में जाकर ब्राह्मणको पूजा करते देखकर सोचा कि धनचुराने में यह ब्राह्मण विघ्न अवश्य करेगा पहिले इसको मारकर पीछे धनकी चोरीकरूँ । हेसनत् कुमारजी कलिकने उत्तङ्क ब्राह्मण के शिरके जटाको पकड़कर खींचलिया और तलवार लेकर जब उत्तङ्क को मारने की इच्छा किया तब दयालु उत्तङ्क कलिक से बोला कि हेभाई ! मुझ निरपराधी ब्राह्मण को तुम क्यों मारतेहो, मेरा जोकुछ अपराध हो उसको तुमकहो हेलुब्धक ! लोकमें अपराधी को मारना चाहिये, निष्पापी और सज्जन अर्थात् विष्णु भक्तब्राह्मण को मारकर तुम क्या फल प्राप्त करोगे । शत्रुमें मूर्खमें अवगुणों को देखकर भी शान्तचित्तवाले सज्जन लोग वैर नहीं करते, जोमनुष्य दूसरे के कहे हुये दुर्वचन को क्षमायुक्त होकर सहन करता है वह विष्णुके भक्तों में श्रेष्ठ गिना जाता है । भगवान की प्रबल माया यद्यपि करके मनुष्यों को नाना प्रकार के बन्धनो में जकड़ रखा है तौ भी संसारसे दुर्जन जन सज्जनों को अवश्य पीड़ा देते हैं । परमेश्वर की प्रबलमाया इस सकल संसार को मोहित कर लिया है जो पुत्र मित्र आदिके संयोग से मनुष्य नाना प्रकार के पातकों का करते हैं यह नहीं सोचते कि जिस स्त्री आदिका पालन पराये धन से करते हैं अन्त में उन सबको यहीं छोड़कर अकेला ही परलोक में जाना पड़ता है । यह मेरी माता यह मेरे पिता यह स्त्री यह पुत्र इस प्रकार कह कर जीव ममत्व में फंसकर वृथा नष्ट होता है । जब तक मनुष्य धन कमाता है तभी तक इस लोक के दुःख और सुखको सहन करने वाले बन्धु भी दिख पड़ते हैं परलोक में कोई भी सहायक नहीं मिलता । अर्जित धनका भोग सब मिलकर करते हैं परन्तु पापका फल वह अज्ञानी मूढ़ अकेला ही भोगता है । ऐसा

कह कर वह ऋषि भय से विह्वल हो सोचने लगे। ब्राह्मण के संगति से तथा विष्णु भगवान के दर्शन से कलिक की अज्ञानता दूर हो गई, और वह परमार्थ को सोचकर पश्चात्ताप करने लगा बार बार हाथ जोड़कर ब्राह्मण से अपना अपराध क्षमा कराया और ब्राह्मण से अपना वृत्तान्त कहने लगा, हे ब्रह्मदेव मैंने आज तक जो कुछ पाप किया था वह सब आपके दर्शन से नष्ट होगया, परन्तु ये नित्य के जो हमारे दुष्कर्म हैं उन पापों से छूटने की क्या उपाय हैं। हे द्विजराज! मैं किसके शरण जाऊं, पूर्व जन्म के पाप से तो मैं व्याधा के घर जन्म पाया, इस जन्म में भी बहुत कुकर्म मैंने किया अब मेरी क्या गति होगी । कलिक के इस प्रार्थना को ब्राह्मण सुनकर इस प्रकार बोले,—हे महाप्राज्ञ कलिक! भगवान् की कृपा से तुम्हारी अज्ञानता नष्ट हो गयी, तुम्हारा ज्ञान शुद्ध होगया अब जिस प्रकार संसार के दुःख नाश होते हैं, उनके उपायों को सुनिये। चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में नव दिन पर्यन्त रामायण की कथा भक्ति पूर्वक सुनने से मनुष्य सब प्रकार के पापों से छूट जाता है । महापापी कलिक उसी समय में उत्तंक मुनिसे रामायण कथाको सुनकर तत्काल मृत्युको प्राप्त हुआ,रामायण कथाको सुनने के प्रभावसे दिव्य विमान पर बैठकर विष्णुलोक में जानेकी समय उत्तंकमुनि की स्तुति किया। मुनियों में श्रेष्ट हे उत्तंकमुनि! आप मेरे गुरु हैं, आपके प्रसाद से ही मैं अपने पाप कर्मों के पार होगया, हेमुनीश्वर! आपने जो कुछ मुझे ज्ञान सिखलाया है, उसी उपदेश से मेरी अज्ञानता नष्ट होगई और पाप सब दग्ध होगये। रामायण कथा श्रवण के प्रभाव से इस समय मैं विष्णुलोक को जाता हूँ। हे परमदयालु गुरुओं में श्रेष्ठ आपकी कृपा से मैं कृतकृत्य होकर आपको बारबार प्रणाम करता हूं जो कुछ हमारा अपराध आपके समीपहो उसको क्षमाकरने योग्यहो इस प्रकार स्तुति कलिकने ब्राह्मण का किया, उत्तंक मुनिपर स्वर्गसे पुष्प वृष्टि हुई। कलिक की जीवात्मा उत्तंक मुनिको प्रदक्षिण करके नमस्कार

किया अपने विमान पर बैठकर अप्सराओं के सहित विष्णुलोक को गये । इतनी कथा सुनाकर नारदजी सनत्कुमार आदि मुनियों से कहा—हेमुनीश्वर ! चैत्रमास के शुक्लपक्ष में भक्ति पूर्वक अमृतरूपी रामायण कथाको नवाह कहने अथवा सुननेसे ऐहिक अथवा पारलौकिक सुखको मनुष्य अवश्य प्राप्त करता है, हे सनत्कुमारजी ! आपने रामायण कथा का महात्म्य जो कुछ पूछा,—वह मैंने कह सुनाया । इस कथासे बढ़कर दूसरी कोई कथा नहीं है, यह रामायण कथा कहने व सुनने से चारो पदार्थ मिलते हैं, जो कोई इस अध्यायको प्रेमपूर्वक कहेंगे व सुनेंगे वह सकल पापों से छूट कर परम पदको पहुंचेंगे ।

नारद सनत्कुमार संवादे रामायण माहात्म्ये चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

इतनी कथा सुनाकर सूतजी पुष्कर क्षेत्रमें ऋषिश्वरोंसे कहा—कि सनत्कुमारजी रामायण माहात्म्यको सुनकर विनय पूर्वक नारदजीसे बोले—हे नारदमुनि ! जिसप्रकार आपने रामायण के माहात्म्य को सुनाकर हम लोगोंको कृतकृत्य किया,उसी प्रकार रामायणकी विधि कहिये । हेनारद जी ! आप भक्तोंमें श्रेष्ठ होकर दिनगत संसारी मनुष्योंके उद्धारके लिये चेष्टा किया करते हैं परोपकार और हरिभजनसे अतिरिक्त आपका मन कभी संसारी माया में नहीं फंसता आप अनुग्रह पूर्वक हम लोगोंको रामायण कथा की विधिको सुनाइये । सनत्कुमारजीका विनय सुनकर नारदमुनि बोले हेसनत्कुमार जी ! आपने बहुत अच्छी बात पूंछी है स्वर्ग मोक्षको देनेवाली सबलोक में विख्यात रामायण की विधि जोकुछ मुझे मालूम है वह आपलोगोंसे कहते हैं, रामायण कथाको चैत्रमाघ कार्तिक में नवाह कथा कहने व सुनने से कोटि कोटि पाप नाश होजाते हैं जैसे वायुके चलने से बादल नाशहो जाते हैं । इस अमृत रूपी रामायण कथाको स्वास्ति वाचन पूर्वक संकल्प करके कहे कि आजसे नवदिन पर्यन्त रामायण कथा को श्रवण करेंगे, हे भगवान् रामचन्द्र आपकी कृपासे नवदिन में सुनने के योग्य रामायण कथा कि पूर्णता होवे । नित्य प्रतिदिन अपामार्ग

(खिचडी) की दतुअन करे यथाविधि श्रीराम जी के चरण कमल का स्मरण करता हुआ स्नान करे, शुक्लवस्त्र धारण करके मौन पूर्वक अपने घर आवे पैर धोकर आचमन करके श्रीराम जीके नामका स्मरण करे, देवताओं का पूजन करके संकल्प पूर्वक आवाहन आसन पाद्य गंधपुष्प आदिसे भक्ति पूर्वक रामायण के पुस्तक का पूजन करे और भगवान के आठ अक्षर के मंत्रको जपे इसके बाद एकबार अथवा दो बार या तीनबार हवन करे, इतनी कथा सुनाकर नारदमुनि ने कहा—हे सनत्कुमार! इस प्रकार रामायण कथा को कहने व सुनने से मनुष्य सब पापों से छूटकर विष्णु लोक को जाता है ॥

इतनी कथा सुनाकर नारदजी सनत् कुमार आदि मुनियों से कहे कि हे मनिश्वरो ! इस रामायण कथाके श्रवण करने वाले मनुष्य नवदिन पर्यन्त चाण्डाल से, पतितसे, नास्तिक से, मर्यादाको उल्लंघन करने वाले से, पराई निन्दा करनेवाले से, लोभीसे जारसे उत्पन्न वाले से, देव अँस खानेवाले से, वैद्यसे केविसे गो ब्राह्मण से, विरोध करने वाले से, पराये अन्नमे और पराई स्त्रीमें प्रेम रखने वाले से बार्तालाप न करे, अपने हृदय में रागद्वेष न रखकर भक्ति पूर्वक रामायण कथा को सुनने से परासिद्धि प्राप्ति होती है, इसप्रकार नियम और संयम से कहने व सुनने का जो पुण्य मिलता है उसपुण्य फल से विष्णुलोक में निवास करता है। हे सनत्कुमारजी ! यह रामायण कथा यतिको, ब्रह्मचारीको अवधूत आदि आश्रमियों को विशेष करके सुनने योग्य है। यह अमृत रूपी रामयण कथाको जो कोई मनुष्य भक्ति पूर्वक कहता व सुनता है वह ब्रह्मलोक में निवासकर आवागमन से छूटजाता है। इस रामायण कथा से बढ़कर दूसरी कोई कथा पवित्र और सुनने के योग्य नहीं है इस कथाको कहने व सुनने से दुःस्वप्न आदि दोष नाश होते हैं और वह मनुष्य देवलोक मे भी पूजित होता है। जाकोई मनुष्य भक्ति श्रद्धासे युक्त होकर अध्याय अथवा अध्यायकाभी आधा सच्चे मनसे कहता

व सुनता है वह सकल पातकों से छूटजाते हैं । अत्यन्त रहस्य रखने वाली अमृत रूपी यह रामायण कथा गौ ब्राह्मण से वैर रखने वाले पाखण्डी आदि को उपदेश न करना चाहिये, जिनका मन बीच शरण रघुनाथ जीके लीन हो काम क्रोधादि से रहित हो गुरुकी आज्ञा पर और शास्त्र पुराण के वचन पर जिनको विश्वास हो उनके लिये यह रामायण कथा को उपदेश करना चाहिये । भक्ति के आधीन रहने वाले भक्तवत्सल सर्वदेव मय श्रीरामजीके नामको स्मरण करने मात्रसे मनुष्यों के पाप छूटजाते हैं, भगवान को प्रसन्न करने के लिये भक्ति को छोड़कर और कोई दूसरा मार्ग नहीं है । हे सनत् कुमार जी ! भ्रमसे भी जो भगवान के नामों का स्मरण करता है वह अपने अशुभ कर्मों से छूटजाता है जैसे धोखेसे भी अमृत को पीने से मनुष्य अमर होजाता है । जो ब्राह्मण इस रामायण रूपी रसमे मनलगाया है वही सकल शास्त्रों का जानने वाला है, और संसार में वही मनुष्य कृतकृत्य है, जिस ब्राह्मण के गृहमें देव पूजन रामायण कथा होती है वह ब्राह्मण कलियुग वासियों में देवताके समान है । हेसनत कुमारजी ! जो मनुष्य इस रामायण कथा को नवाह पारायण कहते व सुनते हैं उन महात्माओं को नमस्कार है । सनत कुमारजी को रामायण कथा श्रवण की विधिको सुनाकर नारद मुनिबोले हे मुनीश्वरो रामनाम ही मेराजीवन है, और संसारी मनुष्यों को विशेष कर कलियुग वासियों को रामनाम स्मरण से अतिरिक्त कोई दूसरी गति नहीं है ! अर्थात् देवता गौ ब्राह्मण में श्रद्धा और श्रीरामजीके नामस्मण में तथा उनके कीर्तन में मनलगाकर कहने व सुनने के बराबर दूसरा कोई यज्ञ दान आदि कर्म नहीं है ।

पुष्कर क्षेत्रमें सूतजी ऋषिश्वरों से बोले कि नारदमुनि के मुखार विन्दसे रामायण कथाको सुनकर सनत्कुमार आदि मुनीश्वर प्रसन्न होकर नारदजी को धन्य धन्य कहने लगे । इस रामायण कथाको सुनने के प्रभाव से सनत कुमार आदि मुनीश्वर भी परम पदका

लाभकिया, सूतजी ऋषिश्वरों से कहे हे ऋषिश्वरो ! इस रामायण कथा को भक्तिपूर्वक कहने व सुनने से सकल पाप नाश होजाते हैं और परम पद मिलता है । हे ऋषिश्वर जो ! लोग कथा बांचने वाले ब्राह्मण को यथाशक्ति पूजाकरके इस अमृत रूपी रामायण कथाको नवदिन पर्यन्त सुनते हैं उनसे स्वयं विष्णुभगवान् प्रसन्न होतेहैं । जो कोई मनुष्य कथा बांचने वाले ब्राह्मणको गौ वस्त्र सोना रामायण के पुस्तक पर चढ़ाकर ब्राह्मण को देतेहैं उनके पुण्य फलको एकाग्रमनसे सुनिये, इस प्रकार रामायण कथाको सुनने से भूत प्रेत पिशाच ग्रह अग्नि चौर आदि भय नष्टहो जाते हैं और उत्तम लक्ष्मी उनके गृहमें निवास करती हैं, और वह मनुष्य करोड़ों जन्मके पापों से छूटकर अपने सात पुरुषों समेत विष्णुलोक में निवास करता है । सूतजीबोले हे ऋषिश्वरों भक्तिपूर्वक सनत्कुमार जीने नारद मुनि से पूछा था यह कथा हमने आपलोगों को सुनाया, इस रामायण कथा को सकल वेदका सार समझो यह कथा सब प्रकार के पाप और दुःखको नाश करने वाली और सकल यज्ञ तथा नाना प्रकार के पुण्यके फलको देने वाली है, जो लोग प्रेमपूर्वक अध्याय अथवा अध्यायके कुछ अंशको कहते सुनते हैं उनके पास कामादि संसारी दोष नहीं जाते, और सैकड़ों जन्मके पाप नाश हो जाते हैं, अन्तमें वह मनुष्य अपने हजारों कुल समेत विष्णुलोकमें वास करता है ।

रामायण माहात्म्ये नारद सनत्कुमार संवादे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥



श्री गणेशाय नमः ॥

बाल्मीकिय रामायण हिन्दी भाषा बालकांड

बन्दना ॥

पहिले शुक्लवर्ण चतुर्भुजी मूर्ति प्रसन्न मुख वाले गणेश जीको बारबार नमस्कार करता हूं जिससे नानाप्रकार के दुरित क्षय होजावें अनन्तर शरत् कालके पूर्णचन्द्र के समान कान्तियुक्त वीणा और पुस्तक तथा स्फटिक माला और अक्षमाला को धारण करने वाली श्री सरस्वती देवीको नमस्कार करताहूं। इसकेबाद कवितारूपी बनमें बिहार करने वाले रामराम इस ध्वनि से गर्जने वाले बाल्मिकि मुनि सिंह को नमस्कार करताहूं। इसके उपरान्त कौतुक मात्रसे समुद्र को लांघने वाले और श्री जानकी जीके शोक रूपी अग्नी को लेकर लङ्कापुरी को जलाने वाले श्री अञ्जनी कुमार को नमस्कार करता हूं। बाल्मिकि मुनि की बाणी से निकल कर राम नाम रूपी समुद्र में गमन करने वाली और संसार को पवित्र करने वाली रामायण रूपी महानदी को नमस्कार करता हूं। जिसके वाम अंगमें श्री जानकी सन्मुख हनुमान पीछे लक्ष्मण अगल बगल भरत और शत्रुघ्न तथा चारो ओर सुग्रीव विभीषण अंगद जाम्बवान आदि वीर खड़े हैं उनके मध्यमें नीलकमल दल के समान श्यामवर्ण श्रीराम चन्द्र जीको बारबार नमस्कार करता हूं॥ इसके उपरान्त श्रीमत् शंकरा चार्य आदि गुरूपरम्परा को नमस्कारकरके श्री काशी निवासी मनीषा नन्द तीर्थ पाद पद्मको साष्टाङ्ग दण्डवत करता हूं। इसके उपरांन्त अपने पिता माता के चरण कमल की बन्दना करके श्री रामायण रूपी कथा सागर को लोकोपकार के लिये भाषानुबंध

करताहूं । इस भाषानुवंध लिखने के पहिले उन सन्त महात्माओं को नमस्कार करताहूं । कि जिनका मन निरन्तर श्रीरामजी के लीला व गुण के वर्णन को कहने व सुनने में लगा रहता है अगर वे सज्जन लोग किसी निमित्त से कुसंगति में पड़ जाते हैं तो अपने सुन्दर गुणों से सुगन्धित पुष्प के समान दुष्टजनों के चित्त को सुधार देते हैं । जिस प्रकार सुगन्धित पुष्प वाम और दक्षिण हाथ का विचार न करके दोनों हाथों को सुगन्धित करदेता है । मैं मन्दमति इतनी योग्यता नहीं रखता जो श्रीरामजी के कथा सागर में तैर सकूं, इस मेरी बालिशताको सज्जन लोग अवश्य क्षमा करके मेरे उत्साह को अपने आशीर्वाद से बढ़ाने का उद्योग करेंगे । उन दुर्जनों को मैं सपुष्पांजलि सविनय निवेदन करता हूं कि जिनका हृदय पराये दोषको भूषण जानकर अपने पास स्थान देता है । वैसे लोग जगत में अवश्यही कम हैं कि जो बालादपि सुभाषितम्, के मार्ग पर चलते हैं । इस अमृत रूपी रामायण कथाका जिन्हें यहां आदर होता है, उनको नमस्कार है ।

कहीं कहीं उनके पूर्वपुरुषा का नाम इक्ष्वाकु है । उस अयोध्या पुरी में वेद और शास्त्रको जानने वालों नाना प्रकार के कलाओं मे कुशल और विचार शील अत्यन्त प्रतापवान् इक्ष्वाकु नामके राजा पृथिवी मण्डल का राज्य करते थे । उन्हींका नाम दशरथ है । वह राजा इक्ष्वाकु अत्यन्त यज्ञशाली तथाधर्म परायण और लोकमान्य थे । राजा इक्ष्वाकु का मन सदा तपस्या करने में लगा रहता था, राजर्षि के नामको अपने उत्कट पुण्य से हर्षित बना लिया था । ऐसा प्रतापी और बलवान राजा इक्ष्वाकु हुआ कि जिस का यश संसार में छागया । धन और प्रताप में कुबेर और इन्द्रके समान अयोध्या पुरीका राज्य करने लगे । जिस प्रकार धर्मात्मा स्वायंभुव मनु धर्म पूर्वक अयोध्या पुरीका राज्य किया था । उसी प्रकार धर्म पूर्वक दशरथ भूमण्डल की रक्षा करने में परायण महा

प्रतापी राज्य करने लगे । दशरथ इसप्रकार धर्मपूर्वक राज्य करने लगे कि, जिनके राज्य में कभी प्रजा दुःखी नहीं रहती थी। पृथिवी गौके समान समयसमय पर धान्य फल पुष्प देतीथी। समयपर मेघ लोग वर्षा करके पृथिवीको सदातृप्त करदेतेथे। उनके राज्यमें कभी किसीको कोई पीड़ा नहीं देसकता था। जिस प्रकार देवलोक का राज्य इन्द्र करते हैं उसी तरह अयोध्या पुरीका राज्य दशरथ करनेलगे। और उनके राज्यमें ब्राह्मण लोग शास्त्रानुसार अपने अपने धर्मका पालन करने लगे स्त्री पुरुष सभी सत्य व्यवहार करतेथे। उनके यहां कामी और कादर हिंसा करने वाले नहींथे। मूर्ख और वेदशास्त्रकी निन्दा करने वाले नास्तिक भी नहींथे। अयोध्या पुरीके समस्त प्रजा अर्थात् स्त्रीपुरुष धर्मशाली थे। स्त्रीयां अपने पतिको देवता के समान देखती थीं। पुरुष भी अपनेहीं स्त्री में अनुराग करते थे। अपने शील और सद्भाव से सकल प्रजा महर्षिके समान् सदाचार करतीथीं। अयोध्या पुरीकी प्रजा कुण्डलसे मुकुटसे मालासे रहित नथी। प्रजाओं का अल्पायुभी नहोतीथी। प्रजाओं के लिये भोग विलास की सामग्री सदाइकट्ठा रहती थी। अयोध्या पुरीकी प्रजा को इतना समृद्ध प्राप्त था कि जहां सदा पवित्र पदार्थ भोजन करने को मिलतेथे। याचक लोग मुंहमागा दक्षिणा पाते रहे। ब्राह्मणों के यहां सदासोम यज्ञ हुआ करताथा। सदाचार का प्रचार जगतमें फैलगयाथा। उत्तम अयोध्या पुरीमें थोड़ी विद्या और क्षुद्रधन वाले नहीं थे स्त्रियां वा पुरुषों के व्यभिचार से वर्णसंकरोंकी सृष्टि नहीं होती थी। ब्राह्मण आनन्द पूर्वक ब्रह्मचर्य से रहकर नित्य वेदपाठ तथा दान और प्रतिग्रह में सदा संयत रहतेथे। वेदशास्त्रकी निन्दा करने वाले झूठबोलने वाले दूसरों से डाहकरने वाले नहींथे। मूर्ख और व्रत एकादशी आदि पुण्य काल में व्रतरहित रहने वाले दीन और प्रमादी और रोगी भी नहीं थे। अयोध्या पुरी में कोई भी स्त्री पुरुष शोभारहित नहीं थे। प्रजाओं में रूप गौरव होने पर भी राजा दशरथको गृहकी संञ्चारिकाओं से अति-

रिक्त कोई चेटक नहीं थी । चारो वर्णों में श्रेष्ठ ब्राह्मण अपनी तपस्या के प्रभाव से सदासमृद्ध बने रहते थे । ब्राह्मणों के यहाँ देवता पूजन और अतिथियों का सत्कार हुआ करता था । वे ब्राह्मण अपने योगबलसे राजा प्रजाकी रक्षा करते थे । शेषतीनों वर्ण अर्थात् क्षत्रिय वैश्य शूद्र सदा उनकी सेवा किया करते थे । अयोध्या पुरीमें धर्म और सत्यका पालन अच्छीतरह होनेलगा । प्रजाओं में अल्पायु नहीं होती थी । सकल प्रजा पुत्रपौत्र के सहित स्त्रीपुरुष सभी आनन्द करते थे । क्षत्रिय ब्राह्मणों की सेवा करतेथे । वैश्य क्षत्रियों की सेवाकिया करतेथे, शूद्र अपने कर्ममें निरत होकर तीनो वर्णोंकी सेवा किया करतेथे । राजाके योधाओं में कादरता नहीं थी । वे राजभट नाना प्रकार के अस्त्र शस्त्र में कुशल थे । दूसरेके पराक्रम को नहीं सहन करने वाले अग्नि के समान प्रतापी योधाओं से अयोध्या पुरी पूर्ण रहती थी । दशरथ के यहां काम्बोज देशके वाल्हीक देशके वनायु देशके सिंधुदेशके उत्तम उत्तम घोड़े रहतेथे । उन घोड़ों का वेग स्वर्गीय घोड़ों के समान था । विन्ध्य पर्वत के और हिमालय पर्वत पर रहने वाली हाथियों की झुण्डसे अयोध्यापुरी परिपूर्ण होगयी थी । पहाड़ के समान ऊँचाइ और लंबाई में ऐरावत हाथी के बराबर थी । उन हाथियों को रहने के लिये दो योजन में स्थानबना था । ऐसी शोभा सम्पति से पूर्ण अयोध्या पुरी का पालन महाराज दशरथ करने लगे । जिसप्रकार नक्षत्रों के मध्यमें चन्द्रमा की शोभा होती है, उसी प्रकार भूमण्डल को पालन करने से दशरथ की शोभा हुई । राजभवन सदा तोरण और माल्य से सुशोभित रहाकरता था । अयोध्या वासियों को कभी अपने अमङ्गलकी चिन्ता नहीं रहतीथी । इन्द्रके समान दशरथ समस्त अयोध्या पुरीकी रक्षाकरने लगे ।

वाल्मीकिये आदिकाव्ये षष्ठसर्गः ॥ ६ ॥

महाराज दशरथ के मन्त्रिमण्डल कार्य विचार में बड़ेही पण्डित थे । उनलोगों का विचार वृहस्पति के समान हुआ करता था । दूसरे

अभिप्राय को जानने में शुक्रके समानथे । और नित्यप्रति राजाके हितकी इच्छा किया करते थे । राजाके प्रतिकूल उनके विचार नहीं होतेथे । अपने लोभके लिये राज कार्य में उनको विराग नहीं था । अपने प्रयोजन कालमें भी राजाके अनुकूल ही वर्ताव करते थे । धृष्टि जयन्त, विजय, सुराष्ट्र राष्ट्र वर्धन, अकोप धर्मपाल और सुमन्त्र नामके आठमन्त्री थे ।

ऋषियों में श्रेष्ठ वसिष्ठ और वामदेव महाराज दशरथ के पुरोहित थे । और सुयज्ञ, जाबालि, काश्यप गौतम, मार्कण्डेय और कात्यायन ये ब्रह्मर्षि राजा के पुरोहित अथवा उपमन्त्रीथे । देशकाल के अनुकूल राष्ट्रका विचार करने वाले को उपमन्त्री कहते हैं, और केवल व्यवहार के दृष्टिसे कार्य देखने वाले को मन्त्री कहते हैं । ये राजमन्त्री तथा उपमन्त्री राजाकी परम्परा से संबंध रखनेवाले थे । ये ब्रह्मर्षि गण विद्या और विनय में सम्पन्न बाण विद्या में चतुर राज कार्य में सावधान थे । इन्हीं ब्राह्मणों की आज्ञा को शिरोधार्य करके महाराज दशरथ राष्ट्रकी रक्षा किया करते थे । शत्रु और मित्रमें बराबर दण्ड होताथा, दण्डविभागमें पक्षपात नहीं था । धनागार और सैनिको का परिग्रह न्याय पूर्वक सदाकरते थे । विना अपराध शत्रुको भी दण्ड नहीं देतेथे । प्रजाओं में चोरी आदि कुकर्म व्यवहार नहीं था । सदा राजनीतिके अधीन रहते थे । राष्ट्रमें बलाबल को अर्थात् अपराध तारतम्य को देखकर ब्राह्मण क्षत्रियों को पीड़ा न देकर धनको इकट्ठा करते थे । महाराज दशरथ के राज्य राजा के विपरीत चलने वाले चोरी और पराई स्त्री में व्यभिचार करने वाले और दूसरे को पीड़ा देने वाले दुष्ट नहीं थे । राजा प्रजा सदा एक राय होकर रहते थे । राजाको पिताके बराबर प्रजा जानती थी । राजा पुत्रके समान प्रजा पालन करतेथे । राजा की राजनीति सब जगह फैलीथी । समस्त प्रजा राजाके हितकी इच्छा रखतेथे । गुरु वसिष्ठ की आज्ञा राष्ट्रपर आक्रान्तथी । राजाप्रजा सभी उनकी आज्ञा का पालन करते थे । संधि

और विग्रह के तत्वको जानने वाले थे। वसिष्ठ मुनि के अनुग्रह से शिष्टों का पालन और दुष्टों का निग्रह हुआ करता था। राजा प्रजा के भोग विलास के लिये धन धान्य दास दासी हाथी घोड़ा रथ पालकी आदि संपत्ति से राजभवन तथा राष्ट्र परिपूर्ण था। अर्थात् सात्विकी राजसी तामसी तीनों प्रकार की सम्पत्तियां सब के सुखानन्द के लिये तइयार थीं। इस प्रकार के मन्त्री और उपमन्त्रियों के सहित पुण्यवान महाराज दशरथ पृथ्वी का पालन करने लगे,। राजा के गुप्तचर अपने देश का तथा अन्य देशीय कंटको की परिशोधना किया करते थे धम के सहित राजा प्रजाओं की रक्षा करने लगे। जैसे स्वर्ग में इन्द्र देवलोक का राज्य करते हैं। उसी प्रकार पृथ्वी का राज्य करने लगे। जैसे सूर्य के उदय होने से अन्धकार नाश हो जाता है, उसी प्रकार मन्त्रि मण्डल के सहित महाराज दशरथ के उदय काल में जगत की सकल आपत्तियां नाश हो गयीं।

बाल्मीकिये आदिकाव्ये सप्तमः सर्गः ॥७॥

महाराजा दशरथ को इस प्रकार के समग्रगुण और विभव की परिपूर्णता होने पर भी सन्तानका सुख नहीं था। पुत्रहोने के लिये नाना प्रकार कि तपस्या किये परन्तु तपस्या का कुछ भी फल साध्य न हुआ। राजा चिन्ताके मारे चिन्तित होकर मन्त्रियों के सहित अश्वमेध यज्ञ करने का विचार आरंभ किया। राजाके विचार के अनुकूल मन्त्रियों की राय हुई। राजा सुमन्त्र को आज्ञा दियाकि सुयज्ञ, वामदेव जाबालि, काश्यप और पुरोहित वसिष्ठ तथा और भी ब्रह्मर्षियों को शीघ्र बुलाइये। राजाके मधुर बचन और अप्रतिहत आज्ञाको शिरोधार्य करके उन ब्राह्मणों को बुलाने के लिये सुमन्त्र प्रस्तुत हुये। राजाके समाचार को सुनकर वसिष्ठ आदि ब्रह्मर्षि राजमन्दिर पर उपस्थित होगये। महाराज दशरथ अर्घपाद्य आदि उपचारों से सबका पूजन और शिष्टाचार किये। इसके बाद सभामें उपस्थित मन्त्रि उपमन्त्री और पुरोहित तथा ब्राह्मणों के समीप बिनीत भाव से राजा

बोले। हे महाराज पुत्र होनेके लिये मैंने जन्म जन्मातर से अति कठिन तपस्याओं को किया, परन्तु उन क्रियाओं का अब तक कुछ फल मुझे प्राप्त न हुआ, इसलिये अश्वमेध यज्ञ करना चाहता हूं। हे भगवन् शास्त्रोक्त विधिसे किस क्रियाके द्वारा मेरा मनोरथ पूर्ण होगा, इसके लिये उपाय बताइये। महाराज दशरथ के बचन को सुनकर वसिष्ठ आदि महर्षिराजा को धन्यवाद देनेलगे। और दशरथ के बचन से प्रसन्न होकर ब्राह्मणों ने कहा हे राजन्! अश्वमेध यज्ञकी सामग्रीको संपादन करिये। और सरयूनदी के उत्तर तीर में यज्ञवेदी निर्माण कराइये! हे राजन! इस यज्ञको करने से आपका मनोरथ अवश्य पूर्ण होगा। जिससे आपकी यह धार्मिकी बुद्धि अपने अभिलाषा को अवश्य पूरी करेगी। ब्राह्मणों के वचन को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक हर्ष और व्याकुलता से पूर्णबचन मन्त्रियों से कहे, हमारे परम पूज्यगुरु और पुरोहित तथा ब्राह्मणों की आज्ञा से हयमेध यज्ञकी सामग्री को संपादन करिये। और यज्ञिय अश्वकी संरक्षा के लिये चारसौ राजपुत्र और एक प्रधान ऋत्विग् को प्रस्तुत कीजिये और सरयू नदी के उत्तर तीर पर यज्ञभूमि बनाइये। और यज्ञ कार्यमें विघ्न को निवारण करने वाले कर्मों को यथाक्रम से बढ़ाइये। जिससे इस महान् कार्य में बाधा न होवे। सब प्रकार की शक्तियों को रहते हुए भी राजा विघ्नके भयसे मलीन होगये, कहीं इस यज्ञमें क्रिया विपरीत न होजावे।

शास्त्रविधि से विपरीत यज्ञ होनेसे कर्ता नष्ट होता है, इसलिये हे मन्त्रिन् ऐसा प्रयत्न करना चाहिये जिसमें मेरा यज्ञ पूर्ण होजावे। क्योंकि आपलोग हमारी सहायता करने में समर्थ हैं। इस प्रकार राजा मन्त्रियों को प्रोत्साहित किया। राजाके बचन से पूजित मन्त्री गण राजा को प्रतिबचन से पूजित करके बोले, हे महाराज! आपकी महिमासे आपके कार्यमें कोई बिघ्न न होगा। यह आशीर्वाद रूप बचन मन्त्रियों का तथा ब्राह्मणों का सुनकर राजा विह्वल होगये।

इसके उपरान्त ब्राह्मण और ऋषियों ने राजाको आशीर्वाद प्रदान करते हुए अपने अपने स्थानको चलेगये । इसके उपरान्त उपस्थित मंत्रियों से राजा बोले हे मन्त्रिन् ब्राह्मणों से उपदृष्ट यज्ञ की समग्री को एकत्र करनेका प्रयत्न कीजिये । यह कहकर मंत्रियों को भी राजाने विदा किया, और अपने राजभवन में चले गये ॥ वहां जाकर प्रियाप्राणा राजा अपनी स्त्रियों को यह समाचार कह सुनाया पुत्र उत्पन्न होनेके लिये में अश्वमेध यज्ञ करूँगा । राजा के इस अमृत मय वचन को सुनकर कौसल्या आदि रानियों के मुखकी कान्ति और भी बढ़गयी । जैसे वसन्त कालमें कमल की शोभा बढ़ जाती है उसीप्रकार राजा के वचन से राजमहिषियों के मुखकी प्रभा चमकने लगी ॥

इत्यार्षे वाल्मीकिये रामायणे अष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

एक समय एकान्त में सुमन्त्र मन्त्री राजासे बोले । महाराज जोकुछ आज्ञा यज्ञ करनेके लिये वसिष्ठ जी कहे हैं इस विषय के वृत्तान्त को पुराण में मैंने सनत् कुमार मुनि के मुखसे सुनचुका हूं । यह प्राचीन और भविष्य की कथा है । इसको मैं आपको सुनाना चाहता हूं । हे राजन् ! आपके पुत्रलाभ के लिये काश्यप के पुत्र बिभांडक मुनि होंगे और उनके पुत्र शृङ्गऋषिके नाम से प्रख्यात होंगे । उन ऋष्य शृङ्ग को विभाण्डक मुनि बनमें पालन करेंगे, और वह पिताके बचन से सदा अरण्य में देश नगर तथा ग्राम के व्यवहार से अनभिज्ञ होकर बनचर के समान बनवासी होंगे । अपने पिताके साथ का वास और जंगली भोजन आदि से अतिरिक्त और कुछ न जानेंगे । और महात्मा शृङ्ग ऋषिको दो प्रकार का ब्रह्मचर्य रहेगा । ऋष्य शृङ्ग अत्यन्त प्रभाव शाली होंगे, उनकी तपस्या की प्रशंसा ब्राह्मणों में चारो ओर फैलेगी । ऋष्य शृङ्ग अपने अग्निहोत्र और पिताकी सेवामें सदा लीन रहेंगे ।

उसी समय में राजा अङ्गके यहां अत्यन्त प्रतापी और बलवान

रोमपाद नाम के राजा होंगे। और रोमपाद धर्मपूर्वक राज्य न करके प्रजाको दुःख देंगे। इस भविष्यके वार्ताके बाद वर्तमान की दशा को कहने लगे कि रोमपाद के अधर्म से पृथिवी पीड़ीत होगई। और उनके राज्य में वृष्टि नहीं होने लगी। बिना वर्षाके प्रजापीड़ित होगयी। तब प्रजाको पीड़ीत देखकर राजा रोमपाद चिन्ता करने लगे। इसके उपरान्त अपनी यहां एक सभा ब्राह्मणों की किया। उस राजसभामें च्यवन पराशर अंगिरा भृगु आदि महर्षि इकट्ठा हुये। राजा रोमपाद ब्राह्मणों की पूजा और शिष्टाचार करके बोले। भगवन्! आप लोग वेद शास्त्र को जानने वाले हैं, और मनुष्यों के लोक परलोक को सुधारने में कर्णधार हैं, जगत् के सकल व्यहार को आपलोग जानने वाले हैं। इसलिये बिचार करिये कि हमारे किस पापसे हमारे राज्य में वर्षा न होकर अकाल पड़ाहै। इसका जो कुछ उपाय हो सो कृपाकर बतलाइये। राजाके दीन बचन को सुनकर ऋषिश्वरोंने कहा, हे राजन्! विभाण्डक मुनिके पुत्र श्रृङ्गऋषिको अनेक उपायों से अपने यहां बुलाइये, और उनका सत्कार करके शास्त्र विधिसे शान्तानाम अपनी कन्या उनको प्रदान कीजिये, वेदशास्त्र को जानने वाले ऋष्यश्रृङ्ग जब शान्ताको स्वीकार करेंगे तब तुमारा अपराध शान्त होगा, और तुमारी प्रजासुखसे रहैगी। यह कहकर ब्राह्मण लोग अपने अपने स्थान को चलेगये।

ऋषिश्वरों के बचन को सुनकर राजा रोमपाद अति व्याकुल होगये। और सोचने लगे कि तपस्वी और ब्रह्मचारी तथा प्रभाव शाली ऋष्यशृङ्ग को किस प्रकार यहां बुलावें। इसके उपरान्त राजा रोमपाद अपने मन्त्रियों को और पुरोहितों को ऋष्यशृङ्ग के पास जाने की आज्ञा दिये। राजाके बचन को सुनकर मन्त्रि और पुरोहित गण व्याकुल होगये। हाथ जोड़कर राजारोमपाद से बोले, महाराज! ऋषि के भय से हम लोग नहीं जायंगे। आप अपनी दुःसाध्य आज्ञा को लौटा लेने में क्षमा करिये। इस प्रकार राजा को सन्तुष्ट करके ऋषि को अपने यहां बुलाने की उपाय सोचने लगे और बोले हे राजन्! यदि क्षमा करें

तो देवलोक से अप्सराओं को भेज कर शृङ्गी ऋषि को बुला सकते हैं । इसमें हम लोगों को ऋषि के शाप का भय नहीं रहेगा, और उनके तपस्या में भी विघ्न नहीं होगा । इस प्रकार राजा को सान्त्वना देकर मन्त्री और पुरोहित अप्सराओं के द्वारा शृङ्गी ऋषि को बुला कर शान्ता को प्रदान किया । ऋषि के प्रभाव से राजा रोमपाद के राज्य में इन्द्र वर्षाकर प्रजा और पृथ्वी को सन्तुष्ट किया ।

यह कथा सुनाकर सुमन्त्र महाराज दशरथ से बोले, स्वामी ! अंगराज आपके मित्र हैं । ऋष्यशृङ्ग उनके जामाता हैं, मित्रभाव से आप के भी जामाता ऋष्यशृङ्ग होते हैं । इस लिये उनको यज्ञ में बुला कर यज्ञका अधिष्ठाता बनाइये । सनत्कुमारजी आपको पुत्र होने की जो कुछ उपाय मुझ से कही थी, वह सब मैंने आप से कहा, आगे जैसी आप की इच्छा हो वैसा कीजिये ।

बाल्मीकिये आदिकाण्डे नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

सुमन्त्र के बचन को सुनकर महाराज दशरथ बोले, मन्त्रिन् ! ऋष्यशृङ्ग ऐसे तपस्वी को अप्सराओं ने किस प्रकार राजा रोमपाद के राजमन्दिर पर लेगयीं । जिस उपाय से अप्सराओं ने राजा के पास ऋष्यशृङ्ग को लेगयीं वह कथा विस्तार पूर्वक मुझ से कहिये । क्योंकि तपस्या और वेदपाठ करने वाले ऋष्यशृङ्ग को किस प्रकार अप्सराओं का कहना माना, वह तो सदा इन्द्रियों को अपने आधीन रख कर संसारी विषय सुखको कुछ भी नहीं जानते दरशरथ के वचन को सुनकर सुमन्त्रजी बोले हे राजन् ! सनत्कुमारजी के मुख से जो कुछ मैंने सुना है वह विस्तार पूर्वक आपसे कहते हैं । राजारोमपाद के मन्त्री तथा पुरोहितों ने पहिले अप्सराओं को ऋषि के पास भेजने का बिचार किया, इस बात को सुनकर राजारोमपाद भी उनकी राय में ऐक्य हो गये । इसके उपरान्त मंत्रियों ने अप्सराओं से प्रार्थना किया, कि तुम लोग महासुन्दरि अनेक प्रकार के भूषण वस्त्र पान अर्थात् उत्तम उत्तम अपने भोजनकी सामग्री लेकर शृङ्गीऋषि के आश्रम में

जाओ अनेक उपायों से ऋषि को अपने अधीन करके महाराज रोमपाद के राजमन्दिर पर ले आओ। अप्सराओं ने राजा रोमपाद की आज्ञा को मन्त्रियों के मुखसे सुनकर अपनी सामग्री इकट्ठा करने लगीं। रत्न जटित सोने के आसन और मुक्ता माणिक्य भूषित भोजन पात्र, सोने की थाली, भोजन करने के लिये अच्छे अच्छे पकवान, अंगमें लेपन करने को चन्दन तथा नाना प्रकार के सुन्धित द्रव्यों को औ पुष्पमाल आदि वस्तुओं को लेकर ऋषि के आश्रम की ओर चलीं। यहां शृङ्गवेरपुर में विभाण्डक मुनि के आश्रम के निकट उतरकर ऋषि के दर्शन की इच्छा से नानाविध उपाय करने लगीं। परन्तु यज्ञदान मासोपवास कृच्छ्र चान्द्रायण आदि व्रतको धारण करने वाले और पिता की आज्ञा पालन करने वाले ऋषि आश्रम के बाहर कहीं नहीं जाते थे। और वह जन्म पर्यन्त कभी नागिरिक जनों को तथा स्त्री पुरुषों को और उनके हाव भाव को अनदेख के समान व्यवहार करते थे।

एक दिन दैवसंयोग से आश्रम में घूमते हुए अप्सराओं से भूषित प्रदेश को देखा। हार और केयूर को धारण किये अनेक प्रकार के वस्त्र भूषण से भूषित और मधुर स्वर से गीत गाती हुई अप्सराओं ने ऋषि पुत्रको देखकर बोली, हे महाराज! आप कौन हैं और क्या करते हैं, इस घोर बन में अकेले क्यों निवास करते हैं। ऋषि महाराज पूर्व में अदृष्ट स्त्रियों के कमनीय स्वरूप को देखकर उनके दृष्टि से मोहित होकर प्रीति पूर्वक बोले, विभाण्डक मुनि के पुत्र और ऋष्यशृङ्ग मेरा नाम है। हमारी तपस्या रूपी क्रिया जगत में प्रसिद्ध है। इस प्रकार अप्सराओं से कहकर बोले, इस आश्रम के समीप उपस्थित आप सब लोग आश्रम में पधारिये, अतिथ्य सत्कार और को पूजा को स्वीकार करिये। ऋष्यशृङ्ग के बचन को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक अप्सराओं ने आश्रम देखने के बहाने से ऋष्यशृङ्ग के स्थान पर पहुँची। ऋषी महाराज? आसन अर्घ पाद्य फल और मूल से

पूजन करके सबों का सत्कार किया ऋष्यशृङ्ग से दी हुई पूजा को ग्रहण करके विभाण्डक मुनि के भय से अपने लोक में जाने को अप्सराओं ने प्रस्थान किया। इतने में कार्य की सिद्धि देखकर ऋष्यशृङ्ग से बोलीं, महाराज ? हम लोगों के भोजन करने योग्य यही फल है इसको लेकर आप जल्दी से भोजन कर लीजिये, जिसमें आपके पिताजी न देखें। ऐसा कह कर अप्सराओं ने कुछ लड्डु ऋष्यशृङ्ग के वास्ते दिया। और भी नाना प्रकारके स्वादयुक्त भोजन करने योग्य वस्तुओं को देकर हर्षपूर्वक अप्सराओं ने शृङ्गिऋषिको गलेसे लगाकर आलिङ्गन किया। उन अप्सराओं से प्राप्त खाद्य वस्तुको ग्रहण करके उनके, सुखका अनुभव करने लगे। अप्सरायें उनकी क्रियाओंके विषयमें प्रसङ्गतः कुछ बातचीत करती हुई विभाण्डक मुनिके भयसे अपने स्थान को चली गयीं। अप्सराओं के जानेके बाद ऋष्यशृङ्ग का हृदय अस्वस्थ होगया, मुखकी प्रभा हीन होगयी। आलिङ्गन स्पर्शके सुखसे खिन्नहोकर चकित नेत्रों से इधर उधर देखने लगे।

दूसरे दिन अपने मनमें अप्सराओंके दर्शन स्पर्शन और गमन आदि प्रकारों को स्मरण करते हुये आश्रम के समीप आये। उस आश्रम के समीप प्रियतमा और भूषण वस्त्र से अलंकृता अप्सराओं के स्थान को देखकर प्रीतिपूर्वक उनके आगमन की प्रतीक्षा करने लगे। स्त्रियाँ भी ऋष्यशृङ्ग को देखकर प्रसन्नता पूर्वक उनके पास आकर बोलीं, हेब्रह्मदेव ! यह आश्रम हमलोगों का है यहां पर अनेक प्रकार के फलमूल लगे हैं तौ भी इनसे हमारी तृप्ति नहीं होती। इसलिये हम सब आपको संग लेकर स्थानान्तर को चलना चाहती हूं। वहां इससे उत्तम फलमूल खानेको मिलेंगे। हृदयंगम उन अप्सराओं के वचन को सुनकर शृङ्गऋषि मोहवश उनके साथ चलने को प्रस्तुत हुए। स्त्रियां उनको लेकर गंगाजी के निकट आयी, उन्हें नौकापर चढ़ाकर अंगदेशमें राजा रोमपाद के राजमन्दिर पर पहुंचीं। शृङ्गऋषिको अंगदेश में आतेही इन्द्रदेव प्रसन्न होकर वृष्टिकिया। सकल प्रजा प्रसन्नहोगई।

ऋषिके आगमन को सुनकर राजारोमपाद आगेसे जाकर साष्टाङ्ग दण्डवत् किया। और अर्घ्य पाद्य से पूजन करके श्रेष्ठ आसन बैठने को दिया। और हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगे। हे ऋषिश्वर आप मेरे ऊपर प्रसन्न होवें। इस प्रकार प्रार्थना करके ऋष्यश्रृङ्गको अपने राजभवन में लेजाकर शान्तानाम कन्या उनको प्रदान किया। इस प्रकार शान्तानाम स्त्री को ग्रहण करके राजासे पूजा और सत्कार प्राप्तकर कुछ दिनतक राजभवन में निवास किया। इधर विभाण्डक मुनि पुत्र ऋष्यश्रृङ्गको खोजने लगे, जब उनका कुछ पता न मिला तब क्रोधपूर्वक शापदेनेकी इच्छा से ध्यान लगा लिये। इतनेहीं में आकाश बाणी हुई कि तुमारे पुत्र को अंगदेशके राजा रोमपाद शान्तानाम अपनी कन्याक प्रदान करने को बुलाया है, हेऋषिश्वर! आपको क्रोध न करना चाहिये। आकाशवाणी को सुनकर विभाण्डक मुनि शान्त होगये। अपने आश्रम में जाकर अपनी तपस्या करने लगे।

वाल्मीकिये आदिकाण्डे दशमः सर्गः ॥ १० ॥

अनेक युगवृद्ध सुमन्त्र महाराज दशरथको इतनी कथा सुनाकर बोले राजन्! और भी देवताओं में श्रेष्ठ सनतकुमारजी और जो कुछ कहे हैं वह मैं आपसे कहताहूं। इक्ष्वाकु नृपति के वंशमें धार्मिक सत्यप्रतिज्ञ महाबली और प्रतापशाली दशरथ नामके राजा होंगे। महाराज दशरथ और अंगराजकी परस्प मित्राता होगी। दशरथ को कौशल्या नाम स्त्री से शान्तानाम एक कन्या उत्पन होगी। अंगराजको रोमपाद नामका पुत्रहोगा। वह रोमपाद सन्तान से हीन होकर दशरथ के पास जाकर प्रार्थना करेंगे, हेमहाराज मेरेको कोई सन्तान नहीं है, आप मेरे धर्म और अर्थका निर्वाह कीजिये। रोमपादके वचन को सुनकर मनमें बिचार करने लगे कि इनका कार्य अवश्य करना चाहिये। ऐसा शोचकर शान्ता कन्या को सन्तान के वास्ते महाराज दशरथने राजा रोमपाद को देदिया। वही शान्ता नाम कन्या को राजा रोमपादने ऋष्यशृङ्गको दियाथा। इतनी कथा

सुनाकर सुमन्त्रजी बोले स्वामी ! अंगराज के सौहार्दसे ऋष्यशृङ्ग आपके भी जामाता हैं, इस पुत्रेष्टिरूप यज्ञमें शान्ताके सहित ऋष्यशृङ्ग को बुलाकर वरणदीजिये । उनको वरण देनसे आपकी अभिलाषा पुरी होजावेगी । और सनत्कुमारजीके कहने के अनुसार आपको चारपुत्र होंगे, देवप्रवर सनत् कुमारजी पहिलेही इस कथाको मुझसे कहेथे । हे राजन् ! आपस्वयं जाकर अंगराजके सहित ऋष्यशृङ्गको निमन्त्रण दीजिये ।

सुमन्त्र के बचन को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक वसिष्ठकी भी सम्मति इसमें लिया, वसिष्ठ जी की आज्ञानुसार अपने मन्त्रियों के सहित अंगदेशको चलने के लिये प्रस्तुत हुये । नानाप्रकार वन और नदी नालोंको तथा पर्वतों को धीरेधीरे आक्रमण करते हुए अंगदेशमें पहुँचे । अंगदेशमें पहुंचकर राजा रोमपाद के समीप ब्राह्मणों में श्रेष्ठ अग्निके समान चमकते हुए ऋषिपुत्रको देखे । इसके उपरान्त राजा रोमपाद यथाविधिसे अपने परम मित्र दशरथ की पूजा किये । और सत्कार पूर्वक महाराज दशरथको योग्य स्थान देकर टिकाया । महाराज दशरथ सात आठ दिन तक रोमपादके यहां रहकर अपने परम मित्र रोमपाद से बोले, हे राजन् ! आपकी शान्ता कन्या को पतिके सहित मैं अपने यज्ञकार्य में बुलाने को आया हूं । आप ऐसी अनुमति दीजिये जिसमें मेरी अभिलाषा पूर्ण होजावे । दशरथ के बचन को सुनकर रोमपाद प्रसन्न होगये । और दशरथ के सहित शृङ्गऋषिके पास जाकर बोले, हे ऋषिश्वर ! शान्ता के सहित आप अयोध्या पुरीमें जाकर हमारे परम मित्र महाराज दशरथ के यज्ञ स्थान को सुशोभित कीजिये । रोमपाद के बचन को सुनकर शान्ता के सहित ऋष्यशृङ्ग अवध पुरीको अलंकृत करने वास्ते प्रस्तुत हुये । दशरथ रोमपाद को परस्पर गलेसे मिलकर साष्टाङ्ग प्रणाम किया, और दम्पति ऋषिको रथपर बैठाकर मन्त्रियों समेत अयोध्या की ओर चले । चलने के समय दशरथ रोमपाद की और रोमपाद

दशरथ की परस्पर प्रशंसा करने लगे। अनेक प्रकार के वन पर्वत नदी झरना आदिका दृश्य देखते हुये जब रथ अयोध्यापुरीके निकट पहुँची तब दशरथ ने सुमन्त्र को आज्ञा दिये कि अतिशीघ्र अवध पुरीमें जाकर नगर को अलंकृत करा दीजिये। अपने स्वामी के बचन को सुनकर सुमन्त्र शीघ्रही अयोध्या पुरीमें आकर हरएक स्थानोंपर तोरण कलश कदली खंभ पुष्पमाला, और पताका आदि से सुशोभित करदिया। ऋषिके समेत राजादशरथ के आगमन को सुनकर अयोध्या वासी प्रसन्न होगये। घरघर मंगला चार होनेलगा। सकल नगर वासी शंख भेरी मृदङ्ग दुन्दुभी आदि बाजों को बजाते और ब्राह्मण लोग वेद पाठ करते ऋष्यिपत्नी समेत ऋषि और राजा को आगे स्वागत करके राजमन्दिर पर लिवालाये। इन्द्रकी सहायता करने के लिये दशरथ जब स्वर्ग लोकमें गयेथे, उस समय दशरथ को देखकर स्वर्ग वासियों को जो आनन्द मिलाथा, उससे बढ़कर आनन्द शृङ्गऋषिके आनेसे अयोध्या वासियों को हुआ है। राजा दशरथ अपने में राजभवन ऋषिश्वर को लेजाकर रानियों सहित षोडशो पचार से पूजन किया पक्वान आदि भोजन देकर एक अच्छा स्थान रहने को दिया। शृङ्ग ऋषिके समागम से राजा अपने को कृत कृत्य समझने लगे।

शान्ता को प्रेमपूर्वक कौसल्या आदि रानियों नेसत्कार किया, शान्ता अन्तः पुरको देखकर आनन्द और प्रीति में मग्न होगयी। दम्पती ऋषिश्वर कुछ काल पर्यन्त सुख पूर्वक अयोध्या पुरी में रहने लगे।

बाल्मीकिये आदि काण्डे एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥

इस प्रकार ऋष्यशृङ्ग को आने पर कुछ समय अप वाहित करके शास्त्रोक्त दोषरहित वसन्तकाल में राजादशरथ यज्ञ करने को प्रस्तुत हुए। राजा दशरथ देववर्णिन ब्रह्मदेव ऋष्यशृङ्ग को साष्टाँग प्रणाम करके सन्तान के लिये यज्ञकी रचना करने की अनुशासन मांगने

लगे । इस प्रकार ऋषिश्वर के अनुशासन को पाकर यज्ञकी सामग्री एकत्र करने की आज्ञा मंत्रियों को हुई । और सरयू नदी के उत्तर तटपर यज्ञभूमि बनाने की आज्ञा पाकर सुमन्त्र से अतिरिक्त मंत्रिगण अपने अपने कार्यों में व्यग्र हो गये । और सुमन्त्र को आज्ञा हुई कि सुयज्ञ जाबालि काश्यप पुरोहित वसिष्ठ वामदेव भृगु अंगिरा अगस्त्य भारद्वाज आदि ऋषिश्वरों और मुनीश्वरों को तथा अन्यान्य वेद शास्त्र के जानने वाले ब्राह्मणों को अति शीघ्र मेरे समीप लिवा लाइये ।

राजा की आज्ञा को सादर स्वीकार करके अतिवेग से चलने वाली रथ को लेकर शीघ्र ब्राह्मणों का समवाय राजमन्दिर पर उपस्थित हो गये । उन वेदशास्त्र के जानने वाले ब्राह्मणों को राजा सादर प्रणाम और पूजा तथा सत्कार करने लगे । ब्राह्मणों की पूजा और शिष्टाचार करके विनय पूर्वक महाराज दशरथ बोले, हे ऋषिश्वरो ! आप लोगों के अनुग्रह से सब प्रकार का सुख प्राप्त है तौ भी पुत्र सुखका परिताप हृदय में कांटे के समान गड़ता है, अब मैं पुत्र प्राप्ति के लिये अश्वमेध नाम का यज्ञ करने की इच्छा करते हैं । ऋषिपुत्र अर्थात् ऋष्यशृङ्ग के प्रभाव से मेरा मनोरथ पूर्ण होगा । राजा के बचन को सुनकर ब्राह्मणों ने धन्य धन्य कहा । वशिष्ठ आदि ऋषिश्वर और ऋष्यशृङ्ग राजा से बोले हे राजन् ! यज्ञकी सामग्री एकत्र करके यज्ञिय घोड़े को छोड़िये, और सरयू के तट पर यज्ञभूमि को निर्माण कराइये । पुत्र कामना के लिये आप की धार्मिक बुद्धि इस प्रकार यज्ञ कार्य में प्रवृत्त है, तो आपको महाबली और पृथ्वीमण्डल का एक छत्र राज्य करने वाले चारपुत्र होंगे । आशीर्वाद स्वरूप ब्राह्मणों के बचन को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक मन्त्रियों को शुभाक्षर से संयुक्त आज्ञादिये कि गुरु के बचन के अनुसार शीघ्र हमारे यज्ञकी सामग्री एकत्र हो जावे और अश्वरक्षा के वास्ते सैनिकों को इकट्ठा करके उपाध्याय के सहित यज्ञके घोड़े को छोड़ दीजिये और सरयूके उत्तर तटपर यज्ञशाला निर्माण कराइये

क्योंकि शास्त्रकी दृष्टि से विपरीत कार्यको करने वाला कार्यकर्ता अपनी सफलता को नहीं प्राप्त कर सकता जिसप्रकार हमारे यज्ञकी पूर्णता होवे वैसा ही अनुष्ठान आप लोग करिये। राजा के अमृतरूपी वचन को सुनकर सब मन्त्रिगों ने सादर स्वीकार किये, और राजा के विचार के अनुकूल मन्त्रीगण अपने अपने कार्य में लीन हो गये इसके उपरान्त अपने अपने कार्य के सम्भार करने में सब को व्यग्र देखकर राजा अपने राजभवन में गार्हपत्य अग्नी के समान अपने स्थान पर स्थित हो गये।

वाल्मीकिये आदि काण्डे द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥

यज्ञिय अश्व एक बार पृथिवी की प्रदक्षिणा करके जब यज्ञ स्थान पर उपस्थित हुआ। तब पुनः दीक्षा प्रवृत्ति उपदेश अर्थात् मंत्र उपदेश करने के लिये महाराज दशरथ वसिष्ठमुनि के स्थानपर जाकर अरून्धती समेत गुरुवसिष्ठ को प्रणाम किया। और विनय युक्त बचन बोले हे भगवन्! शास्त्र विधिसे इस यज्ञिय अश्वको मंत्रोपदेश देकर ऐसा प्रयत्न करिये कि जिसमें ब्रह्मराक्षस आदि इस कार्य में विघ्न न कर सकें। हेभगवन्! आपही मेरे लिये शरण हैं और हमारे कुलगुरु हैं। इस लोक और परलोक के स्वामी हैं। इस यज्ञ के अंगों को वेदशास्त्र की दृष्टि से आपही सम्हालने में समर्थ हैं। दशरथ के बचन को सुनकर वसिष्ठजी बोले हेराजन्! मैं अपने सामर्थ्य पर्यन्त आपके कल्याण का प्रयत्न करूंगा। आप अपने हितके वास्ते कर्म-तन्त्र में प्रवीण अर्थात् कर्मसमाप्ति पर्यन्त रक्षा करने वाले सेवकों कोऔर चित्र खींचने वालों को कुवां बावली आदि बनाने वालों को ज्योषिषियों को नाटक करने वालों को और नाच करने वालों को एकत्र करो। वसिष्ठजी के वचनको सादर स्वीकार करके यज्ञांग को एकत्र करनेके लिये सेवकों को नियुक्त किये। इसके उपरान्त यज्ञ महोत्सव में दूरसे आये हुये राजाओं के रहने के योग्य स्थान बनवाये। और यज्ञकर्म में समवेत सज्जनों के वास्ते

अनेक प्रकार के स्वादयुक्त भोजनादि उपकरण को एकत्र किये। और ब्राह्मण ऋषिश्वर मुनीश्वरों को रहने के योग्य स्थान को अलग निर्माण किये। वैदेशिक भूपतियों के वास्ते अच्छे अच्छे हर्म्य तैयार हुए। घोड़ा हाथी रथ ऊंट आदि जन्तुओं को रहने वास्ते अलग अलग स्थान तैयार किये गये। राजभटों को अलग वास स्थान निर्माण हुआ। नाना प्रकार स्वादिष्ट भोजन के पदार्थ समय समय पर सबको मिलने लगे। यज्ञ महोत्सव में उपस्थित चारो वर्णों की यथाक्रम से पूजा और सत्कार किया। महाराज दशरथ तथा उनके मन्त्रीगण कामक्रोध वशसे भी किसी अपमान कि चेष्टानही की। यज्ञशाला में प्रत्येक जनो को स्थान आदि बनाने में व्यग्र कारीगरों की भी यथा क्रमसे विशेष सत्कार करना चाहिये। अर्थात् बड़े बड़े राजा महाराजा तथा सैनिक और राजभट तथा अन्यान्य ऋषि मुनि गण आदि लोगों को धन और भोजन आदि वस्तुओं से परिचारक गण सत्कार करेंगे। वेसन्मान करने वाले सेवकों का मेरी ओर से सत्कार करना चाहिये। सब कार्यवाहकों को वसिष्टजी प्रत्येक कार्यों को संपादन करने की आज्ञा देकर, पीछे सुमन्त्रजी को अपने पास बुलाकर बोले, मन्त्रिन्! अब हमारे परममित्र और धार्मिक तथा संबंधि जितने राजा हैं उनको अब शीघ्र इकट्ठा कीजिये तथा देश देश के ब्राह्मणों को क्षत्रियों को वैश्यों को औशूद्रों को निमन्त्रण भेजकर बुलाइये। इसके उपरान्त रथके सहित आप स्वयं जाकर मिथिला महीपति महाराज जनकको सादर लिवा लाइये। तथा काशीराजको परमवृद्ध और संबंधि केकय राजको अंगदेश के नृपति महाराज रोमपाद को और कोशल देशके राजा भानुमान को और मगधदेश के राजाको आपस्वयं लिवा लाइये। तथा सिन्धुदेश के सौवीर देश के सौराष्ट्र देशके और दाक्षिणात्य समस्त राजाओंको निमन्त्राण भेजिये। और भी जितने देश देशान्तर के नृपति हैं उनको भी निमन्त्रित कीजिये। वसिष्ठजी की आज्ञाको सादर शिरोधार्य्य करके सुमन्त्रजी

हर एक देशों में दूतों को भेज दिया। और जितने कर्मकारगण थे उनको प्रत्येक कर्मों को संपादन करने की आज्ञा दिये। गुरुवष्ठिकी प्रेरणा से सुमन्त्रजी अपने स्वयं उन महाराजाओं को बुलाने वास्ते रथ लेकर गये। वसिष्ठ आदि महर्षियों का इतना सन्देशा सबके लिये अवश्य था, कि किसीसे किसी की अवहेलना न होने पावे। अवज्ञा करने से कार्यकर्ता की हानी होती है। दो चार दिन के अनन्तर में देश देशान्तर से राजा लोग आने लगे! महाराज दशरथ को भेंट देनेके लिये उत्तम उत्तम रत्न तथा धन आदि लेकर यज्ञमहोत्सव में राजा लोग आने लगे। उन निमन्त्रित महाराजाओं को देखकर प्रसन्नता पूर्वक वसिष्ठजी दशरथ से बोले, हे राजन्! आपके शुभ कार्यमें आप की आज्ञाको सादर स्वीकार कर निमन्त्रित भूपालों की समष्टि एकत्र हो गइ है और मैंने सबको स्थान तथा अन्नपान आदि पदार्थों से उचित्त सत्कार करदिया है। और कार्य निर्माण में निरत आपके परिचारकों ने सकल सामग्री प्रस्तुत करदिये हैं अब आप भी यज्ञमें दीक्षित होनेके वास्ते यज्ञशाला में गमन कीजिये। हे राजेन्द्र! यज्ञस्थल सब प्रकार से परिपूर्ण है, उसको देखनेसेही ज्ञात होगा कि, मानो मनकी कल्पनाहीं इन को रचयिता है। इसके उपरान्त वसिष्ठ और ऋष्य शृङ्ग की अनुमति को स्वीकार करके शुभ मुहूर्त में राजा यज्ञस्थल में गमन किया। तदनन्तर ऋष्यशृङ्गको आगे करके हयमेध यज्ञको आरंभ किया। यज्ञस्थल में उपस्थित रानियों के समेत राजा दशरथ शास्त्रकी भाँतिसे दीक्षित हुए।

वाल्मीकिये आदिकाण्डे त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

वर्षको पूर्णहोते पृथिवी को प्रदक्षिणा करके यज्ञका घोड़ा यज्ञस्थल में आया उसी समय सरयू नदी के उत्तर किनारे पर यज्ञहोने लगा। धर्मात्मा महाराज दशरथ ऋष्यशृङ्ग को आगे करके अश्वमेध महायज्ञ को करने लगे। वेदशास्त्र को जानने वाले ब्राह्मण गण शास्त्रके अनुसार यथाकाल अनुसरण करके कर्मकरने लगे। मीमांसा

आदि शास्त्र के अनुसार पहिले प्रवर्ग्य नामक कार्यको समाप्त करके अनन्तर उपसद नामक इष्टिकार्य करना आरंभ किया । देवताओं का पूजन करके प्रसन्नता पूर्वक ऋषिश्वर और मुनिश्वरों ने प्रातः सवनादि कार्य करने में तत्पर होगये । पहिले इन्द्र देवके लिये आहुति प्रदान किये, अनन्तर राजा की बड़ाई करके द्विजवरों ने मध्यन्दिन कार्यको आरंभ किया । इसके उपरान्त महाबली दशरथ का तृतीय सवन उन ब्राह्मणों ने पूर्णकराया । ऋष्यशृङ्ग वसिष्ठ वामदेव जाबालि आदि ऋषिश्वरों ने शिक्षा अक्षर और स्वरसहित वेद मंत्रों का पाठकर के इन्द्रादि देवताओं का आवाहन करने लगे । विनियोग संयुक्त उनके वेदमन्त्रोंके द्वारा आवाहन किये गये देवगण अपना अपना यज्ञभाग ग्रहण करने लगे । सामवेद के सुमनोहर मन्त्रों से आवाहन किये गये शेष देवगण यथायोग्य हविष्य को ग्रहण करने लगे । प्रदान की गयी आहुति कोई निष्फल नहीं हुई और कोई कार्य भी विपरीत न हुआ, अर्थात् मन्त्र से पवित्र और देवगण को प्रदान आहुति मंगल मय हुआ था ।

इसयज्ञ महोत्सव में निमन्त्रणके द्वारा बुलाये गये ब्राह्मणों समाज में कोई भी वेदादि विद्यासे मूर्ख नहीं थे, और यज्ञकार्य पर्यन्त किसी समय में किसी एक मनुष्यको भूख प्यास निद्रा आदिका कष्ट नहीं होने पाया । क्यों कि वसिष्ठ जी और सुमन्त्र के अनुरोध से हजारों सेवक सब की सेवा करने के वास्ते नियुक्त किये गये थे ।

महाराज दशरथ के हयमेध यज्ञ महोत्सव में ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र तपस्वी आश्रमी वृद्ध रोगी आतुर स्त्रियां बालक ये सब निरन्तर उत्तम उत्तम भोजन पाने लगे । परन्तु दिन रात भोजन करने से भी किसी कि तृप्ति नहीं होती थी, बल्कि अन्न दीजिये अन्न दीजिये ऐसा शब्द मांगने वालों के मुखसे निकलने लगे, और इधर से सबके मनोरथ पूर्ण होने लगे । नित्यप्रति पर्वत के बराबर पक्वान के ढेर लगने लगे । और अनेक देश देशान्तर में यज्ञ से आये

हुए नर नारी गण इच्छा पूर्ण भोजन से तृप्ति होने लगे। भोजन के समय ब्राह्मण लोग अस्वादित अन्न को खाकर भोजन की बड़ाई और राजा के यश प्रशंसा करते हुए आशीर्वाद पूर्वक जय जय जय ध्वनि करने लगे।

सुवषिधारी अर्थात् कुण्डल और कंकण को धारण किये हुए ब्राह्मण गण ब्राह्मण जाति को और क्षत्रिय, क्षत्रिय को वैश्य जाति वैश्य जाति को और शूद्र जाति शूद्र जाति को प्रेम-पूर्वक परोसने लगे, उन परोसने वालों की सहायता अन्यान्य उपस्थित लोगों से होने लगी। भोजनादि के उपरान्ति वेदशास्त्रको जानने वाले ब्राह्मण अपने अपने पूर्व पक्ष और उत्तर पक्ष का आश्रय ग्रहण करके हेतु वाद सहित शास्त्र विचार करना आरंभ किया। कर्म कुशल ब्राह्मण लोग शास्त्रानुसार प्रतिदिन यज्ञ कर्म को करने तथा कराने लगे। सम्राट दशरथ के यज्ञ महोत्सव में जिन ब्राह्मणों ने षड़ङ्ग सहित वेद नहीं पढ़े थे, जो व्रत अनुष्ठान में प्रसिद्ध नहीं थे, जिनको शास्त्र वाद में पाण्डित्य की निपुणता नहीं थी, वे यज्ञकार्य में व्रती व सदस्य नहीं बनाये गये। उस यज्ञमण्डप की रचना काल में २१८ यूप (खंभे) गाड़े गये। जिनमें छः बेल के छ खैर के और छ खैर तथा पलास से मिश्रित १८ खंभे थे। इसके अतिरिक्त फैली हुई भुजाओं के बराबर लम्बे दो खंभे और गाड़े गये थे जिनमें एक बहेड़ा का और दूसरा देवदारू के काष्ठ का बना था। शिल्पकर्म में चतुर कारीगरों ने इन २१ खंभों पर यज्ञ की शोभा शास्त्र विधान से बढ़ाने के लिये सोना मढ़वा दिये थे। इन पूर्वोक्त २१ खंभ और चौबीस चौबीस अंगुल की ऊंची इक्कीस अरत्नीयों पर भांति भांति के कपड़े वेष्टित किये थे। इनकी शोभा एक विचित्र दीख पड़ती थी। यज्ञ के इतर कार्यों को भली भांति संपादन करके कारीगरों ने मनोह और देखने योग्य आठ पहलू का एक खंभ और निर्माण किये, जिसको देखने से एक विलक्षण शोभा प्रतीत होती थी। भांति भांति के कपड़ो के लपेटने

से और गन्धपुष्प से सुसज्जित होने से आकाश में प्रकाशित सप्तर्षि तारों के समान शोभा पाने लगे । शिल्पकर्म में कुशल कारीगरों ने ईटों से अग्नीकुण्ड और कुण्ड के प्रत्येक स्थानों को बनाया । महाराज दशरथ के इस यज्ञमहोत्सवमें यज्ञकर्म कराने में चतुर ब्राह्मणों ने वेदी बनाकर सोनेकी ईटोंसे पंखबनाया और अठारह प्रस्तारका एक गरूड़ स्थपान किया, इसकी विधि वेदों से विस्तार पूर्वक लिखी हैं । यज्ञकुण्ड के आसपास देवताओं के लिये क्रम से अनेक प्रकार के सर्प पक्षी और अश्व आदिका स्थापन किये । जलचर आदि जन्तु जहांतक इकट्ठे किये गये थे उन पशुओंको बलिदेने के वास्ते यज्ञ कराने वाले ब्राह्मणों ने शास्त्रानुसार यथास्थान में बंधवादिया । पूर्व में कहे हुए अष्टादश यूपस्तभों में तीन सौ पशु और महाराज दशरथ का अश्वरत्न बंधाथा । महारानी कौसल्या उसखंभे में बंधेहुए घोड़े की पूजन करके तीनखड्ग से उस अश्वका बधकिया । और अपनी धर्मकामना से शान्तहृदय से एक रात्रि पर्यन्त अश्वके पास निवास किया । अध्वर्यु-होता-उदगाता-व राजमहिषि परिवृत्ति सहित वावाताको यज्ञिय घोड़ेके साथ नियोजित किया, परिवृत्ति और वावाता यह दो प्रकार की स्त्री धर्मशास्त्रमें कही गई हैं । क्षत्रिय वैश्यकी स्त्री में जो गमन करता है उसको वावाता कहते हैं और क्षत्रिय की शूद्रा स्त्री को परिवृत्ति कहते हैं । इसके उपरान्त वेदमें प्रवीण ऋत्विक् गण उस घोड़े की वपालेकर शास्त्रानुसार होम करने लगे, और महाराज दशरथ अपने पापको दूरकरने के लिये होम किये गये घोड़ेकी चरबीके धूपगन्ध को सूंघने लगे । और सोलह ऋत्विक ब्राह्मण उस घोड़े के सब अङ्ग प्रत्यङ्गादि छेदन करके विधि पूर्वक अग्निमें आहुति देने लागे ! और यज्ञोंमें पाकर की शाखामें हविको थापन करके आहुति दीजाती है, परन्तु इस अश्वमेध यज्ञमें वेतकी शाखामें हवि स्थापन करके आहुति देनेका नियम हुआ, इसी अनुसार ऋत्विज गण वेतके दण्डकी आहुति देने लगे । अश्वमेध यज्ञमें तीन

दिन सवन क्रिया करनी होती है वह कल्पसूत्र और ब्राह्मणों से समर्थन की हुइ है। पूर्वोक्त तीनदिन में पहिले दिन अग्निष्टोम दूसरे दिन उक्थ तीसरेदिन अतिरात्र नामका यज्ञ शास्त्रविधि से अनुतिष्ठ हुआ। इसके उपरान्त ज्योतिष्टोम, आयुष्टोम, अतिरात्र, अभिजित्, विश्वजित, और आप्तोर्याम आदि सब महायज्ञ के कार्य होने लगे। परमधार्मिक वदान्य और दान शील महाराज दशरथ ने ब्राह्मणों को इस प्रकार दक्षिना दिये थे, होता को पूरब दिशा अध्वर्यु को पश्चिम दिशा ब्रह्माको दक्षिण दिशा और उदगाता को उत्तरदिशा दक्षिणा में दे दिये, पहिले उनके कुल में स्वाम्भुव मनुने अपने यज्ञ में ब्राह्मणों को जिस प्रकार दक्षिणा दान दिये थे, इस समय कुल वर्धन महाराज दशरथ ने भी वैसाही किया। न्यायपूर्वक यज्ञ को समाप्त हो जाने पर राजा दशरथ ने ऋत्विज ब्राह्मणों की दक्षिणा में शेष भूमि को भी दान करादिये। श्री मान् सूर्यनन्दन महाराज दशरथ के इस प्रकार की दक्षिणा दान से ब्राह्मण अतिशय प्रसन्न होकर उन पवित्र नरनाथ से ऋत्विजगण बोले, हे राजन्! आप अकेले इस समस्त भूमण्डल को रक्षा करने योग्य हैं, हम सब तपस्वी ब्राह्मणों को पृथिवी नहीं चाहिये, क्योंकि हम इसके पालन करने में असमर्थ हैं हे महीपाल हम सब ब्राह्मण सदा यज्ञ और वेदपाठमें निरत रहते हैं हम इस पृथिवी को लेकर क्या करेंगे। हमें कुछ धन देकर आप अपनी पृथिवी हम से लीजिये। हे राजन्! पृथिवी का आधिपत्य लेकर हमें क्या करना हैं हम आपसे गौ सुवर्ण रत्न अथवा मणि आदि कुछ थोड़ा धन ले सकते हैं वही आप हम सब ब्राह्मणों को देकर अपनी पृथिवी का भोग कीजिये।

ब्राह्मणों के विशेष आग्रह से महाराज दशरथ ने वेदपारग ब्राह्मणों के लिये एक लाख गौ दशकरोड सोनेका मोहर और चालीस करोड़ चांदी की मुद्रा उन ब्राह्मणों को दिया, ब्राह्मणों ने निष्क्रय दक्षिणा लेकर पृथिवी को लौटादिया, राजासे मिले हुए समस्त धन

को ऋष्यशृङ्ग और वसिष्ठजी को समर्पण कर दिया, यह दोनों महर्षि उस धन को विभाग कर दिया, ब्राह्मणों ने अपना अपना भाग-लेकर अतिशय प्रसन्न होकर राजासे बोले महराज, हम सब ब्राह्मण अपनी दक्षिण पाकर सन्तुष्ट हैं । इसके उपरान्त महाराज दशरथ ने जम्बूदेशका सोना ब्राह्मणों को दिया, फिर कई करोड़ सुवर्ण खर्च करके अन्यान्य देशीय ब्राह्मणों को सन्तुष्ट किया । महाराज दशरथ ने यज्ञमहोत्सव में इस प्रकार दक्षिणा दान दिया कि उनके पास कुछ भी धन शेष न रहा, राजाको निर्धन देखकर एक दरिद्र ब्राह्मण राजा से कुछ धन मांगा, महाराज ब्राह्मण की याचना से विस्मित होकर अपने हाथका कंगन उतार कर ब्राह्मण को दिया । ब्राह्मण अपनी तृष्णा के योग्यधन पाकर प्रसन्न होकर राजा को शतसः आशीर्वाद दिया महीपाल महाराज दशरथ ने विनयावनत होकर ब्राह्मणों के चरणोंपर शिर झुकाकर प्रणाम किया, ब्राह्मणों ने प्रणाम करते हुए राजाको भूरिभूरि आशीर्वाद प्रदान किये । इसके उपरान्त देश देशान्तर के जो निमन्त्रित भूपति मण्डल आये थे, उन सब राजों ने शिर झुका कर महाराज दशरथ को प्रणाम किया महाराज सबको सादर आशीर्वाद दिये । पापको शमन करने वाले वंशको बढ़ाने वाले स्वर्ग और मोक्षको देने वाले इस महायज्ञ को समापन करके नरपति दशरथ प्रीति पूर्वक मुनिवर ऋष्य शृङ्ग से बोले, हे सुव्रत ! जिसमें मेरे वंश की वृद्धी हो आप वही उपाय कीजिये, ऋष्य शृङ्ग तथास्तु कहकर राजा से कहे, हे राजन् ! तुम्हारे चार पुत्र वंशको बढ़ाने वाले होंगे । राजा ऋषिश्वर के अमृत मय वचन को सुनकर तृप्त हो गये, और बार बार ऋष्य शृङ्ग को प्रणाम करने लगे ।

वाल्मीकिये आदिकाण्डे चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥

दशरथ जीकी उत्कट अभिलाषा और प्रीति पूर्वक बचन को सुनकर ऋषीश्वर ध्यान पूर्वक राजा से बोले, हेराजन्! मैं आप को पुत्र उत्पन्न होने के लिये अथर्वण वेद के मन्त्रों से सिद्धि देनेवाले

पुत्रेष्ठि यज्ञ को कराऊँगा । यह कहकर महातेज सम्पन्न ब्रह्मर्षि ऋष्य शृङ्ग पुत्रेष्ठि यज्ञ को आरम्भ करके अथर्ववेद के अनुसार हवन करने लगे । ऋषीमंत्र से प्रेरित देवता गंधर्व सिद्ध आदि ऋषी मुनि आदि यज्ञ स्थल में आकर अपना अपना यज्ञ भाग लेने । इस महोत्सव रूप यज्ञ में एकत्र देवगण तथा महर्षिगण न्यायानुसार सृष्टि कर्ता ब्रह्माजी से बोले, महाराज ! आपके बरदान प्रभाव से बलवान रावण निरन्तर हम लोगों को पीड़ा देरहा है, हम सब देवगण उसके तेज और प्रताप को नहीं सहन कर सकते हैं, बल्कि उसके भयके मारे अपने अधिकार का त्याग करके उसकी आज्ञा कोही पालन करते हैं । हे भगवन् ! प्रसन्न होकर आपने उसे जो बरदान दिया है, उसी बरदान के आश्रय पर नाना भांति अत्याचार करता है और हमसब उसके अत्याचार को सहन करते हैं । हे भगवन् । वह राक्षसराज अपने समान किसीको बलवान न जानकर तीनों लोकको व्याकुल करदिया है । और इन्द्र वरुण यम कुबेर अग्नि वायुसूर्य चन्द्र आदि लोक पालों को अपने अधीन करलिया है । हे ब्रह्मदेव ! वरदान के कारण देवता यक्ष गंधर्व ब्राह्मण ऋषिश्वर व मुनिश्वर पीड़ित होगये हैं । इस रावण के आज्ञानुकूल सूर्य नारायण घाम करते हैं । वायुमन्दमन्द गमन करते हैं समुद्र अपने उत्ताल तरङ्ग को भूलकर निश्चल सा बनाहै, हे भगवन् ! राक्षसों के घोर अत्याचार से अग्नादि कर्म सभी संसार से उठ जांयंगे, अब जल्दी उसके बधका उपाय कहिये । ब्रह्मदेव करुणामय देवगण के बचन को सुनकर चिन्ता पूर्वक स्वयम्भू बोले, मैंने उस दुरात्मा के वधका उपाय निश्चय करलिया है, उसदुष्टने तपस्या करके यह बरदान मांगा है कि देवता गंधर्व यक्ष और राक्षस से मेरी मृत्यु नहीं होवे, तपस्या के अधीन हो मैंने उसे वही बरदान दिया है, मनुष्यों को अपना आहार जानकर मनुष्य से अपनी मृत्यु का भय न समझकर मुझसे मनुष्य के लिये बरदान नहीं मांगा है, इसलिये मनुष्य के हाथ सेही उसकी

मृत्यु होगी। ब्रह्माके वचन को औषधी समान जानकर देवता यक्ष गंधर्व ऋषि मुनि सभी प्रसन्न होगये। इसके उपरान्त कोटिसूर्य के प्रकाश के समान तेज सम्पन्न शंख चक्रगदा पदम को धारण किये पीताम्बर पहिने केसरका चन्दन लगाये गरुड़पर चढ़े किरीट मुकुट कुंडल और केयूर को धारण किये सूर्यके समान चमकते हुए विष्णु भगवान् यज्ञकुण्ड से बाहर निकले। ब्रह्मादि देवता आसन से उठकर विष्णु भगवान की वेदमंत्रों से स्तुति करने लगे। हे दीनदयालु त्रिलोकी नाथ आप जड़ और चेतन के स्वामी होकर सब जीवोंकी उत्पत्ति पालन और नाश करतेहो आपके गुण महिमा यश तथा लीला और कामोंका वर्णन हजारों जीभसे भी नहीं हो सकता। आप केवल पृथिवी का बोझा उतारने और अधर्मियों को मारने तथा हरिभक्तों को सुख देनेके लिये अपनी इच्छा से आप सगुण अवतार लेते हैं, नहीं तो आपके विराट रूपमें तीनों लोकका व्यवहार रहता है सोमैं आपको साष्टाङ्ग दण्डवत् करता हूं। इस प्रकार स्तुति करके ब्रह्माजी बोले, हे प्रभो! हमसब देवगण अपनी मंगल कामना के लिये आपको किसी कार्यमें नियुक्त करेंगे कृपापूर्वक स्वीकार करिये। हे प्रभो! यह राजा दशरथ आयोध्या पुरीके राजा हैं, यह बड़े धर्मात्मा दानवीर और महर्षि के समान हैं, इनको ह्रीश्री और कीर्ति के समान तीन स्त्रियां हैं, इन्ही कौसल्या आदि तीनों स्त्रियों में अपने अंशको चार भागों में विभाग होकर आप उनके यहां पुत्रभाव को प्राप्त हूजिये और मनुष्य का अवतार लेकर राक्षस राज रावण को युद्ध में मारकर देवताओंको बन्धन से छुड़ाइये और पृथिवी को सुख दीजिये।

यह राक्षसराज रावण ब्रह्माके वरदान से देवता गंधर्व किन्नर अप्सरा आदिसहित इन्द्रादि लोकपाल रावण के भयसे संत्रस्त हो रहे हैं। जो गंधर्व और अप्सरा गण नन्दन वनमें बिहार व क्रीड़ा सदा किया करते थे, वे भी इस प्रतापी रावण के हाथ से मारेगये उन्ही के नाशके कारण हम सब ब्रह्मादि सहित देवगण ऋषि मुनियों के

समेत आपके शरण आये हैं, हेदेव आपही परमगति हैं। सब लोगों के नमस्कार योग्य भक्तवत्सल भगवान शरणमें आये हुए ब्रह्मा आदि देवताओंसे बोले,—"हेसुरगण! तुम लोग कुछ सन्देह मतकरो हम तुम लोगों के दुःख निवारणके लिये मनुज अवतार लेकर युद्धमें पुत्रपौत्र मन्त्री और भाई बन्धु परिवार तथा जाति सहित असुरों को निर्मूल कर ग्यारह हजार वर्षतक पृथ्वी का पालन करते हुये मनुष्य लोक में वास करूंगा, भगवान नारायण आत्मस्वरूप देवताओंको बरदान देकर भूलोकमें अपने जन्म स्थानके संबंधमें चिन्ता करने लगे। इस प्रकार कमलयन विष्णुभगवान अपनेको चार अंशोंमें विभागकर राजा दशरथ के यहां जन्मलेने कि इच्छा किये। देवता गंधर्व अप्सरा ऋषिमुनिगण अपने ऊपर भगवान को प्रसन्न देखकर अनेक प्रकार से स्तुति करने लगे। हेभगवन्! बरदान पानेसे अभिमानी और देवलोक के शत्रु तीनों लोकको पीड़ा देने वाले और साधु तथा तपस्वियों को भयदेने वाले महां कटंक रावणको परिवार सहित संहार कीजिये। और फिर अपने स्थान को अर्थात् हम लोगों को सुखदेने के लिये बैकुण्ठ लोकमें चिरस्थायी होकर निवास कीजिये।

बाल्मीकिये आदिकाण्डे पंचदशःसर्गः ॥ १५ ॥

इसके उपरान्त भगवान नारायण सर्वान्तर्यामी रावण को नाश करने की सबकुछ उपाय जानते थे, तौभी नम्रतापूर्वक देवताओंसे बोले—हे देवगण! मैं कौन से उपायोंसे उसदेव द्रोही राक्षसको संहार करूंगाइस विषय में आपलोग कुछउपाय सोचे हों तो कहिये। देवगण अविनाशी विष्णुभगवान के बचनको सुनकर ब्रह्मादि देवतोंने प्रार्थना किया, कि हेप्रभो! इससमय आपको मनुष्यतनु धारणकर रावणको युद्धके द्वारा बध करना होगा। हेशत्रुसूदन! उस राक्षस राजने पूर्वकालमें बहुत तपस्या किया था, उसकी तपस्याके प्रभाव से प्रसन्न होकर यह वरदान दिया है कि तुमको मनुष्य से अतिरिक्त और किसी प्राणी से डर न होगा। वह अपने सामने मनुष्यकोतुच्छ जानकर मनुष्य मात्रसे भय

नहीं समझा और ब्रह्मदेव के वरदानको लाभ करके अति अभिमानी हुआ इस समय वह अपने समान दूसरा वादि अपना किसीको न जान कर स्वर्गसे देवता तथा देव कन्याओं को और नाग कन्याओं को और मर्त्यलोककी महासुन्दरियों को हठात् आकर्षण करके उपभोग कर रहा है। हे पुरुषोत्तम! आपको नरतनु धारण किये विना उसकी मृत्युनहीं होगी। इसकेलिये हम लोगोंने यही एक उपाय सोच रक्खी है। विष्णु भगवानने देवताओंके मुखसे नरतनुधारण करनेकी बात सुनकर दशरथ नृपतिको पिता कहकर संबोधन दिया । शत्रुसूदन महाराज दशरथ पुत्रेष्टि यज्ञ में दीक्षित हुए अर्थात शत्रुको नाश करने वाले पुत्रेष्टि यज्ञ करने लगे । उसी समय नारायण उनके यहां अवतार लेने का निश्चय किया ब्रह्माजी देवताओं समेत विष्णुभगवान की स्तुति और पूजा किया, विष्णुभगवान वरदान देकर अपने लोकको चलेगये।

इसके उपरान्त महाराज दशरथ के यज्ञकुण्ड की अग्निसे महा-पराक्रमी और अतुल प्रभावशाली एक पुरुष प्रगटहुए। वह पुरुष काले पहाड़के शिखर के समान लंबा काला रंग लाल मुख लाल वस्त्रको धारण किये सिंहके समान बड़ेबड़े रोम और डाढी मूंछ सहित शुभलक्षण से युक्त दिव्य अलंकार से भूषित सूर्यके चन्द्र तथा अग्नि के समान तेजस्वी राजचिन्हों से सम्पन्न प्रियपत्नी की नाईं खीरका पात्र हाथमें लिये हुए यज्ञ कुण्ड से बाहर निकल कर महाराज दशरथसे बोले, हे राजन्! मुझको ब्रह्माजी का भेजा हुआ पुरुष जानो। राजा दशरथ यज्ञपुरुष के बचनको सुनकर बिनयपूर्वक हाथ जोड़कर बोले,हेभगवन्! जिसकार्य के वास्ते आपका आगमन हुआ वह कृपाकर मुझे आज्ञा दीजिये, हमको क्या कार्य करना होगा। यज्ञ पुरुष राजासे बोले, कि हेराजन्! आपने देवताओं की आराधना करके इस पायस को प्राप्त किया है, अब हेराजन्! यह परमपवित्र देवताओं से लभ्य प्रशंसाके योग्य व वंशतथा आयुष्यको बढानेवाले पायसको आप ग्रहण कीजिये। इस पायसको आप अपनी सहधर्मिणी रानियों को विभाग करके खाने

को दे दीजिये इससे आपको यज्ञके फल स्वरूप पुत्र उत्पन्न होंगे। राजाने यज्ञ पुरुषके वचनको सादर शिरोधार्य किया और देवताओं से दिये चरूके सहित सोनेके पात्रको ले लिया, अद्भुत दिव्यप्रिय दर्शन। पुरुषकी प्रसन्नता पूर्वक उनकी प्रदक्षिणा करने लगे। जिस प्रकार धन को पाकर दरिद्री प्रसन्न होताहै उसी प्रकार देवताओंसे प्राप्त चरूको पाय कर दशरथजी प्रसन्नहुए। वहविचित्र आकार वाला परम शोभाय मान दिव्य पुरुष अपना कामकर अर्थात् महाराज दशरथ को पायस देकर अग्निकुण्डमें अन्तर्ध्यान होगये। उस चरूको पाकर रानियों समेत महाराज दशरथ का मुख मण्डल शरत्काल के पूर्ण चन्द्रमा की शोभा के समान शोभा को धारण किया। वशिष्ट तथा ऋष्य शृङ्ग की अनुमतिसे नरपति दशरथ पायस को लेकर अन्तः पुर में पहुँचे, पहिले कौसल्या के भवन में जाकर राजा बोले, हे प्रिये ? इस साकल्यको तुम ग्रहण करो इससे तुमारे को पुत्र होगा। राजा यह कह कर उस खीरका आधा भाग कौशल्या को दिये। इससे उपरान्त अवधपति दशरथने आधी खीर में दो भाग करके एक भाग सुमित्रा को दिया। शेषखीर में दो भाग कर के एक भाग केकयी को दिया और एक भाग सुमित्रा को पीछेसे और भी दिया। इस प्रकार राजाने ब्रह्मासे दीये हुए चरुको रानियों को बांट दिये। कौशल्या आदि राजाकी राजमहिषियों ने पायस को पाकर अपने को बड़ी भाग्यवान जानकर प्रसन्न हो गईं।

इसके उपरान्त उस चरु भोजन के प्रभाव से राजाकी धर्म-पत्नियों ने तत्काल गर्भको धारण किया, गर्भ धारण करने से अग्नि के समान उनकी मुख कान्ति चमकने लगी। महाराज दशरथ अपनी स्त्रिये को गर्भवती देखकर अपने मनोरथ की सिद्धि से सन्तुष्ट हो गये जिस प्रकार यज्ञ भागको लेकर देवता सन्तुष्ट हो जाते हैं।

वाल्मीकिये आदि काण्डे षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥

भगवान दैत्यसूदन को दशरथ के यहां पुत्र होना स्वीकार

करने पर ब्रह्माजी देवताओं से बोले, हेदवगण! भगवान की सहायता के लिये तुमलोग भी अपने अपने समान बलवान सन्तानों को उत्पन्न करो, परन्तु वे सन्तान मायावी अर्थात् छल कपट के पण्डित हों और शूरवीर अर्थात् युद्धमें पराक्रम शाली पुरुषों को उत्तम उत्तम अप्सराओं में तथा गंधर्व यक्ष पन्नग ऋक्ष विद्याधर और किन्नर तथा बानर की स्त्रियों में अपने समान बलशाली बानरों के आकार वाले पुत्रों को उत्पन्न करो। और मैंने पहिले ही भालुओं में श्रेष्ठ जाम्बवन्त को उत्पन्न किया है जंभाई लेने के समय एक साथ उनकी उत्पत्ति हुई थी। ब्रह्माजी के मुखसे सुमधुर वचन को सुनकर देवताओंने ब्रह्माजी की बात मानली, और बानरों के स्वरूपका सन्तान सृष्ट करने लगे। ऋषि, सिद्ध, विद्याधर, सर्प चारण उरग आदि सभी लोगों ने भगवान की सहायता के लिये बानराकृति सन्तानों को उत्पन्न किये। इन्द्र देवताने अपने समान बालिनाम बानर को उत्पन्न किया। सूर्य भगवान से सुग्रीव की उत्पति हुई बृहस्पति ने महाबुद्धिमान तारक नाम बानर को उत्पन्न किया। वह तारक नाम बानर कपियों में श्रेष्ठ और बुद्धिमान था।

कुबेरजीने गन्धमादन नाम बानर को पैदा किया और विश्वकर्माने नलनाम महाबानर को पैदा किया। अग्नि देवता अपने समान पराक्रमी नीलनाम बानर को उत्पन्न किया था। जो नील नाम के कपि तेजमें यशमें पराक्रम में अपने पिता से भी कअधि थे। देवलोक के वैद्य अश्वनी कुमारों ने मयन्द और द्विविद नाम के दो पुत्र उत्पन्न किये। ये दोनों बानर अत्यन्त पराक्रमी और बलवान थे, ये बानरों में मुख्य गिने जाते थे बरुण देवतासे सुषेण नाम बानर की उत्पत्ति हुई। मेघ देवता ने शरभनाम महाबली बानरको उत्पन्न किया। और पवन देवतासे श्रीहनुमान जी की उत्पत्ति हुई। इनकी शरीर वज्रसे भी कठिन थी, और गरुड़ के समान बेग इनमें था। हनुमान जी सब बानरों में श्रेष्ठ और सबसे अधिक

बलवान गिने जाते थे। इस प्रकार असंख्य बानरों की सृष्टिको देवताओं ने किया। वह सब बानर गण अपने २ को अतुल पराक्रमी और पर्वत के समान देह धारण करने वाले हुए। इस प्रकार ऋक्ष, बानर और गोपुच्छ ये सब धीरे धीरे उत्पन्न हुए। जिस देवता को जैसा आकर भेष और जैसा पराक्रम था वैसेही सबके सन्तान पृथक् पृथक् उत्पन्न हुए। जो गोपुच्छ से पैदा हुए थे उनका बल और पराक्रम दूसरों से अधिक हुआ। इस प्रकार ऋषि और किन्नरियों में बानर भालू उत्पन्न हुए। और देवता, गंधर्व, यक्ष, किन्नर, नाग, सिद्ध विद्याधर उरग, इन लोगों ने भी वानरोंके अनेक सन्तानों को उत्पन्न किया। चारण गण भी बलवान और बनमें चरने वाले पुत्रों को उत्पन्न किये, वह सब सृष्ट किये गये बानर बड़े शरीरवाले और वन चारी हुए। इन बानरों की उत्पत्ति मुख्य मुख्य अप्सरा विद्याधर गंधर्व और नाग कन्याओं के गर्भ से हुई इस लिये थे सब बानर इच्छा चारी थे। यह सब बानर दर्प तथा बल में सिंह अथवा शर्दूल के समान थे। यह सब बड़े बड़े शिलाओंसे युद्ध करने वाले थे। यह सब नख और दांतों से काटने में चतुर और नाना प्रकार के अस्त्र शस्त्रो को भी चलाने में प्रवीण थे। इनके घनघोर गर्जन के समान चिल्लाने से पृथिवी कंपायमान हो जाती थी, बड़े बड़े वृक्षों का पतन हो जाता था। यह सब बानर समवाय अपने पराक्रम से नदी और समुद्र को शुभित कर सकते थे, पैरों से पृथिवी को विदारित कर सकते थे और समुद्रों को खल बला सकते थे। यह अपने पराक्रम से आकाश मार्ग में गमन करने वाले बद्दलों को भी ग्रहण कर सकते थे, और मतवाले हाथियों को बन में फिरते निपातित कर देने वाले थे, उनके वज्राकार नाद से वृक्षों पर से पक्षियों का पतन होजाता था इस प्रकार स्वेच्छाचारी वानरों की उत्पति हुई। ऐसे महा परोक्रमी स्वेच्छाचारी वानरों की झुंड अनेकानेक पर्वतों में और जङ्गलों में निवास करने लगे। उनमें कितने तो सुग्रीवके और

कितने वाली के आश्रयमें आकर रहनेलगे । तथा अन्यान्य बन्दरोंने नल नील व हनुमानजी की अधीनता स्वीकार करके रहने लगे । इस प्रकार से गरुड़के समान अमित बलशाली युद्धविद्या विशारद सकल वानरगण सिंहव्याघ्र व सर्पोंको मर्दित करके अनेक स्थानों में विहार करने लगे । महापराक्रमी कपीश्वर वाली अपनी भुजाके पराक्रम से ऋक्ष गोपुच्छ आदि आश्रित वानरों की रक्षा करने लगे इस प्रकार अनेक रूप रंगके तथा वीर्यवान पराक्रमी वानरों से अनेक स्थान अर्थात् पर्वत वन व समुद्रका किनाराके सहित पृथिवी परिपूर्ण होगई। उनके आकार पहाड़ों के शिखर के समान थे उन महाबली वानरों से पृथिवी व्याप्त होगई वह वानरगण श्रीरामजीकी सहायताके वास्ते उत्पन्न होकर पृथिवी मण्डल को समाच्छन्न करने लगे ।

वाल्मीकिये आदिकाण्डे सप्तदशःसर्ग ॥ १७ ॥

महाराज दशरथ के यज्ञ समाप्त होने पर देवता लोग अपना अपना यज्ञ भाग लेकर अपने अपने स्थानको चलेगये राजा भी दीक्षा विधिको समाप्तकर अपनी स्त्रियों के सहित हाथी घोडा रथ तथा पैदल सैनिकों साथ लेकर अयोध्यापुरी में जानेकी इच्छा करने लगे इधर देशान्तरीय राजाओंने महाराज दशरथ से यथोचित सम्मान को प्राप्त किया तब ऋषियों में श्रेष्ठ ऋष्यशृङ्ग की और वसिष्ठ मुनि आदि महर्षियों को सादर दण्डवत प्रणाम करके अपने अपने देशको पधारने लगे । निमन्त्रित राजाओं की यात्रा के समय उनकी सेना समुद्रकी लहरके समान कलोल करती हुई शोभाको बढाने लगी, उन की देशान्तरीय राजाओं को चले जाने पर वसिष्ठ वामदेव आदि ब्राह्मणों के समेत नरनाथ दशरथ अयोध्यापुरीमें आये, इसके उपरान्त ऋष्यशृङ्ग अपने आश्रमको अनुयायी हुए । महाराज दशरथ शान्त सहित ऋष्यशृङ्गकी यथेष्ट पूजा और सत्कार करके बहुत कुछ घृतरत्न भेंट देकर वसिष्ठजी और सुमन्त्र आदि मन्त्रियों समेत दशरथ कुछ दूर तक उन्हें पहुंचाने आये, बाद सभोंने ऋष्यशृङ्गको दण्डवत् करके

विदा किया, वसिष्ठजी उनको गलेसे लगाकर शतशःधन्यवाद दिया, ऋष्यशृङ्गभी सबसे यथोचित मिलकर मन्त्रि सहित राजाको लौटा दिया और शान्ता स्त्री के सहित ऋषिश्वर अपने स्थान को गये। इस प्रकार निमन्त्रण में आये हुए पाहुनों को योग्य सत्कार से विदा करके महाराज दशरथ पुत्र होने की चिन्ता करते सुखसे काल को बिताने लगे। इसके उपरान्त छः ऋतु बीतजाने पर अर्थात् बारह मास बीत जाने पर चैत्रमास की शुक्लपक्ष नौमी तिथी पुनर्वसु नक्षत्र में सूर्य मंगल गुरु शुक्र इनग्रहों को मेष मकर तुला कर्क, मीनराशि में आने से पांच ग्रहों को मेष और वृहस्पति चन्द्रमा के सहित कर्क राशि में उदित होने पर महारानी कौशल्या दिव्य लक्षण सम्पन्न सर्व लोक को नमस्कार करने योग्य देव देव जगन्नाथ श्री रामजी को उत्पन्न किया यह दशरथ जी के पुत्र विष्णुके आधे अँश से उत्पन्न हुए इनके श्रेष्ठ और नेत्र लाल रंगके थे और इनका स्वर मृदंग के बराबर गंभीर था। देवताओं की माता दिति अपने पुत्र इन्द्र को उत्पन्न कर जिस शोभाको प्राप्त भई वेसेही परमेश्व को पाकर कौशल्या शोभित हुई।

इसके उपरान्त केकयी के गर्भ से सर्व गुणा लंकृत महाबली भरत जी उत्पन्न हुए समस्त विद्या से कुशल वीर लक्ष्मण और शत्रुघ्न सुमित्रा के गर्भ से उत्पन्न हुए भरत जी पुष्य नक्षत्र और मीन लग्न में जन्मे थे इसलिये वह सदा प्रसन्न चित्त से रहते थे। लक्ष्मण व शत्रुघ्न आश्लेषा नक्षत्र और कर्क लग्न में पैदा हुए थे इस प्रकार महाराज दशरथ को चारपुत्र हुए यह चारोही गुणवान् यश स्वी कीर्तिमान पराक्रमी सत्य प्रतिज्ञ दयालु क्षमावान् आदि सर्व गुणा विशिष्ट आदर्श पुरुष चन्द्र सूर्य के समान प्रभा सम्पन्न हुए।

भजन।

आज सुदिन शुभघरी सोहाई। रूपशील गुणधाम रामनृप भवन प्रगट भये आई। अतिपुनीत मधुमास लग्न ग्रह पास्योग समुदाई। बर्षहिं बिबुध निकट कुसुमावलिनभ दुन्दुभी बजाई ॥ कौशल्यादि

मातु सब हर्षित यह सुख वर्णि न जाई । सब दशरथ सुत जन्मलिये सब गुरुजन विप्र बुलाई ॥ वेदविहित कर क्रिया परमशुचि आनंद उर न समाई । सदन वेदध्वनि करत मधुरमुनि बहुविधि बाजबधाई ॥ पुरवासिन प्रियनाथ हेतु निज निज सम्पदा लुटाई । मणितोरण बहु केतु पताकन पुरीरुचिर कछाई ॥ मागध सूतद्वार बन्दीजन जहं तहं करत बड़ाई । सहज शृङ्गार किये बनिता चलि मंगल विपुल बनाई ॥ गावहिं देहि अशीस मुदित चिरजियो तनय सुखदाई । वीथिन कुंकुम कीच अरगजा अगर अबीर उड़ाई ॥ नाचहिं पुरनर नारि प्रेमभरि देहदशा बिसराई । अमित धेनु गज तुरंग वसनंमणि जातरूप अधिकाई ॥ देतभूप अनुरूप जाहि जोइ सकल सिद्धिगृह आई । सुखीभये सुरसन्त भूमिसुर खलगण मन मलिनाई ॥ सबहि सुमन विकसत रवि निकसत विपिन कुमुद बिलखाई । जो सुख सिन्धु सुकृतसी करते शिव विरंचि प्रभुताई ॥ जो सुख उमंग अवध रह्यो दश दिशि कवन जतन कहौं गाई । जो रघुबीर चरण चिन्तक तिनकी गति प्रगट दिखाई । अबिरल अमल अनूप भक्तिदृढ तुलसिदास तब पाई ॥

श्रीरामजीके जन्मकाल में गंधर्वोंने मधुर स्वर से गान किया अप्सगये नाच करने लगी किन्नर लोग दुन्दुभी बजाने लगे आकश से पुष्प वृष्टि होने लगी । राजमन्दिर के चारो ओर मनुष्यों की भीड़ होगइ मानों अयोध्यापुरी से उत्सव का सीता वहने लगा नगर की वेश्याओंने राजमन्दिर पर आकर नाचने लगी भाट तथा चारण अनेक प्रकारका बाजा बजाने लगे, सकल नगर बासी उत्तम उत्तम धन रत्न ले लेकर राजमन्दिर पर आये और राजाको उपायन दिया । महाराज दशरथ ने पुत्र जन्मोत्सवमें ब्राह्मणोंको असंख्य गौ और रत्नों को दान दिया । सूतमागध बन्दियों को बहुतसा धन दिया पुरवासियों को उचित सम्मान किया । इसप्रकार आनन्द के आमोद से इग्यारह ११ दिन बीत जानेपर पृथिवीनाथने पुत्रों का नाम करण रखवाया, महर्षि वसिष्ठजी सबके गुणके अनुसार सबका नाम

करण रखा, ज्येष्ठ पुत्रका नाम 'श्रीरामजी' केकयी के पुत्रका नाम 'भरत' सुमित्राके एक पुत्रका नाम लक्ष्मण और दूसरेका नाम शत्रुघ्न रखा। नाम करण के दिन राजाने पुरवासियों को और राज्यके रहने वाले ब्राह्मणोंको भोजन देकर दक्षिणा में अनेक प्रकारके धन रत्नों को दिया। इसी प्रकार पुत्रोंकी जातकर्म और नामकरण क्रिया हुई। इन पुत्रों में श्रीरामचन्द्रजी महाराज पताका की नाई सबसे अधिक पिताको प्यारा हुए। जिस प्रकार ब्रह्माजी सब प्राणियों को प्रिय होते हैं उसी प्रकार श्रीरामजी सबके नेत्रको चन्द्रसमान सुख देने लगे। यह चारो भाई अस्त्र शस्त्र विद्यामें कुशल रथ हाथी घोड़ों पर चढने में चतुर सर्वगुण सम्पन्न हुए इनमें विशेष श्रीरामचन्द्रजी सबसे अधिक सत्यपराक्रमी हुए। श्रीरामजी अस्त्र शस्त्र विद्या में जैसे पारदर्शी थे वैसेही पिताकी सेवामें परायण रहने लगे और लक्ष्मीको बढ़ाने वाले लक्ष्मण जी बालक पनसे श्रीराम जा में प्रीति करने लगे। लक्ष्मण जी सदा जगत्पूज्य लोक को आनन्द देने वाले ज्येष्ठ भ्राता श्रीरामचन्द्र जीकी आज्ञाको पालन करने लगे यहां तक की अपने प्राणसे अधिक रामचन्द्र जीको प्यार करने लगे। लक्ष्मी सम्पन्न लक्ष्मण जी रामचन्द्रजी के मानो दूसरे प्राणही हुए वह बिना रामचन्द्रजी के कोई काम नहीं करते थे, खाने के वस्तुको पाकर बिना श्रीरामजी को खिलाये अपने नहीं खाते थे रामचन्द्र जीके सूतने पर अपने सूतते थे, जब रामचन्द्र घोड़ापर सवार होकर वनमें शिकार खेलने को जाते तब श्रीलक्ष्मण जी धनुष बाण लेकर उनके पीछे छाया की नाईं चलते थे। इधर लक्ष्मण की नाईं शत्रुघ्न भी भरत को चाहने लगे जिसतरह शत्रुघ्नजी भरत जीको प्यार करते थे उसी प्रकार भरत जी शत्रुघ्न को अपने प्राण से अधिक चाहने लगे उन पुत्रों के परस्पर प्रीतिरीतिको देखकर अपने समान ओजस्वी जानकर राजा प्रसन्न रहतेथे। ज्ञानसंपन्न समस्त गुणयुक्त लज्जाकीर्ति और दूर दर्शिता सम्पन्न प्रभाव शाली कान्तियुक्त कुमारों को देखकर दशरथ

जी महराज लोकके स्वामी ब्रह्माजीके समान परम प्रसन्न हुए, जिस समय वे राजकुमार वेदाध्ययन करने लगे उससमय वसिष्ठ मुनि तथा दशरथ जीकी सेवा में तत्पर होगये धनुर्विद्या में कुशल राजकुमारों को देखकर दशरथ जी महाराज को उनके विवाह की चिन्ता होने लगी।

पगिया शिर लाल हरी कलंगी उर चन्दन केसर खौर दिये ।
मनमोहन रामकुमार सखी अनुहार नहीं जग जन्म लिये ॥
पगनूपुर पीत कसे कछनी वन मालतिको वनमाल हिये ।
बिहरें सरयूतट कुञ्जन में तहां रामसखे चित्तचोरलिये ॥

राजाके समान गुरु वसिष्ठ तथा सुमन्त्र आदि मन्त्रियों को भी श्रीरामचन्द्र आदि राजकुमारों के विवाह की चिन्ता होने लगी एक दिन सभामें वसिष्ठ वाम देव आदि पुरोहित और मन्त्रिगण राजाके समीप बैठेथे और राजकुमारों के गुण चरित्र की चर्चा होरही थी इतने में महातेज धारी मुनिवर विश्वामित्र जी आकर राज सेवकों से राजाके दर्शन की सूचना राजसभामें भेजदिये में गाधिका पुत्र विश्वा मित्र हूं मेरे आने का समाचार जल्दी राजासे कहो, द्वारपालकों ने विश्वामित्र जीको महामुनि जानकर सहसा राजभवन में प्रवेश किया। विश्वामित्र जीको दर्शन से व्याकुल द्वारपालकों ने राज भवन में जाकर लोकमान्य विश्वामित्र जीके आगमन का समाचार राजा से कहसुनाया, महाराजदशरथ विश्वामित्र जीके आगमन को सुनकर अपने पुरोहित तथा मन्त्रियों को साथलेकर आगे से विश्वा-मित्र जीको लेने के वास्ते गये। जिसप्रकार वृहस्पति गुरुकी अगु-आनी इन्द्रकरते हैं वैसेही दशरथ महाराज विश्वा मित्र जीकी अगु-आनी करने को चले। राजा कठोर व्रतधारी दीप्तिमान सूर्यके बराबर विश्वामित्र जीको देखकर साष्टाङ्ग दण्डवत् किया और शास्त्रनुसार मुनिजीको अर्घ्यदिया, मुनिजी प्रसन्न होकर अर्घ्यग्रहण किया, इसके उपरान्त मुनिनाथने राजासे कुशल प्रश्न पूछा और पुर नगर कोश (खजाना) देश तथा बन्धु बान्धवों का कुशल क्षेम पूछने लगे, इसके बाद मुनिवर वसिष्ठ जी विश्वामित्र से मिले विश्वामित्रजी

पुनः पुनः कुशल पूछने लगे, वसिष्ठ जी अपना कुशल कहकर विश्वामित्र जीके कुशल को पूछा परस्पर कुशल प्रश्न दोनों ओरसे होने लगे । इसके उपरान्त दशरथ जी विश्वामित्र जी का पूजन किया यथेष्ट आसन पर बैठाकर उत्तम पक्वान्न का मधुपर्क देकर सत्कार किया इसके अनन्तर दशरथ विनय पूर्वक विश्वामित्र जीसे बोले हे भगवन् ! हम सब मनुष्यों के लिये आपका समागम अमृत प्राप्ति के समान है हे तपो निधि जिसप्रकार निर्जल प्रदेश में जलको पाकर लोक प्रसन्न होते हैं उसीप्रकार आपके दर्शन से मैं कृतार्थ हुआ। हेमुनीश्वर जिस प्रकार बन्ध्या स्त्री पुत्रको पाकर प्रसन्न होती है मनुष्य अपनी खोई हुई वस्तुको पाकर प्रसन्न होता है उसी प्रकार आपके दर्शन से मैं प्रसन्न हुआ हूं। जिसप्रकार अपना भाग्योदय जानकर मनुष्यों को हर्षहोता है उसके समान मैं आनन्दित हुआ हूं, हेमहात्मन आपको आते समय मार्गमें तो किसीने कुछ विघ्न तो नहीं किया है, तपोवनमें राक्षस लोग क्या पीड़ा तो नहीं देते हैं आपके नित्य नैमित्तिक कर्मों में, कुछ बाधा तो नहीं है, हे भगवन् ! मैं आपका कौनसा कार्य करूं आप कुछ आज्ञा कीजिये, आप सेवा सुश्रूषा करनेके योग्य हैं आप का आगमन मेरे भाग्य सेही हुआहै हे ब्रह्मदेव आजही मैंने अपना जन्म और जीवन सफल समझा। आजही मेरे जीवन की रात्रिका सुप्रभात है क्योंकि आप सरीखे महात्मा का साक्षा दर्शन हुआ है, पहिले आप बड़ी उग्र तपस्या से राजर्षि कहे जाते थे, अब आप कठिन कठिन तपस्याओं को धारण करने से ब्रह्मर्षि होगये हैं। सभी प्रकार से आप हमारे पूज्य हैं आपके आगमनसे मुझेपवित्रता और विस्मय प्राप्तहुआ है,हेस्वामी। आपके दर्शन से मैं कृत कृत्य हो गया, अब किस कारण आपका आगमन हुआ सो कृपा करके कहिये। मैं अनुगृहीत हूं जो कुछ आपका कार्य होगा उसको पालन करूंगा, मेरे योग्य कार्य में आपको कुछ भी संकोच न करना चाहिये आप हमारे देवता हैं आपने जो हमारे

यहा आगमन किया इसमें हमारी बड़ी भाग्य समझना चाहिये उत्तम गुणों के निधि महायशस्वी परमऋषि विश्वामित्रजी हृदय में आनंद देने वाले श्रवण में मनोहर स्वाधीन और नम्रता युक्त वचन को सुन कर अतिशय सन्तुष्टहुए ॥

वाल्मीकिये आदिकाण्डे अष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥

श्रीमान् महाराज दशरथ के विस्तृत वचन को सुनकर पुलकित हो विश्वामित्र मुनिबोले, हेराजन् आपको कुल परम्परासे ऐसेही सत्य प्रतिज्ञ और प्रिय वचन बोलने वाले राजा लोग हुए हैं, जब परम ज्ञानी वसिष्टजी तुमारे कुल गुरू हैं तो यह शिष्टाचार आपही को शोभा देताहै, हे राजन् जो कार्य हमारे मनमें है अर्थात् जिस कार्यके लिये मैं आपके स्थान पर आयाहूं उसकार्य को सफल करके सत्य प्रतिज्ञ हूजिये। हे पुरुषसिंह! आजकल मैं एक महा यज्ञ का आरंभ किया हूं परन्तु स्वेच्छाचारी दो राक्षस उस यज्ञमें विघ्नकर देते हैं यह दोनों मारीच और सुबाहू शस्त्र विद्यामें बड़ेही कुशल हैं चिरकाल से सुरक्षित व्रतकी समाप्ति नहीं करने देते समापन काल में ही विघ्न करदेते हैं जबमैं यज्ञकार्य में नियुक्त होताहूं तभी वह मायावी राक्षस यज्ञवेदीपर मांसके टुकड़ों को फेंक देते हैं और रक्त की वर्षा करने लगते हैं। उनके इस कुकर्म से हमारे यज्ञकी प्रतिज्ञा भ्रष्ट होजाती है हमें केवल श्रमही श्रमहोता है इसकारण हतोत्साह होकर यहां चला आयाहूं हे राजेन्द्र मैं उनको शाप देसकता हूं परन्तु इस यज्ञमें क्रोध करना वर्जित है इसलिये यज्ञके साधन काल में किसी को शापदेना नहीं चाहिये अब से राजसिंह आप अपने ज्येष्ठपुत्र महावीर सत्यप्रतिज्ञ और पराक्रमी काकपक्ष धारण किये रामचन्द्रजी को मुझे सहायता के लिये सौंप दीजिये। यह मेरे दिव्य तेजके प्रभाव से सुरक्षित रहैंगे। और यह मेरे यज्ञकी रक्षा करैंगे। यह मैं जानता हूं कि यज्ञादि कर्मके शत्रु राक्षस श्री रामचन्द्रजी के हाथ से अवश्य मारे जांयेगे। और मैं राक्षसोंको नाश करने वाली अनेक

प्रकार की विद्या प्रदान करैंगे। तीनों लोकमें रामचन्द्र की ख्याति हो जावे और रण में इनका कोई सामना न करे इस प्रकार का अनुष्ठान मैं अवश्य करूँगा। यह मारीच और सुबाहू श्री रामजी के प्रताप को कभीं नहीं सहन करसकेंगे। श्रीरामजी के सिवाय उन दुष्ट राक्षसों को कोई वध नहीं करसकता यद्यपि ये राक्षस गण पराक्रम से अहंकारी होगये हैं तौभी पापी होनेके कारण कालकेही अधीन में पड़ेहैं हे राजसिंह! वह निशाचर किसी प्रकार श्री रामचन्द्र जीकी बराबरी नहीं करसकते और आप किसीप्रकार की चिन्ता पुत्रों के वास्ते नहीं कीजिये, हे राजेन्द्र मैं इन रामचन्द्रजीके पराक्रमको जानता हूं आप यज्ञकी दश रात्रितक मेरे निकट यज्ञवैरी राक्षसों का संहार करने के लिये भेज दीजिये ये साक्षाद् विष्णुभगवान के अवतार हैं। वसिष्ठ आदि महापुरुष श्रीरामजी की शक्तिको जानते हैं हे राजन् यदि चिरकालतक अपना धर्म और यश संसार में चाहो तो मेरा कहना मानकर यज्ञकी रक्षाके लिये श्रीरामजी को भेज दीजिये, हेराजन् वसिष्ठ आदि मेरी प्रार्थना का समर्थन करैंतो रामचन्द्र को मेरे साथ भेजदीजिये, हे काकुत्स्थ! कमलनयन श्रीरामचन्द्र यज्ञकी दश रात्रिसे अधिक मेरे यहां नहीं रहैंगे हेराघव! हमारे यज्ञका समय बीतने न पावे रामचन्द्र को मुझे देने में शोचमत करो। धर्म स्वरूप विश्वामित्र जी धर्म पूर्वक राजा को उपदेश देकर मौन होगये, राजशार्दूल दशरथ बिश्वामित्र के बचन को सुनकर पहिले शोक और मोहका आश्रय लिया पीछे चैतन्य को ग्रहण करके भयभीत होगये, इसप्रकार बिश्वामित्र जीके मुखसे हृदय बिदारण करने वाले वचन को सुनकर महाराज दशरथ व्यथित और आसन च्युत होगये,,

वाल्मीकिये आदिकाण्डे एकोनविंशः सर्गः ॥ १६ ॥

महीपति राजादशरथ विश्वामित्र जी के बचन को सुनकर मुहूर्त भर मूर्छित रहे बाद चैतन्य को प्राप्तकर बोले भगवन्! इस समय कमल नयन रामचन्द्र सोलह वर्ष से भी कम हैं यह कैसे राक्षस

से युद्धकर सकेंगे, मेरे पास कई अक्षौहिणी सेना है इस सेनाओं को साथ लेकर मैं राक्षसों से संग्राम करूँगा, अस्त्रविद्या में पण्डित महाबलवान ये बीर मेरे अधीन हैं यह राक्षसों से युद्ध करने में चतुर हैं रामचन्द्र के सिवा इन सेनाओं को लेजाकर अपना कार्य साधन करिये हे परन्तप ! जब तक मेरी देह में प्राण रहेंगे तब तक मैं धनुष को लेकर राक्षसों से युद्ध करके आप के यज्ञ की रक्षा करूंगा मेरे साथ रहने से आप के यज्ञ की निर्विघ्न रक्षा होगी । हे भगवन् ! राम चन्द्र अभी बालक हैं अस्त्र शस्त्र विद्या और शत्रु के बलाबलको कुछ नहीं जानते इनको छोड़कर अपनी सहायताके लिये मुझे लिवा चलिये हेमुनीश्वर रामचन्द्र उन राक्षसों से युद्ध करने लायक नहीं है क्योंकि राक्षस मायायुद्ध करना जानते हैं महाराज ! मैं रामचन्द्रके बिना एक मुहूर्त भी नहीं जी सकता हे मुनीश्वर ! मेरे जीवन स्वरूप रामचन्द्रजी को आप न ले जाइये और यदि रामचन्द्र जी को आप ले जानाही चाहते हैं तो चतुरंगिणी सेना समेत मुझे भी साथ लीजिये हे कौशिक ! इस समय मेरी अवस्था साठहजार वर्षकी हुई है मैंने बड़े कष्टसे रामचन्द्रको पाया है इसलिये चारों पुत्रोंमें से राम पर मेरा अधिक प्रेम है वस्तुतः रामचन्द्र सब पुत्रों में बड़े और प्रधान हैं अतएव रामचन्द्रके सिवा सकल वस्तु आपकी है । हे परन्तप ! वह राक्षस कौन हैं और किसके पुत्रहैं उनके आकार प्रकार व शक्ति कैसी है और रामचन्द्रजी किस उपाय से उन्हें जीत सकते हैं, हेभगवन् ! मैं अथवा मेरी सेना किस प्रकार उन मायावी राक्षसों से संग्राम करने में समर्थ होगी । वृत्तान्त मुझसे कहिये, राजा के विस्मय युक्त बचन को सुनकर विश्वामित्र बोले, पुलस्त्य मुनि के वंश में उत्पन्न हुआ रावण नाम एक राक्षस है वह ब्रह्मा के वरदान को पाकर अपने बल के अभिमान से तीनों लोक को पीड़ित कर रहा है, विपुल बलशाली निशाचर गण उसकी सदा सेवा किया करते हैं हे महाराज ! मैंने रावण का नाम सुना है वह महाबली राक्षसों का राजा है, वह साक्षात्

राजा हैं, वह साक्षात कुबेर का भाई है और विश्रवामुनि का पुत्र है, उस रावण से प्रेरित यज्ञध्वंस करने के लिये सुबाहु और मारीच नाम महाबली दो राक्षसों को भेज देता है, मुनिवर विश्वामित्र के वचन को सुनकर दशरथ ने कहा कि मैं रावण से संग्राम नहीं कर सकता आप इस समय राम पर प्रसन्न हूजिये आप ही मुझ अल्पभाग के देवता गुरु हैं जब देवता दानव गंधर्व यक्ष पन्नग आदि रावण के प्रताप को नहीं सह सके तो मनुष्य की क्या गणना है! वह रावण रण क्षेत्र में वीर्यवानों के वीर्य के वीर्यका क्षयकर देता है इस लिये रावण के और रावण की सेना के साथ सामना करने योग्य मैं नहीं हूं आप सेना सहित मेरे पुत्रके साथ उस रावण से लड़ने को समर्थ नहीं किस प्रकार से देवताओं के समान कोमल शरीर वाले और संग्राम को नहीं जानने वाले राम को तुम्हारे साथ भेज दूं। हे भगवन्! राम चन्द्र अभी बालक हैं मारीच और सुबाहू के साथ लड़के को राक्षसों के कठोर संग्राम में नहीं भेजूंगा। मैं जानता हूं कि वह दोनों राक्षस आप के यज्ञ में विघ्न करते हैं परन्तु उन महाबली शस्त्र विद्या में निपुण मारीच और सुबाहू के साथ युद्ध करने के वास्ते रामचन्द्र को नहीं भेजूंगा। हे प्रभो! आप की इच्छा हो तो बन्धु बान्धवोंसहित राक्षसों से मैं युद्ध कर सकता हूं, नहीं तो मैं परिवार के सहित आपकी शरण हूं दशरथ के इस प्रकार कातर बचन को सुनकर अपनी आशा को भंग देखकर महर्षि विश्वामित्र क्रोध से होम की अग्नि के समान प्रज्वलित हो गये। जैसे होम की अग्नि सूखे काष्ठ पर घी छिड़कने से अधिक धधक उठती है उसी प्रकार महर्षि विश्वामित्र अग्नि के समान प्रदीप्त हो गये।

वाल्मीकीये आदिकाण्डे विंशः सर्ग ॥ २० ॥

महर्षि विश्वामित्र महाराज के वचन से क्रोधित होकर बोले राजन्! आप मुझको पहिले बचन देकर अपनी प्रतिज्ञा भंग करते हो यह रघुवंशीय क्षत्रियों का धर्म नहीं है प्रतिज्ञा को छोड़ना कुल

नाशके मूल का प्रथम उपाय जानना चाहिये यदि आप अपना वचन छोड़ने में राजी हैं तो मैं भी अपने को जानता हूं अब अपने स्थानको जाता हूं आप अपने प्रतिज्ञाको छोड़कर बन्धु बान्धओं के सहित सुख-से रहिये । महर्षि परन्तपा विश्वामित्रजी के क्रोध करने से पृथ्वी कांप गयी देवलोक शंकित हो गया विश्वामित्रजी को क्रोध करने से सकल को भयभीत देख कर धीर धर्म धुरीण वशिष्ठजी बोले, हे राजन् ! आप साक्षात धर्म की मूर्ति के समान इक्ष्वाकु के कुल में उत्पन्न हैं व श्री-मान् हैं आप को धर्म छोड़ना उचित नहीं है आप की ख्याति तीनों लोकमें है इसलिये धर्म को छोड़कर अधर्म का पालन करना आपको उचित नहीं है इस समय यदि आप अपने वचन का पालन नहीं करोगे तो तुम्हारे समस्त शुभकर्मनष्ट हो जायंगे इस वास्ते रामचन्द्र को मुनि को सौंप दीजिये, जिस प्रकार अग्नि देवता अमृत की रक्षा करते हैं उसी प्रकार विश्वामित्रजी रामचन्द्रजी की रक्षा करेंगे रामचन्द्र चाहे अस्त्र विद्या को जानते हों अथवा न जानते हों मुनिनाथ की रक्षा करने से इनका राक्षस कुछ न कर सकेंगे ऋषि विश्वामित्र और रामचन्द्र साक्षात् धर्म के स्वरूप हैं यह लोकमें सबसे अधिक बलवान और सबसे अधिक विद्वान् और तपस्या के आश्रय स्थान हैं यह अनेक अस्त्र शस्त्रों के जानने वाले हैं इनका सामना तीनों लोक में कोई नहीं कर सकता है देवता गंधर्व यक्ष किन्नर उरग ऋषि राक्षस आदि रामचन्द्रके पराक्रम को नहीं जान सकते और यह विश्वामित्र मुनि जब राज्य करते थे तब परमधर्मात्मा कृशाश्व के पुत्रों ने इन्हें सकल अस्त्र प्रदान किये थे वह सब अस्त्र कृशाश्व के पुत्र प्रजापति की कन्या के पुत्र हैं वह अस्त्र अनेक स्वरूप वाले हैं महापराक्रमी तेजस्वी और सबको जीतने में समर्थ हैं उन अस्त्रों को दक्ष प्रजापति की कन्या जया और सुप्रभाने उत्पन्न किया है, वरदान को पाकर जयाने पांच सौ अस्त्र असुरों की सेना संहार करने के वास्ते उत्पन्न किया है जिनका गुण अपरिमित और

जिनका रूप अदृश्य है, उसी प्रकार सुप्रभाने भी पांच सौ अस्त्रोंको उत्पन्न किया वह सब अस्त्र दुर्धर्ष और बल सम्पन्न हुए वे संहारों नाम से विख्यात हैं उनसे यह राजर्षि विश्वामित्र उन सब अस्त्र शस्त्रों को जानते हैं उनसे अतिरिक्त नवीन दिव्यास्त्रों को यह महात्मा बना सकते हैं इसी कारण यह मुनि श्रेष्ठ राजर्षि भूत भविष्य वर्तमान की बातों को जानते हैं। यह विश्वामित्र महापराक्रमी और यशस्वी हैं इनके साथ रामको भेजने में कोई सन्देह मनमें न कीजिये विश्वामित्रजी उन निशाचरों का नाश करते हैं केवल रामचन्द्र के उपकारार्थ ही आप से उनको मांगते हैं वशिष्ठ मुनि के समझाने से दशरथ के मोह इस प्रकार शान्त हो गये जैसे सूर्य के उदय होने से अन्धकार नाश हो जाता है, महाराज दशरथ प्रसन्न होकर विश्वामित्र के साथ रामचन्द्र को भेजने में प्रस्तुत हो गये।

इति बाल्मीकिये आदिकाण्डे एकविंशः सर्गः ॥ २१ ॥

वसिष्ठजीके सान्त्वना करने पर दशरथजी प्रसन्न होकर लक्ष्मण सहित रामचन्द्र को बुलाकर राजा दशरथ और कौशल्या रामचन्द्रजी का मंगल करने लगे और वसिष्ठ जी रामचन्द्र के विघ्न निवारण करनेके लिये मंगल पाठकरने लगे, दशरथजी रामलक्ष्मण के शिरको सूंघकर प्रीतिपूर्वक लक्ष्मण सहित रामचन्द्र जी को विश्वामित्र जीके हांथ सौपदिया कमलनेत्र रामचन्द्र जीको विश्वामित्र मुनिके साथ चलते समय धूलि से रहित शुद्धवायु मन्दमन्द चलने लगा, आकाश से पुष्पवृष्टि होने लगी देवता दुन्दुभी बजाने लगे शंखध्वनि सेअयोध्यापुरी निनादित होगई, मार्गमें आगे विश्वामित्र मुनि पीछे धनुष बाणको लिये श्रीरामचन्द्र उनके पीछे काकपक्ष धारी धनुष बाण लिये लक्ष्मणजी चले, यह दोनों भाई अपनी प्रभासे दशो दिशाओं को शोभित करते महामुनि विश्वामित्र के पीछे पीछे इस प्रकार चलने लगे, मानो तीन फणका सर्प जा रहा है जिसप्रकार दोनों अश्विनी कुमार शोभाको बढ़ाते ब्रह्माजीके पीछे चलते हैं उसीप्रकार लक्ष्मीसे

प्रकाशित अतिशय पराक्रमी यहदोनों विश्वामित्र के शोभाको प्राप्त किये। वह रामचन्द्र पैना खड्ग दिव्यधनुष गोहके चमड़ेसे मढाहुआ विचित्र अङ्गुली चाप को धारण किये विश्वामित्र जीके साथ गमन करने लगे, सुन्दर शरीर को धारण करने वाले ये दोनो राजकुमार अपनी अनिन्दित शोभासे शोभित होकर विश्वामित्र के साथ गमन करने लगे वह दोनों राजकुमार इस प्रकार मुनिके पीछे चलने लगे मानो शिवजी के साथ गणेश और स्वामि कार्तिक जाते हों, अयोध्यापुरी से दो कोश रास्ता चलकर सरयू नदीके दक्षिण किनारे पर उपस्थित हो गये, मुनीश्वर ने सुमधुर शब्दसे राम का नाम पुकार कर कहा कि तुम जल्दी से इस नदी के जलको लेकर आचमन करो जिसमें समय का अतिक्रमण नहो, आचमन करके मुझसे बला और अतिबला नामक मंत्रको ग्रहण करो इस मंत्रको ग्रहण करने से तुम्हें शान्ति होगी, और ज्वर आदिरोग आपको नहीं व्यापेगा और किसी कार्य करने पर परिश्रम भी नहीं होगा, सुते हुये में अथवा आलस्य में भी राक्षस तुम्हें नहीं जीत सकेंगे तुम्हारी भुजाओं के सामने पृथिवी में कोई सामना नहीं करैगा, इस मंत्रको ग्रहण करने से तीनों लोकमे तुम्हारा सामना कोई नहीं करेगा सौभाग्यमें कुशलता में ज्ञानमें बुद्धिमें भी कोई तुम्हारा सामना नहीं करेगा, यह दोनों बला अतिबला नाम की विद्या सब विद्याओं की माताहै इन विद्याओं को जानने से तुम्हारे समान कोई न होगा। हे पुरुषोत्तम! इन दोनो मंत्रों को ग्रहण करने से भूख प्यास का भी दुःख नहीं होगा इसलिये हे तात! इन मंत्रों को ग्रहणकरो तेजसंपन्न यह दोनों विद्या ब्रह्माजीकी पुत्री हैं इनदोनों विद्याओं को विधिपूर्वक पढने से तुम्हारी ख्याति फैलने में कुछ सन्देह नहीं होगा हे काकुत्स्थ! तुम इन विद्याओं को ग्रहण करने योग्य हो, क्योंकि तुम सबगुणों की निधिहो, तपस्या के प्रभाव से यह दोनों विद्या मैंने पाई हैं यह विद्या बहुत रूप धारण कर सकती हैं।मुनिनाथ के वचन से सन्तुष्ट होकर प्रसन्न वदनहो आच

मन कर पवित्र होकर तीनों कालको जानने वाले महर्षिसे यह दोनो विद्या पढलीं विद्याको प्राप्तकर भीमपराक्रम रामचन्द्रजी शोभा को प्राप्त हुए जैसे शरत कालके सूर्य अत्यन्त तेजवान होते हैं उसीप्रकार सकल गुरुकार्य को विश्वामित्र लेकर सुखपूर्वक मुनि लक्ष्मण जीके सहित वह रात्रि सरयू तट पर व्यतीत किये। यद्यपि भाई के सहित रामचन्द्रजी तृणशय्यापर सोते थे परन्तु मुनि जीकी मनोहर कथा से सुखपूर्वक दिनरात व्यतीत करने लगे।

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥

इसके उपरान्त रातीबीत जाने पर प्रभात को देखकर महामुनि विश्वामित्र जी कुशके विस्तरपर सोते हुए रामचन्द्र जीसे बोले, हेराम चन्द्रजी ! तुमसे कौशल्या पुत्रवती हुई प्रातः सन्ध्या का समय उपास्थित है अब उठकर शौचक्रिया और आन्हिक कार्यकरो, रामलक्ष्मण महर्षिके उदार वाक्य को सुनकर शय्यापरित्याग पूर्वक स्नान करके उपस्थान और अर्घ्य आदि प्रदानकर गायत्री जपकरने लगे, महाबली रामलक्ष्मण आन्हिक कर्म करके महर्षि विश्वामित्र को अभिवादन पूर्वक हर्ष सहित आगे चलने का उद्योगकरने लगे, मार्ग में चलते हुए महापराक्रमी राजकुमारों ने सरयू और गंगाजीके संगम को देखा, इस शुभसंगम के एक स्थलमें एक आश्रम को देखा जहां महर्षिगण हजारोंबर्ष से तपस्या करते थे उस आश्रम के के मनोहर दृश्यको देखकर श्रीरामचन्द्रजी महात्मा विश्वामित्र से बोले,-हेभगवन् ? यहपवित्र आश्रम किसका है और कौन यहां बास करता है, इसके सुनने में मुझे अत्यन्त कुतूहल है। विश्वामित्र जी यह सुनकर बिहँस कर रामचन्द्रजी से बोले, हे रामचन्द्र ! जिसका यह आश्रम है उसका वृत्तान्त सुनो हेरामचन्द्र कामदेव यहां शरीर को धारण करके रहते थे एकसमय महादेवजी यहां तप करते थे, जब शिवजी अपना विवाह करके देवताओं के साथ चलेजाते थे उस समय शिवजी को देखकर कामदेव ने चाहा कि इस समय शिवजी के मनको

क्षुभित करें तब शंकरजीने कामदेव के मनकी बात को जानकर हुं शब्द किया, तब कामदेव का वहां कुछ वश नहीं चला। तब शिवजी ने अपना विषम नयन खोलकर हुँ ऐसा शब्द किया और क्रोध पूर्वक उसकी ओर देखा शिवजी को देखने मात्र से कामदेव भस्म हो गया, हे रामचन्द्र जब शिवजी के क्रोध से कामदेव की शरीर भस्म हो गई तबसे वह शरीर रहित होगया उसी दिनसे उसका नाम अनंग है, जलते हुए कामदेव भागने लगे उनके भागते समय जिस देश में उनके अंग गिरे थे, वह देश अंग देश के नाम से कहा जाता है, यह उसी का पवित्र आश्रम है इस आश्रम में रहने वाले धर्म परायण मुनि गण कामदेव के शिष्य हैं। इतनी कथा सुनकर विश्वामित्र मुनि बोले, हे रामचन्द्र! अब हम इस पुण्य आश्रम में एक रात्रि बिताकर कल्ह पार उतरेंगे इस पुण्य आश्रम का रहना मुझे अच्छा मालूम होता है यहां रह कर सुख से रात्रि व्यतीत करेंगे, विश्वामित्र मुनि यह कहकर राम लक्ष्मणके सहित स्नानजप और अग्नि में हवन किया, आश्रमवासी ऋषीश्वर अपने दिव्यज्ञान के प्रभाव से रामचन्द्रजी की महिमा को जान कर बड़े प्रसन्न हुए, विश्वामित्रजी के निकट जाकर अर्घ्य पाद्य से मुनिनाथका पूजन करके अतिथि सत्कार की सामग्री उनको प्रदान किया। इसके उपरान्त मुनियों ने राम लक्ष्मणजी का उचित सत्कार किया, और रामचन्द्रजी की प्रसन्नता के लिये नाना प्रकार की कथावार्ता कहने लगे, रामचन्द्रजी उत्तम कथावार्ता सुनकर प्रसन्न होगये। फिर विश्वामित्र आश्रमवासी ऋषियों के साथ एकत्र होकर संध्याकरने लगे फिर उत्तमव्रत परायण मुनि राम लक्ष्मण के सहित विश्वामित्र मुनिको अपने आश्रम में लिवालाये। इसप्रकार कामाश्रममें रामलक्ष्मण सहित विश्वामित्र मुनियों समेत निवासकिये और ऋषियों के सहित अनेक मनोहर कथा कह कहा कर मुनिश्रेष्ठ धर्मात्माविश्वामित्र ने शोभायमान रामचन्द्र लक्ष्मण को प्रसन्न किया ॥ इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे त्रयोविंशःसर्गः ॥२३॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल होनेपर राम लक्ष्मण अपने आन्हिक कर्मको समाप्त करके विश्वामित्र मुनिके साथ नदीके तटपर उपस्थित हुए, इस अवसरमें आश्रमके रहने वाले मुनीश्वर एक सुन्दर नौका लाकर विश्वामित्रजी से बोले, हेमुनिनाथ! आपदोनों राजकुमारों को संगलेकर इस नौकामे बैठिये अवसमय का अतिक्रमण न करके शीघ्र यात्रा कीजिये हेभगवन् आपकी यात्रा में मंगल हो। विश्वामित्रजी अपनी ओरसे आश्रमवासी मुनिलोगों की पूजा करके दोनों राजपुत्रों समेत सागरगामिनी गंगाजीके पार होनेलगे। जब नौका भागीरथी के मध्यमें पहुंची तब उस तरंग समुदाय से बढ़ा हुआ बड़ा तुमुल शब्द सुनाई पड़ने लगा, तेजस्वी रामचन्द्र लक्ष्मण सहित शब्द के समाचार को सुनने की इच्छासे ऋषिश्वर विश्वामित्र जी से पूछे, हेभगवन्! इससंकुल शब्द होनेका क्या कारण है, हेमुनिनाथ! जल राशि को भेदकरता हुआ यह तुमुल शब्द कैसा होता है, श्रीरामजी के कुतूहल मय बचन को सुनकर विश्वामित्रजी शब्द होने का कारण कहने लगे कि पहिले समयमे ब्रह्माजीने कैलाश पर्वत पर एक मनोरम सरोवर बनाया, हेनरसिंह रामचन्द्रजी! इसीसे उसकानाम सरोवर हुआ उससरोवर से जो नदी निकली है वही अयोध्याके नीचे बहती है उसीकानाम सरयू है, यहसरयू नदी ब्रह्माजीके सरसे निकली है इससे यह नदी अतीव पुण्यशाली है यह सरयू का जल यहां गंगाजी में आकर गिरता है इसीसे यह तुमुल शब्द होता है, हेरघवश्रेष्ठ! देखो इनदोनों नदियों का जल आपसमें मिलकर किसप्रकार खौलारहा है तुम विनयावनत होकर इननदियों को प्रणाम करो यह सुनकर रामचन्द्र और लक्ष्मणजीने प्रणामकिया, इसके उपरान्त नदीके उस पार पहुंच कर नाव परसे उतरपड़े अतिशय पराक्रमी मुनीश्वर विश्वामित्र रामलक्ष्मण के सहित मन्दगतिसे चलने लगे आगे एक सघन अरण्य दीखपड़ा, उसजङ्गल को देखकर रामचन्द्रजी विश्वामित्र से पूछे, हेमुनिनाथ! इस दुर्गम बनमें चारों ओर झिल्लीका झनकार हो

रहा है इससे भयानक हिंसकजीव व बाज आदि दारुण शब्द करते हैं। अनेक प्रकार के पक्षियों के शब्द से यह बन गूँजरहा है, इसबनमें सिंहव्याघ्र हाथी और सूकर चारो ओर दौड़ रहेहैं, इसमें खैर असगन्ध कुम्भी बेल तेंदुआ पाउरी व बैर आदि नानाप्रकार के वृक्षों से यह सघन है हेमुनीश्वर ! यह किसका बनहै, श्रीरामजीके प्रियवचन को सुनकर महातेजस्वी विश्वामित्रजी बोले, हेरामचन्द्र ! जिसका यह सघन बनहै उसका वृत्तान्त सुनो, हेनरोत्तम ! पूर्वमें देवताओं से निर्मित यहदोनों जनपद सुखसमलद और कारूष क नामसे विख्यात थे। जब वृत्रासुर को बधकरनेसे इन्द्रको ब्रह्महत्या लगी तब क्षुधा और तृषा से पीड़ित और ब्रह्म हत्यामें लिप्त इन्द्र को मलीन भाव से देखकर ऋषि और देवताओं ने गंगाजल के भरेभरे कलशों से स्नान कराके उनका मल दूर किया, देवता और ऋषि इस भूमिमें इन्द्रका मल व क्षुधा अर्थात कारुष छूटा देखकर अति हर्षित हुए। जबजब इन्द्रके शरीर का मैलछूटा तब तब इन्द्र विशुद्ध अवस्था को प्राप्त होकर पूर्ववत् होगये, तब इन्द्र देवता प्रसन्न होकर इस जनपद को धन धान्य पूर्ण तीनो लोक में विख्यात होनेका वरदान दिया कि हमारे शरीर के मल व कारूष के धारण करने से इनका मलद व कारुष नाम होगा, इन्द्रके इस शुभा शीर्वाद को सुनकर देवता लोग धन्यवाद देनेलगे, हेराजेन्द्र ! पूर्व कालमें यह दोनों जनपद अर्थात मलद व कारूष धनधान्य से अतिशय समृद्धशाली थे कुछदिन बीतनेपर स्वेच्छाचारिणी एक यक्ष पत्नीने इनपर अधिकार जमालिया, उस यक्षिणी का नाम ताड़का है वह ताड़का हजार हाथी का बल रखती है, वह सुन्दकी स्त्री है इन्द्रके समान बलवान मारीच नाम राक्षस इसका पुत्र है, मारीच के बड़े विशाल भुजा बड़ाभारी शिर तथा अति विस्तार में उसकी शरीर है, यह भयंकर निशाचर प्रजागण को नित्य पीड़ादेता है, इसी राक्षसी ने इनदोनों मलद और कारूषनाम के जनपदों को नष्ट करडाला है, वही ताड़का अब आधे योजन से मार्गको रोक कर पड़ी रहती है

हमें उसी ताड़का बनसे होकर चलना पड़ेगा इसलिये हे रामचन्द्र! अपनी भुजाके बलसे इस दुष्टचारिणी का प्राण संहार करो, मेरी आज्ञा से इसबन को निष्कंटक करदो तुमको कोई दोष न होगा। ताड़का के भय से इसबनमें कोईभी आनेका साहस नहीं करता है। बिकटाकार राक्षसी इस बनको नाश किये डालती है जिससे यह बन भयावन मालूम पड़ता है और अबतक भी यह निशाचरी बन को उजाड़ने से नहीं रुकती है।

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे चतुर्विंशः सर्गः ॥ २४ ॥

अप्रमेय विश्वामित्रजी के वचन को सुनकर पुरुषसिंह रामचन्द्र मनोहर बाणी बोले, हे मुनिश्वर! यक्ष जाति में साधारण पराक्रम होता है इस निशाचरी में हजार हाथी का बल कहां से हुआ, पराक्रमी रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर बिश्वामित्रजी प्रसन्न होकर लक्ष्मण सहित दुष्ट संहारण रामचन्द्रजी से बोले, कि जिस कारण ताड़का राक्षसी में हजार हाथीबल हुआ है उसके वृत्तान्त को सुनो, पहिले सुकेतुनाम एक महाबली यक्ष था, उसका आचार व्यवहार शुद्ध था वह सुकेतु सन्तान होने के वास्ते महाघोर तप किया, उसयक्ष की घोर तपस्या से ब्रम्हाजी प्रसन्न होकर ताड़का नाम कन्या उसे प्रदान किये, ब्रह्माजी ने उस कन्या को हजार हाथी का बल दिया, सुकेतु को इतना बलवान पुत्र इस वास्ते नहीं दिया कि इतना बलवान यक्ष लोक को पीड़ादेगा, सुकेतु की यह ताड़का कन्या बाल्यावस्था को बिताकर जब युवा अवस्था को प्राप्त हुई तब उसने लावण्यमयी सुन्दरी के साथ जम्भदैत्य के पुत्र सुन्द के साथ अपना बिवाह किया, कुछ दिन बीतजाने पर ताड़का के गर्भ से महा पराक्रमी मारीच का जन्म हुवा, शाप के कारण मारीच को राक्षस योनि मिली। किसी कारण भगवान अगस्त्यजी सुन्द को मारा वैसेही ताड़का अपने पुत्र मारीच के सहित अगस्त्यमुनि को मारने के लिये दौड़ी, जब ताड़का लाल नेत्र करके क्रोध पूर्वक अगस्त्यमुनि पर आक्रमण किया

तब भगवान अगस्त्य यक्षिणी को अपने ऊपर आते देखकर मारीच को तो शाप दिया कि तू राक्षस होजा, और क्रोधपूर्वक भगवान अगस्त्य ताड़का को भी जारे से शाप दिया कि हे यक्षिणी मुखबाय कर मनुष्य का रक्त पीने के लिये राक्षसी की नाईं दौड़ती है इसलिये तू भी राक्षसी होजा, तेरा यह सुन्दर शरीर राक्षसी के समान हो जावे और तू सदा पुरुषों का भक्षण करोगी, इतनी कथा सुनकर विश्वामित्रजी बोले, हे रामचन्द्र ! अब वही निशाचरी ऋषिके शापसे मारे क्रोध के उन्हीं का यह श्रेष्ठ आश्रम उजाड़ देती है, हे राजेन्द्र ! वह निशाचरी घोर पीड़ा ब्राह्मणों को पहुंचाती है, आप उस ताड़का को अवश्य मारडालो, हे रघुनन्दन ! तुम्हारे सिवाय तीनों लोक में कोई उस राक्षसी को नहीं मार सकता, क्योंकि उसको ब्रह्माजी का बरदान है, आपको छोड़ दूसरे में यह सामर्थ्य नहीं है जो इस राक्षसी का सामना करे, हे नरसिंह ! स्त्रीका मारना शास्त्र में पाप लिखा है यह जानकर तुम कोई चिन्तामत करना । क्षत्रियका धर्म है कि चारों वर्णों का हित करना चाहिये, कुटिल हो अथवा धर्मात्मा हो, पापी हो या पुण्यात्मा हो, प्रजाके अनुकूल सबकार्य राजा को करना चाहिये क्योंकि राजकार्य में नियुक्त मनुष्यों के लियेही सनातन धर्म है, हे काकुत्स्थ ! इस राक्षसी में धर्मका लेश भी नहीं है तुम इस अधर्मचारिणी राक्षसी को अवश्य मार डालो, इसका एक पुरातन इतिहास भी है । पूर्वकाल में विरोचन की कन्या मन्थरा पृथिवी का नाशकरने के लिये उद्योग कियाथा, तब देवलोक के राजा इन्द्रने प्रजारंजन के लिये उसका संहार किया है । दैत्यगुरू शुक्राचार्य की माता दैत्यों की रक्षाके लिये इन्द्रको मारनेका उद्योग किया था सो भगवान् नारायण स्वयं उसको मारडाला, हेराघव ! इसप्रकार देवगण व अनेक धर्मिष्ठ राजाओं ने भी अधर्मचारिणी स्त्रियों का बध किया है इसलिये दया को छोड़कर मेरे अनुरोध से इस दुष्टचारिणी निशाचरी का बध करो ॥ इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे पञ्चविंशःसर्गः ॥ २५ ॥

परन्तथ विश्वामित्रजी की वीररस से सींचे बचनको सुनकर श्री रामजी हाथजोड़ करबोले, हेमुनिश्वर ! पिताकी आवबचन देनेके गौरवसे आप जो कुछ मुझे आज्ञा देवेंगे उसको निःसन्देह मैं पालन करूँगा, अयोध्यापुरी में सभा के बीच वसिष्ठ आदि गुरुजनों के सामने पिताजी ने जोकुछ मुझसे कहा है उसके अनुसार मैं आपके कार्य में अवहेलना नहीं करूंगा। पिताजी के प्रेमभरे बचन से और वेद शास्त्रको जानने वाले तपोनिधि आप ऐसे महात्माकी आज्ञा से उस निशाचरी को प्राणलेने के लिये उसके सन्मुख अवश्य होंगे। हे मुनिनाथ ! गौ ब्राह्मण के व देशके हितके लिये मैंने ओजस्वी आपके वचनको सादर शिरोधार्य किये, विश्वामित्रजी से यह कहकर रामचन्द्रजी ने दृढ़मुष्टिसे शरासन को ग्रहण करके अपने धनुष के टंकारसे दशो दिशाओंको आपूरित करदिया, उस टंकारके विकट शब्दसे ताड़का वनवासी पशुपक्षिगण शंकासे चकित हो उठे, घोरशब्द को सुनकर निशाचरी बलपूर्वक कुपित होगई, क्रोधमें मोहित होकर निशाचरी शब्दआने का लक्ष्य करती हुई दौड़ने लगी, रामचन्द्रजी विकटाकार राक्षसीको क्रोधसे मुँह बाये हाथ फैलाये आकाश से दौड़ती राक्षसीको देखकर लक्ष्मणजी से बोले, हेभाई इस राक्षसीका भयंकर और दारुण शरीर देखिये वस्तुतः विकृत मुखवाली यहराक्षसी जीवों को पीड़ादेती है, इसको तो मैं दूरहीसे नाक कान काटकर लौटाये देताहूं, क्योंकि यहराक्षसी माया युद्धको जानने वालीहै और स्त्रीका मारना शास्त्रमें पाप लिखा है इस कारण मेरीइच्छा नहीं होती कि मैं स्त्रि की रक्षाके सिवा इसका वधकरूं, केवल इसका पराक्रम और इसकी गति को शिथिल कर देना चाहता हूं, श्रीरामजी लक्ष्मणजी को इस भांति संबोधन देही रहे थे कि इतने में वह निशाचरी क्रोधसे मूर्छित होकर दोनों हाथ फैलाये गर्जना करते रामचन्द्रजी के निकट आही गई,तब रामचन्द्रजी को आशीर्वाद देकर हूँकार पूर्वक उसको फटकारा ताड़का ने आकाश से धूल वर्षाकर एक क्षणतक राम लक्ष्मण को मोहित कर दिया

और माया के बल से पत्थल वर्षाकर रामचन्द्रजी को व्यस्त करदिया। तब क्रोध पूर्वक रामचन्द्रजी ने बाणों की वर्षा से उसकी पत्थल वृष्टिको निवारण करके अपने बाणों से राक्षसी के दोनों हाथ काटडाले। भुजाहीन राक्षसी गर्जना करने लगी तब लक्ष्मणजीने क्रोधसे राक्षसी को नाक और कान काट डाले मायावी राक्षसी अनेक रूप धारण करके अपने माया के बल से रामचन्द्रजी को मोहित करदिया, और प्रति क्षण पत्थल को वर्षाकर भयानक भाव से इधर उधर घूमने लगी और अनेक प्रकार से पत्थल वर्षाकर उनपर चोट करने लगी। यह देख कर विश्वामित्रजी ने रामचन्द्रजी से बोले, हे रामचन्द्र ! इस दुष्ट निशाचरी को स्त्री जानकर बधकरने में दया मत करो, यह यज्ञ विद्वेषिणी निशाचरी धीरे धीरे और माया फैलावैगी इसलिये संध्या होनेसे पहिलेही इसको मार डालो नहीं तो संध्या काल होजाने पर यह राक्षसी नहीं मरेगी, क्योंकि रात्रिमें राक्षस अजे होते हैं यह सुनकर रामचन्द्रजी ने मायावी राक्षसी को अपने बाणों से उसकी गतिको रोकदिया, तब राक्षसी अपने गुप्तभाव को छोड़कर वेगसे गर्जना करती हुई राम और लक्ष्मण के ऊपर दौड़ी, उस समय देखने से मालूम होने लगी कि जैसे इन्द्रका वज्र गिररहा है, रामचन्द्रजी अपने ऊपर आक्रमण करतीहुई राक्षसी को देखकर एकबाण उसके हृदयमें मारे, बाणको लगते ही राक्षसी पृथिवी पर गिर गई और मर गई, इन्द्रादि देवते राक्षसीको मरी देखकर श्रीरामचन्द्रजी को धन्यवाद दिया, और दुन्दुभी बजाकर आनन्द मनाने लगे, इन्द्र सहित देव गण विश्वामित्रजी से प्रसन्न होकर बोले हे विश्वामित्र जी ! रामचन्द्रजी के इस कर्म से हम सब देव गण हम सब सन्तुष्ट होगये, अब आप रामचन्द्र जी को स्नेह पूर्वक प्रजापति कुशाश्वके अस्त्ररूपी पुत्रों को वीर्यवान रामचन्द्र जी को ही सौंपदीजिये यह इन अस्त्रों को ग्रहण करने योग्य हैं, और यह देव कार्य को साधन करने में परायण हैं यह कहकर देवता गण सन्तुष्ट होकर विश्वामित्रजी का आदर सत्कार कर के देवलोक को

चले गये। इधर संध्या काल की सुनहरी लालिमा चारो ओर फैलगई, ताड़का के वध से विश्वामित्रजी सन्तुष्ट होकर श्रीरामचन्द्र शिर सूंघकर बोले हेसौम्य ! हम आज की रात्री इसी पवित्र आश्रम में व्ययतीत करेंगे,प्रभात होतेही अपने आश्रम की ओर चलेंगे, विश्वामित्र जी के अमृतरूपी इस बचन से रामचन्द्र कमल के समान प्रफुल्लित्त होगये ! उस रात्रिको राम लक्ष्मण सहित विश्वामित्रजी ताड़का वन में निवास किया, उसी दिन से वह निरूपद्रव हो गया वहां के जीव शान्तभाव से आनन्द करने लगे, श्रीरामचन्द्रजी यक्षकन्या ताड़काको मारकर मुनिके सहित उसरात्रि को उसी आश्रम में व्ययतीत किया ॥

वाल्मीकिये आदि काण्डे षड़विंशः सर्गः ॥ २६ ॥

महा रात्री की कालिमा को भेदन करके प्रातःकाल भगवान अरुण उदय शैलसे वृद्धि को प्राप्त करने लगे, प्रातःकाल की विचित्र शोभाको देखकर कुशासन से उठकर रामलक्ष्मण शौच स्नान आदि नित्य कर्म करने लगे। इसके उपरान्त विश्वामित्रमुनि कुछ हंसते हुए मधुर वाक्य से बोले, हे रामचन्द्र ! मैं तुमसे अति प्रसन्न हूं , तुम्हारे लिये स्वास्ति हो, अबमैं तुमको सबअस्त्र दूंगा। हेराजपुत्र ! इन अस्त्रों का प्रभाव ऐसा है कि देवता असुर गंधर्व भी तुम्हें युद्ध में परास्त नहीं कर सकेंगे,इन अस्त्रों को जानने से विष्णु तक सामना नहीं कर सकतेहैं, अब मैं उन दिव्य अस्त्रों को देता हूं ग्रहण करो, हे बीर ! धर्मचक्र, कालचक्र, विष्णुचक्र तथा इन्द्रचक्र को ग्रहण करो, इसके उपरान्त बज्र अस्त्र, शिव शूल, ब्रह्मशिर, ऐषीशास्त्र, नाम के अस्त्रों को दिया। हे महाबाहु इस ब्रह्मास्त्र को ग्रहण करो, हेकाकुत्स्थ ? कौमोद की और शिखरी नाम की दो प्रदीप्त गदा को ग्रहण करो, हे नर शार्दूल ? प्रदीप्तमान धर्मपाम को ग्रहण करो । हे राघव ? वरुण पाश को ग्रहण करो, हे रामचन्द्र ? शुष्क और आर्द्र नामक दो वज्र को ग्रहण करो। अब पिनाकास्त्र को, और नारायणास्त्र तथा आग्नेय अस्त्र को ग्रहण करो हे नरश्रेष्ट वायव्यास्त्र तथा हयशिर

नामक अस्त्र और कौञ्च अस्त्र को ग्रहण करो हे रामचन्द्र ? कंकाल, मुशल, कपाल और किंकिणी नामक दो प्रकार की शक्तियों को ग्रहण करो । इन अस्त्रों के अतिरिक्त राक्षसों को संहार करने के लिये अब अस्त्रों को ग्रहण करो । हे रामचन्द्र नन्दन नामक वैद्याधर अस्त्र को धारण करो । हे महाबाहू रामचन्द्र ? गंधर्वास्त्र, मोहनास्त्र, सौम्य, प्रस्वापन,, प्रशमन, वर्षण शोषण, संतापन्न विलापन, आदि अस्त्रों को ग्रहण करो । हे रामजी ! शत्रुओं को मदउत्पन्न करने वाले मद-नास्त्र और गंधवास्त्र को ग्रहण करो । हे राजपुत्र ! पैशाचास्त्र को ग्रहण कीजिये हे राजशार्दूल ? तामशास्त्र, सौमनास्त्र, मौशलास्त्र, को ग्रहण करो । हे महाभुज ? सत्यास्त्र, को मायास्त्र, को शत्रु के तेज को खीचने वाले सौरास्त्र को ग्रहण करो । हे रामचन्द्र ? सौमास्त्र दारुणास्त्र, त्वाष्ट के अस्त्रको, और भगदेवता के अस्त्र, को और शीत को नाश करने वाले सूर्यास्त्र को ग्रहण करो । हे राजशार्दूल ? माया युद्ध करने में परम उदार और अत्यन्त तेजस्वी अस्त्रों को मुझसे ग्रहण करो इसके उपरांत विश्वामित्र मुनि पूर्वमुख बैठकर प्रसन्न मनसे रामचन्द्रजी को मन्त्रमय सकल अस्त्रों को देदिये, जो अस्त्रदेवताओं को दुर्लभ थे वही अस्त्र मुनीश्वरों ने श्रीरामजी को समर्पण किये, अस्त्र देने के समय जैसे विश्वामित्रजी मन्त्रों का ध्यान और जप करने लगे वैसेही अस्त्र समूह अपना अपना रूप धारण करके श्री रामजी के सन्मुख खड़े होगये सकल अस्त्रों ने रामचन्द्रजी के सन्मुख हाथ जोड़ कर बोले, हे महाप्रभु ? हम सब अस्त्र आपके आज्ञाकारी हैं, जो कुछ आप कहैंगे सो मैं करूंगा हे भगवन् आपके लिये स्वस्ति हो, अस्त्रों को अनुग्रह पूर्वक देखनेसे रामचन्द्र बहुत प्रसन्न होगये प्रसन्नतापूर्वक रघुनाथजी एकएक को अपनेकर कमलसे स्पर्श कर के सकल अस्त्रों को ग्रहण किया, व कहा कि हे अस्त्रदेव ! जब मैं आपका स्मरण करूं तब आप लोग मेरे सामने आजाया करो तुम सब मेरे मानसी हो, इसके उपरान्त लोकमित्र महातेजस्वी राम-

चन्द्रजी विश्वामित्रजी को प्रणाम करके आगे चलने का उद्योग करने लगे ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥

इसके उपरान्त रामचन्द्रजी पवित्र भाव से अस्त्रों को ग्रहण करके मार्गमें चलते हुए विकसित मुखसे विश्वामित्रजी से बोले, हेभगवन्! मैं अस्त्र ग्रहण करके देवताओं से भी दुर्धर्ष हो गया हूं, परन्तु हे भगवन्! अस्त्र का संहार करना मैंने अब तक नहीं जाना कृपाकरके इसे भी बता दीजिये, श्रीरामचन्द्रजी के ऐसे आग्रह करने पर तपस्वी पराक्रमी धैर्यशाली परन्तपमुनि विश्वामित्रजी ने रामचन्द्रजी को मन्त्र देकर कहा, हे राघव! तुम सत्यवान, सत्कीर्ति, धृष्ट, रभस प्रीति हारीत, पराङ्मुख, अपराङ्मुख, लक्ष्य, अलक्ष्य, विमोच, दृढनाभ, सुनाभ, दशाक्ष, शतवक्त्र, दशशीर्ष, शतोदर, पद्मनाभ, महानभ, इन्दुनाभ, स्वनाभ, ज्योतिष, शकुन, विमल, नैराश्य, विमल, यौगेन्धर, विनिन्द्र, दैत्यप्रमथन, शुचिबाहु, महाबाहु, निष्कलि, विरुचि, अर्चिमाली, धृतीमाली वृत्तिमान, रुचिर, पित्र्य, सौमनस, विधूत, मकर, परवीर, रति, धन, धान्य, कामरूप कामरुचि, मोह, आवरण, जृम्भक, सर्पनाथ, पन्थान, वरुण आदि अदीप्तशाली कामरूप अस्त्रो को हे रामचन्द्र! तुम ग्रहण करो। हे रामचन्द्र तुम्हारे लिये स्वास्तिहो। तुम इन अस्त्रों के ग्रहण करने योग्य हो रामचन्द्र प्रसन्नता पूर्वक तथास्तु कह कर उन सकल अस्त्रों को ग्रहण किया वह सब अस्त्र दिव्य मूर्तिवान् कोई देखने में अग्नि के समान कोई चन्द्र और सूर्य के समान कोई धूयेंके समान रामचन्द्रजी को हाथ जोड़े शिर झुकाये उनके सामने खड़े हो गये, वह सब अस्त्र हाथ जोड़कर रामचन्द्र जी से मधुर बचन बोले, हे नरोत्तम! हम सब अस्त्र आपके सामने हाथ जोड़े खड़े हैं, हम लोग को जो कुछ आज्ञाहो सो आपका कार्य करें। रामचन्द्रजी ने कहा आपलोग अपने स्थानपरनिवास करो, जिस समय मैं आप लोगोंका स्मरण करूं उस समय आकर मेरी सहायता करना, वह सब अस्त्रदेवरामचन्द्रजी

की आज्ञा को सादर शिरोधार्य करके रामचन्द्रकी प्रदक्षिणा किये, और राम चन्द्र से विदा होकर अपने अपने स्थान को चले गये, श्रीरामचन्द्रअस्त्र प्रयोग और संहार विषय जान कर माग में गमन करते २ महर्षि विश्वामित्र मधुर वाणी बोले, हेमुनीश्वर ! इसपर्वत के निकट मेघमाला की नाई वृक्षोंका समूह दीखपड़ता है और यहस्थान बड़ा सुन्दर दिखाई देता है इसके चारो ओर मृगाओंकी झुण्ड दौड़रही है, और मनोहर वाणी को बोलने वाले पक्षिगण वृक्षोंकी शाखाओं परकलोल कररहे है, हमलोग यद्यपि भयानक और निविड़ वनको लांघकर आये हैं तौभी यहस्थान बड़ा मनोहर मालूम होता है, हेभगवन् ! यह आश्रम किसका है मे रे ऊपर अनुग्रहपूर्वक बताइये और ब्राह्मणों के साथ विरोध करने वाले आपके यज्ञमें विघ्नकरने वाले राक्षस गण कहां हैं, और आपका यज्ञ स्थान कहां है, हेमुनीश्वर जिसस्थान पर आपके यज्ञ की रक्षा करनी पड़ैगी और राक्षसो का वध करना होगा वहस्था कितनी दूर है, कृपा पूर्वक मुझको बतलाइये ॥

वाल्मीकिये आदिकाण्डे अष्टाविंशः सर्गः ॥ २८ ॥

श्रीरामजीके अमृतके समान प्रश्नयुक्त वचनको सुनकर विश्वा मित्रजी बोले हेरामचन्द्र ! हेमहाबाहु ! इसस्थानपर सकल लोकको पूज्य विष्णुभगवान ने बहुत युग पर्यन्त तपस्याकी थी । यह आश्रम भग वान वामन काहै, यहस्थान तपस्याकरने योग्यहै, और यहां पर सिद्ध लोगरहते हैं, इसीसे इसका सिद्धाश्रम नाम है, जिससमय यहां विष्णु भगवान तपस्या कररहे थे, उसीसमय विरोचन का पुत्र बलि दैत्यने अपने बल पराक्रमसे इन्द्रादि देवगणों को युद्धमें पराजय करके देव ताओं का राज्य छिन लिया था, तीनो लोकका अकेला राजा अपने को समझने लगा, एकसमय दैत्यराज बलिने एक महायज्ञ करने की प्रतिज्ञाकी, बलिके यज्ञारंभको देखकर इन्द्रादिदेवते अग्निदेवता को आगे करके अपने सब देवगण विष्णुलोक में गये, विष्णुभगवान की अनेक प्रकार से अस्तुति करके बोले, हे भगवन् ! विरोचन के पुत्र

बलिदैत्यने एक यज्ञ का आरंभ किया है, उसके यज्ञ समाप्त होने के पहिले आपको एक देव कार्य करना होगा राजा बलिके यज्ञमें अनेक देश के याचक आये हैं, यज्ञ कर्ता याचकों को मुंह मांगी बस्तुदेता है, हे विष्णुभगवान् ! आप इस समय देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिये योगमाया का अवलंबन कर के नामन मूर्ति धारण कर हम लोगों का कल्याण कीजिये, इस समय अवतार लेने का कारण भी प्राप्त है क्योंकि आज कल अग्नि के तुल्य तेजस्वी कश्यप जी अपनी स्त्री आदि के सहित तेज से प्रकाशित हजार वर्ष का व्रत समाप्त करके वरदान देने वाले भगवान् जनार्दन की अस्तुति करते हैं कि हेभगवन ! आप तपोमय तपोराशि तपोमूर्ति व ज्ञानस्वरूप हैं, हे पुरुषोत्तम ! मैंने तपस्या के प्रभाव से आपको साक्षात्कार किया है हे प्रभो ! आपके शरीर में सकल संसार प्रत्यक्ष दीखा रहा है आप अनादि हैं आनन्दमय और ऐश्वर्य्य सम्पन्न हैं अतएव मैं आपके शरणहूं।

विष्णुभगवान कश्यपजी के बचन से प्रसन्न होकर मुनिसे बोले, हे ब्रह्मदेव ! आपका क्या मनोरथ है आप अपनी अभिलाषा के योग्य बरदान मांगो, मैं तुमसे प्रसन्न हूं श्रीनारायणजी के बचन को सुनकर मरीचिनन्दन कश्यपजी बोले, हे प्रभो ! इस समय दैत्य लोग बलवान हैं देवताओं का राज्य धन अधिकार सब छीन लिया है इसलिये मैं आपके समान बलवान और पराक्रमी पुत्र चाहते हैं कश्यप ऋषिके दीन वचन को सुनकर बिष्णुजी बोले, हे मरीचिनन्दन ! मेरे समान और कोई दूसरा नहीं है मैं स्वयंअदिति के गर्भसे अवतार लेकर देवताओं की सहायता करूंगा। यह बरदान कश्यपजी को देकर बिष्णुभगवान अपने लोकको चले गये, इधर इन्द्रादिक देवते बिष्णु लोकमें जाकर भगवान से प्रार्थना करने लगे, हे प्रभो ! आप पुत्र रूपसे अदिति के गर्भसे अवतार लीजिये, हे दानव दलन ! इस महा दुःखमे पड़े हुए हम सब देवताओंका सहाय कीजिये, आपकी कृपासे यह स्थान सिद्धाश्रम नामसे बिख्यात होगा,

इसके उपरान्त विष्णु भगवान देवताओं को धैर्य देकर बोले, हेदेवेश! आपलोग का कार्य सिद्धहोगया, अब अपने अपने स्थानको जाओ इसके उपरान्त सकल लोकके रक्षक विष्णुभगवान अदिति के गर्भसे वामन अवतार लेकर दैत्यराज बलिके यज्ञस्थल में आये, सबके हितकारी अच्युत भगवान राजाबलिसे तीन पग पृथिवी भिक्षा मांगी, बलिने उनकी महिमा को न जानकर याचक समझकर तीनपग भूमि वामन भगवान कोदानदिया वामन जी तीनपग में तीनोलोक नापलिये, और बलिको बांधकर पाताल को भेजदिया, और देवताओं ने अपना राज्य पाकर जयजय ध्वनि करने लगे। श्रीरामचन्द्रजी को इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्रजी बोले, हे रामचन्द्र पूर्वकाल में वामनजी इसी स्थान पर रहते थे, इस समय उनके प्रति भक्तिमान हो मैं यहीं निवास करता हूं। हे राजपुत्र इसी आश्रम में यज्ञको नाश करने वाले आया करते हैं, यहीं पर ठहर कर तुम्हें उन दुष्ट राक्षसों का संहार करना होगा हेरामचन्द्र ! इस आश्रममें जैसा मेरा अधिकार है वैसेही तुमारा अधिकार है, विश्वामित्र मुनि यह कहकर रामचन्द्र और लक्ष्मण के सहित उस आश्रमकी शोभा देखने लगे। पुनर्वसु नक्षत्र में शरत् कालके बादलों मे नियुक्त चन्द्रमाकी जिसप्रकार शोभा होती है वही शोभाको मुनिनाथ ने धारणकिया। सिद्धाश्रम वासी सिद्ध और तपस्वीगण श्रीराम लक्ष्मण सहित मुनीजीको देखकर सहसा पूजा किया, और श्रीरामजी तथा लक्ष्मणजी का योग्य सन्मान किया, शत्रुदलन ! रामचन्द्र व लक्ष्मणजी कुछ देर तक विश्राम करके विनयाव नतहो विश्वामित्र जी से बोले, हे परन्तप ! आप आजही यज्ञमें दीक्षित होवें आपके लिये स्वस्तिहो, यह सिद्धाश्रम सिद्ध और आपका बचन सत्यहो। महाबली रामचन्द्र जीके बचन को सुनकर महर्षि विश्वामित्रजी तत्काल उसयज्ञ में दीक्षित हुए और अन्तः करणको निग्रह करके यज्ञ करने लगे, राम लक्ष्मण रात्रिको विताकर प्रातःकाल अपने नित्य कर्मको समाप्त

करके जहां महर्षि विश्वामित्र जी सुखसे बैठे यज्ञकर रहेथे वहां जाकर सुखसे मुनिजीको साष्टाङ्ग प्रणाम किया।

श्री वाल्मीकिये आदिकाण्डे एकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥

इसके उपरान्त देशकाल को जानने वाले राजकुमारों ने समयोचित बचन विश्वामित्रजी से बोले, हेप्रभो! यज्ञको भ्रष्ट करने वाले राक्षस किस समय आते हैं जिससमय मारीच और सुबाहू के आक्रमण को शान्त करना होगा वह समय हमको बतादीजिये। युद्धके लिये सज्जित रामचन्द्रके बचन को सुनकर आश्रमवासी मुनि लोग रामचन्द्रकी बड़ाई करने लगे और बोले हे राजेन्द्र! आजसे लेकर छः दिन पर्यन्त तुम्हें यज्ञकी रक्षा करनी पड़ैगी, इस समय महर्षि विश्वामित्र मौनहोकर अपने यज्ञकार्य में निरत हैं, यशस्वी श्रीरामचन्द्र मुनियोंके बचन को सुनकर निद्रा और आलस्य को छोड़कर तपोबन की रक्षा करने लगे, शत्रुदलन रामचन्द्र लक्ष्मण के सहित मुनिवर विश्वामित्र जीकी सावधानी से निरन्तर रक्षा करने लगे।

इसप्रकार संरक्षा करते२ छठयां दिन आनेपर प्रातःकाल रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले, हे भाई! अब तुम भी सावधान होजाओ रामचन्द्र जी लक्ष्मणको युद्धके वास्ते सज्जित होने की आज्ञा देतेही मुनीश्वर की यज्ञवेदी में अग्नि प्रज्वलित होगई, अग्निको अनायास प्रज्वलित देख कर उपाध्याय व पुरोहित घबड़ा उठे और यज्ञ कार्यके समिध कुश काश पुष्प और विश्वामित्र जी ऋत्विजों के सहित प्रदीप्तहो उठे वेदी जलने लगी मन्त्र पढ़कर यज्ञ आरंभ होरहा था इतनेही में आकाशसे महाभयंकर शब्द होने लगा जिसप्रकार वर्षाकालके मेघ आकाश को ढांक कर पुमुल वृष्टिपात व वज्रपात बारंबार करते हैं उसी प्रकार निशाचर गण अनेक प्रकार की माया से यज्ञअस्थल को आच्छादित करके यज्ञस्थान पर रक्त वर्षा करने लगे, यज्ञवेदीको रुधिर से भींगी देखकर श्रीरामचन्द्रजी ने शीघ्रतापूर्वक यज्ञ स्थानके चारो ओर घूम कर कमलनयन रामचन्द्र निशाचरों को देख लक्ष्मण जी से प्रियवचन बोले,

हे लक्ष्मण ! देखो यह मांसाहारी दुराचारी राक्षस कैसे वेग से दौड़े आते हैं मैं इनको अपने मानवास्त्र से ऐसा उड़ा देना चाहता हूं जैसे बद्दलों के झुण्ड को वायु चलकर उड़ा देता है, वैसेही मैं इनका प्राण न मारकर मानवास्त्र से भगाये देताहूं यह कह कर श्रीरामजी ने धनुष पर बाण चढ़ाया, और प्रकाशमान मानवास्त्र को क्रोधपूर्वक रामचन्द्र जी ने मारीच के हृदय पर मारा मारीच उस अस्त्र के लगते ही घायल होकर सौ योजन के दूरपर समुद्र में जागिरा, मारीच को चेतना सहित घूमते हुए अस्त्रसे पीड़ित देखकर रामचन्द्रजी लक्ष्मण जी से बोले, हे लक्ष्मण ! देखो मेरे इस अस्त्रने मारीच को मोहित करदिया है, किन्तु प्राण इसका नहीं मारा है, अब मैं बचे हुए यज्ञमें विघ्न करने वाले रक्तको पीने वाले दुष्टाचारी पापात्मा को प्राणसे संहार करूंगा यह कह कर लक्ष्मण जी अग्नि अस्त्रको लेकर सुबाहु के हृदय में मारा, बाण के लगतेही सुबाहु पृथिवी पर गिर पड़ा, इसी प्रकार शेष अन्यान्य राक्षसों को वायु अस्त्र से मारकर श्रीरामजी ने मुनियों का कार्य किया। दैत्यों को समर में जीतकर जिस प्रकार इन्द्रसम्मानित होतेहैं वैसेही यज्ञको भ्रष्ट करने वाले राक्षसों को मार कर श्रीरामजी मुनीश्वरों से सम्मानित हुए, यज्ञ समाप्तकरके महर्षि विश्वामित्र निरुपद्रव प्रदेश को देखकर रामचन्द्रसे बोले, हे कमल नयन महाबाहुराम ! मैं कृतार्थ होगया, हे महाबीर यशस्वीराम! तुमने गुरुवाक्य को सत्यकिया यह आश्रम तुम्हारे प्रभाव से सिद्धाश्रम होगया, इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी की बड़ाई व प्रशंसा करने लगे, फिर राम लक्ष्मण को संग लेकर संन्ध्या बन्दन करने के निमित्त चले गये ।

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे त्रिंशः सर्गः ॥ ३० ॥

श्रीरामचन्द्र लक्ष्मणजी के सहित इसप्रकार सिद्धाश्रमवासी राक्षसों को संहार करके प्रसन्नमन से मुनियों के संग सिद्धाश्रम में रात्रि को व्यतीत किये प्रातःकाल उठकर शौच स्नान सन्ध्याबन्दनादि नित्य कर्मों को करके अन्यान्य महर्षियों के मध्यम में अग्नि के समान प्रकाशमान

विश्वामित्र मुनिके पास जाकर साष्टाङ्ग प्रणाम किया और मधुरवचन से विश्वामित्र जी से बोले, हे परन्तप ! आपके दोनों किंकर उपस्थित हैं, कहिये अब हमें क्या करना होगा, दोनों भाइयों के प्रियवचन को सुनकर ऋषिगण विश्वामित्रजी के आगे कर राम लक्ष्मण से बोले, हे नरसिंह मिथिलाधिपति ! परमधार्मिक महाराज जनक यज्ञ करेंगे हम लोग उस यज्ञको देखने जायंगे, हे रामचन्द्रजी ! तुम भी हमारे साथ वहां चलकर राजा जनक के अद्भुत धनुषरत्नको देखो पूर्व काल में वह धनुष देवराज इन्द्रकी सभामें जनकजी को मिलाथा, हे नरोत्तम ! उस धनुषमें अप्रमेय बल है देखने में कान्तियुक्त है वही धनुष उस यज्ञमें रखागया है, उस यज्ञमें देवता गंधर्व असुर पन्तग आदि धन्वा को नहीं उठा सकते, उस धन्वाकी शक्तिका परिणाम जानने के लिये अनेकानेक बलशाली राजा वहां उपस्थित हैं किन्तु कोई उसे उठा नहीं सकता ! हे काकुत्स्थ ! वही धनुष महात्मा मिथिलाधिपति के यज्ञस्थान में रखा है, तुमभी वह श्रेष्ठ धनुष और महत् यज्ञ को देखिये । हे रामचन्द्रजी ! जनक राजाने एक समय यज्ञ किया था तब शिव आदि सकल देवगण उस यज्ञ में प्रसन्न हुए, यज्ञके फलके समान शत्रुओं का नाश करने के लिये राजा ने उस धनुषको देवताओंसे मांगलिया था तब से वह धनुष राजा जनक के यहां स्थापित है उस को देवता के समान अगर चन्दन गन्ध धूप आदिसे नित्य पूजा करते हैं यह कह कर महर्षि विश्वामित्र ऋषियों के सहित श्रीरामचन्द्रको संग लेकर जनक पुरको चले, यात्रा के समय महर्षि विश्वामित्र बन देवताओं से बोले, हे बनदेवता ! मैं इस समय सिद्धकाम हो सिद्धाश्रम से राम लक्ष्मण और ऋषियों के सहित उत्तर दिशा में गंगाजी के तीर जाता हूं, यह कह कर मुनिश्रेष्ठ विश्वामित्र उत्तर दिशागामी हुए । तब ब्रह्मवादी ऋषिगण एक सौ छकड़ों में अग्निहोत्र की सामग्री लेकर विश्वामित्र जी के पीछे चले, यहां तक की रामचन्द्र के प्रेम से मोहित होकर सिद्धाश्रम के रहने वाले मृगा और पशुपक्षिगण भी तपोधन विश्वामित्र

के पीछे चले,जब अरण्य वासी पशुपक्षियों को पीछे आते देखकर महर्षि विश्वामित्र सबको लौटने की आज्ञा देकर सब को लौटा दिये,और मुनिसमाज श्रीरामजी को अनेक प्रकार की कथावार्ता कहते सुनाते मार्ग को अतिक्रमण करते दूर प्रदेश में पहुंचे। इतने में मरीचिमाली सूर्यभगवान् अस्ताचल को प्रस्थान कररहे थे, सायंकाल की लालिमा से आकाश लाल होरहाथा,ऋषिमुनि ब्राह्मण सायं संध्या वन्दन करके सूर्य की स्तुति करने लगे,पशु पक्षिगण विश्राम के लिये अपने अपने स्थान को लौटरहे थे, उसी समय ऋषिमुनियों के संग महर्षि विश्वामित्र जी शोण नदी के किनारे पर पहुंचकर स्नान सायं संध्या और होम कार्य करने लगे। इसके उपरान्त विश्वामित्र जी ऋषिमंडल के बीच में बैठ गये,तेजस्वी रामचन्द्र ऋषियों के निकट आकर सबको प्रणाम किया,और महर्षि के सन्मुख बैठकर कुछ कथा वार्ता सुनने लगे, तेजस्वी रामचन्द्रजी मुनियों में श्रेष्ठ विश्वामित्रजी से बड़े हर्ष के साथ कुतूहल पूर्वक पूछे, हे मुनिवर ! समृद्ध संयुक्त इस वन और शोभित स्थान का नाम क्या है, हे प्रभो!इस स्थान का भी वृत्तान्त मुझे कुछ सुनाइये, परन्तप विश्वामित्र जी श्रीरामचन्द्रजी के प्रिय बचन को सुनकर महामुनि विश्वामित्र जी उस वन का वृत्तान्त कहने लगे।

इति वाल्मीकिये आदि काण्डे एकत्रिंश सर्गः ॥ ३१ ॥

पूर्वकाल में महातपस्वी सज्जन प्रतिपालक ब्रह्मा के पुत्र कुशनाम एक धार्मिक राजा थे, महात्मा कुश एक कुलीन वैदर्भी नामक रानी के गर्भ से अपने समान चार पुत्र उत्पन्न किये, उन पुत्रों का नाम कुशाम्ब, कुशनाभ,असूर्तरज,और वसु नाभ के हुये। एक समय महाराज कुश क्षत्रिय धर्म का प्रचार करने के लिये सत्यबादी उत्साही दीप्तिमान अपने चारो पुत्रों को बुला कर कहा कि हे पुत्र ! तुम लोग प्रजा पालन करो तुम्हें बड़ा धर्म होगा, यह सुन कर राजा कुश के चारो पुत्रों ने पिता की आज्ञा को सादर शिरोधार्य करके अपने अपने नाम से एक एक नगर बसाया महातेजस्वी कुशम्बने कौशाम्बी नगरी

और धर्मात्मा कुशनाभने महोदय नाम नगर बसाया, असूर्तरजने धर्मारण्य और वसुने गिरिव्रज नामक नगरी बसाई इसी गिरिव्रजका बसुमती भी नाम हुआ सो उन्हीं पुण्यात्मा राजा बसुकी वसुमती नाम पुरी है इसके चारों ओर पांच पहाड़ हैं, जो पहाड़ इस बन को प्रकाशित कररहे हैं। शोणानदी का दूसरा नाम मागधी है यह नदी पांच पहाड़ों के बीच में माला के समान शोभा पारही है, यह नदी मागध से निकल कर पूर्व की ओर को बही है,हे रामचन्द्र! इस नदी के किनारे धान्य की उपज अच्छी होती है,हे राघव! धर्मात्मा राजर्षि कुशनाभ से घृताची के गर्भ में उतमा सौ कन्या उत्पन्न हुई,यथाक्रम से वे कन्या रूप यौवनवाली सुलक्षणा कन्या गुणवती होकर वर्षाकाल के बिजली के समान बाग में बिहार करने लगीं। हे रामचन्द्र जी! यहां फुलवाड़ी में सबकी सब कन्यायें आपस में गाने बजाने व नाचने लगीं, और सब गहनों से सज धज कर परमानन्दित हुई,इन के सब अंग अतिरमणीय थे,उस समय उनके समान कोई स्त्री पृथिवी तल पर सुन्दरी न थीं। बगीचे में उन कन्याओं की ऐसी शोभा हुई जैसे आकाश के बीच में तारागण शोभित होते हैं, उनके रूप और यौवन को देखकर पवन देवता मोहित होकर बोले, हेसुन्दरी गण! तुम सब मनुष्य भाव को छोड़कर चिरजीवनी होवो, तुम सब सुन्दरियों से व्याह करने की मेरी इच्छा है, हे नारियों! तुम सब विचार करके देखो कि यौवन सदा नहीं रहता,और विशेष करके मनुष्यों की युवावस्था तो थोड़े दिन रहती है,इस कारण मेरे संसर्ग में अक्षय यौवन सुखको प्राप्त होकर देवताओं की स्त्रियों के समान सुखसे रहो। महा पराक्रमी पवन देव! की बात को सुनकर कन्यायें हंसने लगी और बोली हे पवन देव आप सब देवताओं में श्रेष्ठ हैं, आप का बास सब जीवों के भीतर रहता है हम सब आप के प्रभाव को भली भांति जानती हैं आपने विबाह की प्रार्थना करके हमें क्यों अपमानित किया, हे पवन देव! हम महाराजा कुशनाभ की कन्या हैं यदि इच्छा करें तो आपके

प्रभाव को नष्ट कर सकती हैं,परन्तु ऐसा करने में प्रवृत्ति नहीं होती क्योंकि तपस्या का फल नष्ट हो जायगा,हम सब ईश्वर से यही प्रार्थना करती हैं कि हमारे भाग्य में ऐसा कुसमय कभी न आवे,कि हम सब सत्यवादी पिता को अपमानित करके स्वयंवरा होव पिता हमारे प्रभु हैं और वही हमारे परम देवता हैं, वह जिसके हाथ में समर्पण करेंगे वही हमारे स्वामी होंगे, कन्यों के धर्म पूर्वक बचन को सुनकर पवन देव कुपित हुए और कन्याओं के अंग प्रत्यंग में प्रवेश करके उनसबों को कुबरी बनादिया। कन्यायें इस प्रकार बायूके द्वारा कुबरी हो संभ्रम से लज्जायुक्त रोती हुई अपने घर आई राजा कुशनाभ ने उन प्यारी कन्याओं को कुबड़ी और दीन देखकर आश्चर्य से बोले, हेकन्ये ! तुम्हारी यह क्या दशा है, कौन पुरुष ने धर्मकी अपमानता किया है किसने तुम्हें कुबरी कर दिया है, तुम्हारा इस तरह दीन भाव होनेका क्या कारण है, कुशनाभ इस प्रकार लंबी सांस लेकर छोड़ने लगे, और इस कारण को जानने के लिये इन्द्रकेसमान बलवान राजा समाधि परायण हुए ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे द्वात्रिंशःसर्गः ॥ ३२ ॥

कन्यायें अपने पिता कुशनाभ के बचन को सुनकर प्रणाम करके बोली, हे पिता सर्वव्यापी पवन देवता ने कुपंथ पर प्रवृत्त होकर हमलोगों को अपमानित करने की इच्छा किये धर्मकी ओर उन्होंने कुदृष्टि नहीं किये, हमसब ने उनका खोटा अभिप्राय जानकर उससे कहाथा कि हमारे पिता वर्तमान हैं और हम सब उनके अधीन हैं तुम अपना अभिप्राय हमारे पिताजीसे कहो, जैसी उनकी इच्छा होगी वैसाकरेंगे। परन्तु उस पापीने हमारी बात नहीं सुनी और हमको विकृताङ्ग करदिया, तेजस्वी धर्मात्मा राजा कन्याओं के बचन को सुनकर उनकन्याओं से बोले, हे कन्ये तुमसबों ने वायू देवता के ऊपर क्षमाकिया है उससे हमारे कुलगौरव की रक्षा हुई है, स्त्री पुरुष दोनों को क्षमाही भूषण है क्षमा अति प्रशंसा का

विषय है विशेष करके इसका गौरव स्वर्गमें भी है, हेकन्ये ! तुमसबो ने स्वेच्छाचारिणी न होकर पवन देवके ऊपर जो क्षमाकिया है वह अतीव प्रशंसा के योग्य है, वस्तुतः क्षमाही दान, क्षमाही सत्य, क्षमाही यज्ञहै क्षमाही में यश क्षमाही धर्म क्षमामेही केवल जगत् प्रतिष्ठित है, इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्रजी बोले, हे रामजी ! इन्द्रके समान पराक्रमी राजा ने कन्याओं को धैर्य देकर विदाकिया देशकाल को जानने वाले राजा कन्यों के विवाह के विषयमें मन्त्रियों से सलाह लेनेलगे। उसी समय चूली नामक ऊर्ध्वरेता महाकान्ति मान ब्रह्मचारी ब्रह्मयोग साधन करते थे उनऋषिकी तपस्या को देखकर सोमदाना नाम गंधर्वी ऋषिकी उपासना करने लगी, उस गंधर्वी के सेवासे प्रसन्न होकर ब्रह्मचारी जी बोले, हेसोमदे ! मैं तुझसे प्रसन्न हूं अब कहोकि तेरा क्या प्रिय कार्यकरूं, परम चतुर गंधर्व कन्या ऋषिको प्रसन्न जानकर मधुर वाणीसे बोली, हे ब्रह्मदेव! आप साक्षात् ब्रह्मस्वरूप हैं जिससे मेरी प्रार्थना पूर्णहो ऐसा तपके प्रभावसे मुझे पुत्र दीजिये और ऐसी कृपाकीजिये कि जिसमें मैं नैष्ठिक ब्रह्मचारिणी रहूं केवल तपसे पुत्रनी प्राप्तिहो, ब्रह्मर्षिने प्रसन्न होकर उसको अतिश्रेष्ठ ब्रह्मदत्त नामक एक मानसी पुत्र दिया, वह पुत्र चूलीके पुत्र कहलाये और ब्रह्मदत्तने अमरावती के समान एक काम्पिल नाम नगर बनाया और राजा ब्रह्मदत्त उसपुरी में रहने लगे। इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्र जी बोले हे रघुनन्द ! परम धर्मात्मा राजा कुशनाभने यह बिचारा कि अपनी सब कन्याओं का बिवाह ब्रह्मदत्त के साथ करदूं इसके उपरान्त महाराज कुशनाभने ब्रह्मदत्त को बुलाकर प्रसन्नता पूर्वक अपनी सौकन्या उनको समर्पण कर दिया हे रामचन्द्र ! ब्रह्मदत्त राजा ने यथाविधि उन कन्याओं का पाणिग्रहण किया। ब्रह्मदत्त का हाथ लगतेही कन्याओं का कुबरापन छूट गया और वह सब कन्या परम सुंदरी रूपवती होगई। राजा कुशनाभ कन्याओं का बिवाह करके प्रसन्न होगये, और विवाह कार्य

समाप्त करके परिवार समेत कपिलनगर को भेज दिया सोमदा गंधर्वी अपने पुत्र के योग्य राज कन्याओं को देखकर परम सन्तुष्ट हो गई और बारबार राजा कुशनाभकी प्रशंसा करने लगी॥

इति बाल्मीकिये आदिकाण्डे त्रयस्त्रिंशः सर्गः॥ ३३॥

इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्रजी बोले हे रामचन्द्र! ब्रह्मदत्तके साथ कन्याओं का विवाह हो जाने पर पुत्रहीन कुशनाभने पुत्रप्राप्ति के लिये पुत्रेष्टि यज्ञ का सामान किया, जब वह यज्ञ विधिपूर्वक होने लगा तब ब्रह्माजी के पुत्र उदार स्वभाव वाले कुशने अपने पुत्र राजा कुशनाभ से कहे कि, तुम्हारे समान गाधिनामक एक धार्मिक पुत्र तुमको होगा। और उस पुत्र से इस लोक में तुम्हारी कीर्ति स्थिर रहैगी, ब्रह्माके पुत्र कुश, कुशनाभसे इस प्रकार कहकर आकाश मार्ग से ब्रह्म लोक को चलेगये, कुछ समय बीतने पर राजा कुशनाभ को परम धार्मिक गाधिनाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ, वहीपरम धर्मात्मा मेरे पिता हैं, हे रघुनन्द! मैं कुश वंश में उत्पन्न हुआ हूं इस कारण मेरा नाम कौशिक भी है और मेरे पिता से उत्पन्न एक सत्यवादी नाम की कन्या हुई, वह कठोर व्रतको धारण करने वाली मेरी बड़ी बहिन थी, उनका विवाह महर्षि ऋचीक के साथ हुआ था, वह पति की सेवा के प्रभाव से इसी शरीर से स्वर्गधाम को चलीगईं, अब उन्होंने नदीका रूप धारण किया है और यहां नदी रूपसे बहती हैं, वह मेरी बहिन जगतका कल्याण करने के लिये नदीका रूपधारण किया है, वह नदी अति रमणीय और उसका जल परम पवित्र है, वह नदीकी धारा हिमालय से निकली है, हे रामचन्द्र! मैं बहिन के प्रेमसे हिमालय पहाड़ के निकट कौशिकी नदी के किनारे पर रहता था, नदियोंमें श्रेष्ठ कौशिकी अती व पुण्यवती हैं और सती धर्ममें उनका अति अनुराग है, जिसपतिव्रत के प्रभाव से उनको यह पद प्राप्त हुआ है, मैं केवल यज्ञकी सिद्धि के लिये उस आश्रम को छोड़कर शिद्धाश्रम में आया हूं, अब तुम्हारे

प्रभाव से यज्ञ की सिद्धि हुई, हे रामचन्द्र ! मैंने अपनी उत्पत्ति और अपने वंश का वृत्तान्त कहा, और उस देश की कथा भी कही, अब हे रामचन्द्र ! आधीरात का समय है शयन करो नहीं तो प्रातःकाल मार्ग चलने में क्लेश होगा हे रघुनन्दन ! देखो इस समय वृक्षों में निश्चलभाव व्याप्त हो रहा है, पशुपक्षियों के मौन होने से सन्नाटा मालूम होरहा है, निशाके घोर अन्धकार से आकाश व्याप्त है, इस समय नभमण्डल तारागणों से भरगया है, मानो हजारों नेत्रों से आकाश देखरहाहै उनका प्रकाश दिशाओं को प्रतिभासित कर रहा है, इस ओर से शीतरश्मी निशानाथ अपने किरण जालको विस्तार कर रहे हैं, चन्द्रमाको देख लोक का हृदय प्रफुल्लित हो रहा है, धीरे धीरे अंधकार का संहार करते हुये उदय होरहे हैं, रातको घूमने वाले और मांस खाने वाले यक्षराक्षस आदि निशाचर जन्तु इधर उधर फिर रहे हैं, परन्तप महामुनि विश्वामित्रजी यह कहकर चुपहो गये, ऋषियों ने धन्यवाद देकर उनका आदर किया और पूजा करके कहाकि अतिशय धर्मपरायण कुशिक वंशहै जिनमें आपने जन्म ग्रहण किया है, इस वशके सभी महात्मा और ब्रह्मतुल्य हुए हैं, विशेषतः हे विश्वामित्रजी! आप इस वंश में एक प्रकृतिमहा यश वाले ब्रह्मस्वरूप हैं आपकी बहिन नदियों में श्रेष्ठ कौशिन्दीने भी अपने सतीधर्म के प्रभावसे पिताका कुल उज्वल करदिया है। विश्वामित्रजी ऋषियों के मुख से बड़ाई सुनते सुनते अस्त्रको प्राप्त सूर्य के समान विश्वामित्रजी को निद्रा का संचार हुआ, और लक्ष्मण सहित रामचन्द्र भी विस्मय पूर्वक ऋषिकी बड़ाई करते करते निद्रित होगये ॥

इति बाल्मीकिये आदिकाण्डे चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥

इसके उपरान्त महर्षि विश्वामित्रजी ऋषियों के सहित शोणनदी के किनारे रात्रि व्यतीत करके प्रातःकाल होने पर विश्वामित्रजी रामचन्द्रजी से बोले, हे रामचन्द्र ! प्रातः काल होगया है प्रातः संध्या करने का समय हुआ अब अपने पौर्वाह्निक कामों से निवृत्त होकर

चलने के लिये तैयार हो जाओ, रामचन्द्रजी ऋषिके वचन को सुनकर बिस्तरसे उठे और पूर्वाह्निक कार्य समाप्त करके विश्वामित्रजी के संग मार्ग पर चलने लगे, देशकाल निपुण रामचन्द्र मधुर वचन से बोले, हे मुनीश्वर ! यह शोणनद अगाध स्वच्छ जल सम्पन्न और वालुमय है, हे प्रभो ! कौनसे मार्ग से पार होकर चलना होगा, श्रीरामजी के प्रियवचन को सुनकर विश्वामित्र जी बोले, हेरामचन्द्र ! मुनिलोग जिस मार्ग से जातेहैं मैं वही मार्ग दिखाये देताहूं, इस प्रकार आनन्द पूर्वक राम लक्ष्मण के सहित ऋषिमण्डली चली और चलते चलते मध्यान्ह के समय मुनिजन सेवित पवित्र गंगाजी को देखा कि जान्हवीका जल अति निर्मल है उसमें हंस और सारस कलोल कर रहे हैं यह विचित्र शोभा भागीरथी की देख कर राम लक्ष्मण सहित मुनिजन प्रसन्न होगये, सब लोग विश्वामित्रजी के सहित गंगाजी के तीर अवस्थान पूर्वक यथाविधि स्नान और देवता पितरों का तर्पण किया तदनन्तर अग्निहोत्र का अनुष्ठान करके अमृत तुल्य खीर भोजन किये गंगाजी के किनारे मुदित मनसे न्यायानुसार यथायोग्य आसन पर महामुनि विश्वामित्रजी को घेर सब लोग बैठ गये, और विश्वामित्रजी से बोले, हे प्रभो ! भगवती गंगाजी की उत्पत्तिको कहिये जिसप्रकार गंगाजी तीनों लोकमें विख्यात हुई हैं और जिसप्रकार समुद्र का संगम हुआ है वह कथा हम लोगों के हितके लिये कहिये । महर्षि विश्वामित्र श्रीरामजी के प्रिय बचन को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक गंगाजी की उत्पत्ति कहने लगे हेरामचन्द्र ! अनेक प्रकार के धातुओं के स्थान पर्वत राज हिमालय पर्वतको मैना नाम स्त्री से दो कन्या उत्पन्न हुई, महासुन्दरी मैना सुमेरूकी कन्या और हिमालय की प्रियभार्या थी, ज्येष्ठ कन्याका नाम गंगा और दूसरीका नाम ऊमा था। एक समय देवताओं ने अपने कार्यसाधन के लिये तीनमार्ग में गमन करने वाली गंगाको हिमालय से मांगा, हिमालय देवताओं की याचना भंगन करके प्रसन्नता पूर्वक देवताओं के लिये गंगाजी को

देदिया, देवगण ! गंगाजीको मांगकर ब्रह्माजीके पास लेगये, ब्रह्माजी ने गंगाजीको देखकर कहा कि यह शिवजी का गर्भ नहीं धारण करसकेंगी, तब गंगाजी बोलीं, हेप्रभो ! मैं धारण करसकेगी इसबात पर ब्रह्माजी क्रोधित होकर गंगाजीको शापदिया, कि तू ने मेरे बचन की अवज्ञा की है इसलिये तू जलस्वरूप होजा, ब्रह्माजी के मुख से निकलतेही गंगाजी जल रूपहोकर ब्रह्मलोक में ऊपर के कड़ाहे में जलरूप होकर घूमनेलगी, उसी में अग्नि देवताने शिवजी का वीर्य त्यागन किया था, जब भगवान वामन अवतार लेकर पृथिवी को नापने लगे उससमय वामनजी का चरण उस कड़ाह को तोड़कर ऊपरको चला, तब वह गंगाजी का जल बामन के चरण से लगकर नीचेको गिरा उससे गंगाका नाम विष्णुपदी भी हुआ है गिरनेके समय वही जल ब्रह्माजीने अपने कमण्डल में धारण किया और उसी जलसे बामनजी के चरण को धोये फिर वही जल भागीरथ के प्रार्थना करनेपर भूतल में आया जो भागीरथी के नामसे प्रसिद्ध है हिमालय ने भी लोकपावनी स्वच्छन्द गमन करने वाली गंगा जी को तीनों लोकका हित करने के लिये देवताओं को धर्म पूर्वक समर्पण करदिया, और त्रिलोक का मगंल चाहने वाले देवगण तीनों लोकके उपकार के लिये गंगाजी को ग्रहण करके कृतार्थ हो स्वर्गको चलेगये । विश्वामित्र जी स्नेहवश रामचन्द्र जीको गंगाजीकी उत्पत्ति सुनाकर अब हिमालय की दूसरी कन्या ऊमाका चरित्र वर्णन करते हैं विश्वामित्रजी बोले हेरामचन्द्र ! हिमालय की दूसरी कन्या ऊमा कठिनव्रत धारण करके घोर तपस्या किया, हिमालय ने महातप करने वाली योग शालिनी सुलक्षणा कन्या को शान्त मूर्ति शिवजी को प्रदान किया हेराघव ! लोक ने पूजित हिमालय की दोनों कन्याओंका चरित्र वर्णन किया हेरामचन्द्र ! नदियों में श्रेष्ठ गंगाजी और ऊमा देवी की यह कथा है, जिसप्रकार यह त्रिपथगामिनी गंगा पहिले आकाश को गई है, चलने वालोंमें श्रेष्ठ यह गंगाकी

वृत्तान्त तुमको सुनाया, और जिस प्रकार पापको नाशकरने वाली जलोंको बहाने वाली स्वर्गको गई वह कथा सुनाई ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे पंचत्रिंशःसर्गः ॥ ३५ ॥

श्रीलक्ष्मण सहित रामचन्द्र मुनीजीकी बड़ाई करने लगे, और विनय पूर्वक उनसे बोले, हेपरन्तप ! आपने धर्मयुक्त उत्तम कथा सुनाई, अब यह प्रार्थना है कि शैलराज हिमालय कि ज्येष्ठ कन्या गंगाका वृत्तान्त विस्तार पूर्वक कहिये, हेभगवन् ! आपदेवता व मनुष्यों के चरित्र को विस्तार पूर्वक जानते हो । हेप्रभो ! कृपापूर्वक बताइये कि त्रिलोक को पवित्र करने वाली गंगा स्वर्ग, और मनुष्य लोक तथा पाताल लोक में क्यों गई, और इनका नाम त्रिपथ गामिनी क्यों हुआ, रामचन्द्रजी के विनयावनत मधुर वचन से प्रसन्न होकर धर्मका जानने वाले विश्वामित्र जी बोले, हे श्रीरामजी ! पहिले समय में महा तप करने वाले भगवान नीलकंठे हिमालय की दूसरी कन्या ऊमासे विवाह करके पार्वतीजी के साथ विहार करने लगे, उन देवदेव महादेव को विहार करते सौ वर्ष बीतगये, परन्तु उनको कोई सन्तान नहीं हुआ । तब सब देवगण ! इकट्ठे होकर ब्रह्मलोक में ब्रह्माजीके पासगये और चिन्ता पूर्वक देवता लोग ब्रह्मा जीसे कहने लगे, हे ब्रह्मदेव ! इतने दिन बीत गये परन्तु शिव पार्वती के संयोग से अभीतक कोई पुत्र नहीं हुआ तो अब उस तेज को कौन सहन कर सकेगा, देवगण ! ऐसी चर्चा आपस में करके कैलास पर शिवजी के पासगये, और उनकी बड़ाई करने लगे और बोले, हेसबदेवों के देव महादेव आपसब लोगों का हितकरने वाले हैं यह सब देवता आपके शरण आये है, अब आप प्रसन्न हूजिये, हेसुरोत्तम ! आपके तेजको तीनो लोकमें कोई धारण नहीं कर सकता है, इसलिये आप पार्वतीजी के सहित तपस्या कीजिये, आप जगत के कल्याण के लिये अपनातेज अपने शरीरमेहीं रखिये, और तीनों लोककी रक्षा कीजिये, जगत का नाश करना

उचितनहीं है देवताओं के वचन को सुनकर महादेवजी 'तथास्तु' कहकर देवगणसे बोले, हे अमरगण ! मैं ऊमासहित अपने तेजोमय शरीर में यहतेज धारण करूंगा जिससे जगत में शान्ति होवे, परन्तु अकस्मात् मेरादिव्य तेज जो अपने स्थान से चलायमान होगया है उसको कौन धारण करेगा, देवताओं ने वृषभध्वज शिवजीकी बात सुनकर बोले, हे शिवजी ! जो आपका तेज चलायमान होगया है उसको पृथिवी धारण करेगी, देवताओं के बचन को सुनकर शूल पाणिने अपने तेजको छोड़ दिया, क्षणभरमें वह तेज पर्वत और वन सहित पृथिवी को व्याप्तकरदिया, तब देवताओंने अग्नि देवता से कहा कि तुम हमारे कहने से वायुके सहित इस रौद्रतेजको धारण करो, तब अग्नि देवताने अत्यन्त तेजस्वी तेजको धारण किया, तब वह तेज श्वेत गिरि और सरपत के वनमें व्याप्त होगया, उसीसे महापराक्रमी और महातेजस्वी कार्तिकेयजी की उत्पत्ति हुई, तब देवता गंधर्व पक्ष किन्नर ऋषिश्वर मुनीश्वर आदि प्रसन्न होकर शिवपार्वतीकी पूजाकरने लगे । पार्वती जी अपने कार्य में देवताओं के विघ्नको देखकर लाल लाल नेत्र किये क्रोध पूर्वक देवताओं से बोली, हे देवगण ! मैं पुत्रकामना से स्वामीके सहित संगमें प्रवृत्त थीं सो तुम लोगों ने बाधा किया, इसलिये तुम लोगोंको शाप देती हूं कि आजसे तुम सब देवगण अपनी स्त्रियों में सन्तानोत्पत्ति नहीं करसकोगे, तुमलोगों की स्त्रियां सदाके लिये बन्ध्या रहैंगी सकल देवताओं को यह शापदेकर पीछे पृथिवी को शापदिया हे पृथिवी ! आज से तू अनेकरूपा और बहुतों की भार्या होगी, हे कुबुद्धिमें प्रवीण पृथिवी ! तैने मेरेको सन्तान होनेमें बाधादी है, इसलिये तू मेरे क्रोधसे ऊपर हो जायेगी पुत्रके सुखको न पावेगी, इस प्रकार देवताओं को और पृथिवी को शाप देकर पार्वतीजी शान्त होगई । इसके उपरान्त शिवजी देवताओं को पीड़ित देखकर पार्वतीजी समेत पश्चिम दिशा की ओर चले गये, महेश्वरजी वहां जाकर हिमालय के उत्तर भागमें

हिमवत्प्रभवनामक शिखर पर पार्वती सहित तपस्या करने लगे, इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्रजी बोले, हेरामचन्द्र ! मैंने तुमको शैलसुताकी यह विस्तार पूर्वक कथा सुनाई अब गंगाकी उत्पत्तिका वृतान्त विस्तार पूर्वक सुनो ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे षट्त्रिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥

हे रामचन्द्र ! शिवजी को तपस्या करनेके लिये चले जाने पर इन्द्रादि देवताओंके सहित अग्निदेवता सेनापति प्राप्त होनेके अभिलाषासे ब्रह्माजीके पास गये, हेरामचन्द्र ! संपूर्ण देवता अग्निको और इन्द्रको आगे करके भगवान प्रजापति के चरणों में प्रणाम करके कहने लगे, हेब्रह्मदेव ! आपने हमें जिस सेनापति को देने के लिये कहे थे, अबतक उनका जन्म नहीं हुआ, और इससमय सेनापतिके पिता (शिवजी) उमाकेसाथ तपस्या कररहे हैं । इसलिये लोककल्याण के लिये जो कर्तव्य हो आप उसका विधान कीजिये, क्योंकि आप विधान को जानने वाले हैं, और हमारी पहुच आपही तक है, देवताओंको धैर्य देकर मधुर वाक्यसे बोले, हेदेवगण ? शैलसुता पार्वतीजी ने जो तुम लोगोंको शाप दिया है वह मिथ्यानहीं होसकता तुमलोगों की स्त्रियां अवश्यही निःसन्तान होगी उमाका अमोघ और सत्य बचन मिथ्या नहीं होसकता, आकाश गंगाके गर्भमें हुताशन के तेज से दैत्यों को मारने वाले सेनापति की उत्पत्ति होगी । हिमालय पर्वतकी बड़ी कन्या गंगा उसपुत्रको अपनी छोटी बहिन उमाका पुत्र जानकर अपने पुत्रके समान पालन करेगी और उमाभी उसपुत्र को मानेगी, इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्रजी बोले, हेरामचन्द्र ! ब्रह्माजीके बचन को सुनकर देवता कृतार्थ होगये और ब्रह्माजी को प्रणाम कर देवगण उनकी स्तुति करने लगे, तब संपूर्ण देवताओं के संमुख गंगाजी ने अग्नि देवसे बोलीं, हे अग्नि देव ! मैं तुम्हारे दिव्य तेज को धारण कर सकती हूं, तुम्हारा तेज जो शिवजी के तेजसे मिला वही मेरे न सहनेका कारण हुआ और

इसी कारण मैं इस अग्निरूप तेज से व्याकुल और हतचेतन हुई हूं, यह बात सुनकर अग्नि देवता गंगाजी से बोले, कि तुम हिमालय के निकट इस गर्भको छोड़दो, अग्नि देवता के बचन को सुनकर गंगाजी ने दीप्तिमान तेजको छोड़दिया उसतेज को सोतेमें छोड़देने से तपाये हुए सोनेकी नाईं प्रभा निकलने लगी। इस तेजके प्रभावसे निकट और दूर के सबपदार्थ सोने और चांदीके होगये, उसतेज की तीक्ष्णता जहां जहां पहुंची वहांवहां तांबे व लोहेकी उत्पत्ति हुई, इसी प्रकार उसगर्भके मलसे रांगा और शीशा हुआ वहीसब पृथिवी पर नाना प्रकार के धातु तैयार होगये गर्भको छोड़तेही उसके तेजसे सबबन पर्वत सुवर्णमय होगया, हे रामजी! जातवस्तुके रूपसे उत्पन्न होनेसे सुवर्णका एकनाम जातरूप हुआ, हे पुरुषसिंह! इस प्रकार अग्नि के समान कान्तिवाले सोना उसीदिन से विख्यात हुआ शिवजी के तेजसे एक पुत्रकी उत्पत्ति हुई, मरुत् देवताओं ने इन्द्रके सहित मिलकर उस पुत्र को दूधपिलाने के लिये कृत्तिकाओं को भेजा, ये सब कृत्तिकायें तत्कालमें उत्पन्न कुमारको इस नियम से दूधपिलाने लगीं कि यह हमारा सबका पुत्रहो। देवताओं ने कहाकि कृत्तिका गण! तुम्हारा पुत्र कार्तिकेय के नामसे त्रिलोकमें विख्यात होगा इसमें कुछ संशय नहीं है, कृत्तिकाओं ने देवताओं के कहने के अनुसार शिवपार्वती तथा गंगाजी के उस दीप्तिमान कुमारको स्नान कराया, गंगाके गर्भसे निकलने के कारण संपूर्ण देवताओं ने इनका स्कन्दभी एकनाम रखा, यह कार्तिकेय महाबाहु अग्निके समान कान्ति वाले हुए, जब कृत्तिकाओं के स्तनों में दूधका प्रसव हुआ तब छः मुख धारण करके एक साथ छओ कृत्तिओंका दूध पीने लगे, कार्तिकेयजी ने सुकुमार तूलेश्वर होने पर भी अपने पराक्रम के प्रभाव से दैत्यों की सेना का संहार कियाथा, इसके उपरान्त देवगण अग्नि देवताको अगुआ बनाकर महा पराक्रमी स्वामि कार्तिकको इन्द्रका सेनापति बनाया इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्रजी बोले,

हे रामचन्द्र! मैने तुमको गंगा का विस्तार पूर्वक वृत्तान्त और कार्तिकेय के जन्मकी पवित्र कथा सुनाई, यह कथा पुण्य स्वरूप और धन्य है, हेरामजी! जो मनुष्य कार्तिकेय की पूजा व ध्यान कार्तिक मास में करेंगे, और इस कथा को भक्ति पूर्वक कहेंगे, और सुनेंगे वह अपने परिवार समेत स्कन्द लोकको प्राप्त होंगे।

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे सप्तत्रिंशःसर्गः ॥ ३७ ॥

इतनी कथा सुनाकर महर्षि विश्वामित्र जी मधुर वचन रामचन्द्रजी से कहने लगे हेरामजी! पहिले समय में अयोध्यापुरीके सागर नाम राजा हुये, वह महा पराक्रमी सत्यवादी जितेन्द्रिय और धर्मात्मा थे, वह राजनीति और प्रजापालन में अति चतुर थे, परन्तु राजा को कोई पुत्र नहीं था, राजाको दो स्त्रियां थीं, राजाके बड़ी रानी का नाम केशिनी और दूसरी स्त्री का नाम सुमति था, केशिनी विदर्भ-राजकी कन्या बड़ी सत्यवादिनी और धर्मात्मा थीं, और सुमति अरिष्ट नेमिकी कन्या और सुवर्ण की बहिन थीं, एक दिन राजासगर अपने दोनों स्त्रियों के साथ हिमालय के नीचे एक पर्वत पर तपस्या करने लगे, जहां भृगुमुनि तपस्या करते थे, राजा सगर को भृगुमुनि की आराधना करते करते सौ वर्षवीतगये, तब सत्यवान भृगुमुनि उनके तपस्या से प्रसन्न होकर उन्हें वरदान दिया, हे राजन्! तुम्हारे समान् धर्मात्मा व प्रतापी तुम्हें एक पुत्र उत्पन्न होगा। हेपुरुष श्रेष्ठ! उस पुत्रसे लोक में तुम अनुपम कीर्ति पाओगे, हे पुरुष पुङ्गव! तुम्हारी एक स्त्रीसे बंशचलाने वाला एक पुत्रहोगा, और दूसरी स्त्रीसे साठ हजार सन्तान उत्पन्न होंगे, हेनरोत्तम! भृगुजी के वरदान से दोनों स्त्रियां उन ऋषिवर को प्रसन्नकर प्रीतिपूर्ण मनसे हाथ जोड़कर बोली, हे ब्रह्मदेव! आपका कहना सत्यहो परन्तु हम आपसे यह सुनाना चाहती हैं कि किसके गर्भसे एक पुत्र और किसके गर्भ से साठ हजार पुत्र उत्पन्न होंगे। रानियों के ऐसे बचन को सुनकर धर्मपरायण भृगुजी परम श्रेष्ठ बाणी कहने लगे कि, तुमदोनो

में जोजैसा पुत्रचाहो वह स्वच्छन्द होकर मांगलो, एकपुत्र बंशको बढ़ाने वाला होगा और दूसरे साठहजार पुत्र महारण धीर कीर्तिमान् परमोत्साही होंगे सोतुम दोनो इनमें से कौन कौन सा पुत्र चाहती हो। हेरामचन्द्र! मुनिजी के बचन को सुनकर केशिनी ने राजा के सन्मुख बंशवर्धक पुत्रकी कामना की और सुमतिने परमोत्साही कीर्तिमान् वलवान साठ हजार पुत्रों की प्रार्थना की। हेरामचन्द्रजी! महाराज सगर मुनिवर के चरणों में प्रणाम और प्रदक्षिणा करके रानियों सहित अपने नगरको चलेगये, कुछ काल बीतने पर रानी केशिनीने एक पुत्र उत्पन्न किया जिसका असमंजस नाम था, और सुमति के गर्भसे एक तुंबी उत्पन्न हुई जिसको भेदकर साठहजार पुत्र उत्पन्न हुए, उधात्री (दाई) उन्हें घीसे पूर्ण घड़ेमे रखकर सेवाकरने लगी, कुछकाल के बाद साठहजार पुत्र युवाहोगये, और केशिनी के पुत्र असमंजस पापात्मा और दुराचारी हुआ, वह खेलने के लिये नगर के बालकों को पकड़ पकड़कर सरयू नदी में डुबादेता किसीको मुकोंसे मारडालता इसप्रकार पापाचरण परायण असमंजस सज्जनों से द्रोहकरने लगा। राजकुमार के द्रोह करने से प्रजापीडित होकर राजा से अपना दुःखकहने लगे राजासगर अपने पुत्रका दुराचार देखकर असमंजस को नगर के बाहर निकालदिया असमंजस को सर्वलोक प्रिय महापराक्रमी तेजस्वी अशुमान हुए, कुछकाल बीतनेके बाद राजासगर ने यह विचार किया कि हम अश्वमेध यज्ञकरें, इस प्रकार से कल्प करके ऋत्विग् और अपने पुरोहित को बुलाकर यज्ञको आरंभ किया।

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे अष्टत्रिंशःसर्गः ॥ ३८ ॥

इतनी कथा सुनकर श्रीरामचन्द्रजी अग्नि के समान प्रदीप्त महर्षि विश्वामित्रजी से प्रीतिपूर्वक बोले, हेप्रभो! किसप्रकार हमारे पूर्व पुरुष महाराज सगर ने यज्ञ कियाथा! भगवन्! वह वृत्तान्त विस्तार पूर्वक मुझसे कहिये श्रीरामचन्द्र जीके प्रिय बचन को सुनकर विश्वा-

मित्र जी हंसकर बोले हे राघवेन्द्र धर्मात्मा सगरका वृत्तान्त विस्तार पूर्वक कहता हूं सुनो, शंकरजी के श्वसुर हिमवान नामके पर्वत विख्यात हैं, हिमालय के औद्धत्य को विन्ध्याचल नामके पर्वत आपस में निहारते हैं, हे पुरुषोत्तम! इन दोनों पवतों के बीचमें महाराज सगर का यज्ञ हुआ था, हे नरसिंहा वही देश यज्ञके लिये श्रेष्ठ मानागया है हेरामचन्द्र! उस यज्ञियाश्व रक्षा करने के लिये दृढधनुष को धारण करने वाले अंशुमान राजासगर की आज्ञासे नियुक्त हुए, इसके बाद राजाके पर्वके दिन राक्षसी मूर्ति धारण करके यज्ञिय अश्वको हरलेगये, घोड़ाको चुराजाने पर राजा के ऋत्विक और पुरोहितो ने राजा से कहने लगे, हेराजन्! पर्वकेदिन घोड़ा चोरी होगया अब निर्विघ्न यज्ञको समाप्त करनेकी उपाय कीजावे, ब्राह्माणों के बचन को सुनकर राजासगरनें अपने साठहजार पुत्रोंसे यह कहाकि इस समय मैं यज्ञमें दीक्षित होरहा हूं सो इस यज्ञमें राक्षसों के द्वारा विघ्न होनेसे मेरा कार्य समाप्त नहीं होगा मैंमन्त्र ग्रहण पूर्वक पवित्र हव्यभाग देवताओं को देरहा हूं इस वास्ते तुम लोग यज्ञके घोड़ेकी खोजकरो, तुम सब समुद्र पर्यन्त क्रमसे एकएक योजन करके खोज करो, जबतक घोड़ान मिले अथवा उसका चुराने वाला नमिले तब तक खोजते रहना,मैं यज्ञस्थल में ऋत्विज् और उपाध्यायों तथा अपने पौत्र को साथ बैठकर अश्व की प्रतीक्षा करता यहां रहूंगा, पिता के वचन को सुनकर महाबली साठ हजार पुत्रों ने प्रसन्नता पूर्वक अश्व को खोजने के लिये सब पृथिवी पर घूमने लगे,वज्र के समान कठोर शरीर वाले राज पुत्र अपने हाथों से एक योजन लम्बी व चौड़ी पृथिवी को खोदने लगे,उस समय बज्र के समान त्रिशूल और तीखे हल से खोदी जाकर पृथिवी चिल्लाने लगी,और क्रम से हाथी घोड़े सर्प निशाचर आदि पक्षियों के कारुण्य स्वर से दिशामंडल पूरित हो गया,इस प्रकार सगर के पुत्रों ने साठहजार योजन पृथिवी खोदकर पाताल में जा पहुंचे,इस प्रकार अनेकानेक पर्वतों से युक्त समस्त

जम्बूद्वीप को उन राजकुमारों ने खोद डाला और चारो ओर दौड़ने लगे,सगर के पुत्रों का चरित्र देखकर देवता गंधर्व असुर पन्नग आदि सब चकित होकर ब्रह्माजी के पास गये, उनको दण्डवत् प्रणाम करके ब्रह्माजी की स्तुति करने लगे ब्रह्माजी को अपने ऊपर प्रसन्न देखकर अपनी कष्ट कहानी ब्रह्माजी से कहने लगे । हे ब्रह्मन ? दुराचारी सगर के पुत्रों ने समस्त पृथिवीमण्डल को खोद डालते हैं,उन के उपद्रव नानाप्रकार के जीवजन्तु दुःख पाते हैं,हे भगवन् ? इनके हाथ से जगत कीरक्षा करनी चाहिये,जिस किसी साधु महात्मा को देखते है उसे अपने यज्ञ का द्वेषी समझ कर मार डालते हैं ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे एकोन चत्वारिंशसर्गः ॥ ३९ ॥

भगवान कमलयोनि देवताओं की बात सुनकर सगर के सन्तानों से भयभीत देवगण से बोले, हे देवगण ! जिन भगवान वासुदेवकी पृथ्वी स्त्री है और माधव इसके स्वामी हैं वही भगवान नारायण कपिलमूर्ति धारण कर के निरन्तर पृथिवी को धारण करते हैं उन्हीं के क्रोधाग्नि से यह दुष्ट राजपुत्र भस्म हो जायगे,पूर्वकाल से पृथिवी का खोदनाही निश्चय किया गया है,अर्थात् यह ऐसाही होना था कि अदूरदर्शी सगर के सन्तानों के मरने का कारण होगा,ब्रह्माजी के बचन को सुनकर अष्टवसु एकादश रुद्र द्वादश आदित्य दो अश्विनी कुमार शत्रुओं को नाश करने वाले येते तीस देवता अपने अपने स्थान को चले गये,इधर सगर के सन्तानों को पृथिवी खोदने का कोला हल उठा था,यहां तक की समस्त पृथिवी मण्डल को खोदकर तभी उन लोगों ने विश्राम किया,परन्तु पृथिवी खोदने पर भी घोड़ों का पता नहीं लगा,तब अपने उद्योग से हार मान कर मन मारे अपने पिता राजा सगर के पास आये और सकल वृत्तान्त को कह सुनाया कि हम सब सकल पृथिवी मंडल की प्रदक्षिणा किया कितने देव दानव राक्षस यक्ष पन्न आदि को प्राण से मार और कितने प्राणियों को अनेक प्रकार का दुःख दिये परन्तु कहीं भी अश्व का अथवा

अश्व को हरने वाले का पता नहीं पाया । हे पिता जी ? अब हम लोगों को जो कुछ आज्ञा हो सो करूं । पुत्रों के ऐसे वचन को सुनकर राजा सगर क्रोध पूर्वक बोले,तुम लोग हमारी आज्ञा से ६०००० सगर पुत्र पाताल को चले जाओ वे सगर के पुत्र पृथिवी को खोदते खोदते पाताल को चले,नीचे पर्वत के समान विरुपाक्ष नामक एक दिग्गज को देखा,उसी प्रकार के आठ दिग्गज पृथिवी के चारो कोन पर खडे हो करअपने सूड़ पर पृथिवी को उठाया है,यह विरुपाक्ष नामक महागज कानन और पर्वतों के सहित उस दिशा की पृथिवी को अपने सूड़पर धारण किये है,जिस समय कभी यह हाथी मारे बोझा के थककर विश्राम के लिये शिर इधर उधर हिलाता है तभी भूकम्प होता है सगर के पुत्र इस दिशा की रक्षा करने वाले महाराज की प्रदक्षिणा करके आदर पूर्वक प्रणाम करके रसातल को खोदने लगे पूर्व दिशा खोदकर दक्षिण दिशा खोदने लगे,दक्षिण दिशा से भी उन्हों ने एक वैसाही विशाल हाथी को देखे,इस हाथी का नाम महापद्म है आकार में पर्वत के समान थीं,वह भी अपने सूड़पर पृथिवी को धारण किये है,इस महागज को देखकर सगर पुत्र विस्मित हो गये,वे महात्मा सगर पुत्र इस गज की भी प्रदक्षिणा करके यह साठ हजार बलवान पश्चिम दिसा खोदने लगे,खोदते खोदते उन महाबलियों ने पश्चिम दिशा में भी पर्वता कार सौमन सनाम महागज को देखा,सगर के पुत्रों ने उस गज की भी प्रदक्षिणा करके यह साठ हजार सगर सुत उसकी प्रदक्षिणा करके पृथिवी खोदते खोदते उत्तर दिशा को चले गये,वहां भी महाभद्रनामक एक महा हस्ती कोपृथिवी उगते देखा,उस महागज से मिल जुल कर उसकी भी परिक्रमा देकर फिर भी सगर सुत पृथिवी को खोदने लगे इसी क्रम से उन लोगों ने सब दिशाओं की भूमि खोदकर फिर क्रोध पूर्वक उत्तर पश्चिम दिशा में जाकर पृथिवी खोदनी प्रारम्भ की खोदते खोदते वहां जाकर तपोमूर्ति सनातन वासुदेव कपिल देव जी को देखा, और उन भगवान् के स्थान से थोड़ी ही दूर घोड़े को

चरता देखकर राजपुत्र परमानन्दित हो गये, राज पुत्र कपिल देव जी को ही यज्ञ का विघ्नकारी जानकर क्रोध पूर्वक लाल आखें किये और नाना प्रकारके अस्त्र को धारण किये,खड़ा हो खड़ा होकहते हुए क्रोध से दौड़े कहने लगे कि हमारे यज्ञ का घोड़ा तैनेही चुराया है,रे चोर ? अबतू जान ले कि,सगर पुत्र आगये,उनके इस प्रकार वचन को सुनकर कपिल भगवान क्रोधित होकर हुंकार किया,उन महात्मा कपिल देव जी के हुंकार सेही अप्रमे बल शाली सगर संतान जल कर राख हो गये ॥

बाल्मीकिये आदि काण्डे चत्वरिंशः सर्गः ॥ ४० ॥

इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्रजी बोले हेरामचन्द्र ! राजासगर अपने पुत्रों को बहुत दिन से गये हुये का पता न पाकर अपने पौत्र अंशुमान से बोले, हे वत्स ! तुमवीर हो और अनेक प्रकार की विद्या में कुशलहो, और अपने पितृव्यों के समान तेजशाली हो, हे पुत्र अब अपने पितृव्यों को ढूढों पृथिवी के भीतर जो सब महाबलीजीव है उनको संहार करने के लिये धनुषवार और खड़ग तलवार आदि अस्त्रों को ग्रहण करो और जो कोई साधु महात्मा हों उन्हें दण्डवत् प्रणाम कर के सम्मान सत्कार करना और बिघ्न कारियों का नाश करके यज्ञकी सहायता करो, अब एक तुमहीं प्रधान सहायकहो इस प्रकार महात्मा सगरके कहने पर अंशुमान धनुष और खड़ग धारण करके चले हे रामचन्द्र ! अंशुमान मार्ग में जाते जाते पृथिवी के भीतर अपने पितृव्यों का खोदा हुआ एकमार्ग देखकर उसमें प्रवेशकिये, इसी मार्ग में जाते जाते देखाकि बीच बीच में एक दिग्गज खड़े हैं और देव दानव राक्षस पिशाच उरग आदि उनकी पूजा कर रहे है, अंशुमान उनकी प्रदक्षिणा करके उनसे कुशल प्रश्न पूछकर पितृव्यों के सहित यज्ञीप अश्वके हरने वाले कावृत्तान्त पूछा, अंशुमानकी प्रेमभरी बातों को सुनकर महागज बोले, हेराजकुमार!

तुम कार्यको सिद्ध कर अश्वसहित शीघ्रही लोटोगे दिगजका यह वचन सुनकर अंशुमान क्रमसे न्यायपूर्वक यही बात सकल दिग्गजों से पूछी, और सभोंने यही उत्तर दिया कि अश्वको लेकर शीघ्रही लौटोगे, परम चतुर वाक्य जानने वालों में पण्डित दिक्पालों के इस उत्तरको सुनकर अंशुमान तीव्रगति से आगे चले, कुछ देर में कपिल देव मुनिके आश्रममें पहुंचे जहां उनके पितृव्य और राजासगरके पुत्र भस्म होगये थे। वहां पहुंच कर अंशुमान महात्मा कपिल देवजी को प्रणाम करके अपने पितृव्यों का मरण संवाद सुनकर बहुत दुःखी हुए और कुछ देर तक उनके लिये बड़ी करुणा से विलाप करके शोक किये, फिर शोकसे अभिभूत होकर आख उठाकर देखेकि इस स्थान के निकट यज्ञीय अश्व विचरण कर रहा है, तब वह पुरुषों को जलदान देने के लिये कृत संकल्प हुए किन्तु तेजस्वी अंशुमान कहीं जलाशय नहीं देखे, तब अंशुमान ने दृष्टिको पसार कर चारो ओर देखने लगे, इतने में अग्नि समान प्रदीप्तमान पक्षियों के राजागरुड़ जी को वहांसे बैठे देखा। महाबली विनतानन्द गरुणजी राजकुमार को दुःखी देखकर बोले हे राजपुत्र ! शोक मतकरो, इन तुम्हारे पितृव्यों की मृत्यु लोक की संमति से हुई है, महाबल शाली तुमारे पितृव्य महात्मा कपिलदेवजी के क्रोध से भस्महुए हैं, अतएव उनकी परमगति के लिये लौकिक जलमें तर्पण करना ठीक नहीं होगा त्रिलोक पावन गंगाजी भस्म हुए तुम्हारे पितृव्यों के कलेवर को अपने पवित्र जल से बहावैंगी, उन गंगाजी के जलके प्रभावसे ६०००० साठ हजार पुत्र स्वर्गको जायंगे। हे महाभाग ! अब यज्ञीय अश्वको लेकर घरको लौट जाओ, और ऐसा उपाय करो जिससे तुम्हारे पितामह का यज्ञ पूर्ण होजाये। गरुड़जी से ऐसा सुनकर राजकुमार अंशुमान शीघ्रता से अश्वसहित अपने घर आपहुंचे। और महाराज सगरसे यह वृत्तान्त और गरुड़की सब वार्ता कही। महाराज सगरने अंशुमान से दारुण संवाद सुन नगरमें आकर गंगाजी के आनेकी उपाय सोचने लगे

परन्तु कोई निश्चय न करसके अन्त में राजा बहुत चिन्तापूर्वक तीस हजार वर्ष राज्य करके स्वर्ग को सिधारे ।

वाल्मीकिये आदिकाण्डे एकत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥

इतनी कथा सुनकर विश्वामित्र जी बोले, हेरामचन्द्र ! कालके अनुसार महाराज सगर के स्वर्ग जाने पर प्रजाने धार्मिक अंशुमान को गजसिंहासन पर बैठा या, हेरामचन्द्र ! राजा अंशुमान नीतिपूर्वक राज्य किया, इनके पुत्र महाप्रतापी दिलीप हुए, अंशुमान पुत्रको राज्यभार सौंपकर अपने रमणीय हिमालय पहाड़ के शिखर पर दारुण तप करने लगे, बत्तीस हजार बर्षतक घोर तप करके महायशस्वी तेजस्वी अंशुमान स्वर्ग को गये, महापरक्रमी महाराज दिलीप भी अपने पुरुषों के विनाश का समाचार सुनकर दुःखसे पीड़ित रहे परन्तु गंगाजी के ले आनेका कोई उपाय न सोचसके, किस प्रकार गंगा जी को लावें और अपने पुरुषों की जल क्रिया करें और किस प्रकार उनका उद्धार हो यही चिन्ता दिन रात महाराज दिलीप करते रहे, धर्मात्मा दिलीप के भगीरथनाम एक पुत्र उत्पन्न हुए, भगीरथ परमधार्मिक और तेजस्वी हुए । महाराज दिलीप न्याय पूर्वक तेंतीस हजार बर्ष तक राज्यकरके भगीरथको राज सिंहासन पर बैठाकर रोगी होकर मृत्यु कों प्राप्त हुए, उनके पीछे महाराज भगीरथ बड़े धार्मिक राजर्षि हुए, इनको कोई पुत्र नहीं हुआ परन्तु चाहते थे कि मुझे कोई सन्तान होजावे तो राज्यका भार उसे सौंप कर गंगाजी के लाने का उपायकरें, हेरामजी ! जब भगीरथ को कोई सन्तान नहीं हुआ तब मन्त्रियों को राजभार सौंपकर गोकर्ण नामक तीर्थ में जाकर गंगाजी को आने के लिये घोर तपस्या करने लगे, अपने इन्द्रियों को वशमें रखकर महीना में एक दिन कुछ फल फूल खाकर अथवा जल पीकर रहजाते थे, कभी पंचाग्नि तापते कभी ऊर्ध्वबाहु रहते इस प्रकार हजारों बर्षतक तपस्या किया, भगीरथ की कठोरतपस्या से ब्रह्माजी प्रसन्न होकर देवताओं के समेत भगीरथ के पास आये, और उनसे बोले, हेराजर्षि ! मैं तुम्हारी तपस्या से प्रसन्न

हुए, अब तुम वरदान मांगो, तब वह महाबाहु भगीरथ हाथजोड़ कर खड़े होगये, और ब्रह्माजी से बोले, हे भगवन् ! यदि आप मेरे तपस्या से प्रसन्न हैं, यदि मेरी तपस्या का कुछ फल होवेतो महाराज सगर के पुत्र मुझसे गंगाजी का जल पावें, क्योंकि तब हमारे उनके पुरुषों जली हुई राखको गंगाजी अपने पवित्र जलसे बहावेंगी तभी वे स्वर्ग को जायेंगे इससे अति रिक्त और कोई दूसरी उपाय नहीं, और ब्रह्मदेव ! मैं पुत्र हूं इसलिये आप मुझे पुत्रदीजिये । राजाके वचनको सुनकर संसारके पितामह ब्रह्माजी मधुर वाणी से बोले, हे महारथी भगीरथ ! बड़ा भारी मनोरथ यह आपका पूर्ण होगा हिमालय की ज्येष्ठ पुत्री गंगाजी के वेगको रोकने के लिये शिवजी की आराधान करो, हेराजन् । गंगाजी के गिरने के वेगको पृथिवी नही सह सकैगी, शिवजी के सिवा गंगाजी के वेग को और कोई नहीं सम्हाल सकेगा, सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी भगीरथसे ऐसा कहकर गंगाजी से भी कहे यथा काल आजानेपर राजाभागीरथ के ऊपर अनुग्रह करना, गंगाजी से यहकहकर इन्द्रादि देवताओं के सहित ब्रह्मलोक को चलेगये ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे द्विचत्वारिंशःसर्गः ॥ ४२ ॥

इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्रजी बोले हे रामचन्द्र ! ऐसा कहकर ब्रह्माजी के जानेके बाद भगीरथ पैर के एक अंगुठेसे खड़े होकर एक वर्षतक शिवजी का तपकरते रहे, वर्षबीत जाने पर जगद् गुरु शिवजी भगीरथ के पास आकर बोले, हेराजपुत्र ! मैं तुमसे प्रसन्न हूं, मैं तुम्हारे कार्यके लिये शैलपुत्री गंगाको अपने शिरपर धारण करूंगा, उस समय हिमालय नन्दिनी गंगाजी अत्यन्त शोभाय मानरूप धारण करके एक अपने प्रबल वेगसे आकाश के द्वारा कल्याण रुपी शिवजी के मस्तक पर गिरीं, आकाशसे गिरनेके समय वेगवती गंगाजी बिचार करने लगीं, कि मैं अपने प्रबल प्रवाह से शिव समेत पाताल में पैठे जाऊंगी, शिवजी गंगाजी केमनकी बात जानकर अपने मनमें क्षुभित हरु, और गंगाजीके घमंड को जानकर चाहाकि

गंगाजी मेरी जटामें भूल जावें। गंगाजी परमपावन शिवजी महाराज के शिरपर गिरीं और गंगाजी ने बहुत चाहा कि, इनकी जटासे निकल कर पाताल को चली जाँय, परन्तु हिमालय के समान कठोर जटाओं में इस प्रकार घूमने लगीं कि जैसे वायु चक्र के समान घूमता है, किसी यत्नसे जटाके बाहर निकल न सकीं, शिवजी की जटा-मंडलमें इसी प्रकार गंगाजी कई वर्षों तक घूमती रहीं, भगीरथ गंगाजीकी यह दशा देखकर फिरभी शिवजी का तपकरना आरंभ किया, हेरामचन्द्र ! भगीरथ ने अपनी घोर तपस्यासे फिरभी शिवजी को प्रसन्न किया, शिवजी प्रसन्न होकर अपनी जटाजाल से निकाल कर विन्दुसरोवर की ओर छोड़दिया, शिवजी के छोड़ते समय गंगाकी सात धारा होगई, दाहिनी पावनी व नलिनी यह तीन गंगाजी की सुन्दरजल धारा पूर्वदिशा को बही, और सुचक्षु सीता व सिन्धु यह तीन धारा पश्चिम को गई, एक सातवीं धारा महाराज भगीरथ के पीछे पीछे चली, राजर्षि भगीरथ भी दिव्यरथ पर चढ़कर जाने लगे, और गंगाजी उनके पीछे चलने लगी, गंगाजी पहिले शिवजी की जटामें और वहांसे पृथिवी पर उतरीं इसीसे उनका नाम त्रिपथगामिनी हुआ है, गंगाजी के चलने के समय महा कोलाहलमचा, और उस फैलते हुए जलकी राशि में मछलियां कछुवे सुईस मगर आदि जल जन्तुओं के भयंकर कोलाहल और कलोल से पृथिवी शोभायमान होगई, किसी किसी स्थानमें भयंकर लहरों से चलने लगीं कहीं कहीं अभंगके समान दिखाई देने लगीं, कहीं नृत्य करती हुईसी दीख पड़ने लगीं कहीं उनके फेनपुञ्ज कर्णभूषण के समान शोभाको धारण करने लगे कहीं कहीं जलके तरंगों की भँवरे नाभीके समान मालूम होने लगे, कहीं कहीं बेगसे पूर्ण महास्रोत बहने लगे कहीं कहीं जलकी लहरोंसे कल कल शब्द सुनाई देनेलगे, इसप्रकार शैलनन्दिनी मन्दाकिनी अपने हाव भावको दर्शाती हुई भगीरथ के पीछे २ चलीं, गंगाजी के अवतरण कालमें आकाश मार्गसे देवतागंधर्व सिद्ध

चारण किन्नर पन्नग उरग आदि गंगाजी के आने का समाचार सुन देखने को आये, गंगाजीके चंचल तरंगों की शोभा को देखकर प्रसन्न होने लगे, देवगण के साथमें आई उनकी पत्नियोंके भुजबन्द की चमकसे आकाशमंडल इसप्रकार शोभित होगया मानों नवीन हजारों सूर्य निकल रहे हैं, और मत्स्य आदि जल जन्तुओं की चंचलता से उछलने की शोभा बिजली के समान होने लगी पीतवर्णका फेन हजारों भाग होकर इधर उधर फैल गया, उस फेन पंक्ति से हंस पंक्ति की शोभा से युद्ध शरद्काल के बद्दलोंसे आकाश मण्डल आच्छादित होरहा है, गंगाजी का जल कहीं वेगसे कहीं टेढ़ेपनसे कहीं विरसे कहीं नीचीपनसे कहीं ऊंची भावसे गंगांजी का जल ताड़ित हो उछलने लगा ऊंची नीची जमीन से गिरता हुआ समस्त पापों का नाश करने वाला गंगाजीका निर्मल जल शोभा को प्राप्त हुआ, ऋषिमुनी देवतागंधर्व और भूतल में निवास करने वाले प्राणी गंगाजी के पवित्र जलसे स्पर्श व स्नानादि करने लगे इस पवित्र जलको स्पर्श करते भरमें पापसे रहित होकर पवित्र होगये, और आकाश मार्ग से स्वर्ग लोकमें देवगण अपने अपने स्थान चले गये।"

शोर कियो यमपुरमें जाय यमदूत मिलि, ऐरेयमराज कछु जानेतैं उपाइ हैं।
द्विज बलदेव अब आवत हैं आइगये पापी असरापी नीर गंगाते नहाइ हैं॥
तिनहित देवनकी अंगना विमान युत ठाढी ढारी चोर निजलोकहिं लैजाइहै।
शंभु हित लाइहै बिमल गुण गाईं हैं औ मुक्ति पद पाइहैं नतेरे धाम आइहैं।

स्नानादि करके राजर्षि भगीरथ निष्पाप हो दिव्य रथपर चढकर आगे आगे चलने लगे, गंगाजी उनके पीछे चलने लगी, हेरामचन्द्र! देवता ऋषि मुनि गंधर्व किन्नर यक्ष नाग सर्प दैत्य दानव राक्षस अप्सरायें इस महा कुतूहल से आक्रान्त होकर भगीरथ का अनुसरण किये, त्रिलोक पावनी गंगाजी अपने हाव भावसे संपन्न मार्गको आक्रमण करती हुई जन्हुमुनी के यज्ञक्षेत्रमें वेगसहित पहुंची इनके आनेसे ऋषिका यज्ञ स्थान बहगया, गंगाजी के गर्वको जानकर जन्हुमुनि क्रोधपूर्वक गंगाजी का सब अद्भुत जल पीगये, इसको देखकर देवता ऋषि

गंधर्व गण विस्मित होगये, भगीरथ राजर्षि ! तथा देवगण पूजा और स्तुति करके बोले, कि हे महर्षि ! आजसे सरिद्वर गंगाजी आपकी पुत्री हुई, तेजस्वी महात्मा जन्हुने अपने कानों के राहसे जलको निकाल दिया तबसे गंगाजी का नाम जान्हवी हुआ, इसके उपरान्त गंगाजी पुनःभगीरथ के अनुगत होकर चलीं चलते चलते यह श्रेष्ठ नदी समुद्र में मिलीं, समुद्रसे राजा भगीरथ का कार्य सिद्ध करने के लिये रसातल को चलीं, राजर्षि भगीरथ अपने पूर्व पुरुषों का उद्धार करने के लिये अतियत्नसे गंगाजी को कपिलदेव मुनिके आश्रममें लेगये, वहां जाकर अपने पुरुषों के भस्मराशि को देखकर भगीरथ अचेत होगये, हेरामजी ! तब श्रीगंगाजी का पवित्रजल उस भस्मराशि पर पड़ते ही सगर के साठ हजार पुत्र भगीरथजी को आशीर्वाद देते देवलोक को चलेगये ॥

इति वाल्मीकिये आदि काण्डे त्रिचत्वारिंशः सर्ग ! ॥ ४३ ॥

इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्रजी बोले हेरामचन्द्र ! अब सगर के पुत्रों का उद्धार विस्तार पूर्वक कहते हैं सुनो, हेरामजी ! महाराज भगीरथ समुद्र को किनारे जहाँ उनके पुरुषों की राखपड़ी थी पहुंचे और उनके पीछे गंगाजी पहुंची हेरामचन्द्र ! जब गंगाजी का जल उस भस्मराशि पर पड़ा तब लोकके पितामह ब्रह्माजी आकर भगीरथ से बोले, हेराजन् ! तुमसे तुम्हारे पूर्वजों का उद्धार हो गया, अब वह सब देवताओं के समान स्वर्ग को चले गये, सगरके साठ हजार पुत्र तरगये, हेराजर्षि ! जबतक गंगाजी का जल समुद्र में गिरेगा तब तकऔर तुम्हारा नाम संसार में चिरकाल तक प्रसिद्ध रहेगा, और तुम्हारे नाम से गंगाजी का नाम भागीरथी होगा, इनका दूसरा नाम त्रिपथगा दिव्या भागीरथी होगा जिससे स्वर्ग मृत्यु पाताल तीनों लोकों के मार्ग में हो गंगाजी बहीं। इसी कारण उनका नाम त्रिपथगा हुआ, हे राजन् ! अबतुम अपने पूर्व पुरुषों को तर्पण यहीं करो और अपने को प्रतिज्ञाओं से छुड़ाओ। तुम्हारे पुरुषों में धार्मिक

राजासगर अपनी कामनाको पूरान रसके, उसके बाद अमित तेजशाली अंशुमान गंगाजी को लानेकी प्रतिज्ञा करके कृतकार्य नहीं हुए, राजर्षि धर्मपालक महाभाग ! तुमारे पिता दिलीप गंगाजी की प्रार्थना करते हुए, सफल कार्य न हुए । हे पुरुष श्रेठ तुमने उस प्रतिज्ञा को पूर्ण करके निष्कलंक यश प्राप्त किया है हे भगीरथ ! इसगंगा अवतरण से तुमको महान धर्म की प्राप्ति हुई है, पुण्यकाल में अथवा पवित्र कालमें गंगास्नान करने में कोई हानि नहीं, नदियों का जल केवल श्रावण और भादोंके महीनामें दूषित होता है इसलिये हेराज पुत्र ! तुम इसमें स्नान करके पवित्रहो दिव्य फल को प्राप्त करो और अपने पिता पितामह के लिये तर्पण करो, इस प्रकार ब्रह्माजी भगीरथ की बड़ाई और प्रशंसा तथा उपदेश देकर ब्रह्मलोक को चले गये, महाराज भगीरथ अपने पूर्व पुरुषोंकी जल क्रिया यथाविधि किये, वह राजर्षि जलक्रिया संपन्न करके पवित्र हो राजा अपनी राजधानी में आये और परमआनन्द से राज्य करने लगे ।

गंगा को चरित्र लखि कहत यमराजयों एरेचित्रगुप्त मेरे हुकुम में कानदे
कहै पट्टमाकर नरकन को मूंदराख बंदकर दरवाजे तज यह स्थान दे ॥
देख यह देवन की महिमा सब देवतान दूतन को बुलाय के विदा वेगपान दे ।
फारडार फरधैं नराख रोजनामचा न खाते खतियाय त्यों बहीको बहजान दे ॥

राजर्षि भगीरथके दर्शन से सकल नगरवासी सन्तुष्ट होकर सुख पूर्वक आनन्द करने लगे, इतनी कथा सुनकर विश्वामित्र जी बोले, हे रामचन्द्रजी ! गंगाजी का वृत्तान्त विस्तार से कहते कहते संध्याकाल होगया, हेरामजी ! ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य आदि जो इस गंगाअवतरण की शुभ कथा को कहैगे व सुनैंगे वह यश आपुष्य पुत्र और स्वर्गको प्राप्त करैगे और लोकमें धन्य धन्य होंगे, हे रामजी जो इस कथाको नित्य कहैंगे व सुनैंगे उनके पित्र लोग स्वर्गमें वास करैंगे, जो मनुष्य ब्राह्मणके मुख से इस कथाको यथाविधि सुनैंगें वह सब प्रकारके पापों से छूटकर मनोवाछित फल पावैंगे ।

वाल्मीकिये आदि काण्डे चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४४ ॥

विश्वामित्र मुनिजी से यह गंगा अवतरण की कथा सुनकर लक्ष्मण के सहित रामचन्द्र बिस्मित हो गये, और विनयावनत होकर प्रियबचन से विश्वामित्रजी से बोले, हेतपोधन ! पृथिवी पर गंगाजी का अवतरण और गंगा तथा सागर का संगम की अद्भुत कथा सुनकर लक्ष्मण सहित हम विस्मित हो गये, और अमृतरूपी इसी कथा की चिन्ता में आजकी रात्री पलभर के समान हम लोगों को जान पड़ी हे परन्तप ! आज रात्रि में हमने केवल उसी कथा की चिन्ता में लगे रहे, मुझे और लक्ष्मण को सारी रात इसी कथा का ध्यान रहा, श्री रामजी विश्वामित्र से इस प्रकार कहकर प्रातःकाल संध्यावन्दन आदि प्रथम यामके कृत्यको करके शत्रुसूदन रामचन्द्र विश्वामित्रजी से बोले, हे प्रभो ! रात्रि व्यतीत हुई अब सुप्रभात हो गया चलिये लोकपावनि पाप नमावनि भागीरथी दिव्या त्रिपथगा गंगाजी के पार उतरैं पुण्य कर्मवाले ऋषियों ने सुन्दर बिछौना युक्त नौका तैयार कर रखा है वह लोग आपको यहां आये हुये जानकर जल्दी से यहां आरहे हैं, श्रीरामजी के मुखसे सुमधुर बचनको सुनकर महर्षि विश्वामित्र जी ऋषियों समेत गंगाजी के पार हुए, क्रमसे ऋषिगण ! उत्तर तीर पर उपस्थित होकर अभ्यागत और ऋषियों का सम्मान किया, और वहीं गंगाजी के तीरपर कुछदेर तक बैठकर एक विशाला नामकी पुरी देखा । स्वर्ग सदृश उस विशालापुरी के सामने को राम लक्ष्मण सहित मुनि श्रेष्ठ विश्वामित्रजी शीघ्रता से मार्ग को चले, चलते समय वेद शास्त्रकी मर्यादा को जानने वाले रामचन्द्रजी हाथ जोड़कर विश्वामित्र जी से बोले, हे प्रभो ! यह विशाला पुरी किसकी है, इस पुरी में कौन वंशके राजा राज्य करते थे, हेभगवन् ! मैं आपके मुखसे इसके वृत्तान्त को सुनना चाहता हूं कृपा करके सुनाइये । श्रीरामजी के बचन को सुनकर महर्षि विश्वामित्र जी इस प्राचीन इतिहास को कहने में कुतहला क्रान्त होगये । हे रामचन्द्रजी ! मैंने इन्द्रदेव से इस पुरी का वृत्तान्त जो कुछ सुनाहै वह संपूर्ण यथातत्त्व कहता हूं सुनो, हेरामचन्द्र पहिले

सत्ययुग में दिति के पुत्र महाबली असुर गण और अदिती के पुत्र देवगण आपसमें इस बात का परामर्श करने लगे कि हम लोग किस उपायसे अजर व अमर हो सकते हैं, इस प्रकार का विचार करते करते यह निश्चय हुआ कि क्षीर समुद्र मथ कर अमृत पीने से हम लोगों की कामना पूरी होगी, देवता व असुर आपसमें सम्मति करके मंदराचल पर्वत को मथानी और वासुकी नागकी रस्सी बनाकर समुद्र मथन करने लगे, इस प्रकार हजार वर्ष तक मथन्न करते करते वासुकी अपनी शरीर से जहर उछालने लगे और दांतोंसे मन्दराचल की शिलायें काटने लगे, इसप्रकार वासुकि की गर्मी से अग्नि के समान एक महा भयंकर विषनिकला, उसके तेजसे सुर असुर और चराचरसहित संसार जलने लगा, तब देवगण शिवजी के पास जाकर रक्षा करे यह कह कर भगवान रुद्रकी स्तुति करने लगे, जब देवताओंकी स्तुति से शिवजी प्रसन्न होकर वहां प्रगट हुये इतनेही में, शंख चक्रधारण किये गरुड़ पर चढे विष्णु भगवान भी वहां आये, विष्णु भगवानशिवजी को देखकर देवताओंसे मुसकरा कर शिवजी से बोले हे शिवजी ! समुद्र मंथन के समय पहिले जो चीज निकली वह आपको मिलनी चाहिये, क्योंकि आप सब देवताओं में श्रेष्ट हैं यहां विराजमान होकर यह प्रथम निकले हुये विषको ग्रहण कीजिये और सुर असुर तथा समस्त जगत्का कल्याण कीजिये, इतना कह कर भगवान विष्णु लोकको चले गये, जहाँ देवजी सकल चराचर जगत को पीड़ित देखकर श्रीविष्णु भगवान के कहने के अनुसार शिवजी ने विषको ग्रहण किया और लोकका संकट दूर किया, तभीसे शिवजी का नाम नीलकंठ हुआ । भगवान शिवजी विषको पान करके देवता और असुरों से बिदा मांगकर अपने लोकको चले गये । हे रामचन्द्र ! शिवजी को जाने के बाद देवता और दैत्य फिर समुद्र मथने लगे, तब मन्दराचल की जो मथानी बनीथी वह पर्वत धीरेधीरे पाताल को चलने लगा, तब देवगण गंधर्वों के सहित विष्णु भगवान

का स्मरण करके उनकी स्तुति करने लगे, हे प्रभो ! आपही सब जीवों के स्वामी और बिशेष करके देवताओं के आप एक मात्र सहायक हैं, इस वास्ते हे करुणा सागर भक्तवत्सल भगवान मन्दर चलको उद्धार करके हमारी रक्षा करो, कमला पतिने देवताओं के इस आर्तनादको सुनकर कच्छरूप धारण किया, और अपने पीठपर मन्दा चल पहाड़ को लेकर समुद्र शायी हुये, और अपने दूसरे रूपसे देवताओं के संग पर्वत के शिखर को पकड़कर भगवान पुरूषोतम समुद्रको मथने लगे, इस प्रकार एक हजार वर्ष समुद्र मथने से दंड कमण्डल लिये धन्वन्तरि वैद्य और महा सुन्दरी अप्सरायें निकलीं मथन करने के समय जलके स्वरुप रससे इनकी उत्पत्ति हुई इस कारण ये अप्सरा कहलाती हैं हेरामचन्द्र ! ये महा सुन्दरी अप्सरायें गिनती में साठकरोड़ हुई परन्तु उनकी दासियों की गणना नहीं हो सकी, समुद्रसे निकली अप्सराओं को न देवताओं के और न दैत्यो ने ग्रहण किया इससे वह साधारण स्त्रियां हुई देवता असुर मनुष्योंमें जो चाहे इनको ग्रहण करले । इसके उपरान्त वरुणकी कन्या सुरारूपिणी वारुणी निकली वह निकलतेही अपने योग्यवर को ढूंढने लगी, परन्तु असुरोने उसे ग्रहण नहीं किया किन्तु देवताओं ने उसको आनन्द दायिनी जानकर स्वीकार कर लिया । इसी कारण सुराको न ग्रहण करने से दितिपुत्र दैत्यगुण असुर हो गये और ग्रहण करने से देवता सुर कहलाये वारुणी को ग्रहण कर देवगण अति प्रसन्न होगये फिर समुन्द्र से उच्चैत्वा घोड़ा और कौस्तुभ मणि निकलकर पीछे से अमृत निकला, इसी अमृत के लिये देवता और असुरों से महासंग्राम हुआ इसमें देवदान व बहुत मारे गये, जब भयंकर युद्धसे पृथिवी कांपने लगी तब बिष्णु भगवान माया से मोहिनी रूप धारणकर अमृत को हरण करले गये, उस समय ओंकार रूप सनातन अविनाशी बिष्णु भगवान के सामने द्वेष पूर्वक जो असुर खड़े हुए उनको बिष्णुजी ने वैष्णवी चक्र से चूर्ण

करडाला। इस प्रकार अहितिके वीरपुत्र और अगणित दैत्य इस देवासुर संग्राममें मारे गये, अन्तमें पुरन्दर असुरों का संहार करके अपना राज्य प्राप्त किया और प्रसन्न मनसे अपने लोकका शासन करने लगे ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे पंचत्वावरिंशः सर्गः ॥ ४५ ॥

इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्रजी बोले, हेरामचन्द्र ! देवासुर संग्राममें दैत्यों की माता दिति अपने पुत्रों के मारे जाने से दुःखी होकर अपने पति कश्यपजी से बोली, हे स्वामी ! इस समय देवताओं ने मेरे पुत्रोंका नाश कर रहे हैं, इसलिये इन्द्र से पराक्रमी पुत्रको प्राप्त होने की इच्छा करती हू, आप मेरे गर्भसे इन्द्रको मारने वाला एक पुत्र उत्पन्न कीजिये, महामुनि मरिचि के पुत्र कश्यपजी आग्रह पूर्वक महादुःखित दितिके बचन को सुनकर बोले, हेइन्द्रे! तुम्हारी कामना पूर्ण हो, जब तक तुमको गर्भ धारणा न हो तब तक तुम एक कठिन तपस्या करो इस व्रत के प्रभाव से इन्द्र को मारने वाला तुम्हीको पुत्र होगा, कश्यपजी के आज्ञानुसार दैत्यमाता तपस्या करने को प्रस्तुत हुई इस प्रकार हजार वर्ष पूरा होने पर तीनों लोक का अकेला राज्य करने वाला सन्तान तुम मुझ से प्राप्त कर सकोगी। कश्यपजी यह कह कर अपने हाथ से दितिके शरीर को स्पर्श करके स्वस्ति पढ़, और अपने तपस्या करने को चले गये, महामुनि कश्यपजी के चले जाने पर उनकी स्त्री दिति प्रसन्नता पूर्वक कुशप्लव नामक स्थानमें जाकर घोर तपस्या करने लगे, हे रामचन्द्र ! तब देवराज इन्द्र दिति के तपस्या का प्रभाव जानकर दितिके शरण में आयें, और कश्यप मुनि की धर्मपत्नी दितिको तपस्या में अनुरक्त देखकर उसके आश्रम में रहकर दितिकी सेवा करने लगे, दितिके लिये अग्नि, कुश, काष्ठ, जल, फल, मूल, जिस वस्तु की दिति को आवश्यकता होती उसी को संपादन करते, यहां तककी इन्द्र जब दिति तप करते २ थकती तो उसके अंगको भी जकर सबश्रम दूर कर्दे ते,

हे श्रीरामजी ! इस प्रकार दिति को घोर तपस्या करते करते ६६० वर्ष बीत गये, एक दिन दितिने प्रसन्न होकर इन्द्र से बोली, हे देवराज ! अब मेरी तपस्या के दशवर्ष और बाकी है, इस व्रतको पूर्ण हो जाने पर तुम अपने भाई को देखोगे, हे पुत्र ! मैंने तुमसे पराक्रमी पुत्र पाने की प्रार्थना की थी अब उससे तुम्हारी मित्रता करादूंगी, तुम दोनों के मित्र भाव प्राप्त होने से तुम दोनों में बिवाद नहीं होगा, उसके साथ तुम सब सुख भोगोगे व तीनों लोकको विजय करोगे हेपुत्र? मैंने बहुत बड़ी प्रार्थना की थी तब तुम्हारे पिताजी ने हमको बरदान दिया था कि हजार वर्ष तक तपस्या करने से तुम्हारे को पुत्र होगा, दिति इस प्रकार इन्द्र से कहकर दो पहर को सोगई, सिरहाने की तरफ पैर फैलाकर निद्रित होगई, इन्द्रदिति को अपवित्र और सिरहाने की ओर पैर और पैरोंकी ओर सिर किये देखकर मनमें बड़े प्रसन्न हुए और हंसने लगे, इन्द्र उसी समय दिती के उदर में घुसगये, हे रामचन्द्र ! इन्द्र वहां जाकर गर्भको सात टुकड़ा कर डाले, इन्द्रने जब गर्भस्थ बालक को सात टुकड़ा किये तब वह स्वात स्वरूप होकर बालक रोने लगे, तब इन्द्र ने मतरोओ यह कहकर बालक को समझाने लगे, जब बालकों ने रोना बन्द नहीं तब इन्द्रने क्रोध से एक एक को सात सात टुकड़ा करडाला, तब दितिने इन्द्र से बोली, अब न मारो, दिति को ऐसा कहने पर माता की गौरव रक्षा करने के लिये इन्द्र गर्भसे बाहर आये, और वज्र सहित दितिको हाथ जोड़कर इन्द्र दिति से बोले, हे माता तुम अपवित्रता से उलटी सोरही थी, मैंने उसी अवसर में अपने होने वाले शत्रुको सात टुकड़े करडाले, अब आप प्रसन्न मन से मेरा अपराध क्षमाकर देवें ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे षट्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४६ ॥

इतनी कथा सुनाकर विश्वामित्र जी बोले, हे रामजी ! दिति अपने गर्भको सात टुकड़ा जानकर अतिशय दुःखित मन से इन्द्र से बोली, हे देवराज ! तुमने मेरी अपवित्रता के दोषसे गर्भक

टुकड़ा टुकड़ा कर दिया है इसमें तुम्हारा कुछ दोष नहीं हैं, अब अपने गर्भको नाश होने पर भी मैं तुम्हारा प्रिय कार्य करनां चाहती हूं कि तुम्हारे किये यह उनचास खंड सातों पवनों के स्थान पालक हों, महातजस्वी दिव्य रूप धारण करने वाले यह मेरे पुत्र मारुत नामसे ख्यात हो, वातस्कन्ध नामक सातों दिव्य लोक में बिचरण करते रहैं, इन पुत्रों मेसे प्रथम ब्रह्मलोक दूसरा इन्द्र लोक तीसरे दिव्य वायु नाम से ख्यात होकर विचरण करते रहैं, हे देवेन्द्र ! बाकी मेरे चारपुत्र एकत्र तुम्हारी आज्ञा से चारो दिशाओं में बिचरण करते रहैंगे, क्योंकि तुमने इनको मारुदः' यह कहा था इसी कारण यह तुम्हारे कहे मारूत नाम से परिचित होंगे, इन्द्र दिति के ऐसे बचन को सुनकर हाथ जोड़कर इन्द्र बोले, आपने जो कहा सोई होगा इसमें कुछ संशय नहीं आपके पुत्र देवरूपी होकर बिचरैंगे, तपोबन में यह सम्मत कर इन्द्र और दिति कृतार्थ होकर स्वर्ग को चले गये, हे रामचन्द्र ! हमने यह सुना है कि यह वही प्रदेश है, कि इन्द्र ने जहां पहिले तपस्या में निरत दितिकी सेवा किये थे, वह स्थान यही है, हे राघव ! राजा इक्ष्वाकु के अलम्बुषा नाम स्त्री से परम धार्मिक विशाल नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, उन्ही ने यहां विशाला नाम की पुरी बसाई, विशाल के पुत्र हेमचन्द्र हेमचन्द्र को सुचन्द्र सुचन्द्र के पुत्र धुम्राश्व, धुम्राश्व को धर्मात्मा सृञ्जय हुए सृञ्जय को प्रताप शाली सहदेव हुए, सहदेव को परम धार्मिक कृशाश्व और कृशाश्व को सोमदत्त हुए, सोमदत्तके पुत्र काकुत्स्थ और काकुत्स्थ को शत्रुओं से अजेय सुमति हुए जो आज कल धर्म पूर्वक इस पुरीका राज्य करते है, हेरामचन्द्र ! इक्ष्वाकुके अनुग्रह से इस विशाला पुरी के राजा सभी महाबली धर्मात्मा तथा दीर्घ जीवी हुए हैं, आज हम सुख पूर्वक यहां रात्री व्यतीत करैंगे कल प्रातःकाल चलकर राजा जनक की जनक पुरी को देखैंगे, विशाला पुरी के महा यशस्वी राजा सुमति विशमित्र के शुभागमन का समाचार पाकर अपने ऋत्विज और

पुरोहितों समेत महामुनि विश्वामित्र जी के पास आकर साष्टाङ्ग प्रणाम किया, और विश्वामित्र जी के साथी ऋषियों के समेत विश्वामित्र मुनी का सादर पूजन वसत्कार करके हाथ जोड़कर बोले, हेमुनीश्वर! आप के शुभागमन से मैं अनुगृहत व धन्य धन्य हुआ हूं, आपके दर्शन से मेरा जन्म सफल हो गया, आज दिन मुझसे अधिक दूसरे का भाग्य नहीं है ॥

इति वाल्मीकिये आदि काण्डे सप्त चत्वारिंशः सर्ग ॥ ४७ ॥

महाराज सुमति महामुनि विश्वामित्र का साक्षात् कार करके, परन्तपा विश्वामित्रजी से बोले, हेमुनिनाथ! यह दो राजकुमार देवतुल्य पराक्रमी गजबसिंहके समान चलने वाले कमल दल के समान नेत्रवाले धनुष बाण को लिये अश्विनी कुमार के समान युवा वस्थामें पदार्पण करना चाहते हैं, इनको देखकर मुझे ज्ञातहोता है कि मानो देव लोक से दो देवता अपनी इच्छा के अनुसार पृथिवी पर अवतार लिये हैं, हेमुनीश्वर! यह यहां पैदल क्यों आये और यह किसके पुत्र हैं, जैसे सूर्य चन्द्र अपने प्रकाश से आकाश को शोभित करते हैं, वैसेही यह दोनो महा पुरुष इस स्थान की शोभा को बढा रहे हैं, यह दोनो पुरुष एक आकार व स्वभाव प्रभाव के दीख पड़ते हैं, हेपरन्तप! यह महा पुरुष इस दुर्गम मार्ग में किस कारण आये हैं, और श्रेष्ठ अस्त्र शस्त्र को बांधे किस राज वंशके पालक हैं, वह में विस्तार से जानना चाहता हूं, राजा सुमति के वचन को सुनकर महर्षि विश्वामित्र रामलक्ष्मण का वृत्तान्त सुमति से कह सुनाये, यह सुनकर राजा सुमति बहुत विस्मित हो गये, दशरथ के कुमार महा पराक्रमी दैत्य संहारण श्रीराम लक्ष्मण जी को अतिथि भाव से आया हुआ जानकर राजा सुमति ने इनका पूजन और समुचित सत्कार किया, राजा सुमति से स्वागत किये गये राम लक्ष्मण वह रात्रि वहां व्यतीत कर प्रातःकाल राम लक्ष्मण ऋषियों के अनुगत होकर मिथिला पुरि को चले, उस मिथिला पुरी में पहुंच कर वहां का अनुपम दृश्य देखने लगे, ऋषि मंडल मिथिला पुरी की

विचित्र शोभा देखकर मिथिला पुरी की बड़ाई करने लगे, इधर रामचन्द्रने वहां के एक उपवन में एक पुराना आश्रम देख कर महर्षि विश्वामित्रजीसे पूछे, हेभगवान ! यह वन मुनियों का आश्रम जान पड़ता है, परन्तु इस स्थान पर कोई ऋषिमुनि यहां नहीं दीख पड़ते, हे तपोधन इस आश्रम का वृत्तान्त विस्तार से कहिये । त्रिकालज्ञ महर्षि विश्वामित्रकी श्री रामचन्द्रजी के सुमधुर बचन को सुनकर विश्वामित्र जी बोले, हेरामचन्द्र ! जिस महात्मा के क्रोध करने से इस स्थान की यह दशा हुईउनका वृत्तान्त विस्तार से कहता हूं सुनो, हे रामजी ! इस स्थान में परम पूज्य महर्षि गौतम जी रहते थे, उस समय धनधान्यसे समृद्ध इस आश्रमके सौन्दर्य की सीमानही, देवता भी महर्षि के गुण का तथा आश्रम की बड़ाई करते थे, हे रामचन्द्र ! यहां मुनि गौतम जी अनेक वर्ष पर्यन्त अपनी स्त्री अहल्या के साथ तप किया था, एक समय अवसर देखकर देव लोक के राजा इन्द्र छलसे गौतम ऋषिका स्वरूप धारण करके अहल्या से बोले, हे प्रिये ! रतिको चाहने वाले ऋतु कालकी बार नहीं जो हते, इसलिये हे सुन्दरी ! मेरी कामना पुरी करो, मैं तुमारे साथ संगम किया चाहता हूं, रामजी ! दुर्बुद्धि अहल्या स्वामीके वेष को धारण करने वाले इन्द्रको जानकर भी देवराज के साथ बिहार करने में प्रवृत्त होगई, अहल्या अनऋतु में गमन करने के कारण इन्द्रको पहचान लिया, क्योंकि बिना ऋतुकाल के ऋषिलोग भावीका सँगम नहीं करते, इस के उपरान्त अहल्या इन्द्रसे बोली, हे देवेन्द्र मैं कृतार्थ होगई अब तुम बहुत शीघ्र यहां से चले जाओ, हे देवराज ! तुम अपने को और मुझे महर्षि के शापसे बचाओ, तब इन्द्र हंसकर बोले, हे नितम्बिनि ! मैं परम प्रसन्न हुआ हूं अब मैं अपने लोक को जाता हूं, यह कहकर इन्द्र महर्षि गौतम के आश्रम से बाहर आये, यद्यपि इन्द्र गौतम जीके भय से बहुत शीघ्रता पूर्वक जारहे थे, परन्तु देखाकि गौतम मुनि आश्रम में आरहे हैं, महामुनि गौतम हाथमे समिधा और कुशालिये आश्रम में आये,

इन्द्रदेव! महर्षि गौतमको देखकर व्यग्र होगये, सदाचार परायण मुनि गौतम दुराचारी इन्द्रको मुनिके वेषमें आश्रम से निकलते देखकर क्रोधपूर्वक बोले, हेदुर्मते इन्द्र! तैने मेरा रूप धारण न करने के योग्य अकर्तव्य कार्यको करके व्यभिचारसे मेरी प्रियभार्या का सतीत्व नष्ट कर दिया इस लिये मेरे शाप से तूं न पुंसक होजाओ, महर्षि गौतमजीके क्रोध युक्त वचन को कहतेही इन्द्रका अण्डकोश उसी समय पृथिवी पर गिर पड़ा, गौतमजी इस प्रकार इन्द्रको शाप देकर आश्रम में जाकर अहल्या से कहा, हे दुराचारिणी तुझको इस आश्रम में हजारों वर्ष तक रहना होगा, और अदृश्य भावसे अर्थात् तुझे कोई प्राणी न देख सकैंगे, हे दुःशीले! निराहार रहन २ बायु भोजन करके पृथिवी पर शयन करना होगा, जब महाराज रामचन्द्र इस घोर बनमें आवैंगे तब तू उनके चरण स्पर्श से पापमुक्त होगी, उस सन्मय लोभ मोहन करके उनका आतिथ्य करेगी तब फिर तेरा पहिले के समान स्वरूप होजायगा, और तू फिर मुझेप्राप्त होगी, महर्षि गौतम दुष्टा अहल्या को इस प्रकार कह कर अपने पूर्व आश्रम का परित्याग करके सिद्ध गण से सेवित रमणीय हिमालय पर्वत पर जाकर तपस्या करने लगे॥

बाल्मीकिये आदिकाण्डे अष्टचत्वारिंश सर्गः ॥ ४८ ॥

इतनीकथा सुनाकर विश्वामित्रजी बोले हेरामचन्द्रजी! इन्द्रगौतम के शापसे चकित व नपुँसक होकर देवलोक में जाकर देवता सिद्ध चारण गंधर्व आदि देवगण से बोले, हे देवताओं! मैंने महर्षि गौतम जी को तपस्या में विघ्न करके देवकार्य को साधन किया है, नहीं तो गौतमजी अपने तपस्या के प्रभाव से सब देवताओं को स्थान च्युत्त कर देते नहीं तो क्रोधवश जो उन्होंने मुझेशाप दियाहै उससे उनकी तपस्या क्षीण होगई है, मेरे कुकर्म के अनुकूल महर्षि गौतम क्रोध के परवश हो हमें नपुँसक कर दिया है, और अहल्या भी अपने किये कर्मका फलभोग रही है, हेदेवगण! मैंने तुम्हारा कार्य साधन किया है, इस लिये तुम सब देवगण, हमारे अच्छे होजाने का उपाय करना

चाहिय, इन्द्रके बचनको सुनकर अग्नि आदि देवगण मरुद्गणों के सहित पितरों के देवता कव्यवाहन के निकट जाकर बोले, अग्नि देव इस समय महर्षि गौतम के शाप से इन्द्र अण्डकोश हीन हो गये हैं, और तुम्हारे इस मेष (मेढो) को अंडकोश है, इसलिये इसमें मेढ़के अंडकोश को उखाड़ कर इन्द्र के कल्याण के लिये दे दीजिये, आपके मेढे को अंडकोश होने से तुम्हारे सन्तोषसाधन के उपयोग कार्य करेंगे, तुम्हारी प्रसन्नता के लिये एक ऐसा मेढा प्रदान करेंगे, कि उसका अक्षय फल तुम लोगों को प्राप्त होगा,, अग्निदेव के बचन को सुन कर कव्यवाहन आदि पितरों ने मेढे के अंडकोश उखाड़ कर इन्द्र को दे दिये, हेरामचन्द्रजी ? उसी समय से पितरों को अंडकोश हीन मेढों का भक्षण करने का नियम हुआ, और मेढे का अंडकोश इन्द्र को लगाया गया, हेरामचन्द्र! उसी दिन से महर्षि गौतमजी के शाप के प्रभाव से मेढे के अंडकोश को इन्द्रधारण किये, हेरामचन्द्रजी ! अब तुम पुण्यकीर्ति महातेजस्वी महर्षि के आश्रम में प्रवेश करके महाभागा देवरूपवाली अहल्या का शापोउद्धार कीजिये, रामचन्द्रजी ! विश्वामित्रजी की आज्ञानुसार मुनिको अगुआ बनाकरलक्ष्मण सहित रामचन्द्र गौतमजीके आश्रम में प्रवेश किये, श्रीरामचन्द्रजीने वहां जाकर देखा कि तपस्याके तेज से उसकी प्रभाचारो ओर फैल रही है,उस तेज को देवदानवगण भीदृष्टि पूर्वक नहीं देख सकते थे, उस समय रामचन्द्रको आश्रम में प्रवेश करते ही अहल्या पवित्र हो गई, और आश्रम दीप्तिमान हो गया, इधर अल्याको देखने से जानपड़ाता था कि बिधाताने प्रयत्न पूर्वक यह माया मयी मोहिनी मूर्तिकी रचना की है, उसकी दिप्ति धूमपूर्ण अग्नि के ज्वाला के समान थी । जैसे बादल की छाया में चन्द्रमा की शोभा होती है, जैसे जलमें प्रदीप्त सूर्यकी प्रभाकी शोभा होती है वैसेही अहल्या की आकृति की शोभा हुई थी, अहल्या तभी तक चराचर को अदृश्यथी जबतक उसको श्री रामजीका दर्शन नहीं हुआ था अहल्या ने जैसेही रामचन्द्र जी

को सन्मुख देखा वैसेही अपने पापसे मुक्तहो शिलाके स्वरूप को त्यागकर दिव्य अंगना होगई, लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी ने अहल्या के चरणों की वन्दना करने लगे, गौतमी ने भी महर्षि गौतमजी के पूर्व वृत्तान्त को स्मरण करके श्रीराम जी का अर्घ्य पाद्य आदिसे पूजाकर के यथेष्ट सत्कार किया, और रामचन्द्र को पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुई जैसे दरिद्र मनुष्य संपत्ति को पाकर प्रसन्न होता है। अहल्याके उद्धारको देखकर श्रीरामजी और अहल्याके ऊपर आकाश से पुष्पकी वर्षा होने लगी प्रसन्न होकर देवगण दुन्दुभी बजाने लगे, गंधर्वोंने अनेक प्रकार का बाजा बजाया अप्सराओं ने रामजीके गुण को गान करके महोत्सव किया, देवगणतपस्विनी पतिपराणा निर्मल शरीरवाली अहल्याको धन्यवाद देने लगे, और आकाशवाणी होने लगी कि गौतमजी भी अपने योगबल से विश्वामित्र और लक्ष्मण समेत श्रीरामचन्द्रजी को आया हुआ जान अपनी तपस्या को छोड़ अति सीघ्रही अपने आश्रम पर आये, और पहिले के समान रूपवती अहल्या को पाकर परम सुखी हुए, और श्रीरामचन्द्रजी की यथा बिधि पूजा किये, श्रीरामजी गौतमजी से विविध पूजा ग्रहण करके मिथिलापुरी की ओर चले, और महर्षि गौतमजी पहिले के समान आश्रम में रहकर तपस्या करने लगे ॥

बाल्मीकियेआदिकाण्डे एकोन पञ्चाशःसर्गः ॥ ४९ ॥

इसके उपरान्त लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी विश्वामित्रजी के साथ पूरब और उत्तर मुख होकर राजर्षि जनककी यज्ञ भूमिमें पहुंचे । तब श्रीरामजी ने विश्वामित्रजी से बोले, राजा जनकजी के यज्ञकी स्थान तो बहुत उत्तम है, इस यज्ञ के उपलक्ष मे वेद ज्ञान संपन्न नाना देशी य अनेक ब्राह्मणगण उपस्थित हुये हैं। यह सब स्थान ऋषियों को को रहने के लिये है क्योंकि यह सब स्थान सैकड़ों छकड़ों ऋषियों के सामग्री से भरे हैं, हे परन्तप ? हमारे भी रहने के लिये कोई स्थान बता दीजिये, जहां हम ठहरें। श्रीरामजी के ऐसे वचन को सुनकर

महामुनि विश्वामित्रजी के निर्जन और मजल प्रदेश राम जी को रहने के लिये बताया, इधर राजर्षि जनक विश्वामित्र जी के आगमन को सुनकर पुरोहित शतानन्द ऋत्विज गणको साथ ले पूजाकी सामग्री समेत आगेसे विश्वामित्रजी को लेने आए, राजर्षि जनक महर्षि विश्वामित्र का अर्घ्य देकर पूजाकरने लगे, विश्वामित्रजी पूजाको स्वीकार करके कुशल प्रश्न पूछा, इसके उपरान्त महाराज जनक के यज्ञ में आमन्त्रित ब्राह्मणों के कुशल प्रश्न को पूछें, पुनः यज्ञ की वार्ता पूछने लगे। और सबके संग मिलभेंट ऋषियों से सादर संभाषण किया तबजनकजी मुनि श्रेष्ट विश्वामित्र जी से हाथ जोड़ कर बोले, हे मुनीश्वर आप अपने साथी ऋषी गण के सहित इन आसनों को सुशोभित करिये, विश्वामित्र जी जनक जीके अनुमति से ऋषियों समेत आसन को ग्रहण किया, इसके बाद शतानन्द पुरोहित और ऋत्विज गण तथा राजमन्त्री और राजा जनक योग्य आसनों पर विश्वामित्र जीके चारो ओर बैठ गये, राजा जनक जी हाथ जोड़ कर विश्वामित्र जीसे बोले, आज देवताओं के अनुग्रहसे हमारा यज्ञ करना सफल हुआ, हे तपोधन ! जब आपका साक्षात हुआ तब मुझे यज्ञ का फल मिलही गया अब मैं धन्यधान्य और कृत कृत्य होगया हूं, हे महर्षि ! आप ऋषियों के सहित जो मेरे यज्ञमें पधारे हैं यह मेरा बड़ा भाग्य है, हे परन्तप ! ब्राह्मण गण बारह दिन दीक्षा काज केलिये नियत किये हैं, राजा जनक इस प्रकार विश्वामित्रजी की बड़ाई करके पुनः हाथ जोड़कर बोले, हे कौशिक ! यहतो कुमार देवता के समान पराक्रमी हस्ती के समान गमन करने वाले अश्विनी कुमारके समान रूपवान ये कौन हैं, इन को देखने से मालूम होता है कि यह कोई देवलोक की अपूर्व मूर्ति पृथ्वी पर अवतार लिये हैं, हे मुनिश्वर यह किस कारण यहां आये हैं और क्यों पैदल चलते हैं किसके पुत्र हैं, हे महामुनि ! जिस प्रकार सूर्य चन्द्रमा अपने प्रकाश से गगनमंडल को शोभित करते

हैं वैसेही इन्हो ने इस देशको अलंकृत किया है इन कुमारों के चेष्टा स्वभाव प्रभाव में कुछ भी भेद नहीं मालूम पड़ता, यह दोनों महाबीर कौनहैं, हेप्रभो मैं इनका नाम वृत्तान्त सुनना चाहताहूं । इसप्रकार राजा जनकजी के वचन को सुनकर विश्वामित्रजीने कहा ये राजादशरथ के पुत्रहैं, विश्वामित्रजीने रामचन्द्रजीका इसप्रकार परिचय देकर सिद्धाश्रम निवासी ताड़का और मारीच का वध और दुर्गम पथमें आगमन विशाला नगरीका दर्शन अहल्याका उद्धार गौतम से भेंट शिवकायज्ञ महाधनुष देखने केलिये आगमन इत्यादि सब वृत्तान्त महात्मा विश्वामित्र जनकजी से कह कर चुप हो गये ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे पञ्चाशः सर्गः ॥ ५० ॥

परम बुद्धिमान विश्वामित्रजी के कहने को सुनकर महातेजस्वी तपस्वी गौतम मुनिके ज्येष्ठपुत्र शतानन्दजी श्रीरामजी को देखकर बिस्मित हो गये, और श्रीरामचन्द्रजी का दर्शन करके राजकुमार राम लक्ष्मण को सुख बैठेहुए देखकर महर्षि विश्वामित्रजी से शतानन्द जी बोले, हेमुनिपुङ्गव ! हमारी यशस्विनीमाता बहुत दिनों से तपस्या करतीथीं, क्या आपने महाराज कुमार रामचन्द्रजी को दिखाया था, और परम यशस्विनी माता देवतुल्य सबसे पूजने योग्य श्रीरामचन्द्रजी को वनके फल पुष्प आदिसे क्या पूजाकी थी, हेमुनिपुङ्गव ! क्या आपने रामचन्द्रजीसे देवराज इन्द्रके व्यवहारकी पुरातन कथा कही हैं, हेमुनिश्रेष्ठ ! क्या मेरीमाता शापसे छुटकर पिताजीको प्राप्तभई, हे विश्वामित्रजी ! मेरेपिताजीने क्या रामचन्द्रजी की पूजा किया है, हेमहर्षि ! मैं आपसे पूछना चाहतीहूं कि श्रीरामचन्द्रजीने शान्तचित्त से मेरेपिता महर्षि गौतमजी की पूजाको स्वीकार करके उनकाभी कुछ सम्मान कियाहै यानहीं, वाक्यविशारद विश्वामित्र जी शतानन्द जी से बोले, हेतपोधन ! जो कुछ कर्तव्यथा उसमें कुछभी न्यूनता नहीं हुईहै जैसे यमदग्नि से रेणुकामिली वैसेही गौतमजी से आपकी माता मिली हैं । विश्वामित्रके सहर्ष वचन को सुनकर शतानन्द जी

रामचन्द्रजी से बोले, हेनरसिंह ? महर्षि विश्वामित्र जी तथा और ऋषियों के संग यहातक कुशलतासे तो आये, मार्गमें कोई विशेष विघ्नतो नहीं हुआ, हेरामचन्द्र ! आपका आना हमारे सौभाग्य के लिये है, हेरामजी ! महामुनि अपराजित अचिन्त्य कर्मा विश्वामित्र जी को मैं अमित प्रतिभाशाली जानता हूं, यही हमारे एक मात्र परम गतिहैं, । हेरामचन्द्रजी ! संसारमें तुमसे अधिक पृथिवीपर और कोई धन्यनहीं हैं, क्योंकि महातपा महर्षि विश्वामित्रजी आपके रक्षक हैं, अबमैं आपसे महात्मा कौशिक की कथा विस्तारसे कहताहूं सुनों, हेराम महाबाहू ! महर्षि विश्वामित्र बहुत दिनतक राज्य कर चुके हैं, यह मुनिधार्मिक विद्या जानने वालों में चतुर और प्रजा पालन में प्रीति मानथे, पहिले समयमें कुशनामक एकपुत्र प्रजापति को उत्पन्न हुए, उनके पुत्र महापराक्रमी सुधार्मिक कुशनाभहुए कुशनाभके पुत्रगाधीहुए, गाधिको महामुनि तेजस्वी विश्वामित्र जी हुए, यहमहामुनि विश्वामित्र जो हजारो वर्षतक पृथिवी का पालन और राजशासन करतेरहे, एक समय महर्षि विश्वामित्रजी चतुरङ्गनी सेना सहित पृथिवी पर घूमरहे थे, यथा क्रम से अनेका नेक राज्य नगर नदी वन पर्वत देश प्रदेश आदि घूमकर महर्षियों के आश्रम से होते हुए वासिष्ठमुनि के आश्रम में आये, वहा आकर वसिष्ट जी के आश्रम की विचित्र शोभा देख ने लगे। इस आश्रम के चारों ओर नानाप्रकार के वृक्ष लगे हैं,अनेक प्रकार की लतायें आपस में कलोल कर रही हैं,भांति भांति के पुष्पों से आश्रम सुशोभित है,अनेक प्रकार के पशुपक्षी शान्त भाव से विचरण कर रहे हैं,सिद्ध चारण करके आश्रम सेवित है देवदानव गंधर्वों से यह स्थान शोभायमान है,प्रशान्त चित्तवाले मृग गण से यह स्थान पूर्ण है,जगह जगह ब्राह्मण गण शोभा पारहे हैं,ब्रह्मर्षि और देवर्षि करके यह स्थान अलंकृत है,वसिष्ठमुनि के आश्रम में रहने वाले सकल ब्राह्मण गण तपस्या के प्रभाव से अग्नि के समान प्रकाशित है,यह

वशिष्टाश्रम तपस्वियों के लिये जलपान वायु भोजन और कुशासन आदि को देने में अनुकूल है, फल मूल खाकर इन्द्रियों को अपने अधीन करके महात्मा बाल खिल्य गण तपस्या कर रहे हैं। ऋषिगण अपने यज्ञादि कर्म में निरत हैं,वानप्रस्थ अपने स्त्रियों समेत तपस्या कररहे हैं ब्रह्मलोक के समान वशिष्ठ जी जा आश्रम देखकर विश्वामित्र जी प्रसन्न हुए ॥

इति वाल्मीकिये आदि काण्डे एक पंचाशः सर्गः ॥ ५१ ॥

ये इतनी कथा सुनाकर महाराज जनक की सभा में शतानन्द जी बोले हे रामचन्द्र? वशिष्ठ जी के आश्रम की शोभा को देखकर महावीर विश्वामित्र जी वशिष्ठ जी को प्रणाम किये,तब मुनिवर बसिष्ट जी विश्वामित्र जी के कुशल प्रश्न को पूछ कर बैठने के लिये आसन प्रदान किये,और अतिथि सत्कार करने में प्रवृत्तवसिष्ट जी विश्वामित्र को फल मूल देकर सत्कार किये,राजाओं मे श्रेष्ट विश्वामित्र जी वसिष्ट मुनि से दिये गये आसन और पूजा सत्कार को स्वीकारके वसिष्ट जी के कुशलप्रश्नों को पूछने लगे और वसिष्टजी सबकी कुशल कही, तब वसिष्ठ जी के सन्मुख विश्वामित्रजी सुखपूर्वक् बैठे, अब वसिष्ट जी विश्वामित्रजीसे राज्यका मन्त्रियोंका सैनिकों काराष्ट का कोशका कुशल समाचार पूछने लगे और विश्वामित्र जी आनन्द पूर्वक कहने लगे,इसके उपरान्त महर्षि वसिष्ठऔर महाराज विश्वामित्र परस्पर में वार्ता संन्ताप करते हुए वसिष्ठ जी बोले,हे राजन्? में तुम्हारी और तुम्हारे सेनाओं का सत्कार करना चाहता हूं,इस लिये हे राजन्? तुम मेरे किये हुए सत्कार को ग्रहण करो हेराजन्? तुम अतिथियों में श्रेष्ठ और सब भांति पूजनीय हो, इसलिये मेरी राय में अपनी सम्मति देओ। विश्वामित्र जी बोले, हेमुनीश्वर? आपकी अभिलाषा के अनुसार मेरी सत्कार हो गया, हे भगवन्? आपके आश्रम में फल मूल अर्घ्य इत्यादि पाकर और विशेष करके आपके दर्शनमात्र से ही सन्तुष्ट हुआ हूँ। हे महाप्राज्ञः आप हमारे पूजनीय हैं मेरा

जैसा आदर होना चाहिये वैसाही आपने किया अब मैं आपको प्रणाम करके जाता हूँ कृपा दृष्टि रखियेगा, विश्वामित्रजी को विनय करने पर भी मुनिवर वसिष्ठजी बारबार उनको पहुँनाई सत्कार ग्रहण करने के लिये कहने लगे। मुनिवर वसिष्ठजी के विशेष आग्रह से महाराज विश्वामित्रजी सेनासहित आश्रम में रहने को स्वीकार किये, वसिष्ठमुनि विश्वामित्रजी के पहुनई सत्कार करने के लिये परम प्रसन्न होकर विचित्र वर्ण विभूषित परम पावन कामधेनु को बुलाये, और बोले--हेशबले ! सेनासहित इन राजर्षि राजा विश्वामित्र का भली भांति सत्कार करो यही मेरी इच्छा है, इन लोगों के लिये अनेक प्रकार के सुन्दर और स्वादिष्ट भोजन देकर आदर करो, हे होमधेनु ? तुम क्या नहीं दे सकती हो आज दिव्य भोजन के योग्य पक्वानो की वर्षाकरके ढेर लगादो, उसमें छ ओरसके पदार्थ रहें तुम इसप्रकार भोजनीयपदार्थों का ढेरलगादो कि जिसे जो इच्छा हो सो विना मांगे लेलेवे, ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे द्विपंचाशः सर्गः ॥ ५२ ॥

हे शत्रु नाशन रामचन्द्र ? वसिष्ठ जीके आज्ञानुसार कामधेनु ने सेना सहितराजर्षि विश्वामित्रका योग्य सत्कार किया, सबके लिये ऊंखके यावतीय पदार्थों को और गरमभातके ढेरको और मीठे अन्नको, दिव्य मदिराको, अनेक प्रकारके धान्यको, और बहुमूल्य पीने वाले पदार्थोंको, दूधको, अनेक प्रकारकी दालको, औरदहीके ढेरको तथा नानाप्रकार के स्वादयुक्त चीनीके पदार्थोंको अर्थात् पेड़ाबरफी आदिको, हलुआ मालपुआ आदिकपदार्थों से सेनासहित विश्वामित्र जीको भोजन कराये, भोजन करके सेना समेत राजर्षि सन्तुष्ट होगये, राजर्षि विश्वामित्र अपनी स्त्री तथा ब्राह्मण पुरोहित मंन्त्रि और सेना सहित प्रसन्न होकर महर्षि वसिष्ठजीसे बोले, हेमुने ! आपने जैसा सत्कार मेरा किया है वैसा आजतक कभी किसीने नही किया अब आप मेरी एक बात और सुनिये, हेभगवन ! मैं आपको एक लाखगौ देताहूं उसके बदले में

आप मुझे अपनी गौ दे दीजिये, यह गौ एक रत्न है, और ऐसी उत्तम वस्तुओं को राजाओं के घरमें रहना चाहिये, इस लिये काम धेनु को मुझे दे दीजिये, क्योंकि न्यायानुसार इस पर मेराही अधिकार है, मुनिवर वसिष्टजी विश्वामित्र जी के बचन को सुनकर बोले, हे राजन्! लाखया करोड़ गाय देनेपर भी मैं कामधेनु को नहीं दे सकता, हे राजन्! चांदी और सोनेकी राशिसे भी मैं काम धेनुको नहीं दे सकता, रत्न की राशिसे भी मैं कामधेनु को नहीं दूंगा। हे राजन्! यह हमारे त्यागने योग्य नहीं है, इस गौ को अपने कीर्ति के समान हम रक्षा करते हैं, विशेष करके इस गौ से हमारा हवन देव पूजन तर्पण तथा प्राण की रक्षा होती है, इसी गौ से अग्नि होत्रहोम और बलि कर्म किये जाते हैं, हमारे स्वाहा कार बष्टह कार तथा अनेक प्रकार के यज्ञ इसकेही अधीन है, हे राजन्! मेरीसबक्रिया इसके अधीन है, यही हमको तुष्ट करने वाली है, इसी पर मेरी प्रीति है। हे राजन्! अनेक प्रकार के कारणों से मैं इसको नहीं दे सकता। वसिष्टजी के इस प्रकार के बचन को सुनकर वाक्य विशारद विश्वामित्र जी बोले, हे महर्षि! सोनेके सींकर के सहित और हमेले और सोनेके अंकुशों से भूषित चौदह हजार हाथी देताहूं, सुवर्ण मय सफेद घोड़ोंसे सम्पन्न रथदेता हूं, और दूध देने वाली एक करोड़ गौ आपको देता हूं, उत्तम देशों में उत्पन्न ग्यारह हजार श्रेष्ठ घोड़ोंको देता हूं हे द्विजोत्तम! अब आप मुझे काम धेनुको दे दीजिये। हे द्विजवर! इसके अतिरिक्त रत्नया सुवर्ण आदि जो कुछ आपको अभीष्टहो सो मैं देनेको तय्यार हूं, इस प्रकार विश्वामित्र जी के बचन को सुनकर महर्षि बसिष्ट जी बोले, हे राजन्! मैं काम धेनुको किसी प्रकार नहीं दूंगा यहीधेनु हमारा धन है यही सुन्दर रत्न है यही हमारी जीवन है इसीकी सहायता से मैं दर्शपोर्णमास नामक यज्ञ दक्षिणा के सहित करता हूं हे राजन्! इसी गौसे अन्यान्य देवक्रियाओं का साधन करता हूं हे विश्वामित्र! यही गौ हमारे सब क्रियाओं

की मूल है इसमें कुछ संशय नहीं, अब अधिक प्रलाप से कुछ प्रयोजन नहीं है, मैं अपनी शबलाको नहीं दे सकता हूं ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे त्रिपंचाशः ॥ ५३ ॥

इतनी कथा सुनाकर शतानन्दजी बोले, हे रामचन्द्र ! जब महर्षि वसिष्ठ किसी प्रकार कामधेनु को देना स्वीकार नहीं किया, तब महाराज विश्वामित्र हठात् बलपूर्वक कामधेनु को लेचले, हे राघव महाबाहु ! जिस समय राजर्षि विश्वामित्र काम धेनुको लेकर चले उस समय गौके आंखों से आंसुओं की धारा बहने लगी और दुःख पूर्वक मनमें सोचने लगी, क्या महर्षिजीने मुझे त्यागतो नहीं किया, फिर यह राज पुरुष अन्याय से मुझे क्योंकष्ट देते हैं, मुझसे धर्मात्मा महर्षि का क्या अपराध हुआ किजो अपराध रहित मुझे उन्हो ने त्याग दिया, वह गौ इस प्रका चिन्ता करने लगी और लंबी लंबी श्वास को छोड़ने लगी, गौ का दुःख को देखकर उन राज पुरुषों से छुड़ाकर वायु के समान अति वेग से महर्षि वसिष्ठजी के निकट आकर चरणोंपर गिरपड़ी, उस समय उनके नेत्रों में आंसू भरगये और मुनि बसिष्ट के सामने खड़ी होकर हूंकार पूर्वक रोती हुई वसिष्ट जी से बोली, हे ब्रह्माके पुत्र ! वसिष्ठ जी ! राजाके तुम्हारे निकट से मुझे क्यों लिये जाते हैं, आपने मुझेक्यों परित्याग करदिया, जब शबलाके इस प्रकार बचन को सुनकर शोकसन्तप्त बहिनकीनाई काम धेनुसे महर्षि वसिष्ठ बोले, हे शबले ! तुमने हमारा कुछ भी अपकार नहीं किया है और मैंने तुम्हारा परित्याग नहीं किया है, किन्तु यह प्रमत्त राज पुरुष बल पूर्वक तुम्हें लिये जारहे हैं, और यह गजा क्षत्रिय जातिमें महाबली पृथिवी के अधिपति हैं इनके पास हाथी घोड़ा रथ आदि संपूर्ण एक अक्षौहिणी बड़ीसेना है यह सब प्रकार से हमसे बलवान हैं महर्षि वसिष्ठ जीके बचन को सुनकर फिर विनय बचन से महा प्रभाव युक्त महर्षि वसिष्ठ जी से बोली, कि ब्राह्मणों से क्षत्रिय अधिक बलवान नहीं है, क्षत्रियो के बलकी

अपेक्षा ब्राह्मण अधिक बली हैं, हे महर्षि आप में अप्रमेय बल है और अनिवार्य शक्ति है विश्वामित्र कभी आपकी बराबरी नहीं करसकते, आप मुझे विश्वामित्र के दर्प और तेजको संहार करने के लिये समुचित शक्तीको सृष्टि करने में नियुक्त कर दीजिये मैं उस दुरात्मा के बल और अभिमान को चूर्ण करूंगी। काम धेनुके इस बचन को सुनकर महा यशस्वी वसिष्ठजी बोले, कि बल से सेना उत्पन्न करो जो शत्रुओ की सेना को नाश करे। मुनि की आज्ञा को पाकर काम धेनुने असंख्य म्लेच्छोकी सेना अपने हुंकार से उत्पन्न करने लगी, वह म्लेच्छ गण उत्पन्न होतेही विश्वामित्र के सामने उनकी सेना का संहार करने लगे तब विश्वामित्रजीके नेत्र लाल होगये और महाक्रोधपूर्वक वाणवर्षा करने लगे, और ऊंचे नीचे शस्त्रों से सबम्लेच्छों कानाश किया फिर विश्वामित्र के शस्त्रसे उनम्लेच्छोंको मराहुआ देखकर शबलाने प्रभावशाली सोने के समान रंगवाले महा भयंकर यवन मिश्रित शकजातीय कीसृष्टि उत्पन्न की, उनसब शक और यवनों से आश्रम की भूमि पूर्ण होगई, वह सब प्रभाव शालीशकयवन हाथों में तीखे तलवार को धारण किये पीले कपड़े पहने अदीप्त अग्नीके समान प्रकाशित होकर राजाकी सेना दग्धकरने लगे यहचरित्र शक और यवनों का देखकर महातेजस्वी विश्वामित्र जीने अपने अस्त्रको छोड़ने लगे जिससे शक और यवनों का नाश होगया ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे चतुःपंचाशःसर्गः ॥ ५४ ॥

तब वसिष्ठजी विश्वामित्र के अस्त्र शस्त्रों से शकयवनादिकों को आकुलित देखकर काम धेनुसे बोले, कि तूं योग बलसे फिर सेना को उत्पन्न करो, वसिष्ठजी की अनुमति से शुरभी ने अपने हंकार से सूर्यके समान कम्बोज जातिको और स्तनसे वर्वर जातिको योनि से यवनको, गुदासे शक जातिको रोमसे म्लेच्छ कि रात हारीत आदि को उत्पन्न किया ! हे रामचन्द्र ! उन लोगों ने जन्म लेतेही

विश्वामित्र जीके हाथी घोड़े रथ पैदल चतुरंगिनी सेनाका नाश किया उस समय विश्वामित्र जीके सौ पुत्र वसिष्ठ मुनि के प्रभाव से अपनी सेनाको नाश होती हुई देखकर अस्त्र शस्त्र लेकर वसिष्ठ मुनिको मारने दौड़े, तब वसिष्ठ मुनि क्रोध पूर्वक हुँकार करदिया कि वे विशामित्र के पुत्र उसी काल में भस्म होगये, और महात्मा वसिष्ठ जी उनकी सेना को मुहूर्त मात्र में भस्म करदिये, अपनी सेना का नाश देखकर महाराज विश्वामित्र जी लज्जित होकर कुछ देर तक चिन्ता करते रहे, उस समय विश्वामित्र जीकी अवस्था तरंग से रहित समुद्र अथवा टूटे दांत वाले सर्पके समान बराहु से ग्रसित सूर्य के समान कान्तिशून्य होगये, जैसे बिना पंखके पंक्षिकी गति नहीं होती वैसे ही पुत्र सहित सेनाको भस्म देखकर दीन होगये, इसके बाद क्षत्रिय धर्मानुसार अपने एक पुत्र को विश्वामित्र जी राज्यभार सौंप कर कहाकि तुम न्याय पूर्वक धर्मानुसार अच्छी तरह प्रजापालन करना, यह कहकर अपने किन्नरादिसे सेवित हिमालय पर्वतपर जाकर महादेव जीकी आराधना करने लगे, कुछ दिन के बाद प्रसन्न होकर भगवान वृषभध्वज ने विश्वामित्र जी को दर्शन देकर बोले, हे राजन्! तुम्हारे तपस्या करने का क्या कारण है तुम्हारा जो मनोरथ हो सो वरदान मांगो मैं तुमसे प्रसन्न हूं, शिवजी के बचन को सुनकर महा तपस्वी महर्षि विश्वामित्र जी उनके चरणों में प्रणाम करके उनसे कहने लगे, हे पिनाकपाणि! शिवजी! यदि आप मुझसे प्रसन्न हैं तो साङ्गोपाङ्ग मंत्र सहित धनुर्वेद मुझे दीजिये, हे भगवान! देवता, मानव, महर्षि, यक्ष, राक्षस, आदिके जितने अस्त्र शस्त्र हैं सबमुझे विनापढ़े आजावें, आपके अनुग्रह से मेरा मनोरथ पूर्ण होजावे यही मेरी प्रार्थना है, यह सुनकर महादेव जी बोले, ऐसाही होगा, यह कहकर शिवजी अन्तधनि होगये शिवजी से शकल अस्त्र शस्त्र को पाकर महाबली विश्वामित्र जीको पूर्ण अभिमान होगया, हे रामजी! विश्वामित्र जी मारे पराक्रम के ऐसे बढ़े कि जैसे

पूर्णमासी के चन्द्रमा को देखकर समुद्र बढ़ता है, और यह विचार में लगे कि अबकी बार वसिष्ठजी को परास्त करके कामधेनू (ब्रह्मविद्या) को अवश्यही लेंगे मनमें यह निश्चय करके वसिष्ठजी के आश्रम में गये और आश्रमपर बाणकी वृष्टि करने लगे, इनके बाणों से तपोवन दग्ध के समान हो गया, विश्वामित्र अस्त्र छोड़ते देखकर आश्रम-वासी ऋषिगण त्रासके मारे चारो दिशाओं में भागने लगे, वसिष्ठ जीके शिष्यगण और आश्रम के रहने वाले पक्षिगण भयभीत होकर इधर उधर दिशाओं में भागने लगे, इस प्रकार वसिष्ठजी का आश्रम शून्य प्राय होकर मुहुर्त भरमें वृक्षरहित ऊपरकी नाईं और बिना शब्द के वनप्रदेशकी नाईं शोभा पाने लगा, सब आश्रमवासियों को आते देखकर वसिष्ठजी बोले तुम कोई मत डरो, जैसे सूर्यके उदय होने से अन्धकार का नाश होता है वैसेही मैं गाधिपुत्र विश्वामित्र को नाश करूंगा, महा तेजस्वी वसिष्ठजी यह कह कर क्रोध पूर्वक विश्वामित्रजी से बोले, हेमूढ! दुराचारी तैने बहुत समय से रक्षित धन धान्यसे परिपूर्ण इस आनन्द देने वाले आश्रम का सत्यानाश किया तो अब तू मेरे सामने से जीता नहीं बचैगा, वसिष्ठजी यह कह कर धूमसे रहित अग्नि के समान प्रदीप्त हो यमदंड के समान घोरदंड को उठाकर शीघ्रता से विश्वामित्र के ऊपर चले॥

इति वाल्मीकिये आदिकाडे पंच पंचाशः सर्गः॥ ५५॥

इतनी कथा सुनाकर शतानन्दजी रामचन्द्र से बोले, हेरामचन्द्र! इस प्रकार वसिष्ठजीको अपने ऊपर आते देखकर विश्वामित्रजी बोले, खड़ेहो खड़ेहो, यह कहकर महाबली विश्वामित्र आग्नेय अस्त्रको उठाया, तब भगवान वसिष्ठजी दूसरे कालदंड के समान ब्रह्मदंड को उठाकर क्रोधसहित बोले, रेक्षत्रिय कुलदूषण! यह मैं खड़ा हूं तुझे जितनी सामर्थ्य हो अपना बल दिखाओ, रेगाधिसुत! मैं तेरे शस्त्र को और अभिमान को नाशकर दूंगा।

रे अधम! कहां तेरा तुच्छ क्षत्रियबल और कहां महान् ब्रह्मबल,

ब्रह्मबल से क्षत्रिय की तुलना नहीं होसकती, यह कहकर जिसप्रकार जलसे अग्निशान्त होजाती है वैसेही ब्रह्मदण्ड के प्रभाव से विश्वामित्र के उस घोर आग्नेयास्त्र को निवारण कर दिया, तब कुशिकनन्दन कुपित होकर वारुण, ऐन्द्र, पाशुपत, एषीक, मानव, मोहन, गोधर्व, स्वापन, जृंभण, सन्तापन विलापन, शोषण, दारुण, पिनाक, दंडास्त्र, पैशाचास्त्र, क्रौञ्चास्त्र, धर्मचक्र, कालचक्र, विष्णुचक्र, वायव्य, मथन, हयशिर, कंकाल, मुसल, विद्याधर महाप्रस्त्र और कालास्त्र, कपाल, कंकण, त्रिसूल आदि अनेक अस्त्र को विश्वामित्रजी वसिष्ठजी के ऊपर छोड़े, उन अस्त्रों को मुनिवर वसिष्ठजी के ऊपर गिरते देखकर देवगण विस्मित होगये परन्तु ब्रह्माजी के पुत्र वसिष्ठजी अपने दंडके प्रभावसे इनसब अस्त्रों का संहार कर दिये ? अर्थात् केवल ब्रह्मदण्डनेही विश्वामित्र के संपूर्ण अस्त्रों को ग्रास करलिये विश्वामित्र अपने सकल अस्त्रों को व्यर्थ देखकर गाधिनन्द ने ब्रह्मास्त्र को छोड़ा, उस अस्त्र को प्रयोग करते देखकर देवगण शंकित हो गये और ब्रह्मास्त्र के डरसे तीनों लोक कांपने लगे, हेरामचन्द्रजी ! मुनिवर वसिष्ठजी ब्रह्म तेजोमीय ब्रह्मदण्ड से दारुण ब्रह्मास्त्र को व्यर्थ करदिया, ब्रह्मदंडके प्रभावसे महात्मा वसिष्ठजीकी मूर्ति भयानक हो गई, और महर्षि वसिष्ठजी के रोमसे सूर्य के किरण के समान चिनगारियां निकलने लगी, और बसिष्ठजी के हाथ से ब्रह्मदंड धूमरहित प्रलय कालकी अग्नि की नाईं प्रज्वलित हो उठा मानो संसार को भक्षण करने के लिये दूसरामय दंड हो गया । तब ऋषि मुनि देवता और गंधर्व आदि आकर वसिष्ठजी की स्तुति करने लगे, हे ब्रह्माजी के पुत्र वसिष्ठजी आप अपने अमोघ ब्रह्मतेज को अपनी महिमा से अपने में धारण करो,हेमहात्मन ! अपने महाबली विश्वामित्र को भली भांति जीत लिया है, हे द्विजराज ! आपका बल अपरिमेय है, आपकी कृपासे सबलोग निश्चिन्त हो गये देवगणकी प्रार्थना से परन्तप ! वसिष्ठ जीने क्रोधको त्यागकर शान्त भाव धारण किया विश्वाहारमान हो

कर लंबी सांस लेकर बोले, क्षत्रिय बलको धिक्कार है ब्रह्मबल ही प्रकृत्त बल है एकमात्र ब्रह्मदंड के प्रभाव से मेरे सब अस्त्र शस्त्र विफल हो गये, अब मैं जितेन्द्रिय होकर ब्रह्मत्व प्राप्त करने के लिये स्थिर होकर घोरतपस्या करूंगा, हे रामचन्द्र ! महाराज विश्वामित्र इस प्रकार कह कर अस्त्र शस्त्रों को छोड़कर ब्रह्मत्व प्राप्त करने के लिये बनमें चले गये ।

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे षष्टपंचाशः सर्गः ॥५६॥

इसके उपरान्त महामुनि बिश्वामित्रजी मुनिवर श्रीवसिष्ठजी के साथ बैर होने के कारण मनमें अपनी हार समझ कर लज्जित हो अपनी स्त्री के सहित दक्षिण दिशामें जाकर घोर तप करने लगे, और फल मूल भोजन करके कठिन तपस्या करने लगे तपसाधन कालमें विश्वामित्र जी वसिष्ठ के प्रतिस्पर्धा करके यह संकल्प किया कि प्रकृति जनकी दुर्लभ ब्रह्मर्षि पदको प्राप्त करेंगे । उस तपस्याकाल में विश्वामित्र को चार पुत्र हुये हविष्यन्द, मधुष्यन्द, दृढनेत्र, और महारथ, ये उन पुत्रों के नाम थे, इस भांति हजार वर्ष पर्यन्त तपस्या करते रहे, तब जगतके पितामह ब्रह्माजी तपोधन विश्वामित्रजी के निकट आकर बोले, हे कुशिकनन्दन ! राजर्षि ! तुमने तपके प्रभाव से त्रिलोकको जीत लिया अब तुम राजर्षिके नामसे विख्यात होगे, यह कह कर ब्रह्माजी देवताओं के सहित चले गये, ब्रह्माजीके जाने पर बिश्वामित्रजी लाजके मारे नीचे को मुख कर लिया, और महा-दुःखी होकर क्रोधपूर्वक कहने लगे कि इतनी घोर तपस्या करने पर भी मैं राजर्षि ही बना रहा, देवता और ऋषिगण मुझे राजर्षि कहेंगे, अभी मैं तपस्या से सिद्धकाम नहीं हुआ यह मनमें निश्चय करके फिर घोर तप करने लगे, हेरामजी ! जब धर्मात्मा विश्वामित्रजी को तप करते बहुत दिन बीत गये, उसी समय में सत्यवादी जितेन्द्रिय महाराज इक्ष्वाकु के वंशमें त्रिशंकुनाम राजा हुए, उनको ऐसी भावना हुई की हम ऐसा यज्ञकरें कि जिससे शरीर सहित स्वर्गको चले जावें,

यह सोचकर मुनिवर वसिष्ठजी को बुलाये और अपने मनकी हाल सब उनसे कह सुनाई, तपस्वी वसिष्ठजीने राजाके मनकी हाल सुन कर उत्तर दिये कि ऐसा नहीं हो सकता, वसिष्ठ जी से इस प्रकार उत्तर पाकर, उनके वचनको न मान कर त्रिशंकु दक्षिण दिशाको चले गये वहां वसिष्ठ के पुत्र बैठकर तपस्या कर रहे थे, उन लोगों के शरीरसे सैकड़ों सूर्यके समान प्रकाश निकल रहा है, और वे वसिष्ठ के पुत्र घोर तपस्या में निरत हैं, राजा त्रिशंकु उन गुरु पुत्रों को देखकर यथाक्रम से प्रणाम किया और लज्जा से शिर नीचा करके हाथ जोड़कर दीर्घतपा वसिष्ठजीके पुत्रों से बोले, हे गुरुपुत्र ! आप शरण देने वालों में समर्थ हैं इस कारण मैं आपकी शरण आया हूं, मैंने यज्ञकी कामना से गुरुदेव वसिष्ठजी को व्रती होने के लिये प्रार्थना किये थे, सो उन्होंने स्वीकार नहीं किया मैं आप सब गुरुपुत्रों की प्रसन्नता लिये गुरु प्रणाम करता हूं, शिर नवाकर आप सब तपस्या में स्थित पुत्रों से प्रार्थना करता हूं कि आप लोग कृपा करके मेरे सिद्धि के लिये समाहित से होकर आप लोग यज्ञ कराइये जिससे मैं शरीर सहित स्वर्ग को चला जाऊँ, परमगुरु मुनिवर वसिष्टजी के जबाब देने से मेरी तो अब कोई गति नहीं, तो अब आपको सिवाय किसके शरण जाऊं, इक्ष्वाकुवंश के गुरु ही परमगति हैं सो गुरु जी के अभाव में आपही हमारे परम देवता हैं ।

इति बाल्मीकिये आदिकाण्डे सप्तपंचाशः सर्गः ॥ ५७ ॥

इसके उपरान्त राजा त्रिशंकु के वचन को सुनकर ऋषि पुत्र उनसे क्रोध पूर्वक बोले, हे मूढ ! जब सत्यवादी पिता वसिष्टजी ने जो तुम्हारे परम गति हैं, जब उन्होंने तुम्हारे यज्ञ को स्वीकार नहीं किया तब तुम उनको अपमानिकरले किस प्रकार दूसरी शाखा का आश्रय लेना चाहते हो, इक्ष्वाकुवंशियों के गुरु ही परम गति होते हैं, वह अपने गुरु वचन का कभी अनादर नहीं करते,जिसको हमारे पिता

वसिष्ट जी नहीं कर सकते, तो उस यज्ञ को हम लोग किस प्रकार साधन करेंगे, तुम अपनी अज्ञानता से वंचित्त न होकर अपने स्थान को लौट जाओ, हे राजन् ! भगवान् वसिष्ठजी तीनों लोक को यज्ञ क ाने में समर्थ हैं, और हम लोग उनके पुत्र होकर किस प्रकार पिता के वचन का प्रत्याख्यान करें। ऋषि पुत्रों के क्रोध पूर्ण वाक्यको सुनकर राजात्रिशंकु फिर बोले, हे तापस ! आपके पिता ने हमें उत्तर दे दिया और आपने भी वही किया, तो अब मैं और किसी के पास जाकरयज्ञ कराऊँगा, राजा के इस प्रकार ठारे बचन को सुनकर क्रोधपूर्वक ऋषि पुत्रों ने शाप दिया कि तू चाण्डाल हो जाओ, यह शाप देकर वे सओं महात्मा तपस्या करने लगे, इसके उपरान्त रात्रिके बाद प्रातःकाल त्रिशंकु चाण्डाल हो गये, उनकी शरीर नीलवर्ण, तथानीले वस्त्र को पहने ध्वस्तकेश और चिता की भस्म व मृतकों से छिन्न भिन्न वस्त्र को धारण किये जितने गहने थे सबलोहमय हो गये, राजाकी ऐसी दशा देखकर मन्त्रियोंने उन्हें परित्याग कर दिया, हे रामचन्द्र ! अनुगत पुरवासी राजाकी भयावनी मूर्ति देख कर उनको छोड़कर चले गये, तब राजा त्रिशंकु चाण्डाल के स्वरूप में इधर उधर घूमने लगे, और रात दिन इस प्रकार की चिन्ता करते हुए एक दिन विश्वामित्रजी के शरण में गये, विश्वामित्रजी विफल मनोरथ त्रिशंकुको देखने लगे, हे रामचन्द्र ! चंडाल रूप में राजा को देखकर विश्वामित्र मुनिके मन में दया का संचार हुआ और महातेजस्वी परमधार्मिक विश्वामित्र जी राजा से बोले, हे चाण्डाल स्वरूपराजन् ! तुम यहां कैसे आये मेरे आश्रम में आनेका कारण कहो, मुझे तो जान पड़ता है कि तुम किसी कि तुम किसी के शापसे चाण्डाल होगये हो, विश्वामित्र जीके कारुण्य बचन को सुनकर चाण्डाल स्वरूपी राजा त्रिशंकु वाक्य विशारद विश्वामित्र जीसे हाथ जोड़कर बोले, कि गुरू वसिष्ठ जी और उनके सो पुत्रोंने हमारी यह दशाकी है, हे सौम्य ! हे प्रिय दर्शन ! मैंने शरीर सहित

स्वर्ग में जानेकी अभिलाषा से यज्ञ करने को गुरुजी तथा उनके पुत्रों से कहा, किन्तु प्रार्थना को पूरीकरना तो दूर रहा उन्होंने शाप से हमारी यह अवस्था की है, मैंने एक सौ यज्ञको पूरा करचुकाहूं परन्तु इस समय उनके फल से वंचित होगया, मैंने पहिले कभी मिथ्या नहीं कहा, और न अब कहता हूं महा दुःख प्राप्त होने पर भी मैंने सत्य और धर्म को नहीं छोड़ा हे क्षत्र धर्म मेरा साक्षी है, इसके अतिरिक्त धर्मानुसार प्रजापालन किया है, मैंने महात्मा और गुरुजनों को सदा सदा चारसे सन्तुष्ट किया है, मेरी वासना धर्मानुसार ही यज्ञ करने को थी, हे मुनीश्वर ! मेरे दुर्भाग्य के कारण गुरु देव भी मुझसे प्रसन्न हो गये हैं, सकल प्रकार के कार्यों में दैवही प्रधान है पौरुषतो केवल सहायक मात्र है, दैवही सबको अपने अधीन रखता है, हे भगवान् ! दैवही सब के लिये परम गति हैं, इस समय मेरा भाग्य बिगड़ा हुआ है, आप मेरे ऊपर कृपा कीजिये; हे तपोधन ! मैं जानता हूं कि भाग्य सेही मेरे इस शुभकार्य में बाधा पड़ी है अब आप के सिवाय मैं और किसी की शरण में जाऊँ, मुझे और कोई शरण देनेवाला नहीं है, हे प्रभो ! आपही अपनी सामर्थ्य से मेरे दैवगति को रोकने में समर्थ हैं ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे अष्टपंचशःसर्गः ॥ ५८ ॥

कुशिकनन्दन विश्वामित्र जी ऐसे बचन को सुनकर दया पूर्वक साक्षात् चाण्डाल रूपी रूपी राजा त्रिशंकुसे मधुर बचन बोले, हेवत्स ! ईश्वाकुके वंशमें उत्पन्न भये तुम भलेही शरण में आये मैं जानता हूं कि तुम धार्मिक हो इसी कारण से तुम को आश्रय देता हूं हे राजन् ! तुम कुछ मत डरो मैं तुम्हारी यज्ञकी सहायता करने के लिये, पुण्य शील ऋषियों को निमन्त्रण दूंगा, उनको लेकर तुम अपना अभिष्ट यज्ञपूर्ण कर सकोगे, यद्यपि गुरु पुत्रों के शापसे तुम्हारी शरीर चाण्डाल का हो गया है तौ भी तुम इसी शरीर से स्वर्ग को चले जाओगे, अब तुम शरण देने वाले विश्वामित्र के शरण आये हो,

अब जानलो कि स्वर्ग में पहुँच ही गये, हे वत्स अब तुम स्वर्ग को अपने हाथ आया जानो, यह कहकर धार्मिक महातेजस्वी विश्वामित्रजी अपने पुत्रों को यज्ञके आयोजन करने की आज्ञा दिये फिर विश्वामित्र जी अपने शिष्यों को बुलाकर कहा, मेरी आज्ञा से पुत्रों के वसिष्ट आदि ऋषियों को ले आओ, इसके अतिरिक्त शिष्य और सहृदों के सहित बहुत वेद शास्त्र को जानने वाले ऋत्विज और पुरोहितों को निमन्त्रण देकर बुलाना, यदि कोई मेरे कहने का अपमान करे तो उनके अपमान के बचन की मुझ से ठीक ठीक कह देना। विश्वामित्रजी की आज्ञासे सब शिष्यगण चारो ओर को चले गये। और अनेक देशोंसे ब्रह्मवादी मुनिवर यज्ञस्थलमें आने लगे और विश्वामित्र के शिष्यगण भी अति तेजस्वी मुनिके पास लौट आये, और सब ऋषिमुनियों के बचन को सुनाकर विश्वामित्रजी से बोले, कि सब देशों के ब्राह्मण आपका नाम सुनकर यज्ञमें आने को सम्मत हुए, केवल महादेव नामक एकब्राह्मण और वसिष्ठ के सहित वसिष्ठ पुत्र इस यज्ञमें नहीं आना चाहते और उन्होंने क्रोधित होकर हमसे जो जो वचन कहे हैं सोसो हेमुनिश्रेष्ठ सुनिये, जिसयज्ञ का स्वामीतो चाण्डाल और यज्ञ कराने वाला क्षत्रिय, उस सभामें देवाता ऋषि किस प्रकार यज्ञका भाग ग्रहण करेंगे और महात्मा ब्राह्मणगण कैसे उस चाण्डालका छुआ हुआ उस यज्ञमें भोजन करेंगे, और देखेंगी कि यज्ञ कर्ता किस प्रकार विश्वामित्र की सहायता से स्वर्गको चला जायगा, यह वचन उन्होंने बड़े बड़े लाल लाल नेत्र करनिष्ठुरता से कहे हैं, हे विश्वामित्रजी ! महोदय और वसिष्ठ के पुत्रों ने यह गर्वीले वचन आपको कहे हैं, उन अपने शिष्यों के वचन को सुनकर विश्वामित्र भी क्रोधपूर्वक बोले, मैं कठोर तपस्या कर रहाहूं, आजतक कोई पापकर्म नहीं किया इसपर भी जो मुझे बुरा कहते हैं और मुझ से घृणाकरते हैं तो वहदरात्मा वसिष्ठ के पुत्रलोग भस्महो जावें और कालके पाशमें बंधे हुये यमपुरको गमनकरेंगे, फिरसात सौ जन्मतक कफन कसोठी

कर काल व्यतीत करेंगे और कुत्तेका मांस भोजन करके हम कह लावेंगे वनिर्धन होंगे उनको विकृत और विरूपभावसे विचरण करना होगा, और जो महोदय ब्राह्मण ने मुझे दोष दिया है उसके बदले वह निषाद जातिहोगा, और प्राणियों की हिंसा करेगा, बहुत कालतक मेरे क्रोधसे दुःखभोगेगा यह कहकर महातपस्वी विश्वामित्रजी ऋषियों के बीचमें बैठे चुप रहे ।

इति वाल्मीकिये आदि काण्डे एकोनषष्ठितमसर्गः ॥ ५९ ॥

इसके उपरान्त महातपस्वी विश्वामित्र जी महोदय और वसिष्ठ के पुत्रों को शापदेकर और बलसे निहत जानकर ऋषियों के सामने बोले, ईक्ष्वाकुवंशीयराजा त्रिशंकुपरम धार्मिन् और अतिशय दाता हमारे शरण गत हुए हैं अपने शरीर सहित स्वर्गजानेकी इच्छा करते हैं जिससे इनकामनोभिलाषपूर्णहोजाय ऐसायज्ञ आपमे रे साथ कराइये विश्वामित्र जीके इसप्रकार वचन को सुनकर धर्मज्ञऋषि तत्काल धर्मसंयुक्त वचन आपस में कहने लगे, हे महर्षि गण ! यह कौशिक मुनि महा क्रोधी हैं इस समय जो यह कहैं सो करने में बिलम्ब न करो क्योंकि यह अग्नि के समान हैं, इनका कहना न करने से यह अवश्य शाप देंगे, इस कारण ऐसे यज्ञमें प्रवृत्त होओ, जिससे विश्वामित्र मुनिके तेजसे त्रिशंकु शरीर सहित स्वर्ग को जावे, इस प्रकार महर्षिगण आपस में सम्मति करके यज्ञ को आरंभ किया और यज्ञ की क्रिया करने लगे, उस यज्ञ के याजक विश्वामित्र, और वेद को जानने वाले ब्राह्मणगण ऋत्विज हुए, यज्ञ के समस्त कार्य यथा विधि से निर्वाहित होने लगे, कुछ काल बीत जानेपर तपस्वी विश्वामित्र जी यज्ञ भाग ग्रहण करने के लिये देवताओं का आह्वान किया परन्तु कोई देवता यज्ञ भाग ग्रहण करने को नहीं आये, तबतो राजर्षि विश्वामित्र जी क्रोधित हो सुवाको उठा लिये और त्रिशंकु से बोले, हे राजन् ! जो मैंने तपस्या से प्राप्त किया है उस तपोबल को देखो, मैं अपने तपके प्रभावसे तुम्हें शरीर सहित स्वर्गको पहुँचा-

ऊँगा, हे राजन्! यद्यपि शरीर सहित स्वर्गमें जाना सहज नहीं है किन्तु मेरी तपस्या के संचित फल के प्रभाव से तुम स्वर्ग को जाओ राजर्षि विश्वामित्र को इस प्रकार कहने पर ऋषियों के सामने शरीर सहित राजा त्रिशंकु स्वर्गको चले गये, हे रामचन्द्र! देव लोक के राजा इन्द्र त्रिशंकु को स्वर्ग में पहुँचते देखकर देवताओं के सहित राजा से यह बोले, हे राजन्! तुम स्वर्ग में रहने योग्य नहीं हो इस कारण फिर मृत्यु लोकको जाओ। हे मूर्ख! गुरु वसिष्ठ जीने तुम्हें शाप दिया है इसलिये तुम नीचे को मुँह करके गिरो, इन्द्रको इस प्रकार कहते ही त्रिशंकु नीचे मुँह होकर गिरे, गिरते समय तपस्वी विश्वामित्रजी को देखकर त्राहि त्राहि शब्द करने लगे तब विश्वामित्रजी त्रिशंकु के दुख के बचन को सुनकर दूसरे प्रजापति के समान ऋषियों के बीच में बैठे विश्वामित्रजी वहीं रहो वहीं रहो यह कह कर गिरते हुए त्रिशंकु को अकाश मार्ग में रोक दिये, विश्वामित्र के प्रभाव से त्रिशंकु सिर को नीचा किये लटके रहे, तब तक महापराक्रमी कौशिकमुनि क्रोध से मूर्छित दक्षिण दिशा में नये सप्तर्षि बनाये और नये नये नक्षत्रों को बनाते हुए कहा या तो मैं दूसरा इन्द्र ही बनउँगा अथवा स्वर्ग लोक इन्द्र से शून्य करूंगा यह कह क्रोध से देवताओं की सृष्टि करने लगे उस समय सुरासुर और ऋषिगण व्याकुल भाव से विश्वामित्रजी के निकट आकर विनय पूर्वक बोले, हे महाभाग! इन राजात्रिशंकु को ब्रह्म शाप लगा है हे तपोधन! इस कारण शरीर के सहित स्वर्ग में इनका जाना नहीं हो सकता। विश्वामित्र जी देवताओं के इस प्रकार बचन को सुनकर देवताओंसे विश्वामित्रजी बोले, हे देवगण राजा त्रिशंकु को स्वर्ग में भेजने की प्रतिज्ञा कर चुका हूँ उस की हुई प्रतिज्ञा को मैं व्यर्थ नहीं करना चाहते, इस समय या तो शरीर सहित त्रिशंकु स्वर्ग को जायें नहीं तो जब तक पृथ्वी आकाश तारागण सूर्य चन्द्र रहैं तब तक इनके संग रहने के लिये हमारे बनाये नक्षत्रादि वर्त्तमान रहैं, विश्वामित्र के इस प्रकार

वचनको सुनकर देवगण बोले, हे मुनिश्वर! आपका कहना मिथ्या नहीं होगा यह सब आपके बनाये नक्षत्र इसी प्रकार वर्तमान रहेंगे, हे मुनि श्रेष्ठ! यह सब नक्षत्र आकाश में ज्योतिष चक्र की गति के बाहर प्रकाशित रहैं देवताओं की नाईं त्रिशंकु नीचे को मुख करके यहीं स्थिति करेंगें, और आपके बनाये नक्षत्रगण इन श्रेष्ठ राजा के अनुगामी होंगे यह कहकर देवताओं ने विश्वामित्र को प्रसन्न किया, देवताओं के कथनानुसार विश्वामित्रजी प्रसन्न होगये, हे रामचन्द्र! त्रिशंकु के यज्ञ को समापन करके देवता महर्षि आदि सब अपने अपने स्थान को चले गये।

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे षष्टितमसर्गः ॥६०॥

इतनी कथा सुनाकर शतानन्दजी रामचन्द्रजी से बोले हे श्रीरामचन्द्र! यज्ञ में आये ऋषियों को अपने स्थानपर चले जाने से महातेजस्वी विश्वामित्रजी सब वनवासियों से कहने लगे इस दक्षिण दिशा में रहने से व तप करने से बहुत विघ्न हुए हैं इसलिये मैं और किसी दिशा में जाकर तप करना मुझे अच्छा मालूम पड़ता है इस कारण मैं दूसरी दिशा में जाकर तपस्या करूंगा। सुविस्तीर्ण सुखदायक पश्चिम दिशा में जब बड़ा मनोहर बन है वहां पुष्कर के निकट हम सुख से तपस्या करेगें। वनवासियों से यह कहकर महातेजस्वी विश्वामित्रजी पुष्कर को चले गये और वहां फल मूल भोजन करके कठोर तपस्या करने लगे, उसी समय अयोध्यापुरी के राजा अम्बरीष एक यज्ञ का अनुष्ठान करने लगे, तब इन्द्र ने उनके यज्ञका पशु हरणकर लिया, तब यज्ञका पशु हर जाने से ब्राह्मणों ने राजा से कहा हे राजन्! जो पशु यज्ञ के लिये आया था, वह आपके रक्षा न करने ही से हरण कियागया है, हे पुरुषश्रेष्ठ! जो राजा रक्षा करने में असक्त हैं। वह सब प्रकार के दोषों में लिप्त हैं और वह जल्दी नाश को प्राप्त हो जाते हैं जिससे यज्ञ समाप्त होने के पहिले कोई पशु लाइये अथवा कोई मनुष्य ही गो धन देकर लाइये जिससे इसका प्रायश्चित हो जावे

पुरोहितों के इस प्रकार बचन को सुनकर राजा हजार गौ के बदले में यज्ञके पशु खोजने लगे । क्रम से वह राजा अनेक देश और जिला तथा नगरों में और वन में और तपस्वियों के पुण्य रूप आश्रम में खोजने लगे ! हे रामचन्द्र ? अन्त में भृगुतुङ्ग नामक पर्वत पर ऋषी मुनिको तपस्या करते देखा, कि स्त्रीपुत्र सहित विराजमान हैं, बड़ेप्रतापी राजर्षि अम्बरीष तपस्याके प्रभावसे प्रदीप्त ब्रह्मर्षि ऋषीक को प्रणाम और प्रसन्न करके बोले हे मुनि ! आप सब प्रकारसे कुशल तो हैं ? मैं मूल्य के स्वरूप दक्षिणामें सौहजार गाये देनेको प्रस्तुत हूं आप इसके बदले में अपने पुत्रको देसकते हैं ? हेमहाभाग ! यदि आप हमारा कहना मानले तो बड़ाही अनुग्रह मेरे ऊपर करें मैं यज्ञके योग्य पशुको सब जगह खोजने पर भी कहीं नहीं पाया, आप दक्षिणा लेकर अपना एक पुत्र मुझे देदीजिये, यह सुनकर महर्षि ऋषीकबोले, हेराजन् ! मैं अपने बड़े बेटेको नहीं बेच सकता, यह ऋषीकजी से वचन को सुनकर उनकी स्त्री बोली, हेपुरुषश्रेष्ठ ! हमारे स्वामी भार्गव ज्येष्ठ पुत्रको नहीं बेचा चाहते तो सबसे छोटा शुनक मुझे प्यारा है, अतएव मैं छोटे पुत्रको न दूंगी, हेरामचन्द्र ! मुनि और उनकी स्त्रीको इस प्रकार कहने पर मझिले पुत्र शुनः शेफ स्वयं बोल उठे, महाराज ! पिता और माता ज्येष्ठ तथा कनिष्ठको नहीं बेंचना चाहते इसलिये मैं विकने के योग्य हूं मुझको ले चलो, ब्रह्मवादी बालक के वचन को सुनकर महाराज अम्बरीष करोड़ रत्न लक्षगौ बहुतसा सुवर्ण ब्राह्मणको देकर राजा प्रसन्न मनसे शुनःशेफको मोल लेकर रथपर ब्राह्मण कुमार को बैठाकर अपने नगर को चले ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे एकषष्ठीतमः सर्गः ॥ ६१ ॥

हे रामचन्द्र ! यशस्वी विश्वामित्रजी शुनःशेफ कोलेकर मध्यान्ह समयमें पुष्कर तीर्थमें जहां पहिले से विश्वामित्रजी तपस्या कररहे थे, वहां पहुंचे, पवित्र और मनोहर उसतीर्थकी शोभाको देखकर विश्राम करने लगे, इतनेम ब्रह्मकुमार शुनःशेफने प्यास और थकावट से व्यग्र

होकर विश्वामित्रजीकी गोदमें गिरपड़े और बोले, कि हमारे को पिता माता और बन्धु कोई नहीं है, हेमामाजी ! आप धर्मानुसार मेरी रक्षा कीजिये आपही सबको त्राणकर्ता हैं, हेप्रभो ! आप ऐसा उपाय कीजिये जिसमें, राजाके यज्ञकी पूर्ति हो जाये औरमैं तपस्या करके दीर्घायु होकर स्वर्ग लाभकर सकूँ, हेभगवन् ! मैं अनाथ हूं आप प्रसन्न मनसे मेरी रक्षा कीजिये, पिता जिस प्रकार पुत्रको पालन करता है वैसेही आप मुझे इस विपदसे उद्धार कीजिये, महातपस्वी विश्वामित्रजी शुनः शेफके वचन को सुनकर अनेक प्रकारसे धैर्य दिया और अपने पुत्रों से बोले, हेपुत्र ! परलोकमें मंगल कामना के लिये पिता पुत्रकी इच्छा करता है, अब तुम्हारे लिये वह पितृकार्य करने का समय आगया है देखो यह ऋषिका पुत्र मेरी शरण आया है, तुमलोग इसकी प्राणरक्षा करके मेरा प्रिय कार्य साधन करो, इस समय तुम राजा अम्बरीष के यज्ञ पशु हो कर अग्नि को तृप्तकरके बालक की प्राण रक्षा, और अम्बरीष का यज्ञ साधन सुरगणों की तृप्ति और मेरा वचन सत्य करो, हेरामचन्द्रजी ! पिता विश्वामित्र जीके वचन को सुनकर मधुच्छन्दा आदि विश्वामित्रजीके पुत्र हँसकर अभिमान से बोले, हे विभो! अपने पुत्रोंको परित्याग करके दूसरेकी प्राणरक्षा करने का आपको क्या प्रयोजन है, जैसे जीवों के ऊपर दया करके कुत्तेका मांस खाना हो वैसे ही यह अकार्य है, अपने पुत्रों के गर्वीले वचन को सुनकर वह विश्वामित्रजी क्रोधपूर्वक अपने पुत्रोंको शाप दिया, रे पापात्मा ! जो तुमने मेरे वचन का अपमान किया इसके बदले मैं तुझे शापदेता हूं कि वसिष्ठके पुत्रों के समान कुत्ते का मांस खाओ और मुष्टिक जाति होकर हजार वर्ष पर्यन्त पृथिवी में निवास करो, विश्वामित्रजी अपने चारो पुत्रों को इस प्रकार शापदेकर सब दुःखों को दूर करने वाली रक्षाको ग्रहण करके शोक पूर्वक शुनःशेफ से बोले, जिस समय तुम पवित्र पाशसे बांधे जाओगे और लाल माला और लाल चन्दन लगाया जाय तब वैष्णव खंभमें बंध कर वाणी से अग्नि की आराधना

करते रहना हे मुनिपुत्र ! मैं तुमको एक दिव्य मंत्र सिखलाये देता हूं, उस मंत्रको अम्बरीष के यज्ञ में अग्नि के सामने तुम पढ़ना उस मंत्र के प्रभाव से तुमारा कार्य सिद्ध होगा, ऋषिपुत्र शुनःशेफ बिश्वामित्र जीसे मंत्रको ग्रहण करके महाराज अम्बरीष के समीप आकर बोले, हे राजन् ! अब बिलम्ब करने का प्रयोजन नहीं है, आप मुझको लेचल कर यज्ञमें सफल कर्म हूजिये, राजा ऋषिपुत्र शुनःशेफ के बचन से सन्तुष्ट होकर अति शीघ्र अपने स्थान पर आये, और सभा सद्गणों की अनुमति पाकर शुनःशेफ को लालवस्त्र धारण कराके कुशकी रस्सी से खंभेमें बांधदिया उस समय मुनिकुमार खंभे में बंधकर शरण रहित होकर दिव्य वाणी से सुन्दर अर्थ से उपयुक्त वेद मन्त्रों से इन्द्र व उपेन्द्र की स्तुति करने लगा, इन्द्र व उपेन्द्र बालक की रहस्य स्तुति से प्रसन्न होकर दीर्घ जीवी होने का उसको बरदान दिया, इस प्रकार अंबरीषका यज्ञ पूरा हुआ, हेरामचन्द्र ! इन्द्रके प्रसाद से अंबरीष ने यज्ञ का फल पाया, और महात्मा बिश्वामित्रजी फिर पुष्कर क्षेत्रमें हजार वर्ष तक महा तप किया ॥

इति बाल्मीकिये आदिकाण्डे द्विषष्ठितमः सर्गः ॥ ६२ ॥

इतनी कथा सुनाकर शतानन्दजी बोले, हे रामचन्द्रजी ! इस प्रकार तपस्या करते हजार वर्ष पूर्ण होने पर महात्मा बिश्वामित्रजीने व्रत स्नान किया, उस समय ब्रह्माजी उनकी तपस्या का फल देनेको देवताओं सहित विश्वामित्रजी के निकट पुष्कर क्षेत्रमें आये, महा पराक्रमी ब्रह्माजी मधुर बचन से विश्वामित्राजी से बोले, हे मुने ! तुम अपने शुभकर्म के प्रभाव से ऋषि हुए यह कहकर देवताओं समेत ब्रह्माजी अन्तर्ध्यान हो गये और महा तेजस्वी विश्वामित्र जी फिर घोर तपकरने लगे, इनकी तपस्या के कुछ दिन बीतने पर मेनका अप्सरा पुष्कर क्षेत्रमें स्नान करने को आई। कुशिक नन्दन विश्वामित्र जी ! बिजली के समान चमकती हुई उस परम सुन्दरी अप्सरा को देखतेही कामके वश हो मुनिने मेनकासे कहा, हे अप्सरे ! तुम

हमारे आश्रम में रहो, हे सुन्दरी तुम कामसे मोहित मेरे ऊपर दया करो, ऋषिके ऐसे वचन को सुनकर चन्द्रमुखी मेनका वहां रहने लगी, अप्सरा के समागम से विश्वामित्रजी के तपस्या में महा विघ्न उपस्थित हुआ और मेनका के साथ भोग विलास करते मुनिको दश वर्ष बीतगये अप्सरा भी मुनिके आश्रम में सुखसे रहने लगी, कुछ काल तक अप्सरा के साथ विलास करने लगे, अकस्मात् एक दिन मुनि अत्यन्त लज्जा को प्राप्त होकर चिन्ताकरने लगे कि देवताओं के द्वारा मेरी सब तपस्या में विघ्न हुआ है देखो इस अप्सरा के संग दश वर्ष एक रात समान बीतगये और मैंने देवताओं के कर्तव्य को न जानकर कामके वश मोहित होनेसे ही यह विघ्न उपस्थित हुआ है, यह सोचकर दुःखित होगए, तब मुनी जीकी शोकित अवस्थाको देखकर कांपती हुई अप्सरा मुनि जीके सामने हाथजोड़कर खड़ी हुई, विश्वामित्रजीने अप्सराको मधुर वचनों से सन्तोषदिया और मेनका को विदा किया । फिर विश्वामित्रजी उत्तर पर्वतकी ओर चले, महा यशस्वी विश्वामित्रजी वहां पहुंच कर कामको दमन करने के लिये कौशिकी के तीर कठिन तपस्या करने लगे, इस भांति तप करते करते हजार वर्ष बीतगये । हेरामचन्द्र ! उत्तरदिशामें विश्वामित्रजीके कठोर तपस्यासे देवगण भयभीत होगये और ऋषियों के साथ सम्मति कर ब्रह्माजीके पास जाकर बोले, कि हे ब्रह्माजी ! विश्वामित्रजी महर्षि होना चाहते हैं इसलिये उनकी प्रार्थना पूर्ण कीजिये,ब्रह्माजी देवताओं के वचन को सुनकर विश्वामित्रजीके समीप आये और मधुर वचन से बोले, मैं तुम्हारे उग्र तपस्या से प्रसन्न हूं,हेकौशिक । मैंने तुमको महर्षित्वप्रदान किया, यह सुनकर तपोधन विश्वामित्र जी हाथ जोड़कर नम्रता से ब्रह्माजी से बोले, हमको तो अपने शुभ कर्मों सेही ब्रह्मशब्दही अभीष्ट है, सो आपने ब्रह्मर्षि नहीं कहा, इस कारण मैंने जाना कि मैं अभीतक जितेन्द्रिय नहीं हुआहूं तब ब्रह्माजी ने कहा कि,हां अभीतक तुम जितेन्द्रिय नहीं हुएहो, परन्तु हेमुनिशार्दुल !

क्लेश करने से जितेन्द्रिय हो सकते हो, यह कह ब्रह्माजी अन्तर्ध्यान हो गये, सब देवता भी जहां के तहां चले गये, देवताओं सहित ब्रह्माजी को चले जानेपर महामुनि बिश्वामित्रजी ऊपर को बाँहकर अवलम्ब शून्य पंच तपा हो वायु भोजन करके तप करने लगे वर्षा कालमें मैदान में रहकर शीत काल में दिन रात पानी में खड़े रह कर इस प्रकार घोर तप करते करते हजार वर्ष बीत गये। महर्षि को महातप करते देख इन्द्रादि देवता भय से कांपने लगे, तब इन्द्रने अपने कार्य साधन करने को सब देवताओं के साथ रंभाके पास जाकर कहाकि तुम हमारे उपकार के लिये बिश्वामित्रजी के कार्य में विघ्नकरो ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे त्रिषष्टतमः सर्गः॥ ६३ ॥

हे रंभे ! देवताओं का यह बड़ाभारी कार्य है तुम हिमालय पर्वत पर जाकर बिश्वामित्रजी को काम मोहित करके तपस्या से बिरत करो। हेरामचन्द्र ! जब इन्द्रने आप्सरासे यह बचन कहे तब वह अप्सरा लज्जित होकर हाथ जोड़ कर इन्द्र से बोली, हे इन्द्रदेव ! महामुनि बिश्वामित्रजी बड़े क्रोधी हैं, हे देवराज ! वह क्रोध करके निश्चय मुझे शाप देंगे, हे सुरनाथ मुझे इस कार्य करने में डर लगता है, रंभा यह वचन कहकर घबड़ा गई। तब उस घबड़ाई हुई रंभा से सहस्राक्ष बोले हे रंभा ! तुम मत डरो, मेरा बात सुनकरमेरा कहना मानो. मैं भी सुन्दर वृक्ष शोभित वसन्त काल में कोकिलस्वरूप कामदेव के सहित तेरे साथ रहूंगा, तुम अपने मनोहर रूपको अनेक प्रकार के हाव भाव से सम्पन्न होकर तपस्वी ऋषि बिश्वामित्र के अन्तः करण में बिकार को उत्पन्न करो, इन्द्रके बचन को सुनकर महासुन्दरी दिव्यरूप धारण करके अनेक हाव भाव से मुनि के आश्रम में पहुंची। तब मुनीन्द्र कलकंठ मधुर कोकिला का शब्द सुनने लगे, शब्द को सुनतेही प्रमुदित मनसे रंभाको देखा, इसके उपरान्त मनोहर संगीत व मनोहर गुंजार श्रवण करके मुनिके मन में सन्देह हुआ, तब बिश्वामित्रजी सुरराजको तपस्याकी विघ्नका

जड़ समझ कर क्रोध पूर्वक रंभाको शापदिया, हेपापाचारिणी ! ऋषि को मोहन करने के लिये आई हो इस कारण तू दश हजार वर्षतक शिला होकर रहैगी, फिर कोई महा तेजवान तपस्या के बलसे युक्त ब्राह्मण मेरे कोपसे शिलारूप तेरा उद्धार करेगा महामुनि विश्वामित्र जी अप्सरा को शाप देकर पीछे दुःखी हुए कि हमसे क्रोध न रुक सका, विश्वामित्रजीके दारुण शाप से रंभा शैल मयी हो गई यह देख कर कामदेव सहित इन्द्रदेव इस स्थान से अपने लोक को चले गये। इतनी कथा सुनाकर शतानन्द रामचन्द्रजी से बोले, हेरामचन्द्र ! महातपा कौशिक जी काम क्रोधको तपस्या का विघ्न जानकर इन्द्रियों को अपने वशमें न रखने से मनहीं मनमें अशान्ति भोगने लगे, फिर तपसिद्ध करने के लिये चिन्तित होकर सोचा कि अब किसी को शाप न देंगे और न क्रोध करैंगे अबसे जितेन्द्रिय हो देहको सुखा डालैंगे और हजारों वर्ष तक श्वास को रोकैंगे, जबतक तपस्याके प्रभाव से हम ब्रह्मत्व न पावैंगे तबतक श्वासको रोककर बहुत कालतक निराहारकठोर तप करैंगे, इस प्रकार हजार बर्ष तपस्या करने पर भी हमारे अंगक्षीण नहीं होंगे। विश्वामित्रजी यह कहकर हजार बर्षतक तपकरने की महादीक्षा में प्रवृत्त होकर प्रतिज्ञा पूर्वक कार्य करने लगे।

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे चतुः षष्ठितमः सर्गः ॥ ६४ ॥

इतनी कथा सुनाकर शतानन्दजी रामचन्द्रसे बोले, हेरामचन्द्र जी ! महा मुनि विश्वामित्रजी उत्तरदिशाको त्यागकरके पूर्व दिशामें आकर अति कठोर तप करने लगे। हजार बर्ष पर्यन्त मौनव्रत धारण करके असाध्य साधन करने के लिये परमदुष्कर तप किया, हजार वर्ष पूरा होने पर सूखे काष्ठके समान होगये, अनेक प्रकार के विघ्नको देखकर भी मुनिके मनमें क्रोध नहीं आया हेरामचन्द्रजी ! व्रतको समाप्त करके भोजन के लिये अन्नको विश्वामित्रजीने जैसेही बनाया वैसेही इन्द्र ब्राह्मण का वेष धारण करके सब अन्न महर्षि विश्वामित्र

जी से मागे महातपस्वी विश्वामित्रजी ने प्रसन्न होकर ब्राह्मणों को सब अन्न दे दिया और आप भूखे रह गये, पहले के समान फिर भी मौनव्रत को धारण किये और श्वास का लेना भी बन्दकर दिया,इस प्रकार फिर भी हजार वर्ष तक तपस्या किये,बिश्वामित्रजी को श्वास बन्द करने से तपस्या की अग्नि बढ़ने लगी, उस अग्नि के तेज से संसार जलने लगा तब देवता ऋषि गंधर्व पन्नग राक्षस आदि ब्रह्माजी के पास गये, और स्तुति करके ब्रह्माजी से बोले, हे सब लोक के पिता मह ! हम लोगों ने अनेक प्रकार से विश्वामित्रजी के तपस्या में विघ्न पहुंचाने का उद्योग किया परन्तु कोई उद्योग सफल नहीं हुआ, और उनके तपस्या का प्रभाव बढ़ रहा है, अब यदि आप उनका मनोवांछित बरदान नहीं देंगे तो उस अग्नि से आपकी चराचर सृष्टि नष्ट हो जावेगी। महातपा विश्वामित्रजी तीनों लोक को संहार करना चाहते हैं उनके तपस्या के प्रभाव से हम सब देवगण आकुलित हो रहे हैं, उनके भय से समुद्र और पर्वत पृथ्वी वायु आदि सभी कांप रहे हैं, हेभगवन् ! हमलोगों का दुःख छुड़ाइये। हे ब्रह्माजी ! उनके तेजके सामने सूर्य छिपगये हैं, जबतक महर्षि बिश्वामित्र जी अपने कालाग्नि के समान तेजसे सृष्टिका संहार न करें तबतक आप उनको प्रसन्न कीजिये, यह कहकर देवगण ब्रह्माजी को साथ ले विश्वामित्र मुनिके आश्रम में आये, बिश्वामित्रजी को तपस्या करते देखकर ब्रह्माजी बोले, मुनिश्वर मैं तुमसे प्रसन्न हूं, तुमने अपनी तपस्या के प्रभाव से ब्रह्मत्व प्राप्त कर लिया है, अब आजसे तुम ब्रह्मर्षि हो, हे ब्रह्मन् ! मैंने तुम्हें दीर्घ जीवन देवताओं के सहित प्रदान किया हे सौम्य ! अब तुम सुख पूर्वक जहां चाहो वहां चले जाओ, तब महर्षि विश्वामित्रजी देवताओं के सहित ब्रह्माजी के बचन को सुनकर बिश्वामित्रजी उठ कर ब्रह्माजी को साष्टाङ्ग दण्डवत किया और देवताओं को प्रणाम करके कहने लगे आज मेरी तपस्या पूरी हुई कि जो हमको ब्राह्मणता और बड़ी आयु मिली, अब यह उपाय करना चाहिये कि ओंकार व षट्कार व सब

वेद तथा समस्त विद्या जानने वालों में श्रेष्ठ वसिष्ठजी सब देवताओं के सहित ब्रह्मर्षि कह देवें, ऐसा न करने से फिर मैं तपस्या करूंगा, यह कह कर के आप सब चले जाइये, इसके उपरान्त देवताओं के अनुरोध से वसिष्ठजी प्रसन्न होकर विश्वामित्रजी को ब्रह्मर्षि कह कर अपने अपने स्थान को चले गये, धर्मात्मा महर्षि विश्वामित्रजी ने ब्राह्मणत्व लाभ करके यथा विधि से महा मुनि वसिष्ठजी की पूजा किये, और इस प्रकार पूर्ण काम होकर तपस्या में निरत हो कर महर्षि विश्वामित्रजी पृथिवी को प्रदक्षिणा करने लगे । इन माहात्मा महर्षि ने इस प्रकार ब्राह्मणत्व प्राप्त किया है, हे रामचन्द्र ! यह मुनियों में श्रेष्ठ हैं यह साक्षात् तपकी मूर्ति हैं धर्म स्वरूप हैं, महा मुनि श्रेष्ठ ब्राह्मण शतानन्दजी के बचन को सुनकर राम लक्ष्मणजी के सामने शतानन्दजी से विशेष परिचय पाकर महाराज जनक हाथ जोड़कर विश्वामित्रजी से बोले, हे मुनीश्वर ! आज मैं आपकी कृपासे धन्य व अनुगृहीत हुआ हूं, आपने जब रामलक्ष्मण सहित मेरे यज्ञ में आगमन किया है तबतो मैं आप के दर्शनमात्र से ही पवित्र हो गया, हेतपोधन ! आपके दर्शन के अनेक गुणों का आधार हो गया, हे ब्रह्मन् ! आपकी उग्र तपस्या का विषय विस्तार को सुनकर मैं बिस्मत सा हो गया यहां तक की रामलक्ष्मण व सभासद गण आपके गुणों को सुनकर मुग्ध हो गये हैं आपमें अपार तप अपार बल और अपार गुण हैं, हे मुनिजी ! जैसी आपमें तपस्या और बल है वैसे ही सब गुण भी आपमें विद्यमान हैं हे विभो ! आपके आश्चर्य युक्त गुणों की कथा को सुनकर मनकी उत्सुकता बढ़गइ है, हे प्रभो ! अब सायँकाल के समय में रवि मंडल लंवित हुआ है अब दैव क्रिया करने को समय हो गया कल प्रभात फिर आपका दर्शन करेंगे, अब आप सुख से विश्राम कीजीये और मुझे अपने कर्तव्य कर्म करने की अनुमति दीजिये, राजा के इस प्रकार बचन को सुनकर मिथिला पति जनक जी अपने सभा

सदों के सहित विश्वामित्रजी की प्रदक्षिणा किये, विश्वामित्रजी पूजा को स्वीकार करके राम लक्ष्मण के सहित अपने रहने के स्थान चले गये ।

इति बाल्मीकिये आदिकाण्डे पंचषष्ठितम सर्ग ॥ ६५ ॥

इसके उपरान्त महाराज जनक विमल प्रातःकाल होतेही प्रातः क्रिया समाप्त करके राम लक्ष्मण के सहित विश्वामित्र मुनि को बुला भेजा धर्मात्मा राजा जनक राम लक्ष्मण की पूजा करके विश्वामित्रजी से बोले, हे मुनि श्रेष्ठ ! हे तपोरूप ! मैं कौनसा कार्य करूं जिसमें आपका स्वागत हो, धर्मात्मा जनकजी के वाक्य को सुनकर वाक्य विशारद विश्वामित्रजी बोले, हे राजन् ! आपके लिये स्वस्ति हो यह दोनों कुमार क्षत्रिय शिरोमणी राजा दशरथजी के पुत्र हैं, इनकी जगत् में प्रसिद्धि है, यह दोनों कुमार उस धनुष को देखना चाहते हैं वह धनुष इनको दिखा दीजिये, केवल उसके दर्शन से ही इनका प्रभाव मालूम हो जायगा, और यह कृतकार्य हो चले जायंगे, विश्वामित्र के मुख से यह सुनकर जनकजी बोले, हे परन्तप ! जिस कारण यह धनुष मेरे यहां है उसका वृत्तान्त सुनिये हमारे पूर्व पुरुषों में महाराज देवरात निमिके ज्येष्ठ पुत्र हुए उनको भगवान शिवजी प्रसन्न हो कर यह धनुष धरोहर की भांति दिया था, जब रुद्र देवने दक्षका यज्ञ विध्वंस करने के लिये विजिगीषा क्रम से इसी धनुष को लेकर देवताओं से बोले, जब तुमने यज्ञ भाग को ग्रहण करने में पात्र मुझको प्राप्त यज्ञका भाग नहीं दिया तो इसी सुन्दर धनुष से किरीट मुकुट कुण्डल युक्त तुमारे शिर को काटूंगा हे मुनीश्वर ! देवलोग शंकरजी के बचन को सुनकर मलीन हो गये, और किसी प्रकार से शिवजी को प्रसन्न किया, देवताओं को बहुत सी स्तुति करने पर नीलकंठजी ने अपना क्रोध रोका, महादेवजी प्रसन्न होकर यह धनुष देवताओं को दे दिया, देवताओं ने दया करके धरोहर की भांति यह

धनुष हमारे पूर्व पुरुषों को दिया तबसे वह धनुष यहीं रहता है यह वही धनुष रत्न देवताओं के स्वामी शिवजी का है । हम यज्ञ करने के वास्ते यज्ञभूमि को हल से जोतते थे, कि हमारे हलके अग्र भाग से एक कन्या पृथ्वी से निकली, उसी कन्या का नाम सीता है, वह पृथ्वी से उत्पन्न कन्या मेरे यहां दिनों दिन बढ़ने लगी, अयोनिसंभवा वह कन्या को मेरे यहां बड़ी होने पर मैंने उस कन्या को वीर्य शुल्का कहकर यज्ञ किया है अर्थात् पराक्रम से इस कन्या की प्राप्ति होगी हे विश्वामित्रजी ! इस कन्या के साथ विवाह करने को बहुत से राजा आये परन्तु मैंने उस कन्या मांगने वाले राजाओं से कहा कि यह कन्या वीर्य शुल्का है वैसे किसी को नहीं दी जावैगी, सीताजी ने एकबार यह धनुष उठा लिया था, इस कारण मैंने प्रतिज्ञा किया कि जो कोई शिवजी का यह धनुष तोड़ैगा उसको ही मैं यह कन्या दे दूंगा, इस प्रकार की प्रतिज्ञा के समाचार को सुनकर देश देश के बड़े बड़े राजाओं ने आकर अपना अपना पराक्रम दिखाना चाहा कि इस कन्या के संग विवाह करैं परन्तु वह प्रण किसी से पूरा नहीं हुआ जब उन राजाओं को शिवजीका धनुष दिखाया तो उस धनुष को कोई उठा भी नहीं सकता, इसलिये हमने उन राजाओं को पराक्रम हीन जानकर उनको लौटा दिया, हे तपोधन ! हे विश्वामित्रजी ! उन राजाओं ने मुझसे तिरस्कृत होकर हमारे ऊपर उन लोगों ने बड़ा कोप किया, और अपनी अपनी सेना लेकर मिथिलापुरी को घेर लिया और कहने लगे कि बलात्कार से इस कन्या को ले जावेंगे, और क्रोध पूर्वक मिथिलापुरी पीड़ित करने लगे, एक वर्ष को पूरा होने पर मेरा सर्वस्व क्षय होने लगा, जब दुर्ग की रक्षा करने वाले सेना आदि हमारे पास नहीं रह गये तब मैं बहुत दुःखी होकर सब देवताओं के बलकी वृद्धि के लिये तपस्या किये और देवताओं को प्रसन्न किया, तब देवताओं से मुझे चतुरंगिनी सेना मिली, उस सेना से परास्त होकर सब राजा इधर उधर दिशाओं में

भाग गये, इस प्रकार वह बलहीन पामर राजगण अपने अपने मंत्रियों के सहित भाग गये, हे मुनि शार्दूल! तब से परम प्रकाशित धनुष यहां धरा है, हे मुनिश्वर! राम लक्ष्मणजीको दिखाये देते हैं, यदि यह शरासन को ग्रहण कर सकेंगे तो अपनी अयोनिजा कन्या जानकीजीका विवाह दशरथ के पुत्रके साथ कर दूंगा।

इति वाल्मीकि आदिकाण्डे षट्षष्टितमः सर्गः ॥ ६६ ॥

महामुनि विश्वामित्रजी जनकजी के बचन को सुनकर जनकजी से, बोले हे राजन्! रामचन्द्र को शिवका धनुष दिखाओ, राजर्षि जनकजी गंधमाला आदि से शोभित उस धनुष को लाने की मंत्रियों को आज्ञा दिये, महाराज जनक की आज्ञा को पाते ही मन्त्रिगण पुरी में प्रवेश करके उस धनुष को लेकर वे बड़े पराक्रमी चले, वह धनुष आठ पहियों के छकड़े पर मंजूषा [पेटी] में रक्खा था उसको पांच हजार बलवान वीर बड़ी कठिनाई से खींच लाते थे लोहमयी मंजूषा सहित उस धनुष को लेकर देवताओं की भांति जनकजी से मंत्रियों ने कहा, हे राजन्! इस श्रेष्ठ धनुष की पूजा सब देश के राजाओं ने की है, हे मिथिलापति! यदि धनुष को दिखाने के योग्य समझिये तो रामलक्ष्मण को दिखाइये। मंन्त्रियों के बचन को सुनकर जनकजी ने धनुष दिखाने के लिये हाथ जोड़कर विश्वामित्रजीसे बोले, हे विश्वामित्रजी! यह धनुष हमारे पूर्व पुरुषोंसे पूजित है, अब तक अनेक देश के राजा इस धनुष को देखने आये परन्तु कोई उठा भी न सके और इसकी पूजा करके चले गये, इस धनुष को देवता दैत्य राक्षस गन्धर्व किन्नर पन्नग उरग आदि कोई भी इसपर बाणको न चढ़ा सके, और इस धनुष की पूजा करके चले गये, फिर मनुष्यों की क्या गति है, हे मुनिन्द्र! यह वही धनुष आया है सो आप इन राज पुत्रों को दिखा दीजिये, जनकजीके बचन को सुनकर विश्वामित्रजी श्रीरामचन्द्र से बोले, वत्सराम तुम इस धनुष को देखो। विश्वामित्रजी की आज्ञानुसार रामचन्द्रजी

धनुष के निकट गये और मंजूषा में रखा हुआ धनुष को पेटी खोलकर देखने लगे और कहा कि, मैंने हाथों से इस दिव्य और श्रेष्ठ धनुष को स्पर्श किया और विश्वामित्रजी से बोले हे प्रभो ! अब आप बतलाइये कि, इसको उठाना व आकर्षण करना होगा ? यदि आप कहें तो मैं इसमें प्रयत्न करूं उस राजाजनक और मुनिन्द्र विश्वामित्रजी धनुष उठाने की अनुमती दे दी, रामचन्द्र जी अनुमती को पाकर लीला पूर्वक बीचसे पकड़कर धनुषको उठा लिया, हजारों लाखों मनुष्यों को देखते देखते श्रीरामचन्द्रने धनुष को आकर्षणकरके उसपर डोरी चढ़ाकर महाशयस्वी नरसिंह रामचन्द्र खींच कर धनुषको बीच में से तोड़ डाला।

कवित्त।

घोर महि उठत बहुवीर लटपटत सब सिन्धु संघटत जल बेल थल छूटिगो।
शेषफन फटत तलवास हा रटत वाराह बल घटत जुग डाढ़सो टूटिगो॥
दंत चट चटत महि शैल सुत छूटत दिग्दन्तिगन भट कुम्भथल कूटगो।
दैत्य लटि लूटत अभिमानते छुटत को दण्ड को टुटत ब्रह्माण्ड सो फूटगो॥

धनुषको टूटते ही वज्रनादकी नाईं घोर शब्द हुआ, पर्वतको फटने से पृथ्वी जैसे कंपित होती है वैसे ही धनुष के शब्द से पृथ्वी कांपने लगी, उस भीषण शब्दसे सभा में बैठे लोग मूर्छित हो गये, केवल राम लक्ष्मण जनक और विश्वामित्रजी खड़े रहे, इतने दिनों तक राजा जनकजी के मनमें जो दुःख था वह जाता रहा, राजाजनक विश्वामित्र जी से हाथ जोड़कर बोले हे मुनीश्वर ! दशरथ पुत्र रामचन्द्र इतने शक्ति सम्पन्न हैं, मैंने यह नहीं समझा था, श्रीरामजी का पराक्रम तर्क रहित और अचिन्तनीय है, हे विश्वामित्रजी ! अब मेरी यह इच्छा है। कि सीता के साथ श्रीरामजी का विवाह हो जावे और रामको स्वामी प्राप्त कर मेरी कन्यासे मेरे कुलकी प्रतिष्ठा हो हे कुशिकनन्दन ! सीता के विवाह के लिये मैंने जो प्रण किया था अब वह पूरा होगया, इसलिये अब मैं जानकी को रामके कर कमल में समर्पण करूंगा अब हे विश्वामित्रजी ! आप आज्ञा दीजिये तो मैं अपने मन्त्रिगण तथा

दूतों को रथपर चढ़ाकर अयोध्यापुरी भेजूं, वह मंत्रिगण श्रीराम जीको धनुषतोड़ने का वृत्तान्त व श्रीरामचन्द्रजी को सीता की प्राप्ति का समाचार दशरथ से कहैं और महाराज दशरथ को मेरे नगरमें ले आवें, विश्वामित्रजी जनक की प्रार्थना से सम्मत होकर एक पत्र लिखकर जनकजी को दिया, जनकजी विश्वामित्रजी के पत्र को अपने दूतों को देकर शीघ्रतापूर्वक महाराज दशरथ को बुला भेजा कि यह सब समाचार सुनाकर दशरथजी को बुला लाओ।

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे सप्तषष्ठितमः सर्गः ॥ ६७ ॥

महाराज जनक से भेजागया मंत्रि मंडल मार्गमें चलते चलते उनके रथके वाहन सब थकित होगये, तीनरात्रि टीककर वह दूत लोग आयोध्या पुरी में पहुंचे, राजमन्दिर में प्रवेश करके देखा कि वृद्ध महाराज दशरथ देवता के समान सिंहासन पर बैठे हैं, दूतगण महाराज दशरथ को देखतेही निर्भय होकर विनयावनत होकर मधुर वचन से बोले, हेमहाराज! उपाध्याय पुरोहित और अग्नि होत्रके सहित राजा जनक वारं वार स्नेह और कोमल वाणी से आपकी कुशलता पूछी है, हे महाराज! राजा जनकजी मिथिला पुरी के राजाने विश्वामित्र जीके और शतानन्द की सम्मति से आपको कहे हैं कि मैने यह प्रतिज्ञा कीथी कि जो धनुष तोड़ेगा वही सीता को बिवाहेगा, इस कारण अनेक देशोंके राजा वर्ग आकर यहां अपना अपना पराक्रम दिखाये, परन्तु अपने कार्य में सफल नहीं हुए, हेराजन्! हमारी कन्या को विश्वामित्र जीके साथ आये आपके पुत्र हमारी प्रतिज्ञा को पूराकिया, इस लिये हे महाबाहो! अबमैं इस समय महात्मा रामचन्द्र जीको सीता सम्प्रदान करके प्रतिज्ञा से उद्धार होने की इच्छा करताहूं, अब प्रार्थना है कि आप इस बिषय में अनुग्रह कीजिये, हे महाराज! पुरोहित उपाध्यायों को साथ लेकर राम लक्ष्मण को देखने के लिये चलिये, हेराजेन्द्र! मुझे कन्या के ऋणसे उद्धार कीजिये और प्रतिज्ञा पूरी कीजिये विशेषतः आप जनक पुरी

में चलकर अपने पुत्रों को देखिये, विश्वामित्रजीकी आज्ञा व पुरो हित शतानन्द के उपदेश से राजर्षि जनक आपको सन्देशा कहला भेजा है। दूतों से इस प्रकार का समाचार सुनकर महाराज दशरथजी परम प्रसन्न हुए, और उन्हों ने वसिष्ठ वामदेव और मंत्रियों से कहा कि कोसल्या नन्दन राम भाई लक्ष्मण के सहित विश्वामित्र जीके पास अति प्रयत्न से रक्षित होकर मिथिलापुरी में वास करते हैं महात्मा जनकजी रामचन्द्र जीके बल और पराक्रम का परिचय पाकर उन्हें अपनी कन्याको कृत संकल्प हुएहैं, यदि महात्मा राजा जनक से यह संबंध करना आप अच्छा समझते होंतो विलम्ब करने का कामनहीं है जल्दी वहां पहुँचना उचित है, राजादशरथ अपने मन्त्रियों के वातपर सम्मतहुए, राजाने भी प्रफुल्लमन से कलही मिथिलाको चलैंगे यह मंत्रियों से कहदिया, महाराज जनक के मन्त्रि गण रात्रिकालमें प्रमुदि मनसे परम आदर पूर्वक संपूर्ण गुणों से युक्त राज भवन में रहे ।

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे अष्टषष्ठितमः सर्ग ॥ ६८ ॥

इसके उपरान्त प्रातः काल होते ही महाराज दशरथ मंत्रि उपाध्याय पुरोहित और मित्र वर्ग से संयुक्त हो महाराज दशरथ सुमन्त्र को बुलाकर बोले, हे मन्त्रिन्! आज अभी से समस्त खजानची गण अनेक धनरत्न को लेकर आगे चलैं और हाथी घोड़ा रथ और पैदल सवार से संयुक्त चतुरंगिनी सेना शीघ्र तैयार होकर चलैं, और रथ गाड़ी छकड़े घोड़े आदि फुटकर भी चलें और वसिष्ठ वामदेव, कश्यप, कात्यायन, मार्कण्डेय आदि ऋषिगण सुन्दर सुन्दर पालकियों में चढ़कर हमारे आगे चलें, और मेरे लिये भी एक रथ तइयार करो क्योंकि राजा जनकजी के दूत शीघ्र चलने को कहते हैं, इस कारण विलम्ब न करना चाहिये राजाकी आज्ञासे सेना तइयार हुई ऋषिगण भी पीछे २ चलने लगे, दशरथजी चार दिन राहमें बिताकर जनक पुर में पहुंचे, दशरथजी के आगमनको सुनकर महाराज जनक प्रमुदित मनसे पूजा की सामग्री इकट्ठा करने लगे, आगे आकर राजा

की यथा विधि पूजा किये, और परमवृद्ध राजा दशरथजीसे मिलकर प्रसन्न मन राजा जनकजी प्रसन्न हो गये। और प्रीतिपूर्वकश्रेष्ठ दशरथजीसे पूछा कि हे राघव! आप मंगलसे तो हैं, आप कुशलसे तो आये, मेरे बड़े भाग्य हैं जो आपका आना यहां हुआ, अब पुत्रका विवाह कार्य पूर्ण करके आप परम प्रसन्न हूजिये, विशेष प्रशंसा तो मेरे भाग्य की यही है कि महा तेजवान् भगवान् बसिष्ठजी ने मुझपर कृपा किया है, जैसे देवताओं से संयुक्त इन्द्र के समान ब्राह्मणों से उपयुक्त वसिष्ठजी के आगमन से मेरे विघ्नविपत्त दूर हो गई और कुल पवित्र हो गया हे राधवेन्द्र! महाबली रामचन्द्रजी के सहित उपस्थित संबंध होने से मेरा भाग्य अवश्यही उदय को प्राप्त हुआ है। हे नरेन्द्र! इस यज्ञ के अन्तमें विवाह होना ऋषियों की सम्मत है, अयोध्यापति दशरथ मिथिलापति की यह बात सुनकर वाक्य विशारद दशरथजी जनकजी से कहने लगे कि, दान देना सब प्रकार से दाता के अधीन है, हे धर्मज्ञ! हेजनक! आपने जो कहा मैं बैसाही करूंगा, तब सत्यवादी राजा दशरथजी के धर्म युक्त बचन को सुनकर महाराज जनक अति विस्मित हो गये फिर सब मुनिगण के परस्पर के समागम से प्रीति युक्त होकर राजा दशरथ भी पुत्र प्रेम के वश होकर राम लक्ष्मण का मुख देखकर अतिशय शन्तुष्ठ हुए। और जनकजी का आदर सत्कार का सुखानुभव करके स्वच्छन्द निद्रा का अनुभव करने लगे व महातेजा जनकजी भी शास्त्र विदित यज्ञकार्य संपन्न करके कन्या बिवाह के उपयुक्त लौकिक क्रिया संपादन पूर्वक कुछ देर के लिये सो रहे॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे एकोन सप्ततितमःसर्गः॥६९॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल होने पर वाक्य पंडित जनकराज प्रातः क्रिया समाप्त करके महर्षियों के साथ पुरोहित शतानन्द से बोले, हे ब्रह्मन्! हमारे भाई परम धार्मिक महातेजस्वी परमविख्यात कुशध्वज सांकाश्य पुरीमें बसते हैं, वह सांकाश्य पुरी स्वर्गके तुल्य है, उस पुरी के बीच होकर इक्षुमती नदी बहरही, है, उस पुरीमें शत्रुओंको रोकनेके

लिये बड़ी बड़ी खाईयुक्त भीति आदि बनी हैं, और पुष्पक विमान की शोभाको धारण कियेहैं, हे शतानन्दजी! मेरे माता कुशध्वज यज्ञ के रक्षक हैं सो मेरी इच्छाके अनुसार विवाह में वह भी आवें, और परम पराक्रमी कुशध्वज परम प्रसन्नतासे इस यज्ञको मेरे साथ समाप्त करें, शतानन्दजी से यह कहनेपर कई एक कार्य कुशल दूत वहां उपस्थित हुये। जनकजी उनदूतोंसे कहे कि, तुमलोग मेरी आज्ञासे शीघ्रगामी घोड़ों पर चढ़कर कुशध्वजको लेआओ, जिस प्रकार देवदूत इन्द्रकी आज्ञासे विष्णुजीको आनयन करते हैं, महाराज जनकजी की आज्ञानुसार दूतलोग सांकश्य पुरीको चले, और कुशध्वजकी राजधानी में पहुंचे, कुशध्वज महाराज जनकजीके समाचारको सुनकर अपने हावभावसे मिथिलापुरी को पहुंचे। यहां आकर महाराज जनक तथा शतानन्द आदि पुरोहितों को देखकर यथायोग्य दण्डवत् प्रणाम किया, और कुशध्वज तथा जनक सुयोग्य आसन को ग्रहण करके अत्यन्त पराक्रमी दोनों भाइयों नें मन्त्रियों में श्रेष्ठ सुदामन को आज्ञा दिये कि, तुम महाराज दशरथ के पास जाकर मन्त्रियों समेत राघवश्रेष्ठ दशरथ को यहां लिवा लाइये, जनक के मंत्री सुदामन आज्ञा पातेही कुलवर्धक दशरथजी के पास आकर प्रणाम करके बोले, कि हेअयोध्याधिपति? उपाध्याय और पुरोहितों के सहित मिथिलापति जनकजी आपके दर्शनकी इच्छा करते हैं इस प्रकार वचन को सुनकर दशरथजी ऋषियों के और बन्धु बांधव तथा मन्त्रियों के सहित जनक की सभामें पहुंचे, वाक्य विशारद दशरथजी जनक के प्रति बोले, भगवन वसिष्ठ इक्ष्वाकु कुलके देवता हैं, मेरा सब कार्यों में जो कुछ वक्तव्य है उसको यह बता देंगे, यह मुनिवर वसिष्ठजी विश्वामित्रजी की सम्मत से तथा और ऋषियों समेत धर्मात्मा वसिष्ठ सब धर्म और कृत्य को यथा क्रमसे बतावेंगे, यह कह कर दशरथ जी चुप होगये। पुरोहित सहित विदेह नाथ से वसिष्ठजी बोले, हेराजन्! अव्यक्त ब्रह्मसे अविनाशी ब्रह्माजी की उत्पत्ति हुई, ब्रह्मा के पुत्र मरीचि

मरीचि के पुत्र कश्यप कश्यप के पुत्र विवस्वत विवस्वत को मनु हुए मनुको लोग प्रजापति भी कहते हैं, मनुके पुत्र इक्ष्वाकु, यही इक्ष्वाकु अयोध्या पुरी को बसाया है, इक्ष्वाकु के पुत्र श्रीमान कुक्षि कुक्षि के पुत्र विकुक्षि विकुक्षि के पुत्र प्रतापी वाण के पुत्र पराक्रमी अनरण्य अनरण्य के पुत्र पृथु उनके पुत्र त्रिशंकु त्रिशंकु के पुत्र धुन्धुमार धुन्धुमार के पुत्र युवनाश्व युवनाश्व के पुत्र महाप्रताप-शाली वपराक्रमी मान्धाता हुए मान्धाता के पुत्र सुसन्धि सुसान्धि को ध्रुवसंधि ध्रुवसंधि की और प्रसेनजित् नामक दो पुत्र हुए, ध्रुवसंधि के पुत्र भरत और भरत के पुत्र असित हुए, इस राजा के विरोधी शत्रु बड़े शूरवीर है हय, तालजंघ, और शशविन्दु आदि लड़ने को आये, राजा असित उन शत्रुओं से संग्राम में परास्त हो कर राज्य को छोड़कर अपनी दो रानियों समेत हिमालय पहाड़ पर चले गये वहां पहुंच कर तपस्या के द्वारा अपने शरीर को त्याग कर स्वर्ग को चले गये। राजा असित की दोनों स्त्रियां गर्भवती थी, उन दोनों रानियों में से एकने अपनी सौत के गर्भको नष्ट करने के लिये दूसरी के भोजन में विष मिला दिया, उन्हीं दिनों में उस पर्वतपर महर्षि च्यवन तपस्या करते थे, सो उन दोनों रानियों में से जिसे विष दिया गया था वह कमल नयनी देवता के समान तेजस्वी च्यवनजी के शरणागत हुई व पुत्र होने की इच्छा से मुनि के चरणों की बन्दना करके हाथ जोड़कर बैठगई, उनरानी का नाम कालिन्दी था, महर्षि च्यवन पुत्रकी इच्छा करने वाली रानी से प्रसन्न होकर बोले, हे मृगनयनी ! तुम्हारे गर्भ से एक पुत्र महाबलशाली व तेजवान् वीर्यवान् कीर्तिमान् और पवित्र गरल सहित जन्मेंगा, हेराज महर्षि तुम किसी प्रकार की चिन्ता मतकरो, पतिव्रता महारानी कालिन्दी च्यवनजी के चरणों को प्रणाम करके बिदा हुई और विधवा वस्थामें उस रानी के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न हुआ, सवतने गर्भ नष्ठ होने के लिये जो विष दिया

था सन्तान होनेके समय वहभी निकला । इसी से उसपुत्र का नाम सगर हुआ, सगर के पुत्र असमंजस असमंजस के पुत्र अंशुमान अंशुमान को दिलीप दिलीप के पुत्र भगीरथ और भगीरथ के पुत्र ककुत्स्थ ककुत्स्थ के पुत्र रघु के पुत्र तेजस्वी प्रवृद्ध हुए, यह शाप से राक्षस हो गये फिर यही कल्याषपाद नाम से विख्यात हुए एक समय प्रवृद्धको वसिष्ठजी ने शाप दिया कि तुम राक्षस हो जाओ, तब अपने तपोबलसे राजाने भी वसिष्ठजी को शाप देने के वास्ते हाथ में जल लिया तब इनकी रानिने हाथ पकड़ लिया और कहा कि यदि गुरु शाप देवै तो तुमको शापदेना नहीं चाहिये यह स्त्रीका कहना मानकर राजाने उस कलुषित जलको अपने चरणोंपर डाल दिया, उस जलको पैरपर गिरने से पैर काले हो गये, उसीसे उनका नाम कल्माषपाद हुआ, कल्माषपाद को शंखण शंखण के पुत्र सुदर्शन सुदर्शन के पुत्र अग्निवर्ण हुए अग्निवर्ण के पुत्र शीघ्रग शीघ्रग के पुत्र मरू मरूके पुत्र प्रशुश्रुक उनके पुत्र अंबरीष अंबरीष के पुत्र नहुष नहुष के पुत्र ययाति ययाति के पुत्र नाभाग नाभाग के पुत्र अज अजके पुत्र दशदथ और दशरथजीके पुत्र राम लक्ष्मण हैं, हेराजन् ! पहिले सेही वंश परंपरा से विशुद्ध परम धार्मिक और सत्यवादी ईक्ष्वाकु वंशराजाओं के कुलमें उत्पन्न हैं, राम लक्ष्मण को बिवाह के लिये आपकी दोनों कन्यायें मागी जाती हैं अनुरुप पात्रों को अनुरुप कन्यारत्न दीजिये, बस मेरा यही अनुरोध है ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे सप्ततितमः सर्गः ॥ ७७ ॥

वसिष्ठजी को इस प्रकार गोत्र परिचय देने से महाराज जनक हाथ जोड़कर वसिष्ठजीसे बोले, हेमुनिवर ? आपके लिये स्वस्ति हो अब मेरे वंशका परिचय आप सुनिये, हेमुनीन्द्र ! कन्यादान के समय कुल परिचय करना कर्तव्य है इस कारण मैं आपसे कहता हूं, हमारे वंशमें निमि नाम एक परम धर्मात्मा सत्यशील महाबली राजाने जन्मग्रहण किया था वह अपने कर्म के प्रभाव से त्रिलोक में

विख्यात थे, निमि के पुत्र मिथि मिथि के पुत्र जनक यह पहिले जनक है इसी राजाके नाम के अनुसार इस बंशके सभी जनक कहे जाते हैं, जनक के पुत्र उदावसु उनके पुत्र धर्मात्मा नन्दिवर्धन नन्दिवर्धन को वीर्यवान सुकेतु उनके पुत्र महाबली देवरात देवरात के पुत्र वृहद्रथ हुए, वृहद्रथ के पुत्र प्रताप शाली महावीर महावीर के पुत्र सुधृति सुधृति के पुत्र धृष्टकेतु धृष्टकेतु को हर्यश्व हुए ऐसा लोक में विख्यात है हर्यश्वके पुत्र मरु मरु के पुत्र प्रत्तीन्धक प्रत्तीन्धक को धर्मात्मा कीर्तिरथ हुए, कीर्तिरथ को देवमीढ देवमीढ को बिबुध बिबुध को महीध्रक महीध्रक के पुत्र कीर्तिश कीर्तिरात हुए कीर्तिरात को महारोम महारोम को धर्मात्मा स्वर्णरोम स्वर्णरोम को ह्रस्वरोमन् हुए ह्रस्वरोम को दो पुत्र मैं ज्येष्ठ और छोटे मेरे भाई परम वीदकुशध्वज हैं, मेरे पिताने मुझे ज्येष्ठ जानकर राज्याभिषेक करके वकनिष्ट भाई कुशध्वज का भार मुझे सौंपकर आप बनको चले गये, मैं पिता को स्वर्ग लाभ होने पर देवताओं के समान सहोदर भाई कुशध्वज को स्नेह पूर्वक रखकर धर्म पूर्वक राज्य करने लगे, इस भांति कुछ समय बीतने पर सांकाश्य के अधिपति महाबली सुधन्वा ने आकर मिथिला पुरी को घेर लिया, व उसने शिवजी का धनुष तोड़ने व जानकी को लाभ करने की प्रार्थना किया, मैं उसके पराक्रम को भली भांति जानता था इस कारण हेमहर्षे ! जब उसकी प्रार्थना पूर्ण करने में सहमत नहीं हुआ, तब दोनों ओर से तुमुल युद्ध होने लगा, अन्त में सुधन्वा मुझसे रणमें भाग गया, हेमुनिवर वशिष्ठजी ! उसी दारुण युद्ध में उसका संहार करके मैने अपने छोटे भाई कुशध्वज को उसकी राजधानी में प्रतिष्ठित किया है, यही कुशध्वज मेरे लघुभ्राता हैं मैं इस से बड़ा हूं मैं इस समय अपनी दो कन्याओं का दान करना चाहता हूं। सीताको रामचन्द्र-जीके हाथमें और ऊर्मिला को लक्ष्मण के हाथमें समर्पण करनाही मेरा अभिप्राय है, यह देव कन्याओं के समान सीता मेरी कन्या

वीर्य शुल्का है और दूसरी ऊर्मिला है इस काभी विवाह करूंगा मैं तीनवार सत्य करके कहता हूं कि यह कार्य अन्यथा नहीं होगा, हे मुनिवर वसिष्ठजी ! मैं प्रसन्नता पूर्वक दोनों कन्याओं को विवाह दूंगा, हे महाराज दशरथजी ! आप दोनों पुत्रोंका गोदान कार्य और पितृकृत्य अर्थात् नान्दीमुख श्राद्ध कीजिये कि विवाह कार्य किया जायगा आज मघानक्षत्र है आजसे तीसरे दिन उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में विवाह करा दीजिये, अब पुत्रों के ऐसे शुभ विवाह में राम लक्ष्मण के शुभ निमित्त दान कीजिये ॥,,

इति वाल्मीकिये आदि कांडे एकसप्ततितमः सर्गः ॥७१॥

जनकजी के वचन सुनकर वशिष्ठजी के अभिप्राय के अनुसार महामुनि विश्वामित्रजी ने जनकजी से बोले, हे मिथिलापति ! इक्ष्वाकु और जनक बंश अतिशय अचित्य और अप्रमेय है, इनकी बराबरी दूसरे बंश से नहीं हो सकता, जैसे राम लक्ष्मण हैं वैसा ही सीता ऊर्मिला के साथ इनकी विवाह होना है, इनका संबंध सर्वथा समान है, हे राजन् ! मैं इस समय कुछ कहना चाहता हूं सो तुम सुनो, तुम्हारे धर्मात्मा लघुभ्राता कुशध्वज हैं इन महा पराक्रमी धर्मात्मा कुशध्वज को अलौकिक रूप संपन्न दो कन्या है सो हे राजन् ! उनको भी हम तुम से मांगते हैं, दशरथजी के पुत्र भरत और शत्रुघ्न के साथ बिवाही जावें यही हमारी सम्पति हैं, इन्हीं दोनों राजकुमारों के लिये हम मांगते हैं, यह दशरथजी के चारो पुत्र रूप यौवन सपन्न लोकपाल के समान और पराक्रम में इन्द्र के समान हैं हे राजन्द्र ! तुम इस संबंध को स्थिर करके अपने वंशको और पुण्य कर्म वाले इक्ष्वाकु के वंश को संबंध के सूत्र में बांधो, महाराज जनक जी वशिष्ठजी के अभिप्राय के अनुसार विश्वामित्र के मुख से सुन कर हाथ जोड़ वशिष्ठ आदि मुनियों से बोले, आप दोनों जब स्वयं इस समान और योग्य कुलके संबंध को चाहते है तो अवश्यही मेर कुल महत्वको प्राप्त करेगा, हे वशिष्ठजी ! आप जो कुछ आज्ञा देवेंगे

गे वही होगा, हे भगवन् ! आपके लिये स्वस्ति हो, भरत और शत्रुघ्न के साथ कुशध्वजकी दोनों पुत्रियों का बिवाह होगा, हे प्रभो ! एकही मुहूर्त में महाबली चारो राज कुमार चारो कन्याओं का पाणिग्रहण करेंगे, हे ब्रह्मन् ! उत्तराफल्गुनी नक्षत्र हो बिवाह के लिये शुभ है, क्योंकि इस नक्षत्र प्रजापति भगदेवता हैं विद्वानजन इस नक्षत्र में बिवाह कर्मका श्रेष्ठ कहते हैं, महाराज जनक यह कह कर उठखड़े हो गये और हाथ जोड़कर महर्षि वशिष्ठ और विश्वामित्र जी से बोले, कि आप दोनों महर्षि की कृपा से मुझे कन्यादान रुप धर्म प्राप्त हुआ, राजा दशरथजी को समान मैं भी आपका शिष्य हूं हे मुने ! इस मुख्य सिंहासनों पर आप बैठिये, हे भगवन् ? जो आप कहेंगे सो मैं करूंगा, महाराज जनक के इस प्रकार बचन से राजा दशरथ प्रसन्न मन से बोले, हेमिथिलाधिपति ! आप दोनों भाई सब गुणोंकी खानि है ऋषिमुनि तथा राजगण सदा आपसे सम्मान को प्राप्त होते हैं, आप सुख से बैठिय हम लोगभी अपने शिबिर डेरा में जाता हूं क्योंकि मुझे विधि पूर्वक श्राद्ध कार्य करना है। जनकजी से यह कहकर यशस्वीदशरथजी वशिष्ठ और विश्वामित्र के साथ शीघ्रता से लौटे, और अपने बासस्थान पर आकर राजाने यथा बिधि श्राद्ध कार्यको सम्पन्न करके प्रातःकाल उठकर गोदान कार्य आरंभ किया, पुत्र वत्सल राजा दशरथने पुत्रों के मंगल के लिये ब्राह्मणोंको चार लाख गौ धर्म पूर्बक दान किये उन गायों के सोने की सींग तो वे तांबे की पीठ चादींकी खुर और रत्नोंकी पूंछ दूध देने वाली बछडों के सहित कांसकी दोहिनी के सहित चारलाख गौ ब्राह्मणों को प्रदान हुई, उस समय गौदान संस्कार हो जाने पर दशरथ के पुत्रों का प्रकाश लोकपालों के समान हो गया, और महाराज दशरथ उन कुमारों के बीच में प्रजापति के समान मालूम पड़ने लगे।

इति बाल्मीकिये आदिकाण्डे द्विसप्ततितमः सर्गः ॥ ७२ ॥

जिस दिन महाराज दशरथजीने अपने पुत्रोंका गोदान संस्कार किया उसी दिन राजा युधाजित भी मिथिला में पहुँचे यह केकयी के भाई और भरतजीके मामा थे, इन्होंने दशरथजी से सादर भेंट करके उनका कुशल क्षेम पूंछकर बोले, हे राघव ! हमारे पिता अर्थात् भरत जीके नाना आपका मंगल समाचार पूंछ करके, भरतजी को बुलाया है, हे महाराज मैं पिताकी आज्ञासे अपने भानजों को देखनेके लिये मै अयोध्या में आया था, मेरे पिता भरतजीको देखनेको बहुत इच्छा करते हैं, मैं अयोध्या में आप लोगों को मिथिलापुर में आनेका समाचार सुनकर मिथिलापुरी में आया हूं, कि चलकर अपने भानजों के समेत आपका दर्शन करूं, उस समय महाराज दशरथ ने अपने परमस्नेही अतिथिका आदर सत्कार किया । इसके उपरान्त महात्मा दशरथ उस रात्रिको महर्षियों के कथा प्रसंग से बिताये, प्रातःकाल उठकर शय्या का परित्याग किया और शौच आदि प्रातःकृत्यका समाप्त करके महर्षियों को संगले यज्ञ भूमि में जानेको प्रस्तुत हुये, इधर रामचन्द्रजी भी बिवाह के मंगलाचार को समाप्त करके शुभ लग्न में सब प्रकारके वस्त्र और भूषणोंसे अलंकृत होकर चारों भाइयों समेत ऋषियोंके पीछे जनकके यज्ञ भूमी में पहुंचे । और सब मंगल कार्य वशिष्ठ आदि मुनियों की आज्ञा से हुए, वशिष्ठजी सकल मंगल कार्य करके भगवान वशिष्ठजी बिदेहराज जनक से बोले, हे राजन् ! महाराज दशरथजी राजकुमारों से मंगल कार्य समाप्त कराकर आपकी राह देख रहे हैं, दाता और ग्रहीताको एकत्र होने पर सकल कार्य सिद्ध हो जाते हैं, इस लिये तुमभी बिवाह कार्य समाप्त करके उनको द्वारपर आनेका समाचार दो, परमउदार महात्मा वशिष्ठजी के बचनको सुन कर बिचार सहित तेजस्वी धर्मको जानने वाले विदेहनाथ बोले, हे मुनीश्वर ! द्वार पर कौन ऐसा द्वारपाल हैं और महाराज दशरथ किसके आज्ञाकी अपेक्षा करते है, हे भगवन् ! इस राज्य पर तो मेरे समान उनका अधिकार है अपने घरमें प्रवेश करने के लिये किसकी

आज्ञा चाहिये, हेमुनीश्वर ! इस समय मेरी कन्यायें हाथमें मंगलसूत्र धारण किये वेदीके मूल में बैठी हैं, इस समय उनका रूप अग्नि के समान प्रकाशित होरहा है, मैं स्वयम् महाराज दशरथजी की प्रतीक्षा करते हुए वेदीकेमूल में बैठे हैं, इस लिये जल्दी आकर विघ्न रहित विवाह कर लेवें, अब विलम्ब करने का क्या प्रयोजन है। राजादशरथ जी बसिष्ठजीके मुखसे जानकीजी की सुजनता को सुनकर ऋषियों के समेत अपने पुत्रों के सहित सभामें आये, तब जनकजीने वसिष्ठ जीसे कहा कि, आप सब ऋषिगण कृत्यको सविस्तार कराइये, हे मुनीश्वरो ! जगत्पूज्य श्रीरामजीके विवाह कार्यको यथाविधि यथा शास्त्र कराइये, जनकजी के प्रिय बचनको सुनकर विश्वामित्रजी शतानन्द-को संग लेकर मंडपकी यज्ञशाला में एक बेदी बनाये और उस वेदी को गंध पुष्प से सुशोभित करके यवांकुर युक्त सोनेके चित्र कुंभ धरे और धूप पात्र में धूप रखकर शंख पात्र स्रुक् अर्घ्यपात्र स्रुव आदि बेदीके चारों ओर शोभा पाने लगे, और अनेकपात्रों में खीरभरे थे, और अक्षत से भराये पात्रोंको धरे और मंत्र पढ़कर योग्य स्थानों में कुश बिछाये, इसके उपरान्त उस वेदी में मंत्रों के द्वारा बिधि पूर्वक अग्नि स्थापन करके मुनिश्रेष्ट बशिष्ठजी मंत्र पढ़कर अग्निमें आहुति देने लगे, उसी समय अनेक अलंकारों से शोभित सीताजी को बुला कर अग्निके समक्ष रामचन्द्र के अभिमुख बैठाकर जनकजी कौशल्या नन्दनराम से बोले, हेरामचन्द्र ! हमारी कन्या जानकी आजसे आप की सहधर्मिणी हुई, यह पतिव्रता महाभागवाली सीता छायाकी नाईं तुम्हारी अनुगामिनी होगी, यह कहकर जनक जी ने मंत्रको पढ़कर पवित्र जल रामचन्द्र पर छोड़ने लगे, और जानकी का हाथ ले रामचन्द्रजी के हाथपर धरदिया, इस अवसरमें देवगण ऋषिगण साधु साधु करने लगे, उस समय देवता इन्द्र दुंदुभी बजाने लगे और आकाश से पुष्पवृष्टि होने लगी, इस प्रकार महाराज जनक जी मंत्र युक्त जलसे संस्कार करके अपनी जानकी कन्या श्रीरामचन्द्रजी को दिया ।

फिर जनकजी ने लक्ष्मण को बुलाकर संस्कार पूर्वक ऊर्मिला का पाणि ग्रहण कराया, और लक्ष्मण से कहा, अब तुम बिलम्ब न करके इस कन्या का पाणि ग्रहण करो, इसके उपरान्त फिर भरत से कहा, हे रघुनन्दन ! तुम माण्डवी का पाणि ग्रहण करो, फिर धर्मात्मा मिथिला पतिने शत्रुघ्नसे कहा, 'हेमहाबाहु ! तुम श्रुतकीर्ति को ग्रहण करो तुम सबही प्रिय दर्शन और सुन्दर व्रत परायण हो, हे कुककुत्स्थ बंश में उत्पन्न हुए कुमारों तुम लोग अब पाणिग्रहण करने में बिलम्ब मतकरो, विदेहनाथके बचनको सुनकर सब राजकुमारोंने अपनी अपनी स्त्रीको पाणिग्रहण किया, इसके उपरान्त उन चारो राजकुमारोंने वसिष्ठ जीकी आज्ञासे अपनी अपनी स्त्रियोंके साथ अग्नि देवको तथा वेदी और जनक और ऋषिमण्डली की ये, वेद मंत्रोंके अनुसार सबका विवाह हुआ उस समय आकाश से सुन्दर वृष्टि होने लगी, देवगण दुंदुभी बजाने लगे, अप्सरा नाचने लगी, गंधर्व लोग सुन्दर गान करने लगे चारो ओर से चह चह मच गया, रामलक्ष्मण भरत शत्रुघ्न अपनी स्त्रियों समेत विवाहित हुए । इसके अनन्तर अपनी अपनी स्त्रियों के सहित दशरथ के पुत्र पिता के शिविर में चले गये, दशरथ भी ऋषि मुनि तथा मन्त्रियों के सहित जनवास में आये ।

इति वाल्मीकिये आदि काण्डे त्रिसप्ततितमः सर्गः ॥८३॥

रात्रिबीताकर प्रातःकाल होने पर महर्षि विश्वामित्रजी जनक और दशरथ से विदा माँग कर उत्तर पर्वत की ओर चले गये, विश्वामित्रजी को चले जाने पर राजा दशरथजी भी जनकजी से विदा मांगने व अयोध्या जाने की तइयारी करने लगे । उनके यात्रा के समय में राजा जनक दहेज में लाख गौ एक करोड़ दिव्य कम्बल दुशाले, हाथी, घोड़ा, रथ, और पैदल सवार और उत्कृष्ट अलंकार तथा नाना प्रकार के धन रत्नों को देकर दशरथजी को प्रसन्न किये, इसके अतिरिक्त प्रत्येक कन्याओं को सौ सौ दासी दास व असंख्य सुवर्ण मुक्ता और प्रवाल के अलंकारों को दिये,

जनकजी प्रसन्न होकर अनेक वस्तु दहेज में दिया और दशरथजी को विदा किये, महाराज दशरथ महाबली अपने पुत्रों के साथ ऋषि मंडल को आगे करके सेना सहित डंका निशान बजवाते अयोध्या पुरी की ओर आकाश में पक्षिगण विकट शब्द करने लगे, पृथिवी तलपर मृगा दक्षिण दिशा की ओर जाने लगे अकस्मात् दुष्टशकुन को देखकर दशरथजी ने वसिष्ठ मुनिसे पूछा, प्रभो ! पक्षियों के विकट शब्द बोलने का और मृगाओं को दक्षिण दिशामें भागने का क्या कारण है, क्यों मेरा हृदय कांपरहा है, और मन हतोत्साह हो गया । हे भगवन् ! इसका क्या कारण है, महाराज दशरथ के दीन बचन को सुन कर गुरुदेव वसिष्ठजी बोले, हे राजन् ! इसका फल सुनो, आकाश में पक्षियों को विकट शब्द बोले से दैवी विपदकी संभावन होती है, परन्तु दक्षिण दिशामें मृगों का जाना अशुभ नहीं है, इतनेही में प्रचण्डपवन चली, पवन के प्रभावसे पृथिवी कांपने लगी वृक्षसब टूटकर गिरने लगे सूर्य अन्धकार से छिप गये दिशाओं का कुछ ज्ञान नहीं रहा, चारो ओर धूल उड़ने लगी, राजा दशरथजी की सेना चेतना रहित बेहोश होगई उस समय वसिष्ठजी ऋषियों के समेत और पुत्रों के सहित राजा दशरथजी स्थिर रहे और इन्ही को ज्ञान रहा, और सब मूर्छित हो गये, उस घोर अन्धकार में धूल उड़ने लगी ।

धरते उठावत अपार धूरि धुन्धकार अंधकार कियो धरा धरनि धकायकै ।
तोरत तरुनु ले झकोरन ते शाखा वृन्द पूरि इन्द्र लोकहु को पवन उड़ाय कै ॥
अमित समान ही सो बधिर करत काल खेरसे सहर कीन्हें छापा ढहाय कै ।
कासवी कंपावत सो कुअर ढहावत सो हाय ऐसो पौन कैसो करिहों धौं आयकै ॥

क्या यह भार्गव पिता के वध से क्रोधित हो क्षत्रिय कुलको निर्मूल करेंगे, पहिले क्षत्रियों के कुल को संहार करके इनकी क्रोधाग्नि शान्त हो गई थी, क्या फिर उस नृशंसकर्मका पालन करेंगे आपस में यह कह कर ऋषिगण भयंकर परशुरामजी को देखकर हे राम ! हे राम ! ऐसा मधुर बचन से कहकर पूजा करने

लगे, प्रबल पराक्रमी जमदग्नि के पुत्र परशुराम ऋषियों से दी गई पूजा को ग्रहण करके दशरथ पुत्र रामचन्द्रजी से कहने लगे ।

इति वाल्मीकिये आदिकाण्डे चतुः सप्ततितमः सर्गः ॥७४॥

हे दशरथ के पुत्र रामचन्द्र ! मैंने सुना है कि, तुम्हारा अद्भुत पराक्रम है, हे वीर ! तुमने जो शिव धनुष तोड़ा है, वह बड़े आश्चर्य की बात है, शिव धनुष को टूटा हुआ सुनकर यह एक धनुष तुम्हारे पास लाया हूं, सो तुम मेरे इस भयंकर धनुष को आकर्षण करके इस पर बाण चढ़ाकर अपना पराक्रम मुझे दिखाओ, इस धनुष को चढ़ाने से मैं तुमारा बल देखकर तुमारे साथ द्वन्द्व युद्ध करूंगा और जानूंगा कि तुम बली हो, परशुराम के इस दारुण बचनको सुनकर राजा दशरथ दीनभावसे हाथजोड़कर कहने लगे, हे भगवन् ! आपने ब्राह्मण कुलमें जन्म ग्रहण किया है, हे भार्गव ! आप तपस्वियों में श्रेष्ठ हैं, अब आपने क्षत्रियों के ऊपर से क्रोधको हटा लिया है, अब हे परशुरामजी ! आप मेरे बालकों पर प्रसन्न होकर अभय दान दीजिये, हे परशुरामजी ! वेद पढ़ने वाले भार्गव कुलमें आप उत्पन्न हैं, आपने इन्द्र के समीप प्रतिज्ञा करके युद्ध करना बन्द कर दिया है, और आप धर्म में मनको लगाकर पृथिवी का भार कश्यपजी को दिया है, आप बनवासी होकर महेन्द्र पर्वत पर वास करते हैं, अब मैं आपसे पूछता हूं कि मेरा सर्व नाश करने ही के लिये आप यहां आये हैं ? मैं निश्चय करके कहता हूं कि रामका कोई भी अहित होने से मेरा जीवन नहीं रहैगा, दशरथजी के बचन को सुन कर प्रतापी परशुरामजी फिर भी रामचन्द्रजीसे बोले, हे रामचन्द्र! विश्वकर्मा ने यह दो दिव्य धनुष बनाये थे यह दोनों धनुष विख्यात हुए, हे रामचन्द्र ! जो धनुष तुमने तोड़ाहै सोत्रिपुरासुरको संहार करने के लिये देवताओंने महादेवजीको दिया था, और दूसरा मेरे पास है, इसधनुषको देवताओं ने विष्णुजीको दिया था, यह भी सबको जीतने में समर्थ और शिवधनुष के समान है, यह वैष्णव धनुष शत्रुओं का

नाशक है और शिवधनुष से अधिक पराक्रमी है। एक समय सब देवताओं ने ब्रह्माजीसे पूछा कि महादेवजी में बल अधिक है वा विष्णुजी में, देवताओंका अभिप्राय जानकर सत्य संकल्प ब्रह्माजीने विष्णुजी व महादेवजीसे विरोध करा दिया उस विरोध के बलसे तुमुल युद्ध दोनोमें उपस्थित हुआ, क्रमसे शिवजी और विष्णुजी एक दूसरे को जीतने की इच्छा करने लगे तब पराक्रमी रणमें उद्यत शिवजी के धनुष को देखकर विष्णुजीने एक भयानक हुंकार से शिव धनुष को शिथिल करदिया, और शिवजी रणमें स्तंभित होगये, उस समय देवता ऋषि गंधर्व सिद्ध चारण किन्नर पन्नग उरग अप्सरा दैत्यदानव राक्षस आदि चराचर सभी जीव जहां शिव और विष्णु युद्धकर रहे थे पहुंचे, दोनो की स्तुतिकरके युद्धको शान्त किया, इस प्रकार श्रीविष्णुजी केवल पराक्रमसे शिवधनुष को शिथिल देखकर विष्णुजी को श्रेष्ठ माना। वस्तुतः शिवजी की अपेक्षा विष्णुमें अधिकताहै केवल त्रिपुरासुर वधमें शिवकी अधिकताहै इससे दोनो समान हैं, तब महायशस्वी व पराक्रमी शिवजीने क्रोधपूर्वक वह धनुष बाणसहित विदहेराज महाराज राजर्षिदेवरात को दिया है, और मेरे हाथमे जो धनुष है वह वैष्णव धनुष है, यह धनुष शत्रुओं के नगर का नाशक है, पूर्वकालमें विष्णु भगवान ने यह धनुष महर्षि ऋचीक को दिया था, ऋचीकजी प्रसन्न होकर अपने पुत्र जमदग्निको दिया, तपोबल समन्वित हमारे पिता जी को इस धनुष को छोड़कर अधर्म बुद्धिके वशीभूत हो राजासहस्रबाहू अर्जुनने जमदग्निजीको मार डाला, मैंने पिताका यह असदृश मरण संवाद सुन करके क्रोधपूर्वक इक्कीस बार क्षत्रिय कुलका संहार किया, हेराम! मैंने संपूर्ण पृथिवीको जीतकर यज्ञके अन्तमें पवित्र दक्षिणारूप यह पृथिवी महात्मा कश्यपजीको दे दिये, फिर मैं महेन्द्र पर्वतपर जाकर तपस्या कर रहा था, इतने में सुनपड़ा कि तुमने शिव धनुष को तोड़ा है इसी कारण तुम्हें देखने को आया हूं, हेरामचन्द्र! तुम पिता पितामहके निकटसे क्रमानुसार आये हुए इस वैष्णव धनुष

को इस समय क्षत्रिय धर्मके गौरव की रक्षा करके स्वीकार कीजिये, हेराम चन्द्र ! इस शत्रुनगर को नाश करने वाले धनुषके ऊपर बाण चढ़ाओ, यदि तुम इस धनुष पर शर चढ़ाने से कृतकार्य हुए तो हम तुम्हारे साथ द्वन्द्व युद्ध करूंगा ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाव्ये बालकाण्डे पंचसप्ततितमः सर्गः॥ ७५ ॥

इसके उपरान्त परशुरामजी के बचनको सुनकर दशरथनन्दन रामचन्द्र मधुरबचन से बोले, हेराम ! आपने पिताका वैर लेनेको जो कार्य किया उसे मैंने सुना है, वैरीसे बदला लेना बीरोंका कर्म है इस लिये आपके कार्यको हम अंगीकार करते हैं, किन्तु मैं क्षत्रिय सन्तान हूं मुझे सामर्थ्य हीन जानकर आपने जो निरादर किया इस समय उस सामर्थ्य हीन के पराक्रम को देखिये, श्रीरामजीको यह कहते २ क्रोध आगया और शीघ्रता पूर्वक परशुरामजी से वह श्रेष्ट धनुष और बाण लेलिया, तत्काल धन्वाकी डोरीको चढ़ाकर फिर बाणको चढ़ाया।

डोली धरावार वार दिग्गज चिक्कार कीन्हों हीलिगो हजारशीश कच्छ अकुलान्यो है।
दैत्य विकरार भय मयही अकारभये पारावार वारिवेल छोड़ छहरान्यो है ॥
जै जै शब्द देवदार सहित पुकार करैं प्रलय संसार हेत मन अनुमान्यो है।
देखो जमदग्नि के बाट करते कुठार गिरयो सरिस हजार रुद्र राजधार जान्यो है ॥

और क्रोधपूर्वक रामचन्द्र परशुरामजीसे बोले, हेराम ! आप भार्गवकुल में उत्पन्न हैं इस लिये ब्राह्मण हैं और विश्वामित्र जीके संपर्क से हमारे पूज्यहो, इस वास्ते इस प्राण नाशक धनुषसे आपके प्राणको नहीं ले सकते अब इसी विकराल शासन से तीनों लोक में विचरण करने वाली शक्तिका अवश्य संहार करेंगे, क्योंकि यह वैष्णव बाण शत्रुको संहार करने में समर्थ है, जब यह चढ़ चुका तो व्यर्थ नहीं होसकता, यह धनुष शत्रु के बल व घमंडको नाश करने वाला है, उसी समय में दिव्य आयुधको धारण करने वाले श्रीरामजीको दर्शन करने के लिये ब्रह्मा आदि देवगण वहां आये क्रमसे गंधर्व अप्सरा सिद्ध चारण आदि इस भयानक व्यापार को देखने को आये जब रामचन्द्रजी के धनुष चढ़ाने से और क्रोधसे तीनों लोक जड़ी भूत

होगया तब सबके सामने परशुरामजी का तेज रामचन्द्रजीने खींचलिया, तब परशुरामजी पराक्रम हीनहोकर कमललोचन श्रीरामजीसे मधुरबचन से बोले, जब मैंने महर्षि कश्यपजी को पृथिवी दान कर दिये तब कश्यपजी ने कहा कि अब तुम हमारे अधिकार में वास करना, मैं उन गुरु के बचनानुसार एक रात्रि भी पृथिवी पर नहीं बसा, क्योंकि मैंने प्रतिज्ञाकरली थी और पृथिवी मैंने कश्यपजी को देदी और इसी से पृथिवी का एक नाम कश्यपी हुआ। हे वीर रामचन्द्र ! अब मेरी यह प्रार्थना है कि तुम हमारी सब जगह पहुँचने की शक्तिका संहारमत करो मैं इसी गति की सहायता से महेन्द्र पर्वत पर चला जाऊंगा, हे वीर ! इस धनुष को ग्रहण करने से मालूम पड़ता है कि आपही मधुर दैत्य को मारने वाले मधुसूदन अविनाशी बिष्णु हो, यह सब देवगण आपकाही दर्शन कर रहे हैं, हेभगवन् ! आपके कर्म उपमा रहित हैं, और संग्राम में कोई तुम्हें जीत नहीं सकता, आप त्रिलोकीनाथ हैं, हे भगवन् ! तुम्हारे हाथ से पराजित होना मेरे लिये लाज का विषय नहीं है, हे रामचन्द्र ! अब आप इस दिव्य अस्त्र का संहार करो, और इसके संहार करने से मैं भी महेन्द्रागिरि को चला जाऊंगा, तब दसरथी श्रीमान् रामचन्द्र प्रतापी परशुरामजी के बचन को सुनकर उत्तम वैष्णव बाण का संकोच किया, तब परशुरामजी शीघ्रता पूर्वक महेन्द्र पर्वत को चले गये, उस समय दिशामंण्डल निर्मल होगया और देवगण तथा ऋषिमुनि श्री रामचन्द्रजी को धन्य धन्य कहने लगे और स्तुति करने लगे, महावीर परशुराम श्री रामचन्द्रजी की प्रदक्षिणा व पूजा किये तथा स्तुति करने के उपरान्त अपने स्थान को चले गये ॥

बाल्मीकिये आदिकाव्ये बाल काण्डे षड्सप्ततितमः सर्गः ॥७६॥

परशुरामजी के चले जानेपर श्री रामचन्द्रजी क्रोधको त्यागकर वह धनुष वरूण देवता को देदिया, और वशिष्ठ आदि मुनियों को प्रणाम करके दशरथजी से कहने लगे, हे पिताजी ! परशुरामजी

चले गये, चतुरंगिनी सेना आपके प्रयत्न से रक्षित होकर अयोध्या की ओर चले, श्रीरामजी के बचन को सुनकर महाराज दशरथ प्रसन्नता पूर्वक रामचन्द्र को हृदयसे लगा कर सूंघने लगे, और परशुरामजी के बन जाने का समाचार सुनकर अपने पुत्रों के सहित अपना नया जन्म जाना । इसके उपरान्त सेना गण को शीघ्र चलने की आज्ञा दिये, और सेनाओं के तथा ऋषि मुनियों और अपने पुत्रों के सहित अयोध्यापुरी में पहुँचे । वह मनोहारिनीपुरी नाना प्रकार के ध्वजा और पताकों से शोभित है, बाजोंके शब्द से दिशामंडल निनादित हो रहाहै, राज मार्ग में छिड़काव हुआ है, सब जगह फूल बिछाये गये हैं, पुरवासी राजा के आने के मार्ग में मंगलद्रव्य लिये खड़े हैं, चारो ओर चहचह मच रहा है, मनुष्यों की भीड़ राज मन्दिर पर ठट्ठी है, यशस्वी श्रीमान् राजा दशरथजी अपने पुत्रों के संग अपने बिचित्र राज भवन में प्रवेश किये, राजा संपूर्ण सुखभोग से तृप्त होकर आत्मीय जनोंके साथ नाना प्रकार के आमोद प्रामोद से काल बिताने लगे, राजमहिषी कौशल्या सुमित्रा कैकेयी, आदि रानियों ने क्रमसे महा भाग्यवाली यशस्वीनी कौशल्या सीताको सुमित्रा उर्मिला और श्रुत कीर्ति को, और कैकेयी माण्डवी को प्राप्त कर असीम सुखानन्द को भोग करने लगीं सब रानियों ने हवन और मंगलाचार कराकर ग्रामपुर के सब देवताओं की पूजा कराई, जो प्रणाम करने योग्य थे उनसे प्रणाम कराया, इस प्रकार सब राजकुमारिवधुओं ने अपने अपने अनुरूप स्वामियों को पाकर परम सुख भोगने लगी, रामचन्द्रजी भाइयों सहित और स्त्रियों को पाकर धन जनसे पूर्ण होकर पिताकी सेवामें मन लगाये, कुछ काल बीतने के उपरान्त दशरथजी ने केकयी के पुत्र भरत जी से कहा कि हे पुत्र ! यह केकय देशके राजा के पुत्र अर्थात् तुमारे मामा बहुत दिनों से टिके हैं, इस लिये तुम अपने मामा युधाजित के साथ जाकर अपने नाना का दर्शन करो, कुमार भरत राजा के बचन को सुनकर शत्रुघ्न

के सहित मामा के घर जाने को प्रस्तुत हुए। महाबली भरत पहिले पिताजी की आज्ञा लेकर फिर परम कृपालु महा पराक्रमी रामचन्द्रजी से पूछे, फिर कौशल्या आदि माताओं के चरणों की बन्दना करके शत्रुघ्न सहित केकय देशको चलने के लिये प्रस्तुत हुए, युधाजित भी भरत शत्रुघ्न को लेकर अपने नगर में पहुंचे, युधाजित के पिता अपने नातियों को देखकर सन्तुष्ट हो गये, भरत शत्रुघ्न को मामा के घर चले जानेपर महाबली रामलक्ष्मण जी देवता के समान मनको लगाकर पिताकी सेवा करने लगे, श्री रामचन्द्रजी। पिताजी की आज्ञा से संपूर्ण राज्य के कार्यों का तत्वबिचार करने लगे और शास्त्र की दृष्टि से गुरूजनों को तथा अन्यान्य पुरुषों को देखने लगे और सावधानी से नगर का हित और प्रियकार्य करने लगे। जिस समय जिस कार्यका प्रयोजन देखते उस समय वही करते कराते थे, समय पर गुरुजनों की सेवा शुश्रूषा करते रहते थे, इस भांति रामचन्द्रजी के शीलस्वभाव को देखकर महाराज दशरथ तथा ऋषिमुनि पुरोहित और नगर के धनी तथा प्रजा सब प्रसन्न हुये, सभी लोग रामचन्द्रजी की बड़ाई व प्रशंसा करते थे, जिस प्रकार सब प्राणियों में ब्रह्माजी श्रेष्ठ हैं उसी प्रकार मनुष्यों में रघुनाथजी श्रेष्ठ हुए, रामचन्द्र जी जिस प्रकार सीता जी के अनुकूल रहते व मनको लगाये रहते वैसेही सीताजी भी पति परायणा हुई क्योंकि इनका ब्रह्म बिवाह हुआ था, इस कारण और भी प्रीति थी। उनमें परस्पर के गुणरूप की समानता से आपस में बड़ी प्रीति हुई, श्रीरामचन्द्र सीता के प्रति अधिकतर स्नेह युक्त थे, रघुनाथ जी सीताजी के मनके भावको जानकर उनके मनपर अपना अधिकार करलिये थे, इसी प्रकार साक्षात लक्ष्मी की नाईं लक्ष्मी के समान रूपवती सीताजी भी रामचन्द्र के आशय को जानती थीं और उनसे अधिक प्रेम करती थीं, जगत् के स्वामी बिष्णु भगवान लक्ष्मी को पाकर जैसे सन्तुष्ट हुए थे वैसेही रामचन्द्रजी अपनी इच्छा के अनुगामिनी मन मोहिनी

जनक नन्दिनी को पाकर अतिशय सन्तुष्ट और शोभा को प्राप्त हुये ।
इत्यार्षे श्री मद्रामायणे वाल्मीकिये आदिकाव्ये बालकांडे पंडित रामेश्वदत्त शर्मकृता भाषानुवादे रामक्रीड़ा ख्यानं नाम सप्तति तमः सर्गः ।७७॥

॥ दोहा ॥

राम रमापति सुख सदन, प्रणत पाल भगवान् ।
रामेश्वर को क्षेम कर, लोक बड़ावहु नाम ॥

॥ सवैया ॥

यह राम कथा है कठोर बड़ी कछु बूझिपरे नहीं अर्थकी रीति ।
बूझे बिना नहीं प्रेमलगे बिनप्रेम जगे उपजै नहीं प्रीति ॥
प्रीति बिना नहीं काम सरैं बिन काम सरे न सरै जग नीति ।
याहिसे बूझि वे हेत करूँ अनुवाद खुला से से रामकी गीति ॥

॥ छंद ॥

यह राम सीय विवाह मंगल सुनहिं सादर गावहीं ।
सो चार फल अमर हित अविचल भक्ति प्रभु की पावहीं ॥
कर भोग विविध कुटुंब युत सुत दार धनमन भावहिं ।
संसार के सुख पाय अन्तिम रामधाम सिधावहिं ॥



श्री गणेशाय नमः ।

वाल्मीकिय रामायण हिन्दी भाषा

अयोध्याकांड ।

दोहा ।

आशुतोष ईश्वर उदित उमायस्य वामातु ।
कृपार्णवः शंभु सुखं भक्तेभ्यः प्रददातु ॥
शूल धारिणे चानिशं सुख शेभुषी प्रदाय ।
भस्मी कृत दैत्याय वृष पतये नमः शिवाय ॥

पुण्यवान् भरत जी मामा के गृह जाने के समय शत्रुघ्नको प्रीति पूर्वक अपने संगलिवा ले गये, जिस प्रकार रामजी के स्नेह से परिपूर्ण लक्ष्मणजी छाया की नाईं श्रीरामचन्द्रजी के पीछे चलते थे, उसी प्रकार भरत के स्नेह रूपी शृंखला में वद्ध होकर शत्रुघ्न भी उनके अनुगत रहते थे, भरत के संग स्नेह पूर्वक अपने मामा के गृह अनेक प्रकार के भोजन शयन पान वस्त्र आदि सत्कार को लाभ करने लगे । जिस प्रकार पुत्रों के लालन पालन से निरत दशरथ जी सुख और आनन्द का अनुभव करते थे, उसी प्रकार कैकयी के पिता अपने दौहित्र को लालन पालन करके सुखी हुए,मामा के गृह में अपने इच्छानुसार सुख भोग करते हुए भी श्री रामजी तथा परम प्रिय लक्ष्मण जी और दशरथ जी को भरत और शत्रुघ्न सदा याद किया करते थे, और इधर महाराज दशरथर्ज भी इन्द्र और वरुण के समान पराक्रमी भरत और शत्रुघ्न का स्मरण किया करते थे यह रामादि चारो पुत्र वृद्ध महाराज दशरथ को ऐसे प्रिय थे जैसे विष्णु को अपनी चारो भुजा प्रिय है विशेषतः श्रीरामचन्द्रजी अपने पिता माता को अत्यन्त प्रिय थे, क्योंकि देवताओं के निमित्त रावण को नाश करने के लिये मनुष्यों की प्रार्थना से सनातन विष्णुः अपने

स्वयं पृथिवी पर अवतार धारण किये हैं, जिस प्रकार देवताओं की प्रार्थना से वामन भगवान को पाकर देवमाता अदिति प्रसन्न हुई उसी प्रकार श्रीरामचन्द्रजी को पाकर कौसल्या शोभित हुई । भगवान श्री रामचन्द्रजी रूप और लावण्य तथा सौन्दर्य में अनुपम थे, अत्यन्त पराक्रमी थे, अर्थात् जिसकी आज्ञाको इन्द्र वरुण कुवेर यम पवन सूर्य चन्द्रमा आदि देवताओं के सहित ब्रह्मा व शिवजी पालन करते थे, भगवान श्रीरामचन्द्रजी सदा प्रशान्त रहते थे, क्रोध के वचन को सुनकर भी रामजी क्रोध नहीं करते थे, सदा प्रिय वचन बोलते थे, श्री रामचन्द्रजी शत्रु मित्र में समान व्यवहार करते थे, अनुपकारी के एक भी उपकार से प्रसन्न हो जाते थे, श्री रामजी के इन विशुद्ध गुणों को देखकर देशकाल तथा वेद शास्त्र को जानने वाले वृद्ध गण श्री रामजी के पास आकर उनको नाना प्रकार के कुतुहल से युक्त कथा वार्ताको सुनाते थे, श्रीरामजी अपने प्रिय बचन से उन वृद्ध ब्राह्मणों का सत्कार व सन्मान किया करते थे, और सदामन बचन कायसे सत्यका पालन करते थे, प्रजाओं में पुत्रके समान व्यवहार करते थे, प्रजागण श्रीरामजी को पिताके समान जानते थे, श्रीरामजी दुःखियों पर दया करते थे, अपने क्षत्रिय धर्मके अनुसार दया, चतुरता, शत्रु, मित्र, विवेक शरणागत, संरक्षण, पूर्वक राष्ट्का पालन करते थे, मोह, मद, मात्सर्य, राग, लोभ, आदि चर्चा स्वप्न में भी नहीं स्मरण करते थे, श्री रामजी के युक्ति युक्त कथा वार्ता में वृहस्पति की उपमा होतीथी, विधाताने लोकमें दुष्टोंको नाशकरने के लिये और साधुओंकी रक्षा के लिये अनेक गुण संपन्न श्रीरामजी को निर्माणकिया, पूर्वोक्त श्रेष्ठगुणों संयुक्त देखकर महाराज दशरथ तथा उनकी प्रजा प्राणके समान श्रीरामचन्द्रजीको समझतेथे, श्रीराम जीसे बढकर उनलोगों को और कोई वस्तुकी अभिलाषा नहीं थी, श्रीरामचन्द्र वेद और शास्त्रको जानने में तथा बाण विद्यामें दशरथ से भी अधिक बलवान और गुणवान हुए । और समयाचार धर्ममें

कुशल और राष्ट्र तथा मन्त्रियों के गुप्त मंत्रको जानने में निपुण धन आदि से सत्पात्रमें सन्तुष्ट करने में इन्द्र के समान और न्यायसे द्रव्यको (करदान) लेनेमें विष्णुके समान समर्थ हुए। श्रीरामजीके बल, पराक्रम, चातुर्य, विद्या, विनय, श्रद्धा, गुरुभक्ति, मातृपितृ सेवा, प्रजारंजन, राष्ट्रोंको गुप्त अभिप्रायके ज्ञाता, भाइयों में परस्पर, प्रेम, आदि अनेक प्रकार के परिशुद्ध गुणों को देखकर वृद्धमहाराज दशरथको चिन्ता होने लगी, कि मेरे जीवते श्रीरामचन्द्रजीको राज्य कैसे लाभ होगा और विना राज्य दिये श्रीरामजी पर हमारी प्रीतिका फैलाव नहीं हो सकता क्योंकि रामचन्द्रजीके सामने राज्यधन तुच्छ है, और श्रीरामजीसे अतिरिक्त और कुछ मुझे प्रिय नहीं है, श्रीरामचन्द्रजी भी लोककी वृद्धि चाहते हैं और प्राणियों पर दया करते हैं, और सकल प्रजा श्रीरामजी में मुझसे अधिक प्रेम करते हैं, इन्द्र और यमके समान श्रीरामजी पराक्रमी हैं वृहस्पतिके समान बुद्धिमान हैं पर्वतराज हिमालय के समान धैर्यवान हैं श्रीरामजी मुझसे भी गुणवान हैं इस अवस्थामें प्राप्त श्रीरामजीको समस्त पृथिवी को शासन करते देखकर मैं स्वर्गके सुखको लाभ करूँगे, सच्चरित्र आदर्श पुरुष न्यायपरायण रामचन्द्रजी को युवराज बनाने का विचार मन्त्रियों के सहित महाराज दशरथ करने लगे, उस विचार कालमें आकाश मार्ग से तारे टूटने लगे पृथिवी कांपने लगी, परन्तु परमज्ञानी महाराज दशरथ उत्पात को देखकर अनिष्ट सूचना की संभावना से और अपनी वृद्धावस्था के कारण मन्त्रियों के सहित अधिक चिन्ता से चिन्तित होनेके अनन्तर महाराज दशरथ शोकको नाशकरने वाले पूर्णचन्द्र के समान श्रीरामजी के मुख कमल को देखकर और लोकको प्रिय श्रीरामजीको जानकर अभिषेक देनेकी इच्छा को प्रकट किया, धर्मात्मा राजा दशरथ अपने प्रियके वास्ते और प्रजाओं के कल्याणके वास्ते, तथा रामचन्द्रमें प्रजाओं के अनुरागको देखकर रामचन्द्र को अभिषेक करने के लिये दशरथजी शीघ्रही प्रस्तुत

हो गये । और मन्त्रियों के द्वारा अनेक देश तथा नगरके राजाओं को बुला भेजा, निमन्त्रणमें आये हुए राजाओं से पूजा और सत्कार को लाभ करके महाराज दशरथ इस प्रकार शोभित हुए जैसे प्रजा गण से प्रजाको पाकर प्रजाओं के मध्य मे ब्रह्माजी शोभित होते हैं, इस अभिषेक कार्य संभार की शीघ्रता के कारण मिथिला देशके राजा जनक और केकयीके पिता नहीं बुलाये गये, अथवा भरत और जनक से श्रीरामजीके अभिषेक कार्यमें विघ्न के भय मानकर नहीं बुलाया । उन शत्रुसूदन महाराज दशरथ की सभामें सकल देशके राजा उपस्थित हुए, अनेक प्रकार के आसन पर बैठे हुए राजाओं के मध्यमें स्थित महाराज दशरथ के समीप प्रधान प्रधान राजगण बैठे ॥

इति बाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकांडे प्रथमः सर्गः ॥१॥

समस्त राजमंडली को सन्मुख उपस्थित देखकर उत्कट प्रसन्नता पूर्वक प्रजाओं के हितके वास्ते और सुनने में भी सुख देने वाले बचन को महाराज दशरथ बोले, दुन्दुभी के समान महाराज दशरथ के मुखसे निकले हुए गंभीर नाद से सभा स्थान गूंज उठा, हे सभासद गण ! मेरे इस उत्तम राज्यको हमारे पुरुषोंने भली भांति पालन किया उसी राज्य को मनु आदि राजर्षियों के धर्म पथपर प्रवृत्त होकर यथा शक्ति मैंने भी पालन किया है, परन्तु इस समय वृद्धावस्थाके कारण और जगतके हितके वास्ते अनुपम गुण संपन्न राजलक्षण से युक्त श्रीरामचन्द्रजी को अभिषेक करनेकी हमारी इच्छा है, संप्रति रामचन्द्रको अभिषेक सबको सुखके योग्य होगा । महाराज दशरथ अपने अभिप्राय को पहिले प्रकट करके फिर सभामें बैठे राजा प्रजा और ब्राह्मण गण से बोले, हे राजगण ! श्रीरामचन्द्र को राजभार सौंपने की मेरी इच्छा है इसमें आपलोगों को कुछ संशय होतो कहिये, दशरथजी के वचनको सुनकर पुर और जनपद से आये राजगण प्रजाओं के सहित बोले हे राजन् ! आपके पुत्र श्रीरामजी में अनेक प्रकारके उत्तम गुण हैं, देवराज इन्द्रके समान श्रीरामजी अपने शत्रुको भी आनन्द देनेवाले है, ऐसे सच्चरित्र श्री

रामजीके गुण का वर्णन हम लोग करते हैं सुनिये, हेराजन् ! श्रीरामचन्द्र अपने उत्तम गुणों से और सत्यपराक्रमसे इन्द्रके समान हैं, इक्ष्वाकु आदि आपके पूर्व महाराजों में भी रामचन्द्र अधिक गुणवान और पराक्रमी हैं, लोकमें रामचन्द्रजी आदर्श पुरुष हैं और सत्यपरायण हैं, प्रजाको आनन्द देनेमें चन्द्रमा के तुल्य हैं क्षमा करने में पृथिवी के समान हैं बुद्धिमें बृहस्पतिके तुल्यहैं, पराक्रम में इन्द्रके समान हैं धर्म को जानने वाले हैं और प्रतिज्ञा पालन करने में समर्थ हैं, शीलसंपन्न हैं ईर्ष्या द्वेष रहित हैं शरण आये हुएकी रक्षा करने में समर्थ हैं सदा प्रियवचन बोलने वाले हैं दुःखियों के दुःखको नाश करने वाले हैं, प्रजाओं में अनुराग तथा दया करने वाले हैं और सत्यवादी हैं, वेद शास्त्रको जानने वाले ब्राह्मणों की सेवामें श्रीरामजी सदा निरत रहते हैं इससे श्रीरामजी अतुल कीर्ति और तेज विख्यात हैं देवता असुर और मनुष्यों के मध्यमें अस्त्र शस्त्रके पण्डित हैं और अंग सहित वेदशास्त्र को जानने वाले हैं संगीत शास्त्रमें चतुर हैं धर्म अर्थको जानने वाले मुनियों से शिक्षित हैं, ग्राम अथवा नगर की रक्षा के लिये लक्ष्मणके साहित रामचन्द्र जब रणमें प्रस्थान करेंगे तब शत्रुओं को बिना जीते न लौटेंगे, और शत्रुको पराजय करके आने पर पुरवासियों से नित्य उनके कुशल को पूछते रहेंगे, पुत्रपर अग्नि पर स्त्री पर भृत्य पर और शिष्यगण पर श्रीरामजी समान व्यवहार करेंगे। श्रीरामजी प्रजामें और सपुत्रके समान वर्त्ताव करेंगे श्रीरामजी ब्राह्मणों से इस प्रकार कुशल पूछेगे कि हे ब्राह्मणों शिष्यगण आपकी सेवाकरते हैं या नहीं, क्षत्रियों से इस प्रकार पूछेंगे कि प्रजागण आपलोगोंकी आज्ञा का पालन करते हैं या नहीं पुरुषश्रेष्ठ रामजी प्रजाओं में इसप्रकार फैलाव करेंगे कि कोई प्रजा व्यसन का पालन न करें क्योंकि व्यसन के पालन से मनुष्य सदा दुःखको उठाता है, सत्य वादी धनुर्धारी वृद्धसेवी और जितेन्द्रिय श्रीरामचन्द्र पिताके समान प्रजाको पालन करेंगे, जैसे पुत्रके सुखसे पिता सुखी होताहै वैसे प्रजा

के सुखसे श्रीरामजी सुखी होंगे, श्रीरामजी न्याय पूर्वक धर्म सहित प्रजापालन से अतिरिक्त नास्तिक विचारमें कभी प्रवृत्त न होगें, । जैसे उत्तरोत्तर युक्तिमें वृहस्पति वक्ताहैं वैसेही साक्षाद् विष्णुके समान श्रीरामचन्द्रजी हैं, शौर्य वीर्य और पराक्रम संपन्न श्रीरामजी लोकमें मनोहर हैं, श्रीरामचन्द्र तीनों लोकका पालन कर सकते हैं, इन केलिये इस पृथिवी का पालन करना कठिन नहीं है, श्रीरामचन्द्रजी को क्रोध और प्रसन्नता कभी निरर्थक होनेवाले नहीं हैं इस प्रकार गुण संपन्न सत्यपराक्रमी श्रीरामचन्द्र लोकपाल के समान पृथिवी का पालन करेंगे हे दशरथजी ! बड़े भाग्यकी बात है कि राज्य को पाकर श्री रामजी प्रजा रक्षण में समर्थ होंगे हे राजन् ! आपके भाग्यसे मरीचि प्रजापतिके पुत्र कश्यपके समान तेजस्वी श्रीरामचन्द्र आपके यहां अवतार लिये हैं, देवता असुर राष्ट्र और पुर तथा जन पदके सभी चराचर श्रीरामजी के सेवक हैं स्त्रियाँ वृद्ध तरुणी और देवगण सभी रामचन्द्रजी के अभिषेककी इच्छा करती हैं, हे राजन् ! आप प्रसन्न होकर श्रीरामजी को युवराज बनाकर सबकी इच्छा पूर्ण कीजिये विष्णुके सदृश पराक्रमी उदार गुणोंसे युक्त श्रीरामचन्द्रजी को युवराज बनाकर पृथिवी को और चराचर सहित हम सब राजाओं को सुख दीजिये ॥

वाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकाण्डे द्वितीयः सर्गः ॥२॥

विनय पूर्वक सभासद गण के वचन को सुनकर प्रजाओं के हितके लिये महाराज दशरथजी बोले, मैं बड़ाही भाग्यवान हूं मेरे अतुल प्रभाव हैं जो हमारे ज्येष्ठ गुणों से युक्त ज्येष्ठ पुत्र श्री रामजी को युवराज पद देने में आपलोग सम्मत हैं, इस प्रकार पूजित दशरथ सभा के मध्यमें उपस्थित कुल गुरु बशिष्ठ जी तथा मन्त्रियों में श्रेष्ठ बामदेवजी आदि ब्राह्मणों से बोले, यह परम पवित्र चैत्र का महीना है इस वसन्त काल में बन वृक्ष पुष्पित हो रहे हैं ।

॥ सवैया ॥

बायु बहारि बहारि रहे छितिवीथी सुगन्धिति जाति सिंचाई ।
त्यों मधुमाते मलिन्द सबै जय के कर खान रहे कछु गाई ॥

मंगल पाठपढै द्विजदेव सबै विधिसो सुखमा उपजाई ।
साजि रहे सब साज घने बनमें ऋतुराजु की जानि अवाई ॥

श्री रामचन्द्रजी को अभिषेक के लिये सकल सामग्री को एकत्र कीजिये । अमृत मय दशरथजी के इस बचन से सन्तुष्ट हो प्रजाओं में हर्षका कोलाहल होने लगा, कोलाहल समाप्त होने पर नरनाथ दशरथजी मुनियों में सिंह बशिष्ठ जी से बोले, हे भगवन् ! रामचन्द्र-जी के अभिषेक के लिये जो कुछ उपकरण हो वह सब एकत्र करने की आज्ञा दीजिये, मुनियों में श्रेष्ठ बशिष्ठ जी दशरथजी के बचन को सुनकर हाथ जोड़ विनय पूर्वक सन्मुख खड़े हुए मन्त्रियों से बशिष्ठजी आज्ञा दिये, हे मन्त्रिगण ! सुवर्ण रत्न पूजाकी सामग्री और सर्वौषधी आदि शुक्ल माल्य लाजा मधु घी अनेक प्रकार के वस्त्र रथ अनेक प्रकार के अस्त्र चतुरंग सेना शुभ लक्षण वाले हाथी दो च-मर और पंखा पताका छत्र अग्नि के समान सैकड़ों सोने के कलश और जो कुछ आवश्यकीय पदार्थ हैं उनको एकत्र कीजिये, अन्तःपुर (जनान खाना) के द्वारपर और नागरिक जनों के द्वारद्वार पर तो-रण चन्दन माला धूप कलश आदि से अलंकृत कीजिये, महाराज दशरथ प्रातः काल अग्निहोत्र शाला में आकर दही दूध से मिश्रित अच्छे अच्छे पक्वान्न से सैकड़ों हजारों ब्राह्मणों को सत्कार पूर्वक पर्याप्त भोजन और घी दधि लाजा और धन रत्न से पुष्कल दक्षिणा दिया, उस के दूसरे दिन होने वाले अभिषेक संभार में निमन्त्रित स्वस्ति वाचनिक ब्राह्मणों को यथा योग्य आसन तइयार कराया और राजमार्ग (सड़क) को जलसे सींचकर राजद्वार तथा नगर और चौराहों पर पताका खड़ा कराया ताल बजाने वाले तथा गाने वाली वेश्या अनेक प्रकार से अलंकृत होकर राजभवन में ब्राह्मणों की सभासे अन्य स्थान को सुशोभित किए देवताओं के स्थान में और चैत्य स्थानों में माल्य गंधपुष्प धूप पक्वान्न दक्षिणा आदि अलंकार वस्त्र आदि प्रजाकी सामग्री अलग अलग इकट्ठा हुई । और लंबी तलवार

तथा नाना भांतिके अस्त्र शस्त्र को लेकर भूषण वस्त्र से शोभित होकर शूरवीर गण महाराज के आंगन भवन में प्रवेश किये। इस प्रकार सब अधिकारियों को आज्ञा देकर वशिष्ठ और वाम देवजी अपनी क्रिया करने में प्रवृत्त होगये, प्रीतिपूर्वक वशिष्ठ तथा वामदेव की अधिकारियों पर आज्ञा को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक महाराज दशरथ मन्त्रिश्रेष्ठ सुमन्त्र जी से बोले, मन्त्रिन् ! आप श्री रामचन्द्रजी को शीघ्र सभा भवन में लिवा लाइये, सुमन्त्रजी राजा दशरथ की आज्ञा को शिरोधार्य करके रथके द्वारा श्रीरामजी को सभा भवन में उपस्थित कर दिया, उस समय पूर्व देश वासी पश्चिम देशवासी उत्तर देश वासी दक्षिण देश वासी तथा मध्य देश वासी और म्लेच्छ देश निवासी और वन में रहने वाले निषाद आदि तथा पहाड़ी राजाओं के समुदाय से सभा भवन परिपूर्ण था,। उन राजाओं से उपासित महाराज दशरथ इन्द्र के समान मालूम होने लगे, जिस प्रकार देवताओं से आराधित इन्द्रकी शोभा होती है उसी प्रकार सभा भवन को महाराज दशरथ अलंकृत किये थे। उच्च आसन को ग्रहण किये महाराज दशरथ मन्त्रि के द्वारा बुलाये गये श्रीरामचन्द्र को देखे, गंधर्व राजके समान कमनीय मूर्ति महाबली लंबी भुजा वाले पर्वत के समान धैर्य वाले मत्त गजराज के समान चलने वाले चन्द्रमा के सदृश मुख कमल वाले अत्यधिक प्रियदर्शन, रूप और गुण से चित्तको हरण करने वाले, प्रजाओं को आनन्द देने वाले श्रीरामचन्द्रजी को देखकर महाराज दशरथ तथा सभासद्गण का मन तृप्त नहीं हुआ। कैलास पर्वत के समान शोभा को धारण किये दशरथजी को देखकर सहसा हाथ जोड़े हुए विनय पूर्वक श्रीरामजी दशरथजी के समीप पहुंचकर प्रणाम किये दशरथजी श्रीरामजी को प्रणाम करते देखकर प्रसन्नता पूर्वक श्रीरामचन्द्रजी तथा लक्ष्मणजी को गले से लगा लिया, और रत्न जड़ित सिंहासन पर बैठने की आज्ञा दिये, श्रीरामजी दशरथजी के आदेश से आसन पर बैठकर अपनी कान्ति से सभाको

प्रकाशित कर दिये, जैसे उदय काल में सूर्य नारायण अपने तेज से सुमेरू को प्रकाशित करते हैं जैसे आकाश मार्गमें तारा गणों के मध्य में शरत्काल के चन्द्रमा की शोभा होती है वैसेही सूर्यचन्द्र के समान श्रीरामचन्द्र सभास्थान को सुशोभित किये। श्रीरामचन्द्रजी के गुण और सौन्दर्य तथा महिमा को देख प्रेमके मारे दशरथ जी बोले, हे रामचन्द्र हमारी ज्येष्ठा स्त्री के सदृश तुमारे में सब उत्तम गुण हैं, तुम अत्यधिक प्रिय हो और यह सकल प्रजा तुम्हारे अधीन है इस लिये कल्ह प्रातः काल पुष्य नक्षके योगमें युवराज्य पदको ग्रहण करो ऐसी आज्ञा इस सभा में उपस्थित राजा प्रजा तथा परम पूज्य गुरु वशिष्ठ और वामदेव आदि ब्राह्मणों सहित मन्त्रियों की है, हेरामचन्द्र ! उच्चगुण संपन्न स्नेह से विनीत होते हुए भी अब अधिक विनय को ग्रहण करो, हेरामचन्द्रजी काम क्रोध से उत्पन्न व्यसन को छोड़कर अपना और राष्ट्र का विचार सभाके मध्यमें मन्त्रियों के सहित करने में युक्त हो-ओ ! हेरामचन्द्रजी ! मन्त्रि सेनापति पुराष्ट्र आदि के सहित सकल प्रजा को प्रसन्न करो और धान्य रखने वाले गृह को अस्त्रागार को स्वर्ण रत्न अलंकार चांदी वस्त्र खजाना आदि को धन धान्य से परि पूर्ण करके प्रजा को पालन कीजिये। जो राजा प्रजाकी प्रसन्नता पूर्वक पृथ्वी का पालन करता है उसको प्रजा मित्र के समान देखती है, जैसे अमृत को पाकर देवता लोग इन्द्र की बड़ाई करते हैं वैसेही प्रजा अपने अनुकुल राजा की प्रशंसा करते हैं। महाराज दशरथ सभा के मध्य में श्रीरामजी को इस प्रकार उपदेश देकर मौन होगये, महाराज दशरथ के बचन को सुनकर श्रीरामजी की सेवामें रहने वाले उनके प्रियचर हर्षित होकर श्रीरामचन्द्रजी के अभिषेक का समाचार कौशल्या से कह सुनाया, कौशल्या पुत्रके युवराज लाभ को सुनकर उन नोकरों के लिये सोना गौ और अनेक भांति के रत्नों को बांटा, श्रीरामचन्द्रजी पिता के बचन को सादर ग्रहण करके पिताको प्रणाम करने उपरान्त रथपर सवार होकर राज भवन को

चले, प्रजाओं में जै जै ध्वनि होने लगी। श्रीरामजी के अभिषेक समाचार को सुनकर महाराज दशरथ को इस प्रकार धन्यवाद देने लगे जैसे कोई मनुष्य पारस पत्थल को पाजावे ॥

इति वाल्मीकिये अयोध्या काण्डे तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥

श्रीरामजी को सभास्थान से जाने के उपरान्त दशरथजी पुरवासियों तथा मन्त्रियों के सहित पुनर्विचार करने लगे कि कल्ह पुष्य नक्षत्र का योग होगा इसी पुष्य नक्षत्र में कल्ह हमारे पुत्र श्रीराम जीको अभिषेक होजावे, ऐसा विचार करके सभाको विसर्जन किये और दशरथजी राजमन्दिर में प्रवेश करके श्रीरामचन्द्रजी को फिर से बुलाने को मन्त्रि को अनुशासन किये, सुमन्त्र जी दशरथ जी की आज्ञा को शिरोधार्य करके श्रीरामजी के भवन में जाकर विनय पूर्वक बोले, हेरामजी ! वृद्धमहाराज दशरथ आपको देखना चाहते हैं, पिता के दर्शन में लालस मानस संयुक्त रामचन्द्र राज भवन में गये, श्रीरामजी के आगमन को सुनकर महाराज दशरथ प्रेम पूर्वक बुलाये, श्रीरामचन्द्रजी पिता को सादर प्रणाम किये, दशरथजी रामचन्द्रजी को हृदय से लगाकर अपने वांछित फलको प्राप्तकर बोले, हेरामचन्द्रजी ! मैं चिरकाल तक यथा योग्य राज्य सुख तथा प्रजा पालनको किया अब वृद्ध हो चला, मैंने जो कुछ दान यज्ञ तप और पुत्रेष्टि आदि किया उसी के प्रभाव से श्रेष्ठगुण संपन्न अनुपम पुत्र आपको पाया, आपको प्राप्त करके देवता ब्राह्मण ऋषि आदिकों के ऋण से मुक्त हो गया, तुम्हारे अभिषेक के अतिरिक्त और कोई कार्य अब शेष नहीं रहा, इस समय जो कुछ हम आपसे कहैं उसको पालन करने योग्य हो। आज सकल प्रजा आपसे प्रसन्न हैं, सकल प्रजा आपकी आज्ञाकी पालन करना चाहती है इसलिये हेपुत्र ! मैं आपको राज्याभिषेक करनेकी इच्छा करता हूं। हेरामचन्द्रजी ! हेराघव ! आजमैं एक अशुभ सूचक स्वप्न देखा है, इस अभिषेक कार्य के आरम्भकालमें वज्र घातके

सहित ज्वालाका पतन और सूर्य मंगल राहु इन तीन दारुण ग्रहोंसे आक्रान्त जन्म नक्षत्र को देखाहै, ऐसे दारुण स्वप्नका फल ज्योतिषियों के मुख से सुना हैं कि स्वप्न देखने वाले की मृत्यु और घोर आपत्ति का सामना करना पड़ता है, हेरामचन्द्रजी ! जबतक हमारी बुद्धि बिचलित न हो तबतक आप अभिषेक को स्वीकार करें क्योंकि प्राणियों की मति सदा स्थिर नहीं रहती । हेपरन्तप रामचन्द्रजी ! आज पुनर्वसु नक्षत्र के उपरान्त पुष्य योग होगा और कल्ह निपत पुष्य होगा ऐसा भाग्यको जानने वाले ज्योतिषीलोग कहते हैं, उसी पुष्यनक्षत्र के योगमें कल्ह मैं आपको अभिषेक करूंगा। हेरामचन्द्रजी ! आजसे लेकर स्त्रीके सहित कुशासन पर जितेन्द्रिय रहकर रात्रिमें शयन कीजिये और देशकालको जानने वाले रागद्वेष से रहित शान्त चित्त वाले दासवर्ग आपकी रक्षाकरें क्योंकि ऐसे कार्यों में अनेक प्रकार के विघ्न उठते हैं हमारी ऐसी राय है कि भरतजीके आगमनके पहिले आपको अभिषेक होजावे । महाराज दशरथ इस प्रकार रामचन्द्र जीसे कहकर सिंहावलोकन न्याय से फिर अपने बातको सुधारते हैं, हेरामचन्द्रजी ! भरतजीके ऊपर ऐसा सन्देह करना उचित नहीं है क्योंकि भरतजीके ज्येष्ठ भ्राता परमदयालु और धर्मात्मा आपहैं आपमें भरत का अनुराग अधिक है तौ भी मनुष्यका हृदय विकारवान होता है सज्जनों के हृदय भी रागद्वेष से पीड़ित होजाते हैं महाराज दशरथ जी अभिषेक सम्भार को सम्पादन करने के लिये श्रीरामचन्द्रजी को आज्ञादेकर बिदा किये श्रीरामजी पिताको प्रणाम पूर्वक अपने स्थान को गये, अपने बास भवन में श्रीजानकीजी को न देखकर तत्कालमें माताके पास गये, उधर कौशल्याजी रामचन्द्रजीके अभिषेक को सुन कर जानकीके सहित रामजीके मंगल कामना के लिये देवस्थानमें देवताओं की आराधना कररही थीं, उसी समयमें श्रीरामजीको माता के भवन में जानेके पहिले लक्ष्मण और सुमित्रा जानकीजी का कौसल्या के सदन में प्रवेश और श्रीरामजी के अभिषेक को सुनकर

प्रसन्न होगयी, उसी समय देवागार में ध्यान करती हुई कौसल्या सुमित्रा लक्ष्मण और जानकी से पूजित होने लगी । इधर श्रीरामचन्द्रजी मातृ भवनमें पहुँच कर माता को साष्टांग प्रणाम किया इसके उपरान्त सुमित्राको सादर दंडवत् करके माता से बोले, हेमाता ! पिता महाराज दशरथ मुझे प्रजा पालन कर्म में नियुक्त करते हैं, कल्ह प्रातःकाल पुष्य के योग में मुझे अभिषेक होगा, उस अभिषेक कार्यको संपादन करने के लिये पिता की आज्ञा है कि वशिष्ठ और वामदेवजी के वचन के अनुसार आज की रात्री जानकी मेरे साथ निवास करेंगी, कल्ह होनेवाले अभिषेक के योग्य जो कुछ कार्य होगा वह जानकी जी को भी करना पड़ेगा, चिरकाल से इच्छा करने वाली कौसल्या श्रीरामजी के मुखसे अभिषेक वृत्तान्त को सुनकर हर्षसे विह्वल होकर श्रीरामजी से बोलीं, हे वत्सरामचन्द्र ! चीरञ्जीव तुम्हारे सत्रुमंडल नाश होजावें और तुम मुझको लक्ष्मण और सुमित्रा तथा बन्धुवर्ग को आनन्द देने योग्य हो, हे पुत्र! शुभ नक्षत्र में तुमारा जन्म हुआ है जिस से तुम्हारे पिता तुमको अधिक आदर करते हैं, जो कुछ मैंने कामना से रहित होकर विष्णु भगवानकी आराधन किया है वह सब आज सफल हुआ । इस प्रकार माता के बचन को सुनकर श्रीरामजी लक्ष्मणजी से प्रसन्न चित्तहो बोले, हे लक्ष्मण ! हमारे संग तुम भी पृथिवी का शासन करो, यह राज्य लक्ष्मी तुम्हारी भी सेवा करैगी, हे लक्ष्मणजी ! अपने मनोनुकूल भोग करने योग्य विषयों को प्राप्त करके आनन्द पूर्वक सुख भोगो, श्रीरामजी इस प्रकार लक्ष्मण से कहकर माताओं को प्रणाम किया और जानकीजी के सहित अपने भवन में प्रवेश किये ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥

इधर दशरथजी होने वाले अभिषेक कार्यके अनुकूल श्रीरामचन्द्रजी को आज्ञा देकर पुरोहित वशिष्ठजी को बुलाकर प्रार्थना पूर्वक बोले, हे तपोधन ! श्रीरामजी के कल्याण और राज्यलाभ के लिये

उनको उपवास और संकल्प पूर्वक व्रत धारण करने की आज्ञा देदीजिये, दशरथजी के वचनानुकूल वेद वेदाङ्गके ज्ञाता वशिष्ठजी श्रीरामचन्द्रजी के भवन में जानेको प्रस्तुत हुये। मंत्रको जानने वाले महावीर रामचन्द्रजी को उपवास और व्रत कराने के लिये ब्राह्मण के योग्य रथपर बैठ कर रामचन्द्रजी को आगार को चले, ज्योति समुदाय के समान मुनि सत्तम वशिष्ठजी तीन द्वार युक्त रथसे रामचन्द्रजी के भवन के समीप पहुंचे। रामचन्द्रजी मुनिवर वशिष्ठजी के आगमन को सुनकर संसभ्रम से सत्कार पूर्वक स्वागत करने के लिये स्थान से बाहर आकर पुरोहित वशिष्ठजी को सादर दण्डवत किया और हाथ पकड़ कर रथ से उतार लिये। वशिष्ठजी श्रीरामजी के स्तुति और विनय आदि से प्रसन्न हो कर बोले, हेरामचन्द्रजी! आपके पिता दशरथजी आपसे प्रसन्न हैं जो आपको राज्य का अभिषेक करना चाहते हैं, उस अभिषेक कार्य के उपयोग में जानकी के सहित आज आप उपवास कीजिये प्रातःकाल महाराज दशरथ आपको अभिषेक करैंगे जिस प्रकार ययाति नहुष को पाकर प्रसन्न हुए उसी प्रकारदशरथजी आनन्द का अनुभव करैंगे। ऐसा कह कर वशिष्ठजी जानकीजी के सहित श्रीरामचन्द्रजी को मन्त्र संयुक्त उपवास और उसके संकल्प को कराया श्रीरामजी उन क्रियाओं की समाप्ति में वशिष्ठजी का पूजन किये, वशिष्ठजी सत्कार को ग्रहण करके श्रीरामजी के स्थान से चले गये। वशिष्ठ को जाने के उपरान्त श्रीरामचन्द्रजी के मित्र मण्डल उनकी पूजा करके नरनारीगण श्रीराम भवन में ऐसे प्रसन्न हुये जैसे जल से पूर्ण सरोवर में खिले हुए पुष्पों पर भ्रमर प्रसन्न होते हैं इधर वशिष्ठ जी श्रीरामचन्द्र जी के स्थानसे निकल कर मनुष्यों की भीड़ मार्गमें देखने लगे। श्रीरामचन्द्रजी के अभिषेक कार्यको देखने के लिये कौतुक संपन्न मनुष्यों का समूह चारो ओर मार्गमें आक्रान्त है। जन समुदाय रूपी तरङ्गके संघर्ष और प्रसन्नता पूर्वक वार्तालाप के शब्द से वह

राज मार्ग उस समय समुद्र के समान मालूम पड़ने लगा, श्रीरामजी के अभिषेक से पूर्व दिनमें सुगन्धित जल सड़कों पर छिड़के गये हैं तोरण और माला से चारो ओर शोभित है प्रत्येक मार्ग और चौराहों पर पताका बंधा हुआ है इस प्रकार के सज धज से पूर्ण अयोध्यापुरी को बालक वृद्ध युवा स्त्री पुरुष सन्तोष पूर्वक रामचन्द्रके अभिषेक को देखने की इच्छा करने वाले सूर्यके उदय के समान इच्छा किये, प्रजाओं को आनन्द देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी के अभिषेक महोत्सव को देखने के लिये सकल नगरवासी उत्सुक होगये। वशिष्ठजी मार्ग में उपस्थित प्रजा समुदाय को एक ओर करते हुए दशरथजी के पास पहुंचे दशरथजी हिमालय शिखर के समान उंचे सिंहासन पर इन्द्र की सदृश बैठे थे जैसे बृहस्पति को देखकर इन्द्र आसन से उठजाते हैं उसी प्रकार वसिष्ठजी को देखकर दशरथ आसन को त्याग किया और वसिष्ठ जी से अपनी रायको पूछने लगे, और वसिष्ठ ने सब कह सुनाये, राजा और सभासद पुरोहित वसिष्ठ की पूजाकर के अपने योग्य आसन पर बैठाया, गुरु की आज्ञासे सभामें तथा राजभवन पर उपस्थित प्रजाओं का विसर्जन करके राजा दशरथ अन्तःपुर को गये जैसे सिंह पर्वतकी गुफामें प्रवेश करता है, वह अन्तःपुर उत्तम अलंकारों से अलंकृत स्त्रियों के समूह से पूर्ण इन्द्र भवनके समान था जैसे तारा गण से संकुल आकाशमें चन्द्रमा की शोभा होती है वही शोभा स्त्रियों के मध्यमें दशरथ की हुई ।

इति बाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकाण्डे पंचमः सर्गः ॥५॥

वसिष्ठ को जाने के उपरान्त रामचन्द्रजी शुचिमनसे स्नान करके जानकी के सहित नारायण का ध्यान और पूजा करने लगे, नमस्कार पूर्वक नारायण देवके लिये प्रज्वलित अग्निमें घी को हवन लिये प्रचलित अग्नि में घीको हवन किये, शेष हविको अपने कल्याण के लिये खाकर कुशासनपर शयन किये नारायण देवको ध्यान करने लगे। श्रीरामचंद्रजी वैदेही के सहित समाहित होकर अपने

पूजास्थान में शयन किये, एक पहर रात बाकी रहते शय्या से उठकर शौचादि अपने नित्य कर्मों से निवृत्त होकर केश प्रसाधन आदि अलंकार किये, उस प्रातःकाल के समय पौराणिक और राज वंशको वर्णन करने वाले मागध तथा स्तुति करने वाले वन्दी जनों के मुख से आनन्द देने वाले बचन को सुनने लगे, निश्चल मन से पूर्व कालको संध्या और गायत्री जप को समाप्त करके प्रसन्नता पर्वक बिष्णु भगवान् को प्रणाम किया, इधर ब्राह्मणों के मधुर और गंभीर स्वस्ति बाचन शब्द होने लगे, शंख भेरी मृदंग आदि के पातः शब्द से अयोध्या पुरी निनादित हो गयी, श्रीरामचन्द्र जानकी सहित उपवास करके अयोध्या की सजावट सुनकर प्रसन्न हो गये, इधर पुरवासियों ने रामचन्द्रजी के अभिषेक समय को सुनकर प्रातः काल अयोध्या पुरी को अलंकृत करने की चेष्टा करने लगे बड़े बड़े देव मन्दिरों पर चौराहों पर सड़कोंपर किलाओंपर अटारियोंपर, वजारों में तथा नगर बासियों के द्वारोंपर और अन्यान्य ऊंचे ऊंचे स्थानों को ध्वजा और पताका से शोभित हुआ, नट और नाचने तथा गाने वालों के मनोहर शब्दों को जनता सुख से सुनने लगी, अर्थात् अभिषेक महोत्सव में नाच गाना आरंभ हुआ। नगर वासी जन आपस में रामाभिषेक की चर्चा परस्पर करने लगे, बालक गण आंगनो में घरों में और द्वारोंपर अभिषेक महोत्सव का आनन्द मचाने लगे, पुरवासियों ने अनेक प्रकार के पुष्प धूप तथा गंध आदि से सड़कों को सुगंधित और सुशोभित किया, अभिषेक हो जानेपर हाथीपर चढ़कर रामचन्द्र नगर देखने को आवेंगे उनके आने के समय कहीं रात्रि न होजाय इस अभिलाषा से नगर तथा चौरास्ता और सड़कोंपर दीपक (गैस) जलाने के लिये खंभे गड़ गये। सभा स्थान में समस्त सभासद तथा पुरवासी जन आंगन आदि अनेकानेक स्थानपर खड़े होकर महाराज दशरथ की प्रशंसा करने लगे कि धन्य यह महाराज दशरथ हैं कि जिन्होंने अपनी

वृद्धावस्था जानकर श्रीरामचन्द्रजी को राज्यपर अभिषेक करते हैं। हम सब प्रजागण भी ईश्वर से अनुगृहीत हैं कि जो अन्तर्यामी भगवान हम लोगों को वांछित फल दे रहे हैं, धर्मात्मा देशकाल को जानने वाले परम शान्त श्रीरामजी जैसा भाइयों में प्रेम करते हैं वैसाही प्रजाओं में भी उनका प्रेम है, यह महाराज दशरथ त्रिकाल तक जीवें जिसके अनुग्रह से रामाभिषेक को हम लोग आंख से देखेंगे। इस प्रकार पुरवासियों की कहावत अन्यान्य देश तथा नगरों में पहुँची, यह सुनकर रामाभिषेक देखने की लालसा से अनेक देश वासी जन अयोध्यापुरीमें आये, इस प्रकार जन समुदाय के एकत्र होनेका गंभीर शब्द अयोध्यापुरी में होने लगा जैसे पूर्णमासी के दिन पूर्णचन्द्रमा को देखकर उदीर्ण वेगसे समुद्र शब्द करता है। अयोध्यापुरी को देखने के लिये मानो इन्द्रलोक से आये जनोंसे चारो ओर शब्द होने लगा जैसे समुद्र के प्रचण्ड वेगसे शब्द होता है।

इति वाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्या काण्डे षष्ट सर्गः ॥ ६ ॥

इसके उपरान्त सीता को बिना लंकापुरी में प्रवेश किये रावण का वध नहीं होगा इस कार्य सिद्धि के लिये देवताओं से प्रेरित कुब्जा रूपी मंथरा रामाभिषेक कार्य में विघ्न देने के लिये अभिषेक दिनसे पूर्व रात्रि में अभिषेक वृत्तान को केकयी से कहने के लिये तत्पर हुई। मंथरा नाम कार्यार्थमप्सरा प्रेषिता सुरैः। दासी काचन कैकेय्यै दत्ताके कष्ट भूभृता। वह मंथरा केकयी की दासी और पूर्व जन्म की अप्सरा थी वह देवताओं के कार्य सिद्धि के लिये मनुष्य लोक में अवतार लिये थी उसी को केकयी के पिता दासी स्वरूप में दिये थे। केकयी के संग सदा रहने वाली मंथरा उज्वल छतपर बैठकर अयोध्यापुरी को देखा उस समय की अयोध्या पुरी के समस्त राज मार्गों पर जल छिड़का गया है फूले हुए कमल बिछाये गये हैं ऐसी शोभायुक्त अयोध्यापुरी को महल परसे देखने लगी कि राजाके योग्य ध्वजा और पताका से अयोध्यापुरी अलंकृत है

और मनुष्यों को आने जाने को मार्ग की ऊंचाई नीचाई बराबर है जिसपर से स्वच्छन्द मनुष्य गमन करते हैं चन्दन से मिला हुआ जल सड़कों पर छिड़का गया है, स्नानादि से अलंकृत हो कर मनुष्यगण हाथ में रामचन्द्रजी को उपायन (नजर) देने के लिये माल्य तथा मोदक आदि मंगलद्रव्यों को लिये आरहे हैं और देव स्थानों पर अनेक प्रकार के बाजन बज रहे हैं। ब्राह्मणगण वेदध्वनि कर रहे हैं, हस्ती घोड़े आदि प्रसन्न होकर शब्द कर रहे हैं, सकल प्रजा आनन्द के आमोद से परिपूर्ण हो कर अपने २ द्वारोंपर तोरण माल्य बांध रहे हैं, चारो ओर ध्वजा खड़ा होगया है इस प्रकार के विभव से युक्त अयोध्या नगरी को देखकर मंथरा विस्मय को प्राप्त हो गयी। वह मंथरा हर्षसे खिले हुए कमल के समान नेत्र वाली और अनेक विध भूषण वस्त्रसे अलंकृत केकयी के समीप जाकर पूंछी, हे भामिनि! आज राम माता कौसल्या दीन दुःखियों को प्रसन्नता पूर्वक धन दान देती हैं और नगर में चारो ओर आनन्द और हर्षकी वर्षा होरही है राज भवन में अनेक विध बाजन बजते हैं महाराज दशरथ प्रसन्न होकर कौनसा कार्य का आरंभ किया है जिसके वास्ते यह समारोह है। हे प्रिये! यह वृत्तान्त तुम मुझसे कहो। केकयी आनन्द के मारे विह्वल होकर श्रीरामचन्द्रजी के अभिषेक रूपा लक्ष्मी प्राप्तिका समाचार कहने लगी, हे मन्थरा! परम शान्त भ्रातृ वत्सल निष्पाप श्रीरामजी को कल्ह पुष्य नक्षत्र के योग में वृद्धराजा दशरथ अभिषेक करेंगे, केकयी के शुभ बचन को सुनकर मन्थरा ईर्ष्या से मूर्छित होगयी, श्रीरामजी के अभिषेक कार्य में केकयी को भरत के विषय में पाप दर्शाने वाली मंथरा केकयी से बोली, हे मूढ़! तुम उठो क्यों शयन करती हो तुमारे लिये महाभय उपस्थित है तुम दुःख समुह से अपने को पीड़ित समझो, हे केकयी जो तुम चाहती हो कि मेरा सौभाग्य (सोहाग) सबल है मुझे किसी प्रकार का दुःख नहीं है क्योंकि मेरे स्वामी दशरथ मुझ में अत्यन्त प्रेम रखते हैं और मेरे

आज्ञा के अधीन रहते हैं यह तेरा सौभाग्य ग्रीष्म काल में बहने वाली नदियों के सोते के समान क्षीण होजायगा, इस प्रकार क्रोध पूर्वक कठोर बचन केकयी को कहकर मन्थरा विषाद करने लगी मंथरा के शोक क्रोध पूर्वक बचन को सुनकर केकयी बोली हे मन्थरे हमारा कुशल क्यों नहीं होगा, तुम उदासीनता छोड़कर अपने शोक का कारण कहो। केकयी के मधुर बचन को सुनकर देशकाल को जानने वाली मंथरा बोली, श्रीरामचन्द्रजी के अभिषेकमत्सव को केकयी के लिये अनिष्ट दर्शाकर रामचन्द्रजी पर जो केकयी का पुत्र रूप स्नेह था उसको नष्ट करने लगी, हे केकयी ! तुमारे सौभाग्य के नाशका हेतु वर्तमान है, क्योंकि विना भरत के वृद्ध राजा दशरथ रामचन्द्रजी को अभिषेक करते हैं, इसी कारण मैं दुःख और शोक से व्याकुल अगाध भय रूपी समुद्रमें मग्न होकर जलती हुई तुमारे कल्याण के वास्ते यहां आई हूँ। हे केकयी ! सेवक सदा स्वामी के अधीन रहता है तुमारे सुख और आनन्दसे मुझे भी आनन्द है और दुःख में मैं भी दुःखी होऊँगी, हे केकयी ! तुम राजवंश की कन्या हो और रघुकुल भूषण महाराज दशरथ की राजमहिषि हो तुम राजधर्मों पर क्यों नहीं विचारती हो सपत्न (दायाद) को राज्य मिलने में तुमारा और तुमारे पुत्र को अवश्य दुःख भोगना पड़ेगा, जिस पतिको तुम अपने अनुकूल जानती हो वह तुमारे विषय में केवल बचन से धार्मिक हैं, मुहँसे मीठी बातें सुनाते हैं अन्त से शठ हैं अर्थात् तुमसे डाह रखते हैं ऐसे दारुण और क्रूर पतिके व्यवहार को अपने शुद्ध हृदय से तुम जानो, महाराज दशरथ अपने प्रिय बचन से तुम्हें मोहित किये रहते हैं परन्तु कौसल्या के ही कार्यका साधन करते हैं। हे केकयी ! देखो तुमारे प्रिय पुत्र भरतको उद्वासन करके शत्ररहित परम्परा गत राज्य रामचन्द्र को देते हैं। मंथरा के बचन को सुनकर केकयी शरत् कालके पूर्णचन्द्रमाके समान प्रसन्न होकर अपने शयन स्थानसे उठपड़ी, और अत्यन्त सन्तुष्ट होकर मंथरा के लिये दिव्य अलंकार दिया, मंथरा

को आभूषण देकर प्रसन्न मनसे केकयी बोली, हे मन्थरे ! तूने बड़ी सुन्दर बात मुझसे कही इसके बदलेमें मैं तेरा क्या उपकार करूं, श्रीरामचन्द्र और भरत में मुझे विशेष निर्विशेष कुछ नहीं हैं, तौ भी इस सर्ग में केकयी का कहना व्यंग्य है इस व्यंग को अगले सर्गमें मन्थरा समर्थन करेगी । हे मन्थरे तुम बरदान देने योग्य होगई हो, तुमारे इस हितकारी बचन से हम तुमको बरदान देना चाहती हूँ ।

इति बाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्या काण्डे सप्तमः सर्गः ॥७॥

मनुष्योका हृदय अत्यन्त चंचल है इसन्यायसे दो तीन बातोंको उपदेश केकयी को देकर केकयी के मनको फेरने का उद्योग अब आगे मंथरा कर रही है । मंथरा केकयीसे दिए हुए आभरण को झुंझुला कर फेक दिया और शोक और क्रोध पूर्वक वचन केकयी से बोली, हे मूढ़े ! दुःख के समय में क्या तू हर्ष मानती है तू अपने को शोक समुद्र के मध्यमें डूबती समझो, हे देवी ! दुःखसे पीड़ित होती हुई भी तुझे हंसी आती है तू अपने आपदाको नहीं सोचती हो, सवत के पुत्रकी वृद्धि मृत्यु वृद्धिके समान लोकमें देखा जाता है, देखो रामचन्द्रजी को भरतसे भय है क्योंकि जिससे जिसको भय होता है वह उसके पदकी इच्छा करता है, रामचन्द्र को इस समय अभिषेक करनेका आशय मुझे यही ज्ञात होता है कि, इस निष्कण्टक राज्यको भरत पाकर श्रीरामजी को कष्ट देवेंगे और रामको राज्य मिलने पर भरत सर्वथा दुःखी होंगे, इस प्रकार की चिन्ता से उद्विग्न और भयभीत मैं हो रही हूं । सुमित्रा केपुत्र लक्ष्मण मन वचन काय से रामचन्द्र से ऐक्य हैं उनको रामाभिषेक में भय नहीं है, शत्रुघ्न अपने व्यापार से भरत के आयत्त हैं भरत को नाश होने पर शत्रुघ्नका नाश अवश्यम्भावी है, उत्पत्ति क्रमसे भी भरतही राज्यके योग्य हैं, परन्तु उनका विवाह पहिले ही हुआ है । सकल वेद शास्त्र को जानने वाले क्षत्रियों के योग्य

संधिविग्रह आदि प्रयोग में पंडित रामचन्द्रजी भरत के प्रति अनर्थका विचार करेंगे इस भय से मैं अधिक विह्वल होगई हूं क्योंकि भरत की अपेक्षा रामचन्द्रजी पराक्रशील और प्रजारंजन में कुशल हैं, इन उक्त कारणों से राम और भरत में भेद दिखला कर अब कौशल्या के भेद को प्रकाश करती है । भाग्यवती कौसल्या है कि उनके पुत्र को कल्ह पुष्य के योग्य में ब्राह्मण लोग राज्यका अभिषेक करेंगे, रामचन्द्र को राज्य प्राप्त होने पर तुमलोगों को कौसल्या की सेवा करनी पड़ेगी इस प्रकार तुम हम सब दासियों के (समान) सहित कौसल्या की दासी होओगी और भरतजी प्रभाव नष्ट होनेपर श्रीरामचन्द्रजी की सेवकाई करेंगे । सहेलियों समेत राम भार्या जानकी आनन्द करेंगीं और भरतके प्रभाव को नष्ट होने पर तुमारी पतोहू सहेलियों सहित सीताकी सेवकाई करैगी । परमहितकारी मंथरा के वचन को सुनकर कैकयी श्रीरामचन्द्रजी की प्रशंसा करने लगी, मंथरा के वचनपर आक्षेप करके कैकयी बोली, धर्म को जानने वाले सर्वगुणसंपन्न और बाल्यावस्था से उपकार करने वाले राजकुमारों में ज्येष्ठ श्रीरामजी राज्य के योग्य हैं, भाई और सेवकोंको पिताके समान पालन करने वाले रामचन्द्र के अभिषेक महोत्सवको सुनकर तुझे क्यों सन्ताप होता है, पिताके समान भाइयों का पालन करते हुए परम्परागत राज्य को सौ वर्ष से अधिक रामचन्द्र राज्यकरें, यदि विभाग की इच्छा हो तो भरत शत्रुघ्न भी राज्य के अधिकारी होवें (यह गूढ़ार्थ है) हेमंथरे ! तुम रामचन्द्र के अभिषेक महोत्सव में क्यों परिताप करती हो, हमारे हित जैसे भरतहैं वैसेही रामचन्द्र हैं, रामचन्द्र कौसल्या से अधिक हमारी सेवा करते हैं, जब रामचन्द्र को राज्य मिला तो भरतको राज्य मिलचुका, रामचन्द्र अपने समान भाइयों का प्रेम करते हैं, कैकयी के वचन को सुनकर लंबी सांस लेकर मंथरा बोली, मैं अनर्थ करने वाली अपनी मूर्खता के कारण दुःख सागर में शोक के आसन पर अचेत पड़ी हूं और वार वार अनिष्टकी चिन्ता करती हूं तौ भी सोचो कि रामचन्द्रजी को राजा

होनेपर उनके पुत्र राजा होंगे इस कारण राजवंश भरत कैकयी सहित परिहास के योग्य होंगे अर्थात प्रभाव नष्ट होने पर भरत तथा उनके सन्तान राज्यको प्राप्त न कर सकेंगे इस लिये मैं कहती हूं। हे कैकयी! राजा के सभी पुत्र राजा नहीं होते यदि सबको राज्य में भाग दिया जावे तो परस्पर की ईर्षा से प्रजा का नाश होता है, राज्य का भार सर्वगुण संपन्न एकही को सौंपा जाता है यदि ज्येष्ठ गुणवान राज्यका निर्वाह करने वाला न होतो कनिष्ठ अधिकारी होता है, हे दयाशीले! भरत सुख से और राज बंश से हीन हो जायंगे, इस लिये मैं बारबार कहती हूं, परन्तु तुम मुझे लुब्धा जानकर सवत की बृद्धि के लिये हमें पारितोषिक देती हो, अपना हितैषी मुझे नहीं जानती हो। रामचन्द्र को राज्य होने पर देशान्तर और लोकान्तर में भरत की स्थिति नहीं होगी यदि भरत और राम में परस्पर प्रेम होता तो भरत को न रहने पर अभिषेक का समारंभ नहीं होता। क्योंकि जैसे रामके अनुगत लक्ष्मण रहते हैं वैसेही भरत के अनुगत शत्रुघ्न रहते हैं, रामचन्द्र लक्ष्मण का और लक्ष्मण रामचन्द्र का परस्पर कल्याण चाहते हैं ये दोनों भाई परस्पर के प्रेमसे लोक में अश्विनी कुमार कहे जाते हैं इस लिये रामचन्द्र लक्ष्मण का कुछ भी अनिष्ट नहीं कर सकते सिवाय भरत के इसमें कुछ सन्देह न समझना। हे केकयी! तुमारे कल्याण के लिये हम को यही बात रुचती है कि रामचन्द्रजी राजगृह से बनको जावें, इस प्रकार उपाय करने से तुमारा कल्याण होगा और भरत पिता के हाथ से राज्याको पावेंगे। नहीं तो रामचन्द्रके अधीन होकर अपने सुख और जीवन को कैसे बिताओगी, तुमने तो पति के बात्सल्य से कौसल्या को पहिलेही निराकृत किया है राम को राज्य मिलने पर राम माता तुम्हे दासी क्यों न बनायेंगी। इस लिये हेभामिनी! जब पर्वत समुद्र सहित पृथिवी का राज्य रामचन्द्र पावेंगे तब तुम भरत के सहित सेवकाई अवश्य करोगी, जब रामचन्द्र पृथिवी के अधिपति होंगे तब

भरत का प्रभाव अवश्य नष्ट होगा, इस वास्ते भरत को राज्य मिले और राम लक्ष्मण जानकी बन को जावें ऐसा विचार करो ।

इति वाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकाण्डे अष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

मन्थराके इस प्रकार तीन बार के उपदेश करने से कैकयी क्रोध से विह्वल होकर मन्थरा से बोली, आज में रामचन्द्रको बन भेजने का उद्योग करूंगी और शीघ्रही राम के स्थान पर भरत को अभिषेक होगा, हेमंथरे ! इस समय उपाय का विचार करो जिसमें भरत राज्य पावें राम को राज्य न मिले । कैकयी के इसप्रकार वचन को सुनकर अनर्थ दर्शाने वाली मंथरा केकयी से बोली, हेभामिनी ! तुमारे सामर्थ्यको देखो औरमेरे वचन को सुनो मेरी युक्त उपाय का तुम भी विचार करो जिसमें केवल भरत राजा होवें । हेकैकयी ! तुमने तो बहुत कुछ हमारा आदर किया है तौ भी अपने कार्य सिद्धिकी उपाय मुझसे सुनो । हे विलासिनि ! हमारे वचनको सुनकर विचारपूर्वक उपाय करो । इस प्रकार मंथरा के वचन को सुनकर शयनासन से उठकर केकयी बोली, हे मंथरे ! मेरे कल्याण की उपाय कहो जिसमें भरत राज्य पावें केकयी के वचन को सुनकर अनर्थ दर्शाने वाली मंथरा रामाभिषेक में विघ्न देने के लिये केकयी से बोली, हे स्वामिनि ! देवता और दैत्यों के युद्धमें इन्द्रकी सहायता करने के लिये राजर्षि पति दशरथ के साथ तुम जब गयी थी, तब देवताओं की सहायता करके महाराज दशरथ दक्षिण दिशा में दण्डकवन में तुम्हें लेकर पहुँचे वहां वैजयन्तपुर में तिमिध्वज नाम राजा हुआ जो शंवरा सुरके नाम से लोक में विख्यात था, वह दैत्य इन्द्र का सहायक इनको जानकर युद्ध करना आरम्भ किया उस महासंग्राम में महाराज दशरथ ने राक्षसों को पीडित किया, तब युद्ध से श्रान्त राजर्षि दशरथ को रात्रिमें आसन से खींचकर महाराज के प्रत्येक शरीर को राक्षसों ने वेध डाला, तब तुमने संग्राम स्थान से अन्यत्र महाराज को ले जाकर मूर्छित राजर्षि को तुमने रक्षा किया फिर भी दूर से फेंकने वाले आसुरीय अस्त्रों से

महाराज को पीड़ित किया तब तुमने उनको स्थानान्तर में ले जाकर उनकी रक्षा किया, इस प्रकार दो बार प्राण रक्षा करने मे सन्तुष्ट होकर महाराज दशरथ दो बरदान देनेको उद्यत हुए तब तुमने पति से प्रार्थना किया कि जब मेरी इच्छा होगी तब मैं आपसे अपना बरदान लूंगी महाराज ने भी कालान्तर में बरदान देनेको स्वीकार किया है मैं तो इस कथा को कुछ भी नहीं जानती तुम्हारे ही मुख से सुनकर तुम्हारे स्नेह से मैंने स्मरण किया था इसी बरदानके कारण रामाभिषेकको रोक सकती हो। उन दोनों प्रकार के बरदान में भरत को अभिषेक और राम को चौदह वर्ष बनवास की प्रार्थना करो, चौदह वर्ष तक रामचन्द्रको बनवास करने में भरत का प्रभाव प्रजाओं में स्थिर हो जायगा। अब तुम क्रोधागार में प्रवेश करके शृंगार से च्युत हो मलिन वस्त्र धारण करो और पृथ्वी पर शयन करो और न तो महाराज दशरथ की तरफ देखो और न उनसे बात चीत करो बल्कि राजाको देखकर शोक की लालसा से रोदन करो, महाराज दशरथ तुमको प्राण से भी अधिक चहते हैं तो ऐसा करने से तुम्हारा कार्य अवश्य सिद्ध होगा। महाराज दशरथ तुम्हारे ऊपर क्रोध की वर्षा नहीं कर सकेंगे क्योंकि तुम्हारे लिये वह प्राण तक दे सकते हैं और तुम्हारे बचन को भी वह नहीं टाल सकते हैं मूढ़! अपने सौभाग्य के बलको भली भांति दृढ़ जानो! महाराज राजर्षि के दिये हुए मणि मोति सुवर्ण तथा अनेक प्रकार के रत्न आदि के प्रलोभन से कभी विचलित न होना, तुम अपने पूर्व बरदान को कभी मृषा न न करना। हे महाभागे! दशरथ तुमको उठाकर वरदेने के लिये जब अपने सत्यपर दृढ़ होवें तब तुम वरदान की प्रार्थनाकरना कि हे महाराज! चौदह वर्षतक राम बनवास करें और भरत राज्यको भोगें इस प्रकार मंथरा के बचन को अंगीकार करके यद्यपि कैकयी राजाके आधीन है तौ भी उन्मार्ग में चलने को प्रस्तुत हुई। भविष्य अर्थ को देखने वाली केकयी अमृत के समान मंथरा के उपाय रूपी बचन से

विस्मित होकर सविनय बोली, हे मन्थरे ! हम तुम्हारी बुद्धिमत्ताको नहीं जानती थी, राजदासियों के मध्यमें हानि लाभके विचार में तुम उत्तमा हो और हमारी परम हितैषिणी हो और तुम्हारे उपदेश देनेके पहिले दशरथ के अभिप्रायको अर्थात् रामचन्द्रको अभिषेक और भरत का निष्कासन रूप कार्य में नहीं जानती थी। मंथरा के इन उपायों से प्रसन्न होकर केकयी स्नेहकी मारी मंथरा के स्वरूप का वर्णन करने लगी, हेमंथरे ! वायुके झकोरेसे नम्र कमल पुष्पके समान तुम नम्र हो तौ भी प्रिय दर्शन के योग्य हो इस समय तुमारा वक्षस्थल स्कन्धर पर्यन्त उन्नत है, नीचेके स्थान अर्थात् नाभी सहित उदरस्थान शान्त है रोम आदिसे रहित जघन (जंघा) से विस्तीर्ण है कटिमें कंकिणी शब्दाय मान है हे भामिनि ! राजहंसीके समान तुमारी शोभा हो रही है तुमारे हृदय में घुसी हुई माया से स्थगु रथचक्रके समान विस्तारित है, राजनीति और माया तुमारे में विद्यमानहै इसलिये हे मंथरा ! हम तुम को एक सोनेकी माला देती हूं। हेसुन्दरि ! भरतको अभिषेक करनेपर और रामको बन जानेपर उत्तम सुर्वण का हार तुमको देवेंगी कार्य-सिद्ध होने पर तुमारे हृदय में उत्तम चन्दन का लेपन करूंगी और मुख पर सुन्दर तिलक की रचना करूंगी। हे मंथरे ! सुन्दर अलंकारों से अलंकृत करके और देवताओं के समान सुन्दर वस्त्रों से तुझे संतुष्ट करूंगी। इसप्रकार केकयी से प्रशंसा सुनकर मंथरा बोली हेभामिनि ! समयके बीत जानेपर कार्य सफल नहीं होता इसलिये अब तुम क्रोधागारमें प्रवेश करो इसप्रकार मंथरा से प्रोत्साहित केकयी मंथरा के साथ क्रोधागारमें जाकर अनेक प्रकार के वस्त्र और भूषण को परित्याग किया और स्वर्ण मय शरीर को पृथिवी में पतन करके मंथरा से बोली, हेमंथरे ! इस कोपभवन में मुझ मृतक का समाचार राजा से कह देना कि रामचन्द्र बनको जावें और भरत राज्य के भागीहों, स्नान भोजन शयन रत्न सुर्वण से मेरी कामना सफल न होगी, यदि रामचन्द्रको अभिषेक हुआ तो मेरे जीवन का नाश समझलेना। इसके बाद अति

क्रूर वाक्योंसे भरतकी हितकी बात और रामके अहित की बातको मंथरा फिर बोली, हेकल्याणि केकयी ! सावधानी से ऐसीही उपाय करना जिसमें भरत को अभिषेक हो, इसप्रकार बचन रूपीबाण से बारबार केकयीको बेधने लगी और अपने हाथको केकयी के हृदयपर रखकर पुनः पुनः कहने लगी । हेकुब्जे ! मुझे कार्यसाधिनी जानकर दशरथ से कहदेना, कि जबतक रामचन्द्र बनको न जायँगे तबतक आसन शयन चन्दन आजन भोजन माल्य आदिकी हम कुछ भी इच्छा नहीं रखती और न तो अपने जीवनकी लालसा रखती हूँ । इसप्रकार दारुण बचन को कहकर समस्त अलंकार को त्याग किया और पुण्य नष्ट होने पर पतित किन्नरीके समान पृथिवीपर शयन किया, उत्कट कोपसे मुखको मलीन करके उत्तम भूषण और माल्यसे हीन दुःखित मनयुक्त अस्तगत तारागण से आकाश की शोभाको धारण किया ॥

इति बाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकाण्डेनवमः सर्गः ॥ ९ ॥

पापिनि मंथरासे विपरीत अर्थका उपदेश पाकर बाणसे पीड़ित किन्नरी के समान पृथिवीपर गिरपड़ी । मंथरा के उपदेश बचन को मनमें निश्चय करके दुःख पूर्वक उपदिष्टवाक्यों को धीरे धीरे मंथरासे कहने लगी मंथराके बचन से मोहित दीन केकयी को निश्चय करके नाग कन्याके समान गरम और लंबी श्वास लेकर मंथराके नीतिको अपने सुख की इच्छासे विचार करने लगी, मंथरा परम हितैषीणी केकयी अर्थ और काम को निश्चय जानकर ऐसी प्रसन्न हुई जैसे कोई रत्न को पाकर प्रसन्न होता है, इसके उपरान्त रुष्टके कार्याकार्य सिद्धिको निश्चय करके भ्रुकुटी और मुखको एका कार करके इस प्रकार पृथिवीपर शोभा को प्राप्त हुई जैसे आकाशमें तारागण शोभित होतेहैं, अब केकयी के कार्य का वर्णन कर महाराज दशरथकी अवस्थाका वर्णन करते हैं । इधर महाराज दशरथ सभामें उपस्थित मन्त्रि पुरोहित तथा सभासद गणको विसर्जन करके रामाभिषेक कार्य महोत्सवकी विज्ञापना अपने स्वयं देनेको अन्तः पुरमें प्रवेश किये । अति

प्रिया केकयी को रामाभिषेक रूप प्रिय को कहने के लिये केकयी के भवन में प्रवेश किये । राहु युक्त चन्द्रमा की शोभाके सदृश राजमहल में शुक मयूर क्रौञ्चके शब्द होरहे हैं अनेक प्रकारके बाजे बजते हैं, चंपक और अशोकसे लतागृह और चित्रगृह शोभित हैं, चांदी और सोने की वेदियां बनी हैं छवों ऋतु में फुलने फलनेवाले वृक्षों से शोभित हैं अनेक प्रकार के कूप और बावली बने हैं सोने और चांदी के चौकियों पर अनेक प्रकार के भोजन की सामग्री और जलपान रखा है देवताओं को पहिरने के योग्य अनेक अलंकार रखे हैं ऐसे स्वर्ग पुरके समान केकयी के राजमहल में प्रवेश किये । कामदेवके वशीभूत होकर रतिकी इच्छा करने वाले महाराज दशरथ उत्तम शयनासन पर केकयी को न देखकर स्नेह और विषाद पूर्वक प्रतिहारी (दास) से पूछे, इसके पहिले देवि केकयी हमारे आगमन के समय को अति क्रमण नहीं करती थी आज क्या कारण है कि शय्या सूनी पड़ी है, महाराज दशरथ शून्य गृहमें कभी नहीं रहते थे सो आज अकेले केकयी को पूछते हैं। हानि लाभको न विचार करके कामलिप्सा पूर्तिके कारण बारबार पूछने लगे। प्रतिहारी विनय पूर्वक हाथ जोड़कर बोला, महाराज ! देवि केकयी क्रोधकरके कोपभवन में पड़ी हैं, प्रतिहारी के मुखसे सुनकर राजा उद्विग्न होगये, और अतिचंचल इन्द्रियों के प्रभावसे बार बार विषाद करने लगे कि किस कारण केकयी को क्रोध हुआ है इस आशंकासे अत्यन्त व्याकुल होगये । और क्रोधागारमें जाकर पृथिवी पर पड़ी हुई दुःखसे प्राप्त केकयी को महाराजने देखा । वृद्धको युवती स्त्री प्राणसे भी गुरु होती हैं, रामाभिषेक विघात में मनोरथ करने वाली पापिनी को कटि हुई लताके समान और स्वर्ग से च्युत देवता के समान पृथिवी तलपर केकयी को देखा जैसे बनमें बहेलिया के विषमय बाणसे पीड़ित महाराज की शोभा होती है वैसेही शोभाको केकयीने धारण किया । महाराज दशरथ केकयी की अवस्था को देखकर अपने हाथोंसे केकयी के शरीको स्पर्श

करके कमल नयनी बनितासे बोले, हे देवि ! अपने ऊपर मैं तुमारे क्रोधका कारण नहीं जानता हूं कि तुमको किसने तिरस्कार किया है अथवा तुम्हें किसने दुःख दिया है। क्या तुम मुझे कष्ट देने के लिये धूली में पड़ी हो मेरे जीवित रहते हुए तुम क्यों पृथिवी पर पड़ी हो! हे चित्त को अधीन करने वाली ! तुमारे दुःख को दूर करने के लिये मैं श्रेष्ठ औषधी को दान करने वाला वैद्य हूं। हे भामिनि ! हम तुमको आरोग्य करूंगा तुम अपने रोग को कहो कौन वस्तु की तुम्हे इच्छा है अथवा कौनसा कार्य तुम्हारे प्रतिकूल है जो कुछ हो सो तुम कहो, हे प्रिये! तुम अपने अभिप्रायको रोककर रोदन मत करो और अपने शरीर को दुर्बल न करो। जो तुमारा शत्रु हो उसको संहार कर सकता हूं जो बधके योग्य हो और तुमारे शरण में आया हो उसको जीवन दान देसकता हूं जो कोई तुमारा प्रियजन दरिद्र हो उन्हें धनी कर सकता हूं जो दरिद्र को धनी करना चाहती होतो उसे धनी कर सकते हैं, मैं और मेरी सकल संपतियां तुम्हारे अधीन हैं, जो कुछ तुमारे मनोगत कामना हो उसे कहो मेरे जीवते हुए मेरे पराक्रम को जानकर तुम्हें किसी प्रकारकी शंका न करनी चाहिये। जबतक सूर्य चन्द्रमा आकाशमें वर्तमान हैं तबतक यह पृथिवी हमारी है हम प्रतिज्ञा पूर्वक कहते हैं कि यदि तुमारी कामना को सफल न कर सकूं तो मेरा सकल सुकृति नष्ट हो जावे। द्रविड़ सिंधु सौवीर सौराष्ट्र दक्षिणापथ बंग अगं मगध मत्स्य काशी कोशल आदि देश हमारे अधीन हैं इन देशों में उत्पन्न वस्तुओं की अथवा धन रत्नकी जो अभिलाषा हो उसे कहो, तुमको क्या दुःख है। हे प्रिये! तुम उठो क्या तुम्हें भय है, तुमारे दुःख और भयको इस प्रकार नाश करूंगा जैसे सूर्य अन्धकार को नाश करते हैं, दशरथके बचन से परितुष्ट केकयी अपने बचन रूपी बाण से महाराज को फिर भी पीड़ा देनेमें तत्पर हुई ॥

इति बाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकाण्डे दशमः सर्गः ॥ १० ॥

काम बाणसे पीड़ित कामदेवके अधीन महाराज दशरथसे दारुण बचन

को केकयी बोली, हे महाराज ! न तो मेरा किसीने अपमान किया और न किसी ने मुझे विप्रिय किया, जो मेरी प्रार्थना है उसको पूरा करिये यही मेरी इच्छा है यदि आप मेरी प्रार्थना को पूर्ण करना चाहते हैं तो अवश्य करने वाली प्रतिज्ञा को मैं आपसे कहती हूं, कामी महाराज दशरथ केकयी को गोदमें लेकर कहा कि स्त्रियों के मध्य में तुम और सन्तानों में श्रीरामचन्द्रजी से बढ़कर और कोई प्यारा नहीं है, शत्रुओं को नाश करने वाले और हमारे प्राणके आधार श्रीरामचन्द्रजी के शपथसे कहता हूं कि तुमारी अभिलाषा को पूर्ण करूंगा अब तुम अपना मनोरथ कहो। जिन श्रीरामचन्द्र को क्षणभर भी बिना देखे हमारा जीवन नहीं रहसकता है उन रामचन्द्र का शपथ तुमारे लिये मैं करता हूं, हे प्रिये ! यदि रामचन्द्रजी के शपथ के ऊपर तुह्मे विश्वास हो तो बिचार पूर्वक अपने मनोरथ को कहकर हमारे दुःख को दूर करो मैं तुमारे बचन को अवश्य पूर्ण करूंगा। इस तीन वार रामचन्द्रके शपथपूर्वक बचन से अपने मनोरथ की सिद्धिको अर्थात् अपने पुत्रके पक्षपात विषय को उपस्थित जानकर प्राण हरण करने को आये यमराज के समान दुष्ट बचन बोलने को निश्चत किया राजाकी प्रतिज्ञा इस दुर्घटनामें मिथ्या न होजावे इस सन्देह से साक्षी देकर केकयी बोली, हेप्रभो ! अति प्रियपुत्र रामचन्द्र और अपने पुण्यके शपथ पूर्वक जो आप हमारी कामना पूर्ण करना चाहते हैं तो पहिले जो आपने वरदान देनेको कहा है उसको इन्द्र आदि तेंतीस कोटि देवता सूर्य चन्द्रमा ग्रह आकाश दिन रात्रि दशों दिशा के गंधर्व राक्षस पृथिवी निशाचर गृह देवता और भी चराचर आपके उस पूर्व बचन के साक्षी हैं, हेसत्यप्रतिज्ञ ! महापराक्रमी धर्मको जानने वाले सत्यवादी परमपवित्र राजन् ! जिसको सबलोग जानते हैं वह बरदान आप मुझे दीजिये। हेस्वामी ! देवासुर संग्राम के पूर्व वृत्तान्त को स्मरण करिये कि रात्रिकाल के युद्धमें शंवरासुर आग को छोड़ कर वीर्य का नाश किया उस समय मैं

मैंने आपकी यत्न पूर्वक सेवा किया, कालान्तर में आप मूर्छा को त्यागकर जब फिर जीवन को ग्रहण किये तब आप मेरी सेवा से प्रसन्न होकर मुझे दो बरदान देने को उद्यत हुए । उस दिये हुए आप के बरदान को जो मैंने आप के पास छोड़ दिया है आज वही प्रतिज्ञा आप पूर्ण करिये, यदि आप धर्मपूर्वक शपथ करके हमारे बचन को पूर्ण न करियेगा तो मैं आपसे विमुख हो अपना प्राण छोड़ दूंगी । यह कहकर केकयी अपने प्रिय बचन से महाराज दशरथ को अपने आधीन करके मृगा के समान अपने नाश होने के बन्धन रूपी जालको फेंका । हे स्वामी ! मैं अपनी कामना के सिद्ध के लिये उन बरदानों में से विभाग करके एक एक आपसे माँगती हूं, अब आप मेरे बचन को सुनिये,कि रामचन्द्र के लिये जो अभिषेक की तइयारी हैं उसी स्थान पर भरत को अभिषेक करिये । और देवासुर संग्राम में दिया हुआ जो दूसरा बरदान है उसका भी समय उपस्थित है कि चौदह वर्ष पर्यन्त श्रीरामचन्द्र दण्डकबन में निवास करें रामचंद्र चीर और मृगचर्म धारण करके तपस्वी के वेष में बनवास करें और भरत निष्कंटक राज्यका भोग करें । इस लिये राज राजाओं में श्रेष्ठ सत्य को पालन करने वाले कुलशील और जन्मकी रक्षा कीजिये ॥

इति बाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्या काण्डे एकदशः सर्गः ॥११॥

महाराज दशरथ बज्रपात के समान केकयी के दारुण बचन को सुनकर भ्रम पूर्वक चिन्ता और विषाद करने लगे क्या मुझे दिन के यह स्वप्न दिखरहा है अथवा यह चित्तका मोह है क्या अथवा कोई ग्रह जनित पीड़ा आकर प्राप्त हुई क्या, अथवा कोई व्याधि होगई क्या, अथवा मन में विकार होने से यह बाधा उत्पन्न हुई है क्या, राजा इस प्रकार चिन्ता करते हुए मूर्छित हो गये, पुनः चेतना को पाकर केकयी के बचन से इस प्रकार दीन हो गये जैसे सिंहको देखकर पीड़ा से मृगी दीन हो जाती है, जैसे

मंत्र के बलसे विष को नष्ट होने पर सर्प की जो दशा होती है उस दशा में प्राप्त महाराज दशरथ बोले, मुझे धिक्कार है, ऐसा कहकर फिरभी मूर्छा को प्राप्त हो गये,कुछ काल के बाद मूर्छा से निवृत्त होकर दुःख से जलते हुए कैकयी से बोले, हे क्रूर दुष्ट चरित्र वाली ! इस कुल को नाश करने में कुठार यह तैंने क्या कहा, हे पापे ! जो रामचन्द्र माता के समान तेरी सेवा किया करते हैं उनके विषय में तैंने क्या किया रामचन्द्र के विषय में कौन कारण से अनर्थ करने को तूँ प्रस्तुत है क्या तूं मेरे जीवन को नाश करने के लिये इस क्रोधागार का आश्रय लिया है, जैसे तीखे विषसे सर्पिणी मनुष्य को पीड़ित करती है वैसे ही लोक पूज्य रामचन्द्र को तूने किया है । हे कैकयी ! तुम्हारे लिये कौशल्या सुमित्रा तथा राज्यलक्ष्मी तक को छोड़ सकते हैं परन्तु प्रिय पुत्र रामचन्द्रजीको कौन से अपराध के बदले मैं त्याग करूं अपने जीते हुए तुम्हारे कार्य के वश हम रामचन्द्र को नहीं त्याग सकते क्योंकि रामचन्द्र में हमारी पराभक्ति है, यहां पराभक्ति इस शब्द से रामचन्द्रजी को ईश्वर जानकर अपने को भक्त समझा ।

जैसे बिना सूर्य के जगत अंधेरा हो जाता है बिना जल के धान सूख जाता है वैसेही बिना रामचन्द्र के हमारा जीवन नहीं रह सकता है, तो हमारे जीवन के नाश होनेपर तुम्हें बिधवा होना पड़ेगा। इसी लिये रामचन्द्रके विषयमें निश्चय बनवास के आग्रह को छोड़दो । हे पापिन ! हम तुमारे चरणपर पड़ता हूं अब प्रसन्न होओ क्यों तुम इस परम दारुण कार्य को विचार किया है । हेपापचारिणि ! भरत के हित अहित को जानकर जो तू ने जिज्ञासा मुझ से किया है वह ठीक हो परन्तु धर्म ज्येष्ठ और पुत्रों में ज्येष्ठ श्रीरामचन्द्रजी का गुण पहिले तू भी वर्णन करती थी सो रामचन्द्रजी के अभिषेक को सुन कर जलती हुई बरदान देनेके बहाने से मुझे भी अभिषेक से निवारण करने के लिये अपने कठोर बचन से शोकसागर में डुबा दिया । हे देवि ! रघुबंशियों में यह आज नई बात है जो जेष्ठको रहते हुए

लघु राज्यको भोगे इस प्रकार की चेष्टा तुमारी बुद्धिका भ्रम जान पड़ता है। हेविशाल नेत्रवाली ! तुमारे लिये जैसे महात्मा भरत वैसे ही श्रीरामचन्द्र उनके बिषय में जो कुछ कारण हो सो कहो, हे भय रखने वाली ! भरत तुल्य रामचन्द्रको चौदह वर्ष बनवास देने में कैसी तुम श्रद्धा करती हो, हेनिर्दय ! अत्यन्त सुकुमार रामचन्द्रको बन वासका कैसे निश्चय किया है। लोकमें अभिराम तुमारी सेवा में परायण कमलनयन रामचन्द्रका प्रवास कैसे तू कहती हो, श्रीरामचन्द्र जी भरतसे अधिक तुमारी सेवा करते हैं और तुमारा गौरव मानते हैं, हेकेकयी ! रामचन्द्रसे अतिरिक्त तुमारी सेवा और तुमारा गौरव और तुमारी आज्ञाको कौन पालन कर सकता है। हजारों स्त्रियों के मध्यमें एक तुमहीं हो जो रामचन्द्र पर दोष देती हो, श्रीरामजी में ईर्ष्या आदि दोष आज तक कुछ भी नहीं देखा गया है, रामचन्द्रजी अपने शुद्ध हृदय से और प्रजाओं के इष्ट संपादन करने से अपने आधीन कर लिया है अपने आत्मबलसे लोकको प्रसन्न किया है, दान देने से ब्राह्मणों को सेवा करने से गुरू तथा गुरुजनों को और अनेक प्रकारके अस्त्रशस्त्र से शत्रुओं को अधीन करलिया है, श्रीरामचन्द्रजीमें सत्यदान, तप, त्याग, मित्रता, शौच, बिनय, विद्या और गुरूकी सेवा आदि गुण संपन्न इन्द्र तुल्य रामजी पर कैसी तूने पाप मय जालको फैलायी है, हे केकयी ! जो रामजी कभी किसीको अप्रियबचन नहीं कहे सो तुमारे अर्थ रामचन्द्र को अप्रिय बचन हम कैसे कहैं, हेदुष्ट निर्दयी ! जिन रामचन्द्र में क्षमा, तपस्या, दान, सत्य, धर्म, कृतज्ञता और प्राणियों की प्राण रक्षा सदासे है उन रामचन्द्र के बिना हमारा जीवन कैसे रह सकता है। हे केकयी ! चौथी अवस्था में प्राप्त बृद्ध तपस्वी और दीन पर तुम दया करो, समुद्रपर्यन्त हमारा अधिकार है जो कुछ बस्तु की तुम्हें इच्छा हो वह मैं दे सकता हूं, परन्तु अपनेको और मुझको कालके मुख में न ले जाओ। मैं हाथ जोड़कर तुमारे चरण पर गिरता हूं, कि तुम रामचन्द्रजी के शरण हो जाओ और अपने अधर्म का त्याग

करो, इस प्रकार विलाप करते हुए घूमकर मूर्छित हो गये महाराज दशरथ अपने दुःख को दूर करने के वास्ते केकयी से बार बार प्रार्थना करने लगे, केकयी राम विषयक प्रेम दशरथ का देखकर अपने कार्य में अनिष्ठ की संभावना से बोली,—हे राजन्! पहिले बरदान देके पीछे सन्ताप मनाते हैं इससे पृथ्वी में आप धार्मिक कैसे कहे जा सकते हैं। हे राजन्! जब अनेक् राजर्षि आप की सभा में बैठ कर हमारे बरदान विषय के प्रश्न को उठावगे तब आप क्या उत्तर देवेंगे, शंवरासुर के माया को मोचन करने में अनुग्रह करने पर प्रतिज्ञा करके जो आपने मेरे विषय में मिथ्या किया है इसमें आप क्या उत्तर देवेंगे। हे राजन! रघुवंशियों में यह कलंक हो जायगा जो आपने वरदान देकर फिर बदलना चाहते हैं इससे लोक में यही अपवाद होगा कि जिस बंश में प्रतिज्ञा छोड़ने वाला इस प्रकार का पापी है उसके बंश में सभी वैसे होंगे। देखिये एक समय इन्द्र और अग्नि राजा शिवि के दया को परीक्षा लेने के वास्ते श्येन (बाज़) और कपोत (कबूतर) का रूप धारण किया, वह बाज कबूतर को भक्षण करने के लिये पीछा किया, कबूतर बाज के भय से अपना प्राण बचाने के लिये चारो ओर घूमता हुआ राजा शिवी के शरण में जा पहुँचा, राजा शिवी कबूतर को अपने गोद में लेकर उसको अभय दान दिया, तब श्येन ने कहा महाराज आपकी आज्ञा से मैंने कबूतर को छोड़ दिया परन्तु अब अपनी जीविका का निर्वाह किस प्रकार करूं श्येन को क्षुधित देख और आर्त बचन को सुनकर राजर्षि शिवी कबूतर के बदले में अपने शरीर का संपूर्ण मांस श्येन को दे दिया, और राजा अलर्क अन्धे ब्राह्मण के बरदान को सुनकर किराना की आंख मिलने से तुमारे को नेत्र होगा इस प्रकार के बरदान को सुनकर अपनी आँख ब्राह्मण को दे कर शिवी और अलर्क परम गति को पाया है, समुद्र भी समय को पाकर अपनी मर्यादा को नहीं त्याग करता है वैसे ही पूर्व राजाओं के वृतान्त को स्मरण

करके अपने बचन का पालन कीजिये। यदि आप धर्म को छोड़कर रामचन्द्र को अभिषेक करेंगे तो कौशल्या के साथ ही साथ रमण विहार करना, नहीं तो हमारा बचन चाहे धर्म हो, अधर्म हो, सत्य हो, मिथ्या हो परन्तु उसका पालन आपको अवश्य करना चाहिये। यदि रामचन्द्र को अभिषेक होगा तो विष खाकर आपके सन्मुख में अपने प्राण को छोड़ दूंगी। हे राजन्! मैं भरतका शपथ करती हूं कि बिना रामचन्द्रको बन गये मैं अपने प्राण को नहीं रख सकूँगी। केकयी इस प्रकार राजा से कहकर मौन हो गयी, महाराज दशरथ करुणा पूर्वक राम बनवास और भरत को राज्य रूपबचन केकयी का सुनकर कटे हुए वृक्ष के समान पृथ्वीपर गिर पड़े जैसे सन्निपात से पीड़ित रोगी की दशा बदल जाती है जैसे मन्त्रबल से सर्प तेजहीन हो जाता है वैसेही राजा दशरथ केकयी के बचन से तेज हीन हो गये। पुनः दीन आतुर के समान केकयी से बोले, कि हे केकयी! इस प्रकार अनर्थ करने को तुम्हें किसने उपदेश दिया है कि तुम शील व्यसन और लज्जाको छोड़कर पागल के समान मेरे सन्मुख इस प्रकार बचनको कहती हो. बालक के ज्ञानके समान तुमारा ज्ञान मुझे जान पड़ता है किस कारण रामचन्द्रसे तुम्हें इतना भय है भरतको राज्य और रामचन्द्र को बनवास रूप कार्यसे विश्राम करो। यदि हमारा और भरतका हित चाहती हो अपने हठको छोड़ दो, क्यों यह मेरे और राम पर व्यर्थ अपराध देती हो बिना रामचन्द्रके भरत राज्य नहीं करेंगे। हम भरतको रामसे अधिक बलवत्तर जानते हैं तो भी तुझे यह कहना उचित नहीं है कि रामचन्द्र बनको गमन करें। जो मैं अपने मित्रोंके साथ सुकृति पूर्वक रामाभिषेक को निश्चय किया है तो उनके सन्मुख मैं क्या अपने मुखको दिखलाऊंगा और रामाभिषेक महोत्सवमें जो अनेक देशके राजा आये हैं उनसे क्या कहूंगा, लोकमें यही निन्दा होगी कि केकयी के दुःखके लिये राजादशरथ रामचन्द्र को अभिषेक करने के बदले में बनवास दिया है, मैं अथवा मेरे पुत्र रामचन्द्र क्या तुमारा अनिष्ट किया

है जो हो सो कहो, हम तो दासीके समान,सुख्त कालमें सखीके समान, रहस्य कहने में भार्या कि समान,धर्मानुष्ठानमें भगिनीके समान, शिक्षा देने में माताके समान, भोजन कालमें जानकर तुमारी सेवा करते हैं। इस समय जैसे रोगीको अपथ्य का भोजन पीड़ा देता है उसी प्रकार रामाभिषेक के बदले रामबनवास मुझे पीड़ा दे रहा है। और राजा न्याय पूर्वक व्यवहार न करेंगे यह सोचकर सुमित्रा अपने पुत्रके विषय में हमारा विश्वास नहीं करेंगी, और वैदेही इस अनर्थ कारी बचनको नहीं सहन कर सकेगी। मेरे रामचन्द्र के शोचमें वैदेही भी अपना प्राण त्याग करेंगी। जिस प्रकार हिमालय पर्वतके समीप किन्नरसे वियोगपाकर किन्नरी अपना प्राण छोड़ देती है वैसेही महाबन को जाते हुए रामचन्द्रको बिना देखे में अपना प्राण आवश्य छोड दूंगा। इस प्रकारके मनोवांछित व्यवहार करने से जगतमें तेरा नाम कुलटा आदि होगा। जैसे व्याध बनमें बीणाको बजाकर मृगाओं को अपने अधीन करके पीछे उनका प्राण मारता है वैसेही तैंने अपने प्रिय बचन से मुझे अधीन करके अब प्राणको नाश करना चाहती है जैसे व्यभिचारिणी स्त्री अपने सुखके लिये अपने पुत्रको विक्रय करदेती वैसाही तेरे व्यवहारको लोकमें निन्दित कहेंगे, रामचन्द्रको बनवास देनेका जो तुमारा दूसरा बरदान है वह बड़े दुःख महाकष्ट का देनेवाला है, हे पापिनि! सुखके लिये जो मैंने तुझे अपने कण्ठसे लगाया और दुःखसे रक्षा करने का उपाय किया उसका फल यही हुआ कि दयाको छोड़कर तू प्राण नाश करना चाहती है, कालके सदृश तुमको न जानकर जो तुमारे साथ विहार करने की इच्छासे आये उसका फल वैसा हुआ जैसे धोखेमें कोई काले सर्पको उठालेवे। मेरे जीवित रहने पर भी महात्मा पुत्र रामचन्द्रको राज्य से तैंने भ्रष्ट किया, और लोकमें निन्दाको लाभ किया, लोग यही कहेंगे कि मूढ़ राजा दशरथ स्त्री के बशमें होकर प्रिय पुत्र रामचन्द्र को बनवास दिया है। हे कैकयी! अपने दूसरे बरदान से तुम क्षमा करो, यदि मेरे रामचन्द्र

को बन जानेकी प्रेरणा करोगी तो मेरे लिये यही प्रतिकूल होगा तुमको ऐसा उचित नहीं है कि लोकनिन्दा का कार्य करके मुझे यम लोकका अतिथि बनाओ, नहीं तो मेरे मरने पर और रामचन्द्रको बन जाने पर कौशल्या आदि को क्यों दारुण दुःख का साधन करोगी, कौशल्या आदि स्त्रियां रामलक्ष्मण को बन जाने पर उनके वियोग में मुझे प्राण छोड़ने पर सुमित्रा और कौशल्या भी अपना जीवन त्याग करेंगी, तो कौशल्या सुमित्रा और राम लक्ष्मण के सहित मुझ को नरक में फेंक कर सुख भोग करो। यदि भरतकी रायसे तुम हमारे प्रिय पुत्र रामचन्द्रको बनवास देना चाहती हो तो मेरे मरने पर भरत जी श्राद्ध जलदान आदि क्रिया हमारी न करें। हे राजपुत्री! यदि दैवने तुमको हमारे राजभवन में स्थान दिया है तो इससे लोक में अयश, महाजनों में धिक्कार, समस्त प्राणियों में निन्दा इस पापके बदले अवश्य होगी। हमारे यहां इतने रथ, हाथी, घोड़ा आदि को रहते हुए भी श्रीरामचन्द्रजी तपस्वियों के समान बनमें पैदल चलेंगे। जिन रामचन्द्रके भोजनके समय अनेक प्रकारके पदार्थ तइयार होते हैं वह रामचन्द्र कसैले, तीते, खारे, कडुऐ जंगली आहार से अपनी जिविका करेंगे, जो रामचन्द्र बहुमूल्य वस्त्रको पहिन कर अनेक प्रकार के उचित सुख और आनन्द को प्राप्त हैं वह चीर किस प्रकार धारण करेंगे, रामको बनवास और भरतको राज्य इस प्रकारके दारुण बचन कहने की किसने प्रेरणा किया है अथवा यह हमारे जन्मान्तर का फल है, शठ और स्वार्थको चाहने वाली स्त्रियोंको धिक्कार है, जगत के सुख को अपने सुखके लिये नाश करने वाली और मुझको दुःख सागर में डुबाने वाली केकयी हमारे दोषको देखा है अथवा रामचन्द्र के दोष के दोषको देखकर इस प्रकार निर्दयी हुई है। श्रीरामचन्द्रको व्यसनमें मग्न देखकर सकल जगत् कुपित होकर लोग अपने पुत्रों को और स्त्रियां अपने पतियों को छोड़ देवेंगी। मैं अश्विनी कुमार के समान अलंकृत राम लक्ष्मणको नयन से देखकर फिर भी युवाके समान हो

जाऊंगा, क्योंकि बिना सूर्यके जगत् का व्यवहार चल सकता है बिना वर्षाके मनुष्यों का जीवन रह सकता है परन्तु बिना रामचन्द्रके किसी का जीवन नहीं रह सकता है यह हमारी मति है, यहां पर महाराज दशरथ शोक सागर में पहुँच कर रामरूप आत्म दर्शन करते हैं, बिना रामचन्द्रके किसीका जीवन नहीं रह सकता है तात्पर्य यह कि अन्तर्यामी के बिना ब्रह्मासे लेकर तृण पर्यन्त लय होजाता है । हे केकयी ! विनाशकी इच्छा करने वाली साक्षात् मृत्युके समान तुमको जो मैंने धारण किया उसका फल यह हुआ कि सर्पके समान अपने बचन रूपी विष से तूने मेरे प्राणको नाश किया। हे केकयी! तुम राज्य, नगर, पुर, राष्ट्र, मित्र, बन्धु, बान्धवों को नाश करके हमारे शत्रुओं की प्रिया हो। हे केकयी ! मेरी वृद्धावस्थामें पुत्र वियोगको प्रहार करने वाली किस कारण तेरे विषमय दांतों की हजार धारा होकर फैल रही है। हे केकयी! मैंने तेरा कुछ भी अपमान नहीं किया है और रामचन्द्रजी कभी तुझे कठोर बचन नहीं कहा है, तो रामचन्द्र को बनवास देने का विचार तैंने किस कारण किया है, चाहे तू कितना भी ग्लानि करो अथवा अग्नि में प्रवेश करो वा समाधि के द्वारा पृथ्वी में धँस जाओ परन्तु हे कुल में कलंक देने वाली ! तेरे बचन का पालन नहीं करूँगा। हे मिथा कहने वाली ! दुष्ट स्वभाव वाली ! तुम्हारे जीवन के साथ मैं अपने जीवन को नहीं रख सकता हूं केवल मैं तुम्हारे ही नाश की इच्छा करता हूं। यहां तक दंडवाक्य केकयी को कहकर अब केकयी को प्रसन्न करने के लिये सामका प्रयोग करते हैं क्योंकि शोक से जिसकी चेतना नष्ट हो जाती है वह मनुष्य विवश हो जाता है। हे केकयी, बिना हमारे जीवन के तुमको सुख कहां और बिना रामचन्द्र के हमारा जीवन कहां इस लिये हम तुम्हारे चरणपर। पड़ते हैं तुम मेरा अनर्थ न करो। महाराज दशरथ अपनी मर्यादा को छोड़कर अनाथ के समान विलाप करते हुये केकयी देवी के चरणों पर गिर पड़े ॥

इति वाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकाण्डे द्वादशः सर्गः ॥१२॥

जिस प्रकार पुण्य को नष्ट होने से ययाति का स्वर्ग से पतन हुआ उनके समान योग्य शयनासन को छोड़कर महाराज दशरथ स्त्री को प्रणाम करते हैं भूमिपर पड़े हैं कैकयी दशरथ की दशा को देखकर अपने बचन को दृढ़ करने के लिये बोली, हे महाराज ! आप सत्यवादी और सत्य प्रतिज्ञ कहे जाते हैं तो अब आप मेरा ऋण क्यों नहीं लौटाते, महाराज दशरथ केकयी के इस प्रकार कठोर बचन को सुनकर क्रोध पूर्वक विह्वल होकर बोले हे दुष्ट! हे बैरी ! मेरे मरने पर और रामचन्द्र को बन जाने पर अपने मनोरथ के फलको पाकर सुखी होना, रामचन्द्र के प्रवास दुःख से मुझे स्वर्ग में भी सुख नहीं होगा यदि स्वर्ग में देवगण मुझसे रामचन्द्रजी के कुशलको पूछेंगे तो मैं क्या उत्तर दान करूंगा, यदि मैं सत्यप्रतिज्ञ होकर केकयी के सुखकी कामना से रामचन्द्रको बनवास देनाही सत्य है तो, रामचंद्र ज्येष्ठ हैं और उत्तम गुणों से परिपूर्ण हैं मेरे हृदय हैं, इस बचन को कैसे सत्य कर सकता हूं, महर्षियों के बड़े परिश्रम से पुत्र हीन मैं पुत्रवान हुआ तो रामचन्द्रको पाकर कैसे त्याग करूं, शूरबीर वेद शास्त्र तथा देशकाल को जानने वाले क्रोध को नाश करने वाले क्षमाका आश्रय धारण करने वाले रामचन्द्रको मैं कैसे त्यागकर सकता हूं। नीले कमल के समान श्यामवर्ण लंबी भुजा वाले अत्यन्त पराक्रमी लोक में अभिराम रामचन्द्र को मैं कैसे दण्डक बन में चौदह वर्षतक रखसकता हूं, उचित सुख को विसर्जित कराके अनुचित दुःखको सेवन करते मैं रामचन्द्रको किस प्रकार देखूँगा, दुःखको नाश करने वाले रामचन्द्र को दुःखी न देखकर मैं अपना प्राण पहिले छोड़ देगे तो स्वर्ग के सुखको भोगेंगे क्योंकि मरनेपर बरदान देनेका दोष नहीं रहैगा जिवतेही के लिये बरदान रूप यह प्रतिज्ञा है।

हे निर्दयिनी ! हेपाप संकल्प करनेवाली ! सत्य पराक्रमी रामचन्द्रजी का क्यों अनर्थ करती है यह तुमारी अकीर्ति जन्मसे संपादित कीर्तिको नष्ट कर देवैगी। इस प्रकार दशरथ को विलाप करते करते सायं-

कालके सूर्य अस्त होगये । निशा भगवती चन्द्रमा से अलंकृत होकर अपना प्रभाव जगत में फैला दिया परन्तु वह चन्द्रमा युक्त रात्रि की शोभा का आनन्द शोकाकुल दशरथको कुछ नहिं मिला विलाप करते २ रात्रि व्यतीत हो चली, महाराज दशरथ आकाश की तरफ दृष्टि दिये विलाप कर रहे थे और रात्रि से प्रार्थना पूर्वक कहने लगे, कि तारागणों से भूषित हे निशा भगवती ! प्रातः काल मत करो जिसमें मुझे दुःख का सामना करना पड़े, हे निशा ! मुझदीन पर दया करना जिसमें प्रातः काल न होवे अथवा तुम शीघ्रही व्यतीत हो जावो जिसमें मैं भी दुःख से मुक्त होजाऊं फिर मुझे दुष्टा केकयी का दर्शन जिसमें न होवे । इस प्रकार प्रलाप करके केकयी को प्रसन्न करने में महाराज दशरथ हाथ जोड़ संयत हो गये, राजधर्म को जानने वाले दशरथ फिर भी केकयी को प्रसन्न करने लगे, कि हे देवि ! साधु और वृद्ध तथा दीन इस राजापर प्रसन्न होओ शोकसे व्याकुल हो जो कुछ कटुवचन मैंने कहा उसको क्षमा करो रामाभिषेक को रोकने का जो तुमने प्रयत्न किया वह एकान्त में मुझसे किया अब सभा में उपहासन कराओ हमारे ऊपर न्योछावर करके अपनी ओर से राम को राज्य देओ और जगत में उज्वल यश को प्राप्त करो, हमारा और रामचन्द्र का तथा गुरु वसिष्ट सहित सकल जगत का कल्याण करो । विशुद्धभावसंपन्न आंसु को छोड़ते हुए महाराज दशरथ के अनेक प्रकार के करुणा सहित विलाप को सुनकर लाल लाल नेत्र किये रोती हुई केकयी निरुत्तर हो गयी । राजा दशरथ प्रतिकूल कहनेवाली दुष्टा केकयी को प्रसन्न नहीं देखकर फिर भी मूर्छित हो गये और राम बनवास को निश्चय जानकर कटे हुए वृक्षके समान पृथिवी पर गिर पड़े । और लम्बी श्वास लेने लगे इतने में रात्रि भगवती भगवान् सूर्य नारायण के भय से अन्धकार का संकोच करने लगी , प्रातःकाल के बन्दियों ने अनेक बाजों को बजाकर स्तुति करने लगे परन्तु शोकाकुल राजा उन बन्दियों

का निवारण कर दिया ।

इति बाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकाण्डे त्रयोदशः सर्गः ॥१३॥

पुत्र शोक से पीड़ित मूर्छा को प्राप्त होकर पृथिवी में गिरे महाराज दशरथ को मरणासन्न देखकर भी दशरथ से कैकयी बोली,- हे राजन् ! मेरे बचन को सुनकर पीड़ा पूर्वक जो आप पृथिवी पर गिरे हैं यह उचित नहीं है धर्म को जाननेवाले महर्षि सत्य को परमधर्म मानते हैं इस लिये मैंने सत्यरूप धर्म पर आरूढ़ होकर जो बरदान की प्रार्थना आपसे किया उसको बिना पूर्ण किये मरना आपके लिये अधर्म है देखिये राजा शिवि अपने शरीर का मांस पक्षिको देकर परम गतिको पाया है, राजा अलर्क मांगनेपर ब्राह्मण को अपना नेत्र दान किया है, सत्य के ऊपर स्थिर होकर समुद्र अपनी मर्यादा का अतिक्रमण नहीं करता सत्यही के ऊपर सकल धर्मकी प्रतिष्ठा है सत्यही से वेदका अक्षय फल मिलता है सत्य से मनुष्य को परमपद मिलता है इसलिये यदि आप सत्य का पालन करें धर्मपर यदि आपकी बुद्धि स्थिर हो तो मेरे बरदान को सफल करिये, और अपने परलोक को सुधार करने के लिये रामचन्द्र को बनवास की आज्ञा देकर तीन बार कही हुई अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करिये । हे राजन् ! यदि आप हमारे बचन को पूर्ण नहीं करेंगे तो मैं आपके सन्मुख अपना प्राण छोड़ दूंगी, निर्भय कैकयी के इस प्रकार बचन को सुनकर दशरथ स्त्रीके वाग्जाल से अपना छुटकारा नहीं समझा जैसे वामन के हाथ से बली नहीं मुक्त होसका । अपने विकल नेत्रों से महाराज दशरथ अपने हृदय को धैर्य देकर केकयी से बोले, हे पापे ! जो मैंने मंत्रपूर्वक अग्नि को साक्षी देकर तुमारा पाणिग्रहण किया है सो तुमारे पुत्रके सहित तुमारा त्याग करेंगे । रात्रिबीत जाने के बाद सूर्यके उदयकाल में अभिषेक कार्य में नियुक्त सभासद उपस्थित होकर रामाभिषेक को अवश्य करेंगे, और राज्य को पाकर रामचन्द्र हमारी जल क्रिया करेंगे, भरत के सहित

तुम हमारी क्रिया नहीं कर सकोगी, पहिले मैं रामचन्द्रजी के मुख कमल को विकसित देखकर इस समय मलीन मुख रामचन्द्र का किस प्रकार देखेंगे ऐसे जीवन से मरण अच्छा है, केकयी से इस प्रकार कहते कहते महाराज दशरथ की रात्रि व्यतीत हो गयी। इसके उपरान्त अनर्थ की इच्छा करने वाली केकयी क्रोधसे कठोर बचन राजा से बोली, हे राजन् ! विष और शूलके समान बचन कहना आपका व्यर्थ है मेरा ऋण बिना चुकाये बाहर जाना आपको उचित नहीं है आप भरत को राज्य देकर रामचन्द्र को बनजाने की आज्ञा देकर कृतकृत्य हूजिये। व्यथा से पीड़ित राजा दशरथ केकयी से बोले, धर्मके बंधन में बंधकर मेरी चेतना नष्ट हो गयी है इस समय मैं परम धार्मिक प्रियपुत्र रामचन्द्र को देखना चाहते हैं, (अथवा मैं अचेत न होगया हूं तू अपनेही अपने मनोरथ की सिद्धि करो मैं कुछ नहीं कहूंगा) अब प्रातःकालके समय सूर्य को देखकर स्नानादि क्रियाको समाप्त करके कुश आदि सामग्री को लेकर पुण्य नक्षत्र योगमें सकलगुण संपन्न वशिष्ठजी अपने शिष्यों के सहित पुरीमें प्रवेश किया मार्गमें जलका छिड़काव होने लगा, पताका से नगरी भूषित हो गयी और रामाभिषेक महोत्सव में उत्कंठित लोगों की भीड़ भाड़ चारो ओर फैल गई अनेक प्रकार के धन, रत्न, वस्त्र, पक्वान्न तथा अन्यान्य वस्तुओं से नगर का बाजार चहचहाने लगी चन्दन, अगर, कस्तूरी और धूप का सुगन्ध चारो ओर उड़ने लगा, इन्द्रपुरी के समान अयोध्यापुरी की शोभा हो गयी। अन्तःपुर अनेक प्रकार के माल्य, तोरण, पताका आदि से शोभित हुआ इतने में वसिष्ठ मुनि अपने शिष्यों और पुरवासियों के सहित राजद्वार पर आये और रनिवास से निकलते हुए मन्त्रि पुत्र सुमन्त्र को देख कर वसिष्ठजी बोले, हे सुमन्त्र ! महाराज से कहिये की सोने के इन कलशों में गंगाजल भरा है गूलर का भद्रपीठ तइयार है और सर्वौषधि तथा भांति भांति के रत्न, मधु, दधि,

घी, लाजा, कुशा, पुष्प, दूध, श्रेष्ठ हाथी, आठकुमारी कन्या और चार घोड़ेकी रथ अनेक प्रकारके अति उत्तम २अस्त्र, शस्त्र, पालकी, उज्वलछत्र, श्वेतचामर, सोने के वर्तन, अलंकारों से भूषित डील वाला बैल, चार दांत वालासिंह सिंहासन व्याघ्रचर्म, समिधा अग्नि अनेक प्रकार के बाजे, शृंगार युक्त वेश्या, आचार्य, ब्राह्मण, गौ, पवित्र पक्षि, नगर के सेठ तथा देश देशान्तर के राजा ये सब सहित वशिष्ठ पुरोहित द्वार पर खड़े हैं, अब महाराज भी शीघ्र करें जिससे पुष्य नक्षत्र योग में रामचन्द्र को राज्य मिले वशिष्ठजी के बचन को सुनकर महा बुद्धिमान सुमन्त्र महाराज दशरथ की प्रशंसा करते हुए राज भवन में पहुंचे। और महाराज की दशाको न जानते हुए समीपमें खड़े होकर प्रिय और सुमधुर शब्दों से इस प्रकार हाथ जोड़ सुमन्त्र राजाकी स्तुति करने लगे जैसा कि पूर्व में करते थे, हे महाराज! चन्द्रमाको देखकर जैसा समुद्र को आनन्द होता है वैसे ही प्रसन्न मनसे हम सब को आनन्द दीजिये, जैसे सूर्य के उदयकाल में मातली से जगाये गये इन्द्र अपनी प्रशंसा सुनकर आनन्द कोपाकर दानवों से बिजय पाते हैं वैसेही अपने शत्रुओं को पराजय करने वाले आपको मैं जगाता हूं। हे राजन्! जिस प्रकार अपने छओ अंग के सहित वेद ब्रह्मको जगाते हैं वैसे ही मैं आज आपको जगाता हूं, जिस प्रकार चन्द्रमा और सूर्य अपने उदय और अस्तसे जगत को निद्रासे जगाते हैं वैसेही आज मैं आपको जगाता हूं, जैसे सुमेर के समीप भगवान सूर्य उदय होते हैं उनके समान आप शय्या से उठकर अभिषेक महोत्सव के योग्य वस्त्र और अलंकार को धारण करिये, श्रीरामाभिषेक महोत्सवमें उत्कण्ठित सकल नगर वासी राजा प्रजा और सेठ साहुकार आपसे प्रार्थना करते हैं और ब्राह्मणों के सहित वशिष्ठमुनि राजद्वार पर खड़े होकर आज्ञा देते हैं कि रामचन्द्रका अभिषेक के लिये राजा शीघ्र प्रयत्न करें। हे महाराज! जिस प्रकार पालक के बिना पशुओं की शोभा नहीं होती, सेनापति के बिना सेना की शोभा नहीं

जैसे चन्द्रमाके बिना रात्रिकी शोभा नहीं साँड़के बिना जैसे गाय की शोभा नहीं होती वैसे ही बिना आपके राज सभा की शोभा नहीं है इस लिये हे राजन्! जल्दी शय्याको छोड़िये, इस प्रकार मन्त्रिके बचनको सुनकर शोकाविष्ट महाराज दशरथ लालनेत्र किये बोले, मन्त्रिन्! इस समय के स्तुति वाक्य मेरे हृदय को टुकड़ा टुकड़ा कर रहे हैं। मन्त्रि पुत्र सुमन्त्र राजा के तरुण बचन को सुनकर और महाराज को दीन दशा में देखकर हाथ जोड़े हुए सुमंत्र राजभवन से बाहर आये, सुमंत्र जी से महाराज दशरथ शोक के मारे अपना वृत्तान्त नहीं कह सके तब बुद्धिमान सुमंत्र केकयी के स्थान पर जाकर पूछे, केकयी सुमंत्र से बोली, हे मन्त्रिन्! महाराज रामाभिषेक महोत्सव की प्रसन्नता से रात्रिकाल में अधिक जगारण किया है, इस लिये थकावट से महाराज घोर निद्रा में पड़े हैं आप शीघ्र जाकर श्रीरामचन्द्र को लिवा लाइये केकयीके बचन को सुनकर सुमंत्रजी बोले, बिना राजा की आज्ञा मैं किस तरह रामचन्द्रको बुलाऊँ, मन्त्रिके बचन को सुनकर दशरथ जी बोले, सुमंत्रजी कल्याण करने वाले हृदय में आनन्द देने वाले रामचन्द्र को शीघ्र लिवा आइये। राजा से प्रेरणा किये गये सुमंत्र प्रसन्नता पूर्वक राजभवन से शीघ्रही चले और कहने लगे कि रामाभिषेक संभार के लिये धर्मराज दशरथ श्रान्त हैं इस वास्ते अभी बाहर नहीं आवेंगे, यह कहते हुये राजद्वार पर नगर वासी, प्रजा, सेठ, साहुकार, देश देशान्तर से आये हुए जनोंको देखा।

वाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकाण्डे चतुर्दशः सर्गः ॥१४॥

राजा से बुलाये गये राजगण और वेद शास्त्र को जानने वाले ब्राह्मण गण, राज पुरोहितोंके सहित मन्त्रि गण, सेनापति, सेठ, साहुकार रामाभिषेक कार्य के लिये राजद्वार पर उपस्थित हैं और विमल सूर्यके उदय कालमें पुष्य नक्षत्र कर्कलग्न में रामाभिषेक के वास्ते ब्राह्मणों ने इन सामग्रियों को एकत्र किया है सोनेके कलश, अलंकृत भद्रपीठ को स्थापन किये हैं सिंहासन, व्याघ्रचर्म, गंगायमुना

के संगमका जल और भी पवित्र नदियोंका, तीर्थोंका, कुण्डका, अनेक कूप का और ऊपर को बहने वाली नीचे को गिरने वाली टेढी धारा से बहने वाले तिर्थोंके जल को और चारो समुद्रोंके जलको, मधुको, दधि, लाजा, कुशा, पुष्प, दूब आठ कन्या और उत्तम हस्ती अनेक वृक्षोंके पल्लव, सोने चांदीके घंटा, फूले कमल के सहित सुन्दर जल, निर्मल चन्द्रमा के समान दो चमर और छत्र थे उज्वल उज्वल घोड़े नाना प्रकार के बाजे और स्तुति करने वाले बन्दीजनों के सहित अभिषेक की संपूर्ण सामग्री एकत्र है और राजद्वार पर उपस्थित लोग इस प्रकार पूछते हैं कि हमलोगों के वास्ते महाराज की क्या आज्ञा होती है, क्योंकि उदित सूर्यके समान महाराज के दर्शन नहीं होते और शय्यासन को छोड़कर बाहर न आने का कारण कुछ नहीं जान पड़ता है इस प्रकार लोग सुमन्त्र से पूछने लगे, सुमंत्रजी प्रेम पूर्वक उनलोगों से कहने लगे कि इस समय में रामचन्द्रजीको शीघ्र बुलाने जाता हूं परंतु आप लोगों के विज्ञापना को फिर भी जाकर महाराज से कहता हूं यह कहकर लोगों के अनुरोधसे सुमन्त्रजी फिर भी अन्तःपुर (रनिवास) को लौट गये और राजभवन में प्रवेश करके महाराज दशरथ के शय्याके समीप खड़े होकर स्तुति करने लगे, महाराज ! सूर्य, चन्द्रमा, शिव, कुबेर, वरुण, अग्नि, इन्द्र आपका कल्याण करें, रात्रिदेवी बीतगई सुप्रभात का उदय हुआ अब आप शयनासन को छोड़कर लोगोंको अनुगृहीत कीजिये, हे राजन् ! ब्राह्मण, सेनापति, मन्त्रि, निमन्त्रण में आये हुए राजा, सेठ साहुकार आदि सभी लोग आपके दर्शनकी इच्छाकरते हैं अब आप निद्रादेवी को बिसर्जन करिये, इस प्रकार मन्त्रिसे स्तुतिको सुनकर महाराज दशरथ बोले, हे सुमन्त्रजी ! मुझे निद्रा नहीं है मैं चेतन हूं आपको पहिले मैं श्रीरामजी को बुलाने को कहा है आज आप हमारी आज्ञाका क्यों प्रतारण करते हैं शीघ्रही रामचन्द्र को आप बुलाइये । सुमन्त्रमुनि राजाकी आज्ञाको शिरोधार्य करके राजभवन से निकल

कर नगरकी शोभा देखते हुए हर्ष पूर्वक राजभवन को पहुंचे । वहां पहुंचकर स्वर्गपुरीके समान रामपुरीको देखने लगे कि रत्नों से जड़ित बड़ा भारी फाटक लगा है सैकड़ों वेदीयां बनी हैं सोनेके प्रतिमा और मणिसे संयुक्त तोरण चारो ओर बंधा है उसकी शोभा शरत् कालके मेघके समान उज्ज्वल छारही है, पुष्पमालाओं के बीच बीचमें माणियों के हार लटके हैं, बहुमूल्य मोती और रत्नोंसे रामभवन अलंकृत है चन्दन और अगर के सुगन्ध चारो ओर फैल रहे हैं और अनेक प्रकार के सारस, मयूर, हंस आदि पक्षिगण कलोल कर रहे हैं अनेक प्रकारके चित्रोंकी शोभा सूर्यके किरण की आभासे अतिशय दीप्तिमान होरही है सूर्य चन्द्रमा के समीप जैसे कुबेर भवन की शोभा होती है स्वर्गमें जैसे इन्द्रकी अमरावती पुरी है देवताओं को बिहार करने के लिये जैसे सुमेरूगिर पर्वत है उसके समान रामभवन को सुमन्त्रजी ने देखा। रामजीकी आज्ञाको मानने वाले सेवक गण बिनीत भावसे चारो ओर खड़े हैं श्रीरामजी के अभिषेक महोत्सवमें उत्कंठित प्रजागण उपायन (नजर) लेकर रामचन्द्रजी के स्थानपर उपस्थित हैं, रामजीके दास और दासी रत्नजड़ित गहनों को पहिनकर आनन्द मचा रहे हैं अनेक देश देशान्तर से आये हुए राजालोगों के हाथी, घोड़े और रथ तथा सारथियों से राजमार्ग खचाखच है श्रीरामजी का सारथी बहुमूल्य धन रत्न, वस्त्र आदिको पाकर प्रसन्न मनसे आनन्द मचारहा है उस समय श्रीरामभवन की शोभा स्वर्गपुरीके समान देख पड़ती थी, इतने में उज्वल वस्त्र और अलंकार को धारण किये कैलास के समान स्वच्छ सुमन्त्रजी रथ को लिये रामजी के द्वारपर पहुंचे रथको वहां खड़ा करके अपने भीतर चले गये वहां जाकर रामाभिषेक महोत्सकी उत्कण्ठासे लोगोंके प्रियवचन को सुनने लगे पर्वत के समान लंबी शरीर वाली और प्रमत्त शत्रुञ्जयनाम की हस्ती खड़ी है, और रथके घोड़े सारथी अनेक प्रकार के वस्त्र भूषण से अलंकृत को सुमन्त्रजी देखते हुए अन्तःपुरको चले । इसके उपरान्त श्रीरामजी के सभास्थान में जाकर सुमंत्रजी देखने लगे कि

सेवकगण चारो ओर खड़े हैं राजा और धनी उपहार लेकर करोड़ से भी अधिक सभा स्थान में बैठे हैं। इस प्रकार शोभा को देखकर सुमन्त्रजी श्रीरामजी केअन्तःपुरमें पहुंचे ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे पञ्चदशः सर्गः ॥ १५ ॥

इसके उपरांत सुमंत्रजी लोगों को हटाते हुये अंतःपुरके फाटक पर पहुंचकर अनेक अस्त्र शस्त्र से पहरा देने वाले सैनिकों को देखा कि अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र को लिये कुसुमरंग के वस्त्रको पहिरे बेतकी छड़ी हाथमें लिये रामचंद्रजी के कल्याण की इच्छा से एक चित्त होकर पहरा देरहे हैं, वह सैनिक दल सुमंत्रजी को देखकर अपने अपने आसन से उठकर खड़े हो गये, सुमंत्रजी सबसे सादर मिलकर कहे कि शीघ्र आप जाकर श्रीरामजी से कहिये कि सुमंत्रजी द्वारपर खड़े हैं, रामचंद्र के हितको चाहने वाले सेवक लोग श्रीरामजी के पास जाकर सुमंत्र के आनेका समाचार विनीत भावसे कह सुनाया, जानकीजी के सहित बैठे श्रीरामजी सुमंत्रजी के आगमन को सुनकर अपने पास बुलाया सुमंत्रजी राजभवन में जाकर सुवर्ण मय पलंगपर कुबेर के समान बैठे हुए रामचंद्रजी को सुमंत्रजी देखे और रक्तचंदन को लेपन किये हाथमें चमर लिये रामजी के समीप चंद्रमा के सदृश बैठी हुई जानकीजी को बार बार देखकर पहिले तपते हुए सूर्यकी नाईं श्रीरामजी को प्रणाम करके पीछे जानकीजी के चरणों को प्रणाम किया। रामचंद्रजी सुमंत्र को सत्कार करके कुशल क्षेम पूछने लगे सुमन्त्रजी समाचार कहने के व्याज से बोले, हेरामजी! महाराज दशरथ और राजमहिषी कौशल्या, केकयी आपको देखने की इच्छा से बुलाया है शीघ्र चलिये, सुमन्त्र के बचन को सुनकर महापराक्रमी रामचन्द्रजी जानकीजी से कहने लगे कि (मेरे माता पिता मेरे अभिषेक के विषय में कुछ बिचार करैंगे ऐसा मैं तर्क करता हूं कि कौशल्या का अनुरोध महाराज से होगा कि बिना भरत को आये शीघ्रही रामचन्द्रको अभिषेक होजावे परन्तु केकयी

के विषय में भी महाराज कुछ विचार अवश्य करेंगे ऐसा मैं मानता हूं, अच्छा बड़े आनन्द की बात है कि राजमहिषियों के सहित हमारे विषय में प्रयोजन को सिद्ध करने के लिये महाराजने सुमन्त्रजी को भेजा है, जिस प्रकार की सभा वहां हुइ है उसी प्रकारके दूत को राजाने भेजा है इससे जान पड़ता है कि आज मुझको युवराज पद पर अभिषेक अवश्य होगा इसलिये मैं अभी जाकर वृद्ध महाराजका दर्शन करता हूं और तुम अपने सखियों के सहित अनुपम सुख भोग करती हुई मेरे साथ विहार करो, इस प्रकार पति से सम्मान को पाकर सीताजी प्रसन्नता की मारी मांगलिक वस्तुओंसे श्रीरामजी को अभिषेक करती हुई द्वारतक आई और रामजीसे बोली हेभगवन् ! ब्राह्मणों से सेवित राज्यको इन्द्रके समान महाराज आपको अभिषेक देंगे इसलिये पूर्वदिशामें इन्द्र देवता आपकी रक्षा करें, दक्षिणदिशामें यमराज, पश्चिम दिशामें वरुण और उत्तर दिशामें कुबेर आदि देवता आपकी रक्षा करें इस प्रकार जानकी जी मंगलाचरण को किया अनंतर रामचंद्रजी अपने स्थान से बाहर निकल कर सुमन्त्र के साथ ऐसे चले जैसे सिंह गुहासे निकल कर बन का रास्ता लेता है। आगे चलते हुए रामजी को हाथ जोड़े लक्ष्मण जी मिले इसके उपरान्त प्रांगन भागमें मन्त्रि मंडलको देखकर रामजी सबपर प्रेमकी वर्षाकरने लगे और सब लोग रामचन्द्रको देखकर अभिनन्दन करने लगे इसके बाद अग्निके समान चमकते हुए रथपर पुरुषश्रेष्ठ राजनन्दन रामचन्द्रजी शोभित होने लगे, लक्ष्मणजी रथके पीछे बैठ गये और रामजी लक्ष्मण के सहित सुमन्त्रजी रथको लेकर चले, चलते समय रथसे इस प्रकार शब्द होने लगा जैसे बादलों के गर्जने से दिशायें गूञ्ज उठती हैं पीछे लक्ष्मणजी बैठे चमर हांक रहे हैं इधर अयोध्यापुरी के समीप मनुष्यों के भीड़ भाड़ से और रामजी के रथको आने से हलाहल शब्द होने लगे सवार लोग रथ के आगे आगे अपने घोड़ोंको दौड़ाने लगे चारों तरफ चन्दन छिड़काव होने

लगा अस्त्र शस्त्र को लेकर सैनिक लोग मनुष्यों को हटाकर बीचसे रास्ता करने लगे भांति भांति के बाजने बजने लगे और बन्दीजन स्तुति करना आरम्भ किया, शूर बीर अपने सिंहनाद से मार्गको निनादित कर दिया नगरवासी स्त्रियां अनेक प्रकार के भूषण वस्त्र को पहिनकर अपने अपने अटारियों से रामजीकी शोभाको देखती हुई फूलोंकी वर्षाकरने लगीं, सकल नगर बासी नारी श्रीरामजी के मनोहर स्वरूपको देखकर आपसमें परस्पर प्रशंसा करने लगीं कि राममाता कौसल्या धन्य हैं कि जो आज श्रीरामजी को राजसिंहासन पर बैठे देखकर अपने लोचन को शीतल करैंगी और पतिव्रताओंमें श्रीजानकीजी परम श्रेष्ठ हैं जो रामचन्द्रजी की हृदय प्रिया हैं, सीताजी पूर्वजन्ममें अति कठिन तप किया है जिसके प्रभाव से रामजी का संयोग हुआ है, जैसे रोहिणी सदा चन्द्रमा के साथ रहती हैं वैसे जानकी जी छायाकी नाई श्रीरामजीके साथ रहती हैं इस प्रकार अंटारियों परसे कहती हुई स्त्रियों के प्रिय वचन को सुनते हुये श्रीरामजी रथसे चले जारहे थे, इस प्रकार नगरवासी तथा आये हुए जनों के बचन को सुनकर रामजी हर्षित होगये और सब लोगों पर प्रेमकी वर्षाकरने लगे, और समस्त जनों का परस्पर संघर्ष से ऐसा शब्द होने लगा कि आज रामचन्द्र महाराज के प्रसादसे राज्य लक्ष्मी को पाकर हमलोगों के कल्याणकी इच्छासे शासक श्रीरामजी होंगे, इनको राजा होने पर प्रजागण समस्त अपने अभीष्ट फलको प्राप्त करैंगे और सब प्रकारके दुःखसे रहित होंगे, जैसे कुबेर शत्रुका विजय करके घोड़ा हाथी रथ सारथी बन्दीजन आदि से पूर्ण अपने स्थान को जाते हैं उनके समान श्रीरामजी राजभवन पर पहुंचकर हाथियों के बच्चों को तथा बड़े बड़े गजराज घोड़ा रथ और लोगोंसे परिपूर्ण आंगन भागको श्रीरामजी ने देखा ॥

इति बाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥

श्रीरामजी रथपर बैठे हुए मित्रगण को देखकर प्रसन्न हो गये

और अनेकानेक मनुष्यों के भीड़भाड़ से नगर और मार्गों पर कोलाहल मचा हुआ है, गली चौराह और सड़कों पर चन्दन अगर और केसर कपूर से मिला हुआ चन्दन और उत्तम उत्तम सुगन्ध छिड़का हुआ है, मोतियों की लर लटकी हुई हैं, पीताम्बर बिछा हुआ है, उस पर सुगन्धित फूल बिछाए गये हैं, अनेक प्रकार के पक्वान और मिठाइयों की ढेर लगी है जैसे स्वर्गपुरी की शोभा को इन्द्र देखते हैं वैसे रामजी नगर की और राजभवन की शोभा को देखे, राजमहल का आंगन भाग दही, अक्षत, लाजा, चन्दन, माल्यसे अलंकृत है श्रीरामजीको देखकर ब्राह्मण लोग आशीर्वाद देनेलगे, श्रीरामजी भी अपने कुलधर्मके अनुसार ब्राह्मणों का आदर किया, सभासद गण परस्पर बातचीत करने लगे कि जैसे महाराज दशरथ अज रघु आदि राजाओं ने धर्मपूर्वक हम सब प्रजाओं का पालन किया है वैसेही श्रीरामचन्द्र जी भी अनुगृहीत करेंगे, आज यदि रामचन्द्रजी युवराज के आसन को ग्रहण करलेंगे तो हमलोगोंके लिये स्वर्ग भी लघु हो जायगा, और हम लोगोंको श्रीरामजी से अतिरिक्त और कोई सुख प्रिय नहीं है इस प्रकार राजा प्रजा में कोलाहल होने लगा, रामचन्द्रजी सुमन्त्रके सहित लोगोंकी उत्कण्ठा अपने में देखते और उनके प्रिय बचन को सुनते हुए सभास्थान से आगे चले, जो लोग किसी कारण के वश श्रीरामजी की मनोहर मूर्तिको नहीं देखने से वह लोग अपने को लोक में निन्दित और हतभाग्य समझने लगे, परन्तु सर्वान्तर्यामी श्रीरामजी सब वर्ण और आश्रमों पर दया करते हुए अन्तःपुरकी ओर चले, और लोग अपने मन बचन कायसे श्रीरामजी में तत्पर होगये । श्रीरामजी मन्त्री तथा राजाओंके सहित धनागार, रत्नागार, भाण्डागार, वस्त्रागार, अस्त्रागार आदि को देखते हुए पिता के स्थान को चले, वहां पहिले फाटक पर रथ युक्त धनुधारी सैनिक गण रक्षा कर रहे हैं । दूसरे फाटक पर अस्त्र शस्त्र को लेकर पैदल सवार घूम रहे हैं रामजी सबसे यथायोग्य मिलकर तीसरे द्वारपर पहुंचे वहां पहुंच कर

अपने साथियों को लौटा दिये और अपने अन्तः पुर (रनिवास) में प्रवेश किये, पिता के समीप रामचन्द्रजी को जाते देखकर प्रसन्नता पूर्वक प्रजा इस प्रकार रामचन्द्रजी के पुनः लौटने की प्रतीक्षा करने लगी जैसे आशा पूर्वक चन्द्रमा के उदय की प्रतीक्षा समुद्र करता है ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥

श्रीरामजी अन्तःपुरमें जाकर शुभ आशनपर बैठे हुये महाराज दशरथ को देखे, समीप में केकयी बैठी हैं, शोक से महाराज की मुखकान्ति मलीन होगयी है जैसे हेमन्त काल में कमल की शोभा नष्ट हो जाती है ऐसे दशरथजी को देखकर श्रीरामजी विनीत होकर साष्टाङ्ग प्रणाम किये इसके बाद केकयी को नमस्कार किये, इतने में महाराज दशरथ श्रीरामजी ऐसा कहते हुए करुणा से दीन हो गये, न तो रामजी को देखसके और न तो बचन से बोलने में समर्थ हुये। रामजी दशरथ की नवीन दशा देखकर भयसे कंपित हो गये और कुछ अपना निज अपराध जानकर पिता के चरणों को स्पर्श किया, क्षुभित समुद्र के समान अथवा राहुसे ग्रस्त चन्द्रमा के समान दशरथ के मुख कान्ति को मलीन देखकर श्रीरामजी शुष्क हो गये और सोचने लगे कि महाराज को किस कारण यह शोक हुआ है, जैसे पूर्णचन्द्रमा को देखकर समुद्र क्षुभित होता है वैसेही दशरथ की दशाको देखकर रामचन्द्र आकुल होगये, कि आज क्या कारण है कि जो महाराज न तो हमारी ओर देखते हैं और न बोलते हैं जो कुपित भी राजा हमको देखकर प्रसन्न हो जाते थे वह आज मुझको देखकर इन्हे क्यों खेद हो रहा है, इस प्रकार की चिन्ता से कान्ति हीन रामचन्द्र केकयी के पास जाकर प्रणाम पूर्वक पूछने लगे कि, अज्ञान से यदि मेरा कुछ अपराध पिता के संबंध में हुआ हो तो कुपित मेरे पिता को तुम प्रसन्न करो, क्योंकि सदा हमारे में प्रेम करने वाले राजा अवश्य दुःखी हैं जिससे मुझसे बोलते नहीं

हैं, अथवा यह पाप पुण्यमय मनुष्य की शरीर है इनकी कुछ शारीरिक अथवा मानसिक दुःख पीड़ा देरहा है क्योंकि मनुष्य को सुख सदा दुर्लभ है, या कुमार भरत वा शत्रुघ्न अथवा कौशल्या आदि के किसी दुर्व्यवहार से तो महाराज दुःखी नहीं होरहे हैं जो कुछ हो महाराज को बिना प्रसन्न किये और उनके बचन का बिना पालन किये मैं क्षणभर नहीं जी सकता, अथवा हे माता ! अभिमान से तुमने तो पिता की कुछ अवहेलना नहीं किया है कि जिससे उनका हृदय इतना शोकाकुल हो उठा है हे माता ! तुम सत्य कहो किस कारण महाराज शोकित हुए हैं, इस प्रकार रामचन्द्रजी को पूछने से निर्लज्ज और निर्दयी कैकयी अपने मनकी बात बोली, हे रामचन्द्रजी ! न तो महाराज कुपित हैं और न उनको कुछ व्याधि है तुमारे विपरीत में उनका कुछ विचार है जिसको तुमारे भय से नहीं कह सकते हैं, जो कुछ महाराज ने मुझसे सुना है वह भला हो चाहे बुरा हो तुमको अवश्य पालन करना चाहिये, यह वृद्ध महाराज दशरथ पहिले मुझे वरदान दिया था, अब उसको मांगने से सन्ताप करते हैं, हे रामचन्द्रजी ! इस सत्य प्रतिज्ञा को धर्म का मूल जानना चाहिये और इसका पालनही सज्जनों का भूषण भी है, परन्तु इस बरदान को आपके कार्य में विघ्न जानकर महाराज मेरे ऊपर क्रोधित हैं, इसक्रोध दोषसे जिसमें महाराजकी प्रतिज्ञा नष्ट न होवे वैसाही उपाय आपको करना चाहिये। शुभ वा अशुभ जो कुछ हो यदि आप महाराज की आज्ञाको पालन करो तो मैं राजाके मनोगत बचन को कहूं, इस प्रकार कैकयी के बचन को सुनकर क्षुभित रामचन्द्र कैकयी से बोले, हे माता ! यह तुम क्या कहती हो, मैं तो राजाके बचन से अग्निमें भी शरीर को पात कर सकताहूं भयंकर विषको खा सकते हैं समुद्रमें शरीर को डुबासकते हैं जिससे गुरु और पिताका हित हो उसको मैं अवश्य पालन करूंगा रामचन्द्र दो बार बचन को नहीं कहते हैं, इस प्रकार सरलमना सत्यवादी रामचन्द्रजी

को दृढ़ देखकर दारुण बचन को केकयी बोली, हे रामचन्द्र ! पहिले देवासुर संग्राम में बाणसे पीड़ित महाराज की मैंने रक्षा किया फिर चेतना को पाकर राजाने दोवरदान देनेको मुझे कहा था आज वही बरदान मैं राजासे मांगती हूं कि युवराज के पदपर भरत को अभिषेक हो और रामचन्द्र दण्डकारण्यमें चौदह वर्ष वनवास करें, हेरामचन्द्र ! यदि आप सत्यप्रतिज्ञ हों पिताके बचन को पालन करना चाहते हो तो इस मेरे बचन को सुनिये हे रामचन्द्रजी ! यदि आप पिताके बचन को स्वीकार करते हैं तो आप इस अभिषेक महोत्सव को छोड़कर जटा और चीर को धारण करो और भरत राजा होकर धन रत्न युक्त अयोध्या पुरी का पालन करें, हमारेइसी बरदान के कारण शोकसे व्याकुल होकर राजा आंसुसे भरे अपने नेत्रों से आपके मुख कमल को नहीं देख सकते हैं, हे रामचन्द्रजी ! सत्यका पालन करके राजाके बचन का पालन करो, विषके समान ये कठोर कैकयी के बचन से श्रीरामजी को कुछ भी पीड़ा न हुई परन्तु महाराज दशरथ को पुत्र निष्कासन रूप आगसे उनका हृदय जलने लगा ।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे अष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥

लोकमें आये और सुख को नाश करने वाले मरण तुल्य केकयी के बचन को सुनते हुए भी रामचन्द्रजी के हृदय में कुछ दुःख नहीं हुआ, प्रसन्न मन से केकयी के बचन का उत्तर दिये कि भरत को राज्य हो मैं पिता के बचन को पालन करने के लिये जटा और चीर को धारण करके अवधि पर्यन्त दण्डक बन में निवास करूँगे । इस समय मैं जानना चाहता हूं कि पहिले के समान प्रसन्न होकर महाराज मुझसे अब क्यों नहीं भाषण करते हैं जो कुछ उनका मनोरथ है उसको मैं कभी अन्यथा न करूंगा पिताकी प्रसन्नता के लिये जटा और चीर को धारण करके बनको अवश्य जाऊंगा । गुरु और पिताकी आज्ञा को पाकर कौनसा कार्य मैं नहीं करसकता हूं, केवल यह एक दुःख मेरे हृदय को पीड़ा देरहा है कि भरत के अभिषेक को महाराज

मुझसे नहीं कहते हैं, क्योंकि मैं तो स्वयं अथवा तुमारे कहने से भी जानकी को अपने प्रिय प्राण को राज्य को और धन को भरत के लिये देसकते हैं, पिता की आज्ञा मानकर तुमारे हित के लिये भरत को राज्य दे देवेंगे, हे माता ! इस समय नीचे को मुख किये लज्जा से हमारे पिता रो रहे हैं उनको तुम जल्दी से सावधान करो, और महाराज की आज्ञा से बड़े वेग वाले घोड़ों से युक्त रथको लेकर दूत लोग भरतजी को बुलाने के लिये जावें और मैं पिता के वचन का प्रतीकार न करके चौदह वर्षके लिये मैं शीघ्रही बनजाने को प्रस्तुत होता हूं. रामचन्द्रजी की सत्य और दृढ़ वचन को सुनकर प्रसन्न मनसे कैकयी रामजी की वनयात्रा को निश्चय और सत्य जानकर बोली कि रथको लेकर दूत लोग जावें और भरतजी को लिवा लावें । हे रामजी ! आप शीघ्रही बनजाने को प्रस्तुत हूजिये, इस समय महाराज लज्जा से लज्जित होकर आपसे नहीं बोलते हैं, आप इस नगर से जल्दी बनकी यात्रा कीजिये जब तक आप बन को नहीं जाओगे तब तक तुमारे पिता स्नान भोजन नहीं करेंगे, महाराज दशरथ केकयी के बचन से मूर्छित होकर शय्या पर गिरपड़े, रामचन्द्र दशरथ को उठाकर इस प्रकार बन जाने की इच्छा किया जैसे सारथी के अनुशासन से रथके घोड़े चलते हैं, कैकयी के दारुण बचन को सुनकर भी प्रसन्नमना रामजी केकयी से बोले, हे देवि ! संसार के सुख अथवा धनको हम नहीं चाहते केवल ऋषियों की भांति सुख दुःखको बराबर जानकर निर्मल धर्मके ऊपर चलना चाहते हैं, पूज्य पिताके बचन के अनुसार बनवास क्या है इससे भी अधिक और क्लिष्ट कार्य को करसकता हूं पिताकी सेवा और उनकी आज्ञा का पालन इससे बढ़कर संसार में और कोई श्रेष्ठ धर्म नहीं है । पूज्य पिताके बचन को अथवा उनके बचन के समान तुमारे बचन का पालन करके चौदह वर्ष तक निर्जन दण्डक बन में निवास करूंगा । और भरतजी पिताकी सेवा करते हुए राज्य का पालन करेंगे, श्रीरामजी

के बचन से महाराज दशरथ और भी शोकाकुल होते हुए बिलाप कर के रोने लगे, श्रीरामजी शोकाकुल अपने पिताके चरणकी बन्दना करके केकयी को प्रदक्षिणा किया और महल से बाहर आकर अपने मित्रमंडल तथा मन्त्रिमंडल को देखे, सुमित्रा को आनन्द देने वाले लक्ष्मणजी आंसुको बहाते हुए रामचन्द्रजी के पीछे चले, रामचन्द्र अभिषेक शालामें जाकर जितने कलश के जल आदि उपकरण हैं विधिवत् उन वस्तुओं की प्रदक्षिणा किये। जैसे लोक कान्त चन्द्रमा के क्षय कालमें भी उनके शोभाका नाश नहीं होता वैसेही श्रीरामजी कि सहज शोभा नष्ट नहीं हुई, बनजाने की इच्छा से और पथिवी के त्याग से जीवन्मुक्त के समान श्रीरामजी के अन्तःकरण बिकारवान् नहीं हुए, श्रीरामचन्द्रजी छत्र चमर और और अपने अलंकारों को बिसर्जन किया, पीछे निमन्त्रण में आये हुए लोगों को रथको तथा नगर वासियों को बिदाकिया और मनके दुःखसे सन्तप्त इन्द्रियों को अपने अधीन करके दशरथ तथा केकयी की आज्ञा को कौसल्या से कहने के लिये माताके स्थानपर चलने को प्रस्तुत हुए। इधर अभिषेक महोत्सव से उत्कंठित लोगों ने कार्य में विघ्नको तो देखा परन्तु श्रीरामजी के मुख कान्तिको मलीन नहीं देखा ! शरत् कालके पूर्ण चन्द्रमा के समान कान्तियुक्त रामचन्द्र अपने तेज और हर्षको नहीं छोड़े धर्मात्मा रामचन्द्रजी अपने मधुर बचन से लोगों का सम्मान करते हुए माताके भवन में प्रवेश किये, और वैसेही धैर्य हर्षको धारण करने वाले महापराक्रमी लक्ष्मण जी रामचन्द्र के पीछे पीछे माताके स्थानपर गये। रामचन्द्रजी सुमित्रा के पास पहुँचकर लोकदृष्टिसे अभिषेक रूप कार्य में बिघ्नको देखकर भी शोक नहीं किये किन्तु दशरथ और केकयीके चरित्र से सकल चराचर नरनारी दशरथ आदि अपने प्राणकी शंकासे चिन्ताको पहुंचे,।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकोनविंशःसर्गः॥ १९ ॥

जिस समय श्रीरामजी सुमित्रा आदि को प्रणाम करके बाहर

निकलने लगे उस समय महल में स्त्रियों के रोने का महा शब्द हुआ कि जो रामचन्द्रजी बिना पिताकी आज्ञा भी सकल लोकको तथा अन्तःपुरके रक्षक थे वह रामचन्द्र आज अनाथकी तरह बनको जाते हैं, रामचन्द्रजी जैसी सेवा कौसल्या की करते थे वैसी केकयी और सुमित्राकी भी सेवा करते थे, जो रामचन्द्रजी कभी किसी पर क्रोध नहीं करते थे, यदि दूसरा कोई क्रोधकरे तो उसको अपने अनुग्रह से शान्त करदेते थे वह जगत को आनन्द देने वाले रामचन्द्र आज बन को जाते हैं, इस समय महाराज दशरथ सकल जगत को नाश करने के समान ऐसा विचार किया है, इस प्रकार अनेक बातोंको कहकर जैसे बिना बच्चा के गौ चिल्लाती है उनकी तरह रानियों ने रोना चिल्लाना आरंभ किया । रानियों के आर्त शब्द से चिल्लाने को सुनकर और पुत्रके शोक से सन्तप्त होकर शीर नीचा किये महाराज भी रोने लगे । इधर जगतको आनन्द देने वाले रामचन्द्रजी गरम श्वास को लेकर लक्ष्मण के सहित कौसल्या के स्थान पर पहुँचे वहां पहिले द्वार पर अनेक वृद्ध सेवक बैठकर द्वारकी रक्षा कर रहे थे वे सब रामचन्द्रजी को देखकर अपने अपने आसन से उठ खड़े हुए और रामजी को मंगलाशीर्वाद देने लगे, रामचन्द्रजी सबका सम्मान करके पहिले द्वार से दूसरे द्वार पर पहुँचे वहाँ पहुँच कर वेद शास्त्र को जाननेवाले ब्राह्मणों की सभा देखकर सबको यथा योग्य प्रणाम किये ब्राह्मणोंने रामजीको श्रेष्ठ आशीर्वाद प्रदान किये, रामजी सबका उचित सत्कार करते हुए तीसरे द्वार पर पहुंचे, वहां बाला वृद्धा और युवतियों की गोष्ठी बैठी थी, वहां पर वही लोग द्वारकी रक्षा करती थीं, उन लोगों ने श्रीराम जी को देखकर प्रसन्न मनसे रामजीको आशीर्वाद देने लगीं और भीतर जाकर कौसल्या से श्रीरामजी के आनेका समाचार कह सुनायीं, इधर कौसल्याजी अभिषेक महोत्सव के आनन्द में रात्रिको भली भांति बिताकर रामचन्द्रजी के कल्याण के लिये प्रातःकाल विष्णुकी पूजा करके मंगल योग्य मंत्रकी नाईं अग्नि होत्रमें हवन कर, रही थीं,

इतने ही में श्रीरामजी के आनेका समाचार सुनकर शुक्ल वस्त्रको पहिने नित्यव्रत में परायण कौशल्या विह्वल हो गयी। तब तक श्रीरामजी पहुंच कर हवन करती हुई कौशल्या को देखे, उस पूजा स्थान में देवताओं की पूजाके लिये दधि, घी, अक्षत, मिठाई, खीर, लाजा, शुक्त, माल्य, दूध, पक्वान्न, कृसर, समिधा, जलसे पूर्ण कलश आदि रखे हैं कौशल्या श्रीरामजी के कल्याण के लिये व्रतसे कृषित हो गई हैं तौ भी देवताओं की पूजा और उनके तर्पण में हीं समय को बिताती थीं। रामचन्द्र माता के नगीच में जाकर दण्डवत् किया कौशल्या रामजी को उठाकर गोद में ले लिया और उनके मुख आंख शिर आदिको चूमने लगी, महाबली रामचन्द्र को अपना पुत्र जान कर पुत्रके प्रेम से विह्वल होकर अपने प्रिय बचन को रामचन्द्र से बोली, वृद्ध धर्म शील राजर्षि महात्माओं की आयु कीर्ति और धर्म तुमको प्राप्त होवे, हे रामचन्द्रजी! सत्य प्रतिज्ञ अपने पिताका जाकर दर्शन करो क्योंकि वह धर्मात्मा आज आपको युवराज के पद पर अभिषेक करेंगे, हे रामचन्द्रजी! यहां बैठकर पहिले कुछ भोजन करलो पीछे राजा के पास जाओ, रामचन्द्र माता के प्रिय बचन को स्वीकार करके केवल आसन को छूलिया और हाथ जोड़े विनय से शिरको नीचा किये माता से बोले, हे माता! पिता की आज्ञा से मैं दण्डक बनको जाने के लिये प्रस्तुत हो रहा हूं। हे माता! तूं नहीं जानती हो तुमको लक्ष्मण को और जानकी के वास्ते भयंकर भय सामने उपस्थित है। हे माता! इस बहुमूल्य आसन से मुझे क्या, मैं तो कुशासन पर रहने के योग्य हूं, मैं तो दण्डकारण्य को जाऊँगा, मैं तो अरण्य के पशुओं का पवित्र माँस और कन्द मूल आदिको खाकर चौदह वर्ष तक निर्जन बन में निवास करना होगा, महाराज भरतजी को युवराज के पदपर अभिषेक करेंगे और मुझ तपस्वी का दण्डक बनमें बिवासन होगा, रामचन्द्रजी के मुख से तलवार के समान निर्दय और कठोर बचन को सुनकर इस

प्रकार कौशल्या पृथिवी पर गिर पड़ी और मूर्छित हो गयीं जैसे कटा हुआ वृक्ष गिर पड़ता है, रामजी कौशल्या को शोकसागर में डुबती हुई देखकर उठा लिये और अनेक प्रकार से धैर्य देने लगे, कौशल्या पृथिवी से उठकर अपने हाथों से रामजी के शरीरको स्पर्श करती हुई समीप में रामचन्द्रजी को देखकर शोकसे विलाप करने लगीं, कि इतने दिनके पहिले मुझे कोई सन्तान नहीं था इस लिये मैं वन्ध्या थी परन्तु वह विशेष दुःख का कारण नहीं था, और यह पुत्र वियोग रूप दुःख वन्ध्यापन से अधिक पीड़ाको देने वाला है क्योंकि वन्ध्यापन का दुःख केवल मनमें सन्ताप देता है यह तो किसी अंग से भी सहन नहीं होता है, पतिके सुख और उनके लालन पालन का सुख तो मुझे आज तक भी नहीं प्राप्त हुआ मैं तो केवल रामचन्द्रजी को पाकर अपना प्राण और जीवन उन्हींको समझती हूँ। आज तक मैंने हृदयको जलाने वाली कितने ही बचन केकयी का सहन किया है, फिर भी वह पापिनि मुझे निर्मूल करना चाहती है, भला स्त्रियों को इससे बढ़कर कौनसा दुःख होगा कि जो सवत के कठोर बचन को सह सके, मेरे लिये तो यह अपार शोक है, मैं इसको किस प्रकार सहन करूं, हे रामचन्द्रजी! जो तुमको विना देखे क्षण भरका समय महीना के समान बीतता है सो हे तात! बनमें जाने से मेरे प्राण कैसे रहेंगे, मेरे दासी के बराबर केकयी सो पतिको अधीन करके मुझे इस प्रकार दुःख दे रही है, ऐसी निर्दयी कठोर वादिनी केकयी के मुखको मैं किस तरह देखूंगी। हे रामचन्द्र जी! तुमारे वियोगरूप दुःखको और सपत्नी (सवत) केकयी के अपमान को मैं कैसे सहन करूंगी, हे पुत्र! पूर्णचन्द्रमा के समान कान्ति युक्त तुमारे मुखकमल के दर्शन के बिना हमारे दिन किस प्रकार व्यतीत होंगे, हे रामचन्द्रजी! तुमारे वियोग रूप दुःखको सुनकर भी मेरे प्राण नहीं निकलते हैं न मालूम ये किस अवधि को देख रहे हैं, न तो आज इस दुःख से मैं अपने मरणको देखती हूं, जैसे रोती

हुई मृगीको सिंह खा जाता है उस काल सिंहके समान यमराज भी इस प्राण को नहीं हरण करते हैं। केकयी के इस बाण रूपी बचन से हृदय टुकड़े टुकड़े नहीं होते हैं और पृथिवी पर गिरकर फटते भी नहीं हैं इससे मैं जानती हूँ कि बिना समय आये मेरा मरण भी नहीं होगा। हे रामजी! तुमारे कल्याण के वास्ते आज तक मैंने जो कुछ व्रत दान यम नियम तप धर्म आदि किया है वह सब ऊसर में बीज बोने के समान निष्फल हुआ। हेरामजी! जैसे गौ अपने बच्चे से हीन होकर अपना प्राण दे देती है उसके समान मैं इस गुरु दुःख से पीड़ित होकर अकाल के मरण से यमराज की सभा में पहुँच सकती हूं। हे रामजी! मरण तो हमारा होगा नहीं और आपके चन्द्र-मुखको देखे बिना जीवन हमारा व्यर्थ है इस लिये मैं भी आपके साथ बन में रहूंगी। केकयी के बचन से रामजी के बियोग को न सहन करती हुई कौशल्या रामजी को सत्यके ऊपर अटल देखकर बिलाप करने लगीं॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे बिंशः सर्गः॥ २०॥

इसके उपरान्त राम माता कौशल्या को बिलाप करते देखकर समय के अनुसार लक्ष्मणजी बोले, हेमाता! केकयी के बचन को मानकर राज्य को छोड़कर रामचन्द्रजी बनको जावें हमे यह बात उचित नहीं जान पड़ती, क्योंकि कामावस्था में मनुष्य का ज्ञान विपरीत होजाता है हजारों अनुचित बातों को लोग कहा करते हैं वैसेही वृद्ध महाराज दशरथ का बचन आतुर अवस्था के कारण मानने योग्य नहीं है, रामचन्द्रजी का कोई अपराध नहीं है और न तो महाराज के विषय में अथवा प्रजा के विषय में रामजी का कुछ दोष है कि जिस कारण रामजी को बनवास करना पड़े, और लोक में कोई ऐसा नहीं है जो परोक्ष में भी रामजी का दोष कथन करे, जो इस प्रकार देवता के समान हैं शत्रुओं में भी अर्थात् केकयी आदि में भी जिनका पूर्ण प्रेम है जिनका जगत में कोई शत्रु नहीं

है जिन्हों ने धर्मको जानने वाले गुरुओं से शिक्षा को पाया है ऐसे गुणवान और धर्मात्मा पुत्र का कौन मनुष्य निष्कासन कर सकता है, काम परवश मनुष्य के वचन को कौन पुत्र स्वीकार करेगा । हे रामजी ! जब तक केकयी के वचन का प्रकाश भली भांति लोक में न हो तब तक पूर्वशासन को अर्थात् अभिषेक रूप कार्य को स्वीकार करके राज्य को अपने अधीन कर लीजिये । हे रामचन्द्रजी ! जब तक आप की रक्षी रक्षा के लिये मेरे पास धनुष बाण हैं तब तक मैं अभिषेक में विघ्न देने वाले यमराज के भी सामर्थ्य कुछ काम नहीं करेंगे । हे पुरुष श्रेष्ठ ! यदि समस्त नगर आपके विपक्ष भाव में होजावे तो मैं अपने तीखे बाणों से अयोध्यापुरीको मनुष्य हीन कर देवगे। यदि भरत के हितको चाहने वाले उनके मामा तथा अन्य राजगण भरतके पक्षका पालन करेंगे तो मैं अपने बाणों से उन सबका नाश करूंगा, नीतिके अनुसार काल पाकर राजाको नम्र होना नहीं चाहिये । हे रामजी! यदि केकयी के प्रति सन्तुष्ट होकर राजा हम लोगों से विरोध करेंगे तो उनको बन्धन में डालेंगे अथवा उनका भी प्राणनाश करेंगे ऐसी शास्त्रकी सम्मति है इसमें कुछ भी दोष नहीं है क्यों कि ज्येष्टको रहते हुए दूसरा राज्यका अधिकारी नहीं हो सकता है इस कारण विपरीत मार्ग चलने से राजा भी दण्ड के योग्य हैं । हे शत्रुओं को नाश करने वाले! आपके और हमारे साथ विरोध करके राजाके पास कौनसी शक्ति रह जायगी जो भरतजी को देवेंगे । हे माता ! यदि हमारा सत्य प्रेम रामजी में होवे तो रामजी के शपथ पूर्वक ये हमारे बचन सत्य समझे जावें । हे माता ! रामचन्द्र अग्नि में अथवा बन में जहाँ रहेंगे उनकी सेवा करने के लिये मैं वहाँ अवश्य रहूँगा, हे देवी! जिस प्रकार सूर्यको उदय होनेसे अन्धकार नाश होजाता है वैसे मैं अपने पराक्रम से रामजी के दुःख को नाश करूंगा, इस प्रकार लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर शोकसागरमें डूबती और रोती हुई कौशल्यासे रामचन्द्रजी बोले, हे माता !

लक्ष्मणजीकी बातको तो सुनती हो अब इसमें जैसी आपकी रुचि हो वैसा करो, श्रीरामजी के बचन को सुनकर कौशल्या बोली, हे रामजी ! जेष्ठ पुत्रको रहते हुए कनिष्ठ राजा होवे इस प्रकार अधर्म की प्रतिज्ञा मेरी सवत केकयीसे सुनकर मुझे यहां शोकमें अकेली छोड़कर बन जानेके योग्य आप नहीं हैं। यदि आप यह सोंचे कि केकयी के बचन का उल्लंघन करके यहां रहना अधर्म है तो भी आप धर्मकी मर्यादा का पालन कर सकते हैं यह सोचकर कौशल्या रामजी से कहती हैं, हे रामचन्द्रजी ! यदि आप धर्मको जानने वाले हैं धर्मिष्ठ हैं सदा धर्म का पालन करने वाले हैं तो हमारी सेवा करके उत्तम धर्मका पालन करिये, हे रामचन्द्रजी ! हे पुत्र ! गृह में नित्य रह कर माता की दृढ़ सेवा करने से काश्यपजी ब्रह्मा के पदको प्राप्त किया है अर्थात ब्रह्माके समान उनकी मर्यादा देवलोकमें होती हैं। हे रामजी ! जिस गौरव से आपके पिता आपसे पूज्य हैं वही गौरव से मैं भी आप की पूज्य हूं ऐसा शास्त्र बचन है कि पिता के गौरव से दश गुण अधिक माता का गौरव होता है इस बचन के अनुसार आप मेरी आज्ञा को मानकर बन जानेकी उत्सुकता को छोड़िये। क्योंकि तुमारे बिना मेरा जीवन और सुख सभी तुच्छ है तुमारे साथ तृण को भोजन करके भी जिवन का बिताना कल्याण के लिये है। हे रामचन्द्रजी ! यदि आप मुझ शोकवती को छोड़कर बन में जाओगे तो मैं अनशन करके अपना प्राण त्याग कर दूंगी। इस दुःख से मेरे मरने में हे पुत्र ! ब्रह्महत्याके समान तुम्हें भी नरक भोगना पड़ेगा जैसे समुद्रने नरक को भोग किया है, (किसी समय में माता को समुद्रने दुःख दिया उस दुःख रूप अधर्म से ब्रह्मर्षि पिप्पलाद ने समुद्र को हत्या लगाया उस हत्या से नरक बासके समान दुःख समुद्र ने पाया है) यह कथा किसी दूसरे पुराण की है, वैसे तुम्हे भी दुःखी होना पड़ेगा, इस प्रकार विलाप करती हुई दुःख से दीन कौशल्या से धर्मात्मा रामचन्द्र धर्मके बचन को बोले, हे माता ! पिता

के बचन को उल्लंघन करने की शक्ति मे रे में नहीं है इस लिये हमारी प्रार्थना से तुम प्रसन्न होओ और मैं बनको जाऊँ। क्योंकि पहिलेके महर्षियोंने पिताके बचन से गौ और माताका बध किया है इस लिये पिताकी आज्ञाका भंग करना महा अधर्म है, क्योंकि कंडुमुनि पिता के बचन से गौका बध किया है, परशुरामजी जमदग्नि अपने पिताके बचन से रेणुका अपनी माता को मारा है, इस कारण पिताके बचन को उल्लंघन करना महा अधर्म है, हमारे कुल में भी पिता सगर की आज्ञा से साठ हजार पुत्रोंने सागर को खोदकर अपनी मृत्यु पाई है इस लिये प्राण त्याग करने पर भी पिता के बचन पालन के योग्य हैं, मैं कातर भावको छोड़कर पिताके हितको करूंगा। केवल यही एक बचन को पालन नहिं करूंगा इससे अतिरिक्त भी पिताके बचन को स्वीकार करूंगा। यही पूर्व महर्षियों के मार्ग हैं इसी मार्ग पर जगत की सृष्टि है, हे माता ! धर्मके विपरीत कार्य को मैं नहीं करूंगा, इस प्रकार धर्म पूर्वक बचन कौशल्या से कहकर रामचन्द्रजी लक्ष्मण से बोले, हे वाक्य विदों में श्रेष्ठ और धनुर्धारियों में श्रेष्ठ लक्ष्मण मेरे स्नेह और पराक्रम बल और तेजको तुम जानते हो हे शुभलक्षण ! मेरे माता को अतुल दुःख प्राप्त है तो भी हे भाई ! सत्य के अभिप्राय को न जानकर आप इतना साहस करते हो। लोक में धर्महो श्रेष्ठ है और धर्मयुक्त पुरुषार्थ उत्तम माना गया है इस कारण धर्मात्मा पिताके धर्मयुक्त बचन को अवश्य पालन करना चाहिये, हे बीर ! जो लोग पिता माता और ब्राह्मण के बचन का उल्लंघन करते हैं वह अपने से नरक को भोगते हैं, हे बीर ! पिताके अनुमति से केकयी ने मुझे आज्ञा दिया है इसलिये मैं इसको पालन करने से पराङ्मुख नहीं होऊँगा, हे लक्ष्मण ! पिताको बांधकर अथवा मारकर राज्य करने की बुद्धिको छोड़ दीजिये, धर्म विषयक हमारी बुद्धि के अनुकूल होओ। रामचन्द्रजी लक्ष्मण को समझाकर फिर हाथ जोड़ कौशल्यासे बोले, हे माता ! मेरे बनयात्रा के लिये

आज्ञा देओ, तुम्हे मेरे प्राणका शपथ है कि जो अब निरोध करो, मैं चौदह वर्षतक दण्डक बनमें निवास करके फिर अयोध्यापुरी को देखूंगा जैसे राजा ययाति स्वर्गसे पृथिवी में आये फिर यज्ञ करके स्वर्ग में गये, उनकी तरह बनसे आकर फिर राज्य का पालन करूंगा । हे माता ! शोकको छोड़कर धर्मका पालन करो, मैं पहिले बनवास करके पीछे राज्यको प्राप्त करूंगे, हे माता ! तुमको हमको जानकी लक्ष्मण और सुमित्रा को पिताकी आज्ञाके अनुसार चलना चाहिये यही शास्त्रकी मर्यादा है । हे माता ! अभिषेक संभार को रोककर मेरे बनवास रूप बुद्धिको धारण करके धर्मको पालन करो । कौशल्या श्रीरामजी के सत्य बचन को सुनकर धर्मयुक्त धैर्ययुक्त होकर मूर्छित मनुष्य जिस तरह चेतनाको पाता है उस प्रकार चेतना को पाकर रामचन्द्र को देखती हुई कौशल्या रामचन्द्रसे फिर बोली, हे रामजी ! धर्मके दृष्टि और स्नेहसे जैसे पिता पालनीय हैं वैसे मैं भी पालन के योग्य हूं इस कारण हे पुत्र ! मुझ दुःखिता को छोड़कर बन जानेके योग्य नहीं हो । हे रामजी ! तुमारे बिना जीवन से तथा बन्धुओं से देव पितृ पूजासे अथवा तत्वज्ञान से भी शान्ति नहीं होगी, समस्त जीव लोकके सुखसे अधिक तुमारे पास मुहूर्त भरका निवास स्वर्गके तुल्य है, रामचन्द्र मूर्छित माता को और क्रोध से तप्त भाई लक्ष्मण को धर्म पर आरूढ़ रामजी धर्म युक्त बचन को बोले, हे लक्ष्मणजी ! तुमारे भक्ति और पराक्रम को मैं भली भांति जानता हूं किन्तु मेरे अभिप्राय को न जानकर माता के साथ दुःख को सहन करने की चेष्टा मत कीजिये अथवा धर्म युक्त मेरे बचन को भी मलीन करने का साहस न करो । हे लक्ष्मणजी ! धर्म फलके उदय में मनुष्य को धर्म अर्थ काम तीनों प्राप्त होते हैं यह हमारा कहना है इस में कुछ सन्देह नहीं है जैसे एकही अनकूल स्त्री से धर्मका साधन और काम का साधन तथा सुन्दर सन्ततियों से परलोक का साधन होता है वैसेही केवल धर्म

का पालन करने से मनुष्य को सब कुछ प्राप्त होता है इस कारण धर्महीं मुख्य है। जिस कार्य में धर्म को त्याग करके केवल अर्थ और कामका पालन होता है वह कार्य दुष्ट राजा के समान प्रशस्त नहीं होता इस लिये हे लक्ष्मण ! धर्म का पालन करो। गुरु राजा पिता वृद्ध यह क्रोध से अथवा काम वा हर्षसे जो आज्ञा देवें उसको धर्म जानकर पालन करना चाहिये ! हे लक्ष्मण ! मैं पिता की समस्त प्रतिज्ञा को पालन करने में निषेध नहीं करूंगा और कौशल्या को धर्म नहीं है कि राजा को छोड़कर मेरे साथ बन में चलें, क्योंकि स्त्रियों के वास्ते पतिहि धर्म है, पतिही स्वर्ग है, पतिही परम गति है पतिको छोड़कर पुत्रके अधीन होना उचित नहीं है, इस कारण मुझे बन जाने की आज्ञा कौशल्या देकर अपने धर्म के आधार जीवन का निर्वाह करें मैं पिता के बचन की अवधि को समाप्त करके ययाति के तरह फिर अयोध्या पुरी में आवेंगे। हे लक्ष्मण जी ! केवल राज्य के लोभसे पिताके बचन का उलंघन रूप अयश को धारण करना न चाहिये क्योंकि अल्पकाल मनुष्य के जीवन में अधर्म से पृथिवी का पालन करना श्रेय नहीं होगा। पुरुष श्रेष्ठ रामजी अपने धैर्य से धर्म के रहस्य को उपदेश करके माता की प्रदक्षिणा किया और माता के चरण कमल का ध्यान हृदय में रखकर बन जाने को प्रस्तुत हुए।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकविंसः सर्गः ॥ १ ॥

इसके बाद शोक से दीन और रामचन्द्र के राज्य में विघ्न को देखकर क्रोधसे पूर्ण काले सर्पके समान प्रिय सुहृद भाई लक्ष्मण को अनेक प्रकार से धैर्य देकर रामजी बोले, हे लक्ष्मणजी क्रोध और शोक को त्यागकर केवल धैर्य का पालन करो, कैकयी के बचन को सत्य जानकर हर्षित होओ, और यह जितने अभिषेक संभार के वस्तु एकत्र हैं इनको शीघ्र लौटाइये, हे लक्ष्मणजी ! जो सामग्री हमारे अभिषेक के वास्ते थीं वे सब सामग्रियाँ हमारे अभिषेक निवृत्ति के

लिये होवें, जो हमारे अभिषेक महोत्सव को देखकर हमारी छोटी माता केकयी के मन में पीड़ा हुआ, तो वह अवश्य शोचती होंगी कि देखें रामचन्द्र बन को जाते हैं अथवा पिता की आज्ञा को भंग करते हैं यह उनकी शंका को दूर करिये, अथवा हमारे बन गमन को सुन कर माता कौशल्या शोकसे पीड़ित है उनको धैर्य देकर शान्त कीजिये, इस दो अर्थको लेकर यह रामचन्द्र की उक्ति है। हे लक्ष्मणजी! केकयी के मनमें उत्पन्न यह शंकामय दुःखको क्षणभर भी हम नहीं सहन कर सकते, क्योंकि जान वा अनजान में पिता माता के विपरीत व्यवहार करना उचित नहीं है, सत्य स्वभाव वाले और बचन को पालन करने वाले हमारे पिता अपने परलोकके भयसे दुःखी हैं उनको निर्भय करके उनका दुःख छुड़ाना चाहिये। हे लक्ष्मणजी! जब तक यह अभिषेक की सामग्री लौटाइ न जायेगी तब तक पिताजी के मनकी चिन्ता दूर न होगी उनके दुःखसे हमारी भी आत्मा पीड़ीत होरही है इस लिये अभिषेक विधानको शीघ्र लौटाइये और मैं शीघ्रही इस नगर से बनको जाता हूं। हमारे जाने से केकयी अपनी चिन्ताको छोड़कर प्रसन्न मनसे भरतको अभिषेक करैंगी, मुझको चीर और जटाको धारण करके बन जाने से केकयी का सन्ताप अवश्य दूर हो जायगा, हे लक्ष्मण! इसमें केकयी का दोष नहीं है जो विधाता इस बुद्धिको मन्थरा के द्वारा केकयी में प्रवेश किया उस बुद्धिसे संपन्न केकयी को यहां रहकर दुःख देना न चाहिये इस कारण मुझे शीघ्र बन जाने का उपाय कीजिये यह केकयी की स्वभाविक बुद्धि नहीं हैं इस प्रकार दैव ने प्रेरणा किया है इस लिये मेरे हृदय में दुःख नहीं है, क्योंकि इस के पहिले हमारे और भरत में केकयी कुछ भी अन्तर नहीं रखती थी इससे यह वैषम्य दैव की प्रेरणा से समझना चाहिये, नहीं तो अभिषेक रूपकार्य को निवृत्त करना और बनवास रूप कठिन कार्य का आरंभ दैव की इच्छा बिना नहीं हो सकता क्योंकि सरल स्वभाव वाली और सदा हितको चाहनेवाली केकयी महाराज के

सन्मुख ऐसे दारुण बचन न कहती, हे लक्ष्मण जी ! सुख दुःख बन्ध मोक्ष यह जो कुछ होता है वह दैवकी इच्छासे होता है इसमें दैवही को प्रबल समझना चाहिये, देखिये दैवही की इच्छासे उग्र तपस्या करने वाले विश्वामित्र आदि महर्षि क्रोध और कामके वश होकर अपने पुण्य कर्मसे भ्रंश होगये, इसी तरह एक कार्यके भीतर यदि दूसरा कार्य उपस्थित होजावे तो दैवकीही इच्छा जाननी चाहिये, इस लिये हे लक्ष्मण ! इसी तत्त्वको विचार करके अभिषेक के विघ्न से मुझको परिताप नहीं होता है। इस लिये तुम भी इस हमारे उपदेशको धारण करके मनके सन्तापको दूरकरो और अभिषेक कार्यमें उपस्थित बस्तुओंको शीघ्र निवृत करो, इन कलशाओं में भरे हुये जलसे मेरा व्रत स्नान होगा, अर्थात इन तीर्थों के जल से स्नान करके बनकी यात्रा करूँगा इस प्रकार कहकर फिर रामजी सोचने लगे कि मेरे स्नान करने से केकयी को यह होगा कि राज्य के लिये रामचन्द्र स्नाना करते हैं इस बिचार से फिर बोले हे लक्ष्मण इस बस्तुओं से मेरा कुछ प्रयोजन नहीं है मैं स्वयं तीर्थों में जाकर स्नान करूंगा, हे लक्ष्मणजी ! अब आप सन्तापको छोड़कर धैर्यका अवलंबन करिये राज्य और बनवास में बनवास ही श्रेष्ठ है क्योंकि अनेक प्रकार के प्रजा पालन रूप चिन्ता से निरन्तर तपस्या और पिताके बचन का पालन करना उत्तम है। हे लक्ष्मणजी ! मेरे राज्य प्राप्ति के विघ्न में केकयी माता और वृद्ध पिताके विषय में सन्देह न करना इसमें केवल दैवकी शंका करनी चाहिये ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥

रामचन्द्रजी के धर्मयुक्त उपदेश को सुनने से हर्ष और रामचन्द्रजी को राज्य से भ्रंश देखकर दुःख तो सुख और दुःख के बीचमें डूबते हुए लक्ष्मणजी शिरको नीचा करके इस प्रकार श्वांस लेने लगे जैसे क्रोधित सर्प अपने बिलमें से फुफकारता है, केकयी के दुराचार को सोचकर क्रोधके मारे ऐसी मुखकी शोभा होगयी

जैसे क्रोधित सिंहका मुख होता है, हाथी के सूंडके समान अपने हाथोंको और शिरको हिलाते हुए कटाक्ष पूर्वक रामचन्द्रजी से बोले, बिना कारण यह क्षोभ मुझको ही हुआ है किन्तु आप जो सोचते हैं कि पिताके बचन को बिना पालन किये धर्मका पालन हमारा नहीं होगा और यदि हम पिताके बचन की मर्यादाको नहीं मानेंगे तो आजसे फिर संसार में पिता के बचन की मर्यादा नहीं रहेगी इसलिये बन जाना श्रेष्ठ है परन्तु यह सोचना आपका क्षत्रिय धर्मके अनुसार योग्य नहीं है, क्योंकि असमर्थ मनुष्य दैवकी सेवा करता है क्षत्रिय सन्तान को पुरुषार्थ छोड़कर दैवका आश्रय नहीं लेना चाहिये, और जो आप कहते हैं कि राज्य विघ्न में केकयी की शंका न करनी चाहिये, सो हे धर्मस्वभाव वाले! हे धर्मात्मन्! पापात्मा दशरथ और केकयी पर राज्य विघ्न का दोष क्यों नहीं होगा, यदि दैव की प्रेरणा होती तो, ये अपने स्वार्थ को साधन करने के लिये बनावटी और मिथ्या धर्म व्यवहार से सुन्दर चरित वाले आपका त्याग क्यों करते। यदि इन दोनों का आपके विषय में पहिले से कपट मय व्यवहार न होता तो अभिषेक कार्य में विघ्न की संभावना नहीं रहती। हे रामचन्द्रजी! आप ऐसे गुणवान और ज्येष्ठ पुत्र को रहते हुए कनिष्ठ को राज्य मिले यह लोक और शास्त्र दोनों से बिरगीत है इस लिये ऐसे अनुचित को मैं नहीं सहन कर सकता हूं और राजा की आज्ञा को भंग करने में जो मेरा साहस आपके प्रतिकूल और राज-नीति के अनुकूल है उस अपराध को क्षमा करिये और मेरे साहस रूप बचन को अंगीकार करिये, हे महाबुद्धि! इस समय आपकी बुद्धि द्विविध में प्राप्त है क्योंकि पहिले राज्य का लाभ पीछे राज्यका त्याग इस प्रकार के द्विविध में प्राप्त आप राजाके बचन को पालन करना ही धर्म जानते हैं परन्तु उस धर्मका क्षत्रिय लोग विशेष करके हम आदर नहीं करते। जो मनुष्य स्त्रीके बश होकर

निन्दित कर्मको करता है और अधर्म पूर्वक बचन को कहता है उसके बचन को प्रमानिक सोच कर अंगीकार नहीं करना चाहिये । हे रामजी ! ऐसे अधर्म के विषय में आपकी बुद्धि उस के तुल्य नहीं होती इससे मेरा हृदय पीड़ित होरहा है । हे रामजी ! पराक्रम हीन पुरुष दैवका अवलंबन करते हैं किन्तु वीर पुरुष पुरुषार्थ को त्याग कर दैवकी उपासना नहीं करते । आपके ऐसे समर्थ पुरुष को यदि दैव का भरोसा करना संसार में निन्दित है, अब इस समय दैवका और हमारे पुरुषार्थ का बल लोग देखेंगे, हे रामजी ! जो लोग दैवकी प्रेरणा से आपको अभिषेक से च्युत देखते हैं वही लोग आज हमारे पौरुष के बल से आपको फिर भी राजसिंहासन पर बैठे देखेंगे, मतवाली हाथी के समान मैं अपने पुरुषार्थ से दैव बलको आजही नाश करूंगा समस्त लोकपाल और तीनों लोकको रामचन्द्र के अभिषेक कार्यमें नाश करने को समर्थ हूं पिताको क्या ? जो आपस में परस्पर बातचीत करके रामचन्द्रजी को जो बन जानेकी आज्ञा देता है मैं उनको स्वयं चौदह वर्ष के लिये बनवास दूंगा । हम उन माता पिता का अवश्य नाश करूंगा जो श्रीरामजी के राज्य प्राप्ति में विघ्न डालकर अपने पुत्र भरत को राज्य देने में उद्योग को किया है, हे रामचन्द्रजी ! हमारे पराक्रम से विपरीत दैव बल नहीं हो सकता अब यह हमारा उग्र पौरुष केकयी के दुःख के लिये होगा, और हजार वर्ष तक आप राज्य का सुख भोग और प्रजा पालन आदि करके इस के उपरान्त पिताके बचन को पालन करने के वास्ते बनवास कीजियेगा । और पहिले के हमारे कुल वाले राजर्षि ऐसाही करते थे कि पहिले अवधि पर्यन्त अपने पृथिवी का राज्य करके पीछे वही राज्य पुत्रको देकर तपस्या करने को बन में चले जाते थे, यह तो महाराज दशरथ काम के वश होकर उस प्राचीन रीति को नाश कर रहे हैं वैसेही आप भी अधर्म की शंकासे इस को पालन नहीं कीजिये, हे रामजी ! जैसे समुद्र अपनी मर्यादा का पालन करता है

वैसे में आप के राज्य की और आपकी रक्षा करूंगा। हे रामचन्द्रजी! आप इन अभिषेक सामग्रियों को लेकर वशिष्ठ आदि के सहित युवराज व्यापार में प्रवृत्त हूजिये मैं अपने पुरुषार्थ से अकेला विघ्न देने वाले शत्रुओं का निवारण करूंगा, ऐसा न करने पर शोभाके लिये ये हमारी भुजा भूषण के योग्य हमारे धनुष मुकुट के लिये हमारे शिर और स्तंभके योग्य हमारे बाण कभीं न होवें, शत्रुको नाश करने के लिये यह चारो प्रतिज्ञा हमारी पूर्ण होवे, यदि हमारी प्रतिज्ञा को विपरीत करने को इन्द्र भी उद्यत होवे तो मैं अपने तीखे खड्ग से उनके वज्रको काट दूंगा, और वही खड्ग के आघात से चतुरंगिणी सेनाओं का शिरकाटकर पृथिवीको मुण्डमाल धारण करा दूंगा, और अपनी खड्गधारा से शत्रुओं का इस प्रकार नाश करूँगा जैसे विजली के गिरने से पर्वत आदि नाश हो जाते हैं हमारे शरासन के सामने कौन मानी पुरुष अपनी विरता के अभिमान से ठहर सकता है, मैं अनेक बाणों के साथ एक एक बाण को छोड़ूंगा जिस में शत्रुओं की सेना काल कराल के कोपसे जल जावे। हे रामचन्द्रजी! हमारे अस्त्रोंका स्वभाव राजा के प्रताप और प्रभुता को नाश करदेगा, आज हमारे चन्दन को लेपन और केयूर का धारण और मित्रों का पालन करने योग्य यह मेरी भुजा रामचन्द्रजी के हितके कर्मको करेगा अर्थात् इस भुजा से अभिषेक कार्य में विघ्न देने वालों का नाश करके निष्कंटक राज्य आपको दूंगा, ऐसी प्रतिज्ञा करके लक्ष्मणजी क्रोध से धनुष बाण को उठाकर रामजी से बोले, हे पुरुष श्रेष्ठ! जिस प्रकार यह पृथिवी आपके अधीन होवे उसको साधन करने के लिये सेवक मुझे जानकर आज्ञा दीजिये, लक्ष्मण की दशा को देखकर रामचन्द्रजी अपने हाथों से लक्ष्मण की आँसू को पोंछकर बोले, हे भाई! आपको क्रोध करने का यह समय नहीं है आप पिता के बचन पर मुझे आरूढ़ जानिये हे सौम्य! यही सुन्दर मार्ग है इसी मार्ग को सज्जन लोग ग्रहण करते हैं॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे त्रयोविंशः सर्गः। २३॥

रामचन्द्रजो को पिता के बचन को पालन करने में परायण देखकर शोक और दुःख से पीड़ित होती हुई कौसल्या धर्मिष्ठ रामचन्द्रजी से फिर बोली, कि महाराज दशरथ के और मेरे शरीर से उत्पन्न हे पुत्र! तपस्वियों के समान कणवृत्ति से कैसे निर्वाह करोगे, जिन के दास और दासी पक्वान्न तथा मिठाई को भोजन करते हैं वह रामचन्द्र बन में फल मूल को किस प्रकार खाकर अपना दिन बितावेंगे, जो श्रेष्ठ गुणयुक्त रामचन्द्रजी को दशरथ चौदह वर्ष के लिये बनवास दिया है यह बचन सुनकर कौन मनुष्य को हर्ष होगा, निश्चय है कि संसार में दैव बलवान है जिसकी प्रेरणा से जगत को आनन्द देने वाले रामचन्द्रजी बनको गमन करेंगे। हे रामजी! तुम्हारे बिना यह शोक की ज्वाला मुझको अवश्य जला देवेगी जैसे ग्रीष्म काल में सूर्य संसारको दग्ध कर देते हैं, जैसे बछवे के साथ साथ गाय चलती है वैसे मैं भी आपके पीछे चलूंगी। पुरुष श्रेष्ठ रामचन्द्रजी माता के दुःख रूपी बचन को सुनकर बोले, हे माता! केकयी से वंचित राजा मेरे वियोग से पीड़ित हैं तुम्हारे भी चलने से महाराज का जीवन नहीं रहेगा, और फिर भी स्त्रियों को पतिका त्याग करने से इह लोक और परलोक दोनों नष्ट होता है, हे माता! पुत्रके प्रेम से पतिका त्याग करना यह संसार में निन्दित कर्म है यह आपको नहीं करना चाहिये, जब तक हमारे पिता महाराज दशरथ जीवित हैं तब तक उनकी सेवा करना तुमारे लिये परम धर्म है और शास्त्र की ऐसी सम्मति भी है, इस प्रकार धर्मयुक्त रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर कौशल्या प्रसन्न होकर रामचन्द्र को बन जानेकी अनुमति दिया, रामचन्द्रजी कौशल्या को इस प्रकार समझाकर फिर भी धैर्य के बचन से बोले, हे माता! हमको और तुमको पिता के बचन को मानना चाहिये क्योंकि राजा और पति तथा गुरु इनके बचन का उल्लंघन कभी न करे। हे माता! पिता के बचन को आनन्द से चौदह वर्ष तक पालन करके

फिर आपकी सेवा करूंगा। रामचन्द्रजी के वचन को सुनकर पुत्र वत्सला कौशल्या दुःख से अर्त होकर बोली, हे रामचन्द्रजी ! सवत के मध्य में रहना मुझसे नहीं होगा बनकी मृगी के समान मुझे भी आप बन में लिवा चलिये,माता को इस भांति विलाप करते देखकर रामचन्द्रजी स्वयं माता के प्रेम से रोते हुए बोले, हे माता ! स्त्रियों के जीवन में स्त्रियों के प्रभु पतिही होते हैं तो आपके और हमारे महाराज ही प्रभु हैं अर्थात् दण्ड को देने वाले हैं, परम बुद्धिमान् महाराज के रहते हम लोग अनाथ नहीं हैं और फिर भी सबको आनन्द देने वाले भरतजी अयोध्यापुरी में रहैंगे, उनके सामने केकयी का प्रभाव तुमारे ऊपर नहीं व्यापेगा, हे माता ! मेरे जाने के दुःख को तृण समान जानना नहीं तो तुम्हारे शोक करने से राजा भी शोक करके अपना प्राण छोड़ देंगे, जो नारी व्रत और उपवास में निरत रहकर सदा पति की सेवा किया करती हैं वह स्वर्ग को जाती हैं और उनका यश संसार में कुछ दिन तक रहता है, और जो पतिकी सेवा न करके पतिके विपरीत चलती हैं और काम को करती हैं वह नरक को जाती हैं। जो स्त्रियाँ विष्णु आदि देवताओं को पूजन न करके केवल पति की सेवा करती हैं और उनके अनुकूल चलती हैं उन्हो का कल्याण जगत में होता है, स्त्रियों का यह नित्य धर्म है ऐसा वेद और शास्त्र में तथा लोक में कहा सुना जाता है, हे माता ! मेरे कहने के अनुसार पिता की सेवा और ब्राह्मणों का सत्कार करके मेरे बनके आने तक की अवधि की प्रतीक्षा करते रहना। हे माता ! व्रत और उपवास पूर्वक महाराज की सेवा करके ऐहिक सुख को प्राप्त करना। यदि धर्मात्माओं में श्रेष्ठ महाराज दशरथ इतने समय तक जीवित रहैंगे तो, इतना कह कर रामचन्द्रजी रोने लगे, और पुत्रके शोकसे पीडित कौशल्या रोती हुई रामचन्द्रजी से बोलीं, आपके बन गमन के दुःख को मैं नहीं सह सकती हूं तौ भी आपको बन न जाने से

महाराज अपना प्राण अवश्य छोड़ देंगे इस लिये आप जाइये हे पुत्र ! तुम्हारा कल्यन हो, फिर आप के आने पर हमको पूर्ण आनन्द होगा तब और लोक में महान् यश की स्थापना होगी, और पिता के ऋण से उऋण हो जाओगे, नहीं तो हे रामजी ! पृथिवी पर कालकी गति सदा बलवान है काल के अधीन जगत को जानकर धर्म को नहीं छोड़ना चाहिये । इस कारण हे रामजी हे महाबाहु ! इस समय बनको जाइये फिर कुशल पूर्वक आइयेगा । पुत्र ! असान्त्व बचन से मुझे धैर्य देकर सन्तुष्ट कर दिये अब आप कुशल से बनकी यात्रा कीजिये । कौशल्या आदर पूर्वक राम के बनवास का निश्चय करके शुभ लक्षण बचन को बोलीं ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे चतुर्विंशः सर्गः ॥ २४ ॥

इसके उपरान्त कौशल्या पवित्र जलका आचमन करके रामचन्द्रजी को कल्याण के बचन से अभिषेक करने लगीं, हे रामजी ! हे रघुवंशियों में श्रेष्ठ ! मैं आपको आज्ञा देती हूं आप शीघ्र बन को यात्रा करके सज्जनों के मार्ग को उज्वल कीजिये, हे राघव ! भक्ति औ नियम से आपने जिस धर्म का पालन किया है वह धर्म आपको रक्षा करे, जिन देवता और ऋषियों को आपने देव स्थानों में जाकर पूजा और प्रणाम किया है और जो ब्राह्मणों का सत्कार किया है वे देवता और ऋषि मुनि आपकी रक्षा करें, हे राघव सिंह ! विश्वामित्र महर्षिने जो कुछ आपको दिये हैं वे सब अस्त्र देवता सदा आपकी रक्षा करें । हे रामजी ! जो आपने पिता माता की सेवा किया उस सश्रूषा से आप चिरंजीव होव, ब्राह्मणों की समिधा कुशा पवित्र वेदी और यज्ञ स्थान जप स्थान तप स्थान पर्वत वृक्ष जलाशय पक्षि सर्प सिंह ये सब तुम्हारी रक्षाकरें, हे नरोत्तम ! साध्या ण विश्वे देवा वायू तथा राजर्षि ब्रह्मर्षि स्वयं ब्रह्म ब्रह्मा पूषा भग अर्यमण और इन्द्रादि लोक पाल आदि देवताओं की स्वस्ति तुम्हारे लिये होवे । छओ ऋतु

द्वादश महीना संवत्सर दिन रात्रि कला काष्ठा मुहूर्त तुम्हारे लिये स्वस्ति को देव, हे पुत्र! श्रुतिस्मृति धर्म तुम्हारी रक्षा करें, स्कन्द भगवान सूर्य चन्द्रमा देव गुरु बृहस्पति सप्तर्षि नारद आदि सर्वत्र तुम्हारी रक्षा करें, हे रामजी! चारो दिशा दशोदिग्पाल वन में तुम्हारी रक्षा करें, सब पर्वत सब समुद्र और वरुण देवता स्वर्ग आकाश पृथिवी वायु स्थावर जंगम नक्षत्र और सूर्यादिग्रह ग्रहों के प्रत्यधिदेवता दोनों संध्या बन में तुम्हारी रक्षा करें। महाबन में मुनि वेष से घूमते हुए आपको देवता और दैत्य सदा सुखको देवें, हे पुत्र! राक्षस पिशाच और भी सभयंकर कर्म करने वाले तथा हिंसा करने वाले जीवों का भय तुम्हें न होवे, सर्प बिछू चिमटी माटा देश मस तथा जंगल में रहने वाले जन्तुओं का भय आपको न होवे। हे रामजी! बड़ी बड़ी मतवाली हाथियों का सिंहों का व्याघ्रों का भल्लूकों का और भी दांत वाले जन्तुओं का भय आपको न होवे, अन्तरिक्ष वासियों से भूलोक में निवास करने वाले प्राणियों से और तुम्हारे शत्रुओं से आपको स्वस्ति होवे, सूर्य चन्द्रमा कुबेर वरुण यम तुम्हारी रक्षा करें, हे रघुनन्दन! अग्नि वायु धूम मन्त्र ऋषि बन में तुम्हारी रक्षा करें, सर्व लोक के स्वामी ब्रह्मा तथा ऋषि और भी शेष देवगण बनमें तुम्हारी रक्षा करें, ऐसा कह कर कौसल्या गंध और माल्य तथा योग्य स्तुतियों से देवताओं का पूजन करने लगीं, ब्राह्मणों ने अग्नि को प्रज्वलित करके रामचन्द्र के मंगल कामना के वास्ते हवन करने लगे, घी श्वेतमाला समिधा सर्षप (सरसो) आदिको कौसल्या ने एकत्र किया, उपाध्याय गण आकर निर्विघ्न शान्ति लाभ के लिये बिधि पूर्वक हवन करने लगे, हवन से शेष हविको लेकर ब्राह्मणों ने बाहर में बलि दिया. और मधु दही अक्षत घी आदि से ब्राह्मणों ने रामचन्द्रजी के लिये स्वस्ति पाठ किया, राम माता कौसल्या उन ब्रह्मणों को यथा योग्य देकर रामचन्द्रजी से बोलीं, हे राघव! वृत्रासुरके मरने पर इन्द्र देवता को जो

मंगल हुआ वह तुमको हो, अमृत की प्रार्थना करते हुए जो मंगल गरुड़जी को हुआ वह तुमको हो, अमृत की प्राप्तिमें दैत्यों को मार कर देवताओं को जो मंगल हुआ वह तुमको हो, हे रामजी ! बलिको छलने के समय वामनजी को जो मंगल हुआ वह तुमको हो, हे महाबाहु ! देवता ऋषि समुद्र पर्वत नदी सातो द्वीप सातो लोक और दिशायें आपको मंगल देवें, ऐसा कह कर कौसल्या गंध का विलेपन किया और औषधियों से रक्षा करके मन्त्रों का जप करने लगीं, इसके उपरान्त अन्तर के खेदसे गद्गद् होकर रामचन्द्रजी के शिरको स्पर्श करके बोलीं, हे रामचन्द्र ! पिता के बचन को पालन करने वास्ते सुख पूर्वक बन को जाओ, जब फिर कुशल से अयोध्या में आकर राज्य लाभ करोगे तब मैं तुमको सुख पूर्वक देखूंगी । हे रामजी ! मेरे और जानकी जी के मनोरथ को तुम नित्य पूर्ण करने वाले होओ, मुझसे पूजित देवगण रुद्र आदि लोकपाल महर्षि ब्रह्मर्षि राजर्षि भूत गसा राक्षस आदि बन में तुम्हारा कल्याण करें । शोक से व्याकुल आंसू से पूर्ण नयन कौसल्या यथा विधि स्वस्त्ययन को समाप्त करके रामचन्द्रजी की प्रदक्षिणा किया और बार बार उनको हृदय से लगाने लगीं, रामचन्द्रजी माता के प्रेम को अनुभव करके बार बार उनके चरणों पर अपना सिर रखने लगे ।

इति वाल्मीकिये अयोध्या काण्डे पंच विंशतिमः सर्गः ॥२५॥

रामचन्द्रजी कौशल्या को प्रणाम करके बन जाने की यात्रा किये उस समय धर्म के मार्ग पर आरूढ़ रामजी को देखकर कौशल्या ने स्वस्त्ययन किया इधर मार्गों पर मनुष्यों की भीड़ जमी थी जानकी कैकयी के बातको न जानकर अभिषेक मंगल में मग्न होकर देवताओं का पूजन करती थीं, रामचन्द्रजी कौशल्या के स्थान से बिदा होकर लज्जा से शिरको झुकाये अपने स्थान को चले गये, जानकी जी रामचन्द्रजी की दीन दशा देखकर विस्मित और चिन्ता से व्याकुल हो बार बार रामचन्द्रजी के मुखको भय से देखने लगीं, रामचन्द्र

केकयी के बचन रूपी बज्र की पीड़ाको छिपाना चाहते थे परन्तु साक्षात् माया स्वरूप हृदय प्रिय जानकी जी को देखकर रामचन्द्रजी का गुप्त शोक प्रगट हो गया, अर्थात् स्त्रियों के सामने पुरुष का अभिप्राय छिपा नहीं रहता, रामचन्द्रजी के मुख कान्ति को मलीन देखकर शोक से सन्तप्त होकर जानकी जी बोलीं, हे प्रभो ! यह आपकी क्या दशा है आज वृहस्पति और चन्द्रमा से युक्त पुष्य नक्षत्र में वृद्ध महाराज ब्राह्मणों की आज्ञा से अभिषेक देने वाले थे सो आप प्रसन्नता को छोड़कर दुःखी क्यों जान पड़ते हैं, जो छत्र और चमर से सदा आप शोभित रहते थे सो आज आप चमर से हीन दिखाई देते हैं, जो वन्दिगण प्रसन्न मन से सदा आपकी स्तुति करते थे वे बंदीजनों से रहित आपका स्थान होगया है, आज मधु और दधिसे युक्त ब्राह्मण तीर्थ के जलका अभिषेक क्यों नहीं करते हैं, और आपके अनुगत सभासद सदा चलते थे आज आप अकेले क्यों हैं ? वेगवाले चार घोड़ों से युक्त स्वर्णमय रथ जो सदा आपके आगे चलते थे सो वे रथ आज क्यों नहीं चलते, जो आपके चलने के समय पर्वतके समान हस्ती आगे चलतीथी सो आज क्यों नहीं दीख पड़तो, जब अभिषेक काल उपस्थित होने पर राजचिन्ह से हीन और हर्ष के समय बिषाद का चिन्ह क्यों दीख पड़ता है ?इस प्रकार विलाप करती हुई जानकी से रामचन्द्रजी बोले, हे सीते ! हमारे पूज्य पिता हमको बनवास करने की आज्ञा दिये हैं, हे प्रिये ! उत्तम कुलमें उत्पन्न होने वाली धर्मको जानने वाली धर्म मार्ग पर चलने वाली जिस कारण यह आज्ञा मुझे मिली है उसको सुनो, सत्य प्रतिज्ञ महाराज दशरथ ने पहिले मेरी माता केकयी को दो बरदान दिये थे, जब राजा मुझे अभिषेक देने को उद्यत हुए तब प्राचीन बरदान के संकेत से समय को देख करके केकयीने प्रेरणा किया कि चौदह वर्ष पर्यन्त मैं दण्डक बन में निवास करूं और मेरे स्थान में पिता भरतजी को युवराज बनावें, सो मैं पिता की आज्ञा से बन जाने को प्रस्तुत हूं तुम्हें भरतके समीप में रहकर

मेरी श्रधा नहीं करना चाहिये, क्योंकि शक्तिमान दूसरे के गुण और उत्कर्ष को नहीं सहन करता इस कारण भरत के सामने हमारी प्रशंसा नहीं करना, इस समय में कुछ विशेष नहीं कह सकता हूं केवल यही कहता हूँ। कि भरतजी के अनुकूल होकर रहना जैसा वह कहैं उसको भली भांति पालन करना हे मनस्विनी ! मैं पिता के वचन को पालन करने के लिये वनको जाता हूं तुम धैर्य पूर्वक स्थिर होओ । हे कल्याणि ! मेरे वन जाने पर व्रत और उपवास पूर्वक तुमको रहना चाहिये, प्रातःकाल उठकर यथा विधि देवताओं का पूजन करके मेरे पिता की वन्दना और आराधना करना, शोकसे पीड़ित वृद्धा मेरी माता का धर्मपूर्वक आदर और सम्मान करना इसके अतिरिक्त केकयी और सुमित्राको कौशल्या के समान जानकर स्नेह पूर्वक सेवा करते रहना, भरत शत्रुघ्नको पुत्रके समान जानकर प्राण की तरह देखना, हे वैदेही ! देश और कुलके राजा भरतका कभी तिरस्कार नहीं करना, क्योंकि आराधन करने से राजा लोग प्रसन्न रहते हैं और विपरीत भावको देखकर क्रोध करते हैं इस लिये भरतके अनुकूल हो तुम्हें रहना चाहिये, राजा लोग विपरीत चलने वाले पुत्रको छोड़कर संबंध हीन जनोंको अपना जन समझने लगते हैं सो तुम इहां रह कर भरत की आज्ञानुसार कार्यका पालन करना, हे जानकी ! मैं वनको जाता हूं तुम निरन्तर यहां रहो और मेरे वचन को मिथ्या न समझकर इसका सदा पालन करते रहना ॥

इति वाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे षडविंशः सर्गः ॥ २६ ॥

श्रीरामजी के उपहास पूर्वक इस प्रकारके वचनको सुनकर क्रोध सहित जानकी जी बोलीं, हे स्वामी ! यह क्या लघु बात पालन करने को मुझे कहते हैं इस बात में लोकमे हमारा उपहास हो जायगा, जो आप कहते हैं वह वीर क्षत्रियों के कहने सुनने योग्य बात नहीं है, हे आर्यपुत्र ! पिता माता भाई बहिन और पुत्र यह अपने अपने प्रारब्धके फलका भोग करते हैं परन्तु स्त्रियां पतिके भाग्यसे ही सुख

दुःखको भोग करती हैं इस कारण जैसे पिता के बचन से आप बनबास करेंगे वैसेही मैं भी आपके चरणकी छाया के आश्रय में बनकी शोभाको देखूँगी । माता पिता पुत्र मित्र इस लोकके साथी हैं किन्तु स्त्रियों के लिये पति इस लोक में और परलोक में परमगति हैं, हे राघव ! यदि आप आज बन चलने को प्रस्तुत हैं तो मैं भी आपके आगे आगे पैदल चलने की इच्छा करती हूं, हे स्वामी ! मेरे ऊपर दया करके मुझे अपने साथ ले चलिये, घरमें बनमें जहां कहीं हो । स्त्रियां पतिके साथ रहती हैं ऐसा शास्त्र धर्म हैं इस धर्मको न पालन करने से स्त्रियों का कल्याण नहीं होता है, स्त्रियों को माता पिता से सदा उपदेश मिलता है कि पतिके आज्ञा के वश होकर रहना स्त्रियों का परम धर्म है परन्तु कालके अनुसार हे स्वामी ! पूर्व उपदेश को आप मुझे देने योग्य नहीं हो, जन शून्य व्याघ्र सिंह सेवित दुर्गम बनको मैं जाऊँगी, हे स्वामी ! तीनों लोक के सुख तृणके समान हैं मैं आपके साथ बन में सुख से रहूंगी, आपके साथ आपकी सेवा से मेरे समय सुखसे निर्वाहित होंगे, अकेले आपही मेरी रक्षा कर सकते हैं मुझे और विभव से क्या, मैं आपके साथ अवश्य चलूंगी । हे महाभाग ! आप मुझे यहां छोड़ने योग्य नहीं हो, हे स्वामी ! आपके संग दुःख मय कार्य में भी मुझको दुःख नहीं हुआ है इस कारण आगे भी दुःख नहीं होगा, मैं फल मूल खाकर आपकी सेवा करूंगी । हे भगवन् ! आपके आगे चलूंगी और भोजन करने पर शेष भोजन करूंगी और आपको इच्छानुसार बनकी शोभा को देखूंगी, हे नाथ ! आपके साथ भयसे रहित होकर जल कुक्कुटों की और फूली हुई कमलिनी की शोभा को देखूंगी । हे वीर ! आपके संग इस प्रकार सैकड़ों वा हजारों वर्ष तक सुख से रह सकती हूं और आपके बिना स्वर्गका भी सुख हमारे लिये दुःख का स्वरूप है, मृगा, बानर, हस्ती, सिंह व्याघ्र से युक्त बन में मैं चलूंगी और जैसे आनन्द पूर्वक पिता के गृह में रहती थी वैसेही सुख पूर्वक

आपके चरण सेवा से बन में रहूंगी । हे नाथ ! आपके वियोग में मैं अपना प्राण त्याग कर देवेंगी इस लिये हमारी प्रार्थना को अंगीकार करिये, इसको अंगीकार करने में आपको कुछ भार अधिक नहीं होगा । इस प्रकार धर्म वत्सला और दुःखिता जानकी को धैर्य देने के लिये रामचन्द्रजी बोले ॥

इति वाल्मीकिये अयोध्या काण्डे सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥

श्री रामजी जानकीजी के वचन को सुनकर वनमें होने वाले दुःखों की चिन्ता करके सीता की इच्छा को रोकने की चेष्टा करने लगे, और जानकी को धैर्य देकर अयोध्यामें रहनेके लिये फिर भी कहने लगे, हे सीता तुम महाकुलीन हो और पतिव्रताओं में श्रेष्ठ हो यहां ही रहकर अपने पतिव्रत रूप धर्मका पालन करो जिस में मुझको सुख हो, हे जानकी ! जैसा तुम कहती हो वैसा तुमको करने में उचित नहीं होगा क्योंकि बन में अनेक प्रकार से दुःख मिलते हैं उनको मुझसे सुनो, हे सीता ! यह बनवास रूप दुःख को छोड़िये अति गहन कान्तार में प्रवेश अति कठिन है इस लिये उसका नाम बन है तुम हमारे बचन को धारण करो बन में सदा सुख को न जानकर बनको दुःख रूप समझना चाहिये, पहाड़ी नदियों के शब्द और गुफा में रहने वाले सिंहों के शब्द सुनने में महा दुःख होता है इस कारण बनको दुःखरूप जानो, निःशंक विहार करनेवाले प्रमत्त मृगगण मनुष्य को देखकर संमुख दौड़ते हैं इस लिये हे प्रिये ! बनको दुःख रूप जानो ग्राहके सहित नदियां और कींचड़ युक्त मार्ग तथा मतवाली हाथियों के इधर उधर घूमने से बन भयंकर और दुःख मय होता है, बन की राहों में चारो ओर लता और कांटे फैले रहते हैं उनके नीचे बन कुक्कुट भयंकर बोली बोलते हैं कहीं बिना जल के नदी और कूप दिखाई पड़ते हैं और ऐसे दुःख देनेवाले बनमार्ग को दुःख रूपजानो, अपने गिरे हुए वृक्षों के पत्तोंपर शयन करना होगा इस कारण बन को दुःख रूपजानों, वृक्ष से गिरे हुए फल को खाकर दिन रात्रि सन्तोष

पूर्वक रहना होगा इस लिये बन को दुःख रूपजानों, शिरपर जटा और बृक्ष वल्कल धारण करना होगा और सामर्थ्य के अनुसार उपवास करना होगा इस कारण बन को दुःख रूप जानो, देवता पितर और आये हुए अतिथियों का पूजन तीनों काल स्नान और नियम से रहना होगा इस कारण बन को दुःख मय समझो, बन के बृक्षों से फूलको लेकर पूजन करना होगा और ऋषियों के समान आहार बिहार करके रहना पड़ेगा इस लिये बन को दुःख रूप समझना चाहिये, जंगली आहार से जैसे बनचर अपनी जीविका करते हैं उनके समान यथा लब्ध आहार से सन्तोष रखना पड़ेगा। हे सीता ! बन को महा दुःख रूप समझो। बन की भयवनी रात्रि और प्रचण्ड वायुके झकोरे तथा मार्ग में चलने की थकावट से भूख को सहना होगा इस लिये बनको दुःख मय जानो, अनेक प्रकार के चीउँटी मांटा अभिमान से मार्ग में चलते हैं उनकेकारण बनको दुःख रूप जानो, नदी के तटपर रहने वाले सर्प मार्ग को आच्छादित किये रहते हैं उनके भय से मार्ग को दुःख रूप समझना चाहिये, हे सीते ! पक्षि बिछू कीड़े देशमसा आदि बन में जन्तुओं को विशेष करके मनुष्यों को नित्य पीड़ा देते हैं इस लिये बनको दुःख रूप जानना चाहिये। हे प्रिये ! बन के कंटैले बृक्ष और कुशा कासकी शाखायें मनुष्य के शरीर को पीड़ित करके व्याकुल कर देते हैं इसीलिये बनको दुःख का रूप जानना चाहिये, शरीर को दुःख देने वाले बहुत से भय बनवासियों को होते हैं इस कारण बनको दुःखका स्थान जानना चाहिये, हे जानकी ! क्रोध लोभ को छोड़कर तपस्या में निरत होकर रहना पड़ेगा इस लिये बन को दुःखका स्थान समझना चाहिये, हे जानकी ! बनकी यात्रा तुम्हारे लिये योग्य नहीं होगी तुम स्वयं विचार करके देखो कि बन वासियों को कितना दुःख भोगना पड़ता है, जैसे रामचन्द्रजी सीता को अपने साथ ले जाने में रुचि नहीं किया वैसेही जानकी जी रामचन्द्रजी के बचन को भी अंगीकार नहीं किया ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे अष्टाविंशः सर्गः ॥ २८ ॥

इस प्रकार रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर दुःखवती सीता रोती हुई बोली, हे नाथ ! आपने जो कुछ बनके दुःख और दोष को कह रहे हैं उनके प्रति आपके स्नेह से यह सब दोष गुणके समान हैं, हे राघव ! मृग सिंह, हाथी, व्याघ्र सुरहगाय, कृमि, कीट, पतंग, सर्प बिच्छू-बानर भालू देश मस तथा और भी जंगली जन्तु आपके स्वरूपको देखकर आपके भयसे भाग जावेंगे, हे नाथ ! गुरुजनों की आज्ञा से मैं आपके साथ चलूंगी नहीं तो आपके वियोग में, मैं अपने प्राणको छोड़ दूंगी, हे स्वामी ! आपके समीप मुझको इन्द्रादि देवता दुःखको नहीं दे सकते साधारण की क्या गणना है, आपने बनवास के दुःखको जो मुझसे कहा है उस प्रकार के दुःख मय बनमें पतिके संग स्त्रियां रह सकती हैं परन्तु पति से हीन होकर जीना उत्तम नहीं है इस लिये आप मेरी प्रार्थना को अंगीकार करिये, मेरे पिताके गृहमें मेरी ग्रह कुण्डली को देखकर ब्राह्मणों ने यह कहा था कि इनको बनवास करना होगा, वही ब्राह्मणों के सत्यबचन को पालन करने का मेरा सौभाग्य हुआ है इस वास्ते आपके साथ मैं बन को चलूँगी, बनकी यात्रा करके उनका ब्राह्मणों के और पिता का माता के सत्य बचन को मैं भी पालन करूंगी, जिसमें ब्राह्मणों का बचन जगत में सत्य समझा जावे, हे वीर ! बनवास में प्राप्त होने वाले दुःख समुदाय को मैं जानती हूं परन्तु वह दुःख पुरुषार्थ हीन पुरुष को भोगना पड़ता है, हे नाथ ! आपने हमे प्रसन्न करने के लिये और धैर्य देने के लिये अनेक बातों को कहे हो तौ भी मैं आपके साथ बनमें चलने की कांक्षा निश्चय रखती हूं। हे राघव ! बन में चलने की सदा कामना रखती हूं और आप ऐसे बनवासी सूरबीर की सेवाको मैं सदा करना चाहती हूं। मैं अपने शुद्ध भाव से आपको प्राणेश्वर जानती हुई संसार में विकल्पषा होऊँगी, यशस्वी ब्राह्मणों के मुख से इस पवित्र शास्त्र बचन को सुना हूं कि पतिके अनुकूल चलने वाली स्त्रियां परलोक में दिव्य सुख को

पाती हैं, जो स्त्रियां अपने अपने जाति के कन्याओं का कन्यादान जिस जलसे देती हैं वह कल्याणरूप जल के फल को इस लोक में और परलोक में भी पाती हैं। हे रामचन्द्रजी! पतिव्रता अपनी स्त्री के बचन को किस कारण आप अंगीकार नहीं करते हैं, हे काकुत्स्थ! दीन और पतिव्रता भक्त सुख दुःख को समान जानने वाली मुझको आप अपने साथ ले चलने के योग्य हैं, यदि मुझ दुःखता को आप अपने साथ न लेचलेंगे तो मैं विष अग्नि जल आदिके द्वारा अपने प्राणको नाश कर दूंगी। इस प्रकार सीताजी को बहुत कहने से भी रामचन्द्रजी की इच्छा जानकी के बचन पर आरूढ़ नहीं हुई, इस प्रकार कहने पर भी रामचन्द्रजी के इच्छा को न देखकर जानकी जी चिन्ता पूर्वक आँसु की धारा बहाने लगीं, चिन्तित और क्रोधाविष्ट जानकी को रामचन्द्रजी अनेक प्रकार के बचन से सान्त्वना और धैर्य देने लगे।

इति वाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे एकोनत्रिंशः सर्गः ॥२९॥

जानकी अनेक प्रकार की सान्त्वना रामचंद्रजी से पाकर फिर भी उपहास और प्रेम के बचन को बोलीं, हमारे पिता जनक पुरुष के आकार से युक्त स्त्री के समान जामाता आपको पाकर आपके तत्व को नहीं जाना कि आप नाम के पुरुष हैं और क्रिया में स्त्री के समान हैं यदि आप मुझको यहां छोड़ने के लिये बन गमन के दुःख को अनेक भांति से कहते हैं तब तो लोगों का यह कहना सर्वथा मिथ्या हो जायगा कि रामचन्द्र का प्रताप सूर्य से अधिक है हे नाथ! आप अपने मन में क्या बिचार करके मेरे चलने में विषाद करते हैं अथवा आप को भय क्या है या मेरे पतिव्रत भाव को दृढ़ न देखकर मुझको आप यहाँ छोड़ना चाहते हैं हे रघुनन्दन! जैसे सावित्री द्युमत्सेन के पुत्र सत्यवान के अधीन थीं उनके समान हमें भी आप अपने अधीन जानिये, जैसे व्यभिचारिणी दूसरे को देखती है वैसे मैं मनसे भी दूसरे पुरुष को

नहीं देखती हूं इस कारण आपके बिना मैं यहां नहीं रह सकती हूं। हे रामजी ! जो आप इस समय मुझे भरत के अधीन होकर रहने की आज्ञा देते हैं उस आज्ञा को मैं नहीं अंगीकार करती, केवल आप के संग सदा रहना चाहती हूं। हम को यहां छोड़कर आप बन जाने के योग्य नहीं हैं आपके साथ तपस्या अथवा बनवास स्वर्ग के समान है हे रामजी ! विहार शयन के समान आपके पीछे चलती हुई हमको मार्ग का कुछ भी परिश्रम नहीं होगा, आप के साथ रहते हमको कुश कास अथवा और भी कँटैले वृक्षों का स्पर्श सुखमय शय्या के समान मालूम होगा, महावायु के बेग से जो धूली उड़कर मेरे ऊपर पड़ैंगी वह उत्तम चन्दन के समान आपके साथ हम को सुख देवेंगे। शय्या युक्त शयन के स्थान पर वे गिरे हुए पत्तों की शय्या मेरे लिये अधिक सुख को देवेंगे, जो कुछ आप बन के पत्र फल मूल को लाकर थोड़ा या अधिक देवेंगे वही मेरे लिये अमृत के बराबर होगा, ऋतुओं में होने वाले पुष्प और फल को खाकर रहूंगी और मैं माता पिता तथा राज्य आदि को स्मरण न करके बन में रहूंगी। हे नाथ ! आप के संग नरक का रहना स्वर्ग है और आप के वियोग का स्वर्ग मेरे लिये नर्क वास है इस प्रकार मेरी परा प्रीति को जानते हुए मेरे साथ चलिये, बन के दुःख को न सोचती हुई मुझ को भरत के अधीन छोड़कर यदि आप अपने संग नहीं ले जावेंगे तो मैं विष को खाकर अपना प्राण अवश्य छोड़ देवैंगी, हे नाथ ! आपको जाने के उपरान्त मेरे जीवन से मरण ही मेरे लिये श्रेष्ठ होगा। आपके वियोग रूप दुःख को क्षण भर भी मैं नहीं सह सकती हूं चौदह वर्षको कौन कहे, इस प्रकार शोकसे पीड़ित जानकी अनेक प्रकार से विलाप करती हुई रामचन्द्रजी के गोद में मग्न हो गई जैसे बाण से विद्ध हस्ती व्याकुल होकर जल को छोड़ती है वैसे रामचन्द्रजी के वाक्य से पीड़ित जानकी चिरसंचित आंसुओं को छोड़ने लगीं, स्फटिक के समान उज्वल संताप से उत्पन्न

आसुओं को नयन से इस प्रकार छोड़ने लगीं जैसे कमल के पत्ते से जलका बुन्द गिरता है उन आंसुओं के गिरने से पूर्ण चन्द्रमा के समान सीताजी के मुख कमल सूख गये जानकी की ऐसी दशा देखकर रामचन्द्रजी दुःखिता सीता को गोदमें लेकर विश्वास के योग्य बचन को बोले, हे देवि ! तुम्हारे बिना स्वर्ग भी हमारे लिये तुच्छ है और हमको स्थावर जंगम आदि जोव मात्र से भय नहीं है, हे चन्द्रमुखी ! तुम्हारे सकल अभिप्रायको पहिले न जानकर तुम्हारे बनवास को मैंने अंगीकार नहीं किया, हे प्रिये ! जैसा तुम कहोगी वैसाही मैं करूंगा क्योंकि धीर पुरुष अपनी दया को नहीं छोड़ते, इस समय मैंने वानप्रस्थ धर्मका अवलम्बन किया है यह धर्म बिना स्त्रीके संपादन नहीं होता इस कारण हे भार्ये ! जैसे सुवर्चला सूर्यके पीछे चलती हैं वैसेही तुम मेरी अनुगामिनी होओ। हे जानकी ! मैं बनको अवश्य चलूँगा जिसमें पिताके बचन का पालन होवे, पिता माता के अधीन होकर रहना ही परम धर्म है, उनकी आज्ञाको व्यतिक्रम करके मैं अपने जीवन को नहीं रख सकता हूं, जिसकी आराधना करने से धर्म अर्थ काम यह तीनों वर्ग और तीनों लोक आराधित होते हैं उन पिता माता से प्रेम करने वाले प्राणी पर सकल देवता प्रसन्न होते हैं और वही मनुष्य जगत में पवित्र गिना जाता है। सत्य दान मान यज्ञ आदिसे परलोक की वैसी सिद्धि नहीं होती जैसी कि पिता माता के सेवा से परलोक सुधर जाता है, स्वर्ग धन धान्य सुख विद्या पुत्र आदि बड़ों की आज्ञा को मानने वाले को दुर्लभ नहीं होते, माता पिताकी सेवा करने वाले देवलोक गंधर्वलोक गोलोक और ब्रह्मलोक को जाते हैं अर्थात् निकृष्ट मध्यम और उत्तम सेवा करने वाले इन लोकों में आदर सहित निवास करते हैं। सत्यवादी मेरे पिता हमको जो कुछ आज्ञा दिये हैं वह पालन करना चाहिये यही सनातन धर्म है। हे सीते ! पहिले दण्डकारण्य में अपने साथ तुम्हें ले चलने की मेरी इच्छा नहीं रही किन्तु अब तुम्हारी यह दृढ़

प्रतिज्ञा देखकर मेरे मनके सन्देह दूर होगये और तुम्हारे साथ बनवास करना यह निश्चय हुआ। हे प्रिये! मेरे लिये जो कुछ तुम कहरही हो उसके अनुसार बनमें चलकर धर्मचारी होओ, हे सीता! सब प्रकार से मेरे और अपने कुलकी मर्यादा को पालन करने वाली हो इसलिये मेरे साथ चलने का सौभाग्य तुम्हें प्राप्त हुआ है, हे सीते! अब बनवास के योग्य दानादि क्रियाओं को आरंभ करो ब्राह्मणों को रत्न आदि दरिद्रों को भोजन देओ, अपने शरीर के श्रेष्ठ अलंकारों को उत्तम वस्त्रों को और शृङ्गार के योग्य वस्तुओं को और हमारे शयनीय वस्त्र (अर्थात् पलंग तोसक मसलन्द गलैचा) आदिको ब्राह्मणों से अतिरिक्त सेवकों को देओ, रामचन्द्रजी की इच्छा को अपने अनुकूल जानकर सीता देवी प्रसन्न मनसे दान करने में प्रवृत्त होगयीं॥

इति वाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे त्रिंशः सर्गः॥ ३०॥

जानकीजी के सहित रामचन्द्रजी बनको जा रहे हैं इस प्रकारके संबाद को सुनकर पहिले से जानकीजी के स्थान पर बैठे लक्ष्मण अपनी इच्छा को रामचन्द्रजी से प्रगट करने के लिये आंसुओं को बहाने लगे, और रामचन्द्रजी के चरण को प्रणाम करके और जानकीजीको अपने नयन के (इसारे) से प्रार्थना करके महा व्रतको धारण करने वाले रामचन्द्रजी से बोले, हे रामचन्द्रजी! हस्ती, मृगा, सिंह, व्याघ्र आदिसे संयुत बनको यदि आप चलने का बिचार करते हैं तो हम भी आपके साथ चलैंगे, आप हमारे सहित घोर दंडक बनमें बिचरियेगा, हे रामजी! यदि आप कहैं कि यहीं रहकर सुख भोग करो तो मैं लोकके समारोहको अथवा इन्द्रादि देवताओं के पदको अथवा तीनों लोकके राज्य को आपसे रहित होकर मैं नहीं चाहता, इस प्रकार बनवास के लिये निश्चित करके लक्ष्मण को कहते हुए रामचन्द्रजी अपने प्रियवचनों से लक्ष्मण का निषेध करने लगे, लक्ष्मणजी अपना निषेध देखकर बिनय पूर्वक रामचन्द्रजी से बोले, हे भगवन्! पहिले तो आपने आज्ञा दी है कि इन सब अभिषेक की सामग्रियों का निवा-

रण करो अबजो आप हमको बन चलने में निषेध करते हैं इससे हमें सन्देह होता है, हाथ जोड़े बिनयावनत लक्ष्मण को देखकर रामचन्द्रजी फिर भी कहने लगे कि हे लक्ष्मणजी धर्ममें परायण सज्जनोंके मार्ग पर चलने वाले स्वयंधीर और प्राणके समान हमको प्रिय हो और हमारे सखा हो परन्तु मेरे आपको बन चलनेसे कौसल्या और सुमित्राको कौन सेवा करेगा, मैं माताओंकी सेवा करने वास्ते आपको बनजाने से मैं रोक रहा हूँ। यदि कहिये कि जैसे पृथिवीपर वर्षा करके मेघ लोग पृथिवी को सन्तुष्ट करते हैं वैसे महाराज दशरथ अन्न पान तथा उचित सुखके वस्तुओं से पालन करेंगे, तो यहां यह सोचना आपका ठीक नहीं है, क्योंकि महाराज इस समय कैकयी के अधीन में हैं, और अश्वपति की कन्या कैकयी राज्य को पाकर कौसल्या और सुमित्रा का आदर नहीं करेगी इस कारण आपका बन चलना ठीक नहीं है। यदि यह कहो कि भरतजी रक्षा करेंगे तो कैकयी के नियोग से भरत भी दुःखिता उन कौसल्या और सुमित्रा का स्मरण नहीं करेंगे क्योंकि अपने औ-धत्थसे स्त्रियां अपनी सपत्नी (सवत) का तिरस्कार ही चाहती हैं, इसलिये हे लक्ष्मण ! अपने उचितसे अथवा राजा के अनुग्रहसे हमारी बात को मानकर आप यहां कौसल्या की रक्षा करो, इस प्रकार मेरे बचन को पालन करने से हमारी सुन्दर भक्ति तुमको होवेगी, हे धर्मको जानने वाले लक्ष्मण ! माता पिता गुरु की सेवा से अतिरिक्त कोई धर्म नहीं है, इस प्रकार रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर मधुर बचन से लक्ष्मण बोले, हे रामचन्द्रजी ! आपके अतुल बलके अनुरोध से कौसल्या आदि माताओं की सेवा भरत जी अवश्य करेंगे क्योंकि वह सोचेंगे कि यदि कौसल्या आदिको दुःख होगा तो महा अनर्थ की संभावना होगी, इस कारण कौसल्या आदिको भरत जी अवश्य रक्षा करेंगे। यदि उत्तम राज्य पाने के अभिमान से कौशल्या आदिको विप्रिय करेंगे तो मैं शपथ पूर्वक दुर्बुद्धि भरत को, और उनके पक्ष पातियों का अवश्य बध करूंगा, यदि कहिये कि कौशल्या आदिकी जीविका

न होने से दुःख होगा तो अपने और सेवकों को निर्वाह के लिये एक हजार गांव को लेकर अपनी रक्षा करेंगी, हे रामजी ! हमको अपना अनुचर जानकर अंगीकार करो, मैं आपके साथ चल कर आपकी सेवा से कृतार्थ होऊँगा, धनुष, बाण, कुदार और बाँस की पेटारी लेकर आपको मार्ग बनाते हुए अर्थात् मार्ग से कांट, कुश तथा बैरियों को नाश करते हुए आगे आगे चलूंगा, आपके लिये अनेक प्रकार के कन्दमूल फल आदि को संपादन करेंगे जिससे हवन अतिथी पूजन और अपना सब का जीवन होगा, जब आप बैदेही के सहित पर्वत के शिखर पर शयन करेंगे तब मैं सोते और जागते हुए आपकी शुश्रूषा करेंगे, प्रेम तन्तुमें बंधे लक्ष्मण जी के बचन से प्रसन्न होकर रामचन्द्रजी बोले, हे लक्ष्मण ! जाकर कौशल्या आदि माताओं से तथा अपने सुद्धजनों से आज्ञा को लेकर आओ तो मेरे साथ चलो, और यज्ञ में महात्मा वरुण ने जो कुछ अस्त्र प्रसन्न होकर जनक जी को दिया था उस अस्त्र को विवाह के समय जनक जी ने दहेज में हमें दिया है वह आचार्य के भवन में रखा है उसको भी लेकर जल्दी आओ ! लक्ष्मण जी बन जाने के लिये सब की आज्ञा लेकर आचार्य के स्थान पर आये उन्हें दण्डवत करके उन अस्त्रों को लिया जो रामचन्द्रजी जनक जी से पाये थे, लक्ष्मण उन अस्त्रों को लेकर रामचन्द्रजी के यहां आये, रामचन्द्र आये हुए लक्ष्मण को देखकर प्रेम पूर्वक बोले, हे सौम्य ! हमारे हितकी इच्छासे आप उचित समय पर आये हैं, अब जो कुछ हमारे पास धन है वह सब तपस्वी ब्राह्मणों को देना चाहते हैं इस कारण बशिष्ठ पुत्र सुयज्ञ को शीघ्रही बुलाइये ॥

इति बाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे एकत्रिंशः सर्गः ॥ ३१ ॥

लक्ष्मण जी भाई की प्रिय आज्ञा को पाकर सुयज्ञ मुनि के अस्थान पर जाकर अग्निहोत्र करते हुए सुयज्ञको प्रणाम करके लक्ष्मण जी बोले,—हे सखे ! रामचन्द्रजी के स्थान पर चलकर राम-

चन्द्रजीके कार्यको देखो, कहां तो राज्यकी प्राप्ति और कहां बनवास रूप दुःखके आश्रय, सुयज्ञ मुनि मध्यान्ह कालकी संध्याको समाप्त करके लक्ष्मणजी के साथ रामचन्द्र के स्थान पर आये, वेद शास्त्रको जानने वाले सुयज्ञ मुनिको सीता के सहित रामचन्द्रजी प्रणाम करके पूजन किये, और रत्नजड़ित भुजबन्द कुण्डल केयूर करधनी मोतियों की माला हाथका कंकण आदि अपना उतारकर रामचन्द्रजी सुयज्ञ मुनिको देकर सीताजी से बोले, हे प्रिये! अपने भूषण को उतार कर अपनी प्रियसखी सुयज्ञ मुनिकी पत्निको देओ, श्रीरामजी की आज्ञा को शिरोधार्य करके जानकी जी अपने हारको रत्नमालाको हेमसूत्र को करधनी कंकण भुजबन्द केयूर आदि उत्तम उत्तम रत्नोंसे जड़ित भूषण को उतार कर सुयज्ञ की स्त्रीको दिया, और रामचन्द्रजी! एक हजार स्वर्ण मुद्रा (गिनी) के साथ शत्रुंजय नाम हाथीको सुयज्ञ मुनिको दान किये, और रामचन्द्रजी अपनी उत्तम शय्याके अलंकार और सामग्रियों को मुनिके लिये दान किये, सुयज्ञ मुनि रामजी के दानको ग्रहण करके राम लक्ष्मण सीता को मंगलाशीर्वाद दिये, इसके बाद रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मण! ब्रह्मा और बिष्णुके समान उत्तम ब्राह्मण अगस्त्य और कौशिकजी को बुलाइये उनकी पूजा करके धनरत्न से सन्तोष करिये, उन लोगों को एक हजार गौ सुवर्ण चांदी और बहुमूल्य मणियों को दिया और जो तैत्तिरीय शाखाको अध्ययन करने वाले आचार्य कौसल्याजी के स्थान पर आशीर्वाद दिया करते हैं उनलोगों के लिये रथ दास दासी और रेशमी वस्त्र आदिसे उनलोगों को सन्तुष्ट कीजिये, और कठकालाप आदि शाखाको अध्यन करने वाले ब्राह्मणों को रथ और सुमन्त्र से अतिरिक्त सारथी और धन रत्न वस्त्र एक हजार गौ आदिसे इनको सन्तुष्ट कीजिये, और भी जितने तपस्या में निरत होकर स्वाध्याय करने वाले और भिक्षासे अपनी जीविका को निर्वाह करने वाले ब्राह्मणों को अस्सी रथ रत्नसे पूर्ण करके देओ, और एक हजार ऊंट

गाड़ी और दो सौ बैलगाड़ी चना मूंग धान्य गेहूं आदि से पूर्ण करके देकर सन्तुष्ट करो, और ब्रह्मचारी वर्ग जितने कौसल्या के द्वार पर है उनलोगों को एक हजार गौ और उतनाही सोना देकर सन्तुष्ट करो हमारी माता कौसल्या ब्राह्मणों की दक्षिणा को देखकर जैसे प्रसन्न होवें वैसे उन ब्राह्मणों की सेवा करो, रामचंद्रजी के बचनके अनुसार लक्ष्मणजी ब्राह्मणों इस प्रकार धन देने लगे जैसे कुबेरजी देते हैं, रामचन्द्रजो के कथना नुसार ब्राह्मणों को यथा योग्य दक्षिणा देकर फिर भी लक्ष्मणजी अपने स्थान से धन की राशि को एकत्र करके पहरे दारों को दुःखियों को भाटों को बन्दियों को विद्याहीन आदि ब्राह्मणों को बालकों को बृद्धों को दीन दशा में वर्तमान को समस्त धन बांट दिया। अयोध्यापुरी में एक गार्ग्य गोत्र का त्रिजटा नाम ब्राह्मण रहते थे हल और कुदार को लेकर बनके बन्द मूलों से सदा अपनी जीविका करते थे, उन वृद्ध त्रिजटा के पास उनकी युवती स्त्री बालकों को लेकर पहुँचीं और अपने पतिसे प्रिय बचन बोली, हेनाथ स्त्रियों को पतिही परम देवता हैं इस प्रकार इस फाल और कुदाल को रख दीजिये और मेरे बचन को अंगीकार कारिये, धर्मज्ञ रामचन्द्रजी के यहां जाइये कुछ धन आपको मिलेगा, त्रिजटा स्त्रीके बचन को सुनकर एक पुरानी साड़ी को ओढ़कर रामजी के स्थान पर अर्थात् जिस मार्ग से होकर रामजी को अपने गृहमें जानेका मार्ग था उसी मार्गपर भृगु अंगिराके समान तेजस्वी त्रिजटा बैठे, श्रीरामजी को देखकर त्रिजटा बोले, हे महाबली राजपुत्र रामजी मेरे को बहुत परिवार हैं और मैं निर्धन हूं जंगल को खोदकर कन्दमूल से अपनी जीविका करते हैं इसलिये ब्राह्मण के बचन को रामजी परिहास मेरे ऊपर भी कुछ कृपा करिये, युक्त बचन को बोले, हे विप्र! असंख्यगौओं में से एक हजार गौ मैंने अभीतक किसीको नहीं दिया है इसलिये आप अपनी लाठी से उन गायों को हांककर मेरे पासले आकर लेजीजिये, त्रिजटा अपनी साड़ी (चदरा) को कमर में बांध लिया और बलपूर्वक घुमाकर

लाठी को ऐसा फेंका कि लाठी सरयू नदी के पारतक चला गया, ब्राह्मण के हाथ से छूटकर वह दंड गौ शाला के पास जहां बैल रहते थे उनके बीचमें वह लाठी जाकर गिरी, रामचन्द्रजी वृद्ध ब्राह्मण की शक्तिको देखकर ब्राह्मण को आलिंगन किया और वहां तक की गौ को सेवकों से मंगाकर ब्राह्मण को दिये, और बिनय पूर्वक ब्राह्मण से बोले, हे द्विजराज ! इस हमारे परिहास से अर्थात् लाठी को फेकवाने से आपको क्रोध न करना चाहिये क्योंकि आपके इस दुरत्य तेजको जानने की जिज्ञासा से मैंने आपको इस दंडको प्रक्षेप करने को कहा है अब आप संकोच को छोड़कर जो जो हमारा धन है उसको मैं ब्राह्मणों को दे रहा हूं आप भी गौके अतिरिक्त उत्तम धनको ग्रहण करिये, रामचन्द्र के बचन से प्रसन्न त्रिजटा स्त्री के सहित गौओं की सेनाको तथा अन्याय धन रत्नको लेकर रामजी को आशीर्वाद प्रदान किया इसके उपरान्त धर्म बलमें उपार्जित धनको सादर पूर्वक सुहृज्जनों को दिया, ब्राह्मण, सुहृद्, सेवक, दरिद्र, भिक्षुक आदिको संमान और दान से रामचन्द्रजी अतिशय सन्तुष्ट कर दिये ॥

इति बाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे द्वात्रिंशः सर्गः ॥ ३२ ॥

श्रीरामचन्द्र जी सीता के सहित ब्राह्मणों के वास्ते अनेक धन-रत्न देकर जानकी को साथ लिये महाराज दशरथ के दर्शन की लालसा से दशरथजी के स्थान पर गये वहां जाकर देखते हैं वह स्थान लोगों से शून्य है, राज्यस्थान पर आये हुए लोगों ने शोककी बातको सुनकर व्याकुलता पूर्वक मार्ग पर चलने से असमर्थ होकर मकान के छतों पर चढ़कर बैठे, और दीनभाव से रामचन्द्रजी को देखने लगे, लक्ष्मण और जानकी सहित रामचन्द्रजी को पैदल देखकर शोकसे व्याकुल प्रजा परस्पर बातचीत करने लगे कि जो रामचन्द्रजी के चलते समय चतुरंगिणी सेना पीछे चलती थी, वही रामचन्द्र आज लक्ष्मण और जानकी के सहित पैदल चल रहे हैं। जो ऐश्वर्य के सुखको जानने वाले हैं और भोग्य बस्तुओं के जो महति खानि हैं सो धर्मके

भयसे पिताके वचन को मिथ्या करना नहीं चाहते, जिस जानकीजी को आकाश में चलने वाले प्राणी भी नहीं देख सकते थे, वही सीताजी आज राजमार्ग से जाती हैं और उन्हें सबलोग देखते हैं। जिनके अङ्गपर सदा चन्दन लगा रहता था वही जानकी आज शीत वर्षा घामको सहन करने के लिये तइयार हैं, महाराज दशरथ प्रेतकी दशामें बर्तमान होकर ऐसा बचन कहे हैं नहीं तो अपने पूर्व स्वभाव में रहकर कभी रामचन्द्र का विवासन नहीं करते, मनुष्य तो अपने निर्गुण भी पुत्रका त्याग नहीं करता और जो अपने अच्छे चरित्र से जगत को अधीन किया है ऐसे गुणवान पुत्रको कौन निष्कासन करेगा, अहिंसा दया शास्त्राध्ययन शील अर्थात सुन्दर स्वभाव इन्द्रियों का निग्रह और शान्तचित ये सब गुण पुरुष श्रेष्ठ रामचन्द्रजी में स्वाभाविक हैं जैसे ग्रीष्म कालमें नदियाँ सूख जाती हैं वैसेही रामचन्द्रजी के बिना समस्त प्रजा पीड़ित हो गई, जैसे फल पुष्पसे विकसित वृक्षको उखाड़ने से दुःख होता है वैसेही जगत् पति रामचन्द्रजी की पीड़ा से सकल चराचर जगत् पीड़ित हो गया है, यह महा तेजस्वी रामचन्द्रजी चराचर जगत के अन्तःकरण हैं और इतर प्राणी पुष्प फल पत्र और इन के शाखा के समान हैं, सीता और लक्ष्मण के सहित रामचन्द्रजी जिस मार्ग से जायंगे उसी मार्ग से रामजी के पीछे पीछे हम लोग भी चलेंगे, बाग क्षेत्र गृह आदि को छोड़कर सुख दुःख को एक समान जान कर हम सब लोग रामजी के साथ रहेंगे, इस पुरी का सकल धन धान्य नष्ट हो जायगा आंगन भाग धूलि से ढक जायगा ब्राह्मणों के होम पूजन वलि कर्म सब बन्द हो जायेंगे, इस पुरी के चारो ओर श्वान शृङ्गाल आदि जन्तु निवास करेंगे राजिक और दैविक क्षोभ के समय में अपना अपना धर्म गृह हम लोग भी केकयी को समर्पण करके रामचन्द्र के साथ बनवास करैं जहां रामचन्द्र रहैंगे वहां बन से नगर हो जायगा और रामजी के बिना नगर बन के समान दीख पड़ेगा इस कारण हम लोग भी नगर

छोड़कर बन का आश्रय लेवें, बन के सर्प मृग पशु पक्षी गज सिंह व्याघ्र आदि जीव हमारे नगर में निवास करें और हम सब पुरवासी रामजी के साथ बन में निवास करेंगे, तृण मास और फल को भोजन करने वाले जन्तुओं से व्याप्त इस नगर को केकयी के लिये छोड़ देओ, और हम सब पुरवासी रामचन्द्रजी के साथ बनवास करेंगे, पुरवासियों की परस्पर शोक और प्रेम से पूर्ण बात को सुनते हुए भी रामजी के मनमें कुछ दुःख नहीं हुआ, निर्मल मुख की शोभा से युक्त मतवाले हाथी के समान पराक्रमी रामचन्द्र महाराज दशरथ के दर्शन की अभिलाषा से केकयी के भवन में प्रवेश किये, नृपालय में प्रवेश करते हुए विनीत बीर पुरुष धर्मात्मा दीन और शोक से पीड़ित रामचंद्रजी को, सुमन्त्र दूरही से देखे, इधर रामचन्द्र पुरवासियों को तथा आये हुए अन्यान्य जनों को आर्त देखते हुए सब को सान्त्वना के भाव से धैर्य देते हुए अपने स्वयं प्रसन्न मन से पिता की आज्ञा को पालन करने के लिये पिता के दर्शन की लालसा से केकयी के मन्दिर में प्रवेश किये, और सुमन्त्र से बोले महात्मा रामचन्द्र दुःखित राजा को देखने के लिये आये हैं यह अपने आगमन का समाचार सुमन्त्र जी से कहवाये कि रामचन्द्र जानकी और लक्ष्मण के सहित द्वारपर खड़े हैं, धर्म पथपर चलने वाले और पिता की आज्ञा से बनवास करने का निश्चय करके रामचन्द्रजी सुमन्त्र को देखकर बोले कि मेरे आने का समाचार राजा से कह दो ॥

इति बाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे त्रयास्त्रिंशः सर्गः ॥३३॥

श्री रामचंद्रजी की आज्ञा को पाकर सुमंत्रजी केकयी के भवन में जाकर मन्द मन्द श्वास लेते हुए महाराज को देखे, जैसे राहुसे ग्रस्त सूर्य मलीन हो जाते हैं राख से ढँकी अग्नि मन्द दीख पड़ती है उस के सदृश शोकसे आकुल दशरथ की कान्ति और तेजको मलीन देखकर निद्रा में अचेत महाराज दशरथ को देखे, इतने में सुमंत्र जी राजा के समीप खड़े होकर हाथ जोड़कर बोले,

बोले,-हे महाराज ! ऐसा कहकर राम के अनिष्ट बनवास रूप बचन को कहने में कातर सुमन्त्र राजा को पहिले आशीर्वाद दिये, इसके बाद हाथ जोड़कर विनयपूर्वक शोक युक्त बचन से कहने लगे हे राजन् ! पुरुषों में श्रेष्ठ सबको आनन्द देने वाले आपके पुत्र रामचन्द्र जी ब्राह्मणों और सेवकों को अपना सर्व स्वधन रत्न देकर आपके दर्शन की कामना से सत्य पराक्रमी रामचन्द्र द्वार पर खड़े हैं आप उनको देखिये, सब लोगों से अपने बनवासकी रायको निश्चय करके आपको देखने आये हैं, राजगुण सम्पन्न सूर्यके किरणके समान सबको पालन करने वाले रामजी बनको जायँगे इस कारण हे राजन्! आप उनको देखिये, सत्यप्रतिज्ञ धर्मात्मा धैर्य में समुद्र के समान आकाश के समान निर्मल महाराज दशरथ से सुमन्त्र बोले, हे सुमन्त्र! हमारे सकल स्त्रियों को हमारे पास बुलायें उन सब स्त्रियों के सहित मैं रामचन्द्र को देखूँगा, दशरथ जी की आज्ञा को पाकर सुमन्त्रजी रनिवास में जाकर रानियों से कहे कि आप सब स्त्रियों को महाराज बुलाते हैं शीघ्र चलिये, सुमन्त्र से राजाकी आज्ञाको सुनकर रानियों ने केकयी के भवन में महाराज दशरथ के समीप चलने को प्रस्तुत हुई, दशरथ जी की साढ़े तीन सौ स्त्रियां कौशल्या के आगे पीछे होकर महाराज के स्थान में पहुंचीं, आई हुई उन स्त्रियों को देखकर महाराज दशरथ सुमन्त्र जी से बोले हे सुमन्त्र ! श्रीरामजी को बुलाइये, दशरथ जी के बचन के अनुसार सुमन्त्रजी लक्ष्मण और जानकी सहित रामचन्द्र को दशरथजी के पास लिवा ले गये, दशरथजी रामचन्द्रजी को आते देखकर आसन से उठकर स्त्रियों के सहित करुणा पूर्वक रोदन करने लगे, पहिले राजा दशरथ रामचन्द्रजी को आलिंगन करने के लिये इच्छा किये पुनः रामचन्द्रको न पाकर शोक से मूर्छित होकर गिर पड़े, इतने में रामचन्द्र और लक्ष्मणजी सीता के सहित सहसा दशरथजी के भवन में प्रवेश किये, रामचन्द्रजीको देखकर स्त्रियां हा राम हा राम ऐसा कह कर रोदन करने लगीं, रामचन्द्रजी शोकाकुल चेतना से हीन

पृथिवी पर पतित महाराज को देखकर राम लक्ष्मण अपने भुजाओं से उठाकर शय्या पर रख दिये, मुहूर्त भर में लब्ध संज्ञ (होश) में देख कर आंसू को छोड़ते हुए हाथ जोड़कर रामचन्द्रजी बोले,-हे महाराज! आप सबके प्रभु हैं आपसे अनुमति चाहते हैं मैं दण्डकारण्य को जाता हूं आप अपने अनुग्रह के दृष्टिसे मुझको देखिये। बन जाने में प्रस्तुत हमारे अनुकूल जानकी चलने को इच्छित हैं और लक्ष्मण जी भी बन को चल रहे हैं इसलिये इन दोनों के समेत बनवासी हमको जानिये, लक्ष्मण जानकी को मैंने बहुत कुछ युक्तियों से निवारण किया, परन्तु यह लोग हमारे बचनको अंगीकार नहीं करते, आपकी आज्ञा के अनुसार यह लोग भी मेरा अनुसरण करते हैं, हे पिता! शोक को छोड़कर हम सबको अपने दर्शन से अनुगृहीत कीजिये, बनकी यात्रा में प्रस्तुत रामचन्द्र आपके अनुज्ञा की प्रतीक्षा करते हैं, बनवास के लिये निश्चित्त रामजी को देखकर महाराज दशरथ बोले,-हे रामजी! केकयी के बरदान से मोहित होकर हम आपको कुछ उत्तर नहीं दे सकते हैं आप अपने भुजाके बलके प्रभावसे अयोध्या पुरीके राजा हूजिये और अभिषेक रूप कार्य को समापन करिये, महाराज दशरथ के बचन को सुनकर धर्मको पालन करनेवाले रामजी हाथ जोड़ कर पिता से बोले,-हे महाराज! आप हजारों वर्ष तक पृथिवी का राज्य किये हैं, और भी अनेक कालतक पृथिवी का राज्य करिये, किन्तु आपके दिये बरदान को हम मिथ्या नहीं कर सकते, मिथ्या करने से आपको नरक भोगना पड़ेगा, इस कारण मैं राज्य की इच्छा न करके अरण्य-वास को उचित जानता हूं। हे पिता! चौदह वर्ष बनवास करके आपकी प्रतिज्ञा को समाप्त कर फिर भी आपकी चरण की सेवा करूंगा। सत्यपथ पर आरूढ़ प्रिय पुत्र रामचन्द्रजी से रोदन करते हुए महाराज दशरथ एकान्त में बोले,-हे पुत्र! परलोक के हित के लिये और संसार की वृद्धिके लिये पाप और दुःख से रहित पुण्य और सुख तुमको होवे तुम भय रहित मार्गसे गमन करो। हे रामचन्द्रजी! सत्यप्रतिज्ञ स्वभाव

वाले पुरुष धर्म संपादन से बुद्धिको विपरीत नहीं करते, अर्थात् धर्मात्माजन धर्म और न्यायके मार्गको कलुषित करना नहीं चाहते, हे पुत्र ! आजकी रात्रि यहां रहकर हमको सन्तोष दीजिये, मैं आपके साथ आज भी भोजन आदिके सुखका अनुभव करूंगा, अपनी माताओं को और हमको देखते हुए आजकी रात्रि निवास कीजिये कल्ह प्रातःकाल बनको यात्रा करना, हे रघुनन्दन ! सब प्राकर से आपने कठिन कार्य का अनुष्ठान किये हो, तुमही मेरे परलोक को सुधारने के लिये बनका आश्रय लेते हो, हे रामजी ! जैसे राख से ढँकी हुई आग हाथको जला देती है वैसे मुझको बरदान के छल से स्त्रीने भ्रंश किया है, कुलकी मर्यादा को नाश करने वाली केकयी के प्रेरणा से जो प्रतारण को प्राप्त किया उससे पार होने की इच्छा करता हूं, शोकाकुल दशरथ के आर्त बचन को सुनकर लक्ष्मण के सहित दीन बचन से बोले, हे पिता ! आज बन को प्रयाण करने से शयन और उत्तम भोजन आदि गुणों का फल सब कुछ प्राप्त हो जायगा और कल्ह जाने से अधर्म होगा, प्रतिज्ञा का सत्य पालन नहीं होगा, इस लिये आजकी यात्रा की आज्ञा दीजिये, राष्ट्र और नगर और धन धान्य से पूर्ण इस पृथिवी को अब आप भरत जी को दीजिये, हे महाराज ! बन वास में निश्चित हमारी बुद्धि आज बिचलित नहीं हो सकती, आप ने जो बरदान माता केकयी को दिये हैं उस का पालन करिये और हमें बन की आज्ञा दीजिये, हे राजन् ! आप सत्यका आश्रय करके हम को आज्ञा दीजिये जिस को मैं श्रद्धा से पालन करूं। हम बन में तपस्वियों के साथ चौदह वर्ष तक बन में सुख के साथ निवास करूंगा, आप कुछ भी सन्देह न करके समस्त पृथिवी को भरत के लिये अधिकार दीजिये, हे रघुनन्दन ! मैं राज्य और सुख की इच्छा न करके केवल आपके बचन को पालन करने की इच्छा करता हूं। इस में आपको कुछ दुःख न करना चाहिये क्योंकि क्षुभित भी समुद्र अपनी मर्यादा को नहीं छोड़ता इस लिये दुःख और शोक को छोड़कर मुझे आज्ञा

दीजिये, हे पुरुष श्रेष्ठ! राज्यभूमि सुख तथा स्वर्ग आदिकी इच्छा मुझे नहीं है हम केवल आपके बचन को सत्य करना चाहते हैं, जिसको आपने शपथ पूर्वक कहे हैं, उसको पालन करने की इच्छा से आपके बचन को असत्य मानकर क्षणभर भी मैं अयोध्यापुरी में नहीं रहना चाहते हैं आप दुःखको विसर्जित करके शीघ्र आज्ञा दीजिये, केकयी हमसे प्रार्थना किया है कि तुम बनको जाओ मैंने अंगीकार किया है कि मैं अवश्य बनको जाऊंगा इस अपने बचन को मिथ्या करके मुहूर्त मात्र भी यहां का रहना युगके समान बीत रहा है, जिस बन में शान्त भावसे हरिण गण विहार करते हैं जहां अनेक प्रकार के कलोल से पक्षियां भाँति भांतिके शब्द करते हैं ऐसे बनको देखने की उत्कण्ठा हम लोगों को है, आप दुःखको छोड़कर शीघ्र आज्ञा दीजिये, हे तात! जगत में पिताही प्रभुके समान है इस लिये मैं पिताके बचन को अंगीकार करूंगा, चौदह वर्ष तक बन में निवास करके फिर आपका दर्शन करूंगा, आप सोक और सन्तापको छोड़कर आज्ञा प्रदान करिये, हमारे जाने पर पुर नगर राज्य समस्त पृथिवी भरतजी को दीजियेगा, और हम आपके वचन को शिरोधार्य करके बनको जाऊंगा हे महाराज! आपने जो केकयी को बरदान दिया है उसके अनुसार नन्दिग्राम में रहकर भरत केवल राज्य की रक्षा करें, यह शोच कर राज्य न करें कि मैं राजा हूं आपके जीवते आपकी आज्ञा और भरतकी रक्षा से राज्य का पालन होगा, हे निष्पाप! मेरे दुःखको आप त्याग करिये मैं शिष्टकी सम्मति से आपके बचनको पालन करने में इस समय प्रस्तुत हूं, हे महाराज! राज्य और सम्पूर्ण मनोरथ को देने वाली पृथिवी और जानकी तक की मुझे चिन्ता नहीं है, केकयी के समीप जो कुछ आपका संकल्प है उसीको सत्य करना चाहते हैं, सत्य के ऊपर मरना श्रेय है परन्तु परलोक को भष्टकर सत्यसे बिचलित होने पर त्रैलोक्य का विभव तुच्छ है, इस कारण बनमें फल मूलको खाकर जीविका करना वृक्षोंकी छाया में बास करना पर्वतों के झरनों का

नदियों का जल पीकर इनके दृश्य को देखकर आनन्द पूर्वक रहना श्रेय है परन्तु धर्म को छोड़कर राज्य श्रेय नहीं है इसलिये आप दुःखको छोड़कर सुखी होवें । इस प्रकार रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर दुःखसे पीड़ित महाराज दशरथ शोकसे व्याकुल होकर रामचन्द्रजी को गलेसे लगाकर मूर्छित होकर पथिवी पर गिरपड़े । रामजी को बनके लिये प्रस्तुत और दशरथ की दीन दशाको देखकर केकयी को छोड़कर सब रानियां रोने लगीं, और सुमन्त्र जी भी शोकके मारे मूर्छित होगये चारो ओर हाहाकार होने लगा ॥

वाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥

इसके उपरान्त सुमंत्र जी मूर्छा को निवारण करके हाथ पांव और शिरको क्रोधसे कंपायकर के दांतों को पीसने लगे, क्रोधसे आंख का रंग लाल हो गया, पहिलेसे मुखकी शोभा बदल गई, कोपसे अभिभूत होकर सहसा संतापकी सीमा पर पहुंच गये और दशरथजी के हृदय की बात जानने के वास्ते अर्थात् अब दशरथ का प्रेम केकयी पर है अथवा रामपर इस बातका विचार करके तीखे बाण के समान हृदय को छेदने वाले अपने बचन रूपी बज्रको सुमन्त्रजी केकयी को कहने लगे, जो तुम ने महाराज दशरथके ऐसे पति को नाश कर रही है, और सकल चराचर जगत के स्वामी को सन्ताप दे रही है इससे अधिक दुष्कर्म संसार में और कुछ नहीं है जिसको तूने किया, तूने अपने कर्मसे पति की हत्या और कुलकी हत्या करने वाली पापिनि है, इन्द्रसे भी अधिक पराक्रमी पर्वत के समान धैर्यवान् समुद्र के समान गंभीर राजा को तूं अपने कर्मोंसे सन्ताप दे रही है बर देने वाले अपने पति दशरथ को तिरस्कार न करो क्योंकि स्त्रियों का जीवन और धर्म पति के पीछे रहता है। महाराज दशरथ के मरने के उपरान्त ज्येष्ठ क्रम से रामको राज्य होता सो उस मर्यादा को तूने राजा को जीते जी सत्या नाश किया, अच्छा तुम्हारे पुत्र भरत पृथिवी के राजा होवें, और हम रामचन्द्रजी के साथ बन क

जाता हूं, इस प्रकार का अधर्म जिस देश में होता है वह देश ब्राह्मणों को रहने योग्य नहीं है, रामचन्द्रजी के सेवित मार्ग को हम सब साधु ब्राह्मण अवश्य जावेंगे, हे देवि ! राज्य लाभ से तुम्हें क्या सुख होगा कि जिस के वास्ते तूने इतना दारुण कर्म किया है, हे केकयी ! तुम्हारे इस दारुण कर्म से पृथिवी नहीं फटजाती है यही हम बड़ा आश्चर्य देखते हैं, ब्रह्मा से सृष्ट ज्वलती हुई अग्नि के सदृश भस्म करने में समर्थ तुम्हारे भयंकर दर्शन को और इस प्रकार जगत के धिक्कार रूपी बागदंड तुम को नहीं नाश करते हैं यह महान् आश्चर्य है, जैसे आम्रवृक्ष को कुल्हाड़ी से काटकर उसकी जगह पर नींब का वृक्ष लगावे और उसे दूध से सींचे तो भी नींब में मधुरता नहीं होती, वैसेही महाराज ने केकयी में प्रीति करके वीषमय फल को पाया, श्री रामचन्द्रजी तुमको अपनी निज माता के सदृश देखते हैं सो उनके वास्ते तुम ने यह क्या दुर्व्यवहार किया, जैसे मधु से सींची हुई नींब मीठी नहीं हो सकती, यह रामचन्द्रजी के प्रेम करने का फल हुआ है। हे केकयी ! जैसी कठोर और निर्दयी तुम्हारी माता है वैसी ही तुम भी हो जैसे नींब के पेड़से सहद नहीं गिरता यह लोक की बात क्या मिथ्या हो सकती है, तुम्हारी माता के विषय में जो कुछ पुराना बृत्तान्त हमने सुना है वह तुमसे कहता हूं सुनो, तुम्हारे पिता को कोई ऋषि एक उत्तम बरदान दिया था, कि जिस बरदान से तुम्हारे पिता सकल प्राणियों के बचन के अभिप्राय को जान लेते थे, एक समय तुम्हारे पिता शयन किये थे उस समय एक जृम्भक पक्षी शब्द करने लगा, उस पक्षी के शब्द को सुनकर उसके अभिप्राय को जानकर राजा हँसने लगे राजा को हँसते देख कर मृत्यु रूप पाश की इच्छा करती हुई तुम्हारी माता तुम्हारे पिता से प्रश्न किया, हे सौम्य ! आप क्या हँसते हैं आप अपने हँसने का कारण मुझसे कहिये, तुम्हारे पिता कहने लगे कि यदि इस गुप्त बात को तुमसे कहूंगा तो मैं मर जाऊँगा, इसमें संशय नहीं है, तुम्हारी

माता फिर भी तुम्हारे पितासे बोली कि आप अपने हँसने का वृत्तान्त हमसे कहो चाहे आप मरें अथवा जीवित रहें और आपको न कहने से लोग हमारी हँसी करेंगे कि राजा ने रानी से व्यवहार में किया है, यह लोक के अपवाद को न सह कर आपके मरण को सहन कर सकूँगी, अपनी स्त्री के बात को सुनकर केकयी देशके राजा बरदान देने वाले ऋषि के पास गये और उन से सब समाचार कह सुनाया, ऋषि ने कहा कि हे राजन् ! तुम्हारी स्त्री मर जावे अथवा तुम्हें त्याग कर चली जावे तो अच्छा जानना परन्तु इस अपने अभिप्राय को बताना उचित नहीं समझना चाहिये, मुनि के बचन को सुनकर राजा प्रसन्न मन से अपने नगर में आकर तुम्हारी माता को शीघ्र घर से बाहर निकाल कर अपने कुबेर के समान आनन्द करने लगे, वैसेही तुम दुर्जनों के मार्ग पर आरूढ़ होती हुई महाराज दशरथ को असत् कार्य का ग्राहक बनाया है, हे केकयी ! पुत्र पिता के अनुसार होते हैं और कन्या माता के अनुसार होती हैं यह जगत की कहावत क्या मिथ्या हो सकती है ! हे केकयी ! अपनी माता के समान मत होओ जो कुछ महाराज कहते हैं उसको अंगीकार करो श्रीराम जी को राज्य देकर लोक में यश को उठाओ और महाराज को तथा हम लोगों को शरण होओ । देवराज इन्द्र के समान जगत् के स्वामी महाराज को असत् धर्म में अर्थात् ज्येष्ठ को बिनासन और कनिष्ठ को राज्य इस प्रकार के कार्य पर प्रोत्साहित तुम्हें नहीं करना चाहिये, तुम्हारी मिथ्या प्रतिज्ञा को अर्थात् बरदान द्वय को महाराज ने लीला से कह दिया उसको तुम सत्य करने के लिये विशेष आग्रह न करो और ज्येष्ठ बदान्य सकल धर्मको जानने वाले परोपकार परायण संसार को पालन करनेवाले महात्मा रामचन्द्रजी को राज्य देने की आज्ञा देओ, यदि तुम्हारे ऐसा न करने पर वृद्ध पिता को छोड़ कर यदि रामचन्द्र बनको जावेंगे तो तुमको चिरकाल के वास्ते अयश उठाना होगा, इस कारण रामचन्द्र को राज्य देकर

अपना अयश छुड़ाओ, कि रामचन्द्र राज्य करें और वृद्ध महाराज दशरथ बन में निवास करें, राम से रहित अयोध्यापुरी का रहना तुम्हारे अनुकूल नहीं होगा, राम के बिना भरत भी तुम्हारे विपरीत हो जायँगे, इस प्रकार सभा में सान्त्वना और कठोर बचन को सुमन्त्र कह कर क्षोभ से हाथ जोड़ कर बोले,-कि हमारे सान्त्व बचन से न तो केकयी को क्षोभ और कठोर बचन को सुनकर न तो इसे सन्ताप हुआ और न तो इसके मुख की कान्ति मलीन हुई।

इति बाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकाण्डे पंचत्रिंशः सर्गः ॥३५॥

इसके उपरान्त सुमन्त्रजी के बचन से पीड़ित होकर राजा अपनी प्रतिज्ञा को मिथ्या के संशय से रामचन्द्रजी को सुखपूर्वक बनवास की उपाय को सुमन्त्र से कहे, हे सुमन्त्र जी! रत्न से पूर्ण हमारी चतुरंगिणी सेना को बन में रामचन्द्रजी की सेवा में नियुक्त करो, और नगर के धनी सेठ साहुकार और बजार की वस्तुओं को बेश्याओं को और बड़े बड़े शूरवीरों को रामचन्द्रके साथ प्रस्थापित कीजिये, कि जिससे मृगा हस्ती आदि जंगली जीओं को बनकी दुर्गम नदियों को देखकर जिसमें रामचन्द्रजी को भय न होवे और हमारे जितने धन धान्य के भाण्डार हैं वह गाड़ियों पर लदकर रामचन्द्रजीके साथ बनको जावें, जिसमें यज्ञ पुण्य दान आदि मुनियों को देकर सुख से बन में निवास करें और भरतजी पथिवी का पालन करें, और लौटने पर श्रीरामजी के अनुशासन को "शिरोधार्य करें, इस प्रकार दशरथजी के बचन को सुनकर भयके मारे केकयी के मुख मलीन होगये कण्ठस्वर रुक गया, और राजा के सन्मुख केकयी बोली, जैसे सुरासे हीन सुरापात्र को लोग आदर नहीं करते, वैसे धनसे हीन राज्यको भरत जी नहीं चाहते, लज्जा को त्यागकर अतिदारुण केकयी के बचन को सुनकर दशरथजी बोले, हे अनिष्ट को देखने वाली भरतको राज्य और रामको बनवास इस प्रकार के भारको बैलके समान ढोते हुएको

तूं क्यों पोड़ा देती हो हे केकयी ! बरदान मांगने के समय तुमने क्यों नहीं कहा सब कुछ त्याग करके रामचन्द्र अकेले बनको जावें, पहिले इसका निश्चय करके अब तुम्हारी सामर्थ्य नहीं है कि इन बातों से हमें वञ्चित करो, क्रोध युक्त राजा के इस प्रकार बचन को सुनकर राजा से अधिक क्रोध को दिखाती हुई केकयी बोली, हे राजन्! तुम्हारेही कुल में राजा सगर के ज्येष्ठ पुत्र असमंज राज्यसे च्युत करके बनको विसर्जित हुए, असमंज के तुल्य रामको बनवास हो इस अनसुनी केकयी के क्रूर वचनको सुनकर सभा स्थानीयजन केकयी के प्रलाप के प्रति राजा दशरथ अपने को धिक्कार देने लगे और लोग उसके बचन से लज्जित होगये, सभा में सिद्धार्थ नामके एक वृद्ध राजा दशरथ के प्रधान मन्त्री राजा के अभिप्राय को लेकर केकयी से बोले, हे केकयी ! असमंज तो खेलते हुए बालकों को रास्ते में से लेजाकर सरयू नदी के जल में डुबा देता था, इस प्रकार अन्याय को देखकर सकल नगर बासी क्रोधित होकर राजा सगर से बोले, हे राजन् ! एक असमंज को चाह कर हम लोगों को राज्य से बाहर करा दीजिये, प्रजाओं की बात को सुनकर सगर बोले,—तुम सब को क्या दुःख है, इस प्रकार राजा से पूँछी गई प्रजा असमञ्ज के वृत्तान्त को कहने लगी, कि हे महाराज ! यह असमञ्जस अपने प्रमाद से हम लोगों के खेलते हुए लड़कों को धोखे से लेजाकर अपनी मूर्खता के अनुसार सरयू में डुबा कर मार डालता है और पीछे से अपने प्रसन्न होकर लौट आता है, राजा सगर प्रजाओं की बातको सुनकर प्रजाओं की प्रसन्नता के लिये असमंज को सगरने त्याग करने का बिचार करके स्त्री के सहित असमंज को रथ पर बैठाकर जन्म भरके लिये बनमें छोड़वा दिया, असमंज बन में फाल और पेटरिया को लेकर दिशाओं में पर्वतों पर इधर उधर घूमने लगे और अपने निज अपराध के बश होकर कन्द मूल आदि से अपनी जीविका करके जीवन का निर्वाह

करने लगे, हे केकयी ! इस प्रकार के पाप को देखकर राजा सगर अपने पुत्र असमंज का त्याग किया है, रामचन्द्र का कौनसा पाप है जिसको देखकर तूने बनवास देनेका निश्चय किया है, श्रीरामचन्द्रजी में कोई अवगुण वा पाप अथवा किसी तरह का कलंक आज तक नहीं देखगया है, अथवा हे केकयी ! यदि कुछ दोष रामचन्द्रका तुम देखी हो कि जिससे तूने रामजी को बन जानेका अनुष्ठान किया है तो उसको तूँ कहो, सन्मार्ग में निरत वीर पुरुष का त्याग करने से धर्मके विरोध में इन्द्र की शोभा का भी नाश हो जाता है, इस प्रकार के कर्म से करने से कलंक को छोड़कर और कुछ फल तुमको नहीं होगा, इस प्रकार हे देवि ! अब तुम रामचन्द्रजी के ऊपर प्रसन्न हो जाओ। सिद्धार्थ के बचन को सुनकर शोक से दुःखित राजा इस प्रकार केकयी से बोले, हे पापिनि ! मेरे और रामजी के सुख की बात पर तुम्हारी रुचि नहीं है जो तू कृपण के मार्ग पर आरूढ़ है वही कुमार्ग तेरे लिये उत्तम है, कहां तक कहैं आज हम रामचन्द्र राज्य सुख धन को छोड़कर बनको जावेंगे, और अयोध्या वासियों के सहित राजा भरत और तुम चिरकाल के लिये राज्य को भोग करो ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे षट्त्रिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥

महामंत्रि और दशरथ के बचन को सुनकर विनय पूर्वक रामचन्द्रजी बोले, हे महाराज ! बनमें बनचारियों के समान जीविका करके हम बनवास करेंगे हमको राज्य और धन तथा परिवार का कुछ काम नहीं है, हे जगत्पति ! सज्जनों में श्रेष्ठ धर्मिणी को माता की प्रसन्नता के लिये भरतजी को दीजिये, हमको केवल चीर देकर विदा करिये, हे केकयी ! चौदह वर्षतक बनवास करने में कुछ कन्द मूल आदिको उपार्जन करने के लिये फाल और पेटरिया को शीघ्र देओ, इसके उपरान्त सभामें निर्लज्ज केकयी रामचन्द्रजी को चीर देकर बोली,—तुम इसको धारण करो रामचन्द्रजी राजसी कपड़ों को उतार कर मुनियों की भांति केकयी के दिये चीर को धारण किये,

लक्ष्मणजी भी अपने सुन्दर वस्त्रको उतार कर पिताके सामने ही तपस्वियों के सदृश चीर को ग्रहण किये, इसके बाद पीताम्बर को पहिरने वाली सीता अपने योग्य चीर को बसन को देखकर इस प्रकार व्याकुल हो गयीं जैसे अपने झुण्ड से अलग होने पर मृगी व्याकुल हो जाती है, लज्जा के सहित जानकी केकयी से दिये हुए चीर को लेकर रामचन्द्रजी की अवस्था को देखती हुई आँसुओं की धारा आँखों से बहाने लगी, धर्म पथ पर प्रवृत्त धर्म को जानने वाली जानकी अश्रु को छोड़ती हुई गन्धर्व राज के समान स्वरूपवान रामचन्द्रजी से बोली,–कि बनवासी मुनियों की तरह चीर को कैसे आप बाँधे हैं ऐसा कह कर चीर को बांधने में अशिक्षिता जानकी बारबार मूर्छा को पाने लगीं, और केकयी से दिये हुए उन दोनों चीरों मेसे एक को गलेमें लपेट लिया और दूसरे को हाथ में लेकर लज्जा पूर्वक खड़ी रहीं, जानकी जी की ऐसी अवस्था देखकर रामचन्द्र सहसा अपने स्वयं पीताम्बर के ऊपर चीर को बांध दिये, रामचन्द्रजी को अपने हाथ से जानकी का चीर बांधते देखकर रनिवास की रानियां रोदन करने लगीं और रामजी के अधीन में जानकी जी को देखकर महातेजस्वी रामजी से बोलीं,–हे पुत्र ! मनस्विनी सीता बनवास में नियुक्त नहीं हैं इस कारण इनको साथ लेकर जाना उचित नहीं है, हे प्रभो ! पिता के बचन के अनुरोध से बन में जानेवाले आपके दर्शन का फल आगमन काल तक हम लोगों को फल देवे, हे पुत्र ! लक्ष्मण को साथ लेकर आनन्द से बन को जाओ, किन्तु यह कल्याणि जानकी तपस्विनी के समान बन में रहने योग्य नहीं हैं। हे पुत्र ! धर्म की मर्यादा को पालन करने वाले धर्म पर आरूढ़ आपका यहां रहना योग्य नहीं है किन्तु हम लोगों की प्रार्थना से आपके आगमन काल तक जानकी जी हम लोगों के प्राण के समान यहां ही रहैं, उन स्त्रियों के बचन को सुनते हुए रामचन्द्रजी चीर को सीताजी को बांध दिया,

जानकी को चीर धारण करने पर सीता और केकयी को निवारण करके आंसू के सहित बसिष्ठ मुनि बोले,—मर्यादा के अतिक्रमण करने में प्रवृत्त कुलको नाश करनेवाली मूढ़ केकयी बंचना से राजा को अपने अधीन करके अपने बरदान को सत्य कराया, उस बरदान के समय प्रमाण तक सीता यहां नहीं रह सकती हैं, सीता तो यहां जब रहैं जब रामचन्द्रजी के स्थान पर राज्य को पावें, यदि कहिये कि स्त्री को राज्य का अधिकार नहीं है तो शास्त्र का इस प्रकार बचन है कि गृहस्थ मात्र की आत्मा स्त्रियां हैं इस लिये रामचन्द्रको आत्मा जानकी समझ कर पृथिवी पालन का अधिकार सीता जी पावें तो यहां रह सकती हैं, नहीं तो रामचन्द्रजी के साथ बैदेही बन को जावेंगी, राम जानकी के पीछे पुरवासियों के सहित हम लोग भी चलकर बनवास करैंगे, जानकी के सहित रामचन्द्र जहां रहैंगे वहां ही धन धान्य पुर राष्ट्र दास दासी लोकपाल आदि सभी लोग रहैंगे, बन में रहते हुए रामचन्द्र पहिले के समान सुखी रहैंगे, और भरत शत्रुघ्न राज्य पर रहते हुए भी सुख को नहीं पावेंगे । हे केकयी ! प्रजाओं की अनिष्ट चिन्ता करने वाली तुम्हारे कर्म से यह अयोध्या पुरी जनों से शून्य बन के समान हो जायगी, जहां रामचन्द्र राज्य नहीं करैंगे वहां राष्ट्र बन हो जायगा और रामचन्द्र को बन में रहने से बनहीं राज्य हो जायगा, हे केकयी ! वेद के प्रमाणानुसार प्रेम पूर्वक पिता से नहीं दी गई पृथिवी का शासन नहीं करेंगे, क्योंकि तूने धर्म की मर्यादा को नष्ट करके केवल छलसे राज्य का अधिकार लेना चाहती हो, इस लिये नीति को जानने वाले भरत राज्यशासन के योग्य नहीं होंगे, यदि दशरथ से उत्पन्न होंगे तो, क्योंकि पिता के पीछे पुत्र चलते हैं इस बेद बचन के अनुसार राज्या का शासन रामके बिना भरत नहीं करने योग्य हैं, हे केकयी ! चाहे तू पृथिवी तल से उड़कर आकाश में चली जाओ परन्तु पिता के बंश के चरित्र को अर्थात् ज्येष्ठ को रहते कनिष्ठ राज्य के योग्य नहीं होता

इस बात को जानने वाले अनुचित नहीं करते, हे केकयी ! तुम्हारे समान एक पुत्र को राज्य की कामना से दूसरे पुत्रको बनवास देवें, ऐसा कोई जगत में न होगा जो रामचन्द्रजी की सेवा सश्रुषा करने में अभि रुचिको नरखता होगा, हे केकयी ! तुम आज देखती हो कि पशु पक्षी सर्प मृगा बृक्ष आदि रामचन्द्रजी के साथ चलने को प्रस्तुत हो रहे हैं मनुष्यों कि क्या गणना है, हे केकयी ! जानकी को उत्तम उत्तम आभरण देओ चीर को मत देओ, जानकी के योग्य चीर नहीं है, इस प्रकार कहकर वशिष्ठजी श्री जानकी जी के पिताम्बर को नहीं लेने दिया, हे केकयी ! अकेले रामही को बनवास के लिये बरदान में तुमने प्रार्थना किया है तो फिर यह जानकी अलंकृत होकर रामचन्द्रजी के साहित बन में निवास करके नित्य पति सेवा से अपने धर्म को पालन करें, क्योंकि पति सेवा ही प्रधान है व्यापार जिसका ऐसी जानकी के लिये रथ दास दासी वस्त्र धन के सहित राजपुत्री जानकी पति सेवा के वास्ते बन को जाती हैं इस कारण सेवा के सब उपकरण तुम सीता को देने योग्य हो, ब्राह्मणों में मुख्य अप्रतिम प्रभाव शाली गुरु वसिष्ठजी को इस प्रकार कहते हुए भी रामचन्द्रजी के इच्छा के अनुकूल होकर सीताजी ने चीर परिग्रह से अपने मनको नहीं हटाया ॥

इति वाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे सप्तत्रिंशः सर्गः ॥३७॥

श्रीजानकीजी को अनाथ की तरह चीर धारण करते देखकर सभाके सभी स्त्री पुरुष रोते हुए दशरथ को धिक्कार देने लगे, उन लोगों के शोकार्त नादको सुनकर महाराज दशरथ गरम श्वांस को छोड़ते हुए केकयी से बोले, अत्यन्त सुकुमारी और सुख के योग्य सीता बनवास के योग्य नहीं है हमारे गुरुजी यह सत्य कहते हैं, हे केकयी ! जानकीजी इस समय चीर को धारण नहीं कर सकती क्योंकि मैंने तुम्हारे लिये जो वरदान दिया है उस बरदान के अन्तर्गत यह बात नहीं है कि सीता भी सर्वस्व त्याग करके

चीर को धारण करके भिक्षुकी के सदृश बनको जावें इस कारण राजकुमारी यदि बन को जाना चाहती है तो समस्त धन और जनके सहित जा सकती है, हे केकयी ! पहिले तो हमारी बुद्धि भ्रष्ट हुई जो कि इस प्रकार की क्रूर प्रतिज्ञा अर्थात् रामचन्द्रजी को बनवास इस प्रकार के शपथ से तुम्हारे हाथ वंचित हुए परन्तु प्रतिज्ञा के अतिरिक्त जो तुमने सीताजी को चीर देना चाहती हो तो इससे हमारा आत्म नाश अवश्य होगा जैसे बांस के फूल से बांस का नाश होता है। हे मूढे ! रामचन्द्र के साथ तैंने जो अपराध किया वही सकल नर्क भोगने से भी मुक्त होने योग्य नहीं है, सीताजी के कौन से अपराध को देखकर तैंने यह कुकर्म किया है, मृगनयनी जानकीजी ने कौन सा तेरा अपकार किया है जिसके बदले तूने यह दुराचार आरंभ किया है क्या रामचन्द्रजी के बनवास से तू पर्याप्त न होकर फिर भी कठिन पातक करने की इच्छा करती हो, यह नहीं जानती हो कि इन पापों का क्या फल भोगना पड़ेगा, अरे ! रामचन्द्रजी के अभिषेक का कार्य जब मैं आरंभ किया तब तुमने विघ्न करने के लिये मुझे प्रेरणा किया कि जटा और चीर को धारण करके रामचन्द्रजी बनको जावें यह तुम्हारे शपथ रूप बचन को सुनकर मैंने अंगीकार किया, अब तूने अपनी प्रतिज्ञा से अतिरिक्ति मैथिली को बनवास देकर अधिक प्रयोजन सिद्ध करना चाहती हो तो अपने को घोर नर्क में रहने का स्थान बना रही हो, दशरथजी के इस प्रकार बचन को सुनकर विनीत भाव से रामचन्द्रजी दशरथजी से बोले, हे महाराज ! यह वृद्धा यशस्विनी और सत्य स्वभाववाली कौशल्या हमारी माता की आप निन्दा रहित जानकर रक्षा करियेगा। पुत्र से हीन शोक सागर में डूबती हुई कौशल्या को हमारी प्रार्थना से आप संमान करने के योग्य हैं। हे राजन् ! जैसे हमारी माता केकयी आप के पालन के योग्य हैं वैसेही दुःख से पीड़ित कौशल्या भी पालन करने के योग्य हैं।

इति बाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकाण्डे अष्टत्रिंशः सर्गः ॥३८॥

मुनिवेष को धारण करने वाले रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर सीता सहित रामजी को देखकर महाराज दशरथ मूर्छित हो गये, दुःख से पीड़ित राजा न तो रामचन्द्रजी को नयन से देख सके और न तो बचन से बोल सके, चेतना शून्य दुःखित महीपति रामचन्द्रजी की अवस्था को सोचते हुए रोदन करने लगे, कि मैंने पहिले अनेक गौ तथा अन्यान्य प्राणियों की अत्यन्त हिंसा किया है वही अपराध आज मेरे लिये उपस्थित हुआ है, केकयी दुःख से दुःखित भी बिना काल के यह शरीर जीवन को नहीं छोड़ती है, अग्नि के समान पराक्रमी पुत्रको तपस्वी के स्वरूप में देखकर भी मेरा प्राण देह से अलग नहीं होता है यह कैसा आश्चर्य है, स्वार्थ में लिप्त केकयी से व्यतिरिक्त यह निकृति किसी को भी अच्छी नहीं जान पड़ती है, इस प्रकार व्याकुल इन्द्रियों से इस प्रकार कहकर एक बार रामजी का नाम लेकर महाराज मौन होगये, फिर आंखों में आंसुओं को भरकर सुमन्त्रजी से बोले, हे सुमन्त्रजी ! उत्तम घोड़ों से युक्त रथको लेकर रामचन्द्रजी को इस जिले के सीमा के अन्त प्रदेश तक पहुँचा देओ, बीर रामचन्द्रजी पिता माता के बचनानुसार बन को जाते हैं गुणवान पुरुषों के वास्ते इस प्रकार बड़ों के बचन का पालन करनाही फल है ऐसा शास्त्रकार कहते हैं, राजा के बचन को सुनकर सुमन्त्रजी शीघ्रही रथको तैयार करके राजा के समीप गये, सोने के अलंकार से रथको अलंकृत करके हाथ जोड़कर महाराज से बोले, राजन् ! रथ उपस्थित है, राजा सुमन्त्रजी के बचन को सुनकर अपने खजानची को बुलाकर कहे कि चौदह वर्ष के वास्ते उत्तम बस्त्र और श्रेष्ठ अलंकार मैथिली के वास्ते शीघ्रदेओ, धनाध्यक्ष राजाकी आज्ञाको शिरोधार्यकरके धनागार से उत्तम उत्तम वस्त्र और बहुमूल्य अलंकार को जानकीजी के लिये सौंप दिया। स्त्रियों के उत्तम लक्षण से संपन्न बन जाने के लिये प्रस्तुत अयोनिजा जानकी अपने श्वसुर के दिये अलंकारों से अपने शरीर को शोभित किया, जैसे प्रातः काल में सूर्य की प्रभा

होती है, उसी प्रभा को जानकीजी ने धारण किया, दुराचार से रहित पति सेवा में परायण सीता को अपने भुजाओं से स्पर्श करके महाराज दशरथ बोले, हे सीते! पतिसे अलग रहकर स्त्रियां कितना भी शुद्ध व्यवहार करें तौ भी उनकी गणना पतिव्रताओं में नहीं होती, और उनका लोक परलोक दोनों बिगड़ता है, कुलटा स्त्रियों का यह स्वभाव ही है कि सुख के समय में पति के संग अनेक प्रकार के सुख को भोगती हैं परन्तु अल्पकाल के लिये रोग, दरिद्रता, भय और विपत्ति को देखकर पति की निन्दा करती हैं और उनको छोड़ भी देती हैं। जो स्त्रियां मिथ्या बोलती हैं अपने पति से छल करती हैं जो दुष्ट स्वभाव की हैं जो पति को ठगती हैं जो कुलकी मर्यादा को नहीं मानती हैं जो पराये पुरुष में इच्छा रखती हैं ऐसी स्त्रियां लोक में यश कीर्ति और प्रतिष्ठा को नहीं पाती हैं। और सुन्दर व्यवहार करने वाली सत्य बचन बोलने वाली बड़ों की आज्ञा को पालन करने वाली पतिव्रता स्त्रियों के लिये धर्म कर्म यज्ञ दान तप आदि शुभ कर्म सब पति ही है, अर्थात् पति सेवा से अतिरिक्त उनको और कोई धर्म नहीं है, इस कारण हे जानकी! देवता के समान तुम अपने पतिको निर्धन अथवा सधन जानकर कभी उनके बचन का उल्लंघन और तिरस्कार नहीं करना, धर्म अर्थ से युक्त दशरथजी के बचन को सुनकर हाथ जोड़कर श्वसुर के सामने खड़ी होकर सीताजी बोलीं, हे पिता! आप जैसी आज्ञा देते हैं और इस विषयमें हमारे पिता माता ने जो कुछ कहा है मैं उसको अवश्य करूंगी, हे पिता! कुलटाओं से पतिव्रताओं की तुलना नहीं होती जैसे चन्द्रमा से प्रभा अलग नहीं रहती वैसे ही स्त्रियां अपने पतिधर्म से विचलित नहीं होतीं, जैसे बिनातन्त्री (तार) के वीणा की शोभा नहीं होती, बिना चक्रके जैसे रथको गति नहीं होती वैसे सैकड़ों पुत्र उत्पन्न होने पर भी बिना पति के स्त्रियों को सुख नहीं

होता । हे पिताजी ! पिता, भाई, पुत्र यह थोड़े सुख को देते हैं लोक परलोक दोनों जगह के सुख को देने वाले पति किसको पूजनीय नहीं होते । श्वसुर तथा माता पिता के मुख से धर्म शिक्षा को सुनने पर भी अर्थात पति परम पूजनीय होते हैं इस बात को जानने पर भी हम किस प्रकार अपने स्वामी कि अवज्ञा करूंगी क्योंकि स्त्रियों का धर्म कर्म पति की सेवा ही है । सीताजी के अमृत रूपी बचन को सुनकर कौशल्या का हृदय गद्गद् हो गया, जो रामचन्द्रजी के बन जाने से कौसल्या के हृदय पीड़ित होकर दुःख के आंसुओं को छोड़ते थे, वह सीताजी के बचन से हर्षित होकर प्रसन्नता की आंसुओं को छोड़ने लगे । सीताजी सत्कार को पाकर सासुओं के बीच में हाथ जोड़े खड़ी थीं इतने में परम धार्मिक रामचन्द्र अपनी माताओं से बोले, हे माता ! अब आप सब लोग दुःख को छोड़कर मेरे पिता को देखिये मैं बनवास के समय को बिताकर शीघ्र आप लोगों की सेवा करूँगें । पिता माता भाई और उनकी स्त्रियों तथा मित्र मन्त्रिजनों के सहित आप लोगों को रहने से चौदह वर्ष चौदह घड़ी के समान बीतेगा, श्रीरामचन्द्रजी अपने साढ़ेतीन सौ माताओं के सामने हाथ जोड़कर इस प्रकार तत्वके बात को कहने लगे । और मातृवर्ग रामजी के मुख को देखने लगीं, रामचन्द्रजी कौशल्या आदि अपनी माताओं के प्रति हाथ जोड़कर धर्मयुक्त बचन को बोले, हे माता ! एक संग के रहने से जो कुछ मुझसे दुर्व्यवहार हुआ हो उसको आप लोग क्षमा करें, रामचन्द्रजी के धर्मयुक्त बचन को सुनकर शोक से व्याकुल हो वह स्त्रियां इस प्रकार रोने लगीं जैसे क्रौंच पक्षी एकत्र होकर शब्द को करते हैं, महाराज दशरथ के राजभवन में पहिले जैसे भेरी मृदंग आदि के शब्द होते थे उनसे भी गंभीर स्त्रियों के रोने का शब्द होने लगा ।

इति इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे बाल्मीकिये आदिकाव्ये अयोध्याकाण्डे एकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥ ३९ ॥

इसके उपरान्त हाथ जोड़कर राम लक्ष्मण और सीताजी महाराज दशरथ की प्रदक्षिणा करके दीनके सदृश चरणोंपर गिर पड़े, रामचन्द्रजी माता के वियोगरूपी शोकसे सन्तप्त होकर माताओं को प्रणाम किये, रामचन्द्रजी के प्रणाम करने के उपरान्त लक्ष्मणजी कौशल्या को प्रणाम करके पुनः सुमित्रा के चरणों को ग्रहण किये, लक्ष्मण को प्रणाम करती देखकर सुमित्राजी लक्ष्मण से बोली, हे महाबाहु लक्ष्मण! ऐसा कहकर शोक के मारे उनके सिरको सूंघने लगीं और कहने लगीं हे पुत्र! अपने प्रतिपालक रामचन्द्रजी पर अनुराग करके बनको जाते हो तो तुम्हारा यह कार्य मुझे अत्यन्त प्रिय है परन्तु अपने भाई रामचन्द्रपर प्रमाद न करना, हे तात! ज्येष्ठ भाई चाहे व्यसनी हो चाहे समृद्ध हो परन्तु कनिष्ठ सदा जेष्ठे की आज्ञानुसार चलते हैं यही सनातन सम्मति है और यही तुम्हारे कुल वाले क्षत्रियों का धर्म भी है कि जेठे भाई की सेवा करना दान में दीक्षा में यज्ञ में और युद्ध में अपना प्राण देकर उनको शत्रुओं से बचाना। इस प्रकार सुमित्रा जी लक्ष्मणजी से कह कर बन जाने के लिये उद्यत रामचन्द्रजी से बार बार कहने लगीं हे पुत्र! अब आप बनको जाओ जाओ, ऐसा कह कर फिर लक्ष्मणजी से बोलीं, हे तात! रामचन्द्रजी को दशरथ जानो और जानकी को मुझे जानो अयोध्यापुरी को बन जानकर जहां सुख हो वहां जाइये। सुमित्रा के ऐसा कहने पर विनय को जानने वाले विनीत सुमन्त्र रामचन्द्रजी से हाथ जोड़कर बोले, हे रामचन्द्रजी! आपका कल्याण हो आप इस रथपर बैठ मैं आपको नियुक्त प्रदेश में शीघ्र पहुंचा देता हूं, देवी केकयी ने चौदह वर्ष के लिये बन जाने को जो समय निर्धारण करके प्रेरणा किया है उसका आज आरंभ काल है अर्थात् आज से ही चौदह बर्ष तक बन में रहना होगा, सुमन्त्रजी के बचन को सुनकर स्त्रियों में श्रेष्ठ जानकी अपना अलंकार करके प्रसन्न हृदय से सूर्यकी प्रभा के समान चमकने

वाले रथपर सीताजी पहिले बैठीं, जानकी को रथपर बैठे देखकर महाराज दशरथ चौदह वर्ष के लिये उत्तम उत्तम वस्त्र व अलंकार सीता जी के वास्ते दिया, इसके उपरान्त मिथिलापति से दिये गये अस्त्र शस्त्र कवच और गोह के चमड़े का पेटाग तथा रम्भा आदि को पहिले रथ के ऊपर रखकर इसके बाद सूर्य चन्द्र के समान राम लक्ष्मण रथपर बैठ गये, सुमन्त्रजी रामलक्ष्मण जानकी को रथपर बैठे देखकर हवाके बराबर चलने वाले घोड़ों को प्रेरणा किया, रामचन्द्रजी को रथ से बन जाते देखकर वहां के स्थावर जंगम आदि चराचर सभी जीव मूर्छित हो गये। रामजी के जाने के बाद नगर में इस भांति कोलाहल होने लगा जैसे क्रोधित हाथी शब्द को करती है, और बाल वृद्ध बनिता सकल नगरवासी व्याकुल होकर रामचन्द्रजी के पीछे इस प्रकार दौड़े जैसे पियासा मनुष्य पानी को दौड़ता है सकल पुरवासी रोदन करते हुए रथको आगे पीछे से घेरलिया, और सुमंत्रजी से कहने लगे, हे मन्त्रिन्! आप रथके वेग को धीरा कर दीजिये जिस में हम सब लोग रामचन्द्रजी के मुखको देख लेवें, इस प्रकार कहते हुये रामजी के दर्शन से मुग्ध होकर नागरिक स्त्रियां परस्पर में बातचीत करने लगीं कि रामचन्द्रजी के माताओंके हृदय लोहका है जो साक्षात् विष्णु के समान रामलक्ष्मण को बन जाते देखकर उन लोगों का कलेजा नहीं फटता है, इस में कृतकृत्य जानकी हैं जो छायाकी नाईं पति के पीछे चलती हैं जैसे भ्रमण करते हुए सूर्य के साथ प्रभा चलती हैं वैसेही दुःख में भी रामजी के साथ जानकी जाती हैं, हे लक्ष्मणजी! आप धन्य हैं जो रामचन्द्रजी की सेवा करने के लिये जाते हैं हे लक्ष्मणजी धन्य है आपकी कल्याण कारिणी बुद्धि और धन्य है आप के भाग्य का उदय जो इस स्वर्ग के मार्ग से श्रीरामजी के पीछे जाते हैं इस प्रकार कहते हुये और रोदन करते हुए पुरवासी रथके पीछे पीछे चले। इधर स्त्रियों से आवृत महाराज दशरथ कुछ चेतना को प्राप्त करके हम प्रियपुत्र रामचन्द्रजी

को देखेंगे ऐसा कहते हुए घरसे बाहर आये, आगे स्त्रियों के महा भयंकर रोने के शब्द को सुनकर महाराज दशरथ इस प्रकार दीन हो गये जैसे पूर्ण चन्द्रमा राहुके संसर्ग से दीन होजाते हैं। रामचंद्रजी पुरवासियों की यह दशा देखकर सुमन्त्रजी से बोले, हे मन्त्रिन्! रथ को जल्दी से चलाइये, इधर रामचन्द्रजी रथ चलाने को कहते हैं और पुरवासी रथ के पीछे लगे हैं इन दोनों ओर के प्रेम से बद्ध होकर सुमन्त्रजी समानता में रथको हांकने लगे, महाबाहु रामचन्द्रजी के रथके दूर जानेपर रथसे उभड़ी हुई धूलिको नागरिक स्त्रियों ने अपने नयन के आंसुओं से गीला करदिया। आंसुओं के प्रवाह को बहाने से हतोत्साह होकर हाहाकार करने लगे, रामचन्द्रजी के जाने पर अयोध्यावासी पीड़ा के मारे मूर्छित हो गये। मछलियों से क्षुब्ध और चंचल वर्षा जलके समान नागरिक स्त्रियां अपने नयनों से आंसुओं की धारा को छोड़ती हुई मार्गोंमें कीचड़ करदेया, रामचन्द्रजी के रथको अधिक दूर जाने से पुरवासी नगर को लौट आये इहां महाराज दशरथ को देखतेही राजा का और प्रजाओं का दुःख एक में मिलगया, रोदन करते करते राजा और प्रजागण मूर्छित होकर इस प्रकार पृथ्वी पर गिरपड़े जैसे कटा हुआ वृक्ष गिर जाता है, कोई लोग हा रामचन्द्रजी कोई लोग हा राम माता कौशल्या ऐसा कहते कहते विलाप करने लगे। इसके उपरान्त रामजी के गये मार्ग के पीछे महाराज दशरथ और राम माता कौशल्या आदि रथके पीछे पीछे इस प्रकार चले जैसे गौ पुत्र के पीछे चलती है, रामचन्द्रजी रथ से चलने के योग्य और सुख के योग्य अपने माता पिता को पैदल दौड़ते देखकर सुमन्त्रजी से बोले,—कि रथ को शीघ्र चलाइये, क्योंकि पुरुष सिंह रामचन्द्रजी दुःखित पिता माता को प्रेम के मारे बारम्बार नहीं देखना चाहते थे, जैसे बंधे हुए बछड़े के पास गाय दौड़कर जाती है उसी तरह धर्म के जालमें बंधे रामचन्द्रजी के पास राम माता कौसल्या आदि पटरानियों ने दौड़कर पहुँची। और रोदन करती हुई राम राम लक्ष्मण सीता

यह कहती हुई कौशल्या रथके पीछे पीछे चलीं, राम लक्ष्मण सीता के लिये आँसुओं की धारा बहाती हुई इधर उधर दौड़ती हुई कौशल्या को रामचन्द्र देखे, इधर महाराज दशरथ सुमन्त्रजी से रथको रोकने की आज्ञा देते हैं उधर रामचन्द्रजी रथको शीघ्र चलाने की आज्ञा देते हैं यह दोनों तरफ के प्रेम के चक्रमें बंधकर सुमन्त्रजी की आत्मा चञ्चल हो गयी, तौ भी रामचन्द्रजी के वचनानुसार रथ का वेग आगे को बढ़ा, इतने में सब लोग रामचन्द्रजी की प्रदक्षिणा किये किन्तु सबका हृदय रामजी के प्रेम के तागे में बंधा था ।

इति श्री वाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे चत्वारिंशः सर्गः ॥४०॥

रामचन्द्रजी रथ से उतर कर विनय पूर्वक सबको बिदा किये, फिर रथ पर बैठकर आगे को चले, रामचन्द्रजी को नगर से बाहर जाने पर राजमहल में तथा नगर में स्त्रियों के रोदन का महाघोर शब्द होने लगा, अनाथ दुर्बल तपस्वियों को रक्षा करने वाले रामजी हम लोगों को छोड़कर कहां चले गये, मिथ्या कार्य पर जिनको क्रोध नहीं होता था दूसरे के क्रोध को अपने व्यवहार से जो शान्त करते थे प्रजाओं के लालन पालन में जो सदा निरत रहते थे जो सुख दुःख को सदा समान जानते थे ऐसे रामचन्द्रजी हम लोगों को छोड़कर कहां गये, जो रामचन्द्रजी जिस प्रकार कौशल्या को देखते थे वैसेही हम लोगों की सेवा करते थे ऐसे महापुरुष रामजी हम लोगो को छोड़कर कहां गये, कैकयी से दुःखित किये गये और महाराज दशरथ से प्रेरणा किये गये इस अयोध्यापुरी और सकल संसार को रक्षा करने वाले रामजी इस नगर को छोड़कर कहां गये, यह अज्ञानी राजा धर्मात्मा सत्य पालन करने वालों में श्रेष्ठ रामचन्द्र को बनवास दिया है, इस प्रकार अनेक बातों को कह कर महाराज दशरथ की राज महिषीइस प्रकार रोदन करने लगीं जैसे बिना बछड़े की गौ चिल्लाती है, शोकसे सन्तप्त महाराज दशरथ स्त्रियों के आर्त नादको सुन कर अत्यन्त व्याकुल होगये, इधर

रामचन्द्रजी के बन जाने पर ब्राह्मणों के अग्निहोत्रकी अग्नि शान्त होगयी सूर्यका प्रकाश मलीन होगया, हाथियों ने अपना अहार छोड़ दिया बछड़े माताके स्तन से दूधका पीना भूलगये, वृक्षों में और पशुपाक्षियों में निस्तब्धता आगयी, आकाशमें मंगल बुध वृहस्पति ये तीन ग्रह दक्षिण दिशामें उदय होगये और शनि शुक्र आदि ग्रह वक्र गतिसे चन्द्रमा को पाकर दारुण अवस्था का आश्रय लिये, नक्षत्र तथा ग्रहनिस्तेज और शोभा हीन होगये, आकाश मार्ग में चारो ओर धूम दिखाई पड़ने लगा, अयोध्यापुरी में भूकंप होने लगे, दिशाओं में अन्धकार छालिया, नगर वासी मनुष्य दीन स्वभाव के होकर अपने अपने आहार विहार का त्याग किये, और दुःखसे पीड़ित होकर लंबी श्वांस को छोड़ते हुए रामचन्द्रजी की चिन्ता करते हैं और इधर उधर रोदन करते हैं रामचन्द्रजी के बनजाने पर शीतल हवाका चलना बन्द होगया, चन्द्रमाकी मनोहरता उदासीन सी होगई, जगत को कल्याण करने वाले भगवान् सूर्यनारायण का प्रकाश मलीन सा होगया, संसारमें अनेक प्रकार के उपद्रव होने लगे। बालक माता पिता से प्रेमको घटाने लगे, स्त्री पुरुष में भाई भाई में विराग सा होगया। सब लोग दुःख पूर्वक रामचन्द्रजी की चिन्ता करने लगे, और जो श्रीरामजी के मित्र थे वह लोग शोक से व्याकुल होकर अपने स्नान भोजन शयन आदिको छोड़दिये। जैसे विष्णु से रहित होकर पर्वती के सहित पृथिवी चलाय मान होती है वैसेही रामसे रहित अयोध्या चलित होगयी और लोगों में शोक के शब्द होने लगे॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकचत्वारिंशः सर्गः॥ ४१॥

इधर जब तक रथकी धूलीको महाराज दशरथ कौसल्या आदि रानियों के सहित देखते थे तब तक उन्हे मानो रामजी के दर्शन होरहे हैं जब रथ नयन पथसे अतीत होगयी धूली का दिखाता बन्द होगया तब महाराज दशरथ पुत्र बियोग को न सह कर मूर्छित हो

पृथिवीपर गिरपड़े, कौसल्या महाराज के दक्षिण बाहुको पकड़ कर राजमन्दिर में लेगयी और कैकयी राजाके बाईं ओर से धीरे धीरे चलीं नीति और विनय से सम्पन्न कैकयी को देख कर महाराज दशरथजी बोले, हे पापिनी ! कैकयी तुम हमारे शरीर को कदापि न स्पर्श करना और हम तुमको देखना नहीं चाहते । तुम्हारे लिये न हमारा जीवन और हमारे लिये तुम्हारा जीवन नहीं है क्यों कि धर्म को छोड़कर केवल अपने कार्य सिद्धिके वास्ते तुमने मेरा त्याग किया है अब मैंने तुम्हारा भी त्याग किया है, जो हमने तुम्हारा पाणि ग्रहण किया है उन सब कार्यों को इस लोकमें और परलोकमें मिलने वाले सुखको पागये यदि तुमसे दिये गये राज्य को पाकर श्रीमान् भरतजी प्रसन्न हो जावें तो हमारे मरने के उपरान्त उनके दिये श्राद्ध आदि मुझको न मिलें, अथवा यदि विवेकी भरत जी तुमसे राज्य को पाकर मेरी प्रसन्नता के लिये राज्य का त्याग कर देवेंगे तो उनके दिये श्राद्ध दान आदि कोमैं शतशः अंगीकार करूँगा । जैसे मनुष्य आगमें हाथ डाल कर पीड़ाको प्राप्त होता है वैसेही अपने कर्म से महाराज दशरथ पश्चाताप करने लगे । और दुःखसे विलाप करते हुए यह कहने लगे कि जो रामजी चन्दन आदि को लेपन करके उत्तम शय्या पर शयन करते थे वह रामजी आज किसी वृक्षके नीचे पृथिवी पर शयन करेंगे, और काष्ठ अथवा पत्थल की तकिया बनावेंगे, और प्रातःकाल उठकर जंगली जन्तुओं को तथा बहेलियों को देखेंगे, सदा सुख भोग करने वाली जनक की प्राण प्रिया कन्या जानकी ऊँचे नीचे तथा कंटक युक्त बन मार्ग के चलने से अवश्य पीड़ित होगी और जंगली जीवों के भयानक गर्जने को सुनकर जानकी को अवश्य भय होता होगा । यह कह कर विलाप करते हुए केकयी से बोले, हे केकयी ! तू अपने मनोरथ के फलको भोगो मैं बिना रामचन्द्र के जीवन को नहीं रख सकता हूं इस प्रकार विलाप करते हुए राजा अपने गृह में प्रवेश किये, इधर राजभवन चारो ओर

सूना है, राज भवन को सूना देखकर बिलाप करते हुए राम लक्ष्मण जानकी से रहित राज्य स्थान को देखकर गद् गद् स्वर से रोते हुए दीन बचन को बोले, हे मन्त्रिगण ! इस समय हमको राम माता कौसल्या के स्थान पर लिवा चलो, अन्यत्र चलने से हमारा दुःख शान्त नहीं होगा, राजा के इस प्रकार के बचन को सुनकर द्वार पालकों ने राजा को कौसल्या के स्थान पर लिवा ले गये, वहां जाकर राजा शय्या पर बैठ कर कलुषित होगये और रामचन्द्र तथा लक्ष्मण और सीता से शून्य कौसल्या के स्थान को देखकर दशरथ और कौशल्या हा राम यह कह कर बड़े शब्द से चिल्लाने लगे, इसके उपरान्त कालरात्रि के समान रात्रिको आजाने पर आधी रातको महाराज दशरथ कौशल्या से बोले, हे कौसल्ये! मुझको अपने हाथसे स्पर्श करो क्योंकि रामचन्द्रजी के पीछे दौड़ता हुआ मेरा मन अब तक भी नहीं लौट आया, रामजी के शोक सागर में डूबती हुई कौसल्या राजा को शय्यापर देखकर शय्या के समीप बैठ कर लंबीश्वास को लेती हुई रोदन करने लगीं ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥४२॥

इसके उपरान्त पुत्र शोकसे खिन्न महाराज दशरथ को देखकर कौसल्या बोली, हे स्वामिन ! पुरुष श्रेष्ठ रामचन्द्र पर केकयी ने कुटिल बिषको छोड़ा जैसे सर्पिणी बिषको उगिलती है, श्रीरामजी का निष्कासन करके अपने मनोरथ रूप कार्य की सिद्धिको पाकर दुष्ट सर्प के समान केकयी मुझे फिर भी त्रास देरही है, नहीं तो बरदान में यदि यही मागती कि भरत को राज्य हो परन्तु रामचन्द्र भिखारी की दशा में होकर घरमें रहै तो भी हम लोगों की प्राण रक्षा होती, नहीं तो रामचन्द्रजी को घरसे इस प्रकार बाहर किया जैसे पर्वतमें राक्षसों का भाग मिले नागराज के समान गमन करने वाले रामजी लक्ष्मण और सीता के सहित निश्चय बनमें प्रवेश किये होंगे, केकयी की अनुमति से बनके अदृष्ट दुःख को पाकर सिंहकों के आहार से अति रिक्त

रामजी की क्या गति होगी, उत्तम वस्तुको फल कालमें गवाया अर्थात् राज्य भोगके सुख कालमें रामजी को बनवास दिया अब फल मूल को खाकर कृपण के समान रामजी किस प्रकार बनमें रहेंगे। राम और लक्ष्मण तथा सीता को यहां देखकर दुःख नाश होने का और मंगल को लाभ करने का समय था सो नष्ट हुआ, अब न मालूम कब अयोध्यापुरी ध्वजा तोरण और माला से पहिले के समान शोभित होगी, कब रामचन्द्रजी को देखकर नगर बासी समुद्र के सदृश सुखी होंगे, जैसे चन्द्रमा को देखकर समुद्र सुखी होता है वैसेही रामजी को देखकर पुरवासी प्रसन्न होंगे, कब महा बाहु रामजी रथपर आगे बैठाये सीता के सहित अयोध्यापुरी में प्रवेश करेंगे, कब शत्रुओं को नाशकरने वाले हमारे पुत्र राम लक्ष्मण को मार्ग में आते देखकर नगर बासी लाजाको बर्षावेंगे, कब नगर में प्रवेश करते हुए पर्वत के दोनों शिखर के समान उज्वल अस्त्र शस्त्र को लिये रामजी के शुभ कुण्डल को देख पडेंगे। कब ब्राह्मणों की कन्या रामचन्द्रजी पर पुष्पको छोड़ेंगी और रामजी प्रसन्नता पूर्वक सबको आनन्द देते हुये नगर की प्रदक्षिणा करेंगे। जैसे सिंहिनि गौ के बच्चे को नाश करके गौ को अकेली करदेती है वैसेही केकयी ने हठात् मुझको रामचन्द्र से हीन करके अकेली किया, सकल कल्याण गुणों। से युक्त बेद शास्त्र को जानने वाले रामजी के बिना मैं अपने प्राण को नहीं रख सकती, और अपने प्रिय पुत्र लक्ष्मण को बिना देखे हम अपने जीवन को छोड़ दूंगी। जैसे ग्रीष्म कालमें भगवान सूर्य नारायण पृथिवी को तपा देते हैं वैसेही यह पुत्र शोक रूपी ज्वाला हमें तपा रही है॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे त्रिचत्वारिंशः सर्गः॥४३॥

स्त्रियों में श्रेष्ठ कौसल्या को इस प्रकार बिलाप करते देखकर धर्म पर स्थित धर्म के बचन को सुमित्रा बोली, हे आर्ये! रामजी अच्छे गुणों से युक्त हैं उनकी हानी नहीं हो सकती और चराचर जीव उनको ईश्वर जानते हैं उनके बिषय में बिलाप करना तुम्हारा

व्यर्थ है, सर्वथा नित्य सुखको अर्थात् ऐहिक और आमुष्मिक फलको प्राप्त करने के लिये रामचन्द्रजी पिता के बचन को सत्य करने वास्ते धर्म पथ पर स्थित हैं इस कारण तुमको शोच करना उचित नहीं है, महात्मा रामचन्द्रजी के सेवा रूप व्यापार से लक्ष्मण को भी सुख होवेगा, हे आर्ये ! बनका दुःख सुखके समान जान पड़ेगा, जानकी सदा रामजी के छायाकी नाईं सुखसे रहेंगी। जो रामजी अपनी कीर्ति रूप पताका को तीनों लोकमें घुमादिया है उन रामजी को कौनसा कल्याण नहीं प्राप्त हो, जो रामजी अपने साक्षात् धर्म के समान हैं और सत्यको पालन करने वाले हैं उनको कैसे दुःख होगा ? रामचन्द्र सबके पालक हैं रामजी की सेवा इन्द्रादिक देवता करैंगे उनके विषय में तुमको शोक करना उचित नहीं है, रामचन्द्र को पाकर बनके शीतोष्णवायू सुखसे स्पर्शकरने योग्य हो जायँगे रात्रि कालमें रामजीकी सेवा मुनिगण पिताके समान करेंगे, घाम से संतप्त रामजी को चन्द्रमा सुख देवेंगे, रणमें ताडुका सुबाहु आदि राक्षसों को मारने से विश्वामित्रजी जिन रामजी को अनेक प्रकार के दिव्य अस्त्रों को दिया है वह रामजी अपने भुजाके बलसे बनमें भी घरके समान रहैंगे। जिसके बाणके सन्मुख आकर शत्रु अपने आप नाश हो जाता है ऐसे महाबली रामजी पृथिवी शासन के योग्य क्यों न होंगे। जिनकी ऐसी शोभा है जिन में ऐसी बीरता है जिनमें ऐसे श्रेष्ठगुण हैं ऐसे रामजी बनसे सकुशल लौट कर शीघ्र राज्यको करैंगे। जो रामजी सूर्य के भी सूर्य अग्नि के भी स्वामी लक्ष्मी के पति कीर्तिमें भी कीर्ति क्षमामें भी क्षमा देवताओं के भी देवता प्राणियों के पालक हैं उन रामजीके लिये नगर और बन बराबर है। रामजी सीता और लक्ष्मण तथा वसिष्ठ के सहित अवश्य राज्यका भोग करैंगे इसमें तुम कुछ चिन्ता मत करो, हे आर्ये कुश चीरको धारण करने वाले रामजी के पीछे लक्ष्मी के समान सीता जी हैं तो रामचन्द्रजी को क्या दुर्लभ है, धनुष बाण खड्ग अस्त्र को

धारण करने वाले महा पराक्रमी लक्ष्मण जिसके आगे हैं ऐसे रामजी को क्या दुलर्भ है, हे देवि ! रामजी बनसे लौटकर फिर आवेंगे तुम शोक और मोहको छोड़कर हमारे बचन को सत्य जानो, हम तुम्हारे चरण को शतशः प्रणाम करती हूं फिर भी रामजी के चन्द्र मुख को तुम देखोगी । तुम्हारे दुःखसे सब लोग दुःखी हैं रामजी के विषय में दुःख उठाना उचित नहीं है, रामजी के समान लोकमें कोई धर्मका पालन करने वाला नहीं है इसलिये रामजी के ऐसा पुत्र पाकर शोक करना ठीक नहीं है इस भांति अनेक प्रकार के बातों से कौसल्या के हृदय का सन्ताप कुछ शान्त सा हो गया ॥

बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४४ ॥

श्रीरामजी में प्रेम करने वाले नागरिक जन बन बास करने के लिये जो रामजी के रथ के पीछे चलते थे वे रथको दूर हो जाने पर भी नहीं लौटते थे, उनको लौटाने के लिये प्रजाओं से रामचन्द्रजी पुत्र के समान प्यार करके बोले, कि आप लोग जो प्रीति हमारे लिये करते हैं वही प्रीति से भरत को मानिये, सुन्दर चरित्र वाले भरत जी आप लोगोंके ऐहिक पारलौकिक कार्यको साधन करने के लिये हित और कल्याणकी बातको करेंगे, परम ज्ञानी भरत देखने में बालक के सदृश इस पृथिवी के राजा होकर आप लोगों को अवश्य पालन करना चाहिये, हमारे बनमें आनेका सन्ताप जिसमें महाराज को न होवे वैसा उनके अनुकूल आचरण आप लोग करिये । जैसे जैसे रामचन्द्रजी धर्मको ग्रहण करके प्रजाओं को शिक्षा देते हैं वैसे प्रजा रामजी के बचन को अंगीकार करने लगे, प्रेमके आंसुसे पूर्ण नयन प्रजाओं के अपने स्नेह के बन्धन से लक्ष्मण सीता सहित रामजीको आकर्षित करलिया, तपमें श्रेष्ठ, बिद्यामें श्रेष्ठ, बयमें श्रेष्ठ, ब्राह्मण आदि मार्ग चलने से थकित होकर दूरही से रामचन्द्रजी के प्रति बोले, हे प्रजागणर । थमें चलने वाले अनेक देशके घोड़ा को अब लौटा दीजिये ऐसा वृद्ध ब्राह्मण गण रामजी की प्रार्थना करते

हैं, इस प्रकार वृद्ध प्रजाओं के अति प्रलाप को सुनकर सहसा रामचन्द्रजी रथसे उत्तर पड़े, और लक्ष्मण तथा सीताके सहित पैदल उन ब्राह्मणों के समीप गये, बन जानेके लिये परायण रामजी को पैदल चलते देखकर दयाके मारे ब्राह्मणों से नहीं सहन हो सका, शोक से संतप्त होते हुए वृद्ध जन रामचन्द्रजी से कहने लगे कि यह ब्राह्मण समूह अरणि और यज्ञपात्रको कन्धेपर लादकर आपके अनुगामी होते हैं हम लोगों को उज्वल बाजय यज्ञके छत्रको देखिये, छत्ररहित सूर्यके प्रकाशसे पिडित आपको यह यज्ञ छत्रछाया करेगा निरन्तर बेदमंत्रके अनुसार चलने वाली हम लोगों की मति आपके निमित्त वेद आदि अभ्यासका छोड़कर बनमें निवास करने के लिये प्रस्तुत है, हे रामजी ! हमलोगों के परमधन जा वेद शास्त्र हैं वह हृदय में हैं उसीके अनुसार हम सबका धर्म और स्त्रियों के पतिब्रत धर्मका पालन घरमें होता है आपके पीछे चलने के लिये हमारी राय निश्चित्त है तौ भी कुछ कहता हूं कि आप यदि धर्म पथ पर आरूढ़ हैं तो हम सब ब्राह्मणों के बचन को मानिये ब्राह्मणों के बचन को उल्लंघन कर समस्त धर्म काव्य तिक्रम हो जायगा इस कारण केश पके हुए हम सब बुड्ढे पृथिवी पर सष्टाङ्ग दण्डवत करके आपसे प्रार्थना करते हैं कि हम लोगों की प्रार्थना को स्वीकार करके शीघ्र लौट आइये, हे रामजी ! जो ब्राह्मण यहाँ आये हैं इस समय उनके आरम्भ यज्ञकी समाप्ति आपके लौटने के आधीन है अर्थात अब आप लौट जाइयेगा तो इन ब्राह्मणों का यज्ञ समाप्त हो जायगा । हे रामजी से चराचर सभी प्राणी आपसें भक्ति सहित प्रार्थना करते हैं उन भक्तों पर आप भी प्रेमको दिखलाइये, अर्थात् अब अयोध्यापुरी को लौट आइये, हे रामजी ! उन्नत जो वृक्षों की डालियां हैं वह भी वायूके बेगसें हिलरही हैं अर्थात् वृक्ष लोग आपके साथ चलने से रहित होकर अपनी डालियों के द्वारा आपके लौटने की याचना करते हैं, आज अपने व्यापार से निस्तब्ध होकर

पक्षियाँ अपना आहार विहार छोड़कर आपके लौटने की याचना करते हैं, श्रीरामजी अपने लौटने के लिये इस प्रकार ब्राह्मणों के करुणा युक्त विलाप को सुनते हुए तमसा नामकी नदीको देखे, वहीं तमसा तट पर विश्राम करने के लिये रथको रोकने की आज्ञा दिये, रामजी की आज्ञाको शिरोधार्य करके सुमन्त्रजी थके हुए रथके घोड़ोंको ठहराने लगे और उन घोड़ोंको नदी में जल पीलाकर तृण चरने के लिये छोड़ दिया।

इति वाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे पंचचत्वारिंशःसर्गः ॥ ४५ ॥

इसके उपरान्त रामचन्द्रजी तमसा के सुन्दर तटको देखकर लक्ष्मण और सीता से बोले, हे लक्ष्मण! बनवास संबंधि रात्रियों में आज पहिली रात है अब आजसे अयोध्यापुरी के सुखका स्मरण नहीं करना चाहिये, अपने अपने स्थान पर आये जन्तुओं के शब्द शून्य बनमें सुनाई दे रहे हैं। हमारे पिताकी राजधानी अयोध्यापुरी है हम लोगों के आने से आज अयोध्याबासी स्त्री पुरुष अवश्य चिन्ता करते होंगे, हे लक्ष्मणजी तुम्हारे हमारे भरत तथा शत्रुघ्न के श्रेष्ठ गुणों के अधीन प्रजा सदा हम लोगों में अनुराग करते हैं, हे लक्ष्मण शोच हमको एक बातकी! है कि हम लोगोके आने से बारम्बार रोदन करने से पिता माता कहिं अन्ध न होजावें, अथवा शोच करना वृथा है क्योंकि धर्मात्मा भरत माता पिताको धर्मयुक्त अनेक बातों से धैर्य देवैंगे, हे लक्ष्मणजी पिता माता से अतिरिक्त भरत के प्रेम को सोचता हूं, हमारे चलने के समय जो कुछ कार्य तुमने किया वह उचित किया नहीं तो जानकी की रक्षा के लिये सहायक खोजना पड़ता तुम अकेले भी सहायक समूह के समान हो, हे लक्ष्मणजी! आज तमसा के तीरे इस रात्रि में केवल नदी के जल से प्राण की रक्षा करना चाहिये इसप्रकार लक्ष्मण से कहकर रामजी सुमन्त्र से बोले, हे सुमन्त्रजी आपभी घोड़ों को सावधान करके आपभी समाहित होजाओ, रामजी के बचनानुसार सुमन्त्रजी घोड़ों को उचित बन्धन

से बांधकर घास को घोड़ों के समीप में रखदिया, और अपने स्नान सायं संध्या करके सूर्य को अस्त हो जाने पर रात्रि को समीप में उपस्थित देखकर रामजी और लक्ष्मण के वास्ते तृणकी शय्या लगाये, तमसा के किनारे वृक्ष के पत्तों से सुमन्त्र की बनाई शय्या को रामजी देखकर जानकी और लक्ष्मण के सहित शय्या स्थान पर गये, थके हुए राम जानकी को सूते देखकर अपने जागरण करने के लिये लक्ष्मणजी रामजीके गुणों की चर्चा सुमन्त्र से करने लगे। लक्ष्मण जी उस रात्रिको जागरण पूर्वक बिताकर अरुणोदय कालको प्राप्त किया, इधर राम लक्ष्मण सीताजी के आश्रय को लेकर कुछ दूर पर समस्त प्रजा तमसा तट पर वृक्ष के नीचे निवास किया, उषा काल में रामचन्द्रजी उठ कर वृक्षके नीचे सोये हुए प्रजाओं को देख कर पवित्र लक्षण युक्त लक्ष्मण से रामजी बोले, हे लक्ष्मणजी! देखिये हम लोगों के स्नेह से युक्त यह प्रजा अपना घर आदि को छोड़कर वृक्षके नीचे पड़े हैं, यह पुरवासी हम लोगों को लौटानेका इस प्रकार यत्न करते हैं कि बिना लौटाये ये अपने प्राण तक को देदेवेंगे। इस कारण जब तक यह लोग सूते हैं तब तक हम लोग रथसे आगे को चलें, इसके उपरान्त रामचन्द्रजी सुमन्त्रजी से बोले, हे सुमन्त्र! आप रथ को शीघ्र तइयार करिये हम लोग जल्दी से अरण्यकी ओर को चलेंगे, सुमन्त्रजी राममन्द्रजी की आज्ञा से रथमें घोड़ों को जुतकर बिनय पूर्वक रामजी से बोले, हे रामजी! रथमें घोड़े जुतकर तइयार हैं लक्ष्मण और सीता के सहित आप शीघ्र रथको अलंकृत कीजिये, रामचन्द्रजी जानकी लक्ष्मण के सहित रथ पर बैठकर शीघ्रही तमसा नदी के उस पार हो कर भय देने वाले राजमार्ग को अभय करने के लिये प्राप्त हुए। चलने के समय रामजी पुरवासियों को मोहन के वास्ते सुमन्त्र से कहे कि रथको कुछ दूर उत्तर की ओर ले चलकर दक्षिण को लौटा दीजिये जिसमें पुरवासी हमको बनमें जानेके लिये प्रस्तुत न समझें रामजी के ऐसा कहने पर सुमन्त्रजी ने राम लक्ष्मण

सीताको रथ पर बैठाकर पहिले उत्तर को घोड़ेकी बागको फेरा फिर मुहूर्त भरमें जिस मार्ग से तपस्वी तपोवन को जाते हैं उसी मार्ग से सुमन्त्रजी रामजी को रथ पर बैठाकर बनमें लेगये ।

इति वाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे षट्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४६ ॥

रातको बीत जाने पर प्रातःकाल नगर बासी उठकर रामचन्द्रजी को शय्या स्थान पर न देखकर शोकसे उपहत होकर मूर्छित होगये, और इधर उधर देखने लगे परन्तु अधिक देखने पर भी रामजी के रथसे उभड़ी हुई धूलि भी नहीं दीख पड़ी, वे प्रजागण विषाद और करुणा से बिलाप करते हुए दीन दशामें प्राप्त होकर परस्पर बात चीत करने लगे कि हमलोगों कि निद्राको धिक्कार है कि जिसके बशमें पड़कर रामजी के दर्शन तकका सौभाग्य हमलोगों को नहीं हुआ, महाबाहु रामजी कैसे हम सब भक्तों को दुःखी देखकर भी छोड़कर चले गये, जो सदा हमलोगों को पुत्रके समान पालन करते थे वह रामजी आज छोड़कर बनको चले गये, अब रामजी के बियोग में सिवाय प्राण को क्षय करने के अतिरिक्त जीवन का रखना उचित नहीं है किस फलको देखकर अपने शरीर में प्राणको रखें, अनेक सूखे काठ पड़े हैं उनको इकट्ठा करके चिता बनाकर हमलोग जल जायेंगे, नहीं तो अयोध्यामें चलने से नगरबासी पूछेंगे कि रामचन्द्रजी बनको नहीं लिवा गये तब उनलोगों से क्या कहा जायेगा, रामचन्द्र के बिना हम लोगों को चलने से आबाल बृद्ध बनिता दुःखसे अपना प्राण अवश्य छोड़ देवेंगे, हम सब लोग रामजी के साथ नगर से चले अब उनसे बिहीन होकर नगर को किस प्रकार देखेंगे, जैसे बछड़े के बिना गायें पीड़ित होती हैं उनके समान अनेक प्रकार की करुणा युक्त बातों को कहते हुए हाथ उठाकर दुःखसे बिलाप करने लगे, दुखके मारे रामजी के गये मार्ग पर कुछ दूर तक जाकर आगे मार्गके क्रमको न देखकर लौट आये और कहने लगे कि इस समय अब क्या करूं हमलोगों को दैव ने लौटाया है ऐसा कहते हुए अयोध्या पुरी का रास्ता लिये, शोकसे

पीड़ित नयनों से और व्याकुल मनसे नगरी को देखकर कहने लगे कि रामजी से विरहित यह अयोध्यापुरी शोभा हीन होगई जैसे बिना चन्द्रमा के आकाश की शोभा नहीं होती, बिना जलके जैसे नदी की शोभा नहीं होती वैसेही रामचन्द्रजी के बिना इस नगर की शोभा नहीं है, इस प्रकार कहते हुए श्रीरामजीके रथके साथ गये हुए वे प्रजागण अपने अपने स्थान पर पहुंचे परन्तु दुःखके मारे कोई किसी को आंखभर देख नहीं सकते थे, और न तो दुःख सागर को तैर कर पार हो सकते थे ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे सप्तचत्वारिंश सर्गः ॥ ४७ ॥

श्रीरामजी के पीछे से लौटे हुए वे प्रजागण शोकसे मुमूर्षु आँसुओंकी धारा प्रवाह को बहाते अपने अपने गृहमें आकर अपने परिवार समेत सबके सब रोदन करने लगे, रामजी के वियोग से अयोध्यापुरी के हाट बाजार बन्द होगये, जो कुछ महाराज दशरथकी प्रसन्नता के वास्ते खुली थी वह भी शोभा हीन थी गृहस्थों के यहां भोजन आदि पदार्थों का होना बन्द होगया सबकी मुखकान्ति मलीन होगयी, चिर कालसे नष्ट भी धनको पाकर अयोध्या बासी प्रसन्न नहीं हुए, स्त्रियां अपने बालकों को दूध पिलाना बन्द कर दिया, घर घरमें रोदन होने लगे, अयोध्या बासी तीखे बाणके समान कठोर बचन बोलने लगे, गृहके कार्यों से स्त्रियों से धनसे और पुत्रके सुखसे नगर बासियों का मन विरक्त सा होगया, अर्थात् बिना राम राजाके जगत का सब कुछ कार्य काँटेके समान मालूम पड़ता था क्योंकि परब्रह्म परमेश्वर के मायिक दर्शन से भी चित्त शुद्धि द्वारा लोगोंको मोक्ष ज्ञान में अधिकार हो गया था, इसलिये ईश्वर से अलग और किसी वस्तु की चाह अयोध्या बासियों को नहीं रही, रामजी के बनजाने पर स्त्रियां अपने अपने पतियों से सदा यही कहा करती थी कि लक्ष्मण भाग्यवान पुरुष हैं सीता भाग्यवती हैं जो रामचन्द्रजी की सेवाके लिये उनके साथ बनको गये हैं, अथवा सीता लक्ष्मण की क्या बात है, अचेतन

नदी तालाब कमल वृक्ष आदि सबकी ही भाग्य बलवान है कि बन में रह कर श्रीरामजी उन सबका सेवन करेंगे, धन्य वह बन की भूमि और पर्वत हैं कि जिन पर अतिथि के समान श्रीरामजी निवास करेंगे, विचित्र पुष्पों को धारण करने वाले और अनेक प्रकार के मंजरियों से शोभित बन वृक्षों पर बैठे हुए भंवरों की शोभा से युक्त वृक्ष श्रीरामजी को देख कर पुष्पांजलि देने के सदृश व्यवहार करेंगे पर्वतों पर रहने वाले ब्रह्म अकाल में अनेक प्रकार के फल पुष्प से श्रीरामजी का स्वागत करेंगे। श्रीरामचन्द्रजी के वास्ते पहाड़ों के झरने स्वच्छ जलको लेकर अनेक धारा होकर बहेंगे, धन्य वह बन के वृक्ष हैं कि जिनके कोमल पल्लवों की शय्यापर श्रीरामजी सीता सहित शयन करेंगे, इस प्रकार की अनेक बातें नागरिका स्त्रियां अपने अपने पतियों से कहकर करुणा युक्त आंसुओं की धारा को बहाती थीं, और कहती थीं कि चलिये हम लोग भी बनको चलें श्रीरामचन्द्रजी हम लोगों की रक्षा करेंगे और सीताजी श्रीरामजी की रक्षा करेंगी, दुःख देने वाले चित्तको हर्ष नाश करने वाले ऐसे कठिन स्थान को देखकर कौन मनुष्य प्रसन्न होता है इस लिये अयोध्या को छोड़कर हम लोगों को भी बन में चलना उचित है, अधर्म युक्त अनाथ के समान कैकयी के राज्य से धन पुत्र आदिका सुख प्रजाओं को कैसे होगा, कुलको नाश करने वाली कैकयी जिसने अपने सुखके वास्ते पुत्रका और पतिका त्याग किया है उससे दूसरे की रक्षा कैसे हो सकती है। कैकयीके राज्यमें अपना पालन पोषणद्ध प्राप्त करके भी अपने जीवन को रखना उचित नहीं है यह मैं अपने पुत्रका शपथ करके कहती हूं कि जो पापिनि दुष्टा कैकयी महाराज दशरथ के श्रेष्ठ पुत्र को दयासे रहित होकर बनवास दिया उसके अधीन सुखको प्राप्त करके भी रहना शुभ नहीं होगा। कैकयी के दुष्कर्म से और बिना स्वामी के यज्ञ दान आदि सभी शुभ कर्म बिनाश होजायेंगे, अब रामचन्द्रजी के जाने पर दशरथ अपना प्राण अवश्य छोड़ेंगे और महाराज

दशरथ के मरने पर सब सत्यानाश हो जायगा, इस लिये आप सब पुरुष और हम सब स्त्रियों को ऐसे स्थान में चलकर रहना चाहिये जहां विषके समान केकयी का नाम भी न सुनाई पड़े, देखिये! मिथ्या कल्यान करके सीता लक्ष्मण के सहित रामचन्द्रजी को बनबास दिया है अब केकयी के अधीन होकर भरत राज्य करेंगे ऐसी दशामें प्रजाओं को सुख कहां जैसे कसाई के द्वार पर बँधे हुए पशुओं के मरण का दिन निश्चय रहता है वैसेही अब अयोध्या वासियों को दुःख का समय निश्चित है, नहीं तो श्याम वर्ण पूर्ण चन्द्रमा के समान मुख-कान्ति वाले कमल नयन मधुर और सत्य बचन बोलने वाले सिंहके समान पराक्रमी पुरुष श्रेष्ठ रामचन्द्रजी बनबास करते नगर में वह नागरिक स्त्रियाँ उस प्रकार बिलाप करने लगीं जैसे मृत्युके भय से मनुष्य विलाप करता है, इस भांति स्त्रियों के दुःख और बिलाप को सुनकर सूर्यनारायण शीघ्र अस्त गत को पहुंचे क्योंकि उन लोगों के दुःखको सूर्य भगवान नहीं सहन कर सके, नित्यके यज्ञ दान अध्ययन अध्यापन आदिके बन्द हो जानेसे वह अयोध्यापुरी अन्धकार मयी गुफाके समान होगयी, हाट बाजार का व्यवहार शान्त होगया था, मनुष्यों की शोभा मलीन होगयी थी आकाशमें तारे नहीं दिखलाई पड़ते थे इस प्रकार की अयोध्या में रामजी के वास्ते स्त्रियां ऊंचे स्वरोंसे रोदन कर रही हैं गीत नृत्य बाजा आदि से सब स्थान शून्य होगये रामजी के बिना अयोध्या बासियोंकी जो गति हुई उसका हाल बर्णन नहीं हो सकता है ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे अष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥४८॥

इधर रामजी पिताकी आज्ञा को स्मरण करते हुए शेष रात्रिमें उन ब्राह्मणों को तमसा के तटपर छोड़कर रथसे जो चले तो मार्ग में बहुत दूर तक आकर अपना नित्यकर्म अर्थात् स्नान संध्या बन्दन कर के कोसलपुरीको देखे, कोशलपुर के सीमान्त में फूले हुए बन बृक्षों को बनको बागको सर आदिकी शोभा देखते शीघ्र चलते हुए भी घो-

ड़ोंकी गति मन्द होगयी, इधर कोशलपुर बासी रामजी को रथ पर बैठे बनकी ओर जाते देखकर केकयी को दुर्वाद कहते हुए महाराज दशरथ को धिक्कार देने लगे, कि बड़े आश्चर्य की बात है जो महाराज दशरथ अपने पुत्रों से दुर्भाव करके प्रजाओं में निष्पाप व्यवहार करने वाले रामजी का त्याग किया है, जो रामजी जितेन्द्रिय हैं परम दयालु हैं गुणवान और धार्मिक ऐसे पुत्रको राजा बनबास दिया है ऐसे महाराज को धिक्कार है। ग्राम बासी मनुष्यों के ऐसे बचन को सुनते हुए महाबीर रामचन्द्र नगर की शोभा को देखते हुए आगे को चले, इसके आगे कल्याण कारक जलको लेकर बहने वाली बेद श्रुति नाम नदीके पार उतर कर दक्षिण दिशामें अगस्त्य मुनिके आश्रम की ओर चले, कुछ दूर जाकर शीतल और मनोहर जलको लेकर बहने वाली गोमती नदी को देखे, समुद्र तक गमन करने वाली गोमती नदीको प्रणाम करके रथसे पार किये, और आगे को चले, इसके उपरान्त मयूर और हंस गणोंसे सेवित स्यन्दिका नाम नदी को पार किया, यह भूमिको महाराज मनुने पहिले इक्ष्वाकुको दिया था, वही देशको रामजी तथा जानकीजी को सुमन्त्रजी दिखलाये थे कि यहां तक कोशल नाम जन पद (जिला) का सीमा है, सुमन्त्रजी को इसप्रकार कहने पर मतवाले हंसके शब्द के समान पुरुषोत्तम श्रीरामजी बोले, कि हम कभी पिता माता के संग सरयू के पुष्पित बनमें अहेर खेलने को आया करते थे, परन्तु अहेर खेलने से कभी सन्तोष नहीं होता था, और ऐसा राजर्षियों की सम्मति भी है कि लोकमें राजाओं को अहेर में अनुराग करना चाहिये, इस लोकमें राजर्षि बनमें मृगाओं को श्राद्ध आदि कालमें मृगया करते थे। इस प्रकार रामचन्द्रजी सुमन्त्र के प्रति बचन को अर्थ युक्त करते हुए उसी रास्ते से चले ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकोनपंचाश सर्गः ॥ ४९ ॥

श्रीरामजी विशाल कोशलापुरी के अन्त में पहुंच कर अपने जन्म भूमि और देशके स्नेह से हाथजोड़ कर प्रार्थना करने लगे हे

काकुत्स्थ से परि पालित भूमि! तुमको और यहां के निवासी देवता तथा ब्राह्मणों को और इस देशको पालन करने वाले राजाको मैं प्रार्थना पूर्वक प्रणाम करता हूं, अब बन बास से लौट कर पिताके बचन रूपी ऋणसे उऋण होकर फिर पिता माता के सहित तुम्हारा दर्शन करूँगा, ऐसा कह कर कोशल नगरसे दर्शन के लिये आये हुए प्रजाओं की ओर हाथ उठाकर करुना से आंसूको बहाते श्रीरामजी बोले, आप लोगों ने जो कुछ हमारे ऊपर दया किये उसके बदले हम कृतघ्न होकर आप लोगों को लौटने की आज्ञा देते हैं आप लोग अपने अपने स्थान को जाइये और मैं पिता के बचन को पालन करने के लिये बनको जाता हूं। वे प्रजागण श्रीरामजी को प्रणाम किये और प्रदक्षिण करके बिलाप करते हुए धीरे २ अपने स्थानको चले, जैसे सायं काल के सूर्य अस्तगत को प्राप्त होते हैं वैसेही रामचन्द्रजी लोगों के बिलाप से असन्तुष्ट होते हुए रथ के द्वारा नयन पथसे अतीत होगये, अर्थात् धन धान्य से युक्त यज्ञ दान करने वालों से सम्पन्न देव मन्दिर और बाग तालाब रथ हाथी घोड़े हाथी आदि से समृद्ध कोसलदेश को अतिक्रमण करते हुए बुद्धिमान रामजी भोजराज के देशमें पहुंचे वहां जगत को तारा तरण करने वाली बिष्णु प्रिया निर्मल जलसे तीन मार्ग होकर बहनेवाली गंगाजी को देखा। बड़े बड़े ऋषि मुनि गण गंगाजी के तट पर निवास करते हैं, जहां देव लोक से देवता गंधर्व और अप्सरा और किन्नर आकर गंगाजी का सेवन करते हैं, और नागपत्नी देवपत्नि गंधर्वपत्नी सदा गंगाजी में जल क्रीड़ा करती हैं, श्रीमती गंगाजी देवताओंके स्नान पान के वास्ते गंगाजी आकाश से हिमालय पर आईं हिमालय से लोकको पवित्र करने के लिये जगत में आई है ऐसी गंगाजी की शोभाको श्रीरामजी देखने लगे, कि जलके अघात से मानो अट्टहास करही हैं और कहीं कहीं भँवर शोभा दे रहे हैं कहीं पर जल निश्चल और गंभीर दिखाई दे रहा है, कहीं कहीं

गभीर शब्द और कहीं भयंकर शब्द होरहे हैं, कहीं पर पाट का बहुत बिस्तार है कहीं उज्वल बालुका से शोभित है हंस सारस चक्रवाक कोकिला आदि अनेक प्रकार के पक्षीगण अनेक शब्दों से कलोल कर रहे हैं, कहीं कहीं किनारे के वृक्ष माला के समान शोभा देरहे हैं, कहीं कहीं अनेक प्रकार के पुष्पित कमलों से शोभायमान होरहा है, मलहीन निर्मल मणिके समान स्वच्छ जल चारो ओर फैल रहा है, बड़े बड़े गजराज जल क्रीड़ा कररहे हैं, मगर मछली घड़ियाल सर्प आदि से समन्वित शीवजी के जटा जूटसे भ्रष्ट होकर समुद की महिषी गंगा शृंगवेरपुरके प्रति महाराज रामजी पहुंच कर नाना प्रकार के तरङ्गों से कलोल करती हुई भागीरथी को देखकर सुमन्त्र से बोले, हे सुमन्त्रजी ! आजकी रात्रि यहां ही निवास करना चाहिये, हे सारथि ! नदी से नगीच पर पत्र पुष्प से शोभित इसी इंगुदी के वृक्षके नीचे आजकी रात्रि निवास करो, और सकल पापको नाश करने वाली गंगाजी में स्नान आदि करके रात्रि बिताओ रामजी के बचन को लक्ष्मण और सुमन्त्र स्वीकार किये, सुमन्त्रजी रथके घोड़ोंको इंगुदी के नीचे स्थिर किये, रामचन्द्रजी सुन्दर और मनोहर इंगुदी वृक्षको देखकर लक्ष्मण और सीताके सहित रामजी रथसे उतर पड़े । इसके उपरान्त सुमन्त्रजी भी रथ से उतर कर घोड़ों को रथसे मुक्त करके बिनय पूर्वक वृक्षके नीचे बैठे हुए रामजी के समीप गये, वहां निषादों के राजा गुहनाम परम धार्मिक और प्रतापी तथा श्रीरामजी के सखाके समान था, वह श्रीरामजी के आगमन को सुनकर अपने जातिके बुड्ढे मन्त्रियों सहित रामजी के शरणमें आया, श्रीरामजी निषादों के सहित गुरु को आते देखकर संमान पूर्वक लक्ष्मण के सहित रामजी उनको आगे से लिवा लाये और आलिंगन करके आसन पर बैठाये, परम भक्त गुह श्रीरामजी को साष्टाङ्ग दण्डवत् करके विनीत भावसे अर्घ्यको देकर बोले हे भगवन् ! यह समस्त भूमि आपकी है, हम आपके सेवक हैं आप हमारे स्वामी हैं इस सुन्दर राज्य को प्रति पालन कीजिये, और अपने

योग्य खानेके पदार्थ भोग के पदार्थ पीने और चाटने के पदार्थ को तथा शय्या रथ हाथी घोड़े आदि सब आपके लिये उपस्थित है, गुह के इस प्रेम के बचन को सुन कर रामचन्द्रजी बोले, कि हमारे लिये जो आपने अपने घरसे इतनी दूर पैदल आकर अपने प्रिय बचन से यह समस्त भूमि का प्रभुत्व जो आपने मुझे दिया है हम उसीसे पूजित और प्रसन्न हैं यह कह कर रामजी प्रेमके मारे अपने भुजाओं से पकड़ कर आलिंगन किये और बोले कि, हेगुह ! बड़े आनन्द की बात है जो आज तुमसे भेट हुई, कहो तुम्हारे बन्धु भाई कुशल से हैं तुम्हारे राष्ट्रमें मित्रों में और बनमें कुशल तो है, यह जो कुछ तुमने भक्ति श्रद्धा से मुझे सत्कार के लिये भेट दिया है उसको मैं अंगीकार करके तुमको प्रतिग्रह देता हूं, कुश चीर मृग चमको धारण करने वाले मुझको पिताकी आज्ञाको पालन करने के लिये बनबासी और तपस्वी जानो, इस समय हम अपने रथके घोड़ों के अन्न के अतिरिक्त दूसरी वस्तु हमको नहीं चाहिये, इतना करने से आज आप से हम पूजित होगये क्योंकि यह घोड़े हमारे पिता दशरथ को प्रिय हैं, इनको सन्तुष्ट करने से हम अत्यन्त सन्तुष्ट होंगे, इसलिये घोड़ोंको खाने पीने के वस्तु को अर्थात् दूध आदि पीने को और घी शर्करादि युक्त चूर्ण को शीघ्र दीजिये, श्रीरामजी की आज्ञानुसार गुहके सेवकों ने शीघ्रही अश्वों के लिये योग्य आहार को दिया, इसके उपरान्त श्रीरामजी सायंकाल की संध्या से निवृत्त होकर लक्ष्मण जीने अपने स्वयं जलको लियाकर रामजी को केवल जल भोजन के लिये दिया, श्रीरामजी तीर्थ के जलको पीकर पृथिवी पर सूतने के लिये सीता के सहित इंगुदी के नीचे आये लक्ष्मणजी श्रीरामजी के चरण को धोया, श्रीरामजी सीता के सहित बिश्राम किये और लक्ष्मण तथा गुह और सुमन्त्र राम चर्चा करके रातको जागरण किये, यशस्वी और मनस्वी महात्मा रामचन्द्र सदा सुख पूवक शय्या पर शयन करने वाले इस प्रकार तृणकी शय्या पर वृक्षके नीचे रात्रिको व्यतीत किये ॥

इति बाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे पंचाशः सर्गः ॥ ५० ॥

श्रीरामजी के रक्षाके वास्ते जागरण करते हुए लक्ष्मणजी को देख कर और रामजी को पृथिवी पर शयन किये देख कर दुःख से गुह बोला, हेराघवेन्द्र ! हेतात ! यह सुख देने वाली शय्या आप के लिये रची गयी है इस पर यथा सुख आप विश्रान्त कीजिये और मैं रामजी की रक्षा करने के लिये रात्रिको जागरण करूंगा, हे लक्ष्मणजी ! सत्य से और सत्य आपके शपथ से कहता हूं कि जगत में रामचन्द्र से बढ़कर और कुछ हमको प्रिय नहीं हैं, श्रीरामजी के प्रसाद से लोकमें कीर्ति और धर्म तथा पुष्कल अर्थ काम की प्राप्ति होती है, सो मैं प्रिय मित्र रामचन्द्रजी को सीता के सहित शयन करते हुए सब प्रकार से धन्वा बाणको लेकर अपने जातियों के सहित रक्षा करूंगा हे लक्ष्मणजी ! इस बनमें सदा घूमने से हमसे कोई बात छिपी नहीं है हम अपने चतुरंगिणी सेना से शत्रुओं की सेना का बिजय कर सकता हूं, लक्ष्मणजी गुहके बचन को सुन कर बोले कि हे पुण्यवान ! धर्म मार्गपर चलते हुए हम लोगों को कुछ भय नहीं है आप भी रामजी की रक्षा कीजिये, हेनिषादराज ! श्रीरामजी और सीताजी को भूमि पर शयन करते देख कर अपने जीवन के सुख पूर्वक निद्राको मैं कैसे लाभ कर सकता हूं, जिन रामचन्द्रजी के सामने युद्धमें देवता और दैत्य नहीं ठहर सकते, तीनों लोकमें जिनका सामना कोई नहीं कर सकता ऐसे रामजी सीताके सहित तृणकी शय्या पर पड़े हैं देखो, जिनको मन्त्र तप और अनेक प्रकार के यज्ञादि अनुष्ठान करने से महाराज दशरथ अपने सदृश एक पुत्रको लाभ किये, अब श्रीरामजी के वियोग में महाराज अपना छोड़ देंगे राजाके मरने से पृथिवी शीघ्र बिधवा होगी, कौशल्या तथा राजा और हमारी माता सुमित्रा इनके जीवन की संभावना हमको नहीं है यदि अब तक जीवते भी होंगे तो आज की ही रात्रि तक उनके जीवनकी आशा है, और राजा के दुःख और शोक से पीड़ित होकर अयोध्यापुरी अवश्य नाशको प्राप्त होगी, ज्येष्ठ पुत्र महात्मा रामचन्द्रजी को बिना देखे महाराज दशरथ प्राणको नहीं रख सकते

हैं, राजाको मरने पर कौशल्या भी अपना प्राण नाश करैंगी, कौशल्या के अतिरिक्त हमारी माता सुमित्रा भी प्राणको छोड़ेंगी इस प्रकार मरणकाल उपस्थित हो जानेपर पिताके प्रेतकार्यको भरथजी करैंगे, और पिताकी राजधानी में सुखसे बिहार करैंगे, जिसमें बड़े बड़े किला और महलें बने हैं, चारो ओर सड़कों पर फल पुष्प वाले वृक्ष लगे हैं, रथ हाथी घोड़ा और गणिका से राजभवन परिपूर्ण है, अनेक प्रकार के बाजे समय समय पर बजते हैं, नगर के प्रजाओं से राजद्वार सदा खचाखच भरा रहता है, भांति भांति के बाबली बने हैं, बगीचे लगे हैं, चारो ओर एक एक अवस्था के मनुष्यों के झुंड बिहार करते हैं, ऐसे राजधानी में भरतजी सुखसे बिहार करैंगे, अगर महाराजजी जीवित रहैंगे तो बनसे लौटकर फिर भी महाराज का दर्शन करैंगे, सत्यप्रतिज्ञ रामजी के सहित वनबास से कुशल पूर्वक लौटकर अयोध्या में प्रवेश करैंगे । इस प्रकार दुःखकी बात करते करते रात्रि व्यतीत हो गयी इस प्रकार राजपुत्र और परम मित्र गुह आंसुओं को बहाते दुःखसे ऐसे पीड़ित होगये जैसे ज्वर से आतुर हाथी पीड़ासे व्याकुल होजाती है ॥

इति बाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे एकपंचाशः सर्गः ॥ ५१ ॥

रात्रि बीत जाने के बाद प्रातःकाल श्रीरामजी उठकर लक्ष्मणजी से बोले, भगवती रात्रि बीत गई अब सूर्योदय का समय आया है, यह कृष्ण काग और कोकिला बोल रहे हैं, मयूरों का शब्द सुनाई देरहा है, इसलिये हे सौम्य ! गंगाजी के उसपार चलना चाहिये श्रीरामजी के बचनको सुनकर मित्रनन्दन लक्ष्मण गुहकोआज्ञा दिये, गुह रामचन्द्रजी की आज्ञाको लक्ष्मणसे पाकर शीघ्रही अपने मन्त्रियोको बुलाकर आज्ञा दिये, इस गंगाजीके जलको पार करनेके लिये शीघ्र नावको लेआओ, निषादराज की आज्ञा सुनकर उनके मन्त्रिगण सुन्दर नौकालियाकर अपने राजा के समीप निवेदन किया, इसके उपरान्त निषादपति गुह नौका को देखकर हाथ जोड़कर रामजीसे बोले, भगवन् ! गंगाजी को पारकरने के लिये नौका तइयार है और क्या आज्ञा है नौका पर शीघ्र चढ़िये, गुह के बचन को सुनकर श्रीरामजी बोले आप कृतकार्य

होगये अब खुरपी पेटी और सीताजी के वस्त्र आभरण को नौकापर रखिये, कवच खड्ग तूणीर धन्वा आदि को लेकर सीता के सहित रामजी गंगाजो के समीप पहुंचे। रामचन्द्रजी को इस प्रकार जाते देखकर सुमन्त्रजी विनीत भावसे हाथ जोड़कर बोले, हे राघव श्रेष्ठ ! अब हम क्या करें, रामचन्द्रजी सुमन्त्र के वचन को सुनकर अपने दाहिने हाथ से सुमन्त्र को स्पर्श करके बोले, हेसुमन्त्र जी ! सावधान होकर अब आप राजा के समीप जाइये, अब हम लोग यहां से पैदल वनको जावेंगे, अपने सहित रथ के लौटने को सुनकर पुरुष श्रेष्ठ रामजी से सुमन्त्रजी बोले, हेभगवन् ! जिस दैव ने आपको स्त्री और भाई के सहित इसप्रकार दुःख को दिया उस दैवको अनुशासन को अतिक्रमण नहीं करना चाहिये, हेरामजी ! यदि आपको इस प्रकार का दुःख प्राप्त है तो ब्रह्मचर्य अध्ययन प्रजापालन आदि का फल निष्फल हुआ ! हेरामचन्द्रजी ! इस प्रकार पिता के बचन को पालन करने से आपने तीनों लोक को जीत लिया है, परन्तु आपने अपने शरण से मुझे वंचित करके जो दुःख भोगने वाली कैकयी के अधीन भेजते हैं यह योग्य नहीं है इस प्रकार सुमन्त्रजी कहते हुए श्रीरामजी को दूर में देखकर दुःख से रोदन करने लगे, पुनः चित्त को धैर्य देकर पवित्र जल से आचमन किये, श्रीरामजी सुमन्त्र को दुःखी देखकर बारबार इस प्रकार समझाने लगे कि आप महाराज दशरथ के तुल्य हैं, जैसे हमारे विषय में महाराज ने शोच नहीं किया है वैसे आप भी चिन्ता को न कीजिये, वृद्ध और शोक से पीड़ित महाराज अयोध्यापति को इस प्रकार समझाइये कि केकयी के अनुकूल भरतजी के प्रिय के वास्ते आपने जो आज्ञा श्रीरामजी को दिये हैं उसका उन्होंने उचित अनुष्ठान किया है, हे सुमन्त्रजी ! महाराज के मनमें जिसमें अप्रिय न लगे उसीप्रकार से हमारे कल्याण की यह बात कहना कि अयोध्यापुरी से च्युत होनेकी कुछ भी चिन्ता राम लक्ष्मण को नहीं है, चौदह वर्ष के बाद लौटकर आनेसे मुझको लक्ष्मण और सीताको महाराजदेखेंगे ।

हे सुमन्त्रजी ! यह बात हमारे माता कौशल्या केकयी सुमित्रा और राजमहिषियों से बार बार कह देना और हम लोगों की कुशलता को कहकर लक्ष्मण सीता और हमारा प्रणाम पितामाता से कहदेना, इसके उपरान्त पिता से यह कहना कि भरतजी को शत्रुघ्न सहित शीघ्र बुलाकर अभिषेक देदेवें, भरत के युवराज बनाकर हमारी चिन्ता न करें। और भरतजी से कहियेगा कि जिस प्रकार महाराज कौशल्या केकयी आदि रानियों तथा प्रजाओं में जैसा व्यवहार करते थे वैसाही करेंगे, भरतजी जैसे केकयी का पालन करें वैसेही सुमित्रा और कौशल्या की भी उन्हें पालन करना चाहिये, पिताजी की प्रिय इच्छा से भरतजी अभिषेक को अंगीकार करके ऐसा कार्य करें जिसमें दोनों लोक में सुख लाभ होवे, श्रीरामजी लौटकर सुमन्त्रजी को धैर्य्य दिया, सुमन्त्रजी श्रीरामजी के बचनको सुनकर स्नेह से बोले, हे रामचन्द्रजी! स्वामी और सेवक के समान व्यवहार न करके स्नेह से जो कुछ अनुचित उचित बचन कहैं उसको आप अपना भक्त जानकर क्षमा करिये, आपको बिना लौटाये किस प्रकार अयोध्यापुरी में जावेंगे, लौटती हुई रथ को राम के सहित लोग जानकर दर्शन के लिये आवेंगे फिर रथ को खाली देखकर प्रजागण अनाथ के समान नाश हो जायेंगे, जैसे सेना के नाश होजाने पर वीर की जो गति होती है वही सारथी सहित रथ को शून्य देखकर प्रजाओं की दशा होगी, आपके राज्य से बाहर निकलने के समय जो दुःखमय शब्द हुआ उससे सौगुणा अधिक दुःख रथ को शून्य देखकर होगा, और हम कौशल्या से क्या कहेंगे यदि कहेंगे कि रामजी को उनके मामा के घर पहुंचाया है इस प्रकार के प्रिय बचन को असत्य रूप में कहना होगा और यदि बन जाने को कहेंगे तो सत्य होगा किन्तु इसको सुनकर राजा रानी अपना प्राण छोड़ देंगे। इसलिये आपको छोड़कर हम अयोध्यापुरी को जाना नहीं चाहते, हमको भी आप अनुमति दीजिये कि आपके साथ बन में चलें, यदि हमारे कहने को आप नहीं मानेंगे तो रथके सहित अग्नि

में प्रवेश करके अपने प्राण को छोड़ दूंगा, नहीं तो आप प्रसन्न होकर हमको साथ ले चलना स्वीकार कीजिये, जिसमें हम आपकी सेवा करके परम गति को लाभकरें । बनमें रहते हुए आप की सेवा करने से हमारे लिये अयोध्या तथा वैकुण्ठ का सुख तुच्छ है, आप को छोड़कर अयोध्या का जाना हम स्वीकार नहीं करते । चौदह वर्ष तक बन में आपके साथका रहना क्षण भर के समान है, हेभगवन् ! आप सेवकों पर दया करनेवाले हैं, भक्त और सेवक का कभी नहीं त्याग होता है. इस प्रकार अनेक दीनवचन को सुनकर परम दयालु रामजी सुमन्त्रजीसे बोले, हेस्वामिवत्सल सुमन्त्र! आपकी परमांभक्तिको हम जानते हैं,परन्तु जिस कार्य के लिये हम आपको अयोध्यापुरी भेजते हैं उसका कारण सुनो, आपको अयोध्या जाने से हमारी माता केकयी को मालूम हो जायगा कि रामचन्द्रजी बन को गये । केकयी को यह सूचना देना हमारा मुख्य कार्य है इसलिये आपको भेजते हैं, आप हमारे और महाराज दशरथ के हितके लिये अयोध्यापुरी को जाओ, इस प्रकार कह कर सुमन्त्रजी को बार बार धैर्य दिया । इसके उपरान्त निषादपति गुहसे बोले, हे गुह ! ग्राम सन्निकट में हमारा रहना उचित नहीं है, इसलिये, आश्रमोचित जटा आदिको धारण करना चाहते हैं। इस प्रकार लक्ष्मण और सीताके अनुमतिसे फल मूल आहार और जटा आदि को धारण करके आगे चलना चाहते हैं,इस कारण आप वटके दूधको लाइये । श्रीरामजीकी आज्ञाका मादर शिरोधार्य कर के गुह शीघ्र वटवृक्षके दूध को लादिया, दीर्घ बाहु पुरुष श्रेष्ठ रामजी और लक्ष्मणजी वट के दूध से जटा बनाकर जटिल होगये, अब चीर जटा कमण्डल को धारण किये राम लक्ष्मण ऋषि के समान शोभा को प्राप्त हुए, वानप्रस्थ के वेष में प्राप्त रामजी सहाय गुह से बोले,—हे गुह ! सेना में धनागार में दुर्ग और जिले में दुःख से रक्षा करने योग्य राज्य में कुशल हो, इस प्रकार गुह से कहकर शीघ्र भागीरथी गंगाजी के तटपर पहुंचे । किनारे पर नौका को देखकर उसपार जाने के लिये लक्ष्मणजी से बोले,—

हे लक्ष्मणजी ! इस नौका पर धीरे धीरे सीताजी को चढ़ाइये, लक्ष्मण जी भाई के शासन को सुनकर उनकी इच्छा के अनुकूल पहिले सीता जी को नौका पर चढ़ाकर फिर लक्ष्मणजी अपने चढ़े, इसके उपरान्त श्रीरामजी अपने स्वयं नौका पर बैठे, तब निषादपति गुह अपने मन्त्रियों से नौका चलाने की प्रेरणा किया, महाराज रामजी नौका पर बैठकर ब्रह्म और क्षत्र मन्त्रको जप करने लगे और यथा विधि सीता तथा लक्ष्मण के सहित नदी के जल से आचमन करके गंगाजी को प्रणाम किया, सुमन्त्र और सेना सहित गुह की अनुमति से राम जी नौका चलाने वालों से प्रेरणा किये,—नौका चलाने वाले समाहित होकर शीघ्रही जल को अति क्रमण करने लगे । जब नौका बीच में गई तब जानकीजी विनीत होकर गंगाजी से प्रार्थना करने लगीं हे माता ! महाराज दशरथ के यह पुत्र हैं पिता के बचन को पालन करने के लिये बन को जाते हैं इनकी रक्षा तुम करो, जब चौदहवर्ष बनवास करके पति और देवर के सहित कुशल पूर्वक तुम्हारी कृपा से आवैंगे तो तुम्हारी पूजा करैंगे । हे देवि ! तुम ब्रह्मलोक से सम्बन्ध रखने वाली हो और समुद्र की धर्मपत्नी हो कल्याण करो, हे माता ! हम तुमको नमस्कार करती हूं, जब हमारे स्वामी कुशल से आकर राज्य को प्राप्त करैंगे तब तुम्हारी पूजा के निमित्त एक लाख गौ और अनेक वस्त्र ब्राह्मणों को देवेंगी और हजारों घड़ा सुरा और महा बलिदान से आपकी पूजा करूंगी और तुम्हारे किनारे जितने तीर्थ और देवता हैं उनका भी यथा योग्य पूजन करूंगी । इस प्रकार गंगाजीसे कहती हुई जानकी दक्षिणके तटपर पहुंच गयीं,किनारेपर पहुंच कर रामजी लक्ष्मण और सीता के सहित नौकासे उतर पड़े। इसके उपरान्त रामचन्द्रजी लक्ष्मण से बोले, हेलक्ष्मण ! सीताजी के रक्षाके लिये सावधान होओ, हमारे सदृश मनुष्यों को ग्राम अथवा बनमें स्त्रियों की रक्षा अवश्य करना चाहिये इसलिये आप आगे चलिये जानकी तुम्हारे पीछे चलेंगी, तुम्हारी और सीताकी रक्षा करते हुए सबके पीछे हम

चलेंगे, क्योंकि यहां से लेकर दुष्कर क्रिया का आरंभ होगा इसलिये जानकी को अति प्रयत्न से रक्षा करना चाहिये । श्रीरामजी के वचन को सुनकर लक्ष्मणजी आगे चले सीता उनके पीछे चलीं उन दोनों की रक्षा करते हुए श्रीरामजी पीछे चले, श्रीरामजी गंगाजी के पार पहुंच कर सुमन्त्र को दृष्टि लौटाकर देखते हुए आंसुओं को बहाने लगे । लोकपालके समान प्रभावशाली रामचन्द्रजी महानदी को पारकरके धन धान्य से पूर्ण वत्स देशको पहुंचे । महापराक्रमी रामजी बनमें आहार करने के योग्य सायंकालमें भोजन करने के लिये चार मृगाओं का बध करके आगे चले ॥

इति वाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे द्विपंचाशः सर्गः ॥ ५२ ॥

इसके पीछे श्रीराम लक्ष्मण जानकीजी वृक्षके नीचे बिश्राम करके सायंकाल की संध्या की उपासना किये, इसके उपरान्त श्रीरामजी लक्ष्मणजी से बोले कि आज नगर से बाहर अर्थात् बनकी पहिली रात्रि है, और यह सुमन्त्र से रहित रात्रि है, इस रात्रि में सुमन्त्रकी उत्कण्ठा न करके आज से अवधि पर्यन्त सीताको योग क्षेम करने के लिये हम लोगों को जागरण करना चाहिये, क्योंकि यहां कोई कुटी आदि नहीं है इसलिये अपने से तृणपत्ता आदि लिया कर शयन करना चाहिये, श्रीरामजी पृथिवी पर बैठकर लक्ष्मणजी के हित के लिये सुन्दर कथा कहने लगे कि महाराज का समय तो दुःख से व्यतीत होता होगा किन्तु कैकयी अपने मनोरथ के फल को देखकर सन्तुष्ट होंगी, नहीं तो कैकयी भरत का आगमन देखकर राज्य के कारण अपना प्राण छोड़ देती, कामकी प्रेरणा से कैकयी के अधीनमें पड़े वृद्ध महाराज दशरथ कैकयी के मनोरथ को बिना पूर्ण किये अपने कृतकार्य कैसे होते, इसलिये इस दुःख को और राजा के मति के विपर्यको देखकर कामकी महिमा हमको श्रेष्ठ जान पड़ती है, नहीं तो कौन ऐसा ज्ञानी पुरुष है जो स्त्री के वास्ते आज्ञाकारी पुत्र को त्यागकरता । कैकयी के पुत्र भरत के स्त्री के सहित हर्ष होंगे क्योंकि

इस देशके एक राजा होंगे, जो कोई अर्थ धर्मको छोड़कर काम का पालन करेंगे वह महाराज दशरथ के समान शीघ्रही दुःखके भागी होंगे। अपना बनवास और दशरथ का मरण तथा केकयी के अनुकूल भरत को राज्य हम ऐसाही मानते हैं, इस समय केकयी सौभाग्य मदसे मोहित होकर कौशल्या और सुमित्रा को मेरे दुःखसे दुःखी देखकर प्रसन्नता पूर्वक अभिमान करती होगी, हम लोगों के कारण माता कौशल्या और सुमित्रा दुःखी होंगी इसलिये हे लक्ष्मण! तुम प्रातः काल अयोध्यापुरी को जाओ। हम सीताके सहित अकेले दण्डक बनका सेवन करेंगे परन्तु तुम अनाथ कौशल्या के वास्ते सनाथ होओ,। हे धर्मतज्ञ? क्षुद्रकर्मा केकयी द्वेष और अन्याय से युक्त हमारी माता सुमित्रा और कौशल्या को कहीं बिष न देदेवे, जन्मान्तरमें भी स्त्रियां पुत्रके बियोग को नहीं देखतीं सो हमारी माताओं के लिये सन्मुख में उपस्थि है। चिरकाल से दुःख और सुखको सहन करके उन लोगों ने हमारा पालन पोषण किया सो उनके सुख देनेके समय छोड़कर हम लोग यहां आये इस कारण हम लोगों को धिक्कार है। हे लक्ष्मण! हमारे समान सन्तान कोई भी स्त्री उत्पन्न न करे जो सन्तान पिता माता को दुःख देने वाला हो, कौशल्या हमारी माता मन्दभागिनी हैं जो हमारे कारण दुःख सागर में पड़ी हैं, हे लक्ष्मणजी! क्रोध पूर्वक हम अयोध्या और पृथ्वी तक को अपने बाणों से नाश कर सकता हूं परन्तु ऐसे समय में पराक्रम दिखलाना उचित नहीं है, अधर्म के भयसे और परलोक के भयसे हम अपने अभिषेक का कार्य स्थगित किया है, निर्जन बनमें इस प्रकार अनेक करुणा के बातों से बिलाप करके आंसुको बहाते मौन हो, बैठे बैठे रात्रिको व्यतीत करने लगे श्रीरामजी के बिलाप करने के बाद लंबीश्वास लेकर लक्ष्मणजी बोले,—हे श्रीरामचन्द्रजी! जैसे चन्द्रमा के बिना रात्रिकी शोभा नहीं होती वैसे तुम्हारे बिना अयोध्यापुरी की निश्चय वह शोभा नहीं होगी। आपको सन्ताप करना उचित नहीं है क्योंकि आपके सन्ताप से

हमको और सीताजी को अत्यन्त विषाद होता है, जैसे जलसे बाहर मछली एक क्षण भी नहीं जी सकती वैसे हम और जानकी आपकी सेवाके बिना क्षणभर भी अपने जीवन को नहीं रखसकते । हे श्रीरामजी ! आपके बिना पिताको माता सुमित्रा और शत्रुघ्न तथा स्वर्ग को भी देखने के लिये हम इच्छा नहीं रखते । इसके उपरान्त रामचन्द्र और लक्ष्मणजी न्यग्रोध वृक्षके नीचे पत्तेकी शय्या लगाकर सीताके सहित बिश्राम किये । रामचन्द्रजी लक्ष्मण के बनबास के प्रति आदर पूर्वक इस प्रकार लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर बनवास के अवधि पर्यन्त लक्ष्मण को अपने साथ रखने को अंगीकार किया । और महाबली राम लक्ष्मण सिंहके समान निर्जन बनमें निशंक बिहार करने लगे ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे त्रिपंचाशः सर्गः ॥५३॥

इसके उपरान्त श्रीराम लक्ष्मणजी उसी बृक्षके नीचे रात्रिको व्यतीत करके प्रातः काल उस देशसे आगेको चले, जहां भागीरथी गंगा यमुना से संगम किया है उस स्थानको अनेक बनको लंघन करते हुए पहुंचे । वह राम लक्ष्मण संगमकी अनेक प्रकार की मनोहर भूमि और सुन्दर देशोंको वहां जाकर देखे, कुशलता पूर्वक फल पुष्प से बन बृक्षोंकी शोभा को देखते हुए दिनके अन्तमें रामजी लक्ष्मण से बोले, हे लक्ष्मणजी प्रयाग के चारो ओर उत्तम धूमको देखो, अब यहांसे मुनियों का सान्निध्य है हम ऐसा मानते हैं । निश्चय हम लोग गंगा यमुनाके संगम पर पहुंचे क्योंकि यहां दोनों के जल संगम का महान शब्द होता है, बनचरों ने बनमें उत्पन्त होने वाले अनेक प्रकार के बृक्षों को काटा है और यह नाना भांतिके आश्रमों के बृक्ष दिखाई पड़ते हैं, सूर्यको अस्ताचल पर आरूढ देखकर धनुर्धारी श्रीरामजी और लक्ष्मणजी सीताजी के सहित मृगा और पक्षियों को त्रासित करते हुए भरद्वाज मुनिके आश्रम पर पहुंचे । सीताजी के सहित राम लक्ष्मणजी आश्रममें पहुंच कर मुनिके दर्शन की इच्छा

से दूरमें ठहरे शिष्य के द्वारा मुनिको सूचना देकर शिष्यके साथ अपने आश्रम में प्रवेश किये, वहां जाकर देखते हैं त्रिकाल को जानने वाले मुनिजी बैठे हैं, तीक्ष्ण व्रत धारण करने के प्रभाव से उनके शरीर से तेज निकल रहा है, शिष्यगण चारो ओर बैठ हैं अग्निहोत्रकी अग्नि प्रज्वलित होरही है ऐसे भरद्वाज मुनिको देखकर सीता और लक्ष्मण के सहित श्रीरामजी प्रणाम किये इसके उपरान्त श्रीरामजी भरद्वाज मुनिको अपना परिचय देने लगे, हे भगवन्! राम लक्ष्मण हम दोनों का नाम हैं, हम लोग अयोध्यापुरी के राजा महाराज दशरथ के पुत्र हैं और यह जनक की कन्या है और हमारी प्रियभार्या है, यह मेरे साथ बनको आई हैं, हमको जब महाराज दशरथ ने बनबास की आज्ञा दिये तब प्रिय सखा लक्ष्मण हमारे अनुकूल बनबास रूप व्रतको धारण करके हमारे साथ आये हैं, हे भगवन्! पिताके नियोग से हम तपोबन में आये हैं, यहां फल मूल जल खाकर बानप्रस्थ धर्मका पालन करेंगे। श्रीरामजी के धीर बचन को सुनकर धर्मात्मा भरद्वाज मुनि अर्घ्य और मधुपर्क दिये, और अनेक प्रकार के रस युक्त जल फल मूल तथा वृक्षके बकले के बस्त्रको सत्कार पूर्वक दिये, मुनीजी का सत्कार करना देखकर आश्रम के मृगापक्षि आदि स्वागत के व्याज से रामजी के चारो ओर बैठ गये, श्रीरामजी मुनिकृत सत्कार को अंगीकार करके बैठे तब भरद्वाज मुनि धर्म युक्त बचन को बोले, हे काकुतस्थ! पहिले यह बात सुने थे कि रामावतार होगा तब रामजी आपके आश्रम में आवेंगे, सो वह स्वरूप आज हमने अपने आखों से देखा, भरद्वाज मुनिके बचन को सुनकर सकल प्राणियों के हितचाहने वाले रामचन्द्रजी शुभ बचन को बोले, हे भगवन्! इस आश्रम से दूर नगर और जन पद है वहां के लोग वैदेही आदिके दर्शनार्थी हैं इसीके लिये वह लोग इस आश्रम में आवेंगे ऐसा हमको जान पड़ता है इस कारण इस आश्रम का रहना हमको श्रेष्ठ नहीं जान पड़ता। हम को कोई एकान्त स्थान बताइये जिसमें जानकी जी सुखसे निवास

करें, और हम लोग भरतहित विहार करें, श्रीरामजी के शुभ वचन को सुनकर अर्थ युक्त वचन भरद्वाज मुनि बोले, हे तात ! इस हमारे आश्रम से दश कोस पर चित्रकूट नाम पर्वत है, उस पर्वत पर सिद्ध चारण गंधर्व ऋषि मुनि निवास करते हैं, वह पवित्र स्थान है, वहां पर बानर भालू अनेक रहते हैं, जब मनुष्य चित्रकूटके शिखर को देखता है, तबसे उसका मन वहां हरण हो जाता है, वहां पर हजारों वर्ष से ऋषि मुनि विहार करते हैं अति वृद्ध होने पर भी ऋषिगण तपस्या के द्वारा उस स्थान को मानो स्वर्ग बना दिया है, वह चित्रकूट का एकान्त स्थान सुखको देनेवाला है आपकी इच्छा हो चाहे आप यहां रहैं चाहे चित्रकूट पर रहैं, रामचन्द्रजी भरद्वाज मुनिके अतिथि सत्कार को लक्ष्मण और सीताके सहित सादर ग्रहण करके रात्रिकाल में प्रयाग में पवित्र कथा वार्ता को कहते सुनते सुन्दर भरद्वाज मुनिके आश्रममें सुख पूर्वक विश्राम किये, प्रातः काल श्रीरामजी उठ कर अपने नित्य कर्मों से निवृत्त होकर अग्नि के समान प्रकाशमान भरद्वाजमुनि के समीप जाकर रामचन्द्रजी बोले, हे भगवन् ! इस आश्रम में रात्रि को व्यतीत किये हैं अब चित्रकूट के प्रति हमारी यात्रा होगी, ऐसा आप जानिये, भरद्वाजमुनि श्रीरामजी की प्रार्थना को सुनकर कुछ फल मूल रामचन्द्रजी को देकर भरद्वाजजी ने रामजीको अपने आश्रम से बिदा किये, और उनको स्थान की प्रशंसा कह सुनाये, हे रामचन्द्रजी ! वहां चारो ओर पर्वतों का समुदाय है, उसपर देवता गन्धर्व किन्नर उरग आदि वास करते हैं, चारो ओर मयूरों के शब्द से वह स्थान शब्दायमान है, पुष्प फल को देनेवाले अनेक प्रकार के वृक्ष हैं, जगह २ बड़े बड़े हाथी और मृगालोग रहते हैं, नदियों के किनारे पत्थलों के चट्टान पड़े हैं पहाड़ों से झरने गिर रहे हैं, सीताजी के सहित भ्रमण करते हुए आप को वास करने योग्य वह स्थान हैं, उस स्थान को देखकर आपका हृदय आनन्दित हो जायेगा । हे रामजी ! प्रसन्न होकर टिटिहरी कोकिला मृगा मतवाले बहुत से हाथियों के

सुन्दर शब्द को सुनकर चित्तको प्रसन्न करते हुए क्रीणा पूर्वक अवधि पर्यन्त वहां निवास कीजिये ॥

इति वाल्मीकिये अयोध्या काण्डे चतुष्पंचाशः सर्गः ॥ ५४ ॥

श्रीरामजी महर्षि भरद्वाज को दण्डवत् करके चित्रकूट की ओर चले, भरद्वाजजी श्रीरामजी को प्रस्थित देखकर पिता पुत्र के समान स्वस्त्ययन करके मार्ग को दिखलाने के वास्ते महर्षि श्रीरामजी के साथ चलते हुए संगम पर रामचन्द्रजी से बोले, हे रामजी ! यह गंगा और यमुना का संगम है यहां से पूर्व को गंगा की धारा बहती है और पश्चिम यमुना है, अब यमुनाजी की शुद्ध धारा के उतरने के मार्ग को देखो, इसी मार्ग से यमुना नदी को नौका के द्वारा उतरकर आगे यमुना के तटपर श्याम नाम का एक वट वृक्ष है, उस वृक्ष पर अनेक प्रकार के पक्षीगण निवास करते हैं, उसके आस पास में सिद्ध लोग रहते हैं उस वृक्ष के नीचे निवास करियेगा अथवा उसको अतिक्रमण करके आगे एक कोस और जाने से नील नाम का बन दीख पड़ेगा वह यमुना तट का बन देवदारु और बैर के बृक्षों से शोभित है उसी बन में एक सुन्दर मार्ग है जिसमें कांट कुश नहीं हैं उसी मार्ग से आप चित्रकूट को पहुंचियेगा, इस प्रकार मार्ग को बताकर महर्षि भरद्वाज लौटने लगे तब सीता और लक्ष्मण के सहित रामचन्द्रजी मुनिको दण्डवत् करके आगे को चले, भरद्वाज मुनि के लौटने पर रामजी लक्ष्मण से बोले, हे लक्ष्मण ! हम लोग अत्यन्त पुण्यवान हैं देखो मुनि ने भी कितनी दया की है इस प्रकार बात चीत करते हुए सीता को आगे करके यमुना की ओर चले, यमुनाजी के तटपर पहुंचकर नदी के तरंग को देखकर नौका से हीन स्थान में रामचन्द्रजी चिन्ता करने लगे कि नदी के पार किस प्रकार होंगे, ऐसा विचार करके रामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी सूखे काष्ठ की नौका अपने हाथ बनाये, उस नौका पर उशीर वेत और जंबूकी शाखाओं से जानकीजी को बैठने का स्थान बनाया, उसपर रामजी की प्रिय भार्या जानकी

कुछ लज्जा करती हुई बैठीं, जानकीजी के बगल में उनका वस्त्र और भूषण रक्खा गया, और रामजी तथा लक्ष्मण जी काष्ठ का डाड़ा लेकर प्रसन्नता पूर्वक नौका को चलाने लगे, जब नौका नदी के मध्य भाग में आया तब सीता यमुनाजी को प्रणाम किया, हे देवि ! तुम्हारा कल्याण हो, तुम हमारे पतिव्रत की रक्षा करो, हम सौ घड़ा सुरासे और हजार गौ से तुम्हारी पूजा करूंगी। हाथ जोड़कर प्रार्थना पूर्वक चाहती हूं कि कुशल से जब रामचन्द्र लौटकर जब अयोध्यापुरी को आवेंगे तब मैं तुम्हारी पूजा करूंगी, इस प्रकार कहती हुई जानकी शीघ्रही नौका से यमुना नदी के पार पहुंची, वहां नौकाको विसर्जित करके यमुना बन अर्थात् नील नाम बनकी ओर चले, आगे चलकर यमुनाजी के तटपर शीतल छाया से युक्त श्यामनाम वट वृक्ष को देखकर जानकीजी प्रणाम करके प्रार्थने लगीं। हे वटवृक्ष ! आपको नमस्कार है आप हमारे पतिव्रत की रक्षा कीजिये, और मैं लौटकर आपकी कृपा से कौशल्या और यशस्विनी सुमित्रा को देखूं इस प्रकार कहती हुई सीताजी हाथ जोड़कर वृक्ष की प्रदक्षिणा किया अनुकूल याचना करती हुई जानकीजी को देखकर रामजी लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मणजी ! आप सीताजी के साथ आगे चलिये और धन्वा बाण को लेकर हम पीछे चलेंगे, सीताजी जो कुछ फल पुष्प के लिये प्रार्थना करें उसको शीघ्र दीजियेगा जिसमें सीताजी का मन उदास न होवे, ऐसे यमुना बन के एक एक वृक्ष की और पुष्प से शोभित लताओं की शोभा को देखकर जानकीजी श्री रामजी से पूछने लगीं यह कौन वृक्ष है इत्यादि के प्रश्न से युक्त जानकी को लक्ष्मणजी भांति भांति के वृक्षों के पुष्प और फलों को तोड़ २ कर सीताजी को देने लगे, तरह तरह की बालू की बेंदिया पर बैठे हंस लोग शब्द करते हैं ऐसे यमुना नदी के तट को देखकर जानकीजी का मन विह्वल होगया। इसके बाद एक कोश भूमि और आगे जाकर राम लक्ष्मण यमुना बन में बिहार करने वाले यज्ञ के योग्य अनेक मृगाओं का

बध किया, मोर हंस हाथी बानर भालू आदि सुन्दर शब्द से शोभित बन में नदी के तटपर विश्राम करने के लिये रामजी सीता और लक्ष्मण के सहित पहुंचे ।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे पंचपंचाशः सर्गः ॥ ५५ ॥

रात्रि को बीत जाने के बाद प्रातःकाल उठकर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मणजी ! पक्षियों के शब्द को सुनो हे परन्तप ! अब प्रस्थान का समय है, निद्रा तन्द्रा और परिश्रम को त्याग करिये श्री रामजी के बचन को सुनकर लक्ष्मण आदि सभी उठकर नदी के पवित्र जलसे अपना २ नित्यकर्म समाप्त किया, इसके बाद ऋषियों से सेवित मार्ग से चित्रकूट की ओर चले, मार्ग में चलते हुए रामचन्द्रजी लक्ष्मण और जानकीजी से बोले, देखो इस बसन्त काल में पालश के वृक्ष अपने अपने पुष्पों से अग्नि की शिखा के सदृश शोभा देते हैं देखो ये आम्र जामुन महुआ फालसा जंबीर आदि के वृक्ष अपने फल से नीचे को लटक गये हैं, और देखो यह शहद की मक्खियां पर्वतों पर शहद की छात को लगायीं हैं इन छातों की शोभा द्रोण के सदृश दिखाई दे रहा है, देखो रमणीय बन के देशमें पुष्पों की शय्या पर बैठकर कुक्कुट और मयूर बोलते हैं देखिये हाथियों के पीछे पक्षिगण शब्द करते हैं ऐसे ऊंचे शिखर से युक्त चित्रकूट पर्वत को देखो, यहां की भूमि सुन्दर और बराबर है हे तात ! ऐसे चित्रकूट के बन में हम लोग निवास करेंगे, इस के उपरान्त बनकी विचित्र शोभा को देखते हुए पैदल लक्ष्मण और सीता के सहित रामजी चित्रकूट को पहुंचे, उस मनोहर पर्वत पर अनेक प्रकार के पक्षी शब्द कर रहे हैं अनेक प्रकार के पुष्प फल से यहां के वृक्ष संपन्न हैं तालाओं में स्वादिष्ट जल भरे हैं लतायें वृक्षों पर कल्लोल करती हैं इस पर्वत के सुन्दर शिखर पर मुनिगण वास करते हैं यह स्थान वास के योग्य है, यहां के फल मूल जीविका के वास्ते हैं ऐसे स्थान पर हमलोग भी निवास करेंगे, यह परस्पर बात चीत करते हुए और पर्वत की रमणीय शोभा

को देखते सीता और लक्ष्मण के सहित रामजी वाल्मीकि मुनि के आश्रम पर पहुंचे, महर्षि को राम लक्ष्मण सीताजी साष्टाङ्ग दण्डवत किये, श्रीरामजी को देखकर महर्षि आनन्द के मारे विधिपूर्वक पूजाकरके बोले, आइये ऐसा कहकर स्वागत किये, रामचन्द्रजी अपना परिचय अर्थात अयोध्यापुरी के राजा महाराज दशरथ के हम लोग पुत्र हैं और यह मिथिलापति की कन्या जानकी हमारी प्रिय भार्या हैं, हम लोग पिता के आदेश से तपोवन देखने को आया हूं इस रमणीय और सुन्दर आश्रम में चिरकाल तक निवास करूंगा ऐसा महर्षि वाल्मीकी जी से कहकर लक्ष्मणजी से बोले,—हे लक्ष्मण ! मोटा और लम्बा काष्ठ काटकर ले आइये और रहने के योग्य पर्णशाला को बनाइये, श्रीरामजी के बचनको सुनकर लक्ष्मणजी अनेक प्रकार के काष्ठों को इकट्ठा किया चारो ओर काष्ठ की भिति को निर्माण करके मध्य में द्वार को बनाये जिससे वर्षा आदि का वारण होवे ऐसी पर्णशाला को युक्त होने पर फिर श्रीरामजी लक्ष्मणसी से बोले, हे लक्ष्मणजी ! अब आप कृष्ण मृगा के मांस को ले आइये जिससे वास्तु देवताओं का पूजन किया जावे, शास्त्र की विधिको याद करके नवीन गृहवास करने में वास्तु देवताओं का पूजन अवश्य करना चाहिये, शत्रुओं को नाश करने वाले लक्ष्मण भाई के बचन को सुनकर उनकी आज्ञा का यथोक्त पालन किया, इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजी फिर बोले, हे लक्ष्मणजी! कृष्ण मृग के मांस से हम पचास वास्तु देवताओं के लिये यज्ञ करते हैं आज ध्रुवसंज्ञक दिवस है आप भी शीघ्र यज्ञ कीजिये, प्रतापी लक्ष्मण यज्ञ के योग्य कृष्णमृगको मारकर प्रज्वलित अग्नि में हवन किये पुनः निरन्तर तप्त उस मांस को लेकर श्रीलक्ष्मणजी रामजी से बोले, यह कृष्ण मृग सर्वाङ्ग अर्थात् शिर से पादतक परिपक्व है, अब आप कुशलता पूर्वक इस तप्त मांस से देवताओं को भाग दीजिये, देवराज इन्द्र के समान श्री रामजी स्नान करके सकल यज्ञों के मन्त्रों से यज्ञ किये, समस्त इष्ट देवताओं को पवित्रता पूर्वक भाग देकर प्रसन्नता पूर्वक

आश्रम में प्रवेश करके वेदिस्थान पर वैश्व देव आदिको बलि देने के लिये बैठे पहिले वास्तु दोष शान्ति के वास्ते मंगल मन्त्रों का पाठ करके विधि पूर्वक जपको समाप्त किये इसके उपरान्त वैश्वदेव बलि और गणपति आदि देवताओं को सूक्ष्ममार्ग से स्थापन किये, इसके बाद जैसे देवगण सुधर्मा सभा में प्रवेश करते है वैसे पत्रकी पर्णकुटी में रामादि प्रवेश किये, श्रीरामजी चित्रकूट पर्वत पर पहुंचकर माल्यवती नदी के दर्शन से और अनेक प्रकार के पशु पक्षियों से अयोध्या के निष्कासन दुःख को विस्मरण होगये ॥

इति बाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे षट् पंचाशः सर्गः ॥५६॥

इधर श्रीरामजी के बियोग रूपी दुःखसे पीड़ित सुमन्त्रजी की गुणों की चर्चा करते हुए गुह के साथ गंगाजी के तटपर बैठे रहे, और गुह के परिचारकों ने गुप्त रूप से श्री रामजी के पीछे चले, जब रामजी भरद्वाजमुनि के आश्रम से होकर चित्रकूट आये और वहां वाल्मीकिमुनि के आश्रम में स्थान निर्माण करके निवास किये तब गुह के दूत जाकर सब वृत्तान्त गुह और सुमन्त्र से कहसुनाये, तब आर्तनाद से रोदन करते हुए सुमन्त्रजी गुह के साथ मिलाप करके रथ में घोड़ों को जोतकर अयोध्यापुरी को चले, श्रीरामजी के परिचित मार्ग को अतिक्रमण करते हुए दूसरे दिन सुमन्त्रजी अयोध्यापुरी को पहुंचे, यहां अयोध्यापुरी सूनी और मनुष्यों से हीन दिखाई देरही है ऐसी दशा अयोध्या की देखकर सुमन्त्रजी शोक से और भी व्याकुल हो गये, श्रीरामजी के दुःख रूपी अग्नि के प्रभाव से हाथी घोड़ा सेना मन्त्री तथा राजागण दग्ध के समान होगये, इस प्रकार नगर की दशा देखकर चिन्ता करते हुए नगर में प्रवेश किये,सुमन्त्र को देखते हुए हजारों मनुष्य रामजी के समाचार को पूछने के लिये दौड़े। गंगा नदी के तट तक शृंगवेरपुर श्रीरामचन्द्रजी को लक्ष्मण और सीता सहित पहुंचाकर रामजी की आज्ञा से हम लौट आये इसके आगे का बत्तान्त हमको नहीं मालूम है। रामचन्द्रजी गंगा के उस पार चलेगये

यह जानकर नगरवासी आंसुओं को बहाते अपने को धिक्कार देने लगे झुंड के झुंड मनुष्यों की भीड़ें हर एक जगह खड़े होकर परस्पर में कहने लगे कि इस रथ पर श्रीरामजी नहीं दीखपड़ते हैं अब हम सब नगरवासी हताश हैं प्रजाओं के इस प्रकार वचन को सुमन्त्रजी सुनने लगे और कहने लगे कि बड़े दुःख की बात है कि दान यज्ञ विवाह और सभा आदि में धर्मात्मा श्रीरामजी के दर्शन नहीं मिलेंगे, जो राम लोगों को पुत्र के समान पालन करते थे उनके सुख के वास्ते हम लोगों से कुछ नहीं बना, इस प्रकार कहकर नगरवासी चिन्ता को प्राप्त होगये जो स्त्रियां कभी गृह के बाहर नहीं निकलती थीं वह भी श्रीरामजी के वियोग में पीड़ित होकर अपनी अपनी अटारियों पर से रामजी की चर्चा करके विलाप करने लगीं, उनके रोने का शब्द चारो ओर सुनाई पड़ने लगे, सुमन्त्रजी इस प्रकार प्रजाओं से मिलते हुए राजद्वार पर रथ से उतर कर राजमहल में प्रवेश किये, सातयें फाटक पर मनुष्यों की भीड़ लगी थी, ऐसी दशा में सुमन्त्रजी को देखकर सभी अन्तःपुरवासी हाहाकार करके दौड़े, और महाराज दशरथ की स्त्रियां अपनी अपनी अटारियों परसे आंसुओं को बहाती हुई मौन होकर सुमन्त्रजी की बात सुनने लगीं, और आपस में कहने लगीं कि श्रीरामजी को रथ पर बैठाकर लेगये थे, अब रामजी को गंवाकर खाली रथ से आये, देखो कौशल्या की क्या गति होगी, इतने में सुमन्त्रजी पहले के समान श्रीरामजी का सब वृत्तान्त कह सुनाये स्त्रियांश्रीरामजीका चित्रकूट वास सुनकरविलाप करती हुईअपने अपने राजमहल में चली गयीं, इसके बाद आठयें फाटक पर कौशल्या के भवन में महाराज दशरथ के समीप सुमन्त्रजी गये, दशरथजी पुत्र शोक से ऐसे मलीन होगये हैं जैसे वर्षाकाल में कमल सुखजाता है। सुमन्त्रजी ने जाकर महाराज दशरथ को प्रणाम किये और श्रीरामजी का समाचार कह सुनाये, उस समाचार को सुनकर महाराज शोक से मूर्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़े, सुमित्रा और कौशल्या

पतित पति को उठाकर इस प्रकार बोलीं, हे महाराज! जिस केकयी के भय से आप रामचन्द्रजी का समाचार सारथी से नहीं पूछते हैं, वह भय छोड़कर अब आप सुमन्त्रजी से भाषण करिये, राजा से ऐसा कहकर कौशल्या शोक की मारी आंसुओं को छोड़ती हुई मूर्छित हो गयी, कौशल्या को बिलाप करती हुई और महाराज दशरथ को मूर्छित देखकर सब की सब स्त्रियां रोदन करने लगीं रनिवास में रोने के शब्द को सुनकर बाल वृद्ध वनिता समेत सकल नगरवासी प्रजा व्याकुलता से रोदन करने लगीं चारो ओर रोने के संकुश शब्द से अयोध्यापुरी फिर भी पहिले के समान होगयी ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे सप्तपंचाशः सर्गः ॥ ५७ ॥

इसके पीछे अनेक प्रकार के उपचार से महाराज दशरथ चेतना को पाकर श्रीरामजी का वृत्तान्त सुनने के लिये सुमन्त्रजी को बुलाये, शोकसे पीड़ित और रामजी के बियोग से चिन्तित महाराज दशरथ के समीप हाथ जोड़कर खड़े हुए। महाराज अत्यन्त दीन औ क्लेशित सुमन्त्रजी को देखकर बोले, मन्त्रिन्! धर्मात्मा रामजी वृक्षके नीचे किस प्रकार रहते हैं और सुखपूर्वक पृथिवीपर अनाथ के समान कैसे शयन करते होंगे, जिस रामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी के साथ चतुरंगिणी सेना चलती थी सो रामचन्द्रजी आज अकेले निर्जन बनमें कैसे निवास करेंगे, जिस बनमें सिंह व्याघ्र सर्प आदि निवास करते हैं उस बनमें सीताके सहित श्रीरामजी कैसे बास करेंगे, सुकुमारी तपस्विनी जानकीजी के सहित राम और लक्ष्मणजी किस भांति पैदल चलते होंगे, हे सुमन्त्रजी! तुम धन्यहो जो हमारे पुत्रों को बनमें जाते देखा है, बनमें पहुंच कर श्रीरामजी और लक्ष्मणजी तथा जानकीजी ने क्या कहा है, और रामजी कैसे बैठते हैं कैसे शयन करते हैं किस प्रकार बनके फल मूल को भोजन करते है वह सब वृत्तान्त कहो, इस प्रकार राजासे प्रेरित सुमन्त्र आखों में आंसू भर कर बोले, हे महाराज! पहिले रामजी ने कहा कि हमारी तरफ से पिताजी को साष्टाङ्ग दण्डवत कहना, और अन्तःपुरमें हमारी

आरोग्यताको कह कर सबको प्रणाम कह देना, और हमारी माता कौशल्या से हमारी कुशलता कह कर साष्टाङ्ग प्रणाम कहदेना, और यह सन्देश कह देना कि जैसे नित्य के स्वतन्त्र अनुष्ठान से अग्नि होत्रका पालन होता है वैसेही आप लोग ईश्वर के समान महाराज के चरण की सेवा करना, अपने अभिमान और अहंकार को छोड़कर वृद्ध महाराज दशरथ और केकयी के साथ विरोध न करें। और राज्यधर्मका स्मरण करके भरतकी आज्ञाको राजाके समान पालन करें यह सूचना माताओं को देकर इक्ष्वाकु कुलनन्दन श्रीरामजी पिताके वास्ते विज्ञप्ति दिये हैं कि प्रधान राज्य पर स्थित महाराज भरतजी को हमारे स्थान पर अभिषेक करें, इस प्रकार कह कर श्रीरामजी दुःख के आंसूको गिराने लगे, श्रीरामजी को दुःखी देखकर क्रोध पूर्वक लक्ष्मणजी लंबी श्वांस लेकर बोले हैं, कि महाराज ने किस अपराध से राज पुत्रका विवासन किये हैं, जिस वनवास से हम लोग पीड़ित हैं वह चाहे राजाकी अनुमति से हो अथवा केकयी के आग्रह से हो और यह निष्कासन रूप कार्य चाहे उचित हो अथवा अनुचित हो परन्तु हम लोगों को पीड़ा तो सब प्रकार से है श्रीरामजी का जो विवासन हुआ है वह केकयी के लोभ के कारण से है अथवा बरदान के कारण से है किन्तु सब प्राकार से यह अनुचित है, यह रामचन्द्र जी का विवास दैव की इच्छा से मानी जाय तौ भी रामचन्द्र के परित्याग में हम कोई कारण नहीं देखते. इसलिये पुत्र और स्त्रीका त्याग का उपपातक में गणना है, हम महाराज दशरथ को पिता नहीं जानते हमारे पिता भाई और स्वामी रामचन्द्रजी हैं। सकल लोक को हित चाहने वाले रामजी के इस दुष्कर्म से कौन मनुष्य भला कह सकता है। समस्त लोक को सुख देने वाले धार्मिक रामचन्द्रजी का निष्कासन करके उनको लोग राजा किस प्रकार कहेंगे, कभी दुःखको न देखने वाली तपस्विनी जानकी इस प्रकार के व्यसनसे पीड़ित होकर रामचन्द्रजी के मुख कमल को देखकर सदा रोती हैं, और सीताजी

के दुःखसे रामजी अत्यन्त पीड़ित हैं, रथ लेकर हमको चलते समय सीता लक्ष्मण तथा रामजी रोदन करते हमको और रथको देखने लगे ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे अष्टपंचाशः सर्गः ॥ ५८ ॥

महाराज दशरथ से सुमन्त्रजी बोले कि जब तक हम घोड़ों को रथमें जोतकर मार्ग में इधर को नहीं लौटें तब तक सीता लक्ष्मण और रामचन्द्र रोते हुए पैदल बनकी ओर चले, हम दोनों राजपुत्रों को हाथ जोड़े दुःखको सहन करते हुए रथ पर वहीं खड़े हुए, हम वहीं निषादराज गुह के सहित अनेक दिनों तक अर्थात भागीरथी को उतर कर भरद्वाज मुनिके आश्रम में गये वहां से चित्रकूट को गये इस बातको जानने के लिये तीन रात्रि तक गुहके साथ रहे गुहने अपने मनुष्यचरोंसे इसकी विज्ञप्ति हमें दिये कि रामजी के इस महा दुःख से फल पुष्प से भूषित वृक्ष परिम्लान होगये हैं नदी और तालाओं का शीतल जल तप्त होगया है, बन और उपबन में उगने वाले वृक्षो के पत्ते सूखगये हैं पशु पक्षी मृगा सर्प आदि अपना बन बिहार भूल गये हैं, रामजी के दुःख से सकल बन निःशब्द हो गया है सरोवरों का स्वच्छ जल कलुषित होगया है कमल पुष्पों पर रहने वाले भ्रमर पुष्पों को छोड़कर जिधर तिधर भाग गये हैं, बन के पुष्प फल शोभा हीन हो गये हैं, बन और अयोध्या की एक दशा होगयी है जिस समय हम अयोध्या में पहुंचे यहाँ के किसी भी जीव को प्रसन्न नहीं देखे, जिस समय रथ अयोध्यापुरी के निकट पहुंची उस समय सकल नगरवासी श्रीरामजी को देखने के लिये हाहाकार करके दौड़े सड़कों पर भीड़ होगयी परन्तु रथ को खाली देखकर नागरिक नर नारी विलाप पूर्वक रोदन करने लगे, हम ऐसा किसी को नहीं देखते जो रामजी के बिरह से व्याकुल न होवे, जिस प्रकार पुत्र के बिरह से कौशल्या पीड़ित है इनके समान सभी नगर बासी पीड़ित हैं, तात्पर्य यह कि सुमन्त्रजी दशरथ के कार्य को अनुचित भाव से दिखलाने के वास्ते यह सब उदाहरण दिये हैं

सुमन्त्रजी के बचन को सुनकर महा वृद्ध शोक से अभिभूत दशरथ सुमन्त्रजी से बोले, हे सुमन्त्रजी ! पापी के कुल में और पापी के देश में उत्पन्न पापिनी कैकयी के शोक के कारण को मन्त्रियों से हमने नहीं विचार किया, हमने मित्रों से अथवा वृद्ध मन्त्रियों से बिचार न करके स्त्री के कारण सहसा कार्य किया। उसी का परिणाम यह है अथवा इस कुल को विनाश करने के लिये दैवकी इच्छा ही इस प्रकार की रही है, हे मन्त्रिन् ! रामजी के विरह से जितने हमारे सुकृत्त हैं वह सब इस पाप से प्राण के संग बाहर निकलने की इच्छा करते हैं, बिना रामचन्द्र के अब हमारा जीवन नहीं रह सकता है, इस लिये हमारी आज्ञा से रामजी को लौटा लाइये, अथवा यदि महाबाहु रामजी दूरदेश में पहुंचे हों तो हमको लेचलकर रामचन्द्र सीता और लक्ष्मण का दर्शन करादीजिये, अब इससे बढ़कर क्या दुःख होगा, जो इस अवस्था में भी रामजी के दर्शन नहीं मिलते हैं, हा राम हा लक्ष्मण हा सीता तुम लोग हमको अनाथ के समान दुखी कभी नहीं देखते थे आज क्यों देखते हो, यह कहते हुए महाराज दशरथ अचेत होगये, शोक सागर में पहुंचकर बोले, रामजी का बियोगरूप शोक का वेग है और सीता विरह किनारा है, हमारा श्वांस लहर है और हमारे आंसुका जल नदी का जल है हमारे हाथ पैर का फेंकना नदी की मछली है हम लोगों का चिल्लाना जल का शब्द है और स्त्रियों के खुले हुए केश जल के सेवाल हैं केकयी का मुख बडवाग्नि है और रामचन्द्र का निष्कासन मर्यादा है इस शोकसागर में निमग्न मुझको पार होना दुस्तर है, इस प्रकार विलाप करके महाराज दशरथ शय्या पर मूर्छित होगये. इस प्रकार करुणा युक्त दशरथ जी की मूर्छा को देखकर कौशल्या का दुःख दूना होगया, दशरथजी के बचन को सुनकर राममाता कौशल्या और भी भय से कांपने लगी ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकोनषष्ठितमः सर्गः ॥ ५९ ॥

इसके पीछे मूर्छित कौशल्या सुमन्त्र से बोली, हे सुमन्त्रजी !

जहां रामचन्द्र सीता और लक्ष्मण हैं वहां हमको ले चलो, उनके बिना क्षणभर भी हम अपने प्राण को नहीं रख सकती हूं हे मन्त्रिन्! हमें शीघ्र दण्डक बन में पहुंच आओ, न चलने पर मैं अवश्य यमलोक को जाऊंगी, कौशल्या से इस प्रकार प्रेरित किये गये सुमन्त्र कौशल्या को धैर्य देकर बोले, हे कौशल्ये! तुम शोक मोह और दुःख से उत्पन्न पीड़ा को त्याग करो, श्रीरामजी बन में निवास करते हैं और धर्मज्ञ लक्ष्मण जी बनमें उनके चरण की सुख पूर्वक सेवा करते हैं, निर्जन बन में भी रामचन्द्रजी की कृपा से सीताजी घरमें रहने के सदृश हैं उनको किसी प्रकार का भय नहीं है, जैसे नगर और उपवनों में जानकीजी बिहार करती थीं वैसेही सुख पूर्वक बनमें निवास करती हैं, इधर नगर बासियों के हृदय और उन लोगों का जीवन श्रीरामजीके अधीन हैं अब बिना रामजीके अयोध्यापुरी अरण्य के समान होगयी है, जानकी जी अयोध्याकी नदीको ग्रामको नगरको अनेक भांति के वृक्षों को पूछती थीं, श्रीरामजी तथा लक्ष्मणजी को देख कर अयोध्यापुरी को बिहार के समान सीताजी बनको जानती हैं, इस समय श्रीरामजी तथा सीता और लक्ष्मणजी के संगके बात चीत का स्मरण हमें होता है, केवल केकयी के हठकी बातको हम स्मरण नहीं करना चाहते, इसके उपरान्त इन प्रमादकी बातों को विसर्जित करके श्रवण के सुख देने वाले मधुर बचन को सुमन्त्रजी बोले, बायु के बेगसे और आतपसे उद्विग्न चन्द्रमाकी प्रभाके समान जानकी मार्ग में नहीं चलती हैं, पूर्णचन्द्रमा के समान मुख प्रभायुक्त जानकी बनमें भी मलीनताको नहीं प्राप्त हुई हैं, श्रीजानकी जी के चरण का महावर छूट गया है तो भी रक्त कमलके समान चरणकी सुन्दर और कोमलता वही है, उनके अंग पर भूषण नहीं है तौ भी भूषण धारण करने के समान उनके अंगकी शोभा है, श्रीरामजी की भुजा की छाया के नीचे सिंह व्याघ्र आदिको बनमें देखकर भी भय उनको नहीं होता, हे कौशल्ये! इसमें तुम्हें सोच करने की बात नहीं है

श्रीरामजी को इस चरित्र की कथा को कह सुनकर कलियुगवासी मनुष्य परमपदको लाभ करेंगे, इस कारण तपस्वियों के पथपर प्रवृत्त रामजी के विषय में शोकको छोड़कर हर्षको धारण करो बन में निवास करके कन्दमूल से अपनी जीविका करके पिताकी सुन्दर प्रतिज्ञा का पालन करते हैं, सुमन्त्रजी को अनेक भांति से समझाने पर भी पुत्र शोक से पीड़ित कौशल्या को सन्तोष नहीं हुआ ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे षष्ठितमः सर्गः ॥ ६० ॥

श्रीरामजी के वियोग से पीड़ित कौशल्या रोदन करती हुई अपने स्वामी महाराज दशरथ से बोली, हे स्वामिन् ! यद्यपि तीनों लोकमें आपका यश विख्यात है तौ भी दयालु प्रियवादी रामचन्द्रजी को लक्ष्मण और सीताका निष्कासन करके अब क्यों दुःख उठाते हैं, सुख करने योग्य जानकी सो बनमें शीत और घाम को सहती हैं, जो जानकी सदा अच्छे पक्वान्न का आहार करती थीं वही जानकी तिनी के चावल और कन्द मूल को कैसे आहार करती होंगी । जो जानकी गीत और बाजेके सुन्दर शब्दको सुनती थीं वह आज बनके जन्तुओं के भयंकर शब्दको सुनती होंगी । इन्द्रध्वजा के समान उत्सव देनेवाले श्रीरामचन्द्र अपने भुजाओंकी तकिया बनाकर कैसे शयन करते होंगे, नीलकमल के मसान श्यामवर्ण कमलनयन रामजी को कब देखूंगी, देखो हमारा हृदय निश्चय बज्र से भी कठोर है जो हजारों टुकड़ा होने पर भी नहीं फटजाता है, जो आपने बिना बिचारे केकयी को बरदान दिया है उस बरदान के प्रभाव से केकयी हमारे पुत्रों को बन बास दिया, जिस कारण हमारे पुत्र राज्य से भ्रष्ट होकर बनचरों के समान बनमें निवास करते हैं, यदि पंद्रहवें वर्षमें बनबास करके श्रीरामजी आवेंगे तौ भी भरतजी राज्य से अपना अधिकार नहीं छोड़ेंगे, अथवा भरतजी राज्य को छोड़ भी देवें तो विश्वास नहीं कि रामजी अंगीकार करें जैसे पहिले पंक्तिमें ब्राह्मणों के भोजन कर लेने पर दूसरी पंक्तिमें अमृत के समान भी अन्न दूसरे ब्राह्मणों के भोजन के योग्य

नहीं होता इसलिये भरत के उपयुक्त राज्य को रामचन्द्रजी स्वीकारनहीं करेंगे, क्योंकि जैसे दूसरे के उच्छिष्ट (जूठे) को व्याघ्र नहीं सूंघता वैसेही पुरुष श्रेष्ठ रामजी छोटे भाई भरत के भोग किये हुए राज्य को ज्येष्ठ होकर अंगीकार नहीं करेंगे। जैसे एक यज्ञके कार्य में विनियोग होने से दूसरे यज्ञ कार्य में कुशा आदि का नहीं ग्रहण होता, वैसे दूसरे से भोग किये गये राज्य को सुराके समान जानकर श्रीरामजी स्वीकार नहीं करेंगे। जैसे अपने जीवते सिंह अपनी पूछको नहीं पकड़ने देता वैसे श्रीरामजी इस अनुचित और तुच्छ सत्कार को कैसे ग्रहण करेंगे, जो धर्मात्मा रामचन्द्रजी इस मनुष्य लोक को धर्म के पथ पर चलाने का उद्योग करते हैं वह अपने अधर्म का आश्रय कैसे करेंगे। जो महा पराक्रमी रामजी अपने बाणों से प्रलयकाल के समान समस्त प्राणी और पृथिवी तथा समुद्र तक को नाश कर सकते हैं उन रामचन्द्रजी को आपने स्वयं नाश किया जैसे मछली अपने सन्तान को उत्पन्न करके उसीको भोजन कर जाती है वैसे आपने अपने सन्तान को नाश किया, यदि परम्परा ऋषियों के बनाये वेद शास्त्र के अनुसार धर्म का पालन करते तो अपने पुत्रको बनवास नहीं देते, हे स्वामी! स्त्रियों को पूरा भरोसा पतिका उसके बाद पुत्रका उसके उपरान्त परिवारका होता है इस तीन गतिको छोड़ कर चौथी कोई गति नहीं होती हे महाराज! भरत और कैकयी पर प्रसन्न होकर आपने राष्ट्र को तथा राज्य मन्त्री नगर और हमारे पुत्रों का नाश किया, कौशल्या के इस दारुण शब्दको सुनकर दशरथजी को शोककी आग और धड़क उठी और अपने दुष्कर्म को स्मरण करके सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिये॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकषष्ठितमः सर्गः॥ ६१॥

दुःख से पीड़ित राम माता के कठोर बचन को सुनकर महाराज चिन्ता के मारे व्याकुलता से मुर्छित होगये, कुछ कालके बाद चेतना को पाकर लंबी सांस को छोड़ते हुए कौशल्या को अपने समीपमें देखकर चिन्ताको प्राप्त हुए। उस चिन्ता में महाराज को दोनों बात

का शोच होने लगा, इधर बिना अपराध रामजी को बनवास और उधर ब्राह्मण कुमार (श्रवण) के मारने से उनके अन्धे माता पिताके शापको स्मरण करके शोककी अग्नि से जलते हुए कौशल्या से बोले, हे कौशल्ये ! तुम प्रसन्न होओ हम हाथ जोड़कर तुम्हारी प्रार्थना करता हूं, देखो स्त्रियों के वास्ते निर्गुण हो चाहे गुणवानहो परन्तु पतिहि मानने के योग्य है और पति को मानना स्त्रियों के लिये परम धर्म है, सो तुम लोक परलोक के धर्म को जानने वाली हो तुमको यह उचित नहीं है कि दुःखित अपने स्वामी को और भी दुःख के वचन को कहो, महाराज के दीन और करुणा के वचन को सुनकर कौशल्या आंख की आंसुओं को पोंछकर भय पूर्वक बोलीं, हे देव ! मैं आपको साष्टाङ्ग प्रणाम करती हूं आप ऐसा क्यों कहते हो, ईश्वर में हम कैसे विपरीत हो सकती हूं, आप हमारे ईश्वर हैं मैं आपकी दासी हूं आप मेरे वचन को क्षमा करने योग्यहो, हे भगवन् ! शोक से धैर्य और ज्ञान आदि सभी नष्ट हो जाते हैं इसलिये शोक से बढ़कर कोई शत्रु नहीं है, थोड़ा भी शोक का सहन नहीं होता इस महान् शोकका सहन कैसे हो सकता है, आज रामजी से विहीन हमको पांच रात्रि हो गया है वह पांच वर्ष के समान बीता है, इस प्रकार कौशल्या के शुभ वचन को सुनते हुए महाराज को सायंकाल होगया रात्रिको प्राप्त होकर सशोकित महाराज दशरथ कौशल्या के सहित निद्राको प्राप्त हुये ॥

इति वाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे द्विषष्ठितमः सर्गः ॥ ६२ ॥

मूर्छाको निवृत्त हो जाने पर महाराज दशरथ चिन्ता करने लगे, जैसे अन्धकारमें सूर्यनारायण का प्रकाश मलीन होजाता है वैसेही रामचन्द्र और लक्ष्मण के विवासन के शोकसे महाराज दशरथ की मुख शोभा नष्ट हो गयी थी, सीता सहित रामलक्ष्मण को बन जाने से राजा दशरथ अपने दुष्कर्म को स्मरण करने लगे, रामचन्द्रजी के बनको छठई रात्रिके आधे भागमें अपने दुष्कृत को स्मरण करते हुए

पुत्र शोक से पीड़ित कौशल्या से इस प्रकार बोले, हे कौशल्ये ! मनुष्य शुभ और अशुभ जो कुछ कर्म करता है उसे अपने किये हुये कर्मों का फल भोगना पड़ता है, आरंभ में जो छोटे बड़े उचित अनुचित कर्मों के दोष और गुणको नहीं जानता है उसको बालक कहते हैं, उस बालिशतासे जैसे कोई आम्र बनको काट कर पलाश वृक्षको लगावै उस के समान हुआ, जैसे वृक्षके पुष्पको देखकर फलकी इच्छा करने वाला फलके आगम में चिन्ता करता है किन्तु उसकी चिन्ता का कुछ भी फल नहीं होता, वैसेही बिना बिचारे कर्म का फल कर्म के पीछे दौड़ता है उसको शोच फलको देखकर होता है, सो मैंने भी अपनी अज्ञानता से आम्रबन को काट कर पलाशकी सेवा किया और फल के आगम काल में रामचन्द्रजी का त्याग करके अब पीछे चिन्ता करता हूं जैसे अज्ञान में भी बिष खाने से प्राण की हानी होती है वैसाही कार्य हमने किया है उसका बृत्तान्त सुनो, जिससमय तुमलोग महाराज अज की बधू रही हो और हम भी युवराज पद को प्राप्त हुए थे, तब काम को बढ़ाने वाली बर्षाकाल के आगमन में पृथिवी के संपूर्ण रसों को सूर्य भगवान ने अपनी ज्वाला से सुखा डाले थे और उनकी ज्वाला से संसार जलने लगा था, तब मैं घूमने के लिये दक्षिण दिशा को गये, वहां अनेक प्रकार की बादलों के समूह को देखने लगे, उन बादलों को देखकर मृगा चातक मोर आदि प्रसन्न हो गये, वृष्टि की महत्ता से वृक्षों की डालियां कांपने लगीं, पर्वतों पर जल की धारा सोताओं के द्वारा कहीं रक्त कहीं काली कहीं पीली कहीं उज्वल होकर अनेक प्रकार से काले सर्प के समान बहने लगीं। उस सुख के सुन्दर समय में धनुष बाणको लिये मृगाओं की हिंसा करते हुए सरयू नदी के किनारे पहुंचे। वहां भी जीवों को मारने की इच्छा से जलाशय के समीप विश्राम लिये कि जो कोई मृगा और हस्ती आदि जन्तु जल क्रीड़ा करने के लिये रात्रिकाल में आवेंगे उनका बध मैं करूंगा, इस अभिलाषा से जलाशय पर ठहरे, वहीं पर अन्ध

मुनि का आश्रम था, उनके एकमात्र पुत्र कुमार श्रवण उनकी सेवा करते थे, परन्तु यह ज्ञान हमें पहिले नहीं था । इसके बाद अन्धकार में उसी जलाशय में घड़ा डूबने का शब्द हाथी के गरजने के समान सुनाई दिया, इसके उपरान्त बाण को निकाल कर शब्द के लक्ष्य पर बाण को छोड़ा, हमारे उसी तीखे बाण को छोड़ने से हाहा ऐसा शब्द जंगली मनुष्य के शब्द के समान सुन पड़ा, बाण के आघात से उसको पृथिवीपर गिरने से वही बाणी तपस्वी पुरुष के बचन के समान हो गयी ।। और कहने लगे कि हमारे समान रागद्वेष से रहित तपस्वि पर निर्जन स्थान के मध्यरात्रि में कौन शस्त्र को चलाया, किसी को दुख न देकर वन के फल मूल से जीविका करने वाले मुझ ऋषि से किसका अपकार हुआ है जिसके बदले उसने बाण से हमें मारा, जटा और वृक्ष के बक्कले को धारण करने वाले हमको मारने से उसे क्या लाभ हुआ, कौन हमारे मांस का लोभी किस प्रयोजन के वास्ते हमको बध किया केवल अपने परलोक का नाश किया, हमारे मरने पर हमारे वृद्ध माता पिता किस प्रकार जीवेंगे, इसके उपरान्त ऋषि के विलाप और करुणा को सुनकर घबड़ाहट के साथ उदासीन भाव से हम ऋषि के समीप गये, वहां जाकर चीर और जटा को धारण किये जलका कलश हाथ में लिये सरयू के किनारे बाण से मूर्छित तपस्वि को देखे, अग्नि के सदृश प्रकाशमान धंसी हुई बाणको हाथ से पकड़े तपस्वी भगवान ने हमको देखकर पूछे हे राजन् ! बन में रहकर हमने तुम्हारा क्या अपकार किया है जिससे तुमने मुझे बाण से पीड़ित किया है, पिता माता को जल लेने के वास्ते हम इस जलाशय पर आये सो तुमने बाण से ताड़न किया अब पियास से पीड़ित हमारे पिता माता हमारी प्रतीक्षा करते होंगे, उनकी आशा हमारी ओर से आज विफल होगयी, हमारे पिता हमारी इस दशा को नहीं जानते होंगे, अथवा जानकर भी चलने और देखने से अशक्त हैं इसलिये हमारी रक्षा क्या कर सकते हैं, इस कारण

आप स्वयं निशंक जाकर हमारा सब वृत्तान्त कह दीजिये, यहां से नगीच में हमारा आश्रम है इस वृत्तान्त को सुनकर भी हमारे पिता माता अपनी क्रोध की आगसे आपको न जलावेंगे, आप हमारे हृदय से बाण को खींच लीजिये इसको रहने से प्राण को दुःख होता है और इसको खींच लेने से प्राण का अन्त हो जायगा, हे राजन्! हमारे चित्त में कुछ भी मोह नहीं है हम चित्त को स्थिरकर लिया है अब हम जो कहते हैं सो सुनो, तुम ब्रह्महत्या के भय को छोड़कर इस समय स्थिर चित्त हो जाओ, हे राजन्! हमारी माता शूद्रा है और हमारे पिता वैश्य हैं शूद्रा वैश्य से हमारी उत्पत्ति है हम महाराज कर्ण के सजातीय हैं, अब बाण की व्यथा हमसे नहीं सही जाती इसलिये आप अपने बाण को उद्धार कीजिये। हमने ऋषिकुमार के बचन को सुनकर उनके हृदय से बाण खींच लिया ऋषिकुमार श्रवण हमको देखते देखते अपने प्राण को त्याग किये, हे कौशल्ये! सरयू के तटपर मृतशरीर ऋषिकुमार को देखकर हम अत्यन्त खिन्न होगये।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे त्रिषष्ठितमः सर्गः ॥ ६३ ॥

इसके पीछे दशरथ जो मुनिकुमार को बध करने की बात को स्मरण करके बिलाप करने लगे उनके बिलाप को सुनकर कौशल्या बोली, हे भगवन्! आपने अज्ञान में जो महापाप किया है उसका उद्धार कैसे हुआ। दशरथजी बोले, कि ऋषि के घड़ेको जलसे भर कर अन्ध मुनिके आश्रम के समीप पहुंचे, वहां जाकर उस निर्जन स्थानमें दुर्बल और अन्धे ऋषिको देखे, उन बृद्ध मुनि दम्पति को अनाथ के समान देखकर हमारे हृदय का शोक और भी बढ़ गया, वह मुनि दम्पति हमारे पग चलने के शब्द को सुनकर मुनिजी बोले, हे-पुत्र? क्यों बिल्लब किये जिस कारण इतने समय तक तुमने हम लोगों को जल न देकर जलक्रीड़ा करते थे, उसी हेतु तुम्हारी तृषा से युक्त माता अत्यन्त उत्कण्ठित होरही है आश्रम में शीघ्र आओ, हेपुत्र! तृषा की पीड़ासे पीडित होकर जो कुछ अप्रिय बचन हम और तुम्हारी माता

कहें उसको हृदय स्थान में संचित नहीं करना, क्योंकि बिना पग वाले को तुम पग हो नयनहीन को नेत्र हो और पिता माता को परम प्राण हो हे पुत्र ! इस समय तुम हमसे क्यों नहीं संभाषण करते हो, पुत्र के प्रेम में मग्न मुनि को देखकर भयानक चित्त को आच्छादित करके निडर के समान हम भी बोले, हे मुनीश्वर ! हम अयोध्या के राजा हैं हमारा नाम दशरथ है सो सज्जनों से निन्दित कर्म के अनुसार दुःख हमें और आपको भी प्राप्त हुआ है उसका समाचार सुनिये, मैं धन्वा बाण को लेकर बन विहार करने के लिये सरयू तट पर जलाशय के समीप आकर ठहरे, वहां रात्रिकाल में आये हुये हाथी के शब्द के सदृश घड़ा डूबने का शब्द सुनाई पड़ा, उस शब्द से जलाशय में हस्ती आई है यह जानकर शब्द के लक्ष्य से बाण को छोड़े, वह बाण मिथ्या न होकर तपस्वी भगवान के हृदय में लगी, उसबाण के आघात से उनका प्राण कण्ठगत होगया, इसके बाद फिर मुनीश्वर के कहने से हमने अपने बाण को खींच लिया और वह मुनि बिलाप करने लगे कि अंधे हमारे पिता माता की रक्षा अब कौन करैगा इस प्रकार करुणा करते हुए स्वर्ग को चले गये आपके पुत्र इस प्रकार नष्ट हो गये अब आपकी रक्षाको जीवन पर्यन्त हम कर सकते हैं आप हमारे ऊपर प्रसन्न होकर अपने कार्य की आज्ञा दीजिये, इस हमारे क्रूर बचन को सुनकर ऋषिश्वर अपने क्रोध को रोककर आंसुको छोड़ते हुए मूर्छाको प्राप्त होगये, कुछ कालके उपरान्त मूर्छा से निवृत्त होकर हाथ जोड़कर सन्मुख खड़े हुए मुझसे बोले, हे राजन् ! यदि तुम अपने अपराध को अपने स्वयं आकर हमसे नहीं कहते तो अबतक तुम्हारे मस्तक टूट कर हजारों टुकड़ा हो जाते, हे राजन् ! क्षत्रिय बान प्रस्थ को जान बूझ कर बध करने से इन्द्र भी अपने स्थान से अबतक भ्रष्ट हो जाते। अज्ञान से अपराध करनेही से तुम अबतक जीते हो यदि जान बूझ कर ऐसा अपराध करते तो अब तक रघुबंशियों का कुल नाश हो जाता तुम्हारी क्या गणना है, अच्छा अब तुम हम दम्पती को वहां लेचलो, जहाँ हमारे प्रिय पुत्र की मृत शरीर पड़ी है, आज हम

उनका मृत दर्शन करेंगे। इसके उपरान्त हम स्त्री सहित अन्ध मुनिको जलाशय के समीप लियाकर उस मृत देह को उनसे स्पर्श कराया उस मृत कायको स्पर्श करके वृद्ध मुनि बोले, हे पुत्र! क्यों नहीं हमको प्रणाम करते हो और क्यों नहीं हमसे वार्तालाप करते हो, हमसे क्रोधित होकर अकेले पृथिवी पर क्यों पड़े हो हे पुत्र! तुम यदि हमसे प्रसन्न न होओ तो अपनी माता की ओर तो देखो, हे पुत्र! अब कौन हमको स्नान करावेगा और कौन संध्या वन्दन तथा हवन के लिए सामग्री को इकट्ठा करेगा, अब किसके लियाये हुए कन्द मूलसे हम अतिथि सत्कार करके अपने भोजन करूंगा, और कौन हमारा पालन करेगा, हे पुत्र! हम स्वयं अन्धे हैं तुम्हारी माता का पालन अब कैसे होगा हे पुत्र! हमारे लिये यमलोक न जाओ, वह दम्पती अनाथके समान बिलाप करने लगे कि हे पुत्र! तुम्हारे बिना हमलोग शीघ्र यमलोकको जावेंगे, अथवा हमारे पूर्व कृत अपराध को धर्मराज क्षमा करके तुम्हारे जीवन के देवे, मृतक मनुष्य का जीवन लाभ नहीं होसकता इसलिये विलाप से समाहित होकर अपनी महिमा से पुत्रको स्वर्ग भेजने का आशीर्वाद देने लगे हे—पुत्र! जिस पाप कर्म से तुम अस्त्र से मारे गये हो तो भी तुम हमारे सत्य से जिस लोक में शूरवीर जाते हैं उस लोकको प्राप्त होओ, हे पुत्र! संग्राम में सन्मुख मरने वाले बीर जिस लोकको जाते हैं तुमभी उसी लोक को प्राप्त होओ, नित्य स्वाध्याय और तपस्या करने वाले प्राणी पृथिवी दान करने वाले और एक नारी व्रत करने वाले जिस लोक को प्राप्त होते हैं उस लोक को प्राप्त होओ, सगर शिवी दिलीप नहुष जनमेजय धुन्धुमार आदि राजर्षि जिस लोक में निवास करते हैं उस लोक को प्राप्त होओ, इस प्रकार अनेक बिलाप को करके पुत्रका जल से स्कार किया, जल संस्कार करने से मुनि पुत्र दिव्य विमान पर बैठ कर इन्द्र के साथ स्वर्गको चलने को तइयार हुआ चलने के समय मुनिकुमार अपने बृद्ध पिता से बोले, कि हे पिता! आपकी सेवा के प्रभाव से हम स्वर्गको प्राप्त हुए आप लोग भी शीघ्रही हमारे स्थान

को ग्रहण कीजिये, ऐसा कह कर मुनिकुमार दिव्य विमान मे दिव्य शरीर को धारण किये स्वर्ग को गया, इसके उपरान्त जलाञ्जलि देकर स्त्रीके सहित अन्धमुनि हमसे बोले, हेराजन् ! जो तुमने अपने एक बाण से हमें बिना पुत्र के कर दिया वैसेही हमारा भी प्राणमे वियोग करो और अज्ञान में तुमने हमारे पुत्रका वध किया है इस कारण हम तुम्हे भी शाप देते हैं कि जैसे हम पुत्र वियोग मे अपना प्राण देते हैं वैसेही तुम्हारी भी मृत्यु पुत्र शोकसे होवेगी, इस प्रकार शाप हमको अनेक प्रकार से विलाप करते हुए चितापर बैठ कर पुत्रकी लोथ के संग वे दोनो भी जलगये इसके उपरान्त सुन्दरी विमान पर बैठ अन्धी और अन्धा स्वर्ग को गये, हे—कौशल्ये ! आज वही बात हमें स्मरण हुई है और वही शापका समय हमारे लिये भी उपस्थित है, ऐसा कह कर रोदन करते हुए महाराज दशरथ कौशल्या से बोले, हे कौशल्ये ! राम लक्ष्मण के वियोग में हम अपना प्राण देदेवेंगे तो अपने नेत्रों से फिर तुम्हें नहीं देखेंगे इसलिये तुम हमको अपने हाथ से स्पर्श करो, क्योंकि इस लोक के सुख को मनुष्य यमलोक को नहीं देखता है, हमारे समान अन्याय करने वाला और श्रीरामजी के समान उचित जानकर पालन करने वाला न कोई हुआ और न तो होगा, इस क्रूर कर्म के बदले धन राज्य और जीवन किसी काम का नहीं है, हे कौशल्ये ! इससे बढ़कर कौनसा दुःख होगा जिसमें प्राण की हानी होगी हमें तो धर्मराज के दूत गण आकर हमारे प्राण को शीघ्र हरण करना चाहते हैं, श्रीरामजी के विरह का दुःख और अनुचित कर्मसे उत्पन्न शोक हमें इस प्रकार पीड़ा देता है जैसे थोड़े जलको घाम सुखा देता है । इस समय जो लोग श्रीरामजी के सुन्दर कुण्डल का दर्शन करते होंगे वे मनुष्य नहीं हैं किन्तु देवता हैं और जो लोग श्रीरामजी को बनवास से लौटने पर उनके मुख कमल को देखेंगे वे धन्य हैं, इन्द्रियों से युक्त शब्द स्पर्श और रसका ज्ञान हमको होता है किन्तु चित्त के नाश से समस्त इन्द्रियां विपत्ति युक्त होगई हैं जैसे

दीपकी बत्ती भस्म होकर विपत्तिको प्राप्त होती है वैसे इस हृदयके शोकसे हमारा हृदय दग्ध होगया है इस प्रकार विलाप और करुणा के वचन को कौशल्या से कहते हुए मूर्छा के मारे व्याकुल होकर हाहा करने लगे हा महाबाहु रामचन्द्र ! पिता के प्रिय प्राण ! हा कौशल्या ! हे सुमित्रा! हा दुःख देने वाली केकयी ! इत्यादि लोगों के नाम और कर्म को स्मरण करते हुए महाराज दशरथ के प्राण अर्ध रात्रि को शरीर से बाहर हो गया ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे चतुषष्ठितमः सर्गः ॥६४॥

रात्रि बीत जाने के बाद प्रातः काल महाराज के बंश और गुणको गान करने वाले मागध और बड़े बड़े गवैया और भांति भांति के बाजा बजाने वाले राजद्वार पर आये, और अपने अपने कर्मों की कुशलता दिखलाने के लिये बड़े बड़े ऊंचे स्वरों से गुणगान करने लगे कोई बाजा बजाने लगे कोई आशीर्वाद देने लगे, उनकी शब्द ध्वनि से राजभवन में पाले गये पक्षिगण जाग उठे और कलोल करते हुए अनेक प्रकारकी बोली बोलने लगे, पक्षियों के शब्दों को सुनकर राजाकी दासियों ने कलश को लेकर महाराज को शौच तथा स्नान के लिये जलको भरने लगीं, कुछ स्त्रियां समय पर आचमन करने के लिये गंगाजल तथा नारियल का जल आदि एकत्र करने लगीं, इतने में सूर्योदय का समय होगया महाराज दशरथ के दर्शन के वास्ते सकल रनिवास और दास तथा दासीगण उत्सुक होगये, किन्तु महाराज के कुशलता की समाचार की सूचना न पाकर वे सब स्त्रियां कौशल्या के महल में जाकर अनेक प्रिय बचनों से राजाको नींदसे जगाने लगीं, किन्तु उन स्त्रियों के अनेक उपाय करने पर भी राजाकी निद्राका उच्चाटन नहीं हुआ, रामजी के वियोग में महाराज का मरण होगा इस बात को निश्चय देखकर सब स्त्रियां ऐसी कांपने लगीं जैसे प्रबल वायुके बेगसे वृक्ष हिलते हैं, महाराज की मृत दशा देखकर वे स्त्रियां ऐसी शोभा हीन होगयीं जैसे अन्धकार में तारे छिप जाते

हैं और जैसे अपने झुंड से अलग होकर हाथी आर्त और भयानक शब्द करता है वैसे रानियां रोदन करने लगीं, उन स्त्रियों के रोने और चिल्लाने के शब्द से कौशल्या सुमित्रा केकयी आदि पटरानियों ने निद्रासे जाग कर शय्या से उठ पड़ीं और महाराज की दशा देखकर कौशल्या पृथिवी पर गिरपड़ीं और हा-स्वामी यह कह कर सबकी सब रानियां दुःखसे रोदन करने लगीं, महाराज दशरथ के मृत शरीर को स्पर्श करके अनाथ की तरह कौशल्या विलाप करने लगीं ॥

इति वाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे पंचषष्ठितमः सर्गः ॥५६॥

जैसे तेजसे हीन अग्नि, जलसे हीन नदीकी शोभा नहीं होती वैसे प्राण हीन महाराज की देहको देखकर रोती हुई कौशल्या राजाके शीरको अपने गोदमें लेकर केकयी से बोली, हे-केकयी ! अब तुम्हारे मनोरथ सिद्ध होगये, तुम निस्कंटक राज्य का भोग करो जो तुमने पुत्रको राज्य देनेकी अभिलाषा से महाराज को त्याग किया, रामचन्द्रजी हमको छोड़कर बनको गये और पति स्वर्गको गये, अब इस निर्जन बनमें किसकी सहायता से हमारा जीना होगा, केकयी को छोड़कर और दूसरी कौनसी स्त्री होगी जो पतिको परित्याग करके अपने धर्म को छोड़कर संसारमें जीवन रखेगी । अनुचित कर्मके नियोग से रामजी स्त्रीके सहित बनबास और महाराज की यह दशा सुनकर जनकजी भी हमारे समान दुःखको उठावेंगे सोमुझ अनाथ बिधवा के वृतान्त को धार्मिक जनक नहीं जानते होंगे कि कमलनयन श्रीरामचन्द्रजी जीते हुए अदर्शन होगये, और बिदेहराजकी कन्या जानकी पतिकी सेवामें तत्पर होकर अनेक प्रकारके दुःखको उठातीहैं और रात्रिकालमें जंगली जानवरों के गर्जने को सुनकर भयसे पीड़ित होकर श्रीरामजी से रक्षाको चाहती होंगी, अपनी कन्या की ऐसी दशा सुनकर जननी अपना प्राण अवश्य छोड़देंगीं क्योंकि उनको एक कन्याहीसन्तान है, सो ऐसी अभागिनी हम इस स्वामी के मृतक शरीर को लेकर अग्नि में प्रवेश करूंगी, इस प्रकार कौशल्या के बिलाप को सुनकर राज्य-

कार्य में नियुक्त सेवक और मन्त्री राजमहल में आकर कौशल्या के गोदसे राजाके मृतक देहको तैलसे पूर्ण कराहे में वसिष्ठकी आज्ञा से रखदिये, स्त्रियां राजाके मरनें के बाद केश और हाथको फैला कर शोक से ग्रस्त रोती हुई बिलाप करने लगीं कि हम सब स्त्रियां कैकयी के तिरस्कार को सह कर हम सब अब न जीवेंगी, जिस केकयी के कारण राजाने राम लक्ष्मण और सीताको बनबास दिया उस केकयी के साथ हम लोगों का दर्शन कैसे होगा, इस प्रकार बिलाप करती हुई दशरथ की स्त्रियां मूर्छित होगयीं, नगर में चारो ओर हाहाकार होगया, राजभवन के सभास्थान उदास होगये, पशु पक्षियां भी अनाथ होकर रोदन करने लगे, हाथी घोड़े रथ आदि सब सोभा हीन होगये, पुत्रके शोकसे और भर्ताके शोकसे स्त्रियां पृथिवीपर लोटने लगीं दिनको व्यतीत करके सांयंकाल होगया रात्रि देवी अयोध्यापुरी पर आक्रमण किया तो रात्रिका अन्धकार और अयोध्यापुरी के अन्धकार दोनों इस भांति एक होगये मानो इस नगर का प्रलय होगया है, सकल नगर के स्त्री पुरुष केकयी को दुर्वाद और दुर्वचन कहते हुए महाराज के मरण शोक से व्याकुल होगये ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे षट्षष्ठितमः सर्गः ॥६६॥

लोगों को रोदन करते करते रात्रि व्यतीत हो गयी, प्रातः काल अन्धकार को नाश करके सूर्यभगवान ने अपना प्रकाश किया, सूर्य को देख कर राजा के राजमन्त्री और पुरोहित तथा सभासद सभा में आये, भगवान मार्कण्डेय, मुद्गल, वामदेव, कश्यप, कत्यायन, गौतम जाबालि आदि ऋषिश्वर और रघुकुल के प्रधान पुरोहित ब्राह्मणों में श्रेष्ठ वसिष्ठजी आये, इन ब्राह्मणों के सहित राजमन्त्रियों ने हाथ जोड़कर वसिष्ठजी से बोले हे भगवन् ! पुत्रशोकसे पीड़ित राजा को मरने पर आजकी रात्रि हम लोगों को सौ वर्ष के समान जान पड़ी ! अब राजा को स्वर्गवास हुआ श्रीरामजीवनवास करते हैं लक्ष्मण जी भी भाई के स्नेह से नियन्त्रित होकर रामजी के साथ गये, भरत

शत्रुघ्न अपने मामा के घर हैं, इन ईक्ष्वाकु के मध्य में किसी को राजा नियुक्त कीजिये, नहीं तो बिना राजा के राष्ट्र नाश हो जाता है, बिना राजा के पृथ्वी पर सुन्दर वृष्टि नहीं होती, पृथ्वी से अन्न का लाभ किसान को नहीं मिलता, पुत्र पिता की आज्ञा का पालन नहीं करता स्त्रियां पति के आधीन नहीं रहती हैं, बिना राजा के राष्ट्र में महाभय उपस्थित हो जाता है नगर के लोग भय से सभा में नहीं जाते, अपने वस्त्र और धन के हरण होने के कारण नागरिक जन अपने बगीचों में तथा देव मन्दिरों में भी नहीं जाते, ब्राह्मण अपने यज्ञों को संपादन नहीं करते, यजमान शास्त्रानुसार ब्राह्मणों को दक्षिणा नहीं देते, बिना राजा के राज में अनेक प्रकार के मत को मानने वाले होते हैं, पुराणवक्ता ब्राह्मणों में विवाद का आरंभ हो जाता है, मनुष्यों में कथा को सुनने की श्रद्धा उठ जाती है, सभी जाति अपने को पंडित मानने लगते हैं, दूर देश में व्यापार करने वालों वाणिजों को कुशल प्राप्त में नहीं होता, बिना राजा के सेना आपस में विरोध करके परस्पर के युद्ध से नाश हो जाती है, बिना राजा के सभी मनुष्य देव मन्दिरों में जाना और देवताओं का पूजन करने लगते हैं, जैसे बिना जल की नदी बिना तृण का बन बिना रक्षक के गौ की जो दशा होती है वही दशा बिना राजा के राष्ट्र की हो जाती है, बिना राजा के राजद्वेष करके मनुष्यों की परस्पर हिंसा होता है, जो मर्यादा से हीन होकर नास्तिक हैं, अर्थात् अपने वर्ण और आश्रम की मर्यादा को नहीं मानने वाले हैं वे नास्तिक राजदंड की शंका से रहित होकर अपना अधिकार जमा लेते हैं, जैसे अपनी आँख अपने शरीर की सदा रक्षा करती है वैसे राजा भी प्रजाओं के हित अहित साधन में सदा लीन रहता है। राजा ही राजाओं के सत्य, धर्म और कुल की मर्यादा का पालन करता है, राजा ही माता राजा ही पिता और राजा ही प्रजाओं के लिये ईश्वर के समान है, राजा अपने दंड से यमराज को धन दान से कुबेर को पालन करने में इन्द्र को प्रजाओं के नियम का पालन

कराने से कुबेर को तिरस्कार कर देता है, यदि उचित अनुचित कर्म को बतलाने वाले राजा के न रहने से प्रजा नष्ट हो जाती इसलिये हे भगवन्! भरत को अथवा और किसी को राजा के स्थानपर अब नियुक्त कीजिये,

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे सप्तषष्ठितमः सर्गः ॥ ६७ ॥

उन मन्त्रियों के बचन को सुनकर बसिष्ठजी बोले, हे मन्त्रिगण! और ब्राह्मणगण अर्थात् सुमन्त्र आदि और ब्राह्मण मार्कण्डे आदि हमारी बात को सुनो, महाराज दशरथ ने केकयी के बचन से भरत को राज्य दिया है, और भरत शत्रुघ्न के सहित अपने नाना के घर हैं, महाराज को भरतजी का राज्य देना निश्चय था, इस लिये रथ को लेकर दूत लोग शीघ्र जावें और भरतजी को लिवा लावें वशिष्ठजी के इस बचन को शिरोधार्य करके मन्त्रिगण बोले दूतलोग केकयपुर को जावें, उन मन्त्रियों के बचन को सुनकर फिर भी बशिष्ठजी बोले, हे सिद्धार्थ! जयन्त! विजय शोकनन्दन! आदि दूत तुम लोग भरतजी को बुलाने के वास्ते जाओगे इसकारण हमारी आज्ञा के अनुकूल जाओ और अपने कर्तव्य को सुनो, शोक और दुःख को छोड़कर शीघ्र चलने वाले घोड़ों को रथ में जुतकर जल्दी से केकय देश को जाओ, वहां जाकर भरतजी से इस प्रकार कहना कि, आप के पुरोहित और मन्त्री कुशलता पूर्वक आप को बुलाये हैं कि इस आवश्यकीय कार्य में आप जल्दी चलें बिलम्ब करने का प्रयोजन नहीं है। इसके अतिरिक्त रामजी का बन और महाराज का मरण तथा नगर की दुरवस्था आदि कुछ भी न कहना, केकय देश के राजा को यह सब भूषण वस्त्र दे देना और भरतजी को संग लेकर आवना यह कहकर वशिष्ठजी दूतों को सन्तोष देकर उन लोगों को राहखर्च दिये, वे दूतगण अपने अपने घरमें जाकर अपने परिवारों से भरत जी को बुलाने जाने का अपना समाचार कह सुनाये, इसके उपरान्त रथ को लेकर दूतलोग केकय देश को चले, वे दूतलोग अयोध्या से पश्चिम मुख चलते

हुए दोनों तरफ अपर नामक ताल और प्रलंबन नामक तालको लांघकर मालिनी नाम नदी के किनारे पहुंचे, वहां एक रात्रि निवास करके उत्तर की ओर कुछ दूर जाकर प्रलंबताल के उत्तर से पश्चिम मुख होकर पंचाल देश में पहुंचे वहां निवास करके हस्तीनापुर के समीप से गंगा नदी को पार करके कुरुदेश और जांगलदेश के बीच से शरदण्डा नदी के किनारे पहुंचे, एक रात्रि निवास करके वहां के नदी नाले तालाब वन वृक्ष लता पुष्प बाग पर्वत तृण आदि की शोभा को देखते हुए इष्ट फल को देने वाले निकूल वृक्ष के समीप पहुंचे, उसको प्रणाम और उसकी प्रदक्षिणा करके कुलिङ्गपुरी में पहुंचे, वहां निवास करके इसके बाद इक्षुमती नदी के तटपर पहुंचे, वहां स्नान और आचमन करके उस देशमें निवास करने वाले ब्राह्मणों को साष्टाङ्ग प्रणाम करके बाल्हीक देश के मध्य से सुदामा नाम पर्वत पर विष्णु की चरणपादुका को नमस्कार करके विपाशा और शाल्मली नदी के किनारे पहुंचकर वहां की शोभा को देखकर रात्रि में बिश्राम करके प्रातःकाल स्वामी के सन्देश को पहुंचाने की शीघ्रता से पुर नगर पर्वत नदी झरना वन आदि को लांघते अपने स्वामी के हित के लिये रघुवंश कुलकी रक्षा के लिये दौड़ते हुए वे दूतगन रात्रि में केकय देश को पहुंचे ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे अष्ठितमः सर्गः ॥६८॥

इसके बाद जिस रात्रि में दूत लोग भरतजी के नाना के नगर में पहुंचे उसी रात्रि में महात्मा भरतजी महाभयानक स्वप्न देखे, जिस स्वप्न दर्शन से भरतजी का हृदय धड़कने लगा, मुखपर उदासीनता छा गयी किन्तु प्रातःकाल में स्वप्न दर्शन के दुःख को छिपाकर सभा में जाकर बैठे, उस सभास्थान में कोई बीण आदि बाजा बजाने लगे, वेश्याओं की नाच होने लगी, कहीं प्रसंग पर श्लोक और उनके व्याख्यान होने लगे, कहीं पर हसीकी बातें नाटक स्वरूप में होने लगीं, परन्तु इन सब से भरतजी के मनमें आनन्द नहीं हुआ, भरतजी की उदासीनता को देखकर

उनकी अवस्था वाले उनके मित्रवर्ग भरतजी से पूछे भाई आज आप अप्रसन्न दिखाई देते हो इसका क्या कारण है, मित्रों के बचन को सुनकर भरतजी बोले, हे सुहृद् ! जिस कारण हमको उदासीनता है उसको सुनो, आज हमने रात्रिमें स्वप्न देखा हैं कि हमारे पिता पर्वत परसे गोबरके कुण्ड में गिरे हैं और उनके मुखकी प्रभा मलीन है केश बिथरे हुए हैं और उसी गोबर कुण्ड में पड़े अंजली से तैल को पान करते हैं और बार बार हँसते हैं । इसके उपरान्त तिल और जल की तिलाञ्जलि को भोजन कर के बार बार नीचे को शिर करके तैल के कराहे में डुबाये गये हैं यह पहिला स्वप्न है, इसके बाद समुद्र का जल सूख गया है चन्द्रमा टूटकर पृथिवी पर गिर पड़े हैं और पृथिवी घोर अन्धकार से छिपगई है, अग्नि की प्रज्वलित शिखा शान्त होगयी है कहीं कहीं पृथिवी फट गई है वृक्ष सूख गये हैं पहाड़ों से धुआं निकल रहा है, और दो स्त्रियां काला बस्त्र धारणके महाराज दशरथ को बाण से प्रहार कर रही हैं धर्मात्मा अयोध्या पति महाराज रक्तचन्दन और माला को धारण करके गदहे के रथपर बैठकर दक्षिण दिशा को जाते हैं, यह दूसरा स्वप्न है, आज की भयानक रात्रि में हमने इस प्रकार का स्वप्न देखा है इस स्वप्न की सूचना से हमको जान पड़ता है कि इस स्वप्न की सूचना से हमारी अथवा रामचन्द्र वा लक्ष्मण तथा महाराज दशरथ की मृत्यु अवश्य होगी, क्यों कि मृतक मनुष्य मनुष्यके रथसे जाता है उसकी जगह पर तो गदहों की रथ दीख पड़ी और चिता के धूम की जगह पर्वत का धुँआं दिखाई पड़ा इसी कारण आप लोगों की बात चीत हमको अच्छी नहीं मालूम पड़ती है, इस दुःस्वप्न का वृतान्त सुनकर सभासद आपस में अनेक प्रकार से विचार करने लगे और भरतजी बोले कि राजा के दर्शन विषय में इतनी चिन्ता और इतना भय हमारे हृदय में होता है कि जिससे हमारे कंठ स्वर बन्द हो गये हैं ।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकोनसप्ततितमः सर्गः ॥ ६९ ॥

इधर भरतजी स्वप्न का वृतान्त कही रहे थे तब तक दुःसह मार्ग को लांघने से थकित दूत लोग राजद्वार पर पहुंचे, वहां पहुंच कर केकयी के पिताको और केकयी के भाई युधाजित को सादर प्रणाम करके वसिष्ठजी के दिए हुए भूषण वस्त्र आदि वस्तुओं को सामने रखकर पुनः राजाको प्रणाम करके भरतजी से दूत लोग इस प्रकार बोले, हे—भरतजी ! आपके पुरोहित और मन्त्री कुशलता के उपरान्त आपको विज्ञापन दिये हैं कि आपका प्रयोजन है आप शीघ्र अयोध्यापुरी को चलिये, और यह भूषण वस्त्र को आप लेकर अपने नानाजी को दीजिये, इसमें बीस करोड़ द्रव्य और बीस करोड़ उत्तम वस्त्र अपने नानाजी को दीजिये और दस करोड़ द्रव्य तथा उतनाहीं वस्त्र अपने मामाजी को दीजिये, भरतजी उस धन वस्त्रको लेकर सबको दिया और दूतोंका उचित सत्कार करके पूंछेकि, हमारे पिताजी कुशल से हैं और महात्मा रामचन्द्र तथा लक्ष्मणजी आरोग्य से हैं और धर्मवादिनी रामजी की माता कौशल्या और धर्मात्मा लक्ष्मण की माता सुमित्रा अरोग्य हैं, तथा अत्यन्त अभिमान करने वाली हमारी माता केकयी आरोग्य है, महात्मा भरतजी के बचन को सुनकर दूत लोग बिनय पूर्वक बोले, हे पुरुष श्रेष्ठ ! आप जिनका कुशल पूछते हैं वे लोग कुशल से हैं, शीघ्र गमन को सुनकर कोई प्रकार की शंका न करिये लक्ष्मी आपकी सेवा करती हैं आप अमंगल की संभावना को त्याग करके यात्रा कीजिये आपकी यात्रा के वास्ते रथ उपस्थि है भरतजी दूतों के मुख से अयोध्यापुरी का निमन्त्रण सुनकर अपने नाना के समीप जाकर बोले, हे राजन् ! हम पिता के निमन्त्रण से पिता के समीप जाऊंगा, हमको बुलाने के लिये दूत लोग आये हैं, जब आप हमको स्मरण करेंगे तब फिर मैं आपकी सेवा में उपस्थित होऊंगा, भरतजी के सुन्दर बचन को सुनकर उनके नाना भरतजी के सिर को सूंघकर बोले, हे पुत्र ! तुम केकयी को सुख देनेवाले सन्तान हो जाओ परन्तु अपने पिता माता और पुरोहित तथा और भी ब्राह्मणों से यहां

का कुशल कह देना, हे तात ! श्रीरामचन्द्रजी से और लक्ष्मणजी से हमारी कुशल कहना, ऐसा कह कर भरतजी के वास्ते उत्तम हाथी घोड़े अनेक रंगके दुशाले रेशमी वस्त्र तथा श्रेष्ठ मृगचर्म और भांति भांति के धन रत्न आदिको भरतजी को दिया, इसके उपरान्त अन्तःपुर (रनिवास) से अनेक प्रकार की वस्तुओं का भेंट भरतजी को मिला और भरतजी के मामा अत्यन्त बलवान कुत्तों को दो हजार हार और सोलह सौ घोड़े आदिको देकर प्रधान और विश्वास के योग्य कई एक मन्त्रियों को दिया, इसके बाद ऐरावत कुल में उत्पन्न पर्वत के समान हाथियों को और शिरनामक देश में उत्पन्न हाथियों को दिया, इतनी समृद्धि पाने पर भी भरतजी प्रसन्न नहीं हुए, क्योंकि उनको रात्रि के देखे स्वप्न से और एकाएक दूतों के द्वारा बुलावा से मन की चिन्ता बढ़ती गई। भरतजी अपने स्थान से निकल कर अपने मामा के साथ अनेक राजकुमार और राजा के सहित कुशल क्षेम की वार्तालाप करते हुए भरतजी राजमार्ग [सड़क] पर आये और सब लोगों से यथा योग्य मिल भेंट कर सब को बिदा किये, ब्राह्मणों को श्रेष्ठ दक्षिणा देकर दण्डवत् किये, इसके उपरान्त दूत और मन्त्रियों के सहित सैकड़ों रथ पर बैठ कर भरतजी के साथ सब लोग अयोध्या को चले।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे सप्ततितमः सर्गः ॥७०॥

भरतजी वहाँ से पूर्व मुख होकर चले कुछ दूर आकर सुदामा नाम की नदी को पार करके शतद्रू नदी के किनारे पहुँचे, यह नदी अत्यन्त लम्बी चौड़ी है इसमें अनेक प्रकार के तरंग दीख पड़ते हैं श्रीमान् भरतजी शतद्रू के पार होकर आगे को चले, इसकेबाद ऐलधानी नगरी में पहुँच कर ऐलधानी नदी को काष्ट की नौका से पार किये, आगे पर्वतों की यात्रा करते हुए शीलावहानदी के तट पर पहुँचे यह नदी पहाड़ से निकली है देखने में भयानक है उस नदी को भी नौका से पार किये वहाँ भरतजी आचमन आदि करके

चैत्ररथ बनको पहुँचे वहाँ सरस्वती और गंगा का संगम है उस नदी के पार होकर मत्स्यदेश के उत्तर से भारुण्ड नाम बन में पहुँचे, अत्यन्त बेग से रथ के चलने से कुलिंग नाम की नदी के तट पर पहुँचे रथ से नदी को पार करके अनेक प्रकार के पर्वतों को लाँघते हुए यमुना तट पर विश्राम किये, वहाँ सब लोग स्नान संध्या भोजन आदिको करके अति शीघ्र चलने वाले रथ से गंगाजी के तट पर पहुँचे भागीरथी को पार करके धर्मवर्धन नाम नगर में पहुँचे। वहाँ जम्बूप्रस्थ से होते हुए बरूथनामक नगर में पहुँच कर विश्राम किये, वहाँ एक रात्रि निवास करके फिर भी पूर्व मुख को चले, भरतजी की आज्ञा से भरतजी की सेना अनेक तीर्थों में निवास करती हुई और अनेक नदियों को पार करती हुई हस्तिपीठ नामक नगर में पहुँची वहाँ कुटिका नामक नदी को पार करके लोहित नगर में पहुँचे, वहाँ एक पीवती नदीको पार करके गोमती के किनारे पहुँचे। गोमती को पार करके कलिंग नगर से होते हुए सालनामक बन में पहुँचे वहाँ रात्रि में निवास करके सातवीं रात्रि के बाद प्रातःकाल अयोध्यापुरी के समीप पहुँचे। अयोध्या को आगे देखकर भरतजी सारथी से बोले, यह पवित्र अयोध्या नगरी हमको प्रसन्नता पूर्वक नहीं दीख पड़ती क्योंकि हे सारथी ! अयोध्या से दूर पर पीली रंग की भूमि दिखाती है और जो अयोध्यापुरी के चारो ओर स्त्री पुरुषों के शब्द से चहचह रहता था वह शब्द आज नहीं सुनाई देता है और बगीचों में मनुष्य सायंकाल में सदा क्रीड़ा करते थे, ब्राह्मण लोग कुश समिधा आदि के लिये दौड़ते थे सो वह सब आज नहीं दिखाई पड़ता। पालकी से रथ से हाथी से घोड़े से आते जाते मनुष्यों का समूह नहीं दीख पड़ता है इस कारण यह अयोध्यापुरी हमको जंगल के समान जान पड़ती है जो यह सब सुन्दर स्थान के वृक्षों पर मतवाले और शब्द करनेवाले भँवरे और कोकिला आदि पक्षी निवास करते थे और यहाँ पर भोगविलास करनेवाले स्त्री पुरुष

अपने लताभवन आदि अपने भोग के अनुकूल बनाये रहते थे वह स्थान आज शोभा से हीन दिखाई देते हैं और वृक्षों के नीचे सूख सूख कर पत्ते गिरे हैं मालूम पड़ता है कि यह सब वृक्ष रोदन करते हैं प्रातःकाल में पक्षियों के मधुर शब्द जो चारो ओर सुन पड़ते थे, वे शब्द करनेवाले पक्षीगण मूक के सदृश हैं, जो अयोध्यापुरी की वायु सड़क पर छिड़के हुए अगर चन्दन के सुगन्ध को लेकर चलता था वह अत्यन्त गरम और धूलि के साथ चल रहा है। राज्य स्थान पर सदा भेरी मृदंग वीणा आदि बाजों के शब्द सुन पड़ते थे वह निःशब्द होगया इस प्रकार के अनेक अनिष्ट को देखकर हमारा हृदय कांपता हैं इन्द्रियां व्याकुल होगई हैं, यह कहते हुए भरतजी अयोध्या-पुरीमें पहुंचे, भरतजीको देखकर नगरके द्वारपाल विजयको पीछे चलते देखकर व्याकुल हृदय से द्वारपालकों के दिये पूजा और सत्कार को स्वीकार करके विजय नाम सारथी से भरतजी बोले, हे निष्पाप ! बिना कारण हम दूतों के द्वारा शीघ्र बुलाये गये इसलिये अशुभ की शंका से हमारा हृदय कांपता है, जो हमने कथाओं में महाराज का नाश सुने थे उसी के अनुसार हम सबकी चेष्टा को देखते हैं, नगर में कभी झाड़ बहार नहीं होता है, किसी का किसी के साथ प्रेम नहीं दिखाई देता, मकान के केवाड़े इधर उधर सब खुले हैं बलि-वैश्य देव से हीन वेदियां पड़ी हैं, मनुष्यों की मुखकान्ति मलीन सी दिखाई देती है, अयोध्या में ध्वजा और तोरण का अभाव दिखाता है, देव स्थानों में पूजा पाठ नहीं होता है नगरबासियों का घर लक्ष्मी से हीन जान पड़ता है, यज्ञशालाओं की अग्नि शान्त होगया है और सभी स्त्री पुरुष के आंखों में आंसू भरे हैं, इस प्रकार सारथी से बात चीत करते हुए भरतजी राजद्वार पर पहुंचे। राजद्वार के चौरोहपर तमाम धूलि उड़ रही है और चारो ओर मनुष्यों से खाली राजभवन है, केवाड़ जिधर तिधर खुले हैं लोगों में उदासीनता है, यह सब देखते

हुये शिरको नीचा किये दुःखित मन से अपने पिता के स्थान पर पहिले गये ।।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकसप्ततितमः सर्गः ॥ ७१ ॥

इसके उपरान्त भरतजी अपने पिता के भवन में महाराज दशरथ को न देखकर तत्काल कैकयी के भवन में प्रवेश किये, केकयी भरतजी को देखकर विह्वल हृदय से शय्या से उठ पड़ी । लक्ष्मी से हीन धर्मात्मा भरत जाकर माता के सुन्दर चरण को ग्रहण किया, कैकयी भरतजी को स्नेह पूर्वक सूंघ कर गोदमें लेकर उनका समाचार पूछने लगी, हे पुत्र ! आज कितने दिन हुए आपको अपने मामा के घरसे चले, मार्ग में शीघ्र चलते हुए आपको अत्यन्त थकावट हुई होगी, हे पुत्र ! तुम्हारे नाना और युधाजित् तुम्हारे मामा आदि सब लोग कुशल से तो हैं और वहां रहने के अपने सुखको हमसे कहो, केकयी के इस प्रकार पूछने से राजनन्दन कमलनयन भरतजी माता को सब समाचार कह सुनाये कि मामा के घरसे चलने को आज सात दिन बीत गये, हे माता ! नाना और मामा परिवार आदि सहित कुशल से हैं, और जो कुछ धन रत्न हमको वहां से मिला है वह सब अभी मार्ग में हैं, राजा की आज्ञा से दूत लोग हमको शीघ्र बुलाने को गये थे, उनकी शीघ्रता के कारण से हम अत्यन्त शीघ्रता के सहित आये हैं । हे माता ! अब हम जो कुछ पूछें उसे कहो, तुम्हारा स्थान आज पिताजी से खाली क्यों दिखाता है, और तुम लोगों का हृदय प्रसन्न नहीं मालूम पड़ता । तुम्हारे स्थान पर महाराज अधिक करके निवास करते थे उन्हीं को देखने के वास्ते हम यहां पहिले आये सो उनको नहीं देखते हैं इसका क्या कारण है तुम सत्य कहो, क्या महाराज हमारी जेठी माता कौशल्या के स्थान में तो नहीं हैं, भरतजी के बचन को सुनकर कैकयी बोली, हे पुत्र ! संसारी मनुष्यों की जो जन्म मरण की गति होती है वह गति तुम्हारे पिता की हुई, महात्मा राजा दशरथ स्वर्ग को गये,

केकयी के मुख से दारुण बचन को सुनकर भरतजी व्याकुल होकर पृथिवी पर गिर पड़े औ एकान्त मुग्ध हो गये, मैं तो हत होगया, ऐसा कहकर हाथ पैर फेंकते हुए बिलाप करने लगे, पहिले यह हमारे पिताकी शय्या शरत्काल के निर्मल चन्द्रमा के समान उज्वल और प्रकाशमान दीख पड़ता था आज वही शय्या बिना चन्द्रमा के रात्रि के समान जलसे हीन नदी के समान हो गया है, ऐसा कहकर अपने आँखों की आंसूओं को पोंछ कर हृदय की पीड़ासे भरतजी परिताप करने लगे, । पिता के मरणरूपी शोकसे पीड़ित भरतजी को देखकर केकयी ने अपने गोदमें लेलिया, भरतजी को उठाकर बोली, हे राजपुत्र! तुम उठो क्यों चिन्ता में पड़ेहो, बिधाता की गतिको कौन मेटसकता है, तुम्हारे समान ज्ञानी मनुष्य को चिन्ता नहीं करना चाहिये, चिर-काल तक रोदन करके शोकसे परिपूर्ण भरतजी केकयी से बोले कि जिस समय दूत लोग हमको बुलाने गये थे उस समय की जल्दी से हमको यह निश्चय हुआ कि महाराज श्रीरामचन्द्रजी को अभिषेक करेंगे इसी कारण से हमें भी शीघ्र बुलाया है, परन्तु यहां आकर अपने मनोरथ के फल को उलटा देखे, इस कारण हमारा हृदय फट रहा है, कि हम लोगों को सदा प्यार करने वाले पूज्य पिताके चरणारविन्द का दर्शन नहीं हुआ, धन्य रामचन्द्रजी और लक्ष्मण जी हैं जिन्होंने पिता की सेवा और मरण संस्कार किये अच्छा पिता के स्थान पर जेष्ठ भाई पिता के समान होते हैं इसलिये रामचन्द्रजी के चरण को ग्रहण कर के अपने हृदय के सन्ताप को नाश करूंगा। धर्म को जानने वाले धर्म का पालन करने वाले सत्य प्रतिज्ञा वाले सत्य पराक्रम वाले हमारे पिता मरने के समय क्या सन्देस कहे हैं उसको तुम कहो, हे माता! हमारी सुनने की इच्छा है, यह भरतजी के पूछने पर केकयी बोली, हे पुत्र! हा राम हा लक्ष्मण हा सीता यह कहते हुए महाराज परलोक को गये, रामचन्द्र सीता और लक्ष्मण को लौटकर आनेपर उनके दर्शन से और मनुष्य अपने मनोरथ के

फल को प्राप्त करेंगे यही सन्देशा मरने के समय महाराज कहे हैं इस प्रकार केकयी के मुख से भरतजी सुनकर विषाद पूर्वक अपनी माता से पूछे, कि धर्मात्मा रामचन्द्रजी लक्ष्मण और सीता के सहित कहां गये हैं जहां से लौटकर आवेंगे, भरतजी को इस प्रकार पूछने से केकयी समस्त बातों का कहना आरंभ किया, हे पुत्र ! रामचन्द्रजी लक्ष्मण और जानकी के सहित दण्डकारण्य को गये हैं यह सुनकर भरतजी बनका कारण पूछने लगे, क्या रामचन्द्रजी ब्राह्मणों का धन हरण किया है अथवा किसी धनवान को दरिद्र किया है जिस अपराध से रामजी को बन भोगना पड़ा अथवा श्रीरामजी किसी पराये स्त्री को कुदृष्टि से तोनहीं देखा अथवा किसी ब्राह्मण का बध तो नहीं किया किस कारण रामजी को बनवास करना पड़ा। इसके उपरान्त स्त्री के स्वभाव से केकयी बनवास का कारण कहने लगी । हे भरतजी! और कुछ भी दोष रामचन्द्रजी में नहीं है, रामचन्द्रजी के अभिषेक महोत्सव को सुनकर हमने महाराज दशरथ से तुम्हारे वास्ते राज्य और रामचन्द्रजी को बनवास की प्रार्थना किये, महाराज अपने सत्य पथ पर आरूढ़ होकर हमारी प्रार्थना को स्वीकार किये, रामचन्द्रजी लक्ष्मण और सीता के सहित चौदह वर्ष बनवास करने के वास्ते दण्डकारण्य को गये, उनके शोक से पीड़ित होकर दुःख को न सहन करके महाराज परलोक को गये। हे धर्मज्ञ ! अब तुम शोक सन्ताप को छोड़कर धैर्य-पूर्वक राज्य को स्वीकार करो, हे पुत्र ! वशिष्ठ पुरोहित और मन्त्रियों के सहित अपना अभिषेक करके पृथिवी का भोग करो ।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे द्विसप्ततितमः सर्गः ॥ ७२ ॥

इसके उपरान्त पिता के मरण को और भाई के बनवास को सुनकर भरतजी द्विगुण दुःख से पीड़ित होकर इस प्रकार बचन को बोले, हे माता ! क्यों तूं अपार दुःख को देखकर हमारे राज्य की चिन्ता से पिता के समान जेष्ठ भाई का त्याग किया, राजा के मरण से पीड़ित हमको रामचन्द्रजी के बनवास का और भी दुःख दिया मानो हमारे

घाओं पर तैंने निमक छोड़ दिया, तुम रघुकुल को नाश करने के लिये कालरात्रि के समान हुई तैंने मोह से इस कुल के सुख को हरण किया महाराज दशरथ अग्नि के समान तेरा स्पर्श करके दुःख-रूपी आग से जल गये तैंने कौनसा लाभ देखकर इस कार्य को आरंभ किया, रामचन्द्रजी कौशल्या के समान तुम्हारा आदर करतेथे, कौशल्या भी तुझे अपने बहिन के समान जानती थीं उनके पुत्र को तैंने कौनसा पाप के बदले बनवास दिया है, केवल राज्य के लोभ से तूने यह महा अनर्थ किया है, अब मैं बिना रामचन्द्र और लक्ष्मणजी को देखे किसकी सामर्थ्य से राज्य का भार निर्वाह कर सकता हूं। अपने पिता और भाई से बिहीन होकर किसके बल से राज्य का पालन करूं, अथवा यदि हम अपनी शक्ति और बुद्धि बल से पालन भी करैं तो भी तुम्हारे मनोरथ की सिद्धि के लिये राज्य की इच्छा हम नहीं करते हे पाप करने वाली! तुझे यह बुद्धि क्यों उत्पन्न हुई जिससे तूने सदाचार को नष्ट किया, रे दुष्टा! हमारे कुल का धर्म है कि जेठे भाई को राज्य होता है उनसे अतिरिक्त जितने भाई होते हैं वह सब बड़े भाई के अधीन होकर उनकी आज्ञा का पालन करते हैं। हे माता! राजवंश में विशेष करके रघुकुल में जेठे भाई को राज्य होता है इस प्रकार की चलने वाली राजनीति के मर्यादा को तैंने अपने अभिमान से नाश किया, हे माता! तुम्हारे कहने के अनुसार हम राज्य को न करके अपने प्राण को छोड़ देंगे, और नहीं तो बन से प्रभावशाली श्रीरामजी को लौटाकर उनकी सेवाकई करैंगे, इस प्रकार भरतजी पीड़ा देने वाले बचन को केकयी से कहकर ऐसा चिल्लाये कि मानो गुफा से सिंह गर्जता है।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे त्रिसप्ततितमः सर्गः ॥७३॥

कैकयी को इस प्रकार दुर्वचन कहकर भरतजी क्रोध पूर्वक फिर बोले, हे पाप करने वाली निर्दयी दुष्ट चरित्रवाली हमारे मरने पर तूभी कौशल्या के समान रोदन करोगी जैसे तूने रामजी को बनवास दिया और शोकसे पीड़ित करके पिता के प्राण को नाश किया

वैसेही हमारे मरने से तू भी दुःखी होगी, हे केकयी ! इस रघुकुल को नाश करने के वास्ते जो तूने पाप किया है इस पाप के बदले तुझे नरक वास हो, तुम्हें कभी न स्वर्ग का लाभ होवे, तुम्हारे इस दुष्कर्म से इस लोक में और परलोक में भी तेरा अयश छा गया है, हे दुष्ट कर्मको करने वाली ! हम तुम्हारे साथ संभाषण करना नहीं चाहते, तुम्हारे इस पाप कर्मसे कौशल्या और सुमित्रा तथा और भी हमारी माताएँ श्रीरामचन्द्रजी के वियोग में अपना प्राण अवश्य छोड़ देंगी, हे केकयी! धर्मराज के समान धर्मात्मा महाराज अश्वपति के कुलमें तूने कुलको नाश करने के लिये राक्षसी होकर उत्पन्न हुई जो तेरे कर्मसे पिता के समान पालन करने वाले रामचन्द्रजी को बनवास दिया, शोकके मारे पिता प्राण छोड़कर स्वर्ग को गये इस पति और पुत्र के वियोग से तूने अपने को नरक लोकका ठिकाना किया है, सकल चराचर जगत को पालन और नाश करने वाले परब्रह्म परमेश्वर के अवतार श्रीरामजी के महिमा को तूँ क्या नहीं जानती है। पुत्र का हर एक अंग माता को प्यारा होता है, वृद्ध लोग ऐसा कहते हैं कि एक समय में कोई खेतिहर हल जोतता था, आधे दिन तक हलको जोतने से बैल थकित होकर पीड़ा को पहुंचे, इसके उपरान्त उन बैलों के दुःखको देखकर कामधेनु को अत्यन्त दुःख हुआ, उस दुःख को सहन न करके रोदन करने लगी, उनकी शरीर के रोम रोम से आंसू के बुन्द गिरने लगे, कामधेनु को दुखी देखकर देवलोक के राजा इन्द्र कामधेनु के पास आये, और हाथ जोड़कर कामधेनु से बोले, हे–जगत् की माता हम सब देवताओं पर किस प्रकार का दुःख है तुम किस निमित्त दुःख को भोगती हो, अपने शोक का कारण हमसे कहो, इन्द्रके इस प्रकार बचन को सुनकर कामधेनु बोली ! हे देवराज हम सब देवताओं को कुछ भी भय और विपत्ति नहीं है, हमारे इन दोनों पुत्रों को यह किसान अब तक हलमें जोतता है, मध्यान्ह का समय है सूर्य नारायण के तेज से यह लोग दुखी हैं

घाम और प्यास से इनकी आत्मा व्याकुल है इनको व्याकल देखकर हमारे आंखों से आंसू गिरता है कि हमारे शरीर से उत्पन्न होकर यह लोग इतनी पीड़ाको सहते हैं, हे देवराज ! पुत्र के समान दूसरा कोई प्रिय नहीं है, काम धेनु के बचन को सुनकर इन्द्र चिन्तित हो गये कि जिसके हजारो पुत्र संसार में व्याप्त हैं, वह भी पुत्र के प्रेम से इतना दुःख उठाती है तो संसार में पुत्र से अधिक प्रिय दूसरा कोई नहीं है, तो हजारों पुत्र को रहते हुए भी कामधेनु को पुत्र का इतना बड़ा दुःख हुआ फिर एक पुत्र वाली कौशल्या रामचन्द्रजी के बिना कैसे जीवेंगी, एक पुत्र वाली सुशीला कौशल्या को जो तुमने ऐसा दुःख दिया है तो उनके दुःख से लोक परलोक दोनों में तुम्हें दुःख भोगना पड़ेगा और हम अब पिता के समान अपने भाई रामचन्द्रजी की सेवा करके निःसन्देह अपने यश को बढ़ाऊंगा, श्रीरामचन्द्रजी को बनसे लौटाकर हम स्वयं उनके स्थान पर बनबासको करूंगा और जो तुमने रामजी को बनवास देकर पाप किया है उसका प्रायश्चित्त यह करो, चाहे आग में जल जाओ अथवा दण्डक बन में जाकर बास करो अथवा अपने गले में रस्सी बांध कर अपना प्राण दे डालो इस तीन से अतिरिक्त तुम्हारे लिये चौथी कोई उपाय नहीं है, और हम भी श्रीरामजी को बन से लौटाकर अपने कलंक का उद्धार करके कृत कृत्य होऊंगा यह कहकर भरतजी मूर्छित होकर पृथिवी पर इस प्रकार गिर पड़े जैसे अंकुशसे हाथी बंधी जाती है, जैसे इन्द्र कुपित होकर राज्य आदि से पतित होते हैं इन्द्र के समान भरतजी वस्त्र और अलंकार का त्याग करके लाल नेत्र किये क्रोध से पूर्ण पृथिवी पर गिर पड़े।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे चतुः सप्ततितमः सर्गः ॥ ७४ ॥

इसके उपरान्त भरतजी मूर्छा से चिरकाल के बाद चेतना को पाकर आंखों में आंसूओं को भरे हुए दीन दशा में पहुंच कर केकयी की ओर देखे और सुमन्त्र आदि मन्त्रियों के सामने केकयी को तर्जना करने लगे और कहने लगे कि शत्रुघ्न के सहित हम दूर देशमें गये

थे हमको श्रीरामजी के अभिषेक का समाचार कुछ भी नहीं मालूम था, श्रीरामजी के तथा लक्ष्मणजी के तथा सीताजी के बनवास को नहीं जानते, इस प्रकार भरतजी के विलाप को सुनकर कौशल्या सुमित्रा से बोली कि केकयी के पुत्र भरतजी आये हैं हम भी उनको देखना चाहती हूं इधर भरतजी शत्रुघ्न को साथ लेकर कौशल्या के स्थान पर गये, भरत और शत्रुघ्न को देखते ही कौशल्या गोद में लेकर रोदन करती हुई बोलीं, हे पुत्र ! तुमको राज्य मिलने के वास्ते केकयी ने हमारे पुत्र रामचन्द्र को चीर देकर बनवास दिया है, इस प्रकार के अनेक बातों से कौशल्या भरत को भर्त्सना करने लगी, भरतजी कौशल्या के बचन से अपने ऊपर आक्षेप जानकर व्याकुलता से कौशल्या के चरणों पर गिर पड़े, यदि रामचन्द्रजी और विलाप करते हुए हाथ जोड़ कर बोले, माता ! रामचन्द्र में पहिले जो प्रीति थी अब उससे और अधिक है, यदि रामचन्द्रजी के बन भेजने के विषय में हमारी अनुमति होवे तो हमारी बुद्धि भ्रष्ट हो जावे, अथवा सूर्य के संमुख मल मूत्र करने का जो दोष होता है गौ को चरण से मारने का जो पाप होता है वह हमको होवे, प्रजा के साथ बिरोध करनेवाले राजा को जो पाप होता है, रण से भागने का शूर वीर को जो पाप होता है शास्त्र के बचन को न मानने वाले को जो पाप होता है वह हमको होवे । गुरु के साथ विवाद करने का, मित्र से द्रोह करने का जो पाप होता है वह हमको होवे, जो दूसरे किये उपकार को नहीं मानते उन्हें जो पाप होता है परिवार को छोड़कर अकेले भोजन करने वाले को जो पाप होता है वह हमको होवे, राजा स्त्री बालक वृद्ध को बध करने में जो पाप होता है सेवक को त्याग करने का जो पाप होता है वह हमको होवे, लाह सहद मांस और लोह आदि के बेचने का तथा परिवार आदि को विष देने का जो पाप होता है वह हमको होवे, संग्राम से भागते हुए मनुष्य के प्राण को मारने का जो पाप होता है, ब्राह्मण को बध करने का जो पाप होता है

मदिरा पीने का जो पापा होता है पर स्त्री गमन करने का जो पाप होता है जुआ खेलने का जो पाप होता हैं वह हमको होवे, शूद्र को दान देने दूसरे के धन को चुराने का सूर्य के उदय काल में और अस्त के समय में सूतनेवाले को जो २ पाप होते हैं वह हमको होवे, गृह में आग लगाने से गुरु की स्त्री से भोग करने का मित्र से द्रोह करने का जो पाप होता है वह हमको होवे, देवता पितर माता पिता की सेवा न करने वाले नास्तिक को जो पाप होता है, अर्थी को विमुख फेरने का जो पाप होता हैं वह हमको होवे, रजस्वला स्त्री को स्पर्श करने का बछड़ा मरे हुए गौ के दूध दूहने का ब्राह्मणों को दुर्वाद कहने का जो पाप होता है वह हमको होवे, इस प्रकार शपथ पूर्वक भरतजी कौशल्या को धैर्य दिये, कष्ट पूर्वक शपथ करते हुए दुःखित भरत से कौशल्या बोली, हे पुत्र ! हमारा दुःख आज और भी बढ़ गया आपके इतने शपथ से हमारा प्राण और भी पीड़ा को पहुंचा। हे राजपुत्र भरतजी ! बड़े आनन्द की बात है जो तुम धर्म से विचलित होना नहीं चाहते, हे बच्चे ! प्रतिज्ञा को सत्य पालन करनेवाले मनुष्य सज्जनों के मार्गपर पहुंचते हैं ऐसा कहकर भरतजी को गोद में ले कर कौशल्या बार बार रोदन करने लगीं, मोह और शोक से पीड़ित होकर मूर्छा को प्राप्त हुए। पुनः रात्रि बीत जाने के बाद मन्त्रियों के सहित बशिष्ठजी आये।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे भाषायां पंचसप्ततितमः सर्गः ॥७५॥

शोक से पीड़ित भरतजी से बशिष्ठजी बोले, हे राजपुत्र ! शोक मतकरो, अब महाराज दशरथ का प्रेतकार्य करो, बशिष्ठजी के बचन को सुनकर भरतजी साष्टाङ्ग दण्डवत किये और प्रेत संस्कार करने को प्रस्तुत होगये, महाराज दशरथ की लोथ को तेल से निकालकर पृथिवी पर रखकर इस प्रकार रोने लगे, हे महाराज ! हमारे को देशान्तर जानेपर श्रीराम लक्ष्मणजी को बनवास देकर आपने क्या यश उठाये हे महाराज! हम सब दुःखितजनों को छोड़कर आप कहां चले गये, जिन प्रजाओं

का आप अति प्रयत्न से पालन करते थे उनका भार किस को सौंप कर आप चले गये, आपके विना इस पृथिवीकी शोभा नहीं होती जैसे पतिके मरने पर स्त्रियोंकी शोभा नहीं होती, इस भांति विलाप करते हुए भरतजी से फिर वशिष्ठ मुनि बोले, हे भरतजी ! अब व्याकुलता को छोड़कर महाराज दशरथ के लोथ को लेकर इसका अग्नि संस्कार और प्रेत कार्य करो ! वशिष्ठजी की आज्ञानुसार ऋत्विक् आचार्य और पुरोहित को शीघ्र बुलाकर महाराज दशरथ की स्थापन की हुई अग्नियों को अग्निहोत्र शाला से बाहर करके यथा विधि से हवन किया, इसके उपरान्त पालकी में लोथ को रखकर राजसेवक चिता [श्मशान] की ओर चले । मार्ग में चांदी सोना वस्त्र आदि लुटाते हुए ब्राह्मणों के सहित भरतजी चले, वहां चितास्थान पर पहुंचकर चन्दन और गुगुल देवदारु आदि को चिता की आग में छोड़े जब उससे उत्तम सुगन्ध निकलने लगी तब महाराज की लोथ को चिता के ऊपर रख दिये ब्राह्मगण ! पितृमेधि मन्त्रों का जप करने लगे, इधर नगर की वृद्धा स्त्रियों के सहित कौशल्या आदि रानी पालकियों पर चढ़कर सरयू किनारे पहुंच कर बार बार रोदन और विलाप करने लगीं पालकी से उतर पड़ीं, इसके उपरान्त भरतजी अपनी माताओं के मन्त्रियों के पुरोहित तथा ब्राह्मणों के सहित जलदान देकर आंसुओं को बहाते हुए अपने स्थानपर पहुंचगये ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे भाषायां सप्ततितमः सर्गः ॥ ७६ ॥

इसके पीछे भरतजी दश दिन में अशौच से निवृत्त होकर बारहें दिन श्राद्धकर्म को किये, उस श्राद्धकर्म में अनेक प्रकार का धन रत्न और अन्न वस्त्र सोना चांदी पालकी दास और दासी को ब्राह्मणों को दान दिये, इसके उपरान्त तेरहवें दिन महाबाहु भरतजी विलाप करते हुए शोक से मूर्छित होगये, कण्ठ स्वर बन्द होगया पुनः चेतना को पाकर भरतजी बोले हे–तात ! श्रीरामजी को बनबास दिये और हमको अकेला छोड़कर आप कहां चलेगये,–हे पिता ! जिस अनाथा की गति पुत्रही मात्र अधार हैं उन कौशल्या और सुमित्रा के पुत्र

को बनमें भेजकर आप कहां गये, तेरहें दिन नहीं जली हुई पिताकी हड्डी को देखकर भरतजी विलाप करते करते व्याकुल होगये, रोदन करते पृथिवी पर गिरे भरत को मन्त्रियों ने उठाकर धैर्य दिया, भरतजी को दुःख में देखकर और पिताके लालन पालन प्रेम तथा उनके स्नेह को स्मरण करके विलाप और रोदन करते हुए मूर्छित होगये, और कहने लगे कि कैकयी के वरदान रूप शोक सागर में हम लोग डूबते हैं। हे तात! हम सब राजकुमारों का आप पालन करते थे वह विलाप करते हुए भरत को छोड़कर आप कहां गये, शत्रुघ्न के शोक और करुणा के बचन को सुनकर भरतजी बोले, हे पिता! हम लोगों के इच्छानुसार भोजन वस्त्र तथा अलंकार को आप देते थे अब उसको कौन देवेगा! हे पृथिवी माता! सदा तुम्हारी रक्षा करने वाले और तुम्हारे दुःखको नाश करने वाले महाराज दशरथ के बिना भी तुम दोटुकड़ा नहीं होती हो! श्रीरामचन्द्रजी भाई और पितासे बहीन अयोध्या में हम नहीं रहेंगे हम रामचन्द्रजी के साथ तपोबन में निवास करेंगे, भरत और शत्रुघ्न के विलाप को सुनकर पुरोहित वसिष्ठजी उनको गोदमें लेकर समझाने लगे हे राजपुत्र! तुम्हारे पिता प्रेतके संस्कार का तेरहवां दिन है अब इस हड्डी का संस्कार शीघ्र करो, यह जन्म मरण सुख दुःख हानि लाभ प्राणि मात्र को होता है इसकी चिन्ता न करनी चाहिये, वसिष्ठजी के कहने के अनुसार सुमन्त्र भी धैर्य दिया, भरत शत्रुघ्न गुरुके आदेश से अपने अपने आंखों के आंसुओं को पोछ कर मन्त्रियों से बोले, मन्त्रिन्! इस भस्मोद्धारकी क्रिया को समाप्त करने में शीघ्रता कीजिये॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे सप्तसप्ततितमः सर्गः॥ ७७॥

शत्रुघ्नजी रामचन्द्रजी के समीप की यात्रा का विचार करके भरतजी से बोले, हे भाई! दुःख पड़ने पर जो श्रीरामचन्द्रजी के नाम को स्मरण करता है उसका दुःख मोचन होजाता है जो राम समस्त जगत को पालन और नाश करने वाले हैं उनके शरण में

चलना चाहिये, देखो साक्षात् रूपमेश्वर के अवतार रामजी को स्त्रियों ने बनबास दिया, अथवा राज्य के लोभ से रामचन्द्रजी पिताके बचन का उल्लंघन नहीं किया है इस अयश से बनका जाना स्वीकार किया है परन्तु महापराक्रमी लक्ष्मणजी ने सब प्रकार से यह अनुचित किया है, नहीं तो पिताका निग्रह करके रामचन्द्रजी को बनबास करने से निवारण करदेते, जो राजा स्त्रियों के अधीन होकर अन्याय मार्ग पर प्राप्त हुए, इस कारण लक्ष्मणजी को चाहिये कि न्याय अन्याय का बिचार करते । शत्रुघ्नजी भरतजी से इस प्रकार कही रहे थे कि इतने में मन्थरा उत्तम वस्त्र और आभूषण पहिने शरीर में चन्दन लगाये सुगन्धित पुष्पों की माला पहिने शत्रुघ्नजो के द्वारपर अकस्मात् आकर उपस्थित हुई, उस पाप कारिणी मन्थरा को देखकर द्वारपालकों ने शत्रुघ्नजी से यह समाचार कह सुनाया कि—हे महाराज ! जिसने अपने प्रभाव से रामचन्द्रजी को बनबास दिया और महाराज दशरथ का प्राण नाश किया, वह निर्दयी मन्थरा श्रृङ्गार करके आपके द्वार पर खड़ी है । शत्रुघ्नजी द्वारपालकों के मुखसे मन्थरा के वृत्तान्त को सुनकर अपने सेवकों को आज्ञा दिये कि यह कठोर कर्म करने वाली मन्थरा जिसमें अपने किये कर्म के फलको पावे वैसा उपाय आप लोग करें । शत्रुघ्न के बचन को सुनकर सेवक लोग मन्थरा को बलात्कार से खसीटने लगे, शत्रुघ्न को क्रोधित जान कर मन्थरा के संगकी सखियां भय से भागने लगीं और परस्पर में कहने लगीं कि क्रोधित राजा हम लोगों का प्राण नाश करेगा, इसलिये कृपा करने वाली परमदयायुक्त कौशल्या के शरण में हम लोग चलें, तब तक शत्रुओं को नाश करने वाले शत्रुघ्न भयसे कांपती और रोती हुई मन्थरा को पकड़ कर खसीटने लगे, उसके खसीटने से उसके अंग के गहने टूट टूट कर पृथिवी पर गिरपड़े, उन गहनों के गिरने से राजभवन की इस प्रकार शोभा हुई जैसे शरत् कालमें चन्द्रमा के उदय होने से आकाश की शोभा होती है । मन्थरा को तर्जना देते हुए शत्रुघ्न

केकयी को भी कठोर बचन बोलने लगे, केकयी शत्रुघ्न के कठोर दुर्बचन को सुनकर भरतजी के शरण में गयी, भरतजी शत्रुघ्न को क्रोधित देखकर भरत बोले,—हे शत्रुघ्न ! स्त्रियों को मारना शास्त्र में पाप लिखा है इसलिये आप क्षमा करिये, यदि रामचन्द्र हमारे ऊपर क्रोध नहीं करेंगे तो हम स्वयं पाप करने वाली इस दुष्ट केकयी का प्राण हरण करूंगा, हे—शत्रुघ्न ! इस मन्थरा के बधको सुनकर स्त्री घाती हम लोगों को जानकर धर्मात्मा श्रीरामजी हम सबको त्याग-कर देवेंगे। भरतजी के धर्म बचन को सुनकर शत्रुघ्न मन्थरा को छोड़ दिये और अधिक क्रोध के कारण मूर्छित होगये, मन्थरा केकयी के शरण में जाकर रोदन करने लगी ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे भाषायां अष्टसप्ततितमः सर्गः ॥७८॥

इसके उपरान्त चौदहें दिन प्रातःकाल मन्त्रि और पुरोहित तथा सभासद्गण राजसभा में आकर भरतजी से बोले, हे राजपुत्र ! हम समस्त प्रजाओं के परम गुरु महाराजदशरथ स्वर्ग को गये, और राज्य करने योग्य अपने भाइयों में श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी बनको सिधारे उनकी चरण सेवा करने के लिये लक्ष्मणजी भी बनको गये इसकारण हे राजपुत्र ! आप राज्य करना स्वीकार करें, आप यह न बिचारिये कि रामचन्द्रजी के अतिरिक्त हम किस प्रकार राज्य को भोगें, जैसे श्रीरामचन्द्रजी पिता के बचन को मानकर बन को गये हैं वैसेही आप भी अपने पिता के बचन का पालन करके राज्य का भोग करो क्यों कि यह राज्य बिना राजा के है, और सकल प्रजा आपकी प्रतीक्षा करती है आप राज्य को स्वीकार करके हम लोगों का दुःख छुड़ाइये, यह सब अभिषेक की सामग्री है इसको ग्रहण कीजिए, भरतजी उस अभिषेक की सामग्री को प्रदक्षिणा करके प्रणाम किये और मन्त्री सभासद तथा प्रजाओं से बोले. कि हमारे सूर्यवंशियों के कुल में ज्येष्ठ को राज्य होता है सो श्रीरामचन्द्रजी को छोड़कर आपलोगों को हमारे वास्ते अभिषेक की चर्चा करना उचित नहीं है,

श्रीरामजी राज्य करेंगे, और हम उनके स्थान पर चौदह वर्ष तक बनवास करेंगे, हमारी सेना प्रस्तुत करो हम जेठे भाई रामचन्द्रजी को बन से लौटाने को चलूंगा। और यह सब अभिषेक की सामिग्री को आगे से लेचलकर अग्निहोत्रशाला में रखिये वहीं पर श्रीरामजी को अभिषेक होगा, हे प्रजागण! हम अपने अभिषेक को ग्रहण करके केकयी की कामना को पूरा नहीं करूंगा बल्कि हम दुर्गम बनमें निवास करेंगे और श्रीरामचन्द्रजी राजा होंगे, कारीगरों से कहिये कि मार्ग को बनावें और मार्ग तथा दुर्ग की रक्षा करने वाले सेवक गण रक्षा करें। रामजी के वास्ते भरतजी के बचन को सुन कर मन्त्रियों ने यथा-स्थानपर सेवकों को नियुक्त किये और भरतजी के स्नेह को देखकर सब लोग आशीर्बाद देने लगे कि हे भरतजी! तुम धन्य हो, जो जेठे भाई को पृथिवी देने की इच्छा करते हो, भरतजी के स्नेह और प्रेम को श्रीरामचन्द्र में देखकर सकल प्रजा प्रसन्न होगयी, कारीगर मार्ग को बनाने लगे सेवकगण प्रसन्नता पूर्वक अपने कार्य में निरत होगये॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकोनाशीतितमः सर्गः ॥७९॥

मन्त्रियों की आज्ञा को पाकर सजल निर्जल स्थान को जानने वाले गृह आदि को बनाने वाले कुआं तालाव खोदने बाले कारीगर अपना अपना काम करने लगे, केवल वेतन से जीविका करने वाले रथ आदि को बनाने वाले मार्ग को बनाने वाले मार्ग में लटके हुए वृक्षों को काटने वाले मकानों की छुहाई करने वाले बांसकी डाली आदि बनाने वाले चमड़े के बस्तुओं को बनाने वाले बाग के माली आदि को बुलाकर मन्त्रियों ने कार्यों में नियुक्त करदिया, मन्त्रियों की आज्ञा को पाकर वे सब काम करने वाले प्रसन्नता से इस प्रकार चले जैसे बेगसे चलकर नदी समुद्र में पहुंचती है, वे मार्ग को बनाने वाले अपने समूह को लेकर अपने अस्त्रों से मार्ग की ऊंचाई निचाई बराबर करने लगे। जहां वृक्ष नहीं है वहां लगाने लगे जहां कहीं वृक्षों के डालियों से मार्ग छिपगया है उन डालियों को काटकर शुद्ध किये,

जहां जलाशय नहीं है वहां जलाशय खोदे जाने लगे, अनेक प्रकार के चन्दन और पुष्पों से सुवासित जल का सड़कों पर छिड़काव हुआ, इस प्रकार वह अयोध्यापुरी की गली सड़क चौराहा तैयार हुआ मानो देवलोक में इन्द्र की सड़क है चारो ओर केला के खंभा तोरण, कलश, रखे गये मार्गोंपर पताका खड़ा होगया, जैसे तारागण के सहित आकाश मार्ग में चन्द्रमा की शोभा होती है वैसे कारीगरों से बनाई गई अयोध्या की शोभा हुई॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे अशीतितमः सर्गः॥ ८०॥

इसके उपरान्त शेष रात्रिको रहते बन्दीगण मंगल पाठ करने लगे, शंख और दुन्दुभी जोरों के साथ ऊंचे स्वर से बजने लगे, बाजा के उस महा शब्द से दिशाऐं गूंजउठीं, दुन्दुभी के शब्द को सुनकर शोक से पीडित भरतजी अपनी निद्राका विसर्जन करके शत्रुघ्न से बोले, हमराजा नहीं हैं यह हमारे वास्ते क्यों बजता है, देखिये शत्रुघ्नजी केकयी ने कितना बुरा कर्म किया है कि जिस दुःखको हमारे उपर छोड़कर महाराज दशरथ स्वर्ग को गये, इस समय की राज्यलक्ष्मी बिना राजा के इस प्रकार घूमती है जैसे बिना केवट के नौका जलमें घूमती है, जो इस राज्य के योग्य स्वामी हैं उनको हमारी माता ने बनबास दिया है इस प्रकार भरतजी के बिलाप को सुनकर रनिवास की स्त्रियां रोने लगीं, इतने में वसिष्ठजी अपने शिष्यों के सहित भरतजी के अभिषेक की सामग्री को लिये सभास्थान में पहुंचे, वहां पहुंच कर दूतों को वसिष्ठजी आज्ञादिये कि तुम लोग बामदेव आदि ब्राह्मणों को प्रधान सैनिकों को योधाओं को और मन्त्रियों को शीघ्र बुलाओ, इसके उपरान्त शत्रुघ्न और भरत को तथा उनके मामा युधाजित आदिराजाओं से कहो कि रथ हाथी घोड़े आदि पर सवार होकर सभास्थान पर आवें, दूतों के मुखसे वसिष्ठजी की आज्ञा को सुनकर लोगों के आनेका सभा में हलाहल शब्द होने लगा, सबके पीछे राजकुमार भरत अपनी सभा में आये जैसे इन्द्र देव लोक में सुधर्मा सभा में बिराजमान

होते हैं वैसे भरतजी भी शोभाको पाने लगे, भरतजी को सभास्थान में बैठे देखकर प्रजा इस प्रकार आनन्द मनाने लगी जैसे महाराज दशरथ के समय में लोगों को आन्द हुआ था ।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकाशीतितमः सर्गः ॥ ८१ ॥

अनेक प्रकार से भूषित ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य से सम्पन्न सभा में चन्द्रमा के समान बैठे भरतजी से वसिष्ठमुनि बोले, हे तात ! धनधान्य से पूर्ण यह पृथिवी तुमको देकर धर्म पूर्वक महाराज दशरथ स्वर्ग को गये और उसी प्रकार शास्त्र के बचन का पालन करते हुए श्रीरामचन्द्रजी महाराज दशरथ की आज्ञाको शिरोधार्य करके और आपको राज्य देकर बनको गये पिता और भाई मे दिये गये राज्य को अब आप अंगीकार करिये, वसिष्ठजी के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी के अनुराग मे सभास्थान में विलाप करते हुए भरतजी वसिष्ठमुनि मे बोले, हे भगवन्! हमारे समान संसार में और दूसरा कौन है जो सदा ब्रह्मचर्य को पालन करने वाले बेद शास्त्र के तत्व को जानने वाले श्रीरामजी के योग्य राज्यका स्वामी होवे, यह राज्य को अपहरण करने वाला भरत दशरथ से कैसे उत्पन्न हुआ, हम आरे यह राज्य सब रामचन्द्रजी का है आप हमारे परम गुरू तथा इष्ट देवता हैं इस सभा में आप को धर्मकी बात कहना चाहिये, जैसे महाराज दशरथ राज्य के योग्य रहे वैसे अब रामचन्द्रजी राज्य के योग्य हैं न कि हम, यदि रामचन्द्रजी के बिषय में हमारा कुछ भी पाप होवे तो इस सूर्यबंशियों में कलंकी हम गने जावें, हमारी माता ने जो कुछ अपकार रामचन्द्रजी का किया वह हमारे हृदय में काँटेके समान गड़ता है, हम तो श्रीरामजी को बारबार दंडवत् करते हैं और तीन लोक के राजा रामचन्द्रजी की सेवा करना चाहते हैं, भरतजी के बचन को सुनकर सब सभासद गण रामजी के प्रेम में मग्न होकर हर्षकी आंसू बहाने लगे, इसके उपरान्त भरतजी ने प्रतिज्ञा किया कि यदि रामचन्द्रजी बनसे न लौटेंगे तो हम भी उनके साथ बनबास करूंगा, आप लोगों

के सामने श्रीरामजी को बनसे लौटाने का सब प्रकार से उपाय करेंगे, ऐसा कह कर भरतजी समीप में बैठे सुमन्त्र से बोले, कि आप शीघ्र जाकर सेनाको तइयार कराइये, सुमन्त्रजी भरत की आज्ञा से सैनिकों को तथा नगर के बासियों से यह समाचार कहे कि महाराज भरत रामजी को बनसे लौटाने के लिये चलेंगे आप सब नगर वासी और सैनिक अपने अपने परिवार सहित सब लोग चलिये। यह समाचार सुनकर नगर बासी और प्रधान २ योधायें रथ से गाड़ी से घोड़े से हाथी से चलने को उपस्थित होगये। भरत और वसिष्ठजी की आज्ञा को पाकर ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य सैनिक मन्त्री सारथी बन्दी कौशल्या आदि रानियां और उत्तम रथपर भरतजी चतुरंगिणी सेना लेकर श्रीरामजी को बनसे लौटाने को चले।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे द्वशीतितमः सर्गः ॥ ८२ ॥

इसके पीछे प्रातः काल उठ कर भरतजी रामजी के दर्शन की लालसा से यात्रा किये, आगे आगे उत्तम उत्तम रथपर बैठकर पुरोहित ब्राह्मण तथा मन्त्री चले, इसके उपरान्त नव हजार हाथियों पर सवार होकर राजा लोग चले, साठ हजार उत्तम रथ पर बैठकर सैनिक गण चले, एक लाख घोड़ों पर सवार होकर अन्यान्य लोग चले, सुन्दर रथसे कौशल्या सुमित्रा और केकयी चलीं, यह लोग मार्ग में चलते हुए रामजी की चर्चा करने लगे कि श्याम रंग महाबाहु सत्य और व्रतको पालन करने वाले तथा शोक को नाश करने वाले रामचन्द्रजी को कब देखेंगे, बड़े आनन्द की बात है कि जगत के मोहको नाश करने वाले रामचन्द्रजी हम लोगों को दर्शन देकर कब कृतार्थ करेंगे, बेदको जानने वाले ब्राह्मणों के सहित भरतजी बैल के रथ (गाड़ी) से चले, मार्ग में चलते चलते गंगाजी के किनारे शृङ्गवेरपुर में जहां के निषादराज गुहराजा थे वहां सायंकाल में पहुंचे। वहां अपने परिवार के सहित गुह सावधानी से राज्य करते थे, इधर भरतजी की सेना गंगाजी के किनारे चारो ओर फैलगयी, भरतजी अपनी सेना

को श्रान्त देखकर वहां पर विश्राम करने की आज्ञा दिये सब लोग विश्राम पूर्वक गंगाजी में स्नान और पितरों का तर्पण करने लगे। सेनाओं से संपन्न भरतजी रात्रिकाल में वहां निवास करते हुए रामचन्द्रजी को लौटाने का उपाय सोचने लगे ॥

इति वाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे अशीतितमः सर्गः ॥ ८३ ॥

गंगाजी के किनारे पर महा सेना भरतजी की देखकर निषादराज गुह अपने जाति और परिवार से बोले, कि नदी के तटपर समुद्र के समान महती सेना दीख पड़ती है, विचार करो कि किस देश के राजा की यह सेना है, अथवा अयोध्या के राजा दुर्बुद्धि भरत तो नहीं आये हैं क्योंकि इनके रथपर कोविदार का चिन्ह लगा हुआ है इस कारण यह भरत अवश्य हैं यह हम लोगों को क्या कारागार (जेहल) देवेंगे या प्राण से मारेंगे अथवा पिता से बनवास दिये हुए रामचन्द्रजी का वध करेंगे, निष्कंटक राज्य को भोग करने के लिये कैकयी के पुत्र भरत रामचन्द्रजी को नाश करने के लिये जाते हैं तो हमलोग रामचन्द्रजी के कारण भरत से युद्ध करेंगे, क्योंकि हमारे तो स्वामी सखा सब कुछ रामचन्द्रजी हैं। हमारी पांच सौ नौका यहां रहती है हरएक नौका पर सौ सौ केवट रहते हैं तुम सब केवट इस प्रकार तइयार होजाओ कि यदि भरत की सेना और भरतजी प्रियभाव से मिलने के वास्ते श्रीरामजी के पास जाते हों तो कुशलता से उनकी सेनाको उस पार उतार देना यदि दुष्ट भाव से जाते हों तो इसी जल में सेना को डुबादेना, ऐसा कहकर मछली मांस आदि को उपायन (नजर) में लेकर अपने परिवार के सहित गुह चले, गुह को आते देखकर सुमन्त्रजी रामचन्द्र और गुह की मित्रता को भरतजी से कह सुनाये, भरतजी सुमन्त्रजी के मुख से गुह के चरित्र को सुनाकर और रामचन्द्रजी का भक्त गुह को जानकर प्रेम के बचन से गुह से बोले, हे निषाद राज्य तुम धन्य हो! इतना सुनकर निषाद राज गुह भरतजी से बोला हे भगवन्! हमारा जो कुछ राज्य और धन है वह सब आपका है आज की रात्रि यहां

निवास करके दास के गृहको पवित्र कीजिये और हमारे दिए हुए सत्कार सहित अंगीकार करके आज की रात्रि यहां वास करके कल्ह अपनी सेना के सहित गंगापार होकर भरद्वाज मुनि के आश्रम को जाइयेगा ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे चतुरशीतितमः सर्गः ॥ ८४ ॥

निषाद के बचन को सुनकर महा प्राज्ञ भरतजी प्रयोजन संयुक्त बचन को बोले, हे मित्र ! श्रद्धा से जो कुछ तुमने सत्कार किया है वह अत्यन्त उत्तम किया है कि जो हमारी सेना का सत्कार करने की इच्छा करते हो इस प्रकार गुह की प्रशंसा करके श्रीमान भरत जी प्रेम के वश होकर आगे चलने का मार्ग बार बार गुह से पूंछने लगे, कि इस घोर बनमें कौन से मार्ग से भरद्वाज मुनि के आश्रम को जाऊंगा, भरतजी के बचन को सुनकर बन में भ्रमण करने वाले हाथ जोड़कर बोले, हे राजपुत्र ! आपके दास बनचर (बहेलिया) आपको मार्ग बताने के वास्ते आपके पीछे २ रहैंगे और दुष्ट जन्तुओं का संशोधन करने के लिये मैं भी आपके संग चलूंगा, आपकी यह बड़ी भारी सेना को देखकर हमें सन्देह होगया था कि रामचन्द्रजी से बिग्रह करने के लिये आप जाते हैं किन्तु आकाश के समान निर्मल पाप रहित रामचन्द्र में प्रीति पूर्वक बचन से हमारा सन्देह छूटगया, गुहके बचन को सुनकर प्रेमके बचन से भरतजी बोले, जो तुमने शंका किया वह समय हमारे लिये न आवे, क्योंकि हमारे जेठे भाई रामचन्द्रजी पिता के समान हैं उनके साथ विग्रह की शंका तुमको नहीं करना चाहिये, हम उनको बनसे लौटाने के वास्ते जाता हूं इसके अतिरिक्त हमारा कुछ भी अभिप्राय नहीं है इसको तुम सत्य जानो, भरतजी के बचन को सुनकर निषादराज प्रसन्न होकर फिर भी भरतजी से बोले, आप धन्य हैं भाई में प्रेम करने वाला इस संसार में आपके समान दूसरा कोई नहीं है जो आपने अपने पाये हुए राज्य का त्याग करते हैं, इससे जब तक पृथिवी सूर्य और चन्द्रमा रहैंगे तब तक आपकी कीर्ति रहैगी, जो आप बन में गये रामचन्द्रजी को लौ-

टाने की इच्छा से जाते हैं गुह और भरत की इस प्रकार वार्तालाप होते २ सायंकाल होगया, सूर्य अस्त होगये इसके बाद सत्कार पूर्वक भरत की सेना को रात्रिकाल में निवास करने के लिये गुह ने स्थान देकर भरत और शत्रुघ्न का सत्कार करके शय्या स्थान पर शयन कराये, और अपने रक्षा करने लगे, परन्तु भरतजी श्रीरामचन्द्रजी की चिन्ता रूपी सागर में मग्न होकर मौन होगये भीतर के दाह से इस प्रकार जैसे बनकी अग्नि से वृक्ष जलता है, मारे सन्ताप के भरतजी के शरीर से पसीना चलने लगे जैसे घामको देखकर बरफ गलने लगता है, गुह भरतजी की दशाको देखकर बार बार धैर्य देने लगे ॥

इति वाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे पन्चाशीतितमः सर्गः ॥ ८५ ॥

इसके उपरान्त भरतजी के दुःखको दूर करने के लिये निषाद लक्ष्मणजी का वृतान्त कहने लगे कि सीताके सहित रामचन्द्रजी को शयन करने पर धनुष बाण लेकर श्रीरामजी की रक्षा के लिये लक्ष्मण जी जागरण करने लगे उस समय हम लक्ष्मणजी से बोले, हे तात ! यह सुन्दर शय्या आपके वास्ते है आप इसपर शयन करिये हम धनुष बाण लेकर अपने परिवार के सहित श्रीरामजी की रक्षा करेंगे, हम सत्य कहते हैं कि संसार में रामचन्द्रजी से बढ़कर और कोई हमारा मित्र नहीं है, इनके प्रसाद से मनुष्य को अर्थ धर्म काम मोक्ष चारो पदार्थ मिलते हैं । हम अपनी चतुरंगिणी सेना लेकर सीताके सहित श्रीरामजी की रक्षा करूंगा आप बिना सन्देह शयन करिये, हमारे बचन को सुनकर लक्ष्मणजी बोले, कि सीताके सहित श्रीरामजी को पृथिवी पर शयन करते देखकर हम किस प्रकार निद्राका अवलंबन करें, देवता और असुर जिसके अधीन रहते हैं उनको तृणकी शय्या पर शयन करते देखकर हमको सुख कहां। बड़ी भारी तपस्या से महाराज दशरथ ने रामचन्द्रजी को पाया है सो इनके बनबास से राजा अपना प्राण छोड़ देवगे राजाके मरने पर पृथिवी निश्चय बिधवा होगी, स्त्रियां निरन्तर अयोध्यापुरी में बिलाप किया करती हैं महाराज

दशरथ कौशल्या तथा सुमित्रा श्रीरामचन्द्रजी के बिना यह नहीं जीवेंगे, यदि शत्रुघ्न के आधार पर सुमित्राजीवें परन्तु कौशल्या और महाराज दशरथ अपना प्राण अवश्य नाश करेंगे, यदि सत्यको पालन करने वाले रामचन्द्रजी के साथ कुशलता से लौटकर आवेंगे तो अयोध्यापुरी की शोभा को देखेंगे, इस प्रकार लक्ष्मणजी को बिलाप करते हुए रात्रि बीत गई, प्रातः काल उठकर श्रीरामजी लक्ष्मण और सीताके सहित नित्य कर्म करने के बाद जटा संयमन किये, और हमने नौका पर चढ़ाकर गंगाजी के पार उतार दिये, जटा और वृक्षके बकले को धारण करके महाबली श्रीराम और लक्ष्मण धनुष बाण दो लिये सीताके सहित इसी मार्ग से चले गये।

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे षडशीतितमः सर्गः ॥ ८६ ॥

निषाद के मुखसे अप्रिय बचन को सुनकर भरतजी वेदना से युक्त होकर ध्यान लगालिये, अर्थात् श्रीरामजी के जटाधारण को सुनने में उनको दुःखका उद्वेग होने लगा कि, महाबली सिंहके समान कन्धा (गर्दन) वाले कमल नयन रामचन्द्रजी ने जो जटा को धारण किया तो अवधिके पहिले बनसे न लौटेंगे हमारा जाना व्यर्थ होगा, इस चिन्ता में मग्न होकर मूर्छित होगये, जैसे अंकुश से बेधी गई हाथी मूर्छित होती है, भरतजी को मूर्छित देखकर गुह इस प्रकार कांपने लगे जैसे भूकंप से वृक्ष हिलने लगते हैं, भरत की दशा देखकर शत्रुघ्न भरतजी को गोदमें लेकर रोदन करने लगे, भरत और शत्रुघ्न की दशासे व्याकुल होकर कौशल्या आदि पृथिवी पर गिरकर रोने लगीं, कौशल्या अपने स्वयं चेतना को पाकर शत्रुघ्न के समीप आकर शत्रुघ्न को धैर्य देकर हटादिये और भरतजी को गोदमें लेकर पूंछने लगीं, हे पुत्र ! तुम्हारे शरीर पर कौनसी व्याधि पहुंची इस राजकुलका जीवन तुम्हारेही अधीन है, हे पुत्र! तुम्हारेही आधार पर हम लोगों का जीवन चलता है, हम लोगों को महाराज दशरथ की जगह तुमही एक नायक हो, इस प्रकार कौशल्या के समझाने से भरतजी को

कुछ धैर्य हुआ, चेतना को पाकर भरतजी फिर भी गुह से बोले कि हमारे भाई श्रीरामजी तथा लक्ष्मणजी सिताजी के सहित किस स्थान पर शयन किये थे और कौनसी वस्तु को भोजन किये थे, सो हमसे कहो, जो जो कार्य रामचन्द्रजी किये थे निषादराज उस वृतान्त को कहने लगे, कि मैंने उत्तम उत्तम पक्वान और अनेक प्रकार के फलको श्रीरामजी के वास्ते इकट्ठा किये, उन सब वस्तुओं को केवल मेरी प्रार्थना से अंगीकार करके फिर मुझको लौटा दिया, क्षत्रिय धर्म के अनुसार उसका ग्रहण नहीं किये, लक्ष्मण के लियाये जलको पीकर सीताके सहित उपवास किये, शेष जलसे लक्ष्मणजी संध्या कर्म को समाप्त करके कुशा लेआये और रामचन्द्रजीके वास्ते कुशाकी शय्या बनाये जब जानकी के सहित रामचन्द्रजी उस कुशासन पर बैठे तब लक्ष्मण जी चरण धोकर चरणामृत लिये, इसी इंगुदी वृक्षके नीचे यहीं कुशा-की शय्या है इसी पर सीताके सहित रामचन्द्रजी शयन किये थे और धनुष बाणको लेकर लक्ष्मणजी श्रीरामजी की रक्षा करने के लिये बैठकर रात्रिको व्यतीत किये ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे सप्ताशितितमः सर्गः ॥ ८७ ॥

निषाद के बचन को सुनकर भरतजी इंगुदी वृक्षके समीप जा कर श्रीरामजी कोकुशाकी शय्या को देखकर कौशल्या आदिको बुलाकर दिखा दिया कि महाभाग दशरथ के पुत्र महाराज रामचन्द्रजी इसी शय्या पर रात्रि काल में शयन किये थे, जो रामचन्द्रजी सोने के चांदी के भिति से निर्मित महल में उत्तम शय्या पर शयन करते थे, जहां अनेक वृक्षों के फल पुष्प का सुगन्ध उड़ता है, जहां शीतल मन्द सुगन्ध हवा चलती थी, जहां अनेक प्रकार के सुन्दर बाजे बजते थे, मृदंग के शब्द से जिनकी निन्द्रा खुलती थी, बन्दीजन जिसके गुणका गान करते थे, वह रामचन्द्रजी कुशा के आसन पर शयन करते हैं यह बिश्वास के योग्य नहीं जान पड़ता, अथवा हमको मोह होगया है या स्वप्न देखते हैं, या काल बलवान है जिसके अधीन

होकर श्रीरामजी पृथिवी पर अनाथ के समान शयन करते हैं, बिदेह राज जनक की कन्या और दशरथ की पुत्र वधू जानकी अपने कोमल अंगको कठिन करने के लिये इसी स्थान पर शयन किये थे, यह उनके आभूषण से सोने के चूरा गिरे हैं और उनके रेशमी वस्त्र के तागे टूट टूट कर यह सब कुशाओं में लिपटे हैं, नील कमल के समान श्याम रंग कमल नयन जगत को सुख देने वाले श्रीरामचन्द्रजी अनाथ के समान बनबास करते हैं, श्रीलक्ष्मणजी और जानकीजी धन्य हैं जो उनके बिपति काल में भी उनका संग नहीं छोड़ते और हम सब रामजी की सेवा के बिषय में संशय करके नष्ट हुए, दशरथ को स्वर्ग जाने से और रामचन्द्रजी के बनबास से यह जगत् हमको शून्य जान पड़ता है, रामचन्द्रजी के बिना अयोध्यापुरी की रक्षा कौन करेगा, आज से लेकर फल मूलको खाऊंगा और जटा चीरको धारण करके तृणकी शय्या से पृथिवी पर शयन करूंगा, चौदह वर्ष पर्यन्त शत्रुघ्न के सहित इस प्रकार बनबास पूर्वक पिताके बचन को पालन करके श्रीरामचन्द्रजी को ऋणसे मुक्त करूंगा, और लक्ष्मण के साथ रामचन्द्रजी अयोध्या का और हमारा पालन करें, श्रीरामचन्द्रजी को ब्राह्मण लोग राज्य अभिषेक करें इस हमारे मनोरथ को देवता लोग सत्य करें, श्रीरामजी हमारी प्रार्थना के अनुकूल हमको बनबास देकर अयोध्यापुरी को आवें, इस मनोरथ को बन देवता वृक्ष गंगा आदि नदी पूर्ण करें ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे अष्टाशीतितमः सर्गः ॥ ८८ ॥

गङ्गाजी के किनारे पर सेना के सहित रात्रिको बिताकर प्रातः काल भरतजी शत्रुघ्न से बोले, हे शत्रुघ्नजी ! उठिये प्रातः काल हो गया अब क्या शयन करते हो, निषाद से कहो कि पार होने के वास्ते नौका को शीघ्र ले आवें, शत्रुघ्न बोले हम सोते नहीं हैं जागते हैं इस प्रकार परस्पपर बात चीत आपसमें हो रहीथी इतने में गुह आकर बिनय पूर्वक हाथ जोड़ कर बोले, हे राजन् ! इस नदी के तट पर

कुशलता पूर्वक सेना समेत आपकी रात्रि व्यतीत हुई है, गुहके स्नेह मय बचन को सुनकर भरतजी बोले, हे सखा ! रात्रि सुख से बीती और तुम्हारे सत्कार से सेना भी प्रसन्न है अब नौका के द्वारा हमारी सेना को और हमको गंगा नदी के पार उतार दो, भरतजी की आज्ञा को सुनकर गुह शीघ्रता से अपने नगर में जाकर अपने जातियों से बोले कि प्रातःकाल हुआ तुम लोग उठो तुम लोगों का सदा कल्याण होवे अपनी २ नौका लेकर भरतजी की सेना को पार उतार दो, अपने राजाकी आज्ञाको सुनकर पांचसौ नौका लेकर केवट लोग आये धीरे धीरे हाथी घोड़ा रथ गाड़ी आदि को उतार कर पुरोहित वसिष्ठ और तथा अन्यान्य ब्राह्मणों को पार उतार कर पीछे सेना को पार उतारे इसके उपरान्त कौशल्या आदि स्त्रियां तथा शत्रुघ्न के सहित भरतजी नदी को पार होकर तीसरे मैत्रनामक मुहूर्त में प्रयाग तीर्थ में पहुंचे, भरतजी अपनी सेनाको प्रयाग बनमें ठहराकर वसिष्ठ आदि ब्राह्मणों के साथ भरतजी भरद्वाज मुनि के दर्शन के लिये उनके आश्रम की ओर चले । वृहस्पति के पुत्र भरद्वाज मुनि के आश्रम के समीप पहुंच कर आश्रम के वृक्षों की शोभा को देखते हुए रमणीय आश्रम में पहुंचे ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकोन नवतितमः सर्गः ॥ ९९ ॥

प्रयाग से एक कोस मार्ग आगे जाकर भरतजी ने और सबको ठहरा दिये, केवल मन्त्रि और पुरोहित को संग लेकरचले,अपना धनुष बाण रखकर खाली हाथ तथा पैदल मुनि के स्थान पर पहुंचे, भरद्वाज मुनि बसिष्ठजी को देखते ही आसन से उठ खड़े हुए और अपने शिष्यों को आज्ञा दिये कि अर्घ्य को ले आवो, वसिष्ठजी के समागम के साथ भरतजी ने भी प्रणाम किया, भरतजी महाराज दशरथ का पुत्र जान कर भरद्वाजमुनि आशीर्वाद दिये, इसके उपरान्त वसिष्ठ तथा भरत को अर्घ्य पाद्य फल मूल आदि देकर उन लोगों के कुशल को पूछे बसिष्ठ और भरतजी अपना २ कुशल कह सुनाये, इसके बाद

भरतजी भरद्वाज मुनि की कुशलता पूछी, भरद्वाज मुनि अपनी कुशलता का वृन्तान्त भरतजी से कहकर बोले, हे राजपुत्र! राज्य का पालन करते हुए तुमको यहां आनेका क्या कारण है उसको तुम कहो तुम्हारे आने से हमको सन्देह होता है, क्यों कि कौशल्या के पुत्र रामचन्द्र स्त्री और भाई के सहित चौदह बर्ष पर्यन्त बनबास करने के लिये पिताकी आज्ञा से यहां आये हैं, तो तुम निष्कंटक अपना राज्य भोग करने के लिये भाई के सहित रामचन्द्रजी का नाश करने आये हो ऐसा हमको जान पड़ता है। भरद्वाजमुनि के बचन को सुनकर शोक से पीड़ित भरत आंसुओं की धारा बहाते बोले, हे मुनिनाथ! तीनों लोक को जानने वाले यदि आप ऐसा कहते हैं तो हमारा जन्म लेना व्यर्थ है, हे भगवन्! रामचन्द्रजी के बनबास में हमारा कुछ भी दोश न जानिये, हमारे न रहने पर हमारी माता ने श्रीरामजी के बिषय में जो कुछ दुष्कर्म किया है वह हम को इष्ट नहीं है और न तो हम माता के बचन को अंगीकार किया है, हम तो अपने शुद्ध भाव से प्रार्थना पूर्वक रामचन्द्रजी को लौटाने के लिये आया हूं हमारे प्रेमसे आप अनुग्रह पूर्वक प्रसन्न होकर बताइये कि महाराज रामचन्द्र इस समय कहा हैं, वसिष्ठ आदि ब्राह्मणों के सहित भरतजी के पूछने से भरद्वाजमुनि बोले कि हे भरतजी! बड़ों की आज्ञा का पालन इन्द्रियों का दमन और साधुओं की सेवा यह तीनों वृत्ति आपके परंपरा से पालनीय है, हे भरतजी! आपने बड़ा उत्तम कार्यका बिचार किया कि जो रामचन्द्रजी को बनसे लौटाकर अयोध्या को लेजाने की इच्छा करते हैं, इस समय रामचन्द्रजी सीता और लक्ष्मण के सहित चित्रकूट पर्वत पर निवास करते हैं, आप आज अपने पुरोहित मन्त्रि आदि के साथ यहां रह कर कल्ह चित्रकूटको प्रस्थान कीजिये, भरद्वाजमुनि की आज्ञाको अंगीकार करके भरतजी उनके आश्रम में निवास करने का बिचार किये॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे नवतितमः सर्गः॥ ९०॥

भरतजी भरद्वाजमुनि के आश्रम में रहने का विचार किये केकयी के पुत्र भरतजी को आतिथ्य करने के वास्ते मुनिजी निमन्त्रण दिये, भरद्वाज मुनिके आग्रह को देखकर भरतजी बोले, भगवन् ! बनमें जो कुछ वस्तु उत्पन्न है उसीसे हम लोगों का सत्कार हुआ है, आप अधिक प्रयत्न की चेष्टा न कीजिये, भरतजी के बचन को सुनकर हंसते हुए भरद्वाजमुनि बोले, हे राजन् ! आपके स्नेह युक्त बचन से हम सन्तुष्ट हैं. किन्तु जो कुछ हमारे आश्रम में प्राप्त होवे उसको प्रेम पूर्वक सेना सहित भोजन करिये, और आपने अपनी सेना को आश्रम से दूर पर क्यों ठहरा दिये, भरद्वाजमुनि के प्रीति पूर्वक बचन को सुनकर भरतजी बोले हे भगवन् ! आपके भयसे सेना को आश्रम में नहीं लिवा आये क्योंकि तपस्वियों के आश्रम में बाधा नहीं देना चाहिये, सेना में तो प्रधान घोड़े और प्रमत्त हाथियां रहती हैं इनके आक्रमण से आश्रम की भूमि और वृक्ष तथा जलाशय आदिक पीड़ित हो जाते हैं इस कारण सेनाका यहां रहना उचित नहीं है। भरतज को बचन को सुनकर भरद्वाजमुनि बोले, हे राजन् ! सेनाको यहां बुलाकर आश्रम में स्थान दीजिये, मुनिकी आज्ञा को पाकर भरतजी सेना को बुलाने लगे, और मुनिजी अग्निहोत्र शाला में प्रवेश करके आचमन किये, और महाराज भरत की आतिथ्य सत्कार करने के वास्ते विश्वकर्मा को बुलाकर आज्ञा दिये कि राजाको सेना सहित विश्राम करने का स्थान निर्माण करिये, इसके उपरान्त यम वरूण और कुबेर का आवाहन किये जब वह तीनों लोकपाल मुनिके समीप आये, उनको अपने सामने देखकर भरद्वाजमुनि ने आज्ञा दिये कि हम आतिथ्य सत्कार, करने की इच्छा करते हैं आप लोग वस्तुओं को संपादन करिये उनकी आज्ञा से वह लोग अपने कार्यों में निरत होगये फिर आकाश गंगा का आवाहन करके बोले कि पीने के योग्य जलको यहां सम्पादन करो हम आतिथ्य करेंगे पुनः विश्वावसु और हाहा आदि गंधर्वों को और घृताची विश्वाची मिश्रकेशी अलं-

बुषा नागदत्ता हेमा सोमा आदि अप्सराओं का अलंकार के सहित आवाहन किये, इसके अतिरिक्त अन्यान्य देवताओं का आवाहन करके भरद्वाजमुनि आज्ञा दिये इन वृक्षोंको कुबेर के चैत्र रथनामक बनके वृक्षों के समान बनाओ, जिस में अलंकार के योग्य स्वर्णमय इनके पत्र और पुष्प होजावें, मुनिके आदेश से चन्द्रमा अनेक प्रकार के भोजन को दिया, चित्र बिचित्र हार कंकण केयूर आदि आभूषण तथा उत्तम वस्त्र को कुबेर देने लगे, शीतल मन्द सुगन्ध हवा चलने लगी,आकाश से पुष्पों की वर्षा होने लगी, देवतागण दुन्दुभी बजाने लगे, अप्सरायें नाचने लगीं, गन्धर्व गीत गाने लगे वह बिश्व को स्तब्ध करने वाले वीणा के शब्द से चराचर मोहित होगये. इतने में सेना के सहित भरतजी का फिर भी आश्रम में प्रवेश हुआ। वसिष्ठ पुरोहित और भरतजी तथा उनके मन्त्री आदि समस्त जन आश्रम की शोभा देखने लगे की पांच योजन के घेरे में चारो ओर प्रियंगु कदम्ब शतावरी असन कोविदार करबीर पनस अमला आम्र बीजपूर आदि वृक्ष के लगे हैं नदीके किनारे से हाथी घोड़ा रथ गाड़ी बैल आदि को रहने के लिये कितार से शाला बने हैं, मनुष्यों को रहने योग्य अटारियों से युक्त महल बने हैं जिनके द्वारपर पुष्पों की माला तोरण कदली खंभ लटका है कलश रखे गये हैं भीतर में सबके लिये योग्य आसन और शय्या निर्मित है रत्न से पूर्ण उस भवन में भरद्वाजमुनि की आज्ञा से मन्त्रियों के सहित भरतजी प्रवेश किये, वहां पर छत्र चमर के सहित एक गज सिंहासन रखा हुआ था, उस सिंहासन के आस पास पुरोहित और मन्त्रियों को आसन रखे हुए थे, भरद्वाज मुनि उन लोगों के लिये योग्य आसन को दिये इसके उपरान्त गंगा आदि नदियां आकर वहां सबकी सेवा करने लगी पुनः भरद्वाजमुनि के आदेश से दिव्य वस्त्र और अलंकार को धारण करके बीस हजार स्त्रियां भरतजी के सेवा में उपस्थि हुई, पुनः सुवर्ण और मणि तथा प्रवाल आदि को धारण किये बीस हजार स्त्रियां

कुबेर से भेजी गयीं स्वागत करने के वास्ते वहां आयीं, दर्शन मात्र से अपने बशमें करने वाली बीस हजार अप्सरा इन्द्र से भेजी गई भरतजी के स्वागत में आयीं, सूर्य के समान चमकने वाले नादर तुम्बुरू हाहा आदि गंधर्व भरतजी के सभा में आये, और मुनिकी आज्ञानुसार अप्सरायें नांच करने लगीं, जो वस्तु देव लोकमें इन्द्र और कुबेर के यहां थीं वह सब भरद्वाजमुनि के प्रभाव से प्रयाग में दीख पड़ीं । वनके वृक्ष और लतायें मनुष्य का रूप धारण करके स्वच्छ जल मदिरा पान भोजन मांस मिठाई आदि को सब कोई इच्छानुकूल वर्ताव करने लगे, यहां तक की एक एक पुरुषको सात आठ स्त्रियां मिलकर सत्कार करने लगीं, सेना के रथ हाथी घोड़े गदहा बैल सभी उत्तम भोजन को प्राप्त पाकर चन्दन और माला से अलंकृत होकर परस्पर में कहने लगे कि भरतजी का और श्रीरामचन्द्रजी का कल्याण हो अब न तो हम सब लोग अयोध्या को जावेंगे और न तो दण्डक बन को जायेंगे, इस प्रकार भरतजी के सैनिक आपस में वार्तालाप करने लगे कि आज स्वर्ग को हम लोगों ने आंखों से देखा है यह कहते हुए प्रसन्नता के मारे चारो ओर सेना वाले जन दौड़ने लगे । और एक बार के अन्न भोजन से तृप्त न होकर बार बार अमृत के समान उस अन्नको खाने की इच्छा करने लगे, दास दासी आदि नवीन वस्त्र को धारण करके प्रसन्नता पूर्वक विह्वल हो गये, और आश्रम के समीपके कुऐ दूधसे परि पूर्ण हो गये वृक्षों से मधुकी धारा बहने लगी बावली मांस और मदिरा से भरे हैं एक हजार लोटा दश हजार सोने की थाली एक अर्व भोजन करने वाली चांदी और सोने की थालियों को देखकर अयोध्या वासी विस्मित हो गये, जगह जगह स्नान करने के योग्य नदियों के स्वच्छ जल भरे हैं भांति भांति के वस्त्रों का ढेर लगा है, हर एक जलाशय के समीप अवलाका चूर्ण सुगन्धित तैल और दर्पण खड़ाऊं जूता आदि पहिले से स्थापित किये गये हैं, महर्षि भरद्वाजमुनि के आतिथ्य को देखकर अयोध्या

बासी इस प्रकार आनन्द करने लगे जैसे नन्दन बनमें देवगण आनन्द करते हैं। इस प्रकार आनन्द के साथ भरद्वाजमुनि के आश्रम में अयोध्या बासी रात्रिको व्यतीत किये प्रातःकाल मुनिकी आज्ञा से देवता गंधर्व किन्नर अप्सरा आदि अपने अपने लोक को चले गये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे एकनवतितमः सर्गः ॥९१॥

सुख पूर्वक रात्रिको बिताकर भरतजी अपने परिवार समेत रामचन्द्रजी के स्थान पर जाने के वास्ते प्रस्तुत होकर भरद्वाजमुनि के समीप गये भरद्वाजमुनि बिनीत भरत को देखकर हवन करते हुए बोले, राजपुत्र ! हमारे आश्रम में सुख पूर्वक रात्रिमें निवास किये क्या नहीं, आप के साथी मनुष्यों को पशु पक्षियों को कुछ कष्ट तो नहीं हुआ है, मुनिके बचन को सुनकर भरतजी हाथ जोड़कर बोले, हे भगवन्! सकल नगर बासी और हमारे सैनिक आनन्द पूर्वक रात्रि को व्यतीत किये अब आप से प्रार्थना पूर्वक पूछता हूं कि धर्मात्मा रामचन्द्रजी का आश्रम कितनी दूर है और यहां से किधर को जाना होगा हम लोग जाने के वास्ते प्रस्थित हैं कृपया आप बताइये रामजी के दर्शन में लालसा करने वाले भरतजी को पूछने पर महातपस्वी भरद्वाजमुनि बोले, राजन् ! यहां से साढ़े तीन योजन पर चित्रकूट नाम पर्वत है उस पर्वत के उत्तर ओर मन्दाकिनी नदी है, उसके चारो ओर बन हैं जिसमें सुन्दर सुन्दर वृक्ष फल पुष्प से सदा शोभित रहते हैं उसके मध्यमें चित्रकूट नाम पर्वत है जिस पर देवता सदा बिहार करते हैं वहां पर्ण कुटी लगाकर श्रीरामजी लक्ष्मण और सीता के सहित निवास करते हैं, अपनी सेना लेकर आप यहां से दक्षिण दिशा के मार्ग से जाओ तब रामचन्द्रजी के दर्शन मिलेंगे, आश्रम से आगे की यात्रा को सुनकर कौशल्या आदि स्त्रियां मुनि को नमस्कार करने के लिये आईं, इसके उपरान्त कौशल्या अपने हाथसे मुनिके चरण को पकड़ कर प्रणाम किया, इसके बाद केकयी प्रदक्षिणा

करके प्रणाम किया केकयी को देखकर भरद्वाजमुनि भरतजी से बोले कि हे भरतजी ! हम यह जानना चहते हैं कि आपकी माता केकयी कौन हैं भरद्वाजमुनि के बचन को सुनकर धार्मिक भरतजी विनय पूर्वक बोले, हे भगवन् ! जैसे इन्द्र को उत्पन्न करके देवमाता अदिति स्त्रियोंमें श्रेष्ठ हुई वैसेही पुरुष श्रेष्ठ रामचन्द्रजी को उत्पन्न करके इस समय शोक से पीडित देवता के समान कौशल्या यही हैं, अश्विनी कुमार के समान लक्ष्मण और शत्रुघ्न की माता अनाथिनी और दीन मझिली माता सुमित्रा यह हैं और जिसके कर्म से महाराज दशरथ पुत्र शोक में स्वर्ग को गये ऐसे क्रूर कर्म को करने वाली ऐश्वर्य को चाहने वाली हमारी माता केकयी इनको जानिये इन्हीं के व्यवहार से हम लोग विपत्ति में पड़े हैं भरद्वाज मुनी से यह परिचय देकर भरतजी रोने लगे, भरत को दुखी देखकर महर्षि भारद्वाज बोले, हे भरतजी ! इस में केकयी का कुछ भी दोष न जानिये इस समय रामचन्द्रजी के बनबास से दुष्टों का नाश होगा और देवता, ऋषी मुनियों का कल्याण होगा रामजी के विषय में आप कुछ भी चिन्ता न मानिये रामचन्द्रजी को परमेश्वर का अवतार जानो वह दुष्टों को नाश करने के लिये अवतार लिये हैं उसमें केकयी का कुछ भी दोष न जानना चाहिये। मुनिके बचन से सन्तुष्ट होकर भरतजी मुनिकी प्रदक्षिणा करके साष्टाङ्ग दण्डवत् किये और अपनी सेना को आज्ञा दिये कि यहां से चित्रकूट को चलो, भरतजी की आज्ञा को पाकर अपने २ वाहनों पर चढ़कर आनन्द मचाती हुई सेना आगे को चली, इसके उपरान्त रामजी के दर्श की लालसा से कौशल्या आदि स्त्रियां पालकियों पर चढ़कर चित्रकूट की ओर चलीं, जैसे बादलों की घटा आकाश में छालेती है उसके समान भरत की सेना बनकी शोभा देखती हुई आनन्द पूर्वक दक्षिण दिशा को चली ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे द्विनवातितमः सर्गः ॥ ९२ ॥

इसके उपरान्त भरतजी की चतुरंगिणी सेना को चलते देखकर बनके जन्तु पीड़ित होकर इधर उधर भागने लगे किन्तु समुद्र के समान गंभीर भरत की सेना उस बनमें व्याप्त होगयी हाथी घोड़ा रथ पैदल पालकी आदि के चलने से पृथिवी बिचित्र शोभा को धारण किया, इस प्रकार कुछ दूर जाकर वसिष्ठजी सुमन्त्र से बोले, यह बड़ा सुन्दर बन है जैसा कि भरद्वाजमुनि कहे थे वैसाही देखने में आता है यही सामने चित्रकूट पर्वत है और यही मन्दाकिनी नदी बहती है नीले बद्दल के समान यह बन दूरही से शोभायमान है, इस समय चित्रकूट के सुन्दर पहाड़ों पर हमारी हाथियां वृक्षों को हिलारही है उन वृक्षों के हिलने से पर्वतों पर पुष्प गिरा है, हे शत्रुघ्नजी ! देखिये यहां किन्नरगण निवास करते हैं, जैसे शरत् काल में वायु के वेग से बद्दल शीघ्र भाग जाते है वैसे यह शीघ्र चलने वाले मृगाओं के झुंड की शोभा होती है, यह बन पहिले निर्जन था अब हम सबको आने से अयोध्या के समान होगया है, क्यों कि घोड़ों की खुर से उमड़ी हुई धूली आकाश मार्ग को जाती है, यह बनका सुन्दर प्रदेश स्वर्ग मार्ग के समान तपस्वियों के निवास के योग्य हैं, यह वसिष्ठजी शत्रुघ्न तथा मन्त्रियों से बनके शोभा की चर्चा करीरहे थे तब तक भरतजी बोले, हे सैनिकगण ! इस बनमें समाधान होकर पुरुष सिंह रामचन्द्र और लक्ष्मणजी के पर्ण कुटीका अन्वेषण करते चलो, भरतजी के बचन को सुनकर अस्त्र शस्त्र को धारण करने वाले सैनिक समाहित होकर उस बनमें प्रवेश करते समय धूम को देखे, धूआंको देखकर सैनिकगण भरतजी के समीप आकर बोले, यहां मनुष्य से रक्षित अग्नि का धूम दिखारहा है इससे अनुमान करते हैं कि रामचन्द्रजी की यही पर्ण कुटी है अथवा किसी और तपस्वी की होवे, सैनिकों के बचन को सुनकर भरतजी बोले, तुम सब लोग यहीं ठहरजाओ, हम सुमन्त्र आदि मन्त्रियों को साथ लेकर वहां जाऊंगा यह कह कर सेनाको वहीं रोक दिये, और अपने धूमकी ओर दृष्टि देकर देखने

लगे पुनः रामचन्द्रजी का निवास स्थान जान कर भरतजी आनन्द में मग्न होगये और सेना भरतजी के अनुरोध से वहीं ठहरी ॥
इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे त्रिनवतितमः सर्गः ॥ ९३ ॥

इधर रामचन्द्रजी घोर वनमें आयी हुई श्रीजानकीजी के दुःखित मनको प्रसन्न करने के वास्ते चित्रकूट की शोभा दिखाते थे, हेप्रिये ! इस सुन्दर वनको देखने से हमको राज्य का और बान्धवों तथा मित्रोंका सुख तुच्छ जान पड़ता है, देखो इन पर्वतों के सोने के चांदी के तथा मणियों के रमणीय शिखर अपनी ऊंचाई से आकाश मार्ग को आवृत करदिया है, इन पर्वतों पर भांति भांति के वृक्ष ऋतुओं के फल पुष्प से शोभित होरहे हैं, बड़े २ मतवाली हाथी सुअर सिंह मृगा आदि इनकी कन्दरों में निवास करते हैं, देखो, आम्र आसन लोध पियाल पनस धव कंकोल विल्व तिन्दुक वांस मधूक तिलक आदि के वृक्ष फल पुष्प और छाया से समृद्ध हैं यहीं पर अपनी स्त्रियों के सहित किन्नरगन्धर्व आकर क्रीड़ा विहार करते हैं और देखो कि इन वृक्षों की शाखा (डालिओं) पर विद्याधारियों के वस्त्र रखे हैं वह लोग अपने समय पर यहां आकर आनन्द करते हैं पर्वतों के झरनों से कहीं वेग से कहीं मन्दभाव से जल की धारा गिरती है, यहां शीतल मन्द सुगन्ध वायु मन को हरण करनेवाली है इन पुष्पों के सुगन्ध से आवासित वायु से किसका मन मोह को नहीं प्राप्त होगा, यदि इस स्थान पर तुम्हारे और लक्ष्मण के साथ अनेक वर्ष के रहने से भी हमारे मन में शोक और दुःख नहीं होगा, हे भामिनि ! इस पर्वत की बिचित्र शोभा हमारे मन को हरण किये है और यहां के रहने से हमको दो फल का लाभ होता है एक तो पिता से उऋण होना दूसरे भरतजी के प्रिय कार्य का साधन करना है इस लिये मन बचन काय से तुम हमारे साथ चित्रकूट में रहो । हमारे प्रपितामह अर्थात् महाराजर्षिमनु आदि इस नियम से बन में रहने को मोक्ष का साधन कहते हैं, देखो अनेक रंग के पत्थरों की लंबी

शिलायें पड़ी हैं, पर्वतों पर औषधियां प्रकाशमान हैं कहीं पर बड़ा सघन पलाश का बन है कहीं चम्पक मालती जूही केतकी आदि पुष्पों के वृक्ष शोभा देते हैं, स्थगर पुन्नाग भोजपत्र कोमल शय्या और पहिरने के योग्य हैं, यहां गृहस्थाश्रम को पालन करने के योग्य फल मूल जल पुष्प लता वृक्ष कुशा समिधा मृगा पशुपक्षी सभी आनन्द देनेवाले हैं इस कारण लक्ष्मण के सहित धर्म और नियम के अनुकूल होकर निवास करो।

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे चतुर्नवतितमः सर्गः ॥९४॥

रामचन्द्रजी श्री जानकीजी को चित्रकूट पर्वत की शोभा दिखाते हुए मन्दाकिनी नदी के तट पर आकर नदी की शोभा को दिखाने लगे, कमल नयन श्यामवर्ण रामचन्द्रजी चन्द्रमुखी जानकी से बोले देखो इस नदी के तट पर हंस सारस आदि उत्तम पक्षी सदा बास करते हैं, कुबेर के बन के वृक्षों के सुगन्ध के समान सुगन्ध को धारण करनेवाले ये नदी के तट के वृक्ष अनेक प्रकार के फल पुष्प से भूषित होकर कैसी शोभा को धारण किये हैं, देखो इस नदी के सुन्दर घाटों पर आनन्द से मृगा जल को पीते हैं, जटा और चीर को धारण करनेवाले मुनि लोग इस सुन्दर नदी में स्नान करके सूर्य का उपस्थान करते हैं यहां के पक्षीगण कैसी मनोहर बाणी बोलते हैं, इस चित्रकूट पर्वत और मन्दाकिनी नदी के मध्य में तुम्हारे दर्शन से अयोध्यापुरी से अधिक सुख हमको होता है, हे सीते! अपनी प्रिय सखी के समान मन्दाकिनी को और अयोध्या के समान चित्रकूटको जानकर निवास करो, हमारी आज्ञा से धर्मात्मा लक्ष्मण यहीं रहना चाहते हैं तुम भी हमारे अनुकूल होकर रहो, इस बन के मधु मूल फल को भोजन करके त्रिकाल के स्नान ध्यान से और तुम्हारे सङ्ग रहने से हम को राज्य की तथा अयोध्या की इच्छा नहीं है इस प्रकार अनेक बचन से जानकीजी को धैर्य्य देते हुए रामचन्द्रजी रमणीय चित्रकूट की ओर चले।

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे पञ्चनवतितमः सर्गः ॥९५॥

इसके उपरान्त श्रीरामजी पर्वत और नदी की शोभा को सीता जी को दिखाकर मोह के कारण मांस विशेष को दिखलाकर प्रसन्न करने लगे, वहां उस प्रकार वार्तालाप करते हुए भरत की सेना से उभड़ी हुई आकाश में पहुँचनेवाली धूली को देखने लगे और शब्दों को सुनने लगे और इसके उपरान्त मृगाओं की झुण्ड वित्रासित होकर इधर उधर भागते हुए दीख पड़े तब घबड़ा कर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले,-हे लक्ष्मणजी ! महातुमुल और भयंकर शब्द सुन पड़ता है, क्या हाथियों का झुण्ड है अथवा महर्षियों से वा सिंहों से वित्रासित मृगाओं की झुण्ड दिशाओं में भाग रहे हैं, अथवा कोई राजा वा राजपुत्र अहेर खेलने को आता है इसको तुम यथार्थ जानने के योग्य हो, रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी शीघ्रता से शाल के वृक्ष पर चढ़कर पहिले पूर्व दिशा को देखे पीछे उत्तर दिशा की ओर देखे तो हाथी घोड़ा रथ ऊँट पालकी पैदल सवार से सम्पन्न चतुरङ्गिणी सेना दीख पड़ी समुद्र के समान गम्भीर भरत की सेना को देखकर लक्ष्मणजी रामचन्द्र से बोले, हे भाई अग्नि को शान्त कर दीजिये और जानकीजी को पर्वत की कन्दरा में रक्षित कर दीजिये और अपने धनुष बाण को लेकर युद्ध के लिये प्रस्तुत हूजिये, लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी बोले कि हे लक्ष्मणजी ! आपको भय देनेवाली किसकी सेना है, रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी बोले, कि केकयी के पुत्र भरत राज्य को पाकर पुनः राज्य को निष्कण्टक करने के वास्ते हमलोगों को बध करने के लिये सेना लेकर आते हैं और इसी वृक्ष के समीप लक्ष्य करके कोविदार से चिन्हित रथ पर विराजमान हैं, उनके पीछे शीघ्रगमन करनेवाले घोड़ा सवार और हाथियों पर बैठे योधागण आये हैं इसलिये हम लोग भी धनुषबाण लेकर पर्वत के शिखर पर बैठें अथवा अपना अस्त्र धारण करके यहीं बैठें जिससे सङ्ग्राम में पराश्त करके भरत को अपने अधीन कर लेवें भरत

ही के उद्योग से आपको हमको सीता को राज्य छोड़कर दुःख भोगना पड़ता है वह बध के योग्य बीर शत्रु भरत यहां आया है इस कारण अब भरत का बध करने में दोष नहीं है, अपकार करनेवाले को मारने में पाप नहीं होता है इसलिये पूर्व अपकारी भरत का बध करना धर्म जानना चाहिये, आज राज्य को चाहनेवाली केकयी के पुत्र भरत को संग्राम में नाश करके समस्त पृथिवी को अधीन करूँगा इसके उपरान्त बन्धुबान्धव सहित केकयी को नाश करूँगा आज इस चित्रकूट के बन में अपने तीखे बाणों से शत्रु के शरीर को छेदन करके रक्त से स्नान कराऊँगा और हमारे बाण से विदारित शत्रु की सेना को रक्त और मांस से यहां के श्वापद सन्तुष्ट होंगे और सेना सहित भरत को नाश करके निश्चय अनृण होऊँगा

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे षण्णवतितमः सर्गः ॥ ९६ ॥

इसके बाद भरत के प्रति युद्ध करने में अत्यन्त उद्योग करने वाले लक्ष्मणजी को धैर्य देकर रामचन्द्रजी बोले,-कि सेना समेत भरतजी के आगमन में अपने को धनुषबाण खड्ग आदि का क्या प्रयोजन है, पिता के बचन को सत्य पालन करने की हमारी प्रतिज्ञा है वह प्रतिज्ञा भरत के साथ युद्ध करने में नष्ट हो जायगी क्योंकि लोग कहेंगे कि महाराज दशरथ ने भरतजी को राज्य दिया है उन भरत को रणमें रामचन्द्र मार कर राज्य छीन लिया इस अपवाद युक्त राज्य को हम नहीं चाहते, जो द्रव्य बन्धु और मित्र के कार्य में क्षय होवे उसको हम नहीं चाहते, हे लक्ष्मण ! धर्म अर्थ काम और पृथिवी को केवल आप लोगों के लिये इच्छा करते हैं इसको सत्य जानो, भाइयों को अच्छे प्रकार पालन करने के लिये राज्य को हम चाहते हैं अस्त्र धारण करने के वास्ते नहीं, समुद्रपर्यन्त यह पृथिवी हमको दुर्लभ नहीं है परन्तु अधर्म से इन्द्रलोक की भी इच्छा हम नहीं करते हैं भरत आप और शत्रुघ्न के बिना हमको सुख कहां ! हम ऐसा विचार करते हैं कि भरतजी अयोध्या में आकर हमारे बनवास को सुनकर

स्नेह से युक्त शोक से आकुलित होकर हमको देखने के लिये यहां आये हैं, केकयी से क्रोध करके सत्यपूर्वक हमको राज्य के वास्ते यहां आये हैं, भरत ने हमारा और तुम्हारा कभी अनिष्ट नहीं किया है फिर भरत से भय क्यों करते हो, विपत्ति पड़ने पर भी पुत्र पिता का नाश कैसे कर सकता है और प्राण के समान प्रिय भाई को कैसे बध कर सकता है, यदि राज्य के लोभ से आपने भरत को बध करने को कहे हो तो अब प्रतिज्ञा पूर्वक कहो कि हम अपने लिये राज्य की इच्छा न करके भरतजी को राज्य देवेंगे, रामचन्द्रजी का भाई में अधिक तर स्नेह देखकर लज्जा से संकुचित होगये, लक्ष्मणजी को लज्जित देखकर रामचन्द्रजी बोले, कि हमारे जानमें पिता दशरथजी हमलोगों को देखने वास्ते आते हैं अथवा हमलोंगो के बनवासके कष्ट को सोचकर लौटाने के वास्ते पिताजी आते हों, यह दोनों प्रशस्त शरीर वाले वायुके वेग के समान वेग युक्त वीर विराजमान दिखाई पड़ते हैं परन्तु पिताजी का पर्वत के समान शत्रुञ्जन नामकी हस्ती सेना के आगे आती है किन्तु उस हाथी पर महाराज को दिव्य छत्र नहीं दिखाई देता है यही संशय होता है हे लक्ष्मण ! तुम वृक्ष से उतर जाओ, श्रीरामजी की आज्ञा से लक्ष्मणजी वृक्ष से उतर कर रामजी के पास में बैठ गये, इधर भरतजी अपनी सेना को पर्वत से दूर पर ठहरा दिये, भरतजी की आज्ञा से समाधान होकर सेना और नगर वासी आश्रम से दूर विश्राम करने लगे ॥

इति वाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे सप्तनवतितमः सर्गः ॥ ९७ ॥

श्रीमान् भरतजी गुरु शुश्रूषा में निरत होकर अपनी सेना को उचित उचित स्थान पर रहने की आज्ञा देकर शत्रुघ्न से बोले, हे शत्रुघ्न ! बन में घूमनेवाले निषाद के अनुचरों को सङ्ग लेकर शीघ्र इस बन में रामचन्द्र के आश्रम का अन्वेषण करो और निषाद राज गुह अपने परिवार समेत इस बन में श्रीरामचन्द्रजी को ढूंढें और मैं भी पुरवासी पुरोहित ब्राह्मण और गुरु को सङ्ग लेकर पैदल श्रीरामजी

का अन्वेषण करूँगा। जब तक राम लक्ष्मण और जानकी को नहीं देखूँगा तब तक शान्ती नहीं होगी, जब तक कमलनयन श्रीरामजी के चरणों को शिरोधार्य नहीं करेंगे तब तक हमको शान्ती नहीं होगी, जब तक अयोध्या में रामचन्द्रजी को अभिषेक नहीं होगा तब तक हमको शान्ति नहीं होगी, ऐसा कह कर भरतजी बशिष्ठ आदि के सहित रामजी के दर्शन की अभिलाषा से पैदल चलकर चित्रकूट के सघन बन में प्रवेश किये, इसके बाद शाल के वृक्ष पर चढ़कर कोविदार की ध्वजा बांधे और अग्नि से धूम निकलते श्रीरामजी के आश्रम को देखे, श्रीरामजी के आश्रम को देखकर भरतजी को निश्चय हुआ कि यहीं रामचन्द्रजी रहते हैं, यह निश्चय करने से भरतजी को इतना आनन्द हुआ जैसे कोई समुद्र को पार करके प्रसन्न होता है, चित्रकूट पर्वत पर रामजी का आश्रम है ऐसा सुनकर गुह के सहित आश्रम में प्रवेश किये।

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे अष्टनवतितमः सर्गः ॥९८॥

श्रीरामजी के दर्शन में उत्सुक भरत बशिष्ठजी से बोले, भगवन्! कौशल्या आदि को लेकर आप शीघ्र आइये ऐसा कहकर गुरु वत्सल भरत आगे को चले, इसके बाद रामजी की पर्णकुटी और उटज अर्थात् जानकीजी के रहने के वास्ते स्थान को देखे, उस कुटी के समीप हवन और बलि में दिये गये पूजा के पुष्पगिरे हैं इस प्रकार चलते हुए भरतजी शत्रुघ्न से तथा मन्त्रियों से बोले, कि भारद्वाज मुनि ने जैसा बताये वैसे प्रदेश में हम सब लोग प्राप्त हुए कुछ दूर नहीं है मन्दाकिनी के समीपही में आश्रम है, इसी मार्ग से लक्ष्मण जी आते जाते हैं क्योंकि यह मनुष्य के पग से प्रचलित है और इधर से तो जङ्गली जन्तुओं के आने जाने के मार्ग हैं इस बन में रहने वाले तपस्वी लोग जो सायङ्काल और प्रातःकाल हवन करते हैं उस का यह धूम दिखाता है, यहीं पर गुरुजनों के आदर करनेवाले महर्षि के समान श्रीरामचन्द्रजी को देखेंगे, मन्दाकिनी के समीप पहुँच कर

भरतजी मन्त्रियों से बोले, कि पृथिवी में पुरुष श्रेष्ठ रामचन्द्रजी इस निर्जन वन में वीरासन से यहीं बैठे हैं हमारे कारण रामचन्द्रजी को वनवास करना पड़ता है हमको धिक्कार है, मैं अपना अपयश छोड़ाने के लिये और श्रीरामजी को प्रसन्न करने के लिये लक्ष्मण सीता के सहित रामचन्द्रजी के चरण को ग्रहण करूँगा, इस प्रकार विलाप करते हुए भरतजी सिंह की गुहा के समान एक बड़ी भारी पर्णशाला को देखे, उस पर्णशाला के समीप वेदी पर कुशासन को बिछाकर हजारों सूर्य के समान प्रकाशमान सीता के सहित श्रीरामचन्द्रजी बैठे हैं, और आगे की दूसरी वेदी पर लक्ष्मणजी बैठे हैं श्रीरामचन्द्रजी को देखकर दुःख सागर में स्नान करते हुए भरतजी दौड़े और दर्शन मात्र से खिन्न होते हुए तथा अन्तः को वेदना को रोकने में असमर्थ होकर भरतजी बिना बचन के विलाप करने लगे, कि जिन रामचन्द्र की उपासना सभा में मन्त्रीगण करते थे सो आज वनके मृगाओं में बैठे हैं जो उत्तम वस्त्र को धारण करते थे वह मृगचर्म को धारण किये हैं। जो उत्तम २ पुष्पों की माला को धारण करते थे वह आज जटा को धारण किये हैं, जिनके अङ्ग में नित्य चन्दन का लेप होता था वह आज वन की धूली से शोभित हैं हमारे कारण श्रीरामचन्द्रजी को दुःख उठाना पड़ा इसलिये हमको धिक्कार है इस प्रकार दीनता से बिलाप करते हुए रामचन्द्रजी के चरण पर गिरकर रोने लगे भरत के शोक और प्रेम को देखकर श्रीरामजी के आंखों से आंसू गिरने लगे इसके बाद शत्रुघ्नजी बिलाप करते हुए रामजी के चरण को ग्रहण किये, उनको भी हृदय से रामचन्द्र आलिंगन किये इसके बाद वशिष्ठजी सुमन्त्र गुह तथा प्रधान मन्त्रियों के साथ मिल भेंट करके राम लक्ष्मण सूर्य चन्द्रमा के समान पर्वत के ऊपर सभा में बैठे।

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे नवतितमः सर्गः ॥ ९९ ॥

भरतजी को पृथिवी पर गिरे देखकर श्रीरामजी भरतजी को उठा कर अपने हाथ से आंसू को पोंछकर गोद में लेकर कहने लगे कि

बहुत दिनों में भरतजी से भेंट हुई है यह कह कर उनके कुशल को पूछने लगे, हे तात ! वृद्ध पिताकी सेवाको छोड़कर आप बनमें कैसे आये पिताजी कुशल से तो हैं अथवा परलोक, नगर के अतिथि तो नहीं हुए जिससे बनमें आये हो, क्या तुम बालक के राज्य नष्ट तो नहीं हुए पिताके पूज्यधर्म को जानने वाले रघुवंशियों के उपाध्याय कुशल से हैं, कौशल्या, लक्ष्मणकी माता सुमित्रा और देवीकेकयी का कुशल है, विनयसंपन्न आपके पुरोहितका कुशल है, अग्निहोत्र को संपादन करने वाले ऋत्विक्गण कुशल से हैं, अपने समान बलवान और जितेन्द्रिय और कुलीन तथा व्यवहार में निपुण मन्त्रियों को तुमने नियुक्त किया है या नहीं क्योंकि राजाओं के लिये मन्त्रियों के मन्त्र विजयके मूल हैं, राज नीतिको जानने वाले श्रेष्ठ मन्त्रियों से सदा रक्षित रहते हैं इस कारण आपका मन्त्रिमंडल कुशल है और धनुर्वेद तथा नीति शास्त्र के पंडित सुधन्वा नाम के उपाध्याय कुशल से हैं, मन्त्रिगण समय पर निद्राका अवलंबन करते हैं समय पर निद्राका त्याग करते हैं समय पाकर अर्थ प्राप्तिका उपाय सोचते हैं, कहीं कार्यमें बिलंब नहीं करते हैं कहीं थोड़ी उपायसे बड़े कार्य का साधन करते हैं, इससे राजाके सामयिक कार्यका अनुपयोग शत्रगण नहीं कर सकते, मन्त्रियों में गुणवान व्यवहारको जानने वाले एक अच्छे मूर्ख हजारों लाखों भी मन्त्री अच्छे नहीं हैं, क्योंकि वीर और मेधावी एक भी मन्त्री से राजाको अथवा राजपुत्र महतीलक्ष्मी प्राप्त होती हैं, बड़े मन्त्रियों में छोटे कार्य कर्ताओं में और सेवकों में एक को प्रधान रखना चाहिये, हे भरतजी ! उग्रदण्ड से प्रजाको कभी पीड़ा नहीं देना चाहिये, जैसे हठात् स्त्रियों के साथ व्यवहार करने वाले से स्त्रियां उसके बचनका प्रमाण नहीं रखती वैसे उग्रदण्ड देने से प्रजा राजाकी आज्ञा का पालन नहीं करते। साम दाम दण्ड भेद में कुशल राजा से द्रव्य चाहने के लिये रोग बढ़ाने में कुशल वैद्य और राजाके दोषको देखने वाले सेवकको जो राजाको अपने वशमें

नहीं रखता है वह राजा स्वयं नष्ट होता है, जो दूसरे शूरवीरको जीतने में समर्थ हो विपत्ति में धैर्यको धारण करनेवालाहो कुलीन हो स्वामी में प्रीति करनेवाला हो और व्यवहारमें चतुर सेनापति रखना चाहिये, सैनिक शूरवीरों को दैनिक अन्न और मासिक वेतन देकर अपने अधीन करे, जातिवालों में अनुराग करने से समय पाकर राजा के लिये वे प्राण देते हैं, यथार्थ सन्देश कहने वाले दूत बनाना चाहिये, मन्त्री १ पुरोहित, २ युवराज, ३ सेनापति, ४ द्वारपालक, ५ अन्तःपुर चारक, ६ जेलका अधिकारी, ७ खजानची, ८ राजा की आज्ञा को औरों से कहने वाले, ९ व्यवहारको पूछने वाले, १० धर्मासन के अधिकारी, ११ व्यवहारको निर्णय करने वाले १२ सेना और सेवकों को दान देने वाले, १३ वेतनको बांटने वाले, १४ गिरकी रक्षा करने वाले, १५ राष्ट्र के समाचारको कहने वाले, १६ दुष्टोंका निग्रह करने वाले, १७ जलाशय बनपर्वत आदिका पालन करनेवाले इन अठारह मन्त्रियों के सहित राजा राज्य करें, दुर्बल शत्रुसे भी राजाको भय रखना चाहिये, और अपने अपने कर्मों को पालन करने वाले ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य से युक्त होकर धनधान्य से पूर्ण अयोध्या की रक्षा करिये, दण्डको धारण करके धर्म से पृथिवीका पालन करने वाले राजा की कीर्ति इस लोक में बढ़ती है और परलोक में स्वर्ग लाभ होता है ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे शततमः सर्गः ॥१००॥

इस प्रकार राजनीति के क्रमको कहकर लक्ष्मण के सहित रामचन्द्रजी भरतसे पूछे कि किस कारण राज्यको छोड़कर चरि धारण करके आपका बनमें आगमन हुआ इसका कारण कहो, श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर हाथ जोड़कर विनय पूर्वक भरतजी बोले, हे आर्य! पिताजी दुष्कर्म करके आपके परित्याग पूर्वक शोक से पीड़ित होकर स्वर्गको गये, हमारी माता केकयी इस महान् पापसे रघुकुल के यश का नाश किया, वह केकयी अपने मनोरथ के फलको न पाकर विधवा होकर अपने पापसे नरक में गिरेगी, सो आप मुझ दास

के ऊपर प्रसन्न हूजिये, और इन्द्रके समान राज्यके अभिषेक को स्वीकार कीजिये, इन मन्त्रियों के सहित शिरसा प्रणाम करते हैं शिष्य और सेवक के ऊपर अनुग्रह करने के योग्य आप हैं पिता से पूजित और रक्षित इन मन्त्रिमण्डल के प्रार्थना को उल्लंघन नहीं करना चाहिये, महाबाहू भरत इस प्रकार रामचन्द्रजी से कहकर बार बार रोदन करने लगे, रामचन्द्रजी भाई भरतजी को गोदमें लेकर आंसूको अपने हाथसे पोंछते हुए बोले कि कुलीन पराक्रमी तेजस्वी और हमारे समान आदर्श पुरुष पिता की आज्ञा को कैसे भंग कर सकते हैं, हे शत्रुसूदन ! तुम्हारा कुछ भी दोष नहीं है, और माता केकयी का दोष जानकर अपमान नहीं करना चाहिये उनका भी कुछ दोष नहीं है। स्त्रियों में पुत्रों में आज्ञा देने का पिताकी स्वच्छन्दता है, लोक में स्त्री पुत्र शिष्य के साथ सज्जन लोग जैसा व्यवहार करते हैं वैसाही हम लोगों को भी मानना चाहिये पिता के न रहने पर पुत्र शिष्य को आज्ञा देने में माता को भी अधिकार होता है तो पिता माता के दिये हुए वनवास को हम कैसे मिथ्या करें, मन्त्रि पुरोहित तथा नगरबासियों के समक्ष में तुमको अयोध्यापुरी का राजा और हमको चौदह वर्ष पर्यन्त दण्डक बन में निवास करने की आज्ञा देकर पिता दशरथ स्वर्ग को गये, तो धर्मात्मा राजा के दिये हुये भाग को हम और तुम भोग करने योग्य हैं, इन्द्र के समान महात्मा हमारे पिता महाराज दशरथ की आज्ञा को अंगीकार करने के अतिरिक्त अन्यथा नहीं कर सकते ॥

इति बाल्मीकियेरामायणे अयोध्याकाण्डे एकाधिकशततमः सर्गः ॥१०१॥

श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर भरतजी बोले कि राजधर्म से विहीन को राज्य कैसे होगा, रघुवंशी राजाओं का यह पारंपरिक धर्म है कि ज्येष्ठ पुत्र राज्य का भागी होता है कनिष्ठ नहीं होता तो इस धर्म को मानकर मेरे साथ धनधान्य से पूर्ण अयोध्या में चलकर अपने कुलकी मर्यादा को स्वीकार करते हुए अभिषेक को अंगीकार

कीजिये, महाराज दशरथ को लोग मनुष्य कहें परन्तु हम देवता जानते हैं किन्तु उनके चरित्र मनुष्य के सदृश नहीं था, मामा के गृह में हमको जाने से और सीता तथा लक्ष्मण के सहित बन में आपको आने से दुःख शोक से पीड़ित होकर महाराज स्वर्ग को गये, अब हे पुरुषसिंह रामचन्द्रजी ! हम और शत्रुघ्न सपिंडन पर्यन्त पिताके कृत्यको किया आप और लक्ष्मण पिता के लिये जलदान करिये क्योंकि आप ज्येष्ठ हैं और पिताके परम प्रिय हैं आपकी चिन्ता में मग्न होकर आपके दर्शन की इच्छा आप में अनुरागयुक्त होते हुये आपके शोक से पीड़ित होकर आपके नामका स्मरण करते हुए आप के पिता परलोक को गये ॥

इतिवाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे द्युत्तरशततमः सर्गः ॥ १०२ ॥

इसके उपरान्त भरथजी के मुख से पिता के मरण को सुनकर रामचन्द्रजी मुर्छित हो गये, जैसे रणमें शत्रु के वास्ते इन्द्रवज्र को छोड़ते हैं वैसे भरतजी के वज्ररूपी बचन को सुनकर पृथिवी पर गिर पड़े मूर्छा के उपरान्त पिता के वियोग से पीड़ित रामचन्द्रजी को जल से अभिषेक होने लगा इसके उपरान्त चेतना को पाकर मुक्तकण्ठ से मनुष्य के समान विलाप करने लगे, पिताको अदर्शन हो जाने पर अयोध्या में जाकर क्या करूंगा, हे पिता! आप के पुत्रों में भरतजी और शत्रुघ्नजी श्रेष्ठ हैं जो आपकी क्रिया विधि पूर्वक किये हैं, बनवास के समय को पूरा करके भी हम अयोध्यापुरी को चलना नहीं चाहते, भरतजी से इस प्रकार अनेक बातें कहकर रामचन्द्रजी सीताजी से बोले, हे सीते ! तुम्हारे श्वसुर मर गये और लक्ष्मण पिता से हीन हुए इस बात को भरतजी कहते हैं इस कारण हम लोग पिता की जलक्रिया करें, सीताजी महाराज दशरथ के मरण को सुनकर आंखों से आंसुओं की धारा बहाने लगीं, रामचन्द्रजी रोती हुई जानकी को धैर्य देकर दुःख पूर्वक लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मण ! इंगुदी बीज का चूर्ण और नवीन चीर लेकर चलो पिताजी की जल क्रिया करने

के लिये चलैंगे, हे सीते! तुम आगे चलो तुम्हारे पीछे लक्ष्मण चलैंगे हम सब के पीछे चलैंगे क्योंकि यह शोक का समय है, वंशपरंपरा के सेवक सुमन्तजी उन राजकुमारों को अर्थात् राम लक्ष्मण भरत और शत्रुघ्न को धैर्य देकर मंगल करने वाली मन्दाकिनी नदी स्नानादि कर्म के बाद दक्षिण मुख होकर पिता के नाम गोत्र को कहकर जल की अंजली को दिये, अंजली देने के बाद नदी तीर पर आकर अपने पिता के वास्ते श्रीरामजी ने पिण्डदान किये, इसके उपरान्त पर्णकुटी के पास पहुँच कर लक्ष्मण और सीता के सहित रामचन्द्रजी सिंहके समान रोदन करने लगे, इधर सैनिक और नगरवासी उस रोने के शब्द को सुनकर आपस में कहा श्रीरामजी से भरत की भेंट यहीं हुई है देखिये भरतजी के मुखसे महाराज दशरथ के मरण को सुनकर लक्ष्मण सीता के सहित श्रीरामचन्द्रजी रोदन करते हैं, इसप्रकार श्रीरामजी के आश्रम का अनुसन्धान करके सैनिक तथा नगरवासी सुख और आनन्द से विह्वल होकर रथ हाथी घोड़ा ऊंट गाड़ी आदि को छोड़कर स्त्री पुरुष पैदल श्रीरामचन्द्रजी को देखने की इच्छा से उनके आश्रम की ओर चले, तथा सारथी सवार आदि अपने अपने वाहनों को लेकर आश्रम की ओर चले, उस सेनाके चलने के शब्द से नभमण्डल गूंज उठा, मतवाली हाथियों के और बेगवान घोड़ों के तथा अस्त्र शस्त्रधारी पुरुषों के भय से व्याकुल होकर चित्रकूट वन के पशु पक्षी बनान्तर को चले गये, और उस वनमें मनुष्यों की भीड़ ठट गयी, पर्वत के शिखर पर बैठे हुए रामचन्द्रजी कौशल्या सुमित्रा मन्थरा के सहित केकयी के आगमन तथा वसिष्ठजी को तथा अन्यान्य नगरवासी जनों को देखकर दुःख की आंसू को बहाते हुए सबसे यथा योग्य मिले, नगरवासी पिता माता के रामचन्द्रजी के चरणों को ग्रहण करके शोक से विलाप करने लगे और रामचन्द्रजी सबसे प्रणामाशीर्वाद करके सत्कार करने लगे, इसके उपरान्त दुःखमय मनुष्यों के रोने का इतना शब्द हुआ कि वन पर्वत

गुफा तथा दशो दिशायें उस महाशब्द से निनादित हो गयी। इति वाल्मीकीये रामायणे अयोध्याकाण्डे त्र्युत्तरशततमः सर्गः॥१०३॥

इसके उपरान्त वसिष्ठजी को आगे करके कौशल्या आदि राज महिषी नदी पर्वत और बनकी शोभा को देखती हुई श्रीरामजी के समीप को चली, कौशल्या दुःख की आंसूको छोड़ती हुई सुमित्रा आदि स्त्रियों से बोलीं, श्रीरामचन्द्रजी के वास्ते इसी मार्ग से लक्ष्मणजी जलको लेजाते हैं आगे जाकर इंगुदी बीज के श्राद्ध को नदी के किनारे पर देख कर कौशल्या आदि स्त्रियां आपस में कहने लगीं कि माहात्मा महाराज दशरथके वास्ते रामचन्द्रजी ने विधि पूर्वक श्राद्ध दिया है यह श्राद्ध महाराज के योग्य नहीं होगा ऐसा हम सब कहती हैं क्योंकि जिन्होंने चारो समुद्र पर्यन्त पृथिवी का एक छत्र राज्य का भोग किये थे वह इंगुदी बीज के चूर्ण के श्राद्ध को कैसे स्वीकार करेंगे और संसार में इससे बढ़कर दुःख हम लोगों को क्या होगा कि जो चराचर के स्वामी रामचन्द्रजी इंगुदी के पिसान का श्राद्ध पिता को दिया है श्रीरामजी की दशा को देखकिस मनुष्य का हृदय सौ टुकड़ा नहीं हो जायगा इस प्रकार विलाप करती हुई कौशल्या को सुमित्रा आदि स्त्रियां स्वर्ग से गिरे देवता के समान श्रीरामचन्द्रजी को देखे सकल सुख भोग को त्याग किये ऋषिके सदृश रामचन्द्रजी को देख कर पीड़ा से कौशल्या रोदन करने लगीं, श्रीरामजी कौशल्या को उठाकर उनका चरण शिरोधार्य किये इसके उपरान्त सुमित्रा केकयी आदि के चरण को ग्रहण किये वे सब श्रीरामजी के मुखको अपने हाथों से पोंछने लगीं और प्रेम से उनके शिर को सूंघने लगीं। इसके उपरान्त लक्ष्मणजी सब को साष्टाङ्ग दण्डवत किये, उन लोगों ने जैसा प्रेम रामचन्द्रजी से किया वैसे ही लक्ष्मणजी को भी गोद में लेकर हृदय से लगाया, इसके बाद आंसू को बहाती जानकीजी अपनी सासुओं के चरणों की बन्दना किया कौशल्या आदि ने सीताजी को गले से लगा कर बोलीं. कि महाराज जनक की कन्या और महात्मा

दशरथ की पतोहू और महापराक्रमी श्रीरामजी की धर्म पत्नी होकर इस निर्जन बन में दुःख को सहन करती हो जैसे सूर्य के प्रकाश से कमल की शोभा नष्ट हो जाती है वैसे तुम्हारी मुख कान्ति को मलीन देखकर पहिले के समान हमारी शोकाग्नि जलती है, इधर श्रीरामजी वसिष्ठजी को दण्डवत् करके बृहस्पति के समान बशिष्ठजी के सहित सभा में श्रीराम आदि चारो भाई बैठ गये श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण और भरत के सहित गार्हपत्य आहवनीय और दक्षिणाग्नि इन तीन अग्नियों के समान सभा में शोभा को प्राप्त हुए।

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे चतुरुत्तरशततमः सर्गः॥१०४॥

इसके उपरान्त सभासदगण सोचने लगे कि भरतजी किस प्रकार रामचन्द्रजीसे कहैंगे इस प्रकार सोचते हुए रात्री बीत गई प्रातः काल उठकर मन्दाकिनी नदीमें स्नान जप हवन आदि कर्मको समाप्त करके रामचन्द्रजी के समीप मन्त्रि पुरोहित सैनिक नगरवासी मौन होकर बैठे, इसके उपरान्त सभाके मध्य में बैठे भरतजी बिनय पूर्वक रामचन्द्रजी से बोले, हे तात! महाराज दशरथ से बरदान रूपमें राज्य को हमारी माता ने लेकर हमको दिया वही राज्य हम आपको लौटा देते हैं आप निर्विघ्न भोग कीजिये, जैसे घोड़ाके बराबर गदहा नहीं चल सकता गरुड़ के बराबर और पक्षि नहीं चलते वैसे आपके भोग करने योग्य राज्यको हम नहीं ग्रहण कर सकते, जिससे लोग जीते हैं उसीका संसारमें जीवन है और जो परये से जीता है उसीका जीना व्यर्थ है लोक रक्षा के लिये महाराज दशरथ ने आपका पालन किया है सकल गुण संपन्न आप यदि लोककी रक्षा न करैंगे तो पिताका प्रयत्न आपके विषयमें व्यर्थ होगा जैसे फल पुष्पकी इच्छा करके मनुष्य वृक्षको लगाकर पालन करता है किन्तु वह वृक्ष पुष्पित होकर फलको नहीं देता है तो वृक्ष रोपने वालेका उद्योग निष्फल होता है, हेमहाराज! इन नगरवासियों को तथा मन्त्रि और पुरोहित को और कौशल्या आदि माताओं की प्रार्थनाको देखिये, भरतजी के बचनको सुनकर

सकल प्रजा कहने लगी कि भरतजी उचितकी बात कहते हैं आप अंगीकार करिये, इस प्रकार दुःखित और विलाप करते हुए यशस्वी भरतजी को धैर्य देकर बोले, कि यह जीव स्वतन्त्र नहीं है इसको कुछ भी परिवर्तन का अधिकार नहीं है यह तो परमात्मा के अधीन होकर कर्म करता है इस कारण हमारे बनवास में दैव कारण जानिये, यह सब नाशवान है नाशवान वस्तुकी चिन्ता बुद्धिमानको नहीं करना चाहिये, जैसे पके हुए फलका पतन अवश्य होता है वैसे मनुष्य जरा और मृत्युके वश होकर नष्ट होता है जैसे नदी का जल समुद्र में जाकर नहीं लौटता है वैसे बीत गई दिन रात्रि फिर लौटकर नहीं आती, जैसे ग्रीष्म कालमें सूर्य अपने किरणों से जलको सुखा देते ह वैसे दिन रात्रिके बीतने से मनुष्यकी आयुष्य नष्ट होजाती है, मृत्युका जन्म मनुष्य साथ होता है और मृत्यु मनुष्य के साथ जाती है इस कारण मृत्यु की चिन्ता नहीं करना चाहिये, क्योंकि जब शरीर शिथिल होगयी शिरके बाल उज्वल हो गये जरासे पुरुष जीर्ण होगया तब कौनसा सामर्थ्य को पाकर इन सब वस्तुओं का परिवर्तन करैगा, सूर्यके उदय अस्तको देखकर मनुष्यको आनन्द होता है किन्तु अपने आयुष्य के क्षयको नहीं जानता है जैसे ऋतुओं के आगमन को देखकर मनुष्य सन्तुष्टहोते हैं किन्तु ऋतुओंके परिवर्तनसे प्राणियोंका क्षय होता है, उसी प्रकार स्त्री पुत्र परिवार और धन से सदा विधयोग होता है इस संसार में कोई भी प्राणी जन्म और मरण का अति क्रमण नहीं करने सकता दूसरे के वास्ते चिन्ता करते हुए भी अपने मरण को हटाने में किस को सामर्थ्य है, जैसे राह में आगे चलते हुए राही मार्ग में खड़े होकर दूसरे सपथिक से कहते हैं कि मैं भी आपके पीछे आऊंगा इसी प्रकार पिता पितामह के पूर्व मार्ग को प्राप्त हुए की क्या चिन्ता करना चाहिये, नहीं लौटने वाली गंगाजी के धारा के समान अवस्थाओं के नाश को देखकर मनको धर्म में लगाना चाहिये क्योंकि राजा तो सुख की इच्छा सदा करते हैं, जीर्ण मनुष्य के शरीर को त्याग करके

जाकर सत्यका पालन करते हुए अयोध्यामें निवास करो और मैं भी बनमें रहकर पिताकी आज्ञाका पालन करूंगा, हे शत्रुसूदन! हम पिताके वचन को मिथ्या नहीं करूंगा और तुमको भी उनकी आज्ञा पालन करना चाहिये, पिताके वचनको पालन करनेमें दृढ़ रामचन्द्रजी भरतजी से इस प्रकार कहकर मौन होगये॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे पंचोत्तर शततमः सर्गः॥ १०५॥

इस प्रकार कहकर रामचन्द्रजी को मौन होने पर धार्मिक भरतजी लोक की बुद्धि से धर्म पूर्वक बोले, हे शत्रुसंहारण! संसार में आपके समान दूसरा कौन होगा जो सुख दुःख को एक समान देखे आप सकल धर्मके तत्वको जानने वाले हैं, अब लोक मर्यादा को पालन करने वाले बृद्धों के संशयको आपसे पूछते हैं कि जैसे मनुष्य मर कर आत्मा देह पुत्र स्त्री से अलग हो जाता है वैसेही जीते हुए भी क्या इनसे अलग रहता है और नित्य सुख दुःख का अनुभव इसको होता है या नहीं जैसे जीता हुआ मनुष्य अपने कर्म के अनुरूप फलको प्राप्त करता है क्या मरने पर भी कर्म के अनुरूप फल मिलता है, जैसे ब्रह्म बन्ध और मुक्त नहीं है वैसे जीव भी बन्ध मुक्त नहीं होगा हे भगवन्! इस विषय में क्या बिचार करना चाहिये, और कौन से सन्ताप को देखकर योगी लोग संसार को त्याग करते हैं, हे पुरुषोत्तम! संसार के प्रपंच के तत्वको जानने वाले इस प्रकार के दुःखमें भी आपको विषाद नहीं करना चाहिये आप इन्द्र के समान हैं, सत्यको पालन करने वाले हैं तीनों काल में एक समान देखने वाले हैं प्राणियों की उत्पपत्ति पालन नाश करने वाले हैं इस असह्य दुःख को नाश करने के योग्य हैं हमारे न रहने पर हमारी माता केकयी ने हमारे कारण जो कुछ अपराध किया उसको क्षमा करके प्रसन्न हूजिये, हे भगवन्! माता के समान पिता भी अन्यायी थे, हम पिता की निन्दा नहीं करते हैं वस्तुतः वह निन्दा करने योग्य हैं नहीं तो कौन बुद्धिमान मनुष्य स्त्रीके बचन का प्रति पालन करेगा॥ मरने के

समय मनुष्य की बुद्धि बदल जाती है इस जनश्रुति को महाराज दशरथ ने पालन किया, पिताके अति क्रमण के विपरीत जो बात अच्छी हो उसको मानना चाहिये यही पुत्रका धर्म है, महाराज दशरथ ने जो आज्ञा आपको दिया वह बनवास रूप आज्ञा लोकमें निन्दनीय है उस पिताके कलंक को दूर करने के लिये, अभिषेक रूप हमारे बचन को अंगीकार करिये, आप सबकी रक्षा करने योग्य हैं अब हम लोगों की रक्षा कीजिये, क्षत्रियों को प्रजा पालन पहिला धर्म है और चीर जटा धारण करके वृद्धावस्था में आश्रम का पालन होता है इसलिये अभिषेक को अंगीकार करके प्रजा पालन करिये, धर्म को जानने वाले महर्षि गार्हस्थ्य को उत्तम धर्म कहते हैं इस गृहस्थ धर्मका त्याग आप कैसे करते हैं, बुद्धि और गुणसे हीन हम बालक के समान हैं आपके बिना अपने जीवन को नहीं रख सकते हैं अपने धर्मके अनुसार इस राज्य का पालन करिये. वसिष्ठ आदि ऋषिगण प्रजाओं के सहित आपको यहीं अभिषेक करेंगे आप अभिषिक्त होकर हम लोगों के संग अयोध्या को चलिये, आपके अभिषेक से सकल मन्त्रि मण्डल आनन्दित होजायगा नहीं तो दुःख के प्रभाव से लोग अयोध्यापुरी को छोड़कर जहां तहां चले जायेंगे, आप हमको अपना बन्धुजान कर मेरे ऊपर दया कीजिये और मेरी प्रार्थना को अंगीकार करिये नहीं तो आप के साथ हम भी बनवास करेंगे । किन्तु पिताके बचन को पालन करने में दृढ़ रामचन्द्रजी भरतजी को धैर्य देकर अपने बनवास से विचलित होनेकी चेष्टा नहीं किये, रामचन्द्रजी को पिताके बचन पर आरूढ़ देखकर सकल नगर बासी दुःखी होगये वसिष्ठ आदि ब्राह्मण कौशल्या आदि राजमहिषी और नगर बासी भरत की नाईं प्रार्थना करने लगे ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे षडुत्तर शततमः सर्गः ॥ १०६ ॥

इस प्रकार प्रार्थना करते हुए भरतजी को धैर्य देकर रामचन्द्रजी बोले, हे भरतजी ! जो आप कहते हैं उसका कारण सुनिये, पहिले

केकयी के बिवाह कालमें केकयी के पिता ने महाराज से यह मांग-चुके थे कि हमारी कन्या से जो पुत्र होगा वही राज्य का भागी होगा, इसके बाद देवासुर संग्राम में केकयी के आराधना से प्रसन्न होकर महाराज ने केकयी को दो बरदान दिया उसी बरदान को केकयी ने महाराज दशरथ से मांगा उसको सुनिये आपको राज्य और हमको चौदह वर्षतक का बनबास इन दोनों बरदान को महाराज ने स्वीकार किये उस पिताके नियोग के अनुसार चौदह वर्षतक लक्ष्मण और जानकी के सहित मैं बन में रहूंगा आप भी पिताके बचन को मान कर राज्य को स्वीकार करकेपृथिवी का पालन करिये,हे धर्मात्मा भरतजी ! पिताको ऋणसे छुड़ाइये और माता को सुख दीजिये हमारे कहने से क्यों कि ऐसी पुरानी रीति सुनी जाती है कि गयामें यज्ञ करने से पितरों का ऋण छूटता है पितरों को नरक जाने से जो बचावे उसको पुत्र कहते हैं इस कारण पितरों की रक्षाके लिये आप राज्य को अंगीकार करिये हे भरतजी ! ऋत्विक् पुरोहित तथा प्रजाओं के सहित अयोध्यामें जाकर शत्रुघ्न के साथ पृथिवी का पालन कीजिये और मैं भी सीता और लक्ष्मण के सहित शीघ्र दण्डक बनमें प्रवेश करूंगा अतुल पराक्रमी शत्रुघ्न आपके सहायक हैं और लक्ष्मणजी हमारे सहायक हैं इसलिये विषा-नद नहीं करना चाहिये ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे सप्तोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०७ ॥

इस प्रकार भरत को धैर्य देते हुए रामचन्द्रजी से जाबालि महर्षि बोले, हे रामचन्द्रजी! पामर मनुष्य के समान पिता के बचन को पालन करने में समर्थ होना तुम्हारे योग्य नहीं है क्यों नहीं है कि कौन पुरुष को किसके सम्बन्ध से क्या लाभ हुआ है एक का जन्म होता है एक का नाश होता है इसलिये पिता माता के कार्य पर जो आरूढ़ है उस को उन्मत्त (पागल) के समान जानना चाहिये, जैसे किसी तीर्थ में जाता हुआ मनुष्य मार्ग में ग्राम के निकट ठहर जाता है दूसरे दिन उस स्थान को छोड़कर आगे चलता है वही गति पिता माता बन्धु और

धन की है इस पर सज्जन लोग आरूढ़ नहीं होते, पिता के राज्य को छोड़कर बन मार्ग में चलने के योग्य आप नहीं हैं आप अयोध्या में जाकर अपने राज्य को पालन करिये, हे राजपुत्र ! आप राज्य के सुख को भोग करने योग्य हैं जैसे इन्द्र अमरावती के साथ भोग करते हैं वैसे आप अयोध्या में विहार कीजिये, न तो महाराज दशरथ आप के कोई हैं और न आप उनके केवल ऋतुमती माता से पिता का संयोग होता है उन दोनों के रज और बीज पुरुष जन्म के कारण हैं जन्म और मरण यही प्राणियों की प्रवृत्ति है जो प्राणी पुरुषार्थ सिद्ध राज्य और धनका त्याग करते हैं उन्हें धर्म का फल भी नहीं होता इस कारण सज्जनों के बचन को मानकर भरत की प्रसन्नता के लिये अयोध्या में चलकर राज्य को ग्रहण करो ।

इति बाल्मीकीये रामायणे अयोध्या काण्डे अष्टोत्तरशततमः सर्गः १०८

इसके उपरान्त रामचन्द्रजी जाबालि महर्षि के बचन को सुनकर शास्त्र विधि से बोले, हे मुनीश्वर ! आपने हमारे हित के वास्ते और परमार्थ को भ्रष्ट करने के लिये जो बचन कहे हैं इससे सज्जनों के समाज में प्रतिष्ठा नहीं होती, चाहे कुलीन हो अथवा अकुलीन हो सदाचारी हो अवथा अनाचारी हो किन्तु मनुष्य के चरित्र की ख्याति होती है, कार्याकार्य को जानने वाला कौन ऐसा पुरुष होगा, जो परलोक के मार्ग को भ्रष्ट करेगा, इस प्रतिज्ञा को छोड़ किस साधन के द्वारा हमको स्वर्ग लाभ होगा, आपके कहने के अनुसार परलोक को भ्रष्ट करके कामका अर्थात् धर्मको छोड़कर काम का पालन करेंगे तो प्रजा भी वैसा ही करेगी क्योंकि राजा का जैसा आचार होता है प्रजा भी वैसा ही करती है इस कारण आपका कहना योग्य नहीं है क्योंकि:— सकल प्राणियों पर दया करना प्रधान है और यह सनातन राज्य सत्य के ऊपर स्थित है इस कारण लोक सत्य की प्रतिष्ठा है सत्य को छोड़कर मार्गको कलुषित करना संसार को नाश करना है देवता ऋषि भी सत्य का पालन करते हैं सत्य के वश हो कर यज्ञका भाग लेते हैं

सत्य से भगवान चराचर जीवों का पालन और नाश करते हैं, संसार में सबका कारण सत्य है इसलिये सत्य से विचलित नहीं होना चाहिये, एकही पुरुष अपने कुलके अनुसार राज्य का पालन करता है और एक नरकवास करता है और स्वर्ग लाभ करता है सो मैं पिता के विदेश को सत्यमान कर क्यों न पालन करें सत्य की मर्यादा को पालन करने वाले पिता के बचन को लोभ से मोह और अज्ञान से मिथ्या करना उनकी मर्यादा को भ्रष्ट करना है, असत्य व्यवहार करने वाले चंचल पुरुष के हाथ से यज्ञ और श्राद्ध में देवता पितर अपना भाग नहीं ग्रहण करते हैं हम इस सत्य को समस्त धर्मों में मुख्य जानता हूँ अपना क्षत्रिय धर्म छोड़कर कायिक वाचिक मानसिक रूप तीन प्रकार के पातक का पालन करना है सत्य का पालन करनेवाले मनुष्य को भूमि कीर्ति लक्ष्मी और यश सेवा करते हैं कैसे हम बनवास रूप पिता की प्रतिज्ञा को त्याग करके भरत के बचन को अंगीकार करें जब मैंने पिता के समीप फल मूल खाकर वनवास करना स्वीकार किये तब केकयी को प्रसन्नता हुई कर्मभूमि में आकर मनुष्य उत्तम कर्मका पालन करने से अग्नि वायु सूर्य चन्द्रलोक में जाकर उसका फल भोगता है देखिये कर्म के बल से इन्द्र यज्ञों का भाग लेते हैं उग्र तपस्या करके मुनि लोग विष्णु लोक में वास करते हैं, सत्य धर्म के अनुकूल पराक्रम प्राणियों पर दया और प्रिय वादिता देवता ब्राह्मण अतिथि की सेवा करना स्वर्ग का मार्ग है इस प्रकार धर्म की अनेक बातों को कह कर रामचन्द्रजी जाबालि महर्षि से बोले कि इस प्रकार नास्तिक गुण वेद शास्त्र की मर्यादा को नाश करनेवाले आपके समान ब्राह्मण को पिताजी ने जो याचक (ऋत्विक्) बनाये यह उचित नहीं किये, बौद्ध तथा चार्वाक मत को पालन करनेवाले को प्रजा की रक्षा करने में निपुण राजा चोर के समान दण्ड देवे जो ब्राह्मण इसलोक और परलोक के बन्धन को काटने वास्ते फल की इच्छा करके वेदवचन को प्रमाण मानकर अहिंस

सत्या तपस्या परोपकार आदि का पालन करते हैं वही लोक में पूजा करने योग्य हैं दोष सहित श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर जाबालि महर्षि बोले हे रामचन्द्रजी ! हम नास्तिकों के बचन का पालन नहीं करते हैं और न तो मैं नास्तिक हूँ किन्तु काल विशेष को देख कर मनुष्य आस्तिक और नास्ति होता है, इस समय आपके लिये भी वही समय उपस्थित है कि बन से लौट कर अयोध्या में राज्य का पालन करिये जिस बचन को कहने से आप हमको नास्तिक कहते हैं ।

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे नवोत्तरशततमः सर्गः ॥१०९॥

श्रीरामचन्द्रजी को रोषित देखकर भगवान् वसिष्ठजी बोले हे रामचन्द्रजी ! लोक परलोक की मर्यादा को जाबालि ऋषि जानते हैं किन्तु आपके कुल में ज्येष्ठ को अभिषेक सदा से होता है उसको सुनिये, पहिले भगवान् स्वयं विराट रूप को धारण करके परास्थि जल के ऊपर पृथिवीको स्थिर किया फिर उस पृथिवी को दैत्योंने चुरा लिया तब भगवान् बराह रूपधारण करके दैत्योंका नाश किये और पृथिवी को फिर भी पहिले के समान स्थिर करके आकाश से ब्रह्माको उत्पन्न किये ब्रह्माजी अपने तपोबलसे दक्षप्रजा पतियोंको उत्पन्न करके मानसी सृष्टि करने की सबको आज्ञा दिये, ब्रह्मासे मरीचि: मरीचसे कश्यप, कश्यप से सूर्य, सूर्यसे मनु, मनुसे इक्ष्वाकु नामके पुत्र हुए, जिनको मनुप्रजापतिने अयोध्यापुरी का राज्य दिये थे, उन्हीं को अयोध्यापुरीका राजा जानना चाहिये इक्ष्वाकुके पुत्र श्रीमान कुक्षि उनके पुत्र विकुक्षि हुए, विकुक्षिको महाप्रतापी बाण हुए, बाणको अनरण्य नामके पुत्र हुए जिनके राज्य में कभी अनावृष्टि और दुर्भिक्ष नहीं हुआ प्रजा सब प्रकारसे सुखी रहती थी, अनरण्यसे महाराज पृथु हुए पृथुसे त्रिशंकु हुये जिन्होंने अपने सत्यके पथपर प्रवृत्त होकर शरीरके सहित स्वर्गको गये, त्रिशंकुको धुन्धुमार धुन्धुमार को युवनाश्व नाम पुत्र हुआ युवनाश्वको मान्धाता मान्धाताको सुसन्धि

हुआ, सुसन्धिको ध्रुवसंधि और प्रसेनजित नामक दोसपुत्र हुए, ध्रुवसंधिको शत्रुओं को नाश करने वाले भरत नाम बेटा हुआ भरतको महाबाहु असित हुए जिन्होंने शत्रुओंके भयसे राज्यको छोड़कर बनमें चले गये, वहां उनकी दोनों स्त्रियां गर्भवती हुईं उनमें एकने गर्भको नाश करने के वास्ते अपनी सवत कालिन्दीको विष देदिया, कालिन्दी विषकी ज्वालको न सहती हुई हिमालयके पास च्यवन मुनिके आश्रम में पहुंची मुनिको साष्टांग दण्डवत् करके अपना वृत्तान्त कह सुनाया मुनिके आशीर्वाद से विषकी ज्वाला शान्त होगयी और मुनिके बरदान से महापराक्रमी शत्रुओंको जीतने वाला धार्मिक एक पुत्र विषके सहित माताके गर्भ से उत्पन्न हुआ उसका नाम सगर हुआ जिन्हों ने पृथिवी पर समुद्र खोदकर संसार में अपना यश बढ़ाया इनकी कथा बालकाण्ड में विस्तार पूर्वक है सगर को असमंजस असमंजस को अंशुमान नामक पुत्र हुए, अंशुमान का दिलीप दिलीप को भगीरथ हुए भगीरथ से काकुत्स्थ काकुत्स्थ से रघु हुए जिस से आज रघुबंशी कहलाते हैं रघुको कल्माषपाद कल्माषपाद को शंखण हुए, युद्ध में जिनकी सेना अकस्मात् नष्ट होगई कोई कहते हैं कि वसिष्ठजी के शाप से राजा कल्माषपाद राक्षस होगये वह अपने राक्षसी स्वभाव से अपनी सेना और अपने पुत्र शंखण को भक्षण करगये शंखण के पुत्र सुदर्शन सुदर्शन को अग्निवर्ण अग्निवर्ण को शीघ्रण शीघ्रण को मरू मरू के पुत्र प्रसुश्रुव प्रशुश्रुव के पुत्र परम बुद्धिमान अंबरीष हुए अंबरीष को नहुष नहुष को नाभाग नाभाग को अज और सुव्रत नाम के दोपुत्र हुए अजको धर्मात्मा दशरथ हुए जिनके ज्येष्ठ पुत्र रामचन्द्रजी हैं हे रामचन्द्रजी! अपने कुलके व्यवहार के अनुसार राज्यको अंगीकार कीजिये, ज्येष्ठ को रहते हुए कनिष्ठ राज्य का पालन नहीं करने योग्य है इस कारण रघुबंशियों के कुल धर्म को स्मरण करके और दशरथ की अपेक्षा हमारे बचन श्रेष्ठ जानकर महाराज दशरथ के समान पृथिवी का पालनकरो॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे दशोत्तरशततमः सर्गः ॥११०॥

इसके उपरान्त राजपुरोहित वसिष्ठजी धर्म युक्त बचन को फिर भी बोले, हे रामचन्द्रजी ! मनुष्य को तीन गुरू होते हैं पिता माता और आचार्य, पिता केवल उत्पन्न करके पालन करता है आचार्य बुद्धि को देता है इस कारण आचार्य को पिता माता से श्रेष्ठगुरू जानना चाहिये, इसलिये हमरे बचन के अनुसार भरत की प्रार्थना को अंगीकार करो तुम्हारे धर्म शिक्षा के अनुकूल ये राजा और नगरी बासी प्रजा आचरण करते हैं और करेंगे भरतजी के बचन को आप स्वीकार करिये, वसिष्ठजी के सन्मुख विनीत होकर सुमधुर बचन से रामचन्द्रजी बोले भगवन् ! माता पिता जैसा उपकार पुत्रका करते हैं उनके उस उपकार के बदले में पुत्र प्रत्युपकार नहीं कर सकता, जैसे बालक के जीवन रक्षा के लिये दूध अन्न तेल उबटन शय्या प्रिय बचन तथा पिता माता के लालन पालन किया वही नहीं सुप्रतिकर हैं महाराज दशरथ हमारे उत्पादक हैं, अर्थात् पिता हैं उन्होंने बनवास करने की जो मुझे आज्ञा दी है उसको मिथ्या नहीं करना चाहिये उसको मिथ्या करनेमें महान् अनर्थ होगा। इस प्रकार रामचन्द्रजी के बचनको सुन कर दुःखित हृदय से सुमन्त्रजी से बोले हे सुमन्त्रजी! इहां पर कुश को बिछाओजब तक श्रीरामचन्द्रजी हमसे नहीं प्रसन्न होंगे तब तक निराहार दरिद्र ब्राह्मण के समान यहां ही पृथ्वी पर पड़ा रहूंगा भरतजी के बचन को सुन कर सुमन्त्रजी श्रीरामचन्द्रजी के तरफ देखते हुए कुछ बिलंब किए तब तक भरतजी स्वयं अपने हाथ से कुशा बिछा कर पृथ्वी पर शयन किये, भरत की दशा को देखकर राजर्षि सत्तम रामचन्द्रजी से बोले हे तात भरत ! यह क्या विचार करते हो हमारे साथ एक आसन पर बैठने वाले आप हैं यह दरिद्र ब्राह्मण के समान व्यवहार क्यों करते हैं क्षत्रियों को उपत्युपवेशन (धरना) में प्रायश्चित्त होता है तुम इस दारुण व्रतको छोड़ कर उठो और शीघ्र अयोध्यापुरी को जाओ कुशासन पर शयन किये हुए भरतजी चारो ओर देखकर बोले कि अब आप की शिक्षा को ग्रहण नहीं करूँगा, भरत और रामचन्द्रजी के विवाद को सुन

कर पुरोहित मन्त्री सैनिक तथा नगरवासी परस्पर में कहने लगे कि रामचन्द्रजी के प्रति भरतजी यथार्थ कहते हैं और महाभाग रामचन्द्रजी भी पिता के बचन पर आरूढ़ हैं और लोक व्यवहार से ज्येष्ठ को रहते कनिष्ठ राज्य का पालन नहीं करसकता यह भरत की प्रतिज्ञा भी सत्य है यह दोनों सत्यवाद का बिचार यथार्थतः हम लोग नहीं कर सकते, उन नगर बासियों के बचन को सुनकर धर्म पूर्वक रामचन्द्रजी बोले हे पुरवासी मंत्री पुरोहित गण ! सावधान होकर सुनो, भरत के बचन को और हमारे बचन को सुनकर बिचार करो बिचार करने से जो निश्चय हो उसके अनुसार हमारे बचन को स्वीकार करो यह कह कर रामचन्द्रजी भरतजी से बोले हे भरतजी ! क्षत्रिय को प्रत्युपवेशन योग्य नहीं है इस प्रायश्चित्त में उठ कर तुम आचमन करो और मुझको स्पर्श करो, श्रीरामजी के बचन को सुनकर उठ कर भरतजी आचमन करके भरतजी बोले, हे सभासद ! मन्त्रि पुरोहित ! सुनो, न तो मैंने पिता से राज्य की प्रार्थना किये और न तो माता को अनुशासन दिये कि तुम हमारे वास्ते राज्य और रामचन्द्रजी को बनबास मागो, यदि पिता का बचन अवश्य पालनीय है तो आपके समान चौदह वर्ष पर्यन्त हम निवाश करेंगे, भाई भरतजी के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी विस्मित होकर सभाकी ओर देखते हुए रामचन्द्रजी बोले, अपने जीवते हुए पिता केकयी से द्रव्य लेकर अथवा बचन देकर कि जिस किसी प्रकार से हो यह राज्य केकयी को दिया है तो पिताके बचन को हम हों चाहे भरत हों पालन करना अवश्य चाहिये, और प्रतिनिधि को अपनी असमर्थता में करना चाहिये हम तो स्वयं पिताके बचन को पालन करना चाहते हैं, बनबास को पूरा करके लौटने पर धर्मशील भरतजी के साहित पृथिवी का पालन करूंगा ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे एकादशोत्तर सर्गः ॥ १११ ॥

अत्यन्त बलशाली महापराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी और भरतजी के संगम को देखकर गंधर्वों के साहित नारद आदि महर्षि प्रसन्न

होकर प्रशंसा करने लगे और भरतजी से बोले, कि हे भरतजी ! श्रीरामचन्द्रजी पिताको अऋण करना चाहते हैं, जब इनका बनबास पूरा होगा तब महाराज दशरथ केकयी के बचन से अनृण होकर स्वर्ग को जायेंगे, देवताओं के इस बचन से प्रसन्न होकर रामचन्द्रजी नारद आदि महर्षियों की पूजा किये इसके उपरान्त बिनीत होकर भरतजी रामचन्द्रजी से बोले, हेरामजी ! अपने कुलके धर्मको स्मरण करके कौशल्या की प्रार्थना को स्वीकार करो क्योंकि इतने बड़े राज्य के विरक्त प्रजाओं की रक्षा हमसे बिना सहायक के नहीं होगी जैसे किसान वर्षाकाल को चाहते हैं वैसे इस समय सकल राष्ट्र आपकी प्रतिक्षा करते हैं, ऐसा कह कर प्रार्थना पूर्वक भरतजी रामचन्द्रजी के चरणों पर गिरपड़े, श्यामवर्ण कमल नयन रामचन्द्रजी भरतजी को गोदमें लेकर बोले, हे भरतजी ! अपने स्वभाव की बिनय से पृथिवी की रक्षा करने योग्य हो, अपने मित्र और मन्त्रियों के बिचार पूर्वक राज्यका पालन करो, जैसे शोभा को चन्द्रमा नहीं त्याग करते हिम (बरफ) को हिमालय नहीं छोड़ता समुद्र अपनी मर्यादा का अतिक्रमण नहीं करता वैसे हम पिता के बचन को पालन करने से विचलित नहीं होंगे, केकयी के इस दुष्कर्म को उचित न जानकर माता के समान हमारी आज्ञा से सेवा करना इस प्रकार रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर वशिष्ठजी की अनुमति से भरतजी बोले, हे तात ! आपके भद्रासन के समीप यह जो सोने का खड़ाऊं है इसको अपना प्रतिनिधि जानकर हमको दीजिये यही समस्त राज्य का कल्याण करेगा, रामचन्द्रजी सभा के मध्य में खड़ाऊं को भरतजी को दिये, भरतजी चरणपादुका लेकर प्रतिज्ञा पूर्वक रामचन्द्रजी से बोले, कि चौदह बर्ष तक जटा और चीर को धारण करके फलमूल भोजन पूर्वक आपके आगमन की प्रतीक्षा करते हुए नगर के बाहर रहूंगा, और इस पादुका के अधीन होकर राज्य तन्त्रका निर्वाह करूंगा यदि चौदह बर्ष पूरा होने पर आपका दर्शन नहीं होगा तो मैं अग्नि में

प्रवेश करके शरीर का नाश करदूंगा, भरतजी की प्रतिज्ञा को स्वीकार करके शत्रुघ्नजी को गोद में लेकर रामजी ने धैर्य देकर विदा किये, पादुका को लेकर भरतजी रामजी की प्रदक्षिणा किये और हाथी पर चढ़कर चलने को प्रस्तुत हुए इसके उपरान्त वशिष्ठ आदि ब्राह्मणोंको यथा योग्य करके कौसल्या आदिको विनय पूर्वक प्रणाम किये, मान्त्रि पुरोहित और नगर वासियों से यथा योग्य मिलकर श्रीरामजी सबको विदा किये ॥

बाल्मीकीये रामायणे अयोध्या काण्डे द्वादशाधिक शततमःसर्गः॥११२॥

इसके उपरान्त पादुका को शिरोधार्य करके प्रसन्नता पूर्वक शत्रुघ्न के साहित रथ पर बैठकर भरतजी अयोध्यापुरी को चले, बसिष्ठ बामदेव जाबालि आदि महर्षि मान्त्रियों में श्रेष्ठ मन्दाकिनी नदीको प्रणाम करके चित्रकूटकी प्रदक्षिणा किये इसके उपरान्त पूर्वमुख होकर सेना के आगे होकर अयोध्यापुरी को चले, बन उपवनकी रमणीय शोभा देखते हुए सेना सहित भरतजी भरद्वाज मुनिके आश्रम पर पहुंचे वहां भरतजी शत्रुघ्न और सेना के साहित रथसे उतरकर मुनि को प्रणाम किये, भरतजीके समागमसे प्रसन्न होकर भरद्वाजमुनि बोले कि रामजीके संगम से आपका मनोरथ सफल हुआ मुनिके बचनको सुनकर भरतजी बोले कि हमारी प्रार्थनासे रामचन्द्रजी प्रसन्न होकर बसिष्ठजी से बोले कि हम चौदह वर्ष पर्यन्त पिताके बचनको प्रतिज्ञा पूर्वक पालन करूंगा इसके बाद रामचन्द्रजी के बचनको सुनकर बसिष्ठजी बोले कि अयोध्यामें क्षेम करने के लिये और भरतजी को प्रसन्नता के लिये यह अपनी पादुका भरतजी को देओ, गुरुवसिष्ठजी के बचनको सुनकर प्रसन्नता पूर्वक पूर्व मुख होकर रामचन्द्रजीने हमारे राज्यकी रक्षाके लिये यह पादुका दिये, इसी पादुकाको लेकर महात्मा बसिष्ठजी के अनुमति से पादुका को ग्रहण करके हम लोग अयोध्या पुरीको जाते हैं भरतजी के शुभ बचनको सुनकर भरद्वाजमुनि बोले, हेराजकुमार ! सत्यको पालन करने वाले आदर्श पुरुषके वास्ते कुछ

भी असंभव नहीं है आप लोगों को पुत्र पाकर महाराज दशरथ अनृण होगये, इसके बाद भरतजी मुनी की प्रदक्षिणा करके बार बार दण्डवत् करके अयोध्यापुरी को चले, सेना साहित भरतजी यमुना नदीको पार करके गंगाजी के समीप पहुंचे, गंगाजीको साष्टाङ्ग दण्डवत् करके नौका से नदीको पार किये और गुहकी राजधानी शृङ्गवेर पुरमें प्रवेश किये शृङ्गवेरपुर से आगे चलकर अयोध्यापुरी को देखे, नायक से विहीन अयोध्या को देखकर दुःख से सन्तप्त भरतजी सुमन्त्र से बोले, हेसुमन्त्रजी ! इस समयकी दीनदशा अयोध्याकी किसके मनको क्षुभित नहीं करैगी ॥

बाल्मीकीये रामायणे अयोध्याकाण्डे त्रयोदशाधिक शततमः सर्गः ॥११३॥

अनेक प्रकार के बाजों युक्त सेनाके साहित भरतजी अयोध्यामें पहुंचे, अयोध्या में बिडाल और उलूक इधर उधर घूमते हैं काली रात्रि के समान सूना छा रहा है जलाशय सब सूख गये हैं, ब्राह्मणोंके आग्निहोत्र शाला की अग्नि प्रसान्त होगयी है गाय तृणका चरना भूल गयी सांड़ गायों में प्रेम नहीं करते हैं पक्षियों का बोलना अति कठोर होगया है, अयोध्या की यह दशा देखकर रथ पर बैठे हुए भरतजी सारथी सुमन्त्र से बोले, कि जैसे पहिले अयोध्यापुरी की शोभा थी वह शोभा आज नहीं है, चारो ओर गाने बजाने के शब्द से सूना होगयी है शीतल मन्द सुगन्ध हवा का चलना बन्द होगया है, घोड़ों का हाथियों का बिहार बन्द होगया श्रीरामचन्द्र को बन जाने से सुगन्धित पुष्पों का हार बनना बन्द होगया है रामचन्द्रजी से विहीन अयोध्यापुरी के युवकगण बगीचों में विहार करनेको नहीं जाते हैं, रामचंद्र जीके बिरह में अयोध्या की समस्त शोभा नष्ट होगयी है, अयोध्या के सुन्दर मार्ग सब भ्रष्ट होगये हैं वृक्षोंकी छाया उदासीनता को धारण किये है इस प्रकार नगरकी दशा का वर्णन सुमन्त्रजी से कहते हुए भरतजी राज भवन में इस भांति प्रवेश किये जैसे सिंह के बिना सिंहनी अकेली गुहामें रहती है वैसे रामचन्द्रजी के बिना भरतजी

का प्रवेश हुआ। राजभवन में जाकर अनेक स्थानों को सूना देखकर दुःख पूर्वक आंसूकी धारा बहाने लगे॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे चतुर्दशाधिक शततमःसर्ग ११४

इसके उपरान्त भरतजी कौशल्या आदि राज माहिलाओं को राजभवन में पहुंचा कर शोक से पीड़ित भरतजी वसिष्ठ आदि गुरूजनों से बोले कि आप लोग आज्ञा दीजिये मैं नन्दिग्राम को जाऊंगा और वहां श्रीरामचन्द्रजी के बिना शीत आतप बर्षा क्षुधा तृषा के पीड़ाको सहन करके चौदहवर्ष का समय समापन करूंगा, महात्मा भरतजी के सुन्दर बचन को सुनकर मन्त्रि पुरोहित आदि सभी नगर वासी भरतजी की प्रंशासा करने लगे और कहने लगे कि बन्धुजनके परिपालन में स्पृहा करने वाले पुरुष के बचन को कौनसा पुरुष नहीं स्वीकार करेगा, अपने मनके अनुकूल मन्त्रियों की अनुमति को पाकर सुमन्त्रजी से बोले, हमारे रथको साज्जित करो, सुमन्त्रजी को ऐसी आज्ञा देकर प्रसन्नता पूर्वक कौशल्या आदि की अनुमति लेकर रथ पर बैठ कर शत्रुघ्न के सहित चलने को प्रस्तुत हुए, मन्त्रि पुरोहित और वसिष्ठ आदि ऋषि नान्दिग्राम को चले इसके बाद भरतजी की यात्रा को नान्दिग्राम की ओर देखकर विना निमन्त्रणके प्रजागण चले, धर्मात्मा भरतजी पादुका को शिरोधार्य करके नान्दिग्राम में पहुंचे, वहां रथसे उतर कर बसिष्ठ आदि गुरुओं के समीप हाथ जोड़कर बोले कि इस अयोध्यापुरी के राज्य को हमारे भाई रामचन्द्रजी धरोहर के तरह पर हमको दिया है सो भी इस राज्य की रक्षा भगवान के चरण पादुका के अधीन है, हमारे अधीन नहीं है, भरतजी ऐसा कह कर पादुका को शिरोधार्य करने के बाद दुःख से पीड़ित होकर प्रजाओं से बोले, यह रामचन्द्रजी के पादुका को शीघ्र छत्र और चमर देओ इसी पादुका के सान्निधान में उनके व्यवहार के अनुकूल हम राज्य की रक्षा करेंगे, श्रीरामचन्द्रजीने स्नेह से परिप्लुत होकर धरोहर के समान इस राज्यको हमें दिया है हम बनसे उनके लौटने के समय तक

पालन करूंगा भरतजी प्रजाओं से यह कह कर छत्र चमर आदि अभिषेक के वस्तु से चरणपादुका को अभिषेक किये और अपने मुनियों के समान वृक्षके वकले को और जटाको धारण करके सेना के और मन्त्रि पुरोहित के साहित नान्दिग्राम में निवास करने लगे, धनागार को वस्त्रागार तथा अन्यान्य धन धान्य पूर्ण सकल सम्पत्ति को क्रम से पादुका को निवेदन किये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अयोध्याकाण्डे पंचदशाधिकशततमःसर्गः ११५

भरतजीको अयोध्या आने के बाद अर्थात् चैत्रशुक्ल दशमीको रामचन्द्रजीको बनगमन हुआ और चैत्रशुक्ल पूर्णिमा को अर्धरात्रि में महाराज दशरथ का मरण हुआ इसके बाद भरतजीका अयोध्यामें आगमन और दशरथजी की दाह क्रिया आधे कृष्णपक्ष बैसाख तक हुआ इसके बाद शुक्लपक्ष बैसाख और संपूर्ण ज्येष्ठ तक भरतजीका चित्रकूट का आना और पुनः अयोध्यामें जाकर नान्दिग्राम में बास करना इसके उपरान्त वर्षाकाल में श्रीरामचन्द्रजी चित्रकूट में निवास करके कार्तिक में दूसरे स्थान पर चलने का बिचार किये क्योंकि राक्षसों के संबंध से वहां भी उत्पात होने लगा जैसी यह कथा क्षेपक लिखते हैं कि एक समय चित्रकूट पर्वत पर जानकीजी के साहित बिहार करते हुए श्रीरामचन्द्रजी निद्रामें बिह्वल होगये इतने में अत्यन्त कामुक इन्द्रका पुत्र जयन्त महासुन्दरी जानकीजी को देख कर उनके रूप पर मोहित होकर कौआ रूप धारण किया चित्रकूट पर्वत पर आकर जानकी जीके स्तन पर नखसे आघात किया, सर्वान्तर्यामी परब्रह्म परमेश्वर रामचन्द्रजी उसके मर्मको जानकर कौआ को प्राण साहित मारने के वास्ते कुशाका ब्रह्मास्त्र बना कर चलाये, जयन्त उस ब्रह्मास्त्र के भयसे तीनों लोक में भ्रमण किया किंतु जहां वह कौआ जावे वहां उसका पीछा किये ब्रह्मास्त्र भी जावे, इसके उपरान्त जयन्त अपना प्राण बचाने के वास्ते इन्द्रलोक, ब्रह्मलोक, रुद्रलोकमें गया परन्तु ब्रह्मास्त्र से कोई उसकी रक्षा न कर सका तब

देवता लोग बोले हे काग! तुम अपने प्राण की रक्षा चाहते हो तो श्रीरामजी के शरण में जाओ और उनको छोड़कर दूसरे की सामर्थ्य नहीं है जो तुम्हारी रक्षा करने सके, ब्रह्माजी के बचन को सुनकर वह कौआ ब्रह्मलोक से पृथिवी पर आकर श्रीरामजी के शरण में जाकर त्राहि त्राहि करने लगा, परम दयालु श्रीरामजी अपने हाथ से कौआ के अंग को स्पर्श करके बोले कि यह ब्रह्मास्त्र निष्फल नहीं होगा, अपने कर्म के बदले तुम अपनी एक आंख इसे देकर अपना प्राण बचाओ श्रीरामजी के बचनानुसार जयन्त ने अपनी एक आंख ब्रह्मास्त्र को दिया है इसी से कौआ को एकही आंख दोनों ओर चक्र के समान घूमा करती है इस क्षेपक कथा के बाद श्रीरामजी चित्रकूटको छोड़कर दूसरे स्थानको चलने के वास्ते प्रस्तुत हुए क्योंकि उनको तो रावण आदि राक्षसों को मारकर देवताओं का बन्धन छुड़ाना और पृथिवी का बोझा उतारना था, श्रीरामजी के स्थान छोड़नेके समाचार को चित्रकूट में रहने वाले मुनिश्वरों ने सुनकर श्रीरामजीके समीप आये और महर्षि कुलपति हाथ जोड़कर श्रीरामजी से बोले हेभगवन्! यदि तपस्वियों के द्वारा आपको कुछ कष्ट तो नहीं हुआ है, अथवा लक्ष्मणजी आपकी सेवामें प्रमाद तो नहीं किये हैं वा जानकीजी ने अपने स्त्री धर्मका उलंघन तो नहीं किये कि जिस कारण आप स्थानान्तर को जाने का बिचार करते हैं, आपके कारण यह राक्षसों से यहां उपस्थित हुआ है क्योंकि यहां से थोड़ी दूर पर दण्डक बन है उसी दण्डक बनमें रावण का लघुभाई खरनामक राक्षस रहता है वह राक्षस जनस्थान में रहने वाले मुनियों को पीड़ा देता है और जबसे आप यहां रहने लगे तबसे यहां भी अनेक प्रकार का उत्पात राक्षस गण करते हैं, परन्तु आपतो संसार के भयको नाश करने वाले हैं आपको क्या पीड़ा देवेंगे, कभी अनेक रूप को दिखाते हैं कभी ऋषियों के आश्रम में मलमूत्र तथा हड्डियों को फेंक देते हैं कभी तपस्वियों का प्राण हर लेते हैं कभी हवन करते समय स्रुवा कलश आदि को

तोड़ फोड़ देते हैं इस कारण इन दुर्जनों के उत्पात से इस आश्रम को छोड़कर अन्यत्र जाना चहिये, हम लोग भी फल पुष्प से संपन्न अश्व-मुनिके आश्रम में शिष्यों के सहित चलें, हे—भगवन् ! यदि आप राक्षसों को निग्रह करने में समर्थ हैं तौभी स्त्रीके सहित यहां का रहना उचित नहीं है, महर्षियों के इस प्रकार बचन को सुनकर श्रीराम निरूत्तर होकर चित्रकूट को त्याग करने का बिचार करके शिष्यों के सहित महर्षि कुलपतिको दण्डवत् किये और सीताजी को क्षणभर के लिये भी छोड़कर कहीं नहीं जाते थे ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे उशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११६ ॥

मुनियों के चले जाने पर श्रीरामजी एकान्त में बैठकर चिन्ता करने लगे कि, इसी स्थान पर कौशल्या भरत के सहित नगर बासियों को देखा है उनका स्मरण आज हमें होता है वह लोग तो नित्य हमको स्मरण करते होंगे, देखो महात्मा भरत सेना के सहित यहां आकर इस बनको शिथिल कर दिया है इसलिये जानकी और लक्ष्मण को साथ लेकर हम दूसरे स्थान को जावेंगे, यह बिचार चित्रकूट को छोड़कर लक्ष्मण और जानकी के सहित अत्रिमुनी के आश्रम में पहुंच कर मुनिको प्रणाम किये, भगवान् अत्रि पुत्र के समान स्नेह किये और लक्ष्मण सीता के सहित श्रीरामजी का आतिथ्य किये परम तपस्विनी वृद्धा अनसूयाजी का वृत्तान्त कहने लगे इसके उपरान्त अपने आश्रम की शोभा दिखाने के लिये श्रीजानकीजी और रामजी से बोले हे वत्स ! दश वर्ष तक अनावृष्टि के कारण संसार पीड़ित होगया तब अपने तपोबल से स्नान करने के लिये अपने आश्रम में गंगाजी का आवाहन किये और वर्षाकाल के प्रभाव से यह आश्रम फल फूल से समृद्ध होगया, इसके बाद अत्रिमुनि अनसूया के प्रभाव का वर्णन करने लगे कि किसी ऋषिके पत्नी को माण्डल्य ऋषि ने शाप दिया कि तुम विधवा होजाओ वह ऋषि पत्नी अनसूया की प्रिय सखी थी, अनसूया ने अपने प्रिय सखी केशाप को सुनकर अपने तपोबल

के प्रभाव से प्रातःकाल होना बन्द कर दिया तब प्रातः काल को न देखकर देवतागण व्याकुल होकर अनसूया की प्रार्थना करने लगे तब अनसूया जी प्रसन्न होकर दशरात्रि के बराबर एक रात्रि को किया इससे देवताओं का कार्य किया और अपने प्रिय सखी का शापोद्धार किया, वह अनसूयाजी सब लोगों को नमस्कार करने योग्य हैं, इसलिये हे वैदेही ! तुम अनसूयाजी के दर्शन के लिये वहां जाओ, महर्षि के बचन को सुनकर श्रीरामजी जानकीजी से बोलेकि मुनिजी जो कुछ कहते हैं उसको सुना है अपने कल्याण के वास्ते तपस्विनी अनसूया के समीप जाओ अनसूयाजी के कर्मकी लोक में ख्याती है सीताजी रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर जानकीजी अनसूयाजी के समीप गयीं, पर अत्यन्त वृद्ध शिथिल अनसूयाजी को देखकर अपना नाम पूर्वक प्रणाम किया, अनसूयाजी आशीर्वाद देकर जानकीजी का कुशल पूछने लगीं सीताजी ने अपना वृतान्त अनुसूया जी से कह सुनायीं, सीताजी के वृतान्त को सुनकर अनसूयाजी बोली हे सीते तुम धन्य हो जो अपने बन्धु बान्धवों को छोड़कर पतिधर्म को पालन करने के लिये पतिके साथ बन में आयी हो चाहे नगर हो चाहे बन हो, शुभ हो अशुभ हो जिस स्त्री को स्वामी प्रिय है वह समस्त जगत् को प्रिय है, पतिसेवा से स्त्रियां लोक में निवास करती हैं ॥

इति बाल्मीकिये अयोध्याकाण्डे सप्तदशाधिक शततमः सर्गः ॥११७॥

इस प्रकार अनसूयाजी के बचन को सुन कर जानकी जी बोलीं, हे आर्ये ! जो आप कहती हैं यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, माता पिता के समान पति प्रिय होता है, रामचन्द्रजी जैसा कौशल्या सुमित्रा में व्यवहार करते हैं वैसेही और भी स्त्रियों में माता के समान व्यवहार करते हैं, हमारे पाणिग्रहण काल में हमारी माता और बन चलने के समय में हमारी सासू कौशल्या ने जो कुछ उपदेश हमको दिया है वह हमारे मनमें स्थिर है कि स्त्रियों को पति सेवाके अतिरिक्त कोई

तपस्या नहीं है सावित्री ने पतिसत्यवान की सेवासे स्वर्ग लाभ किया है, रोहिणी बिना चन्द्रमाके क्षणभर भी नहीं प्राण को रख सकती, इस प्रकार पति सेवा करके पतिव्रता स्त्रियां अपने पुण्य कर्मसे देव लोकका लाभ करती हैं इस प्रकार सीता के बचन को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक अनसूया बोलीं हे सीता ! हमारी बड़ी उग्र तपस्या है तुम हमसे कुछ बर-दान मांगो, हम तुम्हारा क्या सत्कार करूं, अनसूयाजी के बचन को सुन कर सीताजी विस्मित होकर बोलीं कि आपके अनुग्रहसे हमको कुछ भी इच्छा नहीं है, जानकीजी के बचनको सुनकर अनसूयाजी बोलीं, कि यह हमारे दिये हुए चन्दन माल्य वस्त्र आदिको धारण करो यह तुम्हारे अंगमें शोभाको देगा इससे मलीनता थकावट सब नाश होगा, प्रीति पूर्वक अनसूयाजी के दिये हुए लेपन बस्त्र अलंकार आदिको ग्रहण किया, इस के बाद प्रसनन्ता पूर्वक अनसूयाजी जानकीजी से प्रिय कथाको पूछने लगीं, कि तुम्हारे स्वयंबर में श्रीरामचन्द्रजी जाकर किस प्रकार जनकजी के प्रतिज्ञा को पूर्ण करके तुम्हारा पाणिग्रहण किया वह कथा बिस्तार पूर्वक हमसे कहो, अनसूयाजी के प्रश्नको अंगी कार करके जानकीजी कथा को कहने लगीं, मिथिला के राजा धर्मात्मा जनक न्याय पूर्वक पृथिवी का पालन करते हैं, उन्हें यज्ञकी भूमिको हलसे जोतते समय हमको प्राप्त करके बिस्मित होगये, पुनः उनको कोई सन्तान नहीं था इसलिये अपनी कन्या स्वीकार किये इतने में आकाशबाणी हुई कि हे राजन् ? यह तुम्हारी धर्म पुत्री है इसको स्वी-कार करो, आकाशवाणी को सुनकर एक महा संपतिके लाभके समान हमारा लालन पालन करने के लिये अपनी ज्येष्ठा स्त्री को दिया वह माता के समान हमारा पालन करने लगीं, विवाह के योग्य हमारे समयको देखकर हमारे पिता चिन्तित होगये जैसे धनको नाश होने पर मनुष्य चिन्तित होता है, पुनः हमको अयोनिजा जानकर स्वयंबर करने का निश्चिय किये, उस महायज्ञ में महात्मा वरुण ने एक श्रेष्ठ धनुष हमारे पिता को दिया था, उस धनुष को बड़े प्रयत्नसे हजारों

मनुष्य चला सकते थे राजा लोग तो स्वप्नमें भी उसको नहीं तोड़ सकते थे, उस धनुष को लेकर हमारे पिता ने राजाओं को बुलाकर प्रार्थना किये कि जो कोई इस धनुष को तोड़ेगा उसीसे हमारी कन्याका पाणिग्रहण होगा, उस धनुष को देखकर अशक्त राजगण धन्वा को प्रणाम करके चले गये, कुछ दिनके बाद महा पराक्रमी रामचन्द्रजी लक्ष्मण और विश्वामित्रके सहित यज्ञ देखनेको गये, हमारे पिताने रामलक्ष्मण के सहित विश्वामित्र जी की पूजा किये, इसके बाद धर्मात्मा विश्वामित्र जी बोले कि अयोध्या के राजा महाराज दशरथ के ये पुत्र हैं इनका नाम राम और लक्ष्मण है यह धनुषको देखने के वास्ते आये हैं, विश्वामित्रजी के बचन को सुनकर हमारे पिताने धनुषको दिखलाया, उस धनुष को क्षणभर में महाबली रामजी ने तोड़ा उसके टूटने का शब्द वज्रके समान हुआ, तब श्रीरामजी के साथ पाणिग्रहण करने के लिये हमारे पिता उत्सुक हुए इसके बाद हमारे पिता महाराज दशरथ को बुलाकर हमको रामचन्द्रजी को दिया और हमारी बहिन उर्मिला को लक्ष्मण को दिया, इसीसे हम सदा पति सेवामें परायण रहती हूं ॥

इति वाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे अष्टाधिकशततमः सर्गः ॥ ११८ ॥

अनसूयाजी इस स्वयंबर की कथा को सुन कर जानकीजी को गले से लगा लिया और बोली कि जो कुछ तुमने स्वयंवर का वृत्तान्त कहा उसको हमने सुना,इस रमणीय कथा को सुनने से सूर्य अस्त हो गये रात्रि देवी संसार पर आक्रमण कर लिया, पक्षिगण अपने निवास के वृक्षों पर आगये, ऋषिलोग वल्कल और कलश लेकर सायंकाल की संध्या करने के लिये व्यग्र होगये, तपोवन के मृगा अपने वेदियों पर निवास किये, ऋषियों के हवन के धूम चारो ओर दिखाई देने लगे तारागणों के सहित चन्द्रमा का उदय होगया इतने में अनसूयाजी जानकीजी से बोली अब तुम जाकर रामजी की सेवा करो, सीताजी प्रसन्नता पूर्वक अनसूयाजी को प्रणाम करके रामजी के समीपमें आकर अनसूयाजी के दिये हुए वस्त्र और अलंकार को निवेदन किया, लोक

में दुर्लभ और आदर से दिये गये ऋषि पत्नी के वस्तुओं से लक्ष्मण के सहित रामजी प्रसन्न होकर रात्रिकालको व्यतीत किये, प्रातः काल उठकर अपने संध्यावन्दन हवन से निवृत्त होकर मुनियों से बनके मार्गको रामजी पूछने लगे, रामजी के बचन को सुनकर मुनियों ने कहा कि इस बनमें अनेक राक्षसों के उत्पात से यहां के जन पीड़ित रहते है सिंह व्याघ्र आदि निवास करते हैं, इस मार्गसे महर्षि लोग फल मूलको ले आते हैं इसी मार्गसे आप भी इस दुर्गम बनमें प्रवेश कीजिये ऐसा कहकर मुनियों को श्रीरामजी स्वास्त्ययना किया श्रीरामजी सबको दण्डवत करके लक्ष्मण जानकी के सहित आगे बनमें प्रवेश किये॥

इति वाल्मीकीये अयोध्याकाण्डे एकोनविंशाधिकशततमःसर्गः ॥११९॥

। समाप्तमयोध्याकाण्डम् ॥



वाल्मीकीये रामायणे आरण्यकाण्ड प्रारंभः

❀ अथ मंगलाचरणं विनीता छन्दसे ❀

राम आगे चले मध्य सीता चली । बन्धु पीछे चले शोभ शोभा भली ॥
देखि देही सबै कोटिधा कै मनौ । जीव जीवेश के बीच माया मनौ ॥१॥
सोरठा-सिय पिय पतिहि मनाय, नाय शीश गण ईश को ।
पद हनुमत हिय ध्याय, भाषा लिखत प्रबन्ध यह ॥ २ ॥
दोहा-यह अब सुनिये कान दै, मेरी हे हेरम्बवा ।
तुरतहि अब तू भांनि दै, मेरे विघ्न कदम्ब ॥

अत्रिमुनि के बताये गये मार्ग से चलते हुए श्रीराम दण्डक बन में प्रवेश करके तपस्वियों के आश्रम समूह को देख, वहां के तपस्वी ब्राह्मण गण कुशचीर को धारण किये ब्रह्मविद्या से संपन्न दूसरे सूर्य के प्रकाशमान सकल प्राणियों की रक्षा करने वाले फल मूल को भोजन करने वाले सदा अग्निहोत्र और वेद पाठ करने वाले दिव्य ज्ञान से संपन्न महर्षियों को देखकर सीता और लक्ष्मण के सहित प्रसन्नता पूर्वक श्रीरामचन्द्रजी उन ब्राह्मणों के समीप गये, ब्राह्मण गण आगे से आकर रामचन्द्रजी का स्वागत किये और ब्रह्मजीव तथा माया का साक्षात् अवतार जान कर एक टक से खड़े होकर आश्चर्य पूर्वक दर्शन करने लगे, इसके उपरान्त वे आश्रमवासी ब्राह्मण श्रीरामचन्द्रजी को पर्णकुटी में लिवा जाकर विधिवत् पूजा किये और तीर्थों के स्वच्छ जल पुष्प फल मूल को लाकर श्रीरामचन्द्रजी को निवेदन किये, वे ब्राह्मण जन हाथ जोड़कर बोले, हे भगवन् ! दुष्टों का नाश करने वाले भक्तों की रक्षा करने जगत के पूज्य आप हैं, जगत की जो कुछ वस्तु है वह आपकी है, आप चराचर के स्वामी हैं, देवताओं के दुःखको छुड़ाने के लिये आपने

अवतार को धारण किया है, इस प्रकार की अनेक अस्तुति करके पीछे लक्ष्मण और जानकीजी की पूजा स्तुति किये ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे प्रथमः सर्गः ॥१॥

उस दिन रामचन्द्रजी मुनियों के सत्कार को अङ्गीकार करके रात्रिकाल में वहीं निवास किये,, दूसरे दिन प्रातःकाल मुनियों के सहित बन की शोभा देखने को दण्डकबन में प्रवेश किये, और वहाँ देखने लगे कि पर्वतों के ऊँचे शिखर आपस में ऊचाई का विस्तार कर रहे हैं चंपक कदम्ब बकुल नागकेसर अशोक आम जामुन पनस पलास महुआ केला वट आदि के वृक्षों की घनी छाया से अन्धकार सा मलूम होता है, उन वृक्षों पर मालती माधवी वेला जूही आदि की लतायें चढ़ी हैं, तृण बांस और बेतकी हरियाली शोभा से युक्त वह बन है, अनेक रंग की कोकिला आदि पक्षियां सु मधुर शब्द को बोलते हैं, ऐसी शोभा से युक्त बन में पर्वत के समान ऊँचा, पर्वतकी कन्दरा के समान आँख मुख वाला, समुद्र के समान उदार वाला, व्याघ्र के गीले चमड़े को ओढे यमराज के समान प्राणियों को पीडा देने में तत्पर महा शब्द को करता हुआ विराध नाम राक्षस को रामचन्द्रजी देखे ।

सवैया ।

उद्यगिर शृङ्ग ऐसो रूप विकराल जाको उदर दरीसो मदे मज्जन तैं छाको है ।
आँख है गँभीर जाकी विकट महान वक्त्र भ्रुओं विभत्स रस होत देखि ताको है ॥
वल्कल बड़ोई चर्म ओढ़े आई व्याघ्र ही को देखत हृदय ही कंप होत काको है ।
आवत धुधातियों विरांधै लखि रामचन्द्र काटिकै निखंगतै त्यों मारो बाण बाको है ॥

वह विराध सीता के सहित रामचन्द्र और लक्ष्मणजी को देख कर महाभयंकर शब्द करता हुआ क्रोध पूर्वक रामचन्द्रजी की ओर दौड़ कर जानकीजी को अपने गोद में ले लिया और रामचन्द्रजी से बोला कि जटा चीरको धारण करके स्त्रीके सहित धनुष बाणको लेकर इस दण्डक बनमें क्यों घूमते हो और एक स्त्री के साथ दो पुरुषों का निवास कैसा करना उचित है मुनि के वेष को दूषित करने वाले

तुम दोनों कौन हो, मैं तो दुर्गम इस बन में रहने वाला विराध नाम का राक्षस हूँ। ऋषियों के मांस को भक्षण करता हुआ इसी बन में वास करता हूँ इस समय तुम दोनों के रक्त से तृप्त होऊंगा और यह महासुन्दरी हमारी भार्या होगी। दुरात्माविराध के बचन को सुनकर सीता जी काँपने लगीं जानकीजी की दशा देखकर रामचन्द्र जी लक्ष्मण से बोले कि हे लक्ष्मणजी! आज जानकीजी बिराध के अङ्क में किस दशा को प्राप्त हुई हैं श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर क्रोधित सर्प के समान श्वांस लेकर लक्ष्मणजी बोले कि जगत की रक्षा करने वाले इन्द्र के समान आप हमारे रहते हुए अनाथ के समान परिताप करते हैं, इस राक्षस को अपने बाण से नाश करता हूँ, राज्य को चाहने वाले भरत को मारने के लिये जो क्रोध हमको हुआ था उसी क्रोधसे इस राक्षस का नाश करूंगा जैसे इन्द्रने अपने वज्र से पर्वतों के पक्ष को छेदन किया था॥

इति बाल्मीकीये रामायणे अरण्यकाण्डे द्वितीयः सर्ग॥२॥

इसके उपरान्त महाशब्द को करता हुआ विराध फिर भी बोला हम पूछते हैं तुम दोनों कौन हो और कहां जाओगे, राक्षस के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी बोले, हम लोग क्षत्रिय हैं, रघुवंश में उत्पन्न हैं, किसी कारण से बन में भ्रमण करते हैं, अब तुम अपना कहो तुम क्यों दण्डक बन में बिहार करते हो, रामचन्द्रजी के बचन को सुन कर बिराध बोला कि जब हमारे पिताका और शतह्रदा हमारी माता का नाम है उन दोनों से उत्पन्न विराध नामका राक्षस हमको जानो, तपस्या के कारण हमको ब्रह्माजीसे बरदान मिला है कि अस्त्र शस्त्र से तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी उसी वरदान के प्रभाव से मैं इस बन में बिहर करता हूँ अब इस स्त्री को छोड़कर तुम दोनों अपना प्राण लेकर भाग जाओ, राक्षस के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी बोले, हे मूढ़! पराई स्त्रीको स्पर्श करके अपनी मृत्युको अपने से खोज करता है हमारे साथ रणमें क्षणभर ठहरो ऐसा कहकर रामचन्द्रजी अपने तीखे

बाणों को धन्वापर रखकर राक्षस को मारा, इस बाण के लगते ही रक्त की धाराको छोड़ता हुआ वह राक्षस पृथ्वी पर गिर पड़ा और जानकीजीको छोड़कर क्रोध पूर्वक त्रिशूल को लेकर रामचन्द्र और लक्ष्मणजी को मारने के वास्ते दौड़ा । यमराज के समान त्रिशूलको धारण किये विराध पर रामलक्ष्मण बाण की वर्षा करने लगे, परन्तु वरदान के प्रभाव से एक भी बाण राक्षस के प्राण का नाश नहीं किया इसके बाद रामचन्द्रजी अपने दो बाणों से उसकी त्रिशूल को काट डाला, इसके बाद राक्षस अपनी वह भुजा से रामचन्द्र को बाँध लिया राक्षस के अभिप्राय को जानकर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले कि जैसा इस राक्षसको इष्ट है वैसाही करो, हम लोगों को यही मार्ग है, वह राक्षस अपने बल से रामचन्द्रजी को कन्धे पर लेकर महाशब्द करने लगा, उसके शब्द से वृक्ष टूट कर गिर पड़े, पशुपक्षि भय से जिधर तिधर भाग गये ।

इति बाल्मीकीये रामायणे अरण्यकाण्डे तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥

इसके उपरान्त रामचन्द्रजी अपने तीखे बाणों से उसके भुजाओं को काटडाला, भुजाओं के काटने से वह राक्षस मुर्छित होकर पर्वत के समान पृथिवी पर गिर पड़ा उसके गिरने से योजन भर के वृक्ष सब टूट गये, इसके उपरान्त राम लक्ष्मण लात से मुष्टि से खूब पृथिवी पर रगड़े तब भी राक्षस का प्राण नहीं निकला तब रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले, कि बरदान के प्रभाव से यह राक्षस नहीं मरैगा इसको पृथिवी में खोदकर गाड़ दीजिये, श्रीरामजी के इस प्रकार बचन को सुनकर विराध राक्षस बोला, इन्द्र के समान प्रतापी आपसे मैं मारा गया इसके पहिले अभिमान से मैंने आपकी महिमा को नहीं जाने, कौशल्या के पुत्र रामचन्द्र आप हैं और यह जनक की कन्या जानकी हैं यह महा भाग लक्ष्मण हैं । हे भगवन् ! हमारे अपराधको क्षमा करिये और हमारे राक्षस की शरीरको मिलने का कारण सुनिये, पहिले मैं तुंबुरु नामका गन्धर्व था रंभा अप्सराके साथ बिहार करते देखकर कुबेरजीने

मुझे शाप दिया कि तुम राक्षस हो जाओ, शापको सुनकर मैंने कुबेर जी से प्रार्थना किये, हमारी प्रार्थना से प्रसन्न होकर कुबेरजी कहे कि त्रेता में भगवान दशरथजी के यहां रामावतार लेकर जब तुमको रण में मारेंगे तब तुम राक्षस की योनि से छूटकर स्वर्गमें आओगे, हे रामजी! अब आपकी कृपा से हमारा शाप छूटगया आपका कल्याण हो हम अपने लोक को जावेंगे, हमको पृथिवी में गाड़कर कुशलता पूर्वक यहां से आधे योजन पर शरभंग मुनि का आश्रम है आप वहां जाइये, रामचन्द्रजी से यह कह विराध बाण से पीड़ित होकर पृथिवी में गड़कर प्राण देकर स्वर्ग जाने को उद्यत हुआ, राक्षस के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मणजी! इस राक्षस को गाड़ने के लिए गड़हा खोदिये, जिसमें इस राक्षस का शरीर ढपजावे और इसको परलोक की प्राप्ति होवे, रामचन्द्रजी के कहने के अनुसार कुदालको लेकर लक्ष्मण हाथी के रहने के समान एक बिल तयार किये रामचन्द्रजी उस राक्षस को उसी बिलमें प्रवेश कराये, बिराध अपने को धन्य धन्य कहता हुआ बिलमें प्रवेश किया, राक्षस को प्रदर में रख कर रामचन्द्रजी प्रदर को मिट्टी से पूरा किये, राक्षस अपनी राक्षसी शरीर को छोड़कर स्वर्ग को गया, देवता लोग दुन्दुभी बजाकर भगवान का गुण गान किये और स्वर्ग से उनके ऊपर पुष्पों की वर्षा हुई उस बन के रहने वाले तपस्वियों को परम आनन्द हुआ, और भय को नाश करके रामचन्द्रजी बनमें इस प्रकार ठहरे जैसे आकाश में सूर्य चन्द्रमा निवास करते हैं॥

इति बाल्मीकियेरामायणे अरण्य काण्डे चतुर्थः सर्गः॥ ४॥

महापराक्रमी विराध राक्षको बनमें बध करके सीताजी को गोद में लेकर धैर्य देकर लक्ष्मणजी से बोले, कि यह बन अत्यन्त कष्ट और पीड़ा को देने वाला है इसके पहिले कभी इस प्रकार के कष्ट कर बन को हमने नहीं देखा है अब शीघ्र शरभंग मुनिके आश्रम में चलना चाहिये यह कह कर सीता लक्ष्मण के सहित रामचन्द्रजी शरभंग

मुनि के आश्रम के समीप पहुंचे, वहां पहुंच कर आश्चर्य युक्त हो देखने लगे कि अग्नि और सूर्य के समान प्रकाश मान देवताओं के सहित सुन्दर रथपर बैठे हुये देवलोक के राजा इन्द्र को देखे, उनके रथ में हरे रंगके घोड़े बंधे हैं, उज्वल छत्र और चमर तथा उज्वल माल्य को धारण किये हैं, ऐसे इन्द्र को शरभंग मुनि से बातचीत करते देखकर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मणजी ! इधर देखो यह क्या प्रकाश दिखाई देता है, यज्ञके प्रधान देवता इन्द्र का जो हम लोगों ने नाम सुना है निश्चय यह वही इन्द्र देवता हैं, देखिये आठो दिशाओं में कुण्डल को धारण करने वाले अनन्तयोधा खड्ग हाथ में लेकर खड़े हैं, सबकी चौड़ी छाती है लम्बी भुजायें हैं लाल रंग के वस्त्र को धारण किये हैं, और पचीस वर्ष की अवस्था को प्राप्त हैं, देवताओं की यही एक अवस्था सदा रहती है, हे लक्ष्मण जी ! हम इसको सप्रमाण विचार करें कि इन्द्र के समान यह कौन देवता हैं जब तक हम इसका समाचार लेकर आते हैं तब तक श्री जानकीजी के सहित तुम यहीं रहो, लक्ष्मणजी से यह कह कर राम चन्द्रजी शरभंग मुनि के आश्रम में पहुंचे, रामचन्द्रजी को आते देख कर इन्द्र अपने अभिप्राय को शरभंग से कहे इसके बाद देवताओं ने मुनि से कहे कि हम सब देवगण यहां से जाते हैं, क्योंकि रामचन्द्रजी इस समय बन चारी हैं इनके साथ साक्षात् बात चीत नहीं करना चाहिये जब यह रावणका बध् कर चुकेंगे तब हम सब देवताओं का साक्षात् कार होगा ऐसा कह कर इन्द्र देवताओं के सहित रथ पर बैठकर स्वर्ग को चले गये, श्रीरामचन्द्रजी आश्रम तक जाकर पुनः लक्ष्मण और जानकी को संग में लेकर शरभंग मुनिका दर्शन किये, इसके उपरान्त लक्ष्मण सीता के सहित रामचन्द्रजी मुनि से बताये गये आसन पर बैठकर इन्द्र के आगमन का समाचार पूंछने लगे शरभंग मुनि रामचन्द्रजीसे यथायोग्य कह सुनाये, कि हे भगवन् ! मैंने अपनी उग्रतपस्या से ब्रह्म लोक तक को अपने अधीन कर लिया

तब ब्रह्मा की आज्ञासे वरदान देकर ब्रह्म लोकमें ले चलनेके वास्ते इन्द्र देव ब्रह्म का स्वरूप धारण करके आये थे जब मैं अपने योगबलसे उनके कपट को जानकर और आप को देखकर मैंने देवताओं समेत इन्द्र देवको उत्तर दिये कि मैं ब्रह्मलोक को शरीर के सहित नहीं जाऊँगा शरीर को त्याग करके जाऊंगा, हे भगवन् ! आपको पाकर आपके साथ स्वर्ग आदि लोकों को लाभ करूंगा, हे पुरुषश्रेष्ठ ! इस समय हमारे पुण्य से उपार्जित स्वर्गादि लोक जो हमारे आधीन हैं उनको आप ग्रहण करो, शरभंग मुनिके बचन को सुनकर रामचन्द्रजी बोले कि आप केदिये हुये दान को अर्थात् स्वर्गादिलोक को मैंने स्वीकार किया, अब हम इस वनमें कुछ कालतक रहना चाहते हैं आपकी क्या आज्ञा है, महापराक्रमी रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर शरभंग मुनि बोले कि यहां से थोड़ी दूर पर सुतीक्ष्ण मुनिका आश्रम है आप वहां जाइये वह आप का कल्याण करेंगे, इसी मन्दाकिनी के किनारे से इन वृक्षों की झाड़ियों से मार्ग उनके आश्रम में जाने को है इसी मार्ग से आप जाइये रामचन्द्रजी से ऐसाकह कर शरभंगमुनि मन्त्र में अग्निका प्रज्वलित करके हवन किये इसके उपरान्त स्वर्ग जाने की इच्छा से उसी हवन की अग्नि में प्रवेश किये, शरीर को जलजाने के बाद दिव्य शरीर को धारण किये, इसके बाद इन्द्रलोक सूर्य चन्द्र ब्रह्म विष्णु रुद्र आदि लोकों की प्रदक्षिणा करते हुए ब्रह्मलोक में पहुँचे ॥

इति बाल्मीकियेरामायणे आरण्यकाण्डे पंचमः सर्गः ॥५॥

शरभंगमुनि को ब्रह्मलोक में जाने के बाद तपस्वियों ने आकर रामचन्द्रजीसे प्रार्थना करने लगे कि उन मुनियों में कोई बान प्रस्थ हैं कोई बालखिल्य हैं कोइ सूर्य चन्द्रमा के किरण को पीकर जीवन करने वाले हैं कोई वृक्ष के पत्तों को खाने वाले हैं कोई कण्ठ भर जल में खड़े होकर तपस्या करने वाले हैं कोई पृथ्वी परशयन करने वाले हैं कोई निद्रा को जीतने वाले हैं कोई एक पैर से खड़े होकर तपस्या करने वाले हैं कोई जल भोजन कोई वायु भोजनकरने वाले हैं कोई आकाश में गमन

करने वाले हैं कोई पर्वतों के शिखर पर निवास करने वाले हैं कोई सदा गीले वस्त्र से रहने वाले हैं कोई पञ्चाग्नि को तापने वाले हैं ऐसे मुनियों के समाज शरभंगमुनि के आश्रम में रामचन्द्रजी के सन्मुख आये रामचन्द्रजी सबसे यथोचित मेल भेट किये । इसके उपरान्त ऋषियोंने रामचन्द्रजी से बोले, हे भगवन् ! आप संसार के स्वामी हैं, पृथ्वी का भार उतारने के वास्ते अपनी इच्छा से अवतार लिये है । पिता के बचन को पालन करने लिये सत्यरूपी व्रत को धारण किये हैं, हे नाथ ! हम लोग अपने अर्थ के लिये आपकी शरण आये हैं क्षमा करियेगा यह कहकर मुनियों ने रावण के प्रताप और अत्याचार के समस्त वृतान्त को रामचंद्रजी से कह कर बोले कि पंपासर से लेकर चित्रकूट तक राक्षसों ने महादुष्कर्म करते हैं, अब उनके दुष्कर्म को सहन करने की सामर्थ्य हमको नहीं है अब इन राक्षसों से हमारी रक्षा कीजिये आप से अतिरिक्त हम लोगों को और कोई शरण नहीं है, इन राक्षसों के हाथ से हम लोगों का पालन कीजिये । रामचन्द्रजी मुनियों के बचन को सुनकर उन लोगों से बोले कि यह सब हमको ज्ञात है केवल इसी कार्य को साधन करने के वास्ते बन प्रवेश किया है, राक्षसों से आप लोगों को त्राण करने के लिये पिता के बचन को लेकर इस बन में प्रवेश किया है, राक्षसों का नाश करना ही हमारे बनवास का महाफल होगा हे ऋषिश्वरों ! लक्ष्मणजी के सहित हमारे पराक्रम को देखो ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥

इसके उपरान्त लक्ष्मण सीता और मुनियों के सहित रामचंद्रजी सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम को गये। वहां के बन वृक्ष नदी पर्वत लता आदि की शोभा को देखते हुए सुतीक्ष्णमुनि के आश्रम में पहुँचे, वहां जाकर ध्यान में मग्न सुतीक्ष्णमुनि को देख कर रामचंद्रजी बोले, कि हे भगवन् ! हम रामचन्द्र हैं आपका दर्शन करने के लिये हम यहां आये हैं सो हे धर्मज्ञ सत्य पराक्रम वाले हमारे साथ कुछ

वार्तालाप कीजिये, सुतीक्ष्णमुनि रामचन्द्रजी को देखकर आसन से उठकर गले से मिले और रामचन्द्रजी का यथेष्ट पूजन करके बोले, हे रामजी ! आपका स्वागत हो, आपके आगमन से यह आश्रम सनाथ हो गया है पृथिवी में शरीर को त्याग करके देवलोक से मैं यहां आकर आपकी प्रतीक्षा करता हूँ जब से मैंने सुना है कि पिता के बचन को पालन करने के लिये राज्य को छोड़कर चित्रकूट में आये हैं तब से मैं यहीं आश्रम में रहता हूँ अब आप उन इन्द्रादि देवतों के अनुग्रह से लक्ष्मण और सीता के सहित निवास कीजिये मुनि के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी बोले जैसी आप आज्ञा देते हैं वैसाही करूँगे, आप चराचर प्राणियों के कुशल को चाहने वाले हैं आपका सबवृत्तान्त महर्षि गौतम गोत्र के शरभंग ऋषिने कह दिया है, रामचन्द्रजी के सुमधुर बचन को सुनकर सुतीक्ष्णमुनि हर्षित होकर रामजी से बोले हे भगवन्! फल मूल का सेवन करते हुए मुनियों के सहित इस आश्रम में रमण कीजिये, इस आश्रम में निवास करने से आपके समीप मृगाओं की झुण्ड में एक मृगा आवेगा जो आपको वञ्चित करके विपत्ति का सामना करायेगा, महर्षि के बचनको सुनकर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजीकी ओर देखकर बोले,-कि जो मृगा आवेंगे उनको मैं अपने तीखे बाणों से नाश करूँगा, इस आश्रम में चिरकाल तक रहने की इच्छा हमको नहीं हैं ऐसा कहकर सायंकाल की सन्ध्या करने को चले गये, सन्ध्या से निवृत्त होकर रमणीय सुतीक्ष्णमुनि के आश्रम में लक्ष्मण और सीता के सहित रामचन्द्रजी निवास किये इसके उपरान्त भोजन करने के योग्य उत्तम पदार्थ को सुतीक्ष्णमुनि ने रामचन्द्रजी को देकर लक्ष्मण सीता के सहित सत्कार किये।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्य कांडे सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

रामचन्द्रजी सीता लक्ष्मण के समेत सुतीक्ष्णमुनि के सत्कार को ग्रहण करके रात्रिकाल में वहां निवास किये प्रातःकाल उठकर सुन्दर जल में स्नान सन्ध्या आदि नित्यकर्म करके सुतीक्ष्णमुनि से

बोले,-हे मुनीश्वरजी! आपके सादर सत्कार से सुखपूर्वक रात्रि में मैंने निवास किया, अब दण्डक बन के निवासी ऋषिलोग शीघ्र आगे चलने का अनुशासन देते हैं इसलिये हम स्थानान्तर को जाना चाहते हैं आप भी आज्ञा दीजिये, जब तक सूर्यभगवान का प्रकाश (घाम) ऊपर को नहीं आता है तब तक मैं चला जाऊँ, ऐसा मार्ग बताइये कि जिसमें किसी प्रकार की बाधा न होवे, ऐसा कहकर रामचन्द्रजी सीता लक्ष्मण के सहित सुतीक्ष्णमुनि को दण्डवत् किये, मुनिजी श्रीरामचन्द्रजी आदि को चरण पर से उठाकर आलिंगन पूर्वक बोले, कि हे रामचन्द्रजी! सीता और लक्ष्मण के सहित इस मार्ग से जाइये, देखिये इधर दण्डक बन में रहने वाले मुनियों का यह सब आश्रम है, इसी के समीप प्रस्रवण नामका पर्वत है उस बन में योगियों के रहने योग्य अनेक प्रकार के वृक्ष फल पुष्प से शोभित हैं तालाओं में भांति भांति के कमल फूले हैं उन पर मतवाले भँवरे बैठ कर गूंजते हैं हंस आदि पक्षियों से वह सरोवर भूषित है, वहां के मृगा और पक्षी प्रशान्त हैं रमणीय सुमधुर बचन को बोलने वाले हैं, सीता लक्ष्मण के सहित आप वहां जाइये और उन मुनियों के आश्रम को अलंकृत कर के फिर हमारे आश्रम में आइयेगा, इस प्रकर सुतीक्ष्ण महर्षि के बचन को सुनकर रामचंद्रजी सीता लक्ष्मण के समेत मुनि की प्रदक्षिणा करके दण्डकबन में चलने का प्रस्थान किये, इसके उपरान्त सीताजी रामचन्द्र और लक्ष्मणजी को दो धन्वा और दो खड्ग दिया, श्रीरामचंद्रजी उसको लेकर सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम से आगे चले, रूप और पराक्रम से सम्पन्न धनुषबाण को धारण किये दण्डकबन को चले ।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्य काण्डे अष्टमः सर्गः ॥८॥

सुतीक्ष्ण मुनिके आश्रम से चलते समय प्रसन्नता पूर्वक रामचन्द्रजी से जानकीजी बोलीं, कि मुनि ने जो कुछ विज्ञापन आपको दिया है उस विज्ञापन से आपको अधर्म प्राप्त होगा, क्योंकि यदि

आप महापुरुष हैं तौ भी दुर्बल मृगाओं को वध करने की प्रतिज्ञा की है, दुर्बल का वध करना आपको योग्य नहीं है, स्त्री (सूर्पनखा) के द्वारा राक्षसों से वैर आपने निश्चित किये हैं सो पराई स्त्री को स्पर्श करना आपको योग्य नहीं है, पराई स्त्री को स्पर्श करना अधर्म है, विना वैर के राक्षसों के मारने की प्रतिज्ञा आपने की है विना वैर के किसी को मारना पाप है यदि नहीं पालन करेंगे तो आपका बचन नष्ट होगा यह भी अधर्म है क्योंकि आप सत्य और धर्म की मर्यादा को पालन करने वाले हैं, संसार का सकल धर्म आपकी मर्यादा पर स्थिर है, इसी कारण अर्थात् राक्षसों को वध करने के कारण धन्वा बाणको लेकर दण्डक बनमें चलते हैं, तो आपके सत्य चरित्र को देख कर हमारा मन चिन्ता से व्याकुल होगया है कि राक्षस अत्यन्त बलवान हैं इनके दुष्कर्म से हम लोगों के ऐहिक सुखका नाश अवश्य होगा, आप धनुष बाण को लेकर लक्ष्मणजी के साथ बन में आये हैं जहां राक्षसों को देखियेगा वहां बाणको अवश्य छोड़ियेगा, तो प्रतीक्षण प्राणियों की हिंसा करने में अधर्म आपको अवश्य होगा क्योंकि इस लोक में क्षत्रियों के धन्वारूपी अग्नि के लिये सभी प्राणी इन्धन होते हैं इस अधर्म के भयसे दण्डक बनमें चलना हम उचित नहीं जानते हैं, जैसा कि एक पुराना इतिहास है कि पहिले युगमें कोई मुनि बड़ी उग्रतपस्या किये, उनकी तपस्या से इन्द्र कांपने लगे, तब उनकी तपस्या में विघ्न करने का विचार करके इन्द्र देवता स्वर्ग से मुनि के समीप में आकर तपस्या करते मुनिको एक खड्ग दिये, कि इस निर्जन बन में आप अकेले रहकर तपस्याकरते हैं, इस लिये आपको यह एक खड्ग देता हूं इसको रखने से किसी प्रकार का भय आपको नहीं होगा, इन्द्र के बचन को सत्यजान कर मुनिने खड्ग को धारण किया प्रतिक्षण खड्ग को लेकर बनके फलमूल लेने को जाया करते थे, उस अस्त्र को धारण करने से उनकी बुद्धि कलुषित

हो गयी, बुद्धिभ्रष्ट होने के कारण मुनि को नरक वास भोग करना पड़ा इस कारण मैं कहती हूं कि अग्नि संयोग के समान अस्त्र का संयोग होता है, बिना वैर के दण्डक बन में रहने वाले राक्षसों का मारना आपको उचित नहीं है, क्योंकि वीर पुरुष बिना अपराध किसी को पीड़ा नहीं देते बल्कि पीड़ित की रक्षा करते हैं, हे भगवन्! कहां बन के मध्य में आप को तपस्या अर्थात् जटा चीर को धारण करके फल मूल के अहार से निर्वाह और कहां क्षत्रिय धर्म का पालन करना अर्थात् दुष्टो का नाश परस्पर यह दोनों कैसे हो सकता है इसलिये आप इस समय तपस्वियों के धर्मका सेवन कीजिये, आप अयोध्यामें चल कर दण्ड भागका कार्य साधन करियेगा, धर्म से अर्थ धर्मसे सुख और धर्महीसे सब कुछ लाभ होता है इस लिये हिंसा रहित मुनियों के धर्म का पालन करिये, हे भगवन्! आप तीनों लोक के तत्वको जानने वाले हैं आपके सामने धर्म की बात को कहने में किसको समर्थ है, स्त्रियों का चपल स्वभाव है अपनी चपलता से मैंने जो कुछ कहा है उस को लक्ष्मणजी के सहित बिचार करके जैसा उचित समझिये वैसा कीजिये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

श्रीजानकीजी के धर्मयुक्त बचन को सुनकर रामचन्द्रजी सीताजी से बोले, हे देवि! जनक नन्दिनी तुम बहुत योग्य और उचित के बचन को कहती हो किन्तु तुमको सान्त्वना देने के लिये हम यह उत्तर देना चाहते हैं कि दुखियों के दुःख को छुड़ाने के वास्ते क्षत्रिय धनुष को धारण करते हैं सो वही दुःखमय शब्द से आर्त होकर दण्डकबन के निवासी मुनिगण हमारे शरणागत आये देखो ऐसे वसन्त काल के फल मूल के सुख का अनुभव राक्षसों के दुष्कर्म और उनके भय से मुनि लोग नहीं कर सकते हैं, मनुष्यों के मांस को खाने वाले राक्षस गण मुनियों को मारकर अपना अहार करते हैं इस कारण वे मुनिगण आकर हमसे रक्षा करने की प्रार्थना किये,

हम उन लोगों के मुख आर्तनाद को सुनकर उनकी सेवा करके उनको बचन दिये हैं कि आप लोग प्रसन्न होवें आप लोगों का दुःख मोचन करूंगा, अब ब्राह्मणों के समीप ऐसी प्रतिज्ञा करके क्यों न पालन करूं, हमारे इस प्रकार बचन को सुनकर एक साथ समस्त मुनीश्वर बोले कि इस दण्डकबन के राक्षस अत्यन्त मायावी हैं वे हम लोगों को हवन करने के समय अनेक प्रकार का विघ्न देते हैं हम लोगों के रक्षक आपही हैं, यदि हम सब ब्राह्मण अपनी तपस्या के प्रभाव से उन राक्षसों का नाश करूं तो तपस्या में विघ्न होता है, चिरकाल से सञ्चित कठिन तपस्या को खंडित करने की इच्छा हम लोगों को नहीं है इस कारण उन राक्षसों को शाप नहीं देते ह, अब आप हम लोगों के स्वामी हैं रक्षा कीजिये, इसप्रकार मुनियोंके बचनको सुनकर श्रीरामचंद्र जी बोले हमारी प्रतिज्ञा है कि हम अपने जीवन पर्यन्त दुष्टों का नाश करके भक्तों की रक्षा करूं, इस अपनी सत्य प्रतिज्ञा को मैं मिथ्या नहीं करूंगा चाहे हमारा या लक्ष्मण का अथवा तुम्हारा जीवन नष्ट हो जावे परन्तु प्रतिज्ञा नष्ट नहीं होगी मैं ऋषियों का पालन अवश्य करूंगा और हम तुमसे तथा तुम्हारे बचन से सन्तुष्ट हो गये, क्योंकि राजकुल के योग्य बचन को तुमने कहा है तुम हमारी प्राण प्रिया हो, सहधर्म चारिणी हो ऐसा कहकर रामचन्द्रजी ने श्रीजानकीजी को धैर्य दिये इसके उपरान्त धनुष बाण को लेकर लक्ष्मणजी और सीता के सहित दण्डकबन में प्रवेश किये।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे दशमः सर्गः ॥ १० ॥

इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजी आगे, मध्य में श्रीजानकी, पीछे लक्ष्मणजी धनुष बाण को लेकर चले, कहीं अनेक प्रकार के पर्वत और नदियों की विचित्र शोभा को देखते थे कि नदी के तटपर हंस चक्रवाक आदि पक्षी कलोल करते हैं, कहीं सरोवरों में कमल फूले हैं उनपर भँवरे बैठकर मधुर शब्द से गूंज रहे हैं, कहीं मतवाली हाथियों की झुण्ड वृक्षों को उखाड़ रहे हैं, कहीं वाराह (सूकर) अपने दांतों से

पर्वतों को ठकर देते हैं, कहीं बड़े सींगवाले भैंसा नदियों के तट को सींग से खोदते हैं, इस प्रकार बनकी शोभा को देखते हुए सायंकाल का समय समीप पहुँचा, इसके कुछ दूर आगे जाकर एक योजन लंबा का एक तालाब श्रीरामजी देखे, उस तालाब में अनेक प्रकार के कमल फूले हैं, राजहंस तथा और जल जन्तुओं से वह तालाब परिपूर्ण है, उस तालाबके जलके भीतर नाचने और गानेका शब्द सुनाई दे रहा है वहां के आश्चर्य को देखकर महारथी रामचन्द्र और लक्ष्मणजी कुतूहल से धर्मभृत मुनि से वहां का वृत्तान्त पूछे कि यहां अद्भुत शब्द सुनाई देता है इसका कारण कहिये, रामचन्द्रजी के इस प्रकार बचनको सुनकर उस तालाब के प्रभाव को मुनिजी कहने लगे, कि हे रामचन्द्रजी ! पंचाप्सर इस तालाब का नाम है इसको मांडकर्णि नाम के मुनीश्वर अपनी तपस्या के प्रभाव से निर्माण किया है, इतनी कथा धर्मभृतमुनि से सुनकर रामचन्द्रजी पूछे हे भगवन् ! इस तालाब का पंचाप्सर नाम कैसे हुआ और मांडकर्णि मुनि ने क्यों निर्माण किया इसको विस्तार से कहिये, रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर धर्मभृत बोले हे रामचन्द्रजी ! इसी आश्रम में मांडकर्णि मुनि ने दश हजार वर्ष तक जल वायु भोजन करके अत्यन्त उग्र तपस्या किये उनकी तपस्या से इन्द्रादिक देवता भयभीत होकर अग्नि देवता को प्रधान बनाकर मुनि के समीप आकर सब देवगण बोले हे ऋषिश्वर! आपकी जो इच्छा हो सो बरदान मांगो । मांडकर्णि मुनि ने देवताओं से कहे कि हम एक स्थान के लिये प्रार्थना करते हैं, मुनि की प्रार्थना से देवताओं ने पांच अपसराओं को उनकी तपस्या में विघ्न करने के लिये नियुक्त करके देवगण अपने लोक को चले गये, देवताओं के अनुमति से पांच अप्सरा आकर अपने हाव भाव से मुनि को बश में किया मुनि उनके आधीन होकर उन अप्सराओं को अपनी पत्नी समझ कर उन लोगों को रहने के लिये अपनी तपस्या के प्रभाव से यह तालाब और तालाब के भीतर अपने क्रीड़ा करने का स्थान बनाया

और अपनी तपस्या से अपने को युवा अवस्था में प्राप्त होकर उन पांच अप्सराओं के साथ विहार करते हैं उन्हीं की क्रीड़ा करने का यह गीत और बाजे का शब्द सुनाई दे रहा है इसी से इसका नाम पंचाप्सर हुवा है यह आश्चर्य युक्त मुनिका वृत्तान्त सुन कर श्रीरामचन्द्रजी विस्मित हो गये कि यह आश्रम ब्रह्मविद्या के प्रभाव से लक्ष्मी युक्त है ऐसा कह कर सीता लक्ष्मण के सहित रामचन्द्रजी उस आश्रम में प्रवेश करके कुछ काल तक वहां रहे इसके उपरान्त जिन २ मुनियों के आश्रम में रह चुके थे, वहां २ फिर भी जाकर रहे क्योंकि वह मुनिवृन्द श्रीरामचन्द्र जी को परमब्रह्म परमेश्वर का अवतार जानकर बार बार उनकी सेवा करने के वास्ते अपने आश्रम में लिवा जाया करते थे इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी दश वर्ष तक मुनियों के आश्रम में निवास किये इसके बाद फिर लौटकर सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम में आये सुतीक्ष्णमुनि यथा योग्य भक्ति से रामजी की सेवा करने लगे, श्रीरामजी प्रसन्नता पूर्वक सुतीक्ष्ण के आश्रम में कुछ काल तक निवास किये । एक समय रामचन्द्रजी के समीप सुतीक्ष्णमुनि बैठकर रामचन्द्रजी से बोले कि भगवन् ! यहाँ से थोड़ी दूर पर भगवान् अगस्त्य मुनिका आश्रम है, रामचन्द्रजी मुनि के अनुशासन को पाकर बोले कि ब्राह्मणों के मुखसे मैंने अगस्त्यजीकी अत्यन्त प्रशंसा सुनी है किन्तु इस महा दुर्गमवन में उनके आश्रम का मार्ग हमको ज्ञात नहीं है और उनके दर्शन की अत्यन्त अभिलाषा है कि वहां चलकर मुनि सत्तम अगस्त्यकी सेवा करूं। रामचन्द्रजीके मुखसे स्नेह युक्त वचन को सुनकर सुतीक्ष्ण मुनि बोले कि अगस्त्य मुनि के आश्रम को जाने का मार्ग मैं कहता हूँ यहाँ से दक्षिण दिशा की ओर चार योजन पर अगस्त्य मुनि के भ्राता का आश्रम है, उस आश्रम के उपवन पिप्पली का बन है और उसमें अनेक प्रकार के फल पुष्प वाले वृक्ष हैं पक्षिगण वृक्षों पर बैठकर सदा सुहावनी बोली बोलते हैं, सुन्दर २ जलाशयों पर हंस, कुक्कुट, मयूर आदि पक्षी सदा कलोल करते हैं उस आश्रम में एक रात्रि निवास करके प्रातः

काल अगस्त्यजी के आश्रम को जाइयेगा, वहाँ से दक्षिण एक योजन आगे भगवान अगस्त्यजी का आश्रम है, वह अत्यन्त रमणीय बन है नाना प्रकार के वृक्ष और लताओं से वह बन समृद्ध है, और सीता लक्ष्मण के सहित वह बन आप के विहार करने योग्य है यदि आप अगस्त्य जी का दर्शन करना चाहते हैं तो वहां जाने के वास्ते आजही प्रस्तुत हो जाइये, इसप्रकार मुनिके बचन को सुनकर रामचन्द्रजी सीता व लक्ष्मण के सहित सुतीक्ष्ण मुनिको दण्डवत करके अगस्त्यजी के आश्रम को चले। सुतीक्ष्ण मुनिके बताये मार्गसे चलते हुए अनेक प्रकार के बन, पर्वत, नदी, तालाब आदि को सुख पूर्वक शोभा को देखते हुए प्रसन्न होकर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले कि, महात्मा अगस्त्यजी के भाई महर्षि इध्मवाह का यही आश्रम है, क्योंकि यहां के सभी वृक्ष, फल, पुष्प से संपन्न हैं और इसी बनसे पकी हुई पिपली का कडुवा सुगन्ध लेकर हवा चल रही है, देखो इन बृक्षों से सूखे काष्ठ मुनियों ने ग्रहण किया है, ब्राह्मणों से खोंट लिया गया ये कुशायें वैडूर्य मणिके समान शोभा देते हैं इस आश्रम में निवास करने वाले मुनियों के अग्नि होत्र का धूम आगे दिखाई दे रहा है, जैसा सुतीक्ष्णमुनि बताये हैं वैसाही यह बन दीख पड़ता है इसलिये निश्चय यह अगस्त्यजी के भाईका आश्रम है, हे लक्ष्मणजी ! देखिये, कि जिसके भाई ने अपने योग बल से मृत्युको जीत कर संसार का कल्याण करने के लिये इस दिशाको शरण्य कर दिया है, एक समय इसी आश्रम में वातापि और इल्वल नाम के दो राक्षस रहते थे, एक दिन इल्वल ब्राह्मण का रूप धारण करके संस्कृत भाषा बोलता हुआ श्राद्ध में भोजन करने का निमन्त्रण यहां के आश्रमवासी ब्राह्मणों को दिया और मेष (भेड़ी) के समान शरीर वाले अपने भाई वातापी को बध करके उसीका मांस ब्राह्मणों को भोजन करने को दिया, ब्राह्मण लोग उस श्राद्ध कर्म में वह मांस भोजन कर गये तब इल्वल चिल्लाकर बोला कि हे ब्राह्मणों ! वातापी को अपने उदर से निकाल दीजिये, इल्वल के चिल्लाने को सुनकर

ब्राह्मणों के पेटमें वातापी भी मेषके समान शब्द करने लगा इसके उपरान्त ब्राह्मणोंने अपना उदर फाड़कर वातापीको निकालने में प्रस्तुत हो गये और आर्त शब्द से अगस्त्यमुनि से कहने लगे कि भगवन्! ये मायावी राक्षस अपने छलसे सदा हम लोगों का नाश करना चाहता है देखिये इसने श्राद्ध में अपने भाई मेषरूपी वातापी का मांस खिला दिया अब उदर में से उसे निकालने को कहता है तब तक इल्वल आकर भोजन किये हुए ब्राह्मणों के हाथ पर जल दिया "संपन्नं" ऐसा कह कर ब्राह्मणों से बोला कि वातापी को पेट से बाहर करो, राक्षस के बचन को सुनकर अगस्तजी बोले, कि जीर्ण तुम्हारे भाई को उदर से निकालने की शक्ति हम लोगों को नहीं है उसको ब्राह्मणों ने भोजन कर लिया है अब वह मर कर यमलोक को गया है उसकी चिन्ता मत करो, अगस्त्यमुनि के बचन से अपने भाई वातापी का मरण सुनकर क्रोध पूर्वक अगस्त्यजी पर इल्वल ने धावा किया, अगस्त्यजी ने अपने क्रोध से उस राक्षस को भस्म कर दिये उन्हीं के भाईका यह सुन्दर आश्रम है, लक्ष्मणजी से इस प्रकार वार्तालाप करते संध्याकाल होगया। इसके बाद रामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी सायंकाल की संध्या करके मुनिके आश्रम में जाकर उनको प्रणाम किये, मुनिने श्रीरामजीका फल मूल से उचित सत्कार किये, उनके सत्कार को अंगीकार करके रामचन्द्रजी सीता लक्ष्मण के सहित रात्रिको विश्राम करके प्रातः काल उठकर अगस्त्यजी के भाई से बोले, कि हम लोगों की रात्रि सुख पूर्वक व्यतीत हुई अब अगस्त्यजी का दर्शन करना चाहते हैं ऐसा कह कर मुनिको प्रणाम करके अगस्त्य मुनिके आश्रम की ओर चले, उस बन में पनस, साल, जामुन, कदंब, केला, बिल्व, तेंदुआ, महुआ, आम्र, निंब आदि के वृक्षोंकी घनी छाया है, छओं ऋतुओं के फल फूल लगे अनेक प्रकार की लतायें वृक्षों से आलिंगन किये हैं, हस्ती आदि जंगली जीवों के प्रति शब्द सुनाई देते हैं, ऐसी विचित्र बनकी शोभा देखकर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले अति

तेजस्वी महर्षि अगस्त्य मुनि का आश्रम यहां से समीप जान पड़ता है क्योंकि अग्निहोत्र के धूम दीख पड़ते हैं, मृगा शान्त भाव से बिहार करते हैं, पक्षिगण सुमधुर शब्द से भगवान् का गुणगान करते हैं, यह महर्षि अपने प्रभाव से ब्रह्मलोक तकको अपने आधीन कर लिया है इनका यश संसारमें विख्यात है, देवलोक में देवता, यक्ष, गंधर्व, किन्नर इनके गुणोंका गान करते हैं, यह हम लोगोंका भी कल्याण करेंगे, इनके आश्रम में चलकर मुनिकी सेवासे अपने बनवास के शेष दिनको यहीं बितावेंगे इस प्रकार लक्ष्मणजी से बात चीत करके बोले, लक्ष्मणजी तुम आगे चलकर मुनिसे निवेदन करो कि सीताके सहित रामचन्द्रजी आपके आश्रम में आये हैं ॥

इति बाल्मीकिये आरण्यकाण्डे एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥

श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा से लक्ष्मणजी अगस्त्यमुनि के आश्रम में जाकर उनके शिष्य से यह सन्देसा भेजा कि अयोध्यापुरी के राजा महाराज दशरथ के जेष्ठपुत्र रामचन्द्रजी सीता के सहित मुनिका दर्शन करने को आये हैं, हम रामचन्द्रजी के लघु भाई हैं, लक्ष्मण हमारा नाम है, हम सब लोग पिताकी आज्ञा से बहुत दिन के लिये बनबास करने को आये हैं, इसलिये मुनिका दर्शन करना चाहते हैं आप जाकर उनसे हमारी बात का निवेदन करिये लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर उनके शिष्य अग्निहोत्रशाला में जाकर मुनिको प्रणाम करके बोले कि, अयोध्या के राजादशरथ के पुत्र रामचन्द्रजी अपनी स्त्री सीता और लक्ष्मण के सहित आपको देखने को और सेवा करने को आये हैं आप जैसी आज्ञा देवें, शिष्य के बचन को सुनकर सोचने लगे कि बड़े सौभाग्य की बात है जो हमको कृतार्थ करने के लिये रामचन्द्रजी स्वयं यहां आये हैं ऐसा शोचकर शिष्य से बोले कि तुम शीघ्र जाकर सत्कार पूर्वक वैदेही के सहित राम लक्ष्मण को लिया आओ, इस प्रकार मुनिके बचन को सुनकर शिष्य विनीत भावसे आकर लक्ष्मण जी से बोले, कहां रामचन्द्रजी हैं मुनिजी

बुलाते हैं। इसके बाद शिष्य, लक्ष्मण, रामचन्द्रजी और सीताजी मुनिके आश्रम में प्रवेश किये, जानकी और रामचन्द्रजी को देखकर स्नेह पूर्वक शिष्यों से बोले, इनको अर्घ्यपाद्य आदिको देकर सत्कार पूर्वक लिया आओ श्रीरामचन्द्रजी सीता और लक्ष्मण के सहित सत्कार को ग्रहण करके आश्रमकी शोभा को देखते हुए मुनिके समीप पहुँचे, तब आश्रम में रहने वाले देवताओं के स्थान को देखे, कि वहां ब्रह्माका स्थान है, अग्निका, विष्णुका, इंद्रका, सूर्यका, चन्द्रमाका, भगका, कुबेरका, धाता, विधाताका, वायुका, यमराजका, वरूण का, गायत्री का, अष्टवसुओं का, शेषनागका, गरूड़का, स्वामिकार्तिकका, धर्मराज आदि देवताओं का स्थान देखे, इसके उपरान्त आगे जाकर प्रकाश से परिपूर्ण शिष्यों से आवृत अगस्त्य मुनि को सन्मुख देखकर लक्ष्मणजी से रामचंद्र बोले, हे लक्ष्मण ! औधत्य को छोड़कर विनीतभावसे मुनि के समीप चलो ऐसा कह कर महाबाहु रामचन्द्रजी मुनिके चरण को स्पर्श करके प्रणाम किये। मुनिसादर आशीर्बाद देकर श्रीरामचन्द्रजी आदिका आतिथ्य सत्कार किये और बानप्रस्थ धर्म के अनुसार उनको भोजन दिये इसके उपरान्त आसन पर बैठकर रामचन्द्रजी से बोले, कि आप सब लोगों के राजा हैं जगत के पूज्य हैं हमारे सेवाकरने योग्य हैं ऐसा कहकर सुन्दर फल पुष्प से पूजा करके रामचन्द्रजी से अगस्त्यमुनि बोले, हे रामचन्द्रजी! विश्वकर्मा से निर्माण किये गये इन हमारे अस्त्रों को आप ग्रहण करो ऐसा कह कर उत्तम धनुष बाण को दिये जो अस्त्र रण में हजारों राक्षसों को एक साथ नाश करने वाले हैं, मुनि के आग्रह से इन्द्र के समान पराक्रमी रामचन्द्रजी अस्त्रको धारण किये इसके उपरान्त अगस्त्यमुनि रामचन्द्रजी के वास्ते अस्त्र को देकर फिर बोले,॥

इति बाल्मीकिये आरण्यकाण्डे द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥

हे रामचन्द्रजी! हे लक्ष्मणजी ! आप लोगों के बिनय से हम अत्यन्त प्रसन्न हैं, मार्ग में गमन करने का परिश्रम जानकीजी के मुखकी कांति से प्रमाणित होता है, यह सुकुमारी सीता इसके पहिले कभी भी

क्लेशित नहीं दिखाई देखी गई थी और भाई के स्नेहसे नियन्त्रित होकर बनवास के कारण प्रचुर दुःख को भोगते हैं, हे रामचन्द्रजी ! यह सीता जिस भाँति प्रसन्न होवे वैसा करो, क्योंकि सृष्टि पर्यन्त यह स्त्रियों में प्रकृत के समान हैं, पतिव्रताओं में यह श्रेष्ठ है दोष से रहित यह आप की भार्या साक्षात् अरुंधन्ती के समान है इस प्रकार मुनि के बचन को सुन कर हाथ जोड़ कर रामचंद्रजी बोले, हे भगवन् ! आपके अनुग्रह से हमधन्य हैं, कि जो हम से हमारे गुरुजन प्रसन्न है परन्तु निवास करने योग्य फल पुष्प जल आदि से संपन्न स्थान को बताइए कि जहां आश्रम बनाकर कुछ काल तक निवास करें रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर धर्मात्मा अगस्त्यजी ध्यान से बिचार करके सुन्दर बचन को बोले, हे तात ! यहाँ से दो योजन पर पर्वत नदी तालाब फल पुष्प से युक्त वृक्ष मृगादि जन्तुओं के संयुक्त पंचवटी का एक आश्रम है आप वहां जाकर पिता के बचन को पालन करते हुए सीता लक्ष्मण के सहित वहां आश्रम बनाकर निवास कीजिए । तपस्या के प्रभाव से आपका सकल वृतान्त हमको मालूम है आप हमारे आश्रम के समीप यहां निवास कीजिये, यह पंचवटी का बन गोदावरी के समीप है वहां सुन्दर वृक्ष फल पुष्प से शोभित है आप वहां आश्रम बनाकर सीता के सहित निवास कीजिए और तपस्वियों की रक्षा कीजिए, इस आश्रम के बाद महुआ का बन है उस बन से उत्तर पर्वत के समीप पंचवटी नाम का स्थान है, अगस्त्य मुनि के बचन को सुनकर लक्ष्मण सीता के सहित रामचन्द्रजी मुनि को सादर साष्टाङ्ग दण्डवत करके धनुष बाण को धारण किये पंचवटी को चले ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्य काण्डे त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

इसके उपरान्त पंचवटी को चलते हुए मध्य में रामजी के सामने महा पराक्रमी अति लंबी शरीर वाले एक गृध्र को देखे, उस गृध् को देखकर राक्षस ऐसा जानकर उस पक्षी से रामचन्द्रजी बोले कि आप कौन हैं श्रीरामजी के बचन को सुनकर सुन्दर बाणी से

गृध्र बोला कि हे वत्स ! हम तुम्हारे पिता के मित्र हैं, गृध्र के बचन को सुनकर श्रीरामजी अपने पिता का सखा जानकर पूजा करके उनके वंश और नाम को पूछे, श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर अपने वंश परंपरा के तथा जगत के क्रम को यथाविधि कहने लगे कि हे रामजी ! पूर्वकाल में जो प्रजापति लोग हुए हैं क्रम से उनके नाम को सुनो, पूर्वकाल में पहिले कर्दम, विकृत, शेष, संश्रय, बहुपुत्र, स्थाणु, मरीचि, अत्रि, क्रतु, पुलस्त्य, अङ्गिरा, प्रचेता, पुलह, दक्ष, सूर्य, अरिष्टनेमि, और तेजस्वी कश्यप यह सत्रह प्रजापति हुए हैं, उन प्रजापतियों में दक्षप्रजापति को साठ कन्या हुईं उन कन्यायों में, अदिति, दिति, दनू, कालका, ताम्ना, क्रोधवशा, मनु, और अनला, नाम की आठ कन्या कश्यपजी से ब्याही गयीं, एक दिन अपनी स्त्रियों से प्रसन्न होकर कश्यपजी बोले कि तुम लोग हमारे समान तेजस्वी और पराक्रमी सन्तान को उत्पन्न करो, उन आठ स्त्रियों में अदित, दिति दनू, कालका, यह चार स्त्रियाँ पति के बचन को अङ्गिकार किया, शेष स्त्रियां सन्तान उत्पन्न करने की इच्छा नहीं प्रगट कीं, अदिति से इन्द्रादिक समस्त देवताओं की उत्पत्ति हुई, दिति से दैत्यों की उत्पत्ति हुई, दनू ने अश्वग्रीव नामक महाबली सन्तान को पैदा किया। कालका ने नरक और काल को पैदा किया। ताम्रा ने क्रौंची भासी श्येनी धृतराष्ट्री और शुकी नाम की पांच कन्या को पैदा किया, क्रौंची से उलूक आदि पक्षी, भासी से प्रकाश करने वाला वस्तु श्येनी से बाज गृध्र आदि पक्षी हुए, धृतराष्ट्री से हंस कल हंस चक्रवाक आदि उत्पन्न हुए, शुकी सेनता नाम की कन्या हुई, से नतासे विनता हुई, कश्यप की छठवीं स्त्री अपनी सब सवत को सन्तान देखकर क्रोध से मृगी, मृगमदा, हरी, भद्रमदा, मातंगी, शार्दूली, श्वेता, सुरभी, सुरसा, कद्रु, आदि दश सन्तान को पैदा किया, अब मृगी से मृगा भालू सुरह गाय आदि उत्पन्न हुए, भद्रमदा से इरावती नाम की कन्या हुई इरावती से ऐरावत नाम का पुत्र हुआ जिसको इन्द्र की हाथी

कहते हैं, हरी से बानर सिंह व्याघ्र आदि उत्पन्न हुए, मातंगी से मातंग नाम के संतान हुए, श्वेता से दश हाथी ऐसे पराक्रमी हुए जो दिशाओं को अपने अपने सूड़ पर उठाया है उन्हीं को दिग्पाल कहते हैं, सुरभी, रोहणी और गंधर्वी नाम की दो कन्या पैदा हुई, रोहिणी से गौ और गन्धर्वी से घोड़ा आदि की उत्पत्ति हुई, सुरसा से नाग लोग और कद्रु से पन्नग उत्पन्न हुए मनु से ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र आदि मनुष्यों की उत्पत्ति हुई, अर्थात् मुख से ब्राह्मण हृदय से क्षत्रिय, जंघा से वैश्य, और पैर से शूद्रों को उत्पन्न किये अनला से वृक्षों की उत्पत्ति हुई, विनता को शुकी नाम की पौत्री और सुरसा कद्रु यह दो बहिन थीं, कद्रु से नाग उत्पन्न हुए, और विनता से दो पुत्र अरुण और गरुड़ अरुण से हमारे जेठे भाई संपाती और हमारा नाम जटायु जानो हम दोनों श्येनी के पुत्र अरुण से उत्पन्न हैं, हम यहां सीताजी की रक्षा करेंगे, गृध्रराज जटायु के बचन सुनकर पूजा किये और अपने पिता का परममित्र जानकर आनन्द पूर्वक गले से आलिङ्गन किये इसके उपरान्त अपनी सहायता के लिये जटायु को परिवार पा करके सीता लक्ष्मण के सहित पञ्चबटी को गये।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे चतुर्दशः सर्गः ॥१४॥

इसके उपरान्त सर्प मृगा आदि श्वापद जन्तुओं से परिपूर्ण पञ्चबटी में पहुँच कर महापराक्रमी लक्ष्मणजी से रामचन्द्रजी बोले, अगस्त्य मुनिजी के कहने के अनुसार हम पञ्चवटी स्थान में आ गये क्योंकि यहां की शोभा दृष्टि को पसार कर देखिये, अब इस स्थान में बिचार करिये कि हम लोग कहां निवास करें, जलाशय नगीच हों, फल मूल अति प्रयत्न से न मिलें, समिधा पुष्प कुशा आदि जहां उपयुक्त हो ऐसे स्थान पर निवास करना चाहिये, श्रीरामजी के बचन को सुनकर सीताजी के सन्मुख लक्ष्मणजी बोले, हे रघुनन्दन ! आप के साथ सौ वर्ष तक रहने पर भी हम आप के आधीन हैं अपनी इच्छा के अनुसार कभी कार्य न करेंगे, आप जिस जगह आज्ञा दीजिये

वहीं निवास करैं विनय पूर्वक लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी के हाथ को अपने हाथ में लेकर इधर उधर घूमते हुए रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से फिर बोले, कि यहां की भूमि बराबर है सुन्दर वृक्ष भी हैं फल पुष्प से पूर्ण हैं यहां से समीप में जलाशय है, नाना प्रकार के कमल तालाओं में फूले हैं, गोदावरी नदी का किनारा है, नदी के तट के वृक्ष विलक्षण शोभा को धारण किये हुए हैं हंस मयूर कोकिला चातक आदि पक्षी सुन्दर बचन को बोलते हैं। यहीं पर रहने योग्य कुटीका निर्माण करो, मृगा भी यहां निवास करते हैं। सुन्दर शिखर और कन्दरा से युक्त पर्वत समीप हैं साल, तमाल, खजूर, पनस, पुन्नग, आम्र, अशोक, तिलक, कदंब, लवंग, चंपक, चन्दन, खैर, शमी, पलाश, इलायची, आदि वृक्षों की घनी छाया से यह स्थान पर्याप्त है, केतकी, मालती, जूही, माधवी, बेला आदि लतायें सुन्दर पुष्प से प्रसन्न हैं, इसी पवित्र स्थान पर हम लोगों के साथ निवास करो।

कवित्त

ऊँचे बट ताल जाल जूटे हैं तमाल साल सरल पिसाल गति है न काल मन्दकी।
चंपक रसाल नारकेली की कनैलहीकी चन्दन चमेलीहू को फैली रास गन्ध की॥
पनस विशाल कचनार पीलू पाकर की छाया छिपी भूमि मानो जनी तम कन्दकी।
कै है अहिदेश किधौ कुहूकरि भेस डोलै सूर की न ज्योति जहां चाँदनी न चन्दकी॥

रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी शीघ्र सीता सहित रामचन्द्रजी को रहने के वास्ते पर्ण कुटी को बनाये बांस शमी आदिके काष्ठसे और कुशकास तथा पत्तोंसे शालाको बनाये इसके उपरान्त गोदावरी नदीमें लक्ष्मणजी स्नान करके अनेक प्रकार के फलपुष्प को रामचन्द्रजी के वास्ते लेकर आश्रम में आये और उस शालाकी वास्तु शान्ति यथाविधि करके रामचन्द्रजी को कुटी देखने की प्रार्थना किये, लक्ष्मणजी के आग्रह से सीता के सहित रामचन्द्रजी कुटीको देखकर प्रसन्न होगये, और लक्ष्मणजी को हृदय से लगाकर प्रेमपूर्वक बोले कि इस कुटीको बनाने से हमको अतिप्रसन्नता हुई परन्तु इसके

निमित्त जो कुछ हमको देना था उसमें आपका हृदय ग्रहण किया, हे लक्ष्मणजी ! तुम्हारी सेवा से पिता के मरण की चिन्ता हमको नहीं है इसप्रकार लक्ष्मणजी से कहकर रामचन्द्रजी सीता सहित निवास किये, जैसे स्वर्ग में देवताओं के सहित इन्द्र निवास करते हैं वैसे सीता लक्ष्मण तथा मुनियों के सहित रामजी पंचवटी में निवास करने लगे ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे पंचादशः सर्गः ॥ १५ ॥

पंचवटी में निवास करते हुए रामचन्द्रजी का शरत् काल बीतकर हेमन्त का समय आया, उस सुन्दर हिमन्त कालमें एक समय प्रातः काल रामचन्द्रजी गोदावरी में स्नान करने को चले, पीछे कलश को लेकर सीताजी उनके पीछे लक्ष्मणजी को चलते हुए मार्गमें रामचन्द्र जी बोले, हे लक्ष्मणजी ! यह हिमन्त का सुन्दर समय अलंकृत के समान शोभाको धारण किये है, शीतसे शरीर कठिन होगयी है, पृथिवी नवीन धान्य से पूर्ण है, शीतकी अधिकता से जल उपभोग करने योग्य नहीं है, इस अगहन के महीना में आग्रपण कर्मको ऋषिलोग करके निष्पाप होगये हैं, मनुष्य नवीन धानकी इच्छा करते हैं, राजा लोग विजय की यात्रा करते हैं, मध्यान्ह कालका घाम अत्यन्त सुखकारक मालूम पड़ता है, सरोवर के कमल बरफ से नष्ट हो गये हैं, तुषार की वर्षा से चन्द्रमा की शोभा नष्ट होगयी है, यह पश्चिम की हवा चलने से शीत दिनो दिन बढ़ता जाता है, घासों पर तथा यव गोधूम की पेड़ोंपर ओसोंकी बुन्द मोतीके समान झलकरहा है, अब सूर्य के उदय होनेपर पक्षिगण बोलते हैं, खेतमें धानोंकी बाल पीली होकर सोनेके भांति चमक रही है, ऐसे हेमन्त कालमें भरतजी राज्य और मान तथा अनेक प्रकार के भोगको छोड़कर फल मूल के नियत आहार से पृथिवी पर शयन करते होंगे, रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी बोले स्वामिन् ! भरतजी ने अपनी तपस्यासे स्वर्गलोक तकको जीत लिया है, और अपनी माता के बचनको अपने कर्मसे भरतजी ने लोकमें अन्यथा कर दिये हैं, इसप्रकार स्नेहयुक्त

लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर कैकयी के परीवाद से हंसते हुए रामचन्द्रजी बोले,कि हे लक्ष्मणजी ! दैवकी गतिमें केकयी का दोष न देना चाहिये, हमारी बुद्धिको बनवासमें दृढ़ देखकर स्नेह से संतप्तहो कर भरतजी ने अज्ञानता किया है, प्रिय और मधुर स्नेहयुक्त भरतजी का बचन आज भी हमारे मनको आल्हादित करते हैं इसप्रकार विलाप करते हुए रामचन्द्रजी लक्ष्मण और सीताके सहित गोदावरी में स्नान करके सन्ध्या तर्पण करके सूर्यनारायण की स्तुति किये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥

इसके उपरान्त रामचन्द्रजी गोदावरी में स्नान तर्पण करके सीता लक्ष्मण के सहित रामचन्द्रजी पर्ण शालामें आये, और अपने पूर्वान्हिक कर्मको समाप्त किये, फलमूल को भोजन करके सीताके सहित आसन पर बैठ कर इस प्रकार शोभाको प्राप्त हुए जैसे आकाश में चन्द्रमाकी शोभा होती है इसके बाद उस बनके ऋषिमुनि आकर रामचन्द्रजी की पूजा अस्तुति किये, रामचन्द्रजी सुन्दर कथाओं को लक्ष्मणजी से कहने लगे, तदनन्तर उस आश्रम में अकस्मात् दशाननकी बहिन शूर्पनखा नामकी मायावी राक्षसी आयी, कामदेव के समान सुन्दर कमल नयन जटा मंडल को धारण किये राज चिन्हसे अलंकृत महापराक्रमी इन्द्रके समान सुन्दर स्वरूप रामचन्द्रजी का देखकर राक्षसी कामसे मोहित होगई और अनेक प्रकार का रूप धारण करने लगी, कि कभी महा सुन्दरी कभी राक्षसी के रूपमें होकर रामचन्द्रजी के आश्रम में घूमने लगी, इसके बाद धनुष बाण को धारण किये सीता के सहित तपस्वी के वेषमें बैठे रामचन्द्रजी के समीप में आकर काम से प्रमत्त होकर बोली, कि राक्षसों के निवास करने के योग्य इस आश्रम में आप कैसे आये आपके आने का क्या कारण है इसका वृत्तान्त हमसे कहो, शूर्पनखा की बातको सुनकर विनीत भावसे रामचन्द्रजी बोले, कि इन्द्रके समान पराक्रमी दशरथ नामके राजाथे, उनके हम ज्येष्ठ पुत्र हैं श्रीरामचन्द्र हमारा नाम है और यह हमारे कनिष्ठ

भाई लक्ष्मण हैं और यह हमारी स्त्री जानकी हैं हम पिता माता के नियोग से नियन्त्रित और पिता के बचन रूपी व्रतमें तत्पर होकर वनवास करने के लिये इस बनमें आया हूं अब तुम अपना वृत्तान्त कहो कि तुम कौन हो और इस निर्जन बनमें अकेली क्यों घूमती हो और किस कारण हमारे आश्रम में आयी हो, श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर सूपर्नखा कामसे पीड़ित होकर बोली,

सवैया राम और शूर्पनखाकी ।

मैनका सुकेशी कैधौं रंभा उरवसी है तू मघवा पठाई है कि आई निर्जरी किये,
नभतै न आई हौं सुरेश न पठाई प्रभुरूप देखि कामकी जलाई जानि लीजिये ॥
रावण है भाई तिहुंलोकमें बड़ाई जाकी यहै नृपराई आप चितमें पतीजिये ।
गहो क्योंन बांह रहौं तेरी पाय छाहँ सीता तुव पांह तैसे ईजी मोहि कीजिये ॥ १ ॥

कि हमारे वृत्तान्त को आप सुनिये, मैं सूर्पनखा नामकी राक्षसी सबको भय देने के लिये इस बनमें अकेली घूमती हूं, रावण हमारे भाई हैं जिनका पौरुष तीनों लोकमें विख्यात है और महाबली कुम्भकर्ण तथा धर्मात्मा विभीषण और अत्यन्त बलशाली खरदूषण हमारे भाई हैं, मैं उन लोगोंको अतिक्रमण करके आपके स्वरूपको देखकर अपना पति बनाने के वास्ते आपके समीप आयी हूं, आप सीताके भयको छोड़कर हमें अंगीकार कीजिये, यह सीता आपके योग्य नहीं है मैं आपके योग्य स्त्री हूं सीताको छोड़कर मुझे स्वीकार करो, हम सीता और लक्ष्मण को भक्षण करके आपके साथ इस दण्डकबनमें विहार करूंगी, सूर्पनखा के इस प्रकार बचन को सुनकर रामजी बोले:—

इति बाल्मीकीये रामायणे अरण्यकाण्डे सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥

श्रीरामजी के उत्तर ॥

रामकह्यो सुनि हे सुर सुन्दरि सौतिको संग नहीं सुखदाई ।
तापस भेष धरे अति सुन्दर है तुवलायक मो लघुभाई ॥
वल्लभ है वनमें तियके विनु सो करिहै तिहरे मनभाई ।
यों सुनि लाखन के ढ़िगजाय कह्यो तुमहीं बरिहौं नपराई ॥

कि हे भामिनि! हमारे साथ हमारी भार्या है, तुम्हारे समान सुन्दरी स्त्रियों को सवतिके संगमें रहना उचित नहीं है, पराक्रमी और बनमें स्त्रीसे विहीन हमारे लघुभाई लक्ष्मणजी हैं तुम उनको अंगीकार करो इस प्रकार रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर सूर्पनखा एकाएक लक्ष्मण जी के पास जाकर बोली, आपके रूप के अनुकूल मैं हूं आप मुझको अपनी पत्नी स्वीकार करो और हमारे साथ इस दण्डक बनमें आनन्द करो, राक्षसी के बचन को सुनकर विहँस कर लक्ष्मणजी बोले, कहां तुम राजकुमारी और महासुन्दरी कहां मैं बनवासी श्रीरामचन्द्रजी के दास, तो दासकी दासी तुम कैसे हो सकती हो, सब कुछ करने में समर्थ हमारे ज्येष्ठ भाई रामजी की भार्या होओ, वह वृद्धा जानकी को छोड़कर तुमसे पाणिग्रहण करेंगे, क्योंकि कौन ऐसा पुरुष होगा जो महासुन्दरी देवकन्या को छोड़कर मानुषीमें प्रेम करेगा, इस प्रकार परिहासमें कुशल लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर सूर्पनखा फिर रामचन्द्रजी के समीप आयी और बोली, कि इस वृद्धाजानकी को छोड़कर यदि हमारा आदर नहीं करोगे तो मैं आज जानकी को भक्षण करके तुम्हारे साथ विहार करूंगी। ऐसा कहकर क्रोध पूर्वक जानकीजी की ओर इस प्रकार दौड़ी जैसे रोहिणी के ऊपर तारागण टूटते हैं राक्षसी की इस प्रकार दशा देख कर रामचन्द्रजी रोष करके लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मणजी! क्रूर और धर्म हीन स्त्रियों से परिहास कैसा, आप के इस मिथ्या परिहासके दोष से यह जानकीजी को भक्षण करने के लिये उद्यत है इसकी दशा को देखिये, इस विरूपा राक्षसी का नाक कान काट कर इसके अभिमान को नाश करो रामचंद्रजी के इस प्रकार बचन को सुनकर और उन्हें क्रोधित देखकर लक्ष्मणजी खड्ग निकाल कर सूर्पनखा के नाक कान को काट लिया, नाक कान कटने पर विरुपा राक्षसी रक्त की धारा बहाती और रामजी के सन्मुख गर्जना करती हुई बन में प्रवेश करके खरदूषण नाम का राक्षस उसका भाई था उसके पास जाकर

पृथ्वी पर गिर पड़ी और श्रीरामचंद्र को पञ्चवटी आगमन का और अपने नाक कानकटने का वृत्तान्त कह सुनायी ।

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे अष्टदशः सर्गः ।।१८।।

सूर्पनखा की यह दशा देखकर खर, बोला, हे सूर्पनखे ! मूर्छा को छोड़ कर उठो और इस नाक कान कटने का वृत्तान्त विस्तार से कहो, किसने तुम्हारे नाक कान को काटा है, दूसरे यमराज के समान कौन है जो तुम्हें इस दशा को पहुँचाया है, देवता गंधर्व यक्ष किन्नर मनुष्य तथा ऋषियों के मध्य में कौन ऐसा पराक्रमी है जो तुम्हे इस दशा को पहुँचाया है, इस लोक में और देवलोक में इन्द्रादिक देवताओं को ऐसी सामर्थ्य नहीं है जो हमारे साथ शत्रुता कर सकें, रण में हमारे बाण से मरे हुए किस प्राणी के रक्तको पृथ्वी पीने की इच्छा करती हैं और पक्षिगण उसके मांस को खाने के अभिलाषी हुए हैं, देवता गंधर्व पिशाच राक्षसों के मध्य में किसकी सामर्थ्य है कि बाण के सन्मुख ठहर सके, खर के बचन को सुनकर आंसु को बहाती हुई सूर्पनखा बोली, कि दशरथ के पुत्र राम लक्ष्मण पंचवटी में आये हैं वे अत्यन्त पराक्रमी हैं, जटा चीर को धारण किये हैं कमल नयन युवावस्था में प्राप्त अत्यन्त सुकुमार हैं, वह देवता हैं या दानव हैं यह हमको मालूम नहीं है, उन दोनों के मध्य में एक महासुन्दरी स्त्री है, उन दोनों में से मैंने एक को पति बनाने की इच्छा प्रगट की दूसरे ने हमारी नाक कान काट कर इस दशा को पहुँचाया है, अब हे भाई ! तुम्हारे पराक्रम से हम सीता के सहित रण में उनके रुधिर को पीना चाहती हूं यही हमारा पहिला मनोरथ है, सूर्पनखा के इस प्रकार के बचन को सुनकर क्रोधित खर अपनी चौदह हजार राक्षसों की सेना को बुलाकर आज्ञा दिया कि दो मनुष्य जटा चीर को धारण करके धनुष बाण लिये स्त्री के सहित घोर दण्डकवन में आये हैं तुम लोग चलकर उन दोनों का बध करो यह हमारी बहिन उनके रक्त को पान करेगी यही इसका मनोरथ है इसको तुम लोग शीघ्र संपादन करो ।

इति वाल्मीकिय रामायणे आरण्यकाण्डे एकोनविंशः सर्गः ।।१९।।

इसके उपरान्त महाभयंकर रूपको बना कर सूर्पनखा रामचन्द्रजी के आश्रम में जाकर सीता लक्ष्मण सहित रामजी से राक्षसों के आने का समाचार कह सुनायी, रामचन्द्रजी राक्षसों की सेना को आते देखकर लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मण! सावधान होकर जानकीजी की तुम रक्षा करो, और हम इन आये हुए राक्षसों को बध करूंगा, श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी सावधानता से जानकी की रक्षा में नियुक्त होगये और रामचन्द्रजी अपने धनुषबाण को सज्जित किये, इसके बाद महाभटों से युक्त राक्षसों की सेना से रामचन्द्रजी बोले, कि हम दोनों दशरथ के पुत्र राम लक्ष्मण सीता के सहित दुश्चर दण्डक बन में फलमूल को भोजन करके तापस ब्रह्मचारी के समान इस बन में निवास करते हैं पुनः आप लोग हम से वैर क्यों करते हो, रणमें तुमहीं सब पापियों को नाश करने के लिये ऋषियों के नियोग से धनुषबाण को लेकर मैं यहां आया हूं। अपने प्राण के भय से या तो संग्राम में ठहरो नहीं तो रण से भाग जाओ श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर शूल पदिश मुद्गर गदा खड्ग आदि अस्त्रों को लेकर राक्षस बोले, महात्माश्व खर के क्रोध से क्षुभित यह सेना रण में तुम्हारे प्राण को शीघ्र नाश करेगी, संग्राम में इतने राक्षसों के साथ तुम्हारी सामर्थ्य नहीं है जो लड़ने सकोगे, इस प्रकार राक्षस गण कह कर अस्त्र शस्त्र के सहित रामजी के ओर दौड़े और दुर्जय त्रिशूल को रामचन्द्रजी के ऊपर फेकने लगे, राक्षसों के रण में श्रीरामजी अपने तीखे बाणों से त्रिशूल का खंडखंड किये त्रिशूल खंडखंड देखकर बाणों के घाव से पीड़ित होकर पर्वतों की शिला को उखाड़ कर रामजी पर वर्षा करने लगे, रामजी अपने धनुषबाण से राक्षसों को इस प्रकार बध करने लगे जैसे किसान जव के खेत को काट डालते हैं, राक्षसों की शरीर से रक्त की धारा बहने लगी, उन चौदह हजार राक्षसों के मरण को देख कर शोक से व्याकुल सूर्पनखा खर के पास जाकर पृथिवी पर गिर पड़ी और रोदन करने लगी, इसके बाद रणमें चौदह सहस्र

राक्षसों का रामजी के बाण से मरने का समाचार अपने भाई खर से कह सुनाई ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे विंशतितमः सर्गः ॥२०॥

सूर्पनखा को पृथिवी में मूर्छित होकर गिरते देखकर खर बोला हम तुम्हारी सहायता के वास्ते इतने राक्षसों को भेजा है, वे राक्षस हमारे प्रधान सेवक हैं और हमारी आज्ञा को पालन करने वाले हैं प्राण जाने पर भी हमारे बचन को मिथ्या नहीं कर सकते क्या कारण है जो तुम इतना दुःसह दुःख को उठाती हो हमारे रहते हुए अनाथ के समान तुम क्यों विलाप करती हो, बिकलता को छोड़कर उठो यह कह कर खरने सूर्पनखा को अनेक प्रकार से धैर्य दिया, खर के बचन से सन्तोष को पाकर अपनी आंसू को पोंछती हुई भाई से बोली कि नाक कान कटने से दुःखित होकर पहिले जो तुम्हारे पास आइ सो तुमने मेरी सहायता के वास्ते जिन राक्षसों को भेजा था उन राक्षसों को रामचन्द्रजी ने रणमें नाश किया, उन राक्षसों की लोथ को पृथिवी में गिरी देखकर रामके इस कर्मसे भयभीत होकर मैं फिर भी तुम्हारी शरण आई हूं, इस दुःसह दुःख सागर में डूबती हुई मुझको क्यों नहीं रक्षा करते हो, यदि हमारे ऊपर तुम्हारी दया होवे और तुम्हारे शरीर में कुछ शक्ति और तेज होवे तो दंडक बन में रहने वाले राक्षसों के कण्टक शत्रु रामचन्द्र को आज रणमें बध करो, नहीं तो मैं तुम्हारे सामने अपने प्राण का त्याग करूंगी, और यदि चतुरंग सेना से युक्त भी तुम रण में रामका सामना नहीं कर सकोगे तो राक्षसों के सहित इस जन स्थान से शीघ्र चले जाओ, क्योंकि निर्बल मनुष्य राम लक्ष्मण के साथ युद्ध नहीं कर सकोगे तो तुमको इस दण्डक बन में रहने से क्या लाभ होगा, इस प्रकार बिलाप करती सूर्पनखा भाई के सामने फिर भी मूर्छित हो गयी ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे भाषायां एकविंशः सर्गः॥२१॥

इस प्रकार तिरस्कार के बचन को सूर्पनखा से सुनकर राक्षसों

के मध्य में कठोर बचन को खर बोला, कि तुम्हारे अपमान उत्पन्न अपने अतुलित क्रोध को हम अपने स्वयं नहीं सम्हाल सकते अल्प जीवन वाले मनुष्य रामके पराक्रमकी क्या गणना है, तुम अपने शोक को त्याग करो मैं राम लक्ष्मण को यमलोक में भेजूंगा। मैं भाई के सहित रामका अपने अस्त्र से बध करूंगा, और तुम उनके रक्तको पीकर सन्तुष्ट हो ओगी, प्रतिज्ञा युक्त खरके बचन को सुनकर सूर्पनखा खरकी प्रशंसा करने लगी, इसके बाद खर अपने प्रधान सेनापति दूषण नाम के राक्षस को बुलाकर आज्ञा दिया कि लोक में प्राणियों की असाधारण हिंसा से बिहार करने वाले अस्त्र विद्या में निपुण ऐसे चौदह सहस्त्र राक्षसों की चतुरंगिणी सेना अस्त्र शस्त्र के सहित सज्जित करो, और हमारे वास्ते एक रथ शीघ्र उपस्थि करो, उस रथ पर धनुषबाण और खड्ग तथा अनेक प्रकार की शक्तियों से संपन्न करो, रामको बध करने के लिये मैं राक्षसों के आगे चलने की इच्छा करता हूं, खरके बचन को सुनकर दूषण अनेक अस्त्र शस्त्र तथा शक्तियों से सम्पन्न उत्तम रथको और महाप्रभावशाली राक्षस योधाओं से परिपूर्ण चतुरंगिणी सेना को सज्जित करके दूषण खरके समीप आकर खास्से निवेदन किया कि रथ और सेना तइयार है सेनापति के बचन को सुनकर खर अनेक प्रकार के वस्त्र तथा रत्नजणित अलंकार और अनेक अस्त्र शस्त्र को धारण करके क्रोध पूर्वक रथ पर आकर बैठ गया, खर अपनी महती सेना के साथ महा शब्द से गर्जता हुआ बड़े वेग से जन अस्थान से चला, जब खरकी सेना कुछ आगे चली तब पीछे खर अपने रथ पर बैठकर जनस्थान से आगे को चला, खरके चलने से ऐसा सघन शब्द हुआ कि जिससे दिशा विदिशा भरगयी ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥

खरकी सेना को चलने के समय आकाश से जल और रक्तकी वर्षा होने लगी, पृथिवी और आकाश एक समान हो गया, गदहे के

शब्द के समान कठोर शब्द से राक्षस गर्जने लगे, मांस को खाने वाले गृध्र मृगा तथा अन्यान्य पक्षिगण शब्द करते हुऐ इधर उधर उड़ने लगे, सूर्य मण्डल के समीप केतु तारा के उदय के समान दिखाई पड़ने लगा, सेनाकी चंचलता से ऊनचास पवन एक साथ गमन किये, सूर्यका प्रकाश निस्तेज हो गया बिना रात्री के आकाश से तारे टूटने लगे, पशु, पक्षि, मीन, मकर आदि जल थल जन्तु खरकी सेना से पीड़ित हो गये, वृक्षों से फल पुष्प टूटकर गिर गये, राक्षसों के भार से पृथिवी कांपने लगी, इस प्रकार तुमुल राक्षसों की सेना को देखकर विहँसता हुआ खर बोला, हमारे पराक्रम से और तीखे बाणों के आघात से आकाश से तारा गणका पतन हो रहा है, अत्यन्त बलशाली रामचन्द्र और लक्ष्मण से क्रोध करके मैंने अपने से अपनी मृत्यु का खोज किया है, तौ भी अपने तीखे बाण से राम लक्ष्मण का बध करूंगा, और उनके रुधिको पीकर हमारी बहिन शूर्पनखा सन्तुष्ट होगी, इसके पहिले रणमें कभी हमारा पराजय नहीं हुआ है, हम आप लोगों से सत्य कहता हूं कि रणमें बज्र को धारण करने वाले इन्द्रको भी नाश करता हूं मनुष्य की क्या गणना है, राक्षसों की बड़ी भारी सेना को देखकर देवता गंधर्व सिद्ध चारण किन्नर पन्नग उरग अकाश मार्ग से विमान पर बैठकर युद्ध के चरित्र को देखने लगे इसके अतिरिक्त ऋषिश्वर आदि युद्ध के महोत्सव को देखने के लिये एकत्र होकर आपस में चर्चा करने लगे कि, गौ ब्राह्मणों के लिये स्वास्ति होवे, और इन राक्षसों के युद्ध में रामचन्द्रजी का विजय होवे, इसके बाद श्येन गामी, पृथुग्रीव, यज्ञ-शत्रु, विहंगम, दुर्जय, परवीराक्ष, परुष, काल कार्मुक, हेममाली, महामाली सर्पमुख, और रक्त भक्षी आदि यह बारह खरके प्रधान मन्त्री थे इन्हीं मन्त्रियों के सहित खर सेना से आगे चले, और महाकपाल स्थूलाक्ष प्रमाथि त्रिशिरा ये चार दूषण के पीछे चले, जैसे ग्रहों के बीच में सूर्यचन्द्रमा की शोभा होती है वैसे राक्षसों के सेनाओं के मध्य में रामचन्द्र लक्ष्मण के सहित शोभा को प्राप्त हुए ।

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे त्रयोविंशः सर्गः ॥ २३ ॥

श्रीरामचन्द्रजी खरकी सेना को घोर उत्पात सहित आश्रम में आते देखकर लक्ष्मणजी से बोले, हे महाबाहु लक्ष्मणजी ! सकल जीवों को पीड़ा देने वाली राक्षसों की सेना को देखो कि आकाश से रक्त की वर्षा करते हुए गदहे के चिल्लाने के समान चिल्लाते हुए आरहे हैं, हमारे बाणों से भली भांति इन राक्षसों का संप्रहार होगा क्योंकि हमारी दक्षिण भुजाका बारबार स्फुरण होता है, और हे लक्ष्मणजी! आपकी मुख कान्ति की चमक से जान पड़ता है कि राक्षसों के समर में हम लोगों का विजय होगा क्योंकि जिसके मुखकी शोभा शत्रुके आगमन काल में हीन हो जाती है वह पुरुष रण में अवश्य मारा जाता है, अब राक्षसों की सेना का महा शब्द सुन पड़ता है इस लिये श्रीजानकीजी को पर्वत की कन्दरा में छिपा देओ हे लक्ष्मणजी ! हमारे चरण के शपथ से हमारे बचन का शीघ्र पालन करो, श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा को सुनकर लक्ष्मणजी सीता को पर्वत की कन्दरा में सुरक्षित करके अपने धनुषबाण को लेकर कन्दरा की द्वार पर बैठे, इधर लक्ष्मण सीता को जाने के बाद श्रीरामजी कवच को धारण करके इस प्रकार की शोभा को प्राप्त हुए जैसे अन्धकार में अग्नि देवता की शोभा होती है, और धन्वापर बाणों को चढ़ा कर शत्रुकी प्रतीक्षा करने लगे, रामचन्द्र और राक्षसों के युद्ध के कौतुक को देखने के लिये अपने २ विमान पर बैठकर देवता लोग आकाश मार्ग में खड़े होकर कहने लगे कि इन राक्षसों के मध्य में श्रीरामजी का विजय होवे, इन चौदह हजार मायावी राक्षसों से रामचन्द्रजी का अकेला युद्ध कैसे उचित होगा, देवताओं के इस परस्पर वार्तालाप के समय में रामचन्द्रजी की ऐसी तेजमयी मूर्ति दीख पड़ी की जिस तेजके भयसे इन्द्रादिक देवता कांपने लगे, जैसे महादेव के कोप से जगत का नाश होता है वैसे राक्षसों को संहार करने के वास्ते रामजी की भयानक मूर्ति हो गयी, तब तक राक्षसों की सेना आश्रम के चारो ओर घेर लिया, और रामजी के सन्मुख

धनुषबाण को चमकाते हुए अपने २ बलकी प्रशंशा करते हुए इस प्रकार शब्द और गर्जना करने लगे कि उनके शब्द से पीड़ित होकर बनबासी पशु एकान्त बन में भाग गये, रामचन्द्रजी समुद्र के समान गंभीर राक्षसों को युद्ध की इच्छा से सन्मुख देखकर धनुषबाण को लेकर प्रलय कालकी अग्नि के समान राक्षसों के मध्य में खड़े हो गये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे चतुर्विंशः सर्गः ॥२४॥

धनुषबाण को धारण किये रामचन्द्रजी को सन्मुख खड़ा देख कर खर अपने सारथी से बोला कि हमारी रथको रामके सन्मुख करो सारथी खरके बचन को सुनकर जहां अकेले रामजी खड़े थे वहां खर के रथको पहुंचा दिया, खर रामजी को पैदल देखकर धर्म युद्धके अनुसार अपने भी रथ पर से उतर पड़ा खरको रथसे उतरते देखकर हजारों अस्त्र शस्त्र से युक्त राक्षसगण महानाद करने लगे इसके उपरान्त शूल मुद्गर खड्ग परशु धनुषबाण आदि अस्त्रों को रामचन्द्र पर छोड़ने लगे राक्षसों की बाण बर्षा से सकल जीव वित्रासित हो गये, और बाण के आघात से रामजी के शरीर से रुधिर की धारा निकलने से ऐसी शोभा हुई जैसे सायंकाल में सूर्य के अस्त होने के समय आकाश लाल हो जाता है, परन्तु इन राक्षसों के अस्त्र का भय रामजी को कुछ भी नहीं हुआ जैसे वज्र से पर्वत को भय नहीं होता है, वैसे राक्षसों के पराक्रम को रामचन्द्रजी देखकर अपनी धन्वा को चक्र के समान गोला करके हजार हजार बाणों को एक एक साथ छोड़ने लगे, जिसमें रामजी के एक एक बाण से राक्षसों के शस्त्र को टुकड़ा २ करके उनके शरीर को काटने लगा। सूर्य अग्नि के समान प्रकाशमान रामजी के असंख्य बाण के प्रकाश से नभमण्डल प्रकाशित हो गया, श्रीरामजी के तीखे बाण से राक्षसों की भुजा जंघा शिर हाथी घोड़ा रथ आदि कट कर रक्तकी बहती हुई नदी में वह चले और राक्षसगण युद्ध में रामजी के हाथ से मर कर यमलोक को जाने

लगे जैसे वनकी अग्नि वनको जलाने से शान्त नहीं होती वैसेही राक्षसों के नाशको देखकर भी रामजी के मनमें सन्तोष नहीं हुआ, इधर राक्षसों के मरण को देखकर और जितने महाबली राक्षस रहे वे सब रामचन्द्रजी पर अनेक प्रकार के शस्त्र को चलाने लगे, परन्तु रामचन्द्रजी अपने बाणसे उनके भी शस्त्र को टुकड़ा करके उनके शिरको काटकर नाश किये, उनके मरने पर शेषराक्षस अपना प्राण लेकर रणसे भाग कर खरके समीप जाकर प्रार्थना करने लगे, उन राक्षसों की प्रार्थना को सुनकर खर का प्रधान मन्त्री दूषण क्रोध पूर्वक अपनी पांच हजार सेना लेकर समर में आया, महापराक्रमी दूषण की सेना को देखकर जो राक्षस समर से भाग गये थे वेभी लौटकर शूल मुद्गर पदिश खड्ग परशु तोमर बाण आदि को रामचन्द्रजी पर चलाने लगे कोई वृक्षों को उखाड़ कर कोई पर्वत की शिलाओं को उखाड़ कर रामजी पर वर्साने लगे, इस प्रकार रक्षसों के साथ रामजी का तुमुल युद्ध होने लगा, फिरभी रामचन्द्रजी अपने बाण से राक्षसों को विच्छिन्न करके पृथिपर गिरा दिया, शेष राक्षस दूषण के समीप जाकर सेनाओं के नाश का समाचार कह सुनाया ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे पंचविंशः सर्गः ॥ २५ ॥

दूषण अपनी सेना का मरना देखकर युद्ध करने में निपुण पांच हजार महाबली राक्षसों को और भेजा, वे राक्षस शूल पहिश खड्ग शिला वृक्ष आदि की वर्षा रामजी पर करने लगे, श्रीरामजी अपने तीखे अस्त्र से राक्षसों के अस्त्रों को खंडखंड किया. इसके उपरान्त सेना पति दूषण क्रोधित होकर वज्र के समान बाण को रामचन्द्रजी पर फेंकने लगा, रामजी दूषण के पराक्रम को देखकर एक बाण ऐसा मारा कि उसके रथके चार घोड़े मर कर पृथिवी पर गिर पड़े फिर एक बाण से उसके सारथी का सिर काट लिये. इसके बाद घोड़ा रथ सारथी तथा धनुषबाण को नष्ट हो जाने पर दूषण अकेला लोह शंकु लेकर रामचन्द्रजी की ओर दौड़ा तब रामचन्द्रजी अपने बाण से

उसके दोनों भुजाओं को काट गिराया, भुजा के कट जाने से वह राक्षस प्रमत्त हाथी के समान सामर्थ्यहीन होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा, राक्षस को रणभूमि में गिरा देखकर देवता लोग दुन्दुभी बजाने लगे, इधर दूषण को रणस्थल में पतित देखकर महाकपाल स्थूलाक्ष और प्रमाथी ये तीन दूषण के प्रधान मन्त्री अपना अपना अस्त्र शस्त्र अर्थात् शूलपट्टिश और परशु को लेकर रामचन्द्रजी के ओर दौड़े श्रीरामजी अपने बाण से आगन्तुक अतिथि के समान उन तीनों का भी नाश किया, रामचन्द्रजी के बाण को लगते ही वह तीनों राक्षस कटे हुए वृक्ष के समान पृथिवी पर गिर पड़े इसी प्रकार पांच हजार दूषण की सेना को क्षण भर में नाश करके यम लोक में भेज दिया, दूषण के मरण को सुनकर खर अपने सेनापति को बुलाकर कहा कि यह क्षत्रिय कुमार सेना सहित दूषण का नाश किया, अब इस कुमानुष राम के साथ बड़े प्रयत्न से युद्ध करके इसको मार कर दूषण का बदला लेना चाहिये, इस प्रकार खर के वचन को सुनकर उनके सेनापति श्येनगामी पृथुग्रीव यज्ञशत्रु, विहंगम, दुर्जय, पश्वीराक्ष, परुष कालकामुक, हेममाली, महामाली, सर्पमुख रुधिर, भक्षी, इन प्रधान बारह सेना पतियों के और सैनिकों के साथ अस्त्र शस्त्र को छोड़ता हुआ रामचन्द्रजी के सन्मुख धावा करने लगा, जैसे वज्र के गिरने से वृक्ष टूट कर पृथिवी पर गिर पड़ते हैं वैसे रामचन्द्रजी के बाण से राक्षसों की सेना-हत होने लगी, बाण से व्यथित वे राक्षस रक्त की धारा को छोड़ते हुए पृथिवी तल में कोबड़ कर दिया । भयंकर कर्म करने वाले चौदह हजार राक्षसों को घोड़ा हाथी रथसे विहीन अकेले मनुष्य रामचन्द्रजी नाश किये, समस्त राक्षसों को नाश हो जाने पर खर और त्रिशिरा शेष राक्षसों के सहित अस्त्र शस्त्र ले कर रामचन्द्रजी की ओर चले ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे षड्विंशः सर्गः ॥२६॥

इसके उपरान्त खर अपनी सेना को लेकर रामचन्द्रजी के ओर

चला इतने में त्रिशिरा नाम राक्षस एकाएक करके समीप आकर बोला कि युद्ध करने के लिये हम को आज्ञा देओ और तुम संग्राम से लौट जाओ, क्योंकि देखो यह महाबाहु राम रण में हमारा विनिपात अवश्य करेगा, राक्षसों का नाश करने वाला यह राम जिसमें मारा जावे वैसा अस्त्र को धारण करूं और वैसी उपाय करो, हम दोनों के युद्ध में न मालूम हमारी मृत्यु होगी न मालूम राम मरेगा, यदि राम मरेगा तो हम लोग प्रसन्न होकर जन स्थान को लौट जायेंगे, और हम मरेंगे तो युद्ध समाप्त हो जायगा, खर और त्रिशिरा परस्पर इस प्रकार वार्तालाप करके युद्ध की इच्छा से रामचन्द्रजी के सन्मुख गये, जैसे त्रिकूट पर्वत तीन शिखर को धारण करके शोभा को पाता है वैसे त्रिकूट पर्वत के समान रथपर बैठ कर रण में रामजी के बाण से राक्षसी शरीर का त्याग और परम पद का लाभ जानकर खर की आज्ञा से रामचन्द्र पर धावा किया, जैसे मेघ गर्जना करके जल की वर्षा पृथ्वी पर करते हैं, वैसे, गर्जना करके बाण की वर्षा रामजी पर करने लगा, त्रिशिरा के पराक्रम को देखकर रामचन्द्रजी अपने धनुष पर बाण को सन्धान करने लगे, जैसे हाथी और सिंह का परस्पर युद्ध होता है वैसे महाबली त्रिशिरा और रामचन्द्रजी का परस्पर युद्ध होने लगा, इसके बाद त्रिशिरा तीन बाण रामजी के ललाट में मारा तौ भी वह बाण का आघात रामजी को पुष्प के समान जान पड़ा क्रोध जयी रामचन्द्र राक्षस को इस प्रकार खेलाया जैसे सांप मेढ़क को खेल खेलाता है सब प्रकार से राक्षसके पराक्रम को देखकर रामजी चौदह बाण त्रिशिरा के हृदय में मारे, और चार बाण उसके रथ के घोड़ों को मारे आठ बाण सारथी को मार कर पृथ्वी पर गिरा दिये, रथ सारथी को नष्ट हो जाने पर वह राक्षस आकाश मार्ग से लड़ने लगा, तब रामजी अपने बाणों से राक्षस का पीड़ित करके पृथ्वी पर गिरा दिये, और अपने तीन बाण से राक्षस के तीनों शिर को काट लिये, शिर को कट जाने पर उस राक्षस की देह से धँआ और रक्त

उड़ने लगा, इस प्रकार त्रिशिरा के मरण को देखकर समर में आये हुए निशाचर इस प्रकार भागे जैसे व्याध के भय से मृगा भागते हैं शेष राक्षसों को भागते देखकर खर उन राक्षसों को धैर्य देता हुआ रामजी पर दौड़ा जैसे चन्द्रमा पर राहु दौड़ता है ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे सप्तविंशः सर्ग ॥२७॥

संग्राम में रामजी के बाण से दूषण त्रिशिरा आदि के मरण को देखकर खर का हृदय कंपित हो गया कि यह अकेला राम सेना सहित दूषण त्रिशिरा आदि महाबली राक्षसों का नाश किया है यह सोच बिचार करता हुआ रामजी के सन्मुख अति प्रबल बाण का प्रयोग किया, और धनुर्विद्या के अभ्यास से अनेक प्रकार के बाण को छोड़ता हुआ समर भूमि में प्रवृत्त हो गया, और अपने बाण से दिशाओं को आच्छादित कर दिया तथा मेघ की वृष्टि के समान उसके बाण से आग की चिनगारी निकल कर आकाश मार्ग में तारागण के सदृश शोभित होने लगे बाण को छोड़ते रथ पर बैठे हुए महाबली राक्षस को श्रान्त जानकर रामचन्द्रजी इस प्रकार धैर्य को धारण किये जैसे मृगा का भय सिंह को नहीं होता, तब तक खर रथ पर बैठ कर रामजी के सन्मुख ऐसा आया जैसे अग्नि में पतंग गिरते हैं इसके बाद रामचन्द्रजी के हाथ पर एक बाण मारा, पुनः क्रोध पूर्वक बज्र के समान सात बाण रामजी पर चलाया, इसके उपरान्त हजारों बाण को छोड़ कर महा-युद्ध किया, सूर्य के सदृश प्रकाश मान खर के बाणों की वर्षा से राम-चन्द्रजी का कवच पृथ्वी पर गिर पड़ा, कवच से रिक्त रामजी की शरीर पर अनेक बाण को चलाया तौ भी रामचन्द्र अग्नि के समान समर भूमि को प्रकाशित करते हुए रण में खड़े रहे, राक्षस के पराक्रम को देखकर श्रीरामचन्द्रजी वैष्णव धनुष को चलाया उस बाण को लगते ही खर की ध्वजा टूट कर गिर पड़ी, इसके उपरान्त खर ने चार बाण रामजी के हृदय में मारा, रामजी अपने बाण से राक्षसों का बाण काटते गये, और अपने बाण से राक्षसों की शरीर को बेधते गये,

जब खर अभिमान से रामजी के ठीक सन्मुख आया तो श्रीरामजी एक बाण शिर पर दो बाण भुजाओं पर और तीन बाण खर के हृदय में मारा इसके उपरान्त रामजी पुनः क्रोधित होकर तेरह बाण से खर के रथ और सारथी को नाश किया, रथ सारथी को नाश देखकर देवता ऋषि रामजी की पूजा व स्तुति किये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे भाषायां अष्टविंशः सर्गः ॥२८॥

रथ सारथी को नष्ट हो जाने पर और बाण से पीड़ित भी खर गदा लेकर श्रीरामजी को ललकारा, राक्षस के ललकारने को सुनकर श्रीरामजी न्याय पूर्वक अर्थ में पुरुष बचन को खर से बोले, कि हाथी घोड़ा रथ सेना आदि के सहित जो तुमने दारुण कम किया है उसी का यह फल है, प्राणियों को पीड़ा देने वाले तीनों लोक के ईश्वर भी अपने कल्याण को नहीं देखते तुम्हारी क्या गणना है, लोभ से अथवा काम के वश होकर जो पाप करता है उसका फल अवश्य मिलता है, तुम इस दण्डक बन में रहने वाले ब्राह्मणों का जो बध किया और राक्षसों से कराया है उसका फल भोगो, कर्ता अपने किये हुए कर्म के फल को अवश्य भोगता है, इस लिये लोक के विरुद्ध घोर पाप करने वाले तुम सब राक्षसों को नाश करने के लिये राजा मैं हूं और पिता के नियोग से बन में आया हूं जो तुमने दण्डकवन के निवासी ब्राह्मणों को मार कर भक्षण किया है, उसी पाप से सेना के सहित नाश होकर नरक में जा आगे, हे अधम ! हमारे साथ युद्ध करने का उद्योग करो, नहीं तो ताल के फल के समान तुम्हारे शिर को चूर कर दूंगा, इस प्रकार रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर क्रोध पूर्वक विहंस कर खर बोला, हे दशरथ के पुत्र ? युद्ध में राक्षसों प्राकृत राक्षसों को मार कर अपने को बीर जानते हो परन्तु जो अपने पराक्रम से बलवान होते हैं वह अपनी प्रशंसा अपने मुख से नहीं करते, हे बीर! समर में युद्ध को उपस्थित देखकर बिना विषय के प्रस्ताव करना व्यर्थ है, यह तुम अयोग्य बचन कहते हो कि मैं राजा हूं इससे

तुम्हारी लघुता प्रगट होती है, गदाको धारण किये जब तक हमारे सन्मुख नहीं आते हो तब तक अपनी बड़ाई कर लो, मैं अपनी गदा से पर्याप्त हूं रण में तुम्हारे प्राण का नाश अवश्य करूंगा जैसे यमराज जीवों का नाश करते हैं, तुम्हारे समान हमको अपनी बड़ाई नहीं करना है अब सूर्य नारायण अस्त हो रहे हैं इनके अस्त हो जाने पर युद्ध में विघ्न होगा, तुमने चौदह हजार राक्षसों का नाश किया है अब तुमको अकेला मार कर अपने आँखके आँसू को पोछूंगा, ऐसा कह कर खर ने अपनी गदा रामचन्द्र पर चलाई, इन्द्र के वज्र के समान महती गदा को चलाते ही आस पास के वृक्षलता जल कर भस्म हो गये, रामचन्द्रजी आकाश से उस गदा को आते देखकर अपने बाणों से काट कर उस गदा को पृथ्वी पर गिरा दिया ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे एकोनत्रिंशः सर्गः ॥२९॥

श्रीरामचन्द्रजी खर से फेंकी गई गदा को अपने बाण से खण्डन करके राक्षस से बोले, हे राक्षसों में अधम ! तुम्हारे सकल पराक्रम को हमने देखा है सामर्थ्य हीन होकर तू वृथा गर्जना करता है हम को नाश करने के लिये जिस गदा को अभिमान से तूने मेरे ऊपर फेंका है वह तेरी गदा खंड खंड हो कर पृथिवी तल में पड़ी है, और जो तूने मरे हुए राक्षसों को बदला लेने की प्रतिज्ञा किया है वह बचन तेरा नष्ट हुआ, नीच क्षुद्र शील हीन मिथ्या बचन बोलने वाले तुझ राक्षस के प्राण को इस प्रकार हरण करूंगा जैसे गरुड़ सर्पों को हरण करते हैं, अब मैं अपने बाण से तुम्हारे हृदय को फाड़ कर तेरे रक्त को पृथिवी देवी को पान कराऊंगा, और तू धूली में लोटकर स्त्री के समान पृथिवी का आलिंगन करोगे तुम्हारे मरने पर ऋषि मुनि निर्भय होकर दण्डकबन में विहार करेंगे, और राक्षसों की स्त्रियां शोक रसका स्वाद पायेंगी, क्योंकि जो प्राणी काल के वश होता है उसे भले बुरेका ज्ञान नहीं रहता, रामचन्द्रजी के पुरुष बचन को सुनकर खर नाम राक्षस क्रोध से भृकुटी को चढ़ाकर समीप में वर्त्तमान साल के वृक्ष को उखाड़ कर रामजी पर फेंक कर चिल्लाया

कि यह मरा, साल वृक्ष को अपने ऊपर आते देखकर क्रोध पूर्वक रामचन्द्रजी ने अपने बाण से वृक्ष को काट डाले, और एक साथ हजारों बाण मार कर उसको घायल कर दिया, रामचन्द्रजी के बाण से पीड़ित होकर रक्त को बहाता हुआ क्रोध पूर्वक रामजी की ओर दौड़ा, रामजी राक्षस का स्पर्श उचित न जान कर दो तीन पग पीछे हट गये और अग्नि के समान प्रकासमान इन्द्र से प्राप्त अस्त्र को खरके ऊपर छोड़े जैसे इन्द्र अपने शत्रु वृत्रासुर को वज्र से मार कर गिरा दिया, वैसे रामजी अपने बाण से खर को मार कर पृथिवी का भार उतार देवताओं को दुःख से छुड़ाये देवगण दुन्दुभी बजाकर रामजी का गुणनुवाद गाया आकाश से पुष्प वर्षा होने लगी, ऋषि मुनी देवता गंधर्व सिद्ध चारण किन्नर, पन्नग, उरग आदि रामजी को धन्य धन्य कहने लगे और परस्पर इस बात की चर्चा होने गली कि शरभंगमुनि के आश्रम में इन्द्र छिपकर इसी कारण से आये थे, हम लोगों का वह दुःख आज छूटा है, अब दण्डक बनके ऋषिगण आनन्द से अपना धर्म पालन करेंगे, राक्षस को मरने के उपरान्त रामचन्द्रजी लक्ष्मण और सीता के सहित आश्रम में सुख से बैठे, इसके उपरान्त ऋषिमुनी रामजी की यथा योग्य पूजा किये, ऋषियों की पूजा को स्वीकार करके राम चन्द्रजी लक्ष्मण और सीता को हृदय से लगाकर आन्द को प्राप्त हुए, राक्षसों के नाश को देखकर देवता ऋषिमुनि प्रसन्न होगये, इस राक्षसों के महाभयंकर युद्ध कौतुक से विस्मित हो कर जानकीजी बार बार रामजी को प्यार करने लगी ॥

इति बाल्मीकिये अरण्यकाण्डे त्रिंशः सर्गः ॥ ३० ॥

खरके मरने के बाद शेष राक्षस लंकापुरी में जाकर रावण समीप विलाप करते हुए बोले कि जन स्थान में रहने वाले खरदूषण त्रिशिरा आदि चौदह हजार राक्षस युद्ध में मारे गये, हम रण से भागकर समाचार कहने के लिये आपके समीप आये हैं। राक्षसों के बचन को सुनकर क्रोध से आंख को लाल लाल करके रावण बोला,

कि संसार में कौन ऐसा मनुष्य अथवा देवता या गंधर्व है जो महा भयंकर जन स्थान में प्रवेश कर के राक्षसों के साथ युद्ध किया है, क्योंकि इन्द्र, वरुण, यम, कुबेर, अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा, वायु, काल, विष्णु आदि में किसी को ऐसी सामर्थ्य नहीं है जो हमारे साथ बिरोध करे, इन देवतों ने तो हमारे सेवा को अंगीकार किया है इस प्रकार क्रोधित दशानन के सन्मुख हाथ जोड़ कर वे राक्षस पहिले अभयदान की प्रार्थना किये, रावण ने उन लोगों को अभय दान दिया। अभयदान को पाकर सूर्पनखा बोली, सिह के समान पराक्रमी हैं युवावस्था में प्राप्त हैं विशाल भुजा और कपाट के समान हृदय है राम उनका नाम है। और राजा दशरथ के पुत्र हैं, श्यामवर्ण हैं। कमल नयन और अतुल पराक्रम है। उन्हीं ने जन स्थान में खरदूषण त्रिशिरा आदि राक्षसों को मारा है। सूर्पनखा आदि के बचन को सुनकर बड़े भयंकर सर्प के समान श्वांस लेकर रावण बोला कि इन्द्रादि देवताओं के सहित राम जन स्थान में आया है क्या इसको विस्तार पूर्वक कहो, रावण के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी के बल और पराक्रम को सूर्पनखा कहने लगी, कि राम अत्यन्त तेजस्वी और बीरों में श्रेष्ठ है। दिव्य अस्त्र और सुन्दर गुणों से युक्त हैं। संग्राम करने अधिक शूरबीर हैं। और उन्हीं के सदृश बलवान तथा शत्काल की चन्द्रमा के समान शोभा युक्त रामके लघुभाई लक्ष्मण हैं। वह राम के साथ इस प्रकार रहते हैं जैसे अग्नि के साथ वायु रहता है। इनके साथ इन्द्रादिक देवतों के आने की संभावना हम लोगों को नहीं है। क्योंकि इनके हाथ से छूटकर बाण पांच पांच मुखके सर्प हो कर राक्षसों को खाया है। और युद्ध के भय से प्राण लेकर जो राक्षस जहां भाग जाते थे उनको वहीं धनुषबाण को लिये राम दीख पड़ते थे, इस प्रकार जन स्थान बासी राक्षसों का नाश हुआ, है। राक्षसों के बचन को सुनकर रावण बोला कि राम लक्ष्मण को बध करने के लिये मैं दण्ड कारण्य में चलूंगा। इस प्रकार रावण के बचन को सुनकर राक्षस

बोले हे राजन्! उसके पराक्रम को विस्तार पूर्वक सुनो जब वह राम क्रोध कर के काल के समान संहार करने में प्रवृत्त होता है। तब अपने पराक्रम से ब्रह्मादिक देवता भी उसे नहीं जीत सकते हैं, वह अपने पराक्रम से ग्रह नक्षत्र तारागण आदि को नष्ट कर सकते हैं, डूबती हुई पृथ्वी को उद्धार कर सकते हैं। समुद्र को सुखा सकते हैं। संहार करके फिर भी प्रजाओं की सृष्टि कर सकते हैं। अर्थात उत्पत्ति पालन नाश करने की जिसको सामार्थ्य है, उसको रण में आप नहीं जीत सकते हैं। और देवता दैत्य राक्षस गंधर्व उनको रण में नहीं जीत सकेंगे, उनको जीतने का एक उपाय है उसको विचार पूर्वक सुनो। उनके साथ सीता नाम महा सुन्दरी एक स्त्री है। वह स्त्रियों के मध्य में रत्न के समान है। वह न तो देवी है न गंधवी है न अप्सरा है न तो नाग कन्या है, वह रामके तुल्य स्त्री है, अर्थात् यह तीनों ब्रह्म माया जीव के समान रूप धारण कर के संसार में घूमते हैं तुम इस दण्डक बन में उसकी स्त्री सीता को हरण करो, सीता से रहित होकर वह अवश्य जीतने के योग्य होगा, उनके बचन को विश्वास पूर्वक मान कर रावण सीता को हरण करने का विचार करने लगा और राक्षसों से बोला कि कल्ह प्रातःकाल अकेले सारथी के जन स्थान में चलकर वैदेही को लंकापुरी में लाउंगा, ऐसा कह कर सूर्य के समान चमकने वाली रथ में गदहों को जुतकर दिशाओं को प्रकाशित करता हुआ और सनत्कुमारजी के बचन को स्मरण करता हुआ चला, एक समय कैलास पर्वत पर शिवजी का दर्शन करने के लिये सनत्कुमार आदि चारों भाई गये थे उस समय रावण शिवजी की पूजा करता था सनत्कुमार आदि मुनियों के देखकर अभिमान पूर्वक न प्रणाम किया और न बोला, सनकादि शंकरजी को प्रणाम व अस्तुति करके चलते समय रावण से बोले कि त्रेता में रामावतार होगा और रामचन्द्रजी तेरे अभिमान का मर्दन करके परिवार सहित तेरा नाश करेंगे सनत्कुमारजी के इस बचन को स्मरण करके प्रसन्न होता

हुआ अथवा उत्तमा स्त्री का हरण करेंगे इस बात से प्रसन्न होकर मारीच के आश्रम को चला, मारीच रावण को देखकर राक्षस के योग्य भोजन आसन जल आदि से पूजा करके मारीच बोला, महाराज लंकापुरी में राक्षसों का कुशल है आप अकेले यहाँ आये हैं इससे हमें सन्देह होता है। मारीच के इस प्रकार बचन को सुनकर बोलने में पण्डित रावण विचार कर बोला कि कठिन कर्म को साध्य करने वाले राम ने जनस्थान में रहने वाले समस्त राक्षसों को वध किया है उस राम के स्त्री को हरण करने में तुम हमारी सहायता करो, राक्षस राज रावण के बचन को सुनकर मारीच बोला कि कौन आपका ऐसा मित्र है जो सीता को हरण करने का उपदेश दिया है उसको तुम अपना प्रधान शत्रु जानो, सीता को लंकापुरी में ले जाने को कौन कहा है उसका नाम कहिये, कौन ऐसा पुरुष है कि जो तुम्हें इस बात का उपदेश देकर राक्षसों को समूल नाश किया चाहता है, आपका कौन ऐसा शत्रु है इस कर्म की शिक्षा देकर नाश कराना चाहता है, रामचन्द्रजी को गंधहस्ती जानो जैसे एक हाथी के मद के गंध को सूँघकर अन्य हाथी भाग जाती हैं वैसे रामजी के सन्मुख किसको सामर्थ्य है कि युद्ध में ठहर सके, जैसे सोये हुए सिंह को जगाकर मृगा अपना नाश चाहता है उसके समान श्रीरामजी से विरोध करके उनके बाण से तुम भी राक्षसों का नाश कराना चाहते हो क्योंकि युद्धरूपी समुद्र में रामजी का धनुष ग्राह है उनकी भुजा को जल का वेग जानो और उनके बाण युद्ध रूपी जल के तरङ्ग है और रामचन्द्र वड़वाग्नि के समान है उनके मुख में अपने से प्रवेश करना चाहते हो, यदि तुम अपना कल्याण चाहते हो तो प्रसन्नता पूर्वक अपने स्थान को लौट जाओ और अपनी स्त्रियों में क्रीड़ा विहार तथा आनन्द करो मारीच के इस प्रकार बचन को सुनकर रावण लंकापुरी को लौट आया।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरयकाण्डे एकत्रिंशः सर्गः ॥३१॥

इसके उपरान्त सूर्पनखा को देखकर खर दूषण त्रिशिरा आदि राक्षसों के मरण को स्मरण कर रावण शोक से महा गर्जना किया, सूर्पनखा रावण से पालित लंकापुरी में जाकर मन्त्रियों के सहित सभा में रावण को बैठे देखा, जैसे देवतों के मध्य में इन्द्रकी शोभा होती है वैसे राक्षसों के मध्य में स्वर्ण के ऊंचे सिंहासन पर अग्नि के समान बैठा है देवता गंधर्व ऋषिमुनि सेवा करते हैं ऐरावत हस्ती के दांत के रगड़ के चिन्ह की शोभा जिसके वक्षस्थल मे बिराजमान है, बीस भुजा दशमुख और छत्र चमर से जो सम्पन्न हैं। बिशाल हृदय तथा राज लक्षण से लक्षित है, वैडूर्य मणि की कान्ति के समान कान्ति के युक्त सुन्दर भुजा उज्वल दन्त बिशाल मुख पर्वत के समान रावण को देखा, जिसने देवतों के साथ युद्ध कर के विष्णु के चक्र को निपात कर दिया, समुद्र जिसके अधीन हो कर रहने लगा। अपने पराक्रम से जिसने पर्वतों के शिखर को चूर कर दिया कैलास पर्वत पर जाकर कुवेर के युद्ध में जीत कर उनका पुष्पक विमान ले लिया, इन्द्र के नन्दन बन को उखाड़ कर अपने लंकापुरी में लगा दिया। जो भोगवती नाम की सर्पों की नगरी में जाकर वासुकी और तक्षक को युद्ध में जीत कर तक्षक की स्त्री को ले लिया, जिसने अपने क्रोध से अनेक देवस्थानों को ध्वंस कर दिया, जिसकी आज्ञा से सूर्य चन्द्रमा उदय और अस्त होते हैं, ब्राह्मण लोग यज्ञ में जिसको भाग देते हैं और जिसके नाम की आराधना करते हैं, जिसको संग्राम में मनुष्य को छोड़ कर मृत्यु से भी भय नहीं है, जिसके भय से यज्ञादि शुभ कर्मों का होना बन्द हो गया है सकल लोक को भय देने वाले रावण को दिव्य वस्त्र भूषण अलंकार माल्य आदि से भूषित आसन पर काल के सदृश मन्त्रियों के सहित बैठे हुए रावण के समीप जाकर राक्षसी सूर्पनखा भय से विह्वल हो कर बिलाप करने लगी॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे द्वात्रिंशः सर्गः॥ ३२॥

मन्त्रियों के मध्य में रावण को बैठा देखकर बड़े कठोर वचन से बोली, हे राजन् ! तुम काम भोग में अत्यन्त आसक्त हो गये हो कि बड़े भारी भय को उपस्थित जान कर कुछ चिन्ता और उपाय नहीं करते हो, जो राजा स्त्रियों के भोग में आसक्त रहता है अथवा उसकी निरन्तर चेष्टा किया करता है वह तिरस्कार के योग्य होता है, जो राजा समय पर अपने कार्य का निरीक्षण नहीं करता वह मन्त्रियों के सहित अपने कार्य की सिद्धि को नहीं देखता, जैसे कीचड़ वाली नदी में हाथी लोग बिहार नहीं करती हैं वैसे स्त्री आदि विषय भोग में परतन्त्र राजा को प्रजा छोड़देती है, जो राजा अपने अधीन के राज्य को दूसरे के अधीन करके अपने स्वयं उस राज्य की रक्षा नहीं करता वह राजा समुद्र में डूबे हुए पर्वत क समान है जैसे पर्वत समुद्र में मग्न होकर स्थित नहीं रहता वैसे वह राजा फिर प्रजाओं को अपने अधीन नहीं कर सकता, तुम तो बालस्वभाव हो बुद्धि से हीन हो, क्योंकि अपने जानने और रक्षा करने योग्य विषय को नहीं जानते हो । जो राजा अपनी सेना और कोष (खजाना) और सेवक तथा राजनीति को नहीं जानता है वह राजाओं के बीच में क्षुद्र गिना जाता है, राजा सेवक की रक्षा करता है सेवक से राज्य की रक्षा होती है तुम तो अपने बन्धुओं के दुःख को भी नहीं जानते हो, देखो तो खर दूषण के सहित चौदह हजार राक्षसों को अकेला राम संग्राम में नाश किया है और राक्षसों को रहने के योग्य दण्डक बन में ऋषियों को अभयदानदिया है, अब राक्षसों से रहित जनस्थान में ऋषिगण स्वच्छन्द विहार करते हैं, इतने राक्षसों का नाश होने पर भी तुम निर्भय अपने सुख भोग में प्रमत्त भये हो,जो राजा व्यसनमें सदा लीन रहता है उसे दुःख पड़ने पर प्रजा उसकी सहायता नहीं करती, जो राजा नीति के नयन से जागता है और क्रोध तथा प्रसन्नता के फल दान से प्रजा में व्यवहार करता है वह राजा लोक में पूजित होता है, हे दुर्बुद्धि रावण ! तुम्हारे में राजगुण कुछ भी नहीं है कि जो तुमको अपनी सेना के नाश होने का भी परिचय

नहीं हुआ। जो देशकाल की मर्यादा को न जानकर दूसरे के अपमान को कुछ नहीं समझता है वह शीघ्रही विपत्ति में पड़ता है। इस प्रकार दोष को कथन करती हुई सूर्पनखा को देखकर रावण अपनी बुद्धि से धन से अभिमान से बल से युक्त होकर विचार करने लगा कि मारीच और सूर्पनखा इन दोनों में किसका कहना योग्य है, और हमको क्या करना उचित होगा॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे त्रयस्त्रिंशः सर्गः॥ ३३॥

सूर्पनखा को कठोर बचन बोलती हुई देखकर मन्त्रियों के मध्य में बैठा हुआ रावण क्रोध पूर्वक सूर्पनखा से पूंछा कि राम कौन है कैसा शूरवीर है और किस रंग का है कैसा पराक्रमी है वह क्यों दण्डकारण्य में आया है, और राक्षसों के साथ कैसे युद्ध हुआ जिस में खरदूषण त्रिशिरा आदि राक्षस मारे गये। और तुम्हारे नाक कान को काटकर क्यों विरूप किया है इसको विस्तार से कहो, रावण के बचन को सुनकर सूर्पनखा मूर्छित होकर रामचन्द्रजी के वृत्तान्त को कहने लगी। रामकी लंबी भुजाऐं हैं विशाल नेत्र हैं जटाचीर तथा काले मृग के चमड़े को धारण किये हैं, कामदेव के समान सुन्दर हैं दशरथ के पुत्र हैं इन्द्र धनुष के समान धनुषबाण को धारण किये हैं। संग्राम में उनके बाण से प्रकाश निकल कर महा भयंकर सर्प के समान राक्षसों को भक्षण करता है, रणमें इन्द्रादिक देवते भी उनकी सामना करने की सामर्थ्य नहीं रख सकते, उनके बाण के पुंख सोने के हैं, महापराक्रमी चौदह हजार राक्षसों को अपने तीखे बाणों से पैदल और अकेला राम आधे आधे क्षण में राक्षसों का नाश किया है, और ऋषियों को निर्भय विहार करने के लिये दण्डक बन को दिया है। दूसरे (लक्ष्मण) स्त्री का मारना पाप जानकर हमारी नाक कान काटकर विरूप करदिया है, राम केसमान तेजस्वी पराक्रमी और रामकी भक्त क्रोध को जीतने वाले अत्यन्त बुद्धिमान और बलवान रामकी दक्षिण भुजा अथवा उनका दूसरा प्राण उनके भाई लक्ष्मण को जानिये।

रामकी धर्मपत्नी चन्द्रमुखी पतिव्रता महा सुन्दरी लक्ष्मी के समान अथवा दण्डक बनके बन देवता के समान सीता नाम की उनके संगमें हैं। देवता गंधर्व यक्ष किन्नर आदि में वैसी महा सुन्दरी नहीं देखी गई है, वह सीता प्रसन्न होकर जिसको स्पर्श करें वह संपूर्ण काल में और लोक में इन्द्र से भी अधिक सुख और जीवन को लाभ करेगा, वह सुशीला महा सुन्दरी सीता तुम्हारे योग्य है और तुम उसके पति होने के योग्य हो, हाथी के सूंड के सदृश उसकी जंघा है, ऊंचे और विशाल उसके स्तन हैं उसको अपनी स्त्री बनाने का उद्योग करो, यदि वह महा सुन्दरी वैदेही तुम्हारी स्त्री होगी तो कामलिप्सा तुम्हारी पूरी होजायगी, यदि हमारी बात तुम्हारे करने योग्य हो तो निर्भय हमारे कहने के अनुसार रामकी शक्ति और अपने शक्ति को विचार करके कार्य करो ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥३४॥

सूर्पनखा के बचन को सुनकर रावण को रोमाञ्च होगया और मन्त्रियों की अनुमति से वह रावण मारीच के आश्रम को चलने के वास्ते प्रस्तुत होगये। सीता को अपहरण करने में क्यों दोष होगा और क्या गुण होगा इस प्रकार के बलाबल के विचार करके और सीता को हरण करने में अपनी बुद्धि को निश्चय करके अपने वाहन शाला में गया, वाहन शाला में छिपकर और शीघ्र जाकर सारथी से प्रेणान किये कि हमारे रथको चलने के लिये शीघ्र तइयार करो राक्षस राज रावण के बचन को सुनकर सारथी रावण के बैठने योग्य रथ को क्षण भर में तइयार किया। इच्छा के अनुसार गमन करने वाले रत्नों से जड़ित सोने के रथ पर बैठ कर कुबेर का भाई रावण समुद्र की शोभा को देखता हुआ मारीच के आश्रम को चले, वह रावण श्वेत छत्र और चमर को धारण किये है बिजली के समान भूषण और अलंकार को धारण किये है अपने बदल के सदृश कृष्ण वर्ण है, दश मुख है, बीस भुजा है, देवतों का शत्रु मुनियों को

नाश करने वाला हिमालय पर्वत के समान रथ पर बैठ कर शोभा को प्राप्त होता हुआ चला, आगे समुद्र के तटकी शोभा को देखकर प्रसन्न हुआ कहीं अनेक प्रकार के वृक्ष फल पुष्प से समृद्ध हैं, वृक्षों के पुष्प नीचे गिर कर किनारे की भूमि को आच्छादित कर दिया है शीतल जल से रमणीय जलाशय परिपूर्ण हैं भांति भांति के कमल उस में फूले हैं, कहीं कदली (केला) के बन, कहीं नारियल के विशाल बन हैं, कहीं साल ताड़ तमाल आदि के वृक्ष शोभा को दे रहे हैं, कहीं तपस्वीजन जल वायु वृक्षों के सूखे पत्तों को खाकर उन्हीं वृक्षों के आश्रय में भगवद् भजन करते हैं, कहीं वाल खिल्य आदि महर्षि तपस्या करते हैं, कहीं सूर्य चन्द्रमा के किरण को पीकर तपस्या करने वाले ऋषिश्वर तपस्या करते हैं, इस प्रकार समुद्र की शोभा को देखते हुये विमान से चले, कहीं अपने अपने विमान पर बैठ कर गंधर्व किन्नर सिद्ध अपनी स्त्रियों के संग विहार करते हैं कहीं नाग और गरुड़ एक जगह बैठ कर वार्तालाप करते हैं, कहीं अप्सराओं के सहित देवता गण दिव्य चन्दन माल्य तथा श्रेष्ठ अलंकार को धारण करके बिहार करते हैं कहीं हंस सारस क्रौंच आदि पक्षी अनेक प्रकार के शब्द को बोलते हैं, कहीं पर घासों की हरियाली और बराबर किनारे की भूमि वैडूर्य मणि के समान शोभा को दे रही है, कहीं वीणा आदि बाजे बज रहे हैं, कहीं नाच हो रही है, चन्दन वृक्ष के सुगन्ध को लेकर हवा चलती हैं, कहीं गुग्गुल आदि के विशाल बन पड़े हैं, कहीं मरीचकी लता लवंग इलायची के वृक्षों से परिपूर्ण हैं, कहीं किनारे पर मोतियों की ढेर लगी है, कहीं पर्वतों के बड़े मनोहर चट्टान पड़े हैं, कहीं मूंगा की राशि लगी है, सोने चाँदी आदि के शिखर को पर्वत धारण किये हैं इस प्रकार स्वर्ग के सुख के बराबर समुद्र के तट की शोभा को देखते हुए विमान से रावण न्यग्रोध (वट) वृक्ष को देखा जिस वृक्ष का विस्तार सौ योजन में है। एक समय अमृतको हरण करने के लिये गरुड़जी इन्द्रलोक में

जाते थे। मार्ग में कोई व्याधा ने एक बलवान हस्ती और एक विशाल कछुए को मार कर छोड़ दिया था मांस के लोभी गरुड़जी उन दोनों को उठा कर उसी वट वृक्ष की डाली पर रख कर मांस खाने की इच्छा किये, इतने में उन दोनों के भार से वह वृक्ष की डाली टूट गयी, उस वृक्ष के नीचे वालखिल्य आदि महर्षि बैठ कर तपस्या करते थे उन मुनियों पर दया कर के गरुड़जी बोले इस डाली से मुनियों का नाश न हो ऐसा कह कर गरुड़जी उस वृक्ष की डाली को और मरे हुए हाथी और कछुए को लेकर आकाश में चले गये, वहां ही अपने एक पैर पर डाली सहित हाथी और कछुये को रख कर उनका मांस भोजन किये और वृक्ष की डाली निषाद देश पर फेंकी जिससे निषाद देशको नाश किये और मुनियों के प्राण को बचने से गरुड़जी प्रसन्न होकर अपने पराक्रम को दूना किये और अमृत लाने के वास्ते इन्द्रलोक में गये वहां जाकर क्या देखते हैं कि जिस घर में अमृत है वह रत्न का है उस गृहकी रक्षा के लिये चारो ओर से लोह के जाल लगे हैं गरुड़जी अपने पराक्रम से लोह जाल को काट कर रत्नाभित्तिको तोड़कर इन्द्र भवन से अमृत को हरण किये उस वट वृक्ष की विचित्र शोभा को देखता हुआ रावण मारीच के आश्रम में पहुंचा। वहां जाकर जटा मंडल को धारण किये तपस्वी के स्वरूप में मारीच नाम राक्षको देखा। इधर मारीच रावण को देख कर उसके समीप में आकर अर्घ्य पाद्य आसन जल भोजन आदि से रावण का सत्कार करके बोला, हे राक्षसेश्वर ! लंका में राक्षसों का कुशल तो है? एकाएक दूसरी वार तुमको आने का क्या कारण है ? मारीच के इस प्रकार प्रश्न को सुनकर विचार और अपने प्रयोजन को प्रगट करके बोला ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्य काण्डे पंचत्रिंशः सर्गः ॥ ३५ ॥

मारीच के बचन को सुनकर दीन और कातर तथा गंभीर भाव को धारण करके रावण बोला, हे तात ! हमारे बचन को सुनो, मैं

अत्यन्त दुःखी होगया हूं। हमारे समान दुःखी के तुम ही शरण हो । यह आपको मालम है कि हमारी आज्ञा से जन स्थान में हमारा भाई खरदूषण त्रिशिरा आदि राक्षसों के सहित रहता था और वहीं हमारी बहिन सूर्पनखा रहती थी, इनसे अतिरिक्त और भी महाबली राक्षस वहां रहते थे, जो सदा जन स्थान वासी मुनियों के मांस से तृप्त होकर दण्डक बनमें विहार करते थे, उन राक्षसों के साथ शुष्क विवाद करके रामने रणमें अपने उग्रबाण से खरदूषण त्रिशिरा आदि चौदह हजार राक्षसों का नाश किया है। और हमारी बहिन सूर्पनखा को नाक कान काट कर विरूप कर दिया है, जो राम पिता से तिरस्कर किया गया राज्य को छोड़कर अकेला स्त्री के सहित वन में आया है उस क्षत्रिय कुल में दूषण रामके अपमान को कैसे सहन करूं, उस राम में कुछ शील नहीं दया नहीं है ज्ञान नहीं है इसलिये मूर्ख है लोभी है और उसकी इन्द्रियां उसके अधीन में नहीं हैं वह धर्म की मर्यादा को कुछ भी नहीं जानता है, वह सकल प्राणियों को दुःख देने वाला है, उसने बिना बैर इतने राक्षसों को मारा है, वह अधर्म से सूर्पनखा के नाक कान को काट कर विरूप किया है वह केवल अपने बल के भरोसे पर बन में बिहार करता है इस लिये उसकी महा सुन्दरी स्त्री सीता को मैं हरण करना चाहता हूं तुम हमारे इस कार्य में सहायता करो, तुम्हारे सामने हम अपने भाई कुंभकर्ण आदि की गणना नहीं करता, तुम हमारे कार्य में सहायता करने योग्य हो, पराक्रम में अभिमान में युद्धमें तुम्हारा सामना कोई नहीं करसकता और तुम अनेक प्रकार की माया और छल को भली भांति जानते हो, इस कारण हम तुम्हारे पास आये हैं कि हमारे इष्ट बचन के अनुसार हमारी सहायता के योग्य ऐसा काम करो कि चित्र विचित्र के रंग से रंजित होकर सोने के मृग का रूप धारण करो और राम के आश्रम में चलकर सीता के सन्मुख होकर चारण करो तुम्हारे सुन्दर स्वरूप पर मोहित होकर सीता रामजी से अथवा लक्ष्मण से तुम्हारे चमड़े की प्रार्थना करेंगी तब

तुम अपनी माया से एकान्त में चले जाना, जब तुम्हारी खोज करने के लिये राम लक्ष्मण दूर चले जायंगे तब में निर्बाध स्थान में वैदेही को हरण करूंगा जैसे चन्द्रमा को राहु ग्रस लेता है, रावण के मुख से राम की कथा को सुनकर मारीच के मुख सूख गये कंठस्वर रुक गया आंखों से पलक का गिरना बन्द हो गया मृतप्राय होकर मारीच रावण को देखने लगा । श्रीरामचन्द्रजी के पराक्रम को स्मरण करके रावण के सन्मुख हाथ जोड़ कर रावण के हित की बात और अपने हित के बचन को बोला ।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे षट्त्रिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥

रावण के बचन को सुनकर मारीच बोला,—हे राक्षसेश्वर ! समय पर मिथ्या और कपट तथा असत्य के बचन से सन्तोष देकर बुरे कामों को उपदेश देनेवाले पुरुष अनेक हैं और यह सब को सुलभ भी है परन्तु स्वामी के हित अहित को विचार करके समय पर कटु लगनेवाले और भविष्य में सुख देनेवाले बचन को कहनेवाले पुरुष दुर्लभ हैं विशेष करके राजों के यहां ऐसे सेवक नहीं होते जो स्वामी को बुरे कामों से रोके और उसके हित की बात को उपदेश करें, और विपत्ति पड़ने पर स्वामी को तिरस्कार न करके उसके साथ उसके दुःख को भोगें इस लिये हमारे बचन को सुनने में आपको सुख नहीं होगा किन्तु उसका सुख परिणाम में होगा इस कारण आप हमारे बचन को सुनिये, इन्द्र वरुण के समान महापराक्रमी सकल गुण संपन्न रामचन्द्रजी के तेज और पराक्रम को तुम नहीं जानते हो, तब तक राक्षसों के लिये स्वस्ति है कि जब तक रामचन्द्रजी क्रोध करके लोक को राक्षसों से हीन न करें, हे राजन् ! तुम्हारे जीवन को नाश करने के निमित्त जानकी का अवतार न होवे और सीता के कारण बिपत्ति राक्षसों को न भोगना पड़े और भी तुम ऐश्वर्य को पाकर भी काम के वश होकर राक्षसों के सहित लंकापुरी का नाश न करो, उन रामचन्द्र को उनके पिता ने परित्याग नहीं किया है, रामचन्द्र

लोभी शीलहीन क्षत्रिय कुल दूषण धर्म गुण से हीन कौशल्या को आनन्द देने वाले रामजी में तुम्हारे कहे अनुसार यह सब अवगुण कुछ नहीं है, सत्यवादी महाराज दशरथ को केकयी ने प्रतारण किया उसी केकयी के बचन को स्वीकार करके धर्मात्मा रामजी बन में आये हैं। केकयी तथा महाराज दशरथ के प्रिय काम के लिये राज्य और भोग को छोड़कर दण्डक बनमें प्रवेश किये हैं। रामचन्द्रजी में तुम्हारे कहने के अनुसार दोष कुछ नहीं है, रामचन्द्रजी धर्म के स्वरूप हैं सत्यवादी और सत्यपराक्रमी हैं तीनों लोक को पालन करने वाले हैं, श्रीजानकीजी अपने पतिव्रत से और रामजी के प्रताप से रक्षित हैं उनका हरण हठात् तुम कैसे करोगे, रामचन्द्र यमराजके समान धनुष बाण को लेकर शत्रुकी सेना को नाश करते हैं, इसलिये हे तात! राज्य सुख तथा अपने जीवन की चेष्टा को रखते हुए रामचन्द्रजी के समीप जाने के योग्य नहीं हो। सिंहके समान पराक्रमी रामचन्द्रजी की प्राण के समान प्रियतमा भार्या को हरण करने की तुम्हारी सामर्थ्य नहीं है, यह उद्योग करना तुमारा व्यर्थ है, रणके मध्य में इन्द्रादिक देवतों को सामर्थ्य नहीं है जो उनका सामना करें तुम्हारी क्या गणना है, धर्मिष्ठ मारीच गुण और दोष तथा बलाबलको बिचार करके रावण को उपदेश देकर कहा कि रामजी के साथ विरोध करने में तुम्हारा कल्याण नहीं है तुम हित और अहित की बातको सोचकर क्षमा करो। हे लंकापति! रामके साथ विरोध करके संग्राम में तुम्हारा कुशल नहीं होगा, तुम फिर भी हमारे बचन को मानकर सन्तोष पूर्वक लंकापुरी को लौट जाओ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे आरण्यकाण्डे सप्तत्रिंशः सर्गः॥ ३७॥

इसके उपरान्त मारीच अपना वृत्तान्त रावण से कहने लगा कि एक समय मैंने साठ हजार हाथी के बलको अपने शरीर में धारण करके पर्वत के समान अभिमान से भरा हुआ पृथिवी पर घूमने लगा और अस्त्र शस्त्र लेकर अपने राक्षसी व्यवहार से लोक को पीड़ा देने लगा और ऋषियों के मांस को भोजन करके दण्डक बन में बिहार

करने लगा हमारे उत्पात से उद्वेजित होकर धर्मात्मा विश्वामित्र श्रीरामजी को मांगने के लिये अयोध्यापुरी में दशरथ के यहां अपने स्वयं गये, वहां जाकर महाराज दशरथ से बोले कि हमारे यज्ञ के समय में यह राम हमारे यज्ञ की रक्षा करें, हमको मारीच राक्षस से महा भय उपस्थित हुआ है हमारे यज्ञ काल में वह राक्षस आकर अनेक प्रकार के उत्पात से यज्ञ को नष्ट कर देता है विश्वामित्र जी के बचन को सुनकर दशरथजी बोले हे !मुनिनाथ ! अभि रामचन्द्रजी बारह वर्ष के भी नहीं हैं और वह कुछ भी अस्त्र शस्त्र विद्या को नहीं जानते हैं आप कहिये तो अपनी चतुरंग सेना लेकर मैं चलूं और राक्षस के साथ युद्ध करके उसका बध करूं। दशरथजी के इस प्रकार वचन को सुनकर विश्वामित्रजी बोले हे राजन् ! आपने देवतों की सहायता की है यह बात तीनों लोक में विख्यात है तौ भी आप अपनी सेना को यहीं रहने दीजिये आपकी सेना से वह राक्षस पर्याप्त नहीं होगा। यह रामचन्द्र बालक हैं तौ भी उस राक्षस के निग्रह में समर्थ हैं, तुम्हारा कल्याण हो रामचन्द्रजी को हमे दीजिये। महाराज दशरथ से इस प्रकार कह कर विश्वामित्रजी रामचन्द्रजी को साथ लेकर चले यहां अपने आश्रम में आकर यज्ञ का आरंभ किये, और रामचन्द्रजी धन्वा को लेकर उपस्थित हुए। पुरुष के चिन्ह से हीन ब्रह्मचारी के वेष में श्यामवर्ण कमल नयन काकपक्ष और रत्नों की माला को धारण किये बाल चन्द्रमा के समान दण्डक बन को प्रकाशित कर दिये। इसके उपरान्त में अपने बल के अभिमान से प्रमत्त होकर मेघ के समान आश्रम में आये। और रामचन्द्रजी को बालक जान कर सहसा स्थान में प्रवेश करने को उद्यत हुए। रामचन्द्रजी मुझको यज्ञ स्थान में आते देखकर बाण को धन्वा पर चढ़ाये, परन्तु हम उस बाण का कुछ भी भय न मान कर यज्ञ को ध्वंस करने के लिये बेदी के समीप गये तब शत्रु संहारण रामचन्द्रजी अपने बाण से ताड़न किये, उनके बाण को लगते ही मैंने सौ योजन पर समुद्र में

आकर गिरा, उन वीर रामचन्द्र ने हमारे प्राण को न मारकर दया की राह छोड़दिया, तभी से मैं यहां समुद्र के तट पर रहता हूं। इसके बाद जितने हमारे सहायक उनसे लड़ने को गये उन सभों का उन्हों ने नाश किया। रामजी का पराक्रम हमको ज्ञात है, इस कारण तुमको बर्जते हैं, यदि हमारे बचन को न मान कर रामचन्द्रजी के साथ विग्रह करोगे तो घोर विपत्त में पहुंच कर नाश होओगे, और अनेक प्रकार के सुख आनन्द को भोग करने वाले राक्षसों के लिये यत्न पूर्वक मरण का संपादन करोगे, हर्म्य अट्टालिका आदि से संयुक्त धन रत्न से परिपूर्ण लंकापुरी को ध्वंस होती हुई तुम देखोगे, जैसे सर्प वाले तालाब में मछलियों का नाश होता है, वैसे दूसरे के किये पाप से कुल का नाश होता है, आज दिव्य चन्दन माल्य सुगन्धको शरीर में लेप करने वाले और उत्तम भूषण वस्त्रको पहिरने वाले राक्षस तुम्हारे दोष से मर कर पृथ्वी पर शयन करेंगे उनको तुम आँख से देखोगे, कोई विधवा कोई सधवा स्त्रियों को लेकर प्राण के भय से दिशाओं में भागते हुए राक्षसों को देखोगे। रामचन्द्रजी के बाण से अग्नि निकाल कर लंकापुरी को दग्ध करेगा और तुम देखोगो, क्योंकि पराई स्त्री के स्पर्शसे बढ़ कर दूसरा कोई पाप संसारमें नहीं है, तुम्हारे गृहमें हजारों उत्तम स्त्रियां है तुम उनमें सुख विलास करके अपनी प्रतिष्ठा को प्राप्त हो ओ, यदि उनसे न तृप्ति हो तो मित्रवर्ग में जिसकी स्त्रियों सुन्दरी और युवतीहो उनके साथ सुख भोग करो, परन्तु रामचन्द्र के साथ विरोध न करो, तुम हमारे मित्र हो इस लिये तुमको मना करते, हैं यदि हमारे बचन को न मानकर यदि हठात जानकीजी का हरण करोगे तो रामचन्द्रजीके बाणसे अपने परिवार समेत यमलोक को जाओगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे अष्टाविंशः सर्गः ॥३८॥

मारीच रावण को बहुत भांति समझा कर फिर भी बोला कि हे राजन्! यह वृत्तान्त विश्वामित्र मुनि के यज्ञकी रक्षाके समय का है,

इसके उपरान्त इधरका एक नवीन वृत्तान्त सुनो एक समय दो राक्षस मृगा का रूप धारण पंचवटी में चलने को प्रस्तुत हुए उनके साथ मैं भी मृगा का रूप धारण करके जन स्थान गया । वहां जाकर अनेक ब्राह्मणों को तथा अनेक जंगली जन्तुओं को मार कर उनके रक्त और मांस से तृप्त होकर दण्डक वन में घूमने लगे, जन स्थान में भ्रमण करते हुए तापस धर्म में राम लक्ष्मण जानकी को देखकर पहिले वैरका अर्थात् विश्वामित्र के यज्ञके विरोध स्मरण करके अपने सींगों से पृथ्वी को खोदता हुआ क्रोध पूर्वक रामजी के ओर चले हम तीनों मृगाओं को हिंसक जानकर शत्रु संहारण रामजी तीन बाण छोड़े, गरुड़ के समान पराक्रमी वे बाण आघात करने को चले, उस रामजी के बाण को देखकर मैं तो भाग गया और वे दोनों राक्षस मारे गये, रामजी के बाण से किसी प्रकार अपना जीवन पाकर यहां चले आये अपने चित्त को स्थिर करके तपस्या करते हैं, हमको तो प्रत्येक वृक्षों में जटा चीर को धारण किये धनुष बाण लिये रामजी की मूर्ति सर्वत्र दिखाई देती है, राममय यह बन हमको दिखाई देता है, हे रावण ! स्वप्न में भी मैं रामकी मूर्ति को देखता हूँ उन रामको साक्षात् देखनेसे जो त्रास होता है वह तो कहने योग्य नहीं है उनके नाम लेने से हृदय कंप जाता है, हम उनके प्रभाव को जानते हैं उनके साथ युद्ध तुम्हारे लिये कल्याण नहीं होगा, देखो महा-बलि बलि दैत्य को और नमुचि आदि बड़े बड़े बलवानों को उन्होंने नाश किया है उनके साथ तुम विरोध न करो, चाहे रण में राम से युद्ध करो परन्तु उनकी स्त्री का हरण करना उचित नहीं है, उनके साथ युद्ध करने में एक ही का मरण है परन्तु उनकी स्त्री को हरण करने में कुलका नाश है, इस कारण यदि हमको जीवित देखना चाहते हो तो राम की चर्चा को छोड़ दो हे रावण ! तुम्हारे अपराध से मैं भी नाश होऊँगा, इस लिये तुम्हारे बचन का पालन मैं नहीं करूंगा, रामचन्द्रजी अत्यन्त बलवान और पराक्रमी हैं वह सकल राक्षसों का

नाश करेंगे, देखो सूर्पनखा के सहायता के लिये गए खरदूषण का नाश क्षण भर में हुआ है, तुम्हारे कल्याण के वास्ते यह उपदेश तुझे देता हूं, यदि हमारे उपदेश को नहीं मानोगे तो आज ही रामचन्द्रजी के बाण से नष्ट होकर यमलोक जाओगे ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे आरण्यकाण्डे एकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥३६॥

मारीच के बचन रावण को इस प्रकार विषमय जान पड़े जैसे काल के मुख में प्रविष्ट मनुष्य औषध की इच्छा नहीं करता, अपने हित के बात मारीच के मुख से सुनकर रावण काल से प्रेरित होकर कठोर बचन मारीच से बोला, हे मित्र ! मारीच ! तुम्हारे बचन को धारण करने के वास्ते हमारे हृदय में स्थान नहीं है, तुम्हारा कहना हमारे वास्ते इस प्रकार निष्फल है जैसे ऊसर में बीज का बोना निष्फल होता है, ताटका आदि राक्षसी स्त्रियों को मारने वाला अपराधी राम के स्त्री को हरण में निरत हमको सन्तोष देने में तुम नहीं समर्थ हो, सो भी मूर्ख पापी विशेष करके मनुष्य के भय से हमको वारण नहीं कर सकोगे, जो राम के कार्य के बचन को सुनकर माता पिता गुरू मित्र राज्य आदि को छोड़ कर अकेला बन वास करता है खर को मारने वाले राम की प्रिय भार्या को अवश्य हरण करूंगा हमारे मन में यही सत्य संकल्प है इस प्रकार निश्चित हमारी बुद्धि को देवता या असुर नहीं पलटा सकते । और तुम जो इतना कह गये हो वह कहना तुम्हारा व्यर्थ है । क्यों कि संदेह युक्त कार्य में निश्चय करने के लिये जब मन्त्रियों से विचार किया जाता है कि इस कार्य को करने में क्या हानि लाभ दोष गुण होगा तब यह पूछने पर मन्त्रि वा मित्र को कार्य का निर्णय करना चाहिये, और पूंछने पर हाथ जोड़कर कहना चाहिये, राजा लोग अग्नि इन्द्र सोम यम वरुण यह पांच रूप से पराक्रम को धारण करते हैं, हे मारीच ! साम दाम दया दण्ड प्रसन्नता को राजा लोग सदा धारण करते हैं । इन सब सामग्रियों से सब समय राजा पूजित होता

है, तुम राजधर्म को न जानकर केवल मोह में प्राप्त होकर हमारे वचन के प्रतिकूल व्यवहार करने को उद्यत होते हो । हम अतिथि होकर तुम्हारे आश्रम में आये हैं सो तुम इतने कठोर वचन से हमारे धैर्य को छुड़ा दिया है, तुम हमारे कार्य को साधन करने में परम चतुर हो हमको अतिथि जान कर तुम हमारे इस कार्य में सहायता करो । सहायता में जो कार्य तुमको करना होगा उसको सुनो । तुम सुन्दर सोने के मृग का स्वरूप धारण करके पंचवटी में रामजी के आश्रम में चलो, वहां सीताजी के सन्मुख घास पात को खाओ, तुम सीता को प्रलोभन देकर अपना स्वच्छन्द इष्ट देश को चले जाना, तुम्हारे मायामय सोने के स्वरूप को देख कर विस्मय पूर्वक तुम्हारे चर्म को लाने की प्रार्थना सीताजी रामजी से करेंगी, जब सीताजी की इच्छा को पूर्ण करने के वास्ते रामजी तुम्हारे पीछे कुछ दूर तक चले जायंगे तब तुम रामजी के वचन के समान लक्ष्मण हा सीत ऐसा कह कर पुकार करना । तब तुम्हारे वचन को सुनकर पतिव्रता सीता पति के प्रेम से लक्ष्मण को भेजने की प्रेरणा करेंगी, लक्ष्मणजी भी रामचन्द्रजी के वचन को सुनकर भाई के प्रेम में रंजित होकर रामजी की सुधि लेने को जायेंगे तब मैं निर्बाधस्थान में भिक्षुक रूप से जानकी को हरण करूंगा । इस प्रकार हमारे अनुकूल कार्य का साधन तुम करो, हम इस कार्य के बदले में तुमको आधा राज्य देवेंगे । और यदि हमारे वचन को नहीं मानोगे तो आजही तुम्हारे प्राण को नाश करेंगे । अपनी जीवन चाहो तो हमारे कार्य को करो नहीं तो तुम्हारी मृत्यु आज निश्चय है, बिचार करलो इन दोनों में जो तुमको रूचे वही करो ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४० ॥

रावण के इस प्रकार कठोर वचन को सुनकर निःशंक होकर मारीच रावण से बोला, हे राक्षस राज ! पुत्र मित्र मन्त्रि राज्य को नाश करने के लिये उपाय ढूंढने वाले प्राणी को हमारे उपदेश से क्या

होगा। काल के मुख में प्रविष्ठ को यह हमारा उपदेश क्या करेगा। तौ भी कौन ऐसा मन्त्री है जो तुम को इस प्रकार उपदेश दिया है, कि तुम्हारा शत्रु निर्बल है तुम उसकी भार्या का हरण करो वह तुम्हारी मृत्यु को खोज करने की सिक्षा दिया है, जो मन्त्री राजा को कुमार्ग में भेजने की इच्छा करता है वह राजा करके बध करने योग्य है, क्योंकि राजा के धर्म अर्थ काम और यश को चाहने वाला मन्त्री राजा के प्रसाद से विपुल सुख भोग करता है, राजा ही धर्म और यश का मूल है इस कारण सब काल सब प्रकार से मन्त्रि को चाहिये कि राजा की रक्षा करे, जो राजा केवल दण्ड से प्रजा का पालन करते हैं उस राजा के प्रतिकूल प्रजा होकर उसके नाश की उपाय करती है, जो मन्त्री प्रजाओं को दण्ड देने का उपदेश राजा को देता है वह मारथी के समान नाश को प्राप्त होता है, जैसे विषम रथ पर बैठकर सारथी नाश को प्रात होता है, लोक में अनेक सज्जन अपने धर्म पथ पर आरूढ़ होकर धर्म का पालन करते हैं परन्तु दूसरे के किये अपराध से परिवार सहित वह मनुष्य नाश होजाता है। हे रावण! दण्ड से उद्वेजित प्रजा रक्षित होती हुई भी राजा से प्रतिकूल होकर नाश को पाती है जैसे वहेलिया से रक्षा किया गया मृगा नाश को प्राप्त होता है, हे रावण। जिन मन्त्रियों के कहने से तुम इस कठिन कर्म का आरंभ करना चाहते हो इसके दुष्कर्म से राक्षसों समेत तुम अवश्य नाश हो अगे अकस्मात् तुम्हारे मरने का यह समय आया है इस बात की चिन्ता हमको नहीं है राक्षसों सहित तुम्हारा नाश होगा इस कारण हमको चिन्ता है, हमारा बध करके रामचन्द्रजी शिध तुम्हारा भी बध करैंगे, यह निश्चय जानो कि सीता के हरण करने से बंधु बांधवों के सहित तुम्हारा और हमारा नाश अवश्य होगा। हम मित्र के बचन को जो तुम नहीं मानते हो इससे जान पड़ता है कि जिस मनुष्य की आयु खोटी होती है उसको मित्र के सुन्दर बचन अच्छे नहीं लगते॥

इति बाल्मीकिये रमायणे अरण्यकाण्डे एक चत्वारिंशः सर्गः॥ ४१॥

रावण से इस प्रकार परुष बचन को बोल कर कहा अपने प्राण के भय से रावण से कहा कि चलो मैं तुमारे कार्य को साधन करने के लिये चलता हूं रामजी के दर्शन मात्र से हमारा जीवन पहिले नष्ट होगा पीछे से तुम्हारा भी, इस प्रकार मारीच के बचन को सुनकर रावण प्रसन्नता पूर्वक मारीच को हृदय से लगाकर प्रिय बचन को बोला, इस समय हमारी आज्ञा के अधीन हुए हो इस कारण तुम्हारा नाम मारीच श्रेष्ठ है, इसके पहिले तुम राक्षसी स्वभाव में प्राप्त थे, आओ आकाश में घूमने वाले और रत्न से विभूषित तथा खच्चर से जोते हुए रथपर बैठकर हमारे साथ चलो, हे मित्र वैदेही को प्रलोभन देकर यथेष्ठ देश को चले जाना । जब तुम्हारे पीछे राम लक्ष्मण एकान्त बनमे चले जायँगे तब मैं शून्य स्थान में जानकी को रथ पर बैठाकर जन स्थान से लंकापुरी को चले आवेंगे, मारीच और रावण आपस में सम्मति करके रथ पर बैठकर बन नगर पर्वत नदी पुर ग्राम बाग बावली आदि की शोभा को रथ से देखते हुए श्रीरामचन्द्रजी के आश्रम के समीप आ पहुंचे वहां आकर राक्षसों का स्वामी रावण आश्रम के पास रथ से उतर पड़ा और मारीच का हाथ पकड़ कर बोला कि जहां गोदावरी के तट पर यह केला पनस रसाल साल पलाश आदि के अति सघन वृक्ष लगे हैं वही रामका आश्रम है, हे मित्र ! जिस काम के लिये हम लोग आये हैं उसको शीघ्र संपादन करिये । रावण के बचन को सुनकर मारीच इन्द्र नील मणि के समान नीली सिंग कृष्ण और उज्वल (चितहकबरा) मुख कृष्णवर्ण कान ऊंचा गर्दना गंभीर नाभी सोने के समान पीतवर्ण सर्वाङ्ग से शोभित होगया, मृगा के रंग लाल खुर और कृष्णवर्ण इन्द्र धनुष के समान उन्नत पुच्छ को धारण करके परम मनोहर बन गया, अपने शरीर की शोभा से रामजी के आश्रम को शोभित करने लगा । श्रीजानकीजी को प्रलोभन देने के वास्ते तृण वा वृक्ष से गिरे सूखे पत्तों को खाता और इधर उधर घूमता हुआ कदली बन में पहुंचा । वहीं कदली बनमें रामजी की पर्ण कुटीरही, उस रामजी के आश्रम

में सीताजी को देखने के वास्ते मन्दगति से अर्थात् धीरे धीरे घूमने लगा, और वहां के रहने वाले मृग उसको मृगा न जान कर भय से इधर उधर भागने लगे, परन्तु मृगा के मांस को खाने वाला यद्यपि वह राक्षस था तौभी मृगाओं की झुंड में जाकर प्रेम से मिलने लगा, और अपने मृग स्वभाव से कूद कर कहीं तो आश्रम के दूर निकल जावे कहीं फिर लौटकर आश्रम में चला आवे। उस समय जानकीजी पूजा और शृङ्गार के लिये पुष्प तोड़ने में लगी थी, वह प्रेम से कनइल अशोक आम आदि के फूलों को तोड़ रही थी। वह शिशिकाल अर्थात् माघ फाल्गुन का समय था। उस समय में बन से अतिरिक्त नगर में होने वाले मनोहर मृग को श्रीजानकी जी देखीं। उस मृगा के सींग पुच्छ खुर भांति भांति के रत्नों के समान है, शरीर सोनेके रंगहै ओष्ठ और दांत चांदीके समान चमकीले हैं ऐसे अनोखे मृगा को जानकीजी विस्मय और स्नेह से देखने लगीं। उस माया रूपी रत्नमय मृगा को विस्मय पूर्वक जानकीजी देखने लगीं॥

बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥४३॥

पुष्प को तोड़ती हुई जानकी सोना और रत्न से निर्मित मृगा को देख कर सीताजी ने अपने पति और राम लक्ष्मण को इस प्रकार पुकारने लगीं, कि आर्यपुत्र! लक्ष्मण के सहित यहां आइये। स्त्रियों को पति का नाम लेना नहीं चाहिये इस कारण, जानकीजी आर्यपुत्र इस नाम से रामजी को पुकारी हैं, वैदेही से पुकारे गये राम लक्ष्मण उस स्थान पर आकर मायामय सुन्दर और मनोहर मृग को विस्मय से देखने लगे। राक्षस की शंका से उस मृग को देखकर विचार पूर्वक लक्ष्मणजी बोले, इस मृगा को मैं जानता हूं कि यह मायावी मारीच नाम का राक्षस मृगाका रूप धारण करके आया है, इस कपटी मृग को देखकर जंगली मृगा इधर उधर भागते हैं, इस पाप रूपी मृगा को रामजी ने बाण से मारा है, इस समय यह मायवी मारीच गंधर्वपुर के समान आपात मनोहर मृगा के रूप को धारण किया है, क्योंकि

इसप्रकार मृगका जगतमें आजतक सृष्टि नहीं हुई है इससे निश्चय इसको माया जानिये, इस प्रकार लक्ष्मणजी को कहते हुए सीताजीने लक्ष्मण जी को रोक कर बोली, हे आर्यपुत्र ! यह सुन्दर मृगा हमारे मन को हरण कर लिया है, इसको पकड़ लीजिये, इसका पालन पोषण करूंगी और यह मृगा हम लोगों को खेल के लिये होगा । इस आश्रम में अनेक उत्तम दर्शनके योग्य वस्तुओं को देखाहै कि कितने मृगा कितनी सुरगाय आदि हैं किन्तु सब जीवों में यह मृगा श्रेष्ठ है, नाना वर्ण के रत्न की शोभा के समान इसके शरीर की शोभा है, और देखिये यह अपने प्रकाश से इस वन को प्रकाशित किये है, यह चित्र विचित्रांग मृगा हमारे मन को चुरा लिया है, यदि आप जीता हुआ इस मगा को हमारे लिये देवेगें तो एक महान् आश्चर्य होगा, क्योंकि यह मृगा हृदय में विस्मय को उत्पन्न करता है और जब हम लोग वनवास को समाप्त करके अयोध्यापुरी को चलेंगें तब हम लोगों को आनन्द देनेके लिये यह मृगा होगा और यह आर्य पुत्र भरत तथा हमारी सास लोग इस मृगा को विस्मय पूर्वक देखेंगी । यदि जीता हुआ यह मृगा न मिले तो इसका चर्म हमारे लिये अवश्य मिलना चाहिये वही हमको मनोहर होगा, आप मृगाके चमड़े को हमें देवेंगे तो यही तृण शय्याके ऊपर इस मृग चर्म को बिछा कर आपके साथ विहार करूँगी । तरुण सूर्य के समान शरीर को धारण करने वाले मृग को रामजी विस्मय से देखने लगे और विचार करने लगे कि पति के सन्मुख स्त्रियों की याचना गरीबसी है इस लिये अनुचित भी इस मृगा को वध करना चाहिये । सीताजीके इस प्रकार बचनको सुन कर और अपने स्वर्ण मृगा के रूप को देख कर सीता से प्रेरित राम लक्ष्मणजीसे बोले । हे लक्ष्मणजी ! वैदेहीको देखो यह इस मृगा के रूप पर मोहित होकर इसके लिये स्पृहा करती है, यह मृगा सर्व श्रेष्ठ भी है तो इस मृगा का जीवन आज से आगे न होगा अर्थात् मैं इस मृग का बध करूंगा । ऐसा मृगा देव लोकमें भी नहीं है पृथ्वी में इसके समान

मृग होना कठिन है, हे लक्ष्मणजी! देखो इसके शरीर के प्रति रोम के ऊपर कनक की दाग की शोभा कैसी विचित्र मालूम होती है, ऐसे सुन्दर मृगा को देखकर किसका मन चञ्चल नहीं होजायगा, सुन्दर सोने के समान इस मृगा के शरीर को और रत्न मय इस के सींग और पुच्छ को देख कर किस के मन में विस्मय नहीं होगा, हे लक्ष्मणजी! महा बन में मांस के कारण मृगा आदि जन्तुओं को मार कर राजा लोग धन भी इकट्ठा करते हैं, यहां पर रामचन्द्रजी व्यंग्य कहते हैं उसे राक्षस जान कर उस को मारने के लिये लक्ष्मणजी से कूट व्यवहार करते हैं नहीं तो निमेष मात्र में जिस को सृष्टि पालन नाश करने की सामर्थ्य है उसे धन और मृगा पर क्यों लोभ होगा। हे लक्ष्मणजी! बन में अनेकधातु मणि सुवर्ण रत्न आदि होते हैं मृगा आदि जन्तुओं को मारने के बहाने से राजा लोग लाभ करते हैं, राजों को कोश का संचय करना धर्म है यदि कहो कि धन का संग्रह बिचार करके करना चाहिये, तो अर्थ को चाहने वाला पुरुष बिना बिचारे भी कार्य को करता है, इस स्वर्णमय मृग को मेरे सहित जानकीजी इच्छा करती हैं अर्थात् मैं भी इस मृगा को चाहता हूं। इस मृग के स्पर्श के बराबर और किसी के रोमस्पर्श का सुख नहीं होगा। एक तो आकाश में मृगशिरा नक्षत्र मृगा रूप से उदय होकर आकाश मण्डल को शोभित करता है दूसरा यह मृग पृथिवी को शोभित कर रहा है, हे लक्ष्मणजी! आप कहते हैं कि यह मृगा नहीं है मायावी राक्षस है तो भी हमारे को बध करने योग्य है क्यों कि मैंने राक्षसों को बध करने की प्रतिज्ञा की है, यह हिंसक और निर्दय मारीच एक समय और जन स्थान में आकर मुनियों का बध किया था उस समय मैंने अपने बाण से इस का प्राण न मार कर जन स्थान से अतिरिक्त कर दिया था, अब इस समय यह अवश्य मारने योग्य है, जैसा कि पहिले इस दण्डकबन में वातापि नाम राक्षस मुनियों की यहाँ तक हिंसा करता था कि गर्भ

में भी ब्राह्मणों के बालक नहीं जीवते थे, उस वातापि को एक समय श्राद्ध में अगस्त्य मुनि भोजन कर गये, तब श्राद्ध के अन्त में वातापि थोड़ा हँस कर बोला कि हम को अपने उदर से बाहर करदो वातापि के बचन को सुनकर ब्राह्मणों को विस्मय हुआ कि बिना अपना उदर फाड़े वातापि निकल नहीं सकता, ब्राह्मणों के दुःख को देखकर अगस्त्यमुनि बोले हे वातापि ! तुमने बिना बिचार किये जो ब्राह्मणों का पाप किया है उस पाप से ब्राह्मणों के तेज से तुम ब्राह्मणों के उदर में परिपक्व होजाओ अब तुम्हारा नाम नहीं रहेगा, अगस्त्यजी के बचन से वह राक्षस ब्राह्मणों के हृदय में जलकर भस्म होगया। जो यह मारीच हमारे समान पुरुष को अतिक्रमण करना चाहता है तो वातापि और उग्र अगस्त्य के समान इसका नाश करूंगा तुम जानकीजी की रक्षा करो और आगे हमको जो कुछ आवश्यक कर्तव्य है वह इसी राक्षस के अधीन है, अर्थात् परिवार सहित रावण के बध की सूचना रामजी इस बचन से देते हैं। हे लक्ष्मण ! जब तक मैं इस मृगा को अथवा इसके चर्म को लेकर न आवें तब तक मृगा की इच्छा करने वाली जानकी कि तुम रक्षा करो। हे लक्ष्मणजी ! देखो आज तक ऐसे मनोहर चमड़े का मृग नहीं देखा गया है, हे लक्ष्मण ! आप निरालस्य होकर आश्रम में अस्थ सीताकी रक्षा करना। हम एक बाण से इस मृगा को मार कर इसके चर्म को लेकर शीघ्र आऊंगा। आप और महाबली तथा परम बुद्धिमान जटायु इन सीता की शंका युक्त रक्षा करना ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्य काण्डे त्रिचत्वरिंशः सर्गः ॥ ४३ ॥

इस प्रकार रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से कह कर सोनेकी मुठिया से विभूषित एक तलवार और अपने धारण करने के योग्य ओजस्वी तीन बाण को तथा तूणीर को लेकर रामचन्द्रजी मृगा के पीछे चले। श्रीरामचन्द्रजी को धनुषबाण लिये आते देख कर मृगाओं का राजा मायावी राक्षस मारीच रामजी के भय से कूद कर एकान्त बन में

चलागया, रामचन्द्रजी भी धनुष को लेकर जिधर मृगा चला उधर अपने भी दौड़ते हुए चले, कभी वह मृगा अति दूर निकल जाता कभी रामचन्द्रजी के समीप आजाता कभी वृक्षों की झाड़ियों में इस प्रकार छिप जाता जैसे बद्दलों के बीच में चन्द्रमा छिप जाते हैं इस प्रकार फलांगता हुआ रामचन्द्रजी को अति दूर लिवाले गया, तब आश्रम से अतिदूर पर जाकर रामचन्द्रजो क्रोध पूर्वक एक वेतवृक्ष की छाया के नीचे बैठगये, तब वह मृगा रामचन्द्रजी के उन्माद देने के लिये मृगाओं के झुंड में होकर रामचन्द्रजी के समीप में आगया, रामचन्द्रजी उस उत्तम मृग को नगीच में देखकर प्रेम से उसे पकड़ ने का प्रयत्न किये, तब वह माया रूपी मृगा क्षण भर में बहुत दूर निकल गया। फिर लौटकर वृक्षों के अन्तर से रामजी के समीप आगया, रामजी उस मृगा के चरित्र को देखकर उसे मारने का निश्चय किये, फिर जब मृगा कूद कर रामजी के नगीच में आया तब रामजी पुंख से बाण को निकाल कर मृग के हृदय में मारे, बाण के लगते ही मारीच कूद कर महा भयंकर शब्द किया, इस के उपरान्त मृगा की शरीर को छोड़ कर राक्षस का देह होगया, और रावण के बचन को सोचकर रामजी के समान हालक्ष्मण हासीता यह कह कर चिल्लाने लगा। और मृग की शरीर त्याग करके राक्षस की शरीर हुआ पुनः रामचन्द्रजी को देखकर अपनी विशाल शरीर को त्याग किया, रामचन्द्रजी भयानक शरीर से राक्षस को पृथिवी में पतित देखकर लक्ष्मणजी के बचन को रामचन्द्रजी स्मरण किये कि पहिले लक्ष्मण ने कहा है कि यह मृगा नहीं है मायावी मारीच नाम का राक्षस है बन में कुछ उत्पात विशेष करने के लिये आया है यह वही मारीच राक्षस है जिसको आज मैंने मारा है, किन्तु मरने के समय इस राक्षस ने सीता और लक्ष्मण का नाम पुकारा है इसके पुकार को सुनकर देखें सीताजी लक्ष्मण को भेजती हैं अथवा हमारे पराक्रम को जान कर गंभीरताई से बैठ रहती हैं इस प्रकार की चिन्ता से धर्मात्मा रामजी को रोमाञ्च होगया,

और राक्षस रूपी मृगा को मार कर तथा उसके चिल्लाने अर्थात् लक्ष्मण सीता इत्यादि नाम पुकारने को सुनकर रामजी को महा विषाद हुआ। तौभी मृगा के चर्म और मांस को लेकर शीघ्र जन स्थान की ओर चले॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे चतुश्चत्वारिंशः सर्गः॥ ४४॥

बन में राक्षस के आर्तनाद को सुनकर सीताजी ने रामजी के शब्द को जान कर लक्ष्मणजी से बोलीं हे लक्ष्मणजी! यह आर्तनाद राघव का हुआ है आप शीघ्र जाइये, रामचन्द्रजी के इस दुःखित शब्द को सुनकर हमारा जीवन शरीर में नहीं रह सकता है, हृदय चंचल हो गया है, हे लक्ष्मणजी! रामजी को दुःख में देखकर आप शीघ्र जाइये और उनकी रक्षा कीजिये, आपको जो रामजी कहे हैं कि आश्रम में सीता की रक्षा करना, इस बात को विचार करके, आश्रम से बाहर रामजी के समीप आप को नहीं जाना उचित नहीं है। जैसे सिंह के गोद में पड़कर गौ चिल्लता है वैसे राक्षसों के अधीन होकर रामजी दुःख मय शब्द से हम को और आप को स्मरण किये हैं आप शीघ्र जाइये। ऐसा कह कर क्षोभ से जानकीजी फिर बोलीं, हे सुमित्रा के पुत्र लक्ष्मण! तुम भाई के रूप में शत्रु जान पड़ते हो जो भाई के दुःख की अवस्था में सहायता नहीं करते हो, तुम भाई का स्नेह नहीं करते हो बल्कि हमारे लोभ से तुम हमारी रक्षा करते हो कि रामचन्द्रजी को कोई राक्षस नाश करें तो मैं जानकी के साथ विहार करूंगा इस इच्छा से मौन धारण किये हो क्या? यदि यह कहो कि रामचन्द्रजी तुम्हारी रक्षा करने के लिये हमको स्थित किया है फिर तुमको छोड़ कर मैं किस प्रकार जाऊं तो रामचन्द्रजी के बिना तुम्हारी रक्षा से जीवना क्या होगा, उनसे रहित होकर चाहे जिस किसी प्रकार से हो मरना श्रेष्ठ है, चाहे राक्षस से हो चाहे किसी जंगली जीवों से चाहे अग्नि में प्रवेश करने से हो मरना ही श्रेष्ठ है क्योंकि सब जगह उत्पति पालन नाश में मैं रामजी की साथी हूं इस बचन से सीताजी अपने को आघात

सूचन करती हैं। रामजी के शोक में रोती हुई जानकी जी के इस प्रकार बचन को सुनकर लक्ष्मणजी बोले, हे वैदेही! देवता दैत्य राक्षस गन्धर्व पन्नग आदि में किसी को ऐसी सामर्थ्य नहीं है जो रामचन्द्रजी को जीतने सके, हे देवि! इन्द्र के समान पराक्रमी रामजी रणमें अवध्य हैं। देवता मनुष्य गंधर्व पक्षी राक्षस पिशाच किन्नर मृग दानव आदि कोई रणमें रामजीका सामना नहीं कर सकते हैं बड़े बड़े सूरवीरों के मध्य में रामजी अत्यन्त पराक्रमी हैं, रामजी के विषय तुमको सन्ताप नहीं करना चाहिये, और मैं विना रामचन्द्रजीको आश्रम में आये तुमको छोड़कर जा नहीं सकता हूं, तुम अपने मनके विषाद को छोड़ो। तुम्हारे स्वामी रामजी उस उत्तम मृगा को मार कर शीघ्र आते हैं और जो शब्दको सुनकर तुम्हें क्षोभ हुआहै वह शब्द रामजी का नहीं है वह मृगारुपी मायावी राक्षस हम लोगों को बंचना करनेके लिये वह आर्तनाद किया है, और महात्मा रामचंद्रजीने प्रति निधिके अस्थान पर तुम्हारी रक्षाके वास्ते मुझे नियुक्त किया है, इस लिये तुमको छोड़कर मैं नहीं जा सकता हूं? इस जन स्थानमें रामजीने जो खरदूषण त्रिशिरा आदि अनेक राक्षसों का बध किया है उसी वैर से इस महा बन में हम लोगों को प्रतारण करने के लिये राक्षस अनेक प्रकार से बोलते हैं, क्योंकि साधुजन को पीड़ा देना यही दुष्टों का कर्म है, इसलिये तुम रामजी की चिन्ता मत करो। लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर क्रोध पूर्वक सत्यवादी लक्ष्मण से बोलीं, हे कुल में कलंक देने वाला! रामचन्द्रजी को दुःख में हमारी रक्षा के छलसेतू नहीं जाता है, रामचन्द्रजी की विपत्ति तुमको प्रिय है. क्योंकि उनको दुःखी देखकर तुम इस प्रकार कहने समर्थ नहीं हो कि हम यहां बैठकर तुम्हारी रक्षा करते हैं। तुम्हारे समान निर्दयी और कपटी दायाद को इस प्रकार का व्यवहार करना कुछ कठिन नहीं है, सदा से तुम्हारा दुष्ट हृदय है, तुम और भरतजी यही चाहते हो, कि किसी प्रकार रामजी का नाश हो तो सीता को पाकर सुख भोग

करूं परन्तु। हे लक्ष्मण ! तुम्हारी और भरत की कामना सिद्ध नहीं हो सकैगी, श्यामवर्ण कमल नयन रामजी को छोड़कर दूसरे पुरुष को नहीं देख सकती हूँ। हे लक्ष्मण ! देखो मैं तुम्हारे सामने अपना प्राण देती हूँ, इस सन्सार में राम के बिना क्षण भर भी मैं नहीं जी सकती हूँ। इस प्रकार कठोर बचन लक्ष्मण जी को कह कर दुःख के मारे सीता जी को रोमांच हो गया। जितेन्द्रिय लक्ष्मण सीता को क्रोधित जानकर हाथ जोड़ बोले, हे मैथिली ! लोक में स्त्रियों का स्वभाव ऐसा ही चपल होता है, इस प्रकार कठोर बचन का कहना स्त्रियों के लिये कठिन नहीं है। स्त्रियों में कुछ भी धर्म नहीं है, और चपला स्त्रियां सदा पिता पुत्र और भाईमें भेद करादेती हैं, हे बैदेही ! तुमारे इस कठोर बचन को मैं नहीं सह सकता, हमारे और तुमारे बात के बीचकेसाक्षी इस बन के बन देवता हैं, हमको जो कुछ कठोर बचन आपने कहा हैं उसको हमने भली भाँ ति श्रवण किया हैं, यदि हमारे भीतर तुमारे कहने के अनुसार कुछ भी दुर्भाव होवेतो उस दोष से आज हमारा क्षय होजावे। मैंने तो ज्येष्ठ भाई के नियोग परस्थित हैं, और तुम स्त्री के दुष्टस्वभाव से जो कुछ कहा है उसको सुनकर मैं रामचद्रजी के खोज में जाता हूं। तुम्हारा कल्याण हो। इस समय इस बनके बन देवता तुम्हारी रक्षा करें। हम रामचन्द्रजी के सहित आकर पुनः तुम को देखेंगे। इस प्रकार लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर रोती हुई जानकी तीव्र आँसू की धारा को बहाती हुई पुनः बोलीं, हे लक्ष्मण ! रामचन्द्र से हीन मैं गोदावरी नदी में डूब जाऊँगी अथवा फांसी लगाकर मरूंगी या विषम ऊँचेस्थान से गिरकर अपना प्रान नाश करूंगी, या विषको खाकर प्राण को नाश करूंगी। अथवा अग्नि में प्रवेश करूंगी। [इस वचन से जानकी जी यह सूचित करती हैं कि मैं इस शरीर से रावण के गृह को नहीं जाऊँगी किन्तु अपने प्रकृत स्वरूप को अग्निमें समर्पण करके माया के स्वरूप को धारण करके राक्षसों के विनाश के लिये रावण के गृह में निवास करूंगी] यह कथा पद्म पुराण में विस्तार से है। रामचन्द्र से

अतिरिक्त मैं दूसरे पुरुष का स्पर्श नहीं करूंगी। इस प्रकार अपनी प्रतिज्ञा को लक्ष्मण से कह कर दुःख के मारे रोदन करती हुई अपने उदर में हाथ से पीटा, इससे यह विज्ञापन किया कि समस्त राक्षसों के मरण से हमारे उस उदर की पूर्ति होगी। दुःख से रोती हुई जानकी को व्याकुल देखकर लोक व्यवहार से धैर्य देकर मौन होगये, और श्रीजानकीजी को मनसे साष्टाङ्ग दण्डवत करके काय से सहज प्रणाम करके बार बार जानकी जी कोदेखते हुए रामचन्द्रजी के समीप चले।
इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्य काण्डे पंचतत्वारिंशः सर्गः ॥ ४५ ॥

श्रीजानकीजी के बचन से कुपित लक्ष्मण रामजी की यह शंका अपने हृदय में रखते हुए कि मैंने जानकी की रक्षा के लिये तुमे नियुक्त किये थे उनको छोड़कर तुम क्यों चले आये, इस प्रकार की शंका से युक्त आश्रमस्थ सीता को उलट २ देखते शीघ्र रामजी की ओर चले। लक्ष्मण और आश्रम का जब अन्त होगया तब अवकाश को देखकर रावण आया, और संन्यासी के स्वरूप में वैदेही के समीप प्राप्त होगया। रक्त वस्त्र को धारण किये शिखा सूत्र छत्र उपानह (जूता) को धारण किये बायें कन्धे पर कमण्डलू को लगाये हाथ में छड़ी लिये संन्यासी के स्वरूप में वैदेही के सन्मुख आया। सूर्यचन्द्रमा से रहित रात्रि के समान यशस्विनी राजकुमारी को देखा, जैसे चन्द्रमा देखकर ग्रहण कर लेता है वैसे उग्र पाप को करने की इच्छा करने वाला रावण श्रीजानकीजी को ग्रहण करने की इच्छा किया। इधर गोदावरी नदी के उधर श्रीरामजी के भय से छिपकर धीरे धीरे रावण रामजी के कुटी के पास पहुंचा। जानकीजी रामजी की चिन्ता में मग्न हैं कि देखें राक्षस को मारकर रामजी कब आते हैं तब भिक्षुक रावण जानकी जी के द्वार पर इस प्रकार जैसे सनीचर चित्रानक्षत्र पर आक्रमण करते हैं, रावण वहां पहुंच कर चन्द्रमुखी महा सुन्दरी रामजी की स्त्री जानकी को शोक की चिन्ता में रोती हुई देखकर कमल नयनी चन्द्रवदनी जानकी को देखकर

प्रसन्न हृदय से रावण उन्हे देखकर काम बाण से पीडित होता हुआ बेद युक्त बचन को बिनय पूर्वक बोला, स्वर्ण के समान सुन्दर शरीर आप काहे पीताम्बर को धारण किये हो कमल पुष्प की माला अर्थात अनेक वर्ण के रत्नों की माला कमल पुष्प के समान माला को धारण किये हो ही श्री कीर्ति और लक्ष्मी के समान हो वा अप्सरा हो अथवा साक्षात् कामदेवी की पत्नी रति हो । तुम्हारे दांत अत्यन्त मनोहर हैं, लाल कमल दल के समान नेत्रकी शोभा बिचित्र हैं, हाथी के सूंड के समान तुम्हारी जंघा है । मोटा और ऊंचा ताल फलके समान तुमारे स्तन हैं, तुमारा सुन्दर मुसकाना है । देवता गंधर्व किन्नर आदि की स्त्रियों में तुम नहीं जान पड़ती हो, तुमारे समान सुन्दरी आजतक मैंने संसार में नहीं देखा है । रूपमे सौन्दर्य और अवस्था में तुम एक हो, इसघोर बनमें का तुमारा वास यह चारो हमारे हृदय को क्षुभित करता है, तुम यहां रहने के योग्य नहीं हो तुम यहां से हमारे साथ चलो, वहां तुमको सुन्दर अट्टालिका युक्त हर्म्य (गृह) रहने को और सुन्दर माल्य गंध श्रेष्ठ वस्त्र तथा अनेक धन रत्न उपभोग करने को मिलेंगे । और तुमारे इच्छा के अनुकूल महा पराक्रमी पति मिलेंगे, क्या तुम रुद्र लोगों की स्त्री हो वा पवन देवता की अथवा अष्ट वसुओं की स्त्री हो, क्योंकि इस वनमें राक्षस रहते हैं, तुम यहां कैसे रहती हो । इस वनमें मृगा सिंह व्याघ्र भालू बन्दर वृक कंक आदि अनेक भयंकर जन्तु रहते हैं, क्या तुमको उन जन्तुओं का भय नहीं होता । इस वनमें अनेक मतवाले हाथी निवास करते हैं, उनके सहित तुम कैसे वनमें निवास करती हो क्या तुमको भय नहीं होता है हे भामिनी ! तुम कौनहो किसकी स्त्री हो और किसकारण इस दण्डक वनमें अकेली रहती हो, यहां तो अनेक राक्षस रहते हैं इस प्रकार रावणने सीताजी की प्रशंसा किया, इसके उपरान्त जानकी जी ब्राह्मण के वेष में आये हुए रावण को देखकर जानकी जी ने अतिथि को देने योग्य वस्तुओंसे पूजाकिया इसके उपरान्त वनके

फल पुष्प से रावण को भोजन दिया, द्वारपर आये जैसा ब्राह्मण का सत्कार होता है वैसा सत्कार त्रिदण्डी के वेषको धारण किये रावण का जानकीजी ने किया, रावण पूजा को ग्रहण करके भी बलात्कार से जानकी को हरण करने को अपने मनमें रावण ने निश्चय करके मृग के पीछे गये हुए राम लक्ष्मण को चारो ओर देखने लगा ॥

इति वाल्मीकिये रामायण अरण्यकाण्डे षट्चत्वारिंशं सर्गः ॥४६॥

रावण से पूंछी गई वैदेही अपने वृत्तान्त को कहने लगीं कि मैं महात्मा जनक की कन्या सीता हमारा नाम है मैं अयोध्या पुरी के राजा महाराज दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र रामजी की स्त्री हूं। मैं अनेक प्रकार के सुख भोगते सम्पन्न होकर बारहवर्ष तक महाराज दशरथ के भवनमें वास किये, तेरहें वर्ष के आरम्भ में महाराज दशरथ मन्त्रियों के साथ हमारे पति को अभिषेक देने कि इच्छा किये, अभिषेक महोत्सव को देखकर हमारी कनिष्ठ सासु केकयी महाराज दशरथ से वरदान की प्रार्थना किये, वरदान के छलसे केकयी ने महाराज को अपने अधीन में करके दो वरदान मांगे हमको बनवास और भरतको अभिषेक यह दो वरदान मांगकर सप्त प्रतीज्ञा राजा से केकयी ने यह कहा कि न हम भोजन करूंगी न पान और न शयन करूंगी, यदि रामचन्द्रको अभिषेक होगा तो मैं अपना प्राण नाश करूंगी। केकयी के इस प्रकार वचन को सुनकर महाराज ने कहाकि तुमारे लिये सकल उत्तम वस्तुओं को मैं देऊंगा परन्तु तुम रामजी के अभिषेक में विघ्न न करो। इस प्रकार महाराज से न कुछ याचना किया और केकयी नें न तो अंगीकार किया। हमारे पति सवादी धर्मात्मा शील सम्पन्न लोकके मंगल को चाहने वाले रामचन्द्रजी की उस समय पचीस वर्ष की अवस्था थी। केकयी को चाहने वाले महाराज दशरथ केकयी की प्रियकामना के लिये रामचन्द्रजी को अभिषेक नहीं दिया, अभिषेक के लिये रामचन्द्रजी पिता के समीप आये, तब रामजी को देखकर केकयी ने रामजी से शीघ्र बोली कि तुमारे पिता तुम्हे आज्ञा देते है कि तुम चौदह वर्ष पर्यन्त

वनवास करो और यह अकंटक राज्य भरथ को दिया गया है, इस कारण हेरामचन्द्रजी ! पिताको ऋणसें छुड़ाने के लिये वनको जाओ । केकयी के इस प्रकार वचन को सुनकर पिताके वचन को पालन करने के लिये सत्यवादी दृढव्रत राम इस उत्तम व्रत को धारण करके बनवास के लिये आये हैं और उन्हीं के समान व्रतधारी सत्यवादी और पराक्रमी लक्ष्मण नाम उनके वैमात्र भाई जटाचीर को धारण करके रामजी की सहायता के लिये उनके साथ वन में आये हैं, वह रामचन्द्र केकयी के कारण राज्य से भ्रष्ट होकर इस गंभीरवन में निवास करते हैं उनकी मैं प्रियभार्या हूं । हे ब्राह्मण देवता ! यदि तुमको कुछ अवकाश होतो कुछ देर यहां विश्राम कीजिये, हमारे पति लक्ष्मण के सहित उत्तम पशुओं के मांस को तथा बनके फल पुष्प को लेकर शीघ्र आवेंगे । हे द्विजराज तुमभी अपना नामगोत्र और अकेले इस वनमें घूमने का कारण कहो। रामपत्नी जानकी जी के इसप्रकार बचन को सुनकर रावण बोले, हे सीते ? देवता और असुरों को भय देनेवाला राक्षसों का राजा मैं रावण हूं । अपनी स्त्रियों में रत्ति का आनन्द न पाकर महा सुन्दरी तुमको देख और सुनकर यहां आया हूं, मैं इधर उधर से अनेक उत्तमास्त्रियों को हरण करके अपनी यहां लाया हूं, उन सब स्त्रियों में तुम श्रेष्ठ होकर हमारी अग्रमहिषी होओ । समुद्र के मध्यमें लंका नामकी हमारी महापुरी है, उस पुरीके चारोओर समुद्र है, त्रिकूट पर्वत पर वहपुरी बसी है । हे सीते तुमवहां चलकर हमारे साथ उपवन में विहार करो, यह बनवास तुम्हारे योग्य नहीं है, हे भामिनि ! यदि तुम हमारी भार्या होओगी तो भूषण वस्त्र से अलंकृत होकर पांचहजार दासी तुमारी सेवा करैंगी । रावण के इसप्रकार बचन को सुनकर क्रोधितहो जानकीजी बोलीं, कि पर्वत के समान धीर और समुद्र के समान गंभीर रामचन्द्रजी की मैं स्त्री हूं सर्व उत्तम लक्षण से सम्पन्न संसार के आधार सत्यवादी महाभाग रामकी मैं पत्नी हूं । सिंह के समान पराक्रमी महाबाहु हिरण्यकश्यप को नाश करने वाले नृसिंह

के समान रामकी मैं पत्नी हूं। पूर्णचन्द्रमा के समान मुखवाले जितेन्द्रिय कीर्तिमान रामकी मैं पत्नी हूं। हे राक्षस! सिंहकी स्त्री सिंहनी को जैसे जंबुक (सियार) नहीं स्पर्श करसकता वैसे तुम्हारी सामर्थ्य नहीं है जो रामजी की पराक्रम को सह सके। हे मूढ़? अल्पायु? तूने निश्चय स्वप्नमें सोनेके वृक्ष को देखा है जो तूं रामचन्द्रजी की प्रियभार्या की इच्छा करता है। जैसे मृगा सोते हुए सिंह के मुखमें गिरकर नाश होता है अथवा जैसे कोई विषधर सर्पके मुख में हाथ डालकर नाशहोता है सोई गति तुम्हारी है। तुमतो श्रेष्ठमन्दराचलपर्वत को हाथसे हरण करनेकी इच्छा करते हो, जाओ कालकूट विष को पीकर कुशलता से अपने नगर में जानेकी इच्छा करतेहो, जैसेकोई प्रज्वलित अग्निको देखकर वस्त्र से हरण करनेकी इच्छा करता है वैसे तुमने रामकी प्रियभार्या को अपने लंकामें ले चलने की इच्छाकरते हो तुमतो गले में पत्थलकी चट्टानको बाँधकर तैरकर समुद्रको पार करने की इच्छा करतेहो अथवा सूर्य चन्द्रमा को हाथसे अपने आधीन करना चाहतेहो जो कल्याणवत्त रामकी प्रियभार्या को अपने आधीन रखना चाहते हो, हे राक्षस! जो अन्तर शीशा लोहा और सोनेका होता है जो अन्तर चन्दन और कीचड़ से है जो अन्तर हाथी और बिडाल से है वही अन्तर तुमरा और रामजीका है। जो अंतर सिंह और सियार का है जो अंतर गड़हिया और समुद्र का है जो अंतर अमृत और मद्य से है वही अंतर तुमसे रामजी का जो अंतर है काग और गरूड़ का है जो अन्तर मद्गु और मयूर का है जो अन्तर बन में हँस और गृध्र का है वही अन्तर तुम्हारा और रामजी का है, इन्द्र के समान प्रभावशाली धनुषबाण को धारण करने वाले रामजी को रहते हुए घी में रहने वाले कीड़ेके समान तुम्हारे को नाश करेंगे। वह राक्षस रावण जानकीजी के बचन को सुनकर इस प्रकार कांपने लगा जैसे वायू के चलने से केला का वृक्ष हिलता है॥

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे सप्तचत्वारिंशः सर्गः॥ ४७॥

इस प्रकार सीताजी के कठोर वचन को सुनकर भौंह का टेढा करके अपनी बड़ाई के सहित रावण बोला, हेसीते! मैं कुबेर का दामाद हूं, मेरा नाम रावण है। मृत्यु के समान हमारे नाम को सुनकर देवता गंधर्व यक्ष किन्नर पतंग उरग आदि भय से अपना प्राण लेकर सदा भाग जाते हैं, वैमात्र के कारण क्रोध पूर्वक उन कुबेर के साथ युद्ध में उन को जीत लिया, तब यह हमारे भय से अपनी पुरी को छोड़कर कैलाश पर्वत पर रहते हैं, मैंने अपने पराक्रम से कुबेर के पुष्पक विमान को जीत लिया है जिस विमान पर बैठकर आकाश मार्ग में गमन और विहार करते हैं, हमारे क्रोध के लक्ष्य को देखकर इन्द्रादिक देवता भय से अपना स्थान छोड़कर भाग जाते हैं जहां मैं रहता हूं वहां शंका के सहित वायू चलता है और सूर्य चन्द्रमा हमारे भय से सदा लंकापुरी में रहते हैं, हे सीते! जहां मैं निवास करता हूं अथवा विहार करता हूं वहां वृक्षों के पत्ते नहीं हिलते नदियों का जल शान्त भाव से अर्थात् निःशब्द होकर वहता है, समुद्र के पार में हमारी लंका नाम की पुरी है वह पुरी घोर राक्षसों से इस प्रकार परिपूर्ण है जैसे देवतों से परिपूर्ण इन्द्र की अमरावती है, वह लंकापुरी प्राकार (खांई) से युक्त है चान्दी के समान अत्यन्त उज्वल है सोने के फाटक बने हैं उन फाटकों पर वैदूर्यमणि के तोरण बंधे हैं, हाथी घोड़ा रथ आदि से वह संपन्न है अनेक प्रकार के बाजों के शब्द से वह सदा निनादित रहती है, सब प्रकार के फल को देने वाले वृक्ष वहां बगीचों में लगे हैं इसलिये हे राजपुत्री! तुम वहां चल कर मेरे साथ विहार करो, और मनुष्य को भोग करने योग्य वस्तुओं का भोग करो, राज्य से च्युत मनुष्य राम के साथ रहने योग्य तुम नहीं हो, देखो प्रिय पुत्र भरत को दशरथ ने राज्य दिया और ज्येष्ठ पुत्र निर्बल राम को बन में छोड़ दिया तो राज्य भ्रष्ठ तापस राम से तुम को क्या सुख लाभ होगा, इस कारण स्वयम आये हुए राक्षसों के राजा रावण को अपना पति बनाओ, काम से पिडित को छोड़ने के योग्य तुम नहीं हो, जैसे

पुरुरवा को जाने पर उर्वशी अप्सरा को सन्ताप हुआ वैसे हमारे प्रत्याख्यान से तुमको भी सन्ताप होगा! और रामके युद्ध में हमारे अंगुली के बल के बराबर भी बल राम में नहीं है, मैं तुम्हारे भाग्य से आयाहूं इसीते तुम मुझ को अंगीकार करो। इस प्रकार रावण के वचन को सुनकर क्रोध से आंखों को रक्त कर के कठोर बचन से जानकीजी बोली, सब देवतों में श्रेष्ठ कुबेर के भाई तुम कैसे हो सकते हो, जो रामजी से रहित आश्रम में आकर इस प्रकार का अशुभ कर्म करना चाहते हो इस कर्म से राक्षसों के सहित तुम्हारा अवश्य नाश होगा। रामकी स्त्री को ले चलने में तुम्हारा कल्याण नहीं है॥

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे अष्टचत्वारिंशं शर्गः॥ ४८॥

श्री जानकी जी के कठोर बचन को सुनकर महा प्रतापी दशानन अपने दोनों हाथों को मलकर अपनी राक्षसी शरीर को दिखलाने का विचार किया, और जानकीजी से फिर बोला कि क्या तू मेरे पराक्रमी संग्राम में अपने अस्त्र से नाश करूं, सूर्य को अपने बाँण से टूकड़ा क दूं, तूं कामकी चेष्टा से मुझ काम रुपी राक्षसको देखो। ऐसा कह कर क्रोधसे रावण के नेत्र लाल होगये और वह रावण भीषक की शरीर को छोड़कर कालके समान अपने निज रुप को धारण किया। दशमुख और बीस भुजा तथा काले मेघ के समान काली विशाल शरीर रक्तवस्त्र को धारण करके जानकीजी को देखा, सूर्यकी प्रभाके समान कान्ति युक्त वस्त्र और भूषण को धारण किये जानकीजी से रावण बोला, हे सीते! तीनो लोक में विख्यात पति यदि करना चाहती हो तो अंगीकार करो मैं तुमारे योग्य हूं। हमको स्वीकार करने से कोई भी तुमारा अपमान नहीं करैगा। दरिद्र रामकी इच्छा न करके हमे अपने अनुकूल जानकर स्वीकार करो। राम में कौन ऐसे उत्तम गुण हैं जिससे उनके साथ तुमारा संबंध है देखो राम तो स्त्रीके (कैकयी) वचन को सुनकर राज्य आदिको छोड़कर वह मूढ राम इस दुर्गम बन में निवास करता है, उसको श्रेष्ठ जानकर तुम क्यों

अकेली इस वन में रहती हो। दुरात्मा रावण इस प्रकार जानकीजी से कहकर उनके समीप में जाकर उनको इस प्रकार हरण किया जैसे आकाश में कामसे मोहित होकर बुध चन्द्रमाकी स्त्री रोहिणी को ग्रहण किया है, जानकीजी को ग्रहण करने के समय में पहिले छिपा हुआ मायामय रावण का रथ आगया। रावण जानकी को लेकर रथ पर बैठ कर अपने पुरीको चलने के लिये प्रस्तुत हुआ। महा भयंकर विशाल देह रावण की देखकर भयके मारे उस बन के बनदेवता जिधर तिधर भाग गये। रावण से हरी गई जानकी रामके स्नेह वियोग में विलाप करने लगी। हामहा बाहु लक्ष्मण रामजी के शोकको नाश करने वाले मैं राक्षसों की माया को न जानकर अपने जीवन के सुख के लिये और धर्मके कारण मैंने आपको भेजा है सो यह राक्षस अधर्म से मेरा हरण किया है मैंने कमल नयन रामजी के चन्द्रमुख को नहीं देखा, हे मूढ रावण तू अपने कल्याण को नहीं देखेगा, दुष्ट पुरुष बिना समय के अपने किये कर्मके फलको नहीं पाता है। हे रावण ? काल उपस्थित होनेपर रामके व्यसन (विरोध) से अपना प्राण दान करोगे, मैं इस बनमें आकर अकेली राक्षसों के हाथ हरी जातीहूं हमारे इस दुःख से अपनी सहेलियों के सहित कैकयी अवश्य प्रसन्न होवेंगी। हे जनस्थान के देवताओं वृक्ष आपलोग हमारे स्वामी रामजी से शीघ्र कह देना कि सीताको रावण हरलिया है, हे गोदावरी नदी और यहां के निवास करने वाले पक्षी हमारा समाचार रामजी से शीघ्र कह देना कि सीताको रावण हरलिया है। हे इस बनके ऋषिमुनि आपलोग भी हमारे वृत्तान्त को रामजी से शीघ्र कह देना कि सीताको रावण ने हरण किया है। हे इस बनके मृगा आदि जीव रावण से हरीगई सीताके बृत्तान्त को शीघ्र रामजी से कहदेना। और रामजी से कहदेना कि परलोक में भी पहुँची हुई जानकी को अपने पराक्रम से लेआवें इस प्रकार विलाप करती हुई विवशा सीता वृक्षपर बैठे हुए जटायु नाम के

गृध्र रामजी के परम मित्र को सीता ने देखा जटायु को देखकर रावण के वश में पड़ी सीता दुःख से चिल्ला कर बोलीं, हे जटायु! पापी इस राक्षस ने अनाथ के समान मुझे हरण किये जा रहा है, तुम इस राक्षस को वारण नहीं कर सकतेहो क्यों कि इसके पास अस्त्र है, जब रामचन्द्र और लक्ष्मणजी आवें तब हमारा वृत्तान्त उनसे कह देना॥ इति वाल्मीकीये रामायणे अरण्यकाण्डे एकोनपंचाश सर्गः॥ ४९॥

भोजन के उत्तर शयन किये जटायु जानकीजी के शब्द को सुनकर नीचे देखे तो जानकी को रथ पर लिये रावण जारहा है। इसके उपरान्त पक्षियों में श्रेष्ठ जटायु पर्वत के समान चोंच पंख को धारण करने वाले वृक्ष पर से बोले, हे दशानन! धर्म को पालन करने वाले सत्यप्रतिज्ञ रामजी के इस प्रकार निन्दनीय कर्म करना तुमको उचित नहीं है, मैं अत्यन्त बलवान जटायु नाम का गृध्र हूं इन्द्र व वरुण के समान सब लोक के राजा और लोक की रक्षा करने वाले दशरथ के पुत्र रामचन्द्रजी की यह सीता धर्म पत्नी हैं, स्त्रियों में उत्तमा पतिव्रता सीता को हरण करने की जो तूने इच्छा किया है यह तुम्हारे समान राजाओं को धर्म नहीं है, हे रावण! तुम राजा होकर पराई स्त्री को स्पर्श करते हो, राजाओं की स्त्रियां विशेष करके रक्षा करने योग्य होती हैं, पराई स्त्री का स्पर्श महा नीच कर्म है इस नीच कर्म को तुम छोड़दो। जैसी अपनी स्त्री वैसी दूसरे की स्त्री को जानकर सीता को छोड़दो। शास्त्र में यह स्फुट है कि जैसा राजा का व्यवहार होता है प्रजा भी वैसा व्यवहार करती है इस धर्म वचन के अनुसार पराई स्त्री से राजा को अवश्य बचना चाहिये। इस प्रकार राजधर्म से हीन तुमको कभी ऐश्वर्य का लाभ नहीं होगा। यदि महाबली रामजी तुम्हारा कुछ भी अपकार नहीं किया है तो तुम उनका अपकार क्यों करते हो। यदि कहो कि सूर्पनखा की सहायता के लिये आये हुए खरदूषण आदि राक्षसों को रामने मारा है उस पूर्व विरोध से हम इस दुराचार को करते हैं, तो अपने मनकी बात ठीक कहो, कि रामचन्द्रजी

ने तेरा क्या अपराध किया है जिस कारण उनकी प्राण प्रिया का तूने हरण किया है । हे रावण ! तुम शीघ्र जानकी को छोड़दो नहीं तो मैं अपने कठोर ठोर से इस प्रकार तेरे बदन पर आघात करूंगा जैसे इन्द्र अपने वज्र से दैत्यों को नाश करता है हमारे सन्मुख से तू अपना जीवन लेकर भागजा नहीं अब तो जीता हुआ लंकापुरी को नहीं जायेगा । हे मित्र ! वही भार उठाना चाहिये जो अपने से चल सके और वही अन्न भोजन करना चाहिये जो पेट में पुराना होजावे । जिस काम के करने से धर्म यश और कीर्ति का नाश होजावे उस कर्म को करने से क्या फल है । हे रावण साठ हजार वर्ष हुए कि मैं अपने कुलके अनुसार पक्षियों का राजा होकर राज्य करता था, अब मैं वृद्ध हुआ हूं, और तुम धनुष बाण को लेकर रथ के सहित हो तौ भी हमारे मित्र दशरथ की पुत्र बधू को लेकर कुशलता पूर्वक नहीं जासकते हो, हे रावण ! यदि तुम शूर वीर हो तो हमारे साथ युद्ध करो जैसे रामजी ने अपने बाण से मारकर खर को भूमि में गिरा दिया वैसेही गति तुम्हारी होगी । क्षण भर ठहरो, मैं क्या करूं वे राजकुमार मृगा के पीछे दूर चले गये हैं, नहीं तो हे नीच शीघ्रही तुम्हारा नाश होता । जब तक हमारा जीवन रहैगा तब तक मैं रामजी के कार्य को करूंगा ॥

वाल्मीकिये रामायणे अरण्य काण्डे पंचाशः सर्गः ॥ ५० ॥

ऐसा कहकर क्रोधसे परिपूर्ण जटायु राक्षस के ऊपर आक्रमण किये, जटायु और रावण का परस्पर युद्ध होने लगा । एक माल्यवान दण्डक बनमें रहता था दूसरा हिमालय के समीप रहता था वह दोनों महा बली माल्यवान जिस प्रकार युद्ध किये थे उसी प्रकार रावण और जटायु का युद्ध होने लगा, रावण जटायु के पराक्रम को देखकर अधिक तर बाणों की वर्षा किया किन्तु पक्षिराज जटायु अपने पंख पर रावण के सकल अस्त्रों का सहन करके अपने चरण और चोंचसे रावण के शरीर में घाव करदिया तब क्रोध से दशानन शत्रुको

मारने के लिये ओजस्वी बाण का प्रयोग किया कि जिसबाण का मुख भंवरे के मुख के समान विषाक्त है परन्तु जटायु ने अपनी चोंच से उस बाणको तोड़कर फेंक दिया, इसके बाद मुक्ता और मणि से विभूषित दूसरा बाण जटायु को मारा जटायु ने अपने दोनों चरण से उसके बाणको खण्ड कर दिया, फिर क्रोध पूर्वक रावण हजारों बाणों को एक साथ छोड़ने लगा, परन्तु रणमें महाबली जटायु ने उसके बाणों का भली भांति वारण किया,

॥ सवैया ॥

चोंच चपेटन रावण को अंग पापन के नख घायन भांड़े।
चक्र धनूरथ आयुध कूबर काटि गिराय लड़ीदे महि टांड़े॥
हारि पस्यो लरिकै फिरियौं जब आय लगे रिपु के बर खांड़े।
घाव लगे रघुराऊ के काज जटायु की आयुध टीरन मांड़े॥

रावण शत्रु को अति पराक्रमी देखकर अग्नि बाण को छोड़ा जिस बाण से जटायु के पंख जरि गये तौ भी जटायु ने अपने चरण व चोंच से रावण को रथ सारथी सहित विरथ कर दिया। रथ सारथी से विरथ होकर जानकी को लेकर पृथिवी पर गिर पड़ा और मूर्छित होगया जानकी रावण से रिक्त होकर वृक्ष की ओट में खड़ी होगयी। पृथिवी पर रावण को गिरा देखकर देवता लोग जटायु को धन्य धन्य कहे और उनपर फूल बर्षाये, मूर्छा को हट जाने पर रावण ने जटायु को नाश करने के वास्ते खड्ग को निकाल कर जटायु की ओर दौड़ा उस महा खड्ग को वारण करके जटायु इस प्रकार बोले, हे अल्प बुद्धि रावण! बज्र के समान स्पर्श है जिनके बाण को ऐसे रामजी बन्धु बान्धव सहित तुम सब राक्षसों का नाश करेंगे। और तुम राम के विषरूपी बाण को पान करोगे जैसे पियासा मनुष्य जल को पीता है जैसे मांसके लोभसे मछलियां कंटिया को निगल कर अपना प्राण देती हैं वैसे तुम सीता के लोभसे नाश होओगे। महाबली राम तुम्हारे इस दुष्कर्म को नहीं क्षमा कर सकेंगे। लोकमें यह जो निन्दनीय कर्म

है यह तस्करों का मार्ग है इसको वीर लोग नहीं सेवते हैं। हेरावण! यदि तुम शूर बीर हो तो क्षण भर ठहर कर हमारे साथ युद्ध करो। प्राणी जो कुछ अधर्म करता है वह मरने पर प्राप्त होता है। पाप के फलको साक्षात् विष्णु भोगते हैं दूसरे की क्या गणना है, इसप्रकार सुन्दर वचन को जटायु कहकर रावण के पीठ में चोंच से मारकर छिन्न भिन्न करादिये और रावण के शिरके केशको उखाड़ लिये, जटायु से अधिक दुःख को पाकर क्रोध से मूर्छित रावण ओठको हिलाकर जटायु के चोंच को पकड़ कर तोड़ दिया जटायु चोंच को टूटने पर भी रावण की बाहू में आघात किया, इसके बाद क्रोधसे रावण जटायु को लात और मुकों से मारने लगा, जाटायु भी अपने चरण और चोंच से रावण को घायल किया, इसके बाद खड्ग को लेकर रावण ने जटायु के पंखने को काटकर गिरादिया। पंखने को कट जानेसे जटायु हत होकर पृथिवी पर गिरपड़े, जटायु को मरणासन्न देख कर सीता विलाप करती हुई अपने बंधुके समान दुःखी हुई और अपने प्राण को बचाने लिये वृक्षों के ओट में जाकर छिप बैठी॥

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे एक पंचाशसर्गः॥ ५१॥

चंद्रमुखी सीता रावण को देखकर और गृध्रराज जटायु का मरण देखकर दुःख पूर्वक विलाप करने लगी यात्रा में पक्षियों का सब्द और दाहिने वायें का आना जाना, तथा स्वप्न देखने का फल मनुष्यों को अवश्य होता है, इसी वास्ते हमारे अपहार की सूचना लेकर ये मृगादि जन्तु शुभ शकुन मार्ग से इधर उधर दौड़ते हैं क्यों कि रामजी को हमारा दुःख तो मालूम नहीं है, हमारी रक्षा करता हुआ यह पक्षी हत होकर पृथिवी पर गिरा है, हे राम! हे लक्ष्मण! मैं आप लोगों के शरण हूं यह कह कर जानकीजी अनाथ के समान विलाप करने लगीं। दुःख के मारे मलीन होगयी हैं वस्त्र आभूषण और माला जिसका ऐसी जानकी को ग्रहण करने के लिये रावण दौड़ा, जानकी वृक्षों को हाथ से पकड़ कर छोड़ो छोड़ो ऐसा कहने लगीं। इतने

रावण ने जानकी के केश को पकड़ कर खींचलिया जानकी राम से रहित वन में अकेली राम राम कह कर पुकारने लगीं। रावण से की गई जानकी की दशा को देखकर सकल चराचर जीव मर्यादा से रहित होगये। रावण के इस कठिन कर्म से हवा का चलना बंद होगया सूर्य की प्रभा नष्ट हो गयी, जल अपना स्वभाव छोड़कर गर्म होगया, अग्नि में शीतलता आगयी। दण्डकारण्य वासी मुनीश्वर रावण के कर्म से क्लेशित होगये, उन ऋषिश्वरों के दुःख को देखकर ब्रह्माजी वहां आये और बनवासी मुनीश्वरों से बोले कि आप लोग चिन्ता न करें, यह जानकी माया की है रामचन्द्रजी ने राक्षसों का नाश करने के लिये जानबूझकर रामजी ने अवतार लिया है, अब देवताओं का कार्य अवश्य सिद्ध होगा, ब्रह्माजी के वचन को सुनकर देवता ऋषि मुनि प्रसन्न होगये,। इसके बाद राम लक्ष्मण के नाम को पुकारती हुई सीता को लेकर आकाश मार्ग से रावण चला। उस समय कृष्णवर्ण रावण और गौर वर्ण सीता की इस प्रकार शोभा हुई जैसे बादल के बीच में बिजली की शोभा होती है, श्री जानकीजी के गले में जो पुष्पों की माला पड़ी थी उनके पुष्प टूट टूट कर मार्ग में निरन्तर गिरने लगे। जैसे बिना नाल के कमल की शोभा नहीं होती वैसे रामजी के बिना सीताजी की मुख कान्ति मलीन हो गयी थी। जैसे बादलों के मध्य में चन्द्रमा की शोभा हीन होजाती है, तैसे रावण के समीप जानकी के शरीर की शोभा नष्ट होगयी। पहिले आंसु की धारा को बहने से पीछे उसको रुक जाने से जैसे दांत नासिका आदि अपनी कान्ति को छोड़ देते हैं वैसे जानकी के अंग शोभा हीन भी आकाश में सुन्दर स्वर्ण के समान दीख पड़ते हैं। अति वेगवान रथ से चलते हुए जानकीजी के अंग का उत्तरीय (चदरा) और पैर कानूर (पायजेब) टूटकर इस प्रकार शब्द करता हुआ पृथिवी तल में गिरा जैसे आकाश से तारे टूट कर गिरते हैं, अथवा जिस भांति आकाश से गंगाजी की धारा गिरी थी। इतने में वायु बड़े जोर से चला जैसे कोई हितैषी रक्षा करनेको दौड़ा

चला आ रहा है उस भयंकर आंधी में वृक्ष जोरों से हिलने लगे, पक्षियां कल कल शब्द करती हुई इधर उधर भागने लगीं, जलाशयों से जल सूख गये, सिंह व्याघ्र आदि प्रलय जन्तु रोष से सीताजी के पीछे दौड़ने लगे, सीता की दुर्दशा को देखकर पर्वत रोने लगे, कि जहां राम की स्त्री सीता को रावण ने हरण किया है वहां सत्य धर्म विनय और दयाका नाश होगया है। इस प्रकार कहकर स्थावर जंगम आदि सभी विलाप करने लगे, वन देवता अपने तेज और शक्ति से हीन हो कर विलाप करने लगे ॥

दशकंठ सीतहिं लै चल्यौ। अति वृद्ध गीधहिं घोदल्यौ ॥
चित्त जानकी अंधकी दियो। हरि तीन हूं अवलोकियो ॥
पद पद्म की अति घूघरि। मणि नील हाटक सोजरी ॥
युग उतरीय विचारिके। भुवडारि दी पग टारिके ॥

इस प्रकार दुरवस्थामें प्राप्त जानकी राम लक्ष्मण के आगमन की इच्छा से बारबार पृथिवी तलको देखने लगीं। परन्तु रामलक्ष्मण को न देखकर भय भार से पीड़ित होकर विवर्ण हो गयी अर्थात् पूर्व की अपेक्षा सुन्दरता से नष्ट होगयी ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे आरण्यकाण्डे द्विपंचाशः सर्गः ॥५२॥

आकाश मार्गसे रथसे चलते हुए रावण को देखकर महा भय से डरी और दुःख से घबड़ाई जानकी क्रोध युक्त रावण से बोली, हे रावण! इस नीच कर्म से क्या तुझे लज्जा नहीं आती है, जो बनमें अकेली मुझे जानकर चोरी से लिये भागा जाता है, हे दुष्टात्मा! माया रूपी मृगाको भेजकर हमको मोहित करके हमारे स्वामी को प्रतारण किया पुनः भय से हमको हरण किया है, वृद्ध जटायु को मारकर तूने अपने को पराक्रमी समझता है, पहिले तो दूसरे की विवाहिता दूसरे पतिसे रहित तीसरे पराई स्त्री का निषेध सो तू इस प्रकार लोक में निन्दित कर्मको करते हुए तुझे संसार में लज्जा नहीं है, ऐसे निन्दित कर्म से भीतू

अपने को सूरवीर जानता है, तेरे इस जीवन से तेरा मरण अच्छा है। तेरी वीरता को वल को तेरे कुलको और तेरे इस प्रकार के चरित्र को लोकमें धिक्कार है। यदि शूरवीर होतो क्षणभर ठहरकर रामजी के आने के बाद तुम्हारी शूरता मालूम होती। राम लक्ष्मण के सामने अपनी सेना सहित भी क्षण भर में नाश होजाते, उनके वाण के स्पर्शको तुम किसी प्रकार भी नहीं सहसकते। हे रावण! यदि अपना कल्याण चाहो तो अहम को छोड़कर अपना प्राण लेकर भागजाओ, नहीं तो दुःख से दुःखी राम लक्ष्मण तुमारा नाश अवश्य करेंगे। हे नीच! तेरा यह उद्योग व्यर्थ होगा। क्योंकि जिस मनुष्य की मृत्यु नगीच होती है उस को भले बुरे का ज्ञान नहीं रहता। तुम काल के मुखमें प्राप्त हो जो भयके स्थान में भी तेरे को भय नहीं है। स्वप्न में सोनेके वृक्ष को देखना मृत्यु का चिन्ह जानना चाहिये, हे मूढ! इस कर्म के बदले तेरे को अवश्य नरक भोगना होगा, इस को मिथ्या न जानो। हमारे स्वामी रामजी से विरोध करके तेरा कभी कल्याण नहीं होगा, जो रामजी अकेले क्षणभर में चौदह हजार राक्षसों को नाश किया, वह अस्त्र शस्त्र में कुशल रामजी उनकी स्त्री को हरण करने वाले तेरे को क्या अपने तीखे बाणों से नाश नहीं करेंगे। इस प्रकार अनेक बातें रावण को कह कर जानकीजी विलाप करने लगीं।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे त्रिपंचाशः सर्गः ॥५३॥

रावण से हरी गई जानकी किसी को अपना रक्षक नहीं देख कर विलाप करती हुई रथ से पंपासर में पहुँची वहां पर्वत के शिखर पर पांच बानरों को बैठे देख कर उन बानरों के मध्य में कनक के समान चमकने वाले उत्तरीय (चदरा) को और कर्ण भूषण को सीताजी ने गिरा दिया, कि हमारे वृत्तान्त को रामजी से कह देना परन्तु इस बात को रावण ने नहीं जाना, क्योंकि वह अपने कर्म से लज्जित होकर शिर को नीचा किये था। उन रोती हुई जान की को बानरों ने देखा। इसके बाद पंपासर को अति क्रमण करके लंका की ओर

रोती हुई जानकी को लिये प्रसन्न होकर चला, क्यों कि सीता के बहाने से राम के हाथ अपनी मृत्यु को जान कर प्रसन्न हुआ। और आकाश मार्ग से वन पर्वत नदी गुहा वृक्ष नदी आदि की शोभा को देखता हुआ समुद्र के तटपर पहुंचा। जगन्माता जानकीके हरण को देखकर समुद्र शान्त हो गया उसमें रहने वाले जल जन्तु निश्चिन्त हो गये। समुद्र के तटपर पहुँचते ही आकाश वाणी हुई की हे रावण यहीं तक तेरे जीवनकी अवधि है, आकाश वाणीको हुआ सुनता रावण सीता के सहित लंकापुरी में पहुँच गया, वहां अनेक जत्नों से पूर्ण फाटकों को लांघता हुआ रावण अन्तःपुर में पहुंचा। राक्षसों की माया मयी संपत्ति के समान जानकी का प्रवेश लंका में हुआ, लंका में जानकी को देखने के लिये अनेक राक्षसी खड़ी हो गईं। उन राक्षसियों और राक्षसोंमें रावण बोला कि इस वैदेही को जो कुछ इच्छा हो इसके इच्छा के अनुसार हमारी आसा से इसको आभूषण वस्त्र मणि मुक्ता सुवर्ण जो कुछ चाहे वह इसको देना और जान अनजान में इसको अप्रिय बचन नहीं कहना। इस प्रकार राक्षसियों से कहकर अन्तःपुर से बाहर आकर विचार करने लगा कि अब क्या करना चाहिये, उसी समय में मांस को भोजन करने वाले आठ राक्षस वरदान से मोहित होकर वहां बैठे थे। उनको देखकर रावण बोला हे राक्षसों! तुमलोग अस्त्र शस्त्रको लेकर जनस्थान में चले जाओ, पहिले उस स्थान में खर दूषण त्रिशिरा आदि राक्षस रहते थे. इस समय जन स्थानमें राक्षस नहीं हैं तुमलोग भयको छोड़कर अपने पुरुषार्थ के बल से वहां निवास करो, क्योंकि सेनाके सहित जो खर दूषण, वहां रहते थे उन्हे रामचन्द्रने संग्राम में मारा है। जबसे मैंने खर दूषण का मरण सुना है तबसे मुझे अपूर्व क्रोध है, उस शत्रुके साथ बिना युद्ध किये मुझे निद्रा नहीं आती है, जैसे निर्धन धनको पाकर प्रसन्न होता है वैसे खरदूषण को नाश करने वाले रामको नाश करके सुख भोगूँगा, तुमलोग जाकर वहां रहो और वहांका जो कुछ समाचार हो उसको कहते रहना कि वह

राम क्या करता है, तुम सब राक्षस सावधान होकर वहां जाओ और रामको वध करने का सदा उद्योग करते रहो, आपलोगों का पराक्रम हमको ज्ञात है आपलोगों ने रणको जीतना अच्छा जानते हैं इस लिये मैं आपलोगों को भेजता हूँ, रावणके इसप्रकार प्रिय बचन को सुनकर वे आठो राक्षस रावणको प्रणाम करके दण्डक बनको चले,॥

रामायणे वाल्मीकिये अरण्यकाण्डे चतुष्पंचाशः सर्गः ॥५४॥

रावणकी आज्ञाको पाकर वे आठो राक्षस अपनी बुद्धिकी विकलता से अपने को कृत कृत्य समझने लगे। इधर काम बाणसे पीड़ित रावण सीताजी को देखने के लिये एकाएक गृहमें प्रवेश किया, अर्थात् अशोक बनमें जाकर दुःखसे पीड़ित जानकी को राक्षसियों के मध्यमें इस प्रकार देखा जैसे वायुके वेगसे नवका जलमें डूबजाती है वैसे रामचन्द्रजी के वियोग में सीताजी शोक सागर में डूबती हैं, जैसे अपने झुण्डसे भूलकर मृगी इधर उधर चकित होती है और उसको कुत्ता, घेर लेते हैं, वैसी चकित जानकी को राक्षसी व राक्षस घेरे हैं और सीताजी राक्षसों के बश में हो नीचे को मुख करके बैठी हैं तौभी रावण ने अपने गृहको सीताजी को दिखाया बड़े ऊंचे महलों में अनेक प्रकारकी खिड़कियां लगी हैं उनमें हजारों स्त्रियां सुख भोग करती हैं, भांति भांति के रत्न जगह जगह लगे हैं हाथी दांत के सोने के स्फटिक चांदी आदिके खंभे लगे हैं कहीं कहीं केवल हीरा वैडूर्य आदि मणि उन खंभों में लगे हैं, सोनेके अनेक अलंकार से पूर्ण है, सुन्दर दुन्दुभी का शब्द होरहा है, किलों पर चढ़ने के लिये सोने की सीढ़ियां लगीं हैं, हाथी दांत और चादी तथा सोने के झरोखे बने है, भांति भांति के मणियों से आंगन जड़ित है ऐसी रावण की पुरी को श्रीजानकीजी ने देखा, इसके अनन्तर बगीचों में जहां सुन्दर २ कुवां बावली तालाब आदि बने हैं, उनमें अनेक प्रकार के कमल खिले हैं, उसके आसपास पनस आम मौसरी केला बेर दाख इलायची कदंब नारीयल आदिके वृक्ष लगे हैं उन वृक्षों पर पक्षियां बैठकर प्रसन्नता पूर्वक मधुर बचन को बोलती हैं,

ऐसे अपने यहां के बगीचों को दिखा कर दुष्ट रावण बोला हे सीते! इनमें जहां तुम्हारी रहने की इच्छा हो वहां तुम रहो, हमारी यहां दशकरोड़ उत्तमा राक्षसी फिर बाइस करोड़ और भी राक्षसी रहती हैं, उन राक्षसियों की एक एक हजार राक्षसी दासी हैं वह सब हमारे अधीन हैं और हमारे कार्यका साधन करती हैं यह सब हमारा तुम्हारे अधीन है, हे सीते ! मैंने बहुत सी देव कन्या नाग कन्या गंधर्वी और अप्सरा आदि को अपने सुख भोग के लिये परिग्रह किया है उन सब स्त्रियों की ईश्वरी होकर तुम वहां रहो, और हमारे वचन को स्वीकार करके काम से व्यथित मेरे ऊपर कृपा करो। देवता गंधर्व यक्ष आदि में किसी को ऐसी सामर्थ्य नहीं है जो हमारे समान पराक्रमी हो और इस लंकापुरी को जीतसके, यह लंकापुरी इन्द्रादि देवतों से भी अजेय है, जहां इन्द्र वरुण यम कुबेर सूर्य चन्द्रमा वायु आदि हमारी आज्ञा को पालन करते हैं वहां अकेला मनुष्य राम क्या करेगा तुम उसकी चिन्ता छोड़कर हमारे साथ विहार करो, मैं तुम्हारी युवावस्था के योग्य पति हूं। हे मैथिली ! तीनों लोक में देव दानव ऐसा कोई नहीं है जो लंकापुरी में आकर अपने पराक्रम से फिर तुम्हे लेजावे। इस लंकापुरी के सुन्दर राज्य को भोगो और हमारे पराक्रम से चराचर तुम्हारी सेवकाई करेंगे। अब तुम अपनी इच्छा के अनुकूल स्नान आदि करके हमारे साथ विहार करो। जो कुछ पूर्वजन्म के दुष्यकृत कर्मों का फल था वह बनवास से नष्ट होगया अब अपने पुन्य के फल को जीवन पर्यन्त भोगो। यह सब सुन्दर माल्य गंध भूषण वस्त्र को मेरे साथ धारण करो। हे सीते ! देखो यह कुबेर देवता का पुष्पक विमान है मैंने युद्ध में कुबेर को जीतकर यह विमान लिया है यह क्षणभर में बहुत दूर तक जाने वाला है, हमारे साथ इस विमान पर बैठकर विहार करो अब तुमको शोक करना उचित नहीं है। रावण के बचन को सुनकर सीताजी अपने वस्त्र को अपने मुख में लगा कर रोने लगीं, सीताजी को दुखी देख

कर निर्लज्ज रावण फिर बोला हे सीते! तुम लज्जा को छोड़ दो तेरे लज्जा करने से धर्म का नाश होता है मैं तेरे चरण पर पड़ता हूं और तुम्हारा दास हूं तुम प्रसन्न होजाओ। काल के अधीन रावण इस प्रकार अनेक बातें जानकीजी से कहने लगा॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे पंचपंचाशः सर्गः॥ ५५॥

इसके उपरान्त शोक से पीड़ित जानकी निर्भय होकर तृण का ओट देकर रावण से बोलीं, धर्म की ध्वजा के समान महाराज दशरथ के पुत्र सत्यप्रतिज्ञ दृढ़ पराक्रमी रामचन्द्रजी हैं, वह धर्मात्मा महाबाहु बिशाल नेत्र वाले राम हमारे पति हैं, सिंह के समान पराक्रमी रामजी रघुकुल में अवतार लेकर भाई लक्ष्मण के सहित तेरा बध करेंगे, जो तुम्हारे इतने राक्षस हैं ये राक्षस राम बाण के लिये इस प्रकार भोजन होंगे जैसे गरूड़जी करोड़ों सर्प को खाजाते हैं, यदि तुम देवता और असुरों से अवध्य हो तो भी राम के बाण से तुम जीते नहीं बचोगे। तुम्हारे जीवन को नाश करने वाले सिवाय रामजी के दूसरा कोई नहीं है उनके हाथ से तेरा प्राण बचना कठिन है। जैसे महादेव ने कामदेव को जलाया है वैसेही रामजी के बाण से तुम सब राक्षस दग्ध हो जाओगे, जो रामजी समुन्द्र को सुखा कर मरूस्थल बना सकते हैं वही रामजी लंका को जीत कर हम को लेचलेंगे। तेरे इस पाप से लंका को रामचन्द्रजी अवश्य बिधवा करेंगे, जो तूने छल से पति के न रहने पर मुझे लाया है इस पाप से तेरा कभी कल्याण नहीं होगा। जो अति पराक्रमी हमारे स्वामी रामजी अपने भाई लक्ष्मण के सहित शून्य दण्डकबन में राक्षसों को मार कर निवास किये वही रामचन्द्रजी युद्ध में तेरे बल अभिमान तथा सेना आदि को नाश करेंगे। जैसे ऋषियों के यज्ञ वेदी को छूने के योग्य कुत्ता नहीं होता वैसे रामजी की भार्या के योग्य हे राक्षसाधम! तैं कैसे होसकता है? तेरे नाश का समय प्राप्त है, धर्म को पालन करनेवाले रामजी की मैं धर्म पत्नी हूँ हे पापी राक्षस!

तेरे को मैं कैसे स्पर्श करूं । मैं अपनी इस शरीर को फांसी से अथवा खड्ग वा विष से नाश करूंगी हे राक्षस ! रामजी के बिना इस शरीर को नहीं रख सकती हूँ । इस प्रकार क्रोध से परुष बचन को जानकीजी ने कही परन्तु जानकीजी के बातों पर रावण ने कुछ उत्तर नहीं दिया । पुनः रावण जानकीजी से बोला,-हे मैथिली ! सावधान होकर हमारे बचन को सुनो आज से बारह मास पर्यन्त तुम्हारी प्रतीक्षा करेंगे, यदि बारह मास के बाद तुम प्रसन्न होकर हमको अपना पति स्वीकार नहीं करोगी तो मैं अपने खड्ग से तुझे नाश करके यमलोक को भेज दूँगा । इस प्रकार कठोर बचन से रावण ने सीता को त्रास दिया, इसके उपरान्त जितनी राक्षसी रावण की आज्ञा से जानकी की रक्षा में बैठी थी उन सबों से रावण ने कहा कि हे राक्षसीगण ! अपने विकराल स्वरूप को दिखाकर साम दाम और दण्ड से इस जानकी के अभिमान को छुड़ाओ, रावण के बचन से वह सब राक्षसी अपना अपना स्वरूप धारण करके जानकी के सन्मुख खड़ी होकर समझाने लगीं इसके बाद रावण कुछ दो चार पग आगे को चल कर राक्षसी से बोला कि जानकी को रहने के लिये अशोक बन अच्छा है इनको वहां ले चलो, और वहीं तुम लोग इनकी रक्षा करो और वहीं अनेक प्रिय बचन से तथा उत्कृष्ट तर्जना से जानकी को हमारे बश में ले आओ । इस प्रकार रावण के बचन को सुनकर वे सब राक्षसी जानकी को लेकर अशोक बन को गयीं, जो बन लंकापुरी के मध्य में था वह रावण का प्रधान बगीचा था, उस बगीचे में देवलोक के वृक्ष लगे थे, वहां बड़े बड़े निशाचरों का पहरा रहता था । सब ऋतुओं के फल फूल उसमें लगे थे और सब काल में बोलनेवाली पक्षियां वहां रहती थीं । जसे व्याघ्री के बीच में हरिणी रहती है वैसे राक्षसी के बीच में जानकीजी रहने लगीं । जैसे जाल से बँधी मृगी को कुछ सुख नहीं मिलता वैसे रामके दुःख

सागर में डूबती हुई जानकी की दशा हुई। राम लक्ष्मण को स्मरण करती हुई जानकी शोक से मूर्छित हो गयी।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे षट्पंचासः सर्गः ॥ ५६ ॥

श्रीजानकीजी को लंका में प्रवेश करने पर ब्रह्माजी इंद्र को बुलाकर बोले,-तीनों लोक के हित के लिये और रावण के विनाश के लिये सीता लंकापुरी में पहुँची हैं, वह पतिव्रता सीता अपने पति के दर्शन से रहित राक्षसी जन के बीच में पड़ी हैं, वह सीता पति के दर्शन की इच्छा से राक्षसियों के मध्य में लंकापुरी में आई हैं वह अन्नजल को छोड़ कर राम के विरह में मग्न हैं बिना राम को देखे वह अवश्य अपने प्राण को छोड़ देवेंगी। इसलिये तुम शीघ्र लंकापुरी में जाकर सीताजी को यह देवताओं के खाने योग्य इस उत्तम हविका उन्हें देओ, इस प्रकार ब्रह्माजी के बचन को सुनकर देवतों के राजा इन्द्र अमरावती से लंकापुरी में चलने को प्रस्तुत हुए और निद्रा देवी को संग लेकर लंका में पहुँचे। लंका में पहुँचते ही इन्द्र ने निद्रादेवी से कहे कि इन सब राक्षसों को अचेत कर देओ। इन्द्रके बचन को सुनकर निद्रादेवी अति प्रसन्नता से देवकार्य सिद्धि के लिये निद्रादेवी ने राक्षसों को निद्रा में मोहित किया, इसके अनन्तर इन्द्रदेवता सीताजी के समीप जाकर बोले,-हे सीते! मैं देवलोक का राजा इन्द्रहूँ मैं तुम्हारे कार्य सिद्धि के लिये यहां आया हूँ। मैं तुम्हारी सहायता करूंगा, तुम चिन्ता मत करो। हमारे अनुग्रह से रामचन्द्रजी सेना लेकर समुद्रको तैर कर इस पार आवेंगे, मैंने यहां के राक्षसों को मोहित किया है, इसलिये तुम इस सुन्दर हवि को खाओ, तुम्हारे खाने को लेकर मैंने निद्रादेवी के सहित आया हूँ, इस हवि के खाने से तुझे भूख प्यास हजारों वर्ष तक नहीं व्यापेगा। इन्द्रके बचन को सुनकर सीताजी बोलीं कि हम आपको इन्द्र कैसे समझूँ, रामलक्ष्मण के समीप जैसा देवराज के चिन्ह को धारण किये थे उसी रूप से यहां भी हमको दर्शन देओ। सीता के बचन को

सुनकर इन्द्र ने अपना शुद्ध स्वरूप धारण किया, उनके स्वरूप को देख कर उनको इन्द्र जान कर जानकीजी विलाप करने लगीं कि हमारे पिता और श्वशुर के समान हमारी रक्षा के लिये आप दर्शन दिये हैं, आपकी आज्ञा से इस हवि को मैं भोजन करूंगी, ऐसा कह कर जानकीजी इन्द्र की आज्ञा से हवि को खाकर अपनी क्षुधा और तृषा की आग को शान्त किया। हवि को देकर निद्रादेवी के सहित इन्द्र अपने लोक को चले गये।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे सप्तपंचाशः सर्गः ॥५७॥

॥ यह सर्ग की कथा क्षेपक में है ॥

इधर मायारूपी मारीच को रामचन्द्रजी मारकर जानकीजी को देखने की अभिलाषा से शीघ्रता के साथ रामजी मार्ग में चले आते हैं, रामजी को चलते समय सन्मुख सियार बोलने लगे, काग असमय बोलने लगा। मृगा बायें ओर दौड़ने लगा। पशु पक्षियों के दारुण शब्द को सुनकर रामजी अशुभ की शंका से व्यस्त हो गये क्योंकि दण्डक बन में जानकी के हरण को देखकर जानकी की आज्ञा से रामजी से कहने के लिये वे पक्षी आगे से गए हैं और कहने लगे कि जानकीजी को कहीं राक्षस न खा गए हों, अथवा मरते समय मारीच ने लक्ष्मण का नाम ले कर पुकारा है कहीं लक्ष्मणजी हमारा पुकारना जानकर सीता को अकेला छोड़कर बन में न आए हों, नहीं तो उस निर्जन बन में अकेली जानकी को राक्षस अवश्य खा जायेंगे, इस प्रकार चिन्ता करते हुए और पशु पक्षियों की अशुभ सूचना को पाते चले आ रहे थे इतने में मलीनता में युक्त लक्ष्मण को देखे रामजी लक्ष्मणजी के समीप में आकर लक्ष्मणजी के दाहिने हाथ को अपने हाथ में लेकर रामजी लक्ष्मणजी से प्रेम पूर्वक कठोर बचन को बोले, हे लक्ष्मण! तुमने अच्छा नहीं किया कि जो बन में अकेली जानकी को छोड़कर चले आए, इस विषय में हम कल्याण नहीं देखते हैं। चाहे राक्षस जानकी का अपहरण किये हों चाहे

उनको भक्षण कर गये हों, क्योंकि हमको कुछ अशुभ का चिन्ह दिखाई देता है, यदि मैं जीवती हुई जानकी को देखूँगा तो अपने समस्त कल्याण को लाभ करूँगा। क्योंकि सियार बोलते हैं मृगा बायें ओर दौड़ते हैं, पक्षियां कठोर बचन बोलते हैं, और वह मृगा रूपी राक्षस हमको लोभ देकर बहुत दूर तक खींच लिया, मैंने बड़े परिश्रम से उस मृगरूपी राक्षस का बध किया है और हमारी बायीं आंख फरकती है इन कारणों से मैं निस्सन्देह होकर कहता हूं कि चाहे जानकी को राक्षस खा गये हों चाहे हरण किये हों जो कुछ हो हमें कुशलता का कारण नहीं जान पड़ता।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे अष्टपंचाशः सर्गः ॥५८॥

धर्मात्मा रामजी लक्ष्मणजी को दीन और अकेले देखकर लक्ष्मणजी से पूछने लगे कि हे लक्ष्मण! जो जानकी सदा हमारे संग रहती हैं वह इस समय कहां हैं जिन्हे अकेली छोड़कर तुम आये हो, राज्य से भ्रष्ट वनवासिनी मुझ को दुःख में सहायता देने वाली जानकी कहां हैं, जिनके बिना मुहूर्त भर भी मैं नहीं जीवन को रख सकता हूं। प्राण की रक्षा करने वाली सीता कहां हैं, सीता के बिना देवलोक का राज्य तथा पृथिवी का संपूर्ण राज्य तुच्छ है हमारा चौदह वर्ष का बनबास जानकी के जीवन के ऊपर निर्भर है सीता के बिना हमारी प्रतिज्ञा अवश्य मिथ्य होगी। क्योंकि सीता के विरह में प्राण हमारा अवश्य जायगा, प्राण नाश होने पर प्रतिज्ञा अवश्य नाश होगी सीता के कारण हमारे मरने पर तुम लौटकर अयोध्या को जाओगे, सीता सहित हमारे मरण को सुनकर अपने अर्थ की सिद्ध देखकर केकयी प्रसन्न होवेगी, पुत्रमरण से कौशल्या अपना प्राण नाश करेंगी अथवा केकयी की सेवकाई करेंगी, तो हे लक्ष्मण! यदि जानकी जीवित होंगी तो मैं पंचवटी को जाऊंगा नहीं तो प्राण का नाश करूंगा। हे लक्ष्मणजी! यदि हमको आश्रम में चलने पर विहस कर जानकी हम से न बोलगी तो मैं अपने जीवन का क्षय करूंगा।

हे लक्ष्मण! तुम्हारे इस अनुचित से जानकी जीती हैं अथवा राक्षसों ने भक्षण कर लिया है सत्य करके कहो। हमारे वियोग में सीता बैठी हुई हमारी चिन्ता करती होंगी। जब वह दुरात्मा मारीच राक्षस मरने के समय तुम्हारा नाम लेकर पुकारा है तब भय से जानकीजी ने हमको देखने के लिये तुम्हें भेजा है, इसी से तुम शीघ्र हमारी ओर आते थे। बन में जानकी अनेक प्रकार के कष्ट को उठाती हैं तौभी तुमने अपकारी राक्षसों के लिये इस समय अवकाश दिये हो। युद्ध में खरदूषण आदि राक्षसों के मरने से सब राक्षस दुःखित हो गये हैं, इस कारण वे राक्षस निश्चय जानकी के लिये विपत्ति पहुंचाये होंगे। इस प्रकार जानकीजी की चिन्ता करते हुए लक्ष्मण के सहित रामजी जन स्थान में आये, वहां आश्रम ने जानकी को न देखकर जानकीजी के क्रीड़ा विहार स्थान पर देखने गये वहां भी जानकीजी को न देखकर रामजी के रोम खड़े होगये और शोक से रामजी का हृदय पीड़ित होगया॥

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे अष्टपंचाशः सर्गः॥ ५८॥

इसके उपरान्त आश्रम के समीप में आकर मार्ग के मध्य में रामचन्द्रजी दुःख पूर्वक यह बचन लक्ष्मणजी से बोले,-कि जानकी को अकेली छोड़कर तुम क्यों आये? जब हम तुम्हारे विश्वास पर सीता को छोड़कर मृगया के लिये चले गये तब तुमको यह उचित न था कि बन में जानकी को अकेली छोड़ देना। तुमको देख कर मार्ग में जो शंका हमारे मन में हुई जिस सन्देह में हम मग्न हो गये थे, वह सन्देह सत्य जान पड़ता है, क्योंकि सीता से रहित अकेले तुमको मार्ग में दूरही से देखकर हमारा बायां अंग फरकने लगा। बार बार दुःखित होकर रामजी लक्ष्मणजी से पूछने लगे तब लक्ष्मणजी दुःखित रामजी से बोले,-कि हे स्वामी! मैंने अपनी इच्छा से जानकी को छोड़कर नहीं आया हूं किन्तु उनकी प्रेरणा से हम तुम्हारे समीप आये हैं। उस राक्षस के आर्त स्वरको सुनकर आपके स्नेह से जानकी

जी भय पूर्वक हमको कहा कि जाओ जाओ शीघ्र जाओ। बारबार जानकीजी को कहने से उनके प्रति फिर हम सीताजी को विश्वास देने के लिये बोले,-कि यह कातर बचन रामजी के नहीं है किसी राक्षस के हैं। जो रामजी तीनो लोक को त्राण करते हैं वह रामजी क्षत्रिय धर्म के विपरीत इस नीच बचन (त्राहि) को नहीं बोलेंगे। कुछ कारण पाकर किसी राक्षस ने यह बचन बोला है। इसमें आपको दुःख उठाना उचित नहीं है। हे जानकी! तुम दुःख को छोड़कर स्वस्थ होओ तीनो लोक में किसी को ऐसी सामर्थ्य नहीं है जो रामजी के सन्मुख रण में ठहर सके। इस प्रकार हमारे बचन को सुनकर रोती हुई मेरे लिये दारुण बचन को बोलीं,-कि तुम क्षत्रियों में अधम हो, तुम्हारा हृदय पाप से भरा है। तुमको यह है कि किसी प्रकार से रामजी बन में मरे तो मैं अकेली जानकी के साथ विहार करूं परंतु यह कामना तुमारी पूरी नहीं होगी। तुमारी और भरतकी पापात्मा है परन्तु तुम लोगों के संकेत का कुछ भी फल नहीं होगा। तुम रामजी के गुप्त हो केवल हमारे लोभ से पीछे लगे हो। जानकीजी के इस प्रकार बचन को सुनकर मैं रोष से आश्रम के बाहर हो गया, लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर सन्ताप से मोहित रामजी लक्ष्मणजी से बोले,-हे सौम्य! यह तुमने उचित नहीं किया जो जानकी को छोड़ कर चले आये, राक्षसों के छल को जानते हुए भी मैथिली के कठोर बचन से आप यहां चले आये स्त्री के कठोर बचन को सुनकर मैथिली का जो तुमने त्याग किया इससे हमको प्रसन्नता नहीं है क्योंकि स्त्री के बचन का प्रमाण मान कर हमारी आज्ञा का उलंघन किये। वह मृगारूपी राक्षस जब आश्रम से मुझे बहुत दूर ले गया तब मैं बाण निकाल कर जब संधान करना चाहे तब वह राक्षस मृगा की शरीर को छोड़कर राक्षस के शरीर को धारण किया।

इति बाल्मीकिये रामायणे आरण्यकाण्डे एकोनषष्ठितमः सर्गः ॥५९॥

इसके उपरान्त आश्रम में आकर सीता को न देखकर रामजी के रोम खड़े होगये, शरीर कांपने लगी। इसके बाद इधर उधर पर्वतों की कन्दराओं में वृक्षों की झाड़ियों में घबड़ा कर और आस पासकी कूटियों में रामजी जानकीजी को ढूंढने लगे इसके बाद पर्णशाला को भी सूना देखकर रामजी की मुखकान्ति ऐसी मलीन होगयी जैसे वर्फ को गिरने से कमल की शोभायें नष्ट होजाती हैं, वृक्षों से गिरे मलीन पुष्पों को देख कर यह मालूम होता है कि जानकी के विरह में ये वृक्ष रोते हैं। अब जानकी के विना रामजी बार बार विलाप करने लगे। क्या सीता हरी गयी अथवा मरगयीं या राक्षसों ने भोजन कर लिया। या फल पुष्प लेने को चली गयीं अथवा जल लेने को नदी के किनारे गई हैं, मैंने बहुत खोजा परन्तु इस बन में हमारी जानकी का कुछ भी समाचार नहीं मिलता है श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार का वर्ताव लोक व्यवहार से करते हैं क्यों कि लोक में स्त्रियां सब से प्यारी होती हैं इस बात की मर्यादा को पुष्ट करते हैं, जैसा कि पिता माता का वियोग इतना शोक का कारण नहीं हुआ जैसा कि जानकी के वियोग से रामजी व्याकुल होते हैं। शोक से परिप्लुत राम वृक्ष से वृक्ष को पर्वत को नदी को नाले को विलाप करते हुए खोजने लगे। हे कदंब वृक्ष यदि तुम सीताजी को देखे हो तो हमसे कहो। हे विल्व! विल्व के समान स्तन वाली तुम्हारे सुन्दर पल्लव के समान कोमल अंग वाली पीतवर को धारण करने वाली जानकी को देखे होंतो हमसे कहो। हे करवीर के वृक्ष! तुम कहो कि जनक की कन्या जानकी जीवत हैं या नहीं। हे ककुभ के वृक्ष! तुम लता पल्व पुष्प से शोभीत हो क्या तुम मैथिली को जानते हो। हे तिलक के वृक्ष! तुम वृक्षों में श्रेष्ठ हो तुम्हारे समीप बैठकर भंवरे गीत गाते हैं क्या तुम जानकी को जानते हो। हे शोक को नाश करने वाले अशोक तुम अपने नाम के अनुसार शीघ्र फल देओ जिसे चन्द्रमुखी जानकी के मुख कमल को मैं अपने आंख से देखूं। हे तात वृक्ष यदि तुम

जानते हो तो सीता के वृतान्त को कहो। हे जामुन के वृक्ष ! हमारी प्रिया को अत्यन्त प्रिय था यदि तुम जानकी को देखे हो तो हम से कहो। इसी प्रकार व्याकुल होकर रामजी आम्र नीप महासाल पनस दाख पुन्नाग बकुल चन्दन केतकी नीप आदि वृक्षों को बन में देख कर उनसे जानकी को पूछने लगे। वृक्षों से इस प्रकार पूछ कर अब बन के जन्तुओं से विलाप पूर्वक रामजी पूछने लगे हे मृग ! मृग नयन के समान नयन वाली जानकी को जानते हो तो कहो। हे गजराज ! तुम लोग यदि सीता को देखे हो तो कहो। हे सिंहगण ! यदि जानकी को जानते हो तो निर्भय हम से कहो हे पशुगण तुम लोग अवश्य जानकी को जानते हो क्योंकि वृक्षों के ओट में खड़े हो परन्तु हम से सभरषणनहीं करते हो। हे निर्दय जानकी खड़ी रहो तुझे कुछ भी दया नहीं है, तुम तो अधिक परि हास नहीं करती थी आज क्यों इतनी कठोर होगयी हो, तुम्हारे बिना हमारा प्राण जाने चाहता है। निश्चय चन्दन माल्य भूषण वस्त्र को धारण करने वाली कोमलांगी प्रिय जानकी को राक्षस ग्रास किये होंगे, क्योंकि राक्षसों ने जानकी को भक्षण करके मुझ से अलग किया है। हे महा बाहु लक्ष्मण ? कहीं सीता को देखते हो, हे सीते ! तुम कहां गयी हो। इस प्रकार विलाप करते हुए रामजी बन बन घूमने लगे जानकी को खोज करने में परायण रामजी पर्वत कन्दराओं में नदी नालो में बन मे जानकी को न पाकर शोक सहित भ्रमण करने लगे बड़े सघन और घोर बन में खोज करके फिर लौटे और पुनः दण्डक बन में खोजने का परिश्रम करने लगे॥

इति बाल्मीकिये रामायणे आरण्यकाण्डे षष्ठितमः सर्गः॥ ६० ॥

इसके उपरान्त जानकी का कुछ समाचार न पाकर रामजी लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मण ! जानकी कहां हैं यहां से किस देश को गयी। किस ने हरण किया अथवा प्रिया को किसने भक्षण किया,

ये वृक्ष चाहे सीता को छिपाकर हंसते हो परन्तु हमें दुःख में देख कर तुमें हँसना उचित नहीं है, जिन मृगाओं के बच्चों के संग विश्वास पूर्वक जानकीजी खेलती थी वे मृग शावक आज उनका ध्यान करते हैं। हे लक्ष्मणजी! सीतासे रहित होकर मै नहीं प्राण को रख सकूंगा परन्तु परलोक में हमारे पिता हमको देख कर कहेंगे कि अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिये तुझे भेजा था सो तूने बिना पूरा किये मेरे पास चले आये इसलिये तुम्हारे कार्य पर धिक्कार है, तो मैं कहां जाऊं और क्या करूं। शोक से पीडित विवश छल शील से युक्त मुझको छोड़कर सीता कहां चली गयीं, हे सीते तुम्हारे बिरह में हमारा प्राण जाने चाहता है, सीता के दर्शन की लालसा से रामजी अनेक प्रकार विलाप करने लगे। जैसे हाथी कीचड़ में फंस कर दुःखी होता है वैसे रामजी विलाप करते हुए रामजी को देखकर भाई के स्नेह से लक्ष्मणजी बोले, हे महाबुद्धि रामजी! शोक को छोड़कर हमारे साथ प्रयत्न करिये कि इस पर्वत में अनेक कन्दरायें हैं इस पर्वत को और बन में, क्योंकि बन के पुष्पों को देखने सीताजी को उत्सुकता रहती हैं, मछली और वेतकी लता से युक्त नदियों से पूंछते हुए खोजने का हम लोग प्रयत्न करें। आइये समस्त बन को ढूंढे जहां जानकी होंगी वहां मिलेंगी। इस प्रकार लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी लक्ष्मण के सहित प्रयत्न पूर्वक खोजने लगे। वह राम लक्ष्मण बन पर्वत नदी नाला तालाब आदि मे पर्वतों के शिखर और कन्दराओं को खोज कर रामजी लक्ष्मण जी से बोले हे लक्ष्मणजी इस पर्वत पर सीताजी नहीं है। तब दुःख से सन्तप्त लक्ष्मणजी दण्डक बन में खोजते हुए रामजी से बोले, हे भगवन्! महाबाहु विष्णु बलिदैत्य को बांधकर जिस प्रकार पृथिवी को पाया है वैसे आप जानकी को प्राप्त करेंगे। लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर दुःख से तप्त रामजी दीन बचन से पुनः बोले,-कि सब पर्वत नदी बन वृक्ष को ढूंढ डाले परन्तु कहीं भी सीता को नहीं देखे। सीता हरण

से पीड़ित रामजी विलाप करते हुए क्षण भर के लिये मूर्छित हो गये, पुनः चेतना को पाकर हा प्रिये! ऐसा कह कर रोने लगे। रामजी की दशा को देखकर लक्ष्मणजी हाथ जोड़ कर विनय पूर्वक धैर्य देने लगे, परन्तु शोकाविष्ट राम लक्ष्मण के वचन का अनादर करके बारबार मुक्त कण्ठ से सीता के विरह में रोने लगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे एकषष्ठितमः सर्ग ॥६१॥

धर्मात्मा रामचन्द्रजी शोक से पीड़ित सीताको न देखकर कमल नयन महाबाहु राम विलाप करते हुए इस प्रकार बोले,-कि हे जानकी! यह अशोक के पुष्प तुमको सदा प्रिय लगते हैं सो यह हमारे और तुम्हारे शरीर को आच्छादित करके और भी शोक को बढ़ाते हैं कदली (केला) वृक्ष के स्कन्ध के समान तुम्हारी जंघा को मैं देखता हूं। हे प्रिये! तुम कर्णिकार (कनैल) के बन में बैठी हंसती हो, यह तुम्हारा हंसना और हमको दुःख उठाना उचित नहीं है। सो भी विशेष करके आश्रम में ऐसा परिहास नहीं करना चाहिये। हे विशालनेत्रवाली सीता! तुम्हारे बिना यह पर्णकुटी सुनी है, क्या तुमको राक्षस खा गये अथवा राक्षसों से तुम हरी गयी हो। क्यों तुम इस प्रकार दुःख में हमको देखती हो, शोक में रामजी अपने मन से प्रलाप करके फिर लक्ष्मण से बोले,-लक्ष्मणजी देखो यह सब मृगा जानकीजी के लिये रोते हैं इससे जान पड़ता है कि राक्षसों ने जानकी को अवश्य भक्षण किया है इस बाद फिर रामजी को मूर्छा आ गयी अपने मन से कहने लगे। हा सीता! हमको इस बन में छोड़कर तूँ कहां गई। सीता को नाश होने पर आज केकयी का मनोरथ सफल हुआ। सीता से रहित होकर मैं किस प्रकार अन्तःपुर को जाऊंगा क्योंकि लोग मुझको पुरुषार्थ हीन और निर्दय और कातर कहेंगे, बनवास को पूरा करके चलने पर मिथिलापति जनक जानकी से रहित मुझको किस प्रकार देखेंगे हे सीते! तुम्हारे बिरह में जलकर जनकजी अपना प्राण छोड़ देवेंगे, अथवा मैं भरत से

रक्षिता अयोध्यापुरी को मैं नहीं जाऊंगा क्योंकि सीता के बिना स्वर्ग भी हमारे लिये शून्य है। हे लक्ष्मण हमको यहां छोड़कर तुम अयोध्यापुरी को जाओ और उनको गाढ़ आलिंगन करके हमारे बचन को कह देना कि, रामजी कहे हैं कि कौसल्या सुमित्रा केकयी के सहित पृथिवी का पालन भलीभांति करें सीता के बिरह में रामजी ने अपना प्राण त्याग किया है। इसके बाद कौसल्या आदि हमारी माताओं को यथा योग्य प्रणाम करके हमारा समाचार विस्तार से कह देना कि सीता के बिरह में रामजी ने अपना प्राण त्याग किया है इस प्रकार बन में सीता से रहित होकर रामजी के विलाप को सुनकर लक्ष्मणजी भय से विकल और आतुर हो गये।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकांडे द्विषष्ठितमः सर्गः ॥ ६२ ॥

इसके उपरान्त लक्ष्मणजी की दशा को देखकर रामजी का शोक और भी बढ़ गया, शोक सागर में डूबते हुए रामने विपत्ति के अनुसार गरम श्वास को रोते हुए बोले, हे लक्ष्मण ! हमारे समान पापी जगत में और दूसरा कोई नहीं होगा क्योंकि दुःख पर दुःख पहुंच कर हमारे हृदय को टुकड़ा टुकड़ा कर देता है। पूर्व जन्म में जो कुछ मैंने पाप किया है, वही पाप का फल निमित्त पाकर हमको मिलता है जिसमें मैं डूबता हूं। पहिले राज्य का नाश फिर पिता मरण माता से वियोग बन में आकर स्त्री से वियोग अब इस समय सब दुःख इकट्ठे होकर हमारे पेट को पूरा कर दिया है पहिले के तीन तो शरीर के भीतर पीड़ा पहुंचाते थे किन्तु यह सीता का वियोग हमारे सब दुःखों को इस प्रकार जाग्रत किया है जैसे ईंधन को पाकर आग जलती है, जानकी को राक्षस ने अवश्य हरण किया है तब वह आकाश में पहुंच कर रोदन किया है इस विषय में हम ऐसा मानते हैं यदि पृथिवी में जानकी का विलाप होता तो हमको अवश्य सुनाई देता। प्रिया के सुन्दर शरीर का नाश देखकर हमारे इस शरीर का पालन नहीं होता है यही दुःख है। जानकी का वह

सुन्दर स्वरूप हमको नहीं दीखता है इससे सीता राक्षसों के अधीन में निश्चय है जैसे राहु के मुख में पड़कर चन्द्रमा नहीं दिखाई देता। इस निर्जन बन में अकेली जानकी को बधकर उसके रक्त मांस को राक्षसों ने खा गये। हमारे न रहने पर जानकी को जब राक्षसों ने खसीटा होगा तब वह आर्त शब्द से त्राहि किये होंगी जैसे व्याधाके जाल में फंसकर मृगी त्राहि करती है। देखो हमारे साथ पर्वत की शिला पर बैठ कर तुम से अनेक तरह की बातें कह कर प्रहास करती थीं। नदियों में श्रेष्ठ गोदावरी में हम लोगों के साथ सीताजी जाती थीं, परन्तु अकेले वह कभी नहीं जा सकती हैं। कभी कभी हमारे साथ कमल के पुष्प को लेने के लिये जाती थी परन्तु अकेली नहीं जायेगी। यद्यपि यह पक्षी गण वृक्ष पर बैठ कर अनेक प्रकार के शब्द को सुनते हैं तौ भी इस आश्रम में जानकी भय से पूर्ण रहती थी। हे भगवान् सूर्य! संसार के सत्य असत्य कर्म के साक्षी हमारी प्रिया जानकी कहां गईं सो मुझ से कहो। हे भगवन वायु! तुम सब जगह भ्रमण करने वाले हो हमारी प्रिया जानकी का समाचार कहो। इस प्रकार विलाप करते हुए रामजी से न्याय युक्त बचन को लक्ष्मणजी बोले,-हे भाई! शोक को छोड़कर धैर्य का आश्रय लेओ और उत्साह पूर्वक जानकी को खोजने का प्रयत्न करो, उत्साह से कार्य करनेवाले मनुष्य दुष्कर भी कार्य को साधन करते हैं।

इति बाल्मीकिये रामायणे त्रिषष्ठीतमः सर्गः ॥ ६३ ॥

इस प्रकार लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर दीनता युक्त रामजी बोले,-हे लक्ष्मण! इस गोदावरी में तो जाकर देखो कि कमलिनी लाने के लिये तो सीता नहीं गयी हैं। रामजी के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी गोदावरी के तट पर पहुंचे वहां जानकी को न देखकर लौट आये और रामजी से समाचार कह दिये कि न तो उनको वहां देखा है और न उनका शब्द सुन पड़ा और न तो उस प्रदेश में श्रीजानकीजी के पद का चिन्ह है लक्ष्मण के वचन को सुनकर

रामजी स्वयं गोदावरी के किनारे जाकर बोले,-सीते कहां हो, पूछने पर प्राणियों ने नहीं कहा कि राक्षस राजरावण जानकी को हरण किया है, गोदावरी इस बात को कहती है रावण के इस दुष्कर्म और जानकी के विलाप को गोदावरी नदी ने रामजी से कह सुनायी ? परन्तु गोदावरी के वचन को छिपा कर राम जी सीता के शोक से पीड़ित लक्ष्मणजी से बोले, कि इस गोदावरी ने तो कुछ भी नहीं कहा है, किन्तु पिता के वचन को स्मरण करके मैं कहता हूँ, कि पिता माता और वैदेही के बिना राज्य से हीन वन में फल मूल से जीविकी करने वाले मुझको सभी शोक उपस्थित हो गये हैं, वैदेही तो कहां गई कुछ मालूम नहीं। जाति कुल से विहीन जानकी को न देखकर मैं जागरण पूर्वक दिन रात मन्दाकिनी नदी जनस्थान प्रस्रवण नाम का पर्वत यह सब प्रयत्न से खोजूंगा। देखिये ! ये वीर महा मृग हमको वार वार देखते हैं, इससे जान पड़ता है कि यह लोग जानकीजी का कुछ वृतान्त कहेंगे, उन मृगाओं को देख कर रामचन्द्रजी आंसु को बहाते हुए बोले कि सीता कहां है, रामचन्द्रजी के इस प्रकार वचन को सुन कर वे मृगा गण सहसा उठ कर दक्षिण दिशा की ओर चले, जिस दिशा को हरी हुई जानकी गई थीं, उसी दिशा की सूचना देते हुए मृगागण चले। मृगाओं की इस प्रकार विज्ञप्ति को पाकर लक्ष्मणजी रामजी से बोले कि आपने जो मृगाओं से पूछे हैं। कि सीता कहां है इस वचन को सुनते ही आकाश की ओर चले लक्ष्य देते ये मृगा दक्षिण दिशा की ओर जाते हैं इस लिये चलिये हम लोग भी दक्षिण दिशा को चलें, लक्ष्मणजी के वचन को स्वीकार करके रामजी दक्षिण दिशा को प्रस्थित हुए। मार्ग में चलते हुए रामजी पृथ्वी की ओर देख कर लक्ष्मण से बोले कि पृथ्वी पर गिरे हुए पुष्पों को मार्ग में देखो, पुष्प को देख कर रामजी लक्ष्मणजी से बोले कि यह पुष्प मैंने संग्रह करके सीताजी को दिया है यह वही पुष्प है ऐसा सूर्य वायु पृथ्वी में मानता हूं। कि पृथ्वी

देवी ने मेरे दर्शन करने लिये इस पुष्प को रक्षित किया है रामजी लक्ष्मणजी से इस प्रकार कह कर प्रस्रवण नाम पर्वत को देख कर पूछे हे पर्वतराज ? क्या तुमने सर्वांग सुन्दरी जानकी को देखा है, इस तुम्हारे वन के एक देश में हमारी प्रिया नष्ट हो गयी, इस प्रकार क्रोध करके रामजी पर्वत से पूछे जैसे सिंह मृगा को झपटता है, हे पर्वत श्रेष्ठ ! शीघ्र सीता को बताओ नहीं तो मैं तुमको अभी नाश करता हूं। रामचन्द्रजी के क्रोध युक्त बचन को सुन कर प्रस्रवण पर्वत सीता को देखता हुआ भी राम को नहीं दिखा सका। इसके बाद रामजी बोले कि सीता के वृतान्त को न कहने से तुम हमारे बाण से अवश्य दग्ध होओगे। मैं इस बन के वृक्ष पर्वत नदी आदि सभी को सुखाकर नाश करूंगा यदि तुम लोग सीता का समाचार नहीं कहोगे तो इस क्रोधा युक्त बचन को कहते हुए जब रामजी पृथ्वी पर देखे तो बड़े विशाल पग राक्षस के और दौड़ती हुई जानकी के चरण के चिन्ह का चिन्ह दीख पड़ा। सीता और राक्षस के चरण के चिन्ह को देख कर और रथ के टूटी हुई पहियों को तथा धनुष के चिन्ह को देखकर व्याकुल भाव से रामजी लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मणजी ! देखो ? वैदेही के गले के माला के सोने के गिरे हुए विन्दु दिखाई देते हैं और उनके आगे चन्दन और माल्य दिखाई देते हैं हे लक्ष्मण जी ! ऐसा मानते हैं कि यहीं राक्षस फाड़ कर जानकी को खाया है। सीता के विवाद होते हुए घोर राक्षसों का युद्ध यहां हुआ है, मुक्तामणि से विभूषित किस का धनुष यह पृथिवी पर गिरा है, हे वत्स ! यह राक्षसों का धनुष है कि देवतों का है, यह धनुष तरुण सूर्य के समान प्रकाशमान है और कांचन मय कवच विदीर्ण होकर किस का पृथिवी पर गिरा है और अत्यन्त शोभा युक्तछत्र दिव्य माल से भूषित भ्रष्ट होकर गिरा है और यह देव योनि विशेष खच्चर विरथ होकर किसके गिरे हैं और अत्यन्त विशाल और भ्रष्ट यह किस की ध्वजा है और यह श्रेष्ठ बाण दीख पड़ते हैं हे लक्ष्मण इसको देखे किस

के बाण से और किसका यह सारथी विध्वस्त हुआ है, जानकी का हरण हुआ अथवा मरण हुआ, सीता की रक्षिता तो नहीं हैं, भक्षण की गई अथवा हरण की गई जानकी का कौन इस लोक में रक्षा कर सकता है, क्या साक्षात् शिवजीने तो नहीं दया पूर्वक जानकी की रक्षा किया है अथवा इन्द्रादिक देवता मुझको पराक्रम हीन जान कर सीता की रक्षा नहीं किया है तो हे लक्ष्मण ! इस विषय में गुण दोष का विचार करो । यदि ऐसा हो तो हमारे बाण से देवता यक्ष गन्धर्व किन्नर पन्नग उरग मनुष्य आदि सुख को नहीं प्राप्त होंगे । हमारे अस्त्र से संपूर्ण आकाश को देखो आज मैं जानकी के बिना तीनों लोक को नाश करूँगा । ग्रह नक्षत्र चन्द्रमा सूर्य आदि को अपने बाण से नाश करूँगा । पर्वत नदी बन वृक्ष आदि को समुद्र सहित नाश करूँगा । यदि कुशलता पूर्वक देवतागण सीता को नहीं देवगे तो मैं त्रैलोक्य को अपने बाण से नाश करूँगा । हे लक्ष्मण! इस समय हमारे पराक्रम को देखो कि आज हमारे क्रोध से देवता दानव यक्ष राक्षस आदि हमारे बाण समूह से आज सकल जग मर्यादा से रहित होकर नाश को प्राप्त होवेगा इस प्रकार क्रोध पूर्वक आंख को लाल किये बल्कल और मृग चर्म तथा जटा को दृढ़ रूप से बांधने लगे, इस प्रकार क्रोधित रामजी के शरीर की वैसी शोभा हुई जैसी त्रिपुरासुर को मारने के लिये क्रोध करके शिवजी ने शरीर को धारण किया है । इसके उपरान्त लक्ष्मणजी भी अपने धन्वा को चढ़ा लिये जैसे युग के अन्त में प्रलय काल की आग सकल जगत को जला कर संहार कर देती है वैसे संहार करने के लिये प्रस्तुत रामजी क्रोध पूर्वक इस प्रकार लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मण ! जैसे जरा वस्था मृत्युकाल होनहार को कोई टाल नहीं सकता वैसे हम लोगों के इस कार्य को कोई टाल न सके ऐसा कार्य करना चाहिये तो पहिले मैं सीता के निमित्त देवता गंधर्व मनुष्य पन्नग तथा सकल संसार पर्वत बन नदी आदि का अपने पराक्रम से परिवर्तन करता हूँ शेष को

तुम अपने बाण से करना यह कह कर रामजी बाण को संधान करने की इच्छा किये।

इति बाल्मीकिये रामायणे आरण्यकाण्डे चतुःषष्ठितमः सर्गः ॥ ६४ ॥

सीता के शोक से रामचन्द्र अपने क्रोध से प्रलयकाल की अग्नि के समान संसार को दग्ध करने में प्रवृत्त हुए, जैसे शिवजी युग को बीतने पर संहार करने के लिये उद्यत होते हैं वैसे रामजी संसार को नाश करने के लिये धन्वा पर बाण को चढ़ाकर बारबार श्वास लेने लगे और लक्ष्मण को देखने लगे। इसके पहिले रामजी कभी ऐसा क्रोध किसी पर नहीं किये थे वैसा अनोखा रामजी के क्रोध को देखकर लोक विनाश के भय से दीन और कातर होकर विनीत भाव से लक्ष्मणजी बोले,-हे स्वामी! इसके पहिले आप कोमल भाव से प्राणियों के हित को चाहते थे अब इस प्रकार क्रोध करने योग्य आप नहीं हैं आप अपने स्वभाव में स्थित होवें। हे भगवन्! जैसे चंद्रमा में लक्ष्मी सूर्य में प्रभा वायु में गति पृथिवी में क्षमा सदा रहती है वैसे आप में उत्तम यश सदा रहता है। एक के अपराध से संसार का नाश करना उचित नहीं है, क्योंकि इस स्थान के संग्राम में एक-ही रथी का किसी के साथ युद्ध हुआ है इससे अधिक सेना का समागम नहीं जान पड़ता है, इसलिये कहते हैं कि एक के अपराध में अधिक का नाश करना उचित नहीं है, आप सकल प्राणियों के शरण्य हैं, आपही जगत के उत्पत्ति पालन नाश में कारण हैं, जिसका अपराध हो उसको अपराध के अनुसार दण्ड देना उचित है, हे रामजी! सीताजी के अनिष्ट को कौन चाह सकता है, नदी पर्वत समुद्र वन वृक्ष देवता गन्धर्व दानव आपके प्रतिकूल कार्य कभी नहीं कर सकते हैं, जिसने जानकी को चुराया है उसका खोज करना चाहिये। आपके साथ धनुष बाण को लेकर मैं भी हूँ समुद्र पर्वत बन को खोजूँगा यदि हमारे खोजने से जानकी का समाचार नहीं मिलेगा और सकल वृत्तान्त को जानने वाले देवगण सीता की वार्ता आप

से नहीं कहैंगे तो आप अपने बाण समूह से उनको चराचर सहित दंड दीजियेगा ।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकांडे पंचषष्ठितमः सर्गः ॥ ६५ ॥

शोक से जलते हुए और अनाथ के समान विलाप करते हुए अति क्षोह से क्षीण रामजी को धैर्य देकर लक्ष्मणजी उनके चरण को स्पर्श करके शान्त किये और बोले कि महाराज दशरथ ने बड़ी तपस्या और बड़े श्रेष्ठ कर्मों से आपको अमृत के समान पाया है, आपके गुणों से नियन्त्रित होकर आपके वियोग से राजा देवत्वको प्राप्त हुए । हे रामचन्द्रजी ! यदि आप संसार के त्रिविध दुःख को नहीं सहन करैंगे तो प्रकृत मनुष्य किस भांति सहन करैंगे इस प्रकार के औपाधिक दुःख शरीरिक को स्वभावतः होते हैं । देखिये ययाति नहुष आदि राजों को दुःख भोगना पड़ता है। पुरोहित बसिष्ठ अपने सौ पुत्रों को उत्पन्न किया व नाश करके पीछे दुःख को उठाया है, जो सूर्य चन्द्रमा संसार के धर्म की रक्षा करने वाले हैं वह भी राहु से दुःख उठाते हैं । दैव के दुःख से देही कभी नहीं छूटता है, इंद्रादिक देवता भी दुष्टों से दुःख को पाते हैं इसलिये आपको दुःख उठाना उचित नहीं है, हे रामजी ! नष्ट अथवा मृत वैदेही की चिन्ता प्रकृत मनुष्य के समान करना उचित नहीं है, हे रामजी ! ज्ञानी लोग अपनी बुद्धि से शुभ अशुभ के तत्व को जान लेते हैं, जन्मान्तर के पाप पुण्य के फल मनुष्य को अवश्य भोगने पड़ते हैं, आप ऐसे श्रेष्ठ पुरुष को साक्षाद् वृहस्पति नहीं समझा सकते हैं। आपके ज्ञान देवतों को दुरगाह है तौ भी शोक से आपका ज्ञान अन्तर्हित हो गया है इसलिये मैं आपको शिक्षा देता हूँ । इस समय देवतों को पराक्रम दिखाने का अवसर नहीं है इसलिये आप सावधान होजावें ।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकांडे षट्षष्टितमः सर्गः ॥ ६६ ॥

अति श्रेष्ठ सकल गुण युक्त रामजी सार युक्त लक्ष्मणजी के वचन को अङ्गिकार करके अपने क्रोधको शान्त किये और धनुष की

डोरी को ढीली करके रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले हे लक्ष्मणजी! कहां चलना और क्या करना चाहिये किस उपाय से सीता की प्राप्ति होगी इस बात को विचार करना चाहिये, श्रीरामजी के परिताप शान्ति के लिये लक्ष्मणजी बोले, हे रामजी! इसी जनस्थान में पहिले सीता का खोज करना चाहिये क्योंकि यहां अनेक पर्वत दुर्ग गुहा कन्दरा वृक्षों की झाड़ी इत्यादि हैं और यह बन राक्षसों से व्याप्त है वह राक्षस अनेक प्रकार की माया और उत्पात करने वाले हैं, तो पहिले हमारे साथ इन स्थानों को खोज करिये पीछे देखा जायगा। आपके समान बुद्धिमान ओ महात्मा को चिन्ता नहीं करना चाहिये, इस प्रकारके लक्ष्मणजी के बचन के अनुसार रामजी धनुष बाण लेकर लक्ष्मण के सहित सीता को खोजने के लिये चले। कुछ दूर आगे जाकर देखे तो पर्वत शिखर के समान पक्षी राज जटायु को पृथ्वी पर गिरा देख कर राम जी लक्ष्मणजी से बोले, कि इसी पक्षी ने जानकी को खाया है क्योंकि गृध्र का रूप धारण करके यह कोई राक्षस इस वन में भ्रमण करता है यही सीता को भक्षण करके सुख पूर्वक पृथ्वी पर सोया है इस राक्षस को मैं अपने तीक्ष्ण बाण से इस गृध्र रूपी राक्षस का नास करूंगा ऐसा कह कर क्रोध पूर्वक अपने धनुष बाण को चढ़ाकर गृध्रके सन्मुख दौड़े। गृध्रराज जटायु मुख से रक्त को बहाते हुए पक्ष कट जाने से पुरुषार्थ से हीन और दीन होकर रामजी से बोले, हे रामजी! जिस जानकी को आप औषध के समान इधर उधर खोजते हैं, हमारे प्राण के समान उन जानकी को रावण ने हरण किया है। तुमसे और लक्ष्मण से रहित जानकी बलवान रावण से हरी गई थी, सीता को मैंने देख कर उसकी रक्षा करने के लिये मैंने रण में रावण के रथ और छत्र को अपने चरण चोंच से मार कर पृथ्वी में गिरा दिये, जब उसका रथ व सारथी मेरे पंख से निहत हो गया तब रावण खड्ग को लेकर हमारे पंख को काट कर हमें इस दशा को पहुँचाया और सीता को लेकर आकाश में उड़ गया, राक्षस से मारे गये हमको

आप मारने योग्य नहीं हैं, सीता के रक्षा में आसक्त पक्षिराज जटायु को देख कर रामजी अपनी धन्वा को फेंक कर जटायु की शरीर को स्पर्श करने लगे। जटायु को पृथ्वी में गिरा देख कर लक्ष्मणजी रोदन करने लगे, अति धीर रामजी जटायु को दुःखी देखकर रामजी का शोक और भी बढ़ गया, रामजी को शोकाकुल देख कर लक्ष्मणजी बोले राज्य से भ्रष्ट होकर वन में आये यहां सीता से वियोग और पक्षी का मरण इस प्रकार हमारे दुष्कर्म का फल हम लोगों को जलाता है इस संसार में हमसे अभागा कौन होगा जो इस प्रकार की विपत्ति को भोग करेगा। इस प्रकार लक्ष्मणजी अनेक बातों को कह कर दशरथ के सखा जटायु को स्पर्श करने लगे। रावण के अस्त्र से पीड़ित जटायु को हृदय स्पर्श करके सीता के समाचार को सुनकर रामजी मूर्छित हो पृथ्वी पर गिर पड़े।

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे सप्तषष्ठितमः सर्गः ॥६७॥

रामचन्द्रजी गृध्र को रण भूमि में गिरा देख कर लक्ष्मणजी से बोले कि यह पक्षी सीता के लिये मरा है, अब इसका प्राण इसके शरीर में पीड़ा को देता है, हे लक्ष्मणजी ! यदि जटायु को सामर्थ्य हो तो फिर पूछ लीजिये कि सीताको कौन हरण किया है और तुमसे युद्ध किस प्रकार हुआ इस सीता के वृतान्त को विस्तार पूर्वक पूछो रामजी के बचन को सुन कर लक्ष्मणजी जटायु से पूछे कि यदि सामर्थ्य हो तो सीता हरण के विस्तार कहो कि किस कारण और किस अपराध से रावण ने सीता को हरण किया है। और चन्द्रमुखी सीता उस समय क्या कही हैं। राक्षस को क्या पराक्रम है कैसा रूप है और उसका क्या कर्म है और उसका स्थान कहां है इसको ठीक से कहो। अनाथ के समान विलाप करते हुए जटायु रामजी से बोले कि वह दुरात्मा रावण अनेक प्रकार की माया को लेकर सीता को चुराया हमारे पंख कटने पर सीता को लेकर दक्षिण दिशा को गया, हे रामजी ! हमारे प्राण ऊपर को उठते हैं दृष्टि चकित हो गयी है मैं सोने के वृक्ष को देखता हूं यह

अपना मरण अवस्था बतला कर जटायु फिर सीता के समाचार को कहने लगे कि जिस मुहूर्त में रावण ने सीता को चुराया है उस मुहूर्त में खोई हुई वस्तु स्वामी को शीघ्र मिलती है परन्तु यह ज्ञान रावण को नहीं हुआ क्योंकि जैसे मांस के लोभ से मछलियां कटिया को निगल कर अपना प्राण देती हैं वह निन्द नाम का मुहूर्त था, उस मुहूर्त में हरी गई जानकी के लिये आप लोग चिन्ता न करें उस राक्षस को रण में मार कर आप शीघ्र जानकी को पावेंगे इस प्रकार रामजी से कहते हुए जटायु के मुख से रुधिर की धारा बहने लगी और प्राण निकलने लगा, इतने में जटायु रावण के परिचय को दिया कि विश्रवा का पुत्र कुबेर का भाई राक्षसों का राजा वह रावण है यह कह जटायु अपने प्राण को छोड़ दिया, कहिये कहिये ऐसा रामजी कही रहे थे तब तक जटायु अपने प्राण को छोड़ कर आकाश को चले गये, गृध्र को मरा देखकर दुःख पूर्वक रामजी लक्ष्मणजी से बोले,-इस राक्षसों के देश में यह पक्षी बहुत दिन तक बास किया है वह आज बाण के आघात से मरकर पृथिवी पर गिरा है, काल का अति कठिन क्रम है, हे लक्ष्मण! देखो यह हमारा उपकारी गृध्र सीता के कारण रावण से मारा गया, यह गृध्र राज अपने परम्परा से प्राप्त राज्य को छोड़कर हमारे उपकार के लिये अपना प्राण नाश किया है, धर्म को माननेवाले सज्जन परोपकारी शूरवीर पक्षियों में भी होते हैं। हे लक्ष्मणजी! सीता के हरण का हमको उतना दुःख नहीं है जितना कि उपकारी इस जटायु के मरण का दुःख है। हमारे मान्य और पूज्य जैसे महाराज दशरथ हैं वैसे यह पक्षी राज हैं, इस कारण हे लक्ष्मण! काष्ठ का संग्रह करो और काष्ठ से आग को निकाल कर इस गृध्र का दाह करेंगे। हमारे अग्नि सन्स्कार करने से यह राक्षस परमपद को लाभ करेगा इस प्रकार लक्ष्मणजी से कह कर चिता रोप कर धर्मात्मा राम गृध्र को जलाये, इसके उपरान्त मृगा को मारकर मृग मांससे पिंड दान देकर, जिस मन्त्र से मनुष्य स्वर्ग को जाते हैं उस गृध्र को स्वर्ग जाने के लिये उस मंत्र

को रामजी जप किये, उस मन्त्र के प्रभाव से गृध् स्वर्ग को गया। इसके बाद रामजी गोदावरी में स्नान करके लक्ष्मण के सहित जटायु को तिलाञ्जलि दिये, जगत्पालक रामजी से सन्स्कार को प्राप्त करके परमपद को पहुँचे।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकांडे अष्टषष्ठितमः सर्गः ॥ ६८ ॥

इस प्रकार जटायु को श्राद्ध जल देकर लक्ष्मण सीता को खोजने के लिये दक्षिण दिशा को गये, उस दक्षिण दिशा में जाकर मनुष्यों के आने जाने के मार्ग पर पहुँचे। जन स्थान में जितने लता वृक्ष पर्वत दरी कन्दरा नदी नाला रहा सब जगह जानकी को खोजते हुए जन स्थान से आगे तीन कोस पर क्रौंच बन में पहुँचे। वह बन अत्यन्त भयानक और दुर्गम है। वह सदा अनेक प्रकार के वृक्ष लता और पर्वत तथा झरनों से परिपूर्ण है, उस बन में सिंह भालू आदि हिंसक जन्तु अधिक रहते हैं, उस बन में अनेक रंग की पक्षियां सदा मीठे बचन से बोलती हैं। ऐसे क्रौञ्च बन में जानकी को अनेक स्थान में खोजते हुए वहां से तीन कोस चलकर मतंग ऋषि के आश्रम के समीप पहुँचे। उस आश्रम के मध्य में एक बन अति भयंकर है। अनेक रंग के मृग व पक्षी भयानक शब्द को बोलते हैं, वहां के वृक्ष अति सघन हैं और लताओं से वेष्टित हैं, इस प्रकार बन की शोभा को देखते हुए लक्ष्मण सहित रामजी आगे जाकर पाताल के समान गम्भीर एक दरी को देखे। उस दरी के समीप पहुँचते ही महा भयावनी एक राक्षसी को देखे। बड़े विशाल उसके रूप हैं, टेढ़ा मुख है, कुआं के समान गम्भीर उदर तीखे और लम्बे दांत, सर्प के समान काले और खुले केश से वह राक्षसी रामचन्द्र और लक्ष्मणजी को देखकर रामजी के समीप आकर बोली, यहीं रमण करो रामजी से यह कह कर लक्ष्मण जी को पकड़ लिया और हृदय से आलिंगन करके बोली हमारा नाम अयोमुखी है मैंने तुमको रत्न के समान पाया तुम हमारे प्रिय पति हो, हे नाथ! इस बन में तुम हमारे साथ विहार करो। राक्षसी

के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी क्रोध पूर्वक खड्ग निकाल कर राक्षसी के कान, नाक और स्तन को काट लिये इस दशा को प्राप्त राक्षसी भयानक शब्द को करती हुई बन के एकान्त में चली गयी, राक्षसी के चले जाने पर रामचन्द्र और लक्ष्मणजी जानकी को खोजते हुए घोर बन में पहुँचे। वहां पहुँच कर सत्यवादी शीलवान लक्ष्मणजी अत्यन्त पराक्रमी रामजी से हाथ जोड़कर बोले,-हे प्रभो! हमारी बाईं भुजा फरकती है और हमें कुछ अनिष्ट की सम्भावना हो रही है इसलिये हमारे बचन को स्वीकार करके आप अपनी धन्वा को सज्जित करिये, क्योंकि कुछ भय की आशंका है तौ भी यह नील कण्ठाक्षी हम लोगों के युद्ध और विजय को कह रहा है, इस होने वाले युद्ध में हम लोगों का विजय होगा। यह वार्ता लाप आपस में हो रहा था, इतने में महा भयानक शरीर को धारण किये मेघ के समान गर्जता हुआ एक राक्षस दीख पड़ा, वह राक्षस आकर रामचन्द्र और लक्ष्मणजी के सन्मुख उपस्थित हुआ। उसकी विशाल शरीर है उदर में जिसका मुख है अर्थात् बिना शीर का कवन्ध नाम का राक्षस बड़े पर्वत के समान ऊँचा मेघ के समान काल महा शब्द से गर्जना करता हुआ आया, मानो संसार को भक्षण करने के लिये जिह्वा को फैलाये हैं। दो योजन की लम्बी भुजाओं को इसलिये फैलाया है कि इतनी दूर में आनेवाले जीव जन्तुओं को खाकर अपना पेट भरूँगा। इस अभिप्राय से दो योजन तक अपनी भुजाओं को फैला कर बन में रहता था, अब रामचन्द्रजी के मार्ग में आकर कोस भर से दूर पर खड़ा हुआ राम लक्ष्मण को देखने लगा। अत्यन्त पराक्रमी रामजी लक्ष्मणजी के सहित वहां पहुँचे। राक्षस के गोद में भी पहुँच कर रामजी धैर्य और गम्भीरता को नहीं छोड़े। इस अवस्था में प्राप्त रामजी से लक्ष्मणजी बोले,-कि हमको अकेले इस भूत के वास्ते बलि देकर आप भाग जाइये। इस प्रकार लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर रामजी बोले,-हे वीर! भय मत मानो इस प्रकार विषाद करना

तुमको उचित नहीं है, इसके बाद कबन्ध राम लक्ष्मण से बोला कि, आप दोनों धनुष बाण खड्ग को धारण किये कौन हो, इस घोर बन में आकर हमारे भाग्य से हमको मिले हो, कहिये आपलोग क्यों यहां आये हैं, इस देश में भूखे हुए मुझको हमारे भाग्य से तुम दोनों आये हो अब यहां से तुम लोगों का बचना कठिन है दुरात्मा कबंध के बचन को सुनकर मलीन होकर रामजी लक्ष्मणजी से बोले, हे सत्यपराक्रमी लक्ष्मण ! कठिन से कठिन दुःख हम लोगों को प्राप्त होता है, जानकी न पाकर भी प्राण नाश होने की विपत्ति सन्मुख आयी है, हे लक्ष्मणजी ! सब प्राणियों में काल बलवान है, हे पुरुष श्रेष्ठ! तुमको और हमको काल दुःख से मोहित कर लिया है, परन्तु दैवको इसका कुछ भी भार नहीं है क्योंकि बड़े बड़े शूरवीर बलवान अस्त्र शस्त्र को जानने वाले काल पाकर इस प्रकार नाश होते हैं जैसे बालू का पुल जल से नाश होता है। अति पराक्रमी रामजी दीनता से लक्ष्मण की ओर देख कर अपनी बुद्धि को स्थिर किये इस विषय में उनको कुछ भी विषाद नहीं हुआ।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकांडे एकोनसप्ततितमः सर्गः ॥६९॥

सन्मुख खड़े हुए रामचन्द्र तथा लक्ष्मण पर कबंध अपनी भुजा को जाल के समान फेंक कर बोला, क्षुधा से पीड़ित मुझको देखकर भय से भीत तुम दोनों यहां क्यों खड़े हो, हमारे आहार के लिये तुम दोनों को दैव ने भेजा है। राक्षस के बचन को सुनकर लक्ष्मण जी पुरुषार्थ करने का निश्चय करके बोले हे राक्षसाधम ! तुमको विधाता ने आहार दिया है और हमको भी विधाता ने आहार दिया है, इसलिये हम दोनों अपने खड्ग से शीघ्र तुम्हारी लंबी भुजाको काटता हूँ। हे पापी राक्षस ! तुम अपने को विशाल और पराक्रमी जानता है, लोक को अजित करके हम दोनों को खाने की इच्छा करते हो। हे रामचन्द्रजी ! इस बिना अस्त्रवाले का प्राण मारना उचित नहीं है, क्योंकि शास्त्र में लिखा है कि राजाओं को चाहिये

कि बिना शस्त्रवाले का प्राण से बध न करें किन्तु उसके किसी प्रिय अंगको काटकर छोड़ देवें। रामलक्ष्मण के इस प्रकार बचन को सुनकर वह कबंध राक्षस क्रोध से मुख को बाकर रामचन्द्र और लक्ष्मणजी को खाने की इच्छा किया। देश काल को जाननेवाले रामचन्द्र और लक्ष्मणजी अपने अपने खड्ग को लेकर रामजीने राक्षस के दाहिने भुजा को और लक्ष्मणजी ने बाईं भुजा को काट डाले भुजा को कटते ही चिल्लाता हुआ वह राक्षस पृथिवी पर गिर पड़ा। उसके शब्द से चारो ओर भयानक सा हो गया, भुजा को कटने से रुधिर की धारा को बहाता हुआ दीन होकर वह दानव बोला कि आप दोनों कौन हैं, राक्षस के इस प्रकार बचन को सुनकर लक्ष्मणजी अपना वृत्तान्त कबन्ध सेकहने लगे कि यह दशरथ के पुत्र राम हैं और मैं इनका भाई लक्ष्मण हूँ, माता पिता की आज्ञा से राम राज्य को छोड़ कर बन में आये हैं, स्त्री के सहित और मेरे सहित इस घोर बन में रहते हैं, देवता के समान प्रभावशाली राम को निर्जन बन में रहने से राक्षसों ने इनकी भार्या को अपहरण किया है उनको खोजने के लिये इस बन में हम लोग आये हैं, अपना वृत्तान्त राक्षस से इस प्रकार कह कर उसके वृत्तान्त को पूछने लगे कि तुम कौन हो और किस कारण कबंध के समान इस बन में बिचरते हो इस प्रकार कबंध के बचन को सुनकर इन्द्र के बचन को स्मरण करके प्रीति पूर्वक लक्ष्मणजी से बोला, हे पुरुष श्रेष्ठ! आप लोगों के लिये स्वागत मैं बड़े भाग्य से आप लोगों को देखा है बड़े आनन्द की बात है कि आप दोनों ने मेरी भुजा को काट कर गिरा दिये हैं, आप से मैं अपना वृत्तान्त कहता हूँ आप सुनिये।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकांडे सप्ततितमः सर्गः ॥७०॥

हे राम महाबाहु! पहिले मैंने बाल और इन्द्रादि लोक पालों के समान रूप और सुन्दरता को पाकर अभिमान से लोक को उद्वेजित किया और बन में अनेक ऋषियों को इधर उधर त्रासित करने लगा। हमारे

इस निन्दित कर्म से व्याकुल होकर स्थूलशिरा नाम महर्षि क्रोध से मुझे शाप दिया कि तैंने अपने रूप के अभिमान से अनेक मुनियों को त्रासित किया है इससे तेरा कुत्सित रूप हो जावे। शाप को सुनकर मैंने मुनि से प्रार्थना किये हमारी प्रार्थना मुनि ने मुझसे कहा कि जब तेरी भुजा को त्रेता में रामजी अपने खड्ग से काटेंगे तब तेरे शाप का अन्त होगा और तेरा सुन्दर रूप हो जायेगा इस शाप से मुझे दनु नाम दानव का पुत्र जानो। ऋषि के शाप से तो मैंने राक्षस का स्वरुप पाया फिर मैंने उग्र तपस्या कर ब्रह्माजी को प्रसन्न किया ब्रह्माजी प्रसन्न हो दीर्घ आयु होने का वरदान दिये, ब्रह्माजी के वरदान को पाकर मैंने इन्द्र को कुछ न समझ कर उनसे लड़ाने गया। इन्द्र ने क्रोध करके अपना वज्र हमारे ऊपर फेंके जिस वज्र से हमारा मुख धंसकर उदर में चला गया परन्तु ब्रह्माजी के वरदान से मर न सका। तब मैं इन्द्र से बोला कि आपके वज्र से सिर हमारा नीचे को हो गया है अब बिना कुछ भोजन किये कैसे जीवन हो सकता है, दया पूर्वक इन्द्र दो योजन की भुजा हमारी कर दिया है उन्हीं दोनों भुजाओं से मैं इस बन में रहता हूँ और गोदमें आये जन्तुओं को खाकर अपना पेट भरता हूँ, जाने के समय इन्द्र ने मुझ से कहा कि जब रामचन्द्र इस बन में आकर तेरी भुजाको काटेंगे तब तू स्वर्ग को जायगा, अब ऋषि और इन्द्र के बचन से मैं आपको अवश्य रामचन्द्र जानता हूँ। अब आप हमारे मित्र हैं मित्र भावसे आप हमको जला दीजिये जिसमें हमारी गति हो जावे। राक्षस के बचन को सुनकर रामजी लक्ष्मणजी के ओर देखते हुए इस प्रकार बोले, कि रावण ने हमारी भार्या सीता को हर लिया है उनको खोजने के लिये हम दोनों जनस्थान से इधर को आये हैं, केवल रावण के नाम को जानते हैं उसके रूपको तथा स्थान को और प्रभाव आदि को नहीं जानते हैं यह सब बताकर तुम हमारा उपकार करो तो सूखे काष्ट को लाकर तुमारी शरीर को जलावें। रामजी के इस प्रकार बचन को सुनकर

राक्षस बोला कि इसके पहिले शाप से मुझे अज्ञानता थी मैं कुछ नहीं जानता कि वह मैथिली और रावण कौन हैं क्योंकि शाप के दोष से हमारी बुद्धि भ्रष्ट है, जब आगमें आप मुझे जलावेंगे तब मेरा पाप नाश होकर शुद्धज्ञान होगा तब मैं आपका उपकार करूँगा, जब तक सूर्य नारायण अस्तगत नहीं होते है तब तक आप मेरी शरीर को जलाने का प्रयत्न करिये। तब मैं आपका उपकार करके आपकी सहायता करूंगा।

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्य काण्डे एकसप्ततितमः सर्ग ॥७१॥

कबंध के इस प्रकार बचन को सुनकर लक्ष्मण जी काष्ट को इकट्ठा करके उसके चारो ओर ढेर लगा दिये और लक्ष्मणजी चिता में अग्नि लगा दिये जब चिता प्रज्वलित हुई तब मांस से पूर्ण घीके भूषण चन्दन माल्य को धारण किये चिता से निकल कर विमान पर बैठ कर दिशाओं को प्रकाशित करता हुआ आकाश में जाकर रामजी से बोला, हेरामजी! सीता के मिलने का उपाय सुनो। छ युक्तियों से अर्थात् संधि विग्रह पान आसन संस्थान और द्वैविधि आप इन छ युक्तियों से राजा लोग अपना कार्य साधन करते हैं और अपनी दशा के परिणाम को सेवते हैं इस समय तुमारी दशा ठीक नहीं है जिस दशा के प्रभाव से तुमारी स्त्री हरी गई इस लिये अर्थात अपने कार्य को साधने के लिये लक्ष्मण से अतिरिक्त मन्त्री करो। नहीं तो तुमारा कार्य नहीं होगा। हे रामजी! बाली नाम बानर क्रोध करके अपने भाई सुग्रीव को राज्य से निकाल दिया है वह सुग्रीव पंपा सरके समीप ऋष्यमूक पर्वत पर चार बानरों के सहित रहते हैं, वह बानर श्रेष्ठ सुग्रीव महा पराक्रमी सत्यवादी विनीत बुद्धिमान पण्डित और महाबली हैं, वह भाई से त्रासित होकर राज्य की इच्छा से वहां रहते हैं, सीता को खोजने में वह तुम्हारी सहायता करेंगे। भविष्य में तुम्हारा कल्याण होगा रामजी मन में शोक और चिन्ता न करो। शीघ्र जाकर आप शीघ्र सुग्रीव से मित्रता करो। यदि यह कहो कि

शक्ति मान को मित्रता से क्या होगा तो सुग्रीव के इष्ट कार्य को साधन करने में आप समर्थ हैं और सीता को खोजने में वह समर्थ है इसलिये अग्नि को साक्षी देकर आप उनसे मित्रता कीजिये, वह सूर्य के सपुत्र हैं वालि बानर के त्रास से पंपा सर में ऋष्य मूक पर्वत पर आश्रम बनाकर निवास करते हैं । हे रामजी ! आप सत्य जान कर सुग्रीव बानर से मित्रता कीजिये वह राक्षसों की माया को और उनके स्थान को भली भांति जानता है जगत् की कोई वस्तु उससे छिपी नहीं है, वह अपने बानरों को भेजकर आपके सीता का वृत्तान्त मंगावेगा, इस समय जानकी रावण के गृह में बैठी तुम्हारी चिन्ता कर रही हैं, वे बानर सुमेरू के शिखर पर अथवा पाताल में प्रवेश करके राक्षसों को मार कर सीता को आपके वास्ते देवेंगे ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे आरण्यकाण्डे द्विसप्ततितमः सर्गः ॥ ७२ ॥

सीताजी को खोज करने की उपाय को श्रीरामचन्द्रजी को देकर पुनः कबंध बोला, जिधर ये वृक्ष पुष्पित हैं आप इसी कल्याण देने वाले मार्ग से जाइये, ये पश्चिम दिशा में जामुन पियाल पनस पिपल अमला पाकर तिन्दुक गूलर वर आम अशोक महुआ निंब कदंब मौसरी तिलक पुन्नाग करवीर कनैल आदि के वृक्ष फूल और फल से परिपूर्ण हैं उन के अमृत रूपी फल को भोजन करके आगे जाइयेगा, इस बनको अति क्रमण करके आगे के पुष्पित वृक्ष इन्द्र के नन्दन बन के समान हैं उन वृक्षों में सदा फल लगा रहता है, सब ऋतुओं के फल फूल सदा उस बन में मिलते हैं, और बड़े सुन्दर वृक्ष और रमणीय पर्वत वहां के हैं, अमृत मय फल लक्ष्मणजी तोड़ कर देवेंगे आप उसको भोजन करके वहां के सुन्दर जलाशय के जल को पान करके आनन्द करते हुए पर्वत और बनको लांघते हुए जब आप चलेंगे तब आगे आपको पंपा नाम के तालाब पर जाइयेगा । उस तालाब में उतरने का मार्ग है उस तालाब का सेवार आदि से रहित स्वच्छ जल है उस तालाब में सुन्दर कमल फूले हैं, उस तालाब पर हंस कुक्कुट

कुररी आदि पक्षी सदा सुमधुर वचन को बोलते हैं। घृतपिंड के समान वहां के पक्षियों के मछली आदि को मारकर मांस आदिके भोजन से तृप्त होकर और कमल से सुगन्धित जलको पीकर स्फटिक के समान सुन्दर शिला पर शयन करियेगा। उसी सर में मतंग ऋषि के शिष्य आकर विश्राम करते हैं, उसी के समीप एक शबरी नाम की तपस्विनी है हे रामजी ! धर्म में स्थित सब लोक को नमस्कार करने योग्य आपके दर्शन से शबरी स्वर्ग को जावेगी । पम्पासर के पश्चिम तीर पर गुप्त आश्रम मतंग मुनि का है, उस बन में अनेक प्रकार की हाथी है तौ भी आश्रम में संचार नहीं कर सकती हैं, उस बन का नाम मतंग बन है। उस बन में अनेक रंग के पक्षी सदा रमण करते हैं, पम्पासर के अर्थात् मतंग मुनि के आश्रम के आगे ऋष्यमूक पर्वत है, वह पर्वत अत्यन्त ऊँचा है इस पर सदा सर्प लोग बास करते हैं। उस पर्वत के शिखर पर शयन करने वाले पुरुष स्वप्न में जिस धन को देखते हैं जागने पर उसी धनको पाते हैं। पंपा सरके वाल गजों के कलोल का शब्द पर्वत परसे सुनाई देता है, वहां के सुन्दर जल बायु पशु पक्षी आदि को देखकर शोक को बिसर्जित करियेगा । हे रामजी ! उस पर्वत में एक बड़ी भारी गुहा है उस गुहा के द्वार पर एक शीतल जल का सरोवर है। उसी गुहा में सुग्रीव नाम बानर है और कभी पर्वत के शिखर पर भी वे बानर बैठते हैं इस प्रकार कबंध राम लक्ष्मण से इस प्रकार कह कर सुन्दर माल्य को धारण करके सूर्य के समान आकाश में चमकने लगा। आकाश में स्थित कबंध को देखकर रामजी लक्ष्मण सहित कबन्ध से बोले कि अब तुम जाओ ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकांडे त्रिसप्ततितमः सर्गः ॥७३॥

इसके उपरान्त रामचन्द्र लक्ष्मणजी के सहित कबंध से बताए हुए मार्ग से पश्चिम दिशा को चले। वे राम लक्ष्मण पर्वतों पर दाख बदाम अंगूर इलायची आदि वृक्षों के पुष्प और फल को देखते हुए

सुग्रीव से मिलने की इच्छा करके चले, वहां पर्वत के शिखर पर राम लक्ष्मण विश्राम करके पंपासर के पश्चिम तीर पर प्राप्त हुए। पंसासर के विलक्षण शोभा को देखकर राम लक्ष्मण शबरी के आश्रम पहुँचे। शबरी रामचन्द्रजी को लक्ष्मण के सहित देख कर हाथ जोड़ कर खड़ी हुई और राम लक्ष्मण के चरण को पकड़ कर प्रणाम किया और विधि पूर्वक पूजन करके सुन्दर फल मूल को भोजन कराया। रामचन्द्रजी शबरी की पूजा को स्वीकार करके बोले, हे तापसी! तुम्हारी तपस्या तो निर्विघ्न होती है, तुम्हारे अहार विहार तो नियम पूर्वक होते हैं और तुमसे गुरू की सेवा तो अच्छी तरह बन पड़ती है तुम्हारे मन में आनन्द तो है। रामजी से पूछी गई शबरी रामजी से अपना वृतान्त कहने लगी। हे भगवन्! आप के दर्शन और पूजन से हमारी तपस्या गुरू की सेवा और हमारा जन्म सब सफल हुआ जब मैंने आप के चरण की धूली को अपने शिर पर चढ़ाया। अब आपकी कृपा से मैं परमपद को पाऊँगी। आपको चित्रकूट में आने पर इधर से महर्षि लोग आपके दर्शन के वास्ते जाते थे तब आपके दर्शन की मुझे भी अभिलाषा हुई। हमारे मन के हाल को जान कर महर्षि लोग अनुग्रह पूर्वक हमसे बोले, हे सिद्धे! रामचन्द्रजी लक्ष्मण सहित तुम्हारे आश्रम में आवेंगे और तुम्हारा दिये गये अतिथ्य को स्वीकार करके तुमको परमपद देवगे, उनकी कृपा से तुम परम पद को लाभ करोगी। उन मुनियों के बचन को सुनकर तभी से मैं पंपासर के समीप आश्रम करके आपकी परीक्षा करती हूं, शबरी के इस प्रकार बचन को सुन कर परम ज्ञानी शबरी से रामचद्रजी बोले, कबन्ध से मैंने तुम्हारे गुरू मतंग ऋषि के प्रभाव को सुना हूं उनकी दर्शन की अभिलाषा हमको है, रामजी के मुख से इस प्रकार सुन कर शबरी ने कही कि लक्ष्मण के सहित देखिये पशु पक्षी से संपन्न वही मतंग मुनि अपनी उग्र तपस्या से इस दिशा को प्रकाशित कर दिये हैं, देखिये कि मतंग मुनि अतिव्रत और उपवास करने के कारण तीर्थों

में नहीं जा सकते हैं, सो उनको स्नान कराने के लिये नदियों समेत ये सातो समुद्र उनके यहां आये हैं। देवता गण इस आश्रम में आकर कमल पुष्प से मुनिको जो अर्घ्य दिये हैं वे पुष्प पृथ्वी पर गिरे हुए आज तक मलीनता को नहीं प्राप्त हुए हैं अब आप सब कुछ देख सुन चुके यदि आप कहिए तो मैं अपने इस शरीर को त्याग करूं जिन मुनियों की मैं दासी हूं, उन मुनियों के समीप अब मैं जाने की इच्छा करती हूं। शबरी के बचन को सुनकर रामजी बोले, हमारी पूजा को तू कर चुकी अब जहां इच्छा हो जाओ। रामचन्द्रजी की ऐसी आज्ञा पाकर अपनी शरीर को अग्नि में हवन किया। दिव्य रूप धारण करके विमान पर बैठकर स्वर्ग को चली गई॥

इति बाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे चतुःसप्ततितमः सर्गः॥ ७४॥

शबरी को स्वर्ग जाने से रामचन्द्रजी लक्ष्मण के सहित चिन्ता करने लगे। और लक्ष्मणजी से बोले, हे सौम्य! इस सुन्दर आश्रम को देखकर चित्तमें अति हर्ष हुआ। देखिये विश्वास पूर्वक मृगा आदि सिंह के बच्चों के साथ खेलते हैं, नदि और तीर्थों के सहित सातो समुद्र के दर्शन और आचमन तथा पितरों को तर्पण हुए अब यहां से शीघ्र पंपासर को चलिये जहां ऋष्यमूक पर्वत है जिस पर्वत पर बन्दरों के सहित सुग्रीव बानर रहते हैं हम उनको शीघ्र देखना चाहते हैं क्योंकि हमारा कार्य उनके अधीन है रामजी के इस प्रकार बचन को सुनकर लक्ष्मणजी बोले मैं शीघ्र चलने की इच्छा करता हूं इसके बाद रामजी उस आश्रम के वृक्षों के फल पुष्प की शोभा को देखते हुए पंपा सर को चले, मार्ग में मतंगसर में स्नान करके कमल आदि की शोभा को देखते हुए सीता के शोक से दुःखी रामजी पंपासर में पहुंचे, वहां अनेक रंग के शिखर को धारण करने वाले पर्वत स्फटिक के समान स्वच्छ वहां का जल अनेक रंग के फूले कमल अनेक रंग की पक्षियों के मनोहर शब्द तिलक बीजपूर

अशोक पनस पुन्नाग चम्पक कदंब करवीर वट आदि के सुन्दर वृक्षों पर मालती जूही बेला केतकी माधवी आदि लताऐं स्त्री के समान उन वृक्षों को आलिङ्गन किये हैं इस प्रकार सरोवर की शोभा को देखकर जानकी के विरह में रामचन्द्रजी मुक्त कण्ठ से विलाप करने लगे । और लक्ष्मणजी से कहने लगे वहीं ऋष्यमूक पर्वत है उसी पर्वत पर वानरों के सहित सूर्य पुत्र सुग्रीव रहते हैं यह कह कर रामजी पुनः लक्ष्मण से बोले हे लक्ष्मण सीता के बिना हमारा जीवन किस प्रकार रह सकता है, सीता बीरह में अत्यन्त व्याकुल राम वहां के हर एक सुन्दर स्थानों को देखकर विलाप करते हुए उस बन में प्रवेश किये ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे अरण्यकाण्डे सपंचसप्ततितमः सर्गः ॥ ७५ ॥

❀ अरण्य काण्डः समाप्तः ❀



वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकांडे

प्रारम्भः।

॥ दोहा ॥

राम कथा पावन सदा कहै सुनै जो कोय। ताकों श्रीभगवान सों प्रेम प्रीति अति होय ॥१॥
मङ्गल मणि मर्याद मणि सकल धर्म मणि धीर। लाल रूप मणि भूप मणि आनंद मणि रघुवीर ।२॥
गूंग वेद को उच्चरैं पंगुडांकि गिरि जांय। जासु कृपा वन्दौं तिन्हैं राघव होंय सहाय ।३।

श्रीरामचन्द्रजी पम्पासर और मतंगसर पर जाकर अनेक रंग के कमल तथा कमलिनी और सरोवर में भांति भांति के मछलियों की विचित्र शोभा को देखकर लक्ष्मण के सहित रामजी व्याकुलता से बिलाप करने लगे। वहां रमणीय सब काल में सुख देने वाले पंपासर को देखकर काम से पीडित के समान रामजी लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मण देखो इस बनके वृक्षों को देखो, ये वृक्ष पर्वत के शिखर के समान ऊंचाई को धारण किये हैं, भरत के दुःख से और जानकी के हरण रूपी शोक से संतप्त मुझको यह बन व्याधि की नाईं पीड़ा को देते हैं। हमारे समान दुखी को भी ये वृक्ष सुख देने वाले हैं। सर्पमृगा पक्षी आदि से युक्त कमलिनी भी शोभा को धारण किये है। देखिये यह घासों की हरियाली और वृक्षों से अनेक रंग के पुष्प गिर कर सुन्दर शय्या के समान मालूम होते हैं। हे लक्ष्मणजी! पुष्पों से समृद्ध वृक्षों को पुष्पिलता आच्छादित किये हैं। हे लक्ष्मणजी! यह वसन्त काल का समय है इस समय मे कामदेव को उद्दीपन करने वाले वायु चलते हैं। उस वायु के झकोरे से वृक्षों के पुष्प टूट टूट कर पृथिवी पर गिरते हैं मानो स्वार्गीय देवी देवता पृथिवी देवी की पूजा करते हैं, उन वृक्षों की डालियों पर बैठ कर भ्रमर सुन्दर गीत को गाते हैं, इन वृक्षों के डालियों पर बैठकर मतवाले कोकिला वायु से हिलती हुई डोली डाली को देखकर ऐसा शब्द करते हैं मानो जैसा नृत्य होता है। दुखियों के दुःख नाश करने में

कुशल और सुख देने वाले शीतल मन्द सुगन्ध वायु चलते हैं। यहां की यह सब शोभा इस चैत्र मास में सीता के बिना हमको पीड़ा देरहा है। हे लक्ष्मणजी! देखो पक्षियों में इस समय परस्पर कैसा प्रेम है किमयूरनी कामकी अभिलाषा से पति के अभिमुख है। यदि हरी न गई होती तो हमारी भी सीता हमारे साथ ऐसाही आचरण करती। इस वसन्त काल में इन वृक्षों के सुन्दर पुष्प हमको निष्फल सा जान पड़ते हैं। अति सुन्दर शोभा को धारण किये पुष्प से समृद्ध ये बन वृक्षों पर जो भ्रमर बैठकर अपने सुन्दर गीत को गान करते हैं हमारे लिये यह निष्फल के समान है। इस समय प्रसन्नता पूर्वक ये जो पक्षीगण बोलते हैं इससे जान पड़ता है कि राम के उन्नाद से ये अपनी अपनी स्त्रियों को पुकारते हैं। जहां सीताजी हैं यदि वहां वसन्त काल का आगमन होगा तो वह भी इन सामग्रियों को देख कर हमारे समान सोचती होंगी। यदि वहां वसन्त नहीं होगा तौभी हमारे बिरह में उनका जीवन किस प्रकार होगा। अथवा यदि वहां वसंत काल होगा भी तो शत्रु से पीडित जानकी को वसन्त काल क्या करेगा। युवती कमल नयनी कोमल बचन बोलने वाली हमारी सीता इस वसन्त काल को देखकर निश्चय अपने जीवन का त्याग करेगी। पतिव्रता सीता हमारे बिरह में अपने जीवन को नहीं रख सकती है। क्योंकि सीता का भाव हमारे हृदय में और हमारा भाव सीता के हृदय में भली भांति निवेशित है। यदि यह मलय्य की वायु अत्यन्त शीतल है तौभी हमको आग के समान मालूत पड़ता है। पहिले यह वायु सीताके संयोग से हमको सुख देता था। हे लक्ष्मणजी! देखो पहिले यह काग पक्षी आकाश में से शब्द सुनाता था अर्थात् जानकी के अनिष्ट का विचार करता था आज सीता के विरह में हम को देखकर प्रसन्नता पूर्वक वृक्षोंपर बैठकर अपना बचन हमको सुनाता है। इससे यह सूचित होता है कि इस समय श्रीजानकी के सन्देशा को लाकर हमें सुनाता है और सीता के समीप चलने की अनुमति देता

है। इन पुष्पित वृक्षों की डालियों पर बैठे हुए पक्षियों के बचन इस बन में काम से व्यथित कर देते हैं। पवन से तोड़ी गई इस तिलक की मञ्जरी पर मद से स्खलित प्रिया के समान भ्रमर एकाएक आकर बैठ जाते हैं। वायु के झकोरे से गिरा यह अशोक का गुच्छा भी जनो को अत्यन्त पीड़ा देनेवाला है। हे लक्ष्मणजी! चित्त में क्षोभ को देनेवाले कामदेव के सहायक इस आम के मौर को देखो। हे लक्ष्मणजी! देखो, सुन्दर इस पम्पाबन में किन्नरगण अपनी स्त्रियों के सहित बिहार करने के लिये इतस्ततः इधर उधर घूमते हैं। जल में तरुण सूर्य के समान सुन्दर सुगन्ध से युक्त यह कमलिनी कैसी शोभा को देती है हे लक्ष्मणजी देखो! यह स्वच्छ पम्पाका जल नील कमल से सुगन्धित है, इसके तट पर क्रौंच हंस आदि बड़े बड़े पक्षी सदा कलोल करते हैं। तरुण सूर्य की आभा के समान कमल के केसरों को भँवरों ने गिरा कर जल को आवृत कर दिया है। यह बन के मध्य में जल पीने की इच्छा करनेवाले मतवाले गज ओ मृगा आदि जन्तुओं की झुण्ड शोभित हो रही है जिन जानकी को कमल पुष्प प्राण से भी प्रिय था उन जानकी को बिना मैं अपने जीवन को नहीं रख सकता हूँ। आश्चर्य है कि आज दुर्लभा जानकी को कामदेव मुझे स्मरण दे रहा है। मैं जानकी के बिरह में कामदेव को धारण कर लेते यदि यह बसन्तकाल बारबार हमको परिताप नहीं देता तो जो बस्तु जानकी के साथ में हमको रमणीय लगते थे। उनके बिना आज वही बस्तु क्रूर जान पड़ता है, हे लक्ष्मणजी! यह कमल के दल जानकीजी के नयन समान है मैं इनको कुछ देखता हूँ। कमल के सर से मिला हुआ वृक्ष की छाया में जो यह सुन्दर और शीतल वायु चलता है वह सीता के श्वास के समान ढंठा है। हे लक्ष्मणजी! देखो पम्पा के दक्षिण पर्वत पर फूली हुई कनैल की शाखा कैसी सुन्दर मालूम होती है और इस पर्वत में अनेक रंग के धातु हैं क्योंकि वायु के चलने से अनेक रंग का रज (धूली) उड़ता है। पर्वत के

के शिखर पर फूले पलाश के पुष्प प्रवाल (मूँगा) लता के समान शोभा को देता है और पम्पा के जल से सींची गयी ये मालती माधवी बेला जूही केतकी कमल करवीर सेंदुवार कुन्द पलाश विल्व महुआ बकुल चम्पक तिलक पुन्नाग अशोक छतून सेंभर मन्दार आम्र अढौल कचनार मुचिलिन्द कुदुदाल सिरीष सैसव साल्मली तमाल चन्दन आदि के फूले हुए वृक्ष फूली हुई सुन्दर लताओं से प्रेम पूर्वक आलिंगन किये हैं हे लक्ष्मणजी ! पम्पासर के मनोहर वृक्षों की शोभा की शोभा को देखिये । इन वृक्षों से सुगन्ध को लेकर सुन्दर वायु चलता है और इन पुष्पों की विचित्र शोभा को देखकर प्रेम के मारे भँवरे आकर बैठते फिर उड़ कर दूसरे फूल पर चले जाते हैं । ऐसे सुगन्ध के लोभी भ्रमर पम्पावन के वृक्षों पर इस प्रकार क्रीड़ा करते हैं । यह पम्पा का जल गंगाजी के जल के समान निर्मल है । हे रघुकुलमणि ! लक्ष्मण ! यदि जानकीजी हमारे साथ इस बनमें निवास करके बनकी विचित्र शोभा को देखती तो अयोध्या अथवा स्वर्ग तक की इच्छा नहीं करती और जानकी के साथ इस तृण की हरी शय्या पर बिहार करते हुए हम भी अन्य किसी सुन्दर वस्तु की इच्छा नहीं करते । नहीं तो कान्ता के वियोग यह सब हमको परिताप देते हैं । हे लक्ष्मणजी ! देखो पम्पा के इस रमणीय पत्थलों को शिलाओं पर मृगी के सहित मृगा लोग बिहार करते हैं इनके प्रेम और बिहार को देख कर हमारे मन में और भी सन्ताप होता है कि यदि सीताजी के साथ मै इन सुन्दर शिलाओं पर बिहार करते तो अतिशय आनन्द को लाभ करते । यदि हमारे साथ सीताजी इस पंपा बन के शीतल मन्द सुगन्ध वायु के सुख को सेवन करती तो उन का जीवन सार्थक होजाता । हे लक्ष्मण शोक को नाश करने वाले इस सुन्दर वायु को धन्य लोग सेवते हैं । कमल नयनी चन्द्रवदनी सीता राक्षस के अधीन होकर कैसे अपने जीवन को धारण किये होंगी । बनसे लौटकर जब

धर्मात्मा सत्यवादी राजाजनक मुझसे पूछैंगे कि सीता कहां हैं तब मैं उनको क्या उत्तर देऊंगा। पिताके आदेश से बन में चलते हुए हम अभागे के साथ अपने धर्म को पालन करने के वास्ते सीताजी हमारे पीछे चलीं वह हमारी प्रिय सीता आज कहा हैं उनके मुख कमल को देखे बिना हमारा हृदय फटता है। देखें अब कब जानकीजी के मुख के सुन्दर बचन हमें सुन पड़ैंगें। जब अयोध्या में कौशल्या आदि सीताजी के पूछने लगैंगी तब मैं क्या कहूंगा। हे लक्ष्मण! तुम जाओ और यह वृतान्त अयोध्या में भरतजी से कहो नहीं तो मैं सीता के बिरह में अपना प्राण छोड़ देवेंगे। इस प्रकार दीन और अनाथ के समान रामजी के विलाप को सुनकर लक्ष्मणजी बोले, हे रामचन्द्रजी धैर्य को धारण करिये और चिन्ता को छोड़िये, बुद्धि को इतना कलुषित करना उचित नहीं है प्रियजन के वियोग के दुःख को स्मरण न करना चाहिये, बल्कि उस का त्याग करना चाहिये क्योंकि जलमे भींगी हुई भी वर्ति (वत्ती) को दीपक जला देता है वैसेही शान्त पुरुष को भी शोक नाश कर देता है, पाताल में अथवा पाताल से गुप्त प्रदेश में भी रहने वाला रावण हम लोंगों के हाथ से नहीं बच सकेगा। पहिले सीता की खोज करना चाहिये कि वह जीवित हैं कि नहीं हैं इसके बाद शत्रु से बदला लेनेका उपाय किया जायेगा। यदि सीता के सहित रावण दैत्योंकी माता दिति के गर्भ में बास करे तो भी बिना नाश किये नहीं छोड़ूगा। हे रामचन्द्रजी! आप कृपणता को छोड़ कर स्वस्थ होओ बिना प्रयत्न के कार्य सिद्ध नहीं होता। उत्साही पुरुष बलवान होता है उत्साह से हीन होकर कार्य का साधन नहीं होता है, इस संसार में उत्साह रखने वाले पुरुष को कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है। केवल उत्साह के आश्रम से जानकी को लाभ करूंगा। लक्ष्मणजी के इस प्रकार बचन को सुनकर रामजी शोक और मोह को छोड़कर धैर्य को धारण किये। इसके बाद रामजी पंपासर की शोभा को देखते हुए लक्ष्मण के सहित दुःख पूर्वक आगे

को चले। मतवाले हाथी के समान गंभीर और विलास पूर्वक रामजी लक्ष्मणजी के सहित ऋष्यमूक के समीप पहुंचे। अद्भुत दर्शनीय रामजी को ऋष्मूक के समीप भ्रमण करते देखकर सुग्रीव भय से सूख गये। सदा बानरों के रहने के योग्य उस आश्रम में धनुषबाण को लिये महापराक्रमी रामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी को देख कर भयसे त्रासित कपि रामजी के सन्निकट चलने को प्रस्तुत हुए॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे प्रथमः सर्गः॥ १॥

महात्मा रामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी को धनुषबाण लिये ऋष्य मूक बन में घूमते हुए देख कर बाली के भय से डर कर चारो ओर देखते हुए सुग्रीव उद्विग्न हो गये। इसके बाद सुग्रीव शंका पूर्वक अपने मन्त्रियों में रामलक्ष्मण को देख कर विचार करने लगे कि यह दोनों पराक्रमी बालि से भेजे गये हैं वह लोग छल से तपस्वी के वेष में घूमते हुए इस बन में आये हैं इसके उपरान्त सुग्रीव के मन्त्रियों ने धनुर्धारी रामचन्द्र और लक्ष्मणजी को देख कर उस पर्वत से दूसरे शिखर पर जाने की इच्छा किये। वे बानरों के समूह दूसरे शिखर पर जाकर बानरों में श्रेष्ठ सुग्रीव को घेर कर बैठ गये। इसके अतिरिक्त और भी बानर वृक्षों की डालियों तोड़ते और मृगा आदि जन्तुओं को त्रास देते हुए दूसरे पर्वत पर चले गये। इसके बाद हनुमान आदि कपि वीर हाथ जोड़ कर सुग्रीव के सन्मुख खड़े हुए बालि के भय से पीड़ित सुग्रीव से बार्तालाप में कुशल हनुमानजी बोले, इस बालि के किलिष (पाप) की शंका को त्याग करिये, इस पर्वत पर बानरों को भय नहीं करना चाहिये, सकल प्रजाओं को शासन करने वाले राजा को बुद्धि से विचार कर चेष्टा को अनुसार भय दण्ड आदि को जानना चाहिये, बानर के चपल स्वभाव के कारण बुद्धि को छोड़कर व्यवहार करना उचित नहीं है। हनुमानजी शुभ बचन को सुनकर सुग्रीव शुभतर बचन को हनुमानजी से बोले, लंबी भुजा विशाल नेत्र धनुष बाण को धारण किये अश्विनी कुमार

के समान पराक्रमी इन दोनों मूर्तियों को देख कर किस के मन में भय नहीं होगा। हे पुरुषोतम्! मै जानता हूं कि यह वालि वानर से भेजे गये हैं क्योंकि राजा से और जिसके अधिक मित्र हैं उस से भय रखना चाहिये। क्योंकि वेष बनाये कपटी मनुष्य का विश्वास करने में पीछे हानी होती है। राजा लोग अनेक प्रकार के वंचनाकी उपाय को जानने वाले दूसरे को नाश करने वाले होते हैं यह प्राकृत बेष धारी सेवकों को जानना चाहिये। हे हनुमान! तो तुम इन वीरों के समीप जाकर चेष्टा और प्रश्न उत्तर के बात चीत से इन के स्वभाव की परीक्षा करो। यदि तुम्हारे समीप जाने से यह दोनों वीर प्रसन्न मनसे उत्तर प्रत्युत्तर में सन्तुष्ट होजावें तो तुम अवकाश देखकर इनके सन्मुख हमारी प्रशंसा करते हुए उनको इस बनमें आने का कारण पूंछो। यदि इनका काम हम लोगों में द्वेष रहित जान पड़े तब इनके अभिप्राय को भी पूछना। कपिराज सुग्रीव इस प्रकार हनुमानजी को उपदेश देकर सन्तुष्ट हुए, हनुमान सुग्रीव के उपदेश को लेकर रामचन्द्रजी के समीप जाने को प्रस्तुत हुए। इसके बाद हनुमानजी सुग्रीव को प्रणाम करके अति बली रामलक्ष्मण जहां घूमते थे वहां आये॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किधाकाण्डे द्वितीयः सर्गः॥ २

हनुमानजी सुग्रीव के बचन को सादर स्वीकार करके ऋष्यमूक पर्वत से उतर कर जहां रामचन्द्रजी घूमते रहे वहां गये। कपिरूप को छोड़कर तापस का रूप धारण करके रामचन्द्रजी के समीप जाकर बिनीत भाव से रामजी से स्तुति पूर्वक बोले,- राजर्षि तथा देवता के समान सत्य पराक्रमी दृढ़ व्रत को धारण करनेवाले श्रेष्ठ ब्रह्मचारी आप दोनों बनचारी मृगा आदि पशुओं को त्रास देते हुए इस बन में कैसे आये, पम्पातीर के वृक्षों को देखते हुए इस सरोवर को शोभित करते हुए सुवर्ण की प्रतिभा के समान चमकते हुए धैर्य को धारण करने वाले दुष्टों को नाश करने में विष्णु के समान समर्थ अत्यन्त पराक्रमी अपने धनुष बाण शत्रु के नाश की इच्छा करने वाले श्रीमान

रूप से संपन्न हाथी के सूंड़के समान लंबी भुजा को धारण करने वाले आप दोनो बीर इस बनमें किस कारण आये हो । क्या आप लोग देवलोक से तो नहीं आये हैं, अपनी इच्छा से सूर्य चन्द्रमा के समान मनुष्य का रूप धारण करके इस पृथिवी की रक्षा करने के लिये आप लोग घूमते हैं। जैसे देवलोक में इन्द्र अपने बज्र से शोभा को प्राप्त होते हैं वैसे आप के शुभ दर्शन इस धनुषबाण से होते हैं। जैसे संहार करने के लिये जमराज खड्ग को धारण करते हैं वैसे आप महा प्रमाण (अधिक लंबा) खड्ग सोने की लगी मुठिया से युक्त सर्प के समान ये खड्ग आप के हैं, इस प्रकार हमारे पूछने से आप लोग उत्तर क्यों नहीं देते हैं, यहां सुग्रीव नाम बानरों का राजा अधिक धर्मात्मा है वह अपने भाई बालि बानर से त्रासित होकर राज्य और स्त्री आदि को छोड़कर इस पर्वत पर निवास करते हैं और आप से मित्रता चाहते हैं, राजा सुग्रीव से भेजे गये हम आप के समीप आये हैं, हम बानरों में मुख्य हैं हमारा नाम हनुमान है। आप दोनों वीरों के साथ सुग्रीव मित्रता चाहते हैं, हम वायु के पुत्र और सुग्रीव के मन्त्री हैं। सुग्रीव के कार्य के लिये मैं बानर रूप को छोड़ कर ब्राह्मण के स्वरूप में आप लोगों के पास आये हैं, रामचन्द्र और लक्ष्मणजी से इस प्रकार हनुमानजी कह कर मौन होगये । हनुमानजी के बचन को सुनकर रामजी प्रसन्नता पूर्वक समीप में खड़े भाई लक्ष्मणजी से बोले, बानरों के राजा महात्मा सुग्रीवके यह मन्त्री हैं यह हम लोगों से मित्रता की इच्छा करके हमारे समीप आये हैं, श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर शत्रुनाशन लक्ष्मणजी स्नेह युक्त बचन से बोले, कि यह ऋग्वेद यजुर्वेद सामदेव अथर्व वेद को केवल जानने वाले पंण्डित नहीं हैं, इन्होंने संपूर्ण व्याकरण को अध्ययन किया है, क्योंकि इन के वाक्य में कोई अपशब्द नहीं सुन पड़े हैं, इनकी वाणी हृदय में हर्ष को बढ़ाने वाली है स्थान प्रयत्न से युक्त युक्त स्वरव्यंजन के योग्य उच्चारण से ग्रथित बचन किस को प्यारा नहीं होगा । जिस

राजा के मन्त्री इस प्रकार सुयोग्य हैं उस राजा के कार्य की गति क्यों नहीं सिद्ध होगी। कार्य को साधन करने वाले जिसके पास ऐसे कार्यमें कुशल मन्त्री हैं उनके सकल अर्थ का साधन होसकता है इस प्रकार हनुमानजी की प्रशंसा करके लक्ष्मणजी हनुमानजी से बोले, हे मन्त्रिन्! महात्मा सुग्रीव के गुण को हम दोनों जान गये, हम लोग सुग्रीव की इच्छा को स्वीकार करते हैं। जैसा कि सुग्रीव के बचन को आप कहते हैं तुम्हारे बचन के अनुसार हम लोग वैसा करेंगे। रामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर हनुमानजी अपने जयकी सिद्धि को देखकर मित्रता करने की इच्छा किये॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किंधाकाण्डे तृतीयः सर्गः॥ ३॥

अपने कार्य की सिद्धि को देखकर प्रसन्न मनसे हनुमान सन्तुष्ट होगये कि यदि यह महाभाग सुग्रीव के मित्र होजावेंगे तो सुग्रीव अपने राज्य को अवश्यलाभ करेंगे। इसके बाद प्रसन्न होकर हनुमानजी फिर भी रामजी से बोले, आप लोग सुन्दर राजर्षि तपस्वियों के रहने योग्य पंपासर को छोड़कर इस दुर्गम बन में क्यों भ्रमण करते हैं। कपिराज के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी बोले, धर्म में अनुराग रखने वाले दशरथ नाम के राजा थे, वह अपनी प्रजाको उनके वर्ण धर्म के अनुसार पालन करते थे, उनके समय में एक वर्ण दूसरे वर्ण के समान व्यवहार नहीं करता था। संसार में न तो उनका कोई शत्रु और न तो वह किसी के शत्रु थे। सकल चराचर प्राणियों को दूसरे ब्रह्मा के समान पालन करते थे। राजसूय अश्वमेध इष्टि आदि अनेक यज्ञों को पृथिवी पर किये हैं उन महाराज दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र रामचन्द्र यह हैं, यह समस्त प्राणियों को शरण देने वाले हैं पिता के नियोग को पूर्ण करने के लिए राज्य को छोड़कर बनमें निवास करने के लिये यहां आये हैं। जैसे दिन के क्षय में सूर्य के साथ प्रभा का नाश होजाता है वैसे महाभाग रामजी के पीछे धर्म को पालन करने के लिये बन में जानकीजी आईं। इन रामचन्द्रजी के हम छोटे भाई

हैं, हमारा नाम लक्ष्मण है । सकल प्राणियों के हित को चाहने वाले बनवासी रामजी के स्त्री सीता को आश्रम में अकेले मायावी राक्षसों ने हरण किया है, जिस राक्षस ने रामजी की भार्या को चुराया है उसको हम लोग नहीं जानते । दिति के पुत्र दनुनाम का राक्षस शापसे राक्षस की योनि को पाया था उसने स्वर्ग जाने के समय कहा था कि बानरों के राजा सुग्रीव आपकी भार्या के हरण करने वाले राक्षस को जानते हैं, ऐसा कह कर कबंध दिशाओं को प्रकाश करते हुए स्वर्ग को चले गये । हे पवन सुत ! तुम्हारे ऐसे पूंछने पर हमने अपना सब वृत्तान्त कह सुनाये मैं और रामचन्द्रजी सुग्रीव के शरण में प्राप्त हैं, यह रामचन्द्रजी पहिले लोक के नाथ रहे सो अब सुग्रीव को नाथ समझते हैं, जो धर्मात्मा रामजी सकल जगत के रक्षक हैं वह श्रेष्ठ रामजी सुग्रीव के शरण में प्राप्त हैं जिस रामजी के प्रसाद से सकल चराचर प्रसन्न होते हैं वह रामचन्द्र कपिराज सुग्रीव के प्रसाद को चाहते हैं, जिस महाराज दशरथ की आज्ञा को सकल पृथिवी के राजा शिरोधार्य करते हैं उन महाराज दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र रामचन्द्र सुग्रीव के शरण में आये हैं । शोक से पीड़ित रामजी सुग्रीव के शरण में आये हैं सुग्रीव अपने बानरों सहित सहायता करने योग्य हैं । करुणायुक्त लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर वाक्य विशारद हनुमानजी बोले,- इस प्रकार के बुद्धि संपन्न जितेन्द्रिय रामचन्द्र लक्ष्मणजी सुग्रीव को दर्शन करने योग्य हैं, क्योंकि सुग्रीव भी राज्य से भ्रष्ट हैं और बालि से बैर है राज्य तथा स्त्री से भ्रष्ट होकर यहां पर्वत पर रहते हैं । वह आप लोगों की सहायता अवश्य करके सीताजी के खोज को करेंगे । इस प्रकार प्रिय बचन लक्ष्मणजी से हनुमानजी कह कर बोले कि मैं अब सुग्रीव के समीप जाता हूँ ऐसा कह कर बिधि पूर्वक रामजी की पूजा करके हनुमानजी सुग्रीव के आश्रम को चले गये । हनुमानजी को जाने पर लक्ष्मणजी रामजी से बोले,-हे रामजी ! वह वायु के पुत्र जैसा कहे हैं उसको सत्य

जानिये इस देश में आकर हम लोग अपने कार्य का साधन अवश्य करेंगे। हे रामजी ! यह वीर असत्य नहीं कह सकता है, इधर हनुमानजी भिक्षु के रूप को छोड़ कर बानर के रूप से सुग्रीव के पास गये और सुग्रीव की कार्य सिद्धि से प्रसन्न हनुमान रामजी के वृत्तान्त को सुग्रीव से कहने लगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकांडे चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥

हनुमानजी ऋष्यमूक पर्वत पर जाकर बानर राज सुग्रीव से कहने लगे कि यह सत्य पराक्रमी सत्य प्रतिज्ञ अपने भाई लक्ष्मण के सहित रामचन्द्रजी आये हैं। अयोध्यापुरी के राजा महाराज दशरथ के पुत्र हैं, धर्म मार्ग पर प्रवृत्त होकर पिता के बचन को पालन करनेवाले हैं जो महाराज दशरथ ने राजसूय और अश्वमेध आदि यज्ञों से अग्नि को खूब तृप्त किया है और दक्षिणा तथा गौ को दान देकर दिशाओं में ब्राह्मणों को सन्तुष्ट कर दिया है, तपस्या और सत्य बचन से पृथिवी की रक्षा किया है, स्त्री के कारण यह उनके पुत्र रामचन्द्रजी बन में आये हैं बन में रहते हुए महात्मा रामचन्द्रजी की भार्या को रावण ने हरण किया है इस लिये वह आपके शरण में आये हैं आपकी मित्रता की इच्छा रामजी रखते हैं वह रामजी तुमसे पूजनीय हैं हनुमानजी के बचन को सुनकर रामजी के शरण में आने की इच्छा को सुग्रीव ने प्रगट किया और हनुमानजी को साथ में लेकर रामजी के समीप में आकर प्रसन्नता पूर्वक रामजी से बोले,-हे भगवन् ! आप धर्म में शिक्षित हैं तपस्वी हैं संसार पर अनुग्रह करनेवाले हैं आपके गुणों के तत्व को को मैंने हनुमानजी के मुख से सुने हैं, हे भगवन् ! हमारा यही सत्कार है और आपके दर्शन का यही उत्तम लाभ है, यदि मुझ बानर के साथ आप मित्रता करने की इच्छा करते हैं तो हाथ से हाथको ग्रहण करिये, यही मर्यादा लंघनीय नही हैं। इसप्रकार सुग्रीव के बचन को सुनकर रामजी प्रसन्नता पूर्वक अपने हाथ से सुग्रीव के

हाथ को ग्रहण किया । मित्रता को पाकर आपस में राम सुग्रीव मिलाप किये, इसके उपरान्त हनुमान भिक्षुरूप को त्याग करके अपने बानर के स्वरूप से होगये । और सूखे काष्ठ को इकट्ठा करके अग्नि को प्रज्वलित किये, उस प्रज्वलित अग्नि को यथा विधि पूजा करके सुग्रीव और राम मित्र भाव में प्राप्त होकर अग्नि की प्रदक्षिणा किये और अग्नि को साक्षी देकर मित्रता को अंगीकार किये । और परस्पर रामचन्द्र सुग्रीव को सुग्रीव रामको देखकर तृप्ति को नहीं लाभ किये । रामजी कहे कि दुःख और सुखमें हम तुम एक समान हैं और होंगे इसके बाद प्रसन्न होकर रामचन्द्रजी के लिये पुष्पित शाल वृक्ष की शाखा को लाकर आसन दिये, और हनुमानजी प्रसन्न होकर पुष्पित चन्दन वृक्ष की शाखा को लक्ष्मणजी के वास्ते आसन दिये, जब राम लक्ष्मण आसन को ग्रहण करके बैठे तब सुग्रीव अपना वृत्तान्त कहने लगे कि, हे रामजी ! मैं राज्य से भ्रष्ट होकर वालि बानर के डर से इस बनमें रहता हूं उसने हमारे राज्य और स्त्री को हरण करलिया है उसके भयसे व्याकुल होकर अपने प्राण को बचाने के लिये हम इस पर्वत पर रहते हैं, अब आप बालि के भयसे हमको निर्भय करिये । सुग्रीव के बचन को सुनकर विहँस कर रामचन्द्रजी बोले, हे मित्र ! मेरे उपकार का फल आपको विदित होगा तुम्हारे राज्य व स्त्री को हरण करने वाले बालि के प्राण का बध यह हमारे तीखे और अमोघ बाण करेंगे । रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर सुग्रीव परम प्रसन्न होकर बोले, हे रामजी ! आपके प्रसाद से स्त्री और राज्य को लाभ करेंगे । सीता वाली और राक्षसों की सुधिलेने के लिये सुग्रीव और राम की मित्रता से बाम अंग दोनों तरफ फरकने लगे ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धा काण्डे पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥

इसके उपरान्त फिर सुग्रीव रामजी से बोले कि मन्त्रियों में श्रेष्ठ हनुमानजी कुछ वृत्तान्त आपका हमसे कहे हैं, लक्ष्मण के सहित बनवास और बनमें पर्यटन आपका निसकारण है वह हम को मालूम है । राक्षस से

हरी गई मैथिली आपके और लक्ष्मण के वियोग में रोदन करती थी। इसके अन्तर बलवान रावण जटायु गृध्र को मारकर सीता का हरण करके आपको दुःख दिया है, यह सीताजी का वियोग आपको अधिक दिन पर्यन्त नहीं भोगना पड़ेगा हम शीघ्र सीता को लाऊंगा जैसे भगवान ने हयग्रीव अवतार धारण करके मधुकैटभ दैत्य को मार कर वेद का उद्धार किया है। हे शत्रु संहारण रामजी! आपकी भार्या सीता पाताल में हों चाहे आकाश में हों मैं जानकी को खोजकर आपको देऊंगा। इस हमारे बचन को आप सत्य जानिये। इन्द्रादिक देवता भी सीता को छिपाकर नहीं रख सकते हैं राक्षस की क्या गणना है। सीताजी यदि विष को पान किये होंगी तो भी मैं आपकी कान्ता सीताको लाकर आपको समर्पण करूंगा। आप शोक और चिन्ता को छोड़कर धैर्य को धारण करिये। मैं एक दिन राक्षस से हरण की गई एक महा सुन्दरी को देखा है अब मुझे अनुमान होता है कि श्रीजानकीजी वही थीं। क्योंकि वह रामचन्द्र और लक्ष्मणजी के नाम को पुकारकर शोकसे विलाप करती थीं। चार मन्त्रियों के मध्य में हमको बैठा देखकर वह अपने उत्तरीय (चदरा) को और पदके नूपुर (पायजेब) को इस पर्वत पर हम लोगों के सन्मुख गिरा दिया, उस दोनों वस्तुओं को मैं लेकर रखदिया है वह आपके सामने ले आता हूं आप उसको देखिये। प्रिय वादी सुग्रीव के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी बोले,-कि हे मित्र सुग्रीव! उस वस्तुको शीघ्र लाइये विलंब क्यों करते हो? रामचन्द्रजीके वचन को सुनकर सुग्रीव पर्वत की गुहा में प्रवेश करके सीताजी के वस्त्र और भूषण को रामचन्द्रजी के समीप में लेजाकर बोले, हे भगवन्! इसको देखिये, इसके उपरान्त रामचन्द्रजी सुन्दर वस्त्र और अलंकार को लेकर इस प्रकार शोकसे मलीन होगये जैसे तुषार की वर्षा से चन्द्रमा छिपजाते हैं, सीता के स्नेह में निमग्न रामजी धैर्य को छोड़कर रोदन करते हुए मूर्छा युक्त पृथिवी पर गिर पड़े, और उस अलंकार को हृदय स्पर्श करके गरम श्वांस को लेने

लगे आंखों से आंसू की धारा को बहाते हुए लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मणजी ! देखो, हरी गई सीताजी के शरीर के वस्त्र और अलंकार यह हैं श्रीरामचन्द्रजी के इस प्रकार बचन को सुनकर लक्ष्मणजी बोले, हे रामचन्द्रजी ! केयूर कुण्डल को तो मैं नहीं जानता हूं केवल पैर के पायजेब को स्मरण करता हूं क्योंकि नित्य उनके चरण को ग्रहण करके प्रणाम करता था । इसके बाद रामजी सुग्रीव से बोले, हे सुग्रीव ! कहो कि जानकी किस देश को गई । वह हमको दुःख देने वाला राक्षस कहां रहता है, जिस कारण मैं समस्त राक्षसों का नाश करूं । जिस राक्षस ने बनमें हमारी प्रिया जानकी को हरण करके हमको दुखित किया है वह हमारा शत्रु किस प्रकार यमलोक को जायेगा ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किधा काण्डे षष्टः सर्गः ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजी के इस प्रकार बचन को सुनकर हाथ जोड़ कर सुग्रीव बोले, कि हे भगवन् ! उस पापी राक्षस के गुहा स्थानको मैं नहीं जानता हूं और उसके सामर्थ्य तथा पराक्रम को और उसके कुलको मैं जानता हूं आप शोक को छोड़कर इसको सत्य जानिये जिस प्रकार जानकीजी मिलेंगी मैं वैसा प्रयत्न करूंगा, और आप को सन्तोष के लिये परिवार सहित रावण को बध करके अपने पौरुष को सफल करूंगा । हे भगवन् ! आप के समान पुरुष को शोक करना उचित नहीं है आप शोक और चिंता को छोड़कर धैर्य्य को धारण कीजिये । मुझको भी स्त्री और राज्य के वियोग में अत्यन्त दुःख प्राप्त हुआ है परन्तु मैंने धैर्य को छोड़कर व्याकुलता से शोक का पालन नहीं किये हैं । अत्यन्त चपल बानर की जाति होकर जब मैंने शोक का आश्रय नहीं लिया तब महा पुरुष विनीत धर्मात्मा पुरुष श्रेष्ठ आपको धैर्य छोड़ना निन्दित है जैसे बोझा से भरी नौका जाल में डूब कर क्षय होती है वैसे शोक करने वाले पुरुष के बल क्षीण हो जाते हैं और वह पुरुष शत्रु के मध्य में नाश को प्राप्त होता है इसलिये मैं हाथ जोड़कर

आप से बिनय करता हूं कि आप चिंता को छोड़कर पुरुषार्थ का आश्रय लेवें। जो पुरुष शोक को चाहते हैं उनका तेज यश प्रताप सभी नाश होता है, इस प्रकार विनीत भाव से सुग्रीव के समझाने से रामचन्द्रजी कपड़े से अपनी आंख के आंसू को पोंछकर सुग्रीव को हृदय से लगा कर बोले, आप समान मित्र हमारे शोक को नाश करने की उपाय जो कुछ प्रतिज्ञा पूर्वक कहे हैं उस से हमारे मन को सन्तोष हुआ क्योंकि आप के समान मित्र इस काल में दुर्लभ हैं। दुरात्मा रावण से हरी गई जानकी को खोजने का प्रयत्न आप करेंगे और मैं भी जो कुछ बचन दान आप को दिया है उसको सत्य जानिये, आज तक मैंने न तो असत्य कहे हैं और न कहने की अभिलाषा है श्री रामजी के बचन को सुनकर सुग्रीव आदि बानर प्रसन्न हो गये, इसी प्रकार एकान्त में नर बानर अर्थात् राम सुग्रीव बैठकर अपने अपने सुख दुःख का वृत्तान्त कहने लगे ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किंधा काण्डे सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

श्रीरामजी के प्रतिज्ञा पूर्वक बचन से संतुष्ट होकर श्रीरामजी से सुग्रीव बोले, हे भगवन् ! जब आप हमारे सखा हैं तो मैं सब प्रकार से अनुगृहीत हूं, हे रामचन्द्र जी ! आप की सहायता से देव लोक का राज्य हमको प्राप्त है अपने राज्य लाभ की क्या गणना है, आप को मित्र पाकर अपने जाति में मैं श्रेष्ठ हो गया हूं। मैं अपने तुच्छ बुद्धि से आप के गुण महिमा का वर्णन नहीं कर सकता हूं। मित्र चाहे धनी हो दरिद्र हो दुखी हो सुखी हो निर्दोष हो सदोष हो मित्र ही लोकमें परम गति है। मित्र के लिये धन का त्याग सुख का त्याग और देश का त्याग करके मित्र के स्नेह को पालन करना चाहिये। सुग्रीव के बचन को रामचन्द्रजी अंगीकार किये, लक्ष्मण के सहित पर्वत पर एकान्त में बैठे रामचन्द्र और लक्ष्मणजी को देखकर सुग्रीव अपने चंचल नयन से चारो ओर देखते हुए समीप में एक शाल के वृक्ष को पुष्पित देखकर उस वृक्ष की शाखा को फूल और पत्र से युक्त

तोड़कर रामजी के वास्ते शय्या लगाये रामजी उस शय्या पर सुख से बैठे, इस के बाद हनुमानजी उसीशाल वृक्षकी शाखाको उखाड़कर लक्ष्मणजी के वास्ते शय्या लगाये लक्ष्मणजी प्रसन्नता पूर्वक उस आसन पर सुखसे बैठे, रामजी से प्रसन्नता पूर्वक सुन्दर बचन को सुग्रीवजी बोले, मेरे भाई ने मुझको राज्य से निकाल दिया, मैं सदा उसके भय से इस ऋष्य मूक पर्वत पर रहता हूं बालि के बैर से भयभीत होकर बन में निवास करता हूं, सकल प्राणियों को दुःख देने वाली से दुःखी हमको आप अपने शरण में रखने के योग्य हैं। सुग्रीव के इस प्रकार बचन को सुनकर प्रहास पूर्वक रामचन्द्रजी बोले, हे सुग्रीव ! मित्र का फल उपकार है और शत्रु का फल अपकार है इस कारण तुम्हारी स्त्री और धन को हरण करने वाले बाली को मैं बध करूंगा। हे सुग्रीव ! यह सर हमारा कार्तिकेय बन का है अर्थात जिस बन में स्वामि कार्तिकी उत्पत्ति हुई है उस बन में यह सर उत्पन्न है। अर्थात् इन्द्र के बज्र के समान ये हमारे बाण हैं क्रोध में क्रोधित सर्प के समान शत्रु को नाश करने वाला है इसी अपने तीखे बाण से बाली नामक तुम्हारे शत्रु रूपी भाई को बध करूंगा। श्रीरामजी के बचन को सुनकर सुग्रीव प्रसन्नता पूर्वक साधु साधु कहने लगे। और हे रामजी ! शोक से पीड़ित मनुष्य को आपही रक्षक हैं। आपको मित्र पाकर विश्वास पूर्वक अपने मनके वृत्तान्त को कहता हूं हृदय के अन्तर्गत का दुःख हमको अत्यन्त क्षीण करता है इस प्रकार सुग्रीव को रामजी से अपना वृत्तान्त कहने में आखों से आंसू की धाग बहने लगी, आंसू को गिरने से शोक के मारे बोलने में समर्थ नहीं हुए तो भी आंसू के बेग को एकाएक रोक कर रामजी के समीप सुग्रीव ने धैर्यको धारण किये, धैर्यको धारण करके सुग्रीव रामजी से बोले, हे भगवन् ! मैं पहिले अपने जेठ भाई बालि को राज्य का अधिकार दिये थे, वही हम सब बानरों की रक्षा पूर्वक राज्य करता था। किसी कारण से विरोध को मान कर हमारा तिरस्कार

किया और हमारे साथी अनेक बानरों को युद्ध में मार कर पराजय किया, और हमारी स्त्री को हरण किया, जितने हमारे मित्रगण रहे उनको बन्धन (कैद) में डाला, और हमारे मारने का अनेक उपाय करने लगा। उसी बालि के भयसे शंकति होकर मैं आपको देखकर भी आपके समीप नहीं गया। हे रामजी! यह हमारे सहायक हनुमानजी आपके समीप जाकर हमारे दुःख को आप से सुनाये, भक्त वत्सल आप हमारे ऊपर अनुग्रह करके आप यहां आये हैं और हमको अपना मित्र जान कर हमारे दुःखको नाश करने में तत्पर हैं। हे रामजी! यही हमारे मित्र हनुमानजी सब प्रकार से हमारी रक्षा करते हैं यह हमारे चलने पर चलते हैं और हमारे स्थित होने पर स्थित होते हैं। हे रामजी! यह मैं अपना वृत्तान्त संक्षेप से कहे हैं इसको विशेष कहने सुनने से क्या? हमारे ज्येष्ठ भाई बाली का प्रताप लोक में विख्यात है यद्यपि भ्राता का नाश दुःख के लिये होता है तो भी बाली का नाश हमारे सुख के लिये है। हे रामजी! हमारे शोक का यही कारण है, जो मैंने आपसे कहा है, चाहे दुःख चाहे सुख हो मित्र मित्र को परमगति होते हैं। सुग्रीव के इस प्रकार बचन को सुनकर रामचन्द्रजी बोले, कि हे सुग्रीव! जिस कारण तुम्हारे और बालि के विरोध हुआ है उसका कारण कहो। क्योंकि पहिले बैर का कारण सुनकर पीछे बलाबल का विचार करें, क्योंकि हमारा क्रोध निष्फल नहीं होगा और तुम्हारे दुःख को सुनकर वर्षाकाल के जल के बेग के समान हमारा क्रोध बढ़रहा है तुम प्रसन्न होकर अपना समस्त वृत्तान्त कहो जिसमें मैं अपने धनुषबाण को लेकर तुम्हारे शत्रु को नाश करूंगे। इस प्रकार रामजी के बचन को सुनकर चारो बानरों सहित सुग्रीव हर्षित होगये॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किंधा काण्डे अष्टमः सर्गः॥ ८॥

श्रीरामजी के बचन को सुनकर सुग्रीव प्रसन्नता पूर्वक अपने बैर के कारण को कहने लगे कि शत्रुओं को त्रास देने वाले बाली

अधिक स्नेह से हमारा पालन करते थे, पिताके बाद मन्त्रियों ने उन बाली को ज्येष्ठ जान कर राज्य का अभिषेक किये । परंपरा से प्राप्त राज्य को पाकर बाली ने उसका पालन करने लगा । और मैं उनका आज्ञाकारी होगया । इसके बाद एक समय अत्यन्त माया को जानने वाला बालि का पूर्व शत्रु दुन्दुभी उससे लड़ने को आया । वह दुन्दुभी रात्रिकाल में आकर बड़े जोर से चिल्ला कर बालि को रणमें युद्ध करने के लिये ललकारा । शयन किये हुए हमारे जेठे भाई बाली दैत्य के भयंकर चिल्लाने को सुनकर बीर बलवान बाल बाली क्रोध से बाहर आया । वह बाहर आकर उस राक्षस को मारने के लिये प्रस्तुत हुआ, परन्तु मैं और उनकी स्त्री बालि से बहुत प्रार्थना किये कि युद्ध में शत्रुसे हानि होने की संभावना रहती है इस कारण आप अपने क्रोध को सम्हाल कर क्षमा करिये, बालि ने कहा कि रण में उपस्थित शत्रु को देख कर क्षमा करना कादर का धर्म है बीर लोग युद्ध से क्षमा नहीं चाहते, ऐसा कह बालि उस राक्षस से लड़ने को धावा किया भाई के स्नेह से मैं भी उसके पीछे गदा लेकर चला, हम दोनों को जाते देख कर वह राक्षस पराङ् मुख होकर पीछे घूमगया, परन्तु हम लोग उसका पीछा किये, हम लोगों को पीछे जाते देख कर वह राक्षस एक गुहा में घुसगया, अनेक प्रकार के तृण और वेतसे उस गुहा का मुख ढंक गया था । उसी गुहा में वह राक्षस प्रवेश किया उस राक्षस को बिलमें प्रवेश करते देखकर क्रोध पूर्वक बाली मुझसे बोला, हे सुग्रीव ! तुम इस बिलके द्वार पर खड़े रहो । और मैं इस गुहा में जाकर युद्ध पूर्वक इस शत्रु को नाश करूंगा ! हे परन्तप रामजी ! मैं बालि के इस प्रकार वचन को सुनकर मैं भी असुर को मारने के लिये गुहामें चलने के लिये प्रवृत हुआ तब बाली मुझको शपथ देकर कहा कि तुम यहां खड़े रह कर हमारे आगमन के समय की प्रतीक्षा करते रहना यह कह कर बाली गुहा में घुस गया, और मैं उसके बचन के अनुसार एक वर्ष से भी अधिक वहां गुहा के द्वारपर खड़ा रहा । काल अधिक बीत

जाने पर मैं बालि को मरा जानकर यह मन में शंका करने लगे कि अब मैं अपने भाई बालि के मुख को नहीं देखूंगा उसको राक्षस ने अवश्य मार कर भोजन कर लिया, इसके बाद उस बिल से रक्त की धारा बहने लगी और राक्षस का गर्जना सुन पड़ा। राक्षस के गर्जने को सुनकर मैंने बालि के मरण को निश्चय जानकर अपने प्राण के भय से पर्वत की शिला को उस गुहा के मुख पर रख दिये और शोक से व्याकुल होकर उनको तिलांजलि दिये इसके बाद किष्किन्धा में आकर बालि के मरने के समाचार को कह सुनाये, बालि का मरना राक्षस के हाथ से सुनकर राज्य का किसी को शासक नहीं देखकर मन्त्रियों ने मुझे तिलक किया, मैं न्याय और धर्म के अनुसार राज्य का पालन करने लगा। इसके बाद उस दानव को मार कर बालि किष्किन्धा में आया और मुझको राजा देखकर बध करने को चला, और मेरे मन्त्रियों से कहा कि हे पापी ! तुम सब मेरे निग्रह में समर्थ हो ऐसा कह कर उन मन्त्रियों को कारागार में छोड़वा दिया। मैंने बहुत कुछ विनय और प्रार्थना बालि से किये परन्तु उसके मनसे वह शत्रु भाव नहीं छूटा ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

क्रोध से युक्त बालि के सन्मुख हाथ जोड़कर उनको प्रसन्न करने के लिये मैं जाकर विनीत हुआ कि, हे भाई ! बड़े आनन्द कि बात है कि आपने शत्रु को मारकर हमारे को दर्शन दिये हैं, हमारे ऐसे अनाथ को आप ही नाथ हो, यह सब अनेक बात कह कर छत्र और चमर को मैंने उतार कर उनको दिया और कहने लगे कि आप को गुफा में जाने के बाद आप के बचन के प्रमाण से एक वर्ष तक मैं बिल के समीप खड़ा रहा वर्ष बीत जाने के बाद उस गुहा के द्वार से रुधिर की धारा बह चली और राक्षस की गर्जना हमको सुन पड़ी। तब मैं शोक से आर्त होकर अपने प्राण के भय से गुहा के मुख पर शिला को रख कर किष्किन्धा में हम चले आये, आप के अनिष्ट समाचार को सुनकर शोक से पीड़ित

मुझको पुरवासी और मन्त्रियों ने मुझे राज्य का तिलक दिये, तौभी आप राजा होने योग्य हैं मैं प्रति निधि के समान इस राज्य को ग्रहण किया है अब आप पहिले के समान इस राज्य का भोग करिये, हे भाई ! तुम हमारे ऊपर क्रोध न करो, मैं राज्य को छोड़कर तुम्हारे शरणागत हूं । इस प्रकार अनेक बात कहने पर भी बालि ने हमको तिरस्कार करके धिक्कार दिया, और मन्त्रियों से दुन्दुभी के साथ लड़ाई के वत्तान्त को कह सुनाया इस प्रकार मन्त्रियों से बालिने कह कर भाई के स्नेह को त्याग कर दिया और मुझको एक वस्त्र देकर राज्य से निर्वासिन किया, बालि के निष्कासन से मैं इधर उधर बनमें घूमता हुआ इस ऋष्यमूक पर्वत पर आकर किसी प्रकार से अपनी जीविका का निर्वाह करने लगे, हे भगवन् ! बालि के विरोध का कारण मैंने आपसे कह सुनाये, बिना अपराध उसने मुझको त्रास देकर यह दुःख दिया है, इस प्रकार सुग्रीव के बचन को सुनकर धर्मात्मा रामचन्द्रजी हंसकर बोले कि अमोघ सूर्य के समान प्रकाशमान हमारे बाण से दुराचारी बालि का नाश करूंगा जैसे तुम इस शोक सागर में पड़े हो वैसे मैं पापात्मा बालि को मार कर तुम्हारे दुःख को नाश करूंगा । श्रीरामचन्द्रजी के इस प्रकार बचन को सुनकर सुग्रीव आदि बानर सन्तुष्ट होगये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे दशमः सर्गः ॥ १० ॥

श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर सुग्रीव रामजी की पूजा करके प्रशंसा करने लगे, कि हे भगवन् ! आप क्रोध पूर्वक बाण को धारण करने से यमराज के समान तीन लोक का संहार हो सकता है जैसे प्रलय काल के सूर्य से संसार जल जाता है, तौ भी बालि के पुरुषार्थ पराक्रम वीर्य और धैर्य को कहता हूँ उसको सावधान होकर सुनिये, बाली अपने पराक्रम से चारो समुद्र पर्यन्त भूमि का अति क्रमण करता था और बड़े बड़े पर्वतों के शिखर को उखाड़ उखाड़ कर तृण के समान फेंकने लगा और अनेक बन पर्वत समुद्र नदी

को त्रासित करने लगा, एक समय दुंदुभी नाम का असुर एक हजार हाथी का बल रखनेवाला बरदान से मोहित होकर वह राक्षस युद्ध करने की अभिलाषा से समुद्र के समीप गया। रत्नों को धारण करनेवाले समुद्र के समीप जाकर युद्ध को मांगा, धर्मात्मा समुद्र राक्षस के बल और पराक्रम को जानकर और असुर को काल के अधीन जानकर राक्षस से बोले,-हे राक्षस राज! मैं आपके युद्ध के योग्य नहीं हूँ आप पर्वतों में श्रेष्ठ शंकरजी के श्वसुर हिमालय के पास जाइये वह आप से युद्ध करेंगे, समुद्र के बचन को सुनकर वह राक्षस प्रसन्नता पूर्वक हिमबाहु बन में आकर हिमालय के शिलाओं को उखाड़ कर फेंकने लगा और महा गर्जना से पर्वत को त्रास देने लगा। दुंदुभी के इस प्रकार दुराचार को देख कर पर्वत राज हिमवान् राक्षस से बोले, हे असुरराज! हे धर्मवत्सल दुंदुभी! तुम हमको क्लेश देने को नहीं समर्थ हो सकते हो, आप रण कर्म में कुशल हैं, मैं आपकी शरणागत हूँ। हिमालय के बचन को सुनकर क्रोध पूर्वक दुन्दुभी बोला, कि यदि आप युद्ध करने में असमर्थ हैं तो हमारे साथ लड़नेवाले का नाम बताइये। क्रोध युक्त राक्षस के बचन को सुनकर वक्ता में कुशल हिमालय राक्षस से बोले, कि हे असुरोत्तम! किष्किन्धापुरी में इन्द्र के पुत्र बानरों के राजा बालि नाम के बानर रहते हैं वह अत्यन्त पराक्रमी और तुम्हारे साथ युद्ध करने योग्य हैं, उनका और आपका युद्ध इन्द्र और नमुचि दैत्य के समान होगा यदि युद्ध करने की इच्छा हो तो आप शीघ्र वहां जाइये। हिमालय के बचन को सुनकर क्रोध युक्त दुन्दुभी भैसो का रूप धारण करके किष्किन्धापुरी में आकर ऐसी गर्जना किया कि जिसके गर्जने से पृथिवी कांपने लगी। गर्जना करने बाद अपनी सींग से वृक्षों को तोड़ने लगा और खुर से पृथिवी को खोदने लगा स्त्रियों के सहित अन्तःपुर में शयन किये बालि को उस राक्षस के गर्जने को सुना, उसके चिल्लाने को सुनकर बालि

अपनी स्त्रियों के सहित राजभवन से बाहर आकर दुन्दुभी से बोला कि समस्त बनचर जन्तुओं के और बानरों के हम राजा हैं तू क्यों हमारे नगर के द्वार को खोदता है और गर्जना करता है हे दुन्दुभी! मैं तेरे बल व पराक्रम को जानता हूँ तँ अपना प्राण लेकर चला जा, बालि के बचन को सुनकर क्रोधयुक्त राक्षस बोला कि हे वीर! स्त्रियों के बीच में खड़े होकर अपने को बलवान् कहना उचित नहीं है आज हमारे साथ युद्ध करोगे तब मैं तुम्हारे बल को जानूँगा। अथवा आज की रात्रि बीतने पर कल्ह प्रातःकाल तक हम तुम्हारी प्रतीक्षा करेंगे तुम प्रातःकाल हमारे साथ युद्ध करो, क्योंकि काम से मोहित को मारना उचित नहीं है इस समय तुम स्त्रियों के साथ क्रीड़ा करते हो, क्रीड़ारत पुरुष को बध करने में महा पाप होता है दुंदुभी के बचन को सुनकर तारा आदि स्त्रियों को बिसर्जित कर दिया और अपने किंचित क्रोध से बिहस कर बोला कि हे दानव! मुझको मत्त जानकर यदि तुझे मेरे साथ रण में भय नहीं है तो मुझको भी वीरके साथ युद्ध करनेही का सदामद रहता है स्त्रियों से हमारे को सन्तोष नहीं होता है ऐसा कहकर बाली इन्द्र से दी हुई माला को गले से निकाल कर रख दिये और युद्ध करने को उपस्थित होगये और भैंसा रूप दुन्दुभी राक्षस के सींग को पकड़ कर पृथिवी में गिरा दिये और एक मूका उस राक्षस को ऐसा मारे की उसके कान से रक्तकी धारा बहने लगी। दुन्दुभी भी क्रोध युक्त होकर बाली से मल्ल युद्ध किया, परन्तु इन्द्र के समान पराक्रमी महा बली बाली लात मुक्का और पत्थरों के चट्टानों को लेकर उसके साथ महा घोर युद्ध किये, उस घोर युद्ध में राक्षस के पराक्रम की हानी और बालि के पराक्रम की वृद्धि होने लगी। इसके बाद बालि ने दुन्दुभी के सींग को पकड़ कर ऊपर को उठा लिया और पृथिवी में गिग कर उसको ऐसा रगड़ा कि दुन्दुभी के कानों से रक्तकी धारा बहने लगी, और बालि के रगड़ने से दुन्दुभी का प्राण निकलने लगा। दुन्दुभी के मरने के बाद बालि ने उसकी

लोथ को उठा कर जो बालि ने फेंका तो एक योजन पर गिरी उस लोथ को फेंकने के समय राक्षस के शरीर से जो रक्त बहता था वह रक्त का छींटा मतंग मुनि के आश्रम तक पहुंचा, उस रक्त से मुनि आश्रम रक्त हो गया। उस शोणित के बुन्द को देख कर महा भाग मतंग क्रोध और चिन्ता से उस रक्त गिरने के कारण को बिचार करने लगे कि कौन ऐसा दुरात्मा है कि जो इस आश्रम में रक्त की बुन्दों को छोड़ा है, जिस रक्त का छींटा हमारे शरीर को स्पर्श किया है ऐसा कह कर आश्रम के बाहर निकल कर पर्वत के समान ऊंचा और लंबा महिष के रूप में राक्षस को देखा, उसको देख कर ध्यान पूर्वक मतंगमुनि बिचार किये तो उनको ध्यान करने से मालूम हुआ कि यह समीप में रहने वाला बालि बानर इस राक्षस को मार कर मेरे आश्रम में फेंक दिया है, यह वृत्तान्त जान कर मुनि ने बालि को शाप दिया कि हे मूढ़ बानर! मरे हुऐ राक्षस को फेंक कर जो तूने हमारा आश्रम नष्ट किया है इस अपराध के बदले तुझे शाप देता हूं कि यदि आज से कभी तूं इस बन में आओ तो मर जाओ, और जो कोई तुम्हारा मन्त्री इस बन में रहता हो वह भी हमारे शाप को सुन कर इस बनमें न रहे यदि वे बानर के मन्त्री मन्त्रीगण इस बन में रहेंगे तो मैं उनके वास्ते भी शाप को देता हूं कि इस बनके वृक्षों को मैंने पुत्रके समान पालन किया है यदि इस बनके फल मूल वृक्ष आदि को नाश करने वाले जो बानर मुझे कल्ह दीख पड़ेंगे तो वह बानर हजारों वर्ष के वास्ते पर्वत की योनि को भोगेंगे। मुनि के इस प्रकार शाप को सुनकर उस बन में रहने वाले बानर बन को छोड़ कर भाग गये, उन बानरों को देख कर बाली पूंछने लगे कि आप लोग मतंग बनमें बिहार करते हुए इस बन में कैसे आये आप सब बानरों का कुशल तो है, बालि के इस प्रकार पूंछने से वे सब बानर मतंग मुनिके शाप के वृत्तान्त को कह सुनाये। बानरों के मुख से शाप के समाचार को सुनकर बालि मतंग मुनिके समीप गये और हाथ जोड़ कर उनसे पूंछने लगे किन्तु

महर्षि ने आनन्द पूर्वक कहे कि यह शाप तुझे धारण करना होगा शाप का वृत्तान्त सुनकर बाली विह्वल हो गया । उसी शाप के भयसे बाली इस ऋष्यमूक पर्वत पर नहीं आता है और मैं अपना प्राण बचाने के लिये इसी पर्वत के शिखर का अवलंबन करता हूं, उस दुंदुभी दानव की यह हड्डी है पर्वत के समान विशाल यह उसकी शरीर है, और यह अधिक लंबा चौड़ा साल के सात वृक्षों को बाली अपने बल से विष्पत्र कर देता था, इस प्रकार पराक्रम बालि में था अब हम को यह विश्वास कैसे हो कि रण में आप बालि को मार सकेंगे । सुग्रीव के इस प्रकार बचन को सुनकर लक्ष्मण जी विहँस कर बोले, हे सुग्रीव ! आप श्रीरामचन्द्रजी के पराक्रम को नहीं जानते हैं पहिले बालि ने एक एक समय में इस साल वृक्षको एक एक करके पीड़ा पहुंचाय था अथवा एकही समय में इन वृक्षों को पीड़ित कर देता था । यदि रामजी अपने एक बाण से एक साल वृक्ष को नष्ट करें तब भी आपको विश्वास करना चाहिये कि यह बालि को मारेंगे और रामजी ने तो अपने एक बाण से सात साल वृक्षों को पर्वत के सहित पाताल को भेज दिया फिर क्यों नहीं विश्वास होता है कि रामचन्द्रजी बालि को मारने में समर्थ हैं, और यह जो राक्षस की शरीर पड़ी थी इसको रामजी ने अपने चरण से उठा कर दश योजन पर फेंक दिया । तो फिर क्यों नहीं विश्वास होता कि रामजी बालि के साथ युद्ध कर सकते हैं । श्रीरामजी और लक्ष्मणजी के इस प्रकार बचन को सुनकर बिनय पूर्वक सुग्रीव बोले, हे रामजी ! सूरबीर महा अभिमानी बाली है उसका बल और पौरुष जगत् में विख्यात है, उसके सन्मुख संग्राम में लड़ने वाले दूसरा प्रतिद्वन्द्वी नहीं जान पड़ता है उसके भयसे मैं किष्किंधा को छोड़ कर बन में रहता हूं । और हनुमान आदि श्रेष्ठ मन्त्रियों के सहित मैं बालि के भय की शङ्का से बन में बिलास करता हूं । हे मित्र वत्सल ! सन्मित्र के उपालम्भ हमारे को श्लाघ्य है, तौ भी पापात्मा अपने भाई के पराक्रम को जानता हूं परन्तु समर में आपको कैसा पराक्रम है

यह नहीं जानता हूं और न तो आपके बलकी परीक्षा किये हैं इस लिये अपने स्वयं कातर होकर यह मैं आपसे कहता हूं। क्योंकि आपके सारयुक्त बचन गंभीरता धैर्य और आपकी आकृति हमारे कामना सिद्धि की अर्थात आप बालि को मार सकेंगे इस बात की सूचना को इस प्रकार देती है जैसे राख से ढकी हुई आग तेज की सूचना देती है, महात्मा सुग्रीव के इस प्रकार बचन सुनकर हंस कर रामचन्द्रजी सुग्रीव से बोले, कि हमारे पराक्रम का विश्वास अभी तुमको नहीं है, यह विश्वास तुमको युद्ध में होगा। यह कह कर रामचन्द्रजी सुग्रीव को धैर्य देकर दुन्दुभी दैत्य की पड़ी हुई शरीर को अपने बायें पैर के अंगुष्ठा से उठाकर दश योजन पर फेंक दिये, राक्षस की शरीर को फेंकते देखकर सूर्य के समान प्रकाशमान रामचन्द्रजी से सुग्रीवजी फिर बोले, जिस समय इस राक्षस के शरीर में रक्त सांस भरा था उस समय युद्ध से थकित हमारा भाई बाली इसको एक योजन पर फेंका अबतो इसके रक्त मांस नहीं है, हड्डी सूख गई है, हे रामजी आपके पराक्रम और बालि के पराक्रम को जानने की सामर्थ्य हमको नहीं है, आप के बज को विश्वास का कारण यही है कि आप शाल के वृक्षों को विदारण कीजिये, हे रामजी! जैसे तेजस्वियों में सूर्य भगवान हैं जैसे पर्वतों में हिमालय श्रेष्ठ है जैसे जन्तुओं में सिंह पराक्रमी है वैसे मनुष्यों में आप बलवान हैं॥

इति बाल्मीकीयेरामायणे किष्किन्धाकाण्डे एकादशः सर्गः॥११॥

सुग्रीव के सुन्दर बचन को सुनकर सुग्रीव के विश्वास के लिये श्रीरामजी अपने धनुष पर बाण को चढ़ाकर साल वृक्ष का लक्ष्य कर के ऐसा बाण छोड़े कि उस बाण के शब्द से पृथ्वी आकाश और दिशायें गूंज उठीं, वह रामचन्द्रजी के बाण वेग पूर्वक उन सात साल वृक्षों के सहित पाताल में जाकर वहां के रहने वाले दैत्य का नाश करके फिर वह बाण रामचन्द्रजी के पास चला आया, श्रीरामजी के इस प्रकार चरित्र को देखकर सुग्रीव विस्मय को प्राप्त हो गये और रामजी से हाथ

जोड़कर विनय पूर्वक साष्टाङ्ग दण्डवत् कर के प्रसन्नता पूर्वक बोले, हे पुरुष श्रेष्ट रामजी ! आप सब अस्त्र शस्त्र के जानने वाले हैं, आप के सन्मुख युद्ध में इन्द्रादिक देवता भी नहीं ठहर सकते बालि बानर की क्या गड़ना है, हे प्रभो ! जो आपने सात महा ताल वृक्षों के सहित पर्वत और भूमि को आपने एक बार में नाश किया है, तो हे रामजी युद्ध में आप के सन्मुख कौन ठहर सकता है, हे भगवन् ! इन्द्र वरुण के समान पराक्रमी आप को मित्र पाकर हमारा शोक नाश हो गया और हमको आपकी परा प्रीति हो गई । अब हमारे कल्याण के वास्ते हमारे भाई रूप शत्रु को शीघ्र नाश कीजिये हमारी यही प्रार्थना है। सुग्रीव के इस प्रकार बचन को सुनकर रामचन्द्रजी सुग्रीव को हृदय से लगा लिये और लक्ष्मण के समान सुग्रीव को प्यार करने लगे। और सुग्रीव से बोले कि, अब हम लोग इस पर्वत को छोड़कर किष्किन्धापुरी को चलना चाहिये, वहां चलकर बैर करने वाले अपने भाई बालि से युद्ध करने की इच्छा को प्रगट करो। श्रीरामजी के इस प्रकार के बचन को सुनकर सुग्रीव हनुमान आदि बानरों के सहित रामजी किष्किन्धापुरी में गये, और रामचन्द्रजी किष्किन्धा बन में जाकर एक वृक्षकी ओट में छिप कर ठहर रहे । सुग्रीव बालि के द्वार पर जाकर युद्ध की कामना से गर्जना किये, सुग्रीव की गर्जना को सुनकर बाली अपना लंगोटा दृढ करके क्रोध युक्त गर्जना करता हुआ बड़े वेग से सुग्रीव के सन्मुख आया, इसके बाद बालि और सुग्रीव का इस प्रकार युद्ध हुआ जैसे आकाश मार्ग में बुद्ध और मङ्गल ग्रह परस्पर युद्ध करते हैं, दोनों वीर आपस में गदा युद्ध करते २ थकित होकर मल्ल युद्ध करने लगे, एक अपने लात मुका से दूसरे को घायल कर देता था, सुग्रीव के पराक्रमा को देख कर बाली क्रोध पूर्वक सुग्रीव को एक मुक्का ऐसा मारा कि उसको मूर्छा आगई और सुग्रीव के मुंह से लोहू बहने लगा । इधर रामचन्द्रजी बालि और सुग्रीव को एक समान देख कर पहिचान नहीं करसके कि कौन बालि है और कौन सुग्रीव है बालि का परिचय न पाकर रामजी ने शंका युक्त

अपने बाण को नहीं छोड़े मूर्छा बीत जाने के बाद सुग्रीव अपने सहायक रघुनाथजी को न देख कर ऋष्यमूक बनकी ओर दौड़ कर चला। महा बलि बाली अपने शत्रु सुग्रीव को भागते देख कर सुग्रीव का पीछा किया, सुग्रीव उसके भयसे भाग कर मतंग बन में चला गया, जब मतंग बन में सुग्रीव को जाते देख कर शाप के भय से बाली उस बन में न जाकर बोला कि जाओ आज हमारे हाथ से तेरा प्राण बचा, ऐसा कह कर बालि किष्किन्धा में लौट आया! इसके बाद हनुमान आदि के सहित श्रीरामजी को आते देख कर युद्ध में घायल सुग्रीव शिर झुका कर रामजी से बोले, हे रामजी। हमको आप अपना पराक्रम दिखा कर कहे कि किष्किन्धा में चल कर युद्ध की इच्छा से बालि को ललकारो। और तुम्हारे युद्ध के समय में जब तक मैं अपने बाण से बालि को न मारूंगा तब तक ऋष्यमूक बनको नहीं आऊंगा। इस प्रतिज्ञा रूप आपके बचन प्रमाण से मैंने किष्किन्धापुरी में जाकर बालि को ललकारे और उसके साथ महा युद्ध किये परन्तु आपने अपने बचन को कुछभी पालन नहीं किये। सुग्रीव के बचन को सुनकर श्रीराजी करुणा और दीन युक्त बचन से बोले, कि हे मित्र! क्रोध को त्याग कर हमारी ओर ध्यान दीजिये जिस कारण मैंने बाण को नहीं छोड़े हैं उस कारण को सुनिये। अलंकार स्वरूप बल और तुम दोनों का एकही समान है, इस लिये हम तुम्हारे शत्रु को पहिचान न सके और बिना परिचय के मैंने बाण का प्रयोग नहीं किये क्यों कि बाण के प्रयोग से यदि हमारे इष्ट वस्तु का नाश होता तो हमारी मूर्खता और अज्ञानता का परिचय लोक में हो जाता। लोग यही कहते कि श्रीरामजी की अनुमति से सुग्रीव बालि के साथ युद्ध करते थे सो रण में रामचन्द्र ने अपने परम मित्र सुग्रीव को मारा है, इस विषय में सीता लक्ष्मण सहित अभय दान देने की प्रतिज्ञा हमारी नष्ट हो जाती, और आपही हम सब बन बासियों के शरण हैं आप शंका को छोड़ कर बालि के साथ फिर से युद्ध करिये, मैं इस युद्ध में अपने एक बाण से क्षणभर

में बालि को मारूंगा । यह सुग्रीव से कह कर श्रीरामजी लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मणजी ! यह नाग पुष्पीलता को उखाड़ कर सुग्रीव को गलेमें पहिना दीजिये । श्रीरामजी के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी पर्वत पर से नागपुष्पी लता को उखाड़ कर सुग्रीव को गले से पहिना दिये सुग्रीव उस माला को धारण करके ऐसी शोभा को प्राप्त हुए जैसे सूर्य के अस्त काल में बगले के झुंड की शोभा होती है ।

कवित्त ।

फूल्यो कपिराज उर आनंद समात नाहीं धाय रघुनाथ पांय छूये शिर नायके ।
कहे हनुमान एई बाली के महान काल जान तू निदान राजमिल्यो आय धायके ॥
चौंकि उठ्यो बाली अंशुमालीकै कपाली कोऊ पालिवे सुग्रीव हाली आवो चित चायके ।
तौलौं कहीं दूत बात जटा शीत भूति गात ऐसे युगभ्रात शुभ देखे तहँ जायके ॥

सुग्रीव लक्ष्मणजी से दीनई लताकी माला को धारण करके श्रीरामचन्द्रजी के सहित किष्किन्धापुरी को चले ।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥

इसके उपरान्त ऋष्यमूक पर्वत से लक्ष्मण और सुग्रीव आदि बानरों के सहित रामचन्द्रजी किष्किन्धापुरी को चले, रामचन्द्रजी का बचन से भूषित सूर्य के प्रकाश के समान प्रकाश मान बाण को लेकर महात्मा रामचन्द्रजी सुग्रीव और लक्ष्मण के सहित आगे चले, उनके पीछे अति बलवान हनुमान और पराक्रमी नल नील चले, सबके सहित रामचन्द्रजी बन में अनेक प्रकार के फल पुष्प से युक्त वृक्षों की शोभा को देखने लगे । उसकिष्किन्धा बनमें सुन्दर जलको धारण करने वाली नदीयां बह रही हैं अनेक प्रकार के हरी और गुहा तथा कन्दरा को धारण करने वाले मनोहर पर्वतों के शिखर दिखाई देते हैं सरोवरों में अनेक भांति के कमल खिले हैं, उन जलाशयों पर बक्कत और चकोर हंस आदि पक्षी कलोल करते हैं उनके सुन्दर शब्द से वह बन अधिक सोहावन होगया है, कोमल घास को चरने वाले मृगा निर्भय बन स्थली में विहार करते हैं, अपने उज्वल और तीखे दातों से हाथियों के झुंड पर्वत की गुहाओं में से निकल कर पर्वतों पर ठकर खेलाते हैं, उन्हीं पर्वतों के शिखर पर

बड़े बिशाल बिशाल बानरों के समूह बैठे आनन्द करते हैं, वे सब बानर गण सुग्रीव को देखकर उनकी अधीनता के कारण सुग्रीव के पीछे चले, मार्ग में चलते हुए रामचन्द्रजी कुछ दूर पर वृक्षों के महा समूह को देखकर सुग्रीव से पूंछे कि हे सुग्रीव ! यह मेघ के समान नील वर्ण वृक्षों का समूह कैसा दीख पड़ता है, यह वृक्ष इतने ऊंचे और सघन है कि यह अपने ऊंचाई से आकाश को मेघके समान अच्छादित किये हैं, इनके अन्तर में केला के वृक्ष और भी हरे और सघन हो गये हैं इस बन को घोर होने का क्या कारण है इस बनको देखकर हमें अतिकुतुहल होता है हे सुग्रीव इसके वृत्तान्त को कहो, श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर मार्ग में चलते हुए सुग्रीव बोले, यह आश्रम बहुत बड़ा है और श्रम (थकावट) को हरण करने वाला है, इस आश्रम में अनेक प्रकार के फल पुष्प पशु पक्षी और सुन्दर जलाशय हैं, इस आश्रम में सप्तजना नामके मुनि रहते थे, वह अधो मुख हो कर तपस्या करते थे, वह इस प्रकार घोर तपस्या करने लगे कि सात दिन में एक बार बायु को पीते थे, इस प्रकार सौ वर्ष तक तपस्या करके इसी शरीर से स्वर्ग को चले गये, उन्ही मुनि के प्रभाव से आज भी यह बन इस शोभा को प्राप्त किये है हे रामजी ! इस बन में इन्द्रादिक देवता भी नहीं जा सकते हैं साधारण मनुष्य की क्या गणना है, जो कोई पशु पक्षी अनजान से इस बनमें चले जाते हैं वह फिर लौट कर नहीं आते हैं वह पशु पक्षी उसी बन में मरजाते है, हे रामजी ! इस बन में गीत और बाजे का जोमधुर शब्द सुन पड़ता है वह अप्सराओं का है, और जो दिव्य चन्दन का सुगन्ध इस बन में उड़ता है वह अप्सराओं के शरीर के चन्दन का है, यह आश्रम के काल भोग भूमि नहीं है कर्म भूमि भी है। देखिये इस बन के अग्निहोत्र की आगकी धूम से इन वृक्षों की शाखायें धूसर होगई है, इन महर्षि को लक्ष्मणजी के सहित प्रणाम करिये, इनको प्रणाम करने से मनुष्यों के अशुभ नाश हो जाते हैं, सुग्रीव के बचन को सुनकर लक्ष्मण सहित रामजी हाथ जोड़ कर मुनि को प्रणाम किये, मुनि को

प्रणाम करके कुछ दूर मार्ग जाकर बालि से पालित किष्किन्धा पुरी में पहुंचे । रामलक्ष्मण के सहित प्रसन्न मनसे सुग्रीव शत्रु रूप बालि को नाश करने के लिये फिर भी किष्किन्धा में जाकर गर्जना किये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किधाकाण्डे त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

हनुमान नल नील आदि बानरों के सहित श्रीरामचन्द्र और लक्ष्मणजी शीघ्र किष्किन्धा पुरी में जाकर अपने अपने को वृक्षों की ओट में छिपाकर खड़े रहे । सुग्रीव अपने गर्दनों को और ऊंचा करके और क्रोध को अपने अधीन करके युद्ध की कामना से ऐसा गर्जना किया कि मानो बिनास मय के आकाश से बज्र गिरता है और अभिमानी सिंह के समान पराक्रमी सुग्रीव कार्य में निपुण श्रीरामचन्द्रजी को देखकर सुग्रीवजी बोले कि हे रामजी ध्वजा पताका और अन्य समूह से नियन्त्रित बालि की पुरी किष्किन्धा में फिर से आया हूं और हे वीर ! आपने पहिले प्रतिज्ञा किये हैं कि हम बालि को मारूंगा उस प्रतिज्ञा को सफल करियेगा । धर्मात्मा सुग्रीव के इस प्रकार बचन को सुनकर शत्रु को नाश करने वाले रामजी सुग्रीव से बोले, अब हमारी प्रतिज्ञा अवश्य सफल होगी क्योंकि हमको परिचय लेने के लिये लक्ष्मण ने यह नाग पुष्पीलता का माला आप के गले में बांध दिये हैं इस माला से आपकी अधिक शोभा होती है, आज से बालि के बैर का भय तुमको नहीं होगा, मैं शत्रु रूपी तुम्हारे भाईका संग्राम में एक बाण से नाश करूंगा। हमारे आंख केसामने से लौटकर अब बालि नहीं जासकेगा । तुम्हारे सामने मैंने सात ताल के वृक्षों को पर्वत के सहित अपने एक बाण से नाश किया है इसी से जानना कि आज रण में बालिको अवश्य मारेंगे । प्राण पर संकट पड़ने पर भी कभी असत्य नहीं कह सकता हूं । तुम इसकी शंका मत करो । धर्म नष्ट होने के भय से असत्य न कहकर अपनी प्रतिज्ञा को सफल करूंगा। जैसे वर्षाकाल में धान के बीज बोये जाते हैं वैसे तुम बालि से युद्ध चाहने की इच्छा को प्रगट करो, तुम्हारे जिस प्रकार गर्जना को सुनकर

बाली राज भवन से बाहर आवे वैसी गर्जना तुम करो। यदि वह स्त्रियों के साथ विलास में निरत होगा तौ भी शत्रु के शब्द को सुनकर नहीं सहन कर सकेगा। क्यों कि शूर वीर शत्रु के उत्कर्ष को नहीं सहन कर सकते। श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर सुग्रीव ऐसी गर्जना किये कि जैसे प्रलय काल के मेघ की गर्जना होवे। सुग्रीव की गर्जना के भय से पशु पक्षी व्याकुल होकर उस बन से अन्यत्र को चले गये॥

बाल्मीकीये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥

सुग्रीव की गर्जना को अन्तः पुरमें से वाली सुनते ही क्रोधित हो गया। स्वर्ण के समान कान्ति युक्त वाली क्रोध के मारे लाल रंग हो गया, मानो सूर्य की प्रभा नष्ट हो गई है, ऐसा अमर्षी वाली सुग्रीव की घोर गर्जना को सुनकर गंभीरता से पृथिवी को नीचे दबाता हुआ आचला अर्थात् उसके पग रखने से पृथिवी हिलने लगी। ऐसी दशा बालि की देखकर उसकी स्त्री तारा बालि को गले से लगाकर भय पूर्वक कल्याण के बचन को बोली, हे वीर! नदी के वेग के समान यह तुम्हारा क्रोध शत्रु के लिये उचित है, तौ भी इस क्रोध को छोड़ दो कल्ह प्रातःकाल युद्ध करना इस में तुम्हारी लघुता न होगी। इस समय क्रोधयुक्त होकर तुम्हारा एकाएक रण में जाना उचित नहीं है। और जिस कारण मैं तुमको रण में जाने से रोकती हूं उसको सुनो। पहिले सुग्रीव तुमसे लड़ने को आया वह युद्ध में पराजित हो कर प्राण के भय से चला गया अब फिर लौटकर आया है और पहिले से घोर गर्जना किया है यही हमको शंका उत्पन्न होती है कि सुग्रीव को दुबारा आने में कोई विशेष कारण जानना चाहिये। सुग्रीव बिना किसी के सहायता से लौटकर लड़ने को नहीं आया है वह किसी को सहायक पाकर वह युद्ध करने को आया है, एक दिन कुमार अंगद मुझसे सुग्रीव का वृत्तान्त कहे हैं वह मैं तुम्हारे कल्याण के वास्ते तुमसे कहती हूं। अयोध्या नृपति के दो पुत्र अति शूरवीर युद्ध में अत्यन्त पराक्रमी रामचन्द्र और लक्ष्मण बन में आये

हैं, वह शूर बीर सुग्रीव के लिये रण में सहायता करना चाहते हैं, रामचन्द्र शत्रु को नाश करने में प्रलय काल की अग्नि के समान हैं वह रामजी साधुओं के वास्ते निवास स्थान हैं और विपत्ति ग्रस्तवाले पुरुषों के वास्ते शरण है। पण्डित मनुष्य के पीड़ा को नाश करने वाले हैं, ज्ञान विज्ञान से संपन्न हैं। पिता के बचन को पालन करने में निरत हैं, और अनेक गुणों की खानि हैं, इस लिये श्रीरामचन्द्रजी के साथ तुम्हारा विरोध करना अच्छा नहीं है, आप हमारे बचन को अपने हित के वास्ते जानकर शीघ्र सुग्रीव को युवराज बनाइये, हे वीर ! श्रीरामजी के साथ विरोध करना ठीक नहीं है, तुम सुग्रीव को युवराज बनाकर रामजी से मित्रता करो। सुग्रीव से विरोध को छोड़ कर मित्रता करो क्यों कि वह तुम्हारे भाई हैं और लालन पालन करने के योग्य हैं, और सुग्रीव के समान स्नेह करने वाले भाई आज पृथिवी पर नहीं हैं इस कारण सुग्रीव को युवराज बना कर अपने साथ रखिये। और उनको दान मान से सत्कार करिये, उनसे बैर करना ठीक नहीं है, भाई के साथ मित्रता छोड़ कर विरोध न करना चाहिये, हे बानरों में श्रेष्ठ! यदि हमारे बचन आपके लिये हित होवें तो इन बचनों को पालन करके हम को सन्तोष दीजिये। तारा को बहुत कुछ समझाने से भी काल के अधीन बाली अपने विनाश काल को उपस्थित जान कर तारा के बचन पर ध्यान नहीं दिया॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे पंचदशः सर्गः ॥१५॥

तारा को बहुत भांति समझाने से भी बाली तारा को तिरस्कार युक्त बचन को बोले, कि इस शत्रु रूपी भाई की गर्जना को मैं किस कारण सहन करूं। जो सूरबीर दूसरे के पराक्रम को नहीं सहते और प्राण को रहते संग्राम से लौटने की इच्छा नहीं करते उनवीरों के लिये शत्रु के उत्कर्ष को सहन करना मरण से भी कठिन जानना चाहिये, युद्ध को चाहनेवाले सुग्रीव की गर्जना को हम नहीं सहन कर सकते। और सुग्रीव के पीछे रामचन्द्र हम को मारेंगे इसमें तुम को विषाद नहीं

करना चाहिये क्योंकि धर्म को और कार्य को जानने वाले रामजी हमको मार कर क्यों पाप करेंगे। हे तारे! तुम इन स्त्रियों के साथ लौट जाओ हम को लौटाना उचित नहीं है, मैं इस समय जाकर सुग्रीव के साथ युद्ध करके उसके अभिमान का मर्दन करूंगा उसका प्राण नहीं मारूंगा, केवल इस सुग्रीव को पराजय करके लौट आऊंगा। इसके बाद बालि तारा को गलेसे लगा कर स्त्रियों के सहित लौटा दिया, तारा स्त्रियों के मध्य में शोक से पीड़ित हो कर अन्तः पुर को चली गई और बालि महा क्रोधित सर्प के समान श्वास को लेता हुआ अपनी नगरी से निकल पड़ा। बाहर निकल कर बाली शत्रु को देखने की इच्छा से चारो ओर दृष्टि को पसार कर देखने लगा, इतने में स्वर्ण की प्रतिभा के समान कान्ति वाले सुग्रीव को देखकर बाली अपनी जांघियां को दृढ़ कर के बांध लिये और क्रोध से मुक्का को तानकर सुग्रीव की ओर दौड़े। सुग्रीव भी अपने को वैसा ही बनाकर युद्ध की इच्छा से बालि के सन्मुख धावा किये, रण में चतुर सुग्रीव को देखकर बाली बोले, कि एक मुक्का ऐसा मारेंगे कि प्राण तुम्हारे निकल जायेंगे, बालि के बचन को सुनकर सुग्रीव भी बोले कि हमारा यह मुक्का तुम्हारे भी प्राण को खींच लेगा। आपस में वह वीर ऐसा कह कर युद्ध करने लगे युद्ध करते समय दोनों के अङ्ग से रक्त बहने लगा। इसके बाद सुग्रीव एक वृक्ष को उखाड़ कर बालि को ऐसा मारा कि जैसे इन्द्र अपने शत्रु पर वज्र फेंकते हैं उस वृक्ष की आघात से बालि ऐसा विह्वल हो गया जैसे बोझा से भरी हुई नौका जल में डूबने के समय विह्वल हो जाती है। वह दोनों गरुड़ के समान पराक्रमी वीर परस्पर में महाघोर युद्ध करने लगे किन्तु उस युद्ध में बालिका क्रोध और पराक्रम बढ़ता गया, सुग्रीव का न्यून होता गया बालि के पराक्रम को बढ़ता हुआ रामचन्द्रजी देखने लगे कि यह दोनों बानर वृक्षो, गदा, मुक्का, जंघा, पैर, बांह, आदि से महाघोर युद्ध करते हैं और प्रलय काल के मेघ के समान गर्जना करते हैं, उस युद्ध में बालि

के सन्मुख सुग्रीव की हीनता को देखकर रामचन्द्रजी बार बार उसी दिशा को देखने लगे। इसके बाद रामचन्द्रजी सुग्रीव को युद्ध में पीड़ित देखकर अपने धनुष पर बाण को चढ़ा लिये और सुग्रीव की ओर देखते हुए बाण को छोड़े, उस बाण को छोड़ने का इतना शब्द हुआ कि पशु पक्षी भय से भाग गये। रामचन्द्रजी के हाथ से छूटा हुआ वह बाण वज्र के समान जाकर बालि के हृदय में लगा! उस बाण को लगते ही अत्यन्त पराक्रमी बाली मूर्छित हो कर पृथिवी पर गिर पड़ा। जैसे किसान लोग इन्द्रध्वजा की पूजा करके पूर्णमासी को गिरा देते हैं, काल के अस्त्र के समान रामजी के अमोघ बाण को लगते ही बालि के मुख से रुधिर की धारा बहने लगी और वह वीर अचेत हो कर पृथिवी पर शयन किया॥

इति वाल्मीकीये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे षोडशः सर्गः॥१६॥

इसके उपरान्त जब रामचन्द्र ने कठिन रण में अपने बाण से छिपकर बालि को उस बाण के प्रयोग से बालि ऐसा पृथिवी पर गिरा जैसे वज्र के आघात से वृक्ष टूटकर गिरता है जैसे देवराज इन्द्र के ध्वजा का पतन होता है वैसे तपते हुए स्वर्ण के समान चमकने वाली शरीर वाली पृथिवी पर गिरकर भूमी को अलंकृत करने लगी। उस समय पृथिवी की ऐसी शोभा हुई जैसे बिना चन्द्रमा के आकाश की शोभा होती है। पृथिवी पर पड़ी हुई भी बालि की शरीर शोभा तेज पराक्रम और प्राण को नहीं छोड़े थी। रत्न से भूषित सोने की माला को जो इन्द्र दिये थे उसी माला के प्रभाव से बालि का प्राण नाश नहीं हुआ था। संध्याकाल में जैसे बदलों की लाल शोभा होती है वही शोभा उस माला से बालि के शरीर की हुई। वह माला और बालि की देह तथा रामजी के अमोघ बाण यह तीन प्रकार की लक्ष्मी आपस में शोभाको देने लगी। इन्द्र की माला के प्रभाव से स्वर्ग लाभ और रामजी के बाण से परम गति का लाभ बालि को हुआ। युद्ध में मृतक बालि की शोभा तेज से हीन अग्नि के समान हो गया जैसे

स्वर्ग से गिरने पर ययातिका पुण्य क्षय हो गया था, जैसे युग के अन्त में आकाश से सूर्य पतित होते हैं वैसे रण भूमि में बालि का पतन हुआ है, बड़ी लम्बी भुजा ऊंधाकन्धा लाल मुख और हीरा रंग नयन सोने की माला को पहिने ऐसे बालि को पृथिवी में गिरा देखकर लक्ष्मण के सहित रामजी उसके समीप गये, बाली बड़े आदर की दृष्टि से महाबली रामचन्द्र और लक्ष्मणजी को देखकर प्रिय और कठोर बचन को बोला, कि पराङ्मुख को मारकर तुमने कौन से गुण को लाभ किया, मैं दूसरे से लड़ता था तब तक तुमने मुझे मारकर घायल कर दिया रामचन्द्र कुलीन पराक्रमी तेजस्वी आदर्श पुरुष दयालु और प्रजाओं के हित को चाहने वाले हैं तथा अत्यन्त उत्साही सत्यवादी और दृढ़ व्रत को धारण करने वाले हैं इस प्रकार तुम्हारे गुणों का वर्णन सकल चराचर प्राणी पृथिवी पर किया करते हैं। शमदम क्षमा धैर्य बल पराक्रम और अपकारी में दण्ड देना यह राजाओं, के धर्म और गुण हैं। तुम्हारे इन गुणों को जानकर तारा से रोके गये भी हम सुग्रीव के सन्मुख आये, दूसरे के साथ युद्ध करते हुए हम को बाण से बेधने के योग्य तुम नहीं हो यह ज्ञान हम को तुम्हारे दर्शन से हुआ है तृण से भरे हुए कूप के समान पापी और अधर्मी मैंने तुम को जाना कि जो तुमने छल से मुझे मारा हैं, सज्जनों के वेष को धारण करके राख से ढँकी आग के समान कपटी और पापी को तुम को जाने, देश और पुराने मैंने कुछ अपराध नहीं किया है और तुम्हारा अपकार भी हम कुछ नहीं किये थे फिर किस अपराध के बदले तुमने मेरे प्राण नाश किया है। फल मूल को खाने वाले और नित्य बन में रहने वाले बानर को दूसरे से लड़ते समय तुमने व्यर्थ अपराध किया है, तुम राजा के पुत्र हो तुमारा पवित्र दर्शन है और धर्मात्मा के समान वेष को धारण किये हो। कौन ऐसा क्षत्रियों के कुल में उत्पन्न हैं जो धर्म को छोड़कर कुत्सित कर्म को करेगा। तुम तो रघुवंशियों के कुल में उत्पन्न हो धर्मात्मा सुने जाते हो सो किस प्रयोजन के लिये अनर्थ

और पाप किये हो, सामदान क्षमा धर्म सत्य धैर्य पराक्रम और अपकारी में दण्ड दे न्याय है राजाओं के श्रेष्ट गुण हैं हम लोग फल मूल को खाकर वनमें निवास करने वाले हैं यही हम लोगों की स्वभाव है और आप पुरुष हैं प्रजाओं के स्वामी हैं, हे रामजी! पृथिवी धन हिरण्य रूप इतने ही कारण निग्रह में होते हैं सो अपने इस वन में अथवा हमारे में वा फल में आप को कौनसा लोभ हुआ जिस लोभके बदले आपने मेरा प्राण नाश किया है। नीति और विनय निग्रह अनुग्रह यह गुण राजाओं में विपरीत भावसे नहीं रहते सो तुम्हारे में काम क्रोध अधिक है और राज गुण तुम्हारे में विपरीत भाव से हैं और तुम बाण मारने में व्याध के समान चतुर हो हे राम! मुझे अनपराधी को बाण से मारकर जो आपने कुत्सित कर्म किये हो इस निन्दित कर्म से सज्जनों के मध्य में क्या कहोगे। राजा ब्राह्मण गौ तथा और भी प्राणियों को मारने वाले चोरी करने वाले ये सब नरक में जाते हैं, अरे हमारे चमड़े तथा रोम और हड्डिया भी छूने के योग्य नहीं हैं, मांस भी आपके समान धर्मचारी को खाने के योग्य नहीं है, हे रामजी! ब्राह्मण और क्षत्रिय को पांच नख के जन्तुओं के मांस को खाने की विधि शास्त्र में है, हमारे मांस और चमड़े को कोई भी स्पर्श नहीं कर सकता फिर आपने मुझ को मारकर कौनसा लाभ उठाया। तारा ने हमारे हित के बचन को कहकर मुझे बहुत मोहित किया परन्तु काल के वश होकर मैंने उसके बचन को उलंघन किया है उसी का फल पाया है। हे रामजी! तुम्हारे को स्वामी पाकर पृथिवी सनाथ नहीं होगी अर्थात् तुम राजा होने के योग्य नहीं हो। तुम ऐसे पापी महात्मा दशरथ को कैसे जन्म लिये कि जो तुम सज्जनों के नीति मार्ग को भ्रष्ट करते हो, इस प्रकार कर्म करके सज्जनों के मध्य में किस मर्यादा को लाभ करोगे, मुझ उदासिन पर तो तुमने खूब पराक्रम दिखाये हो, परन्तु तुम्हारी स्त्री को हरण करने वाले अपकारी रावण के लिये पराक्रमी नहीं हो। यदि सुग्रीव के कारण तुमने हम को मारा है तो भी उचित नहीं किया है इसके पहिले यदि तुम आकर जानकी को ले आने की

अनुमति देते तो मैं एक दिन में जानकी को लाकर तुम्हें सौंप देते सागर में पाताल में जहां कहीं जानकी होती वहां से मैं जानकी को लाकर तुम्हें सौंप देते, उचित यह हुआ कि हमारे मरने पर सुग्रीव को राज्य होगा अनुचित यह हुआ कि अधर्म से तुमने हम को युद्ध में मारे हो जगत् में काल पाकर सब का मरण होता है इस लिये मरने का हम को कुछ विषाद नहीं है, बाण के आघात से पीड़ित बालि श्रीरामजी से इस प्रकार कह कर बानर राज बाली मौन हो गये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे सप्तदशः सर्गः॥ १७॥

बालि के इस प्रकार विनय और कठोर और अधिक्षेप के बचन को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी बोले, धर्म और अर्थ काम और समयाचार को न जान कर अज्ञानता से मुझको क्यों निरादर करते हो, बिना पूछे बानर के स्वभाव से तुम मुझ को इस प्रकार परुष बचन को कहने की इच्छा करते हो, यह भूमिवन पर्वत के सहित रघुबंशियों की है, इस देश के मृगा पक्षी मनुष्यों के निग्रह अनुग्र में उन्ही लोगों का अधिकार है, सो रघुकुल भूषण धर्मात्मा सत्य बादी धर्म अर्थ काम के तत्व को जानने वाले भरतजी इस समय राजा हैं वही लोक में निग्रह और अनुग्रह की आज्ञा को देते हैं, और वही देश काल के अनुसार राज्य करते हैं, उन्ही की आज्ञा से हम सब लोग समस्त पृथिवी को शोधन करने के लिये धर्मकी मर्यादा को स्थिर करने के लिये भ्रमण करते हैं, तो धर्मात्मा भरत के धर्म के प्रतिकुल हो कर कौन जीव पृथिवी पर रह सकया है, हम लोग प्रभु भरत की आज्ञा से अपने धर्म पर स्थिर हो कर और भरत की आज्ञा को अंगीकार करके मार्ग भ्रष्ट पुरुषों को अन्वेषण करता हूं सो तुमने धर्म को क्लेशित करके राज मार्ग को भ्रष्ट किये हो, क्योंकि जेष्ठ भाई और पिता तथा विधा देने वाला गुरू यह तीनो पिता हैं, धर्म के दृष्टि से इनका सेवन करना चाहिये । और छोटा भाई पुत्र और शिष्य यह तीनों पुत्र के समान धर्म की मर्यादा से पुत्र के समान इनको पालन करना चाहिये, इस विषय में धर्म ही

कारण है, हे वानरराज ! सूक्ष्म और सनातन सज्जनों का यही धर्म है और इसी धर्म पर सकल प्राणियों को चलना चाहिये, प्रति पुरुष की आत्मा अपने शुभ अशुभ कर्मों को जानता है चंचल वानरों के सहित बिना धर्म को न जानने वाले अन्धे जातियों में अन्धे गुरु के समान बिचार करके क्या धर्म को जानते हैं । इस कारण धर्म हीन तुम राजा से दण्ड देने के योग्य हो, तुमने सनातन धर्म को छोड़ कर जो भाई की स्त्री में वर्ताव किया हो उस पाप से मैंने तुमको मारा है, जो तुमने धर्म मार्ग को दूषित कर के भाई के पत्नी को ग्रहण किया है इससे यह दण्ड तुमको प्राप्त हुआ है, लोक में विरुद्ध कार्य करने वाले का निग्रह होता है इससे अतिरिक्त राज दण्ड नहीं देखा जाता है। अपनी बहिन भाई की स्त्री के साथ पाप करने वाले पापी के पाप को धर्म पर चलने वाले क्षत्रिय क्षमा नहीं कर सकते हैं। जो इस प्रकार बर्ताव है उनको बध करने का पाप नहीं होता है, भरत राजा हैं हम लोग उनके आज्ञा कारी हैं, तुम धर्म को अतिक्रमण करके किस प्रकार पृथिवी पर रहने की आशा करते हो । हमारे जैसे लक्ष्मण भ्राता हैं वैसे सुग्रीव सखा है, सुग्रीव के राज्य और स्त्री के निमित्त मैंने तुम्हारे बध की प्रतिज्ञा किया है इस लिये तुम को अपने बाण से मारे हैं । मैंने अपनी प्रतिज्ञा को किसी प्रकार विफल नहीं कर सकते । इन्हीं कारणों से और धर्म के अनुसार तुम को जो शासन हुआ है उसको विचार करो । मैंने जो तुम्हारा निग्रह किया है वह धर्म है और धर्महो के अनुसार मैंने मित्र का भी उपकार कियाहै । शास्त्र में मनु के बचन ऐसे हैं कि जो पाप करते हैं वह मनुष्य राज दण्ड को पाकर पाप से रहित होकर पुण्यवान के समान स्वर्ग को जाते हैं, हमारे पुरुषों में मान्धाता नाम के राजर्षि जिस प्रकार पाप करके महान् विपत्ति को लाभ किये थे वैसाही पाप तुमने किया है, और भी राजओं ने प्रसाद से धर्म का लोप करते थे परन्तु अनेक प्रकार के प्रायश्चित से उस पाप को दग्ध कर देते थे, धर्म से परिकाल्पित परिताप नहीं करना चाहिये और हमने जो तुम्हरा वध किया है वह अपने मन से नहीं किया

है किन्तु शास्त्र की मर्यादा से किया है इसके अतिरिक्त और भी कारण अपने वध का सुनो। उस कारण को सुनकर तुमको यह क्रोध करना उचित नहीं है कि छिपकर मुझे मारे हो, यह राजाओं का स्वभाव है तृण वृक्ष लता आदि के ओट से मृगा आदि जन्तुओं को मारते हैं। कहीं छिप कर देखकर दौड़ते हुए विस्वास युक्त कहीं खड़े अथवा पालन आदि किये गये अनेक मृगा आदि जन्तुओं को प्रमत्त अप्रमत्त सन्मुख बिमुख किसी प्रकार हो मांस के चाहने वाले मनुष्य उन जन्तुओं को अवश्य बाण से मारते हैं और अपना प्रयोजन सिद्ध करते हैं, अनेक प्रकार के मृगओं को मारने के लिये धर्म को जानने वाले राजर्षि बन में जाकर शिकार खेलते थे इसलिये हे बानर! मैंने बाण से तुमको युद्ध में में मारा है, दूसरे के साथ युद्ध करते हुए तुमको क्षत्रिय के स्वभाव से मैंने तुम्हारा बध किया है जैसे व्याघ्र आदि जन्तुओं को राजा लोग बध कर इसमें हमारा कुछ दोष नहीं है, ऐहिक अभ्युदय को चाहने वाले राजाओं को बानर का बध करना श्रेष्ट है, रण से अलग हिंसा नहीं है हमने तुम्हारा अपमान और प्रतिकूल बचन नहीं कहे हैं क्योंकि इस पृथ्वी तल में देवता मनुष्य रूप से विचरते हैं। हे बानरों में श्रेष्ट तुम धर्म को न जान कर केवल क्रोध पूर्वक सनातन धर्म पर चलने वाले हम को अनेक दोष दिया है। इस प्रकार श्रीरामजी के बचन को सुन कर बाण से व्यथित बाली धर्म में समाहित होकर श्रीरामजी पर दोष को दुर्बल देख कर हाथ जोड़ कर बानरों के राजा बाली श्रीरामजी से बोले, हे भगवन्! आप जो कहते हैं वह सत्य है, अपने स्वभाव के अनुसार प्रमाद से जो कुछ मैंने आपको कहा है वह युक्त नहीं कहा, तो भी आप परोक्ष तत्व को जानने वाले और प्रजाओं के कल्याण को चाहने वाले हैं इस कारण आप हमको दोषभागी समझने योग्य नहीं हैं। कार्य और कारण को जानने में आप का अन्तःकरण निर्मल है अर्थात् राग द्वेश से रहित है, अब आप हमारे समान पापिष्ट को परलोक में उत्तम गति लाभ होने का आशीर्वाद दीजिये? यह कह

कर श्रीरामजी को देखते हुए पुत्र आदि की माया से ग्रस्त होकर श्रीरामजी से फिर बोले, हे राघव ! हम को अपना तथा तारा और बन्धुओं का शोच नहीं है जैसा ज्येष्ट पुत्र अङ्गद के लिये मुझे चिंता है क्योंकि अभी यह बालक हैं और अज्ञान हैं वही एक प्रिय पुत्र है हे रामजी ! उन तारा के पुत्र अङ्गद की आप रक्षा कीजिये, हे भगवन् ! सुग्रीव और अङ्गद को एक समान जानना चाहिये क्योंकि रक्षा करनेवाले और शासन देनेवाले आप ही हैं, जैसे आपकी लक्ष्मण और भरत में समान व्यवहार है वैसेही सुग्रीव और अङ्गद को एक समान जानना चाहिये, हमारे किये दोष से तपस्वीनी तारा के लिये सुग्रीव को उचित नहीं है कि उसका अपमान करें । सुग्रीव आप के प्रसाद से राज्य को लाभ करें, मैं आप के दर्शन की आकांक्षा और परमगति के लाभ के लिये तारा से बहुत रोके गये तौ भी सुग्रीव से युद्ध करने को आये, यह हमारे पूर्वकृत पुण्य का फल है आप के दर्शन से हमारे पाप का नाश हो गये बानरों के राजा बालि इस प्रकार अनेक स्तुति रामजी की किये

स्तुति ॥

जग आदि मध्य अवसान एक । तुम मोहत हो वपुधरि अनेक ॥
किहि हेत हत्यो करुणा निधान । तुम सदा शुद्ध सबको समान ॥ १ ॥

स्तुति करने के बाद बानर राज बाली चुप होगये, बालि को धैर्य देने के लिये धर्म युक्त सुन्दर बचन को रामचन्द्रजी बोले, हे बाली ! तुमको यह चिन्ता नहीं करनी चाहिये कि श्रीरामजी ने छिपकर हमें मारे और यह भी चिन्ता नहीं करनी चाहिये कि हमारे पाप का दण्ड हमको मिला है क्योंकि तुम्हारी अपेक्षा हम अधिक जानने वाले हैं धर्म शास्त्र के अनुसार तुम्हारे किये पाप का यही दण्ड निश्चय करते हैं अब तुम अपने किये पाप से मुक्त हो गये हो, अब तुम्हारा सकल पाप नाश हो गया है और तुम्हारा शुद्ध स्वभाव होगया है तुमको परम गति का लाभ होगा । हे हरीश्वर ! अब शोक और मोह को छोड़कर अर्थात् तारा और अंगद के विषय की चिन्ता को छोड़ कर अपने परलोक

सिद्धि के लिये हरिचरणों का ध्यान करो। जैसा तुम अंगद को प्यारा समझते हो वैसा मैं सुग्रीव को प्यारा जानता हूं महात्मा रामजी के सुन्दर और मधुर तथा धर्म युक्त वचन को सुनकर वानर राज बाली फिर बोले, हे स्वामी! बाण की व्यथा से और अपनी अज्ञानता से मैंने जो कुछ आप को कहा है उसको क्षमा करके प्रसन्न हूजिये॥

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे अष्टादशः सर्गः॥ १८॥

यह बालि वानर बाण से पीड़ित पृथिवी पर शयन किये श्रीरामजी के वचनोत्तर से निरुत्तर हो गये। और सुग्रीव के साथ युद्ध करने के समय वृक्ष और पत्थर की शिलाओं के आघात से उनका अंग व्यथित होगया था तौ भी रामजी के बाण से जीवन का अन्तजान कर मूर्छा को पहुंचे। इसके बाद बालिकी स्त्री तारा अपने पति के मरण को सुनकर किष्किन्धा नाम पर्वत की कंदरा से निकल कर पृथिवी पर गिर पड़ी। और अंगद आदि और जितने महा बली वानर थे वे सब श्रीरामजी के बाण को देख कर दिशाओं में भाग गये, तारा मूर्छा से निवृत्त हो कर उन भागते हुए वानरों से बोली, कि श्रीरामजी के बाण के भय से तुम सब वानर क्यों भागते हो, वानरों में सिंह बालि को आगे करके जो सुख का भोग तुम लोग करते थे आज उन बालि को छोड़ कर क्यों भागते हो। राज्य के कारण सुग्रीव से प्रेरित रामजी दूर ही से बाण को संधान करके बालि का नाश किया हैं इस से तुम सब वानर क्यों भागते हो। बालि की स्त्री तारा के वचन को सुनकर वे सब वानर एक मति होकर तारा से बोले, कि अपने पुत्र कुमार अङ्गदकी तुम रक्षा करो श्रीरामजी ने अपने बाण से बालि को यमलोक में पहुंचा दिये, अब बालि के मरने पर इन वानरों का बल नष्ट हो गया है इस नगरी की रक्षा के वास्ते कुमार अङ्गद को पिता के स्थान पर अभिषेक करो, अब जितने वानर हैं वह सब अङ्गद की छाया का सेवन करेंगे। अथवा रामचन्द्रजी के सहित सुग्रीव किष्किन्धा में आकर अङ्गद को अभिषेक करेंगे तौ भी अङ्गद को हम लोगों का पालन करना अशक्य होगा इस लिये अब हम लोग किष्किन्धा में नहीं

रहैंगे । क्योंकि किष्किन्धा में हनुमान आदि बानर सुग्रीव के सहित प्रवेश करैंगे उन लोगों से हमारा पूर्व वैर है, तो उन लोगों के भयसे हम लोगों को यहां का रहना उचित नहीं है । उन बानरों के बचन को सुनकर तारा बोली, कि महा भाग बाली को नाश हो जाने पर पुत्र से और राज्य से हमारा क्या कार्य है हम उन्हीं बालि के चरण की छाया में जाती हूं कि जिन बाली को श्रीरामजी ने अपने बाण से विनिपात किया हैं, इस प्रकार बानरो से कह कर रोती और शिर को पीटती हुई तारा युद्ध स्थान को चली, चलती हुई तारा युद्ध में बानरों को नाश करने वाले अपने पति बालि को पृथिवी पर शयन किये देखी, इसके उपरान्त नल नील हनुमान आदि बानरों के सहित रामचन्द्र और लक्ष्मणजी को मार्ग में देखा । परन्तु पति के शोक में बिह्वल तारा उन लोगों को अति क्रमण करके युद्ध में मरे हुए पति के समीप जाकर शोक से पृथिवी पर गिर पड़ी । और जैसे कोई सोये हुए मनुष्य को जगावे वैसे तारा बालि को जगाकर मति को मरा हुआ जान कर रोदन करने लगी । रोदन करती हुई तारा को और पिताके मरण से सन्तप्त अंगद को देखकर सुग्रीव पर विषाद को पहुंचे ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे एकोविंशः सर्गः ॥ १९ ॥

श्रीरामजी के बाण से निहित बालि को पृथिवी पर गिरा देखकर चन्द्रमुखी तारा विलाप करने लगी कि, पर्वत के समान बिशाल बालि की शरीर को रण में मृतक देखकर शोक से विह्वल होकर तारा विलाप करती हुई बालि के अंग अलिगंन करने लगी, और कहने लगी कि हे बानरों में श्रेष्ठ पराक्रमी ! इस समय अपने को अपराधी जानकर क्यों नहीं मुझसे वार्तालाप करते हो, हे राजन् ! उठो उत्तम शय्या पर शयन करो, तुम्हारे समान श्रेष्ठ राजा लोग इस प्रकार पृथिवी पर शयन नहीं करते हैं, क्या तुमने अपने धर्म युद्ध के बल से किष्किन्धा से अलग स्वर्गमें अपने रहने के लिये स्थान को निर्माण किये हो, जो तुम इस बनमें हम लोगों के साथ सुन्दर फल फूल का आहार और किष्किधापुरी में विहार करते

थे क्या आज उन सब कामों से विश्राम करना चाहते हो, हे स्वामी! तुमको इस दशा में देखकर भी हमारा हृदय हजारों टुकड़ा होकर क्या नहीं फट जाता है और इस शोक सागर में डूबती हुई मुझको अब किसका शरण है, तुमने सुग्रीव की स्त्री को हरण करके जो सुग्रीव को निर्वासित किये हो उसी का आज यह फल है कि अनाथ के समान पृथिवी पर पड़े हो और मेरे हित के बचन को मोह से तिरस्कार करके जो सुग्रीव के साथ युद्ध करने में प्रवृत हुए हो उसी का यह फल है। हे स्वामी! ज्ञानियों के चित्त को अप्सरायें हरण कर लेती हैं तुम समान चंचल बानरों की क्या गणना है। यही तुम्हारे जीवन अन्त का समय रहा हैं जो हम सुग्रीव के वश हुए। हे रामजी! दूसरे के साथ युद्ध करते हुए अनवस में बालि को मारकर इस निन्दित कर्म से क्या आपको कुछ भी सन्ताप नहीं होता है—

सो० तारा ताकी बाम आय कह्यो तब रामतैं। निज पति नीके काम सोवति मारो बालिसो॥

विधवापन के शोक संताप से दीन होकर मैं पहिले के सुख को दुःख मय बढ़ता देखती हूं। सुख भोग करने के योग्य कुमार अङ्गद को किसे सौंपकर इस दशा में पड़े हो, हे पुत्र! अपने पिता को जगाओ नहीं तो तुमको इनका दर्शन दुर्लभ हो जायगा हे पुत्र! यह तुमारे पिता कहीं अन्यत्र जाने की इच्छा करते हैं इनके शिरको अपने गोद में लेकर अपना सन्देसा इनसे कह देओ। हे स्वामी! रामचन्द्र ने तुम को बध करके अपने सुग्रीव से अनृण हुए हैं, हे सुग्रीव अपने वैरी भाई को नाश करा के अब सुन्दर राज्य को भोग करो। हे स्वामी! मुझको इस प्रकार विलाप करते देखकर क्यों तुम हम से नहीं बोलते हो। देखो तुमको आनन्द देने वाली यह सब तुम्हारी स्त्रियां तुमारे समीप में खड़ी हैं, तारा के विलाप को सुनकर और जितनी बानरी बालि के साथ सुख भोग करने वाली थीं वह सब सिर पीट कर रोने लगीं।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे विंशः सर्गः ॥२०॥

जैसे आकाश से तारा गण टूटते हैं वैसे शोक से दीन तारा

को विलाप करते देखकर परम बुद्धिमान बानरों के मन्त्री हनुमान तारा को धैर्य देने के वास्ते बोले, हे तारे ! मनुष्य किये कर्म के अनुसार स्वर्ग नरक के फल को भोगता है, जो वस्तु शोच करने के योग्य हो उसकी चिन्ता करनी चाहिये और जो कि कर्मानुसार शुभाशुभ फल को देता है उसका शोच करना वृथा है, तुम तो अपने कर्म के फलानुसार स्वयं दीन हो फिर अपने पुत्र आदि पर क्या दया करनी चाहती हो, इस पानी के बुले के समान शरीर को नष्ट हो जाने पर कौन किसको शोचता है, बालि के शोक को दूर करने के लिये इन अंग को देखो, और मरण के उत्तर काल में जो कुछ अग्नि दाह आदि कार्य होते हैं उनका विचार करो। हे तारे ! प्राणियों की निश्चय यही गती होती है इस लिये मरने पर रोदन आदि का करना उचित नहीं है। मरने पर उसके इष्ट सिद्ध के लिये कार्य करना उचित होता है। देखो ! जिस बालि को जीवते सैकड़ों हजारों बानर सुभोग करके जीवते थे अब उनका कौन साथी है वैसे स्वारथ के वश होकर पतिव्रताओं को विलाप करना ठीक नहीं है। अब तुम बालि के लिये चिन्ता मत करो। यह बानरों के सहित तुम्हारे पुत्र अङ्गद पिता के स्थान पर राजा होंगे उनको देख कर तुम अपने शोक सन्ताप को नाश करो। इस समय बालि के वास्ते जो कुछ कार्य करना हो उस कार्य को करने में प्रवृत्त होओ। बालि का अग्नि से संस्कार करो इसमें विलंब करना नहीं चाहिये, अङ्गद को सिंहासन पर बैठे देख कर तुमको शान्ति होवेगी। हनुमानजी के इस प्रकार वचन को सुनकर तारा बोली, हे हनुमानजी ! जो आप कहते हैं कि अङ्गद से तुमको सुख होगा वह कहो अङ्गद के समान सैकड़ों पुत्र एक तरफ हो उनसे हमको क्या सुख होगा, मरे हुए इस पति के शरीर का स्पर्श हमारे सुख के लिये और परलोक के लिये है इस कारण में पति के साथ अपना भी प्राण देना उचित समझती हूं। अंगद को राज्य पाने से कुलटा स्त्रियों के समान हमको सुख नहीं होगा अंगद

के चाचा सुग्रीव सब कुछ कार्य करने में समर्थ हैं, अंगद को राजा होने से उनके पिता के समान उनके चाचा सुग्रीव को सुख होगा क्योंकि वह सुख और दान के अधिकारी हो माता को सुख नहीं होता है, सुग्रीव अथवा अङ्गद के राज्य से हमको लोक परलोक कहीं भी सुख नहीं होगा केवल स्वामी के इस मृत शरीर की सेवा से हमको सुख होगा

इति बाल्मीकीये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे एकविंशः सर्गः ॥२१॥

बाण से पीड़ित बाली किञ्चित मूर्छा से निवृत्त होकर सन्मुख खड़े सुग्रीव को देखकर भाई के स्नेह से बोले, हे सुग्रीव! जो कुछ होनहार होता है वह अवश्य होता है, मैंने बलात्कार से जो कुछ तुमारा अपमान किया है उस हमारे अपकार को तुम क्षमा करने योग्य हो, हम तुम दोनों एक साथ भाई के समान सुख दुःख का भोग नहीं किये, हमारी तुमारी मित्रता स्नेह सुख यह सब विपरीत हो गया, आज इन वनचरोंके राज्य को लाभ करो और मैं यमलोक को जाता हूं, आज मैं अपने जीवन धन राज्य संपत्ति को शीघ्र त्याग करके उत्तम यशको लाभ किया है, हे राजन्! इस अवस्था में भी पहुंच कर जो कुछ तुमको कहा है उसको क्षमा करने योग्य हो। इन समर्थ हमारे बालक शोक से मलीन अङ्गद को देखो, हे सुग्रीव! प्राण से भी प्रिय हमारे पुत्र अङ्गद को पालन करो, जैसे हम इसके लालन पालन में परायण रहते थे तैसे तुम भी अङ्गद का पालन पोषण करना यह तारा के पुत्र अङ्गद तुमारे समान पराक्रमी राक्षसों के युद्ध में तुमारी सहायता करेंगे। यह अङ्गद हमारे अनुरूप बलवान पराक्रमी और युद्ध में कुशल है, सुषेण की कन्या यह तारा अनेक प्रकार के उत्पात प्रवृत्त होने में कार्य और अर्थ को निश्चय करने में समर्थ है। और हे सुग्रीव! रामचन्द्रजी के जो कुछ कार्य हो उन को तन्मय होकर साधन करना नहीं तो प्रतिज्ञा भ्रष्ट होने पर हमारे समान तुमारी भी गति होगी। हे सुग्रीव! इन्द्र से प्राप्त अब इस माला की कान्ति मलीन होती जाती है। भाई के स्नेह से नियन्त्रित

बाली सुग्रीव से इस प्रकार कहकर मलीन हो गया जैसे राहु से ग्रस्त चन्द्रमा मलीन हो जाते हैं सुग्रीव बालि के बचन से शान्ति को पाकर बाली से दी गई माला को लेकर सुग्रीव ने धारण कर लिया, सुग्रीव को माला देकर सामने उपस्थित अङ्गद को देखकर बोला, कि हे पुत्र ! देश काल के अनुसार सुख दुःख प्रिय अप्रिय को क्षमा की दृष्टि से देखकर सुग्रीव के अधीन हो ओ । हे महाबाहु ! जिस प्रकार निरन्तर मैंने तुमारा लालन पालन किया है सुग्रीव भी वैसा ही करैंगे । तुम सुग्रीव के अपकार की ओर दृष्टि मतदेना सदा सुग्रीव के अनुकूल होकर रहना, परन्तु न तो सुग्रीव से अत्यन्त मित्रता और न शत्रुता शास्त्र के अनुसार केवल मध्य भाव से इन के साथ व्यवहार करना इतना उपदेश अंगद को देकर बाण के अघात से बीड़ित बाली अपने प्राण को त्याग किये । बालि की मरण दशा देखकर बानरों का समूह बालि के गुण को गयान करके विलाप करने लगे, आज बानरेश्वर के मरने पर किष्किन्धा पुरी सूनी हो गयी और बगीचा बन पर्वत सभी सूना होगया । आज बालि के मरने पर बानरों की सेना अनाथ होगयी । नहीं तो गोलभ नाम गंधर्व के साथ पन्द्रह वर्ष दिन रात बानर राज बालि ने युद्ध किये थे । सोलहवें वर्ष में गोलभ नाम गन्धर्व को युद्ध में मार कर विजय पाये वही बाली बानर जगत के त्रासित करने वाले आज अनाथ के समान पृथिवी की शय्या पर शयन किये हैं, बालि के मरने पर बानरों ने अपने कल्याण को नहीं देखे किसी को अपना शरण और रक्षक न जान कर अति विलाप करने लगे, बानरों से उस बनमें चरने वाले जन्तु इस प्रकार व्याकुल होगये जैसे सिंहासन नाश कि गई गौका देख कर बैल दुखः को पाता है । बालि की स्त्री तारा शोक से परिपूर्ण होकर बालिके मुख को देखती हुई पृथिवी पर इस प्रकार गिरीं जैसे टूट कर वृक्ष गिरता है ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥

पति को मरा हुआ देखकर तारा बार बार विलाप करने लगी कि हे स्वामी हमारे बचन को न मान कर इस दशा में पहुंचे हो। तुम को पृथिवी इस समय हमसे अच्छी मालूम पड़ती है कि उसको आलिंगन किये हो और मुझसे नहीं बोलते हो इस समय सुग्रीव के वश होकर इस अवस्था को भोगते हो जो तुम्हारी उपासना बड़े बड़े बलवान ऋच्छ बानर करते थे वही तुम आज अङ्गद के लिये चिन्ता करते हो, संग्राम में निहतर होकर आज भूमि में गिरे हमारे इस करुणा युक्त बचन को सुनकर क्यों नहीं धैर्य देते हो, हे स्वामी! मुझ अनाथा को छोड़कर तुम अकेले कहां चले गये, ज्ञानी को चाहिये कि शूर-बीर के लिये कन्या को न देवे क्योंकि शूरबीर की स्त्री मैं होकर आज अपने मान और परमगति को छोड़कर आज विधवा पन को ढोती हूं। इस अगाध शोक सागर में डूबती हुई भी मेरा हृदय पत्थर के समान है जो आपके वियोग को देखकर भी दलित नहीं होता है, यदि यह कहो कि पुत्रवती को शोक नहीं करना चाहिये, तो पति से हीन स्त्रियां पुत्र के सुख को नहीं चाहती हैं क्योंकि धन धान्य से समृद्ध भी स्त्रियां बिधवा कही जाती हैं, हे स्वामी! इस समय अपने शरीर से रुधिर को बहाते हुए धूलि युक्त पृथिवी पर लोटते हो, इस प्रकार बालि को स्पर्श कर के विलाप करती हुई तारा अङ्गद को देख कर बोली, हे पुत्र! पिता की अति दारुण अन्तिम अवस्था को देखो बाल सूर्य के समान उज्वल शरीर की कान्ति को धारण करने वाले तुम्हारे पिता बैरी के प्रभाव से आज इस दशा को प्राप्त होकर यम-लोक को जाते हैं, हे पुत्र! सुख देने वाले राजा बालि को प्रणाम करो। तारा के इस प्रकार बचन को सुनकर अङ्गद उठ कर पिता के चरण को ग्रहण करके प्रणाम किये, और पिता को आलिंगन करके अङ्गदजी बोले कि पहिले के समान आज भी आप हमको प्यार करो। हे पिता! देवराज इन्द्र ने आप की शोभा के लिये जो काञ्चन मयी माला को दिये थे उसको आप आज धारण क्यों नहीं किये हो। इस दशा

में पहुंच ने पर भी आज तक आप को राज्य लक्ष्मी नहीं छोड़ती है, संग्राम की अभिलाषा से आप हमारे बचन को न मान कर संग्राम में हत होकर हमको विधवा बना कर आप स्वर्ग को जाते हैं ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे त्रयोविंशः सर्गः ॥ २३ ॥

तारा के अतिशय बिलाप को सुनकर भाई के स्नेह से शोकसागर में डूबते हुए सुग्रीव परिताप करने लगे, और आंसू से पूर्ण तारा के लोचन को और नवीन विधवा पन के कारण मलीन मुखकी कान्ति को देखकर अपने स्वयं सन्ताप को करते हुए सुग्रीव श्रीरामचन्द्रजी के समीप में गये। राज लक्षण से चिन्हित धनुष बाण को संकुचित किये श्रीरामजी से सुग्रीव बोले कि हे प्रभो ! आपने जो प्रतिज्ञा किये थे उसको बालि वधन करके पूरा किये, परन्तु भाई को नाश कराके राज्य को भोग करना इस कुत्सित जीवन से हमारा मन निवृत्त हो गया है इस तारा को अत्यन्त रोदन करने से और पिता के वियोग रूपी दुःख से सन्तप्त अंगद के जीवन में भी संशय है इस कारण हे रामजी ! हमारा मन राज्य भोगने को नहीं है। भाई से किये गये अधिक अपमान को न शहन करके जो कार्य का मैंने आरंभ किये कि उस कार्य से चिरकाल तक दुःख भोगना पड़ेगा, इस दुःख से ऋष्य मूक पर्वत का निवास और अपने जाति के अनुसार फल मूल का भोजन उत्तम था परन्तु भाई को बध करके तीनों लोक का राज्य भोगना तुच्छ है थोड़े राज्य के सुख के लिये भ्रातृ वध रूप दुःख को भोगने में दोनों तारतम्य को विचार कर कौन ऐसा मनुष्य है कि जो भाई के प्राण नाश की इच्छा करेगा। और बालि के मनमें कभी हमारे प्राण नाश करने की इच्छा नहीं है, उसकी अपेक्षा हमको इस प्रकार अन्याय करने से यह अयश चिरकाल तक हमारे लिये संसार में रहेगा। इस कारण हे रामजी ! यह पाप सहन करने के योग्य नहीं है, क्योंकि महा बलवान् वाली का हमारे कारण नाश हुआ है और उस पिता के शोक में अंगद का प्राण भी अधीर हो गया है, यदि माता के प्राण के आधार अंगद पिता के वियोग में

अपने जीवन का त्याग करैंगे तो उनके शोक में तारा अपना प्राण अवश्य नाश करैगी क्योंकि बिना पुत्र के वह अपने प्राण को निश्चय नहीं रख सकती है, मैं भी भाई और पुत्र के वियोग से अपने प्राण को जलती हुई आग में समर्पण करैंगे और ये हमारे सहायक वानर गण सीता को खोजने में आपकी सहायता करेंगे। क्योंकि मुझ अपराधी का जीवन इस संसार में अत्यन्त गर्हित है इस लिये मरण श्रेष्ठ है, शोक से दुःखी सुग्रीव के बचन को सुनकर शत्रु को संहार करने वाले रामजी आंखों में आंसू भर कर मलीन हो गये। उस समय संसार की रक्षा करने वाले रामजी विपत्ति में मग्न तारा को बार बार देखने लगे। और कमल नयनी तारा पति के लोथ को लेकर आलिंगन करती हुई धनुष बाण को हाथ में लिये सूर्य के समान अपने प्रकाश से उज्वल राजाओं के श्रेष्ठ लक्ष्मण से युक्त मृगा के शावक के नयन के समान नयन वाले साक्षात् अश्विनी कुमार के समान श्रीरामचन्द्रजी को लक्ष्मण के सहित देखकर तारा ने उनको अपने पति का मारने वाला समझ लिया और महानुभाव श्रीरामजी के समीप एका एक तारा आकर बोली, कि हे भगवन्! आपकी महिमा को कोई नहीं जान सकता है, आप दुष्टों को मारकर पृथिवी का भार उतारने के लिये अपनी इच्छा से अवतार लेते हैं आपके इस सुन्दर स्वरूप को योगी लोग सदा ध्यान करते हैं। आप महा पुरुष और साक्षात नारायण के अवतार मालूम होते हैं, पृथिवी के समान आप क्षमा करने वाले हैं, आपने अपने बाण से जो बाली को हत किये हैं वह बाली संसार में भोग करने वाली शरीर को छोड़कर दिव्य देह को लाभ करने से जो अभ्युदय होता है उसको पाया है अब आपने जिस बाण से हमारे पति को बध किये हैं आप अपने उसी बाण से हम को भी मारिये और मैं भी आपके हाथ से हत हो कर बालि के समीप स्वर्ग में बास करूंगी क्योंकि बिना हमारे बालि को स्वर्ग में भी सुख नहीं होगा। जैसे जानकीजी के वियोग में आप भी शोक से परिद्युत हैं वैसे हमारे बिना बाली को स्वर्ग में भी

दुःख उठाना होगा । क्योंकि स्त्री के वियोग में जो दुःख होता है उसके तत्वको आप जानते हैं, इस लिये आप मुझको भी मार कर बालि के लोक को पहुंचाइये । यदि यह कहिये कि तुम स्त्री हो स्त्री का बध करना पाप है तो यह तारा बालि कि आत्मा है ऐसा जान कर इसको बध करिये, इससे अतिरिक्त स्त्रियों के बध करने का पाप होता है, इस प्रकार पति के शोक से आकुल तारा के बचन को सुनकर उसको धैर्य देने के लिये प्रिय बचन से श्रीरामचन्द्र बोले, हे तारे ! मरण विषयक विरुद्ध मति को नहीं करना चाहिये क्योंकि सकल लोक को विधाता ने निर्माण किया है, तीनों लोक विधाता के अधीन होकर सुख दुःख को भोगता है, अब बालि के परा प्रीति को सुग्रीव के साथ लाभ करो और तेरा पुत्र अंगद इस युवराज पद को प्राप्त करेगा बीर की स्त्रियों को विलाप करना उचित नहीं है यह कह कर श्रीरामजी उसको धैर्य दिये, और तारा श्रीरामजी के बचन को सुन कर तारा को धैर्य हुआ ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे चतुर्विंशः सर्गः ॥ २४ ॥

श्रीरामजी सुग्रीव तारा और अङ्गद को अपने समीप में बैठा कर इस प्रकार धैर्य देने लगे कि तुम लोगों को शोक युक्त रोदन करने से मृतक का कल्याण नहीं होगा अब इस मृत शरीर के योग्य जो कुछ कार्य हो उसको करने का बिचार करो । क्योंकि कोई भी कार्य हो समय पर न करने से उसका फल नहीं होता है, क्योंकि काल के अधीन सब जगत है । काल से अतिरिक्त और किसी को कर्ता नहीं जानना चाहिये, मनुष्य को कर्म फल के अनुसार यह भोग देता है और भोग को पूरा होने पर अपने आप नाश हो जाता है, हे सुग्रीव ! इस संसार में कोई किसी को दुःख और सुख को देने वाला नहीं है, कालात्मा भगवान सब को सुख दुःख देते हैं, उन्ही के अधीन होकर मनुष्य अपने जन्म मरण के दुःख को भोगता है, उस काल की गति में क्षण भर का

भी व्यतिक्रमण नहीं होता है, चाहे बन्धु हो, मित्र हो, ज्ञाति हो, पिता हो, माता हो, पुत्र, हो, जो कोई हो, समय को प्राप्त हो जाने पर बड़े भारी बलवान को भी वह काल संहार कर लेता है। उस काल के वारण करने के लिये कोई भी मंत्र तंत्र औषधी आदि उपाय नहीं हैं वह स्वतन्त्र काल नियति के अधीन है, तुमारे भाई बाली साम दाम से संपत्ति को उपार्जित कर के अनेक प्रकार के सुख को भोग किये। इसके बाद इस देह को इस लोक में छोड़कर इन्द्र लोक को चले गये। कार्य जितना है वह सब कारण में प्रलय होता है इसी से बुद्धिमान को चाहिये कि इसकी चिन्ता न करें, इस प्रकार अनेक युक्तियों से श्रीराम चन्द्रजी सुग्रीव को धैर्य दिये। इसके बाद शोक से आकुल सुग्रीव के वास्ते लक्ष्मणजी बोले, कि हे सुग्रीव ! इस चिन्ता करने से क्या होगा? अब इस देह का प्रेत संस्कार करो, सुग्रीव से ऐसा कह कर लक्ष्मणजी अङ्गद आदि बानरों से बोले कि बालि को अग्नि संस्कार करने के लिये तुम लोग वृक्षोंके सूखे काष्ठको चन्दन को अनेक भांतिके माल्य आदिका संग्रह करो और हे सुग्रीवजी ! शोक को छोड़ कर अङ्गद को धैर्य देओ क्योंकि यह पुरी अब तुम्हारे अधीन है, लक्ष्मणजी सुग्रीव से यह कह कर अंगदजी से बोले कि हे अंगद ! तुम माल्य और सुन्दर वस्त्र को तथा घृत और तैल आदि को एकत्र करो। मन्त्रियों को आज्ञा दिये कि आप लोग उत्तम शिविकार (पालकी) को शीघ्र लाइये, और शिविका को ढोने के लिये योग्य और बलवान बानरों को सज्जित करो, इस प्रकार लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर बालि के मन्त्रिगण घबड़ाहट के साथ शीघ्र गुहामें जाकर शिविका को लेकर शीघ्र लक्ष्मणजी के पास आये और शिविका को ढोने के योग्य बीर बानरों को इकट्ठा किये, रामजी उस पालकी को देखने लगे कि शिविका के मध्य में राजाओं के बैठने के योग्य एक सुन्दर सिंहासन है उसमें अनेक भांति के पक्षियों का वृक्षों का तथा पुष्पों के चित्र बने हैं, जगह जगह वायु को आने जाने के लिये गवाक्ष खुले हैं। उत्तम उत्तम रत्न अनेक स्थानों में जड़े हैं। इसके

बाद वह शिविका रक्त चन्दन और भांति भांति के मल्य से शोभित है इस प्रकार शिविका को देख कर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले कि शीघ्र इस शिविका में बालि को चढाकर श्मशान को ले चलो, रामजी की आज्ञा से सुग्रीव और अङ्गद आदि विलाप करते हुए मरे हुए बालिको शिविका में रख कर वस्त्र और माला आदि से विभूषित किये। इसके बाद रामजी फिर आज्ञा दिये कि इस राजा को नदी के तट तक और्ध्व देहिक क्रिया करो और शिविका के आगे आगे अनेक प्रकार के धन रत्न को लुटाते चलो और पीछे शिविका चलैगी, और जैसी तुम्हारी सम्पत्ति होवे उसके अनुसार इसकी सुन्दर क्रिया करो। श्रीरामजी की आज्ञा के अनुसार मन्त्रियों के सहित अंगद आदि बानर क्रिया करने में प्रवृत्त होगये और विलाप करने लगे, बानरों को विलाप करते देखकर तारा आदि बालि की स्त्रियां इस प्रकार विलाप करती हुई शिविका के पीछे चलीं, कि उनके रोने व विलाप करने से बन के वृक्ष पर्वत नदी आदि जड़ वस्तु रोदन करने लगे। इसके बाद नदी के तट पर पहुंच कर बानरों ने शिविका को कन्धे से उतार कर बानर बानरी सब मिल कर चिता लगाये और शिविका को ढोने वाले अंगद व सुग्रीव आदि बानर शोक से व्यथित होकर एकान्त में बैठे, इसके बाद शिविका में पड़ी हुई बालि के लोथ को देख कर तारा प्रेम के मारे वहां चली गई और मृतक शरीर बालि की अपने गोद में लेकर विलाप करने लगी कि हे बानर राज ! हे स्वामी! हे महा बाहु ! आज मुझ प्रिया को देखो। और तुम्हारे विषय में शोक से आकुल इन बानरों को देखो। जो कि तुम्हारे प्रसन्न मुख कान्ति सायंकाल के सूर्य के समान लाल चमकती थी वही आज तुम किस दशा में प्राप्त हो। हे राजेन्द्र! यह सब तुम्हारे बानर और बानरी मुझे पैदल इतनी शीघ्रता से लिवा लाये इस हमारे दुःख को आप क्यों नहीं जानते हो। इन अपने मन्त्रियों को और प्रिय पुत्र अंगद को छोड़ कर क्यों शयन किये हो? इस प्रकार विलाप करती हुई तारा को बानरियों ने उठा लिया अंगद और सुग्रीव बालि

की लोथ को चिता पर रखकर अग्नि संस्कार किये इसके बाद नदी के अन्यत्र तटपर आकर अंगद सुग्रीव आदि बानर और तारा आदि बानरी स्नान करके बालि को जल दान दिये, सुग्रीव के समान श्रीरामजी भी शोकित होकर बालि के प्रेत कार्य को किये, इसके उपरान्त बानर व बानरी किष्किन्धा चलने को प्रस्तुत हुए॥

इति बाल्मीकीयेरामायणे किष्किन्धा काण्डे पंचविंशः सर्गः॥ २५॥

इसके उपरान्त शोक से पीड़ित सुग्रीव गीले वस्त्र को धारण किये बानरों के सहित किष्किन्धा को चले, इसके बाद जैसे देवता लोग ब्रह्मा की उपासना करते हैं वैसे बानर गण रामजी के सन्मुख हाथ जोड़कर खड़े हुए, तब बानरों में श्रेष्ठ पर्वत के समान दृढ़, सूर्य के समान प्रताप वायु के पुत्र हनुमान हाथ जोड़कर रामजी से बोले, हे भगवन्! दुख से मिलने के योग्य पिता पितामह से उपर्जित बानरों के राज्य को आज सुग्रीव ने आपके प्रसाद से पाया है, अब आप कृपा पूर्वक वहां चलकर सुग्रीव को अभिषेक कीजिये और बानरों को यथा योग्य कार्यों पर नियुक्त कीजिये। इसके उपरान्त वे सुग्रीव आदि बानर आपकी पूजा करके अपने शोक को दूर करेंगे, इस प्रकार हनुमानजी के बचन को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी बोले, हे हनुमान! मैं पिता के आदेश से चौदह बर्ष पर्यन्त किसी नगर वा पुरमें प्रवेशनहीं करेंगे, केवल वन में रहकर चौदह बर्ष के समय को व्यतीत करूंगा। सुग्रीव के सहित आप किष्किन्धामें जाकर हमारी आज्ञा से तुम सुग्रीव को अभिषेक कर देना इस प्रकार रामचन्द्रजी हनुमानजी से कहकर पुनः सुग्रीव से बोले कि हे सुग्रीव! देशकाल में चतुर पराक्रम में तुम्हारे समान वीरों में श्रेष्ठ अंगद को युवराज का अभिषेक करना क्यों कि अंगद तुम्हारे जेठे भाई के पुत्र हैं और अपने स्वयं ज्येष्ठ हैं और युवराज के योग्य भी हैं किष्किन्धा में जाकर इनको युवराजपद नियुक्त करना। और यह श्रावणसे चार महीना वर्षाकाल है इस वर्षाकालमें सीताके खोजने का उद्योग नहीं हो सकेगा। इस कारण इस समय अपने पुरी को चले जाओ मैं हनुमान व लक्ष्मण के सहित वर्षाकाल में मैं इसी ऋष्यमूक पर्वत पर

निवास करूंगा कार्तिक मासके आरम्भमें सीता के खोजने काउद्योग करना इस समय अपने राज्यका अभिषेक करके मित्रोंको प्रसन्न करो । श्रीरामजी की आज्ञा से हजारों बानरों के सहित सुग्रीव किष्किन्धा पुरी में आये, इसके बाद समस्त प्रजा सुग्रीव के सन्मुख आकर उनको साष्टाङ्ग दण्डत किये सुग्रीव सबको हृदय से लगा कर सन्तोष दिये, इसके उपरान्त प्रजा और मन्त्री सुग्रीव को राजभवन में लेजा कर सर्वोषधी युक्त जल से स्नान कराये और सोने के दण्डलगे छत्र चमर भांति भांति के रत्न बीज औषधी दूधवाले वृक्षों के पल्लव और पुष्प शुक्ल वस्त्र शुक्ल चन्दन सुगन्धित पुष्पों की माला जल और थल में होने वाले कमल के पुष्प तथा अनेक प्रकार के गंध अक्षत दुर्वा प्रियंगु लाजा मधुदधि घृत व्याघ्रचर्म वहुमूल्य उपानह (जूता) गोरोचन मनः शिला श्रेष्ठ सोलह कन्यायें इन सामग्रियों को इकट्ठा करके बानरों में श्रेष्ठ मारुती शास्त्र की विधि से सुग्रीव को अभिषेक किये। अभिषेक हो जाने के बाद अनेक प्रकार के धन रत्न अन्न वस्त्र से ब्राह्मणों को दान दक्षिणा देकर सन्तुष्ट किये, इसके उपरान्त मन्त्र को जानने वालों ने यथा विधि से अग्नि में हवन किये, और सुन्दर सिंहासन पर सुग्रीव को बैठाकर सोने के कलश में आये हुए नदी पर्वत समुद्र तीर्थ क्षेत्र आदि के जल से शास्त्र की विधि के अनुसार गज, गवाक्ष, गवय, शरभ, गंधमादन, मैन्द द्विविद, जामवन्त और हनुमान सुग्रीव को अभिषेक करके प्रजाओं के सहित प्रसन्न हो गये। इसके उपरान्त श्रीरामजी की आज्ञा के अनुसार सुग्रीव अङ्गद को हृदय से लगाकर युवराज के पद पर अभिषेक किये, अङ्गद को अभिषिक्त हो जाने पर प्रसन्न होकर सब बानर सुग्रीव को धन्य धन्य कह कर पूजा किये, और वहां के बासी जन बार २ श्रीरामजी को और लक्ष्मणजी को धन्यवाद देकर स्तुति किये, और सुग्रीव अपने राज्य और स्त्री को पाकर प्रसन्नता पूर्वक मन्त्रियों के सहित आनन्द मचाने लगे ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे षडविंशःसर्गः ॥ २६ ॥

सुग्रीव को राज्य देकर बानर लोग गुहा में प्रवेश किये और लक्ष्मणजी के सहित श्रीरामजी प्रस्रवण नाम पर्वत पर आकर निवास करने की इच्छा से ठहरे। उस पर्वत पर सिंह व्याघ्र भयानक बोली को सदा बोलते हैं, अनेक प्रकार की लता और वृक्ष से वह पूर्ण है, बानर भालू विडाल आदि सदा वहां निवास करते हैं। उस पर्वत पर एक सुन्दर गुहा रही उसी गुहामें लक्ष्मण के सहित रामजी रहने को विचार दृढ़ किये और सुग्रीव के समय की प्रतीक्षा करने के लिये रामचन्द्रजी विनीत लक्ष्मण से बोले, कि हे लक्ष्मणजी! यह पर्वत की गुहा रमणीय है और सुन्दर वायु को सेवन करने के योग्य है, वर्षा काल पर्यन्त इस गुहा में रहना उचित है क्योंकि यह पर्वत का शिखर अति रमणीय और मनोहर है, अनेक रंगकी शिला और धातुओं से युक्त है, अनेक प्रकार के वृक्ष और लता से सम्पन्न है, इन वृक्षों पर अनेक रंगकी पक्षियां सुन्दर बचन को बोलते हैं, मालती कुन्द सैंदुवार शिरिष कदंब अर्जुन आदि के वृक्ष पुष्प फल से शोभित हैं, इन जलाशयों में सुन्दर कमल फलते हैं, और ये जलाशय गुहा के समीप में हैं, ईशान देश में नम्र दक्षिण में उन्नत गुहा बास करने में सुन्दर होती है। इस पर्वत के पश्चिम गंगाजी के समान सुन्दरनदी है, चन्दन तिलक साल तमाल कमल देव दारू अशोक वेत वकुल केतकी हिन्ताल नीम आदि के वृक्ष नदी के किनारे शोभाय मान हैं। और इस नदी के तट पर चक्रवाक हंस सारस आदि पक्षी सुन्दर बचन को बोलते हैं, इस सुन्दर बनमें मुनिगण सदा निवास करते हैं, और इस बनके समीप में सुग्रीव की राजधानी किष्किन्धा पुरी है, बानर राज सुग्रीव राज्य और स्त्री को पाकर मित्रों के सहित सुग्रीव अवश्य आनन्द को भोगते होंगे। इस प्रकार लक्ष्मणजी से कह कर उसी पर्वत पर निवास करने लगे। सुखकी सामग्री को उपस्थित रहते हुए भी रामजी को सन्तुष्ट नहीं हुआ सायंकाल में चन्द्रमा के उदय को देखकर प्राण प्रिया जानकी को स्मरण करने लगे, हरी हुई जानकी के वियोग

में श्रीरामजी को रात्रि काल में निन्द्रा नहीं आती थी शोक परायण रामजी को दुःख में देखकर उनके समान लक्ष्मणजी अपने भी दुःखी होकर रामजी से बोले हे वीर ! हे रामजी ! व्यथा को प्राप्त होकर इस प्रकार शोच करना आप को उचित नहीं है, शोक करने से पुरुषार्थ की हानी होती है, आप नित्य कर्मको अनुष्ठान करने वाले हैं देवता गौ ब्राह्मण की सेवा करने वाले हैं धर्मात्मा और व्यवसायी हैं, यदि आप शोक से आकुल होंगे तो उद्दण्ड शत्रु राक्षस को किस प्रकार नाश करेंगे, इस कारण शोक को छोड़ कर उद्योग को स्थिर कीजिये, और परिवार सहित रावण को नाश कीजिये । आप को क्षमा करने से समुद्र पर्यन्त पृथिवी को मैं उलटी कर सकता हूं रावण की क्या गणना है, यह वर्षा काल आया है शरत कालकी प्रतीक्षा कीजिये, मैं आपके मन्द हुए पराक्रम को इस प्रकार उत्तेजित करूंगे जैसे राख से ढंकी हुई आग होमकी आहुति को पाकर प्रज्वलित होता है। लक्ष्मणजी के युक्त वचन को सुनकर रामचन्द्रजी सुन्दर वचन को बोले, हे लक्ष्मणजी ! पराक्रम युक्त जो वचन आप हमारे सन्तोष के लिये कहे हैं उससे हमारा शोक नाश होगया और हम अपने पराक्रम से प्रोत्साहित होगये, और अब इस उत्साह से शरत्काल तक के आगमन की प्रतीक्षा करेंगे ॥ इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥

श्रीरामचन्द्रजी बालि को मार कर सुग्रीव को राज्य देकर लक्ष्मण के सहित माल्यवान पर्वत पर बैठकर लक्ष्मणजी से बोले, कि यह वर्षा काल आगया है देखिये आकाश में पर्वतों के समान बद्दल छाये हैं, सूर्य नवमहीना तक अपने किरण से पृथिवी पर गिरे हुए समुद्र के जलको खींचते हैं वही जल वर्षाकाल में पृथिवी को दान करते हैं, मेघों के झुंड आकाश में आकर कोइन के फूल से सूर्य को अलंकृत करते हैं, और संध्या काल में ये बद्दल लाल होकर विचित्र शोभा को धारण करते हैं, यह पृथिवी घाम से जलकर गरमी को बढ़ाती है, जैसे दुःखसे व्याकुल सीता अपने नयन के गरम जल को छोड़ती हैं, बद्दलों

को सन्मुख उपस्थि होजाने पर कैसी शीतल मन्द सुगन्ध हवा चलती है, हे लक्ष्मणजी! देखो नील रंग के बद्दलों के मध्य में बीजली किस प्रकार चमकती है वैसेही रावण के गृह में तपस्विनी वैदेही प्रकाश करती होंगी। पर्वत पर सुखसे फूले हुए इस कुटज के वृक्ष को देखो, यह वृक्ष हमारे हृदय में काम को जगाता है, हे लक्ष्मणजी! मार्गकी धूलि शान्त होगयी है घाम की गरमी नम्र है राजा लोग अपनी विजय यात्रा को स्थगित कर दिये हैं देशान्तर में रहने वाले व्यवसायी इस वर्षा काल में अपने अपने गृहको जाते हैं, इस समय हंस लोग मान-सरोवर को छोड़ कर पर्वतों के कन्दराओं का सेवन करते हैं वर्षाकाल के नवीन जलको पाकर साल कदंब कुटज आदि वृक्षों के पुष्प अनेक रंग के धातु के समान पर्वत की शोभा को बढ़ाते हैं और मोर पपीहा आदि के सुमधुर बचन को सुनती हुई ये पहाड़ी नदियां समुद्र सो मिलने की इच्छा करके शीघ्र चली जाती हैं, रससे भरा हुआ आम और जामुन का फल अतिथियों को खाने के लिये अपने आप पककर पृथिवी पर गिरे हैं, बद्दल बिजली की माला और बगुलों के झुंड के समेत पर्वत के शिखर पर मतवाली हाथी के समान गर्जना करते हैं इनकी गर्जना से उत्कण्ठित होकर मयूर अपनी स्त्रियों के सहित प्रमत होकर नाच करते हैं बन के प्रान्त भाग में मयूर नाचते हैं कदंब की शाखा में कदम्ब उत्पन्न हुए हैं, कामकी इच्छा से गायों के पीछे सांड लगे हैं इस प्रावृट् कालकी पृथिवी धान्य से परिपूर्ण है, बनके झरनों के समीप फूली हुई केतकी के सुगन्ध से आकुल भ्रमर हाथियों के गण्डस्थल पर बिराजते हैं। और कदंब की शाखा पर बैठे हुए वर्षा की धारा से व्याकुल होकर पुष्प रसके पान करने के मदको शीघ्र त्याग करते हैं, पर्वत कन्दराओं में बैठे गजराज मेघ की गर्जना को सुनकर युद्धकी अभिलाषा से गुहा गर्जना करते हैं, चिरकाल से तपस्या में निरत मेढक अनेक रंग को धारण करके भयानक बचन को बोलते हैं। जलके बेग से ये नदियां अपनी मर्यादा को छोड़ कर बहती हैं,

बड़े बड़े राजाओं को जैसे जलसे अभिषेक होता है वैसे उन राजाओं के समान बद्दल इन पर्वतों का अभिषेक करते हैं, बद्दलों के समारोह से सूर्य चन्द्रमा तारागण छिप गये हैं अन्धकार के मारे दिशायें भी भूल जाती हैं, हे लक्ष्मणजी ! यह कैसी जलकी धारा से वृष्टि होती है मानो मालूम पड़ता है कि रति काल में स्वर्ग की स्त्रियों के गले में धारण किये गये ये मोती के माला टूट कर गिरते हैं इसके समान जलकी धारा चारो ओर गीरती है, इस भाद्रपद मास में सामवेद को जानने वाले ब्राह्मण उपाकर्म करते हैं । शत्रु को जीत कर राज्य को पाकर इस सुन्दर वर्षा काल के सुख को सुग्रीव भोगते हैं, मैं तो राज्य और स्त्री से भ्रष्ट होकर नदी के तट के समान गलित होकर दुःख को भोगते हैं, अति वर्षा से मार्ग दुर्लभ होगया और रावण हमारा महा शत्रु है इनसे पार होना हमको कठिन जान पड़ता है, और सुग्रीव आदि बानरों को चलने के समय अपने कार्य के विषय में मैंने कुछ नहीं कहा है, सरत् काल को आने पर सुग्रीव अपने स्वयं आवेंगे इस कारण यहा रह कर वर्षा काल तक प्रतीक्षा करना चाहिये ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे अष्टविंश सर्गः ॥२८॥

इसके उपरान्त वर्षाकाल पर्यन्त श्रीरामजी माल्यवान् नाम पर्वतपर निवास किये इधर शरत् कालको उपस्थित होने पर स्त्रियों के साथ विलास में निरत सुग्रीव श्रीरामजी की सुधि को विसर गये और दिन रात तारा आदि स्त्रियों के साथ विहार करने लगे, जैसे अप्सराओं में इन्द्र विहार करते हैं सुग्रीव की यह दशा देखकर श्रीरामजी के भक्त देशकाल में चतुर तत्व को जानने वाले वक्ताओं में बृहस्पति के समान हनुमानजी तत्काल में सुख देने वाले परिणाम में यश और आनन्द को देने वाले, साम आदि चार नीतिमार्ग से युक्त प्रीति पूर्वक बचन को सुग्रीव के समीप जाकर बोले, अपने पिता और पितामह के राज्य को आपने लाभ किये अब अपने शेष कर्तव्य को पालन करो अर्थात् उपकार करने वाले रामजी का अब कार्य तुमको करना चाहिये, राजा

का राज्य, प्रताप, कीर्ति, कोश, दण्ड यह जब बढ़ता है कि जब सब एकत्र मिलकर कार्य करते हैं सो आप इतने बड़े बुद्धिमान निरपाप में प्रवृत्त होते हैं क्यों कि आप परम मित्र रामचन्द्रजीके लिये प्रतिज्ञा को पालन करने में समर्थ हो। जो समस्त कामों को छोड़कर मित्र के कार्य में सहसा प्रवृत्त नहीं होता उसका उत्साह सब प्रकार से नष्ट होता है, और जो कोई काल को बिता कर मित्र के कार्य में लगता है वह बड़ा भारी प्रयत्न करने से भी कुछ लाभ नहीं उठाता है। आप श्रीरामजी के अवधि का अतिक्रमण होता है, इसलिये वैदेही का खोज करना उचित है। समय के अधीन काम करने वाले पुरुष काल का अतिक्रमण करना नहीं चाहते वह तुम्हारे अभिप्राय को जानने के लिये तुम्हारे वश होकर काल की प्रतीक्षा करते हैं और तुम्हारे वृद्धि के लिये वह रामजी लक्ष्मण के सहित दीर्घ बन्धू हैं और उनके अतुल प्रभाव व पराक्रम हैं उन्हों ने पूर्व में तुम्हारा उपकार किये हैं इस कारण अब उनका प्रत्युपकार तुम करो। इसलिये हे हरीश्वर ! इन श्रेष्ठ और बलवान बानरों को आज्ञा देओ, काल को अतिक्रमण करने में तुम्हारा कल्याण नहीं होगा। श्रीरामजी के कहने के पहिले यदि तुम उनके कार्य साधन में लग जाओगे तो उनके समय का उल्लंघन नहीं होगा उनको प्रेरणा करने पर कार्य करने में दोष आजायगा अर्थात् तुम असत्यवादी और कृतघ्न समझे जाओगे। हे सुग्रीव ! बिना उपकार किये भी तुम उनका उपकार करने के योग्य हो उपकार करने पर क्यों नहीं करते हो ? हे सुग्रीव ! आप शक्तिमान व पराक्रमी हो आप श्रीरामजी के कार्य को करने में समर्थ हो उनकी आज्ञा को चाह कर कार्य करना यह उचित नहीं होगा हम केवल तुम्हारे सत्य असत्य को देखते हैं नहीं तो मैं अपने परिवार समेत सीता की खोज करूंगा, रामचन्द्रजी के बाण के अधीन सकल चराचर प्राणियों को जानना, वह रामचन्द्रजी तुमको अपना मित्र जानकर पापात्मा बालि को मारा कि हम अपने जानकी को खोजें अथवा किसी मित्र के द्वारा खोज करावें यह सोचकर तुम्हारे

साथ मित्रता किये और बालि को वध किये, नहीं तो उनके वश में इन्द्रादिक देवता सदा रहते हैं उनको राक्षस से क्या भय है। ऐसे उपकारी व पराक्रमी रामजी का कार्य करो, पृथिवी वा आकाश में जहां सीताजी हों वहां अन्वेषण करो। हे सुग्रीव! तुम्हारी आज्ञा से पाताल में, आकाश में, पृथिवी में, जल में हम लोगों को जाने में विलम्ब नहीं होगा। यदि सीता की खोज करना चाहते हो तो इस समय करोड़ से भी अधिक संख्यक बानर तुम्हारी आधीन में हैं उनको आज्ञा देओ कि कौन कपि किस कार्य को करे। श्रीहनुमानजी के उचित वचन को सुन कर सुग्रीव नील नाम बानर को आज्ञा दिये कि आप अपने दिशाओं में जाकर बानरों की सेना को इकट्ठा कीजिये, और जितनी हमारी प्रधान सेना है वह सेना सेनापति के सहित हमारे निकट आवे और जो दूसरे देश में स्थित सेना और सेनापति हैं उनको हमारी आज्ञा से शिघ्र लिवा लाइये। इसके उपरान्त आप अपने मुख्य कार्य को सुनो, कि तीन दिन और पांच दिन के बाद जो बानर न यहां आवेगा उसको प्राण दण्ड (फांसी) मिलेगा, अर्थात् पांच दिन के पहिले सब कोई को इकट्ठा हो जाना चाहिये। नील को इस प्रकार आज्ञा देकर पराक्रमी सुग्रीव फिर भी अपने राजभवन में चले गये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे एकोनत्रिंश सर्गः ॥२९॥

नील को आज्ञा देकर सुग्रीव को गृह में प्रवेश करने पर काम और शोक से पीड़ित रामजी वर्षाकाल भर पर्वत पर स्थित होकर शरत् काल में निर्मल आकाश सुन्दर चन्द्रमण्डल शरत् कालकी उजियाली रात्रि को देख शरत् की विलक्षण शोभा को देखकर श्रीरामजी के मन में बार बार जानकीजी का स्मरण होने लगा। कि जो जानकी सारस पारावत आदि पक्षियों के बचन को सुनकर इनके सदृश अपने बचन बोलकर हमारे संग विहार करती थी वह जानकी आज कहां क्रीड़ा करती हैं, सोने के समान निर्मल इस अमिलताश के पुष्प को देखकर हमारी प्रिया जानकी कहां हैं जिनको हम नहीं देखते हैं। जो

सीता पहिले कलहंसों के मनोहर शब्द को सुनकर पीछे उनके समान बोलती थीं, वह कलहंस भाषिणी महा सुन्दरी सीता कहां रमण करती हैं। इन चकवे के कठिन शब्द को सुनकर सीता की क्या गति हुई होगी, सीता के बिना वन उपवन पर्वत नदी सरोवर बावली फल पुष्प पशु पक्षी किसी को देखकर भी हमको सुख नहीं होता है, इस प्रकार श्रीरामजी को विलाप करते देखकर दुःख से युक्त होकर लक्ष्मणजी कर्म योग से और ज्ञान योग से पुरुषार्थ को बढ़ाने के लिये और दुःख की शान्ति के लिये बचन को बोले, हे रामजी! काम के वश होकर यह आप क्या करते हैं काम के अधीन होकर पुरुषार्थ का त्याग करके आप कौनसे कार्य का साधन करेंगे। इसलिये काम की चेष्टा को दमन करके कर्म को करने की चेष्टा कीजिये, स्नान आदि करने के बाद समाधि के द्वारा इन सब दुखों को दूर कीजिये, और देवताओं की अर्चना और बन्दना से पुरुषार्थ को बढ़ाने के लिये कर्म योग करना चाहिये। और तुमसे सनाथ सीता दूसरे को सुलभ नहीं है जैसे जलती हुई अग्नि की ज्वाला को स्पर्श करने से हाथ अवश्य जलता है अग्नि के समान सीता के प्रताप को आप से अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं ग्रहण करसकता है, इस लिये आप कर्मयोग में मन को लगाओ। इस प्रकार लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर श्रीरामजी जानकीजी को स्मरण करते हुए लक्ष्मणजी से बोले, हे भाई! वर्षाका समय बीत गया आकाश से बद्दल हट गये, आकाश निर्मल होगया, तारागण और चन्द्रमा के प्रकाश से दिशायें प्रकाशित हो गयीं, वर्षाकाल में बोलने वाले मयूर आदि पक्षियों के बचन शान्त होगये हैं, सूर्य के उदय काल में पुष्करिणियों में कमल खिल उठते हैं, हंस सारस पारावत चक्रवाक आदि पक्षीगण नदियों के तटपर गमन करते हैं, मतवाले हाथियों पर गौओं के समूह पर और नदियों के सुन्दर जल पर शरतकाल की लक्ष्मी विभक्त होकर विलास करती हैं। वर्षाकाल में उत्तुङ्ग नदियों का जल कृश होकर मेखला के समान हो गया है, शीतल मन्द सुगन्ध वायु बहने

लगे हैं, दिशाओंमें प्रकाश हो गया है, मार्गके कीचड़ नष्ट हो गये हैं राजा लोग शत्रुओं को जीतने के लिये दिग्विजय यात्रा किये हैं मद से युक्त हाथी बन में प्रेम युक्त अपने पति के साथ रमण करती हैं, मयूर बदलों के जाने से अपने आनन्द को भूलकर उदासीन हो गये हैं, सर्प लोग वर्षाकाल में क्षुधा से पीड़ित होकर इस शरत काल में जल वायु को भोजन करने के लिये पृथिवी पर भ्रमण करते हैं, सारस पक्षियों की पंक्ति पके हुए धान को चूमने के लिये आकाश से आती हैं। प्रातःकाल की वायु को चलने से ये वांस वीणा (सितार) के समान बजते हैं असन छतन अढौल आदि के पुष्प अपनी शोभा से शरत् काल की शोभा को बढ़ाये हैं हे लक्ष्मणजी! देखो चारों ओर शरत् काल विचित्र शोभा को धारण किये हैं। अब सीता के विरह में वर्षाकाल के चार मास सैकड़ो बर्ष के समान वीते हैं, जो सीता विषय दण्डकारण्य में हमारे साथ साथ पीछे चलती थी जैसे उपवन में चक्रवाक के जोड़े घूमते हैं। हे लक्ष्मणजी! प्रिया के विरह में दुःखी और राज्य से विवासित हमारे ऊपर क्या राजा सुग्रीव कृपा नहीं करेंगे? क्योंकि मैं अनाथ हूं राज्य से भ्रष्ट हूं और हमारी प्रिया रावण के गृह में है इन कारणों से वह दुरात्मा सुग्रीव हमारा तिरस्कार न करे क्योंकि सीता को खोजने का यही समय निश्चय किया है, तो समय को निश्चत करके भी वह दुर्बुद्धि विचार नहीं करता है, इस लिये हे लक्ष्मणजी आप किष्किन्धा पुरी में जाकर लौकिक सुख में आसक्त उस मूर्ख वानर से हमारा सन्देशा कहिये, कि अतिथिको दुखी को उपकार करने वाले को आशा देकर जो कोई उसकी आशा को भंग करता है वह पुरुष लोक में अधम है। शुभ हो चाहे अशुभ हो अपनी कही हुई बात को जो पालन करते हैं वही बीर हैं और पुरुषों में श्रेष्ठ हैं, जो पुरुष दूसरे के किये उपकार को भूल जाते हैं मरने पर उनके मांस को पशु पक्षी भी नहीं खाते। काञ्चन पृष्ठ मेरे धनुष को रण में खींचने से वज्र के समान शब्द को फिर भी सुनने की इच्छा करता है अर्थात रण में मैंने जिस बाण से दुरात्मा

बालि को मारा है वही बाण अभी पापी सुग्रीव के लिये भी उद्यत है वर्षा काल के चार मास की अवधि मुझको देकर अपने विहार करने में लीन हो गया सो आज तक उसको बचन का स्मरण नहीं है, वह तो अपने मदिरा पान करके स्त्रियों के साथ क्रीड़ा में दिन को बिताता है, शोक से पीड़ित और दीन हम लोगों पर क्या सुग्रीव दया नहीं करेगा। हे लक्ष्मणजी! आप शीघ्र किष्किन्धापुरी में जाकर हमारे क्रोध युक्त सन्देश को सुग्रीव से कहिये कि तुम अपने कहे हुए बचन को पालन करके सज्जनों के मार्ग पर चलिये, बालि जिस मार्ग पर जाकर जो गति पाया है। उस गति को पाने की इच्छा न करिये। मैंने रण में अपने एक बाण से बालि को संहार किया है, उसी बाण से परिवार सहित तुम्हारा नाश करूंगा। इस लिये हे बानरेश्वर! अपने देश काल के अनुसार धर्म मार्ग को देख कर अपने बचन को पालन करो, नहीं तो बालि के समान यम लोक को जाओगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे त्रिंशः सर्गः॥३०॥

काम से व्यथित शोक और परिताप में युक्त श्रीरामजी लक्ष्मण जी से बोले, कि यह बानर अच्छे मार्ग पर नहीं चलता है और मित्रता के फल को भी नहीं मानता है इस लिये यह राज्य लक्ष्मी का उचित भोग नहीं करेगा, क्योंकि इसकी बुद्धि विचार पर स्थिर नहीं है। हे लक्ष्मणजी! आपके प्रसाद से इसकी बुद्धि भ्रष्ट है अपने सुखमें आसक्त है, इसके ज्येष्ठ भाई बालि को मार कर इसे राज्य दिया है वह राज्य पालन करने के योग्य यह नहीं है। तुम्हारे समान पुरुष लोक में इस प्रकार पापी के साथ व्यवहार नहीं करते हैं, अच्छे प्रकार के विवेक से जो नाश होता है वा पुरुषों में श्रेष्ठ है। यह मित्रों में घात करने वाला है इसका विश्वास न करना चाहिये, क्योंकि इसको मित्रता होने के पहिले की बात चीत को स्मरण करो, हे लक्ष्मणजी! समय को उल्लघंन करने में इस प्रकार के कठोर बचन आप कह सकते हैं,

इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है, श्रीरामचन्द्रजी के इस भाँति अनुमति को लेकर शत्रु संहारण लक्ष्मण किष्किन्धापुरी को चलने के लिये प्रस्तुत हुए। इसके बाद लक्ष्मणजी भाई के कार्य के लिये अति कूपित स्वरूप धारण करके सुग्रीव के भवन को गये। इन्द्र के बज्र के समान संहार करने में निपुण बाण को लिये भयानक प्रतिमा को धारण किये बुद्धि में बृहस्पति के समान विचार करने वाले श्रीरामजी के सन्देशा को कहने के लिये काम क्रोध से उत्पन्न रामजी के क्रोध रूपी आग को वायु के समान सहायता देने वाले लक्ष्मणजी मार्ग में चले। अपने वीर भाव और क्रोध के अनुकूल हो इस बेग से चले मानों उनके पग २ रखने से पर्वतों के सहित पृथ्वी नीचे धंसी जाती है श्रीरामजी के कार्य के वश फलांग को फेंकते वानरों की सेना से युक्त राजा सुग्रीव की राजधानी को देखे, पुरी से बाहर रहने वाले वानरों ने धनुष बाण लिये यमराज के समान क्रोधित लक्ष्मण को आते देख कर पर्वतों की गुहा में वृक्षों पर सबके सब वानर छिप गये और कुछ वानर क्रोधित लक्ष्मण के आने समाचार सुग्रीव से कह सुनाये, तारा के सहित विषय में आशक्त कामी सुग्रीव उन वानरों के वचन पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया इसके बाद हनुमान आदि मन्त्रि लक्ष्मण जी के आगमन का समाचार कहने के लिये अपने नगर से निकल सुग्रीव के भवन में पहुँचे, वे हनुमान आदि वानर महाबली पराक्रमी थे, नख दांत के अस्त्र में अमोघ बाण के समान थे, कोई दश हाथी के बराबर बलवान कोई सौ हाथी के बराबर कोई हजार हाथी के बराबर बलवान हैं, वे सब वानर अपने स्थान से उतर कर लक्ष्मणजी के चारो ओर खड़े हो गये, लक्ष्मण पुरी के द्वार पर जाकर सुग्रीव के प्रमाद से और रामजी के कार्य में व्याकुल होकर धनुष बाण को लिये इस प्रकार गरम श्वांस को छोड़ने लगे जैसे पाँच फण का सर्प क्रोधित हो किसी को फुफकारे। लक्ष्मणजी को इस प्रकार क्रोधित देख कर भय से अंगद को महा विषाद हुआ, कि इतने दिन पर्यन्त रामजी का

कुछ भी कार्य नहीं हुआ देखें आज इनके क्रोध से क्या होता है, लक्ष्मणजी अङ्गद को देखकर बोले, वत्स अङ्गद मेरे आने का समाचार सुग्रीव से कहो कि श्रीरामजी के वृतान्त को लेकर उनके भाई लक्ष्मण द्वार पर खड़े हैं, यह कह कर लक्ष्मणजी बोले, कि तुम शीघ्र जाओ और वह बानर सुग्रीव जिस प्रकार समझे उसे समझाओ और वह जो कुछ कहे उसको सुनकर शीघ्र हम से कहो। लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर शोकाविष्ट अङ्गद सुग्रीव के समीप जाकर बोले कि लक्ष्मण आये हैं यह कर सुग्रीव को प्रणाम किये इसके उपरान्त तारा और उमा अपनी माता को प्रणाम किये और लक्ष्मणजी के आगमन का समाचार कह सुनाये! परन्तु मद से मोहित निद्रा में विह्वल सुग्रीव को कुछ भी न जान पड़ा। इसके बाद लक्ष्मण को देख कर भय से कुछ बानर सुग्रीव के समीप जाकर उनको जगाने के लिये सिंहनाद के समान आपस में किलकिलाहट करने लगे। बानरों के भयानक शब्द से जागा हुआ सुग्रीव अङ्गद के बचन को सुन कर कुछ भी ध्यान नहीं दिया, इसके उपरान्त सुग्रीव के मन्त्री यत्न और प्रभाव सुग्रीव के समीप जाकर लक्ष्मणजी के समाचार को बहुत भाँति से कहे और सुग्रीव के समीप में बैठ गये जैसे इन्द्र के आसन के नगीच वायु देवता रहते हैं, वहां बैठ कर अपने नीत युक्त बचन से सुग्रीव को प्रसन्न करके बोले, कि सत्य प्रतिज्ञा को पालन करने वाले जगत् के स्वामी तुमको राज्य देने वाले और मनुष्य के अवतार को धारण करके संसार में विहार करने वाले जो राम लक्ष्मण हैं उनमें धनुष बाण को हाथ में लेकर अकेले राम लक्ष्मणजी तुम्हारे द्वार पर खड़े हैं जिनके भय से व्यग्र होकर ये सब बानर किलाकिला शब्द को करते हैं वह लक्ष्मण जी रामजी की आज्ञा से आये हैं और अपना समाचार अङ्गद से कह कर अङ्गद को तुम्हारे पास भेजे हैं और अपने काल के समान क्रोध करके द्वार पर खड़े हैं इस लिये परिवार के सहित आप वहाँ चलकर उनक्रोधको शान्त कीजिए धर्मात्मा

रामजी ऐसा कहते हैं कि हे राजन् सत्यवादी हो तुम्हारी प्रतिज्ञा का समय उपस्थित है ।

वाल्मीकिये रामायणे किष्किधाकाण्डे एकत्रिंश सर्गः ॥ ३१ ॥

मन्त्रियों के सहित सुग्रीव इस प्रकार अंगदजी के बचन को सुनकर अपने आसन से उठ कर बैठ गये, और बिचार में कुशल मन्त्रियों से लक्ष्मणजी के क्रोधित होने के कारण को बिचार करने लगे कि श्रीरामजी हमको अपकारी शत्रु नित्य छिद्रको देखने वाले इस प्रकार के दोष से युक्त हमको अवश्य जाने, इस लिये लक्ष्मण को क्रोध है तो इस लक्ष्मण के कोप विषय में यह निश्चय करना चाहिये कि इनके क्रोध करने का क्या कारण है, हमको राम लक्ष्मण के क्रोध से भय नहीं है क्योंकि शत्रुकृत प्रेरणा से क्रोध होता है और वही क्रोध मित्रको भय देता है, क्योंकि मित्रता करना सबको सहज है उस संसार में उसका पालन करना कठिन है, हमको रामचन्द्रजी से इस कारण भय है कि उन्होने हमारा उपकार किया है उस उपकार के बदले मैंने उनका कुछभी उपकार नहीं किया है इस कारण हमको भय है । सुग्रीव के भय युक्तबचन को सुनकर बानर मंत्रियों के मध्य में हनुमानजी बोले, हे सुग्रीव ! इसमें आश्चर्य क्या है जो रामजी उपकार करने के बदले में उपकार को चाहते हैं, तुम्हें उचित है कि उनके सुन्दर इस उपकार को कभी नहीं भूलना चाहिये, क्योंकि महाबली श्रीरामजी भयको त्याग करके तुम्हारे लिये इन्द्र के तुल्य पराक्रमी बालि को एक बाण से मारे हैं, इसीसे रामजी क्रुद्ध होकर लक्ष्मणजी को भेजे हैं, तुमतो अपने सुखमें प्रमत्त होकर समय को भूलगये । देखिये यह शरत् काल का समय है आकाश निर्मल होगया है ग्रह नक्षत्र तारा आदि सभी प्रसन्न होकर उदय होते हैं, मार्गकी धूलि नष्ट होगयी हंस गण सरोवर को गये, जलाशयों में कमल खिल उठे अब यह समय रामजी के कार्य के लिये उद्योग करने का है, स्त्री के बिरह से व्याकुल रामजी तुम्हारे बचन के अनुसार माल्यवान् पर्वत पर बैठ कर तुम्हारी

प्रतीक्षा करते हैं, इसमें तुमारा अपराध अवश्य है चलो विनीत भाव से प्रार्थना पूर्वक लक्ष्मण को प्रसन्न करो, मन्त्रियों के विचार से राजाओं का कल्याण होता है इस कारण तुम भय को छोड़कर हमारे वचन को अंगीकार करो। नहीं तो क्रोध युक्त धनुष बाण को जगत् को दंड देने के समान लक्ष्मण तुम्हारे द्वार पर खड़े हैं यदि यह इस समय प्रसन्न होजावें तो पुनः क्रोध नहीं करेंगे। तुम तारा और अंगद आदि के सहित चल कर विनय पूर्वक हाथ जोड़ कर उनसे प्रार्थना करो, श्रीरामजी तथा लक्ष्मणजी को साधारण मनुष्य नहीं जानना चाहिये॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किंधाकांडे द्वात्रिंश सर्गः ॥ ३२॥

इसके उपरान्त हनुमानजी के वचन को व अंगदजी के द्वारा श्रीरामजी के सन्देश को सुनकर महा बलवान हनुमत् आदि बानर लक्ष्मणजी को पर्वत की गुहामें अर्थात् सुग्रीव के राजभवन में हाथ जोड़कर प्रार्थना पूर्वक लिवाले गये, लक्ष्मणजी क्रोध को शान्त करके उस गुहामें प्रवेश किये और वहां की सम्पत्ति तथा शोभा को देखने लगे। कि उस गुहा के उपवनमें सुन्दर वृक्ष लगे हैं, वह फल पुष्प से सदा शोभित रहते हैं कोई भी ऋतु में यह वृक्ष निष्फल नहीं रहते, और अनेक प्रकार के उत्तम वस्तुओं से वह गुहा आक्रान्त है जो वस्तु इन्द्र व कुबेर की पुरी में हैं वह वस्तु किष्किन्धा पुरी में हैं, ऊँचे महल और अंटारियां बने हैं, उनमें जगह जगह स्फटिक मूंगा मोती आदि लगे हैं, देवता और गंधर्व के पुत्र कामरूपी बलवान बानर अनेक स्थानों में विहार करते हैं। चन्दन अगर आदि सुगन्धित वस्तुओं से मार्ग छिड़का गया है, अनेक प्रकार के कुआं बावली तालाब बने हैं, उनमें भांति भांति के कमल फूले हैं, ऐसे स्थानों में अंगद मैन्द द्विविद गवय गवाक्ष गज शरभ विद्युन्माली संपाति सूर्याक्ष हनूमान वीरबाहु सुबाहु महात्मानल कुमुद सुषेण जामवन्त दधिवक्त्र सुनेत्र सुपाटल ये मुख्य बानर उन स्थानों में निवास करते हैं, इन बानरों के गृह में स्त्री धन रत्न सुन्दर वस्त्र से परिपूर्ण लक्ष्मणजी देखते हुए

सुग्रीव के स्थान पर पहुंचे । वह सुग्रीव का भवन, शंखमर्मर और स्फटिक का बना हुआ, देखने में कैलास के समान उज्वल है इन्द्र के नन्दन बनके वृक्ष सुग्रीव के उपवन में लगे हैं उपवन के मध्य में कल्पवृक्ष शोभित है, दिव्य वृक्षों के फल पुष्प से वह उपवन हरा भरा है, सुन्दर जलाशय बने हैं शीतल छाया को सेवन करने के लिये अनेक रंग के पक्षी यहां निवास करते हैं, बड़ी बड़ी बानरों की सेना अस्त्र शस्त्र को लिए राजद्वार की रक्षा करती हैं, द्वारपर सुन्दर माल्य और तोरण बंधा हुआ है । ऐसे रमणीय सुग्रीव के गृह में महाबाहु लक्ष्मणजी इस प्रकार प्रवेश किये, जैसे बद्दलों के मध्य में सूर्य दीख पड़ते हैं, वहां अन्तःपुरमें जाकर देखे कि वह धर्मात्मा सुग्रीव के स्थान में सात फाटक लगे हैं । वह सातो फाटक यानासन से समावृत हैं । मध्य में सोने और चांदी (गंगायमुनी) के पलंग लगे हैं उनपर वह मूल्य बिछौना बिछे हैं, अनेक प्रकार के बाजे बजते हैं स्वरताल से युक्त गीत होरहा है, और रूप तथा युवा वस्था से गर्वित अनेक स्त्रियों को देखे, वें स्त्रियां उत्तम भूषण वस्त्र को धारण करने में और अपने अपने शृङ्गार हाव भाव में व्यग्र हैं, सुग्रीव के सेवकों को कार्य करने में शान्त और उत्तम भूषण वस्त्र से रहित लक्ष्मणजी नहीं देखे । रनिवास में पटरानियों के पायजेब और करधनी के विचित्र शब्द को सुनकर लक्ष्मणजी लज्जित होगये । और रोष के वेग से कुपित लक्ष्मण अलंकार के शब्द को सुनकर अपने धनुष से ऐसा शब्द किये कि वह शब्द चारो ओर दिशाओं में गूंज उठा । और लक्ष्मणजी एकान्तमें बैठगये, लक्ष्मणजी के धनुष के कठोर शब्द को सुनकर बानर राज सुग्रीव लक्ष्मणजी को आगमन को जानगये । और भयसे भीत होकर ऊंचे आसन से सुग्रीव उठ पड़े । और मुखकी कान्ती मलीन होगयी । इसके बाद चिन्ता से व्याकुल बानरों के राजा सुग्रीव चन्द्रमुखी तारा से बोले, कि हे सुभ्रु ! स्वभाव से कोमल रामचन्द्रजी के भाई लक्ष्मणजी कारण के वश साक्षात काल के समान आये हैं । यह रामजी का क्रोध हमारे दोष से हुआ

है। इस लिये हम उनके समीप नहीं जा सकते हैं। हे भामिनी! तुम स्वयं जाकर उनको देखो और अनुनय के बचन से उनको प्रसन्न करो तुमको देख कर उनका क्रोध शान्त हो जायगा क्योंकि महात्माजन स्त्रियों पर क्रोध नहीं करते। जब तुम्हारे विनय से उनके मनमें शान्ति हो जायगी तब मैं पीछे उनका दर्शन करूंगा। इस प्रकार सुग्रीव के बचन को सुनकर पतिके प्रेम से मदके अलस से अलसागई है और रतिकालमें मदको पान करने से नेत्र चकित होगये हैं। रतन के भारसे अंग नर्म होगया ऐसी सुग्रीव स्त्री तारा अनेक भूषण वस्त्र को धारण करके लक्ष्मणजी के समीप आई। उदासीन भावसे एकान्त में बैठे महात्मा लक्ष्मण सुग्रीवकी प्रिया तारा को देखकर सिरनीचा करलिये और अपने क्रोध को छोड़कर शान्त होगये। वह तारा पानके सहित लक्ष्मणजी के समीप में आकर लज्जा को त्याग कर दिया, और पति कि रक्षा के लिये विनीत बचन को लक्ष्मणजी से बोली, हे राजपुत्र! आपके क्रोध का कारण क्या है कौन आपकी आज्ञा का अतिक्रमण किया है जिससे आपको क्रोध हुआ है। लक्ष्मणजी तारा के बचन को सुनकर शान्त भावसे बोले, कि यह तुम्हारा पतिधर्म और अर्थ दोनों को नष्ट करता है, रामजी के अनुग्रह से राज्य को पाकर काम के वश होकर अपने बचन को भूल गया है, वह बानरों का राजा अपने बचन से चार महीने की अवधि किया है वह निर्णीत समय बीत रहा है तौ भी तुमारे साथ बिहार करने में आसक्त वह बानर अपने बचन को विस्मरण करदियाहै धर्म और अर्थकी सिद्धि के मानको ग्रहण नहीं करना चाहिये क्योंकि मान से अर्थ धर्म काम को नाश होने में दो कारण हैं पहिला यह कि उपकार करने पर अपकार करना दूसरा गुणवाद मित्र के मित्रता को नाश करने का उद्योग करना इन दो कारणों से अर्थ और धर्म नष्ट हो जाते हैं, इन दोनों का तुम्हारा पति पालन किया है कि धर्म से मित्रता करके उसका पालन नहीं करता है। इस प्रकार लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर विश्वास युक्त बचन फिर भी तारा

लक्ष्मणजीसे बोली, हे राजपुत्र ! आपके कोप करनेका अभी समय नहीं है और मित्र को ऊपर क्रोध करना उचित नहीं है इस लिए हमारे स्वामीके अज्ञान रूपी अपराधको आप क्षमा करिए । तुच्छ बल वाले पर बलवान के क्रोध कहां ? आपके समान महत्मा जन पर क्रोध को अधिकार कैसे हो सकता है क्योंकि सत्व गुण को पालन करना ही तपस्या का फल है, हे बानरों के रक्षक ! रामजी के क्रोध को मैं जानती हूं, और इस समय क्रोध करने के कारण को जानती हूं सुग्रीवको जो कुछ आपने उपकार किया है उसको भी जानती हूं, और और आप के कार्य को भी जानती हूं । तौ भी कामदेव का विषम बल अत्यन्त बलवान है कि जिस काम के अधीन सुग्रीव आज भी अशक्त है, और आप ऐसे श्रेष्ठ पुरुषों पर काम क्रोध का वश नहीं चलता है, जिस मनुष्य को काम में प्रीत है व मनुष्य धर्म अर्थ और देश काल को मर्यादा को नहीं जानता है । हे बानर वंशनाथ ! अपने मित्र सुग्रीव के अपराध को क्षमा करिए, फल मूल खाकर तपस्या करने वाले ऋषि मुनि भी काम के जाल में फँस जाते हैं स्वभाव से चपला बानर स्त्रियोंमें अनुराग क्यों न करें । इस प्रकार लक्ष्मणजी से कह कर तारा पति के कल्याण के लिए इस बचन को बोली हे भगवन् ! काम में आसक्त भी सुग्रीव आपके कार्य को साधन को उद्योग किया है, अनेक बन पर्वतों पर रहने वाले स्वेच्छाचारी बानर भालु सौ करोड़ आते हैं । अपने प्रधान मन्त्रि को भेज कर सुग्रिव ने उन्हे बुलाया है, अब हे भगवन् ! क्रोध को शान्त करके शुद्ध भावसे अपने मित्र सुग्रीव को दर्शन दीजिये । तारा के बचन के अनुसार लक्ष्मणजी अपना क्रोध शान्त कर सुग्रीव के भवन में गये, सुग्रीव सोनेके उच्च आसन पर बैठे हुए दिव्य अलंकार व वस्त्र को धारण किये स्वर्ग में स्थित इन्द्रके समान स्त्रियों के मध्य में शोभा को प्राप्त होता है । इस प्रकार लक्ष्मणजी सुग्रीव को देखकर कोप से

लाल होगये, सुग्रीव महाबली लक्ष्मणजी को देखकर उमा अपनी स्त्री को दृढ़ आलिंगन करके लक्ष्मणजी को देखे ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे त्रयस्त्रिंशःसर्गः ॥ ३३ ॥

अति कोपशाली यमराज के समान लक्ष्मणजी को देखकर सुग्रीव का मन व्यथित होगया और आसन से उठ कर हाथ जोड़ कर खड़ा होगया। और उमा तारा आदि स्त्रियां चारो ओर से इस प्रकार खड़ी होगयीं जैसे चन्द्रमा के चारो ओर तारागण दीख पड़ते हैं, जैसे कल्प वृक्ष के संमुख देवता स्त्रियों के सहित प्रार्थना करते हैं वैसे लक्ष्मणजी के संमुख सुग्रीव और उनकी स्त्रियां हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगीं उमा व तारा के सहित सुग्रीव को देखकर लक्ष्मणजी क्रोधयुक्त बचन बोले, बल और सेना तथा परिवार के युक्त दयालु जितेन्द्रिय कार्य करने में कुशल सत्यवादी राजा लोक में पूजित होता है, जो राजा अधर्म पर स्थित है उपकारी मित्र के साथ जो मिथ्या प्रतिज्ञा करता है उससे अधिक कौन पापी और अपराधी है, एक अश्व के विषय में जो कुछ बचन को कहकर पालन नहीं करता है उसे सौ अश्वको मारने का पाप होता है गौ के विषय में जो असत्य कहता है उसे हजार गौ बध करने का पाप होता है और जो मनुष्य के निमित्त असत्य कहता है उसे आत्मघात करनेका पाप होता है और वह मनुष्य अपने पुण्यको नाश कर के अपने पितरों को नरकमें ले जाता है, जो कोई मनुष्य मित्रों के किये उपकार बदले प्रत्युपकार नहीं करता है वह कृतघ्न होता है और सब प्राणियों से बध करने के योग्य होता है। सबको आदर और नमस्कार के योग्य रामचन्द्रजी ने ब्रह्मा से कहे गये बचन को कहकर जो उन्होंने मुझे भेजा है उसको सुनो। गौ को मारने वाले का मदिरा पीनेवाले का चोरी करने वाले का और तपस्या को नष्ट करने वाले का महर्षियों ने प्रायश्चित के द्वारा उद्धार कहा है परन्तु कृतघ्न का उद्धार नहीं है; इस लिये हे मिथ्यावादी सुग्रीव! तुम कृतघ्न हो जो रामजी के किये उपकार विस्मरण करते हो, यदि रामजी के कार्य को करने की इच्छा करते

हो तो सीता को खोजने का उद्योग करो। श्रीरामजी से मिथ्या प्रतिज्ञा करके जो तुमने अपने सुख भोग में आसक्त हो ऐसे तुम्हारे समान कृतघ्न के स्वभाव को श्रीरामजी नहीं जाने, जैसे सर्प के मुख में पड़े हुए भी मंडूक के शब्द को सर्प नहीं जानता है। यदि महात्मारामचन्द्रजी के कार्य को करने में प्रवृत नहीं होगे तो उनके बाण से निहत होकर आज शीघ्र वालि को देखोगे। हे सुग्रीव! वालि के समान गति की इच्छा न करो। इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे चतुस्त्रिंश सर्गः ॥३४॥

क्रोध से प्रदीप्त लक्ष्मणजी के वचन को सुनकर चन्द्रमुखी तारा फिर भी लक्ष्मणजी से बोली, हे लक्ष्मणजी! इसप्रकार कठोर वचन को कहने योग्य आप नहीं हैं और न तो आप ऐसे मित्र के मुखसे यह राजा सुनने के योग्य है, यह सुग्रीव शठ निर्दय और असत्यवादी कुटिल कपटी नहीं हैं और न तो यह आप के उपकार को भूला है, क्योंकि रामजी के प्रसाद से इस राजा को राज्य मिला है और इसकी कीर्ति यश को तथा हमको और उमा को लाभ किया है। इस प्रकार के अपूर्व सुख को लाभ किया है दुःख के बाद इस अपूर्व सुख को पाकर यह राजा प्राप्तकाल को नहीं जाने जैसे घृताची को पाकर विश्वामित्र मोहित होकर दश वर्षतक विलास करते रहे, जब इतने बड़े तपस्वी विलास में समय को नष्ट किये तो और की क्या गणना है, हे लक्ष्मणजी! आहार निद्रा भय मैथुन यह शरीर के धर्म हैं इनसे परिश्रान्त काम में असन्तुष्ट इसके अपराध को रामचन्द्रजी क्षमा करने योग्य हैं। हे पुरुष श्रेष्ठ! आपके समान धीर पुरुष सहसा क्रोध के वश में नहीं होते हैं। आप क्रोध को छोड़कर सुग्रीव से प्रसन्न हूजिये, यह सुग्रीव उमा को हमको और अंगद को छोड़कर रामजी के कार्य को करेंगे। जैसे चन्द्रमा के साथ रोहिणी रहती हैं वैसे अधम राक्षसों को मारकर सीता को रामचन्द्रजी को समर्पण करेंगे। लंका में जितने राक्षस हैं उन राक्षसों को जितने के लिये उतने वीरों की आवश्यकता है इस लिये सुग्रीव के मन्त्री नील वानरों की सेना को इकट्ठा करने

के लिये गये हैं, विना बलवान् बानर भालुओं के रावण का जीतना कठिन है उन राक्षसों की संख्या इस प्रकार है कि दश करोड़ राक्षस समुद्र के किनारे रहते हैं और सौ करोड़ पुरी के मध्य में रहते हैं तथा तीन लाख साठ हजार राक्षस राज भवन में रहते हैं इसके बाद ऊनचाली हजार छ सौ राक्षस सेवकाई में कार्य करते हैं इतनी संख्या राक्षसों की विना सेना से कैसे जीत होगा । इसप्रकार राक्षसों की संख्या में बालि के मुख से पहले सुनी हूं इसके योग्य बानर भालू की संख्याको एकत्र करने के लिये मन्त्री को भेजा है उन लोगों को एकत्र करके श्रीरामजी के समीप जायंगे । हे भगवन् ! बालि बध के भय से हम सब स्त्रियां आप के क्रोध को देखकर व्याकुल होरही हैं इसलिये आप क्षमा करिये ।

इति बाल्मीकियेरामायणे किष्किन्धाकाण्डे पंचत्रिंशः सर्गः ॥ ३५ ॥

इस प्रकार विनय पूर्वक तारा के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी क्रोध को शान्त किये, लक्ष्मणजी को शान्तभाव में स्थित देखकर सुग्रीव का भय इस प्रकार छूट गया जैसे कोई अपने पुराने वस्त्र का त्याग करता है, सुग्रीव मदको त्याग करके चेतग होगये, और लक्ष्मणजी को प्रसन्न करते हुए बानरों में श्रेष्ठ सुग्रीव स्नेह युक्त बचन को बोले, हे लक्ष्मणजी ! हमारी लक्ष्मी और कीर्ति तथा राज्य नष्ट हो गया था, वह रामजी की कृपा से फिर भी मुझे प्राप्त हुआ, कौन ऐसा समर्थ है जो श्रीरामजी के सन्मुख खड़ा होसके अथ वा उनका अपकार कर सके । उनके उपकार के सदृश उपकार करना चाहिये, हे लक्ष्मणजी ! रामचन्द्रजी अपने प्रभाव से रावण को बध करके सीता को ले सकते हैं, हम लोग तो परिकर मात्र हैं, श्रीरामजी को सहायता से क्या हो सकता है जो रामजी अपने एक बाण से पृथिवी पर्वत के सहित महा वृक्षसाल को नाश कर दिया, जिनके धनुष के शब्द को सुनकर पृथिवी कांप जाती है उन रामजी को सहायता से क्या होसकता है, हम लोग दुरात्मा रावण को बध करने में केवल पीछे चलेंगे, इस प्र-

कार सुग्रीव के बचन को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक लक्ष्मणजी बोले, बानेश्वर ! तुम सब प्रकार से हमारे भ्राता हो, हे सुग्रीव ! तुमको नाथ पाकर हम लोग सनाथ होगये हैं, जो तुमारे इस प्रकार प्रभाव और इन्द्रियों का निग्रह है तो इस राज्य के उत्तम सुख को भोग करो। तुम्हारी सहायता से प्रतापी रामचन्द्रजी रणमें शत्रुका शीघ्र नाश करेंगे इसमें संशय नहीं है। हे सुग्रीव ! रामचन्द्रजी को छोड़कर ऐसा कौन है जो आपको इस प्रकार कठोर बचन से कहेगा। तुम बल पराक्रम में रामचन्द्रजी के समान हो, तुम्हारी सहायता को चिरकाल के लिये दैवने दिया है। किन्तु इस समय श्रीरामजी के समीप चलो, और सीता के बिरह में दुःखी रामचन्द्रजी को धैर्य देओ। और शोक से पीड़ित रामजी को देखकर और उनके कहे अनुसार जो कुछ मैंने आप को कहा है उसको क्षमा करो ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे षट्त्रिंश सर्गः ॥ ३६ ॥

इस प्रकार लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर पासमें बैठे हनुमानजी से सुग्रीव बोले, कि महेन्द्र हिमालय विंध्य कैलाश और मन्दराचल इन पांच पर्वतों पर रहने वाले और भी इनके अतिरिक्त अस्ता आदि पश्चिम दिशा में वर्तमान बन व पर्वतों पर रहने वाले बानरों को निमन्त्रण भेज कर शीघ्र बुलाइये, इसके उपरान्त उदय गिरि पर रहने वाले पद्मावल पर रहने वाले और कुञ्जरेन्द्र पर्वत पर और अञ्जन पर्वत पर निवास करने वाले बानरों को बुलाइये। तापसाश्रम में और धूम्रगिरि पर महारुण पर्वत पर रहने वाले बानर भालुओं को शीघ्र बुलाइये, इसके अतिरिक्त पृथिवी पर और भी जिन जिन स्थानों में बानर भालू रहते हों उन्हें निमन्त्रण भेजकर बुलाइये। पहिले दूतों को वहां भेजिये जो प्रधान स्थान मैंने गिनाया है वहां के निवासी बानरों को साम दाम आदि नीति पूर्वक शीघ्र बुलाइये। और जो बानर क्रीड़ा विलास में आसक्त रहते हों अथवा जो चिरकाल तक शयन करना जानते हों उन सब बानरों को शीघ्र बुला भेजिये, जो बलवान

बानर हमारी आज्ञा के अधीन हैं उन्हे बुलाने को करोड़ों बानरों को भेजो। जैसे आकाश में पर्वत के समान मेघ लोग वायु के वेग से क्षणभर में पृथिवी को आक्रान्त करलेते हैं, वैसे ये हमारे सेवक हमारी आज्ञा से दिशाओं में आक्रान्त हो जाते, और ऐसी शीघ्र गति से जावें कि इन की शीघ्रता के समाचार को देखकर आने वाले राजा गण शीघ्र आनेका उद्योग करें, सुग्रीव के इस प्रकार बचन को सुनकर हनुमान अत्यन्त बली बानरों को अनेक दिशाओं में भेज दिया व सुग्रीव के दूत गरुण के समान मार्ग चलने में कुशल बानर क्षणभर में समुद्र पर्वत बन नदी आदि अस्थानों में पहुंच कर व्याप्त हो गये, और उन बानरों से सुग्रीव के समाचार को कह सुनाये, मृत्यु और काल की आज्ञा के समान सुग्रीव की आज्ञा को पाकर भय के मारे वे सब बानर त्रस्त हो गये, और अंजन गिरि से तीन करोड़ बानर कैलाश के शिखर से फल मूल को खाकर जीविका करने वाले अरांख्य बानर एकत्र होकर रामजी के कार्य के वास्ते चले, अस्ताचल से सोने के समान शरीर वाले अति पराक्रमी दश करोड़ बानर चले, अंगार के समान उज्वल वर्ण और कठिन करने में सर्मथ असंख्य बानर विन्ध्यगिरि से चले, क्षीर सागर के समीप तमाल बनमें रहने वाले और नारि केल बनमें रहने वाले असंख्य बानरों की झुंड एकत्र होकर चली सबके पहिले सूर्य को छिपाने के समान बद्दलों की घटाकी नाईं सुग्रीव की सेना शीघ्रता से चलते हुए हिमालय पर्वत पर आकर एक महा विशाल वृक्ष को देखे, उस वृक्ष के नीचे पहिले देवतों ने अश्वयमेध यज्ञ किये हैं उस यज्ञ के प्रभाव से उस वृक्ष का फल अमृत के समान स्वादिष्ट और देवताओं को सन्तोष देने वाला है, उस वृक्ष के फल को जो कोई थोड़ा भी खाता है उसे एक मास पर्यन्त भूख नहीं लगती है। वहां आकर वे बानर उस फल को अपने भोजन किये और उस फल को तथा उसके अतिरिक्त अन्यान्य सुन्दर फलको और दिव्य औषधियों को लेकर सुग्रीव की राजधानी किष्किन्धा में क्षणभर में पहुंचे। फल

मूल औषधियों को सुग्रीव के आगे निवेदन करके सुग्रीव के सेवक गण इस प्रकार सुग्रीव से बोले, हे स्वामी ! आपकी आज्ञा से हम लोग आपके बताए हुए बन पर्वत नदी आदि स्थानों पर जाकर आपके सन्देश को उन बानरों से कह सुनाये, बानर आपके निदेश को सुनकर अपनी अपनी सेना को एकत्र करके शीघ्र आते हैं, हम लोग समाचार कहने के लिये आगे से आये हैं। सुग्रीव अत्यन्त प्रसन्न होकर उन बानरों के दिये उपायन को अमृत के समान सुग्रीव अंगीकार किये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे सप्तत्रिंश सर्गः ॥ ३७ ॥

उन बानरों के दिये फल मूल औषधी के उपायन को अंगीकार करके बानरों को धैर्य देकर सुग्रीव ने विदा किये, और विनय पूर्वक हाथ जोड़ कर लक्ष्मणजी बोले, हे सुग्रीव ! अब मैं इस समय किष्किन्धा पुरी से श्रीरामजी के समीप जानेकी इच्छा करता तुम्हारी अनुमति को चाहते हैं, लक्ष्मणजी के सुन्दर बचन को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक सुग्रीव बोले, अच्छा आप जाइये मैं श्रीरामजी की आज्ञा की शीघ्र पालन करके उनका दर्शन करूंगा। सुग्रीव के इस प्रकार वचन को सुनकर लक्ष्मण जी तारा आदि स्त्रियों से विदा होकर चलने को प्रस्तुत हुए। इतने में सुग्रीव अपने सेवक बानरों को बुलाकर आज्ञा दिये कि एक उत्तम शिविका सज्जित करके लेआओ। सुग्रीव की आज्ञा से बानरों ने एक उत्तम शिविका को लेजाकर सुग्रीव के सन्मुख रखदिये सुग्रीव लक्ष्मणजी को शीविका पर बैठने की प्रार्थना किये सुग्रीव की अनुमति से लक्ष्मणजी उस पर बैठे बानरगण छत्र चमर को हिलाते शंख भेरी मृदंग झांझ आदि अनेक बाजों को बजाते हुए लक्ष्मणजी को शिविका पर लेकर श्रीरामजी के आश्रम की ओर चले, और अस्त्र शस्त्र के सहित कुछ बानरों की सेना को लेकर पीछे सुग्रीव चले, रामजी के आश्रम के समीप में पहुंच कर लक्ष्मणजी शिविका से उतर सुग्रीव आदि बानरों के सहित श्रीरामजी के समीप में गये, और सब लोग हाथ जोड़ कर खड़े हुए। बानरों की सेना सहित

सुग्रीव को चरण पर गिरे देखकर हर्षसे श्रीरामजी सुग्रीव को उठाकर हृदय से लगाये और सुग्रीव को बैठने की आज्ञा दिये मित्र! बैठिये श्रीरामजी के बचन को सुनकर सुग्रीव पृथिवी पर बठ गये, सुग्रीव को पृथिवी पर बैठे देखकर रामचन्द्रजी बोले, हे सुग्रीव! जो राजा अर्थ धर्म काम को विभाग करके समसे सेवन करते हैं वह राजा राजाओं में श्रेष्ठ है, और जो राजा अर्थ धर्म को छोड़कर केवल काम का सेवन करते हैं वह राजा इस प्रकार नष्ट होता है जैसे वृक्ष डाली पर सोया हुआ मनुष्य नीचे गिर कर नष्ट होता है। शत्रुओं का नाश और मित्रों का संग्रह करके अर्थ धर्म काम के फलको भोगता है वही राजा श्रेष्ट है हे सुग्रीव! यह तुम्हारे उद्योग करने का समय प्राप्त है अब अपने मंत्रियों के सहित सीता को खोजने की प्रतीज्ञा पूर्ति का उपाय सोचो। इस प्रकार श्रीरामजी के बचन को सुनकर सुग्रीव बोले, हे रामजी! पहिले से नष्ट हमारी यश व कीर्ति और राज्य आपके प्रसाद से फिर मिला, और आप ही की कृपा से मैंने रणमें बालि को जीते, तो कौन ऐसा पुरुष धर्म नाश करने वाला है जो इस उपकार के बदले अपकार करने की इच्छा करेगा। हेरामजी! आपके कार्य वास्ते इन बलवान बानरों को भेजकर पृथिवी में पर्वत आदिमें रहने वाले बानर राजाओं को बुलाये हैं, वे बानर कोई एक लाख कोई करोड़ कोई शंकु कोई अरब कोई परार्ध्य कोई असंख्य बानरों की सेना को लेकर मार्ग में आते हैं, जो आवेंगे वह सब आप के सन्मुख आवेंगे, वह बानरों की सेना से युद्ध में रावण को नाश करके सीता को लेआवेंगे। सुग्रीव के इसप्रकार उद्योग और उनकी आज्ञा के आधीन इतनी बानरों की सेना को देखकर रामजी को इसप्रकार हर्ष हुआ जैसे सरत्काल में कमल प्रसन्न होता है।

इति बाल्मीकियेरामायणे किष्किन्धाकाण्डे अष्टात्रिंशः सर्गः॥ ३८॥

सुग्रीम के बचन को सुनकर श्रीरामजी सुग्रीव को गले से लगाकर इस प्रकार बोले, हे मित्र! इन्द्र समय पर वर्षा करके पृथिवी को सन्तुष्ट कर देते हैं सूर्य अपने प्रकाश से अन्धकार को नाश कर देते हैं चन्द्रमा अपने तेज से रात्रि को निर्मल करके उसकी शोभा को बढ़ाते हैं वैसे

ही सुन्दर मित्र मित्र के दुःख को नाशकरते हैं, हे सुग्रीव ! तुम्हारे जो कुछ चरित्र हैं वह सब सुन्दर हैं हम तुम्हारी महिमा को न जानते हैं, तुमको एक मित्र पाकर हम रण में अपने शत्रुओं को नाश करेंगे। तुमहीं एक हमारी सहायता करने के योग्य हो, वह अधमराक्षस रावण मैथिली को लेजाकर अपना नाश अपने से चाहता है जैसे पौलोमी की अनुमति से पितरों ने शची को हरण करके इन्द्र के हाथ से नाश को प्राप्त हुए। इतनेही में पृथिवी से धूली उड़कर आकाश को आच्छादित करने लगी, कि सूर्यनारायण का प्रकाश मलीन होगया, दिशाओं में व्याकुलता आगयी, बन पर्वत नदी आदि के सहित पृथिवी हिलने लगी। इसके बाद बड़े बड़े नख व दांत वाले असंख्य बानरों की सेना से वहां की भूमि ढंप गई। सुग्रीव जिस बानरों के प्रधान स्थान की गणना हनुमानजी से किये थे वे सब नदी के तट के पर्वत पर रहने वाले समुद्र के तटपर तमाल आदि बन में रहने वाले तथा और भी अनेक स्थल के निवासी बानरों की यूथ एकत्र होगयी, उनमें कोई चन्द्रमा के समान उज्वज वर्ण कोई रक्तवर्ण और कोई पीले रंग के बानर थे। हिमालय पर्वत पर रहने वाले शातबलि नामके बानर दस हजार और दश करोड़ उज्वल बानरों की सेनाको लेकर आये, पीत वर्णके असंख्य बानरों को लेकर उमा के पिता सुग्रीव के श्वसुर आये, असंख्य बानरों को लेकर हनुमान के पिता केसरी आये। गौ के पूछ के समान बानरों [लंगूर] की सेना को लेकर अति वेगवान् बलवान् भालुओं की असंख्य सेना को लेकर अतिपराक्रमी महाराज गवाक्ष आये ! तीन करोड़ बलवान् बानरों की सेना लेकर पनस आये, नीले अंजन के रंग के दश करोड़ विशाल बानरों की सेना को लेकर नील नाम के बानर आये ! पांच करोड़ बानरों को लेकर गवयन्तम के बानर आये, अश्विनी कुमार के पुत्र मैन्द और द्विविद एक एक करोड़ बानरों की सेना लेकर आये, महा बलवान् गज तीन कोड़ व बानरों को लेकर आये, जांमवन्त दश करोड़ भालुओं की सेना को लेकर आये। रमण नाम के बानर एक अरब बानर लेकर

आये। असंख्या बानरों की सेना को लेकर गंधमादन नाम के बानर आये इग्यारह करोड़ बानरों को लेकर रंभ नाम के बानर आये। एक लाख दश हजार बानरों को लेकर सुग्रीव के सेनापति दुर्मुखा नाम के बानर आये। शरभ कुमुद वन्हि रंभा आदि नाम के बानर दश करोड़ बानरों की सेना लेकर आये, इस प्रकार अनेक कामरूपी बानर पृथिवी पर्वत समुद्र बन नदी आदि के बानरों की सेना को इस प्रकार इकट्ठा किजिये जिसकी गणना नहीं हो सकती। इतने देशों के बानर सुग्रीव की आज्ञा से एकत्र होकर उनके सन्मुख हाथ जोड़ कर खड़े हो गये, सुग्रीव उन सब बानरों को श्रीरामजी को दिखा कर निवेदन किये, इसके बाद धर्मात्मा सुग्रीव सेना पतियों के नाम को लेकर पुकार करपूछने लगे कि, गुहामें नदियों में पर्वत पर समुद्र के तट पर रहने वाले बलवान् बानरों के मध्य में कौन लोग नहीं आये हैं॥
इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे एकोनचत्वारिंश सर्गः॥३९॥

इसके उपरान्त बानरों के राजा सुग्रीव शत्रु संहारण पुरुष श्रेष्ठ श्रीरामजी से बोले, बलवान स्वेच्छारी बानर जो हमारे अधीन हैं वह बलवान् पराक्रमी देवता दैत्य के समान समरथ युद्ध कर्ममें चतुर पृथिवी समुद्र नदी पर्वत पृथिवी आदि पर रहने वाले असंख्य बानरों की सेना आपके सेवा के लिये आये हैं, आप इन को आज्ञा दीजिये। सुग्रीव के बचन को सुनकर श्रीरामजी सुग्रीव को गले से लगा कर सीता के खोज करने के लिये बचन को बोले, हे मित्र! जिस देश में रावण रहता है वहां जानकी अभी जीवित हैं या नहीं, रावण के गृह में जाकर जानकी को खोज करने से उनके वृत्तान्त को जान कर तुम्हारे सहित हम लोग चलेंगे। तुम तो हमारे कार्य को जानते हो तुमहीं आज्ञा देओ, लक्ष्मण की अपेक्षा आप दूसरे मित्र हैं आप हमारे कल्याण करने वाले हैं, इस प्रकार रामजी के बचन को सुनकर सुग्रीव विनत नाम सेनापति को रामचन्द्रजी और लक्ष्मण के समीप बुला कर बोले, हे मन्त्रिन्! आप देश काल नीति को जानने वाले हो और

कार्य करने में कुशल हो, तुम अत्यन्त बलवान पराक्रमी बानरों को सीताजी को खोजने के लिये अनेक दिशा विदिशा में रावण के सहित जानकी का खोज करो । वे बानर अनेक देश बन पर्वत गुहा कन्दरा नदी नाल वृक्षों की झाड़ी आदि में ध्यान से खोज करें इसके उपरान्त नदियों के तट पर खोज करना जिन नदियों के नाम ये हैं, भागीरथी सरयू कौशिकी कालिन्दि यमुना और कलिन्द गिरि पर सरस्वती सिन्धु शोण आदि नदियों पर खोज करके फिर ब्रह्ममाला विदेह राजधानी मालवा काशी कोशलपुरी मगध महाग्राम पुन्ड अंग रेशम उत्पन्न होने वाले देशमें और सोने चांदी के खान के देशमें रामजी की स्त्री महाराज दशरथ की पुत्र वधू सीता का खोज करो इसके उपरान्त समुद्र के प्रान्तवर्ती द्वीप में जितने नगर ग्राम व पर्वत हैं और मन्दराचल आदि जो बड़े पर्वत हैं उनमें जितने स्थान हैं उन स्थानों को इसके अतिरिक्त जिस देश में कान वाले पुरुष होते हैं, जिनके कान पर्यन्त ओट होते हैं, जिनके घोड़े के समान काले मुख होते हैं जहां एक पग से चलने वाले मनुष्य होते हैं उन देशों में विधिवत रावण के सहित सीताजी की खोज करो, इसके बाद म्लेच्छ व राक्षसों के रहने वाले देशों में खोज करो और जिन जिन पर्वतों पर कूद और दौड़ कर जाना उनको भी ढूंढते जाना । इसके बाद प्रयत्न पूर्वक सप्त राज्य से शोभित नवद्वीप में सुवर्ण द्वीप में और रूपक द्वीप में रावण के सहित श्रीजानकीजी को ढूंढना । यह द्वीप के उपरान्त शिशिर नाम का पर्वत है उस पर्वत के शिखर पर देवता दैत्य सदा निवास करते हैं, उन पर्वतों की शिखर से गुहा पर्यन्त ढूढ़ लेना, इन द्वीप और पर्वतों को ढूंढते हुए समुद्र के पार जाकर शोण नाम नद के तट पर जाना, उस नदके किनारे सदा देवता सिद्ध चारण गंधर्व निवास करते हैं, वहां के रमणीय तीर्थ में विचित्र बन उपवन में रावण के सहित जानकी को खोज करना । इसके बाद उख के रस भरे समुद्र को खोज कर उसके पार में रहने वाले प्राणियों के स्थानों को ढूंढना, इसके उपरान्त शाल्मली

क्रौंच आदि महाद्वीपों में खोजते मदिरा के समुद्र के आस पास के स्थानों में खोज कर उसके पार होकर उन पर्वतों को ढूंढना, उसके बाद अनेक प्रकार के रत्न से भूषित अरुड़जी का स्थान पड़ेगा वह स्थान कैलास के समान ऊंचा है, उसी पर्वत के शिखर पर मन्देहा नाम का राक्षस रहता है, उसी पर्वत पर अधोमुख वाले प्राणी रहते हैं, वे सब राक्षस सूर्य के उदय काल में ऊपर को मुख करके सूर्य से युद्ध करने को प्रस्तुत होते हैं तब सूर्य काल में स्नान करके त्रैवर्णिक जब बेद मन्त्र से सूर्य को अर्घ्यदान देते हैं उसी अर्घ्य के जल से उन राक्षसों का नाश होता है, और प्रसन्नता पूर्वक सूर्य उदय होते हैं, उसके बाद क्षीर सागर है तो सुरा सागर और क्षीर सागर के मध्य में घी और दधिका समुद्र है उसके मध्य में ऋषभ नाम का पर्वत है उस पर्वत पर सुदर्शन नाम सरोवर है उस सरोवर में अनेक प्रकार के कमल फूले हैं राजहंस आदि पक्षी वहां निवास करते हैं, यक्ष चारण गंधर्व किन्नर आदि वहां निवास करते हैं, क्षीर सागर के बाद मीठे जल का समुद्र है जिसमें ब्रह्मर्षि और्वके क्रोध से बड़वाग्नि सदा लगा रहता है, और लोक में भय देने वाला शब्द सदा हुआ करता है, जल समुद्र के उत्तर जात रूप शिला नाम का एक पर्वत है, वहीं चन्द्रमा के समान उज्वल पृथिवी को धारण करने वाले शेषजी रहते हैं। पर्वत के आगे सकल चराचर को नमस्कार करने वाले अत्यन्त देव रहते हैं, उनके पर्वत से आगे आधार वेति के सहित महात्मा त्रिशिरा नाम के ताल हैं, वही ताल पूर्व दिशा को निर्माण किये हैं, अर्थात् उस ताल से पूर्व दिशा में स्वर्ण मय उदयाचल नाम का पर्वत है उस पर्वत के शिखर पर सौ योजन की लंबी वेदी शोभा को प्राप्त है वहीं पर दश योजन की ऊंचाई और विस्तार में सौमनसनाम का पर्वत है, जिस समय विष्णु वामन अवतार धारण करके बलि से तीन पग भूमि दान लिये थे उस भूमि को नापने के समय में भगवान ने पहिला पग उसी पर्वत पर रखे और दूसरा मेरु के शिखर पर रख कर पृथिवी को तीन पग

में नाप लिये । उस पर्वत को उत्तर मुख प्रदिक्षणा करते सूर्य नारायण जंबूद्वीप में दिखाई पड़ते हैं, उसी सौमनसमान पर्वत के शिखर कन्दरा गुहा आदि में रावण सहित बैदेही को ढूंढना । इस के हमारे जान में जितने स्थान हैं उन स्थानों को खोजते जाना, इस प्रकार ढूंढ खोज करते हुए एक मास में समाचार लेकर हमारे पास आजाना जो कोई एक महीना से अधिक दिन में आवेंगे उन को प्राण दण्ड होगा । चारों दिशाओं में खोजने वाले वानर सीता के समाचार के हमें सुना कर सुखी होओ ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे चत्वारिंश सर्गः ॥ ४० ॥

इसके उपरान्त सुग्रीव सेना पति से सब खोजने के मार्ग को बतला कर कार्य करने में समर्थ नील नल हनुमान जाम्बान् सुहोत्र शरारि शरगुल्म गज गवाक्ष गवय सुषेण वृषभ मैंद द्विविद सुषेण गंधमादन उत्कामुख अनंग अंगद आदि मुख्य बानरों विशेष श्रेष्ठ अंगदजी को उन बानरों का प्रधान बनाकर सुग्रीव आज्ञा दिये कि तुम सब बीर दक्षिण दिशा को जाओ, और इस दिशा में जितना दरी कन्दरा गुहा बन पर्वत नदी देश आदि हैं इनमें रावण सहित जानकी को खोजो । अनेक वृक्ष लता से संपन्न विन्ध्य गिरिको गोदावरी कृष्णवेणी आदि महा नदियों को मेखला उत्कल आदि नगरों को विदर्भ ऋष्टिक माहिषक मत्स्य कलिंग कौशिक आदि देशों को इसके अतिरिक्त पर्वतों के सहित दण्डकारण्य को भली भांति अन्वेषण करो । इसके बाद आंध्र पुण्ड चोल करेल आदि देशों को खोजते हुए अयोमुखन्यम पर्वत पर चले जाना, वह पर्वत अति रमणीय और सुन्दर है चित्र बिचित्र के उसके शिखर हैं, उसके चारो ओर बड़ा सघन चन्दन का बन है और वहीं पर कावेरी नाम की नदी है जहां प्रतिदिन अप्सरायें आकर जल क्रीड़ा विहार किया करती हैं, अयोमुख नाम पर्वत के आगे मलय नाम का एक पर्वत है उस पर्वत पर सूर्य के समान प्रकाशमान अगस्त्य ऋषि रहते हैं वहीं ताम्र पर्णी नाम की नदी

है, उसके भी चारो ओर चंदन का बन है जिसमें हाथी सिंह व्याघ्र आदि अनेक प्रकार के हिंसा करने वाले जीव रहते है, वह ताम्र पर्णी नदी अपने जल वेग से कान्ता के समान समुद्र में वहीं समुद्र के और नदी के मध्य में अगस्त्य मुनि ने महेन्द्र नाम पर्वत को स्थापन किये हैं उस पर्वत पर अनेक प्रकार के वृक्ष व लता फल पुष्प से सदा समृद्ध रहते हैं, यक्ष गन्धर्व किन्नर आदि सदा वहां निवास करते हैं, और उस पर्वत पर इन्द्र देवता अप्सराओं को लेकर विहार करने लिये पूर्णिमा को आते हैं, उसी समुद्र के पार में सौ योजन के प्रमाण में राक्षस राजरावण की पुरी है इन स्थानों को विधिवत् खोजना क्योंकि वहीं राक्षसों का देश वास हैं, सन्देह से रहित होकर श्रीराम जी की स्त्री सीताजीको ढूढ़ना । सौ योजन समुद्र अति क्रमण करनेसे पुष्पितक नाम का पर्वत है जहाँ सिद्धि चारण नित्य निवास करते हैं, और पर्वत के कई एक शिखर हैं, जो आकाश को अच्छादित किये हैं, उस पर्वत के शिखर पर सूर्य चन्द्रमा निवास करते हैं, जिन्हें नास्तिक नृशंश क्रूर नहीं देखते हैं, उस पर्वत को प्रणाम कर जानकी को खोजते हुए सूर्यवान नाम पर्वत पर चले जाना, उस पर्वत पर अनेक प्रकारके वृक्ष हैं, जो हर समय फल पुष्प को देते हैं, वहांके उत्तम फल मूल को भोजन करके मधु को पान करके कुञ्जर नाम पर्वत पर चले जाना जहां की अगस्त्यमुनि का तीसरा स्थान है उसे विश्वकर्मा ने अपने हाथ से निर्माण किये हैं, उसी पर्वत पर सर्पों के रहने का स्थान भोगवती नाम की पुरी है, वासुकी आदि सर्प वहीं निवास करते हैं । वहां के दुर्गम स्थानों में सीताजी को खोजते हुए ऋषभनाम पर्वत पर चले आना, इस पर्वत के समीपवर्ती वन में गोशीर्षक आदि पाँच प्रकार के चन्दन उत्पन्न होते हैं परन्तु उन चन्दन को न तो देखना न तो छूना क्योंकि रोहित नाम गंधर्व उस बन की सदा रक्षा करता है और शैलूष ग्रामणी शिक्ष शुकम्भु आदि पांच गंधर्व पति वहां निवास करते हैं, उसके बाद स्वर्ग लोक है, और उसके समीप पितर लोक है

वहीं यमराज की राज धानी है वह स्थान खोजने के योग्य नहीं है इसके अतिरिक्त जितने अस्थान हैं उसको खोज कर जो लोग एक मास के पहिले सीताजी के समाचार को लेकर हमारे समीप आवेंगे वह हमारे समान अतुल सुख भोग करेंगे, हमारे प्राण से भी अधिक प्रिय होंगे वह अनेक अपराध करने पर भी हमारे बंधु के समान रहेंगे यह देश और स्थान को सुग्रीव हनुमान आदि बानरों से कहकर हाथ जोड़ कर बोले, हे भाइयों ! आप लोग अत्यन्त पराक्रमी हैं गुणवान हैं कुलीन हैं जिस प्रकार जानकीजी का समाचार ज्ञात हो जावे वैसा उद्योग करना ॥

इति वल्मीकिये रामायणे किष्किन्धा काण्डे एक चत्वारिंश सर्गः ॥४१॥

सुग्रीव हनुमान आदि बानरों को दक्षिण दिशामें भेजकर ताराके पिता सुषेण और महर्षि मरीचि के पुत्र अर्चिष्मान से हाथ जोड़ पहिले प्रणाम करके बोले, आप लोग पराक्रम में गरुड़ के समान और अत्यन्त बली हैं दो लाख बानरों को संग लेकर पश्चिम दिशा में आप और सुषेण जाइये और सौराष्ट्र वाल्हीकचन्द्र चित्रा आदि देशों को तथा पुन्नाग बकुल उदालक केतक आदि गहन बनको और पश्चिम दिशा में बहने वाली नदियों को तपस्वियों को रहने योग्य बन और स्थली को भली भांति खोजिये, पर्वतों के समूह से प्रावृत पश्चिम दिशा को अन्वेषण करते हुए समुद्र को देखने के लिये तटपर आइयेगा, वहां मछ मगर कच्छ आदि जलचर जन्तुओं से आकुल समुद्र की शोभा को देखकर केतक तमाल और नारिकेल बन में चले जाना वहां अधिक संख्यक बानर बिहार करते हैं वहां रावण सहित जानकी को खोज करना। इसके अतिरिक्त मुरची जटापुर आदि रमणीय, नगरों में खोजकर के अवन्ती अंगलेप और आलक्षित आदि बन में ढूंढना क्योंकि पश्चिम दिशा में बड़े बड़े नगर व शहर हैं वहीं पर सिन्धुसागर का संगम है, संगम की सीमापर सोमगिरि नामक का पर्वत है उस पर्वत के सौ शिखर हैं उनके शिखर पर एक महा वृक्ष है, जिस वृक्ष पर अनेक पक्षिगण निवास करते हैं

उस वृक्ष के नीचे पर्वत की गुहा में सिंह निवास करते हैं और शिखर पर मतवाले हाथी आनन्द करते हैं वह सब स्थान को भली भांति खोज करना, वहीं से सौ योजन में विस्तारित समुद्र के मध्य में परियात्र नाम का पर्वत है उस पर्वत पर चौबिस करोड़ गंधर्व तपस्या करते हैं, वे गंधर्व आग की ज्वाला के समान पर्वत दिखाई देते हैं, उस पर्वत पर वृक्षों में लगे हुए फल फूल को तुम्हारे सैनिक महाबलवान बानर स्पर्श न करें, वहां के फल मूल की रक्षा अत्यन्त मायावी और बलवान गंधर्व किया करते हैं, वहां पर प्राकृत बानर के समान जाकर यत्न पूर्वक जानकी को खोज करना। स्वाभाविक पशुओं के समान उस पर्वत पर जाने से तुम लोगों को कुछ भी भय न होगा। उसी परियात्र पर्वत के समीप वज्र नामका महागिरि है, यह पर्वत सौ योजन के घेरे में है इसमें अनेक कन्दरा व गुहा हैं उन सब कन्दरा व गुहाओं को यत्न पूर्वक खोजना। पुनः समुद्र के चौथे भाग में चक्रवान् नाम का पर्वत है उसी पर्वत पर पंचजन और हयग्रीव दानव को भगवान नारायण ने मार शंख चक्र ले लिया है, उस पर्वत में राक्षसों को रहने योग्य अनेक गुहा हैं उन गुहाओं में रावण सहित जानकी को खोजना। उसके समीप अगाध समुद्र में चौसठ योजन के विस्तार में वराह नामका पर्वत है, उस पर्वत का शिखर सोने का है, उसी वराह पर्वत पर सोने का नगर है जिस नगर में दुष्टात्मा नरकासुर नामका दानव रहता है उस पर्वत और नगर में खोजकर सौवर्ण नाम पर्वत पर चले जाना, उस पर्वत पर सिंह व्याघ्र वराह हाथी आदि बनचर जन्तु सदा गर्जना किया करते हैं, उसी पर्वत पर देवतों ने इन्द्र को अभिषेक किया है, उस पर्वत के आगे इन्द्र से पालित सोने के साठ हजार पर्वत हैं वह सब सुमेरु कहे जाते हैं अर्थात सुमेरु के समान हैं, उन पर्वतों पर अनेक रंग के फल फूल लगे रहते हैं तथा अनेक प्रकार के पशु पक्षी भी वहां निवास करते हैं, उन साठ हजार पर्वतों के मध्य में मेरु नामका उत्तम पर्वत है, उस पर्वत को प्रसन्न होकर सूर्य भगवान ने आशीर्वाद दिया है कि तुम सब दिन रात्रि सोने के

समान हमारे प्रसाद से बने रहोगे । और तुम्हारे शिखर पर जो देवता गंधर्व दानव निवास करेंगे वह हमारे भक्त होकर सोने के रंग होजावेंगे उसी बरदान के प्रभाव से देवता गंधर्व वसु मरुत आदि देवता सायंकाल में उस पर्वत पर आकर सूर्यभगवान का उप स्थान करतें हैं। उसके बाद दश हजार योजन पर अस्ताचल नाम का पर्वत हैं, मेरू पर्वत से क्षण भर में सूर्य भगवान अस्ता चल को जाते हैं,उस मेरू पर्वत के शिखर पर अनेक प्रकार के बन उपवन वृक्ष लता फल पुष्प पशु पक्षि आदि संपन्न वरूण लोकहै,मेरू और अस्ताचल के मध्य में दशशिरा नाम का ताल है,उन सब दरी कन्दरा गुहा बन नदी पर्वत नाला आदि में यत्न से खोज करना वहीं पर मेरु सावर्ण नाम के प्रजा पति रहते हैं उनके पास चले जाना और उनको प्रणाम करके रावण से हरी गई वैदेही के वृत्तान्त को उनसे पूछना, हे बानरों में श्रेष्ठ। इसके बाद अस्ताचल पर्वत है जहां जाकर संसार को सुख देने वाले अन्धकार को नाश करने वाले सूर्य भगवान् अस्त हो जाते हैं, उसके आगे क्या है सो बिना सूर्य के मैं नहीं देखा है और न तो कह सकते हैं । अस्ताचल पर्वत तक जाकर जानकी को ढूंढना और एक महीना तक हमको सीताजी का समाचार देना जो कोई बलवान एक महीना में नहीं आवेगा उसको प्राण दण्ड दिया जायेगा। क्योंकि तुम सब बानर सेनाओं के साथ महाबली कार्य साधन में पण्डित हमारे श्वसुर सहायता के लिये रहैंगे और तुम सब बलवान बानर भी इस कार्य करने में कुशल हो तो भी इनको इस कार्य में प्रमाण मान कर पश्चिम दिशा को जाओ, देश काल के अनुसार कार्य को सिद्ध करके जब आओगे तब तुम लोगों के कार्य से मैं अपने को कृत कृत्य समझूंगा । सुषेन आदि बानर सुग्रीव के बचन को सुनकर उनकी आज्ञा से पश्चिम दिशा में चलने को प्रस्तुत हुए ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे द्विचत्वारिंश सर्गः ॥४२॥

पश्चिम दिशा में जाने की आज्ञा सुग्रीव अपने श्वसुर को देकर बानरों के राजा शतबल नाम बानर से महात्मा सुग्रीव अपने और

श्रीरामजी के हित के बचन को बोले, कि यमराज के पुत्र के सहित एक लाख बानर तुम्हारे बलवान व पराक्रमी व देशकाल को जानने वाले हैं उनके सहित उत्तर दिशा में आप जाकर अनेक बन नदी दरी गुहा कन्दरा आदि को धारण करने वाले पर्वतों के राजा हिमालय के अनेक स्थानों में श्रीरामजी की यशस्विनी सीताजी को खोजिये, श्रीरामजी के इस कार्य को सिद्ध होने से मैं ऋण से छूट जाऊंगा महात्मा रामजी ने हमारा उपकार किया है उसी उपकार का यह बदला है इसको करने से हमारा जीवन सफल हो जायेगा। जो कोई अर्थी के कार्य को साधन करता है वह अपने जीवन को सफल जानता है और जिन्हों ने पूर्व में उपकार किया है उनका कार्य करने से क्यों न सुख होगा। ऐसी बुद्धि से उद्योग व प्रयत्न करिये जिसमें जानकी का समाचार मिले, यह रामजी पुरुषों में श्रेष्ठ हैं और सब के मान्य हैं तथा हमारे परम मित्र हैं। आप लोग अपने बुद्धि के प्रभाव से अनेक बन पर्वत नदी आदि विषम स्थानों को खोजना, क्योंकि इस दिशा में म्लेच्छ पुलिन्द सूरसेन प्रस्थल भरत कांबोज यवप्रशक आदि अनेक देश हैं इन देशों को ढूंढ़ते हुए आद्यन्त हिमालय पर्वत को खोजना। इसके बाद देवता और गंधर्व को रहने योग्य सामाश्रम में जाकर जानकी को खोजते हुए काल नाम पर्वत पर चले जाना उस पर्वत की गुहा में श्रीरामजी की स्त्री जानकी को विधिवत् ढूंढ़ना, उस पर्वत से पर्वतों में श्रेष्ठ हेमगर्भ पर्वत पर जाना वहां से सुदर्शन नाम पर्वत पर जाना इसके बाद देवसखा नाम पर्वत पर जाना, उस पर्वत पर नाना भांति के वृक्षों का बड़ा सघन बन है उस बन में फल फूल सदा लगे रहते हैं और अनेक रंग के पक्षी सदा मीठे बचन को बोलते हैं उस पर्वत की कन्दरा में रावण सहित वैदेही को खोजना। उसके बाद सौयोजन तक बन पर्वत नदी वृक्ष कुछ नहीं है केवल आकाश है, उस भयानक निर्जन स्थान को शीघ्र लांघकर कैलास पर्वत पर जाकर तुम लोग अपनी थकावट को दूर करना, उसके बाद सोनेकी कुबेर पुरी है, उस पुरी में अनेक बन उपबन वाटिका बावली सरोवर तथा

नाना प्रकार के फल फूल देने वाले वृक्ष लता आदि लगे हैं, सरोवर में अनेक प्रकार के कमल कमलिनी खिले रहते हैं, गंधर्व अप्सरा सदा वहां निवास करते हैं, यक्षों के सहित कुबेर जी उस पुरी का राज्य करते हैं, वह कुबेर रावण के भाई हैं वहां भली भांति रावण सहित वैदेही को खोजना। कुबेरपुरी से आगे क्रौञ्चगिरि है उस पर्वत में एक बड़ी भारी गुहा है उस गुहा में सूर्य के समान महर्षिगण सदा निवास करते हैं, उसके अतिरिक्त क्रौंच पर्वत की और दरी गुहा कन्दरा आदि में खोज करना। उसके बाद मानस नाम पर्वत है, उसी पर्वत पर मानस नाम सरोवर है जहां हंस लोग निवास करते हैं, वहां कमल को छोड़ कर दूसरा वृक्ष नहीं होता, और देवता राक्षस मनुष्य आदि जीव जन्तु किसी प्रकार भी वहां नहीं पहुंच सकते। वह क्रौंच पर्वत को खोजकर मैनाक नाम पर्वत पर चले जाना वहां मय नाम दानव का नगर है वहां अच्छे प्रकार वैदेही का खोज करना, इसके बाद किन्नरों के लोक में चले जाना उस देश में सिद्धगण सदा निवास करते हैं और वहां वानप्रस्थ के वेष में वालखिल्य महर्षिगण तपस्या करते हैं तुम लोग वहां जाकर सिद्ध लोगों को नमस्कार करके रावण से हरी गई जानकी के वृत्तान्तको पूछना। वहीं पर बैर वानसनाम का एक सरोवरहै उससरोवर में हाथीनियों के समानसदा जल क्रीड़ा करते हैं। उस सरोवर के बाद सूर्य चन्द्रमा नक्षत्रतारा गण कुछभी नहीं दिखाई देते, उस देशमें तपस्याकरने वालेऋषियों के तेज से सूर्य के समान प्रकाश रहता है, उसके आगे शैलादो नामकी नदी है उस नदी के दोनों किनारे पर बांस का बन लगा है वहां पर सिद्ध लोग अपना निवास करते हैं, उसके बादउत्तर कुरुदेश है उस देश में अनेक सरोवर हैं जिनमें सोने के समान कमल फूलते हैं, और अनेक नदियां बहती हैं जिसमें नील मणि तथा वैदूर्य मणि के समान स्वच्छ जल बहता है, अनेक प्रकार के रत्नों की खान को धारण करने वाले पर्वत हैं, उन पर्वतों पर अनेक प्रकार के वृक्ष फूल फल से शोभित हैं वृक्षों पर पक्षियां सदा मधुर वचन

को बोलते हैं उन पर्वतों से दिव्य गंधव रस सब काम देने वाले बहते हैं, वहां की स्पर्श करने में अत्यन्त सुख को देने वाला है, किसी पर्वत से अनेक रंग के वस्त्र किसी से स्त्रियों को धारण करने योग्य रत्न जटित अलंकार किसी पर्वत से छओ ऋतुओं के फल फूल हर समय में मिलते हैं किसी पर्वत से उत्तम बिछौना किसी से सुगन्धित माला किसी पर्वत से अनेक प्रकार के खाने का पदार्थ किसी से पीने का पदार्थ मिलता है, किसी पर्वत से बिलास करने के योग्य महा सुन्दरी स्त्रियां मिलती हैं, उन्हीं पर्वतों पर गंधर्व किन्नर सिद्धनाग विद्याधर अपनी अपनी स्त्रियों के सहित अनेक रंग के बाजा को बजाकर गीत, गाकर आनन्द करते हैं। उस पर्वत के बाद उत्तर दिशा के समुद्र के तट पर पहुंचना, वहां समुद्र के मध्य में सोने का सोमगिरि नाम पर्वत है वहां भी सूर्य का प्रकाश नहीं है, वहां भगवान् शंभू ग्यारह रूप से निवास करते हैं उन्हीं के प्रकास से उस देश में प्रकाश होता है वहीं पर चराचर के स्वामी ब्रह्मर्षि के सहित ब्रह्माजी निवास करते हैं, उस सोमगिरि पर देवता भी नहीं जासकते और की क्या गणना है, उसको देखकर शीघ्र लौट आना इसके बाद कौन लोक है यह हम नहीं जानते, हमको जो कुछ ज्ञात था वह सब तुमसे कहे, हमारे कहने से अतिरिक्त और भी जितने स्थान हैं उनको खोज लेना। श्रीरामजी के प्रिय और हमको विशेष प्रिय यह जानकी को खोजने का कार्य है इस कार्य को करके आप लोग अपने अपने स्थान पर जाकर सुख करिये और आप लोगों के अनुग्रह से मैं भी कृतकार्य होऊंगा। सुग्रीव के इस प्रकार दीन बचन को सुनकर सुषेण आदि बानर उत्तर दिशा में चलने को प्रस्तुत हुए॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे त्रिचत्वारिंशः सर्गः॥४३॥

इस प्रकार बानरों को आज्ञा देकर सुग्रीव निश्चित अर्थ को साधन करने में समर्थ बानरों में श्रेष्ठ परम पराक्रमी बलवान वायु के पुत्र हनुमान जी से बानरों के राजा सुग्रीव प्रसन्न होकर बोले, हे हनुमान जी! पृथ्वी में पक्षियों को चलने योग्य मार्ग से आकाश में तथा

जल में तुम्हारे समान और बानरों की गतिको हम नहीं देखते, क्योंकि देव लोक गंधर्व लोक नाग लोक नर लोक चारो समुद्र तथा विन्धागिरि और हिमालय आदि पर्वतों के मार्ग आपको विदित हैं, तुम्हारे पिता के समान तुम्हारे में पराक्रम है तुमारे समान बलवान व तेजस्वी तथा शीघ्र कार्य करने में समर्थ दूसरा कोई नहीं है, और तुम्हारे समान तेजस्वी इस भूमण्डल में कोई नहीं हैं जिस प्रकार जानकी का वृत्तान्त मिल सके उसका उपाय कहिये । हे हनुमानजी ! तुमहीं बल में बुद्धि में पराक्रम में देशकाल तथा न्याय को जानने वालों में पण्डित हो, हनुमानजी से कार्य की सिद्धि और कार्य करने में समर्थ हनुमानजी के पराक्रम को श्रीरामचन्द्रजी विचार करने लगे कि यह बानरों के मन्त्री बल पराक्रम तेज बुद्धि में श्रेष्ट हनुमान हमारे कार्य को अवश्य करैंगे ऐसा सोचकर श्रीरामजी हनुमानजी को अपने हाथ की मुद्रा [अंगूठी] देनेको विचार किये, हनुमानजी सुग्रीव की आज्ञा से बानरों के सहित दक्षिण दिशामें जानेको उद्यत थे तौ भी श्रीरामजी हनुमानजी के हाथ से अपने कार्य की सिद्धि को जानकर कृतार्थ होने के समान हर्षित होगये और प्रसन्नता पूर्वक अपने नाम से चिन्हित मुद्रिका को हनुमानजी को देकर बोले, कि हे हनुमान ! इसी मुद्रिका से जानकी तुमको हमारा मित्र जानेंगी । हे महावीर ! तुम्हारा उद्योग और बल पराक्रम तथा सुग्रीव का सन्देश हमारे कार्य की सिद्धि को कहता है । हनुमानजी श्रीरामजी के दिये मुद्रिका को प्रसन्नता पूर्वक लेकर शिरोधार्य किये और साष्टाङ्ग प्रणाम करके चलने को प्रस्तुत हुए, उस मुद्रिका को लेकर बानरों के बीच में हनुमानजी का प्रभाव इस प्रकार बढ़गया जैसे नक्षत्रों के मध्य में चन्द्रमा का प्रकाश शोभित होता हैं, हे हनुमानजी ! जिस प्रकार जनकसुता जानकी का समाचार मिले वैसा उद्योग कीजिये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धा काण्डे चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥४४॥

इसके उपरान्त सब बानरों को सुग्रीवजी बुलाकर कहेकि श्रीरा-

मजी के कार्य सिद्धि के लिये आप सब बानर अपने अपने नियुक्त देशको जाइये । सुग्रीव की उग्रआज्ञा को लेकर बानरों की सेना टीडी के समान पृथिवी पर व्याप्त होगयी । सेनाओं के चले जानेपर एक मास की अवधी को देखते हुए लक्ष्मणजी के सहित श्रीरामजी प्रस्रवण नाम पर्वत पर निवास करने लगे । शतबली नामके बानर अपनी सेना लेकर उत्तर दिशाको चले, महाबली विनत नामके बानर बानरों के स्वामी अपनी सेना लेकर पूर्व दिशाको चले, अंगद आदि वीरों के सहित हनुमानजी दक्षिण दिशा को चले, सुग्रीव के स्वसुर सुषेण अपनी सेना लेकर पश्चिम दिशाको चले, सुग्रीव सब दिशाओं में सीताको खोजने के लिये बानरों को भेजकर सुख पूर्वक विश्राम करने लगे । सुग्रीव की आज्ञाको लेकर अपने अपने दिशामें गर्जना करते कूदते फलांग मारते दौड़ते परस्पर वार्तालाप करते वानरों की सेना चली । वे बलवान बानर मार्ग में अपने अपने पराक्रम का इस प्रकार वर्णन करने लगे कि मैं रावण को मार कर सीता को लाऊंगा, कोई कहने लगे कि मैं अकेले रावण को युद्धमें मारूंगा । कोई कहने लगे कि मैं एका एक रावण को दबाकर जानकी को छीन कर श्रीरामजी को समर्पण करूंगा कोई कहने लगे कि आप लोग अपना पराक्रमी न दिखाइये मैं अकेला पाताल से जानकी को ला सकता हूं वृक्ष सहित पर्वतों को उखाड़ कर पृथिवी को फाड़ सकता हूं समुद्रको सुखा सकता हूं अथवा सौ योजन तक लांघ कर जा सकता हूं पृथिवी समुद्र पर्वत वन और पाताल तक जाने में हमारी सामर्थ्य नहीं घटैगी, इस प्रकार वे बानर आपस में वार्तालाप करते सुग्रीव से विदा होकर मार्ग में चले ।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे पंचचत्वरिंशः सर्गः ॥४५॥

बानरों को सीताजी के खोजमें चले जानेपर रामचन्द्रजी सुग्रीव जीसे बोले, कि आप इस पृथिवी मण्डल के अनेक स्थानों को किस प्रकार जानते हैं, श्रीरामचन्द्रजी के वचन को सुनकर विनय पूर्वक सु-

ग्रीव बोले, हे भगवन् ! हमारे देशको जानने का वृत्तान्त विस्तार से सुनिये । जब मयनाम दानव का पुत्र भैसा के रूप में दुन्दुभी लड़ने को आया तब बाली के सहित मलय पर्वत पर चला गया और उस पर्वत की गुहामें बाली को ललकार कर घुस गया, बाली भी अपने बल के प्रमाद से उस गुहा में घुस गया मैं उसी गुहाके द्वारपर बालि की प्रतिक्षा करने के लिये खड़ा रहा, जब वर्षभर बालिको लड़ते बीत गया और उस गुहामें से रुधिर की धारा निकली तब मैं दानव के हाथ से बालिको मरा जानकर एक शिला उसी गुहाके मुखपर रखकर मैं किष्किन्धामें चलाआया, बालिके स्थानपर राजा होकर तारा और उमा आदि स्त्रियों के तथा हनुमान आदि मन्त्रियों के सहित राज्य करने लगा । इधर दानव को मारकर बाली किष्किन्धा में हमको राज्यभोग करते देखकर मुझे बध करने को दौड़ा, मैं अपने मन्त्रियों के सहित अपने प्राणके भय से भागे यहांतक की प्राण को बचाने के लिये इस पृथिवी को गौके खुर के समान जानकर प्रदक्षिण करते हुए पृथिवी के सब स्थानों का अनुभव करलिया है, पूर्व दिशामें अनेक वन पर्वत नदी वृक्ष सरोवर को देखते हुए सूर्यके उदय गिरिपर पहुंचे वहां से, क्षीरसागर पर पहुंचे जहां नित्य अप्सरा बिहार करती हैं तौ भी बाली ने हमारा पीछा नहीं छोड़ा, तो फिर वहां से लौटकर दक्षिण दिशाको चले, वहां विन्ध्यगिरी पर चन्दन रसाल पनस ताल तमाल नारिकेल आदि के वृक्षोंके सघनवन को देखते हुए समुद्रके तटपर पहुंचे, वहां जाने से भी बालीने पीछा नहीं छोड़ा तब वहां से लौट कर पश्चिम दिशाको चले, उस दिशाके देश नगर बन पर्वत नदी तालाब आदि को देखते हुए सूर्यके अस्ताचल पर्वत पर पहुंचे, वहां से हिमालय हिमालय से सुमेरु तक गये परन्तु बालिने वहां भी शरण लेने नहीं दिया । तब बुद्धि से सम्पन्न हनुमानजी हमसे बोले कि हे बानरों के राजा सुग्रीव ! इस समय हमको स्मरण हुआ है कि मतंग मुनिने बाली को शापदिया है कि जो तुम कभी इस बनमें आओगे तो तुमारे शिर फटकर हजार

टुकड़े हो जायंगे उसी शापके भयसे बाली मतंग बनमें नहीं जाता है वहां हम लोगों का रहना अच्छा होगा, यदि आज क्रोधसे उस बन में प्रवेश करेगा मुनिके शाप से मरजायगा इसी कारण हमलोग ऋष्यमूक पर आकर रहते थे। इस बन में शाप के भयसे बाली नहीं आया इसी कारण पृथिवी के संपूर्ण स्थानों को हम जानते हैं।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धा काण्डे षट्चत्वारिंशः सर्गः ॥४६॥

सुग्रीव की आज्ञा से सीताजी को खोजने को लिये जो बानर गये थे वहसबलोग अपने दिशाओंमें नदी दुर्ग खात वन पर्वत तालाब वृक्षों की झाड़ी लताओंके कुञ्जको दिनभर खोजकर बनके फल मूलको खाकर रात्रिकालमें शयन करते थे, इस प्रकार एक माससे एक दिन पहिले भ्रमण कर के जिसदिन महीना पूर्ण हुआ उसी दिन प्रातःकाल में वे सब बानर श्रीरामजी के स्थान पर अर्थात् प्रसव बाण नाम पर्वत पर निराश होकर सुग्रीव के समीप आये और हाथ जोड़कर बोलेकि हे राजन्! जिन स्थानों को आप बताये थे उनको बार २ ढूंढ़े परन्तु सीताजी का कुछ भी पता नहीं चला। महा पराक्रमी शतबली नामके बानर उत्तर दिशा को खोजकर सेना के महित सुग्रीव के भय से वहां आये, सुषेण नाम बानर पश्चिम दिशा को ढूंढ़कर अपनी सेना सहित सुग्रीव के समीप आकर श्रीरामजी को और लक्ष्मणजी तथा सुग्रीव को नमस्कार करके बोले, राजन्! अपने जो बन पर्वत नदी समुद्र गुहा कन्दरा झाड़ी कुञ्ज नगर पुरी ग्राम आदि को बताये थे खोजे परन्तु सीता की कुछ भी पता नहीं चला, जहां अतिकठिन और विषम स्थान हैं उनको बार२ खोजे परन्तु जानकीजी को नहीं देखे अब जिस दिशा में वायू के पुत्र हनुमान गये हैं उसी दिशा में सीताजी मिलैंगी।

बाल्मीकियेरामायणे किष्किन्धा काण्डे सप्तचत्वारिंशसर्गः ॥ ४७ ॥

तारा नाम का एक बीर बानर बाली का मन्त्री था, तारा और अंगद के सहित हनुमानजी सुग्रीव से बताये दक्षिण दिशा को चले, वह लोग कुछ दूर जाकर विन्ध्य पर्वत को ढूंढ़ने लगे उस पर्वत में जितनी दरी कन्दरा गुहा बन पर्वत वृक्ष लता थे उन सब स्थानों को खोज किये परन्तु

जानकी जी को नहीं देखे, उस निर्जन स्थान में क्षुधा तृषा से बानर पीड़ित होकर बन के फल मूल को खाकर भूख प्यास की पीड़ा को सहन करते हुए उस दुर्गम बन को खोजे किन्तु वहां सीता को न देखकर दूसरे देश को खोजने में प्रवृत्त हुए। उस देश के वृक्ष पुष्प फल और पत्ता आदि से रहित बिना जल के वहां की नदी सूख गई है, उस बन में एक भी पशु पक्षी नहीं हैं इसके बाद पहिले सत्यवादी और तपस्वी कंडूनाम के महर्षि पहिले उस बन में रहते थे, उस बन में ऋषि को दश वर्ष के समय एक ऋषि कुमार थे। अकस्मात् ऋषि पुत्र का मरण हुआ। कडूमुनि अपने पुत्र के दुर्मरण को देखकर उस वन को शाप दिया कि यहां के कुआं बावली झरना सोता नदी नाला आदि के सब जल सूख जावें और जितने वृक्ष हैं इनमें कभी फूल फल और पत्ता आदि न रहें मुनिके शाप से वह बन इस प्रकार का होगया, उस दुर्गम बन में भी भूख व प्यास से पीड़ित होकर वैदेही को खोजे, इस के बाद वहांसे लता व झाड़ी से सम्पन्न भीमगिरी पर आये वहां आकर पर्वत के समान बैठे हुए भीम नाम राक्षस को देखे, उस राक्षस को देखतेही बानरों ने उसी को रावण जानकर पकड़ लिया और इस प्रकार उसे ऐंठकर दबाया जैसे कोई गीला वस्त्र दबावे, वह राक्षस भी बानरों को देखकर बोला, कि तुम सब क्षणभर में नष्ट होतेहो, उस राक्षस के बचन को सुनकर क्रोध युक्त अंगद दौड़ कर एक लात उसे ऐसा मारे कि वह मुंह से रुधिरको गिराकर मरगया। उसको मरने पर वहाँ के बन पर्वत नदी गुहा दरी कन्दरा आदि को वे सब खोज किये इसके बाद और भी जितने उसके समीप के बन पर्वत हैं उनको भलीभांति खोजकर निराशहो गये और एकान्त में वृक्षके नीचे बैठकर चिन्ता करने लगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धा काण्डे अष्टचत्वारिंशः सर्गः॥४८॥

इसके उपरान्त अंगदजी उन सब बानरों से बोले कि, बन पर्वत नदी दुर्ग गहन दरी गुहा पर्वतों की कन्दरा आदि को हम लोगों ने खोज करके थकित होगये परन्तु सीताजी को नहीं देखे, और सुग्रीव

की आज्ञा के अनुसार समय भी कम रह गया है इस लिये आलस्य निद्रा आदि को छोड़ कर सीताजीकी खोज करना चाहिये। खेद को त्याग कर अपने अपने सामर्थ्य के अनुसार फिर भी इस बन को खोजिये अवश्य इस परिश्रम का फल होगा, खेद करके उद्योग का छोड़ना भला नहीं है, तीक्ष्ण दंडको धारण करने वाला राजा सुग्रीव और महात्मा रामचन्द्रजी के भयसे सीता को खोजने काही उद्योग करो, नहीं यदि हमारी बात आप लोगों को नहीं भली लगे तो अपने मन की सोची हुई बात को कहिये, अंगदजी के बचन को सुनकर गंधमादन नाम के बानर भूख प्यास से पीड़ित होते हुए भी बोले, कि अंगदजी जैसा कहते हैं और सुग्रीव ने जैसा कहकर भेजा है उस के अनुसार कार्य करना चाहिये, फिर से ये विन्ध्यगिरि के पर्वत, नदी, गुहा, कन्दरा, दरी आदि में सीता की खोज की जावे, यह कहकर सब बानरों की झुण्ड उठकर विन्ध्या बन को खोजते हुए रजत पर्वत पर चले गये वहां जानकी जी को खोज कर लोध्रबृक्ष के बन में आये उस संपूर्ण बन को सीताजी को देखने की इच्छा से ढूंढे परन्तु जानकीजी के दर्शन को न पाकर हताश होकर थकावट के मारे लोध्रबृक्ष की डालियों पर इधर उधर देखने लगे, क्षणभर उस बन में विश्राम करके फिर भी आगे चलकर संपूर्ण दक्षिण दिशाको खोजने के लिये उद्यत हुए, हनुमान आदि बानर विंध्यवन को खोजते हुए आगे को चले।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धा काण्डे एकोनपंचाशः सर्गः ॥४९॥

तारा और अंगद के सहित हनुमानजी बिन्ध्यगिरि के गुहा, कन्दरा, बन आदि में खोज किये, जिन गुहाओं में सिंह वराह मृगा हाथी आदि जन्तु रहते हैं उनको भी भली भांति खोजकर उस पर्वत के दक्षिण और पश्चिम के शिखर पर आये वहां आने में सुग्रीव की अवधि के शेष दिन रहगये। वह विन्ध्य पर्वत अत्यन्त दुर्गम व गहन है और उस पर्वत वही विशाल गुहा व कन्दरा अनेक हैं हनुमानजी खोजने लगे, और अंगद आदि बानर सभी संगति से अलग होकर

दक्षिण दिशा में वर्तमान पर्वतों को ढूंढते हुए एक विलको देखे, भूख प्यास से पीड़ित मार्ग को चलने से थकित बानर लता व वृक्षों के मध्य में उस विल को देखे, वहां सारस, क्रौंच, हंस, आदि पक्षी उसी विलके राह से जाकर जलाशय स्नान विहार को करते थे। और उस विलके मार्ग से सुन्दर कमल की सुगन्धि उड़ती थी, बानर यह चरित्र वहां का देखकर विस्मित व व्यग्र होगये कि इस विल के भीतर कोई उपवन व जलाशय अवश्य है इस के बाद गर्जना करके जाम्बवान बोले, कि यह महाबली दानव का स्थान है यहां कोई प्रवेश नहीं करता है, इसके बाद पर्वत के समान दृढ़ हनुमानजी बानरों से बोले, कि पर्वतों को खोजने से हमलोग भूख प्यास के मारे थक गये हैं और इस विलके राह से पक्षी गण जलको पीकर आते हैं इस विलके भीतर कोई जलाशय अवश्य है, चलना चाहिये, यह कहकर हनुमानजी बानरों के सहित उस विलमें प्रवेश किये, वह विल अन्धकारमय है जहां सूर्य चन्द्रमा के प्रकाश नहीं जाते, जहां वायु की गति नहीं होती, और उस विलमें सिंहों के भयानक शब्द सुनाई देते थे तौ भी अपने साहस से बानर उस विल के भीतर प्रवेश किये, उसी अन्धकार युक्त विल में एक योजन के दूरी पर जाकर एक रमणीय व मनोहर स्थान को देखे उस स्थान में अनेक प्रकार के सघन वृक्षों का बन, पुष्प, लता, जलाशय, नदी, पर्वत आदि से युक्त प्रदेश को देखे, तृषासे पीड़ित बानर जलाशय के नगीच जाकर पहिले जलकोपान किये, खोज करने से थकित और अन्धकार में एक योजन विल के मार्ग से जानेपर असमर्थ होकर बानरी सेना वहां सुन्दर व रमणीय स्थान को देखकर विहार करने लगे। पहिले तो अपने जीवन की आशा को छोड़कर उस विल में प्रविष्ट हुए पीछे सोने के वृक्ष व लता आदि को देखकर प्रसन्न हो गये। कि साल ताल तमाल पुन्नाग बेंत चंपक नाग वृक्ष कनैल तिलक अशोक आदि के विचित्र वृक्ष सोने के समान हैं उन वृक्षोंपर सोने की लता लगी हैं, तालाबों में नीलमणि तथा वैडूर्य मणि के

समान कमल फूले हैं, उस बन में एक सुन्दर गृह है जिस में सोने के गवाक्ष हैं मोतियों की झालर लगी हैं जगह जगह हीरा नीलम वैडूर्य आदि मणी लगे हैं, उस गृह में भोजन के अनेक पदार्थ भरे हैं, सोने चांदी और कांसके भोजन पात्र तथा जल पात्र भरे हैं, दिव्य बहुमूल्य वस्त्र दुशाला चित्र विचित्र के कँवल की ढेर लगी हैं, उस गृह में सोजते हुए एक महा सुन्दरी स्त्री को देखे, वह स्त्री मृगचर्म को धारण किये तपस्विनी के वेष में बैठी है उसके तेजके सामने सूर्यका तेज तुच्छ जान पड़ा। उस सुन्दरी को बृद्धा देखकर हनुमानजी पूछे कि तुम कौन हो और यह किसका स्थान है, और यह सब धन रत्न वस्त्र भोजन के पदार्थ यह सब किसके हैं।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धा काण्डे पंचाशः सर्गः ॥५०॥

इस प्रकार हनुमानजी बृद्धा तापसी से पूछकर अपने बोले, कि अन्धकार से पूर्ण इस बिल में हम सब बानर एकाएक चले आये, हम लोग भूखे और प्याससे अत्यन्त पीड़ित थे, सो उसी पियास के कारण पृथिवी के इस महाविवर में चले आये, परन्तु सोने के इन बृक्ष और लताओं को देखकर हम लोग घबड़ा गये हम लोगों का ज्ञान नष्ट होगया है, सुन्दर फल फूल को धारण करने वाले यह सोने के बृक्ष किस के हैं और अनेक प्रकार के धन रत्न से युक्त रत्न जड़ित यह गृह किसका है, और इस जलाशय के सुन्दर जल में सोने के कमल फूले हुए हैं, और सोने के मछली कच्छ आदि जल जन्तु बिहार करते हैं, यह किसके तपस्या के बलसे यह ऐश्वर्य है अथवा तुम्हारे अनुभाव से है, मैं नहीं जानता हूं तुम अपना बृत्तान्त हम से कहो, इस प्रकार हनुमानजी के बचन को सुनकर तापसी हनुमानजी से बोली, हे कपिराज! अत्यन्त मायावी यह मयनाम दानव का बनाया हुआ यह सब सोने का बन है, पहिले यह दानव विश्वकर्मा हुआ था, उसी ने अपनी माया से यह रत्न जड़ित भवन बनाया है, वह दानव महा बन में सौ वर्ष तक तपस्या करके ब्रह्माजी को प्रसन्न किये ब्रह्माजी प्र-

सन्न होकर उस दानव को वरदान दिये, उसी वरदान के प्रभाव से उस दानव को यह सब संपति मिली है। इस बन में सुख पूर्वक वह दानव निवास करने लगा। कुछ दिन के बाद वह दानव हेमा नाम अप्सरा में आसक्त होकर इन्द्रलोक को चला गया और इन्द्र के साथ युद्ध किया, इन्द्र अपने बज्र से उस मायावी दानव को नाश किये, दैत्य के मरने पर ब्रह्माजी ने इस बन को और रत्नजड़ित इस गृह को हेमा के वास्ते दे दिया। मैं मेरु सावर्णि की कन्या हूं, नाच गान में चतुर हमारी प्रिय सखी हेमा इस बन और गृह की रक्षा करने का अधिकार हमको दिया है, सो मैं उसी अप्सरा की अनुमती से इसकी रक्षा करती हूं, हे बानरो के राजा! अब तुम अपना बृत्तान्त कहो कि किस कार्य के लिये किस कारण आप लोग बन में घूमते हैं उसे बिस्तार से कहिये, और इस बन के फल मूल को खाकर इस तालाब के स्वच्छ जल को पान करिये।

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धा काण्डे एकपंचाशः सर्गः ॥५१॥

इस प्रकार विश्राम करते हुए हनुमान आदि बानरों से उस बन का वृत्तान्त कहकर वह तापसी बोली, हे बानर! यदि यहां के फल मूल को खाने से पहिले अपनी थकावट दूरकरो पीछे हमसे अपना वृत्तान्त कहो, वृद्ध तापसी के इस प्रकार बचन को सुनकर हनुमानजी विनीत होकर अपना वृत्तान्त कहने लगे, कि इन्द्र वरुण के समान सब लोकके राजा महाराज दशरथ के पुत्र रामजी अपने भाई लक्ष्मण और अपनी स्त्री सीता के सहित दण्डकबन में आये, वहां रहते हुए जन स्थान से उनकी स्त्री सीताको रावण ने हरण किया है, उन महाराज रामके साथ बानरोंके राजा सुग्रीव नाम बानर से मित्रता हुई है, वह सुग्रीव सीताजी को खोज करने के लिये हम लोगोंको भेजा है, तो अङ्गद आदि बानरों के सहित रावण युक्त सीता को खोजने के लिये हमलोग दक्षिण दिशा में आये हैं, सो बन, पर्वत, नदी, गुहा, कन्दरा, दरी आदि को खोजते हुए क्षुधा व तृषासे पीड़ित होकर एक वृक्षके नीचे बैठ गये

कि अब समुद्र के पार जाकर खोजने की सामर्थ्य किसी को नहीं है इसी चिन्ता में व्याकुल हो जलाशय को ढूढ़ने की इच्छा से चारो ओर दृष्टि पसार कर देखने लगे । इतने में इस विलक राह से पक्षियों का पर भींगा हुआ देख पड़ा, उस विल को देख कर मैंने वानरों से कहे कि इस बिलके भीतर कोई जलाशय अवश्य है, हमारे कहने के अनुसार यह लोग भी अनुमान पूर्वक चले आये अब क्षुधा तृषा शान्त होगई, क्योंकि जितनी भूख रही उतना यहां के फल मूलको खाये, अब हमलोग स्वामी की आज्ञानुसार कार्य में व्यग्र हैं अब तुमारा क्या उपकार करें सो कहो क्योंकि तुमसे रक्षा किये गये इस बनके फलको हमलोगों ने खाया है, हनुमानजी के मुखसे इस प्रकार के बचन को सुनकर तपसी बोली, कि हम तुम सब वानरों से सन्तुष्ट हैं अपने तपस्या के प्रभाव से तुमारे करने योग्य हमारा कोई कार्य नहीं है, तापसी के बचन को सुनकर हनुमानजी बोले, कि हमलोग तुमारे शरण हैं, सीताजी को खोजने के लिये महात्मा सुग्रीव ने जो समयकी अवधि किये हैं वह इस बिलके मार्गको खोजने में बीत जावेगी, और समय को बीत जानेपर हमलोगों को प्राणदण्ड होगा । इस लिये इस स्थान से बाहर करने में तुम समर्थ हो, हनुमानजी के इस आर्त बचन को सुनकर तापसी बोली कि यहां से कोई जीवित मनुष्य लौटकर नहीं जाता है परन्तु तुम लोगों को मैं अपने तपस्या के बल से यहां से बाहर कर देवेंगी । तुम सब बानर आंखको बंदकरो । बिना नयन को मूँदे इससे बाहर नहीं हो सकोगे, इसके बाद बानरों ने अपने हाथ से आंख को बन्द किये और वह तापसी अपने योग बलसे क्षण भर में उन बानरों को बिल से बाहर कर दिया, और बानरों से बोली कि अनेक प्रकार के वृक्ष व लता से युक्त यह विन्ध्यनाम का पर्वत है । इसके बाद खारे जल का समुद्र है अब तुम लोग जाओ तुमारा कल्याण हो बानरों से इस प्रकार कहकर तापसी अपने स्थान को चली गई ।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे द्विपंचाशः सर्गः ॥५२॥

उस मयदानवके स्थानसे चलते हुए हनुमान आदि बानर समुद्र के तट पर पहुंचे, वहां समुद्र के नाना विध तरंगको देखकर और सुग्रीवसे दिये समय को पूरा जानकर वृक्ष के नीचे बैठ गये और विचार करने लगे कि विन्ध्यगिरीको खोजते समयका अन्त होगया है क्या करना चाहिये, इतनेमें पर्वत के ऊपर वसन्त काल में फूलने वाली लता फूली हैं आम आदि के वृक्षों में फूल लगा है वसन्त कालके वायु चलते हैं, कोकिला आदि पक्षी उत्कंठा युक्त हो कर बोलते हैं, बन की शोभा को इस प्रकार देख कर अंगद आदि बानर अचेत होकर पृथिवी पर गिर पड़े और कहने लगे कि पाताल में मयनाम दानव के बन में जाने से हम लोगों को बिलंब हो गया अब तो बसन्त काल आ गया है सुग्रीव से दिया गया एक मास की अवधी बीत गई, इस प्रकार बानरों को चिन्ता से व्यग्र होकर अङ्गदजी बोले, कि सुग्रीव की आज्ञा से एक मास में सीताजी को खोजने के लिये हम सब बानर आये हैं सो एक महीना पूरा उस दानवके बिलमें आते जाते व्यतीत हो गया, और रामजी का कुछ कार्य नहीं हुआ तो बिना कार्य किये हमलोगों का मरना अच्छा है क्योंकि सुग्रीव की आज्ञा को उल्लंघन करके इस संसार में कौन सुखी रह सकता है, यदि सुग्रीव की अवधि बीत गई तो हम सब बानरों को प्राण त्याग करना उत्तम है क्योंकि इस समय सुग्रीव राजा हैं उनका स्वभाव तीक्ष्ण है वह हम लोगों के अपराध को क्षमा नहीं करेंगे और सीता के समाचार को न पाकर हम लोगों का बध किष्किन्धा में अवश्य होगा । इस लिए यहीं का मरना अच्छा है, कुमार अङ्गदके इस प्रकार बचन को सुनकर बानर गण बोले, हे अंगदजी ! सत्य है, सुग्रीव अपने न्याय के अनुसार और रामजी का प्रेम सीता के समाचार पर है तो समय को व्यतीत करके भी सीता जी का समाचार बिना लिये चलाने में हम लोगों का नाश अवश्य होगा । बानरों को भय से पीड़ित और उनके कातर बचन को सुनकर अङ्गदजी फिर बोले, तुम लोग विषाद न करो, यदि इच्छा हो तो उसी दानव के बिल में चल

कर निवास करो। वह स्थान माया से बनाय है और अत्यन्त दुर्गम है, उस स्थान में खाने पीने के योग्य भी अनेक पदार्थ हैं, उस स्थान में हम लोगों को किसी का भय नहीं होगा। अङ्गदजी के इस प्रकार वचन को सुनकर बानरों की सेना प्रसन्न होकर अपने प्राण के भय से वहां का रहना अंगीकार किये॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे त्रिपंचाशः सर्गः॥५३॥

इस प्रकार अङ्गदजी को कहने से और बानरों को अंगीकार करने से किष्किन्धा पुरी के राज्य से अङ्गद जी को रहित हनुमानजी जाने और आठ अंग चार उपाय चौदह गुण से युक्त नीति में निपुण बालि के पुत्र अङ्गद जी को हनुमान जी जाने, जैसे शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा का प्रकाश बढ़ता है वैसे अपने बल तेज व पराक्रम से हनुमान जी की शक्ति बढ़ने लगी, वह बृस्पति के समान बुद्धिमान वायु के समान पराक्रमी हनुमानजी इस प्रकार की अङ्गद की सेवा करने लगे जैसे इन्द्र बृहस्पति गुरु की सेवा करते हैं, उस प्रकार सेवा करके श्रीरामजी के कार्य की सिद्धि के लिये हनुमान अङ्गद को उत्साह देने के लिये बचन को बोले, हे अङ्गद! तुम बालि के समान पराक्रमी हो और युद्ध में सुग्रीव से लड़ने को समर्थ हो, तुम दृढ़ शक्ति को धारण करने वाले हो, यदि यह सब बानर तुमारे अधीन रहैं तो चाहे तुम किष्किन्धा में रहो चाहे ऋक्ष बिलमें रहो। परन्तु यह बानर अत्यन्त चञ्चल हैं बिना अपने स्त्री पुत्र के तुमारी आज्ञा का पालन नहीं करैंगे, क्योंकि तुमसे यह बलवान हैं यह किष्किन्धा पुरी में अवश्य जावेंगे इनके साथ हम लोगों को अवश्य चलना पड़ेगा। यह मैं प्रत्यक्षमें स्पष्ट कहता हूं कि जांबवान् नील नल सुहोत्र आदि महाकपि अपने स्त्री पुत्र को छोड़कर तुमारे साथ ऋक्ष बिल में निवास नहीं करैंगे, और इन बानरों को तुम साम दाम से अतिरिक्त दण्ड देकर अपने अधीन नहीं कर सकोगे, क्योंकि बलवान दुर्बल को अधीन कर सकता है, दुर्बल बलवान को अपने बशमें नहीं रख सकता है। यदि यह कहो

कि इस गुहा में रहने के लिये बलवान की आवश्यकता नहीं है आप लोग जाइये में वहां अकेला रहूंगा क्योंकि उस गुहा की रक्षा करने वाली वह स्त्री है वह हमारी भी रक्षा करेगी तो वह गुहा भी लक्ष्मण के बाण के सामने कुछ नहीं है लक्ष्मणजी अपने बाण से उस गुहा को भी नाश करदेंगे जैसे इन्द्र उस दानव को मारने के लिये अपने वज्र से उसी दानव का नाश किया उस पुर का नाश नहीं किया परन्तु लक्ष्मणजी उस पुर को भी नाश कर डालेंगे, जब यह बलवान् बानर तुमारा त्याग करके चले जायेंगे तब तुम तृण के समान तुच्छ हो जाओगे । हम लोगों के सहित विनीत भाव से जब सुग्रीव के पास चलोगे, तब सुग्रीव प्रीति पूर्वक तुमको राज्य देवगे । धर्मराज के समान धर्म को पालन करने वाले तुमारे चाचा सुग्रीव तुमको अपना ज्येष्ठ पुत्र जानकर राज्य देवेंगे सीता को खोजने के समय को बीत जाने पर क्रोध करके सुग्रीव तुमारा नाश नहीं करेंगे । और तुमारे ही आधार पर तुमारी माता का जीवन है उसको और कोई दूसरा सन्तान नहीं है इस लिये हम लोगोंके साथ तुम किष्किन्धा पुरी को चलो।

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धा काण्डे चतुष्पंचाशः सर्गः ॥५४॥

विनय और सत्कार युक्त हनुमानजी के बचन को सुनकर अङ्गदजी बोले, हे हनुमान् ! स्थिरता मनकी पवित्रता और दया तथा पराक्रम ये सब गुण सुग्रीव में कुछ भी नहीं है, जो जेठे भाई को जीते हुए माता के समान उसकी स्त्री को अंगीकार किये उसको धर्म कहां जो दानव के युद्ध में प्रवृत्त उनके भाई बालि उनके आने के मार्ग को शिला से बन्द करके अपने अकेले आकर राज्य करने लगे उनको धर्म कहां सत्य पूर्वक रामजी से मित्रता करके बालि को नाश किये पीछे श्री रामजी की करणी को भूलकर अपना सुख भोग करने लगे। जब उनकी कृतघ्नता देखकर रामजी ने लक्ष्मणजी को भेजा तब लक्ष्मण के भय से सीता को खोजने के लिये हम लोगों को भेजा है उनको धर्म कहां, ऐसे अधर्मी और कृतघ्न का कौन सज्जन मनुष्य विश्वास करेगा।

हम शत्रु को राज्य देकर सुग्रीव किस प्रकार जीवेंगे। सुग्रीव की अपेक्षा हम सब प्रकार से हीन व दुर्बल हैं अनाथ के समान किष्किन्धा में चल कर किस प्रकार जीते बचेंगे राज्य के लोभ से सुग्रीव अवश्य चाहे कारागार देवे चाहे प्राण दण्ड देवे, ऐसे निर्दय कठोर सुग्रीव का क्या विश्वास है, सुग्रीव के दण्ड को सहने से यहां का मरना अच्छा है आप लोग जाइये मैं यहीं अपने मरण का उपाय करूंगा। आप लोग जाकर सुग्रीव राम लक्ष्मण से और हमारी माता तारा और उमा से हमारा प्रणाम व हमारी कुशलता कह देना, हमारे नाश को सुनकर हमारी माता अवश्य प्राण को छोड़ देवेगीं हनुमान आदि बानरों से अंगदजी इस प्रकार कह कर जो बानर आदि को प्रणाम किये, तथा रोदन करते हुए पृथिवी पर गिर पड़े अंगद की यह दशा देखकर सब के सब बानर रोदन करने लगे, और सुग्रीव की निन्दा तथा बालि प्रशंसा करने लगे। और शीतल जल वायु से अंगद को उपचार करने लगे और कहने लगे कि स्वामी का इस प्रकारमरण श्रेष्ट नहीं हैं, देखो रामजी के बनवास से दशरथ का नाश जनस्थान में राक्षस का नाश जानकी हरण जटायु बध तथा बालि का बध जिस कारण हुआ है वही भय का कारण हम सब बानरों के लिये आया है यह कह कर जांववान आदि बानर इस प्रकार रोने लगे जैसे आकाश से जलकी वृष्टि होवे॥

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे पंचपंचाश सर्गः ॥ ५५ ॥

जिस पर्वत पर बैठकर ये बानर लोग आपस में करुणा विलाप के बचन को कह रहे थे कि बानरों के कल कल को सुनकर उसी पर्वत की गुहा से जटायु का लघु भाई संपाति निकल कर बाहर पर्वत के ऊपर बैठा और बानरों को देखकर चिल्ला कर बोला कि मनुष्य के कर्म फल के अनुसार विधाता फल देते हैं आज बहुत दिनों के बाद यह बहुतायत आहार हमको मिला है, क्रम से कुछ दिनो तक एक एक बानरों को मार कर भोजन करूंगा मांस के लोभी गिद्ध के इस प्रकार वचन को सुनकर दुःखित अङ्गद हनुमानजी से बोले, कि सीता

को मिलने के व्याज से हम सब बानरों को नाश के लिये इस देश में साक्षात् यमराज के समान इस गिद्ध से भेंट हुई। न तो हम लोग श्रीरामजी के कार्य को किये और न तो सुग्रीव की आज्ञा को पालन किये बीच में एका एक यह विपत्ति आ पहुंची। वैदेही की रक्षा के लिये जटायु ने अपना प्राण देकर कार्य किया है जिस का वृत्तान्त आप लोग सुन चुके हैं, देखिये पक्षी होकर इतना बड़ा कार्य किया हम लोगों से कुछ नहीं हो सकता है, इस जटायु के वृत्तान्त को स्मरण करके श्रीरामजी के उपकार करने में बानरों को कुछ साहस हुआ, हम लोग इतने बन को खोज डाले परन्तु जानकीजी का दर्शन नहीं हुआ, हम लोगों से सुखी जटायु हुआ जो रावण के साथ युद्ध करके अपना प्राण दिया, जटायु और दशरथ का मरण वैदेही का हरण बानरों को संशय राम के बाण से बालि बध और समस्त राक्षसों का नाश और कैकयी के बरदान आदि सकल कार्य को इस गिद्ध ने हम लोगों के मरण से नाश किया, अब इस गिद्ध के हाथ से बचना कठिन है। थकावट से पृथिवी पर गिरे हुए अङ्गद के बचन को सुनकर चिल्ला कर फिर गिद्ध बोला, यह कौन बोलता है कि प्राण से भी प्रिय हमारे भाई जटायु का मरण हुआ, इस बात को सुनकर हमारा हृदय कांपता है, क्योंकि बहुत दिन के बाद मैंने अपने भाई का नाम सुना है। जन स्थान में गिद्ध व राक्षस का युद्ध कैसा हुआ और जन स्थान में रहने वाले हमारे भाई जटायु और महाराज दशरथ का नाश कैसे हुई श्रीरामजी जिसके ज्येष्ठ पुत्र हैं वह महाराज दशरथ हमारे लघु भाई जटायु के प्रिय सखा हैं उनका विनाश कैसे हुआ, इस वृत्तान्त को सुनने के लिये हमारी बड़ी उत्कट इच्छा है हम आप लोगों के समीप आना चाहते हैं परन्तु हमारा पंख सूर्य के प्रकाश से जल गया है इस कारण अब पर्वत से उतरने की सामर्थ्य नहीं हैं॥

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किंधाकाण्डे षट्पंचाशः सर्गः॥५६॥

सामर्थ्य से हीन संपाति के करुणायुक्त बचन को सुनकर गिद्ध

के हाथ से बानरों का भय छुट गया और बानर प्रसन्न हो कर बिह्वल होगये कि अब हम लोग अपने कार्य को सिद्ध करेंगे। यह सोचकर बानरों के सहित अंगदजी पर्वत के शिखर से नीचे उतर कर गिद्ध के समीप जाकर अंगदजी बोले, कि ऋक्षराज नामक हमारे पितामह बानरों के राजा थे, बल व पराक्रम में बड़े कुशल थे, उनको अत्यन्त बलवान उनको दो पुत्र हुए, एक आर्य बाली और दूसरे सुग्रीव, उसमें हमारे पिता का नाम बाली हैं, लोक में उनका पराक्रम विख्यात है इस भूमण्डल के राजा महाराज दशरथ के पुत्र रामचन्द्र अपने पिता की आज्ञा को धर्म पूर्वक पालन करने के लिये अपने भाई लक्ष्मण और सीताजी के सहित दण्डक बन में आये हैं तो श्रीरामजी की स्त्री जानकी को हठात रावण ने छल सेहरण किया, तब महाराज दशरथ के मित्र जटायु नाम के गिद्धों के राजा वहां रहते थे, उन्होंने अपने मित्र की पुत्र बधू का राक्षस के हाथ से हरण देखकर और श्रीजानकीजी के करुणा के बचन को सुनकर श्रीरामजी के चरण में अनुराग रखते हुए जटायु रावण के साथ महायुद्ध करके एकवार जानकी को छीन लिया, पुनः रावण ने रण में जटायु को मारकर सीता को लेगया, पीछे रामजी आकर अपने पिता के समान जटायु का संस्कार किये जिससे जटायु को परम गति मिली, इसके बाद हमारे चाचा सुग्रीव से श्रीरामजी की मित्रता हुई, तब सुग्रीव के कारण श्रीरामजी ने हमारे पिता बालि को मार कर सुग्रीव को राज्य दिये, उन्हीं सुग्रीव की आज्ञा से हम सब बानर सीताजी को खोजने के लिये चले हैं, सब दण्डकारण्य विंध्यगिरि को खोज किये परन्तु सीताजी का दर्शन नहीं हुआ, हम सब बानर इधर उधर सीताजी को खोजते हुए एक बिल को देखे, अज्ञानता से उसबिल में प्रवेशकिये, वह बिल मयनाम दानव अपनी माया से बनाया है उसको खोजते हुए हम लोगों का वह समय बीत गया है जिसको सुग्रीव ने निश्चय किया था, अब उस समय को बीत जाने से भय के मारे हम लोग व्याकुल होगये हैं, इस समय बिताकर चलने से रामचन्द्र लक्ष्मणजी तथा सुग्रीव अवश्य क्रोध करेंगे,

उनको क्रोध करने से हम लोगों का प्राण अवश्य नाश होगा ।
इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे सप्तपंचाशः सर्गः ॥ ५७ ॥

इस प्रकार करुणायुक्त बचन अंगद के मुख से सुनकर भाई के मरण से पीड़ित होकर रोदन करते हुए संपाति बोले, पहिले पृत्रासुर राक्षस के वध के समय में मैं और जटायु अपने अपने बल के प्रभाव से इन्द्र को जीतने के लिये स्वर्ग को चले गये, वहां इन्द्र को जीतकर अभिहान से लौटते हुए सूर्य लोक में जाने का उद्योग किये, तब सूर्य के प्रभाव से हम दोनों में जटायु जलने लगा, तब मैं भाई के स्नेह से अपने पंख से उस जटायु के ऊपर छाया किये, सो हमारा सब पंख वहीं जल गया, पंख को जलने से मैं यहां विन्ध्यगिरि पर गिर पड़ा तब से बिना आहार के यहीं रहता हूं, जटायु के भाई संपाति के इस प्रकार बचन को सुनकर अंगदजी बोले, जब जटायु रामचन्द्रजी के भक्त थे और आप भी उनके भाई हैं तो आप उस राक्षसको रहनेका स्थान जानते हैं कि वह रावण कहां रहता है यदि जानते हो तो कृपा पूर्वक कहो। अंगदजी के बचन को सुनकर अपने पराक्रम के अनुसार संपाति बोले, हे बानर! इस समय हमारा पंख जल गया है और वृद्ध होने के कारण पराक्रम भी घट गया है क्या सहायता रामजी की करूं, अब केवल वचन से रामजी की सहायता करूंगा। मैं वरुण लोक को विष्णु लोक को देवासुर संग्राम की समुन्द्र को मथानी आदि के वृत्तान्त को हम जानते हैं, परन्तु बृद्धावस्था के कारण मैं शिथिल हो गया हूं नहीं तो रामजी के इस कार्य को मैं पहिले कर सकते थे, रूप और अलंकार से संपन्न तरूणी सीता को दुरात्मा रावण बलात्कार से लिये जाता था यह मैंने अपने आंख से देखा है, रामचन्द्र और लक्ष्मण को नाम लेकर पुकारती अपने शरीर को धूनती हुई रावण के अंक में इस प्रकार जाती थी जैसे आकाश में वद्ध लोक मध्य में विजली की शोभा होती है, सूर्य की प्रभा के समान पीतांबर को धारण कि थी, रामचन्द्र के कीर्तन से मैं उन्हीं को सीता जानता हूं अब उस राक्षस के स्थान को सुनो, विश्वा का पुत्र कुबेर

का भाई रावण नाम का राक्षस लंकापुरी में रहता है, सौ योजन के समुन्द्र के उस दीप में विश्वकर्माने लंका नाम की नगरी बनाई है उसी में वह रहता है वहीं पर पीताम्बर को धारण करने वाली अनाथा जानकी रहती हैं उन के आस पास राक्षसियों का पहरा है, सोने का उस पुरी का द्वार है और कांचन की वेदियां बनी हैं और सूर्य के समान चमकने वाली, सोने की भीति से वह पुरी घिरी है वहीं पर जानकी रहती हैं जाकर देखो, लंकापुरी के चारो ओर समुद्र रक्षा करता है, सौ योजन समुद्र को पारकर के रावण को दिव्य ज्ञान से आप लोग वहां जाकर लौट सकते हैं क्योंकि वहां जाने का पहिला मार्ग गरुड़ का है दूसरा मार्ग धान्य आदि से जीविका करने वाले कपोत आदि पक्षियों का है, दूसरा मार्ग काग और सुग्गा का है तीसरा मार्ग क्रौंच आदि पक्षियोंका है चौथा मार्ग बाज पक्षी कांडपांचवां गिद्ध का है, छठवां जानेका मार्ग हंस का है अर्थात् जितने ऊंचाई से यह पक्षी लोग जाते हैं उन मार्गों से जिसकी इच्छा हो वह जावे। हे बानर! गरुड़ के लघु भाई अरुण से हमारा और जटायु का जन्म है, जितनी दूर से गरुड़ देखते हैं उतने ही दूरसे मैं भी, हमको चक्षुष्मती विद्या मालूम है उस विद्या के प्रभाव से मैं निराहार यहां बैठा हुआ भि जानकी को देखता हूं जानकी जी लंका पुरी में अशोक बन के मध्य में अशोक वृक्षके नीचे बैठी हैं, यदि मुझे निरन्तर आहार मिलेतो मैं सौ योजन से अधिक भी देखसकता हूं। क्योंकि हमारे गिद्ध जाति को स्वभाव से अधिक दूर देखना और मांस खाना यह ब्रह्माने बनाया है, अब तुम लोगों को यही उपाय है कि यदि तुम सब बानरों में जिसको समुद्र लांघने का सामर्थ्य हो वह जाकर जानकी जी को देख सकता है, अब मुझको समुद्र के किनारे पर लेचलो मैं अपने मरे हुए भाई के लिये जलदान करूंगा। बानर गण पंख से हीना गिद्ध को समुद्र के किनारे लेगये संपाति वहां अपने भाई को जलदान दिया और रोदन किये, पुनः बानर संपाति को

लाकर पर्वत पर रख दिये और प्रसन्न होकर आपस में परस्पर सीता को खोजने का वार्तालाप करने लगे ।

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धा काण्डे अष्टपंचाशः सर्गः ॥५८॥

अमृत के समान स्वादिष्ट गिद्ध राज के वचन को सुनकर अंगद जाँमवान आदि धीर मूर्छा से उठकर खड़े होगये और बोले कि सीता कहां है किस ने हरण किया है किस ने देखाहै उसको आप कहिये, इस संसार में कौन ऐसा है जो रामजी के पराक्रम को नहीं जानता वानरों के इस प्रकार वचन को सुनकर पुनः प्रीति पूर्वक गिद्ध बोले, कि मैंने वैदेही के हरण को जिस प्रकार सुने हैं और जिसनें देखा है मुझसे कहा है और जहां सीताजी हैं वह सब वृत्तान्त कहता हूं सुनो । अधिक योजन के विस्तार में यह पर्वत है, मैं अपने बल पराक्रम से हीन होकर वृद्धा वस्था के कारण इसी पर्वत की गुहा में रहता हुं, हमारे पुत्र सुपार्श्व अपने लियाये आहार से हमारा पालन करते हैं, क्योंकि हम लोगों को क्षुधा कठिन है, जैसे गंधर्व को काम कठिन है सर्प को क्रोध कठिन है मृगाओं को भय कठिन है उसी प्रकार हम लोगों को क्षुधा कठिन है, एक समय सुपार्श्व क्षधासे पीडित होकर और हमको भी पीडित देखकर प्रातःकाल आहार लेने को गये थे, परन्तु सायं काल में बिना आहार के लौट आये, मैं आहार विना उन को अनेक दुर्वचन कहे हमारे वचन को सुनकर उनको खेद हुआ तौभी हम से क्षमा की प्रार्थना करके इस प्रकार बोले, कि हे तात ! मैं आहार के लिये आकाश मार्ग से जाकर महेन्द्र पर्वत की गुहा के द्वार को आवृत करके बैठे, उस मार्ग से अनेक जलचर जन्तु आते जाते हैं उसी मार्ग पर उन जन्तुओं को मारने की इच्छा से बैठे, इतने में, काले मेघ के समान एक राक्षस विजली की तरह चमकती हुई एक महा सुन्दरी को लिये जाता था उस को मैंने देखा उस को देखकर मैंने निश्चय किया कि आज इसको मारकर मैं अपने परिवार का पालन करूंगा, यह इच्छा करके सुपार्श्व ने मार्ग को रोककर उस की ओर

लक्ष्य करके मैं उठ खड़ा हुआ, वह राक्षस मेरे मनकी बात को जानकर विनीत भाव से मुझ से अपने जीवन की प्रार्थना किया मैंने उस को जीवन दान देकर मार्ग से अलग हटगया और वह राक्षस स्त्री के सहित सुख पूर्वक चलागया इस के बाद सिद्ध आदि देवता आकर हमारा पूजन किया, और कहाकि बड़े प्रसन्नता की बात है जो आज भी सीताजीवित हैं, यह वृत्तान्त मैंने सुपार्श्व के मुख से सुना है, और अलंकार तथा वस्त्र से भ्रष्ट शोक से व्याकुल रामलक्ष्मण के नाम को पुकारती हुई रावण से हरी गई श्रीरामजी की स्त्री जानकीजी को मैंने देखा है और अब भी अशोक बन में सीता को मैं देखता हूं। परन्तु इस समय मैं असमर्थ हूं हमको कुछ पराक्रम करने की शक्ति नहीं है केवल वचन मात्रसे मैं आप लोगों की सहायता करसकता हूं, आप लोगों को कपिराज सुग्रीव ने इस कार्य को करने के लिये भेजा है, आप लोगों के लिये कोई कार्य कठिन नहीं है, अब कार्य में विलंब नहीं करना चाहिये क्योंकि आप के समान सूरवीर को कार्य में आलस्य नहीं करना चाहिये ।

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धा काण्डे अष्टकोनषष्ठितमः सर्गः ।५३।

गिद्ध जलस्थान करके बानरों के सहित पर्वत के शिखर पर बैठकर प्रसन्न हुआ । बानरों के समागम से संपातिका जलगया पंख फिर से उत्पन्न हुआ । पंख को पाकर संपाति प्रसन्नता पूर्वक बानरों के मध्य में बैठकर अंगद जी से फिर बोला, हे बानरो ! हम जिस प्रकार जानकी जी को जानते हैं उसको कहते हैं सुनो । सूर्य के तेजसे जब हमारा पंख जलगया तब में पंख से हीन होकर पहिले इस विन्ध गिरि पर्वत के शिखर पर गिरा, और छ दिन तक हम मूर्छित रहे, बाद छ दिन के जब हमको चेतना हुई तब मैं दिशाओं में चारो ओर देखने लगा परन्तु हमको कुछ भी नहीं जानपड़ा, अब मैं अपने ज्ञान को स्थिर करके समुद्र पर्वत नदी बन आदि को देखने से हमको यह निश्चय हुआ कि यह विन्ध्य गिरी है, इसी पवित्र आश्रम में देवतों से पूजा करने

योग्य तपस्वियों में श्रेष्ठ निशाकर नाम के महर्षि रहते थे, जब मैं यहां रहने लगा तब निशाकर मुनि स्वर्ग को चलेगये । उनको स्वर्ग जानेके बाद आठहजार वर्ष तक मैंने विन्ध्य पर्वत पर निवास किया, इस के बाद विन्ध्य गिरि के शिखर से बड़े कष्टके सहित उतर कर मुनि को देखने के लिये हम और जटायु मुनिके आश्रम में आये, इस आश्रम में शीतल मन्द सुगन्ध वायु वह रहा है वृक्षों में अनेक प्रकार के फल फूल लगे हैं, पक्षि वृक्षोंपर बैठकर सुहावनी बोली को बोलते हैं, ऐसी शोभा आश्रम की देखते हुए मैं आश्रम के बीच एक वृक्षके नीचे आकर ठहरा । और मुनिके दर्शन की इच्छा से यहां ठहरे । कुछ समय के बाद मुनिजी स्वर्ग से आये, मैंने सूर्य के समान मुनिजी को दूरही से आते देखकर समुद्र में स्नान करके बैठा, जब मुनिजी समीप में आये तब मैं अपने पंखके कुछ जल से उनके चरण को धोकर उत्तर मुख होकर बैठे इसके बाद उस आश्रम के समीप जितने सिंह व्याघ्र बानर भालू पशु पक्षी रहे सब मुनिजी के आस पास खड़े हुए जैसे पालन करने वाले के समीप प्राणी खड़े होते हैं ऋषि उन सब जन्तुओं का कुशल क्षेम पूछ कर हमको देखकर बोले, कि तुम्हारी क्या दशा है तुम्हारे तो सब पंख जलगये शरीर तुम्हारी निर्बल होगयी, इस के पहिले जब मैंने तुम दोनो को देखा था, तब तुम सब बड़े बलवान पराक्रमी अश्विनी कुमार के समान देखपड़ते थे सो यह क्या गति है, तुम्हरा नाम तो संपाती है और तुम्हारे भाई का नाम जटायु है तुम दोनो गिद्धों के राजा हो और मनुष्य के समान हमारे चरण को ग्रहण किये हो, तुमको यह व्याधि कैसे हुई और तुम्हारे पंख का पतन कैसे हुआ अथवा तुमको किसने दण्ड दिया है यह विस्तार से हमसे कहो ।

इति वाल्मीकीये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे षष्ठितमः सर्गः ॥ ६० ॥

इस प्रकार मुनिके वचन को सुनकर मुनि से अपना वृत्तान्त कहने के लिये बोला, भगवन् ! मैं अपने कर्म से अपनी दशा को देखकर लज्जा से पूर्ण वृत्तान्त कह नहीं सकते तौभी आप नारायण हैं आप

से कहता हूं। हम और जटायु अपने बल के अभिमान से आकाश में उड़ते हुए अपने अपने पराक्रम की जिज्ञासा करने लगे, जिज्ञासा करते २ हिमालय के शिखर पर पहुंचे और वहां जाकर मुनि के सन्मुख प्रतिज्ञा किये कि जब तक सूर्यनारायण अस्त नहीं होंगे तब तक हम दोनों उनके रथ के पीछे चलूंगा, यह प्रतिज्ञा करके हम दोनों अलग अलग रथ चक्र के समान आकाश में घूमते हुए नदी नद पर्वत बन समुद्र आदि को देखते हुए ऊपर को चले, वहां गंधर्व लोक अप्सरा लोक आदि को देखते और गंधर्व अप्सराओं के नाच गान को सुनते हुए इन्द्र वरुण यमकुबेर आदि के लोक को देखते हुए एका एक सूर्य के मार्ग पर पहुंचे और वाल तृण के समान पृथिवी के बन को हम लोगों ने देखे और पर्वत पत्थल के टुकड़े के समान देख पड़ते थे हिमालय विन्ध्य सुमेरु आदि बड़े बड़े पर्वत छोटी हाथी के समान मालूम होते थे, ज्यों सूर्य के समीप पहुंचने का उद्योग किये त्यों हम लोगों को स्वेद [पसीना] की धारा बहने लगी और हृदय कांपने लगा, सूर्यलोक में प्रवेश करने के समय मोह के मारे मूर्छा आगई दिशाओं का ज्ञान भूल गया और प्रलयकाल की अग्नि के समान सूर्य के प्रकाश से हम लोगों की आंख चका चौंध हो गई शरीर जलने लगा तौभी मन को समाहित करके ऊपर चलने को यत्न किये तब भूलोक के समान लंबा चौड़ा और गोला देखकर जटायु हम से बिना पूंछे एकाएक सूर्य मण्डल में प्रवेश किया, जटायु को मैं ऊपर जाते देखकर मोह वश अपना पंख से जटायु को छाया किया कि यह सूर्य के तेज से कहीं जटायु जल न जावे, इतने में सूर्य के तेज से हमारा पंख जल गया और मैं वायु के मार्ग से मेरा पृथिवी पर पतन हुआ, तब से जटायु जन स्थान में रहने लगा और पंख को जल जाने से निर्बल होकर विन्ध पर्वत पर रहने लगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे एकषष्ठितमः सर्गः ॥६१॥

इस प्रकार संपाति मुनि से कह कर रोदन करने लगा, मुनि संपाति के वृत्तान्त को सुनकर ध्यान पूर्वक इस प्रकार बोले, कि तुम्हारा जला

हुआ पंख प्राण बल ज्ञान इन्द्रिय फिर से होगा ऐसा मैंने नारद आदि मुनियों से भविष्य में सुना है और तपस्या के प्रभाव से हमको मालूम भी है कि इक्ष्वाकुराजा के वंश में दशरथ नाम के राजा होंगे उनको महा पराक्रमी व तेजस्वी राम नाम के पुत्र होंगे, वह रामजी पिता की आज्ञा को पालन करने के लिये लक्ष्मण के सहित दण्डक बन में आवेंगे तब देवता दानव दैत्य आदि को त्रास देने वाला राक्षसों का राजा रावण नाम का राक्षस श्रीरामजी की स्त्री जानकीजी को हरण करेगा और अनेक प्रकार के खाने पीने की वस्तुओं को दिखाकर जानकीजी को लोभ देवेगा परन्तु पति के विरह रूपी सागर में मग्न जानकी ने अन्न और जल का परित्याग कर दिया कि कुलीन पतिव्रता स्त्रियों को यह धर्म नहीं है जो अपने प्राणनाथ से अलग होकर पराये घर में अन्न जल को ग्रहण करें, जानकीजी को इस बात पर अटल देखकर ब्रह्मजी की आज्ञानुसार जानकीजी को जीवन के लिये इन्द्र ने देवताओं के खाने के योग्य अमृतमय हविको श्रीसीताजी को दिये और बोले कि जब तक तुम्हारे पति लंकापुरी में आकर राक्षसों का संहार नहीं करेंगे और तुम्हारा उनके साथ जब तक मिलाप नहीं होगा तब तक इस हवि के प्रभाव से तुम्हें भूख प्यास नहीं लगेगी और जन्मान्तर में देवयोनि अर्थात लक्ष्मी होकर विष्णु के साथ रहोगी। निशाकर मुनि ने कहा कि इस प्रकार इन्द्र ने सीताजी को हवि दिया उन सीता को खोजने के लिये जब श्रीरामजी के दूत इस पर्वत पर आवेंगे और उनसे सीता हरण का सब वृत्तान्त जब तुम कहोगे तब तुम्हारा शरीर पहिले के समान हो जावेगा। तुम इसी पर्वत पर बैठकर देशकाल के अनुसार उन दूतों की प्रतीक्षा करो। राम लक्ष्मण को देखने के लिये हमारी भी इच्छा है परन्तु मैं इतने दिन पर्यन्त प्राण को धारण नहीं कर सकता हूं हमसे निशाकर मुनि ऐसा कह कर आश्रम में प्रवेश किये और मैं उनके वचन के अनुसार इसी पर्वत पर बैठा हूं सो आज आप लोगों के दर्शन से हमारा कार्य हुआ।

इति वाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे द्विषष्ठितमः सर्गः ॥६२॥

इसके बाद इन अनेक वाक्यों से निशाकर मुनि हमको धैर्य देकर अपने आश्रम में चले गये और मैं भी धीरे धीरे इस पर्वत पर आकर आप लोगों के दर्शन की कामना से इसी कन्दरा में रहने लगा, अनेकों वर्ष के बाद आज आप लोगों के दर्शन का सौभाग्य मुझे मिला है, मुनिको स्वर्ग जानें से और बिना पंख आदि के हमको अधिक चिन्ता होती थी, चिन्ता के मारे मैं अपने मरने को उद्योग करता था परन्तु मुनि के बचन से चित्त में धर्य आ जाता रहा, मैं रावण के पराक्रम को जानता हूं सुपार्श्व मेरे पुत्र भी उसमें पराक्रम कम है, क्यों की सीताजी के विलाप को सुनकर रावण से युद्ध का हठ ठाना परन्तु रावणबिनय करके चला गया, ऐसा कह कर गिद्ध उछलने लगा, बानरों के दर्शन से अपने को नया पंख पाकर प्रसन्नता पूर्वक बानरों से बोला कि राजर्षि निशाकर की कृपा से सूर्य के तेज से जला हुआ हमारा पंख फिर भी आज हमको मिला, अब मैं पहिले के समान पराक्रमी होगया। लंकपुरी में जाकर सीता को ला सकता हूं ए बानरों से ऐसा कह कर पर्वत के शिखर से उतर कर सीता को खोजनेके लिये इच्छा किया, पक्षियों का राजा संपाति वायु के समान पराक्रमी सीता को खोकने के वास्ते लंका पुरी को जानेकी इच्छा किया।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किंधाकाण्डे त्रिषष्ठितमः सर्गः ॥ ६३ ॥

गिद्धराज संपाति इस प्रकार सीताजी के वृत्तान्त को बानरों से कह कर उन लोगों की सहायता का उद्योग करने लगा गिद्ध के मुख से रावण के गृह में सीताजी का निवास सुनकर बानरों की सेना प्रसन्न होगयी और सीता के दर्शन की अभिलाषा से समुद्र के किनारे आये, यहां आकर तीनों लोक के प्रतिबिम्ब के समान समुद्र को देखे कि जहां जल की राशि खड़ी है कि कहीं तो जल का वेग अशान्त है और कहीं बड़े बड़े तरङ्ग उठते हैं ऐसे दुर्गम समुद्र को देखकर बानरों का रोम खड़ा हो गया और समुद्र के उत्तर दिशा में खड़े होकर बानर गण विषाद करने लगे कि आकाश के समान यह समुद्र पार होने योग्य नहीं है किस

प्रकार लंका पुरी में जाकर सीता को देखूं, बानरों के इस प्रकार विषाद को सुनकर उनको धैर्य देकर अंगदजी बोले, विषाद को करना उचित नहीं है जैसे क्रोधित सर्प का बालक भी पुरुष को नाश करता है वैसेही विषाद करने से पुरुष का बल पराक्रम तेज ज्ञान सभी नष्ट होता है और पुरुषार्थ की सिद्धि नहीं होती । उस रात को बीत जाने के बाद बानरों के सहित अंगदजी फिर विचार करने लगे, वह बानरों की सेना अंगद के चारो ओर इस प्रकार खड़ी हुई जैसे इन्द्र को घेर कर मरुत् लोग खड़े होते हैं सेना की सबलता से अंगदजी कहने लगे कि हनुमान अंगद को छोड़कर कौन ऐसा है कि जो इस सेना के सामर्थ्य को रोक सके, इसके बाद बानरों में वृद्ध जांबवान को देखकर अंगदजी बोले, कि इन बीरों में कौन ऐसा है जो इस समुद्र को लांघकर सीता को खोज करे और सुग्रीव के बचन का पालन कर सके, हम सब बलवानों में किसे सामर्थ्य है जो सौ योजन पर जाकर सीता का दर्शन करे और हम सब बानरों को श्रीरामजी के अमोघबाण के भय से निर्भय करे और जिस बलवान के कार्य से हम सब लोग प्रसन्न होकर सुग्रीव तथा रामचन्द्र व लक्ष्मणजी के समीप जाऊं । अंगदजी के बचन को सुनकर सबके सब बलवान बिस्मित हो गये, उन वीरों की यह दशा देखकर जांबवान आदि से गिर अंगदजी बोले, हे बलवान् ! आप लोग वीरों में श्रेष्ठ हैं व दृढ़ पराक्रमी तथा कुलीन और पूजा के योग्य है जिसमें जो कुछ शक्ति हो उसको आप लोग कहिये ।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे चतुःषष्ठितमः सर्गः । ६४ ॥

अंगदजी के बचन को सुनकर गज गवाक्ष गवय शरभ गंधमादन मैन्द द्विविद अंगद जांबवान आदि प्रधान बीर अपनी अपनी शक्ति को उत्साह पूर्वक कहने लगे । गजनाम बानर बोले, कि मैं दश योजन तक जा सकता हूं, गवाक्ष बोले, मैं बीस योजन जा सकता हूं शरभ नाम के बानर ने कहा मैं तीस योजन तक जासकता हूं, ऋषभ ने कहा मुझे चालीस योजन जाने की सामर्थ्य है गंधमादन नाम के बानर

बोले, मैं पचास योजन तक जासकते हैं, मैन्द कहने लगे कि साठ योजन तक जाने की मुझे शक्ति है, महापराक्रमी द्विविद नाम के बानर बोले, कि हम सत्तर योजन तक जाऊंगा। महाबली सुषेण बोले कि हमें अस्सी योजन तक जाने का पराक्रम है इन बीरों के पराक्रम को सुनकर बानरों में वृद्ध जांबवान बोले, कि पहिले जो कुछ पराक्रम था वह तो आज नहीं कि श्रीरामजी के और सुग्रीव के कार्य को साधन करें, इस समय जितना पराक्रम हमको है उसको सुनिये इस समय हम नब्बे योजन तक जासकता हूं इससे अधिक पराक्रम हमारे में नहीं तो। इसके पहिले बालि के यज्ञ में पृथिवी को दान लेकर जब भगवान ने पृथिवी को नाप किया है तब मैं भगवान् के चरण की प्रदक्षिणा किये थे परन्तु इस समय वृद्ध हैं पराक्रम हमारा घट गया है, अब हमारे इतना पराक्रम से रामजी के कार्य की सिद्धि नहीं होगी। जांबवान के बचन को सुनकर अंगदजी बोले, कि मैं सौ योजन समुद्रको लांघ कर उसपार जासकूंगा परन्तु आने की शक्ति मुझको नहीं रहैगी, अंगदजी के बचनको सुनकर जांबवान बोले, हे अंगदजी ! आप का सामर्थ्य मालूम हुआ आप अवश्य समुद्र के पार आ जा सकते हैं, हे अंगदजी ! यह सेना आप के अधीन है आप इसके स्वामी हैं, आप इस सेना का पालन करिये, आप हम सब बानरों के स्वामी होकर जाने का उद्योग न करिये, क्यों कि नीति के जानने वाले पंडितों का यह कहना है कि मूल धन की रक्षा करना चाहिये मूलधन की रक्षा करने से अनेक प्रकार के फल की सिद्धी होती हैं, आप हम लोगों को मूलधन हैं इस लिये आपकी रक्षा हम लोगों को करना चाहिये आपही श्रीरामजी के कार्य को साधन करने में कारण है इस प्रकार जांबवान के वचन को सुनकर अंगदजी बोले, हे बानरों में श्रेष्ठ जांबवान ! यदि मैं समुद्र के पार नहीं जाऊंगा और सीता का समाचार नहीं मालूम होगा तो हम लोगों का मरण यहीं होने से कुशल होगा अथवा बिना सीता के सन्देश को लिये सुग्रीव के समीप चलने से भी प्राण नाश होगा, बिना समुद्र के पार गये दूसरी कोई गति नहीं है

अंगदजी के बचन को सुनकर जांबवान उत्तम बचन से अंगद को धैर्य दिया हे वीर आपका कार्य निन्दनीय नहीं है, आप की आज्ञा से यह हनुमान आदि महाबीर कार्य का साधन करैंगे यह कह कर बानरों की सेना प्रसन्न होकर हनुमानजी से बोले ।

इति बाल्मीकिये रमायणे किष्किन्धाकाण्डे पंचषष्ठितमः सर्गः ॥६५॥

बानरों में देशकाल तथा शास्त्र ज्ञान में परम प्रवीण एकान्त में बैठे हुए हनुमानजी से जांबवान बोले, हे बीर ! तुम क्यों नहीं बोलते हो । तुम सुग्रीव के समान पराक्रमी हो, तेज और बल में रामचन्द्र तथा लक्ष्मण के समान हो, जैसे पक्षियों में गरुड़जी श्रेष्ठ हैं वैसे बानरों में आप बलवान् हैं, जैसा कि पराक्रम गरुड़ के दोनों पंख में है वैसा पराक्रम तुमारे दोनों भुजा में है तुमारे समान बलवान् इन बानरों के मध्य में कोई नहीं है, तो इतने बलवान् आप समुद्र लांघने को क्यों नहीं उद्योग करते हैं, अप्सरा में श्रेष्ठ पुंजिक स्थला नामकी अप्सरा अंजना नाम से बिख्यात थी, वही अप्सरा केसरी की स्त्री है अंजना के रूप और सौन्दर्य तीनों लोक में बिख्यात है वह पुंजिक स्थला ऋषि के शाप से बानरी का जन्म पाया तौभी देवता के समान रूपवती थी । बानरों में बीर महात्मा कुञ्जर की वह कन्या थी, एक समय मनुष्य के रूप को धारण करके बिचित्र माल्य और अलंकार को धारण करके वर्षाकाल में शोभा को देखने के लिये पर्वत के शिखर पर आकर खड़ी हुई । इतने में वायु अपने झकोरे से अंजना के वस्त्र को उसके अंग से हरण किये, उसकी बिशाल जंघा और ऊंचे स्तन को तथा चन्द्रमा के समान उज्वल मुखको देखकर वायु देवता मोहित होकर उसको अपने हृदय से आलिंगन किये, और काम बाण से पीड़ित होकर उसके अंग में प्रवेश किये, पवन देवता को क्रीड़ा में प्रवृत्त देखकर अंजना बोली कि तुम कौन हो जो हमारे धर्म को नाश किये, अंजना के बचन को सुनकर पवन देवता बोले, हे प्रिये ! तुम कुछ भय मत करो, जो हमने मन से तुमारे संगबिहार किया है इससे तुमको महातेजस्वी बलवान् परा-

क्रमी हमारे समान एक पुत्र होगा, इस प्रकार अंजना को सन्तुष्ट करके वायु देवता चल गये, उनके जाने पर अंजना ने पर्वत की गुहा में तुमको उत्पन्न किया जन्मग्रहण करने के बाद बालि सूर्य को देखकर फल जान कर आकाश मार्ग से पहुंच कर उनको निगल गये और सूर्य से तेज से तुमको कुछ भी विषाद नहीं हुआ । सूर्य की निगलने केलिये एकाएक अन्तरिक्ष का गमन देखकर क्रोध युक्त होकर इन्द्र ने तुम्हारे ऊपर वज्र को फेंका, पर्वत के शिखर पर बैठे हुए तुमको उस वज्र से तुम्हारा वामां हनु (गाल) टूट गया उसी से तुम्हारा नाम हनुमान है, तुमको नितह देखकर पवन देवता क्रोध करके अपना चलना बन्द किये वायुको चलने से तीनों लोक क्षुभित हो गया तब पवन देवता को प्रसन्न करने के लिये ब्रह्माने तुम्हें वरदान दिये समर में शस्त्र से तुम्हारा मरण नहीं होगा. इसके बाद वज्र को फेंकने से इन्द्र लज्जित होकर तुमको बरदान दिये कि तुम्हारा स्वच्छन्द मरण होगा, तुम वायु के पुत्र हो, पवन देवता के समानतेज बल ज्ञान पराक्रम और लांघने की शक्ति तुम्हारे में रहेंगी । इस लिये तुम समुद्र लांघने का उद्योग करो। भगवान् के त्रिविक्रम अवतार के समय में मैंने इक्कीस बार इस पृथिवी की प्रदक्षिण किया है अब इस समय वृद्ध व पराक्रम हीन है अब हम लोगों में आपही श्रेष्ठ और शक्तिमान हैं इससे आप उठिये और समुद्र को लांघने का उद्योग करिये, बानरों को इस प्रकार कहने से हर्षित होकर पवन के पुत्र हनुमानजी अपना रूप धारण किये ।

इति बाल्मीकीये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे षट्षष्ठितमः सर्गः ॥६६॥

जांववान आदि बानरों के कहने से रामजी के कार्य के वेग से हनुमान ने जंभाई लेकर अपने शरीर को बढ़ाने के लिये और समुद्र को लांघने के लिये महेन्द्र पर्वत आरोहण किये, और शोक को त्याग करके प्रसन्नता पूर्वक शरीर को वृद्धि किये हनुमानजी के चरित्र को देखकर बानर उनकी स्तुति करने लगे और हनुमानजी अपनी पोंछ व शरीर से पृथिवी आकाश से मिलकर एकाकार होगये, जैसे पर्वत

की गुहा में से सिंह ने जंभाई लेता है वैसे वायु के पुत्र हनुमान के जंभाई लेने लगे, और तपाये सोना के समान स्वच्छ शरीर से जांववान आदि वृद्ध बानरों को प्रणाम करके जैसे बनकी आग से पर्वत पीड़ित हो जाते हैं वैसे हनुमानजी अपने बलसे महेन्द्र पर्वत को पीड़ा देते हुए बोले, कि हमको ऐसा उत्साह होता है कि किसी एक स्थान में क्षण भर भी विश्राम न करके पर्वत नदी समुद्र आदि को लांघते हुए एक हजार प्रदक्षिणा पृथिवी की करें और गरुड़ की नाई एक फलांग में उदयाचल से अस्ताचल को जा सकते हैं। ग्रह नक्षत्र तारा आदि आकाश में रहने वालों के सहित अति क्रमण कर सकता हूँ तथा इन्द्र वरुण यम कुवेर आदि लोक पालों के सहित पृथिवी को पाताल भेज सकता हूं समुद्र को सुखा सकता हूं पर्वतों को चूर कर सकता हूं, सुमेरू पर्वत के समान विशाल पराक्रम को तुम सब बानर देखो। और तुम लोग प्रसन्न होओ मैं जानकी को देखूंगा, हजार योजन को लांघना हमारे लिये कठिन नहीं है।

कवित्त ।

बारि टारि डारौं कुंभ कर्णहि बिदारि डारौं, मारौं मेघनादैं आजु यों बल अनन्तहौं।
कहैं पदमाकर त्रिकूटही को ढाहिडारौं, डारत करेई यातु धानन को अन्तहौं॥
अच्छहि निरच्छकरि उच्छहि उचारौंके इमि, तोणतिच्छ तुच्छनको कछु बैनगन्तहौं।
जारि डारौं लंकहि उजारि डारौं उपवन फारि डारौं, रावण को तौमैं हनुमन्तहौं॥

बानरों में श्रेष्ठ हनुमानजी को गर्जना को सुनकर बानर गण प्रसन्न होगये, जाति के शोक को नाश करने वाले हनुमानजी के बचन को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक जांववान् बोले, हे वायु के पुत्र वीर ! हे तात ! तुमने अपने पराक्रम से हम लोगों के शोक को नाश किये, अब आप रामजी के प्रसाद से समुद्र के पार जाइये हम लोग एक पग से खड़े होकर आपके आगमन की प्रतीक्षा करैंगे, इसके बाद बानरों के राजा वायु के पुत्र हनुमानजी इन्द्र के समान पराक्रमी हनुमान महेन्द्र पर्वत के शिखर पर पहुंचे महात्मा हनुमान जब हाथ से पर्वत को ताडित किये तब सिंह के भय से व्याकुल होकर जैसे हाथी भाग जाती है वैसे ही हनुमानजी के भय से पर्वत वासी गंधर्व विद्याधर

आदि पर्वत को छोड़ कर भाग चले, मृगा आदि पशु पक्षी भय से त्रासित होकर भाग गये, वृक्ष पर्वत और पृथिवी हिलने लगी, पर्वत के शिखर टूट कर गिर पड़े, वेग सहित महात्मा महावीर शत्रु को नाश करने वाले हनुमान मनको समाहित करके हाथ और पैर के अंगुठा के बल से उड़कर लंकापुरी में जाने का बिचार किये ।।

इति बाल्मीकिये रामायणे किष्किन्धाकाण्डे सप्तषष्ठितमः सर्गः ॥६७॥

किष्किन्धाकाण्डः समाप्त ॥ ४ ॥

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

बाल्मीकिय रामायण हिन्दी भाषा

सुन्दरकाण्ड ।

शत्रुओं को नाश करने वाले श्रीहनुमानजी रावण से हरी गई सीता को खोजने के लिये देवतों के मार्ग से अर्थात आकाश मार्ग से जाने की इच्छा किये, उस समय दुष्कर (कठिन) काम करने वाले बानरों में श्रेष्ठ हनुमानजी समुद्र के सन्मुख गर्दना को उठाये बड़े भारी वृषभ (बैल) के समान शोभा को धारण किये, वैडूर्य मणिके समान हरियालि समुद्र के किनारे की घासोंपर महाबीर धीर हनुमान टहल ने लगे । पक्षियों को भय देते अपने अंग से वृक्षों को तोड़ते बुद्धिमान हनुमान सिंह के समान जान पड़ते थे, नीलम पन्ना हीरा आदि धातुओं से अलंकृत और भांति भांति के भूषण वस्त्र से अलंकृत हनुमान जी गज राजा की शोभा को धारण किये । इसके बाद इन्द्र वरुण यम कुबेर पृथिवी आदि देवतों को नमस्कार करके हनुमान जी चलने की इच्छा किये, पुनः पूर्व मुख होकर अपने पिता पवन को नमस्कार करके दक्षिण दिशा को शरीर बढ़ाये, समुद्र को लांघने की इच्छा करते हुए बानर हनुमानजी को देखे कि श्री रामजी के कार्य की वृद्धि के लिये पूर्णीमा के चन्द्रमा के समान हनुमानजी शरीर को बढ़ाते हैं, इतने में उछलने की इच्छा से हनुमानजी की शरीर इतनी बढ़ी की उनके पैर के भार से पर्वत नीचे को धंसने लगा, और हनुमाजी के भार से एक प्रहर तक वह पर्वत हिलता रहा जिस से पर्वत के वृक्षों के फूल फल टूट टूट कर नीचे गिर पड़े उन वृक्षों से गिरे हुए फूल की ढेर से वह पर्वत फूल ही का मालूम होने लगा और उस पर्वत से जल की धारा बहने लगी जैसे हाथी के कपोल से मद गिरता है, और हनुमानजी के भार से दबे हुए पर्वत में सोने चाँदी

आदि के खान झलकने लगे, और बड़े बड़े चट्टान पर्वत से छूट कर गिरने लगे जैसे आग के बीच से धुआं निकलता है, पर्वत के नीचे धँसने से जितने देवता गंधर्व किन्नर आदि उसकी गुहा में रहते थे उन लोगोंका एकाएक ऐसा शब्द हुआ कि जिससे दिशाभरगईं, और गुहा में निवास करने वाले सर्प भयसे बाहर निकल कर क्रोध युक्त पत्थल की शिलाओंको दांतसे काटने लगे, और उन सर्पों के मुखसे निकले हुए विषको संजिविनी आदि औषधी नहीं शान्त करसकती थी, और उस महेन्द्र पर्वत पर विहार करने वाले गंधर्व, विद्याधर पर्वत का धंसना देखकर मदिरा पीने व भोजन करने व जल पीने तथा पान आदि के सोने चांदी के जड़ाऊ वर्तनों को तथा खाने पीने के वस्तुओं को और खड्ग आदि को छोड़कर आकाश मार्ग से अपने लोक को चले उनकी स्त्रियां अपने पैर के पायजेब घुघुनु छड़ा बिछुआ आदि शृंगार के सामान को पर्वत धसने के भय से वहीं छोड़कर अपने पति के संग आकाश मार्ग में विमान पर खड़ी होकर चरित्र को देखने लगीं। और अपनी अपनी स्त्रियों के सहित विद्याधर गंधर्व किन्नर देवता महर्षि गण आकाश में खड़े होकर देखने लगे व देवतों के शब्द को सुनने लगे। इसके बाद पर्वत के ऊपर विशाल शरीर को धारण किये हनुमानजी को देखकर आपस में कहने लगे कि देखो यह पर्वताकार महा वेगवान वायु के पुत्र हनुमान श्रीरामजी के कार्य को साधन करने के लिये अति कठिन कर्म से समुद्र को लांघना चाहते हैं, तपस्वियों के इस प्रकार बचन को सुनकर विद्याधर विशाल शरीर को धारण किये बलवान बानर को पर्वत पर देखने लगे कि, उस समय हनुमानजी भयंकर मेघ के समान हनुमानजी गर्जना करने लगे, उछलने के समय हनुमानजी पूंछ उठा कर हिलाए उस समय पूछकी ऐसी शोभा हुई मानो गरुड़ सर्प को पकड़ कर हिलाते हैं, इस स्वरूप में होकर हनुमानजी सागर को लांघने के समय अपने परिघ के आकार होकर हाथ को दृढ़ किये और कमर नीचा करके पैर को सिकोड़ लिये व भुजा गर्दना

आदि को सिकोड़ कर साक्षात् गरुड़ पक्षी के समान मार्ग को दूर से देखकर आकाश की ओर टक टकी बांधदी हृदय में प्राण को रोक कर अपने पगको दृढ़ किये तथा कान को खड़ाकर बानरों से बोले कि जिस वेग से श्रीरामजी के बाण जाकर शत्रु को नाश करते हैं उसी बाण के वेग के समान मैं लंकापुरी में जाऊंगा और अपने आंख से जानकी का दर्शन करूंगा। यदि लंकापुरी में सीता को नहीं देखूंगा तो इसी वेग से मैं इन्द्र वरुण यम कुबेर आदि लोक में जाकर सीता की खोज करूँगा। यदि वहां भी सीता को नहीं देखूंगा तो राक्षसों के राजा रावण को बांध कर सीता के सहित लाऊंगा, अथवा लंकापुरी को उखाड़ कर श्रीरामजी के पास लाऊंगा इस प्रकार बानरों में श्रेष्ठ हनुमान और बानरों से कह कर उछले, उनके उछलने से महेन्द्र पर्वत के वृक्षोंकी शाखा टूट कर पृथिवी पर गिर पड़ी, उछलते समय हनुमानजी अपनी जंघा के वेग से फूलसहि कुछ वृक्षकी डालियों को उखाड़ते अपने साथ लिये अन्तरिक्ष को चले गये, वृक्षोंकी शाखा हनुमानजी के पीछे इस प्रकार चलीं जैसे कि विदेश जाने वाले के साथ उनके बन्धु भाई जाते हैं, कुछ दूर तक हनुमानजी को पहुंचा कर पुष्प सहित वे वृक्षकी डालियां इस प्रकार जलमें गिर पड़ीं जैसे कोई अपने मित्र को कुछ दूर तक पहुंचा कर पुनः उदास होकर लौट जाता है, और उन वृक्षों के पुष्प उड़कर इस प्रकार समुद्र के जलको आच्छादित किया जैसे आकाश को तारागण आच्छादित करते हैं, हनुमानजी की अन्तरिक्ष में फैली हुई भुजायें इस प्रकार शोभा देने लगीं जैसे पर्वत की कन्दरा से दो मुहेंसर्प निकलते हैं बानरों में श्रेष्ठ हनुमान आकाश में इस प्रकार चले मानो समुद्र को साक्षात् पीरहे हैं, आकाश से चलते समय हनुमानजी की शरीर बिजली के समान चमकती थी आंख सूर्य चन्द्रमा के समान मालूम होते थे, संध्याकाल के सूर्य मण्डल के समान लाल नासिका से लाल कान्ति मुखकी और भी बढ़ती थी, पूंछ इन्द्र की ध्वजा के समान शोभित होतीथी, हनुमानजी को लंकापुरी में जाने

के लिये समुद्र लांघने के समय उनके कांख के बीच से जो घन घन शब्द होता था वह मेघ के गर्जने के समान सुनाई देता था, आकाश में जैसे पूंछ वाले तारा का उदय होता है वैसेही ऊपर को उठी हनुमानजी की पूंछ शोभा को प्राप्त हुई। चलते समय जो उनकी परछाहीं जल में दीख पड़ती थी वह पाल से भरी नौका के समान मालूम होता था। महा कपि हनुमानजी समुद्र के जिस जिस स्थानों पर जाते थे वह स्थान हनुमानजी के वेग से खल भलाय जाता था। और उनके छाती की धक्का से समुद्र की लहरों को तोड़ते हुए वेग से चले जाते थे, अति बलवान हनुमानजी के गमन से इस प्रकार प्रबल वायु चली की समुद्र कांप उठा, महा कपि हनुमानजी खारे समुद्र के लहरों कोलांघते इस प्रकार जाते हैं जैसे कोई उनकी गणना करे। समुद्रके क्षुभित जल से व्याकुल होकर समुद्र के जल जन्तु बाहर निकल कर दिखाई देने लगे समुद्र में निवास करने वाले सर्प गरुड़ के भयसे स्थान को छोड़ने की इच्छा किये। दश योजन मोटी तीस योजन की लंबी शरीर की छाया अत्यन्त मनोहर मालूम होती थी। जैसे पंख वाले पर्वत शोभायमान होते हैं वैसे आकाश में हनुमानजी शोभा को पाये। बलवान कपि कुंजर वेग पूर्वक जिस मार्ग से जाते थे उसी मार्ग से समुद्र को पनाश के समान बहाते थे। महा बली हनुमानजी कभी बादलों के बीच में घुस जाते कभी बाहर निकल आते कभी चन्द्रमा के समान दिखाई देते थे। वेग युक्त हनुमानजी को समुद्र के ऊपर दौड़ते देखकर देवता गंधर्व किन्नर यक्ष आदि हनुमानजी पर फूलों की वर्षा करने लगे। श्रीरामजी के कार्य सिद्धि के लिये जाते समय हनुमानजी के ऊपर सूर्य ने अपना प्रकाश छायायुक्त कर दिये, और हनुमानजी की सहायता के लिये पवन देवता उनके पीछे पीछे चले, वेग युक्त कपिको आते देखकर देव गण उनकी स्तुति करते थे और धन्यवाद देने लगे, इधर हनुमानजी को दौड़ने के समय समुद्र सोचने लगा कि इक्ष्वाकु वंशी राजा सगर के पुत्रों से हमारी उत्पति है, जो इस समय

हम वानरेन्द्र हनुमानजी की सहायता नहीं करैंगे तो लोकमें हमारी निन्दा होगी, इस लिये रघुनाथजी के दूत को थकावट दूर करने के लिये कुछ विश्राम देना चाहिये, जिसमें यह विश्राम करके सुखसे पार चले जावें, समुद्र ऐसा अपने मनमें सोच कर मैनाक पर्वत से बोला कि हे पर्वत राज हिमालय के पुत्र ! तुम राक्षसों को मारने वाले इन्द्रकी आज्ञा से पाताल में रहने वाले दैत्यों के द्वार को रोकने के लिये शिला रूप होकर स्थापित हो। हे पर्वत राज ! तुमको सब प्रकार से बढ़ने घटने की शक्ति है इस लिये तुम उठ कर श्रीरामजी के कार्य के लिये इस कठिन कार्य को करो, और वानर सिंह हनुमान जिससे तुम्हारे ऊपर विश्राम करके आगे को जावें मैनाक समुद्र के बचन को सुनकर बड़े वृक्ष व लताओं से संयुक्त होकर समुद्र से ऊपर को शीघ्र पर्वत निकला, समुद्र के जल के तरङ्ग को तोड़ता हुआ वह पर्वत इस प्रकार बाहर निकला जैसे बादलों के मध्य से सूर्य बाहर निकलते हैं, इस भांति ऊपर को निकलते हुए पर्वत के शिखर को हनुमानजी देखे, कि इस स्वर्ण मय शृङ्ग के ऊपर अप्सरा गंधर्व किन्नर विहार करते हैं और उदयाचल के सूर्य के समान आकाश को अपने शिखर से स्पर्श किये हैं, हनुमानजी ऊंचे शिखर से युक्त मैनाक पर्वत को देखकर यह विचारे कि यह पर्वत हमारे मार्ग में विघ्न देने के लिये मार्ग को रोकता है, यह सोच कर वेग से जाते हुए हनुमान पर्वत की ऊंचाई को देख अपने छाती से एक धक्का ऐसा दिया कि जिससे वह पर्वत नीचे को धंस गया जैसे हवाको चलने से बादल हट जाते हैं वैसे हनुमानजी के छाती से धक्का खाकर वह पर्वत नीचा होगया और हनुमानजी के पराक्रम से ताड़ित होकर वह मैनाक पर्वत मनुष्य का रूप धारण करके अपने शृंग पर खड़ा होकर हनुमानजी से बोला कि, आपने बड़ा कठिन कर्म किया है तौ भी मेरे शिखर पर आप विश्राम करके जाइये क्योंकि मैं समुद्र की आज्ञा से आपके स्वागत के वास्ते पाताल से यहां आया हूं और यह समुद्र रामजी के वंश से उत्पन्न है इस लिये रामचन्द्रजी के कार्य

साधन में तत्पर तुमको जान-कर तुम्हारी पूजा करता है क्योंकि उपकारी का प्रत्युपकार करना सनातन धर्म है, सो यह समुद्र आप का प्रत्युपकार करना चाहता है, सो तुम इनकी पूजा को स्वीकार करो। और हमारे शिखर पर विश्राम करके हमारे दिये हुए फल मूल को भोजन करके आगे के मार्ग को जाओ, आप गुण को ग्रहण करने वाले महापुरुष तीनों लोक में विख्यात हो। इसी बहाने हमारा भी परिचय आप से हो जायगा। और आप सब बानरों में मुख्य हैं, और बिना जाने भी अतिथि का पूजा करना चाहिये, तुम तो देवताओं में श्रेष्ठ महात्मा पवन के पुत्र हो और उन्हीं के समान पराक्रमी तथा धर्म को जानने वाले हो, तुम्हारी पूजा करने से पवन देवता प्रसन्न होते हैं इस लिये तुम हमारे पूजा करने के योग्य हो, इसका और भी कारण सुनो कि—पहिले सत्य युगमें सब पर्वत पंख को धारण करने वाले थे, पंख के कारण सब पर्वत गरुड़ के समान इधर उधर उड़करजाते थे, उन पर्वतों को उड़ने से इन्द्र को सन्देह रहता था कि ये पर्वत उड़कर जहां गिरेंगे वहाँ के जीव जन्तु को नाश करदेवगे, तब इन्द्र देवता ने कोपकर के हजारों पर्वतों के पंख को अपने वज्रसे काट डाले, फिर इस के बाद इन्द्रने वज्रको उठाये हमारे निकट आये तब हमे पवन देवता ने एका एक अपने बेग से उड़ाकर इस समुद में फक दिये और हमारे पंख की रक्षा करलिये, इससे हे वायु पुत्र! तुम हमारे माननीय हो और तुम्हारा हमारा यह सम्बन्ध बड़ा सघन है, हे महामति! इस समय हमारी और समुद्र की पूजा स्वीकार करने से हम दोनों में तुमारी बड़ी प्रीति होगी, तुम हमारे पूजा को अंगीकार करो, हमतो तुमारे दर्शन मात्रही से प्रसन्न हैं पर्वत के वचन को सुनकर हनुमानजी बोले, हे पर्वत राज! हम तुमसे प्रसन्न हैं, तुमने हमारा सत्कार भली भांति किया है। और अनजान में हमने जो तुम्हें छाती से दबाया है उसके अपराध को क्षमाकरो। मेरी प्रतिज्ञा कहीं ठहरने की नहीं है और हमको कार्य की अत्यन्त शीघ्रता है इस कारण विश्रामनहीं करसकते, ऐसाकह करहनुमानजी मैनाक पर्वत को हाथसे स्पर्श

करके हंसते हुए आकाश से कपिकुंजर चले, पर्वतराज मैनाक और समुद्र चलते समय हनुमानजी की पूजा किये और आशीर्वाद देकर आनन्दित किये, इसके बाद हनुमानजी कूदकर पर्वत और समुद्र को छोड़कर पुनः वायु के मार्ग से विमल आकाश के मार्ग को लेकर आगे को चले, हनुमानजी के इस कठिन कर्म को देखकर देवता गंधर्व अप्सरा आदि बड़ाई करने लगे, इधर मैनाक के कार्यको देखकर प्रसन्नता पूर्वक इन्द्र गद्गद् वाणी से मैनाक से बोले कि हे हिमालय के पुत्र ! हम तुम से प्रसन्न हो कर तुमको यह बरदान दिया कि जहां चाहो वहां सुख पूर्वक आओ, आज से तुम को हमारा भय नहीं होगा । महाराज दशरथ के पुत्र श्री रामचन्द्रजी के कार्य को सिद्ध करने के लिये हनुमानजी जाते हैं तुमने उनका अपनी शक्ति के अनुसार सत्कार करके हमको सन्तुष्ट किया है, इन्द्र जी के अभय दान के वचन को सुनकर उनको अपने ऊपर सन्तुष्ट देखकर मैनाक प्रसन्न हुआ, इधर हनुमानजी क्षण भरमें समुद्र के पार नगीचाये, इसके बाद देवगण आकाश मार्ग से हनुमानजी के साथ समुद्र के पार आकर सर्पों की माता सुरसा समुद्र के किनारे रहती थी उनसे बोले, कि यह वायु के पुत्र हनुमान सौ योजन के समुद्रको लांघकर लंका पुरी में जाने के लिये आते हैं तुम क्षण भर उनके कार्य में क्षण भर विघ्न करो, कि तुम अपनी शरीर पर्वत के समान ऊंची बड़े बिकराल दांत विशाल और पीले रंगका नेत्र करके राक्षसी रूप बनालो क्योंकि हम लोग उनके बल व पराक्रम को जानना चाहते हैं देखें वह अपनी चतुरता से तुमको जीत लेते हैं अथवा अपने पराक्रम से हत होकर विषाद को प्राप्त होते हैं । देवतों के इस प्रकार वचन को सुनकर नाग माता सुरसा ने समुद्र के बीच में अति भयानक राक्षस का रूप धारण किया और जाते हुए हनुमानजी को बीचसे घेरकर बोली, हे बानरोत्तम ! परमेश्वर ने तुम्हें मेरे भोजन के लिये आज भेजा है इस लिये हम तुमको भक्षण करेंगी तुम हमारे मुख में प्रवेश करो । और ब्रह्माजी

ने यह बरदान भी मुझे दिया है यह कहकर पवन कुमार के आगे मुंह फैला कर खड़ी होगयी। इस प्रकार सुरसा के वचन को सुनकर हनुमानजी हंसकर बोले, कि महाराज दशरथ के पुत्र श्री रामजी दण्डक बन में आये उनके साथ उनके लघु भाई लक्ष्मण और उनकी स्त्री सीताजी भी आईं उनको देखकर राक्षसों ने स्वाभाविक बैर कर लिया उन राक्षसों की सहायता में राक्षसों का राजा रावण उनकी स्त्री जानकी को हर लिया है, हम श्रीरामजी के दूत हैं उनकी आज्ञा से सीताजी को ढूढ़ने के वास्ते लंकापुरी को जाते हैं, तुम भी श्री रामचन्द्रजी के राज्य में रहती हो तुमको भी उनकी सहायता करना चाहिये, अथवा हम सत्य कहते है कि जानकी को देखकर उनका सन्देश श्रीरामजी से जब कह आवें तब तुम्हारे मुख में प्रवेश करेंगे। हनुमानजी के इस प्रकार वचन को सुनकर काम रूपिणी सुरसा बोली कि मुझे बरदान है कि मेरे सामने से कोई जीता नहीं जासकता है हनुमानजी का बल जानने की इच्छा से नागों की माता सुरसा ने कहा कि हे बानर! विना हमारे मुख में प्रवेश किये अब तूं नहीं जा सकेगा, ब्रह्माजी ने पूर्व समय में मुझे यही बरदान दिया है, यह कहकर सुरसा पवन कुमार के आगे मुंहको बायकर खड़ी होगई, सुरसा के इस प्रकार वचन को सुनकर हनुमानजी क्रोध युक्त होकर बोले कि तुम इतना मुंह बाओ जिसमें हम जासकें, हनुमानजी के वचन को सुनकर सुरसा भी क्रोधित होकर दश योजन का मुख फैलाया, तब हनुमानजी अपना भी रूप दश योजन का बनाये तब सुरसा ने बीस योजन का मुख बाया, तब हनुमानजी अपने बुद्धि के बल से बीस योजन के होगये, तीस योजन के विस्तार में हनुमान को देखकर सुरसा अपने मुंह को चालीस योजन का बनाया, तब हनुमानजी भयानक मुख सुरसा का देखकर अपने पचास योजन के होगये, तब सुरसा ने साठ योजन तक मुख फैलाया फिर हनुमानजी सत्तर योजन के होगये, तब सुरसा ने अस्सी योजन ऊँचा मुख फैलाया, तब सूर्य

के समान चमकने वाले हनुमानजी नब्बे योजन के होगये, तब सुरसा ने सौ योजन ऊँचा मुख फैलाया, तब कार्य में कुशल हनुमानजी मेघाकार अपनी शरीर को अंगूठे के बराबर छोटी बनाकर उस के मुख में पैठ कर बाहर निकल आये और अन्तरिक्ष में खड़े होकर यह बचन बोले कि हे राक्षायणी । हम तुम्हारे मुख में बैठ बाहर निकल आये तुमको नमस्कार है । अब जहां बैदेही है वहां जाते हैं तुमारा बरदान पूरा हो गया, जैसे राहूके मुखसे चन्द्रमा छूटकर जगत को ऊँजियाला करते हैं बैसे नाग माता सुरसाके मुखसे हनुमानजी को निकलते देखकर देवगण उनकी स्तुति व प्रशंसा करने लगे, हनुमानजी की चतुरता को देखकर सुरसा बोली कि हे बानर श्रेष्ट ! तुम सुखपूर्वक जाओ रामजी के कार्य को सिद्ध करोगे, सुरसा के इस प्रकार आशिष रूप बचन को सुनकर गरुड़ के समान पराक्रमी हनुमानजी आकाश मार्ग से महा दुस्तर समुद्र को उतरने लगे, वह समुद्रका मार्ग जलकी धारा से पक्षिगण गंधर्व विद्याधर किन्नर आदि से सेवित था, हनुमानजी का मार्ग ऐरावत सिंह व्याघ्र पतंग सर्प आदि वाहनों के चलने से तथा विमानों के आने जाने से सुशोभित था, उस सुन्दर स्थान को देवताओं को स्वर्ग से आने जाने के लिये ब्रह्माजी निर्माण किये थे, अत्यन्त वेग वाले हनुमानजी गरुड़ के समान उस मार्ग से गये, हनुमानजी बद्दलों के मार्ग से होकर जाते थे तो उनके चलने के समय उनके बेग से बद्दल भी खींचे चले जाते थे । उन बद्दलों को संग रहने से हनुमानजी कभी बद्दलों में छिपजाते थे कभी बाहर प्रकाशित हो जाते थे, और बद्दल काला लाल सफेद अनेक रंगके हो जाते थे, उस समय हनुमान जी वर्षाकालके चन्द्रमाके समान शोभित होजाते थे, पंख युक्त पर्वत के समान हनुमानजी को आकाश मार्ग से जाते देखकर सिंहिका नाम राक्षसी अपने शरीर को बढ़ाकर मनमें विचार ने लगी कि मैं बहुत दिन से भूखी हूं, आज बहुत दिन के बाद यह बड़ा भारी जीव हमारे वश में आया है, ऐसा विचार कर पवन तनय की छाया को पकड़

कर खींचने लगी। छाया को खींचने पर हनुमानजी विचारने लगे कि किसीने हमको साहसपूर्वक खींच कर पराक्रम व गति से हीन कर दिया है जैसे वायूका बड़ा भारी वेग जल में सन्मुख नौका को नहीं जाने देता ऐसा विचार कर उन महा कपिने चारो ओर दृष्टि को पसार कर देखा तो समुद्र के उस पारमें उठा हुआ एक बड़ा जीव दिखलाई दिया, उस विकराल मुखी राक्षसी को देखकर हनुमानजी विचारने लगे कि सुग्रीवजी ने हम से कहे थे कि दक्षिण समुद्र के किनारे एक बड़ा जीव है जो छाया को पकड़कर खींच लेता है सो यही है इसमें सन्देह नहीं है ऐसा विचार करके हनुमानजी अपने शरीर को ऐसा बढाये कि जैसे वर्षा काल में बादल बढ जाते हैं, हनुमानजी की विशाल शरीर को देखकर उस राक्षसी ने अपना मुख ऐसा फैलाया कि उसका एक ओठ पाताल में और दूसरा आकाश में लग गया। और बादल के समान गर्जती हनुमान के पीछे दौड़ी. हनुमानजी ने उसका विकराल मुख देखकर जाना कि हमारी शरीर इसके मुख में घुस जायगी, यह सोच कर उसके विकराल मुख में वज्र के समान पुषाङ्ग कवि शरीर को छोटा करके उसके मुख में पैठ गये, पैठते समय हनुमानजी को देवतों ने देखा, कि जैसे राहु चन्द्रमा को निगल जाता है वैसे राक्षसी हनुमानजी को निगल गई, हनुमानजी राक्षसी के उदर में जाकर अपने तीखे नखों से उसके उदर के हड्डियों को काटने लगे और बड़े पराक्रम से वेग युक्त होकर बाहर निकल आये और उसको मार कर उसका प्राण निकाल लिये, उस सिंहिका राक्षसी को हनुमानजी के शक्ति से मरते देखकर आकाशचारी देवगण हनुमानजी से बोले, कि हे बानर श्रेष्ट! आज इस बड़े जीव को मार कर तुमने बड़ा कठिन काम किया अब शीघ्र जाकर अपना अभीष्ट कार्य साधन करो, अब तुमको कोई विघ्न नहीं होगा। हे कपिराज! जिसको इस प्रकार ज्ञान बल पराक्रम व चतुरता है उसको कोई कार्यकठिन नहीं है, देवताओं से पूजित हनुमान अपना प्रयोजन सिद्ध करने के लिये गरुड़ के समान आकाश मार्ग से चले, और थोड़ी देर

में समुद्र के पार पहुंच कर सौ योजन के बाद समुद्र के दक्षिण किनारे पर एक बड़ी भारी बनकी श्रेणी को देखे, उस बनमें अनेक प्रकार के वृक्ष लता पशु पक्षी मृगा सागर नदी आदि को देखे, वहां किनारे पर पहुंच कर अपनी बहुत विशाल शरीर देखकर हनुमानजी सोचने लगे कि इतनी लंबी हमारी शरीर देखकर राक्षस लोग हंसेंगे और कोलाहल अधिक होने से कार्य में विघ्न होगा। यह सोच कर हनुमानजी अपनी बड़ी शरीर को त्याग करके छोटा शरीर धारण कर लिया जैसे योगी पुरुष अपने स्थूल शरीर को छोड़ कर नित्यानन्द स्वरूप अति सूक्ष्म रूप धारण कर लेते हैं, हनुमानजी अपनी विशाल शरीर को छोड़कर छोटा रूप इस प्रकार धारण किये जैसे भगवान ने विराट रूप को त्याग करके वामन रूप को धारण किये, हनुमानजी अत्यन्त छोटा रूप धारण करके समुद्र के किनारे बैठ कर सीता को खोजने का उपाय सोचने लगे, विचार करके अपने मनमें यह निश्चय किये कि अब कार्य सिद्ध होगा, ऐसा अपने मनमें विचार करके हनुमानजी त्रिकूट पर्वत के शिखर पर कूद कर चढ गये, और अपना सूक्ष्म रूप धारण करके समुद्र के पार होकर पर्वत के ऊपर बैठ कर इन्द्रकी अमरावती के समान लंकापुरी को देखने लगे तथा वहां के पशु पक्षी को व्याथित करने लगे।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

महा बली हनुमानजी भयानक समुद्र को अपने पराक्रम से लांघ कर त्रिकूट पर्वत के निकट स्थिर हो सावधानता से लंकापुरी देखे, उस स्थान पर वृक्षों से गिरे हुए पुष्पवृष्टि से साक्षात पुष्प के ही होगये। हनुमानजी अपने बलसे सौ योजन की लंकापुरी लांघ गये तो भी उनके थकावट नहीं आई क्योंकि मार्ग में वह सोचते जाते थे कि हम तो सौ योजन से अधिक लांघ सकते हैं, मर्यादा से बंधे हुए सौ योजन के समुद्र को लांघने में क्या है, इससे बलवानों में श्रेष्ठ हनुमानजी बड़े वेग से समुद्र को पार करके लंकापुरी को गये। वहां बन वृक्ष लता

आदि की विचित्र शोभा को देखते हुए उस बनमें विचरने लगे। और उस बनमें साखू कंदैल खजूर चिरौंजी खिन्नी नारियल अंगूर केला मुचकुन्द कुरैया केतकी मरीच दास लीची कदम्ब शतावरि असन को विदार कैंद् चंपक चन्दन आम्र निंब मौसरी महुआ वट सुपारी पिप्पल बांस आदि के पुष्प देने वाले तथा मालती माधवी जूही शिवलिंगी लाजवन्ती आदि पुष्पित लता लगी हैं उन वृक्षों पर अनेक रंग के पशु पक्षी सुन्दर बचन बोलते हैं, शीतल मन्द सुगन्ध वायु वह रहा हैं, अनेक प्रकार के जलाशय में कमल फूले हैं, उस उपवन की विचित्र शोभा देखते हुए लंकापुरी के निकट पहुंचे, उस पुरी के चारो ओर गहरी खाई थी, उनमें अनेक रंग के कमल फूले हैं, और सीता की रक्षा के लिये पुरी के चारो ओर अस्त्र शस्त्र के सहित रक्षा करते थे, सोने के लंकापुरी में अनेक प्रकार केशहर बने थे, रत्नों से जडित अनेक मन्दिर बने थे, लाखों अटारियों से लंकापुरी पूर्ण हो रही थी मन्दिरों और ऊंचे शिखरों पर ध्वजा पताका फहराती थी, सोने के पत्तों के बंदरवार हर एक द्वार पर बंधेथे, हनुमानजी ने इन्द्रपुरी के समान लंकापुरी को देखा, इस लंकापुरी को विश्वकर्मा से बनाये थे और वह पुरी त्रिकूट पर्वत के शिखर पर बैठी थी उस पुरी का पालन राक्षसों का राजा रावण करता था, उसपुरी के चारो ओर शहर पनाह खाई जलाशय बन अटारी आदि से शोभित लंकापुरी को मानो विश्वकर्मा ने सकल सौन्दर्य को इकट्ठा करके बनाये थे, उसी लंकापुरी के उत्तर फाटक पर पहुंच कर विचारने लगे कि यह पर्वत कैलास के समान ऊंचा है, और उस पर अनेक प्रकार के मन्दिर बन कर आकाश को घेरे हैं, इसके उपरान्त राक्षसों की सेना को देखकर हनुमानजी विचार ने लगे कि यदि सब बानर लोग यहां चले आये होते तो निरर्थक था क्योंकि यह लंका युद्ध में देवताओं के भी जीतने योग्य नहीं है, क्योंकि राक्षसों से रक्षित अति दुर्गम लंकापुरी में महा बाहु रामचन्द्रजी भी आकर क्या करेंगे, इनके निकट साम दान भेद का अवकाश भी कुछ नहीं कर सकता

है, और न युद्ध का कोई उपाय दिखाता है, इतनी बानरों की सेना में से चारही बानर कुछ कार्य कर सकते हैं, अर्थात् मैं अंगद सुग्रीव नील की गति है, तब हमको पहिले सीताजी की खोज करके यह जानना चाहिये कि जानकी जीती हैं या नहीं, यदि जानकी के दर्शन हम को होंगे तो मैं उन्ही के समीप बैठ कर इसका विचार करेंगे, इस प्रकार त्रिकूट पर्वत के शिखर पर बैठ कर श्रीरामचन्द्रजी की शुभ कामना में लीन हनुमानजी मुहूर्त भर इसका बिचार किये, कि इस रूप से महा बलवान अथवा क्रूर स्वभाव वाले राक्षसों के मध्य में हम नहीं पैठ सकते, इससे जनकी को ढूंढने वाले हनुमान ने पराक्रमी राक्षसों से छल करने की इच्छा किये कि समय आगया है और कार्य को सिद्ध करना है तो ऐसा रूप बनावें जिसमें हम सब को देखें और हमको कोई न देखे और रात्रि काल में लंकापुरी मेंप्रवेश करें। क्योंकि देवता व राक्षसों से पूर्ण लंकापुरी को देखकर लंबी श्वांस लेकर हनुमानजी बार बार विचार करने लगे कि किस उपाय से हम जानकी को ढूंढें जिसमें दुरात्मा रावण हमको न देख सके। और किस उपाय से हम रामचन्द्रजी का कार्य करें जिसमें हमारे साथ राक्षसोंका युद्ध न हो हम एकान्त में जानकीजीका दर्शन करूं, क्योंकि जब दूत डराकू होता है तब देश काल के विरोध से सिद्ध होता भी कार्य नष्ट होता है जैसे सूर्य के उदय से अन्धकार नष्ट हो जाता है, इस लिये जो दूत अपने को ज्ञानी व पण्डित जान कर स्वामी का कार्य नष्ट कर देते हैं, और कर्तव्य व अकर्तव्य विषय में बुद्धि निश्चय स्थिर नहीं होती, इस कारण कौनसा उपाय करें जिसमें कार्य भी नष्ट न हो, हमे भी व्याकुलता न हो और समुद्रका लांघना वृथा न हो, यदि हमको राक्षसों ने देख लिया तो महा ज्ञानी रावण के विनाश को इच्छा करने वाले श्रीरामचन्द्र का कार्य नष्ट हो जायगा, यहां ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां हमें राक्षस न देख सकें यदि राक्षस का रूप धारण करेंगे तो भी राक्षसों के मध्य में प्रगट हो जायंगे, क्योंकि यहां तो गुप्त हवा भी नहीं चल सकती यहां के राक्षसों से कोई बात गुप्त

नहीं है, यदि हम अपने ही रूप से यहां प्रवेश करें तो हमारी मृत्यु हो जायगी और स्वामी का कार्य नष्ट हो जायगा । इस लिये हम रामचन्द्रजी के कार्य को सिद्ध करने के लिये अति सूक्ष्म रूपको धारण करके रात्रिही में लंकापुरी में प्रवेश करेंगे, और उस दुरात्मा रावण के मन्दिर में ढूढकर पीछे और मन्दिरों में खोज करूंगा, यह निश्चय करके हनुमानजी सूर्यास्त समय में श्रीजानकीजी के दर्शन की इच्छा किये, जब सूर्य भगवान अस्त हो गये तब रात्रिकाल में छोटा रूप धारण करके उस पुरी के सुन्दर राज मार्ग से हनुमानजी लंकापुरी में पैठे । वहां जाकर देखने लगे कि सोने के खंभों के बड़े बड़े राजमन्दिर बने थे, जिनमें सब स्वर्ण के झरोखे भी थे, इसलिये वह पुरी गंधर्वों के नगर के समान दिखलाई देती थी स्फटिक मणि व सुवर्ण के स्थलों से मन्दिरों की शोभा अधिक होती थी । और सोने के पत्तों के वन्दनवार मन्दिरों के चारो ओर लटके हैं इससे वह पुरी अधिक शोभाय मान थी ऐसे सात आठ खंभ के ऊंचे महलों पर चढ़कर हनुमानजी वह महा पुरी देखे, इस प्रकार अद्भुत और अचिन्तनीय लंका पुरी को देखकर हनुमानजी हर्षित हुए परन्तु उन महलों में सीताजी को न देखकर उदासीन हो गये, सूर्य भगवान अपने हजार किरण से उस पुरी में उजाला करते थे, मन्त्रियों के सहित राक्षसों को राजा रावण उस पुरी का पालन करता था । उज्वल शंख दूध तथा कमल के समान उज्वल उस पुरी को देखकर हनुमानजी विचित्र शोभा को धारण किये ।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दर काण्डे द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥

उज्वल मेघ के समान ऊंचे शिखरों पर जाने के योग्य पराक्रम को पाकर महाबली पवन कुमार रात्रिकाल में लंकापुरी में जाकर रावण से पालन की गई अत्यन्तसुन्दर व मनोहर तथा अनेक प्रकार के बन उपबन सरोवर आदि संयुक्त नगरी को देखे, वह उसपुरी के उज्वल मन्दिर शरत्काल के मेघों के समान शोभायमान थे, समुद्र के जल से पवित्र शीतल वायु उसी पुरी में चलता था, कुबेर की अलका पुरी के समान

सेना से दृढ़ थे, और बाहर के द्वारपर मतवाले हाथी असंख्य बंधे थे। सर्पों के भोगवती पुरी के समान लंकापुरी के चारो ओर नाग और राक्षस रक्षा करते थे। जैसे बादलों के मध्य में बिजली की शोभा होती है वैसे उन सर्प राक्षसों के मध्य में वह पुरी बिजली के समान चमकती थी। उस पुरी के चारो ओर सोने के दीवार की खाई बनी थी। दासियों को आने जाने से किंकिणी का शब्द उस पुरी की शोभा को और भी बढ़ाये थी। ध्वजा पताका हर एक स्थानों पर लगे थे, स्फटिक मणि व मोतियों की झालर द्वारपर लगे थे, और तथा ये सोने के रत्न से जड़ित हाथी बनाकर द्वारपर धरे थे, अंटारियों पर चढ़ने की सीढ़ियां सब मणियों की बनी थी फाटकों पर क्रौंच हंस मयूर आदि पक्षी अपने सुन्दर बचन को बोलते हैं ऐसी विचित्र लंकापुरी को देखकर हनुमानजी विस्मित व प्रसन्न होगये। इस के बाद हनुमानजी शोभा से युक्त राक्षसों के राजा रावण की नगरी को देखकर बारबार यह चिन्ता करने लगे कि इस नगरी में सब बानर नहीं आने योग्य हैं क्योंकि यहां आनेक२ अस्त्र शस्त्र को धारण करने वाले राक्षस इसकी रक्षा करते हैं, इस पुरी में अंगद सुषेण कुमुद मैन्द द्विविद आदि प्रधान वीरही आसकते हैं दूसरे की गति नहीं है, इसके अतिरिक्त सुग्रीव जांबवान कुशपर्वा व मैं आने की सामर्थ्य रखसकता हूं ऐसी चिन्ता करके हनुमानजी महाबाहु श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी के पराक्रम तथा नाम को स्मरण करके उन महलों में पैठे, जिन महलों में दीपक के प्रकाश से अन्धकार का नाम नहीं ऐसी लंका पुरी में जब हनुमानजी प्रवेश किये तब लंका नाम हनुमानजी को देवता के रूप में जाते देखकर उठकर खड़ी होगयी व महा गर्जना करके हनुमानजी से बोली, हे बानर ! तुम कौन हो किस कार्य के लिये आये हो जब तक तुमारे प्राण हैं तबतक तुम अपना कार्य कहो कि क्या कारण है, हे बानर! तुम निश्चय जानों कि इस पुरी का राजा रावण है उसके नगर में तुमकी प्रवेश करने की सामर्थ्य नहीं है, राक्षसी के बचन को सुनकर हनुमानजी बोले, तुमने हमसे जो कुछ पूछा है वह हम विचार

कर उत्तर देवंगे, परन्तु यह बतलाओ कि तुम इस भयानक रूप को धारण करके कौन हो जो इस नगरी के द्वारपर खड़ी होकर हमें भय देती हो हनुमानजी के बचन को सुनकर बड़े जोर से गर्जना करके वह राक्षसी बोली कि हम रावण की आज्ञा से इस पुरी की रक्षा करती हैं, इस नगरी में हमारी आज्ञा को उल्लंघन करके कोई नहीं जा सकता है, आज तुमारा भी प्राण हमारे हाथ से नाश होगा। हे बानर! हम स्वयं लंका हैं और अपने आप रक्षा करती हैं, लंका राक्षसी के बचन को सुनकर हनुमानजी पर्वत के समान रूपको धारण करके खड़े होगये, उस राक्षसी को स्त्री का रूप देखकर समय के अनुसार हनुमानजी बोले, कि हमारी बड़ी इच्छा है कि इस पुरी को देखें, इसी को देखने के लिये हम यहां आये हैं, यहां के बड़े बड़े बन उपबन और अटारियों से युक्त महल तथा गृह को देखना चाहते हैं इसी कारण हमारा आगमन यहां हुआ है। हनुमानजी के बचन को सुनकर कामरूपिणी वह लंका नाम की राक्षसी कठोर बचन से बोली, हे मूढ़! बिना हमको जीते तुम लंकापुरी को नहीं देख सकते हो। निशाचरी के बचन को सुनकर हनुमानजी बोले, हे भद्रे! इस पुरी को देखकर हम जैसे आये हैं वैसेही लौट जायंगे हनुमानजी के मुख से इस प्रकार प्रतिज्ञा युक्त बचन को सुनकर वह राक्षसी बड़े जोर से गर्जना करके हनुमान को एक लात मारी। जब लंका ने हनुमानजी को लात से ताड़ना किया तब हनुमानजी क्रोधित होकर गर्जना किये, और एक मूका ऐसा मारे कि वह मूर्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़ी, हनुमानजी उसे स्त्री जानकर प्राण नहीं मारे, जब राक्षसी की मूर्छा हटगई और उसको कुछ ज्ञान हुआ तब गर्भ रहित लड़खड़ाती जिह्वा से हनुमानजी से कहने लगी कि अब कृपा करके हमारी रक्षा कीजिये, हे सौम्य! बलवान पुरुष प्रार्थना करने पर दया करते हैं, हे वीर! मैं स्वयं लंका हैं परन्तु तुमने अपने पराक्रम से हमें जीत लिया है, हे वीर! ब्रह्माजी ने जो मुझे बरदान दिया है सो सत्य सत्य कहती हूं सुनो, हमारी तपस्या से ब्रह्माजी ने प्रसन्न होकर यह बरदान दिया है कि

जब कोई बानर अपने पराक्रम से तुमको अपने वश में करले तब तुम राक्षसों का विनाश जानना । सो आज तुम्हारे दर्शन से वही समय आया है, ब्रह्माजी के वचन कभी असत्य नहीं होते । सीताजी के निमित्त इस दुरात्मा रावण ने सब राक्षसों का नाश करना चाहता है, हे वीर ! अब तुम लंकापुरी में जाओ और कार्य की सिद्धी करो ।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥

इसके उपरान्त महाकपि हनुमानजी ने राक्षसी को जीतकर रात्रिकाल में लंकापुरी को देखने की अभिलाषा से पुरी में प्रवेश किये । प्रवेश करने के समय हनुमानजी ने अपने दाहिने पग को आगे रख कर पीछे बायें पग को इस प्रकार रखे मानो शत्रु के शिर पर पग के रखे हैं, उस पुरी में प्रवेश करके महलों में जाने के सड़क से चले, उन सड़कों पर अगर चन्दन आदि से मिलाये सुगन्धित जल छिड़के हैं सुगन्धित पुष्प उन मार्गों पर बिछाये हुए हैं ऐसी सजी रावण के सड़क सें हनुमानजी इधर उधर शोभा को देखते चले, कहीं हंस आदि पक्षी अपने मधुर बचन को बोलकर कलोल करते हैं कहीं नगाड़े बजते हैं कहीं कहीं उज्वल महल आकाश का सामना करते हैं, कहीं उत्तम पदार्थ भोजन के लिये तइयार होते हैं, कहीं अनेक रंग के भूषण वस्त्र काढेर लगा है, कहीं चन्दन और सुगन्धित माला आदि देव मन्दिरों पर जाकर शोभा को देखते और हर्षित होते थे । कहीं सुन्दर बाजा बजते थे । कहीं मनोहर शब्द से स्वर ताल के सहित गान होता था । कहीं स्त्रियों के पैर के पायजेब की झनकार सुनाई देता था, कहीं स्त्री पुरुष एकान्त स्थान में हाथ से हाथ को मिलाकर बात चीत करते थे, कहीं यज्ञ हवन होता था । कहीं चारो वेद का पाठ होता था । कहीं राक्षस एकान्त में बैठकर मंत्रों का अनुष्ठन करते थे, कहीं राक्षसों का समूह बैठकर रावण का यशगान करते थे । कहीं पर अनेक राक्षस जटाधारी और कोई शिर को मुड़ाये कोई मृगा आदि के चमड़े को ओढ़े वृक्षों को सींचते हैं, उन राक्षसों में कोई कुशा की मुठी का अस्त्र लिये हैं, कोई खड्ग शूल मुद्गर परिघ

मुसल फांसी आदि अस्त्रों को लिये हैं। और उस पुरी में बहुतसे राक्षस एक नेत्रवाले एक कान वाले टूटे फूटे मुख व हाथ पगवाले बहुत से राक्षस धनुष तलवार त्रिशूल सांग गड़ासी मुसल परिघ कवच आदि अस्त्रों को लेकर ध्वजा पताका कार्य करते थे। कहीं बिना स्तनकी कहीं एक स्तन की अत्यन्त स्थूल कहीं दुर्बल कहीं एक पगवाली राक्षसीको हनुमानजी देखे, कहीं उत्तम सुगन्धित चन्दनमाला उत्तम वस्त्र तथा अलंकारको धारण किये स्त्री पुरुषको देखे, बहुत बलवान राक्षस अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्रको लेकर जनान खानेके द्वार पर पहरा देते थे उसके आगे इन्द्रपुरी के समान पर्वत के शिखर पर एक अत्यन्त ऊंचा महल राक्षसों के राजा रावण की पुरी को देखा। उस राज महल के चारो ओर एक ऊंची चहार दीवारी बनी थी। उसके भीतर भांति भांति के कमल फूले थे, तरह बेतरह के शब्द वहां सुनाई पड़ते थे, उस महल के द्वार पर अनेक रथ, हाथी, घोड़ा आदि सभी स्थित हैं, इसके बाद ऐरावत हाथी के अनेक सन्तान द्वार पर खड़े हैं, अनेक प्रकार के पक्षी द्वार पर बैठे सुन्दर बचन को बोलते हैं, हजारों राक्षसों की सेना रावण के महल की रक्षा करते हैं, इस प्रकार लंकापुरी की शोभा को हनुमानजी देखने लगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥

इस प्रकार अन्त पुरमें तारागणों के मध्य में जैसे चन्द्रमा प्रकाशित होते हैं वैसेही रावण के अन्तः पुरमें भी अपने हजार किरण से चन्द्रमा प्रकाश करते हैं, सकल विभूतियों से दीप्तिमान समुद्र को बढाने वाले जगत के पाप को नाश करने वाले चन्द्रमा को रावण के अधीन में देखकर विचारने लगे कि लोक के पाप को नाश करने वाले समुद्र को बढाने वाले सब प्राणियों के मनको सुख देने वाले क्या चन्द्रमा रावण की सेवकाई को करते हैं अर्थात हिमालय के शिखर के समान आकाश में स्थित होकर चन्द्रमा उस पुरी में सदा प्रकाश करते थे, जिस प्रकार सिंह शिला को महाजग रणभूमि को पाकर राजा राज्य को पाकर

प्रसन्न होता है उसी प्रकार अन्धकार को नाश करने वाले चन्द्रमा विराज मान थे। जैसे राक्षस रुधिर का पान करके युवा सुन्दरी स्त्री को पाकर प्रसन्न होते हैं वैसे आकाश में उदित चन्द्रमा से प्रदोष काल प्रसन्न होगया है। चन्द्रमा के प्रकाश से युक्त उस राक्षसों के आनन्द भवन में कहीं वे राक्षस वीन बजाते कहीं अपने प्रमाद से गीत गाते, कहीं आपस में विवाद करते कहीं अपने गुणों की प्रशंसा अपने आप करते कहीं सुन्दरी स्त्रियों को हृदय से लगा कर शयन करते कहीं उनकी स्त्रियां पतिको शयन कराती कहीं सुगन्धित तैल अथवा सुगन्ध को लगा रही थी, कहीं बलके घमण्ड से धनुषको चढ़ाते, किसी स्थान में स्त्रियां अपने पति से लड़ाई करती थी, कहीं बीर लोग शयन करके सर्प के श्वांस के समान लंबी श्वांस को फेकते हैं, इस प्रकार अनेक गुण युक्त निशाचरों के ग्राम को देखकर हनुमानजी प्रसन्न होगये। सुन्दर स्वभाव वाली अनेक प्रकार के भूषण अलंकार से युक्त तारा आदि प्रतिव्रता उन राक्षसों की स्त्रियों को हाव भाव कटाक्ष से युक्त होकर अपने पति के संग हंसती व विलास करती हुई देखकर हनुमानजी और भी प्रसन्न होगये। और वहां के यह चरित्र देखकर हनुमानजी का हृदय मदन मोहित होगया। हनुमानजी एक से एक सुन्दरी और उसी तरह के रूप भी स्त्रियों के मध्य में जानकीजी को नहीं देखे। उन सीताजी का मन तो सदा श्रीरामजी के चरणों में लगा रहता था। विना रामजी को देखे जानकी के लिये संसार के सभी पदार्थ तुच्छ हैं, सीताजी तो श्रीरामजी के वियोग में नित्य रोती व विलाप करती थी, इस प्रकार दुःखी रामजी की प्रिया भार्या सीता को उन महलों में न देखकर हनुमानजी अति दुःखी हो गये।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥

इस प्रकार हनुमानजी अनेक महलों को देखकर राक्षसों के राजा रावण के महल के समीप पहुंचे वहां अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र को लेकर वीर भट उसके चारो ओर घूमते हैं जैसे सिंह बनकी रक्षा

करता है वैसे राक्षस उस मन्दिर की रक्षा करते हैं, रावण के मन्दिर को देखकर हनुमानजी और भी प्रसन्न होगये। वह रावण का भवन सोने व चांदी का बना है द्वार पर अनेक रंग के रत्न जड़े हैं। सोने के खंभ में वन्दन वार लटकाये हैं उनके बीच बीच में मोती गूंथे हैं। अनेक प्रकार के वृक्ष व लता लगी हैं उन वृक्षों पर बैठ कर पक्षी कलोल करते हैं जलाशय में खिले कमल पर भंवरे आनन्द करते हैं रथ हाथी घोड़ा आदि से वहां भरा पूरा है कहिं रत्न जटित आसन लगा है कहीं अनेक प्रकार के उत्तम भूषण वस्त्र को पहिन कर पटरानियों की आज्ञा को पालन करने के लिये परिचरिकायें व्यग्र हो गयी हैं। कहीं चन्दन माल्य आदि पूजा की सामग्री एकत्र होती है, कहीं सोने के कलश में मदिरा भर कर रखा है, कहीं भोजन के उत्तम पदार्थ की राशि लगी है, कहीं वस्त्र व अलंकार की ढेरी लगी है, कहीं शंख भेरी मृदंग आदि बाजा बजा कर राक्षस लोग पूजा करते हैं इस प्रकार रावण के भवन की शोभा को देखकर हनुमानजी जहां रावण सयन करता है, सीता को खोजने के लिये वहां गये, रावण के मन्दिर में भी सीता को न पाकर प्रहस्तनाम राक्षस के गृह पर गये वहां से महा पार्श्व के स्थान पर गये वहां भी सीताजी को न देखकर कुम्भ कर्ण के मन्दिर पर गये। फिर कुंभकर्ण के भवन से विभीषण के स्थान पर गये वहां से महोद के गृह पर गये फिर विद्युज्जिह्व विद्युन्मली आदि राक्षसों के गृह को खोजे परन्तु सीताजी को न देखकर मेघनाद के मन्दिर पर गये। फिर वहां से जंबुमाल वसुमालिक आदि राक्षसों के गृह को देखे, फिर वहां से रश्मिकेतु सूर्य शत्रु वज्रकाय आदि राक्षसों के भवन में हनुमानजी सीताजी को ढूंढे। इसके बाद फिर वहां से धुम्राक्ष संपाति विद्युदय, भीम, घन विघन, शुक्र, चक्र, शठ, कपट, हुस्वकर्ण, दंष्ट्र, लोमश आदि राक्षसोंके गृह पर जाकर हनुमानजी सीताजीकी खोज किये, वहां से फिर युद्धोन्मत्त, मत्त, ध्वजग्रीव, सादी विद्युजिह्व द्विजिह्व, हारितमुख, कराल, विशाल, शोणिताक्ष आदि राक्षसोंके महलों में खोज कर पु-

नवार लौट कर रावण के मन्दिर में आये, जहां अनेक महा सुन्दरी स्त्रियों को अंग में लपटाये रावण सो रहा है, वहां अनेक राक्षसी अस्त्र शस्त्र को लेकर वहां रक्षा करती हैं, और रावण के शयनागार के फाटक पर भी अनेक मतवाली हाथी मदकी धारा को गिराती हुई बँधी हैं अस्त्र शस्त्रको लिए सेना वहां पड़ी है, वह स्थान सैकड़ों सूर्यके समान चमाचम चमकता है, कई अत्यन्त सुन्दर रत्न जडित स्थान रावण को क्रीड़ा करनेके लिये हैं, कहीं मोरोंके रहनेका स्थान है कहीं धन रत्न से पूर्ण खजाने थे जहां अनेक बुद्धिमान व धीर अपना अपना काम कर रहे थे, वह सब जगह जगहके रत्नोंकी शोभा रावणकी शोभासे सूर्य के समान चमकता था। अनेक रंग के भोजन पान आदि के वर्तन को मणियों से जटित देखकर हनुमानजी और भी प्रसन्न हो गये। और उस मन्दिरको भली भांति स्त्रियों के मध्यमें सीता को खोज किये परन्तु उनका दर्श नहीं हुआ।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे षष्ट सर्गः ॥ ६ ॥

इसके उपरान्त महाबली हनुमानजी गजशाला, अस्त्रशाला, वस्त्र शाला आदि स्थानों को देखकर पक्षियों के रहने योग्य स्थान को खोजे, इसके बाद प्रधान प्रधान रक्षसों के स्थान को देखा रावण ने जहां देवताओं को दण्ड देनेके लिये कारागार में छोड़ा था उस स्थान को देखे। वह स्थान मयनाम दानव का बनाया अत्यन्त सुन्दर व मनोहर था। तदनन्तर वहांके अनेक बन उपवनको हनुमानजी देखे, जिनमें अनेक२ वृक्षलता पुष्प सब लगे हैं, उन वृक्षोंके सुन्दर फल छओ ऋतुओं में लगे, रहते हैं, रमणीय व स्वच्छ जल से पूर्ण सुन्दर जलाशय बने हैं उनमें अनेक रंग के कमल खिले हैं उन पर भंवरे बैठ कर गूंज रहे हैं, मृगा वराह आदि जीव उसमें विहार करते हैं वृक्षों पर पक्षिगण बैठ कर अनेक रंग की बोली को बोलते हैं, महल के दिवारो पर सोने के पक्षी बना कर बैठाये हैं उन पक्षियों के अंग प्रत्यंग में अनेक प्रकार का रत्न लगा है, बाहर के दालानमें अनेक लक्षण के सोने के पुष्प लगे

हैं, कमल पुष्प को हाथ में लिये लक्ष्मीजी बैठी हैं इस प्रकार की समृद्धि व शोभा से युक्त लङ्कापुरी को देखकर हनुमानजी रावण की तपस्या का प्रभाव जान गये परन्तु उस नगरीमें दुःखिता जानकीको न देखकर हनुमानजी अत्यन्त दुःखित हो गये। और भ्रमयुक्त होकर बिचारने लगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

इसके बाद पवन कुमार महात्मा हनुमानजी उस पुरीमें घूमते हुए उस मन्दिर के मध्य में एक सुन्दर विमान को देखे, जिसकी लंबाई चौड़ाई व बिस्तार बहुत दूर में है, उस बिमानमें अनेक प्रकारके सुनहले चित्र खींचे गये हैं, भांति भांति के रत्नों से वह जड़ित है, और सूर्यके प्रकाश के समान उसका उज्वल प्रकाश है, यह बिमान देवताओं के विमान से विलक्षण था, उस बिमान को विश्वकर्मा ने बड़ी युक्ति से बनाया था, उसे अति कठिन तपस्या करके कुबेर देवता ने लाभ किया था, उस पुष्पक बिमान को रावण ने अपने बल से जीत लिया था। उस विमान की गति मन से भी अधिक चलने वाली थी। यह स्वामी की इच्छानुसार शीघ्र चलने वाली है, पहिले इस बिमान पर क्रीट कुण्डल को पहिरने वाले और अधिक भोजन करने वाले आकाश में गमन करने वाले और विशाल नेत्रवाले भूत विनाश चरगण बैठकर चलते थे। बसन्तकाल के पुष्पों के समान अति दर्शनीय व सुन्दर पुष्पक नाम बिमान को हनुमानजी देखे।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे अष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

उस मन्दिर के भीतर एक विमल लंबा चौड़ा अति श्रेष्ठ दूसरा मन्दिर हनुमानजी ने देखा, वह मन्दिर दो कोश चौड़ा और दो कोश लंबा बना था उस भवन में अनेक राजशाला बनी थी। जानकीजी को ढूढते हुए हनुमानजी रावण के मुख्य शयनालय में गये,, उस स्थान में चार दांत और तीन दांत के हाथी बंधे थे वहां अनेक अस्त्र शस्त्र को लिये राक्षस वहां रक्षा करते थे। हरी गई राज कन्याओंसे वह रावण का मन्दिर परिपूर्ण था। इसके बीच में नाग मगर, तिमिगिल आदि

मछलियों से परिपूर्ण तालाब जलक्रीड़ा के लिये था, जो लक्ष्मी कुबेर व चन्द्रमा के घरमें थी। जो लक्ष्मी इन्द्र के घर में थीं उससे भी अधिक रमणीक व स्थिर लक्ष्मी उस समय रावण के मन्दिर में थीं। जहां काञ्चन और स्फटिक मणि की सीढ़ी लगी थी, इन्द्र नील आदि मणियों की वेदी बनी थी। नीचे विचित्र मूंगा व मोती का नीचे गच बना था स्फटिक मणियों के बीच बीच में चांदी सोने का बूटा खींचा था। सोने के खंभे मणियों से विभूषित ऊंचे खंभे बने थे। मतवाले पक्षी ठौर ठौर पर बोल रहे थे। दिव्य सुगन्धसे वह स्थान सुगन्धित था। बहुमूल्य बिस्तरे पर रावण को शयन करते हनुमानजी देखे, उस स्थान में अगर के धूआँ उड़ रहेथे। वह पुरी पत्र पुष्पों से पूजित होने के कारण कुछ ललझरी सी मालूम होती थी, मन को मोद उत्पन्न करती थी नाना प्रकार के वर्णों को भी भूषित कराती थी वशोक नाशिनी दिव्य व शोभा उत्पन्न कराने वाली थी तब उस रावण पालित शाला ने पांचो गुण सहित पांचो इन्द्रियों की माता के समान पालना की इसी से हनुमानजी को मालूम हुआ कि यह स्वर्ग अथवा देवलोक या इन्द्र की पुरी है अथवा यह कोई श्रेष्ठ सिद्धि है। उस मकान के दीपक रावण के तेज से उदास हो गये थे, इधर रावण के तेज से और स्त्रियों के रत्न जड़ित अलंकार के चमक दमक से वह स्थान हर समय उजियाला रहता था, इसके बाद हनुमानजी ने अनेक रंग के भूषण वस्त्र से अलंकृत शय्या से शयन की हुई हजारों स्त्रियों को देखे, वे सब स्त्रियां आधी रात होने पर मदिरा व निद्रा के वश होने से क्रीड़ा से निवृत्त होकर शयन कर रही थी, उन स्त्रियों के खुले स्तन व दांत मूंदे नेत्र कमल के समान सुगन्धित मुख को हनुमानजी देखे। उनके मुख कमल को मतवाले भ्रमर कमल जानकर घूम घूम प्रार्थना करते हैं, उस रावण के भवन में वह स्त्रियां इस प्रकार शोभित होती थी जैसे तारा गण आकाश में शोभित होते हैं, उन स्त्रियों के बीच में वह रावण ऐसा शोभित होता था कि जैसे तारागण के बीच में चन्द्रमा शोभित होते हैं, उन स्त्रियों

के अधर रस (ओष्ठ) पीने के व कुच (स्तन) मीजने के समय पर जो अलंकार व माला मर्दित हो बिखर जाने से वे स्त्रियां हत चित्त होकर निद्रा के मारे अखल विखल सो रहीं थी, किसी की वेंदी बिगड़ गई है किसी के घुघुरू खुल गये हैं, किसी के बाल में गूंथे हार टूट पड़े थे इस प्रकार वे परमसुन्दरी सो रही थी, किसी के वस्त्र खुल गये थे किसी के कुण्डल मलीन हो गये थे किसी के माला टूट गये थे किसी के छाती पर चन्द्र किरण के समान उज्वल हार मृदित होकर स्तन के मध्य में सिमिट गये थे वह उज्वल हँस के समान शोभित होते थे। किंकिणी जालों को मुकुल व सुवर्णमय भूषण को बड़े बड़े कमल भाव शृङ्गार को ग्राह व यश का तीर बनाये शयन करती हुई वे स्त्रियां नदी के समान शोभित होती थी। उन स्त्रियों का स्वाभाविक शर्करा युक्त मदिरा से सुगन्धित मुख की वायु रावण की सेवा करता था। और बहुत स्त्रियां बहुमूल्य भूषण धारण किये अपनी भुजा को और उत्तम भूषण व बस्त्रको सिरहाने रखकर सुख पूर्वक सोरही थी, आपस में प्रेम मिली थीं किसी की छाती पर का हाथ उसके ऊपर किसी की भुजा रक्खी थी कोई किसी के बगल में सोई हुई दूसरे के स्तन को पकड़े थी। कोई किसी के जंघा कोई किसी के बगल कमर व पीठ पकड़े मारे मद व स्नेह के आपस में अंग को पकड़े थीं, कोई स्त्रियां रावण के मुख को जानकर अपनी सौत के मुख को चूमती थी, सब स्त्रियां एक दूसरी से सटी हुई लपटी थी इससे अपने अपने भूषण व बस्त्र का ठीक ज्ञान किसी को नहीं होता था कि यह किसका है, जब रावण और उसकी स्त्रियां सुख पूर्वक शयन करती थीं तब देवता लोग उससमय टक टकी बांधकर देखते थे। रावणके गृह में जितनी स्त्रियां थी वे सब राजाओं की ब्राह्मण देवता और गंधर्वों की कन्या हैं जो अपने आप आयकर राक्षसों की कन्या हुई थीं उनको रावण ने व्याहा है, उनमें से बहुतों को रावण युद्ध करके छीन लाया व बहुत स्त्रियां कामदेव से मदोन्मत्त हो रावण को देख काम से मोहित हो अपने ही चली आई थीं। जगत् की उत्पत्ति

करने वाली जानकी को छोड़कर और कोई स्त्रियां रावण की आज्ञा को उल्लंघन नहीं करती थीं, और ऐसी भी कोई स्त्रियाँ न थीं जो रावण को प्रिय न होवें, उन स्त्रियों के रास विलास को देखकर परम ज्ञानी हनुमानजी विचार करने लगे कि यदि रावण के राजा स्त्रियों के समान श्रीरामचन्द्रजी की प्रिय भार्या सीता रावण के अधीन में नहीं हो गई हों तो बड़ेही कल्यान की बात है, इसके बाद हनुमानजीपुनः विचार करने लगे कि सीताजी सब स्त्रियो में श्रेष्ठ हैं इनको जो रावण हर लाया यह अनुचित किया क्यों कि इसी कार्य से उसका नाश हो जायगा।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे नवमस्सर्गः ॥ ९ ॥

उस स्थन में हनुमानजी ने दिव्य उपमायुक्त स्फटिक मणि से बना रत्नों से विभूषित रावण के शयन आसन को देखा, वह आसन हाथी दांत व सुवर्ण के चित्र व वैडूर्य मणियों के श्रेष्ठ आसनों से और बहुमूल्य विस्तरों से और अधिक धन से युक्त था। उस स्थान के एक प्रदेश में चन्द्रमा के समान उज्वल व स्वर्ण मय छत्र तथा निर्मल चमर रखा था। अनेक प्रकार के उत्तम भूषण वस्त्र को धारण किये महा बाहु रावण उन स्त्रियों के मध्य में शयन करता था। राक्षसों को सुख देने वाला रात्रि के क्रीड़ामें निरत स्त्रियों को प्रिय करने वाला और उनके अधरामृत तथा मदिरा पीने से सन्तुष्ट रत्न जड़ित शय्या पर शयन किये राक्षसों के राजा रावण को हनुमानजी देखे। जब हनुमानजी रावण के निकट गये तो उन्मत्त हाथी के समान श्वांस लेते रावण को देखकर कुछ डरे और पीछे हट गये। उसके पीछे वेदी के बीच पहुंच सीढ़ी पर चढ़कर फिर मदान्ध रावण को हनुमानजी देखने लगे, वह अपने भुजाओं में अलंकार को धारण किये था अंगूठों से सुन्दर मुद्री को धारण किये था उनके नख सुन्दर लक्षण से युक्त थे, और रावण की भुजा पर्वत के शिखर के समान विशाल थी, विचित्र मुक्ता मणि को धारण किये कुण्डल आदि से शोभित मुख हार व लाल चन्दन से शोभित रावण की लंबी भुजाये चौड़ी छाती रेशमी पीताम्बर पहिने

डुपट्टा डारे आंखोंको लाल किये शोभाय मान था। उर्दकी राशि के समान श्याम वर्ण और काले सर्प की नाई श्वासको लेता हुआ रावण स्त्रियों के बीच में इस प्रकार शोभा को प्राप्त हुआ जैसे ग्रीष्मकाल में नदियों में मतवाली हाथी क्रीड़ा करती है सुवर्ण के दीपक बिजली के समान चारो ओर जलती थीं स्त्रियां अनेक रंग के भूषण को धारण करके उसके चरणों के निकट लेटी थीं, और उसके सब अंग बिजली के समान चमकते थे ऐसे मेघ के समान उस रावण को अन्तः पुर में हनुमानजी ने देखा है, वह रावण कि स्त्रियां गान विद्या में अत्यन्त चतुर थीं, और वे स्त्रियां मतवाले रावण के साथ विषय करने के कारण थकी हुई उसके शरीर में लिपट कर अपने अंग के कपड़ों को खोलकर सो रही थीं उनमें कोई स्त्रियां स्वप्न में भी अंग को हिलाती थीं इस से जान पड़ता था कि यह नाचना जानती है कोई हाथ में वीणा लिये ऐसी सो रही थी मानो नदी में बहते हुए कमल ने अकस्मात् नाव को पाया है, कमल दल के समान नेत्र वाली कोई स्त्री हाथ में चिकारा दबाये सोती थी वह मानो अपने प्रिय पुत्र को गोद में लिये है, एक महा सुन्दरी पटह नाम बाजा लिये सोती थी मानो अधिक दिन के बाद अपने पति को पाया है, एक वीणा को लिये सोती थी जैसे अपने कन्त के साथ अत्यन्त काम को प्राप्त हुई हो, एक मतवाली स्त्री अपने कामेल मृदंग को दबायें सोती है, एक सुन्दरी इच्छानुकूल मैथुन करने से थकित शंख को लिये सोती थी, एक स्त्री हाथ में डमरू लिये सोती थी, एक स्त्री डिमडिम नाम बाजा लिये सो रही थी। एक स्त्री जल से पूर्ण घड़ा को लिये सो गई था, एक स्त्री अपने हाथमें अपने दोनों स्तन को पकड़ कर सोती थी। एक सुन्दरी दूसरी को दबाकर सोती थी उन सब स्त्रियों से एक रूपवती और युवती स्त्री को मोतियों का हार पहिने उत्तम रत्न जड़ित चमकीले अलंकार को पहिन कर अलग सोती थी, उसका रंग सोने के समान उज्वल था, वह बहुमूल्य भूषण व वस्त्र को पहिने थी, उसका नाम मन्दोदरी था, वह रावणकी धर्मपत्नी थी, पट

रानियों में मुख्य वही थी, उसको देखकर हनुमानजी ने यह सोचा कि यही जानकी हैं यह सोचकर हर्षित हुए । हनुमानजी अपनी पूंछ पट कर चूब लिये और अपने अंग को फुलाकर कूदकर रावण के गृह से दूसरे स्थान को चलेगये, वहां जाकर किलकिलाते खंभों पर चढ़ जाते और उनको हिलाकर पृथिवी पर कूद पड़ते इस प्रकार बानर के समान क्रीड़ा को करने लगे ।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे दशमः सर्गः ॥ १० ॥

इसके बाद हनुमानजी मन्दोदरी को पहिले सीता जानकर पीछे इसपर विचार करने लगे कि सीताजी श्रीरामन्द्रजी के बिरह से भूषण वस्त्र अन्न अलंकार आदि को छोड़कर दुःख के सागर में पहुंच कर व्याकुल होंगी, चाहे देवलोक के राजा इन्द्र क्यों न हों परन्तु श्रीराम जीको छोड़कर सीताजी दूसरे पुरुष को स्पर्श नहीं कर सकती हैं, क्यों कि रामचन्द्रजी के समान दूसरा जगत् में कौन है, इस कारण यह सीताजी नहीं हैं यह कोई दूसरी स्त्री है ऐसा बिचार करके हनुमान मदिरा के गृह में आये, वहां बहुत सी स्त्रियां क्रीड़ा करने से अधिक नाचने गाने से बहुत स्त्रियां शराब पीने से उस गृह में व्याकुल होरही थीं । वहां मृगा महिष शूकरों के मांस बनकर अलग अलग बर्तनों में रखे थे, सोने के सुन्दर बर्तनों में मोर कुक्कुर मुर्गा आदि का अनूठा मांस रखा था । इसके अतिरिक्त वराह वाघी सरस आदि पक्षियों का मांस किसी में दही किसी में लवण [निमक] मिर्चसे बना हुआ है । और कराकुल बकरा खरहा भैंसा सूईस और मछली आदि का मांस बन कर अलग सोने के बर्तनों में रखा था इसके अतिरिक्त भांति भांति के चटनी रायता शर्बत दूध दधि मिठाई मालपुआ घेवर अमिरती पेड़ा आदि भोजन के समान को अलग अलग रखा था, वह भोजनालय सोने बर्तनों से परिपूर्ण सूर्य के समान चमकता था । और भोजन बनाने वालों ने अनेक प्रकार के भोजन को बनाकर अलग अलग बिस्तार से उस स्थान में रखे थे । इसके बाद शर्करा महुआ उत्तम अन्न सुगन्धित

पुष्प नारियल इलायची केला आदि के मदिरा सोने के कलशों में भरे थे, उसको सुगन्धित करने के लिये अनेक प्रकार के चूर्ण रखे थे। मदिरा पीने के लिये रत्न जड़ित सोने चांदी के कखे तथा सोने के कलश रखेथे तथा उन स्त्रियों के शीतल चन्दन व मदिरा आदि की सुगन्ध से मिलकर जो हवा चलती थी उनमें उन वस्तुओंका सुगन्ध मिला रहता था, इसी से रावण का भवन अत्यन्त सुगन्धित रहता था। उनमें कोई स्त्री कृष्ण वर्ण के वस्त्र को धारण किये थीं कोई नीलाम्बर कोई पीताम्बर पहिने निद्रा के वश में उनके मुख की कान्ति मलीन होगयी थी। इस प्रकार सुख भोग की संपत्ति रावणालय में हनुमानजी देखकर चकित व विस्मित होगये, परन्तु सीताजी को वहां न देखकर बार बार उदास हो जाते थे। उन स्त्रियों को भोग बिलास में आसक्त और नंगी देखकर हनुमानजी बड़ी शंका करने लगे, क्योंकि सोती हुई पराई स्त्री को देखना पाप है, जैसा शास्त्र में लिखा भी है कि पराई स्त्री को नंगी देखकर सात बार अपनी आंख कडुवे तेल से मले तो शुद्ध होता है, सो हनुमानजी कितने बार देखा, इस कारण उनको यह हुआ कि हमारा मन इतना चंचल होगया क्या हमारा नैष्ठिक ब्रह्मचर्य तो नहीं नष्ट होता है। क्योंकि मन के अधीन इन्द्रियां रहती हैं वही अनेक शुभ अशुभ कामों में चलाय मान होती है, ऐसा बिचार कर हनुमान योग्याभ्यास से मनकी चंचलता को सावधान किये और कहने लगे कि मैं अपने शुद्ध हृदय से परम पिता श्रीरामजी के कार्य को सिद्ध करने के लिये श्रीजगत् माता जानकी को खोजने के लिये में आया हूं इस कारण श्रीरामजी के अनुग्रह से हमारे मन में विकार नहीं होगा क्यों कि जो जिस वस्तु की इच्छा करता है उस वस्तु पाने के लिये उसके मन में विकार होता है हमको तो जानकी दर्शन के सिवा और कोई अभिलाषा नहीं है, इस प्रकार अपने मन को समाहित करके हनुमानजी रावण के भवन को खोजकर देवकन्या नाग कन्या गंधर्व कन्या आदि जिस स्थान में रहती थीं उनको ढूंढे परन्तु जानकी को नहीं देखे।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥

उस रावण आदि राक्षसों के भवन में दर्शनोत्साही हनुमान ने सीता को न देखकर विचारने लगे कि इस प्रकार ढूंढने पर मालूम होता है कि निश्चय सीता जीवित नहीं है, राक्षसों में श्रेष्ठ दुरात्मा इस रावण ने सुशीला प्रतिव्रता सीता को निश्चय मार डाला है, अथवा विकराल तथा घोर मुख वाली इन राक्षसियों को देखकर सीताजी स्वयं प्राण को नष्ट किये हों, इतने काल तक बानरों के सहित इधर उधर घूम कर भी विना सीता की खोज लगाये हमारी गति नहीं है जो हम सुग्रीव से चल कर मिलें, क्योंकि सुग्रीव अत्यन्त बलवान और दण्ड देने में बड़ा कठोर है, सीताजी का विना दर्शन किये हमारा सब परिश्रम निष्फल हुआ । यदि अंगद आदि बानर चलने पर हमसे पूछेंगे कि हे वीर ! इतने परिश्रम से तुमने वहां जाकर क्या काम किया सो कहो । तब विना जानकी को देखे हम उनसे क्या कहेंगे, और सत्य समाचार को न पाकर अंगद आदि बानर किष्किन्धापुरी को न जाकर यहीं प्राण को छोड़ देवेंगे । इस कारण पुरुष को उत्साह लक्ष्मी का मूल है उत्साह से परम सुख होता है इस लिये उत्साही होकर जो जगह नहीं खोजे हों वहां फिर भी खोजना चाहिये, क्योंकि पुरुष को उत्साह सब प्रकार अर्थों में प्रवृत्त रहता है, वही कठिन से कठिन भी कार्य को सफल करता है । इस लिये उत्साह प्रयत्न पूर्वक चेष्टा हमे करना चाहिये और रावण से रक्षा किये गये जिनस्थानों को नहीं ढूढ़े हैं उनको ढूढ़ना चाहिये, यह विचार करके हनुमानजी लंकापुरी में रहने वाले जितने विमान रहे सबको ढूढ़ा फिर जितनी फुलवाड़ी वगीचा रहे उनका ढूंढना आरंभ किये उनको खोज कर फिर उन राक्षसों के गृह में किवाड़ों को खोल कर भीतर प्रवेश किये और उन स्थानों में सीताजी को खोजे इसके बाद भोजन आदि के जो कुछ पदार्थ रावण के गृह में रखे थे उसको हाथ से उठा उठा कर देखने लगे यह सब ढूढ़े यह सब ढूंढते हुए पुनः रावण के मन्दिर में जाकर चार अंगुल भी देखने से कहीं नहीं छोड़े, खाई देवालय महल ऊपर की अटारी झरोका खिड़की हाथि घोड़ा

रथ विमान ऊंट आदि के रहने के स्थान को खोजे उन स्थानों मे रा-
क्षसियों के सिवा हनुमानजी ने श्रीजानकीजी को नहीं देखे, इसके
अतिरिक्त रावण की सेवा में आई तथा जब देवतों को क्रोध से रावण
ने कैद किया उस समय पति के संग जो देवलोक से स्त्रियां आई थीं
उनके मध्य में भी खोजने से हनुमानजी जानकीजी को नहीं देखे
देवलोक की स्त्रियों को ढूढ़ कर रावण ने पाताल में प्रवेश करके जो,
जबरदस्ती नागों की कन्या को लाया था उनको भी हनुमान ने ढूढ़ा
परन्तु जानकी को नहीं देखे। महा बाहु हनुमान उन स्थानों में श्री-
जानकीजी को न देखकर विषाद करने लगे कि अंगद जांबवान आदि
बानरों का उद्योग तथा हमारा समुद्र का लांघना गिद्धराज के बचद
सब व्यर्थ हुआ यह सोच कर हनुमानजी चिन्ता में व्याकुल हो गये।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥

वेगवान हनुमानजी उस पर से कूद कर छतकी दीवार पर बैठ
कर चिन्ता के मारे इस प्रकार कहने लगे कि हमने अपने मनको शुद्ध
करके सुग्रीव की आज्ञानुसार श्रीरामजी के कार्य को साधन करने के
लिये रावण के चहार दीवारी किला महल अटारी झरोखा छत तथा गृह
बावली बगीचा तालाब आदि समस्त पृथिवी को खोज किये परन्तु
सीताजी को नहीं देखे यह क्या कारण है। क्या वैदेही बिवश होकर
रावण के समीप तो नहीं है अथवा श्रीरामचन्द्रजी के बाण के भय से
जानकीजी को लेकर रावण जो उड़ा तो कहीं सीताजी शोककी विकलता
से बीच में तो नहीं गिर पड़ीं अथवा लंकापुरी में आते समय श्रीजा-
नकीजी पर गृहका वास उचित न जान कर क्या समुद्र में तो नहीं
गिर पड़ीं या इस दुष्ट रावण ने अपने परिवार सहित जानकीजी को
भक्षण तो नहीं कर लिया है या कमल नयनी चन्द्रमुखी जानकी इन
राक्षसों के त्रास व भय से दीन दुखी होकर अपनी शरीर तो नहीं छोड़
दिया है, या जानकीजी को रावण ने कहीं पिंजरे में तो नहीं बन्द
करके त्रास देता है क्योंकि महात्मा जनक के कुल में उत्पन्न और ध-

र्मात्मा रामजी की स्त्री सीता रावणके वशमें किस प्रका रआसकती हैं, या तो वे कहीं छिपाई गई हों या मरगई हों जिससे सीताजी का दर्शन हमको नहीं हुआ अब हम चल कर सीताजी के विषय में श्रीरामजी से हम क्या कहैंगे । क्योंकि श्रीरामजी से कहने पर भी दोष और न कहने पर भी दोष है इस विषय में हमें बड़ी कठिनता जान पड़ती है कि अब क्या करना चाहिये, इसी कार्य के लिये इतना समय व्यतीत हुआ और कार्य भी सिद्ध न हुआ तो अब क्या करना चाहिये लंकापुरी को ढूंढ़ कर हनुमानजी इस प्रकार विचारने लगे कि यदि बिना सीता को देखे हम चले जावें तो हमारा क्या पुरुषार्थ होगा । हमारा समुद्र का लांघना लंका में प्रवेश यहां के बन उपवन नदी पर्वत समुद्र व दुर्गम लंकापुरी के स्थान को ढूंढ़ना सब व्यर्थ होगा, यदि अंगद आदि के सहित किष्किन्धा को लौट जायं तो सुग्रीव से तथा राम लक्ष्मण से क्या कहैंगे, यदि हम चल कर उन लोगों के समीप यह कटुवचन कहैं कि सीता को हमने नहीं देखा, तो हमारे इस बचन को सुनकर सीता के विरह से व्याकुल श्रीरामजी अपना प्राण छोड़ देंगे, उनके वियोग में लक्ष्मणजी भी अपने शरीर तथा प्राणका नाश करेंगे, राम लक्ष्मण के मरण को सुनकर भरतजी अवश्य अपना प्राण नाश करैंगे भरत के मरण को सुनकर शत्रुघ्न कभी जीते नहीं रहैंगे, स्त्री के वियोग में पुत्रों का मरण सुनकर कौसल्या सुमित्रा केकयी आदि स्त्रियां कभी भी जीती नहीं बंचैगी। और ऐसी विपति में सत्यप्रतिज्ञ में सुग्रीव भी अपना प्राण छोड़ देवेंगे. सुग्रीव के वियोग में उमा और बालि की स्त्री तारा भी मर जायंगी । पिता माता के मरण को देखकर कुमार अंगद भी नहीं जीते रहैंगे, स्वामी के मरण को देखकर जांबवान आदि बानर पर्वतों से गिर कर विष खाकर जलमें डूब कर अग्नि में जल कर अपना प्राण देदेवेंगे । हमारे जाने पर किष्किन्धा और अयोध्या में अत्यन्त रोदन होगा और राम के कुल का तथा बानरों के कुल का अवश्य विनाश होगा, इस लिये हम यहां से किष्किन्धा

पुरी को कदापि नहीं जायंगे और सीताजी के बिना दर्शन किये सुग्रीव और राम को नहीं देखेंगे, यदि हम यहां रहेंगे तो सुग्रीव और राम यह दोनों धर्मात्मा हमारी आशा से जीवित रहेंगे, इससे यहीं के वृक्षों के फल मूल से अपनी जीविका करके बान प्रस्थ के वेष में यहीं निवास करेंगे, अथवा समुद्र में डूब कर अपना प्राण नाश कर देवेंगे। अथवा काष्ठ की चिता लगाकर यहीं जल जावेंगे यदि आग में प्रवेश करते समय अंग में आग लगी तो हमारे शरीर के मांस कौवे कुत्ते खाकर अपना पेट भरेंगे, अथवा जलही में डूबकर प्राण को देवेंगे। क्यों कि ऋषियों को मरते हमने इसी प्रकार देखा है। जैसे सुजातु मूला सुभगा यशस्विनी कीर्ति की माला रात्रि व्यतीत होने पर कुम्हिला जाती है वैसे बड़े मुसीबति हमारी हुई। यदि सीता को बिना देखे लौट जायंगे तो अंगद राजकुमार बानर पहिलेही अपना प्राण छोड़ देवेंगे, तो मरने में अधिक दोष बैठे रहनाही अच्छा है इससे हम अपने जीवन का निर्वाह करेंगे इस प्रकार अनेक बिचार करते हुए बानर श्रेष्ठ हनुमानजी अपने दुःख सागर जैसे पार नहोसके इसके बाद धैर्यवान हनुमानजी महाबली रावण को बध करने का बिचार करने लगे। कि इस रावण को बांधकर श्रीरामचन्द्रजी के पास ले चलें और उनको सौंप देवें जैसे पशुपतिको पशु सौंप दिया जाता है इस प्रकार की अनेक चिन्ता हनुमानजी करने लगे कि जब तक श्रीरामजी की प्रिय नारी जानकीको नहीं देखेंगी तब तक लंका पुरी को बार बार ढूंढेंगे। यदि संपाति के बचन को मानकर श्रीरामचन्द्रजी को यहां ले आवें तो रामचन्द्र जानकीजी को न देखकर बानरों के भस्म कर डालेंगे। इससे आहार नियत करके जितेन्द्रिय होकर यहांहीं ठहरेंगे जिससे हमारे लिये मनुष्य व बानर का बिनाश न होवे। यहां बड़े वृक्षों से युक्त अशोक बाटिका भी है उस स्थान को हमन हीं खोज किये हैं वहां भी खोज करना चाहिये, हम व सुरुद्रमय सूर्य व अश्विनी कुमार तथा पवन देवता को नमस्कार करके राक्षसों को शोक बढ़ाने को जावेंगे व सब राक्षसों को बल से जीतकर रघुकुल को आनन्द

देने वाली जानकी को राक्षस के घर से निकाल कर श्रीरामजी को सौंप देवेंगे जैसे तपस्वी को सिद्धि दी जाती है, कुछ समय तक ऐसा विचार करके वायु के पुत्र हनुमान उठ खड़े हुए और रामचन्द्र लक्ष्मण जानकी को प्रणाम करके रुद्र इन्द्र यम पवन चन्द्र अग्नि मय तथा इनसे अतिरिक्त और भी देवता को नमस्कार करके सुग्रीव को प्रणाम किये और चारो दिशाओं को देखते हुए अशोक वाटिका में प्रवेश किये, और अपनी रक्षा के लिये कहने लगे कि वहां राक्षस लोग वृक्ष की रक्षा करते हैं विश्वात्मा भगवान पवन उस वाटिका में गमन करते हैं हमारी आत्मा राम रावण के लिये अत्यन्त दुर्बल हो गई है इस लिये सब देवता ऋषि गण हमको सिद्धि देवें, ब्रह्मा स्वयंभू विष्णु आदि सब देवता हमको सिद्धि देवें अग्नि वायु वज्र को धारण किये पाश को धारण किये वरुण चन्द्रमा सूर्य हमको सिद्धि देवें, सबके स्वामी नाथ हमको सिद्धि देवें, इन सब देवताओंकी कृपासे कमल नयनी चन्द्रमुखी सुक दन्ती चन्द्रमाके समान जानकीको कब देखेंगे । क्षुद्र नीच दुरात्मा रावण से हरी गई जानकी हमारे नेत्र के सामने किस प्रकार होंगी

इति बाल्मीकीये रामायणे सुन्दरकाण्डे त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

हनुमानजी क्षण भर इस प्रकार विचार करके एक मकान व चहरदीवार से दूसरे मकान पर कूदकर चढ़ गये, वह चहरदीवार अशोक वन का था, उस वनमें बसन्त ऋतुके समान वृक्षोंमें फल व पुष्प लगे थे । उस वन के वृक्ष सोने चांदी के समान चमकते थे, शंखमरमर तथा स्फटिक मणियों से निर्मित अनेक जलाशय थे । उनमें नील पीत श्वेत रक्त आदि रंग के कमल फूले थे, चकवा काण्डव वक्वट हंस आदि पक्षीगण वहां सदा निवास करते थे । उन कमल पुष्प के पराग पर मतवाले भ्रमर सदा गूंजते हैं । चातक चकोर कोकिला मयूर आदि पक्षी वृक्षों पर बैठकर सदा सुन्दर वचन को बोलते हैं, जूही मालती बेला माधवी कुन्द तुलसी मन्दार पान आदि लताओं के कुंज चारो ओर बने हैं । उन वृक्ष व लताओं को हिलाते व उछालते इस प्रकार चले कि

उनके हिलाने से वृक्षों के पुष्प टूट टूटकर हनुमानजी के स्वरूप को ढांप दिया अर्थात् उस समय हनुमानजी पुष्प के पहाड़ के समान मालूम होने लगे। और भी उन पुष्पों के गिरने से अनेक रंग की भूमि होकर स्त्री के सदृश होगयी। हनुमानजी बल पूर्वक उन वृक्षों को ऐसा हिलाया कि उनमें एक भी फल पुष्प नहीं रहगये उन वृक्षों की दशा जुआरी के समान होगयी, जैसे जुआरि मनुष्य अपना सर्वस्वधन हार जाता है। हनुमानजी के उद्वेग से उस बन के पक्षी व्याकुल होकर इधर उधर भाग गये। हनुमानजी लताओं के बने हुये कुञ्ज भवन को तोड़डाले जैसे बादल को वायु उड़ा देता है, वहां से कूदते हुए हनुमानजी आगे को चले तो मार्ग में रत्न जटित सोने चांदी की बेदी को बड़ उसके बाद सुन्दर बावली व तालाब बने थे, जिनमें निर्मल जल राजा। और स्फटिक मणि तथा मोतियों की शिकता [रेत] और स्फटिक बैठकों की दीवारें बनी थीं, किनारेपर चित्र बिचित्रके सोनेके वृक्ष लगे थे ल जलाशयों में अनेक रंग के कमल फूले थे, उस सरोवर के किनारे चकई चकवा तथा कोकिला हंस सारस आदि पक्षी बोल रहे थे। उनसे मिली हुई सुन्दर व स्वादिष्ट जल से भरी नहरें बहती थीं, उस नहर के किनारे पर भी अनेक रंग के वृक्ष लगे थे। इसके बाद पर्वत के शिखर के समान भांति भांति के बिचित्र कंगूरे बने थे। इसके बाद वृक्ष लता युक्त एक पर्वत को हनुमानजी ने देखा। उस पर्वत से एक नदी बही थी जिसका जल अमृत के समान था, उसके किनारे पर भी भांति भांति के वृक्ष लगे थे, चारो ओर स्वाभाविक बन से अलंकृत थे, वहां जो वृक्ष थे सबों में पुष्प फल लगे थे। वह अशोक बन पर्वत वृक्ष लता गुल्म नदी तालाब बावली आदि से युक्त गोलाकार छाता के समान था। उसके बीच२ में सोने चांदी की बेदी बनी थी वहां पर एक विशाल वृक्ष सिरिस का था उन वृक्ष और वेदी आदि की शोभा सुमेरु पहाड़ के समान हनुमानजी ने देखे। इस प्रकार की विचित्र शोभा अशोक बन की देखकर हनुमानजी अचम्भित होगये। वृक्षों की उत्तम पत्र पुष्प

व फल लगे थे, यह देखते हुए पत्तों से ढके हुए शिंशपा के वृक्ष पर वेग पूर्वक हनुमानजी चढ़ गये और यह इच्छा करने लगे कि यहीं से श्रीरामचन्द्रजी के दर्शन की लालसा किये दुःख से पीड़ित सीता को हम कब देखेंगे। दुरात्मा रावण की रमणीक व दृढ़ अशोक बाटिका यही है कि जिस बाटिका में चम्पा चन्दन व कुल अशोक पुन्नाग नाग केसर रसाल पनस कदंब आदि वृक्ष माधवी मालती जूही आदि लता लगी हैं, जानकीजी बन की शोभा को देखने में अत्यन्तही कुशल हैं वह इस बन की शोभा को देखने के लिये अवश्य आयेंगी। क्यों कि संध्याकाल में संध्या करने के लिये इस निर्मल जल वाहिनी नदी के तटपर संध्या करने के लिए आती होंगी। यदि जानकीजी जीवित होंगी तो इस बाटिका और नदी के किनारे श्रीरामजी के विरह के दुःख कम करने के लिये यहां आवेंगी। इस प्रकार रामजी की भार्या जानकी के आगमन की अभिलाषा करते हुए वृक्ष के सघन पत्तों में छिप प्रतीक्षा करने लगे।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥

सीता के खोजने में तत्पर हनुमानजी उस वृक्ष पर बैठकर हनुमानजी अशोक बनके सब स्थान को भली भांति देखे। वह बाटिका कल्प वृक्ष की लता व वृक्षों से शोभित तथा दिव्य सुगंधित रसों से चारो ओर अलंकृत थी। इस लिये वह अशोक बन इन्द्र के नन्दन बनके समान था। उसमें मृगा पक्षी आदि जीव सदा निवास करते थे। अनेक प्रकार के राज महल अटारियों युक्त बने थे। जलाशय में जल कमल तथा स्थल कमल और सोने के कमल लगे थे। पुन्नाग शतावरि चंपा उद्दालक आदि के वृक्षों से वह बन चारो ओर चमकता था। उस बनकी शोभा इन्द्र के नन्दन बन और चैत्र रथ बनके समान शोभित था। उन वृक्षों के पुष्प नक्षत्र युक्त द्वितीय आकाश के समन था। वहां त्रिविध पवन सदा चलते थे। इस प्रकार उस बनकी शोभा को देखकर अशोक वृक्ष के नीचे उपवास से दुर्बल व दीन बार बार

उश्वास को लेती हुई और मलीन वस्त्र को धारण किये हुई राक्षसियों से घिरी द्वितीया के चन्द्रमा की रेखा के समान सूक्ष्म व निर्मल सीताजी को हनुमान ने देखा यद्यपि कहने को उनका स्वरूप मन्द होगया था तौ भी अत्यन्त तेज से युक्त दवी हुई अग्नि की शिखा के समान प्रकाशित थी। एकही पीताम्बर धारण किये अलंकार से हीन राम के बिरह से पीड़ित तपस्विनी के समान शोभित थीं। आंसू से पूर्ण अनशन व्रत करने से दुर्बल दुःख में परायण श्रीरामजी के चरण कमल का ध्यान करती हुई सीता को हनुमानजी देखे। जैसे अपने झुंड से विछुड़ कर मृगी भय से त्रासित होती है वैसेही राक्षसियों के मध्यमें सीता त्रासित थीं। सुख के योग्य योगरूपी दुःख से पीड़ित जानकी को देखकर हनुमानजी बिचारने लगे कि इन सब चिन्ह से युक्त यही [illegible] सीताजी जान पड़ती हैं क्योंकि बैदेही को जिस समय वह राक्षस हरे [illegible] लिये आता था तो उस समय मैंने वही स्वरूप देखा जो की आज [illegible] सामने वर्तमान है। यह वही पूर्ण चन्द्रमा के समान चन्द्रमुखी सुन्दर भौंह वाली बिशाल स्तन वाली अपने तेज से दिशाओं के अन्धकार को दूर करने वाली कमल नयनी रति से भी अधिक सुन्दरी जगत के इष्ट देवता के समान यही सीता हैं। वह सीताजी भूमी में शयन करने वाली नियम युक्त कार्य करने वाली तापसी के सदृश डरी हुई सर्पिणी के समान स्वांश को लेती हुई बड़े बिशाल शोक समुद्र में स्नान को करती हुई धूआं के जाल से बँधी आगकी शिखा के समान संदेह युक्त बेद बचन के समान पतित ऋद्धि के समान विहित श्रद्धा के समान व प्रतिहत आशा के समान रामजी की सेवा करने से व्याकुल राक्षसों के त्रास से पीड़ित सीताजी इधर उधर देखती थीं। आंसू को गिरने से मुख और नेत्र के पलक इस प्रकार श्याम हो गये थे जैसे बादल के बीच में चन्द्रमा मलीन हो जाते हैं। इस प्रकार संन्तप्त बैदेही को देखकर हनुमानजी अपने मनमें तर्कना करने लगे कि श्रीरामचन्द्रजी ने बैदेही के अंगमें हरण के समय जो आभूषण बतलाये

थे वे आभूषण आज यह धारण किये हैं या नहीं यह देखने लगे और कहने लगे कि यह उत्तमता से बने हुए दोनों कुण्डल और मणि तथा मूंगा से बने हाथ के आभूषण यद्यपि चिरकाल से धारण करने के कारण मलीन होगये हैं तो भी जैसा कि रामचन्द्रजी बताये हैं वह वैसेही हैं, इनके जो आभूषण कहीं गिर गये हैं उन्हे हम कहीं नहीं देख सकते किन्तु इस समय जो उनके अंग पर बर्तमान हैं वह सब श्रीरामजी के बताये के समान हैं इसमें संशय नहीं है। और इन्होंने जो अपना वस्त्र व अलंकार ऋष्यमूक पर्वत पर फेक दिये थीं उसे सब वानरों ने देखा था। यह वस्त्र चिरकाल से धारण करने के कारण मलीन होगया है तौ भी उसकी शोभा बिचित्र है। यह सीताजी श्रीरामजी की महिषी प्रिया हैं जो इस दशामें भी श्रीरामजी के मनसेउद्र नहीं उतरती हैं। यह वही सीताजी हैं कि जिनके लिये रामजी सन्तप्त हैं क्यों कि स्त्री को प्रनष्ट होने से करुणा आश्रिता की रक्ष न होनेसे पत्नी के वियोग में शोक और कामकी व्याकुलता से श्रीरामजीको अत्यन्त व्याकुलता हो रही है। जैसे इन देवी के अंगप्रत्यंग में सुन्दरता है वैसेही श्रीरामचन्द्रजी का भी स्वरूप है इस लिये यही सीता हैं, इनका मन श्रीरामजी में और श्रीरामजी का मन निरन्तर इन में लगा है, ये दोनो पती पत्नी आज तक जो जीवन धारण किये हैं यह अत्यन्त कठिन व दुष्कर है यह केवल दुष्टोंका नाश करने ही के लिये अवतार को धारण किये हैं ऐसा अपने मनमें बिचार कर हनुमानजी श्रीरामजी का ध्यान करके ध्यान में श्रीरामजी से जानकीजीकी प्रशंशा किये।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे पंचदशः सर्गः ॥ १५ ॥

ध्यान में हनुमानजी श्रीरामजी के समीप पहुंच कर इस प्रकार जानकी की बड़ाई करने लगे कि आपके और लक्ष्मणजी के पराक्रम को देख कर राक्षसों के भयसे सीताजी का मन कुछ भी चंचल नहीं है उनका शील अवस्था आचरण और कुल सब पहिले के समान है जैसे वर्षाकाल में गङ्गाजी अति वेग से नहीं बहतीं वैसे सीताजी शान्तभाव से रहती

हैं, और जानकीजी के कारण महा बली बाली व कबन्ध मारा गया है और क्रूरकर्म करने वाले बिराध को आपने ऐसा मारा कि जैसे शंभरासुर दैत्य को इन्द्र ने मारा है। दण्डक बनमें चौदह हजार राक्षसों को अपने बाण से आपने मारा तथा खरदूषण त्रिशिरा को मारा सीता के कारण समुद्र को लांघ कर हम लंकापुरी को आये यदि सीताजी के लिये आप भी समुद्र पर्यन्त पृथिवी की प्रदक्षिणा करें तो हमारे बिचार में अनुचित नहीं होगा। क्योंकि तिनों लोक का राज्य भी सीताजी के समान नहीं है यह सीताजी धर्मात्मा जनककी कन्या होकर अपने धर्म के अनुसार पतिव्रत का पालन करती हैं भूमि में हल चलाये जाने पर यह सीता पृथिवी से उत्पन्न हैं। निलकने के समय उनके अंगकी धूली पद्मराग मणि के समान शोभा को देती थी। यह परम यशस्विनी सीताजी महा पराक्रमी महाराज दशरथ की पुत्र बधू हुई। पुनः धर्मज्ञ कृतज्ञ बिज्ञानी श्रीरामचन्द्रजी की प्रिया होकर इस समय राक्षसियों व राक्षस के बश में पड़ी हैं। वह सब प्रकार के सुख को त्याग कर पति के स्नेह से बनबास के दुःख को तृण के समान जान कर निर्जन बनमें पति के साथ चली आईं। और फल मूल को खाकर सदा पति की सेवा करतीं व घर के समान बनमें भी प्रसन्न रहती थी। वह सीताजी रावण से हरी जाने के कारण इस समय घोर बिपत्ति में पड़ी हैं, और शील संपन्ना सीताजी को देखने के लिये श्रीरामजी इतने व्यग्र हो रहे हैं, जैसे कोई प्यासा मनुष्य बार बार जलकी इच्छा करे। इनको पाकर श्रीरामजी इस प्रकार प्रसन्न होंगे जैसे राज्य से भ्रष्ट राजा अपने राज्य को पाकर प्रसन्न होता है। अब केवल श्रीराजी के आगमन की प्रत्याण से सीताजी अपने शरीर प्राण को धारण किये हैं। यह न तो राक्षियों को देखती हैं और न तो इस उस उपबन के बिचित्र शोभा को देखती हैं केवल एकाग्र चित्त से श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान करती हैं। सब प्रकार के भूषणों से परम भूषण स्त्रियों के लिये पति ही है। इसी कारण आज इतनी शोभा युक्त होने पर भी पति से रहित शोभित नहीं

हैं । रामचन्द्रजी बड़ा दुष्कर्म कर रहे हैं जो ऐसी प्रिया बिरह में भी प्राण को नहीं देते हैं । इन कमल नयनी सुकेशी सीता को दुःखित देखकर हमारा भी हृदय पीड़ित होता है । जो पृथिवी के समान क्षमा करने वाली सीता राम लक्ष्मण से रक्षा पाती थीं आज एक वृक्ष के नीचे उन्हीं सीता की रखवाली राक्षसी व राक्षस करते हैं, जैसे रात्रिमें चकवा से बियोग पाकर चकवी दीन दशा को प्राप्त होती है वैसे श्रीजानकीजी दीन दशा को प्राप्त हुई हैं । जब अनेक प्रकार विचार से हनुमानजी को यह निश्चय होगया कि यहीं सीता हैं तब वह महा बली हनुमान सुदृढ़ होकर उसी अशोक वृक्ष पर कूद के चढ़ गये ।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥

श्रीहनुमानजी रामचन्जद्री का ध्यान करके इस प्रकार सीताजी की प्रशंसा करके बिचारने लगे और मुहूर्त भर ध्यान लगाकर आंखों गद आंसु भर तेजस्वी हनुमान सीता के आश्रित हो विलाप करने लगे कि जो लक्ष्मणजी के बड़े भाई महा पराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी की प्रिय भार्या सीता यदि दुःख से पीड़ित हैं तो काल के प्रभाव को बलवान जानना चाहिये । इसके बाद उज्वल कमल के समान निर्मल चन्द्रमा आकाश में उदय हुए जैसे हंस नील जल में प्रकाशित होते हैं । उस रात्रि के समय चन्द्रमा उदित होकर अपने शीतल किरणों कि निर्मल प्रभा से मन्त्री के समान हनुमानकी सेवा करने लगा । हनुमान ने जल में बोझ से दबी नाव की भांति पूर्ण चन्द्रमुखी सीता को शोक के भार से दबी हुई देखे । वैदेही के दर्शन की अभिलाषा किये हनुमान ने सीता के समीप में खड़ी राक्षसियों को देखा । कि उनमें किसी को एक आंख किसी को एक कान कोई बिना आंख कान की किसी के लंबे लंबे कान हैं किसी के मस्तक में नाक किसी के बड़े लंबे शिर कोई को शिरपर केश नहीं किसी के काले सर्प के समान केश थीं लंबे कान माथ वाली लंबे उदर और स्तन वाली लंबे ओठ और दाढ़ी वाली लंबे मुख और जंघा वाली ह्रस्व दीर्घ कुबरी विकट रूपिणी वामनी कराल

रूपिणी पीले नेत्रवाली विकृत मुखी विकृत पीली काली क्रोधवती कलह प्रिया वह लोहे शूल कूट मुद्गर को धारण किये सूकर मृगा सिंह भैंसा बकरा सियार हाथी ऊंट घोड़ा आदि के मुख वाली अथवा बिना शिर व पांव वाली एक हाथ पांव वाली गदहे घोड़े के समान कान वाली औ गाय हाथी बानर के समान कान बाली टेढो नाक बिना नासिका वाली हाथी के समान नाक वाली मस्तक में नाक वाली हाथी के पैर के समान वाली बड़ी लंबी गर्दन लंबे पेट लंबे स्तन वाली अनेक राक्षसियों को कराल धूम्र शूल मुद्गर खड्ग यदिश आदि अस्त्रों को लिये सीताजी के चारो ओर खड़ी राक्षसियों के घोर दर्शन से हनुमानजी को रोमाञ्च हो गया। वे राक्षसी सर्वदा मदिरा व मांस चाहने वाली बड़े मुखवाली राक्षसियां मांस व रुधिर को शरीर में लगाये हुई कराल राक्षसियों ने हनुमानजी को देखीं। उस वृक्ष को जिसपर हनुमानजी बैठे थे उसी वृक्ष के नीचे सब राक्षसी घेर कर खड़ी थी। हनुमानजी ने लक्ष्मी व सीता को शोक से पीड़ित एक वेणी को धारण किये देखा। जैसे पुण्य को क्षीण होने से आकाश से तारा का पतन होता है उसके समान पति के दर्शन की लालषा रखने वाली और उनके बिरह में दुःखित उत्तम भूषण अलंकार से रहित रावण की बन्दी खाना में पड़ी सीता कोहनुमानजी ने देखा। जैसे अपने गोल से बिछुड़ कर सिंह के घर में पड़ी हथिनी की जो दशा होती है उसी दशा में सीता प्राप्त हनुमान ने देखा। उस अशोक बाटिका के बीच में शोक सागर में डूबती हुई राक्षसियों के बीच में इस प्रकार शोभा को प्राप्त हैं जैसे मंगल ग्रह से ग्रस्त रोहिणी उदास होती है उनके समान राक्षसियों के मध्य में सीता उदास होती हैं और मृगनयनी सीता चकित मृगी के समान इधर उधर निहार रही हैं ऐसी सीता को देखकर हनुमानजी आनन्दित हुए। और रामचन्द्र तथा लक्ष्मणजी को प्रणाम करके उस वृक्ष के पत्ता पर छिप कर बैठे।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥

उस लंकापुरी को तथा अशोक बन को ढूंढते खोजते शेष रात्रि रह गई । इधर लंकापुरी में ब्रह्म राक्षसों के मुखसे चारो वेदों के शब्द सुनाई देने लगे यज्ञों में दिये गये हवन की स्वाहा का शब्द सुनाई देने लगा । कानों को सुखद मनहरण बाजों के शब्द से राण निद्रा से जाग गया, प्रतापी रावण जागतेही नई माला और वस्त्र तथा आभूषण को धारण करके जानकी का चिन्तवन करने लगा, क्योंकि काम की उत्कट कामना ने उसे सीता की ओर आकर्षित किया जिससे वह काम को शान्त न कर सका इससे वह वस्त्र आभूषण धारण करके मानों सुन्दर धवल शोभा को धारण करता हुआ पुष्पित फलित व वृक्षों से पूर्ण छोटी पुष्करणी नाना प्रकार के पुष्पों से शोभित मदमत्त चित्र विचित्र पक्षियों से शोभायमान मनोहर दृष्टिवालेहिरणों से पूरित अशोक वाटिका के वीथियों को देखता सोने के तोरण से विभूषित विविध प्रकार के मृगाओं से सेवित व गिरे हुए फलों से युक्त व सघन वृक्षों से संपन्न अशोक वाटिका में प्रातःकाल होतेही रावण आया । सैकड़ों स्त्रियां उसके पीछे २ चली आती थीं जैसे इन्द्र के पीछे देवता गंधर्वों की स्त्रियां चलती हैं । कोई स्त्रियां सोने के प्रकाशित दीप को हाथ में लिये थीं कोई चमर को कोई पंखों को कोई सोने के पिचकारियों से आगे २ जल को छिड़कती जाती थीं । कोई सुन्दर वस्त्र लिये जा रही थीं । कोई मदिरा से भरे सोने के कलश को लिये जारही थीं कोई पीछे पीछे हंस के समान मन्द गमन से चलती थीं जैसे काले बदल के संग में बिजुली चमकती है, वैसे काले रावण के संग में निद्रा व मद से भरी हुई स्त्रियां चलती हुई बिजुली के समान प्रकाशित होती थीं । कोई स्त्रियां निद्रा व मद के कारण आलसाय रही हैं पसीना से गले के माला व शिर के गूंथे फूल भींग रही हैं । ऐसी मदमत्त रावण की स्त्रियां उसके पीछे पीछे काम व मान के मारे चली आई थीं । परन्तु उन सबों का पति रावण काम बाण से पराधीन होकर सीता के निमित्त धीरे २ चला जाता था । आती हुई उन स्त्रियों की क्षुद्रघटिकाओं और

पैर के घुघुर और पायजेब के शब्द को हनुमान ने सुना इसके उपरान्त उस बाग की रक्षा करने वाले योधाओं ने रावण के आगमन को जानकर उसके आगे सुगन्धित तैल की मसाल को लेकर चले, और काम से उन्मत्त आंखों को लाल किये रावण को आगे से जाकर लिवा लाये। जब वह रावण अपने राक्षसी समाज के सहित उस अशोक वृक्ष के समीप आया तब हनुमानजी चकित होकर उसे देखने लगे कि आगे आगे मसाल लेकर रूपवती और युवती स्त्रियां आ रही हैं, फिर उन सब स्त्रियों का पति रावण उन स्त्रियों के झुंड के बीच में उस महा सुन्दर बन में तेजस्वी रावण को आते हुए हनुमानजी ने देखा कि यही रावण है जिसे हमने गृह के मध्य में शयन करते देखा था। यह सोच कर हनुमान वृक्ष के ऊपर की शाखपर कूदकर बैठ गये। हनुमान अति तेजस्वी व पराक्रमी होने पर भी श्रीरामजी के कार्य सिद्धि के लिये अपने तेज को छिपाकर पल्लवों के मध्य में बैठे। इसके बाद रावण सर्वाङ्गसुन्दरी सीताजी को देखने के निमित्त उनके सन्मुख आकर खड़ा हुआ।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दर काण्डे अष्टादशः सर्गः ॥१८॥

आनन्दित सीताजी रूप यौन संपन्न उत्तम भूषणों से भूषित राक्षसों के राजा रावण को देखकर इस प्रकार कापने लगीं जैसे वायु के चलने से पत्ता हिलता हैं इस प्रकार भय से कांपती हुई सीता को रावण ने देखा कि यह सीता पृथिवी पर बैठी अपने इन्द्रियों को बश में किये हैं, उनके अंग में मलीनता छाय रही है जैसे भैंस कीचड़ में लपटी रहती हैं, अपने मन से सदा रामचन्द्रजी की आज्ञा को पालन करती थीं उनके ध्यान में तथा उनके दुःख के बियोग से सुखी जाती रोदन करती दुःख के सागर में डूबती हुई हैं। औषध अथवा मंत्र से बंधी हुई अनेक प्रकार के चेष्टा करती हुई बिष को धारण करनेवाली सर्पिण के समान मंगल ग्रह से पीड़ित रोहिणी के समान धार्मिक व सुन्दर कुल में उत्पन्न होकर भी दुराचारी राक्षसों के वश में पड़ी संस्कार के योग्य स्त्री के समान

दुर्जनों से दूषित कीर्ति के समान आदर रहित श्रद्धा के समान परिक्षण बुद्धि के समान प्रतिहत आशा के समान अनिवारित वृद्धि के समान भंग हुई आज्ञा के समान ग्रहण से युक्त चन्द्रमा सहित पूर्णिमा की रात्रि के समान बिना सेना पति के सेना के समान पक्षियों से शून्य उदास बन के समान जल से रहित सूखी नदी के समान चन्द्रमा से हीन कृष्ण पक्ष के रात्रि के समान शीघ्रता से टूटी हुई कमल नाल के समान पिंजरे में बन्द श्वांस को लेती हुई पक्षी के समान खूंटे में बधी लालित पालित हंथिनी के समान व्याकुल व एक बड़ी लंबी केशवाली जटा से शोभित वर्षाकाल के पीछे नीले बनस्पति से पृथिवी के समान शोभित उपवास शोक ध्यान व भय से परिक्षीण दीन थोड़े भोजन को करती हुई तपस्विनी के भांति हाथ जोड़े याचना करती दुःख से व्यथित श्रीरामजी में मन लगाये देवता के समान रावण के अपमान को सहन करती हुई जानकीजी को रावण अपने मृत्यु को लालच देने लगा ।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे एकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥

रावण अपने मधुर वाक्यों से राक्षियों से घेरी गई दीन निरान्द तपस्विनी सीताजी से रावण बोला कि हे सुन्दर जंघावाली सीते ! तुम ने जो हमको देखतेही अपने अंग को छिपा लिया है इससे जान पड़ता है कि तुम कहीं कहीं भागना चाहती हो, हे विशाल नेत्र वाली ! हम तुम्हारे दर्शन के लिये बहुत दिन से इच्छा करते हैं, तुम सब गुणों से युक्त और सब के मन को हरण करन वाली हो । हे सीते ! इस एकान्त स्थानमें तुम भयको छोड़कर हमारी ओर देखो और हमसेप्रेम करो, हे भीरू ! हम जो तुमको यहां लाये हैं यह तो राक्षसों का सदा धर्म है कि वे पराई स्त्रियों के साथ विलास करें और उसे बलात्कार से हर लाये । यद्यपि हम मदसे उन्मत्त हैं और तुम्हारे देखने की उत्कट इच्छा है तौ भी तुम्हारी इच्छा के बिना हम तुम्हे नहीं देख सकते । हे देवि ! तुम किसी प्रकार का डर मत मानो और दुःख को छोड़कर हम पर विश्वास करो और हमारे साथ प्रेम करो, क्योंकि एक वणी को . धारण करना बिना बिछी हुई

पृथिवी पर शयन करना ध्यान लगाना मलिन वस्त्र को धारण करना कुसमय में उपवास करना भले मनुष्यों में उपयोग नहीं कहा जास-सकता। चित्र बिचित्र माला अनेक प्रकार के वस्त्र आभूषण विविध भांति के भोजन के पदार्थ शयन करने के बहु मूल्य शय्या आस आदि अनेक इनको ग्रहण करो और इन स्त्रियों के बीच में तुम श्रेष्ठ हो इससे इस प्रकार रहने योग्य नहीं तो तुम अपने योग्य भूष व वस्त्र को धारण करो, हमको पाकर तुम ऐसी सुन्दरी भूषण वस्त्र से हीन होकर नहीं रह सकती हो, तुम्हारी यह सुन्दर युवा वस्था बीतती है फिर यह लौट कर नहीं आयेगा, जैसे नदी का जल जो एक बार बह जाता है वह लौट कर फिर नहीं आता है, हे सीते! हमको यह जान पड़ता है कि ब्रह्माजी तुम्हारी शरीर की सृष्टि करके सृष्टि का करना बन्द कर दिया है, क्योंकि तुम्हारे प्रत्येक अंग उपमा से हीन दिखलाई देते हैं, रूप और यौवन संपन्न तुमको पाकर ऐसा कौन मनुष्य है कि जो धीरता को धारण करके लालच के वश न हो जाये चाहे ब्रह्माजी भी क्यों न हों। हे चन्द्रमुखी! तुम्हारे जिन जिन अंगों पर हमारी दृष्टि पड़ती है वह हमारी दृष्टि वहीं बँध जाती है, हे मैथिली! तुम रामचन्द्र के विषय में मोह को छोड़कर हमारी स्त्री बनो और सब पटरानियों में श्रेष्ठ होकर रहो। हमने सब लोकों को जीत कर जितने जितने रत्नों को लाये हैं वह सबके संयुक्त यह राज्य तुमको देवेंगे। हे विलासिनि। इस समस्त पृथिवी का राज्य तुम्हारे पिता जनक को देवेंगे। इस संसार में हमारे समान कोई बलवान नहीं है जो हमारे साथ युद्ध करे, सब देवता व असुर हमारी सेना के सन्मुख नहीं ठहर सकते क्योंकि हजारो बार वे हमसे हार चुके हैं और उनकी ध्वजायें टूट चुकी हैं, इस कारण तुम हमसे अनुराग करो, हम तुम्हारी इच्छा के अनुसार कर्म करेंगे तुम हमारे इस अलंकार व वस्त्र को धारण करो। हम तुम्हारा स्वरूप अलंकार धारण करने योग्य देखते हैं, हे बरानने! तुम अपनी चतुरता से प्रति कर्म संयुक्त हो। तुम अपनी इच्छानुसार

यथेष्ट सुख का भोग करो । तथा अपने इच्छानुसार धन और भूमि दीन दुखियों को दान करो । और हमारे में विश्वाश करके अपने ईसित कामकी अभिलाषा को हमसे प्रगट करो और प्रसन्नता पूर्वक हमको आज्ञा देती रहो, हमारे प्रसाद से तुम्हारे बन्धु भाई भी सुखी होंगे हे यशस्विनी ! तुम हमारे पराक्रम व राज्य लक्ष्मी को देखो । हे सुभगे ! जटाचीर को धारण करनेवाले रामचन्द्र को क्या करोगी। धन संपत्ति सेना से अकेले बनमें रहने वाले पृथिवी पर शयन करने वाले रामचन्द्र को लेकर क्या करोगी क्योंकि उनके जीने और न जीने में भी सन्देह है, फिर रामचन्द्रजी तुमको देख भी नहीं सकते, जैसे बकुला के पांति को आगे किये श्यामघटा से छिपी हुई सूर्य की प्रभा को कोई नहीं देख सकता । अब रामचन्द्र हमारे हाथ से तुमको नहीं प्राप्त कर सकते हैं, जैसे इन्द्र के हाथ में गई हुई अपनी कान्तिरूपी भार्या को हिरण्य कश्यपने नहीं पाई । हे सुन्दरी ! तुम हमारे मनको हर लेती हो जैसे गरुड़सर्प को हरलेते हैं । इस प्रकार मलीन वस्त्र को धारण किये भूषण वस्त्र से रहित तुमको देखकर सोचके मारे हम अपने स्त्रियों से भी रती नहीं करते हैं हे जानकी ! हमारे निवास की जितनी स्त्रियां हैं उन सबका ऐश्वर्य तुम अपने में स्थापित करो । तीनों लोक में श्रेष्ट जितनी सुन्दरी हैं वह सब हमारी स्त्रियां हैं, वे सब स्त्रियां तुम्हारी सेवा इस प्रकार करैंगी जैसे लक्ष्मी की सेवा अप्सरा करती हैं । हे देवि ! रामचन्द्र तपस्या बल पराक्रम धन तेज और यश में हमारे समान नहीं हैं, इस लिये रामचन्द्रजी की चिन्ता को छोड़ कर अपने इच्छानुसार सुख भोग करो ।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे विंशः सर्गः ॥ २० ॥

उस रूद्रस्वभाव वाले रावण के वचन को सुनकर सीताजी अति दुःखीत हुई और अति दीन दुःखित तथा मधुर स्वर से तृण का ओट देकर बोली, हे रावण ! अपने मनको हमारी ओर से लौटा कर अपनी स्त्रियों में मन को लगाओ क्योंकि तुम हमें नहीं प्राप्त कर सकते

जैसे पापी मनुष्य सिद्धि को नहीं प्राप्त कर सकता है इससे तुम हमारी प्रार्थना करो क्योंकि मुझ पतिव्रता से यह निन्दित कर्म नहीं हो सकता है, हम एक तो उत्तम कुल में उत्पन्न हुई हैं दूसरे उत्तम कुल में ब्याही गई इस कारण हमारे समान स्त्रियों से ऐसा सागर्हित कर्म नहीं हो सकता है यशस्विनी सीता ने रावण से इस प्रकार कह कर उसकी ओर पीठ कर दिया और पुनः बोलीं, कि हमसे तुम्हारा उद्वेग नहीं होगा क्यों कि हम दूसरे की धर्मपत्नी हैं, अच्छे मार्ग पर चलो और सज्जनों के समान सुन्दर कर्मों को करो, हे राक्षस! अपनी और पराये की स्त्रियों की एक समान रक्षा करो, अपनी आत्मा को उपमान कर अपनी स्त्रियों के साथ प्रीति करो। क्योंकि जो अपने इन्द्रियों को वशमें न करके अपनी स्त्रियों के साथ विषय भोग से सन्तुष्ट होकर दूसरे के स्त्रियों में अनुराग व प्रेम करता है वह पुरुष सज्जनों से तिरस्कारित होकर अपने कर्म से नर्क का भोग करता है क्या इस लंका में कोई सज्जन नहीं हैं अथवा है तो तुम उनके मार्ग पर क्यों नहीं चलते जिससे तुम्हारी यह दुर्बुद्धि बदल जावे, अथवा तुम्हारी इस प्रकार बुद्धि बदलने से देवतों का कुशल व राक्षसों का नाश होगा। जिस कारण तुमको ऐसा ज्ञान हुआ है, जिस प्रकार अधर्मी और अन्याय करने वालेराजा का राज्य नाश हो जाता है उसी प्रकार धन धान्य से पूर्ण तुम्हारी लंका तुम्हारे पाप से नाश हो जायगी। हे रावण! जब तुम अपने किये पाप से नाश को प्राप्त होओगे तो तुम्हारे मरने पर तुमसे दुःखको प्राप्त हुए मनुष्य सुख और आनंद को प्राप्त होगे। हे रावण! तुम अपने धन और ऐश्वय से हमको लुभा नहीं सकते हो, जिस प्रकार सूर्य की प्रभा सूर्य को छोड़कर अलग नहीं हो सकती उसी प्रकार हम रामचन्द्रजी को छोड़कर दूसरे की नहीं हो सकती हैं, जो मैंने श्रीरामजी के भुजा पर सिरको रखकर शयन किया है तो आज दूसरे के भुजा पर किस प्रकार शयन करेंगी। हम उन्हीं पृथिवी पति की भार्या है जैसे तपस्वी की ब्रह्म विद्या उसी के काम के लिये है दूसरे के काम की

नहीं होती । हे रावण ! यदि तुम अपना कल्याण चाहो तो मुझ दुखिनी को श्रीरामचन्द्रजी के निकट पहुंचा आओ । यदि तुम अपना प्राण और लंकापुरी का रक्षा चाहो तो पुरुष श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी को अपना योग्य मित्र बनाओ यदि तुम्हें जीवन की इच्छा हो तो सर्व धर्म को जाननेवाले शरणागत वत्सल श्रीरामजी से मित्रता को उन शरणागत वत्सल को प्रसन्न करो और निर्मल चित्त होकर मुझे उनको सर्पण करो, इस प्रकार कार्य करने से तुम्हारा कल्याण होगा इसके विपरीत करने से तुम्हें कठिन वितत्ति भोगनी पड़ेगी । चाहे तो प्राणि इन्द्र के बज्र से शिव के पिनाक से यमराज बंधा दे सकते है परन्तु लोक नाथ श्रीरामचन्द्रजी के क्रोध युक्त बाण से बचना कठिन है, तुम रामजी के बाण बज्र के समान कठोर शब्द को अवश्य अपने कान से सुनोगे, और रामलक्ष्मण के कठिन बाण इस लंकापुरी में अवश्य गिरैंगे और वे कंकयुक्त बाण राक्षसों का नाश करैंगे जैसे गरूण सर्पों का नाश करते हैं वैसे श्रीरामचन्द्रजी इस लंका के राक्षसों का नाश करैंगे । जैसे विष्णु ने अपने तीनपग से राजाबलि की लक्ष्मी को ले गये थे, वैसेही हमारे स्वामी श्रीरामजी शत्रुओं को नाश करने वाले हमें तुम्हारे हाथसे छुड़ा ले जायंगे, जब दण्डकबन में खरदूषण व त्रिशिरा आदि राक्षसों को सेना सहित क्षण भर में नाश करके जन स्थान में रहे तब तमने उनके रहते हुए मुझे नहीं हरण किया, जब वह दोनों पुरुष सिंह माया के मृगा के छल से और हमारी इच्छा से आश्रम को छोड़ कर दूर चले गये तब तुमने मुझे हरण किया है । जैसे सिंह के सन्मुख कुत्ता नहीं ठहर सकता वैसे रामचन्द्रजी के सामने तुम भी नहीं ठहर सकते हो जैसे वृत्रासुर अपनी एक भुजा रह जाने से इन्द्र के सन्मुख लड़ने को समर्थ नहीं हुआ, वैसेही तुम भी राम लक्ष्मण के संग विग्रह करने पर उनके सन्मुख तुम्हारी गति नहीं हो सकती जैसे थोड़े जल को सूर्य सुखा लेते हैं वैसेही रामलक्ष्मणजी अपने बाण से तुम्हारे प्राण को हरण करैंगे । चाहे तुम पर्वत पर अथवा

कुबेर लोक में या गरुड़ के समीप जाओ परन्तु जैसे बड़े वृक्ष को वज्र काट डालता है वैसेही काल निकट आने पर रामचन्द्रजी निश्चय तुमको खण्ड खण्ड कर डालेंगे।

इती बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे एकविंशः सर्गः ॥ २१ ॥

इस प्रकार सीताजी के कठोर बचन को सुनकर राक्षसों का राजा रावण प्रिय दर्शना सीता जी से भी कठोर बचन को बोला, कि जैसे पुरुष स्त्रियों की शांति करता है वैसे वैसे स्त्रियां पुरुष के अधीन होती जाती हैं, परन्तु हमने जैसा प्रिय बचन तुमको कहा है वैसेही तूने अपने कठ बचन से हमारा तिरस्कार किया है, इस समय तुम्हारे शरीर को मोह से मैं अपने क्रोधको रोकता हूं जैसे मार्गसे बाहर दौड़ते घोड़ेको उत्तम सारथी रोक लेता है। जिसमें क्रूर कामि निश्चय कर बंध जाता है उसके ऊपर दया और स्नेह उत्पन्न हो जाता है, हे चन्द्रमुखी! इस कारण हम तुम्हारा बध नहीं करते हैं तुम निष्प्रयोजन भ्रमण करने वाले रामचन्द्र में निरुक अपमान व बध करने योग्य हो, जो जो कठोर बचन तूने मुझको कहा है इससे हे मैथिली! तू बार बार दण्ड देने योग्य हो। राक्षस राज रावण वैदेही ऐसा कह कर अत्यन्त क्रोधित होकर सीताजी को उत्तर देने लगा कि हे सुन्दरि! आज से दो महीने की अवधि हम तुमको देते हैं तुम रामचन्द्रजी के विषय में शोक सन्ताप करती हो उसे छोड़ कर और हमारे भूषण वस्त्र को धारण करके यदि हमारे शयन करने के स्थान पर आकर हमको सन्तुष्ट नहीं करोगी तो मैं दो महीने के उपरान्त अपने खड्गसे तुम्हारे अंगको काट काट कर राक्षसोंको देऊंगा। राक्षसों के राजा रावण के इस प्रकार कठोर बचन को सुनकर सीताजी कांपने लगीं और वहां पर जितनी देवता और गंधर्व की कन्या थीं वह सब रावण के कठोर बचन को सुनकर सीताजी के स्वरूप को देखती हुई रोदन करने लगीं। और अपने आंख तथा ओष्ठ के इशारा से सीताजी को समझाने लगीं। उन स्त्रियों से आश्वासित सीता अपने हितकी और पति के पराक्रम के अभिमान से फिर भी रावण से बोलीं,

कि हे राक्षस ! इस नगर में तुम्हारा कोई कल्याण चाहने वाला नहीं है इससे तुमको इस दुष्ट कर्म से तुमको कोई नहीं रोकता है, क्यों कि इन्द्रके की इन्द्राणी के समान धर्मात्मा रामचन्द्रजी की स्त्री से तुम अधर्मी को छोड़कर और कोई ऐसी अनुचित बात नहीं कहेगा। हे राक्षसाधम ! तेजस्वी रामचन्द्रजी की स्त्री से जो अनुचित की बातें तुमने कही हैं इससे यह तेरा पाप कब छूटेगा। जैसे बनमें हाथी और खरहे दोनों रहते हैं, वैसेही श्रीरामचन्द्रजी प्रमत्त हाथी के समान हैं और तू नीच खरहे के समान है। जब तक तुम उनके नेत्रों के सन्मुख नहीं होतेहो तभी तक तुम श्रीरामजी पर दोष देते हुए भी लज्जित नहीं होते। हमको तूने ऐसी दृष्टि से देखते हो क्या इससे तेरे यह नेत्र पृथिवी पर नहीं गिर पड़ते हैं। हे पापी ! उन धर्मात्मा रामचन्द्रजी की स्त्री और दशरथजी की पतोहू से ऐसा कहते हुए क्या तेरी जिह्वा टूट कर पृथिवी पर नहीं गिर पड़ती है। हे दशानन ! रामचन्द्रजी की आज्ञा से तपस्या पालन करने कारण हम तुमको को भस्म नहीं कर डालती हैं क्योंकि श्रीरामचन्द्रजी ने तुमको बध करने की प्रतिज्ञा की है इस कारण तुम्हारे इस कठोर बचन को सुनकर भी तुमको अपहरण नहीं कर सकती हैं। जो तुम अपने को शूर बीर और पराक्रमी कुबेर का भाई मानते होतो किस कारण श्रीरामचन्द्रजी को मारीच की माया के छल से रामचन्द्र को मोहित करके चोरी किया। राक्षसों का राजा रावण सीताजी के कठोर बचन को सुनकर अपने विशाल नेत्र को फैलाकर श्रीजानकीजी की ओर देखने लगा। रावण क्रोध से आंख को लाल किये जानकी की ओर देखता और सूर्य के समान श्वांस को लेता हुआ सीताजी से बोला कि अनीति युक्त बचन को कहने वाली और निष्प्रयोजन वृत्त में लगी आज मैं तेरा नाश करदूंगा जैसे संध्याकाल का नाश कर देता है। रावण इस प्रकार जानकी से कहकर राक्षसियों की ओर देखने लगा, और एकाक्षी, एक कर्ण, प्रावरणवती, गोकर्णी, हस्तिकर्णी लंब कर्णी, हस्तिपदी, शंखपदी, पादचूलिका, एकनयनी, एकपदी, पृथुशीर्षी,

अपादी, दीर्घशिरा, दीर्घग्रीवा, दीर्घकुचवती कुपेटी, दीर्घजिहवा, दीर्घ नयनी, सिंहमुखी, गोमुखी, सूकरमुखी, आदि सब राक्षसियों को आज्ञा दिया कि तुम लोग सामदान भेद आदि उपायों से चाहे जिस प्रकार हो उस प्रकार जानकी को हमारे बश में करने का प्रयत्न करो। जब राक्षसियों ने रावण की आज्ञा को पाकर जानकीजी के समीप जाकर गर्जना करने लगीं कि इसके बाद धान्य मालिनी नाम राक्षसी रावण से बोली, कि हे महाराज ! सीताजी को लेकर क्या करोगे मेरे साथ एकान्त में क्रीड़ा व बिहार करो। हे राक्षसेश्वर ! यह मनुष्य के तन को धारण किये कृपण वर्ण सीताजी निश्चय भोग के योग्य नहीं हैं। तुम्हारे बाहु बल से इकट्ठी की हुई सामर्थ्य देवताओं की दुर्लभ है रति हीन स्त्री के संगत से शरीर को सन्ताप होता है, और इच्छा करनेवाली कामिनी से सुन्दर प्रीति होती है उस राक्षसी के इस प्रकार बचन को सुनकर इन्द्र के समान प्रसन्न होकर निवृत्त हुआ, और प्रसन्नता पूर्वक सूर्य के समान मन्दिर में प्रवेश किया, इसके बाद देवकन्या गंधर्वकन्या नागकन्या रावण के साथ उत्तम गृह में चली गईं। धर्म में तत्पर मैथिली को रावण ने डराकर मदन से मोहित होकर सीता को छोड़कर अपने स्थान में चला गया।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥

शत्रुओं को त्रास देने वाला रावण इस प्रकार जानकी से कह कर और सब राक्षसियों को आज्ञा देकर चलागया, तब रावण की आज्ञा को पाकर राक्षसी सीताजी के ओर दौड़ीं व उनके निकट में जाकर क्रोध से युक्त वे राक्षसी कठोर बचन को बोली, कि हे सीते ! पुलस्त्य वंश में उत्पन्न श्रेष्ठ महात्मा रावण की भार्या होना तुम क्यों नहीं अंगीकार करती। इसके बाद एक जटा नामकी राक्षसी हाथ जोड़कर सीता से यह बचन बोली, कि छिः प्रजापतियों में चौथे प्रजापति ब्रह्माजी के, मानसी पुत्र पुलस्त्यजी हैं। उन तेजस्वी महर्षि पुलस्त्य के मानसी पुत्र प्रजापति के समान विश्रवाजी हुए। हे विशालाक्षि ! उनके पुत्र

शत्रुओं को भय देने वाले रावण हुए, उन राक्षसों के राजा रावण की तुम भार्या होने योग्य हो हे सुन्दरी ! तुम हमारे बचन को क्यों नहीं मानती हो, इसके बाद हरिजटा नाम राक्षसी बिलार के समान आंख को लाल किये क्रोध पूर्वक बोली, कि जिसने तेंतीस कोटि देवता व देवलोक के राजा इन्द्र को जीतकर अपने अधीन कर लिया है तुम उस राक्षसों के राजा रावण की भार्या होने योग्य हो। वह अत्यन्त शूर बीर व पराक्रमी है वह कभी संग्राम से नहीं लौटता है तुम उस बलवान बीर की भार्या क्यों नहीं होती। महाबली रावण अत्यन्त प्रिय भार्या भाग्यवती मन्दोदरी अपनी स्त्री को छोड़कर तुम्हारे संग रहैंगे। इसके उपरान्त विकटा नाम राक्षसी बोली, कि उस शूर बीर ने संग्राम में नाग देवता, गंधर्व, दानवों को विजय किया है सो वह रावण स्वयं तुम्हारे निकट आया है तुम महाधनी महात्मा रावण की भार्या क्यों नहीं होती हो। इसके उपरान्त दुर्मुखी नाम राक्षसी बोली कि जिसके भय से सूर्य नहीं तपते वायु अपने वेग से नहीं चलते जिसके भय से वृक्ष अपने आप पुष्प की वर्षा करते हैं पर्वत झरनों से जल को देते हैं इच्छा करने पर मेघ साथ साथ वर्षा करते हैं उन राज राजेश्वर राक्षसाधिपति की भार्या होने को क्यों नहीं इच्छा करती हो हे भामिनी ! हमने सत्य कहा है तुम रावण को पति बनाओ ऐसा न करने से तुम्हारा जीना दुर्लभ होगा।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे त्रयो विंशः सर्गः ॥ २३ ॥

इसके बाद वे विकराल मुखी राक्षसियां कठोर अप्रिय बचन को सीताजी से बोलीं, कि हे सीते ! सब प्राणियों को आनन्द देने वाले रावण का बहुमूल्य शयनागार तुमको क्यों नहीं अच्छा लगता है, तुम मानुषी हो इस लिये मनुष्य की भार्या होना श्रेष्ठ जानती हो, राम के प्रेम से तुम अपने मन को हटाओ अब उनकी संगति तुमको नहीं होगी। अब तीनों लोक स्वामी रावण को अपना पति बनाकर सुख पूर्वक बिहार करो। कमल नयनी सीताजी उन राक्षसियों के इसप्रकार

बचन को सुनकर आंखों में आंसू भर कर यह बचन बोलीं कि मानुषी राक्षस की भार्या होने योग्य नहीं हैं चाहे तुम सब राक्षसी मिलकर मुझे भोजन कर लो परन्तु इस दुष्ट बचन को हम नहीं मानेंगी। चाहे दीन हों राज्य से हीन हों परन्तु हमारे पति रामचन्द्रजी गुरु के समान हैं हम सदा उन्हींमें अनुराग करती हूं जैसे सूर्य की स्त्री सुवर्चला सूर्य में लीनरहती हैं जैसे महा भाग्यवती इन्द्राणी इन्द्रमें लीन रहती हैं अरुन्धती वसिष्ठ में रोहिणी चन्द्रमा में लोपामुद्रा अगस्त्य में सुकन्या च्यवन में सावित्री सत्यवान में श्रीमती कपिल देव में मदयन्ती सौदास में केशिनी सगर में दयमन्ती नल में नैमी अपने पति में जैसे लीन रहती हैं उसी तरह हम भी लोकनाथ रामचन्द्रजी की अनुव्रता हैं। सीताजी के यह बचन सुनते ही रक्षसियां क्रोध से मूर्छित होगईं और रावण की आज्ञा से कठोर बचन को कहने लगीं, श्रीहनुमानजी मौन व्रत को धारण किये शिंशपावृक्ष पर बैठकर सीता को तर्जना करती हुई राक्षसियों के बचन को सुनते थे। राक्षसियां चारो ओर से घेर कर कभी सीताजी के निकट आतीं अभी जीभ आदि को निकाल कर सीता को त्रास देतीं और अत्यन्त क्रोध करके खड्ग लेकर सीताजी की ओर दौड़ती और कहती की यह राक्षसों के राजा रावण की स्त्री होने योग्य नहीं है। राक्षसियों के इस प्रकार तर्जना को आंख से देखती हुई आंसू को पोंछकर सीताजी राक्षसियों से घेरी गई शिंशाया वृक्ष के नीचे बैठ गई और राक्षसी चारो ओर से उनको भय देने लगीं, इसके बाद अति कराल निम्नोदरी नामकी राक्षसी बोली, हे सीते! तुमने इतना अधिक स्नेह अपने पतिमे दर्शाया है परन्तु हे भद्रे! तुम्हारे मानुषी धर्म युक्त स्भाव से हम सन्तुष्ट हैं परन्तु हे मैथिली! अपने हित के लिये हमारे भी बचन को अंगीकार करो अब राक्षसों के स्वामी रावण को अपना पति बनाकर सेवा करो, चतुर शीलवान सर्व प्रियवादी मानुष रामचन्द्र को छोड़कर राक्षसेन्द्र रावण का आश्रय करो और दिव्य वस्त्र अलंकार को धारण करके आजही रावण की प्रिय भार्या होकर रावण की पट

रानियोंमें अग्रसर होओ। जैसे अग्निके साथ स्वाहा इन्द्रके साथइन्द्राणी पितरोंके साथ स्वधा रहती हैं वैसेही रावणको अंगीकार करके रामके आश्रय को त्याग करो यदि हमारे इस बचन को तुम न मानोगी तो क्षण भरमे हम तुमको भोजन कर लेवगी। इसके उपरान्त लंपयोधरी क्रोध युक्त मुका उठाये गर्जती हुई एक विकठा नाम की राक्षसी बोली, कि हे मैथिली! हमने बहुत कृपा करके अपने कोलम स्वभाव से तुम्हारे इस कठोर बचन को सहन किये, देखो जो दूसरे से पार न हो सके ऐसे समुद्र को पाकर तुम बुलाई गई हो, और रावण के अन्त पुरमे रहने योग्य हो और यहां हम सब तुम्हारी रक्षा भी करती हैं, अब साक्षात् इन्द्र भी तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकते हैं इस लिये तुम हमारे इस प्रकार बचन को पालन करो निरन्त अपनी शोक व दीनता को छोड़कर प्रसन्न होओ और राक्षस राज रावणके साथ सुख पूर्वक क्रीड़ा करो देखो कि स्त्रियों का योबन सदा स्थिर नहीं रहता है इस कारण जब तक योबन है तब तक सुख भोग करो रमणीक बन उपबन और बगीचा में राक्षस राज रावण के साथ मदिरा से उन्मत्त होकर बिहार करो। और रावण की आज्ञा से हजारों स्त्रियां तुम्हारी सेवा करेंगी, अब तुम राक्षस राज रावण को पति बनाकर सेवा करो, नहीं तो हे मैथिली! हम तुम्हारे हृदय को फाड़ कर भक्षण कर जायेंगी। यदि तुम हमारे बचन को न मानोगी तो दुःखी होओगी। इसके बाद चण्डोदरी नामकी राक्षसी बोली, कि रावण से हरी गई सीता को देख कर हमारी यह इच्छा होती है कि अपने शूल से इसके अंग को काट कर भक्षण कर जावें, इसके बाद प्रघणा नामकी राक्षसी बोली, कि इस सीता निर्दय के कण्ठ में पीड़ा पहुंचाओ, इसको यहां रहने से क्या प्रयोजन है, इस मानुषी सीताकी मृत्यु होगई ऐसी सूचना रावण को देदेवेंगी। इसके बाद हम सब मिल कर इसको खाजावेंगी। इसमें कुछ सन्देह नहीं है। इसके बाद अजामुखी नाम की राक्षसी बोली, कि हम सब बाट कर इसको खालेवेंगी हमें विवाद करना अच्छा नहीं

मालूम पड़ता। पीने के लिये मदिरा व विविध प्रकार की माला धारण करने के लिये लाओ। इसके बाद सूर्पणखा नामकी राक्षसी बोली कि अजा मुखी ने जो कहा है वह हमारी भी सम्मति है सब प्रकार के शोक को नाश करने वाले मदिरा को लाओ। मनुष्य का मांस खाकर निकुम्भिला के समीप हम जाकर नृत्य करेंगी। इस प्रकार देव कन्याओं के तुल्य सीताजी राक्षसियों से त्रास को पाकर धैर्य को छोड़ कर रोदन करने लगीं।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे चतुर्विंशः सर्गः ॥ २४ ॥

इसके बाद सीताजीको अनेक दारूण व पुरूष बचनको राक्षसियों ने कहा तब जानकीजी रोदन करने लगीं कि इसके बाद अपने हृदय को किंचित् धैर्य देकर गद्गद बाणी से बोलीं कि मानुषी राक्षस की स्त्री होने योग्य नहीं है चाहे तुम सब मिलकर हमको भक्षण कर जाओ परन्तु तुम्हारे बचन को हम अंगीकार नहीं करेंगी। देवकन्याओं के तुल्य सीताजी राक्षसियों के मध्य में स्थित रावण से दुःखित और शोक से पीडित होकर रोदन करने लगीं जैसे अपने झुंड से बिछुड़ कर मृगी दुःखको पाती है इस प्रकार शोक सागर में डूबती हुई सीता श्रीरामजी की चिन्ता करने लगी व नेत्रों से जलकी धारा को बहाती हुई अपने अंग को स्नान कराने लगीं परन्तु शोक के अन्त को नहीं पहुंची। सीताजी बायु के झोके से कैलाश के समान कांपती हुई गिर पड़ी व बिवर्ण बदन होगई। उस समय उन कांपती सीताजी की बहुत लंबी वेणी सर्पिणी के समान दिखलाई पड़ती थीं। श्रीजानकीजी लंबी श्वांस को लेती हुई शोक से दीन व व्याकुल चित्त से आंसू को बहाती बिलाप करने लगीं व दुःख से पीडित होकर कहने लगीं कि हा राम! हा लक्ष्मण हा माता कौशल्या! हा सुमित्रा! लोक प्रवाद के अनुसार पण्डितों ने यह सत्यही कहा है कि स्त्री अथवा पुरुष को अकाल में मरण दुर्लभ है। इस लिये इन राक्षसियोंसे पीड़ा कर भी हम रामचन्द्रजीके बिना अब तक भी जीवित हैं, यह थोड़ी पुण्य करनेवाली राक्षसी इस प्रकार

नाश हो जायंगी, जैसे वायु के वेग से जल में नौका डूबजाती है। हम अपने स्वामी को नहीं देखती हुई इन राक्षसिमों के बीच में पड़कर इस प्रकार दुःखको सहन करती हैं, जैसे नदी के जल से नदी के किनारे के वृक्ष टूट कर गिर पड़ते हैं। उन कमल नयनी सिंह के समान पराक्रमी प्रिय बचन बोलने वाले सत्यप्रतिज्ञ कृतज्ञ हमारे प्राण नाथ को जो लोग देखते होंगे वे धन्य हैं। उन रामचन्द्रजी के बिना हमारा जीवन विषको खाने वाले के समान दुर्लभ है। हमने पूर्वजन्म में जो कुछ महा पाप किये हैं उसी पाप के फल से आज राक्षसियों के बीच में इस प्रकार के दुःखको भोगती हैं, अब इन राक्षसों के नगर में श्रीरामजी के दर्शन हमको नहीं मिलेंगे, मनुष्य जन्मको धिक्कार है और इस पराधीनताको भी धिक्कार है जो अपनी इच्छा अनुसार अपने जीवन को त्याग नहीं कर सकती हैं।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दाकाण्डे पंचविंशः सर्गः ॥ २५ ॥

श्रीजानकीजी नीचे को मुख किये आंसू को बहाती बिलाप करती इस प्रकार पृथिवी पर लोटती हुई सोचती थी जैसे घोडी का बच्चा पृथिवी पर लोट कर अपने परिश्रम को दूर करता है, रामचन्द्रजी को न रहने पर काम रूपी यह रावण हठात हमको हर लाया अब मैं राक्षसियों के वश में पड़ कर सदा दारुण दुःखको पाती और चिन्ता करती हैं कि हम इस दुःखसे दीन हो जीने के इच्छा नहीं है, मगर महा रथी श्रीरामचन्द्रजी के बिरह में पड़ कर और राक्षसियों के मध्य में निवास करके हमारे जीवन से तथा भूषण व अलंकार धारण करने से हमें क्या प्रयोजन हैं। निश्चय हमारा यह हृदय पत्थर का बना हुआ है जो इतना दुःख पाने पर भी नहीं टूटता है, मर्यादा से हीन होकर राक्षस के अधीन में जीने से हमको धिक्कार है जो बिना श्रीरामचन्द्रजी के जीवन को लाभ करती हैं। हम अपने बाम चरणसे भी राक्षस को स्पर्श नहीं कर सकती हैं फिर रावण को किस प्रकार अपना पति बनावेंगी। यह दुष्ट रावण हमारे कहने को तथा अपने और अपने कुलको नहीं जानता है जो मेरी प्रार्थना की इच्छा करता है, हमारा चाहे अंग अंग कट जाये चाहे

आग में जलादी जायें परन्तु रावण को अपना पति नहीं करूंगी। हम प्रख्यात बुद्धिमात कृतज्ञ सदाचारी व कृपालु रामचन्द्रजी को अपने अभाग्यता से छूटने की शंका करती हैं जिन्हों ने जनस्थान में चौदह हजार राक्षसों को अकेले ही विध्वंस कर डाला, वे क्या हमें प्राप्त होंगे। हम निर्बल राक्षस से अवरोध की गई निश्चही हमारे संग्राम में रावण के मारने में समर्थ होंगे। जिन रामचन्द्र ने दण्डक बन में विराधनाम राक्षस को वध किया वे क्या हमें नहीं प्राप्त होंगे। यह लंकापुरी समुद्र के मध्य में दूसरे को जीतने योग्य नहीं है परन्तु राघव के बाण की गति यहां भी पहुंच सकती है, दृढ़ पराक्रमी रामचन्द्र राक्षस से हरी भार्या के इष्टको जो नहीं प्राप्त होते क्या कारण है। लक्ष्मणजी के ज्येष्ठ भ्राता हमारा यहां का रहना नहीं जानते होंगे, जानने पर तेजस्वी रामचन्द्रजी हमारी इस दुर्दशा को नहीं सहन कर सकेंगे। हमारे इस हरण होने का हाल रामचन्द्रजी से कौन जाकर कहेगा रावण ने तो गिद्धराज जटायु को भी मार डाला है। उस गिद्धने हमारा बड़ा भारी उपकार किया है जो वृद्धावस्था होने पर भी रावणको मारने के लिये संग्राम में आकर खड़ा हुआ। यदि रामचन्द्रजी हमको लंकापुरी में रावण के गृह में जानें तो आजही क्रोध पूर्वक अपने बाणों से संसार के राक्षसों का नाश कर डालें, इस लंकापुरी को भस्म कर डालेंगे समुद्र को सुखा डालेंगे और पराक्रमी रामजी इस नीच रावण के नाम व यश का नाश कर देवगे, ये राक्षसी अपने अपने पतिके मरण से जैसा हम रोदन करती हूं वैसाही रोदन ये सब करेंगी। इस में कुछ संशय नहीं है। श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीकेसहित इस लंकापुरीमें राक्षसों को ढूंढ ढूंढ कर मारेंगे। रामलक्ष्मण अपने शत्रुको क्षणभर भी जीवित नहीं छोड़ेंगे। इन राक्षसों की चिता के धुआं से यह लंका भर जायगी थोड़ेही काल में यह लंकापुरी श्मशानके समान हो जायगी। थोड़ेही काल में हमारा मनोरथ सिद्ध हो जायगा। जहां सब लोग कुमार्ग पर चलते हैं उस स्थान का अवश्य नाश होता है जैसे अशुभ आज लंका

में दिखाई पड़ते हैं उससे मालूम होता है कि थोड़ेही काल में लंका में रहने वाले राक्षसों का नाश हो जायगा । यह निश्चय है कि इस पापी रावणकी मृत्यु होने पर यह लंका स्वयं सूख जायगी, जैसे पति को मरने पर विधवा स्त्री सूख जाती है । इन राक्षसों के मरने पर यहां गृह गृह में स्त्रियां पति से रहित होकर रोदन करेंगी । और इन राक्षसियों के हाहा कार शब्द को हम सुनेंगी यदि रामचन्द्रजी हमारे निवास को लंकापुरी में जानेंगे तो हमारे मारने को अपराधी रावण ने जो महीने भरका समय निश्चय किया है उसके भीतर ही रावणको मार कर हमको लेचलेंगे । इस दुष्ट रावण ने हमारी मृत्यु का जो समय निश्चत किया है, उसे यह पापकारी राक्षस विपरीत नहीं समझते । क्योंकि यह मांसहारी राक्षस धर्म को तो जानते ही नहीं हैं, इस लिये इस हिंसा रूपी अधर्म से महा उत्पात होगा । निश्चय यह राक्षस प्रा भोजन के लिये हमारे मांस को अपने काम में लावेंगे उस समय बिना रामचन्द्रजी के हम क्या करेंगी । इस कारण अब अरुण लोचन श्रीरामचन्द्रजी को अपने आंखों से न देखकर पति के बिरह दशा में दुःखित होकर यमराज को देखेंगी । भरत के ज्येष्ठ भाई रामचन्द्रजी हमको जीवित नहीं जानते होंगे नहीं तो पृथिवी भर नहीं ढूढते ? निश्चय रामचन्द्रजी हमको न देखकर हमारे शोकसे पृथिवी पर शरीर को त्यागकर यहां से देवलोक को चले गये होंगे । देवलोक बासी धन्य हैं जो श्रीरामजी का दर्शन करते होंगे । उन धर्मात्मा राजर्षि रामचन्द्रजी को हमारी समान स्त्री से कुछ प्रयोजन नहीं होगा क्योंकि देखने से प्रेम होता है, बिना देखे प्रेम नहीं रहता है तौ भी कृतघ्न मनुष्य प्रेम भाव को छोड़ देते हैं, परन्तु लोक में आदर्श पुरुष होकर पति पत्नी के अन्तर्गत प्रेम को स्वर्ग में भी नहीं छोड़ सकेंगे या हमारे अवगुण को देखकर श्रीरामजी हमको छोड़ दिये हों अथवा हमारे भाग्य ही बिगड़े हों जिससे मैं रामचन्द्रजी से हीन होगई । अब शत्रुओं को नाश करने वाले श्रीरामचन्द्रजी के बिहर में जीने से मरण भला है । अथवा

रामचन्द्र और लक्ष्मणजी हमारे वियोग से फल मूल को खाकर वैराग्य पूर्वक अस्त्र शस्त्र को छोड़ दिये होंगे। अथवा दुष्ट राक्षस रावण किसी प्रकार के छल से उन दोनों भाइयों को मार डाला होगा। इस लिये हमारा इस समय का मरना अच्छा है, परन्तु क्या करें इतना दुःख पड़ने पर भी हमारी मृत्यु नहीं होती। तपस्या करने वाले मुनि लोग धन्य हैं जो आत्मा को जीत कर अपने वश में कर लेते हैं, आत्मा को बसमें होने से उनको सुख दुःख नहीं होता है, जिन लोगों को सुख दुःख नहीं होता है वे महात्मा धन्य हैं, अब जिस किसी प्रकार होगा हम अपनी प्राण अवश्य नाश कर देवेंगी।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे षड्विंशः सर्गः ॥ २६ ॥

सीताजी के इस प्रकार बचन को सुनकर राक्षसी अपने क्रोध से मूर्छित होकर कोई तो दुष्ट रावण से यह वृत्तान्त कहने को चली गई। और कोई राक्षसी फिर भी सीताजी के निकट जाकर कठोर व दुर्बचन को कहने लगीं कि हे सीते! हे पाप में निश्चय करने वाली! आज अभी हम सब राक्षसी तुम्हारे मांस को सुख पूर्वक खायेंगी। उन राक्षसियों के क्रोध युक्त बचन को सुनकर त्रिजटा नाम वृद्धा राक्षसी उन राक्षसियों से बोली, हे दुष्टा! तुम सब अपनी आत्मा को खाओ, सीता को भक्षण न करो। यह महाराज जनक की कन्या दशरथजी की पतोहू हैं। और हमने आज रात्रि में एक बड़ा विचित्र स्वप्न देखा है, जिस स्वप्न में रामजी का आगमन व राक्षसों का बिनाश देखा हैं। त्रिजटा के इस प्रकार बचन को सुनकर भयसे कांपती हुई राक्षसि फिर भी त्रिजटायाँ से बोलीं कि तुमने रात्रि में कैसा स्वप्न देखा है सो कहो। राक्षसियों को पूंछने पर त्रिजटा ने प्रातः काल में जो स्वप्न देखा था उसको कहने लगी कि हाथी दांत की बनी आकाश में उड़ती हुई पालकी पर बैठे श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण के सहित लङ्कापुरी में आये हैं, उस पालकी में हजार घोड़ा जुते हैं। श्रीरामजी लक्ष्मण के सहित उज्व वस्त्र को धारण किये हैं।

और आज मैंने स्वप्न देखा है कि सीताजी उज्वल वस्त्र को धारण किये श्रीरामजी के साथ विराज मान हैं फिर देखाकि चार दांतवाली उज्वल हाथी के ऊपर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी के समेत बैठे हैं इसके बाद उज्वल वस्त्र व उज्वल माला को धारण किये श्रीजानकीजी के निकट आये हैं और जानकीजी को रामचन्द्रजी गोद में लेकर अपने पास हाथी पर बैठा लिया है, और राम लक्ष्मण इन दोनों राजकुमारों सहित जानकीजी दिव्य पुष्पक विमान पर सवार हो उत्तर दिशा की ओर चले गये। और रावण को हमने देखा है कि बार मुड़ाये तेल लगाये रक्त वस्त्र धारण किये मदिरा पान करते कनैल पुष्प की माला को पहने पुष्पक की बिमान पर से नीचे गिरा है। फिर देखा कि मानों रावण शिर मुड़ाये काला वस्त्र पहिने गदहेजुते रथ पर चढ़े लाल पुष्प की माला पहिने और लाल चन्दन लगाये है, उसे एक स्त्री खींच रही है। फिर देखा कि तेल पीते हंसते नाचते और सब इन्द्रियों से व्याकुल हुए गदहे पर चढ़कर दक्षिण दिशा की ओर जाते हैं। फिर हमने देखा कि राक्षसों के स्वामी रावण उस गदहे पर से नीचे को मुख किये भूमि में गिरे हैं, पुनः झटपट उठकर विह्वलता युक्त नङ्गे व उन्मत्त पागल के समान दुर्वचन कहते दुर्गन्ध से युक्त दुस्सह घोर अन्धकार नरक के समान मल के कीचड़ में गिरकर रावण डूब गये फिर उसमें से निकलकर दक्षिण दिशा को चले, वहां एक लाल वस्त्र को पहिने स्त्री ने गर्दन पकड़ कर रावण को कीचड़ के कुण्ड में डाल दिया, फिर उस कुण्ड में से भी रावण को निकाल कर काला वस्त्र पहिने एक स्त्री उसको दक्षिण दिशा की ओर खींच रही है। इसी तरह फिर हमने कुम्भ करण को भी देखा है इसके बाद रावण के सब पुत्रों को हमने सिर मुड़ाये तेल लगाये देखा। फिर रावण को सूकर पर चढ़े मेघनाथ को शिशुमार [सुईस] कुंभकर्ण को ऊंटपर चढ़े हुए दक्षिण दिशा को चले जाते हैं, इनमें श्वेत छत्र लगाये एक विभीषण को देखा कि अपने चार मन्त्रियों के साथ आकाश में बैठे हैं, और सब राक्षसों का समाज गाता बजाता मदिरा

पीता लाल वस्त्र लाल माला धारण किये हैं, इस लंकापुरी को स्वप्न में देखा है कि फाटक चहरदीवार रथ, हाथी, घोड़ा आदि के सहित यह लंकापुरी समुद्र में गिर पड़ी है। इस स्वप्न से हमको मालूम होता है कि सीताजी श्रीरामजी को मिलीं, तुम लोग सीताजी को त्राम न देओ, श्रीरामजी तुम्हारे इस अन्याय को सहन न कर के श्रीरामजी राक्षसों के सहित तुम लोगों को मार डालेंगे, क्योंकि श्रीरामजी बन वासिनी प्रिय भार्या जानकी को डरवाने के अपकार को नहीं सहन करेंगे इस से तुम सब राक्षसी सीताजी को दुःख न देओ प्रेम पूर्वक तुम सब राक्षसी इनके शरणागत होओ, हमको तो यही बात भली मालूम पड़ती है। यद्यपि तुमलोगों ने जानकी को कठोर बचन कहती हो तौभी तुमलोग इनको हाथ जोड़ो और अपना अपराध का क्षमापन मांगो। क्योंकि श्रीरामजी से अब राक्षसों को बड़ा भारी भय आगया है। यदि तुम लोगों को शरण में जाने से यह जनक नन्दिनी प्रसन्न होजायंगी तो बड़े भारी भय से तुम राक्षसियों को छोड़ाने में समर्थ होंगी। देखो इन विशालाक्षी सीताजी के अंग में कोई विपरीत नहीं दिखाई देता न कोई आपत्ति कारक सूक्ष्मचिन्हही दिखाई देते हैं। देखो हमने इनको जैसा स्वप्न में देखा था वैसीही यह अब भी हैं, यह सीताजी दुःख पाने के योग्य नहीं हैं, इनको राक्षसों से जो दुःख हुआ है वह छाया के समान है। जैसे राहु की छाया पड़ने से सूर्य चन्द्रमां को दुःख होता है, वैसेही राक्षसों की छाया से सीताजी मलीन होगई हैं। हम तो जानकीजी के अर्थ की सिद्धि उपस्थित देखती हैं, अब रावण कुलका विनाश और रामचन्द्रजी का विजय अवश्य होगा। इधर देखो तो सीताजी के वाम अंग फरकते हैं। और इस वृक्ष की शाखा पर बैठा हुआ जानकीजी को शुभ समाचार सुना रहा है। त्रिजटा के इसप्रकार बचन को सुनकर सीताजी अति हर्षित होगईं और त्रिजटा से बोलीं कि यदि तुम्हारा यह बचन सत्य होगा तो मैं तुम सबों की रक्षा करेंगी।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥

त्रिजटा के बचन को सुनने पर भी रावण से त्रास दी गई सीता इस प्रकार भय से कांपने लगीं कि जैसे सिंह के भय से हाथी कांपती है, एक तो सीताजी स्वभाव से डराकू थी पुनः राक्षसियों के मध्य में बैठी सीता रावण के दुर्वचन से अत्यन्त दुःख को पाया है उस राक्षस के त्रास से जानकीजी बिलाप करने लगीं। और कहने लगीं कि इस संसार में अपनी इच्छा के अनुसार मृत्यु नहीं होती। इसी से देखो कि इन पापी राक्षस व राक्षसियों से इतना दुःख पाने पर भी अब तक जीती हैं। यह हमारा हृदय पर्वत के समान इतना कठोर है कि इस राक्षसों के बचन रूपी वज्र के घाव से नहीं फट जाता है, सो इसमें हमारा कुछ दोष नहीं है, इस दुष्ट रावण के मारने योग्य हम समझी गई हों तो वह हमारा वध करे परन्तु उसकेमन में यह जो दुर्भाव है कि हमारी स्त्री होकर हमारे यहां रहे यह हमसे नहीं हो सकेगा। जैसे ब्राह्मण शूद्र को वेद मन्त्र नहीं सुना सक्ता है, यह दुष्ट रावण श्रीरामचन्द्रजी के आने के पहिले हमको अपने खड्ग से काट डालेगा, जैसे दिति के गर्भ में इन्द्र प्रवेश करके टुकड़ा टुकड़ा कर लिया। जैसे कोई मनुष्य बलिदान के लिये पशु को द्वार पर बांधकर उसके वध का दिन नियत किया जाता है वैसेही आज से दो महीना की अवधि हमारे वध के लिये रावण ने नियत किया है। हा राम! हा लक्ष्मण! हा राममाता कौसल्या! हा सुमित्रा! हा तातजनक! हा हमारी माता! हम इस घोर विपत्ति को इस प्रकार देखती हैं, जैसे वायु के वेग से झकोरा खाकर नौका समुद्र में डूब जाती है। हमको यह मालूम होता हैकि मायारूपी मृगा मारीचने अपने कपट से श्रीराम लक्ष्मण को उस निर्जन बनमें मार डाला होगा। वह मृगा का रूप धारण करके काल आया था, कि मुझको लोभ दिया। जिस लालच के कारण मैंने श्री राम लक्ष्मण को भेज कर इस प्रकार के दुःख को उठाया। हा सत्य ब्रत राम! हा महा बाहो! हापूर्ण चन्द्रमुख! हा संसार को कल्याण करने वाले! आज हम राक्षसों के हाथ से वध करने योग्य हो गईं हैं क्या तुम नहीं जानते हो। आज तक मैंने जो एक

पति का व्रत किया है और जो नियम से धर्म पालन किया है सब निष्फल हो गया। जैसे कृतघ्न मनुष्य के संग का उपकार विफल होता है, एक नारी व्रत करने वाले श्रीरामजीही को अपना पति समझा और मन बचन काय से उनकी सेवा किया, सो वह सेवा आज इस प्रकार विफल हो गयी कि अब तुम्हारे दर्शन से निराश होकर अब तुमको हम नहीं देख सकती। अब हम जानती हैं कि अब तक तो आप भी एक नारी व्रत किया है, परन्तु अब हमारे न रहने पर चौदह वर्ष के बाद बन से लौटकर जब आप अयोध्यापुरी को जावेंगे तो अपने सुख के लिये अवश्य दूसरी स्त्रियों में अनुराग करेंगे। और उन विशाल नेत्र वाली स्त्रियों के संग में बिहार करेंगे परन्तु हे प्राण नाथ! हमतो अपना मन लगाये निरन्तर तुमारा ध्यान करते हैं, अब तुम्हारे चिन्तवन से मरने में अपना मन लगाया है, आज तक जो हमने तप व व्रत किया है वह सब छोड़ती हूं मुझ अभागिनी को इस जीने से धिक्कार है, अब हम विष खाकर अथवा गले में रस्सी बांधकर अपना प्राण दे डालेंगी किन्तु इस राक्षस के गृह में कोई विष आदि को देने वाला नहीं है, इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी को स्मरण करके विलाप करती हुई सीता देवी के मुख सूख गये, शोक से व्याकुल होकर सीताजी अपना अपना प्राण देने के लिये तइयार होकर सोचने लगीं कि यहां कौनसी वस्तु है जिससे मैं अपना मरण करूं। यह सोचती हुई सीताजी को स्मरण हुआ कि हमारे शिर के बाल को बांधने के लिये जो बंधना लगा है उसका खोलकर उसी से वृक्ष की डाली में बांधकर गले में फांसी लगावें ऐसा शोचकर सीताजी ने ज्यों बंधना को खोलने लगीं त्योंहिं उनके अंग फरकने लगे, और सीताजी यह भी सोचनें लगीं कि हमारी खोजी के लिये श्रीरामचन्द्रजी अवश्य आवेंगे और अंग का फरकना देखकर जानकी को मन में कुछ धैर्य हुआ और बिचार करने लगीं कि जनकपुर में धानुष तोड़ने के समय भी अंग फरकते थे।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे अष्टाविंशः सर्गः ॥ २८ ॥

मरने की इच्छा करने वाली दुःखसे व्याकुल और दीन सीताजी की सेवा उस समय उनके अंग फरकने के शकुन ने किया है,जैसे धनवान पुरुष की सेवा उसके चाकर लोग करते हैं। काल टेढे बाल से युक्त बाण के समान जानकी की काली पलक और उसके भीतर थोड़ी ललाई को लिये उज्वल वाम नेत्र इस प्रकार फरकने लगा जैसे जलमें मछलियों के हिलाने से लाल कमल हिलता है इसके बाद रामचन्द्रजी के अंग को स्पर्श करने वाला सदा अगर व चन्दन से भूषित रहने वाला गोला और मोटा अनेक प्रकार के जडाऊ गहनों को धारण करने वाला श्री-जानकीजी का बांया हाथ भी फरकने लगा। इसके उपरान्त गोली व मोटी हाथी के सूंड के समान चढाव उतार की बाई जांघ भी सीताजी की फरकने लगी। इन तीनों अंगों को फरकने से सीताजी का मन ऐसा हर्षित हुआ मानो साक्षात् रामजी का दर्शन ही कर रही हैं। अपने कामना की सिद्धि का शकुन देखकर सीताजी हर्षित हो गईं जैसे वर्षाकाल में बीज जमता है। दाड़िम बीजके समान सुन्दर दांत वाली सोने के समान सुन्दर देह वाली सीताजी की शरीर यद्यपि करके शृङ्गार से हीन होने कारण शरीर के रंग तथा उनके अंग के वस्त्र मलीन हो गये थे तौ भी रामचन्द्रजी के दर्शन की आशा से उज्वल हो गये। सीताजी का शोक नाश हो गया जैसे चन्द्रमा के उदय से रात्रि उज्वल हो जाती है, वैसेही अंग फरकने के शकुन से सीताजी की मुख कान्ति उज्वल हो गयी।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे एकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥

बड़े पराक्रमी हनुमानजी सीताजी के बिलाप को व त्रिजटा के स्वप्न को और राक्षियों के त्रास को भली भांति देख व सुनकर हनुमान बिचारने लगे कि इन्ही सीता देवी को खोजने के लिये हजारों लाखों करोड़ों बानर दिशाओं में ढूंढते हैं उन मैथिली का दर्शन हमको भाग्य से मिला है। उसमें भी सुग्रीव की आज्ञानुसार शत्रु के सामर्थ्य को देखते हुए और अपने रूप को छिपाये इस पुरी में चारो ओर घूमते

हुए हमने पहिले सीताजी के वृत्तान्त देखे और राक्षसों में विशेष पराक्रम को रखने वाले रावण को तथा लंकापुरी में रावण के प्रभाव को भी देखे। परन्तु सकल चराचर जीव पर दया करने वाले श्रीरामचन्द्रजी के समझाने व सन्तोष देने के योग्य पति के दर्शन कि इच्छा करने वाली चन्द्रमुखी जानकीजी जिन्हों ने सुख भोग के सिवा दुःख को देखा ही नहीं उनको समझाना चाहिये। यदि हम सीताजी को बिना समझाये अब श्रीरामजी के पास चले जायं तो यह उचित नहीं होगा और जानकीजी भी राक्षसों के त्रास से तथा रामजी के विहर से व्याकुल होकर अपना प्राण त्याग देवेंगी और महा बाहू रामचन्द्रजी सीताजी के दर्शन की लालसा किये हमारे चलने के समय हमको मुदरी दिया है इससे जान पड़ता है कि सीताजी को समझाने बुझाने की आज्ञा दिया है। नहीं तो हमको मुदरी काहे को देते परन्तु इन निशाचरियों के सामने श्रीसीताजी से कहते सुनते नहीं बनेगा अब क्या करना चाहिये इस बात का हनुमानजी को अधिक कष्ठ हुआ और यदि हम अब इनके सन्मुख नहीं होते तो विश्वाश नहीं कि जानकी अपना प्राण न त्याग देवें। इसके अतिरिक्त जब श्रीरामचन्द्रजी हमसे पूछेंगे। कि सीताजी ने हमको क्या कहा है तब हम बिना इनसे बार्ता लाप किये रामचन्द्रजी से क्या सन्देस कहेंगे। जो हम बिना सन्देस लिये शीघ्रता के कारण सुग्रीव के पास पहुंचेंगे तो प्रिया के वियोग में पीडित रामजी क्रोध युक्त होकर न मालूम हमको क्या करेंगे। यदि हम सुग्रीव से जानकी दर्शन हीं का समाचार कहदे तो सेना सहित सुग्रीव क्या इस पारका आना व्यर्थ होगा। क्योंकि यदि महको ऐसाही करना था तो सुग्रीव अपने ही आकर सीता के समाचार को लेजाते, फिर हमारे आनेका कौनसा काम था। इस लिये जानकी से बात चीत करना चाहिये। ऐसा बिचार कर हनुमानजी अपने मनमें अवसर को निश्चय करने लगे कि अब हम इन्ही राक्षसियों के बीच में बैठ कर शोक सागर में डूबती हुई जानकी को समझावें क्योंकि इस

समय हमारा अत्यन्त छोटा रूप है और बानर के स्वरूप को धारण किये हैं, इससे मनुष्य की भाषा में अर्थात् संस्कृत भाषा में इनसे बात चीत करें । यदि हम ब्राह्मण का स्वरूप बना कर संस्कृत में इनसे बोलें तो यह हमको रावण जान कर और भी डर जांयगी । इस लिये नुष्यों के समझ ने योग्य अर्थ संयुक्त बाणी बना कर इनसे बोलें, इसके और किसी तरह से इनको नहीं समझा सकते । परन्तु हमारा स्वरूप बानर का है और बोली जो हम मनुष्य की बोलैंगी तो यह सीताजी हमको भी राक्षस जान कर और भी व्याकुल हो जांयगी । कहीं बिशाल नयन बाली यह जानकी हमको रावण जान कर अपना प्राण न छोड़ देवें, अथवा भय के मारे ऊंचे स्वर से बिलाप न करने लगें नहीं तो इनके चिल्लाने को सुनकर ये सब राक्षसियों का झुंड नगीच में आजायगा तो भला नहीं होगा । क्योंकि यदि यह राक्षसी हमको देख लेवेंगी तो अवश्य हमारे मारने व पकड़ने आदि का उद्योग करैंगी । जब हम अपने प्राण के भय बानर के समान वृक्षोंकी डालियों पर कुदने लगैंगे तो ये राक्षसियां उन राक्षसों को निश्चय पुकारेंगी कि जो राक्षस रावण की आज्ञा से इस बागकी रक्षा करते हैं । राक्षसियों के पुकारने पर वे राक्षस अपना अस्त्र लेकर हमारे मारने के लिये बड़े वेगसे आवेंगे, जब वह सब राक्षस चारो ओर से हमको घेर लेंगे तो हम उन राक्षसों की सेना का नाश तो कर सकैंगे परन्तु फिर समुद्र के पार जाकर सुग्रीव से सीता के सन्देश को नहीं कह सकैंगे, यदि वह राक्षस इकट्ठा होकर अपनी माया से हमको बाँध लेवेंगे तो जानकीजी भी हमारे आने का हाल नहीं जानैंगी कि यह कौन है और कहां से आया है । यदि हमसे बात चीत करते देखकर यह पापी राक्षस आपस में एक होकर सीताजी को मार डालैंगे तो सुग्रीव का इतना उद्योग व्यार्थ होजायगा । यदि इन राक्षसों के अधीन में होकर लंकापुरी में जानकी की रक्षा के लिये हम रहजावेंगे तो इस दुर्गम स्थान में सुग्रीव का कोई दूसरा दूत आकर सीता को देख भी

नहीं सकता है क्योंकि पहिले तो इस पुरी के चारो ओर समुद्र है, फिर घोर निशाचर इसकी रखवारी करते हैं। यदि हम इन राक्षसों के साथ युद्ध करें तो और किसी को हम सहायक नहीं देखते हैं जो रामचन्द्रजी का कार्य करें, क्योंकि हम अपने मनमें विचारते हैं परन्तु हमारे मारे जाने के पीछे कोई ऐसा बानर नहीं है जो सौ योजन समुद्र को लांघ कर इस गुप्त स्थान में श्रीजानकीजी को देखे, हमतो अकेले करोड़ों राक्षसों को मार सकते हैं परन्तु थक जाने के कारण फिर समुद्र के उस पार को नहीं जा सकते हैं, इस समय जानकीजी अत्यन्त शोक व त्रास में है, हमारा राक्षसों के साथ युद्ध करना ठीक नहीं होगा। क्योंकि ऐसा कौन बुद्धिमान पुरुष है कि जो बिना संशय कार्य में संशयको उत्पन्न करे इस समय बैदेही से बिना बार्ता लाप किये यही होगा की यह सीताजी के बियोग में प्राण को नाश कर देवेंगी। डराकू दूत होने से कार्य की सिद्धि नहीं होसकती है इस लिये दूत को सावधानी से कार्य करना चाहिये। जो दूत अपनी मूर्खता से स्वामी के कार्य को बिगाड़ते हैं उनको सज्जनों के समाज में स्थान नहीं मिलता है कौन ऐसा उपाय करें जिसमें श्रीरामजी का कार्य न बिगड़े। कार्य के बिगड़ने पर यह सब दोष हमारे ऊपर आवेगा। इस लिये ऐसा कार्य करना चाहिये जिसमें सीताजी से बात चीत हो जावे और राक्षसियों को मालूम भी न हो और हमारा समुद्र लांघना वृथा भी न हो, यह सब अनेक बातों को सोचने के बाद हनुमानजीने यह सोचा कि पहिले हम जानकीजी के समीप श्रीरामजी का कथा कहना आरम्भ करें, क्योंकि श्रीरामजी में सीताजी को अत्यन्त अनुराग है यह रामचन्द्रजी की कथा सुनने से व्याकुल नहीं होवेंगी। क्योंकि रामचन्द्रजी इनके परम बंधु तथा प्राण के आधार हैं, रामचन्द्र की कथा के सिवाय और कोई बात पूंछने कहने से इनको उपयोगी नहीं होगा। इस प्रकार सोच बिचार कर प्रभावशाली हनुमानजी वृक्ष की डाली पर

बैठकर लोकनाथ रघुनाथ के निर्मल गुणों को श्रीजानकीजी के सन्तोष के लिये वर्णन करने लगे।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे त्रिंशः सर्गः ॥ ३० ॥

महाबुद्धिमान इस प्रकार अनेक बातोंको सोच बिचारकर जानकजी को श्रीरामजी की चर्चा सुनाने के लिये मधुर बचन धीरे धीरे बोले कि इक्ष्वाकुवंश में रथ हाथी घोड़ा व सेना से युक्त महा यशस्वी महाराज दशरथ नाम के राजा हुए, वह अत्यन्त दयालु व सत्य प्रतिज्ञ थे, वह कभी प्राणियों की हिंसा नहीं करते थे, वह सदा अपनी प्रजा को अपने पुत्र के समान पालन करते थे, पृथिवी भर के प्रजा उनकी आज्ञा के अनुसार चलते थे, वह अपने पराक्रम से देवलोक में जाकर देवताओं की सहायता किये थे, देवलोक के राजा इन्द्र से उनसे परस्पर मित्रता थी। उनके प्रिय पुत्र श्रीरामचन्द्रजी हैं। जो सदा संसार के कल्याण की इच्छा और गौ ब्राह्मण देवता गुरु आदि में विशेष भक्ति व विनय रखने वाले हैं, जिनके नाम स्मरण मात्र से शत्रुओं को भय होता है। संग्राम में जिनके सन्मुख इन्द्रादिक देवते नहीं ठहर सकते हैं दूसरे की क्या गणना है। सकल वेद शास्त्र तथा धर्म को जानने वाले श्रीरामचन्द्रजी हैं। वे संसार को सुख देनेवाले धर्म को जानने वाले श्रीरामचन्द्रजी अपने पिता की आज्ञा को पालन करने के लिये अपनी स्त्री जानकी और अपने भाई लक्ष्मण को संग में लेकर बन में आये और अनेक ऋषि मुनियों के दर्शन को इच्छा से बन में भ्रमण करते हुए कई एक शूर बीर राक्षसों को मारकर जन स्थान में आये, वहां ब्राह्मणों को पीड़ा देनेवाले खरदूषण आदि चौदह हजार राक्षसों को क्षण भर में अपने बाण से नाश किये। तब खरदूषण के मरण को सुन कर राक्षसों का राजा रावण उनकी प्रिय नारी जानकी को हर ले गया। हरने के समय रावण के मित्र मारीच सोने का मृगा बनकर रामचन्द्रजी को छल में डाल दिया, जब मायारूपी मृगा को मार कर रामजी लौटे तब आश्रम में जानकी को न देखकर शोक और

करुणा से युक्त सीताजी के वियोग में कुशव दुर्वल होते हुए भी बन में घूम घूमकर सीताजी को खोजने लगे और ऋषि मुनि तथा वृक्ष बन पर्वत पशु पक्षी आदि से सीताजी के वृत्तान्त को पूंछते हुए बन में सुग्रीव नाम बानर से मित्रता किये, पुनः शत्रुओं को नाश करने वाले रामचन्द्रजी सुग्रीव के कारण बालि बानर को मारकर बानरों का राज्य सुग्रीव को दिया। सुग्रीव की आज्ञा से करोड़ों बानर दिशा विदिशा में सीताजी को ढूंढते हैं उन्हीं बानरों में से एक हम भी हैं, सो संपाति के बचनों से लंकापुरी में सीता को सुनकर सौ योजनका समुद्र लांघकर यहां आये हैं, उन्हीं सीताजी को खोजने के कारण ऐसे वेग वाले समुद्र को कूदकर हम आये हैं, जैसा रूपरंग और जिस प्रकार का चिन्ह हमने श्रीरामचन्द्रजी के मुख से सुना था उन सीताजी को वैदेही हमने आज पाया इतना कहकर बानरों में श्रेष्ठ हनुमानजी मौन होगये, जानकीजी इस प्रकार के बचन को सुनकर विस्मित हो गईं, फिर कमल नयनी सीताजी इस बचन के अनेक मार्ग को ऊपर में मुख उठाय वृक्ष के ऊपर देखने लगीं। बानर के बचन को सुनकर सब दिशाओं में देखती हुई लोकनाथ श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण करती हुई अति हर्षित होगईं, इसके बाद वृक्षकी शाखा पर बैठे अचिंत्य बुद्धिमान बानरों के राजा सुग्रीव उनके मन्त्री पवन कुमार हनुमान को उदयाचल पर स्थित सूर्य के समान देखा।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे एकत्रिंशः सर्गः ॥ ३१ ॥

वृक्ष की शाखा के बीच में लीन अर्जुन वृक्ष के समान हरा रंग का वस्त्र ओढ़े और बिजुली के समान पीली व तेज से युक्त हनुमानजी के शरीर को देखकर सीताजी का मन कांपने लगा फिर ध्यान पूर्वक देखा तो अति प्रियवादी व विनीत तथा सोने के समान चमकती हुई बानर की मूर्ति को देखकर बैठी हुई सीताजी को अत्यन्त विस्मय हुआ और सोचने लगीं कि अहो यह तो बड़ी भयानक बानर की शरीर है, यह तो बड़े दुःख से देखने के योग्य हैं, यह कहती हुई भी मोहित हो

गई । और मारे भय के करुणा से युक्त शब्द से रोदन करने लगीं व दुःख से व्याकुल होकर कहने लगीं कि हे राम ! हे लक्ष्मण ! ऐसा कह कर सीताजी धीरे धीरे रोदन करने लगीं परन्तु हनुमानजी उसी प्रकार विनीत भाव से बैठे रहे । कुछ सावधान होकर जब फिर हनुमान को वैसेही नम्र भाव से समीप में बैठा देखीं तब जानकीजी सोचने लगीं कि क्या हम स्वप्न तो नहीं देखती हैं यह सोचकर अच्छी तरह दृष्टि पसार कर देखने लगीं तो प्रातःकाल के समय सूर्य के लाल प्रभा के समान नीचे को मुख किये हनुमानजी के लाल व विशाल मुख को देखा । उस समय हनुमानजी की शोभा बुद्धिमानों में श्रेष्ठ दीख पड़ती थी, उत्तम अलंकार को धारण किये थे, इस प्रकार हनुमानजी को देखतेही सीताजी अत्यन्त व्याकुल हो गईं, मनमें सोचने लगीं कि यह कामरूपी रावण है, स्वरूप बदल कर आया है रावण की व्याकुलता से सीताजी इस प्रकार होगईं मानो प्राण निकला चाहता है । कुछ घड़ी के बाद सावधान होकर सीताजी चिन्ता करने लगीं, यह तो मैंने स्वप्नही देखा है और कुछ नहीं है परन्तु स्वप्न में बानर का शास्त्र में दोष लिखा है, हे परमात्मा ! इस प्रातःकाल के स्वप्न देखने का दोष श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी तथा हमारे पिता जनकजी को न होवे, उन लोगों को देवतों के आशीष से कल्याण हो। परन्तु यह स्वप्न तो नहीं है शोक और दुःख की पीड़ा के मारे हमको नींद तो आती नहीं है फिर यह स्वप्न हमको कैसा दीख पड़ा । हम जो शोक से व्याकुल होकर बार बार श्रीरामजी की चिन्ता किया करती हैं और उनके नाम को स्मरण करती हैं उसीसे यह रामचन्द्रजीके विषय कथा सुन पड़ती है कोई बानर प्रत्यक्ष में नहीं है उन्हीं रामचन्द्रजी के निमित्त इस समय हम कामदेव से पीड़ित हैं इसी से हमारे सब भाव उन्हीं में लगे हैं व निरन्तर उन्हीं की चिन्ता भी करती हैं इसी भावना से हम उनको वैसा देखते हैं, यदि हम यह सोचे कि यह बानर हमारा साक्षात् मनोरथ है और कुछ नहीं है तो मनोरथ को रूप नहीं होता है । यह सुन्दर बानर का रूप धारण किये स्पष्ट बचन

हमसे कह रहा है इससे यह मनोरथ नहीं हो सकता है, यह मनोरथ के अतिरिक्त और ही कुछ जान पड़ता है । हम वृहस्पति अग्नि के इन्द्र ब्रह्माजी को प्रणाम करती हैं और प्रार्थना करती हैं कि इस बानर ने जो हमारे आगे कहा है वह सत्य हो अन्यथा न हो ।

इति बाल्मीकीये रामायणे सुन्दरकाण्डे द्वात्रिंशः सर्गः ॥ ३२ ॥

इसके उपरान्त प्रातःकाल के सूर्य के समान लालमुख वाले हनुमानजी अति नम्र होकर वृक्ष की डाली से कुछ नीचे उतरकर जानकीजी के निकट आकर प्रणाम किये । दोनों हाथ जोड़कर मधुर बाणी से महा तेजस्वी पवनकुमार हनुमानजी सीताजी से बोले, हे कमलनयनी ! मलीन रेशमी वस्त्र धारण किये आनन्दित तुम कौन हो और वृक्ष के नीचे बैठी हो । और तुम यहां एकाग्रमन से बैठकर क्यों आंसू की धारा को बहाती हो हे सुन्दरी ! देवता दैत्य नाग गंधर्व राक्षस यक्ष किन्नरों में से तुम कौन हो । ग्यारह रुद्र ऊनचास पवन आठ वसु इनमें से तो तुम कोई नहीं हो। क्योंकि हे बरानने ! तुम देवताओंके समान शोभित होती हो कि तुम चंद्रमा से हीन स्वर्ग से गिरी नक्षत्रों में श्रेष्ठ व सब गुणों में श्रेष्ठ रोहिणी के समान शोभित होती हो हे कल्याणी ! तुम कौनहो क्या तुम अरुन्धती तो नहीं हो जो तुम कोप से अथवा मोह से अथवा अपने पति वसिष्ठ के क्रोध से व्याकुल होकर यहां बैठी हो । हे सुमधामे ! तुम्हारे पुत्र पिता भ्राता व भर्ता का क्या नाम है जो तुम इस लोक से अन्य स्थान में प्राप्त उन्ही में से किसी को शोच रही हो । हम तुमको रोदन करने व निश्वास लेने व भूमि स्पर्श करने से तुमको हम देवी नहीं मानते हैं, क्योंकि ये तीनों काम देवियां नहीं करती हैं किन्तु बार बार श्रीरामचन्द्रजी का जो नाम स्मरण करती हो और जो तुम्हारे में मनुष्यों से असाधारण चिन्ह दीख पड़ते हैं, उस चिन्ह से पृथिवी पाल रामचन्द्रजी की महाराणी व राजा जनक की कन्या हम तुमको जानता हूं । जो जन स्थान से हठात् रावण हरण किया है अगर तुम वही सीता हो तो हम जो पूंछें उसको कहो जैसी तुम्हारी दीनता है जैसा विलक्षण व प्राकृत रूप है जैसा तपस्या

युक्त वेष है इन कारणों से निश्चय तुम श्रीरामजीकी पटरानी जान पड़ती हो। श्रीरामजी के कीर्तन सुनने से हर्षित और हनुमानजी के इस प्रकार वचन को सुनकर वृक्ष पर बैठे हनुमानजी से जानकीजी बोलीं, कि अब इस पृथिवी के राजाओं में मुख्य व प्रसिद्ध शत्रु की सेना को नाश करने वाले महाराज दशरथजी की हम पुत्र वधू हैं। और विदेह महात्मा जनक की कन्या हैं सीता हमारा नाम है सिंह के समान पराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी की भार्या हैं। हमारे विवाह होने के बाद रामचन्द्रजी के गृह में सब प्रकार के सुख भोग को बारह वर्ष तक लाभ किये। इसके उपरान्त जब तेरहवां वर्षका आरंभ हुआ तो महाराज दशरथ ने अपने गुरु से सम्मति लेकर हमारे पति राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी को युवराज बनाने का विचार किये, जब शुभ मुहूर्त में श्रीरामजी के अभिषेक के लिये सामिग्री इकट्ठी होने लगी तो अभिषेक महोत्सव के संभार को देखकर हमारी लघु सास केकयी विषादयुक्त होकर महाराज दशरथ से बोलीं कि आप यदि हमसे प्रसन्न होवें तो रामचन्द्रजी को युवराज न बनावें, क्योंकि आप हमको पहिले वचन दे चुके हैं यदि उस वचन को सत्य करना चाहैं तो उसके अनुसार चौदह वर्षतक रामचन्द्र बनवास करें और भरतजी युवराज होकर इस पृथिवी को पालन करें, केकयी के इस प्रकार वचन को सुनकर वृद्ध महाराज दशरथ विह्वल हो गये तौ भी श्रीरामचन्द्रजी से राज्य को लौटा लिया, श्रीरामचन्द्रजी पिता के प्रेम से राज्य को उन्हें दे दिया। क्योंकि श्रीरामजी का ऐसा स्वभाव है कि वह अपने दान देते हैं परंतु दूसरे से ग्रहण नहीं करते व सदा सत्य बोलते हैं कभी झूठ नहीं बोलते इस विषय में प्राण जाने पर भी रामचन्द्रजी विपरीत नहीं करते हैं। महा यशस्वी रामचन्द्रजी बन को यात्रा करते समय बहुमूल्य वस्त्र व अलंकार को त्यागकर मुझे अपनी माता को सौंपकर हमको आज्ञा दिये कि तुम यहीं रहो, परन्तु जब वह चले तब हम भी उनके आगे आगे बन चलने के लिये तैयार हुईं। क्योंकि बिना रामचन्द्र के स्वर्गवास भी हमको

तुच्छ है और मित्रों को आनन्द देने वाले महा भाग्यवान् लक्ष्मणजी अपने ज्येष्ठ भाई श्रीरामचन्द्रजी को चलने के प्रथमहीं बन जाने के लिये कुश चीर को धारण करके तैयार हो रहे थे। सो हम तीनों जन महाराज दशरथकी आज्ञानुसार प्रतिज्ञा को दृढ़ करके जिस बन को कभी नहीं देखा था उस बन में प्रवेश किया। दण्डकारण्य में निवास करते हुए महापराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी की भार्या हमको बलात्कार से रावण हर लाया और उसने अबसे दो महीने तककी अवधि हमारे प्राण मारने की नियत करदी है, जब दो मास बीत जावेंगे तब मैं अपने प्राण को छोड़ दूंगी।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥३३॥

दुःख से पीड़ित सीताजी के बचन को सुनकर बानरों में श्रेष्ठ हनुमानजी सीताजी को धैर्य देने युक्त वचन को बोले, हे देवि! हम रामचंद्रजी के संदेश को लेकर हम दूत होकर तुम्हारे पास आये हैं, हे बैदेही! श्रीरामचन्द्रजी कुशल से हैं उन्हों ने अपना कुशल तुमसे कहा है, और तुम्हारा कुशल पूंछे हैं, और महा तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी के अनुचर लक्ष्मणजी शोक से संतप्त हो शिरसे तुमको प्रणाम किया है। श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजीकी कुशलताको सुनकर सर्वाङ्ग से हर्षित सीताजी हनुमानजी से बोलीं कि, लोक की यह कहावत् सत्य जान पड़ती है कि जीते हुए मनुष्य को सौ बर्ष के बाद भी आनंद प्राप्त होता है, सीताजी व हनुमानजी के परस्पर वार्ताजाप में इस प्रकार अद्भुत प्रीति उत्पन्न होगई जैसे बहुत दिन से मौन चातक वर्षा काल में बादलों को देखकर अपने प्रिय को स्मरण करने लगता है। शोक से सन्तप्त सीताजी के बचन को सुनकर अंजनी कुमार हनुमान सीतजी के समीप चले आये, जैसे जैसे हनुमानजी सीताजी के समीप धीरे धीरे आते थे वैसे २ सीताजी उनको रावण जान कर भय से पीडित होती थीं और मनमें सोचती थीं कि जो हमने अपना सब वृत्तान्त व मनोरथ इससे कहा है उस पर हमको धिक्कार है, क्योंकि स्वरूप को बदल

कर यह वही रावण आया है । यह सोच कर सीताजी फिर वही वृक्ष के नीचे बैठ गई । महा बाहू हनुमानजी वृक्ष से नीचे उतर कर जानकीजी को प्रणाम किये । परन्तु भयसे व्याकुल सीताजी उनकी ओर फिर नहीं देखीं और लंबी श्वांस लेकर उन बानर श्रेष्ठ हनुमानजी से मधुर बचन युक्त सीताजी बोलीं कि जो तुम माया से अवरूप को बदल कर आये हो तुम मायावी रावण हो बार बार जो हमको सन्ताप देते हो यह तुम्हारा कर्म अच्छा नहीं है, जैसा कि तुमने दण्डी का बेष धारण करके जन स्थान में गये थे और हमने जन स्थान में तुमको देखा था तुम वही रावण हो इसमें कुछ सन्देह नहीं है, तुम निशाचर होकर बार बार हमको दुःख व शोक से जलाते हो यह कर्म तुम्हारा श्रेष्ठ नहीं है; और जो तुमने अपने मुख से श्रीरामचन्द्रजी का गुण गान किया है इससे तुमको देखकर हमारे मनमें प्रेम उत्पन्न होगया, इससे हमको यह भी विश्वास होता है कि तुम रावण नहीं हो यदि तुम श्रीरामचन्द्रजी के दूत आये हो तो हे बानर तुम कल्याणहो परन्तु श्रीरामजी की जो कथा पूंछती हूं उसको कहो । क्योंकि हमको वही आधार हैं । इस समय श्रीरामजी के गुण को गान करके हमारे मन को हर लेते हो जैसे नदी के जल का वेग नदी के तट को हर लेता है । अहो इस स्वप्न के सुख को क्या कहैं जो बहुत दिनसे राक्षस से हरी गई हम रामचन्द्रजी के भेजे हुए बानर दूत को देखती हैं यह बड़ा आश्चय की बात है । क्या कहैं जो स्वप्न में भी लक्ष्मण सहित श्रीरामचन्द्रजी को देखें तौ भी कष्ट न हो, परन्तु हमारा स्वप्न भी अहंकारी है कि कभी हमारे पास नहीं आता । परन्तु इस समय के तुम्हारे बार्ता लाप को हम स्वप्न नहीं मानती क्योंकि जो स्वप्न में बानर दिखाई देता है तो देखने वाले का भला नहीं होता और हमने रामजी की कुशलता को सुनकर अभ्युदय को पाया है । इससे यह स्वप्न नहीं है, चाहे चित्तका विकार हो चाहे वायु का बिकार हो अथवा भूत प्रेत आदि से कोई विकार हो या मृग तृष्णा हो अथवा उन्माद से यह

विकार उत्पन्न हो क्योंकि हम अपने को जानती हैं और इस बानर को भी जानती हैं जिसको किसी वस्तु का विकार है उसको अपना व बिराना नहीं सूझता है। इस प्रकार सीताजीने बल अबल का विचार करके राक्षसों को काम रूपी होने से हनुमानजी फिर रावण ही मान कर सीताजी मौन हो गयीं। हनुमानजी सीताजी के सन्देह को छुड़ाने केलिये और सीताजी को हर्षित कराने लगे। जो सूर्य के समान तेजस्वी चन्द्रमा के समान लोक को आल्हादित करने वाले कुबेर के समान सब लोकों के राजा विष्णु के समान पराक्रमी बृहस्पति के समान सत्यवादी व मधुर बोलने वाले काम देव के समान सुन्दर लोक में सबसे श्रेष्ठ महारथी रामचन्द्रजी को मृगा का रूप धारण करके छल से जो स्थानपर से दूर ले गया तब निर्जन व शून्य स्थान में तुमको हर लाया है उसका फल तुम अपने आंखों देखोगी कि उस रावण को संग्राम में शीघ्रही वीर्यवान रामचन्द्रजी अपने क्रोध से अग्नि के समान अपने बाणोंसे इन राक्षसों को मारेंगे। उन्हीं के भेजे गये दूत होकर हम तुम्हारे पास आये हैं। रामचन्द्रजी तुम्हारे वियोग से पीड़ित हैं, इससे उन्हों ने अपना कुशल तो तुमसे कहा है व तुम्हारा कुशल पूछा है। महा पराक्रमी लक्ष्मणजी ने प्रणाम करके तुमसे अपना कुशल कहा है। तुम्हारा कुशल पूछा है। हे देवि! रामचन्द्रजी के सखा सुग्रीव नाम बानर सब बानरों के राजा हैं उन्हों ने भी तुमसे अपना कुशल कहा है, व तुम्हारा कुशल पूछा है यह बड़े आनन्द की बात है कि जो तुम राक्षसियों के बीच में प्राप्त होकर भी अब तक जीती हो। बहुत शीघ्रही महारथी रामचन्द्रजी व लक्ष्मण को देखोगी और असंख्य सेना बानरों की लेकर अमित पराक्रमी सुग्रीवजी को भी तुम अपने आंख से देखोगी। हम समुद्र कोलांघ कर तुम्हारा सन्देश लेने के लिये और राक्षसों का वृत्तान्त जानने के लिये यहां आये हैं। हे देवि! जैसा तुम अपने मन में सन्देह करके हमको रावण समझती हो सो मैं रामचन्द्रजी के भेजे सत्य दूत

हैं रावण नहीं है । इससे अपने मनकी शंका को छोड़कर हमारे कहने का विश्वास मानो ।

इति बाल्मीकिये रामाणे सुन्दरकाण्डे चतुस्त्रिंशस्सर्गः ॥ ४ ॥

बानरों में श्रेष्ठ हनुमानजी से श्री रामचन्द्रजी की कथा को सुनकर बिश्वास पूर्वक सुमधुर वचन से जानकीजी बोली की तुम्हारी व रामचन्द्रजी की संगति कैसे हुई । हे बानर ! रामचन्द्रजी व लक्ष्मण जी में जो जो चिन्ह हों उसको फिर से कही जिसमें हमको तुमारे विषय में सन्ताप न हो । उन रामचन्द्र व लक्ष्मणजी के सब अंग कैसे है रूप उनका कैसा हैं उन लोगों की जांध व बाहैं कैसी है यह सब चिन्ह विस्तार से हमसे कहो जिसमें हम जाने कि तुम रामचन्द्रजी के दूत हो । वायु के पुत्र हनुमानजी जानकी जी के इस प्रकार बचन को सुनकर हमुमानजी रामचन्द्रजी के यथा तथ्य समाचार को कहने लगे । हे वैदेही जी ! तुम अपने स्वामी श्री रामजी के व लक्ष्मणजी के सब चिन्ह को जानती हो तौभी हमसे पूछती हो, यह बड़े भाग्य की बात है, हे विशालाक्षि ! जो चिन्ह रामचन्द्रजी के व लक्ष्मणजी के हम देखे हैं वह कहते है सुनो । हे जनक नन्दिनि ! रामचन्द्रजी का कमल दल के समान नयन है, पूर्ण चन्द्रमा के समान उज्वल मुख की कान्ति है रुप व चतुरता से युक्त हैं, तेजमें सूर्यके सदृश क्षमामें पृथिवी के समान है, बुद्धि में वृहस्पति के समान यश में इन्द्र के तुल्य हैं। छोटे बड़े जीवों की रक्षा करने वाले हैं, अपने दास को अपनी आत्मा के समान जानते हैं, धर्म को पालन करने व कराने वाले हैं। ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद इन चारवर्ण व चार आश्रम की मर्यादा को पालम करने व कराने वाले हैं। राजनीति को जानने वाले गौ ब्राह्मण की सेवा करने वाले ज्ञान व शील को धारण करने वाले वेदशास्त्र को जानने वाले संसार के शोक मोह को नाश करने वाले, शत्रुओं को भय देनेवाले तथा संग्राम में पराजय करने वाले रामचन्द्रजी का शंख के समान गर्दन लाल नेत्र नगारों के समान गंभीर वाणी प्रत्येक अंग चढाव उत्तार के

हैं, और श्रीरामजी का चिकना अंग तथा श्याम रङ्ग है। उनकी जंघा कलाई व मुष्टि ये तीन स्थान स्थिर भौंह वृषण बाहू ये तीन स्थान लंबे केश वृषण जानु ये तीन अंग समान। नाभी कुक्षी छाती ये तीन अंग ऊँचे आंख कोख नयन पावं का तलवा लाल पांवकी रेखा शिर केवाल और लिगंके आगे का हिस्सा ये तीन अंग चिकन स्वर नाभी चाल ये तीन गंभीर हैं, उनके उदर व कंठ में त्रिवली पड़ी हुई है, पैर के तलवा व रेखा और स्तन के ऊपर का भाग ये तीन अंग गहिरे गला लिंग पीठ ये छोटे तीन घेरा युक्त शिर और अंगुष्ठ के मूल में चार रेखा चार हाथ लंबी शरीर बाहू जंघाऊरू और गण्डस्थल ये चार अंग समान है। भौंह नासिका नेत्र कान ओष्ठ स्तन का अगिला भाग कर्यूर मार्ग बन्धजानु कृष्ण गलहरी हाथ पैर बगल और दांतों की पांति का जोड़ा और दाढी ये समान हैं। सिंह शार्दूल गज वृषभ इन चारो के समान गंभीर चाल है। लाल ओष्ठ ऊँची भौंह वाणी मुख नख लोमत्व ये पांच पदार्थ चिकने बाहुऊरू अंगुष्ठ जंघा ये आठ बंश युक्त। मुख नेत्र जिह्वा ओष्ठ तालू स्तन नख हाथ पांव मुख का भीतरी भाग ये दश स्थान कमल के समान हैं। छाती शिर ललाट गला, बाहु कंधा ललार ये छः ऊँचे और अङ्गुलियों के पोर केश रोम नख त्वचा लिंग दांत दाढी करिये नव पदार्थ छोटे श्री यश प्रताप इन तीनों से युक्त पिता व माता के कुलको उज्वल करने वाले इस प्रकार के श्रीरामचन्द्रजी हैं। तथा सत्य व धर्म को पालन करने वाले तथा प्राणियों पर अनुग्रह करने वाले देशकाल को जानने वाले शत्रुमित्र से प्रिय बोलने वाले श्रीरामजी हैं उनके सौतेले भाई सुमित्राजी के पुत्र अमित पराक्रमी व तेजस्वी लक्ष्मण जी रूप व गुण में श्रीरामजी के समान हैं केवल इतना अन्तर अवश्य है कि लक्ष्मण जी गौर वर्ण और श्रीरामजी श्याम वर्ण हैं, वे दोनों पुरुष सिंह तुम्हारे दर्शनों की सदा इच्छा करते हैं वे दोनों भाई तुम को पृथिवी पर ढूढ़ते हुए आये और हम सब बानरों से मित्रता किये, हम सुग्रीव बानर के मन्त्री है, सुग्रीव अपने भाई बलि के भयसे राज्यको

छोड़कर ऋष्यमूक पर्वत पर हमलोगों के सहित रहते थे। जब रामचन्द्र व लक्ष्मणजी तुम को खोजते हुए ऋष्यमूक पर्वत के सघन वन में आये तो बानरों के राजा सुग्रीव जी को देखे सुग्रीवजी भी राज्य से हीन जटा व चीर को धारण किये धनुष बाण को हाथ में लिये सिंह के समान पराक्रमी व धीरे चलने वाले सत्य प्रतिज्ञ श्रीरामजी व लक्ष्मण जी को आते देखकर बालि के भयसे सुग्रीव जीने पहिले के बैठेहुए स्थान को छोड़कर कूद कर पर्वत के शिखर पर चढगये, और राम लक्ष्मण के वृत्तान्त को जानने के लिये उनके समीप सुग्रीव ने हमको भेजा। सुग्रीव की आज्ञा से शीघ्र हम रामचन्द्र व लक्ष्मणजी के समीप जाकर आगे से हाथ जोड़कर खड़े होगये। और अपना हाल उनसे कह कर उनका हाल पूछने लगे। जब रामचन्द्रजी का अभिप्राय हमको मालूम हुआ और हमारा अभिप्राय रामचन्द्रजी जान गये। तब मैं राम लक्ष्मण को अपनी पीठपर बैठाकर सुग्रीव के पास लाये और महात्मा सुग्रीव से सब बातें कह सुनाये, । जब परस्पर रामचन्द्र व सुग्रीव में बातचीत होने लगी तो परस्पर बड़ी प्रीति उत्पन्न हुई तब नरेश्वर व कपीश्वर अपनी कथा कहकर आगत व स्वागत किये, पहिले सुग्रीव को श्रीरामचन्द्रजी ने धैर्य दियाथा, क्योंकि उनके चचेरे भाई बालि ने उनका सब धनस्त्री राज्य छीनकर निकाल दिया था। पीछे सुग्रीव जीने श्रीरामजी को धैर्य दिये क्योंकि तुम्हारे हर जाने से श्रीरामजी भी अत्यन्त शोक व दुःख से पिडीत थे। इस के बाद किसी कारण से लक्ष्मणजी ने सुग्रीव से कहें, जिस बचन को सुनकर सुग्रीव का मन ऐसा उदास हो गया जैसे ग्रहण लगने सूर्य उदास हो जाते हैं, इस के जब रावण से हरी गई आकाश मार्ग से चलती हुई तुमने जो अपने अङ्ग से अपनें गहने व कमड़े को पृथिवी पर गिराती गई उस को हमारे संग के रहने वाले बानरों ने पाया था वही रामजी को देखने के लिये दिया गया, परन्तु हम सब बानरों को यह नहीं मालूम था कि तुम कहां हो, रामचन्द्रजी तुमारे उस अलंकार वस्त्र को

उठाकर इश प्रकार हर्षित हुए जैसे पूर्णिमा की चन्द्रमा को देखकर समुद्र हर्षित होता है, उस अलंकार व वस्त्र को लेकर श्रीरामजी बारबार अपने हृदय में लगाने लगे, और देवताओं से पूजा करने योग्य श्रीरामजी बड़ा भारी शोक प्रगट किये, मानो शोक की आग उस समय और भी धधक उठी, इस कारण महात्मा रामजी व्याकुल होकर मूर्छित हो गये, और थोड़ी देरतक पृथिवी पर पड़े रहे, तब हमने अनेक प्रकार के बातों से उन्हें धैर्य दिये, इसके उपरांत उस वस्त्र व गहने को श्रीरामजी ने अपने देखकर लक्ष्मणजी को दिये, लक्ष्मणजी उसे देखतेही व्याकुल हो रोदन करने लगे कुछ देर के बाद सावधान होकर उसे सुग्रीव को सौंप दिये, हे आर्ये, रामचंद्रजी तुमको न देखने से, बहुत संतप्त रहते हैं जैसे आग के लगने से पर्वत जलने लगता है। तुम्हारे न देखने के शोक से श्रीरामचन्द्रजी सदा कंपित रहते हैं, जैसे भूकंप होने से पर्वत हिलता है। हे जनक नन्दिनी! सुन्दर वन नदी नद पर्वत झरना आदि के समीप घूमते हुए रामचंद्रजी को बिना तुम्हें प्रीति नहीं प्राप्त होती। अब परिवार सहित रावण को मार कर श्रीरामचन्द्रजी तुम को शीघ्र देखेंगे। रामचन्द्रजी का व सुग्रीव की यह प्रतिज्ञा हुई है कि रामचन्द्रजी बालि को मारें व सुग्रीव सीताजी का मंगावें, सो राम लक्ष्मण के साथ सुग्रीव ने किष्किन्धापुरी में जाकर युद्ध में बालि को नाश किया, श्रीरामजीने अपने बाण से बालि को मार कर बानरों का राज्य सुग्रीव को देदिया, हे देवि! रामचन्द्रजी व सुग्रीव की मित्रता इस प्रकार हुई है, इसीसे उनके भेजे हुए हम हनुमान नाम के दूत आये हैं सो जानो। जब सुग्रीव ने अपना राज्य पाया तो अपने दूत को भेज कर अपने दे व दिशाओं में रहने वाले बड़े बड़े बलवान बानरों की सेना इकट्ठी करके तुमको खोजने के लिये चारो ओर भेजा है, बानरों के राजा सुग्रीव की आज्ञा को पाकर महा पराक्रमी पर्वताकार बानर पृथिवी पर सब ओर को गये हैं, और तुमको खोजते हुए सर्वत्र पृथिवी पर घूमते हैं। जितनी सेना भेजाने से बकी

रही उसमें का एक भाग किष्किन्धापुरी में छोड़कर शेष तीन भाग सेना अपने संग बालि के पुत्र अंगद लेकर इधर को आये । हम सब बानर तुमको खोजते हुए विन्ध्य पर्वत पर भूल गये, इस कारण मारे शोक के व्याकुल होगये और वहां हम लोगों को बहुत दिन बीत गये। और हम लोग कार्य से निराश होकर सुग्रीव से नियत किये गये समय को बीत जाने से सुग्रीव के भयसे हम लोग अपना प्राण त्याग करने पर उतारू हो गये क्योंकि जब पर्वतों के दुर्गम स्थान नदी बन झरना दरी गुहा कन्दरा आदि को मे ढूढे और तुमारा पत्ता नहीं पाये तो सिवाय मारने के और क्या करते, इसी से हम लोग मरने पर उद्यत हुए । व अपना अपना प्राण देने के लिये उसी पर्वत पर चढ गये, हम सब बानरों को मरने में उपस्थित देख शोक सागर में डूबते हुए अंगदजी रोने लगे और कहने लगे कि देखो जानकी हरण बालि का मरण हुआ, हम सब बानर भी मरने पर उतारू हैं, गिद्धराज जटायु मारा गया इस प्रकार कहते हुए श्रीरामजी के कार्य निशाचर मरने में उद्यत हम लोगों के कार्य के लिये जटायु का बड़ा भाई संपति पर्वत के शिखर पर से हम लोगों के निकट आया, वह अपने भाई जटायु का वध सुन बड़े कोप से हम लोगोंसे बोलाकि हमारे छोटे भाई जटायु को किसने मारा, और वह कहां मारागया था । हे बानरो। यह हम तुम लोगों से जानना चाहते हैं, तब जिस प्रकार जटायु का महा वध तुम्हारी सहायता करने में भयंकर रूपधारी रावण ने किया था, वह सब अंगदजी ने कह सुनाया। जटायु का मरण सुनकर अरुण का पुत्र संपाति बहुत दुःखित हुआ, और तुमको रावण के गृह में बनाया। उसी संपाति के बचन को सुनकर हम सब अंगद आदि बानर आगे चलने पर साहस किये और विन्ध्य पर्वत से उतर कर समुद्र के तटपर आये । और तुम्हारे दर्शन करने के लिये हर्षित हो अंगदादि हम सब बानर समुद्र के तट पर पहुँचे । वहां तुमको देखने की और लंकापुरी में आनेकी सबोंकी इच्छा हुई, परन्तु समुद्र लांघने के भय से सब चिन्ता

करने लगे, तब हमने देखाकि यह बानरों की सेना समुद्र को देख उतरने के लिये दुःख को उठा रही है । इस कारण सब का कठिन भय छुड़ाने के लिये सौयोजन समुद्र को लांघ कर हम यहां आये और इसी रात्रि में राक्षसों से भरी लंका में हमने प्रवेश किया, और रावण को देखा तथा शोक से पीडित तुमको भी देखा यह सब जैसा वृत्तान्त था हमने तुमसे कहा । अब हे देवि ! हमसे अच्छी प्रकार बोलो, क्योंकि हम श्रीरामचन्द्रजी के दूत हैं व तुम्हारे लिये श्रीरामचन्द्रजी के भेजे हम यहां आये हैं । हमको वायु का पुत्र व सुग्रीव का मन्त्री जानो । तुम्हारे प्राण नाथ श्रीरघुनाथजी कुशल से हैं, सुग्रीव के बचन से हम अकेले ही यहां आये हैं, और सहाय रहित कामरूपी इस लंका में तुमको ढूंढते हुए हमने यह सब दक्षिण दिशा छान डाली । बड़े भाग्य की बात है कि जो हम तुम्हारे शुभ समाचार को कह कर उन लोगों के सन्ताप को दूर करेंगे । भाग्य की बात हुई की जो समुद्र को लांघ कर हमारा यहां का आना व्यर्थ नहीं हुआ । हे देवि ! हम तुम्हारे दर्शन करने का यह शीघ्र यश पावेंगे, और महा बाहू श्रीरामचन्द्रजी की शीघ्र ही परिवार सहित रावण को मार कर तुमको ले चलेंगे । जो तुम कहो कि तुम तो बानर हो पवन का पुत्र कैसे हो उसका वृत्तान्त यह है कि पर्वतों मे उत्तम माल्यवान नाम पर्वत है उस पर्वत पर केशरी नाम बानर रहते थे, वह केशरी गोकर्ण नाम पर्वत पर गये थे, केशरी हमारे पिता हैं उन्हों ने देवताओं की आज्ञा से समुद्र के जल में पैठ कर शंबसादन नाम दैत्य को मारा था । उन्हीं केशरी नाम बानर की अंजनी नाम स्त्री में हम पवन से उत्पन्न हैं व अपने ही कर्म से लोक में हनुमान नाम संप्रसिद्ध है । हे वैदेही हमने पिता के गुण व तुम्हारे विश्वास के लिये कहे हे देवि ? बहुत ही शीघ्र श्रीरामचन्द्रजी तुमको यहां से ले जायंगे जब इस तरह अनेक कारणों से शोक के मारे दुर्बल सीताजी को विश्वास हुआ कि यह हनुमानजी सत्य रामचन्द्रजी के दूत हैं, यह जान कर जानकीजी बड़े हर्ष को प्राप्त भई

और प्रेमके मारे आंसू की धारा को बहाने लगीं। उस समय जानकीजी के मुख की कान्ति ऐसी हो गई जैसे ग्रहण से चन्द्रमा छूट जाते हैं हनुमानजी को बानर मान कर रावण का सन्देह उनके मनसे जाता रहा। तब हनुमानजी प्रिय दर्शना सीताजी से फिर बोले, हे मैथिली! यह सब वृत्तान्त तो हमने तुमसे कहा अब प्रसन्न होओ। हम रामचन्द्रजी के समीप जांयगे तुमको क्या अच्छा लगता है ऐसे ही चले जायं या और कुछ कार्य करें। क्योंकि शम्बसादन दैत्य महर्षियों को कहने से कपियों में बड़े बीर हमारे पिता केशरीजी से मारा गया तब हम पवन से अपनी माता में उत्पन्न हुए हैं, इससे यद्यपि बानर हैं परन्तु प्रभाव से पवन के समान हैं।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे पंचत्रिंशः सर्गः ॥ ३५ ॥

महा तेजस्वी वायु के पुत्र हनुमानजी सीताजी को विश्वास के लिये नम्रता के सहित फिर बोले कि हे देवि! हम बानर हैं व श्रीरामचन्द्रजी के दूत हैं। हे महाभागे! देखो यह राम नाम से अंकित यह उनकी अंगूठी है यह तुम्हारे विश्वास के लिये उन महात्मा रामचन्द्रजी ने दी है तुम्हारा कल्याण हो अब तुम स्वस्थ चित्त होओ, पति के हाथ को भूषित करने वाली अंगूठी को लेकर बार बार उसको देखने लगीं और रामजी से मिलने के समान मुदरी को पाकर सीताजी हर्षित हो गई। जैसे ग्रहण को बीत जाने पर चन्द्रमा की शोभा होती है, वैसे अंगूठी को पाकर सीताजी हर्षित हुई। अपने स्वामी के सन्देश से हर्षित हो लज्जावती जानकीजी प्रसन्न हो कर हनुमानजी प्रशंसा करने लगे। हे बानरों में श्रेष्ठ! हनुमानजी तुम बड़े पराक्रमी व समर्थ और बड़े पीडित हो। क्योंकि जो तुम अकेले ही इस राक्षस के नगर में निर्भय हो अकेले ही चले आये। यह मकरालय आदि का स्थान सौ योजन का सागर बड़ाई करने के योग्य है उसको तुमने नांघ के गाय के खुर के समान कर दिया। हे बानर! तुमको रावण से भी त्रास व संभ्रम नहीं है इस लिये हम तुमको प्रकृत बानर समझती

हूं। हे कपीश्वर! तुम अपश्य हमारे बात चीत करने योग्य हो क्यों कि परम विज्ञानी श्रीरामजी के दूत हो अति दुर्धर्ष श्रीरामजी बिना तुम्हारी परीक्षा किये व पराक्रम के जाने हमारे पास तुमको विशेष कभी न भेजते। बड़े भाग्य की बात हैं कि धर्मात्मा व सत्य प्रतिज्ञ श्रीरामचन्द्रजी तथा महा तेजस्वी सुमित्राजी को आनन्द बाढ़नेवाले लक्ष्मणजी कुशल पूर्वक हैं भला जो श्रीरामचन्द्रजी कुशलता से हैं तो अपने क्रोध से समुद्र पर्यन्त इस पृथिवी को युग के अन्त में उत्पन्न होने वाली प्रलय काल की अग्नि के समान भस्म क्यों नहीं कर डालते, क्योंकि वे राम लक्ष्मण देवताओं को दण्ड देने वाले हैं परन्तु अभी हमारे दुःखों को विनाश का समय नहीं है, हम यही मानती हैं, क्या रामचन्द्रजी को व्यथा तो नहीं होती। वह शोक से परिताप तो नहीं करते, वह पुरुषोत्तम अपने कार्य को तो किये जाते हैं और इस दुःख से पार होनेके लिये यत्न तो करते हैं कभी व्याकुलतासे दीन तो नहीं हो जाते? और कार्य करने में मोहित तो नहीं होते? वे राजकुमार पुरुषों के कार्य करते हैं? शत्रु वा मित्र के सुहृद श्रीरामचन्द्रजी तीन तरह के उपाय को विजय करने की इच्छा से करते जाते हैं, भला मित्रों के संग उठते बैठते हैं, और श्रीरामचन्द्रजी का मित्र लोग क्या आदर करते हैं। महाराज राजकुमार रामचन्द्रजी देवताओं के शत्रुओं को मारकर क्या उनको सुख देते हैं भला हमारे न होने से श्रीरामचन्द्रजी का प्रेम घट तो नहीं गया है, हमको इस दुख से कभी छुड़ावैं गे या नहीं। सदा सुखके योग्य रामचन्द्रजी अब इस दुःख को प्राप्त करके कष्ट से पीड़ित तो नहीं होते हैं। क्या कौशल्याजी सुमित्राजी भरतजी का कुशल बार बार सुना देता है, सदा मान व पान के योग्य रामचन्द्रजी हमारे निमित्त शोक करतें हैं क्या अन्यत्र मन को तो नहीं लगाते हैं, और हमको दुःख से मुक्त करने की इच्छा करते हैं, क्या हमको छुड़ाने के लिये भाई में प्रेम रखने वाले भरतजी मन्त्रियों समेत अपनी अक्षौहिणी सेना भेजैं गे. अथवा दांत और नख के अयुध को धारण करने

वाले बानरोंकी सेनाको लेकर बानरोंके अधिपति सुग्रीवजी हमको छुड़ाने आवेंगे । क्या सुमित्रा को आनन्द देने वाले अस्त्र शस्त्र चलाने में कुशल शूर बीर लक्ष्मणजी अपने बाण समूह से राक्षसों का नाश करके हमको अयोध्यापुरी को ले चलेंगे । क्या हम थोड़ेही दिनों में श्रीरामचन्द्रजी के अतिकराल बाणोंसे रावणको मरा हुआ देखूंगी । क्या श्रीरामचन्द्रजी का मुख कमल हमारे शोक से सूख तो नहीं गया है, जो रामचन्द्रजी अपना राज्य छोड़कर हमको संग लेकर पैदल बन में चले आये उस पर भी उनको भय व शोक नहीं हुआ भला वे रामचन्द्रजी अब हृदय में धैर्य को धारण करते हैं । इन रामचन्द्रजी को स्नेह के कारण हमसे अधिक व हमारे समान माता पिता व और कोई नहीं है इससे हे दूत ! जब तक परम प्रिय रामचन्द्रजी की कथा सुनती हैं तभी तक हम जीती हैं । इस प्रकार महा अर्थयुक्त उनहनुमानजीके बचनको सुनने के लिये मौन होगई । सीताजी के बचन को सुनकर भीम पराक्रमी हनुमानजी हाथ जोड़कर सिर व मुख को नीचा करके बोले, कि कमल दल लोचन श्रीरामचन्द्रजी तुम्हारा यहां का रहना नहीं जानते हैं इसकारण तुमको लेचलने के लिये शीघ्रही नहीं आये, अब जैसेही हमारे मुख से आपके समाचार को पावेंगे वैसेही बानर भालुओं की सेना को लिये श्रीरामचन्द्रजी तुरंत आवेंगे । और इस महासागर को अपने बाण से पाट कर इस लंकापुरी को राक्षसों से रहित कर देवेंगे । इन राक्षसों के मध्य में देवता असुर तथा काल तक जो पड़ेंगे तो उनको भी मार डालेंगे हे आर्य्ये ! तुमको न देखने से उत्पन्न हुए शोक से परिपूरित श्रीरघुवजी सुख नहीं पाते जैसे सिंह से पीड़ा को पाकर हाथी सुख को नहीं पाता । हे देवि ! हम मन्दराचल मलयाचल विंध्याचल सुमेरु तददृदु नाम पर्वत की सौगंध खाते हैं कि जटा चीर को धारण किये चंद्रमा के समान मुख कान्ति वाले रामचन्द्रजी को शीघ्रही देखोगी । हे वैदेही ! तुम्हारे शोक में रामचन्द्रजी कुछ उत्तम फल मूल को भोजन नहीं करते हैं जब सन्ध्याकाल होता है तब मुनियों के समान थोड़ा शाक अथवा

तिनी का निरस चावल आदि भोजन करलेते हैं। जब तक तुम्हारा वियोग हुआ तब तक श्रीरामजी शोकसे इतने पीड़ित हैं कि अपने शरीरमें डंसने वाले मसा और मक्खियोंको नहीं उड़ाते हैं। रामजी नित्यही तुम्हारे ध्यान में लगे रहते हैं और सिवाय तुम्हारे और किसी का स्मरण नहीं करते हैं रात्रि काल में श्रीरामजीको निद्रा नहीं आती है, कदाचित् सो भी गये तो मधुर वाणी से सीता ऐसा शब्द कहकर उठ जाते हैं जब कोई उत्तम वस्तु को देखते हैं तब तुमको स्मरण करनेलगते हैं कि हा प्रिये ! ऐसा पर दीर्घ निश्वास लेकर अनेक वार तक नाम लेकर कहा करते हैं। हे देवि ! महात्मा रामचन्द्रजी व्रत को धारण किये नित्य परितापमान होते हैं। हे सीते ! ऐसा कहते कहते तुम्हारे प्राप्ति का यत्न किया करते हैं। इस प्रकार हनुमानजी के मुख से श्रीरामचन्द्रजी का समाचार सुन कर सीताजी का शोक कम हुआ तौभी रामचन्द्रजी को अपने दुःख में दुःखित जानकर दुःखित होने लगीं। जैसे आश्वनकी रात्रि के चन्द्रमा कभी वादलों से छिपजाते हैं और कभी प्रकाशित हो जाते हैं उसी प्रकार सीताजी भी रामचन्द्रजी के चरित्र से कभी पीड़ित और कभी हर्षित हो जातीथीं।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे षट्त्रिंशः सर्गः ।। ३६ ।।

हनुमानजी के बचन को सुनकर चन्द्रमुखी सीताजी बोली, हे बानर ! जो रामचन्द्रजी विरह से व्याकुल हो और वस्तु में मनको नहीं लगाते यह विषयुक्त तुम्हारे बचन अमृत के समान हैं, चाहे पुरुष अधिक ऐश्वर्य का भोग करता हो अथवा दारुण दुःख में पड़ा हो परन्तु काल उसको रस्सी में बांधकर घसीट लेजाता है। हे बानर श्रेष्ठ! भावी को कोई टाल नहीं सकता है। जो परमात्मा की इच्छा होती है वही होता है। वह जहां चाहता है लेजाता है। देखो रामचन्द्रजी हम तथा लक्ष्मण सब दुःख से मोहित हैं, श्रीरामचन्द्रजी क्योंकर इस दुःख का पार पावेंगे। जैसे जल में नौका को डूब जाने पर समुद्र में तैरता हुआ मनुष्य समुद्र के पार नहीं जा सकता है। परिवार सहित रावण को

मारकर रघुनाथजी हमको कब देखेंगे। हे वानर ! उनसे कहना कि शिघ्र आवें, क्यों कि इस वर्ष को पूरा होने में दो मास और बाकी है जब तक वर्ष पूरा नहीं होता तभी तक मैं अपने प्राण को रखूंगी, तात्पर्य यह की रावण से नियत किया गया दो मास का समय है, इस लिये दो मास तक मैं और भी जीवित रहूंगी। दुरात्मा रावणने हमारे मरने को एक वर्षका समय नियत कर दिया है उसमें हमको यहां आये दश महीना बीत गया केवल दो महीना और शेष है सो भी उसके भाई बिभीषण ने हमारे विषय में उसको बहुत कुछ समझाया है वह नीति शास्त्र की बहुतसी नीची ऊंची बातें उससे कही इसलिये हमको एक वर्ष की अवधि उसने हमको दिया है। बिभीषण ने यह भी कहा था कि रामचन्द्रजी की भार्या उन्हीं को सौंप आओ, परन्तु यह बात न रूची क्योंकि काल के वश रावण को संग्राम में मृत्यु स्वयं ढूंढ रही है, हे कपीश्वर ! यह बात हमने बिभीषण की ज्येष्ठ कन्या कला से सुनी है उस कन्या ने अपनी माता के मुख से सुन यहां आकर हमसे ये कहा है, तथा रावण अविंध्य नाम एक मन्त्री भी उस को यह उपदेश दिया है। वह राक्षसों में श्रेष्ठ विद्वान् बुद्धिमान व वृद्ध भी है, उसने बहुत भांति रावण से कहा है कि, रामचन्द्रजी की ओर से राक्षसों का नाश होगा इस लिये जानकीजी को रामचन्द्रजी को देओ। परन्तु वह दुष्टात्मा रावण मन्त्री के बचन को अंगीकार नहीं किया है। हे हनुमानजी ! हमारा अन्तःकरण परिशुद्ध है और उन रामचन्द्रजी में अनेक गुण हैं, इस लिये हम कह सकती हैं कि हमारे स्वामी हमको शीघ्र मिलेंगे। हे वानर ! उत्साह, पौरुष, सत्य, अक्रूरता, कृतज्ञता, पराक्रम और प्रभाव ये सब वस्तु श्रीरामचन्द्रजी में हैं। जिन रामचन्द्र ने बिना सहायता के जन स्थान में क्षण भर में चौदह हजार राक्षसों को मार डाले, भला कौन ऐसा शत्रु है जो रामजी के नाम से न भय पावे। उन रामचन्द्रजी की इन राक्षसों से तुलना नहीं हो सकती, जैसे शची इन्द्र का प्रभाव जानती है, वैसे हम श्रीरामचन्द्रजी

के प्रभाव कोजानती हैं, सूर्य के समान श्रीरामचन्द्रजी अपने बाण समूह से इन राक्षसरूपी शत्रुओं को इस प्रकार नाश करेंगे जैसे सूर्य अपने किरण से जल को सुखा देते हैं। रामचन्द्रजी के वियोग में आंसूकी धारा को बहाती और बार बार प्रलाप करती हुई जानकीजी से हनुमानजी बोले, हे सीते! तुम धैर्य को धारण करो। हमारे वचन को सुनतेही बानर भालुओं की सेना को संग लिये श्रीरामचन्द्रजी शीघ्रही आवैंगे। अथवा तुम हमारी पीठ पर चढो हमतुमको अभी इस राक्षस के हाथ से छुड़ाये लेते हैं। तुमको पीठ पर चढ़ाय हम अच्छी तरह से समुद्र को उतर जांयगे क्योंकि हमारे में इतनी शक्ति है कि रावण सहित इस लंका को पीठ पर रख कर समुद्र को लांघ जावें। इस कारण हे मैथिली! प्रस्रवण नाम पर्वत पर टिके रामचन्द्रजी के निकट आज ही तुमको लेजा कर बैठा देंगे, जैसे अग्नि देवता हवि को इन्द्रके निकट पहुंचा देते हैं। हे वैदेही! तुम आजही लक्ष्मण सहित श्रीरामचन्द्रजी को देखोगी। जैसे हिरण्यकशिपु को मारने के समय पर प्रगट हुए विष्णु भगवान को सब लोगों ने देखा था। महा बलवान रामचन्द्रजी तुम्हारे दर्शन की अभिलाषा किये पर्वत के ऊपर इन्द्र के समान बैठे हैं। हे देवि! अब शोच विचार न करो, झटपट हमारी पीठ पर चढलो और रामचन्द्रजी के साथ मिलने की इच्छा करो जैसे चन्द्रमा के साथ रोहिणी अपना मेल चाहती हैं। जो हम तुमको यहां से लेकर चलैंगे तो हमारे पीछे कोई भी लंका निवासी दौड़ नहीं सकता है। हे वैदेही! जिस तरह हम यहां को आये हैं उसी तरह तुमको भी लेकर आकाश मार्ग होकर यहां से फिर चले जायंगे यह तुम देख लेना। हनुमानजीके इस प्रकार वचन को सुनकर आश्चर्य और हर्ष से युक्त होकर जानकीजी बोलीं, हे हनुमान! इतनी दूर का मार्ग है हमको तुम कैसे ले जाया चाहते हो, हम तो बानरों का बल थोड़ा मानती हैं, सो तुम्हारा भी शरीर छोटा है तुम हमको हमारे पतिके समीप कैसे पहुंचाना चाहते हो। सीताजीके वचनको सुनकर मारुत सुत लक्ष्मीवान हनुमानजी शोचने लगे कि आज सी-

ताजी ने पहिले पहिल हमारा अनादर किया जो कहती हैं कि तुम तो छोटे हो हमको कैसे ले जाओगे । हे श्यामनयनी ! हमारा सत्व व प्रभाव तुम नहीं जानती, इस कारण अब जो हम रूप धारण करेंगे वह वैदेहीजी देखेंगी । यह सोच कर वानर सत्तम हनुमानजी ने अपना विशाल शरीर जानकीजी को दिखाया और उनके सामने खड़े होकर पर्वत के समान बढने लगे । यहां तक की मन्दराचल अथवा सुमेरू के समान शरीर को धारण किये और जलती हुई आग के समान प्रकाशित होकर शोभा को पाने लगे । और सीताजी के आगे हाथ जोड़ कर खड़े हो गये। पर्वताकार हो लाल मुख वज्र के समान कठोर दांत और नख महा बलवान हनुमानजी महाभयंकर शरीर धारण करके जानकीजी से बोले कि देखो पर्वत बन व देश सहित तथा अटारी प्राकार तोण आदि सहित इस लंका को उठाले जाने की शक्ति हमारे में है, हे जानकी ! अब तुम बुद्धि को स्थिर करो । शंका करना उचित नहीं है हे वैदेही ! चलो दर्शन से रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी को शोक से रहित करो हनुमानजी के पर्वताकार हनुमानजी के इस शरीर को देखकर जानकीजी बोलीं, हे महाकपि ! हम तुम्हारे सत्व व बल को जानती हैं कि तुम्हारी गति वायु के समान है अग्नि के समान तम्हारा तेज है नहीं तो हे वानरोत्तम ! तुमसे अतिरिक्त इस अपार समुद्र को लांघ कर इसपार की भूमि पर क्यों कर आसक्ता । हम जानती हैं कि तुम्हारे में सब कुछ शक्ति है तौ भी अपने कार्य की सिद्धि अवश्य बिचार करने के योग्य है । हे हनुमानजी ! तुम्हारे साथ हमारा जाना उचित नहीं होगा, क्योंकि जब तुम अपने वेग से चलोगे तब वह तुम्हारा वेग हमको मोहित कर देगा । जब तुम बड़े वेग से आकाश मार्ग हो चलोगे व समुद्र के ऊपर जाओगे तो हम तुम्हारी पीठ पर से भूमी पर गिर पड़ेंगी या मगर मछली युक्त समुद्र के भीतर चली जायंगी और विवश होकर जल जन्तुओं का उत्तम भोजन बनेंगी, इस कारण हे शत्रुओं को नाश करने वाले हनुमान ! तुम्हारे संग हम नहीं जा सकतीं,

क्योंकि स्त्री को संग लेकर तुम्हारे जाने में भी हमको सन्देह है। जब हमको लेकर तुम भागोगे तो बड़े बड़े भीम पराक्रमी दुष्टात्मा रावण के भेजे हुए राक्षस तुम्हारे पीछे दौड़ेंगे तो उस समय हम स्त्री को संग लिये तुम उन अस्त्र शस्त्र को धारण करने वाले राक्षसों के घर में पड़कर संशय युक्त हो जाओगे, क्योंकि उस आकाश मार्ग में अनेक प्रकार के आयुध लिये राक्षस लोग तो बहुत होंगे और तुम बिना अस्त्र और अकेले हो, तब किस प्रकार हमारी रक्षा करोगे व सम्हाल कर मार्ग में चल सकोगे। जब तुम्हारा और कामरूपी क्रूरचारी राक्षसों का युद्ध होने लगेगा तो उस समय हम मारे डरके तुम्हारे पीठ परसे अवश्य गिर पड़ेंगी और राक्षस लोग बड़े भयंकर भीमकाय व बलवान होते हैं किसी प्रकार उन राक्षसों ने संग्राम में तुमको जीत ही लिया, अथवा उन राक्षसों के संग लड़ने के समय हमारे ऊपर तुम्हारी दृष्टि नहीं रही और हम फिर गिर पड़ी तो पापी राक्षस फिर हमको पकड़ कर यहीं ले आवेंगे। अथवा उन्होंने तुम्हारे हाथ से हमको छीन लिया या तुम्हारे ऊपर चढ़े चढ़ेही हमको मार डाला तो रामचन्द्रजी से क्या कहोगे क्योंकि युद्ध में जय पराजय होताही है तब कौन जाने क्या होगा। यदि राक्षसों के युद्ध में अस्त्र शस्त्र के चलते समय किसी प्रकार हम मर गईं तो तुम्हारा समुद्र का लांघना और बल पूर्वक राक्षसों के साथ लड़ना यह सब व्यर्थ हो जायगा। हमने यह भी माना कि संग्राम में तुम सब राक्षसों को मार सकते हो किन्तु राक्षसों को तुम्हारे मार डालने से श्रीरामजी का कुछ यश नहीं होगा और हमारे मर जाने पर तुम्हारा सब उद्योग करना व्यर्थ होजायगा। अथवा राक्षसों ने तुम्हारे हाथ से हमको पाकर प्राण को न भी मारा कहीं अन्यत्र गुप्त स्थान में लेजाकर छिपा दिया कि जहां रामचन्द्र व वानर नहीं जा सकें तौ भी हमारे लिये जो कार्य तुमने आरंभ किया वह निरर्थक होगा। इस कारण जो रामचन्द्रजी तुम्हारे संग यहां चले आवें तो उसमें बड़ा गुण होगा। महा पराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी के प्राण हमारे लाभ के आधीन हैं व लक्ष्मण

तथा भरत शत्रुघ्न और सुग्रीव आदि तुम सब बानरों के भी प्राण हमारे आधीन हैं, क्योंकि हमारे मर जाने पर निराश होकर शोक से व्याकुल हो बानर भालुओं के सहित रामचन्द्र व लक्ष्मणजी अपना प्राण त्याग करैंगे । इसके सिवाय यह हमारी एक और भी प्रतिज्ञा है कि अपने पति की भक्ति को आगे कर श्रीरामचन्द्रजी के सिवाय और किसी पुरुष के अंग को हम स्पर्श करना नहीं चाहती । रावण ने जो हठात हमारे अंग को स्पर्श करके हर लाये तब हम विवश व असमर्थ थीं । कोई सहायक उस समय न था । यदि रामचन्द्रजी यहां आकर परिवार समेत रावण को नाश करके हमको यहां से ले चलें तो यह बात उनके योग्य होगी । महात्मा रामचन्द्रजी के अनेक गुणों को हम देखें व सुने हैं कि देवता गंधर्व दैत्य सर्प राक्षस आदि को भी संग्राम में रामचन्द्रजी के समान नहीं है, धनुष बाण को धारण किये इन्द्र के समान पराक्रमी जलती हुई अग्नि के समान संग्राम में श्रीरामचन्द्रजी को देखकर कौन सहन कर सकेगा । इसलिये हे हनुमान ! सुग्रीव आदि बानर भालु की सेना के संग लक्ष्मण के सहित श्रीरामजी को शीघ्र यहां लाओ तथा हे बानर बीर ! रामचन्द्रजी के बियोग से उत्पन्न बहुत दिन से स्थिर हमारे शोक को नाश करके हमारे मन को हर्षित करो ।

इति बाल्मीकीये रामायणे सुन्दरकाण्डे सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥

नीति युक्त सीताजी के बचन को सुनकर सन्तुष्ट हो हनुमानजी सीताजी से बोले, हे शुभदर्शने ! तुमने जो कहा वह स्त्रियों के स्वभाव के व विशेषकर पतिव्रता स्त्रियों के विनय के योग्य है, सत्य है हमारे पीठ पर चढ़कर सौ योजन के पार स्त्री होने के कारण तुम नहीं जा सकती हो । हे जानकी ! जो तुमने पराये पुरुष को स्पर्श करने में दोष बताया यह भी उन महात्मा रामचन्द्रजी की भार्या होने के कारण तुम्हारेही सदृश ये बचन हैं क्योंकि तुम्हारे सिवाय और कौन स्त्री इस प्रकार के बचन को कह सकती हैं । हे देवि ! तुमने जो हमारे आगे कहा है वह सब श्रीरामचन्द्रजी सुनैंगे । हे देवि ! हमने रामचन्द्रजी के प्रेम

से जो अपने साथ चलने को तुमसे कहा था यह लंकापुरी बड़ी कठिनता से प्रवेश करने योग्य है, अपनी सामर्थ्य से हमने अपने संग ले चलने को तुम्हें कहा है, हे सीते! हमारे संग जो तुम चलना नहीं चाहती हो तो अपना कोई चिन्ह हमको देओ जिसमें श्रीरामचन्द्रजी यहां तक पहुंचने की व तुम्हारे संग भेंट की विश्वास माने। इस प्रकार हनुमानजी के बचन को सुनकर सीताजी प्रेम के मारे गदगद होकर मधुर बचन से बोलीं कि हमारा यही चिन्ह तुम रामचन्द्रजी से कहदेना कि चित्रकूट पर्वत के ईशान कोणवाले शिखर पर तुम्हारे संग बैठी थी, वह शिखर अनेक प्रकार के पुष्प फल को देने वाले वृक्षों से संपन्न था, उसपर सिद्ध विद्याधर आदि महर्षि तपस्या करते थे, निकट में मन्दाकिनी बहती थीं। उस पर्वत के उपवन में आप के संग बिहार व जल क्रीड़ा कर के थकित होने के कारण तुम्हारे गोद में बैठ गई, परन्तु थकावट के कारण आपके गोद में हमको नीद आगई, इतने में एक कौआ आकर मांस के लिये हमारे ऊपर चोंच चलाई। तब हम उस कौवेको ढेला फेंककर भगाया था। परन्तु वह कौवा हमारे ढेला के चलाने से भी अपना चोंच चलाना बन्द नहीं किया। क्योंकि उसको मांस भोजन की इच्छा थी। तब हम उठकर क्रोधपूर्वक उस पक्षी के ऊपर दौड़ीं, तो दौड़ते समय हमारा वस्त्र नीचेको खसक पड़ा उस समय हम तुमको देखकर बहुत हंसी लज्जा व क्रोध से तुम्हारे पास आकर गोद में बैठ गईं, उस समय आपने हमको अनेक प्रकार से धैर्य दिया, और आंखों से आंसू की धाराको बहती हुई देखकर और हमारे स्तनों के बीच उस घाव को देखकर बिष को धारण करने वाले सर्प के समान स्वांस लेकर आप बोले, कि हे सुन्दर कमरवाली! यह किसने तुम्हारे स्तनों के बीच में घाव किया है, और यह कौन है जो पांच मुख वाले सर्प के समान तुम्हारे साथ खेलता है, यह कह कर जब आपने चारो ओर देखा तो अपने तीखे नखों में रक्त को भरे हमारी ओर को मुख किये वह कौवा दीख पड़ा, वह पक्षियों में श्रेष्ठ काक इन्द्र का पुत्र वायु के समान वेग रखने वाला शीघ्रही पृथिवी तल में आया था। उसको

देखकर आपने क्रोध पूर्वक अपने बिछौने में से एक कुशा का निकाल कर ब्रह्मास्त्र के मन्त्र से योगित किया, वह अभिमन्त्रित कुशा उसको एकी ओर अग्नि के समान प्रज्वलित हुआ, उस प्रज्वलित कुश को आपने कौवा की ओर चलाया, वह कुश का अस्त्र उस काग के पीछे पीछे आकाश में दौड़ने लगा। उस समय वह कौवा अनेक प्रकार के घुमाव से दौड़ता हुआ सब लोकों में गया। परन्तु अपनी रक्षा उसने कहीं नहीं देखी, उसके कर्म से उसका पिता इन्द्र भी उसे त्याग दिया। जब उस कौवे ने किसी देवता दैत्य गंधर्व से अपनी रक्षा नहीं पाया तब हार मान होकर आपही के शरण में आया, जब वह आकाश से पृथिवी में आकर आपकी शरणागत हुआ तो प्राण मारने योग्य उस कौवे का आपने पालन किया और जब वह कौआ अपना प्राण बचाने के लिये आप के चरणों पर गिरा तब आप कहे कि यह हमारा कुशास्त्र ब्रह्मादि से भी निष्फल नहीं हो सकता हम क्या करे, तब आपके मुख से इस प्रकारके बचनको सुनकर कौआने कहा कि अच्छा आप अपने अस्त्र से हमारा प्रान न मारकर मेरी एक आंख फोड़ दीजिये। उसके बचन के अनुसार अपने बाण को सफल करने के लिये आपने उसकी दाहिनी आँख अपने बाण से फोड़ दी और उसके प्राण की रक्षा किये। तब वह पक्षी आपको और महाराज दशरथ को प्रणाम करके आप से बिदा होकर अपने स्थान को चला गया। हे रामचन्द्रजी ! हमारे ऊपर जो थोड़ा सा अन्याय किया था उस कौवा को मारने के लिये ब्रह्मास्त्र रूप कुशा का प्रयोग किये थे अब जो तुमसे हमको हठात् छीन लेता है उसके ऊपर क्यों क्षमा करते हो। हे रामचन्द्रजी ! अब भी हमारे ऊपर कृपा करो क्योंकि इस समय तुम्हारे ऐसे नाथ को पाकर नाथवती होकर भी हम अनाथ के समान दिखाई देती हैं और हमने आप से सुनाभी है कि हिंसा न करना यह परम धर्म है, हम आपको महा बली व पराक्रमी तथा परम उत्साह युक्त जानती हैं। जैसे इन्द्र देवलोक के स्वामी हैं वैसे आप

इस पृथिवी भर के स्वामी हैं, आप सब प्रकार के अस्त्र शस्त्र को जानने वालों में श्रेष्ठ हो फिर इन राक्षसों के ऊपर अस्त्र को क्यों नहीं छोड़ते हो। समर में आपके वेग को देवता गंधर्व सर्प किन्नर आदि कोई नहीं सह सकते हैं, जो आप ऐसे पराक्रमी हमारा आदर करते हैं तो अपने बाणों से इन राक्षसों का नाश करिये, अथवा अपने भाई की आज्ञा लेकर शत्रुओं को नाश करने वाले वीर लक्ष्मणजी हमारी रक्षा क्यों नहीं करते। पवन व इन्द्र के समान पराक्रमी रामचन्द्र व लक्ष्मणजी हमारी उपेक्षा क्यों करते हैं, अथवा इसमें उन लोगों का कुछ दोष नहीं है, हमारा प्रारब्धही बिगड़ कर इस प्रकार अपने पूर्व जन्म के लिये फल को भोगता है जिससे वे दोनों महा पुरुष हमारी ओर नहीं देखते हैं। इस प्रकार आंसू को बहाती हुई और बिलाप करती हुई जानकीजी से हनुमानजी बोले, हे देवि! हम अपने सत्य की शपथ करके कहते हैं कि रामचन्द्रजी तुम्हारे शोक में पड़े हैं और उन्हीं के दुःख से लक्ष्मणजी भी सदा दुःखी रहते हैं। अब आप का किसी प्रकार से दर्शन हुआ है इसलिये अब यह शोच करने का नहीं है, हे सीते! इस मुहूर्त को दुःख का नाशक समझो। क्योंकि वे महा पुरुष राजपुत्र तुम्हारे देखने के लिये संसार को भी भस्म कर सकेंगे। हे विशालक्षी! इस दुष्ट रावण को परिवास सहित समर में मार कर श्रीरामचन्द्रजी तुमको अपनी पुरी को ले जायँगे। यह कहो कि श्रीरामचन्द्रजी से कौन सन्देश कहना है और महाबली लक्ष्मणजी से, और महा तेजस्वी सुग्रीवजी से, तथा उन आये हुए वानरों से क्या कहना है। हनुमानजी के इस प्रकार बचन को सुनकर मनस्विनी सीताजी बोलीं कि कौशल्याजी ने जिन लोक स्वामी रामचन्द्रजी को उत्पन्न किया है उनकी कुशलता पूछना और शिरसे हमारा प्रणाम कहना। और सब प्रकार से रत्न अति प्रिय स्त्रियों में श्रेष्ठ पृथिवी में दुर्लभ महान् ऐश्वर्य को छोड़कर पिता माता को मान कर उनकी प्रसन्नता के अनुसार सब प्रकारके उत्तम सुखको त्याग कर श्रीरामचन्द्रजी के पीछे चलने

वाले सुमित्रा को आनन्द देने वाले लक्ष्मणजी से हमारी ओर से उनके कुशल को पूंछना । और उनसे यह कहना कि शीघ्र हमारे दुःख को दूर करें । हमारे प्राणनाथ शूरशिरोमणि श्रीरामचन्द्रजी से बार बार यह कहना कि अब हम एक मास पर्यन्त और अपनी शरीर में प्राण को धारण करेंगी । मासको पूरा होने पर हम अपने प्राणको त्याग करेंगी, यह तुमसे सत्य कहती हूं । इस प्रकार कह कर वस्त्र को ओढ़े ओढ़े शिरसे चूड़ामणि को खोल कर जानकीजी ने हनुमानजी को दिया और कहा कि यह चूड़ामणि श्रीरामचन्द्रजी को देदेना उन वीर हनुमानजी ने उस उत्तम मणि को लेकर अपनी अंगुली में पहिन लिये क्योंकि उस मणि के छिद्रमें हनुमानजी की बिशाल भुजा नहीं जा सकती थी । हनुमानजी मणि रत्न को लेकर सीताजी को प्रणाम किये और प्रदक्षिणा करके सीताजी को माथा नवाय उनके आगे खड़े हो गये, उस समय सीताजी के दर्शन से हर्षित शरीर हनुमानजी की मनकी प्रसन्नता से श्रीराम व लक्ष्मणजी के पास पहुंच गये इस प्रकार हनुमानजी सुखी होकर पुलकित हो गये ।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे अष्टत्रिंशसर्गः ॥ ३८ ॥

मणि देकर सीताजी हनुमानजी से बोलीं, कि इस चूड़ामणि को रामचन्द्रजी भली भांति पहिचानते हैं, वह इस मणि को देखकर रामचन्द्रजी अपनी माता को हमको और राजा दशरथ को स्मरण करेंगे । हे हरिसत्तम ! अब तुम यह मणि रामचन्द्रजी को दोगे तो इस मणि को पाय युद्ध करने के विषय में तुमको फिर प्रेरित करेंगे । इस लिये इस कार्य में उत्साह बढ़ाने के लिये तुम अच्छा उत्तर अभी से विचार करलो । इस कार्य में ऐसा उद्योग करो कि जिसमें हमारा दुःख नाश हो जावे । यह सीताजी से सुनकर बिनीत भाव से हनुमानजी बोले ऐसाही उद्योग करेंगे यह कहते हुए परम पराक्रमी पवन तनय हनुमानजी शिरसे जानकीजी को प्रणाम किये और चलने के लिये तइयार हुए । हनुमानजी को चलने के लिये तइयार जान

कर जानकी गद्गद् वाणी से बोलीं, कि हे हनुमान ! रामचन्द्र व लक्ष्मणजीसे कुशल कहना, और मन्त्रियों में श्रेष्ठ सुग्रीवजी से सब वानरों के सहित धर्म युक्त कुशल कहना। जिसने महा बाहु रामचन्द्रजी इस दुःख सागर से हमको उतारें, तुम उसी का उद्योग करना। हे हनुमान ! तुम यही बात कहना जिससे रामचन्द्रजी हमको जीती हुई यहां पावें व उनकी किर्ति बढ़े इस प्रकार के बचन को कहने से तुम बाचिक धर्म पावोगे सीताजी के इस प्रकार बचन को सुनकर हनुमानजी हाथ जोड़ कर शिरोधार्य किये और बोले कि भालू व वानरों के सहित रामचन्द्रजी शीघ्र यहां आवेंगे और युद्ध में इन राक्षसों को नाश करके तुम्हारे शोक को दूर करेंगे। क्योंकि रामचन्द्रजी के बाण के बेग के सामने देवता दैत्य गंधर्व कोई नहीं ठहर सकते, तुम्हारे लिए रामचन्द्रजी इन्द्रादिक देवतों को भी पराजित कर सकेंगे। हे जनक नन्दिनी ! रामचन्द्रजी तुम्हारे लिये समुद्र पर्यन्त पृथिवी को शासित कर सकते हैं, इस लिये तुम्हारे निमित्त उनकी जय होगी। इस प्रकार हनुमानजी के सत्य बचन को सुनकर जानकीजी प्रसन्न हो गईं और जाने के लिये तइयार हनुमानजीको जानकीजी बार बार देखने लगीं और उनका इस प्रकार सन्मान करने लगीं कि हे बीर ! हे शत्रुनन्दन ! जो हमारा कहा मानो तो आज रह जाओ विश्राम लेकर प्रातः काल चले जाना क्योंकि हे बानर ! तुम्हारे यहां रहने से हमारा अल्पभागी का महान शोक एक मुहूर्त के लिये नाश होगा। हे हरिसत्तम ! तुम्हारे देखने से उत्पन्न व नया शोक हम को अधिक सन्ताप करावे वह हमको दुःख से दुःख ही में डाल कर और भी जलावेगा। हे बीर ! हमारे मनमें यह सन्देह उठता है कि तुम जिन सुग्रीव के सहायक हो उन बानरों के राजा सुग्रीव बानर भालु की सेनाको लेकर रामचन्द्र व लक्ष्मण के सहित किस प्रकार इस अपार समुद्र को पार कर आवेंगे। क्योंकि समुद्र को लांघने में तुम्हारी व गरूड़ की इन दोही की गति है तीसरे की गति होना कठिन है हे बीर ! तुम

राम लक्ष्मण व सेना सहित सुग्रीव किस प्रकार इस समुद्र को लांघैंगे और इसमें तुमने क्या बिचार किया है, इस कार्य को साधन करने में तुम अकेले ही बहुत हो। तौ भी रामचन्द्रजी के योग्य यह कार्य तभी हो जो यहां आकर सेना सहित रावण को संग्राम में जीत कर हमको यहां से ले चलें, जब श्रीरामचन्द्रजी लङ्कामें सब सेना सहित आकर हमको ले जायं तो उनके योग्य कार्य हो। अर्थयुक्त नम्रता व कारण सहित सीताजी के बचन को सुनकर हनुमानजी बोले, हे देवि! बानर भालू की सेना के आने का उपाय सत्यवक्ता सुग्रीवजी बिचार कर चुके हैं, वह सुग्रीव राक्षसों को नाश करने के लिये असंख्य बानरों की सेना लेकर शीघ्र आवेंगे। बानर भालुओं में अमित पराक्रम है। वे लोग कई बार समुद्र को लांघ कर पृथिवी की प्रदक्षिणा किये हैं और वे सब बानर भालू आकाश मार्ग में चलने वाले हैं बल व पराक्रम में वे सब हमसे अधिक हैं, जब हमी इस समुद्र को लांघ कर यहां चले आये तो उन बानरों की बातही क्या है यह भी आप समझें क्योंकि कोई भी हो कार्य करने के लिये छोटे भेजे जाते हैं बड़े नहीं, इसलिये हे देवि! सन्ताप न करो तुम्हारा शोक शीघ्र ही दूर होगा क्योंकि लोग एकही फलांग में लंकामें आ जायंगे और सूर्य चन्द्रमा के समान रामचन्द्रजी हमारे पीठ पर चढ़ कर तुम्हारे समीप शीघ्रही आजायंगे और युद्ध में रावण की धज्जियां उड़ा देंगे, और तुमको अपनी पुरी को लेजायंगे, इसलिये अपने मनमें बिश्वास करो और कुछ दिन तक प्रतीक्षा करो तुम्हारा कल्याण हो बहुत शीघ्र रामचन्द्रजी को देखेंगी। जब परिवार व मन्त्रियों के रावण मर जायगा तो तुम रामचन्द्रजी के साथ ऐसी शोभित होवोगी जैसे चन्द्रमा के साथ रोहिणी शोभित होता हैं। हनुमानजी इस प्रकार जानकीजी को समझा बुझा कर अपने चलने का बिचार करके फिर जानकीजी से बोले, हे सीते! धनुष बाण को धारण करने वाले शत्रुओं को नाश करने वाले श्रीरामचन्द्रजी को लंका पुरी के द्वारपर खड़े शीघ्र देखोगी और नख दांत का आयुध बनाये

सिंह शार्दूल के समान पराक्रमी ऐरावत आदि हाथियों के समान विशाल शरीर वाले बानरों को सेना को देखोगी। हे जनकनन्दिनी! तुमको बिना देखे प्रचण्ड काम बाण से रामचन्द्रजी को क्षण मात्र आनन्द नहीं मिल सकता, जैसे सिंह से पीड़ित हाथी को सुख नहीं मिलता हे देवि! तुम शोक व रोदन मत करो तुम इन्द्र के साथ इन्द्राणी के समान अपने पतिका साथ पावोगी। हे सीते! इस राक्षसों की नगरी में तुमको अधिक दिन तक निवास करना पड़ेगा कुछ काल तक क्षमा करो॥

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दर काण्डे एकोन चत्वारिंशः सर्गः॥३६॥

महात्मा पवन कुमार हनुमानजीके बचनको सुनकर देव कन्याओं के समान सीताजी अपने कल्याण के बचन को बोली, कि हे बानर सत्तम! तुमको देखकर हमको बड़ा हर्ष हुआ जैसे वर्षा काल में वर्षा को देखकर किसान प्रसन्न होते हैं, अब ऐसी कृपा हमारे ऊपर करो जिसमें रामचन्द्रजी को देखकर हम सकाम होवें। हे हनुमान! रामचन्द्रजी को यह चूड़ामणि हमारा चिन्ह दे देना और दूसरा चिन्ह उस कौवे के आंख फोड़ने का कह देना तीसरा एक चिन्ह यह कह देना कि एक समय हमारे माथ के सब तिलक [बैंदी] आदि मिट गये थे तो श्रीरामचन्द्रजी ने अपने हाथ से हमारे एक गण्ड स्थल [कपोल, गाल] में मैन शिलका तिकल बना दिया था उसका भी उनको स्मरण करा देना। हे इन्द्र वरुण के समान पराक्रमी रामचन्द्र जी! आप ऐसे पराक्रमी हो, आप हरी हुई राक्षसों के बीच में निवास करती हुई हम सीता को कैसे अच्छा मानते हो। हे अनघ! यह दिव्य चूड़मणि मैंने बहुत भांति से रक्षा किये थी। जब बड़ा कष्ट होता था तब मैं इसी को देखकर हर्षित होती थीं। जल से उत्पन यह चूड़ामणि तुम्हारे चिन्ह के लिये हमने भेजा है इसको ग्रहण कीजिये और हमारे जीवन की एक मासकी अवधि और है इसको जानिये। देखिये असह्य दुःख और हृदय को छेदन करने वाला लंका पुरी का वास

और राक्षसों का त्रास यह सब बातें तुम्हारे ही लिये सहती हैं, हे शत्रुओं को नाश करने वाले। आपके आवने के भरोसे पर मैं एक महीना तक और जीती रहूंगी, यदि इतने दिन में तुम न आये तो इस से ऊपर एक दिन भी न जी सकूंगी। क्योंकि यह पापी राक्षस हम को बार बार त्रास दिया करता है, यदि इतने दिनमें तुम भी न आकर हमको अपने हृदयसे अलग जानोगें तो मैं अवश्य अपना नाश करूंगी। करुणा सहित जानकीजी के बचन को सुन कर हनुमानजी फिर बोले, हे देवि ? हम तुमसे सौगन्ध खाकर सत्य कहता हूं रामचन्द्रजी तुमारा यहां का निवास नहीं जानते हैं नहीं तो अब तक बानर भालू की सेना लेकर सुग्रीव के सहित आगये होते। रामचन्द्रजी तुमारे शोक से सदा व्याकुल रहते हैं, श्रीरामजी को पीड़ित देख कर लक्ष्मणजी भी दुखी रहते हैं, अब किसी प्रकार से आपका दर्शन हुआ है रामचन्द्रजी शीघ्र आवेंगे। तुम रोदन मत करो, इस मुहूर्त को दुख का अन्त समझो। रामचन्द्र व लक्ष्मणजी आपके समाचार को पाकर लंका को शीघ्र भस्म कर डालेंगे। हे मैथिली ! आपके दी गई चूड़ामणि आपसे कहे हुए जो समाचार हैं उसके अतिरिक्त श्रीरामचन्द्रजी के प्रिय के लिये और भी जो कुछ चिन्ह हो वह दीजिये। श्रीहनुमानजी के बचन को सुनकर जानकीजी बोलीं कि, यही जो चूड़ामणि हमने तुमको दिया है, इसी को देखकर श्रीरामचन्द्रजी तुम्हारे बचन में विश्वास करेंगे, जानकीजी के बचन को सुनकर हनुमानजी मणि को भली भांति अपने अंगुली में धारण करके सीताजी को शिर से प्रणाम कर चलने की इच्छा से उसी वृक्ष पर कूदने की इच्छा किये, हनुमानजी के चलने के बेगको देखकर आंखोंसे आंसूको बहाती हुई गद्गद् बाणीसे जानकीजी बोली, हे हनुमान ! सिंहके समान ओजस्वी रामलक्ष्मण से सुग्रीव आदि मन्त्रियों के सहित सब से यहां की कुशल को कहना। जैसे कहने व सुनने और करने महाबाहु श्रीरामचन्द्रजी हमको इस दुःख सागर के पार लगाव वसाही तुम करना। हे बानर

बीर ! यह हमारे तीव्र शोक का बेग राक्षसोंकी ओरसे हमारे अपमान को तुम देख चुके हो, सो यह सब रामचन्द्रजीके समीप जाकर कहना। हे बानर बीर ! जाओ, मार्ग तुम को कल्याणका देने वाला हो। राजकुमारी जानकीजी के सन्देश को लेकर कृतार्थ व हर्षित हनुमानजी ने जाना कि बस अब थोड़ा सा कार्य और बाकी रहा है ऐसा अपने मन में शोककर हनुमानजी उत्तर दिशा को चले।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४० ॥

चलने के समय श्रीजानकीजी की सुमधुर वाणी से पूजित हनुमानजी वहां से कुछ दूर तक चल कर अपने मनमें सोचने लगे कि जानकीजी को देखने से अतिरिक्त एक छोटासा कार्य और बाकी है जो कि राक्षसों को भी इस बात की सूचना देनी चाहिये कि श्रीरामजी का दूत सीताजी को खोजने के लिये आया है इस विषय में साम दान भेद यह तीन उपाय तो चल सकता नहीं, क्योंकि राक्षसों को समझाना गुण नहीं करेगा, इन धनी राक्षसों से दान करना भी उचित नहीं है, बलवान व अभिमानी लोगों में भेद नहीं चलेगा इस कारण इन दुष्टों के साथ पराक्रम दिखलाना हमको अच्छा लगता है। क्योंकि पराक्रम के सिवाय इस कार्य के लिये और कोई उपाय हमको नहीं दीख पड़ता, पराक्रम करने से यदि कुछ राक्षस शूर वीर संग्राम में मारे जाय तो विश्वास है कुछ सीधी बातें यह राक्षस करें। जिस कार्य के लिये स्वामी की आज्ञा हो उसकी सिद्धि हो जाने पर उसके अनुयायी दूसरा कार्य करें तो वही कर्ता कार्य करने योग्य होता है परन्तु यदि वह कार्य मुख्य कार्य के विपरीति न होवे तो। तब ऐसा कोई पामान्य कार्य नहीं है जो एकही साधक से सिद्धि हो सके इस कारण जो अर्थ सिद्धि करने का अनेक उपाय जानता है वही अर्थ साधन में समर्थ हो सकता है। तो अब हम क्या उपाय करें कि जिसमें हठात् राक्षसोंसे युद्ध हो और सुख पूर्वक चले भी जायें और रावण भी हमारे बल व पराक्रम को भी अच्छी तरह जान ले। यदि युद्ध में रावण हमारे

सामने अपने मन्त्री व सेना पतियों के सहित आवे तो हम उसका बल और उसके हृदय का विचार जान लेवें । इसलिये इस क्रूर रावण का यह अशोक बन हम विध्वंस कर डालें जैसे सूखे वन को अग्नि नाश करता है, तब तो इस बन को नाश करने से रावण अवश्य कोप करेगा और चतुरंगिणी सेना सहित अस्त्र शस्त्र धारी राक्षसों को भेजेगा तब त्रिशूल खड्ग यदि शमुद्गद चक्र आदि अस्त्रों को धारण करने वाले राक्षसों को युद्ध में मारकर प्रचण्ड पवन के समान सुग्रीवजी के स्थान को हम चले जायंगे। हनुमानजी इस प्रकार बिचार करके अपनी जांघों से वृक्षों का उखाड़ना व तोड़ना आरंभ किया। हनुमानजी ने पवन के समान क्रोध करके प्रमदावन सब तोड़ डाला जिसमें प्रमत्त पक्षी सब प्रकार के शब्द करते थे व उसमें नाना प्रकार के वृक्षलता आदि लगाये गये थे। वह वृक्षों के मथित होजाने से वापी कूप तड़ाग आदि जलाशयों घाट टूट जाने से और रमणीक व सुन्दर पर्वतों के फट जाने से वह बन अति भयंकर हो गया। नाना प्रकार के पक्षियों को रोने व चिल्लाने से जलाशयों की मर्यादा को टूट जाने के कारण इधर उधर कमलों को टूट जाने और वृक्षों को क्लान्त होने से वह अशोकबन उदास हो गया, उस बनमे टूटी फूटी लतायें विह्वल स्त्रियों के समान शोभा को प्राप्त हो गईं। लता गृह व चित्र गृह को विध्वंस करने से पक्षियों के सहित सर्प व मृगाओं को दुःखित शब्द करने से शिलागृह व समान्य गृहों को टूट फूट जाने से उस महा बनका सब स्वरूप नष्ट भ्रष्ठ हो गया। वह अशोक वृक्षों से विस्तृत प्रम दावन की बनस्थली हनुमानजी के बल से भिन्न छिन्न होकर रावण की संपूर्ण स्त्रियों के दुःखरूपी लताओं का विस्तार करने वाला वह बन हो गया और बहुत से बलवानों के साथ युद्ध करने की इच्छा किये वेग से युद्ध संपति से ज्वलित एक महा कपि हनुमानजी रावण के मन का महा दुःखका कारण होकर युद्ध के लिये तोरण पर स्थित हुए।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे एक चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥

इसके बाद पक्षियों के चिल्लाने के तथा वृक्षों के टूटने के भयंकर शब्द को सुनकर सब लंका निवासी भय से कांपने लगे, मृगा व पक्षी भय के मारे इधर उधर भयानक शब्द करते हुए भाग चले और राक्षसों का अशकुन होने लगा । भयावन मुख वाली जानकीजी की रक्षा करने वाली राक्षसियों ने निद्रा से जाग कर बनको टूटा फूटा देखकर महा बली हनुमानजी को वहां खड़े देखा । हनुमानजी उन राक्षसियों को खड़ा देखकर अपना रूप और भी भयान बना लिया । पर्वत के समान विशाल व भयंकर बानर को देखकर राक्षसियों ने जनकनन्दिनी से पूंछा, कि 'यह कौन है' व 'किसका है' व 'कहां से' 'किस लिये आया है' और तुम्हारे साथ इसने क्या बार्तालाप किया है । हे विशालाक्षि ! यह वृत्तान्त हमसे कहो तुम कुछ मत डरो । हे सुभगे ! इस बानर ने तुमसे क्या समाचार कहा है । यह राक्षसियों के बचन को सुनकर सर्वाङ्ग सुन्दरी पतिव्रता शिरोममणि जानकीजी बोलीं कि कामरूपी राक्षसों की माया को हम कैसे जान सकती हैं तुम्ही लोग जानो कि यह कौन है और किस कारण इस बनमें यह आया है, क्योंकि सर्प के पांव को सर्पही जानता है इसमें कुछ सन्देह नहीं है हमको भी इस बानर से अधिक भय है, परन्तु यह नहीं जानती कि कौन है । हमको तो यह विश्वास होता है कि यह भी कोई राक्षस है । अपनी इच्छा नुसार रूप धारण करके यहां आया है । श्रीजानकीजी के बचन को सुनकर राक्षसियां अत्यन्त व्याकुल हो गई और भयके मारे कुछ तो इधर उधर भागने लगीं और कोई वहीं खड़ी होकर हनुमानजी के स्वरूप को देखने लगीं और कोई रावण के समीप इस वृत्तान्त को कहने के लिए चली गईं और वहां जाकर रावण को साष्टाङ्ग दण्डवत् करके बानर का वृत्तान्त रावण से कह सुनाया कि हे राजन् ! अशोक बाटिका में एक बिशाल व भयंकर बानर आया है वह अत्यन्त पराक्रमी है और सीताजी से बार्ता लाप करके अशोक बनके मध्य में खड़ा है । सीता व उस बानर में जो कुछ बार्ता-

लाप हुआ उसको मृग नयनी सीतासे बहुत भांति पूछा। परन्तु जानकीजी वह बताने की इच्छा नहीं करती हैं। वह बानर चाहे इन्द्र व कुबेर का दूत हो चाहे सीताजी को खोजने के लिये रामचन्द्रजी ने भेजा हो। वह अदभुत रूपधारी बानर पक्षी मृगा आदि से संयुक्त प्रमदावन को तोड़ फोड़ कर नष्ट कर डाला है। जिस स्थान पर सीताजी बैठी है उस स्थान को छोड़कर ऐसा कोई जगह नहीं है जिसको उस राक्षस ने नहीं विध्वंस किया हो। जानकीजी के रहने का स्थान उसने क्यों नहीं विध्वंस किया, यह नहीं जान पड़ता कि जानकी जी की रक्षा के लिये अथवा विशेष परिश्रम करने से थकावट के कारण उतने स्थान को छोड़ दिया है परन्तु जब उसने सब बन तोड़ डाला तो उतने को तोड़ने में उसको कौनसा श्रम था। इससे मालूम होता है कि सीताजी की रक्षा ही के लिये उसने उतना स्थान छोड़ दिया है। जिस सुन्दर पत्र पुष्प फल संयुक्त शिंशिया (सीसो) वृक्ष के नीचे जानकीजी बैठी हैं वह वैसेही फूला फला है जो उग्र स्वभाव वाला बानर ने बनको विध्वंस किया व सीताजी से संभाषण किया है उस बानर के लिये आप कुछ कठिन दण्ड देने की आज्ञा दीजिये। क्योंकि हे राक्षसेश्वर ! तुम्हारे अधीन में पड़ी सीता से ऐसा कौन है जो वार्तालाप करके यहां से जीता बच जावे। राक्षियों के बचन को सुनकर रावण क्रोध से अग्नि के समान प्रदीप्त होकर भभक उठा। उस क्रोधित रावण के नेत्रों से आंसुओं के बूंद गिरने लगे, जैसे जलते हुए दीपकों से तेल के बूंद गिरते हैं। महा तेजस्वी रावण अपने बराबर बलवान किंकर नाम राक्षस को हनुमानजी को पकड़ने की आज्ञा दिया। उसकी आज्ञानुसार वह किंकर राक्षस रावण के मन्दिर से अस्त्र शस्त्र के सहित अस्सी हजार राक्षसों की सेना को लेकर चला। बड़े उदर दांत और अनेक प्रकार की माया को जानने वाले राक्षस सनुमानजी को पकड़ने के लिये उद्यत हुए। पल्लव पर स्थित हनुमान के ऊपर वे सब राक्षस एकही साथ ऐसे गिरे जैसे पतिंगा

आग में गिरते हैं। गदा मुसल तोमर मुद्गर खड्ग यदिश आदि विचित्र अस्त्र शस्त्र को धारण करने वाले राक्षसों ने हनुमानजी को चारो ओर से घेर लिया, तब महातेजस्वी बलवान हनुमान राक्षसों की सेना को देख कर अपनी पूंछ पृथिवी पर पटक कर गर्जना किये, हनुमानजी के पूंछको पटकने के शब्द से लंकापुरी भर गई और उस बड़े भारी गर्जना के शब्द से आकाश में उड़ते हुए पक्षी पृथिवी पर गिर पड़े। ऐसी गर्जना करने के उपरान्त हनुमान भयंकर आवाज से बोले कि महाबली रामचन्द्र व लक्ष्मणजी की जयहो और रामचन्द्रजी से पालित राजा सुग्रीव की जय हो। उत्कृष्ट कर्मकारी श्रीरामचन्द्रजी के हम दास हैं, वह रामचन्द्रजी भयंकर कर्म करने वाले राक्षसों के निहन्ता हैं, हम वायु के पुत्र हनुमान हमारा नाम है। जब हम संग्राम में पर्वत कीचट्टानों व वृक्षों को उखाड़ कर लड़ने लगेंगे तो हजारों रावण हमारी बराबरी नहीं कर सकेंगे। इस लंकापुरी को विध्वंस करके जानकीजी को प्रणाम करके और अपना कार्य सिद्धि करके राक्षसों के बीच से श्रीरामचन्द्रजी के समीप चले जायंगे। संध्याकाल के लाल बादल के समान अंगवाले और पर्वत के समान विशाल शरीर को धारण करने वाले पल्लव के मध्य में खड़े हनुमानजी को देखकर भय के मारे राक्षस लोग कांपने लगे। स्वामी की आज्ञा से निश्शंक वे सब राक्षस भांति भांति के अस्त्र शस्त्र व आयुध हनुमान पर फेंकने लगे। महाबलवान् हनुमानजी उन शूर वीरों की घेरा में पड़कर तोरण में लगी हुई परिघ को हनुमानजी ने उखाड़ डाली और उसी से सब राक्षसों को मारे जैसे चमकते व फरफराते सर्पको गरुड़जी खेल करते हैं। जैसे इन्द्र अपने वज्र से दैत्यों को मारते हैं वैसेही आकाश में कूद कूद कर हनुमानजी राक्षसों को मारने लगे। इस प्रकार रावण के मन्त्री किंकर की अस्सी हजार सेना का नाश करके पवन कुमार हनुमान युद्ध करने की अभिलाषा से फिर उसी तोरण पर चढ़कर बैठ। उन राक्षसों में जो राक्षस किसी प्रकार से बच गये थे वह किंकर नाम राक्षस का समाचार जाकर रावण से कह सुनाया। उन राक्षसों को संग्राम में मरण सुन-

कर रावण ने अति दुःख से जीतने के योग्य असदृश पराक्रमी प्रहस्त के पुत्र को लड़ने के लिये भेजा।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४३ ॥

हनुमानजी किंकर नाम राक्षस को मारकर अपने मन में विचार करने लगे कि हमने इस बन को सब तोड़ फोड़कर भग्न कर डाले अब यह जो सामने एक बड़ा ऊँचा प्राकार है इस को भी ध्वंस करना चाहिये, यह अपने मन में विचार कर हनुमानजी अपने पराक्रम को उन राक्षसि व राक्षसों को दिखाते हुए सुमेरु के शिखर के समान उस ऊँचे मन्दिर पर कूद कर वायु के पुत्र हनुमानजी चढगये। उस पर्वताकार ऊंचे प्रासादपर चढकर महाबली हनुमानजी उदित सूर्य के समान शोभा को प्राप्त होने लगे और उस ऊंचे मन्दिर पर चढकर बड़ी विशाल शरीर को धारण करने वाले प्रकाशमान हनुमान उस मन्दिर को अपने बल से तोड़ फोड़ कर ऐसा शब्द किया कि जिसके शब्द से लंकापुरी आपूरित हो गई, आकाश मार्ग से पक्षियों का पतन होगया। उस मन्दिर की रक्षा करने वाले राक्षस गण मोहित होकर पृथिवी में गिर पड़े और उस मन्दिर को तोड़कर हनुमानजी गंभीर शब्द से कहने लगे कि अनेक प्रकार के अस्त्र विद्या को जाननेवाले रामचन्द्रजी की जय हो और रामचन्द्रजी तथा लक्ष्मणजी से पालित बानरों के राजा सुग्रीव की जय हो। हम अद्भुत कर्म करने वाले वायु के पुत्र हनुमान हैं। जब हम वृक्षों को व पर्वत की शिलाओं को उखाड़ कर संग्राम में लड़ने लगेंगे तो हजारों रावण हमारे सामने अपना बल नहीं दिखा सकेंगे। इससे इस लंकापुरी को विध्वंस करके जानकी को प्रणाम कर और अपना कार्य सिद्ध करके राक्षसों को देखते ही देखते चले जायंगे। यह कह कर महा कार्य हनूमानजी उस प्रासाद पर बैठकर राक्षसों को भय देते हुए बड़े जोर से गर्जना किये, हनूमानजी के उस शब्द से व्याकुल उस स्थान के हजारों राक्षस अपना अपना अस्त्र लेकर आये और बिशाल शरीर को धारण करने वाले हनूमान पर छोड़ने लगे।

सूर्य के समान प्रकाशित बाणों से संयुक्त राक्षसों की सेना हनुमानजी को चारो ओर से घेर कर खड़ी हो गई इसके बाद पवनकुमार अत्यन्त क्रोध कर अपने स्वरूप भयंकर बना लिया और उस प्रसाद से एक बड़ा भारी सोने का खंभा उखाड़ कर ऐसा उस खंभे को घुमाया कि उस खंभे से आग निकलने लगी जिससे वह सब मन्दिर जलने लगा, इधर उसी बीच में सैकड़ों राक्षसों को हनुमानजी ने उसी खंभ से मार डाला। जैसे इन्द्र अपने वज्र से दैत्यों का नाश करते हैं। इस प्रकार सब राक्षसों को मार कर आकाश में जाकर हनूमानजी बोले कि हमारे समान अनेक बलवान् वानर सुग्रीव बानर की आज्ञा से सीताजी को खोजने के लिये भेजे गये हैं और वह सब व हम भी पृथिवी में घूमते हैं। उन बानरों में किसी को दश हाथी का किसी को सौ का किसी को हजार हाथी का बल है, किसी को समूह हाथियों का किसी किसी को वायु के समान बल है, बहुतेरे तो ऐसे बानर यूथ पति विद्यमान हैं जिनको अप्रमाण बल है, और दांत नख के अस्त्र को धारण करने वाले असंख्य बानरों की सेन को लेकर तुम सब राक्षसों को नाश करने के लिये राजा सुग्रीवजी आवेंगे। तब इस लंकापुरी के सहित तुम सब राक्षस नाश को प्राप्त होओगे। क्योंकिइक्ष्वाकु नाथ महात्मा श्रीरामचन्द्रजी से तुम लोगों ने विरोध किया है।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥४३॥

रावण की आज्ञा से प्रहस्त का पुत्र जंबुमाली नाम राक्षस महाबली व पराक्रमी बड़े बड़े दांत व आस्त्र को धारण किये चला लाल रंग के वस्त्र को धारण किये लाल पुष्प की माला को पहिने सुन्दर कुण्डल को धारण किये बड़े शरीर नेत्र वाले अत्यन्त क्रोध करनेवाले दुःख से रणमें जीतने के योग्य इन्द्र धनुष के समान धनुष बान को धारण किये मारे वेग से धनुष टंकोर देता हुआ चला कि जिसके धनुष बाण के शब्द से दिशा विदिशा पूर्ण होगया। गदहे से जुते हुए रथ

पर सवार होकर उस राक्षस को आते देखकर वेग युक्त हनुमानजी हर्षित होकर बहुत जोर से गर्जना किये ।

कवित्त ।

सुन्यो दशकंध भट मारे सब मारे गये पठयो प्रहस्त सुत महा क्रोध तनमैं ।
लटिगये दिग्गज कचटि गये शेष फणि पटि गयो रोर घोर सो रतीहीं छनमैं ॥
यार कहै तिच्छन त्रिशूल तर पत आवै तेगनकी झार झरपत आवै रणमैं ।
खाली करी लंकहि वेहाली करि नारी विज्ञ चल्यो जंबुमाली मानो काली के बदन मैं ॥

उन हनुमानजी को मन्दिर के छत पर खड़ा देखकर महाबली जंबुमाली अपना बाण हनुमानजी पर चलाने लगा । एक बाण उनके मुख में एक बाण शिर पर दश बाण भुजाओं पर मारा । हनुमानजी का तांवा के समान लाल मुख बाण के लगने से इस प्रकार शोभित हुआ जैसे शरतकाल में फूला हुआ कमल सूर्य के किरण लगने से शोभित होता है । उन हनुमानजी का लाल मुख रक्त को लगने से ऐसा शोभित हुआ जैसे सोने के बून्द से सीचा महा कमल शोभित होता है । राक्षस के बाण को लगने से हनुमानजी अत्यन्त कोप करके चारो ओर देखने लगे कि समीप में एक पर्वत की शिला रखी थी । हनूमानजी ने उस शिला को उठा कर जंबुमाली को मारा, परन्तु महा पराक्रमी राक्षस अपना दश बाण मार कर उस शिलाको चूर चूर कर दिया । तब हनुमानजी अपने अस्त्र को विफल जानकर एक ठो साखू का वृक्ष उखाड़ कर घुमाने लगे । उस साखू वृक्ष को घूमाते देखकर महा बलवान जंबूमाली अनेक बाण हनुमानजी को मारे, उन में चार बाण तो उस वृक्ष में पांच बाण भुजाओं में एक छाती में और दश बाण स्तनों के मध्य में मारा, जब ठौर ठौर के बाण के लगने से हनुमानजी का देह विदीर्ण हो गया तब हनुमानजी कोप करके बड़े जोर से परिध को घुमाकर जंबुमाली के हृदय में मारा । उस परिध को लगते ही जंबुमाली की भुजा जंघा रथ सारथी घोड़ा सब छिप गये केवल जंबुमाली का शिर मात्र रह गया । वह महा रथी जंबुमाली उस परिध को लगते ही मृत हो गया और चूर्णितांग हो कर कटे

हुए वृक्ष के समान पृथिवी पर गिर पड़ा। उन महा बलवान राक्षसों को मरा सुनकर क्रोध से रावण के नेत्र से आंसू की धारा बहने लगी और अति पराक्रमी अपने मन्त्रि पुत्रों को हनुमान से शीघ्र लड़ने की आज्ञा दिये।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे चतुश्चत्वारिंश सर्गः ॥ ४४ ॥

इसके उपरान्त रावणकी आज्ञा को शिरोधार्य करके सात मन्त्रियों के पुत्र रावण के मन्दिर से निकल कर अनेक अस्त्र शस्त्र को धारण करने वाले राक्षसों की सेना को संग लेकर अपने धनुष बाण लिये हनुमानजी को जीतने की इच्छा करने वाले मेघ के समान गर्जना करते हुए लंकापुरी से लडने के लिये बाहर निकले, उन मन्त्रि पुत्रोंकी माताओं ने जैसे ही किंकर जंबुमाली आदि अनेक बलवान् राक्षसों के मरण को सुना वैसे ही शोक से व्याकुल हो गई, इधर सोने के भूषण वस्त्र को धारण किये लड़ने की इच्छा करने वाले एक दूसरे आगे बढ कर उन सातोंने तोरण पर बैठे हनुमान को देखकर चारो ओर से घेर लिया और मेघ के समान गर्जना करके चारो ओर से बाणों की वर्षा करने लगे और सैनिक निशाचरों के गर्जने के शब्द वर्षा काल के बादरों के समान सुनाई देता था। उन राक्षसों की बाण वर्षा से हनुमानजी वृष्टि से अच्छादित पर्वत राज हिमालय के समान शोभित हुए। परन्तु बड़े वेग से उछल कर आकाश में जाकर उनके बाणों से अपनी रक्षा किये। अति पराक्रमी हनुमानजी ने उन राक्षसों की सेना को अपने घोर गर्जना से डराते हुए उन राक्षसों के ऊपर अपना बल लगया, किसी को थप्पड़ से किसी को मूका से किसी को हृदय से किसी को जंघा से किसी को नख व दातों ये चीर फाड़ डाला। बहुत उनके गर्जना ही को सुनकर पृथिवी में गिर पड़े। जब हनुमानजी के पराक्रम से वे राक्षस मरने लगे तो शेष राक्षस भय से व्याकुल होकर दिशाओं में इधर उधर भाग गये रथ हाथी घोड़ा छत्र चमर टूट टूट कर पृथिवी पर गिर पड़ी। लंकापुरी में रक्तकी की नदी

वह चली और अति भयंकर शब्द से लंकापुरी में हाहाकार मच गया। उन बड़े पराक्रमी राक्षसों को मार कर महा बलवान् प्रचण्ड पराक्रमी हनुमानजी और राक्षसों से युद्ध करने की इच्छा से कूद कर फिर उसी छत पर चढ कर बैठे।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दर काण्डे पंचचत्वारिंशः सर्गः ॥४५॥

हनुमानजी से मारे हुए मन्त्रि पुत्रों के मरण को सुनकर उदास होगया, व भली भांतिको स्थिर करके विचार करके विरूपाक्ष यूपाक्ष दुर्धर्ष प्रघस भासकर्ण इन पांच महा बलवान सेनापतियों को आज्ञा देने लगा कि तुम सब पांचो चतुरंगिणी सेना को लेकर उस बानर को युद्ध में पराजय करके हमारे निकट लिवा आओ। परन्तु उस बानर के पास पहुंच कर बड़े रत्न से काम करना होगा और कार्य भी ऐसा करना होगा जो देश काल के विरुद्ध न हो। हम जो उस बानर के कामों को सोचते हैं तो उसको बानर नहीं मानते क्योंकि इस महापराक्रमी बलवान विशाल शरीर वालेको जो हम बानर मान लेंवे तो हमारे मनकी शुद्धि नहीं होती जैसी बड़ाई के योग्य हमने उस बानरका कार्य सुना है, उस कार्य से हम उस को बानर नहीं मान सकते हैं। चाहे अपने तपोबल से इन्द्र ने हमारे मारने के लिये उस बानर को उत्पन्न किया हो अथवा नाग यक्ष गंधर्व देवता दैत्य तथा ऋषियों ने उत्पन्न किया हो, जिसने हमारे भेजे बलवान व पराक्रम भी राक्षसों को एक ही समय में जीत लिया है, उन्हीं ने हमारे मरने के लिये कुछ न कुछ उपाय की रचना किया है। इस कारण तुम लोग बड़ी भारी सेना लेकर जाओ और उसे प्रयत्न से पकड़ लाओ। वह बानर अति पराक्रमी है, इससे तुम लोग उसका अपमान नहीं कर सकते हो क्योंकि हमने विपुल पराक्रमी बहुत से बानर दिग्विजय करने के समय देखा है, जैसे बाली सुग्रीव जाम्बवान् सेनापति नील और भी द्विविद आदि अनेक बानरों को देखे हैं, परन्तु उन बानरों से इसकी चाल बल तेज पराक्रम बुद्धि और उत्साह आदि अधिक है, क्योंकि वे लोग अपने

रूप को बदल नहीं सकते हैं और यह कामरूपी बानर अपने रूपको बदलता है, इससे यह बानर रूप कोई बड़ा भारी जीव यहां आया है। इसको बड़े प्रयत्न के साथ पकड़ने का उद्योग करना। यद्यपि देवता असुर मनुष्य सहित तीनों लोक आप लोगोंके सामने समरमें ठहर सकते तौभी जो नीति शास्त्र जानता व रण में विजय की इच्छा रखता हो तो उसको उचित है कि अपनी रक्षा यत्न से किये रहै, क्योंकि युद्ध की सिद्धि बड़ी चञ्चल है। वे रावण के पांचो मन्त्री स्वामी के बचन को अंगीकार करके अग्नि के समान तेजस्वी बड़े वेग से चले, उनके साथ अनेक रथ मतवाले हाथी व अति वेग से चलने वाले घोड़े और तीक्ष्ण अस्त्र को धारण करने वाली सेना को संग लेकर चले वहां आकर महा कपि हनूमान को देखा। जो कि किरण सहित सूर्य के समान प्रकाशित हो महासत्व महाबल महा पराक्रम धारण किये उसी मन्दिर के छज्जेपर महाकपि बैठा था। उस उत्साही व बलवान बानरों की सेना उस बानर को घेर लिया। वे राक्षस जो अस्त्र शस्त्र लिये थे वह सब उनके ऊपर चलाने लगे, व उनके शिरपर कमल पत्र के समान दीप्त वाले पांच लोहे के उज्जवल बाणको पीत मुख वाले दुर्धर ने मारे। जैसे पांचो हनुमानजी के शिरपर इस प्रकार लगे, वैसेही पवनकुमार गर्जना करते हुए पवन कुमार आकाशको कूदगये, तब शूरबीर दुर्धर ने अपने धनुष पर रोदा चढाकर अपने रथ पै खड़ा होगया व हजारों बाणको चलाने लगा। परन्तु हनुमानजी उसके बाणोंसे बचाते रहै जैसे बरसते बादलके पीछे और बादल को पवन बचाता है जब दुर्धरने बहुत बाण मारे तो उनसे पीड़ित हो महा वीर्यवान हनुमानजी प्रलय काल के मेघ के समान गर्जना करके अपने शरीर को पर्वत के समान बढाया और बड़ी दूर तक आकाश मार्ग में जाकर फिर उस दुर्धर के रथपर इस प्रकार गिरे जैसे वज्र पर्वत के ऊपर गिरता है। हनूमानजी को कूदने से इस प्रकार चोट उस राक्षस को लगी कि रथ सारथी सहित अपने चूर चूर होगया। दुर्धर को मरा देखकर विरूपाक्ष व यूपाक्ष अति कोप से उन दोनों ने आकाश में

उछल कर पवन कुमार की छाती में दो मुद्गर मारे । परन्तु उन राक्षसों के वेग को विनाश करने वाले महाबलवान हनुमानजी गरुड़ के समान आकाश में पृथिवी पर कूद पड़े व बड़ा भारी साखू का एक वृक्ष उखाड़ कर पवनकुमार ने उन दोनों महा बली राक्षसों को मार डाला । तब उन दोनो राक्षसोंका मरण देखकर महा बली प्रघस हँसके वहां आया, और भासकर्ण दूसरी ओर से क्रोध किये त्रिशूल को लिये आया और हनूमानजी को घेरकर खड़ा होगया । उन दोनों में प्रघस ने तो पैनी धार वाले पदिश से व भासकर्ण नाक राक्षस ने त्रिशूल से हनुमान को मारा, उन राक्षसों के अस्त्र को लगने से रुधिर की धारा बहने से प्रातःकाल के सूर्य के समान शोभित हुए, और पर्वत के कनगुरे को तोड़कर उसी से उन दोनों राक्षसों को भी मारडाला और उन के रथ हाथी घोड़ा व सेनाके पटक पटक कर इस प्रकार मार डाले जैसे इन्द्र असुरों को मार डालते हैं । उन मन्त्रियों को सेना के सहित नाश करके हनूमानजी फिर उसी छत पर जाकर बैठे ।

इति बाल्मीकीये रामायणे सुन्दरकाण्डे षट्चत्वारिंश सर्गः ॥४६॥

सेना सहित अपने पाचो मन्त्रियों के मरण को सुनकर संग्राम की इच्छा करने वाला रावण अपने पुत्र अक्ष की ओर देखा, रावण की दृष्टि की प्रेरणा से प्रेरित अक्ष सोने के धनुष को धारण किये इस प्रकार कूदकर सभा में खड़ा होगया जैसे मन्त्रों से दी गई हवि को ग्रहण करने के लिये अग्नि प्रज्वलित होता है । इसके बाद प्रातःकाल के सूर्य के समान प्रकाशित सुवर्ण से बने व सुवर्णही के जाल से शोभित रथ पर बैठकर राक्षसों में श्रेष्ठ पराक्रमी अक्ष बानरों में श्रेष्ठ हनूमान से लड़ने को आया । तपस्या के प्रभाव से प्राप्त किये सुवर्ण के जाल से चित्र विचित्र ध्वजा पताका तथा रत्नों से भूषित आठ घोड़े रथ में जोते हुए देवता दैत्यों की शक्ति से बाहर आकाश में गमन करने वाले बिजली के समान चमचमाते अति उत्तम तरकस आठ खड्ग को लिये तथा शक्ति तोमर आदि अस्त्रों को लिये देवता के समान परा-

क्रमी अक्ष लंकापुरी से बाहर निकलकर अपनी चतुरंगिणी सेना से आकाश व पृथिवी को एक करता हुआ उस मन्दिर के छज्जे पर बैठे हुए हनूमान को देखा। महा बली रावण का पुत्र अक्षकुमार पवनकुमार का और अपना पराक्रम बिचार करता युग के अन्त में चलने वाले वायु के समान आगे को बढ़ा और एकाग्र चित्त होकर संग्राम में संभाल कर हनुमानजी को रण में बैठे देखकर उनको तीन बाण मारा और युद्ध करने के लिये प्रेरित किया। फिर बाण वेग से रहित अहंकार युक्त शत्रुओं को पराजय करने के योग्य हनुमानजी को बहुत हर्षित देखकर अक्ष ने दृढ़ता पूर्वक हाथों में धनुष बाण को लिये और बहुत पराक्रम दिखाने वाले सोने के कुण्डल आदि भूषण को धारण किये था कि जिसको देखकर देवताओं को आश्चर्य होता था। अक्ष और हनुमान के संग्राम को देखने के लिये पृथिवी शब्द करने लगी, सूर्य का प्रकाश मलीन होगया। पवन का वेग रुक गया। पर्वत भय से हिलने लगे। आकाश तारागण टूट टूट कर पृथिवी में गिरने लगे। समुद्र क्षुभित होगया। पहुँचतेही पहिले अक्ष को तीन बाण के लगने से हनूमानजी के शिर से रुधिर बहकर इस प्रकार शोभा को प्राप्त हुए जैसे प्रातःकाल के सूर्य अपने लाल किरणों से शोभा को प्राप्त होते हैं और चित्र विचित्र के धनुष बाण को धारण किये अक्षकुमार की विलक्षण रो ना को देखकर पवनकुमार हनुमानजी अट्टहास से हँसे, जिससे रणस्थली अपूरित होगई। और मन्दरा चल पर्वत पर स्थित सूर्य के समान क्रोधित बल वीर्य से युक्त हनुमान अपने नेत्रों की ज्वाला से अक्षकुमार की सेना को भस्म करने लगे। इसके बाद मेघ के समान स्वरूप को धारण किये वह राक्षस अपने धनुष को इन्द्र धनुष के समान बनाकर पर्वताकार शरीरवाले हनूमान पर वर्षा करने लगा। जैसे मेघ पर्वत पर बर्षा करते हैं। रणकर्म में अति प्रचण्ड पराक्रमी महा तेजस्वी अति बली बाण को धारण किये अक्षकुमार को संग्राम में देखकर हनुमानजी हर्षित हो बादल के समान गर्जने लगे। बाल्यावस्थाही से संग्राम में पराक्रम के द्वारा शत्रुओं को जीतने से अहं-

कार युक्त क्रोध से लाल नेत्र किये महाराज के समान अक्ष समर में तृण से ढँके कूप के समान अद्वितीय बानर के प्राप्त हुआ । उसके बाणों के आघात से मारे उत्साह के जांघ व भुजाओं को चलाते हुए हनुमानजी आकाश मार्ग में जाकर बार बार गर्जना करने लगे और आकाश में कूदते हुए हनुमान को देखकर महारथी रथी अक्षकुमार अपने रथ पर बैठकर बाणों की वर्षा करने लगा । उसके बाण जाल में पड़े हुए भीम पराक्रमी हनुमानजी मन की समान गति करके आकाश मार्ग में इस प्रकार घूमने लगे कि एक भी बाण उनके अंग में लगने नहीं पाया और धनुष बाण को लिये संग्राम करने में कुशल विविध प्रकार के बाणों से आकाश को आच्छादित करने वाले अभिमानी अक्ष को आंखों से देखकर पवन तनय चिन्ता करने लगे । महात्मा अक्षकुमार के बाणों से व्याकुल हनुमानजी उसके पराक्रम का विशेष विचार करने लगे कि प्रातःकाल के सूर्य के समान प्रकाशित यह महा बलवान अक्षकुमार के प्रताप को किस प्रकार विध्वंस करूं । यह उपाय हमारे समझ में नहीं आती है । यह अक्षकुमार अपने प्रताप से देवताओं को संग्राम में जीतकर उनसे पूजा को ग्रहण किया है देखो रण में इसका पराक्रम बढ़ताही जाता है, इस लिये जो हम इसको छोड़ देवें तो यह हमारा अपमान अवश्यही करेगा, इस कारण इसका नाश करनाही हमको उचित है। क्योंकि बढ़ते हुए आग को बुझानाहीं ठीक होता है इस प्रकार राक्षस शत्रु के बध की चिन्ता करते हुए उसके विषय में उत्तम मति व वेग को धारण किया । बानर श्रेष्ठ हनुमान ने आकाश मार्ग में उड़ते हुए अक्षकुमार के रथ व घोड़े को अपने लात के प्रहार से मार डाले, हनुमानजीकी लात लगने से रथ टूट गया व घोड़े मर गये इस प्रकार वानरों के स्वामी सुग्रीव के मन्त्री हनुमानजी से पराजित होकर महारथी अक्षकुमार आकाश से भूमी पर गिर पड़ा । रथ के टूट जाने से रथ से अलग होकर धनुषबाण खड्ग को धारण किये वह महारथी अक्षकुमार आकाश में उछलता हुआ तपस्याके प्रभावसे देवलोक में

जाता हुआ ऋषि के समान दिखाई दिया। तब मारुतसुत हनुमानजी आकाश में उछलते हुए अक्षकुमार के पास जाकर उसके दोनों पैरों को जोर से पकड़ लिया और परम पराक्रमी हनूमानजी आकाशही में हजारों बार झटके जैसे गरुड़जी बड़े सर्प को झटकते हैं उसी प्रकार हनुमानजी अक्षकुमार को घूमा कर समर भूमी में इस भांति पटके कि उसके प्रत्येक अंग कर कर हो गये और उसके शरीरसे रुधिर की धारा बहने लगी। आंख निकल आई शरीर के सब जोड़ उखड़ गये इस प्रकार वायुसुतने पृथिवी पर पटक कर उसे मार डाला इतना करने पर भी हनुमानजी उसके ऊपर कूद कर भूमी में और भी दबा दिया कि जिसमें इसके बिलकुल प्राण निकल जावें। महा बली अक्ष कुमार के मरण को देखकर इन्द्रादिक देवता हनुमानजी को विस्मय युक्त हो देखने लगे। इन्द्रपुत्र जयन्त के समान रावण के पुत्र अक्ष कुमार की संग्राम में मार कर महाबली हनुमानजी औरों से भी युद्ध करने की इच्छा करके उसी छत पर फिर जाकर बैठे।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥४७॥

जब हनुमानजी ने रावण के पुत्र अक्षकुमार को मार डाला, तब पुत्र के मरण को सुनकर राक्षसों के राजा रावण ने एक अचित होकर देवताओं के समान पराक्रमी इन्द्रजित (मेघनाद) अपने पुत्र को आज्ञा दिया कि तुम सकल अस्त्र शस्त्र को जानने वाले हो देवता और दैत्य को भी शोक देने वाले हो सब शूर वीरों में श्रेष्ट हो और तुम्हारे पराक्रम को हम जानते हैं, तुमने ब्रह्माजी की तपस्या करके उत्तम अस्त्र को पाया है और तुम्हारे उस अस्त्र के प्रभाव से इन्द्रादिक देवता संग्राम में तुम्हारा सामना नहीं कर सकते। तीनो लोक में तुम्हारे साथ संग्राम करने से कोई मुख पूर्वक नहीं बचा। अपनी भुजाओं के बलसे तथा तपस्या के प्रभाव से रक्षित हो देशकाल जानने में चतुर हो, और उत्तम बुद्धि को रखने वाले हो। समर में ऐसी कोई उपाय नहीं है जिसको तुम

नहीं जानते हो और तुम्हारी बुद्धि व बिचार बृहस्पति के समान है तीनो लोक में ऐसा कोई पुरुष नहीं है जो तुम्हारे बल और पौरुष को नहीं जानता हो। तुम्हारा तपोबल और पराक्रम तथा अस्त्र बल हमारे समान है। इस से तुम देखो, उस बानर ने किंकरको जंबुमाली को और पांच मन्त्रियों को तथा सात मन्त्रि पुत्रों को सेना सहित मार डाला। हाथी घोड़े रथ आदि युक्त बहुतसी सेना मारी गई और परम प्रिय तुम्हारा सहोदर भाई अक्ष कुमार भी संग्राम में मारा गया, परन्तु हे शत्रुसूदन! जो बल व सारांश तुम्हारे में है वह उन लोगों में नहीं था। इस कारण यह बड़ी भारी सेना को मरी देख और बानर का प्रभाव देखकर अपने पुरुषार्थ को समझ कर बल का बेग करो। जिसमें बहुत सी सेना मारी न जावे और शत्रु शान्त हो जावे वैसी कोई युक्तिका बिचार करो। अपना और शत्र का बल जानकर कार्य का आरंभ करो, क्योंकि तुम परम बुद्धिमान व शस्त्र विद्या को जानने वालों में चतुर हो। इस प्रकार पिता के बचन को सुनकर देवतों के समान प्रभाव शाली शूरबीर मेघनाद संग्राम में जाने के लिये बड़ी शीघ्रता के साथ रावण की प्रदक्षिणा करने लगा, और अपने इष्टगण से पूजा व आदर को अंगीकार करके उत्साह युक्त मेघनाद संग्राम में चलने को तैयार हुआ। गरुड़ के समान बेग वाले तीखे दांत व विषवाले चार सर्प जोते हुए रथपर इन्द्र के समान मेघनाद सवार होकर हनुमानजी के समीप शीघ्र जा पहुँचा। उसके रथ व धनुष की प्रत्यञ्चाका शब्द सुनकर बानर बीर हनुमानजी अति हर्षित हो गये। रण में पण्डित मेघ नाद धनुष बाण को लेकर हनुमानजी के समाने चला जब युद्ध करने के लिये हाथ में बाण लेकर मेघनाद चला तब उसके तेजसे दिशायें मलीन हो गईं। मगा व पक्षी रोदन करने के बदले में भयंकर शब्द को करने लगे और मेघनाद तथा हनुमानजी के युद्ध को देखने के लिये नाग यक्ष गंधर्व महर्षि सिद्ध लोग अपने विमान पर चढ़ कर उस कौतुक को देखने के लिये आकाश में आकर खड़े होगये, पक्षी गण

परम हर्षित हो शब्द करने लगे। इन्द्रध्वज के समान मेघनाद की रथ को आते देखकर हनुमानजी घोर गर्जना किये और अपने शरीर को अधिक बढ़ाये। इन्द्रजित भी उस दिव्य व सुन्दर रथ पर चढ़कर वज्र के समान सुन्दर धनुष के टङ्कार को करने लगा। एक साथ ही महाबलवान रण में निशंक बानर वीर हनुमान और राक्षसों के राजा रावण के पुत्र मेघनाद दोनों देवता दैत्यों के समान परस्पर बैर करके खड़े हो गये। महारथी धन्वा को धारण करने वाले शूरवीर संग्राम करने में प्रसिद्ध मेघनादने हनुमानजी पर बाण चलाया। परन्तु अपने पिता वायु के समान बेगवान हनुमानजी उसके बाण के बेग को बचाय कर आकाश में हो रहे और उसके रथ का शब्द मृदङ्ग तुरीही नगारों का तथा धनुष का शब्द को सुनकर ऊपर को उछल गये। और मेघनाद के बाणों के बीच में मेघनाद के समूह बाणों के बचाते हुए हनुमानजी इधर उधर फुर्ती से घूमने लगे। फिर पवनकुमार हनुमानजी अपने दोनों हाथ को आगे फैलाय उसके बाणो के सामने आये, मेघनाद और हनुमान ने इस प्रकार युद्ध किया मानो देखने वालों के हृदय को खींच लिया। तौ भी मेघनाद ने हनुमानजी का भेद नहीं पाया कि किस तरह ये मेरे बाणों को बचाते हैं और पवनकुमार ने भी मेघनाद का भेद नहीं जाना कि इतनी शीघ्रता से यह कैसे बाण चलाता है। मेघनाद ने अनेक सिद्धास्त्र का प्रयोग किया इस लिये वे बाण हनुमानजी को शरीर पर जाकर लगते थे, उस बाण से हनुमानजी को पीड़ा होता था, परन्तु उन का प्राण कहीं निकला, हनुमानजी की यह दशा देखकर महात्मा इन्द्रजित् अपने मनमें बड़ी चिन्ता करने लगे। मेघनाद सोचते २ यह बिचारा कि यह बानरों में मुख्य व योधाओं में प्रधान है इसको प्राण से मारना उचित नहीं है, इसको किसी प्रकार से पकड़ कर रावण के निकट ले चलना चाहिये। बहुत सोच बिचार बानर श्रेष्ठ हनुमानजी को पकड़ने के लिये मेघनाद ने ब्रह्मास्त्र को धारण किया, और उसी ब्रह्मास्त्र को फेंक कर मारुतसुत हनुमान

को तत्ववेत्ता इन्द्रजित ने पकड़ लिया। जब राक्षस ने हनुमान को बांध लिया तो उसके बांधने से हनुमानजी व्याकुल होकर धरणी में गिर पड़े। बानरों में बीर हनुमान अपने को ब्रह्मास्त्र से बंधा जान कर स्वामी के प्रभाव से अपना वेग उन्होंने कुछ कम नहीं समझा परन्तु ब्रह्माजी का अस्त्र जान कर अपने ऊपर उनका बड़ा अनुग्रह माना। हनुमानजी ने अपने मनसे भली भांति विचारा कि यह अस्त्र ब्राह्म मन्त्र से अभिमन्त्रित व ब्रह्माजी का बरदानी है। लोक गुरू ब्रह्माजी के प्रभाव से इस बन्धन से छूटने की शक्ति हमारे में नहीं है इस प्रकार के ब्रह्माजी के बन्धन के अनुसार हमको चलना चाहिये। फिर हनुमानजी ने अस्त्र के बलका विचार करके अपने ऊपर ब्रह्माजी के अनुग्रह को माने और यह भी सोच लिये कि मुहूर्त भरमें तो इस बन्धन से छूटही जाना होगा इस कारण पितामह की आज्ञा का पालन करना चाहिये और फिर भी बिचारे कि ब्रह्मा इन्द्र पवन से रक्षित हमको इस अस्त्र बंधन से भय भी न होगा, ये राक्षस जो ममको पकड़ ले जायगें तौ भी हमको अधिक आनन्द होगा, क्योंकि वार्तालाप से रावण के हृदय के भाव को जान लेवेंगे। ऐसा अर्थ अपने मनमें निश्चय करके विचार पूर्वक कार्य करने में निपुण महा बीर शत्रुओं को मारने वाले हनुमानजी ने अस्त्र को तोड़ने की चेष्टा कम करदिया तब राक्षसगण हनुमानजी को अस्त्र में बंधा देखकर बेधड़क धमकाने और अपकार युक्त बचन को कहने लगे। उन राक्षसोंके कठोर बचन को सुनकर बानररूपी हनुमानजी भी किलकिलाते गर्जना करते थे, जब राक्षसों ने देखा कि अबतो यह बानर बिलकुल अपना अंग नहीं डुला सकता और यह चेष्टा से रहित हो गया, तब सनके रस्सों से और वृक्ष के व कलों की रस्सी से उनको अच्छी तरह बांध दिया, और बलात्कार से राक्षसों ने उनको ऊंची नीची बातें कहना आरंभ किया। परन्तु हनुमानजी ने उन सब राक्षसों को प्रसन्न किया और मनमें निश्चय कर लिया कि निश्चय कौतुक बश रावण हमको

देखना चाहता है। जैसे ही उन राक्षसों ने सन आदि के रस्सों में हनुमानजी को बांधा वैसे ही ब्रह्मास्त्र से इनके सब अंग अपने आप छूट गये। क्योंकि उस ब्रह्मास्त्र का स्वभाव ही यही है कि जब और किसी वस्तु से बंधुआ को बांध देतो वह अस्त्र छोड़ देता है। हनुमानजी को रावण की सभा देखने की अत्यन्त आकांक्षा थी, सन आदि से बंधे और ब्रह्मास्त्र से उनको नहीं छूटे देखकर मेघनाद के मनमें बड़ी चिन्ता हुई कि जब यह हनुमान और पदार्थों से बांधा गया तो भी उस ब्रह्मास्त्र को नहीं छोड़ता है। अहो राक्षसों ने मन्त्र के प्रभाव को न जानने के कारण मेरा यह उपाय व्यर्थ कर दिया है। अब फिर यदि मन्त्र को पढकर इस अस्त्र को आयोजित करें सो ठीक नहीं होगा। इस लिये अब हम को सन्देह होता है। इधर हनुमानजी ने अपने को अस्त्र से छूटा हुआ न जानकर वे यही जानते थे कि हम ब्रह्मास्त्र में फंसे हैं, इस कारण वे राक्षसों को खींचने व खसीटने से बार बार पीडित होते थे, फिर सब राक्षस उनको घूसों से मारते पीटते व घसीटते रावण के समीप खींच कर ले चले। तब मेघदान ने हनुमानजी को समाज सहित बैठे हुए रावण के पास ले जाकर दिखलाया कि इनको देखकर सब राक्षस लोग आपस में पूंछने लगे कि यह कौन है व किसका पुत्र है किस कार्य के लिये आया है और किसके निकट रहता है। कोई राक्षस क्रोध करके आपस में कहते हैं कि इसको मारो, भस्म करो, भक्षण करलो, इस प्रकार महात्मा हनुमानजी ने रावण के चरण के निकट बैठे रत्न से विभूषित राजा रावणको तथा उनके मन्त्री को देखा। प्रताप तेज बलसे युक्त रावण ने देखा कि इस बानर श्रेष्ठ को राक्षस घसीटे लिये आते हैं, और इधर सूर्य के समान प्रकाशित तेजस्वी बलवान राक्षसों के राजा रावण को हनुमानजी ने देखा। क्रोध के मारे आंख को लाल किये रावण ने हनुमानजी को देख कुलमें व शीलमें वृद्ध अपने मन्त्रियों को आज्ञा दिया कि इस बानर से सब समाचार पूंछो। तब रावण के मन्त्रियों ने यथा क्रम से सब बातें पूछी,

हनुमानजी ने पहिले अपने आने का कारण बतलाया कि हम बानरों के राजा सुग्रीवजी के दूत हैं, और उन्हीं के समीप से आये हैं।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे अष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥४८॥

भीम पराक्रमी हनुमानजी मेघनाद के कर्म से विस्मितहो क्रोध के मारे आंख को लाल किये रावण को देखने लगे, वह रावण सोने के सब भूषण व अलंकार को धारण करने से शोभित था और उस के सोने के मुकुट में मोतियों की झालर लगी थी और उसमें अमूल्य मणि जड़े थे, उत्तम रेशमी कपड़े को धारण किये था। अंगमें लाल चन्दन को लगाये और विविध प्रकार की रचनाओं से अनुलिप्त था। दर्शनीय पदार्थ को धारण करने से चित्र विचित्र रूप को बनाये था। लाल व भयानक नेत्र था, आश्चर्य युक्त रूप व बड़े कठोर ओठ और तीखे दांतों से युक्त था। दश शिर और बीस भुजा थो। उनपर अनेक फण को धारण करने वाले सर्प निवास करते थे, उस समय रावण मन्दराचल पर्वत के समान शोभित होता था। महा पराक्रमी रावण गले में हीरा के हार को पहिरे कज्जल के समान काली शरीर बाल चन्द्रमा के समान मुखकी कान्ति से शोभित भांति भांति की मणियों से जड़ित सिंहासन पर विराजमान था और उत्तम भूषण वस्त्र को धारण करके स्त्रियां हाथ में चमर लेकर रावणकी सेवा करती थीं। दुर्धर प्रहस्त महापार्श्व निकुंभ आदि मन्त्र को जानने वाले चार मन्त्री सदा रावण के समीप रहते थे। महाबलवान हनुमानजी राक्षसों से पीड़ित होकर परम विस्मययुक्त हो राक्षसों के राजा रावण को देखा। तेज से प्रकाशमान रावण को देखकर हनुमानजी मोहित हो गये और चिन्ता करने लगे कि इस राक्षस का राज बड़ा आश्चर्य युक्त रूप धैर्य बल सत्व और प्रकाश है, एक पुरुष में सब प्रकार का लक्षण होना आश्चर्य है, जो यह बलवान राक्षसेश्वर अधर्मी न होता तो इन्द्रादिक देवताओं का भी ईश्वर होने योग्य है। परन्तु इसके घोर व निन्दित कर्मों से देवता दानव सहित सब लोक इससे डरते हैं, कदाचित् यह राक्षस क्रोध करे

तो संसार भर को समुद्रमय कर डाले, इस राक्षस राज का अमित वीर्य व प्रभाव देखकर हनुमानजी ने विविध भांति की चिन्ता करने लगे।

इति बाल्मीकीयेरामायडे सुन्दरकाण्डे एकोनपंचाशः सर्गः ॥४९॥

संसार को भय देने वाला रावण हनुमानजी को आगे खड़ा देख कर उनके पराक्रम से भयभीत शंका के मारे व्याकुल चित्त से मन में सोचने लगा कि क्या यह साक्षात शिवजी तो नहीं हैं, जो किसी कारण से यहां आये हैं। जिन शिवजी को हम पहिले कैलाश पर्वत पर जाकर हंसे थे, तब उन्होंने हमको शाप दिया था, मालूम होता है कि वही बानर मूर्ति होकर आये हैं, अथवा बाणासुर दैत्य तो नहीं हैं, इस प्रकार अनेक चिन्ता करके क्रोध के मारे आंखको लाल किये प्रहस्त नाम अपने मन्त्रीसे देशकाल के अनुसार अर्थयुक्त बचन को बोला, कि इस दुष्ट से पूछो कहां से आया है। और उसके आने का क्या कारण है, और अशोक बन को नष्ट करने से इसका कौन प्रयोजन सिद्ध हुआ और राक्षसों को डरवाने व मारने का कौन कारण था और अगम्य हमारी लंकापुरी में आने का इसको कौन प्रयोजन था इस दुर्मति से पूछो। रावण की आज्ञा से प्रहस्त नाम रावण का मन्त्री बोला, हे बानर! सावधान होओ तुह्मारा कल्याण हो डरने का कुछ काम नहीं है हे बानर! जो तुम इन्द्र के भेजे हुए रावण के स्थान आये हो तो ठीक बतलाओ, डरो नहीं, हम तुमको छोड़ देवेंगे। अथवा कुबेर वरुण यम आदि से भेजे गये हो अथवा साक्षाद विष्णु के दूत होकर हम लोगों की लंकापुरी में आये हो तो तुम सत्य कहो, क्योंकि तुम्हारा तेज बानर के समान नहीं हैं, केवल रूप ही बानर का है। हे बानर! जो सत्य कहोगे तो छोड़ दिये जाओगे यदि असत्य कहोगे तो तुम्हारा जीना भी दुर्लभ है। या जिस कार्य के लिये तुम लंकापुरी में आये हो वह सत्य कहो, इस प्रकार मन्त्री के पूछेजाने पर हनुमानजी राक्षसों के राजा रावण से बोले कि हम इन्द्र वरुण यम कुबेर आदि इनमें किसी के मित्र नहीं है और न हम विष्णु के भेजे यहां आये हैं। हमारी जातिही ऐसी है और हम बानरही हैं, हम लोगों

को रावण का दर्शन दुर्लभ है। इस कारण उनके दर्शन की अभिलाषा से यहां चले आये हैं, और राक्षस राज दर्शनही के लिये हमने बन को भी नष्ट करडाला है। इसके बाद बलवान तुम्हारे राक्षस युद्ध करने की इच्छा से वहां पहुंचे तो अपनी देह की रक्षा के लिये समर में हम उनसे लड़े। हमे अस्त्र तथा पाश कोई नहीं बांध सकते, क्योंकि ब्रह्माजी ने इन्हें वरदान दिया है परन्तु हमको राजा के दर्शन की इच्छा थी, इसलिये बंधन को स्वीकार किया। फिर अस्त्र से वहीं छूट भी गये इस बात को तुम्हारे राक्षस लोग भी जानते हैं। तौ भी हम अमित बलशाली श्रीरामचन्द्रजी के किसी कार्य के लिये तुम्हारे निकट चले आये हैं। अति पराक्रमी रामचन्द्रजी के हम दूत हैं इस कारण हे प्रभो! हम तुम्हारे हित और पथ्य के बचन को कहते हैं सुनो।

इति वाल्मीकीये रामायणे सुन्दरकाण्डे पंचाशत्तमः सर्गः ॥५०॥

बड़े बलवान् बानरों में श्रेष्ठ हनूमानजी महा बली रावण को देखकर उस दशकन्धर से बड़े ही सावधानी से अर्थ युक्त बचन बोले, हे राक्षस देव! हम सुग्रीव के सन्देश को लेकर शीघ्र तुम्हारे समीप आये हैं हे राक्षसेश्वर! तुम्हारे मित्र सुग्रीव ने तुम्हारी कुशलता पूछी है। लोक व परलोक में कल्याण देने वाले बचन को महात्मा सुग्रीवजी ने जो तुम्हारे लिये कहा है उसको सुनो रथ हाथी घोडा व सेना के सहित इन्द्र के समान पराक्रमी सूर्य के समान प्रकाशित लोक के बन्धु दशरथ नाम के राजा हुए। उनके अति प्रियतर महाबाहू सामर्थ्यवान ज्येष्ठ पुत्र श्रीरामचन्द्रजी पिताकी आज्ञा से दण्डक वनमें आये हैं। उनके साथ उनके भाई लक्ष्मणजी भी आये हैं। और श्रीरामचन्द्रजी की प्रिय भार्या सीता अपना पतिव्रत धर्म पालन करने के लिये वह भी चली आई थीं। रामचन्द्रजी महा तेजस्वी व पराक्रमी और धर्म मार्ग में चलने वाले हैं। उन श्रीरामचन्द्रजी की भार्या सीताजी महात्मा जनक की कन्या हैं, और वह जन स्थान से खो गई। उनको ढूंढ़ते ढूंढते श्रीरामचन्द्रजी ऋष्यमूक पर्वत पर आये और वहां बानरों के राजा सुग्री-

वजी से भेंट हुई. उसमें सुग्रीवजी ने सीताजी को खोजने की प्रतिज्ञा किये और श्रीरामचन्द्रजी ने सुग्रीव को बानरों का राज्य दिलाने की प्रतिज्ञा किये, इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजी अपने बाण से संग्राम में बाली को मार कर सुग्रीव को बानरों का राज्य दिया। बानरों में श्रेष्ठ बाली को तुम भी अच्छी तरह जानते होगे कि वह बानर कैसा बलवान था। उस बालि को श्रीरामचन्द्रजी ने समर में एक बाण से मार डाला। इसके बाद सप्रतिज्ञा करने वाले सुग्रीवजी सीताजी को खोजने में व्याकुल हुए और उन्होंने सब दिशाओं में बानरों को भेजे। उनकी भेजी हुई असंख्य बलवान बानरों की सेना पृथिवी के अनेक स्थानों में समुद्र के अनेक भाग में और आकाश पाताल में ढूंढते हैं उन बानरों में कितने गरुड़ के समान और कितने पवन के समान चलने वाले हैं कितने निराधार ही चलने वाले हैं, ऐसे महावीर बलवान् वे बानर हैं, हमारा नाम हनुमान है हम पवन देवता के और सपुत्र हैं, इससे सीताजी को खोजने के लिये शीघ्र ही सौ योजन का समुद्र लांघकर यहां चले आये हैं। सो घूमते हुए हमने तुम्हारे घर में जानकीजी को देखा है। आपतो धर्म शास्त्र के अर्थ को भली भांति जानते हैं, और आपने तपस्या भी बहुत किया है, इस लिये हे महाप्राज्ञ! तुम पराई स्त्री को अपने गृह में रोकने योग्य नहीं हो। क्योंकि आपके समान बुद्धिमान लोग धर्म विरुद्ध अनर्थयुक्त मूल नाशक कर्मों को नहीं करते हैं। रामचन्द्रजी के क्रोध के अनुवर्ती लक्ष्मणजी के बाणों के आगे देवता व असुरों में किसी को सामर्थ्य नहीं है जो उनके सामने खड़ा होने सकें। हे राजन्! ऐसा पुरुष तीनों लोक में भी नहीं है जो रामचन्द्रजी को दुःख पहुँचा कर अपने सुख का भोग करे। इससे तीनों लोक में सुख देनेवाले धर्मयुक्त अर्थ को प्राप्त करने वाले हमारे वचन को मानो। और श्रीरामचन्द्रजी को जानकी को दे देओ हमने सीताजी को यहां देखा है, जो बात दुर्लभ थी वह तो मुझको प्राप्त हुई। अब जो बाकी कर्म अर्थात सीताजी के यहां से ले जाना है उसको श्रीरामचन्द्रजी

पूरा करेंगे। हमने सीताजी को बहुत शोक युक्त देखा है, जिसको तुम गृह के भीतर पांच मुखकी सर्पिणी के समान नहीं जानते हो। इन सीताजी को देवता दैत्य भी अपने यहां छिपा नहीं सकते। जैसे बिष से मिला हुआ अन्न कोई हठात भोजन भी करले तो भी उसको पचा नहीं सकता। तुमने बड़ी तपस्या करके यह धर्म और यश को लाभ किया है, चाहिये कि अब उसका नाश न करो। क्योंकि उस धर्म को नाश करना न्याय नहीं है, वरन् प्राणनाशक है। हे राजन! जो तपस्या के प्रभाव से तुम अपने को अवध्य मानते हो कि देवता व असुर तुम्हें नहीं मार सकेंगे। उसमें भी यह बड़ा भारी कारण है कि सुग्रीव व रामचन्द्रजी न तो देवता हैं न यक्ष न राक्षस किन्तु। हे राजन्! रामचन्द्रजी तो मनुष्य हैं, सुग्रीव बानरों के राजा हैं, फिर तुम इन दोनों महापुरुषों से अपने प्राण की रक्षा कैसे कर सकोगे। क्योंकि अधर्म करने वाला पुरुष धर्म के फल को नहीं पाता, तब यह अधर्मरूपी कर्म का फल क्या धर्म को नाश नहीं करेगा, इसमें सन्देह नहीं कि जो तुमने धर्म किया था उसका फल प्राप्त कर चुके हो, अब जो अधर्म करते हो उसका भी फल शीघ्रही पाओगे। अब जन स्थान में रहने वाले राक्षसों के वध और बालि के वध को जानकर राजचन्द्रजी व सुग्रीव से मित्रता करनेही को अपना हित समझो यद्यपि हम अकेलेही सेना सहित लंकापुरी को नाश कर सकते हैं। परन्तु क्या करें परन्तु रामचन्द्रजी ने यह निश्चय नहीं कर दिया है, जिन शत्रुओं ने सीताजी को दुःख दिया है उन शत्रुओं को अपनेही हाथों से मारने की प्रतीज्ञा रामचन्द्रजी ने बानर भालुओं के समीप में किया है रामचन्द्रजी के विरोध से इन्द्र भी सुख नहीं पा सकते। और दूसरों की क्या गणना है। जिनको तुम सीता समझते हो जो तुम्हारे गृह में स्थित है, उनको सब लंका का नाश करने वाली कालरात्रि समझो। अपने शिर पर सवार विग्रह अथवा काल के पाश स्वरूप सीता से अपना कुशल का बिचार करो। सीताजी के तेज से भस्म रामचन्द्रजी के कोप से जलती हुई इस लंकापुरी को भस्म समझो। हे रावण! अपने मित्र मन्त्री

जाति बन्धु आदि के सहित लंकापुरी को विनाश न करो। हे राक्षसेन्द्र। हमारा सत्य बचन सुनो व उसका पालन करो। क्योंकि हम रामचन्द्रजी के दूत व दास हैं और विशेष करके बानर हैं। चर अचर पृथिवी जल वायु आकाश अग्नि और सब लोक को संहार करने वाले महा यशस्वी श्रीरामचन्द्रजी फिर वैसेही सृष्टि को बना सकते हैं। देवता दैत्य नरेन्द्र यक्ष राक्षस सर्प विद्याधर नाग गंधर्व मृगा सिद्धि किन्नर सब पक्षियों में सब प्राणियों में ऐसा कोई भी नहीं है जो विष्णु के समान पराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी का सामना कर सके। तीनों लोक के स्वामी श्रीरामचन्द्रजी को इस प्रकार अप्रिय करने से परिवार सहित तुम्हारा जीना दुर्लभ है। ब्रह्मा शिव इन्द्र भी रामचन्द्रजी के सन्मुख होते ही नाश को प्राप्त हो सकते हैं। हनुमानजी के ऐसे कठोर बचन को सुनकर क्रोधित हो रावण ने उनके मारने की आज्ञा दिये।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे एकपंचाशः सर्गः ॥ ५१ ॥

हनुमानजी के बचन को सुनकर अति क्रोधित हो रावण ने हनुमान को मार डालने की आज्ञा दिये, तो विभीषण ने दूत कर्म में स्थित हनुमानजी को बध करने की इच्छा नहीं किये। दूत बध करने में क्रोध किये रावण को उपस्थित देखकर उचित कार्य करने को बताने के लिये विभीषणजी बिचारने लगे। और रावण से अर्थ युक्त बचन को बोले, हे राक्षसेन्द्र! क्षमा करो क्रोध को त्याग कर प्रसन्न होओ। और हमारे बचन का पालन करो। पण्डित व सज्जन लोग शास्त्र के अनुसार दूत को नहीं मारते हैं। हे राजन्! आप ऐसे बीरों को इस बानर का बध करना धर्म से विरुद्ध व लोक में निन्दा करने के योग्य है। आप तो धर्म को जानने वाले राज धर्म में चतुर प्राणियों के परमाथ को जानने वाले हो। यदि आप के समान पण्डितजन क्रोध के अधीन हो जावें तो शास्त्र देखने का श्रम निष्फल हो जाता है। इस लिये दूत बध करने के योग्य नहीं होता केवल दण्ड देने के योग्य होता है। विभीषण के बचन को सुनकर राक्षसेन्द्र रावण अति क्रोधित हो बोला,

कि पापियों के मारने से पाप नहीं होता, इस पाप कारी बानर को मार ही डालेंगे। रावण के वचन को सुनकर बुद्धिमानों में श्रेष्ठ विभीषण परम अर्थ युक्त वचन को बोले, हे लंकेश्वर! प्रसन्न होओ, और धर्म तथा तत्त्व से युक्त हमारा वचन सुनिये। हे राजन्! यह सज्जनों की सम्मति है। कि किसी समय में भी दूत को नहीं मारना चाहिये। निःसन्देह यह बानर आप के साथ शत्रुता का कार्य किया है, और इसने आप का अपकार भी किया है। तौ भी राजनीति के अनुसार दूत को नहीं मारना चाहिये। दूतों के लिये अनेक प्रकार के दण्ड लिखे हैं, उनको विरूप कर डालना शलाका आदि से पीड़ा देना भौंह मूछ आदि को मुड़ा देना इत्यादि दण्ड इनको देना चाहिये, परन्तु दूत का मारना उचित नहीं है, हे वीर! शास्त्र को जानने वाला तुम्हारे समान दूसरा कोई नहीं है, क्योंकि देवता व असुरों में उत्तम हो। हम इस बानर को मारने में कोई गुण नहीं देखते, इसका कारण जिसने इस कपि को भेजा है उसको दण्ड देना उचित है यह तो शत्रुओं का भेजा हुआ यहां आया है, जैसा शत्रु का सन्देश उसको आप से कह सुनाया क्योंकि यह पराधीन तो है ही इस लिये चाहे साधु हो असाधु हो परन्तु दूत बध करने के योग्य नहीं है। और इस दूत में अतुल पराक्रम मालूम होते हैं जो यह आकाश मार्ग से उड़ता हुआ यहां तक आया, ऐसा पराक्रमी दूत होना भी कठिन है, इस दूत को मर जाने पर हम दूसरे दूत को नहीं देखते जो कि युद्ध में दुर्ज्जय व सुशिक्षित उन दोनों जो कि आप से लड़ने की इच्छा करते हैं, फिर उनको युद्ध करन की लिये उद्यत करे। और भी इस दूत को मार कर युद्ध करने के लिये उत्साह युक्त राक्षसों का मन तोड़ना अच्छा नहीं है। और तुम्हारे यहां करोड़ों योद्धा है, उन शूर वीरों में से कुछ सेना को आपको आज्ञा से भेज दिया जावे और स्त्री के वियोग से मूढ उन दोनों राज कुमारों को पकड़ लावे। छोटे भाई विभीषण का उत्तम वचन मान कर हनुमानजी को दण्ड देने का विचार करने लगा।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे द्विपंचाशःसर्गः ॥ ५२ ॥

देशकाल के अनुसार कल्याण कारक वचन को सुनकर महात्मा रावण बोला, कि आपका कहना उचित है दूत का वध तो करनाही नहीं चाहिये, इस कारण अवश्य इसको दण्ड दिया जावे। हम जानते हैं कि वानरों का भूषण व हित पूंछ होती है इस लिये शीघ्र इस की पूंछ फूंक दो। जिसमें यह जली हुई पूंछ को लेकर यह वहां जावे बिना पूंछ के इस दूत को इसके बंधु बांधव आदि देखेंगे। यह कह कर फिर रावण ने आज्ञा दिया कि इसकी पूंछ में आग लगाकर इस वानर को लंकापुरी की गलियों में घुमाओ। रावण के इस प्रकार बचन को सुनकर क्रोध युक्त राक्षसों ने पुराने वस्त्रों को एकत्रित करके उस की पूंछ में लपेटने लगे तब हनुमानजी ने अपनी पूंछ को बढ़ाने लगे जैसे सूखाई धन पाकर बन में आग बढ़ती है। इसके बाद तेल से उस पूंछ को भिगोकर दुष्ट राक्षसों ने उसमें आग लगा दी, जब पूंछ जलने लगी तो क्रोध से व्याकुल व प्रातःकाल के सूर्य के समान मुख कर हनुमानजी ने उस जलती पूंछ से बहुत राक्षसों को मार डाला। इस अद्भुत चरित्र को देखने के लिये लंकापुरी की स्त्री बालक व वृद्ध इकट्ठे हो गये। और हनुमानजी की पूंछकी जलना देखकर हर्षित होने लगे। हनुमानजी ने उस समय के अनुसार विचार किया कि देखो बंधन में पड़े हुए भी मारे भय के हमारे समीप राक्षस-गण नहीं आते हैं। हम चाहें तो इस बंधन को तोड़कर इन सब राक्षसों को मार डालें। हमने अपने स्वामी का कार्य करने के लिये जो कुछ किया है उसका बदला यह दुष्ट अपने स्वामी की आज्ञा से हमको बांधने पर भी नहीं प्राप्त कर सकते। हम संग्राम में अकेले सब राक्षसों को मार सकते हैं परन्तु रामचन्द्रजी की प्रीति के निमित्त यह दुःख सह रहे हैं। हम रात्रिकाल में लंका में घूमे हैं इससे दुर्गम स्थानों को भली भांति कदाचित नहीं देख सके हों इस लिये अब इसी जलती हुई पूंछ को लेकर इस लंकापुरी में सर्वत्र घूमेंगे तो यहां के सब स्थानों को देख लेंगे। अवश्यही दिन को हमें लंका देखनी है, इससे ये दुष्ट राक्षस

हमको जितना चाहे बांधे व पूंछ में आग लगावें हमको पीड़ा देवें, परन्तु हमको कुछभी चिन्ता नहीं है। हनूमानजी यह सोचही रहे थे कि वे बलवान राक्षस महाबानर हनुमानजी को पकड़ कर आगे ले चले, और अनेक प्रकार के बाजने को बजाने लगे। इस प्रकार क्रूर कर्मी राक्षस उन हनुमान को लंकापुरी में घुमाने लगे, आगे पीछे राक्षसों को चलने से शत्रुओं को नाश करने वाले हनुमानजी सुखपूर्वक चले जाते थे। जब राक्षसों ने उस महापुरी में हनुमानजी को घुमाया तब उन्होंने अति विचित्र विमानु को देखे और अनेक स्थानों पर बने रत्नों से जडित चबूतरा और अनेक चौराह और चौक को देखे। इसके बाद बड़ी २ सड़कों को तथा छोटी व संकरी गलियों को देखते हुए अनेक राजमार्ग आदि स्थानों पर घूमे। जिस जिस मार्ग से हनुमानजी निकलते थे उस मार्ग के आगे वह राक्षस पुकारते चले जाते थे कि यही बानर है इसको देख लो, इस प्रकार जब हनुमानजी की सब पूंछ जलने लगी तब सब राक्षसियां जानकी से जाकर इस प्रकार अप्रिय बचनको कहने लगीं कि हे सीताजी! जो लाल मुख बानर तुमसे बातचीत करता था देखो पूंछ जलाकर वही बानर घुमाया जाता है, उन राक्षसियों के क्रूर बचन को सुनकर शोक से संताप करती हुई सीताजी अग्नि की अस्तुति करने लगीं। और हनूमानजी की मङ्गल कामना की प्रार्थना करने लगीं। और पवित्र हो अग्नि देवता का ध्यान करती हुई बोलीं कि हमने जो अपने पति की सेवा किया है और जो कुछ तपस्या किया है, उसके प्रभाव से हे अग्नि देवता तुम शीतल हो जाओ। इसके बाद तीक्ष्ण ज्वाला युक्त दक्षिणावर्त शिखा को घूमाता हुआ हुआ जानकीजी के सन्मुख आ पहुंचा, परन्तु जानकीजी की प्रार्थना से हनुमानजी को अग्नि का भय नहीं हुआ उस समय के पवन भी हिमालय के समीप से शीतलता को लेकर जानकीजी की रक्षा के लिये हनुमानजी का उपचार करने लगे। पूंछ में लगी अग्नि की प्रज्वलित ज्वाला को देखकर चिन्ता करने लगे कि यह अग्नि का

प्रचण्ड वेग हमको क्यों नहीं जलाता है, क्योंकि यह ज्वाला बहुत बढ़ी दीख पड़ती है, परन्तु हमको कुछ भी गरमी नहीं जान पड़ती है, हमारी पूंछ के आगे अत्यन्त शीतल जान पड़ता है। अथवा चाहे यह रामचन्द्रजी के लिये अग्नि देवता अपने तेज को शीतल करके हमारा आदर करते हों कि जैसे समुद्र को लांघने के समय आकाश मार्ग से आते हुए हमको मैनाक को भेजकर समुद्र ने हमारा आदर किया था। और हमको समुद्र में वह पर्वत आश्चर्य के समान दीख पड़ा था। अथवा सीताजी के सौम्यस्वभाव से और रामचन्द्रजी के तेज से तथा हमारे पिता पवन की मित्रता से यह पावक हमको नहीं जलाता है। फिर कुछ देर में वानरों में श्रेष्ठ हनुमानजी चिन्ता करने लगे कि हम ऐसे रामचन्द्रजी के भक्त को इन अधम राक्षसों ने कैसे बांध लिया। इससे अब हम अपने पराक्रम का प्रभाव दिखावें तो बने, यह कह कर महा बेगवान् पराक्रमी हनुमानजी अपने अंग के सब बन्धनों को तोड़ डाले, और बड़े बेग से उछल कर किलकिला शब्द को किया, उसी स्थान पर पर्वत के शिखर के समान एक ऊंचा फाटक था। उसी पर कूद कर चढ़ गये और पर्वत के समान विशाल शरीर को बढ़ाकर उसी फाटक के स्थान से एक परिघ को खींच लिया और उसी से फाटक की रखवारी करने वाले तथा अपने संगमें दौड़ने वाले राक्षसों को मार डाले।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे त्रिपंचासः सर्गः ॥ ५३ ॥

इस प्रकार लंकापुरी को देखते अपना मनोरथ सिद्ध समझते वीर-रस को बढ़ाते हनुमानजी यह चिन्ता करने लगे कि अब क्या करना चाहिये, इस समय फिर भी इन राक्षसों को सन्ताप देना चाहिये, बनको विध्वंस कर चुके हैं, और इसकी सेना को भी कुछ नष्ट किये हैं, अब इसके दुर्ग को नाश करना चाहिये, अब जो हम इसके दुर्ग को नाश करें तो हमारा परिश्रम फल हो जावे, यह कार्य शीघ्र सफल होने वाला जान पड़ता है, इस जलती हुई पूंछकी तृप्ति इन राक्षसों के गृहमें

प्रवेश करने से होगी । यह विचार कर बादल के मध्य में जैसे बिजली चमकती है वैसे ही आग से चमकती हुई पूंछ को लेकर लंका के मन्दिरों पर विचरने लगे । महाबली हनुमानजी पहिले प्रहस्त नाम राक्षस के गृह में अग्नि को लगाकर महा सारथ के गृह में पवन के समान कूदकर चले गये, वहां से वज्र दंष्ट्र के गृह में फिर शुक के गृह में वहां आग को लगा कर सारण के गृह में प्रवेश किये, वहां अग्नि को लगा कर मेघनाद व जंबुमाली का गृह भस्म किया, फिर रश्मि केतु, सूर्य शत्रु का भवन जलाकर ह्रस्वकर्ण, ह्रस्वदृष्टि, व रोमश आदि राक्षसों का गृह जलाया । इसके बाद युद्धोन्मत्त, मत्त ध्वजग्रीव, विद्युज्जिह्व, कराल हस्तिमुख, आदि राक्षसों के गृह को जला दिये, इसके उपरान्त कुम्भ, निकुम्भ, यज्ञ शत्रु, ब्रह्म शत्रु, आदि राक्षसों के गृह को जलाकर विभीषण के गृहको छोड़ दिये, उस आगको लगनेसे राक्षसोंके गृहकी सकल वस्तु नष्ट हो गईं । इसके बाद उसी प्रभाव से हनुमानजी रावण के मन्दिर में प्रवेश किये, अनेक प्रकार की मणि व रत्नो से विभूषित सुमेरू तथा मन्दराचल के समान मंगल वस्तुओं से शोभित भवन में प्रवेश करके अपनी जलती हुई पूंछ से उसमें भी आग लगादी, और प्रलयकाल के मेघ के समान गर्जना किये। उस समय प्रचण्ड पवन को चलने से आग का प्रभाव और भी बढ गया । अनेक गृहकी लगी आग पवन के प्रवाह से सब आपस में मिलकर एक हो गई और लंकापुरी की उत्तम संपत्ति को हनुमानजी ने भस्म कर दिया । उस अग्नि के प्रकोप से व्याकुल राक्षस इधर उधर दौड़ने व चिल्लाने लगे । क्योंकि वे सब राक्षस अपनी रक्षा प्रयत्न से करने में हतोत्साह हो गये थे । और बार बार यही कहा करते थे कि हा ! निश्चय यह बानर का रूप धारण करके साक्षात अग्नि ही आया है । कितनी राक्षसियां आग में जलती हुई अपने परिवार के लिये रोती हुई बड़े छतों से कूदती थीं । महाबली हनुमानजी लंकापुरी को ऐसा भस्म करदिया जैसे महादेवजी ने त्रिपुरासुर को पुर सहित भस्म

किया था। जैसे पलास का पुष्प बसन्त काल में बनकी शोभा को लाल कर देता है, वैसे हनुमानजी के पूंछ से लगी हुई आग की शिखा लंकापुरी में ललाई को आकाश में विस्तृत कर दिया। यह दशा देखकर राक्षस कहने लगे कि यह वानर नहीं है देवताओं के स्वामी साक्षात् इन्द्र हैं। अथवा यम, वरुण, पवन, रुद्र, साक्षात् अग्नि, अथवा सूर्य हैं या कुबेर अथवा चन्द्रमा हैं, या नहीं साक्षात् काल ही है। यदि यह सब नहीं हैं तो क्या सब के पितामह लोक को धारण करने वाले चतुरानन ब्रह्माजी का कोप है जो वानर का रूप धारण करके राक्षसों का संहार करते हैं। इस प्रकार आबाल वृद्ध वनिता सहित जलती हुई लंकापुरी को देखकर राक्षस लोग कहते थे कि यह विष्णु की माया रूपी अग्नि है, जो हम लोगों की संपत्ति को इस प्रकार जला रही है रत्न रूपी वृक्ष सहित बन को उजाड़ कर समर में राक्षसों को मारकर लंकापुरी को जलाकर हनुमानजी खड़े हुए। उस समय वानरों में श्रेष्ठ हनुमानजी की देवता लोग स्तुति करने लगे। और गंधर्व विद्याधर अनेक प्रकार का बाजा बजाने लगे अप्सरायें नाचने लगीं सब लंका को अनाथ के समान जलाकर अपनी जलती हुई पूंछ को समुद्र में बुझाकर सूर्य के समान शोभा को प्राप्त हुए। और देवता लोग हनुमानजी को स्तुति करके इस अद्भुत कर्म से विस्मय को प्राप्त हुए।

इति बाल्मीकीये रामायणे सुन्दरकाण्डे चतुष्पंचाशः सर्गः ॥ ५४ ॥

भय से भीत राक्षस राक्षसी तथा लंकापुरी को देखकर हनुमानजी चिन्ता करने लगे कि मैं अति निन्दित कर्म किया कि जो लंकापुरी को भस्म किया धन्य वे सज्जन लोग हैं जो क्रोध के कारण को आ जाने पर और उसे देखकर भी क्रोध नहीं करते। क्रोध करने वाला मनुष्य कौनसा पाप नहीं करता है। क्रोधी पुरुष पिता माता गुरु भाई बन्धु को भी मार डालता है, साधु लोगों की निन्दा करता है, उनको कठोर बचन कह देता है, क्रोधी पुरुष उचित अनुचित कार्य को नहीं जानता है, न कोई

बात योग्य अयोग्य को समझता है जो पुरुष उत्पन्न हुए अपने क्रोध को अपनी क्षमा से दूर करता है, जैसे सर्प अपनी पुरानी केंचुल को छोड़ देता है, वही पुरुष लोक में श्रेष्ठ गिना जाता है, मुझ दुर्बुद्धि निर्लज्ज अत्यन्त पापी को धिक्कार है कि जो सीता के विषय में बिना विचारेही लंका को भस्म कर डाले। इस कारण मुझसे अधिक स्वामी घातक कोई नहीं है। यदि इस लंका पुरी को जलाने में श्रीजानकीजी जल गई हों तो हमने अज्ञानता से अपने स्वामी का कार्य नष्ट कर दिया, जिस कार्य के लिये हम यह सब कार्य आरंभ किया था हमने वह कार्य नष्ट किया। क्योंकि लंका जलाने के समय हमने जानकीजी की कुछ भी रक्षा नहीं किये, यह कार्य निश्चय हमारा बहुत तुच्छ होगया, क्योंकि क्रोध के वेग में अंधे होकर हमने मूलही को नाश कर दिया। हमारे इस कर्म से जानकीजी भी भस्म होगई। क्योंकि लंका में ऐसा कोई स्थान नहीं देखा जाता है जो जला न हो। हमने सब लंका भस्म कर डाली। यदि हमारे कर्म से जानकीजी भस्म हो गई होंगी तो मैं भी यहीं अपना प्राण छोड़ दूंगा। क्योंकि इस कार्य को नाश करके जीते हुए राम लक्ष्मण व सुग्रीव के समीप किस प्रकार हम जावेंगे। सीताजी की मरण की दशा सुनकर राम लक्ष्मण सुग्रीव भरत शत्रुघ्न कौशल्या आदि भी अपने प्राणको छोड़देवेंगी इन लोगों को नाश होने पर सकल प्रजा नष्ट होजायेगी। इसलिये हम भाग्यहीन धर्म अर्थ को नष्ट करने वाले क्रोध के वश में पड़कर लोक कलंकी हम अवश्य कहे जा सकते हैं इस प्रकार की चिन्ता करते हुए हनुमानजी चिन्ता करके विह्वल हो गये, पुनः विचार करने लगे कि सर्वाङ्ग सुन्दरी सीताजी अपने तेजही से अपनी रक्षा कर लिये होंगी, क्योंकि आग को आग नहीं जला सकती। धर्मात्मा अमित तेजस्वी व पराक्रमी रामचन्द्रजी की भार्या सीता अपने पतिव्रत धर्म से ही सदा रक्षित रहती हैं, उन्हे अग्नि स्पर्श नहीं कर सकता। देखो श्रीरामचन्द्रजी के अव्याहत प्रभाव और जानकीजी के पुण्य से जलाने वाला अग्नि हमको नहीं जला सका। तो फिर जानकीजी को कैसे जलाया होगा।

भरत लक्ष्मण शत्रुघ्न व इन तीनों भाइयों की देवता श्रीरामजी की प्राण प्रिया जानकीजी कैसे नष्ट होजायगी। यदि अग्नि का कर्महो यही है कि जो सामने पड़ता है उसको भस्म कर देता है तो फिर हमारी पूंछ को क्यों नहीं जलाया, यदि रामजी के प्रभाव से हमारी पूंछ को नहीं जलाया तो फिर जानकीजी को कैसे जलावेगा। फिर हनुमाजी समुद्र के मध्य में मैनाक पर्वत के दर्शनों की सुधि करके विस्मित होगये। और इस प्रकार जानकीजी की धर्मा चरण की चिन्तना हनुमानजी करही रहे थे कि इतने में आकाश से चारण लोगों के शब्द सुनाई देने लगे, कि लंका जाते समय हनुमानजी ने बड़ा श्रेष्ठ काम किया, जिसने राक्षसों के मन्दिरों पर भयानक आग लगाने के समय राक्षसियां अपने नगर से भाग कर पर्वतों की गुहा का आश्रय लिया और हनुमान जीने जानकी को छोड़कर समग्र लंकापुरी भस्म करदिया। देवताओं के इस प्रकार अमृतमय बचन को सुनकर हनुमानजी के मनमें हर्ष उत्पन्न हुआ। देवताओं के मुख से जानकीजी का हर्षित समाचार सुनकर हनुमानजी आनन्दित हो गये।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे पंचपंचाशः सर्गः॥ ५५ ॥

हनुमानजी इस प्रकार की चिन्ता करते हुए उस अशोकवन में जाकर वृक्ष के नीचेसीताजी को बैठी देखकर प्रणाम करके हनुमानजी बोले कि बड़े भाग्य की बात है, कि जो हम तुमको भली भांति कुशलता युक्त यहां बैठी देखते हैं। यह सीताजी से कहकर हनुमानजी चलने को तइयार हुए, तब सीताजी बारंबार उनकी ओर देख अपने पति रामचन्द्रजी के स्नेह से युक्त होकर बोलीं। हे तात! जो तुम्हारे मनमें यह बात आवे तो कहीं गुप्त स्थान में आज के दिन निवास करके प्रातःकाल चले-जाना। तुम्हारे निकट रहनेसे हम मन्द भागीका शोक क्षण भर तक दूर रहेगा। हे कपि सिंह! तुम्हारे चले जाने पर यह विश्वास नहीं कि जब तक तुम आओगे तब तक हमारे प्राण रहैं या न रहैं। हेवीर! इन बड़े सहायक वानर भालुओं की सेना के सहित उन दोनों राज-

कुमारों का समुद्र पार होना कठिन है। क्योंकि इस समुद्र को लाँघने में गरुड़ पवन तथा तुम्हारेही में शक्ति है। हे कार्य विशारद! इस दुरासद उत्पन्न हुए कार्य में तुम क्या समाधान करते हो। इस कार्य को सिद्ध करनेमें अकेले ही समर्थ हो। क्योंकि तुम्हारे बल का उदय सब वीरों को नाश करने से यशस्वी है। परन्तु जिसमें रामचन्द्रजी अपनी बड़ी भारी सेना लेकर लंकापुरी में आवें और सब राक्षसों को संग्राम में मारकर हमको ले जावें, उनको वैसेही बातसे उपदेश करना। श्रीजानकीजी के अर्थ युक्त बचन को सुनकर हनुमानजी उत्तर देने लगे कि हे देवि! बानर भालुओं की सेना के अधिपति सुग्रीवजी बड़े पराक्रमी हैं, उन्होंने तुमको श्रीरामचन्द्रजी के निकट पहुंचाने का निश्चय किया हैं। हे वैदेही! सुग्रीवजी जैसे तुमको यहां जानेंगे वैसेही असंख्य बानरों से युक्त होकर तुरन्त यहां आवेंगे। और श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण के सहित अपने बाणों से इस लंकापुरी को विध्वंस कर डालेंगे। और परिवार सहित रावण को मारकर तुमको ले चलेंगे। कुछ दिन पर्यन्त सन्तोष करो शीघ्रही श्रीरामचन्द्रजी को सेना सहित शीघ्र देखोगी। इस प्रकार जानकीजी को समझा पवन के पुत्र हनुमानजी उनको प्रणाम करके चलने को तइयार हुए। और हनुमानजी राक्षसों को विध्वंस करके जानकीजी को धैर्य देकर अपने पराक्रम से लंकापुरी को व्याकुल कर और अति घोर बल को दिखा कर सीताजी को प्रणाम करके समुद्र के ऊपर चलने का विचार करने लगे और स्वामी के दर्शन की इच्छा से उत्सुक हो शत्रुओं को मर्दन करने वाले अरिष्ट नाम पर्वत पर चढ़गये, उस पर्वत के चारो ओर समुद्र बह रहा है, सूर्य के किरण की छाया पड़ने से वह पर्वत अत्यन्त उज्वल था। अनेक प्रकार के धातुओं से शोभित था। समुद्र का जल मन्द मन्द उस पर्वत पर फैल रहा था। अनेक प्रकार के वृक्ष वायु के झकोरे से हिल रहे थे। अनेक रंग के पशु पक्षी उस पर कलोल कर रहे थे। बड़े बड़े ऋषि यक्ष गंधर्व किन्नर उस पर्वत पर निवास करते थे, ऐसे अरिष्ट नाम

पर्वत पर चढ़कर हनुमानजी रामजी के दर्शन की अभिलाषा से उत्सुक हो गये, और उस विचित्र पर्वत को पग के अंगूठे से दबा दिये, कि उस पर्वत के अनेक शिला चूर चूर होगये। खारे समुद्र के दक्षिण तट से उसके उत्तर के किनारे पर आना था। इस कारण उस पर्वत पर चढ़कर पवनकुमार आकाशको प्राप्त हुए। दक्षिण दिशासे उत्तर दिशाको चलने के समय हनुमानजी ऐसे कूदे और उस पर्वत पर ऐसा चरण मारा कि उस पर्वत पर रहने वाले समस्त प्राणी व्याकुल होगये और पर्वत पृथिवीमें धंस गया। उसके सब वृक्ष व शिखर टूट गये। देवगण उस पर्वत को छोड़कर आकाश मार्ग से भाग चले। वह पर्वत हनुमानजी के वेग से धंस कर पाताल को चला गया। वह पर्वत चालीस कोश के घेर में था और एकसौ बीस कोश ऊंचा था। लीला पूर्वक खारे समुद्र को लांघने की इच्छा से हनुमानजी समुद्र के ऊपर आकाश को उछले।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे षट्पंचाशः सर्गः ॥ ५६ ॥

उस चलते समय हनुमानजी इस वेग से चले, मानो आकाश को लीलते हैं। चन्द्रमा को उल्लिखित करते हों नक्षत्र सूर्य सहित आकाश को हरण करते हों महा वेगवान हनुमानजी इस प्रकार समुद्र को लांघने लगे। हनुमानजी को चलते समय आकाश में अनेक रंग के बादल हनुमानजी के पीछे चले, हनुमानजी चन्द्रमा के समान कभी बादलों में छिप जाते कभी उसके बाहर हो दिखाई पड़ते गरुड़ के समान दिखाई पड़ते थे। बद्दल के समान गर्जना करते हनुमानजी लंकापुरी के निवासी राक्षसों को अपना गंभीर नाद सुनाने लगे, और समुद्र को इस प्रकार लांघने लगे, जैसे प्रत्यंचा से छूटे बाण वेग से जाते हैं। चलते समय महा वीर्यवान् हनुमानजी सुनाभ पर्वत को छूकर महेन्द्रचल को देखे। उस महेन्द्रचल पर्वत पर आकर थोड़ी देर तक विश्राम किये और महा भयंकर गर्जना करने लगे कि जिस गर्जना के शब्द से दशो दिशा पूर्ण हो गयी। अपने साथी वानरों

को देखने की लालसा से पूंछ को उठाकर इस प्रकार कूद कर गर्जना किये कि उस शब्द से मानो सूर्य मण्डल सहित नभ मण्डल फट जाया चाहता था । इधर जो वानर हनुमानजी को देखने की इच्छा से समुद्र के किनारे बैठे थे, वे वानर प्रचण्ड पवन से प्रेरित प्रलय काल के बादल के गर्जने के समान हनुमानजी के गर्जने को सुना । वे अंगदादि वानर बहुत उदास बैठे थे, एका बादल के गर्जने के समान हनुमानजी के शब्द को सुनकर अपने सुहृदय को देखने की इच्छा से इधर उधर झट पटाने लगे । वानरों में श्रेष्ठ जांबवान प्रीति से हर्षित हो सब वानरों से बोले, कि निसन्देह सब प्रकार से हनुमानजी कार्य को सिद्ध करके आ गये हैं । क्योंकि जो कार्य की सिद्धि इनसे न होती तो ये इतना गंभीर गर्जना नहीं करते । महात्मा हनुमानजी की वाहों बड़ावेग व शब्द सुनकर सब वानर लोग हर्षित हो जहां तहां से कूद कूद इकट्ठे होने लगे, और बड़े प्रेम व प्रीति से वृक्षों की डालियों को पकड़ कर लटकने लगे । जैसे पर्वत की गुहा के भीतर जाकर पवन गर्जता है, वैसे ही बलवान पवन कुमार हनुमानजी वहां आकर गर्जना किये । पर्वत के समान हनुमानजी को देखकर सब वानर हाथ जोड़ कर खड़े हो गये । हनुमानजी आकाश से पर्वत के ऊपर कूद पड़े । तब सब वानर प्रसन्न मनसे हनुमानजी को चारो ओर घेर कर खड़े हो गये । और सुन्दर फल मूल को लाकर सबों ने हनुमानजी को भेंट दिया । उनमें कोई वानर हर्षित हो शब्द करने लगे । कोई किलकारी मारने लगे । कोई २ हर्षित हो बैठने के लिये वृक्षों की डालियों को तोड़ लाये । महा कपि हनुमानजी ने जाम्बवान आदि वृद्ध वानरों की और कुमार अंगद की वन्दना किये । इसके बाद अंगद आदि वानरों ने हनुमानजी की भली भांति पूजा किये और हाथ जोड़ कर उनको प्रसन्न किये । हनुमानजी सब वानरों के मध्य में संक्षेप से यह कह दिये कि हम जानकी देवी को देख आये । इसके बाद हनुमानजी अंगदजी का हाथ पकड़ कर उस महेन्द्राचल के रम-

णीय बनमें बैठ गये। और अंगदजी से कहने लगे कि हमने अशोक बनमें बैठी जनक नन्दिनी को देखा। उनकी रक्षा चारो ओर राक्षसियां करती हैं जानकीजी एक बेणी को धारण किये श्रीरामजी के दर्शन की अभिलाषा करती हैं। और उपवास करने कारण अत्यन्त दुर्बल हो गई हैं, तथा मलीन वस्त्र को धारण किये हैं। वहां अशोक बनमें इस दशा में हमने जानकीजी को देखा है। अमृत के समान इस प्रकार हनुमानजी के बचन को सुनकर सब बानर आनन्दित हो हंसने लगे। कोई गर्जने लगे, कोई शब्द करने लगे। कोई किलकार करने लगे कोई उछल कर वृक्ष व पर्वतों पर चढ़ने लगे, हनुमानजी के इस प्रकार बचन को सुनकर बानर अत्यन्त हर्षित हो अनेक प्रकार का कुतूहल करने लगे, हनुमानजी के सब प्रकार के बचन को सुनकर अंगदजी उत्तम बचन को बोले कि इस अपार समुद्र को लांघ कर जो तुम जानकीजी का समाचार ले आये हो इस लिये तुमसे प्रिय हमारा कोई नहीं है। हे हनुमानजी! हम लोगों को जीवन देने वाले तुम्हीं हो। अब तुम्हारे प्रसाद से हम सब लोग श्रीरामचन्द्रजी से फिर मिलेंगे, स्वामी में तुम्हारी दृढ़ भक्ति है। अब तुम्हारे पराक्रम को धन्यवाद है। बड़े भाग्य की बात है जो श्रीरामजी की भार्या परम यशस्विनी सीताजी को देख आये हो। इस प्रकार की बात चीत अंगद हनुमान तथा जांबवान आदि में होती थी इतने ही में अत्यान्य बानर लोग पर्वत की शिलाओं को उखाड़ कर हनुमान अंगद जांबवान आदि बानरों को बैठने के लिये उखाड़ लाये। बहुत बानरों के बीचमें वहीं श्रीमान् अंगदजी बैठ गये, जैसे स्वर्ग में देवताओं के बीच में इन्द्र बैठते हैं। उस समय कीर्ति से मान हनुमानजी कीर्ति उज्वल बहूंटा पहिने हुए अंगदजी आनन्द पूर्वक बैठने से पर्वत के समान शोभा को प्राप्त होने लगे।

इति वाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे सप्तपंचाशत्तमः सर्गः ॥ ५७ ॥

इसके बाद मन्द्राचल के शिखर पर बैठे महा बली हनुमान आदि

वानर अति उत्तम प्रसन्नता को प्राप्त हुए। और प्रसन्नता से बैठ कर अति हर्षित हो जाम्बवान प्रीति युक्त महा कपि हनुमानजी से सीता दर्शन के समस्त वृत्तान्त को पूंछने लगे कि हे पवन कुमार! तुमने जानकी देवी को कैसे देखा और सीताजी वहां किस प्रकार रहती हैं। और क्रूरकर्मवासी रावण उनके साथ कैसावर्ताव करता है। हे महाकपे! ये सब बात तुम निश्चय करके कहो। तुमने सीतादेवी को कैसे खोज किया, और मिलने पर उन्होंने तुमसे क्या कहा। ये सब बातें जो हम सो लोग सुनलें तो कार्य को आरंभ करने का उपाय बिचार करें। जो बात रामचन्द्रजी के समीप जाकर हम लोगों के कहने योग्य हो वात हो सब सब आप कहिये। जाम्बवान के इस प्रकार बचन को सुनकर हनुमानजी सीता देवी को शिरसे प्रणाम करके प्रसन्नता के मारे उनके रोम फूल आये और सब वृत्तान्त जाम्बवान से कहने लगे। कि आप लोगों के सामने ही समुद्र के दक्षिण पार को जानेकी इच्छा से महेन्द्राचल के ऊपर से हम आकाश को उछलगये थे। इसके बाद जब हम आकाश मार्ग से दौड़ते हुए थोडी दूरगये तब हम को एक बड़ा विघ्न का स्वरूप हमको दिखाई दिया। वह विघ्न करने वाला सोने के शिखर से संयुक्त एक पर्वत था। वह हमारा मार्ग रोक कर समुद्र में खड़ा हो गया। तब हम उस पर्वत को देखकर मनमें बिचार किया कि इसको कुछ भय देवें। यह सोच कर उस पर्वत के शिखर पर हमने अपनी पूंछ पटक दी, हमारे पूंछ पटकने से उस पर्वत का एक शिखर सौ टुकड़ा हो गया, शिखर को टूटने से व्याकुल होकर वह पर्वत बोला कि हे पुत्र! ऐसा कह कर हमारे मन को प्रसन्न किया। और बोला कि हम पवन के मित्र हैं मैनाक हमारा नाम है, हमको तुम अपना पितृव्य (चचा) समझो। हम समुद्र के भीतर रहते हैं, इसके पहिले पर्वतों को पंख थे, इस कारण वे पर्वत पृथिवी में लोगों को पीड़ा देते हुए इधर उधर घूमा करते थे, पर्वतों के इस प्रकार के चरित्र को सुनकर इन्द्र ने अपने वज्र से उनके पंख को काट लिये तब हमको तुम्हारे पिता महात्मा पवन

ने इन्द्र के हाथ से छुड़ाकर हमको समुद्र में फेंक दिया, इस कारण हम भी श्रीरामचन्द्रजी की सहायता करना चाहते हैं मैनाक के इस प्रकार के बचन को सुनकर हमने अपना कार्य उनको बताकर बोले कि इस समम मैं कहीं ठहर नहीं सकते। वह मनुष्य का रूप धारण किये पर्वत अपने शिखर पर खड़ा हो अन्तर्द्धान हो गया। और वह विशाल पर्वत समुद्र में छिप गया। हम अपने वेगसे शेषमार्ग को व्यतीत करने लगे, इसके बाद सुरसा नाम सर्पोंकी माता बीच समुद्र में हमारे मार्ग को रोककर बोली, हे बानरसत्तम्! देवताओं ने हमारे भोजन के लिये तुमको यहां भेजा है। इस लिये हम तुमको भक्षण कर जायगी क्योंकि देवताओं की यही आज्ञा है। सुरसा के इस प्रकार बचन को सुन कर हाथ जोड़कर हम खड़े होगये और उदासीन मुख होकर उससे बोले, कि श्रीरामचन्द्रजी अपने भाई लक्ष्मण व स्त्री सीता को संग लेकर दण्डक-बन में आये। उनकी स्त्री सीता को दुष्टात्मा रावण हर ले गया। हम श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा से उनके दूत बनकर उनकी स्त्री सीता को खोजने के लिये लंकापुरी को जाता हूं। इस लिये तुम भी रामचन्द्रजी की सहायता करो। अथवा हम जानकीजी को देखकर उनका समाचार श्रीरामचन्द्रजी से कहकर आवेंगे तब तुम्हारे मुख में प्रवेश करेंगे। हमारे बचन को सुनकर सुरसा बोली कि हमको बरदान है कि बिना हमारे मुख में पैठे कोई नहीं जा सकता है यह कहकर सुरसा ने दश योजन का मुख फैलाया तब हम पन्द्रह योजन के होगये। तब सुरसा ने हमारे प्रमाण से अधिक मुख फैलाया। तब मैंने अपनी शरीर को और भी बढ़ाया जब हमारा से अधिक प्रमाण उसने अपने मुख को फैलाया तब हमने अपने शरीर को छोटा बनाकर उसके मुख में पैठकर बाहर निकल आये और उसके सम्मुख खड़े होकर उसको प्रणाम किये, तब वह सुरसा देवी हमसे बोली कि अपने कार्य को सिद्ध करने के लिये सुख पूर्वक चले जाओ। और जानकीजी का शुभ समाचार रामचन्द्रजी से कह कर दोनों को मिलाओ। हे बानर हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं, यह कहकर सब लोग हमारी स्तुति

करने लगे। इसके बाद फिर हम आकाश गरुड़ के समान चले तो इतने में किसी ने हमारी परछाहीं पकड़ली। परन्तु हमको कोई जीव दीख नहीं पड़ा, और हमारा चलने का वेग रुक गया। हम व्यग्र होकर दिशाओं को देखने लगे। परन्तु हमारे वेग को रोकने वाला हमको नहीं दीख ई पड़ा। इस प्रकार के विघ्न को देखकर हमको अधिक चिन्ता हुई कि हम मार्ग में क्यों रोके गए इस प्रकार अनेक विचार करते २ जो हमारी दृष्टि नीचे गई तो जल के भीतर एक भयंकर राक्षसी हमको दिखाई पड़ी। वह राक्षसी चिल्लाकर हमको अयोग्य बचन से बोली कि जिससे हम भयभीत हो खड़े हो गये। वह कहने लगी हे महाकपि! कहां जाओगे। तुमतो हम भूखी को भोजन होकर मिले हो। अब अधिक दिन से क्षुधित हम को तृप्त करो। तब हम उस राक्षसी से कहे कि मुख फैलाओ, हम तुम्हारे मुख में घुंसे, तब उस राक्षसी ने मुंह फैलाया। हमने उसके मुख के प्रमाण से मुख को अधिक बढ़ाकर उसका श्वास लेना बन्द कर दिया तब उसने हमको भक्षण करने के लिये और भी अपने मुख को बढ़ाया। तब हमने अपने रूप को छोटा करके उसके भीतर घुस गये और उसके हृदय को खींच लिया था। आकाश में स्थित सिद्ध लोगों के बचनको इस प्रकार सुनने लगे कि सिंह का नाम राक्षसी को हनुमान ने बड़ी शीघ्रता से मार डाला। उस राक्षसी को मार कर सिद्ध लोगों के बचन को सुनते हुए और अपने कार्य का स्मरण करते हुए चले, बहुत दूर जाकर पर्वत युक्त समुद्र दक्षिण किनारा देखा, जहां लंका नाम पुरी है, सायंकाल में हमने राक्षसों के भवन में प्रवेश किया, परन्तु महा-बली विशेष राक्षस हमारे प्रवेश को नहीं जान सके। हमको वहां प्रवेश करतेही हमारे सामने प्रलयकाल के मेघ के समान भयंकररूप को बनाते हंसती हुई कोई राक्षसी हमको मारने को उद्यत हुई। तब हम उस राक्षसी को देखकर अपने वाम हाथ के मुक्का से उसको पराजित करके संध्या समय उस पुरी में पैठे, तब डरकर उस राक्षसी ने हमसे कहा कि हे वीर! हम लंका हैं तुमने अपने बड़े पराक्रम से हमको जीत लिया इस

से तुम सब राक्षसों को जीतोगे। तब हम वहां से विदा होकर रात्रिभर रावण के अन्तःपुर में जानकीजी को खोजने के लिये घूमते रहे परन्तु सीताजी को नहीं देखा। तब रावण के स्थान में सीताजी को न देख कर हम शोक सागर में डूब गये, और कार्य की सिद्धि को न जान कर असमर्थ हो गये। शोक करते २ हमने बड़े भारी प्राकार चहरदीवार के मध्य में सुवर्ण से बनाए उपबन देखा। उसके छः महले छत पर चढ़कर देखे तो उसमें अनेक प्रकार के वृक्ष लगे थे, उस अशोक वनिका के बीच में एक बड़ा भारी शिंशया (सीसम) का वृक्ष दिखाई दिया उस छत पर से कूद कर उस वृक्ष पर चढ़कर हमने देखा तो उसके समीपही में केला का बन दिखाई पड़ा। और उस शिंशपा वृक्ष के समीपही विजुली के समान चमकती हुई जानकीजी दिखाई पड़ीं। सोलह वर्ष के लगभग उनकी अवस्था है, लाल कमल दल के समान उनके अरुण नयन हैं, उपवास करने से मुख की शोभा मलीन होगई है। एक मलीन कपड़े को पहिने हैं, धूली को लगने से उनके केश पाश ध्वस्त हो गये हैं। वह शोक सन्ताप से अति दुःखित हैं। अपने पति रामचन्द्रजी की सदा चिन्ता करती हैं, उनको चारो ओर से राक्षसियां घेरे खड़ी है, जैसे रक्त मांस को खाने वाली वाघिनी हरिणी को घेर लेती हैं। वैसेही उन राक्षसियों के घेरे में पड़ी हुई बार बार उनसे भयको पाती हुई जानकीजी को देखा। समस्त बालों की एक जय बनाये रामचन्द्रजी की चिन्ता में परायण भूमी में बैठी शीत-काल की कमलिनी के समान सूखी मरने पर उद्यत मृगनयनी सीता जी के समीप किसी प्रकार से पहुंचे। श्री रामचन्द्रजी की परम यशस्विनी सीताजी को इस प्रकार देख हम उसी शिंशया वृक्ष के ऊपर उनको देखते हुए बैठे। इसके बाद रावण के गृह में क्षुद्र घाटिका और नूपुर आदिका शब्द सुनाई देने लगा। तब मैं बहुत उद्विग्न होकर अपने शरीर को और भी छोटा कर लिये और उस वृक्ष के पल्लव में छिप कर देखने लगे। इसके बाद रावण की स्त्रियां और रावण जहां जा-

नकीजी बैठी थीं वहां आये । स्त्रियों सहित उस रावण को देखकर सीताजी सिकुड़कर अपने स्तनों को अपने हाथों से छिपाकर थरथराने लगीं । उस परम दुःखिता सीता से नीचे को मुखकर रावण बोला, कि हे भामिनि ! हमको तुम बहुत मानो, जो तुम घमण्डके मारे हमको प्रसन्न करोगी तो हे सीते ! दो मास के पीछे हम तुम्हारा रुधिर पान करेंगे । दुरात्मा रावण के इस प्रकार बचन को सुनकर क्रोध युक्त सीताजी तृण का ओट देकर रावण से बोलीं, हे राक्षसाधम ! अमित तेजस्वी इक्ष्वाकुवंश के स्वामी श्री रामचन्द्रजी की स्त्री और महाराजाधिराज दशरथजी की पुत्र वधू को कटु बचन कहते हुए तेरी जीभ क्यों नहीं गिर पड़ती हे दुष्ट! तमारेमें कुछभी बल नहीं, इसीसे तू श्रीरामचन्द्रजी के रहते हमको नहींहरण करसका। जब वे महात्मा वहांसे चलेगये तो उनके पीछे हमको पीछे हमको हर लाया है हे पापी ! तूं रामचन्द्रजीके तुल्य नहीं है, न उनके दास होनेही योग्य है क्योंकि श्रीरामचन्द्रजी अजेय सत्यवादी शूरवीर हैं । जब सीताजी ने ऐसा कठोर बचन रावण से कहा तो वह दुष्ट क्रोध के मारे चिता अग्नि के समान जल उठा और आखें को लाल भौंह को टेढ कर सीताजी को देखने लगा रावण के क्रोध को देखकर उसकी अनेक स्त्रियोंने हाहाकार मचाया । और उस दुष्टात्मा रावण की भार्या मन्दोदरी स्त्रियों के बीच से उठकर उसका मातुर रावण से मधुर वाणी से यों कहा कि, हे इन्द्र के समान पराक्रमी ! सीता में तुम्हारा कौन कार्य है हमारे साथ बिहार करो । जानकीजी हमसे अधिक सुन्दरी नहीं है हे स्वामिन् ? और देवता गंधर्व यक्षों की कन्याओं के साथ विहार करो सीता को लेकर क्या करोगे । इसके बाद सब स्त्रियों के सहित रावण अपने भवन को चला गया । रावण को चले जाने पर अति विकराल मुखी राक्षसियां क्रूर व कठोर बचन कह कर सीताजीको त्रास देने लगीं । परन्तु उन राक्षसियों के कहने को तृण के समान जाना । इसके बाद राक्षसियों ने रावण को समाचार देकर आईं और सबकी सब सो गई एकान्त में

उन राक्षसियों के भय से और रामजी की चिन्ता से सीताजी विलाप करने लगीं, तब उन राक्षसियों में से उठकर त्रिजटा नाम राक्षसी उन सबों से बोली, अरे सीता के मांस को न खाकर अपने शरीर के मांस को खाओ, क्योंकि ये महाराज जनक की कन्या हैं दशरथजी की पुत्र बधू हैं। इनके निमित्त आज मैंने एक स्वप्न भी देखा है, जिसको स्मरण करने से राम खड़े हो जाते हैं। उससे राक्षसों का नाश जाना जाता है। और इनके पति रामचन्द्र का जय जान पड़ता है। इस कारण तुम सब इनको त्रास न देओ। अब इनसे यही प्रार्थना करो कि रामचन्द्रजी हम सब राक्षसियों की रक्षा करे। इनको दुःख देने से ऐसा भयंकर स्वप्न दिखाई देता है। यह सीता अनेक प्रकार के दुःखों से छूट कर उत्तम सुख को पावेंगी। यदि प्रणाम करने से सीताजी प्रसन्न हो जायं तो ये बड़े भारी भय से भी सबकी रक्षा कर सकती हैं। लज्जावती सीताजी अपने पति के विजय की वार्ता को सुनकर हर्षित हो त्रिजटा से बोलीं कि यदि तुम्हारा बचन सत्य होगा और राक्षसों में श्रीरामचन्द्रजी का विजय होगा तो हम तुम सब राक्षसियों की रक्षा करूंगी। सीताजी की ऐसी दारुण दशा देखकर हम चिन्ता करने लगे, और हमारा मन जानकीजी से वार्ता करने को चाहता था। परन्तु हम सोचते थे, किस प्रकार इनसे वार्ता करें। इस प्रकार विचार करके हम श्रीरामचन्द्रजी के कुल की स्तुति करने लगे। इक्ष्वाकुवंश के महाराजों के गुणों से विभूषित स्तुति को सुनकर जानकी देवी हमसे बोलीं कि हे बानर पुङ्गवा! तुम कौन हो, व तुमको किसने यहाँ भेजा है, तुम यहां कैसे आये। रामचन्द्रजी से तुमसे कौन सी प्रीति है वह सब हमसे कहो। सीताजी के इस प्रकार बचन को सुनकर हम बोले कि हे देवि तुम्हारे स्वामी को बड़े पराक्रमी बानरों के राजा सुग्रीव सहायक हुए हैं। हमको तुम उन्हीं सुग्रीव के सेवक जानो, हनुमान हमारा नाम है, हम तुम्हारे स्वामी श्रीरामचन्द्रजी के तथा सुग्रीव के भेजे यहां आये हुए हैं। महाराज रामचन्द्रजी ने यह अपनी अंगूठी तुम्हारे पहिचान

के लिये दिया है। हे यशस्विनी! हम तुम्हारी आज्ञा को चाहते हैं कौन कार्य करें। क्या तुमको लक्ष्मण के सहित श्रीरामचन्द्रजी के पास ले चलें, इस प्रकार हमारे बचन को सुनकर सत्य हमको रामचन्द्रजी का दूत जानकर सीताजी ने कहाकि श्रीरामचन्द्रजी यहां आप रावण का नाश करके हम को यहां से ले जावें। तब हमने शिरको झुकाय कर सीताजी को प्रणाम किये, और श्रीरामचन्द्रजी को परिचय देने के लिये सीताजी से कुछ वस्तु मांगी। तब सीताजी ने कहा कि यह उत्तम मणि को ले लेओ, इस मणि के प्रभाव से हमारे संग तुम्हारे भेट होने को श्रीरामचन्द्रजी विश्वास मान कर तुमारा बहुत कुछ आदर करेंगे। यह कह कर उन श्री मती भगवती जानकीजी ने मणियों में श्रेष्ठ वह उत्तम मणि हम को दिया, और उदविग्न होकर हमको लौटने को कहा। तब हमने राज पुत्री सीता देवीको एकाग्रचित से प्रणाम व प्रदक्षिणा कर रामजी के दर्शन की लालसा से चलने को तइयार हुए, जबजानकीजी बोलीं कि हे हनुमान! रामचन्द्रजी से हमारा सन्देश ऐसी युक्ति से कहना कि जिसमें सुनते ही लक्ष्मण सुग्रीव के सहित श्रीरामचन्द्रजी यहां आवे। जो दो मास के भीतर श्रीरामचन्द्रजी यहां न आये तो हम अनाथ के समान मर जावेगी, रामचन्द्रजी फिर हमको नहीं देख सकेंगे। यह सीताजी के बचन को सुनकर हमें रावण के ऊपर बड़ा क्रोध हुआ, इस लिये हमने बिचारा कि थोड़ा कार्य और विशेष है सो भी करते जावें। तब युद्ध करने की इच्छा से हमारा शरीर पर्वत के समान विशाल हो गया और हमने अशोक बनको विध्वंस करना आरंभ किया, जब वह बन नष्ट भ्रष्ट हो गया और पशु पक्षी व्याकुल होकर इधर उधर भाग गये तो राक्षसियां विस्मित होकर हमको देखने लगीं। जब सबोंने आकर पर्वत के समान विशाल रूप को धारण किये हमको देखा तो उनमें से बहुत राक्षसियों ने जाकर उस बानर का वृत्तान्त रावण से कहा, हे राजन्! तुम्हारे पराक्रम को न जान कर एक दुष्ट बानर ने सब अशोक बनको उजाड़ डाला है। हे राजन्! उस बानर की बड़ी दुष्ट बुद्धि है,

इस लिये उस बानर का प्राण मारने ही का आज्ञा दीजिये। जिसमें यह फिर यहां न आवे। यह सुनकर रावण ने अपने मन्त्री किंकर नाम राक्षस को अस्सी हजार सेना के सहित भेजा, अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र को धारण करने वाले अस्सी हजार राक्षसों को एक लोह के दण्ड से हमने मार डाला। तब उन राक्षसों में जो दश पांच बंचे थे वह जाकर सेना सहित किंकर के मरने का समाचार रावण से कह सुनाया। और हमारे मनमें आया कि यह लंका इस पुरीकी अधिष्ठात्री देवी है इसका मन्दिर गिरा देना चाहिये। यह मनमें सोच कर उस मन्दिर की रखवारी करने वाले सैकड़ों राक्षसों को हमने एक खंभे से मार डाले और उस सुन्दर मन्दिर को भी हमने ढहा दिया, रावण किंकर को सेना सहित मरने का वृत्तान्त सुनकर प्रहस्त के पुत्र जंबुमाली को भेजा, वह बड़ी भयानक राक्षसों को साथ लेकर आया। हमने सेना सहित उस बड़े बलवान रणमें चतुर राक्षस का कराल लोह के दण्ड से अनुचर सहित मार डाला। यह सुनकर रावण अपने सात मन्त्रि पुत्रों को बड़ी सेना के साथ हमारे पास भेजा। उन सबों को भी हमने परिध से मार डाला। रणमें सेना सहित मन्त्रि पुत्रों का मरना सुनकर रावण ने और भी पांच सेना पति को भेजे। उन पांचो को भी हमने सेना सहित मार डाला, तब फिर रावण ने महा बलवान अपने पुत्र अक्षकुमार को अनेक पराक्रमी राक्षसों के साथ भेजा। परन्तु समर में बड़े चतुर मन्दोदरी के पुत्र को जो आकाश में उड़ता हुआ आया था, उसके दोनों पैर को पकड़ कर बड़े जोर से घुमाकर फेंक दिया। तब अक्षको मरा सुनकर रावण ने अपने दूसरे पुत्र मेघनाद को आज्ञा दिया। वह मेघनाद बड़ा बिशाल रणमें दुर्मद व बलवान है परन्तु उसके संग भी जितनी राक्षसों की सेना आई थी, वह भी सब हम ने नष्ट कर दिया व संग्राम में उसके पराक्रम को भी नष्ट कर दिया, यह कार्य करके हम अपने मनमें अति हर्षित हो गये। इस महा बाहु मेघनाद को रावण ने बड़े विश्वास से भेजा था, इसके

साथ और भी बड़े बड़े वीर आये थे। जब हमने सब वीरों को ध्वस्त कर दिया। और वह कुछ न कर सका तो जाना कि अब किसी प्रकार इसको नहीं जीत सकेंगे। तब मेघनाद ने झटपट हमको ब्रह्म पाश से बांध लिया, तब तो राक्षसों ने भी हमको रस्सियों से जकड़ लिया, और रावण के पास हमको ले गये। तब हमको जाल में बंधा देखकर दुष्टात्मा रावण बोला, कि तुम लंका में क्यों आये, और राक्षसों को क्यों मारा। तब हमने उसको अपना परिचय देने लगे। हे प्रभो! तुम्हारे यहां आने का प्रयोजन जानकीजी को देखना ही था हम वायु के और सयुत्र हैं, हमारा नाम हनुमान है, और हमारी जाति बानर की है। हमको रामचन्द्रजी का दूत सुग्रीव का मित्र जानो। हम दूत कार्य के कारण तुम्हारे पास आये हैं। हे राक्षसेश्वर! बानरों के राजा सुग्रीवजी ने जो कहा है वह तुमसे कहते हैं। तुम सावधान होकर सुनो। हे महाभाग! पहिले तो सुग्रीवजी ने अपनी कुशलता कही है, और तुम्हारी पूछी है, फिर धर्म अर्थ को सिद्ध करने वाले और विशेष करके कल्याण करने वाले तुम्हारे हित के बचन को कहा है। ऋष्यमूक पर्वत पर रहने वाले हमसे और अमित बलशाली रामचन्द्रजी से मित्रता हुई है, तब उन्होंने हमसे कहा कि हमारी भार्या सीता को राक्षस हर ले गया है, इस विषय में तुम हमारी सहायता करो वह हमसे तुमसे कुछ प्रतिज्ञा पूर्वक वार्ता हो जावे यह कह कर लक्ष्मणजी के सहित श्रीरामचन्द्रजी व सुग्रीवजी से प्रतिज्ञा हुई। क्योंकि बालि बानर ने सुग्रीव के राज्य व स्त्री को हर लिया था। उस बालि बानर को श्रीरामचन्द्रजी ने समरमें एक ही बाण से मारा है और सुग्रीव को बानरों का राजा बना दिया है। अब श्रीरामचन्द्रजी की सहायता हम लोगों को सब प्रकार से करनी है। इस लिये सुग्रीव को भेजने से हम तुम्हारे पास आये हैं। अब जब तक बानरों की सेना लंकापुरी में नहीं आती है, तब तक शीघ्र सीताजी को लेजाकर श्रीरामचन्द्रजी को सौंप देओ। क्योंकि जिन बानरों को अपने शत्रुओं को मारने के लिये देवता लोग स्वर्ग में

बुला ले जाते हैं तो उन बानरों का प्रभाव ऐसा कौन है जो नहीं जानता। सुग्रीवजी ने ऐसा समाचार आप से कहा है सो हमने कह दिया! इस प्रकार हमारे बचन को सुनकर क्रोध पूर्वक लाल नेत्र किये हमको देखकर राक्षसों को आज्ञा की इसको मार डालो। यह हमारे बलको नहीं जानता है। तब महा बुद्धिमान उस रावण के भाई विभीषण ने हमारे लिये उससे प्रार्थना करने लगे कि हे राजशार्दूल! इस दूत को छोड़ देओ, क्योंकि जो तुमने दूत को बध करने का बिचार किया है वह नीति शास्त्र के विरुद्ध है। कहीं भी राजनीति में हमने यह नहीं देखा कि दूत का बध करना लिखा हो। दूतका कार्य यही है कि जैसा उसके स्वामी का सन्देश हो वैसा निर्भय होकर कह देवे। हे राजन्! यदि दूत कोई अपराध भी करै तो उसके अंग को काट कर बिरूप करके उसके पास भेज देवे। विभीषण के इस प्रकार बचन को सुनकर रावण ने राक्षसों को आज्ञा दिया कि इस बानर के पूंछ में आग लगा दो। रावण के बचन को सुनकर राक्षसों ने हमारी पूंछ में सन वस्त्र कपास आदि लपेट कर प्रचण्ड पराक्रमी राक्षसों ने हमको डण्डों व मूकों से मार कर पूंछ में आग लगा दिये। यद्यपि राक्षसों ने हमको अनेक प्रकार के पाशव यन्त्र से यन्त्रित किया था तौ भी हमको दिनमें लंका देखने की इच्छा से कुछ भी पीड़ा नहीं जान पड़ी। तब उन राक्षस शूरबीरों ने हम को बांध कर नगर में पुकारा कि देखो वह बानर जलता है। तब हमने अपना रूप छोटा कर लिया इससे सब बन्धन ढीले हो गये, उन बन्धनों को ढीला करके फिर हम पहिले के समान हो गये। और लोहे का एक परिघ लेकर उन राक्षसों को मार कर लंका के फाटक पर चढ गये और अपनी पूंछ में लगी आग से सब लंकापुरी एक क्षणमें फूंक दिये, जैसे प्रलय कालकी आग से संसार जलता है। जब सब पुरी जल गई तब हमने देखा कि अब ऐसा कोई भी स्थान नहीं है जो भस्म न हुआ हो, ऐसा सोचकर हम चिन्ता करने लगे कि इस आग की ज्वाला से सीताजी अवश्य मृतक

हो गई होंगी । देखो लंका भस्म करने में हमने सीता को भी जला डाला यह रामचन्द्रजी का बड़ा भारी कार्य विफल कर दिया । इस प्रकार जब हम शोक से व्याकुल हुए तब आकाश में चारण लोगों के वचन को सुने कि बड़े आश्चर्य की बात है इस बानर ने बड़ा भारी कार्य किया, कि जानकीजी को छोड़कर सब लंकापुरी भस्म कर डाली। उन लोगों के शब्द को सुनकर हमको विश्वास हुआ, और भी देखा कि जिस जानकी के प्रताप से हमारी पूंछ नहीं जली तो यह अग्नि सीताजी को नहीं भस्म कर सकता । इन कारणों से सीताजी को जीवित जान कर हमारा मन हर्षित हुआ, फिर हमने सीताजी का दर्शन किया और उनको प्रणाम करके उनसे विदा हुए, इसके बाद अरिष्ठनाम पर्वत पर चढ कर तुम लोगों को देखने की इच्छा से समुद्र को लांघने लगे, फिर सिद्ध गंधर्व सेवित आकाश मार्ग से यहां आकर आप लोगों को देखा, हमने यह सब कार्य श्रीरामचन्द्रजी के प्रसाद से व आप लोगों के तेज से तथा सुग्रीव के कार्य के लिये किया । यह सब तो हमने किया अब जो हमसे न बना हो वह सब आप लोग करें इस प्रकार हनुमान अंगद आदि बानरों से कह सुनाये ।

इति वाल्मीकी रामायणे सुन्दरकाण्डे अष्टपंचाशः सर्गः ॥ ५८ ॥

हनुमानजी इस प्रकार वृत्तान्त कह कर सीताजी को तथा रावण के प्रताप को बानरों से कहने लगे कि सीताजी के शील को देखकर हमारा मन तृप्त हो गया, रामचन्द्रजी का उद्योग भी सफल हुआ । सुग्रीवजी ने जो रामचन्द्रजी का आदर किया था वह भी सफल हुआ । हे बानरों ! श्रीमती सीताजी के समान जिस स्त्री को शील होगा वह स्त्री अपनी तपस्या से तीनो लोक को धारण कर सकती है, और क्रोध युक्त होने पर भस्म भी कर सकती है । राक्षसों का स्वामी रावण बड़ा प्रतापी है । जो सीताजी को हरने के समय में उनको स्पर्श करके भी उनके तपोबल से नष्ट नहीं हुआ । यह बड़े आश्चर्य की बात है। क्योंकि जो कार्य क्रोध युक्त होने से जनक नन्दिनी कर सकती हैं

वह कार्य हाथ से छूने पर भी अग्नि की शिखा नहीं कर सकती। इससे जान पड़ता है कि जानकीजी ने अधिक कोप रावण के ऊपर नहीं किया है नहीं तो रावण अवश्य भस्म हो जाता। अब इस कार्य में हम चाहते हैं कि जाम्बवान आदि और बानरों की आज्ञा लेकर जानकीजी को लायकर श्रीरामचन्द्रजी से मिलाय देवें। यदि यह कहो कि बिना रामचन्द्र व सुग्रीव को लंका गये यह कैसे हो सकता है तो हम अकेले राक्षसों की पुरी लंका को ध्वस्त कर राक्षसों समेत रावण को मार सकते हैं। दूसरे का कुछ प्रयोजन नहीं है जो मेघनाद अपनी तपस्या के प्रभाव से ब्रह्मास्त्रगैद्रास्त्र, वायव्यास्त्र, वारुणास्त्र, आदि अस्त्रों को हमारे ऊपर छोड़ेगा तो हम उसके अस्त्र को नाश कर देवेंगे, और उस राक्षस को मार डालेंगे। क्योंकि आप लोगों की आज्ञा से हमारा पराक्रम उस रावण को पीड़ा पहुंचा सकता है, हम जिस समय पर्वतों के शिलाओं को उखाड़ उखाड़ कर वृष्टि करने लगेंगे उस समय देवताओं की शक्ति नष्ट हो सकती है राक्षसों की क्या गणना है। यदि आप लोग यह कहेंगे कि जो तुम्हारे में इतना पराक्रम था तो रावण को मारही क्यों न आये, तो बिना आप लोगों की आज्ञा से हमारे पराक्रम ने हमको रोक दिया नहीं तो मारकर ही आते। चाहे समुद्र अपनी मर्यादा को छोड़ देवे चाहे मन्दराचल पर्वत चलायमान हो जावे, परन्तु शत्रुकी सेना जाम्बवान को नहीं कंपा सकती। उन राक्षसों में जो बड़े बड़े शूर बीर हैं उन बलवान राक्षसों को अंगदजी अकेले ही मार सकते हैं। महात्मानील के बलसे मन्दराचल पर्वत भी फुटकर चूर्ण हो सकता है तौ भी इन बिचारे राक्षसों की क्या गणना है। देवता दैत्य यक्ष गंधर्व नाग पक्षी आदि में मैंद और द्विविद के संग लड़ने वाला कौन है। यह दोनो बानरोत्तम अश्विनी कुमार के पुत्र हैं इनके संग रणभूमि में युद्ध करने वाला हम किसी राक्षस को नहीं देखते। हमने भी लंकापुरी में बहुत राक्षस मार डाले और सब पुरी जलाकर क्षार कर दिये, तथा राजमार्गों पुकार २ कर अपना नाम

सब को सुना दिये कि महाबाहु श्रीरामचन्द्रजी व बीर लक्ष्मण का जय हो. और श्रीरामचन्द्रजी से पालित राजा सुग्रीव की जय हो, हम पवन के पुत्र श्रीरामचन्द्रजी के दास हैं और हनुमान हमारा नाम है इसके बाद दुष्टात्मा रावण की अशोक वाटिका में शिंशपा वृक्ष के नीचे बैठी करुणा पूर्वक रोदन करती हुई राक्षसियों के त्रास को बार बार पाती हुई बलसे अहंकारी रावण को तृण के समान जानती हुई रामचन्द्रजी की चिन्ता करने वाली चन्द्रमा की रेखा के समान पतिव्रता सीता को प्रमदा बनमें हमने देखा । इस प्रकार की दुःखी जानकी को किसी प्रकार विश्वास में लाये और फिरसे सब अर्थ कह कर उनको समझाया । तब श्रीरामचन्द्र व सुग्रीवी की मित्रता को जानकर अति हर्षित हो गई जानकीजी का नियता चार व पति में उत्तम भक्ति देख जो रावण न मारा गया तो वह बड़ा महात्मा कहा जा सकता है परन्तु कब तक ! वह तो मृतक ही के समान है, उसे मारने में रामचन्द्रजी केवल निमित्त मात्रही हैं, एक तो सीताजी स्वाभाविक सुकुमारी है, उस पर रामचन्द्रजी के विरह में और भी दीन हो गई हैं, जैसे प्रतिपदा को पढने वाले की विद्याक्षीण हो जाती है । वैसे ही दशा शोक परायण राजकुमारी सीताजी की है, अब उनके विषय में जो उचित जानो वही कार्यकिया जावे ।

इति वाल्मीकीये रामायणे सुन्दरकाण्डे एकोनषष्टितमः सर्गः ॥ ५९ ॥

इस प्रकार हनुमानजी के वचन को सुनकर अंगदजी बोले, कि अश्विनीकुमार के पुत्र द्विविद मैन्द बड़े पराक्रमी व बलवान हैं । ब्रह्माजी के वरदान से ये लोग प्रभावशाली है । अश्विनीकुमार का आदर करने के लिये सब लोक के पितामह ब्रह्माजी ने इन दोनों बानरों को वरदान दिया था कि तुम दोनों को कोई नहीं मार सकेगा, उस वरदान के प्रभाव से उन्मत्त होकर देवताओं की बड़ी सेना का मथन कर के इन्हों ने अमृत को पी लिया है, इस कारण ये लोग बलवान हैं, ये लोग जब क्रोध करेंगे तब चतुरंगिणी सेना समेत लंकापुरी को नाश कर

सकते हैं। और बलवान रावण को मार सकते हैं, फिर सब प्रकार के अस्त्र शस्त्र चलाने में चतुर और सब कुछ कार्य करने में समर्थ आप लोग महावीर बानरों के संग होने पर लंकापुरी का जीतना क्या कठिन होगा। फिर तो जानो कि हम लोग लंका निवासी राक्षसों का विध्वंसही कर देवेंगे, जब पवनकुमार हनुमान लंकापुरी को भस्म कर दिया और रावण के बन में जानकी को देखा परन्तु अपने संग लेते नहीं आये यह बात रामचन्द्रजी के निकट जाकर महा पौरुषी आप लोग कहने के योग्य नहीं होंगे। क्योंकि तीनों लोक देवता व दैत्यों के मध्य में ऐसा कोई नहीं है जो आप लोगों के तुल्य वेग व पराक्रम में होवे, इस लिये चलो हम सब लोग राक्षसों को मारकर लंकापुरी को जीत कर रावण को मारकर सीताजी को ले कार्य को सिद्ध कर प्रसन्नता पूर्वक चले आवें। और रामचन्द्र तथा लक्ष्मणजी के मध्य में मैथिली को बैठा देवें। थोड़े से काम के लिये और सब बानरों को क्यों दुःख पहुँचै। हमी लोग सेना समेत उन राक्षसों को मारकर लक्ष्मण सहित श्रीरामचन्द्रजी व सुग्रीवजी को देख सकते हैं। इस प्रकार संकल्प किये बड़े अर्थको जानने वाले अंगदजी परम प्रसन्न होकर जाम्बवान से बोले, कि हे महामति! जो तुम कहते हो कि इस का नाम बुद्धि नहीं है, क्योंकि हम लोग के बल दक्षिण दिशा में सीता को ढूंढ़ने के लिये भेजे गये हैं सीता को संग ले आने के लिये बुद्धिमान रामचन्द्रजी व सुग्रीवजी ने नहीं भेजा है, इससे जो हम रावण को जीत सीता को ले आवें तो रामचन्द्रजी इस बात से न प्रसन्न हों तो कैसे बनैगा। क्योंकि राघव महाराज सिंह हैं अपने कुलको अपने ही पराक्रम से रक्षा करते हैं। और बानरों के आगे उन्होंने प्रतिज्ञा भी किया है कि सीता को बिजय हमीं करेंगे, उस प्रतिज्ञा को वह कैसे मिथ्या करेंगे। हम लोगों के कार्य से यदि वे सन्तुष्ट न हुए तो हम लोगों का किया हुआ कर्म विफल हो जायगा। हे बानर पुंगव! जिस पराक्रम से सीताजी को ले आवोगे वह भी निष्फल हो जायगा। इस कारण जहां लक्ष्मण व सुग्रीव के सहित

रामचन्द्रजी हैं वहां इस उपाय का निवेदन करने के लिये हम सब लोग चलें, इस प्रकार अंगदजी के बचन को सुनकर जाम्बवान बोले, कि हे अंगद ! तुम ठीक कहते हो, रामचन्द्रजी की प्रसन्नता के अनुकूल कार्य करना ठीक होगा। हम लोगों को उन्हीं की इच्छानुसार कार्य करना चाहिये।

इति वाल्मीकीयेरामायणे सुन्दरकाण्डे षष्टितमः सर्गः ॥ ६० ॥

इसके उपरान्त अंगद हनुमान आदि सब बानर जाम्बवान के बचन को स्वीकार करके प्रीतियुक्त होकर हनुमानजी को आगे किये और अपने सब बानर मन्दराचल के शिखर से कूद कर आकाश को आच्छादित करते हुए किष्किन्धापुरी को चले, वे सब बानर सबको बड़ाई व प्रशंसा करने योग्य आत्मज्ञान व महाबली हनुमानजी को ऐसा देखते थे कि मानो उनको अपनी दृष्टि पर चढाये लिये चले जाते थे। रामचन्द्रजी के कार्य सिद्धि से उन्मत सब बानर परम यश को लाभ करने के लिये और श्रीरामजी को कार्य सिद्धि की सूचना देने के लिये सुग्रीव के निकट को चले, आकाश मार्ग से जाते हुए सब बानर नन्दनबन के समान अनेक वृक्ष वाले एक सघन बन को देखे उस बन का नाम मधुबन था। उस बनकी रखवारी सुग्रीवके सेवक लोग करते थे। उस बन के लिये सुग्रीव की ऐसी आज्ञा थीं कि इस बन में कोई जीव प्रवेश न करने पावें। सुग्रीवके मामा दधि मुख नाग बानर उन का मालिक था। इधर अंगद आदि बानर सुग्रीव के उस बनमें पहुंच कर अति हर्षित हो गये। और उस बनके मधु युक्त मधुर फल खाने की इच्छा से सब बानरों ने अंगदजी से प्रार्थना किये। तब अंगदजी जाम्बवान आदि बानरों के बचन को स्वीकार करके मधुर फल खाने को सबको अंगदजी ने आज्ञा दिये, अंगद की आज्ञा को पाकर वे सब बानर वृक्षों पर चढ गये, और अनेक प्रकार के सुगन्धित फल मूल खाकर प्रसन्न हो गये। इसके बाद सब बानरों ने एक मत होकर प्रसन्नता के मारे नाचने गाने कूदने किलकारी देने बनके रख-

वागों को दुर्वाद कहनें लगे, इस प्रकार बानरों की सेना उस बनमें समाकुल हुई, इन बानरों में कोई ऐसा न था जो अहंकार युक्त मतवाला न हुआ हो। उस बनके फल को खाते व तोड़ते देखकर क्रोध युक्त हो दधिमुख बानर ने इन सब बानरों को रोका। इन सब बानरों ने दधि मुख का कहना नमान कर उसका तिरस्कार कर दिया। तब वह दधि मुख क्रोध से इन बानरों से लड़ने लगा। किसी किसी को कठोर बचन कह कर ललकारा किसी को लातों से मारा, किसी के निकट जाकर लड़ाई लड़ने लगा। किसी को समझा बुझा दिया। परन्तु उन मदान्ध बानरों ने उसका रोकना नहीं माना। बानर सब इकट्ठे होकर पूंछ आदि अंग पकड़ कर दधिमुख को इधर उधर घसोटने लगे। और नख व दातों से उसे काटने लगे, और सब बन को उजाड़ कर दिये।

इति बाल्मीकीये रामायणे सुन्दरकाण्डे एकषष्टितिमः सर्गः ॥ ६१ ॥

तब बानरों में श्रेष्ठ हनुमानजो और सब बानरों से बोले, हे बानरों! तुम सब सावधान होकर मधु को पान करो। जो कोई तुम लोगों को रोकेगा उसको हम रोकेंगे, हनुमानजी के बचन को सुनकर बानरों में श्रेष्ठ अंगदजी बोले, हे बानरो! प्रसन्ता से मधुपान करो। क्योंकि हनुमानजी के बचन नहीं करने योग्ग हो तौ भी हम लोगों को अवश्य करना चाहिये। इस प्रकार अंगदजी के बचन को सुनकर सब बानरों ने उनकी बड़ाई करने लगे, और सबों ने हर्षित होकर अंगदजा की पूजा किये। और सबोने मन माना मधुबन में प्रवेश करके मधु को पान करने लगे और अनेक प्रकार के फलको खाने लगे। उस समय जो रक्षक आये उन रखवारो करने वालों को कूद कूद कर ये सब बानर मारने लगे। बहुत बानर अंजलियों मधु को पीते थे, बहुत हर्षित हो झुण्ड के झुण्ड परस्पर मिल कर मधुपान करते थे। कोई मधुर सहद, की छातों को तोड़ कर आपस में लड़ते थे। इस प्रकार बानरों की दशा को देखकर वे रखवारी करने वाले बानर कुछ तो लड़ाई करने से घायल हो गये कुछ दधिमुख के पास जाकर बन

उजाड़ने का समाचार कह सुनाया कि सीता को खोजने वाले बानर मधुबन में आकर हनुमान के कहने से मधुबन को विध्वंस कर दिया है और हम लोगों को रोकने से मारपीट किया है। तब उजाड़ हुआ उस मधुबन को देखकर उस बनकी रखने वाले दधि मुख क्रोध पूर्वक वहां जाकर बानरों को समझाया। फिर क्रोध युक्त होकर एक वृक्षको उखाड़ लिया और उन बानरों को ललकारा और अपनी सेना लेकर अंगद आदि को मारने के लिये दौड़ा। और हनुमान आदि बानरों को दुर्वाद कह कर दांतों को पीसने लगा। तब क्रोध किये दधिमुख को देखकर हनुमान आदि श्रेष्ठ बानर दौड़े, दधिमुख को दोनो हाथों में वृक्षको लिये आते देखकर अंगद ने दौड़कर पकड़ लिया, और मदान्ध होने के कारण पिताके मामा पर कुछ भी दया न करके पृथिवी पर जोर से पटक दिया। पटकते ही दधि मुख के सब अंग टूट गई, और वह बानर विह्वल हो गया, रुधिर ठौर ठौर से बहने लगा। बानरों में श्रेष्ठ दधि मुख को मुहूर्त मूर्छा आगई। जब किसी प्रकार दधिमुख की मूर्छा बीत गई और बानरों के हाथ से प्राण बचाकर चुपचाप एकान्त में जाकर अपने सेवकों से बोला कि चलो हम सब लोग वहां चलें जहां हम सब लोगों के स्वामी सुग्रीवजी श्रीरामचन्द्रजी के साथ बैठे हैं। इन राजा से अंगद के सब दोषों को कहेंगे, तब सुग्रीवजी सहन शील हैं तौ भी इन सब बानरों को मार डालेंगे। क्योंकि इस मधुबन को महात्मा सुग्रीव भली भांति रक्षा करने को कहे हैं। और इस पर आसक्त भी रहते हैं। इस बन को नष्ट करने से सुग्रीवजी आयुष हीन इन बानरों को अवश्य मार डालेंगे। इस समय हमारा क्षमा करना राजा के पास चलने से सफल हो जायगा। रखवारी करने वाले बानरों से इस प्रकार कह कर उन लोगों को साथ ले दधि मुख सुग्रीव के पास गये। जहां सूर्य के पुत्र सुग्रीव व रामचन्द्रजी के समीप रहते थे वहां वह दधिमुख निमेषमात्र में पहुंचा, और राम लक्ष्मण के सहित सुग्रीव को देखकर आकाश से

पृथिवी पर उतर कर सुग्रीव के निकट जा कर उन बानरों के सहित हाथ जोड़कर उनको साष्टाङ्ग दण्डवत किया।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दर काण्डे द्विषष्ठितमः सर्गः ॥६२॥

दधिमुख को चरणों पर गिरते देखकर बानरों में श्रेष्ठ सुग्रीवजी बहुत आतुर होकर बोले कि उठो उठो हमारे चरणों पर क्यों गिरते हो, तुमको हम अभयदान देते हैं। कहो तुम किस लिये यहां आये हो, हम मधुवन का समाचार सुनना चाहते हैं। जब इस प्रकार महात्मा सुग्रीव ने आगत स्वागत किया तब महा प्राज्ञ दधिमुख हाथ जोड़कर बोला कि हे राजन्! जिस बन को बानरों के राजा बालि तथा आपने अच्छी तरह उपभोग नहीं किया जिस वन की रक्षा पहिले से होती चली आई है, उस बनको अंगद आदि बानरों ने उखाड़ डाला है। रक्षा करने वाले इन बानरों को लेकर हमने उन लोगों को बहुत रोका परन्तु हमको कुछ न समझकर सब फल तोड़कर नष्ट करदिये और छतों को तोड़कर सब मधु पी गये। और हम लोगोंको रोकनेसे मार पीट करके अपने मन माना उस बनको उजाड़ करते हैं, तुमारे ऐसे स्वामी को होते हुए येबन की रक्षा करने वाले शूरबीर मारडाले गये। इस प्रकार दधिमुख सुग्रीव से कह रहे थे कि शत्रुओं को नाश करने वाले महाप्राज्ञ लक्ष्मणजी सुग्रीव से पूंछने। हे राजन्! यह बानर किस बन का रक्षक है और क्यों आया है, और किस प्रयोजन से दुःखित होकर यह क्या कहता है। इस प्रकार लक्ष्मणजी को पूंछने पर परमचतुर सुग्रीवजी बोले, हे लक्ष्मणजी! इस वीर बानर का नाम दधिमुख है यह मधुवन की रक्षा करता है अङ्गद आदि बीरों ने आकर फल मूल को खाया है और मधुको पीया है, रखवारी करने वाले बानरों को मार पीट करके उनका तिरस्कार किया है इस से विदित होता है कि उन लोगों ने सीता देवी का दर्शन करके कार्य की सिद्ध कर लिया है नहीं तो इस प्रकार व्यतिक्रम नहीं करते। इससे निश्चय होता है कि हनुमानने सीताजी को अवश्य देखा होगा। क्यों कि हनुमान में कार्य की सिद्धि और बुद्धि भी है, व्यवसाय वीर्य प-

राक्रम पाण्डित्य ये सब बातें पवन कुमार में है। और फिर जिस समाज प्रेरक जांबवान व अंगद हैं, हनुमान अधिष्ठाता है। वहां कार्य मिथ्या हो ही नहीं सकता। इसी से अंगद आदि बीरोंने आनन्द में मग्न हो मधुबन को उजाड़ डाला है। इसी से मधुर बचन बोलने दधिमुख समाचार कहने को आये हैं। हे लक्ष्मणजी! आप निश्चय जानिये कि ये बानर लोग सीताजी को देख आये, इसी से आकर सब बानर मधु को पीने लगे हैं। क्योंकि हे पुरुषसिंह! बिना वैदेही को देखे आये, जन्म से रक्षित मधुबन को न उजाड़ते सुग्रीव के मुख से सुख देने वाले।इस प्रकार के बचन को सुनकर धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी अति हर्षित होगये। रामचन्द्रजी की प्रसन्नता देखकर सुग्रीव प्रसन्न होकर फिर दधिमुख से बोले, कि हम बहुत प्रसन्न हुये, क्योंकि उन लोगों ने हमारा इतना बड़ा कार्य सिद्ध करके फल खाये और बनकी उजाड़ दिये। इस समय उन बानरों का सब कुछ दोष क्षमा करने योग्य है। अब तुम शीघ्र मधुबन जाओ, उस की रक्षा करो। और हनुमान आदि बानरों को शीघ्र भेजो। सिंह के समान पराक्रमी हनुमान आदि बानरों को रामचन्द्र व लक्ष्मण सहित देखा चाहते हैं। और जिस प्रकार सीताको देखा है वह सुना चाहते हैं। रामचन्द्र व लक्ष्मण को हर्षित तथा उनके अंगको फरकते देखकर सुग्रीव अति प्रसन्न होगये॥

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दर काण्डे त्रिषष्ठितमः सर्गः॥ ६३॥

इस प्रकार सुग्रीव के बचन को सुनकर प्रसन्न होकर दधिमुख बानर लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी तथा मन्त्री सुग्रीवको प्रमाण करके उछलता हुआ बानरों के साथ आकाश मार्गसे मधुबन में जापहुंचा। जिस प्रकार वेग से शीघ्र आया था उसी प्रकार वेग से फिर भी मधुबन में जाकर मूत्र मल करते देखा। तौभी दधिमुख अंगद आदि बानरों के समीप जाकर मधुर बचन को बोला कि हे सौम्य! जो इन रखवारों ने अज्ञान व क्रोध से आप लोगों को रोका है उससे क्रोध नहीं की-

जिये। हे अंगदजी! आप इस बनके स्वामी हैं। आप अपनी इच्छानुसार इस बनके फल मूल को खाइये, अज्ञानवश हमने जो आपको रोक किया है उसको क्षमा करिये। जिस प्रकार आगे तुम्हारे पिता बानरों के राजा थे वैसे तुम व सुग्रीव स्वामी हो। हमने क्रोध में सुग्रीव के पास जाकर बन उजाड़ने का जो समाचार कहा, सुग्रीवजी आप सबके आगमन को मधुबनमें सुनकर बहुत प्रसन्न हुए, बन विध्वंस करने का वृत्तान्त सुनकर उनको कुछ भी क्रोध नहीं हुआ बरन हर्षित हो सुग्रीवजीने हमसे कहा कि उन बानरों को शीघ्र यहां भेजो। दधिमुख के इस प्रकार बचन के सुनकर बोलने में प्रवीण अंगदजी उन बानरोंसे बोले कि हे बानरों! हम लोगों के आगमन को सुग्रीव और रामचन्द्रजी सुन चुके हैं अब कार्य कर हम लोगों को यहां ठहरना नहीं चाहिये। अब तो मधुपान कर चुके और इन बानरोंको पराक्रम भी दिखा चुके अब जहां सुग्रीव हैं वहां अवश्य चलना चाहिये, हे बानरों! अब आप लोग जैसी सम्मति करें वैसाही कार्य किया जावे। क्योंकि हम तो आप लोगोंके अधीन हैं। यद्यपि हम युवराज हैं तौ भी आपलोगों को अज्ञा नहीं दे सकते हैं। क्योंकि आप सब कार्य किये आये हैं इस समय प्रतिकूल व्यवहार करना तथा बचन को कहना योग्य नहीं है। अंगदजी के ऐसे उत्तम बचन को सुनकर प्रसन्न मन से बानर गण बोले, हे राजन्! स्वामी होकर ऐसा दीन बचन कौन कहेगा, क्योंकि ऐश्वर्य और अधिकार के मद से मतवाले होकर सब यही कहते हैं कि हमी सब कुछ हैं। यह बचन तुम्हारेही कहने के योग्य है। और किसी के कहने योग्य नहीं है। हम सब लोग भी जहां बानरों के प्रभु सुग्रीव हैं वहां चलने को तइयार हैं। हे अंगदजी! बिना तुम्हारी आज्ञा बानर लोग अपने स्थान से कहीं जाने को एक पद भी नहीं उठा सकते। यह हम तुमसे सत्य कहते हैं। बानरों के इस प्रकार बचन को सुनकर अंगदजी बोले, अच्छा हम लोग चलें, ऐसा कहकर अंगदजी आकाश को उछल गये। अंगदजी को आकाश में कूदते देखकर सब बानर उनके पीछे चलने

को आकाश मार्ग में कूदने लगे। और हनुमान तथा अंगदजी को आगे करके वे बानर शब्द करते हुए इस प्रकार चले, जैसे प्रचण्ड पवन के साथ गर्जता हुआ बादल जाता है इस प्रकार चलते हुए वे बानर किष्किन्धा के निकट पहुंचे। सुग्रीवजीने उन लोगों को आते देखकर शोक से सन्तप्त कमल लोचन श्रीरामचन्द्रजी से बोले कि आप का कल्याण हो आप प्रसन्न हूजिये ये बानर जानकी देवी को देखकर आये हैं इसमें कुछ भी संशय नहीं है। क्योंकि एक मास की दी गई अवधि को बिताकर बिना जानकीजी को देखे ये बानर नहीं आ सकते हैं। क्योंकि अंगदजी का स्वरूप अति हार्षित जान पड़ता है। कार्य को विफल करके महा बाहु युवराज अंगद हमारे पास कभी न सकते। इसके सिवाय बिना जानकी को देखे पिता पितामह आदिकों से रक्षित यह हमारा मधुवन कोई नहीं उजाड़ता, आप प्रसन्न हूजिये इन बानरों में हनुमानजी ने जानकी को देखा है, हनुमान मेही इस इस विषय की सिद्धि है और व्यवसाय पण्डिता शूरता यह सब उनमें स्थित है, आप चिन्ता को छोड़कर प्रसन्न होवें। इतने में आकाश में सब बानरों का किल किला शब्द सुनाई दिया। सुग्रीवजी ने बानरों के किलकिला शब्द को सुनकर प्रसन्न मन से अपनी पूंछ को बढ़ा कर पीछे घुमाई। इतने में रामचन्द्रजी के दर्शन की अभिलाषा से अंगद व हनुमानजी को आगे करके प्रसन्न चित्त से मतवाले से सब बानर सुग्रीव तथा रामचन्द्रजी के समीप आकाश से उतरे। और पहिले श्रीरामचन्द्रजी को शिर से प्रणाम करके महाबाहु हनुमान रामचन्द्रजी से बोले, कि महाराज मैं सीताजी को देख आये। अमृत के समान हनुमानजी के बचन को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी अति हर्षित होगये। और बड़े प्रीति से संपन्न होकर आदर सहित हनुमानजी को रामचन्द्र तथा लक्ष्मणजी देखने लगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दरकाण्डे चतुष्षष्टितमः सर्गः ॥६४॥

इसके बाद अंगदजी को आगे करके प्रसव पर्वत पर लक्ष्मण

के सहित श्रीरामचंद्रजी को प्रणाम करने के बाद सुग्रीव को प्रणाम किये, और सीता के समाचार को कहने लगे, जिस प्रकार रावण के गृह में सीता स्थित हैं, जैसे राक्षसियां उन्हें त्रास देती हैं। जिस प्रकार वह रामचन्द्रजीकी चिन्ता करती हैं और जिस प्रकार आहार विहारके नियम से वह अपना प्राण रक्षा करती हैं वह सब रामचन्द्रजी से कहा तब सीताजी को जीती हुई जानकर बानरों से रामचन्द्रजी बोले, हे बानरो! सीता इस समय कहां हैं, और उनका हममें कैसा भाव है वह सब हमसे कहो। रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर बानर लोग श्रीरघुनाथजी के निकट सीता के वृत्तान्त को जानने में उन लोगों के बचन को सुनकर पवनकुमार हनुमानजी दक्षिण दिशाकी ओर घूमकर सीता को प्रणाम किये, इसके बाद निकट में जाकर हाथ जोड़ श्रीरामचन्द्रजी से बोले, दयानिधि! समुद्र के उस पार में पापात्मा रावण की लंका नाम नगरी है, वह क्षार समुद्र के दक्षिण किनारे। पर है। सीताजी को ढूंढ़ते हुए सौ योजन का समुद्र लांघ कर लंका पुरी में पहुंचे, वहां रावण के गृह में सीता को देखा है। हे रामचन्द्रजी! सीताजी निरन्तर आपका ध्यान लगाये बैठी हैं। राक्षसी चारो ओर से उनकी रक्षा करती हैं, और बारबार उनको त्रास देती हैं। हे बीर! तुमारे संग सुख पाने के योग्य सीताजी राक्षसियों से रक्षित होकर प्रमदावन में नाना प्रकार के दुःख को भोगती हैं। रावण के अन्तःपुर में रोकी पड़ी हैं। एक वेणी को धारण किये नित्य तुम्हारे ध्यान में रहती हैं भूमि में शयन करने के कारण हेमन्त काल के कमलिनी के समान पीली हो गई हैं। और रावण के त्रास भय से मरने पर आरूढ़ हैं। हे रामचन्द्रजी! हम किसी प्रकार से जानकीजी को ढूंढकर तब इक्ष्वाकु वंशियों का कीर्तन करना आरंभ किया। हे नरशार्दूल! बड़ी कठिनता से विश्वास करने पर जब वार्तालाप करके यहां का समाचार उनसे कहे। रामचन्द्र व सुग्रीव की मित्रता सुन बहुत हर्षित हुई, उनका आचार बहुत नियत है, उनकी भक्ति आप में सदा रहती है। हे महाभाग! इस प्रकार जनक

नन्दिनी को हमने देखा, जो तुम्हारी भक्ति से उग्र तपस्या कर रही हैं। एक वृत्तान्त और भी उन्होंने हमको बताया है कि जो चित्र कूट में तुम्हारे संग बैठी थीं तब एक कौआ आया था। हे पवनकुमार जिस तरह हमको देखे जाते हो उसी तरह श्रीरामचन्द्रजी से कहना कि यह जानकी ने कहा है, उन्होंने यह भी कहा था कि इस मणि की रक्षा हम यत्न से करती हैं, सो यह मणि श्रीरामचंद्रजी को दे देना। इस प्रकार के बचन को सुनकर सुग्रीव के सामने रामचंद्रजी से हनुमानजी से कहकर हाथ जोड़े फिर भी कहने लगे कि और उन्होंने कहा है कि आप मैनशिर के तिलक का स्मरण कीजिये। और जल से उत्पन्न यह मणि तुम्हारे पास भेजती हैं, हे रामजी! जब हम को बड़ा कष्ट होता था, तब इसी मणि को आपके समान देखकर अपना दुख मिटाती थीं। हे रामचंद्रजी! एक महीना हम और प्राण को धारण किये हैं, महीनाभर के ऊपर राक्षसों के बीच में पड़ी हम न जीवगी। धर्मचारिणी दुर्वज गात सीताजी रावण के अन्तःपुर में बन्दी हैं। हे राघव! हमने विधि पूर्वक सीता के वृत्तान्त को कहा, अब आप समुद्र उतरने का प्रयत्न कीजिये।

इति बाल्मीकियेरामायणे सुन्दरकाण्डे पंचषष्टितमः सर्गः ॥ ६५ ॥

महाराजाधिराज दशरथ के पुत्र रामचन्द्रजी लक्ष्मण सहित उस मणि को हृदय में लगाकर रोदन करने लगे। वह श्रेष्ठ मणि को देख शोक से दुःखी होकर आंख में आंसू भरे श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीव से बोले कि जैसे बछड़े को देखकर गाय का हृदय द्रवित होता है, वैसेही इस मणि को देखकर हमारा हृदय द्रवित होता है। क्योंकि यह मणि हमारे श्वसुर जनकजी ने विवाह के समय जानकीजी को दिया था, सीताजी इस मणि को बहुधा अपने शिरपर धारण करती थीं। यह परम पूजित मणि समुद्र से उत्पन्न हुआ था, इस मणि को यज्ञ में सन्तुष्ट हो इन्द्र देवता ने हमारे श्वसुर को दिया था। हे सौम्य! यह मणि देखकर हमको पिताजी का तथा जनकजी का भी स्मरण आगया है प्राण

प्रिया के दर्शन का सुख मिलता है। इसके बाद रामचन्द्रजी हनुमानजी से बोले, हे सौम्य! फिर सीताजी के वृत्तान्त को कहो, मृतक मनुष्य के ऊपर बचन रूप अमृत को सींचती हुई वैदेही ने क्या कहा है। हे लक्ष्मण! बिना वैदेही को आये इस जल से उत्पन्न इस मणि को देखते हैं तो इस से अधिक कौन दुख होगा जो एक मास प्राण को धारण करेंगी तो वैदेही बहुत दिनों तक जीवेंगी। हे वीर! परन्तु श्याम नयनी के बिना हम क्षण भर भी नहीं जीवन को रख सकते। हे वीर! जहां हमारी प्रिया हैं वहां हीं हमको पहुचाओ, क्योंकि समाचार पाकर क्षण भर भी हम यहां नहीं ठहर सकते। भला अति डराकू पतिव्रता शिरोमणि हमारी प्राण प्रिया भय कराने वाले राक्षसों के बीच में कैसे रहती होंगी। हे हनुमान! सीताजी ने क्या कहा है सत्य सत्य कहो, हम इस दुःख से ऐसे जीवेंगे जैसे औषधको खाकर दुःख से रोगी जीता है। हमारे बिना वह कैसे जीती होंगी॥

इति बाल्मीकिये रामायणे सुन्दर काण्डे षटष्ठित सर्गः ॥ ६६ ॥

इस प्रकार रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर हनुमानजी ने फिर भी सीताजी के वृत्तान्त को कहने लगे, कि हे पुरुषसिंह! जानकी जी ने अपना पूर्वका यही वृत्तान्त बताया है कि वे चित्र कूटपर तुम्हारे साथ सुख पूर्वक सोकर पहिले उठी थीं, तब एक काकने उड़कर उनके स्तनों के बीच में घाव कर दिया था, परन्तु हे रामचन्द्रजी! आप तो जानकी के गोद में सो गये थे, तब फिर आकर स्तनों के बीच में चोंचमारी। जब उसने पुनः आकर घाव किया तो तुम उन जानकीजी के रुधिर को लगने से जाग उठे। सो भी हे परन्तप! आपतो निधड़क सोगये थे, जब उस काकने बार बार सीताजी को पीड़ित किया तो देवी सीता जीने आपको जगाया! हे महाबाहु! आप निद्रासे उचट कर उनके स्तनों के बीच में रुधिर बहते देखकर आप काले सर्प के समान क्रोधित होकर बोले, कि हे प्रिये! तुम्हारे स्तनों के बीच में किसने पंजामारा

है, वह कौन है जो पांच मुह सर्प के साथ खेल करता है। यह कह आपने चारो ओर देखा, तब पवन के समान चलने वाला पक्षियों में श्रेष्ठ वायस इन्द्रजी का पुत्र शीघ्रतासे भूतल आया था। हे रामजी! तब आपने कोप से भौंह को चढाकर इस कौवे के विषय में बड़ी कठिन बुद्धि किये, कि अपने कुशासन मेसे एक कुश निकाल उससे ब्रह्मास्त्र से संयुक्त किया, तब वह कुशाहु जलकर आगके समान उश कागके सामने जलने लगा। तब उस जलते दुए कुशको आपने उस वायस के ऊपर फेंका, तब वह कुशज लता हुआ उसके पीछे २ चला। वह काक सब देवताओं के पास अपनी रक्षा चाहने के लिये गया परन्तु सब देवताओं ने डर से उस कागकी रक्षा नहीं किये। अपनी रक्षा चाहने के लिये वह काग तीनों लोक में घूमा परन्तु उसकी रक्षा करने वाला कोई न था। तब वह काग आपके निकट आया उसे आपने अपने शरण में आया जानकर वधकरने के योग्य उस कागपर आपने अपनी कृपा से उस की रक्षा किये, परन्तु उस अस्त्रको विफल न जानकर उस कागका दहिना आंख फोड़ दिया, तब वह बायस आपको और महाराज दशरथ को प्रणाम करके तुम्हारी आज्ञा से फिर अपने स्थान को चला गया, सो इस तरह अस्त्र शस्त्र जानने वालों में सत्य वादी शीलवान आप राक्षसों के ऊपर अस्त्र क्यों नहीं छोड़ते। हे रामचन्द्रजी! रण में दानव दैत्य देवता गंधर्व तुमारे सामने खड़े नहीं हो सकते हैं और न तुमको लौटा सकते हैं। सीताजीने कहा है कि पराक्रमी रामचन्द्रजी जो हमारा आदर करते होंतो अपने तीखे बाणों से समर में परिवार सहित रावण को मारकर इस बन्दी से हमे छुड़ाइये। वायु और अग्नि के समान पराक्रमी शत्रुओं को नाश करने में समर्थ रामचन्द्रजी हमारी रक्षा क्यों नहीं करते! हम जानती हैं हमारा कुछ बड़ा भारी संचित पार है, इस में कुछ सन्देह नहीं। इस प्रकार करुणा पूर्वक सीताजी ने कहा है। तब हम राजेश्वरी से यह बचन बोले कि हे देवि! रामचन्द्रजी तुमारा यहां का वास नहीं जानते हैं यह हम

सत्य का शपथ खाकर कहते हैं कि रामचन्द्रजी के शोक से लक्ष्मणजी परितप्त रहते हैं, अब आप किसी तरह से देखपड़ी हो यह समय शोक करने का नहीं है। हे भामिनि! इस मुहूर्त को दुःख का अन्त समझो तुमको देखने के लिये लंका को भस्म कर डालैंगे और युद्ध में सपरिवार घोर रावण को मार डालैंगे, हे सीते! तुम्हारा समाचार पातेही रामचन्द्रजी शीघ्र अपनी पुरी को अवश्य लेजावेंगे, अब कोई ऐसा चिन्ह हमको दीजिये जिसको देखने से रामचन्द्रजी प्रसन्नहों और विश्वास करें। तब उन्होंने अपने केश में से खोलकर इस उत्तम मणि को दिया, हम दोनों हाथ से उस मणि को लेकर आप को दिखाने के लिये अपने पास रख लिया और सीताजी को साष्टांग दण्डवत करके चलने को तइयार हुए, हमको चलने में उद्यत देखकर आंसू को बहाती हुई सीताजी गद्गद बाणी से बोलीं, हे महाबीर तुम बड़े भाग्यवानहो। जो कमल नयन रामचन्द्रजी को और महा यशस्वी हमारे देवर लक्ष्मणजी को देखते हो, जब सीताजी ने हमसे ऐसा कहा तो हमभी जानकीजी से बोले, हे जनक नन्दिनी! तुम शीघ्र हमारे पीठ पर चढ़ो, हम तुमको लक्ष्मण व सुग्रीव सहित रामचन्द्रजी का शीघ्र दर्शन करावें। इस प्रकार हमारे बचन को सुनकर सीताजी बोलीं कि हे महाकपि! हम पतिब्रता हैं दूसरे पुरुष को स्पर्श नहीं कर सक्तीं हैं। जो कहो कि हरण के समय में रावण ने स्पर्श किया था तो उस समय हम पराये बश में थीं क्या कर सकती हैं, हे बानर सत्तम! जहां वे दोनों राजकुमार हैं वहां जावो और हमारा वृत्तान्त कह देना, और सिंह के समान पराक्रमी रामचन्द्र व लक्ष्मण तथा सुग्रीव से कुशल कह देना, हे बीर! जिस प्रकार रामचन्द्रजी दुःख सागर में डूबती हमको पार उतारें तुम वैसाही उनसे कहना। हे बानर! तुम्हारा मार्ग कल्याणकारी हो, यह हमारा कठोर शोक और राक्षसों के अपकार पूर्वक रामचन्द्रजी से कह देना। हे राजन्! इन्द्रियोंको अपने बशमें किये सीताजी ने विषादयुक्त

जो कहा है, उसको सत्य जानकर हमारे कहने में विश्वास करो और सीताजी को कुशल जानो।

इति वाल्मीकीये रामायणे सुन्दरकाण्डे सप्तषष्टितमः सर्गः ॥ ६७ ॥

हे रामचन्द्रजी! तुम्हारे स्नेह व सौहार्द से अनुमान करके जानकीजी ने फिर भी हमसे कहा, कि इस प्रकार रामचन्द्रजी से कहना जिसमें रावण को समर में मारकर शीघ्र हमको ले चलें। हे बीर! यदि हमारे बचन को मानो तो किसी गुप्त स्थान में आज दिन यहां सुस्ताकर प्रातःकाल चले जाना, तुमको क्षण भर भी यहां रहने से हमारा शोक हमको छोड़ दिया है। तुम्हारे चले जानेपर फिर यह हमारे प्राण आने तक रहैं इसमें सन्देह है। क्योंकि तुमको न देखने से जो भय होगा वह दुःख से अति दुःख को प्राप्त होकर हम दुःख भागिनी को अति शोकित करेगा। हे बीर! हमको यह बड़ा भारी सन्देह है कि तुम्हारे सहायक बानर भालु इस अपार समुद्र को लांघकर किस प्रकार आवेंगे। वे दोनों सुकुमार राजकुमार इस समुद्रको कैसेलाघैंगे। इस समुद्र को लांघनेकी शक्ति तो तीनही में है। गरुड़ में, पवन में और तुम्हारे में है। तो तुम बताओ कि इस कठिन कार्य को करने में क्या बिचार करते हो। यद्यपि इस कार्य को करने में तुम अकेलेही समर्थ हो, क्योंकि तुम्हारे पराक्रम उदय और बीरों के बल का नाशक है। इसी से महायशस्वी हो। जो सेना सहित रामचन्द्रजी यहां आकर संग्राम में परिवार सहित रावण को मारकर हमको यहां से अपने पुरी को ले चलें तो उनका यश हो। जिस प्रकार रामचन्द्रजी के भय से छिपकर यह रावण हमको लाया है उस प्रकार रावणके भयसे तुम्हारे संग हमारा छिपकर जाना रामचन्द्रजीके योग्य नहीं है। रामचन्द्रजी के योग्य तभी होगा जब अपने पराक्रम से राक्षसों को मारकर हमको अपनी पुरी को ले जायंगे। इस प्रकार नम्रता युक्त सीताजी के बचन को सुनकर हमने उत्तर दिया कि बानर भालुओं की सेना के स्वामी बानर श्रेष्ठ सुग्रीवजी ने निश्चय कर लिया है, उनके आज्ञा के अनुसार काम करने वाले अनेक पराक्रमी व बलवान् बानर हैं। जिनकी गति

सब जगह में है, वे बानर लोग समुद्र को लांघकर कई बार पृथिवी की प्रदक्षिणा किये हैं। हमारे समान व हमसे बलवान् बानर सुग्रीव के समीप हैं। जब यहां समुद्र को लांघकर हमी चले आये तो दूसरों को कहनाही क्या है। समाचार कहने सुनने के लिये सदा छोटेही भेजे जाते हैं। इससे आप विषाद न करें सब बानर एक छलांग में लंकापुरी को आवैंगे, सूर्य चन्द्र के समान रामचन्द्र व लक्ष्मण को सुग्रीव आदि बानरों के सहित शीघ्र देखोगी। आपके वियोगरूपी दुःख से पीड़ित दीन भाषिणी सीताजी हमारे समझाने से कुछ शान्त हुई हैं।

इति वाल्मीकीये रामायणे सुन्दरकाण्डे अष्टषष्ठितमः सर्गः ॥ ६८ ॥

❀ इति सुन्दरकाण्ड समाप्तम् ❀



श्रीगणेशाय नमः ।

युद्धकाण्ड प्रारम्भः

मङ्गलम् ।

युद्धे रक्षोगणान् हत्वा पुष्पकेण निजां पुरीम् ।
सीतया सह चागत्य रेजे रामोभिषेचतः ॥

दोहा-विघ्न हरण पद पंकज, निजमन भूमर बसाय ।
राम चरित आरम्भियत, सोऊ बहुत सहाय ॥

छप्पै ।

शरद कमल लोचन विशाल अलिमाल अलिक जनु ।
सजल सघन घन द्युति शरोखन माल इन्द्र धनु ॥
कोटि मदन छवि रवि प्रकाश लावण्य सुभग तनु ।
भुव मण्डल अवतंस चरण सेवत सुर मुनि जन ॥
आजानु बाहु सारंग धर अधम उधारन विपतिहर ।
कविराम प्रगट रघुबंश मणि येई सीतापति रामवर ॥

यथातथ्य से हनुमानजी के बचन को सुनकर प्रीति पूर्वक प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्रजी बोले, कि इस पृथिवी में हनुमानजी ने दुर्लभ कर्म को किया है कि जिस काम को दूसरे बीर मन से भी अनुमान नहीं कर सकते हैं गरुड़ वायु और हनुमान को छोड़ कर और किसमें सामर्थ्य है कि जो इस अपार समुद्र को लांघ कर लंकापुरी में प्रवेश करे । जिस लंकापुरी में रावण के प्रताप से और राक्षसों के भय से देवता दैत्य गन्धर्व यक्ष किन्नर विद्याधर ऋषि मुनि आदि प्रवेश नहीं कर सकते हैं वहां सुग्रीव की आज्ञा को पालन करने के लिये हनुमानजी जाकर सीताजी का खोज किया, इस लोक में कौन ऐसा पुरुष है जो राक्षसों से पालित लंकापुरी में प्रवेश

करके जीता हुआ फिर स्वामी के पास तक आवे। हनुमान के समान बलवान पराक्रमी ऐसा कोई सुग्रीव का सेवक नहीं है जो सुग्रीव के समान स्वामी का कार्य करे और सेवकों में उत्तम वही पुरुष कहा जाता है जो स्वामी की आज्ञा को पाकर उसकी आज्ञानुसार कार्य का साधन करे। सेवकों में मध्यम वह है जो स्वामी के कहे अनुसार केवल सन्देशा को कह देता है कार्य की सिद्धि को नहीं देखता। सेवकों में नीच वह कहा जाता है जो कार्य करने की सामर्थ्य को रख कर भी स्वामी के कार्य को सम्पादन नहीं करता है। ऐसे कठिन कार्य में नियुक्त किये गये हनुमान तो अपने नीचता को प्राप्त हुए, वरना कार्य की सिद्धि करके बानरों के राजा सुग्रीव को प्रसन्न किया हमको और महाबल लक्ष्मणजी को वैदेही के दर्शन से सन्तुष्ट कर दिया है। इस समय हमको सीता के समाचार को सुनने का जो आनन्द हुआ उससे बढ़ कर यह विषाद होता है कि हनुमानजी के इस प्रिय उपकार के बदले हम इनका कुछ भी उपकार नहीं कर सकेंगे क्योंकि उपकारी के बदले में जो प्रत्युपकार होता है उसमें स्वामी की श्रेष्ठता होती है परन्तु हनुमानजी के इस कार्य करने के बदले हम कोई इसके योग्य उपकार नहीं कर सकेंगे। यह हनुमान सकल चराचर जीवों के पूजा करने योग्य हैं और हमारा हृदय हैं तथापि हमारे भक्तों में यह श्रेष्ठ हैं, संसार में जो लोग इनकी पूजा व भक्ति करेंगे उन लोगों को हमारी भक्ति सेवा करने का फल होगा। जहां हनुमानजी की पूजा व स्तुति होगी वहां सब तीर्थ व देवता तथा नदियां बास करेंगी, ऐसा कह कर प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्रजी हनुमानजी को अपने हृदय से लगाया और ध्यान स्थित होकर श्री रामचन्द्रजी हनुमान व बानरों के राजा सुग्रीवजी से बोले कि सब प्रकार से आप लोगों ने सीताजी की खोज तो किया, परन्तु दुष्पार समुद्र के प्रताप को स्मरण करके हमको चिन्ता होती है कि जल की राशि से सम्पन्न दुष्पार समुद्र के पार यह बानर भालुओं

की सेना किस प्रकार उतरैगी । यदि जानकीजी का यह वृत्तान्त है कि एक मास तक वह अपने जीवन को शोक से धारण करैंगी, इधर एक मास के भीतर वानरों की सेना किस प्रकार रावण से पाली लंकापुरी में समुद्र को लांघ कर पहुंचेगी । यह कह कर शोक से आकुल रामचन्द्रजी व्याकुल हो गये, तब महाबाहु हनुमान और सुग्रीव वानरों की सेना को पार उतारने का उपाय सोचने लगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे लंकाकाण्डे प्रथमो सर्गः ॥ १ ॥

महाराज दशरथ के पुत्र श्रीरामचन्द्रजीको शोक युक्त देखकर शोक को नाश करने वाले सुग्रीवजी बोले, हे बीर! साधारण लोक के समान आप क्या परिताप करते हैं, आपके समान धीर पुरुष को शोक सन्ताप करना उचित नहीं है, आपशोक को इसप्रकार छोड़िये, जैसे कृतघ्न की मित्रता छूट जाती है। शत्रु के स्थान पर पहुँचने का उपाय करने के लिये आपको इसप्रकार सन्ताप करना उचित नहीं है। आप बुद्धिमानों में श्रेष्ठ वेद शास्त्र को जानने वाले न्याय अन्याय धर्म अधर्मको जानने वाले हैं, आप अपनी आत्मा को दूषित करने वाली इस प्राकृत बुद्धि का त्याग कीजिये। बड़े बड़े मत्स्य कच्छ मगर आदि जलचर जन्तुओं से व्याकुल समुद्रको लांघकर लंकापुरी में जाकर परिवार समेत तुमारे शत्रु का अकेले ही नाश कर सकते हैं । जिसका उत्साह नष्ट होजाता है वह शोकसे अपनी आत्माको पीडित किया करता है, वह सदा अपने शत्रुओं से पराजित होकर दुःखी होता है । तुम्हारे सहायक यह बलवान वानरों की सेना आपके कार्यको करने की उत्साह पूर्वक इच्छा रखते हैं, आपके कार्य के लिये यह बलवान वानर अग्निमें प्रवेश कर सकते हैं, लंका में पहुंचना इनके लिये कठिन नहीं है। यह हमको दृढ विश्वास है कि यह वीर प्रसन्नता से लंकापुरी में पहुंच कर रावण की पुरी को विध्वंस करडालेंगे और अपने पराक्रम से रावण को मारकर सीताजी को लाकर आपको सौंपदेवगे। हे रामजी! इस समुद्र में सेतुबांधकर अपनी सेना सहित सागर को पार करके शत्रुकी पुरी को देखिये, वह लंकापुरी त्रिकूट पर्वत के शिखर

पर स्थित है उस शत्रुकी पुरी को देख कर युद्ध में रावण का नाश कीजिये। बिना समुद्र में सेतुको बांधे इन्द्रादिक देवता भी अपनी सेना लेकर लंकापुरी में प्रवेश नहीं कर सकते हैं, और जब उस पुरी के समीप तक सेतु को बांधैगे तो हमारी बानर भालुओं की सेना सुख पूर्वक उतर चलेगी। हे राजन्! सकल अर्थको नाश करने वाली बुद्धिको शोकके वशमें न कीजिये, यह मनुष्य के समान अपने सामर्थ्यको हीन जानकर शोक करना आपके लिये योग्य नहीं है, आपके समान शूर बीर महात्मा कार्य के विषय में अपने बल व तेज को नाश नहीं करते, क्योंकि शोक करने से कार्य की सिद्धी नहीं होती है। बुद्धिमानों में श्रेष्ठ शास्त्र के तत्वको जानने वाले हमारे समान मन्त्रियों के संगमें, आप अपने शत्रुको जीतने में समर्थ हो। हे रामजी! हम तीनों लोकमें किसीको ऐसी सामर्थ्य नहीं देखते जो धनुष बाण को धारण किये आपके सामने युद्ध में ठहर सके। यह बीरों की सेना लंकापुरी में चलकर आपके शत्रु को अवश्य जीतैगी और आप शीघ्र सीताजी को प्राप्त कीजियेगा। इसलिये हे राजन! शोकको छोड़कर क्रोध का अवलंब करिये क्योंकि क्रोध से हीन क्षत्रिय रण में शत्रु को पराजय नहीं कर सकता है। हे भगवन्! अब इन बीर बानरों के संग समुद्र पार होने की उपाय सोचिये। सेना जो समुद्र के पार पहुंच गई तो निश्चय आप रावण का नाश जानिये, क्योंकि कामरूपी बलवान बानर पर्वत वृक्षों को उखाड़ कर उनकी वर्षा से अवश्य आपके शत्रु का नाश करैंगे। हे शत्रुओं को नाश करनेवाले रामजी! जिस किसी उपाय से हो सेना समुद्र के पार जावे। हे रामजी! बहुत क्या कहैं हमारा हृदय इतना प्रसन्न है कि जिसका ठेकाना नहीं है आप चिन्ता न करें, युद्ध में शत्रु के संमुख आपका बिजय अवश्य होगा।

इति बाल्मीकीये रामायणे लंकाकाण्डे द्वितीयः सर्गः॥ २॥

सुग्रीव के सुन्दर बचन को अंगीकार करके श्रीरामचंद्रजी हनुमानजी से बोले, हे बानर संकल्प मात्र से हम अपने बाण से इसको सुखा सकते हैं, अथवा इसमें सेतु को बांध सकते हैं। हम सब

प्रकार से इस समुद्र को लांघने में समर्थ हैं यह बताइये कि सौ योजन के सागर में लंकापुरी की रक्षा करनेवाले कितने दुर्ग कितने बन पर्वत हैं। उसको हम जानना चाहते हैं कि कितने दुर्ग कितने प्रकार हैं कितने यन्त्र आदि हैं और कितने बलवान राक्षसों के भवन हैं इसको विस्तार से कहिये जिसमें हमारी सेना सुख पूर्वक शत्रु की पुरी में पहुँच जावे। श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर वायु के पुत्र हनुमानजी फिर भी रामचन्द्रजी से बोले, कि हे राजन्! राक्षसराज रावण के दुर्ग कर्म को सुनिये मैं जैसा देखे हैं वैसा कहते हैं और जिस प्रकार राक्षस लोग लंकापुरी की रक्षा करते हैं वह हम कहते हैं। रावण के तेज से वह पुरी जिस प्रकार की समृद्धि को धारण किये हैं और उसके चारो ओर जो समुद्र रक्षा करता है और उस पुरी में जहां २ सैनिकों के रहने का स्थान है वह सब आकय से कहते हैं। ऐसा कह कर बानरों में श्रेष्ठ हनुमानजी श्रीरामचन्द्रजी से लंकापुरी का किञ्चित वर्णन करने लगे कि उस लंकापुरी में बड़े बड़े चार फाटक हैं उनमें एक २ फाटक पर असंख्य विशाल व मतवाली हाथी तथा बड़े बड़े पराक्रमी अनेक रंग के रथ और पैदल लड़नेवाले योधाओं से वह स्थान परिपूर्ण है और उन द्वारों पर अनेक प्रकार के बाण और पत्थलों की चट्टानें और बड़े बड़े परिघ अनेक प्रकार यन्त्र रखे हैं। इसके बाद शतघ्नी [तोप] को लेकर सैकड़ों बीर उस दुवार की रक्षा करते हैं और मुक्ता पद्मराग विद्रुम आदि मणियों से रचित सोने के बड़े बड़े प्राकार हैं, उस प्राकार के चारो ओर ऐसी खाई है जिसमें अमोघ जल भरा है और अनेक प्रकार के भय देनेवाले जलचर जन्तु उसमें निवास करते हैं। उन चारो फाटक पर बड़े बड़े मचान बँधे हैं, उन पर अनेक प्रकार के विशाल यन्त्र लगे हैं, उस प्रकार से राक्षसों के बड़े बड़े सुन्दर मनोहर भवन हैं। उन मचानों में एक बीच का मुख्य मचान है जिस पर यन्त्र लगा है, उस मचान की रक्षा बड़े बड़े शूरवीर राक्षस करते

हैं, बाहरी सेनाओं के प्रवेश करने के समय राक्षस लोग उसी मचान से और चहर दीवारों पर चढ़ कर अस्त्र बर्षा करते हैं इस प्रकार का रावण का नगर है, उस नगर के मध्य में सोने के खम्भ से संयुक्त तथा रत्न जटित वेदिकाओं से भूषित स्वर्णमय पुरी में श्रीरामचन्द्रजी से लड़ने की इच्छा करनेवाला अति धीर गम्भीर रावण रहता है और वह रावण अपनी सेनाओं को संग्रह करने में अत्यन्त सावधान है। लंकापुरी अति दुर्गम स्थान है, वह लंकापुरी की किला प्रवेश करने के समय देवताओं को भय देनेवाली है। वह रावण की लंकापुरी त्रिकूट पर्वत के ऊपर है और उस पर्वत के चारो ओर अथाह जल को धारण करनेवाली नदियां बहती हैं और उस पुरी के चारो ओर बड़े बड़े प्राकार [चहर दीवार] बने हैं, उसके बाद बड़े बड़े मचानों पर यन्त्र लगे हैं पर्वत से नदी से प्राकार और मचान तथा यन्त्र से युक्त रावण के चार प्रकार के दुर्ग हैं। हे रामचन्द्रजी ! अपार समुद्र के उस पार में लंकापुरी है वहां नौका आदि की भी गति नहीं है, इन्द्र की देवपुरी के समान हाथी घोड़ा से संयुक्त पर्वत के शिखर पर रावण की लंकापुरी है, वह लंकापुरी खाई से तोप से तथा अनेकप्रकार के अस्त्र शस्त्र को धारण करने से दुरात्मा रावण की लंकापुरी सोभायमान हो रही है। उस पुरी के पूर्व द्वार पर खड्ग शूल तथा अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र को धारण करनेवाले महा बलवान दशहजार राक्षस उसकी रक्षा करते हैं, उसी प्राकार अनेक अस्त्र शस्त्र को धारण करनेवाले चतुरंग सेना लेकर एक लाख महाभट दक्षिण द्वार की रक्षा करते हैं वैसेही सकल अस्त्र शस्त्र को जाननेवाले दश लाख राक्षस पश्चिम द्वार की रक्षा करते हैं, इसके बाद परम्परा से रावण की सेना में कार्य करने वाले रावण के मन्त्रियों के पुत्र एक अर्ब सेना लेकर उस पुरी के उत्तर द्वारकी रक्षा करते हैं। फिर बीच के स्थान में एक करोड़ दश लाख राक्षसों की सेना हाथी घोड़ा रथ पैदल आदि से रहती है। सो अकेले हमने उन

मचानों को तोड़ डाले, जल से युक्त खाईं को पत्थलों से पूरा कर दिया, और प्राकार को तोड़कर विध्वंस करके लंका पुरी को जला दिये और बलवान अनेक राक्षसोंकी सेना को मारकर रावण से भेंट किये, हे महाराज! जिस किसी मार्ग से होये बानर समुद्र को पार करके लंकापुरी में पहुंचकर राक्षसों से युद्ध करें इस विषय में ऐसाही निश्चय कीजिये। क्योंकि अंगद द्विविद मैंद जाम्बवान् पनस नल सेनापति नील इन्ही लोगों से आपका कार्य हो जायगा, अधिक सेनाओं से क्या, यही बानर समुद्रको पार करके लंकापुरी को विध्वंस करके सीताको लाय देंगे। इन बानरों को लंकापुरी की यात्रा करने के लिये मुहूर्त भरमें प्रस्थान की आज्ञा दीजिये ॥

वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥

यथाक्रम से हनुमानजी के बचन को सुनकर महापराक्रमी रामचन्द्रजी बोले, हे हनुमान! अंगद आदि बीरों से कार्य की सिद्धि हम नहीं जानकर सन्देह किया था, परन्तु जो तुमने कहा कि राक्षसों की पुरी को शीघ्र नाश कर सकता हूं, तुमारे इस सत्य बचन से हमको बिश्वास हुआ कि आपकी शक्ति राक्षसों को नाश करने के योग्य है, तौभी तुमसे अपनी सम्मति को कहता हूं कि यह मध्यान्हका समय है अर्थात विजयको देने वाला अभिजिद्नाम का मुहूर्त इस समय बर्तमान है इस सुन्दर मुहूर्तमें राक्षसोंके जीतने के लिये सुग्रीवकी यात्रा होनी चाहिये, क्योंकि इस यात्रा में बिलम्ब करना उचित नहीं है, वह राक्षस सीताकोहरण करके सुखपूर्वक अपने देशको चला गया है, फिर भी वह जीता है, अपने जीवनको लेकर वह कहां जायगा, सीताजी भी हमारे आगमन की आशा से अपने प्राणको अभीतक धारण किये हैं, इस समय हमारे तारा चन्द्रमा भी बलवानहैं, क्योंकि आज उत्तराफल्गुनी है कल हस्त होगा, तो पुनर्वसु नक्षत्रमें उत्पन्न पुरुषको हस्त बध तारा है, और उत्तराफल्गुनी सीताजी की जन्मतारा है, तो बद्धतारा को जन्मतारा में सीताजी को बन्दीसे

छुड़ाने के लिये अवश्य यात्रा करना चाहिये। इसलिये सुग्रीव अपनी सेना लेकर यात्रा करें, इस समय प्रगट हुए अनेक प्रकार के शुभ शकुनको देखते हैं, जिस शकुनसे रावणको मारकर शीघ्रही जानकी जी को लाभ करेंगे। हमारे दक्षिण नयन तथा अंग फरकते हैं मानो हमारे विजयसिद्धि को कह रहे हैं। इतना कहने के बाद सुग्रीव व लक्ष्मणजी से सुपूनित परिणामको जानने वाले धर्मात्मा रामचन्द्रजी फिर से बोले,—कि अत्यन्त पराक्रमी व बलवान हजारों बानरों को संग लेकर खाली ऊंची भूमिको बराबर करते हुए आगे आगे नील ऐसे मार्गसे चलें जिस मार्ग में सुन्दर मधुर और ठंढा जल तथा अनेक प्रकारके फल मूल सेनाको खाने पीनेके लिये मिले, ऐसे मार्ग से सेनापति नील सेनाको लेकर चलें। और जिस जगह मार्ग में विघ्न करने वाले राक्षस आदि फल मूल तथा जल आदिको दूषित किये हों वहां सावधान होकर सेना चले। जहां जंगली जन्तु बनमें घोर निवास करते हैं अथवा जहां कन्दरा आदि में शत्रुओंका स्थान है, उनको भली भांति देखते हुए मार्गमें सेना चले। और इन बानर में जो वृद्ध हैं बालक हैं लड़ने में असमर्थ हैं उनको किष्किन्धापुरी की रक्षा करने के लिये यहां छोड़ दीजिये। इस प्रकार हम लोगों को कार्य करना चाहिये, और बलवान हैं उनको सेनामें नियुक्त कीजिये। इसके उपरान्त पर्वतके समान विशाल गज तथा महाबलवान गवय गवाक्ष आदि बानर सेनाकी रक्षा करते हुए सेनाके दक्षिण भागमें चलें। गंधहस्त और गंधमादन आदि बानर सेनाकी बायीं ओर रक्षा करते हुए चलें, इसके मध्यमें ऐरावत हाथीके समान हनुमानके सहित हम चलेंगे। इसके बाद हमारे पीछे अंगदके सहित यमराजके समान लक्ष्मणजी चलेंगे, जैसे यक्षलोगों के मध्यमें कुबेरजी चलतेहैं महाबली जांबवान सुषेण तथा सुग्रीव ये तीन बानर सेनाको सावधान करते और साहसको देते हुए चारो ओर सेनाकी रक्षा करें, रामचन्द्र जीकी ऐसी आज्ञाको सुनकर सुग्रीवजी बानरों में श्रेष्ठ महापराक्रमी

सेनापति नीलको आज्ञादिये कि सेनाको चलनेके लिये तइयार करो। सुग्रीवकी आज्ञाको पाकर सेनापति नील पर्वतों पर पर्वतकी गुहा कन्दरा खोह नदी झरना और पेड़ों पर जहां तक बानर रहें उन सब को एकत्र करके सुग्रीव व लक्ष्मण से पूजित धर्मात्मा रामचन्द्रजी असंख्य बानर भालुओं की सेनाको लेकर दक्षिण दिशा को चले, सुग्रीवसे पालित बानर भालुओंकी बड़ी भारीसेनाको देखकर सब देवता ऋषिमुनि सिद्ध चारण गंधर्व विद्याधर अप्सरा आदि आकाशसे पुष्प-वर्षाकरने लगे, दुन्दुभी बजाकर श्रीरामजी की स्तुति व जय जय ध्वनि करने लगे । इधर सेनाकी रक्षा करने वाले बानरगण कूदते फलांगते गर्जना करते प्रसन्नता के मारे अपने अपने अंगसे धक्का को लेते और बनके सुन्दर फल मूलको खाते तथा सुमधुर जलको पीते, रामचन्द्रजीके समीपमें इस प्रकार कहते हुए कि राक्षसों के सहित रावणको युद्धमें मारेंगें ऐसा कहते बानर भालुओं की सेना दक्षिण दिशाकी ओर चली,—ऋषभ, कुमुद, और सेनापति नील अनेक बानरों को लेकर सेनाको चलने के लिये मार्ग निर्माण करने लगे। उस सेनाके मध्यमें सुग्रीव और लक्ष्मणके सहित रामचन्द्रजी चले। दश करोड़ बानरों की सेनाको लेकर महाबीर शतबलि नामके बानर अपनी सेनाको अपने अधीन में किये और उसकी रक्षा करने लगे। पनस और गज नामके बानर दो दो अरब बानरों की सेनाके दोनों ओर चलते और रक्षा करते थे। सुषेण और जाम्बवान असंख्य भालु-ओं की सेनाको लेकर सुग्रीवको आगे करके अपनी सेनाको संभालते हुए लंकापुरीको चले। उन सेनाकी रखवारी और उन सैनिकों को अपने अधीन में तथा सावधानता से चलने की अनुमति बानरों में श्रेष्ठ महात्मा सेनापति नील करते थे। बलिमुख प्रजंघ जंभ महाबीर रभस यह बलवान बानर वेग व पराक्रम युक्त सैनिक बानरों को साहस और धैर्यदेते थे। बलके अभिमान से प्रमत्तबानरों की सेना चलती हुई सायंकाल में हजारो शिखरको धारण करने वाले सह्यनाम

पर्वतको देखा, उस पर्वत पर अनेक प्रकार के वन उपवन लगे हैं, उसमें सब काल में फल पुष्प देने वाले वृक्ष लगे हैं, अनेक रंगकी पक्षियां वृक्षोंकी डालियों पर बैठकर मीठे २ बचनको बोलते हैं, अनेक प्रकार के स्वादिष्ट जलको धारण करने वाले कितने जलाशय बने हैं, उस पर्वतकी कन्दराओंमें हाथियों का निवास रहता है। इस प्रकार उत्तम सब तरह की सामग्री से युक्त पर्वतको देखकर बानरों लोग वहां रात्रिकाल में विश्राम किये। तब सेनापति नील और जांबवान रक्षा युक्त उसह्य पर्वत पर बिश्राम करके आगे चलने की चेष्टा किये, उनकी इच्छा वे बलवान बानरों की सह्य पर्वत के बनको लाँघकर समुद्र के तरंग के समान कल्लोल और गर्जना करते हुए आगे को चले। जैसे ग्रहोंके बीचमें सूर्य चन्द्रमाकी शोभा होती है वैसेही बानरोंके मध्यमें सत्यप्रतिज्ञ शत्रुओं को नाश करनेवाले रामचन्द्र तथा लक्ष्मणजी की शोभा होने लगी। सुग्रीव तथा लक्ष्मणजी से पूजा किये गये धर्मात्मा रामचन्द्रजी बानर भालुओं की सेना से युक्त होकर राक्षसों का नाश करने के लिये दक्षिण दिशाको आक्रमण किये जैसे सायंकाल में सूर्य भगवान अस्ताचल पर्वतका आश्रय लेते हैं। इसके बाद श्रीरामजी के संगमें वर्तमान महाबली अंगदजी श्रीरामचन्द्रजी से बोले,--हेभगवान्! शीघ्र हम लोग युद्धमें रावणको मारकर हरी हुई सीताको ल्याय करके अयोध्यापुरी को पहुंचेंगे, क्योंकि पृथिवी और आकाश में अनेक प्रकार के शुभशकुन दिखाई पड़ते हैं। आपके कार्य की सिद्धि करने वाले बानरों की सेनाके लिये पर्वतों से सुमधुर जल गिरता है, वृक्षों में अनेक प्रकारके पुष्पफल लगे दीख पड़ते हैं। वृक्षों की शाखाओं पर बैठकर पक्षियां आपके यशको गान करती हैं, सैनिकों के थकावट को दूर करने के लिये शीतलमन्द सुगन्धवायु चलता है। सूर्यका प्रकाश अत्यन्त उज्वल होगया है। दिशायें प्रसन्न मालूम होती हैं, मृगा लोग आपके दक्षिणभागमें गमन कर रहे हैं। भृगुके पुत्र शुक्र भी तुमारे पृष्टके तरफ हैं, आकाशमें तारागण निर्मल

होकर वर्तमान हैं, सप्तऋषियों का मण्डल अत्यन्त प्रकाश मान होकर ध्रुव मण्डल की प्रदक्षिणा करते हैं। भगवान विश्वामित्रजी के समीप ध्रुवमण्डल व सप्तर्षि मण्डल के मध्य में वसिष्ठ के सहित राजर्षि त्रिशंकु दक्षिण दिशा में गमन करने वाले श्रीरामचन्द्रजी को देखते हैं। इक्ष्वाकु बंश के कुलनक्षत्र निर्मल आकाश में मंगल आदि दुष्टग्रहों के आक्रमण से रहित होकर प्रकाशित हैं। नैऋत्यकोण में मूल देवता अत्यन्त पीड़ाको पहुंच रहे हैं। क्योंकि बड़े भारी दण्डके समान जब मूल देवता उदय होता है तब धूम्रकेतु तारा से स्पर्श होजाने के कारण अत्यन्त सन्ताप को पाते हैं। इस धूमकेतु तारा से पीड़ित मूल तारा का उदय राक्षसों के विनाश के लिये उपस्थित हुआ है, जैसे तारकासुर के संग्राममें स्वामि कार्तिक के संग देवता का उत्साह बढ़ता जाता है। हे रामचन्द्रजी! इस प्रकारके शकुनको देखकर आप प्रसन्न होने योग्य हैं। उस शकुनको देखने से सुप्रसन्न रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले, इतने में नख और दांतके अस्त्रको धारण करने वाले बानर भालुओं की सेनाको पगसे उड़ती हुई धूली आकाश मार्ग को आच्छादित करके सूर्यको छिपा दिया, जैसे वर्षाकाल में मेघोंसे गिरती हुई जलकी धारा बन पर्वत नदी पृथिवी आदि स्थानो को आच्छादित कर देती है वैसेही सुग्रीव से पालित बानर भालुओं की सेना समस्त पृथिवी को आच्छादित करने के समान गुहा कन्दरा नदी पर्वत बन आदि को लांघने टेढ़ी सीधी रास्ता से उस मार्गको अतिक्रमण करके एक सुन्दर बन में प्रवेश किये। वहां सकल बानरों की सेना इकट्ठी हो अपने अपने इच्छानुसार वास करने के लिये स्थानको आरोहण करने लगे। और पवनके समान पराक्रमी वे बानर रामचन्द्रजी के कार्य सिद्धि के लिये प्रसन्नता पूर्वक अपने अपने पराक्रम की बड़ाई करते हुए परस्पर में एक वीर दूसरे को देख कर प्रसन्न हो जाता था। और युवावस्था के अभिमान से प्रमत्त होकर वे बानर आपस में गर्जना व किलकिलाहट शब्द को

करके कोई पूंछ को पटकने लगे, कोई अपने पैर से पृथिवी को खोदने लगे, कोई अपनी भुजाओं से पर्वतों के शिखर को तोड़ तोड़ कर फेंकने लगे कोई वृक्षों को उखाड़ने लगे। पर्वत पर बास करने वाले कोई बानर पर्वत के शिखर पर चढ़ कर बैठे और महानाद करने लगे, कोई आपस में कल्लोल करने लगे, कोई अपने बड़े पराक्रम से लताओं के कोमल जाल को तोड़ने लगे, इस प्रकार अपने इच्छानुसार वृक्षों के फल मूल को खाकर खेल कूद सहित वे बानर एक रात्रि वहां निवास करके युद्ध की इच्छा करने वाली सुग्रीव से पालित बानरों की सेना प्रसन्नता पूर्वक सेनापति की इच्छानुसार उस बन को लांघकर आगे को चली। सेनापति नील, जांबवान, गज, गवाक्ष, गवय, शरभ गंधमादन, सुषेण आदि बानर चारो ओर से सेना की रक्षा करते और उनको सावधान करते सह्य बन को लांघ कर मलय पर्बत के बन में पहुँचे। उस बन में अनेक प्रकार के बन व उपवन बने हैं, अनेक प्रकार के नदी व झरने गिरते हैं, उस बन में चंपक तिलक आम्र, सेदुवार, तिनिस, करवीर, अशोक, करंज, पिपल, बट जामुन अमला आदि के वृक्षों को देख कर बानरगण उस बन में एक प्रहर बानरों की सेना के सहित श्री रामचन्द्र जी निवास किये, उस मलय पर्बत की शिलाओं के किनारे के वृक्ष वायु के लगने से गिरे हुए अपने पुष्पों से उन शिलाओं को भूषित कर दिया है, शीतल वायु बह रहा है, उन पुष्पों पर सुगन्ध के लोभ से भंवरे बैठकर गूंज रहे हैं। पर्वत राजा हेमालय से भी मलय पर्बत अनेक प्रकारके धातुको धारण कियेहैं उन धातु युक्त पर्वत से वायु अपने बेगसे अनेक रंग की धूली को उड़ाकर आकाशको शोभित किये हैं, इस भांति दृश्यके योग्य मलय पर्वत के बनमें बड़ी भारी बानरोंकी सेना व्याप्त होगई। और केतकी सेंदुवार बेल महुआ बंजुल बकुल बड़हर रंजक सरीफा तिलक अंगूर आम्र नारंगी कचनार अर्जुन शिंशपा कोईन हिन्ताल

अशोक देवदारू अंकोल आदि सुन्दर पुष्प से युक्त वृक्षों की छाया में बैठकर बानरों की सेना उस बनको आकुल कर दिया, जलाशयों के किनारे पर हंस कारण्डव चक्रवाक आदि पक्षी बैठकर कल्लोल करते हैं, गंध से पूर्ण मालती माधवी जूही कुन्द आदि लताओं के जाल में बैठकर भ्रमर गूंज रहे हैं मानो श्रीरामचन्द्र जी के विजया सिद्धि को कह रहे हैं । उस बन में अनेक सिंह हाथी—तथा सर्प मृगा बराहा आदि जन्तु आनन्द पूर्वक निवास करते हैं, उस बनमें बानरों की सेनायुक्त सुग्रीव अंगद व आदि बानर सुखपूर्वक फल मूलको खाकर सुन्दर जलको पीये फिर बानर के स्वभाव से वृक्षों को पर्वत की शिलाओं को तोड़ व उखाड़ कर फेकने लगे । सुग्रीव तथा लक्ष्मणके सहित रामचन्द्रजी उस मलय पर्वतके शिखर पर बैठ कर बन व शोभाको देखने लगे, इसके बाद कछुआ मछली सुईस घड़ियाल मगर आदि जलचर जन्तुओंसे पूर्ण महाभयंकर समुद्रके गर्जनेको श्रीरामचन्द्र जी सुनने लगे । उस शब्द को सुनकर रामचन्द्र जी सुग्रीव जी से बोले कि क्या हम सब लोग समुद्र के किनारे आगये हैं, यह कह कर पहिले के समान सेनाको उतरने की चिन्ता फिर भी हो गई, इस अपार समुद्रके पार बिना उपाय से सेना सहित किस प्रकार जावेंगे । अच्छा इहांही पर सेना का निवेश करके इसको समुद्र उतरने का बिचार करना चाहिये, जिस उपाय से जिसमें यह बानरों की सेना समुद्र के परम पारको पहुंचे । सीताके हरणसे दुःखित महाबाहु रामचन्द्रजी समुद्रके किनारे पर पहुंच कर वहां ठहरने के लिये सेनाको आज्ञा दिये कि हमारी यह सब सेना यहां ठहर जावे हम लोग समुद्र के किनारे पर पहुंच गये हैं अब इस बातका बिचार होना चाहिये कि जिसमें यह समग्र सेना समुद्रको पार करके लंकापुरी में पहुंचे । हमारे सेना में जितने प्रधान योधा हैं वह लोग अपनी अपनी सेनाको खाली छोड़कर कहीं न जावें, क्योंकि मायाको जानने वाले यहां अनेक राक्षस रहते हैं उन राक्षसों से हम लोगों को गूढ़ भय उपस्थित

है इसलिये हमारे सेना के शूरवीर बानर भली भांति सेना की रक्षा करें। श्रीरामचन्द्रजी के बचनको सुनकर सुग्रीव व लक्ष्मण समुद्रके किनारे के बन में सेनाको ठहरा दिये। लाल पीले तथा उज्वल रंगके बानरों की सेना दूसरे समुद्र के समान समुद्र के तट पर शोभा को प्राप्त हुई। वे सब सूरबीर बानर समुद्रको पार करने की इच्छा करते हुए समुद्र तट पर बेलावनमें निवास करने लगे इसके उपरान्त उन असंख्य बलवान बानरों की मतवाली गर्जना के शब्द को समुद्र भी सुनने लगा। सुग्रीव से पालित बानर भालू व लंगूर आदि तीन प्रकार की सेना समुद्रके किनारे बैठकर रामचन्द्रजी के कार्यको साधन करने की चिन्ता करने लगे, और समुद्र के बेगको देखकर प्रसन्न भी होने लगे। राक्षसों को सेवन करने योग्य आश्रय से रहित वरुण के बासको देखकर सुख पूर्वक उसी तटपर बिहार करने लगे। वह समुद्र भयंकर ग्राह व मगर तथा कच्छ मछली शंख शुक्ति आदि से युक्त समुद्र का फेन चन्द्रमा के प्रकाश में हसने के समान दिखाई पड़ता था जल की उत्तुङ्ग राशि पवन के वेगको पाकर प्रसन्नता पूर्वक आकाश को स्पर्शता है, आकाश में चन्द्रमा व तारागण तथा समुद्र में पर्वत व रत्न आदि का प्रकाश आकाश से मिलकर एक होगया है, समुद्र की ऊंची लहरों से तथा नीले आकाश से देखने में कुछ भी अन्तर नहीं मालूम पड़ता था, सिन्धु राजके तरङ्ग के शब्द तथा देवलोक के भेरी शब्द आपस में मिलने के समान सुनाई पड़ते थे। इस प्रकार समुद्र के चंचल तरङ्गको देखकर सबके सब बिस्मित होगये॥

इति बल्मीकिये रामायणे लंकाकण्डे चतुर्थः सर्गः॥४॥

समुद्र के उत्तर तीर में पड़ाव पर पड़ी सेना की रक्षा सेनापति नील करने में समाहित होगये, बलवानों में श्रेष्ठ मैन्द और द्विविद चारो ओरसे सेना की रक्षा करने में तत्पर होगये, इधर समुद्र के किनारे सेना का निवेश करके समीप में बैठे हुए लक्ष्मणजी को देखकर श्रीरामचन्द्रजी बोले, कि प्रियजन के वियोग के समय को चलने से

शोक भी धीरे धीरे चलता है, क्योंकि हमको सीता न देखकर और सीता को हम नहीं देखकर बार बार दुःख के गंभीर भार को हम दोनों उठाते हैं सीताजी समुद्र के उस पार में हैं इसका हमको दुःख नहीं है अथवा रावण से हरी गई हैं इसका भी कष्ट नहीं केवल मात्र दो महीना तक उनके जीवन और अवधि है इससे हमारा दुःख दिनों दिन बढ़ता जाता है क्योंकि इसी सीता के समाचार को पाने में तथा समुद्र को लांघने की उपाय करने में जो अधिक दिन बीतते हैं वही कष्ट को देने वाले हैं। हेपवन देवता ! जिस दिशा में हमारी प्रिया है उस दिशा को जाओ और उनको स्पर्श करके हमको स्पर्श करो क्यों कि जब तुम सीता जी के अंगको स्पर्श करके हमको स्पर्श करोगे तब तुम हमारे अंग में शीतल सा मालूम होओगे, जैसे घाम से जले हुए मनुष्य को चन्द्रमा अपने किरण से स्पर्श करकेक शीतल कर देता है हरी गई जानकी जब शोकमें मग्न होकर हा नाथ! कहती हैं तब वह शब्द हमारे हृदय को इस प्रकार जला देता है जैसे, विषको पीने से मनुष्य की शरीर जल जाती है। सीता के बियोग रूपी इन्धन से प्रज्वलित सीता की चिन्ता रूपी आग दिन रात हमारे शरीर को जलाता है। हेलक्ष्मणजी ! आप यहीं रहो, क्योंकि आप के बिना हम एक।समुद्र के जलमें स्नान करके शयन करता हूं, ऐसा करने में प्रज्वलित काम सन्ताप को नहीं देता है। अब शोक के मारे हमारे जीवन की इतनीही आशा है कि हम और सीता अभी तक एक ही लोक में हैं, जैसे एक२ जल सहित धान्य के खेत के स्नेह से बिना जल तालें खेत के भी धान्य नहीं सूखते बरन् उस खेत की शीत से अपने जीवन को धारण किये रहते हैं उस सूखे खेत के समान सीता के जीवन के वृत्तान्त को सुनकर में भी अब तक अपने शरीर में प्राण को धारण किये हैं। कब हम अपने प्रबल शत्रु को संग्राम में जीतकर राज्य लक्ष्मी के समान कमल पत्र के समान नेत्र वाली सुन्दर कमर वाली जानकी को देखगे। हम कब सीताजी के सुन्दर दांत व ओष्ठ के रस को अतर के समान

पान करैंगे, और ताड़फल के समान उनके ऊंचे बड़े स्तन को अपने हाथ से मर्दित करैंगे और सीताजी अपने मधुर मुसक्यानसे हमारा आदर करैगी सो वह सीता इस समय राक्षसों के वशमें पड़कर अनाथ के समान अपना सहायक किसी को न देखकर दुःख को उठाती हैं। जनक राजा की कन्या हमारी प्रिय भार्या महाराज दशरथ की पतोहू इस समय राक्षसों के अधीन में पड़कर किस प्रकार दिन को बिताती हैं। कब हम अपने बाणों से राक्षसों के राजा रावण के हृदय को बधकर अपने मनके शोक व सन्ताप को दूर करैंगे। और हमारी सध्वी सीता कब हमारे हृदय से लग कर आन्दने के आंसु रूपी जल को छोड़ेंगी। जैसे मनुष्य मलीन वस्त्र को त्याग करके उज्वल वस्त्र को धारण करता है वैसे ही हम कब सीताजी के वियोग रूपी शोक से मुक्त होंगे। इस प्रकार विलाप करते हुए श्रीरामचन्द्रजी को दिन का अन्त होगया सूर्य भगवान अस्त गत को प्राप्त हुए। सीताजी को स्मरण करते हुए सीता के शोक से व्याकुल रामचन्द्रजी को लक्ष्मणजी ने धैर्य देकर संध्या उपासना करने का अनुशासन किये॥

इति बाल्मीकिये रामायणे लंकाकाण्डे पंचमः सर्गः॥५॥

इधर लंकापुरी में जाकर हनुमानजी ने जोधा रेख कठिन कर्म को किया था हनुमानजी के उस कर्म को देखकर इन्द्र के समान लज्जित रावण अपने मन्त्रियों के मध्य में बिचार करने लगा कि देखो एक बानर आकर हमारे नगर में राक्षसों की सेना के मध्य में रक्षिता जानकी को देखा, प्रमदावन को नाश किया लंकापुरी के अनेक चैत्य प्रासाद आदि को विध्वंस कर डाला अक्षकुमार युवराज और मन्त्रियों को तथा मन्त्रि पुत्रों को सेना सहित मार डाला तो अब इस पर तुम लोग विचार करो कि क्या उपाय किया जावे जिसमें राक्षसों का कुशल हो। मनस्वी वीर पुरुष ऐसाही कहते हैं कि आपत्ति के आगमन को देखकर मन्त्रियों का बिचार प्रबल होता है इस लिये तुम लोग विचार पूर्वक कहो कि रामचन्द्र के प्रति का उपाय किया

जावे तीन प्रकार के पुरुष लोक में कहे जाते हैं उत्तम मध्यम और अधम होते हैं उन तीनों के गुण दोष को कहते हैं, जो लोग मन्थ निरर्णय में समर्थ मित्र बन्धु आदि के सहित दृढ विचार करके कार्य का आरंभ करते हैं और देवकी सहायता के लिये जो लोग प्रयत्न करते हैं उनको उत्तम पुरुष कहते हैं और मन्त्रि मित्र बन्धुओं में एक परिणाम का विचार करता है एक धर्म की इच्छा करता है और एक कार्य का आरंभ कर देता है । ऐसे कार्य करने वाले को मध्यम जन कहते हैं । जो लोग गुण दोष का निश्चय नहीं करके दैवको भी छोड़कर के बल पुरुषार्थ के ऊपर कार्य का आरंभ कर देते हैं वह अधम हैं । हेमन्त्रियों ! हमने जो तीन प्रकार के उत्तम मध्यम अधम पुरुषों को कहा है तो उन तीनों के विचार भी तीन प्रकार के हैं । ऐकमति होकर शास्त्र दृष्टि से विचार करने वाले मन्त्रिगण जिस कार्य के विचार में निरत होजाते हैं उसी विचार को सज्जन लोग उत्तम विचार कहते हैं और जिस विचार में अनेक प्रकार की बाधा देने वाली बातें होती हैं फिर पीछे किसी कारण वश भय आदि के द्वारा सब की एक राय होती है तो उस विचार को मध्यम कहते हैं । और जहांपर भिन्न भिन्न विचार होते हैं पुनः किसी प्रकार समझाने पर भी एक राय नहीं होता उस विचार को अधम कहते हैं । इस लिये आप सब मन्त्रिगण उत्तम विचार करने में समर्थ हैं , इस कारण हमारे कार्य को सिद्ध होने के लिये विचार करिये जिससे हम कृत कार्य होवें । क्योंकि असंख्य बलवान बानरों की सेना को लेकर इस लंका पुरी को अवरोधन करने के वास्ते रामचन्द्र आते हैं । यदि यह कहो कि इस अपार समुद्र को पार उतर रामचन्द्र किस प्रकार आसकेंगे जिसके तुम को चिन्ता होती है तो सुख पूर्वक रामचन्द्र समुद्र को पार कर सकते हैं, क्यों कि राजा सगर के कुल वालों ने इस सागर को खोदा है इसलिये यह समुद्र उन्हीं के वंश से उत्पन्न है यह उनको आने का मार्ग अवश्य देगा अथवा अपने तपस्या के बल से और दिव्य अस्त्र के प्रभाव से रामचन्द्र को लक्ष्मण सुग्रीव

और वानरों की सेना सहित सुख पूर्वक समुद्र को पार उतर सकैं गे। वह रामचन्द्रजी अपने पराक्रम से समुद्र में सेतु को बांधकर बानरों की सेना के सहित लंका पुरी में प्रवेश करते हैं, इस लिये आप लोग दृढ़ विचार करो ।

इति बाल्मीकिये रामायणे लंकाकाण्डे षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥

राक्षसों के राजा रावण के इस प्रकार बचन को सुनकर सब मन्त्रियों ने हाथ जोड़कर रावण से बोले, हे राजन् ! शत्रु के पक्ष के बिना जाने कैसे उसके पक्ष के सबल समझें, हे राक्षसेश्वर ! परिघ शक्तिषष्टि शूल पदिश कुन्तल आदि अस्त्रों को धारण करने वाले राक्षसों की बड़ी भारी सेना हम लोगों के पास है आप क्यों विषाद करते हैं। आपने पाताल में नागों की भोगवती पुरी में जाकर वहां उन लोगों को युद्ध में आपने बिजय किया है। और कैलास पर्वत पर निवास करने वाले यक्षों को भी युद्ध में जीतकर कुबेर देवता को अपना दास बना लिया है। वह कुबेर देवता शिवजी के मित्र हैं और स्वयं पूजा करने के योग्य हैं, तथा लोकपालों में श्रेष्ठ हैं तौभी आपने युद्ध में जीतकर अपने वश में कर लिया है और अपने चढ़ने के योग्य पुष्पक विमान को आप को देकर प्रसन्न किया है। इतना प्रबल बलवान मय नाम दानव आप से मित्रता करने की इच्छा कर अपनी कन्या मन्दोदरी आपको ब्याह दिया है। हे महाबाहु ! आपने रसातल में जाकर वासु की तक्षक शंख जटी आदि नागों को युद्ध में जीतकर आपने अपने अधीन कर लिया है, महा शूर बीर अक्षय बलवान चतुरंगिणी सेना को सदा पालन करने वाले गरुण की सुता को जीतकर आपने अपने वश में किया है, काल के पाश व दण्ड को धारण करने वाले यमराज को भी जीतकर आपने अपने आधीन में करलिया है। इसप्रकार आपने देवलोक को विजय किया है, मनुष्य लोक में भी शूर बीर क्षत्रियों से पृथिवी संपूर्ण है, उन क्षत्रियों को हठात् आपने नाश किया है, तो उन क्षत्रियों के समान रामचन्द्रजी शूर बीर नहीं हैं इन

के साथ युद्ध करके इनको जीतने में आपको चिन्ता नहीं करना चाहिये। हे महाराज! आप मनुष्य के भय से भीत न होवें, और इन मनुष्यों के लिये परिश्रम भी न करें, बानरों की सेना सहितउन दोनों राजकुमारों को इन्द्रजित मेघनाद नाश कर डालेंगे, क्योंकि इन्हों ने अपनी तपस्या से लोक में परम दुर्लभ वरदान को ब्रह्मा रुद्र आदित्य अष्टवासु सब श्राद्धदेवता सब यज्ञ देवता आदि को प्रसन्न करके वरदान लाभ किया है, उनके सामने मनुष्य बानरों की क्या गणना है? तुम उनकी चिन्ता मत करो, लंकापुरी में प्रवेश करने मात्र से उनका नाश होजायगा॥

इति वाल्मीकिये रामयणे युद्धकाण्डे सप्तमः सर्गः॥ ७॥

इसके उपरान्त कालेमेघ के समान प्रहस्तनाम का राक्षस राक्षसों का सेनापति हाथ जोड़कर रावण के समीप बोला, कि हे महाराज! देवता दानव गंधर्व यक्ष पन्नग उरग किन्नर पिशाच आदि को हम अपने बल से पीड़ा को पहुँचा सकते हैं इन मनुष्य व बानरों की क्या गणना है। इस लंकापुरी में जितने राक्षस हैं वह सब प्रमत्त होकर उसका विश्वास किये उसे शत्रु का दूत न जानकर सबों ने सन्देह नहीं किया इसी से वह हनूमान हमलोगों को वंचित कर दिया, नहीं तो हमारे जीवन को रहते हुए वह बानर जीता हुआ लौटकर नहीं जाता हे महाराज! यदि आप आज्ञा देव तो मैं समस्त पृथिवी में पर्वतों पर समुद्र के तटपर बन आदि में जितने बानर हैं उनको मार कर मैं इस पृथिवी को बानरों से रहित करदेवें। और बानरों से होने वाले राक्षसों के भय को छुड़ा देव। सीता हरण के अपराध से जो दुःख आपको आने वाला है उसको विघ्न कर देवें। इसके बाद क्रोधित होकर दुर्मुखानाम का राक्षस बोला, इस बानर की गति हम लोगों को क्षमा करने योग्य नहीं है, देखो राक्षसों का नाश अशोक बन तथा लंकापुरी का विध्वंस बानरों के द्वारा हुआ यह बानर का कर्म

हम लोगों को क्षमा करने योग्य नहीं है। इतने राक्षसों में हम सब एकही राक्षस जावें और वह बानर जहां हो उसको मारकर अपने स अपमान को दूर करें। इसकेबाद क्रोध पूर्वक मांस शोणित से दूषित घोर परिघ को लेकर बोला कि लक्ष्मण सुग्रीव सहित कृपण व तपस्वी रामचन्द्र तथा हनुमान का हम लोगोंको क्या भय है, मैं आजही लक्ष्मण सुग्रीव के सहित रामचन्द्र को मारकर उन बानरों की सेना को क्षुभित करके आपके समीप आऊंगा। हे राजन्! हमारे मन में एक और भी बात है। यदि आप बिना प्रयास शत्रु को जीतना चाहें और हमारे इस बचन को सुनना चाहें तो मैं आपसे कहता हूं कि बलवान पराक्रमी शूर बीर हजारों राक्षसों की सेना को नियुक्त कर-दीजिये वह सैनिक राक्षस हमारे साथ चलें, मार्ग में मनुष्य का रूप धारण करके अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र कोलिये रामचन्द्रजी के समीप पहुंचे और उनको प्रणाम करके कहें कि हम सब लोगों को श्रीमान् भरतजी ने आप के समीप भेजा है, उनकी ओर से हमलोग शीघ्रता से आपके समीप आये हैं, जब यह कहकर हमलोग उनकी सेना में नियुक्त किये जायंगे तब आकाश से चलते हुए उन बानरों को अस्त्र से पत्थल से वृक्ष को उखाड़ कर यम लोक में भेजेंगे, और राम लक्ष्मण को लेकर हम चले आवेंगे। हमारे इस बचन को सुन-कर जैसी आप आज्ञा देवें वैसा करूं। इसके उपरान्त शूर बीरकौंभ कर्णी तथा महाबली निकुंभ संसार को डर देने वाले रावण से बोले, कि तुम लोग महाराज रावण के साथ सुख पूर्वक यहां निवास करे मैं अकेला ही जाकर लक्ष्मण के सहित रामचन्द्र को और हनुमान सहित सुग्रीव आदि बानरों का नाश करसकता हूं। इसके उपरान्त पर्वत के समान विशाल शरीर को धारण करने वाला बज्र हनुमान का राक्षस क्रोध पूर्व अपनी जीभ को निकाले बोला, आप लोग चिन्ता को छोड़कर धैर्य धारण करें यह कार्य धीरे २ होगा, आप लोग स्वस्थ हो जावें। मैं वारुणी को पीकर अकेला जाकर अभी सुग्रीव

लक्ष्मण के सहित रामका और अंगद आदि बानरों के सहित हनुमान का नाश करके चला आऊंगा ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे अष्टमः सर्गः ॥८॥

इसके उपरान्त निकुंभ, रभस, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, महापार्श, महोदर अग्निकेतु, रश्मिकेतु, और इन्द्रकेतु, रावण के पुत्र मेघनाद और रावण के मन्त्रि प्रहस्त, विरुपाक्ष, बज्रदेष्ट, धूम्राक्ष, निकुंभ, दुर्मुख, आदि बड़े बलवान राक्षस परिघ, पदिश, शूल, प्राश, शक्ति परशु धन्वा बाण खड्ग को लेकर केतु तारा के समान रावण के सम्मुख खड़े होकर बोले, आज लक्ष्मण सुग्रीव के सहित रामचन्द्र का बध करूंगा, और जो कृपण हनुमान ने लंका पुरी को नष्ट किया है उनको भी नाश करके हम लोग आवेंगे । उन निशाचरों के इस प्रकार के बचन को सुनकर विभीषण उन बलवान राक्षसों को वारण करके हाथ जोड़ कर रावण से बोले, कि हेराजन् ! साम दान और भेद से कार्य की सिद्धि हो सकती है अर्थात् रामचन्द्रजी का विग्रह नाश होसकता है, क्योंकि मनीषी पुरुष को नीति शास्त्रोक्त कार्य करना चाहिए, जैसा कि असावधान में शत्रु को आक्रान्त करने के समय में और दैव बल में अर्थात् रोग आदि आपत्ति पड़ने में नीति शास्त्रोक्त पराक्रम करना चाहिये । शत्रुओं के अन्तर से रहित होकर और मूर्खता को त्याग करने से दुराधर्ष अस्त्र संपत्ति को लाभ करने से कार्य की सिद्धि होती है । इस घोर समुद्र को लांघकर जो कार्य हनुमान किया है, वह दूसरे को मन से भी तर्क नहीं हो सकता, हे अपरिमेय बल को धारण करने वाले निशाचर गण ! कभी भी शत्रु की अवज्ञा नहीं करनी चाहिए । क्योंकि देखो, जब यशस्वी रावण ने जन स्थान से श्रीरामचन्द्रजी की भार्या जानकी को हरण किया उस समय राक्षसों के राजा रावण का कौनसा अपकार रामचन्द्र ने किया था । यदि यह कहो कि जन स्थान में रहने वाले खरदूषण त्रिशिरा आदि

राक्षसों को मार है यही अपकार हमारा किया तो जानो कि अति अवृत्तिकर अपने स्थान को छोड़कर तपस्वियों को रहने योग्य जनस्थान में गया और वहां ऋषि मुनियों को पीड़ा देने लगा, उस पीड़ा से क्लेशित रामने जो खर दूषण आदि राक्षसों का वध किया है तो क्या अन्याय किया। यदि इसी कारण से वैदेही हरी गई तो वैदेही को हरण करने के कारण हम लोगों को भी वही भय है, इस लिये यदि आपलोग भय से छूटना चाहते हैं तो सीताजी को लेकाकर रामचन्द्रजी को सौंप दीजिये। उनके साथ कलह करने से अनर्थ को छोड़कर लाभ नहीं होगा। उन पराक्रमी रामचन्द्र लक्ष्मण के सन्मुख तुम लोग नहीं ठहर सकते हो इस लिये जानकीजी को उन्हें देकर उनसे क्षमा मांगिये। जब तक श्रीरामचन्द्रजी अपनी सेना लेकर समुद्र के इस पार आकर रथ हाथी घोड़ा आदि से युक्त लंकापुरी में बाण को छोड़ते हैं तब तक आप उन्हें सीताजी को देकर उनसे क्षमा मांगिये। जब तक दुर्धर्ष व बलवान बानरों की सेना लंकापुरी में नहीं प्रवेश करती है तब तक सीताजी को उन्हे देकर क्षमा मागों उनसे बैर करने में कल्याण नहीं है। हे राजन्! यदि आप शूर बीर होकर अपने से जानकी को देना स्वीकार नहीं करते हैं तो हम आपके भाई हैं आप हमको आज्ञा दीजिये हम आपकी आज्ञा का पालन करें, हेमहाराज! आप अभिमान को छोड़कर हमारे वचन को मान और सीताजी को रामचन्द्रजी को सौंप दीजिये जिसमें लंकापुरी में निवास करने वाले राक्षसों का नाश न होवे। जब तक नवीन पुंख से संयुक्त राम के बाण राक्षसों के सन्मुख नहीं गिरते हैं तब तक श्रीरामचन्द्रजी को जानकीजी देकर प्रसन्न करो। हे महाराज! सुख व धर्म को नाश करने वाले क्रोध को छोड़िये और रति व कीर्ति को बढ़ाने वाले धर्म को पालन कीजिये जिसमें आप अपने परिवार सहित सुख को भोगें। विभीषण के इस प्रकार बचन को सुनकर राक्षसों का राजा रावण अपनी सभा को विसर्जित करके अपने महल में चला गया।

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

इसके उपरान्त धर्म अर्थ को जानने वाले बिभीषण राक्षसों के राजा महाप्रतापी रावण के स्थान पर गये, जैसे पर्वतों के झुंडमें पर्वतों के शिखर आपस में एक से एक उन्नत दिखाई पड़ते हैं उनके समान अनेक कंगूरों से शोभित रावण के भवन में अनेक प्रकार के कक्षा बने हैं अपने अपने कक्षाओं में महाजन बैठे हैं, और नीति शास्त्र को जानने वाले विचार करने में कुशल व बलवान् अपने पक्ष को और शत्रुओं के पक्ष को जानने में चतुर राक्षस लोग चारो ओर बैठे हैं, मतवाली हाथियों के श्वास से वहां की वायु व्याकुल होगई है, और शंख भेरी मृदंग आदि के महा शब्द होरहे हैं, उत्तम भूषण वस्त्र को धारण करने वाली स्त्रियों से वह राजमार्ग परिपूर्ण है। जैसे गंधर्वों के स्थान में रत्नों की ढेर लगी रहती है जैसे मरुद् के यहाँ अनेक प्रकार की मणि रहती हैं, जैसे पाताल में नागों की भोगवती पुरी रत्न व मणि से परिपूर्ण है वैसेही रावण के गृह में रखी गई मणियों के प्रकाश से रावण का भवन उज्वल होगया है। ऐसे उज्वल भवन में सूर्य के समान रावण बैठे हैं, इस प्रकार मनोहर रावण के भवन में बिभीषण प्रवेश किये। वहां जाकर देखते हैं तो एक ओर वेद के शब्द होरहे हैं मानो रण में विजय की ध्वनि होती है। पुष्प अक्षत दही घी आदि से वेद को जानने वाले ब्राह्मणों की पूजा होती है, इस प्रकारकी शोभासे युक्त रावणको देखकर बिभीषण ने प्रणाम किया, और राजा के अनुमति से सोने के आसन को ग्रहण किया। और अनेक भांति की पूजा व बन्दना से राक्षसों के राजा रावण को प्रसन्न करके देशकाल से युक्त बचन को बोले, हे परन्तप! जिस दिन से यह वैदेही लंकापुरी में आई है उसी दिन से हमको अनेक प्रकार के अशकुन हमको लंकापुरी में दिखाई पड़ते हैं। देखिये जिस समय काष्ठ मन्थन से अग्नि प्रज्वलित की जाती है उस समय धूम के सहित आग उत्पन्न होती है, और अग्नि के प्रज्वलित होने के समय उसमें से स्फुलिंग [चिनगारी] उड़ने लगती है, और जब मन्त्र पढ़कर अग्नि में हवन

किया जाता है, तो उस हवि को अग्नि ग्रहण करके प्रज्वलित नहीं होता है। और अग्निहोत्रशाला में तथा ब्रह्मस्थली आदि में और हवन की हवि में चिमटी आदि जन्तु दीख पड़ते हैं। गायों के स्तन में दूध घट गया है, हाथियों के कपोल से मदका बहना बन्द है। नवीन घास को खाने वाले घोड़े भोजन न करने पर भी भूखे के समान दीन दिखाई पड़ते हैं। और उनके अंग में रोमांच होता है तथा उनके आंखों से आंसू की धारा बहती है। चिकित्सा करने पर भी वे अपने स्वभाव में नहीं आते हैं। काग समूह पुरीके चारो ओर दिन रात शब्द किया करते हैं। गिद्धों का झुण्ड आकर इस पुरी पर बैठते हैं, सायंकाल तथा प्रातःकाल में सियारों के शब्द सुनाई देते हैं। और मांस खाने वाले श्वान मृगा आदि जन्तु द्वार पर आकर बोलते हैं। हेराजन्! इस अशुभ कार्य की शान्ति में इतनाही प्रायश्चित्त है कि वैदेही को रामचन्द्रजी को देकर क्षमा मांगिये। यह बात लोभ अथवा मोह से जो कहते हों तो उसको आप क्षमा कीजिये। यह अशुभ लंकापुरी के सकल नर नारी देखते हैं, तो इसमें आपका क्या विचार है, क्यों कि आप के समान परिणाम दर्शी दूसरा कोई नहीं है इस प्रकार के वचन को आपके भय से और मन्त्री लोग नहीं कह सकते हैं, तौभी हम आप के भाई हैं सुख दुःख को भोग करने में समान हैं, इसमें जो कुछ न्याय हो उसको आप कहें। अपने मन्त्रियों के मध्य में बैठे हुए रावण अपने भाई विभीषण के इस प्रकार वचन को सुनकर रावण क्रोधित होगया, क्योंकि रावण अपने मोक्ष की इच्छा करता था, और विभीषण का मन ऐहीक सुख को चाहता था इस लिये परम ज्ञानी व देश के तत्व को जानने वाले ईश्वर में प्रेम और अनुराग करने वाले दशानन को क्रोध हुआ। और क्रोध युक्त होकर रावण ने विभीषण को उत्तर दिया कि मैं अपने लिये भयको नहीं देखता हूं और न तो इस जानकी को रामचन्द्र लाभ कर सकते हैं, देवताओं की सेना के सहित इन्द्रादिक देवता भी रण में हमारे सन्मुख नहीं ठहर सकते हैं लक्ष्मण के ज्येष्ठ भाई राम को

ऐसा पराक्रम नहीं है जो हमारे सामने ठहर सके। ऐसा कहकर प्रचण्ड पराक्रमी देवताओं को त्रास देनेवाले रावण ने अपमान पूर्वक विभीषण को सभा से उठा दिया।

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे दशमः सर्गः ॥ १०॥

वह रावण जानकी के लिये काम से मोहित होकर अपने पाप के बदले मित्रों से अपमान को सहन करके भी काम की पीड़ा से अत्यन्त दुःखि होकर वैदेही कि चिन्ता करने लगा। और विभीषण आदि मन्त्रियों के बचन को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी के साथ अपने को युद्ध करने का समय आया है ऐसे अपने विचार को निश्च किया और हेमजाल से निर्मित मतवाले घोड़ों से जोते गये बड़े भारी रथ पर चढ़ा। उस श्रेष्ठ रथ पर बैठ कर राक्षसों का राजा दशानन सभा स्थान को चला, उसके पीछे खड्ग पदिश शूल मुद्गर परिघ आदि को लेकर बड़े बड़े शूरवीर राक्षसों की सेना उसके आगे व पीछे चली। अनेक मतवाली हाथी तथा दौड़ने में वायु के समान बेगवाले घोड़े रावण के रथके समान श्रेष्ठ रथ तथा पैदल सवार अनेक प्रकार के भूषण व अलंकार से अलंकृत होकर रावण के चारो ओर से चले, इसके बाद चतुरंग सेना सहित रावण के आगमन को सुनकर सभा स्थान में भेरी शंख मृदंग आदि बाजे बड़े जोर से बजने लगे राज मार्ग में अनेक प्रकार के सुगन्धित जल का छिड़काव होने लगा। अनेक रंग के पुष्पों की वर्षा होने लगी इधर राक्षसों का राजा रावण पूर्ण चन्द्रमा के सामान उज्वल छत्र लगाये स्फटिकमणि के समान चमर को हिलाते हुए रथ पर बैठे राक्षस राज को देखकर सभासद गण राक्षसराज रावण के सन्मुख हाथ जोड़ कर उनकी स्तुति करने लगे। उन सैनिक तथा सभा सद राक्षस की जय जय ध्वनि से रावण ने सभा स्थान में प्रवेश किया, और रत्न जड़ित सोने के सिंहासन पर बैठकर ईश्वर के समान अपने कार्य कर्ता सेवकों को आज्ञा दिया कि जो लोग हमारे प्रधान मन्त्री शत्रुके

प्रधान कर्म को जानते हैं उन लोगों को शीघ्र बुलाओ। राजा के इस प्रकार वचन को सुनकर वे राक्षस चारो ओर दौड़ने लगे किसी के स्थान पर जाकर किसी को बगीचा में टहलते आदि स्थानों में वे दूत लोग जाकर उन राक्षसों से समाचार को कहे, वे राक्षस गण दूतों के मुख से राजा की आज्ञा को सुनकर वे राक्षस एका एक अपने सकल कामों को छोड़कर कोई रथ से कोई हाथी से कोई घोड़े से कोई भय के मारे पैदल सभा स्थान में आकर उपस्थित होगये। इस प्रकार उन राक्षसों का समुदाय सभा स्थान में प्रवेश करने लगे जैसे पर्वत की गुहा में सिंह प्रवेश करते हैं। उन राक्षसों के आगमन से रथ हाथी घोड़ा आदि के समूह से वह लंका पुरी व्याकुल होगई। रावण से सत्कार को लाभ किये राक्षस राक्षसराज रावण के चरण को ग्रहण करके कोई पीठ युक्त सोने के आसन पर कोई मखमली चौकी आदि पर कोई मसलन्द लगे हुए भूमिपर राजा की आज्ञा से अपने अपने योग्य आसन को ग्रहण किये। निश्चित अर्थ में पण्डित मन्त्रि लोग तथा सूक्ष्म विचार करने वाले उपमन्त्रि लोगसभा स्थान में आसन पर बैठगये। इस के बाद अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र को धारण करने वाले सबको सुख देने के लिये अनेक शूरवीर हेम मयी सभा में उपस्थित हुए, इसके उपरान्त उत्तम भूषण वस्त्र धारण किये श्रेष्ठ रथपर बैठकर महात्मा विभीषण रावण की सभा में आए। और राक्षसों के राजा रावण को प्रणाम करके अपने योग्य आसन को ग्रहण किये। वह सभा स्थान अनेक प्रकार के रत्न व मणि से तथा अनेक प्रकार के वस्त्र से तथा अंग में लगाये हुए चन्दन व माला से मिला हुआ सुगन्ध युक्त वायु चमकते हुए उस सभास्थान को शोभित करदिया। उस रावण की सभा में विचार करने वाले राक्षस नीति के अनुसार विचार करते हुए उनमें क्रोध और असत्य का भाव नहीं रहता था। जैसे देवताओं के सभा के मध्य में बज्र को धारण करने वाले इन्द्र निवास करते हैं वैसेही राक्षसों के मध्य में रावण का वास हुआ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे लंकाकाण्डे एकादशः सर्गः॥११॥

अपने विजय की इच्छा करने वाले समस्त परिषद् को देखकर राक्षसों के राजा रावण सेनापति प्रहस्त से बोले, हे सेनापति ! अस्त्र शस्त्र विद्या को जानने वाले जो हमारे चतुरंग सैनिक दल के प्रधान योधा हैं उन लोगों को हमारे नगर की रक्षा करने की आज्ञा दीजिये। सेनापति प्रहस्त राजा की आज्ञा को विनय पूर्वक ग्रहण करके पुरी के भीतर व बाहर रक्षा करने के लिये सैनिकों से कहा, सेनापति की आज्ञा को शिरो धार्य करके वह सैनिक लंकापुरी के भीतर बाहर और चारो ओर घूमकर पुरी की रक्षा करने लगे सैनिकों को रक्षा में नियुक्त करके सेना पति हाथ जोड़कर रावण से बोले, आपके कहने के अनुसार आपकी प्रधान सेना आप के पुरी की भीतर बाहर रक्षा कर रही है। अब आप प्रसन्न होकर और भी अपनी इच्छानुसार आज्ञा दीजिये। राजा के हित को चाहने वाले प्रहस्त के बचन को सुनकर सभा मध्य में बैठा हुआ रावण मन्त्रियों में श्रेष्ठ प्रहस्त से बोला, हे मन्त्रिन् ! प्रिय अप्रिय में सुख दुःख में लाभ हानि में जय पराजय में और धर्म काम अर्थ में आप परिणाम को जानने वाले हैं, सर्वदा आपके विचार से जिस कार्य को हम आरंभ करते हैं हमारा वह कार्य विफल नहीं होता है, जैसे वृहस्पति सोम आदि ग्रह तथा नक्षत्र और देवताओं के सहित इन्द्र अनेक प्रकार के सुख को भोगते हैं वैसेही आप लोगों के सहित मैं भी सुख भोग करने की इच्छा करता हूं। आप लोग हमारे कार्य को साधन करने में सदा समर्थ व उद्यत रहते हैं तौभी इतने दिनों से हमारे भाई कुंभकरण निद्रा में पड़े रहे इसलिये हमने अपना मनोरथ आपलोगों से प्रकट नहीं किया है अब कुंभकर्ण की निद्रा खुलगई है इस कारण हम अपना मनोरथ आप लोगों के समीप प्रकट करता हूं। क्योंकि महाबलवान यह कुंभकर्ण छ महीना तक सोते हैं, सो अस्त्र शस्त्र को जानने वालों मे मुख्य कुंभकर्ण इस समय निद्रा से उठे हैं इस लिये हम अपने अभिप्राय को प्रगट करता हूं। राक्षसों के रहने के योग्य दण्डक बन से जनक की कन्या

जानकी रामचन्द्रजी की स्त्री को हम ले आये हैं। सीता के समान मनोहर स्त्री कोई तीनों लोक में नहीं है वह सीता साम [प्रार्थना] से शय्या को स्वीकार करेंगी। हेम से निर्मित्त जैसी प्रतिमा होती है उस प्रतीमा से भिन्न साक्षात माया के समान उसके अंग आश्चर्य को देनेवाले हैं। उसको देखकर मैं काम के वश होकर अचेत हो जाता हूं वह सीता शोक सन्ताप से पीड़ित होकर रामचन्द्र के दर्शन की अभिलाषा से एक वर्ष के लिये वरदान मागा कि वर्ष भर में यदि रामचन्द्रजी नहीं आवेंगे तो मैं तुमको वर्ष बीतने पर स्पर्श करूंगी सीता की इस प्रार्थना के अनुसार मैंने भी वही वरदान दिया है। यहां पर यह भाव प्रगट होता है कि सीता देवी को पति व्रत धर्म के बल से युक्त देखकर शापके भयसे रावण ने एक वर्षकी अवधि देकर अपने प्रमदावन में छिपाया था। वर्ष बीत जाने के बाद सीता वश में होगी इस लिये अल्प पराक्रमी रामकी चिन्ता नहीं करना चाहिये, क्योंकि वह बनवासी इस अपार समुद्र के पार किस प्रकार आ सकते हैं। उनके आने की संभावना नहीं है, क्योंकि अगाध समुद्रको पार सकें। अथवा देखो एक बानर ने तो आकर महाभारी युद्ध किया। तो इस कार्य के संबन्ध में जिसकी जैसी बुद्धी हो जैसा बिचार हो उस अपने बिचार को आप लोग कहें और भी देखिये कि मनुष्य से हम राक्षसों को नहीं डरना चाहिये तौभी इस विषय में विशेष बिचार करना चाहिये, क्योंकि एक बानर उनकी ओर से आकर बड़ा भारी पराक्रम दिखलाया है इसलिये इस कार्य को भली भाँती विचार कीजिये। उन रामचन्द्र का एक दूत समुद्र के पार आकर सीता को खोज किया और राक्षसों से युद्ध करके लंकापुरी को जलाया है। कि सुग्रीव आदि बलवान बानरों की सेना को लेकर सुग्री अंगद आदि बानरों सहित राजकुमार राम लक्ष्मण को लेकर आवेंगे। और सीता प्राप्त करेंगे तो इस विषय में आप लोग ऐसा बिचार करें जिसमें सीता सदा के लिये लंका पुरी में वास करे और दशरथ के पुत्र राम लक्ष्मण का बध होवेगे। ऐसी

नीति को विचारिये। हम ऐसी शक्ति किसी में भी नहीं देख सकते हैं कि जो बानर समुद्र को पारकरे इसकारणनिश्चय हमारा जय होगा। काम से पीड़ित रावण के वचन को सुन कर क्रोध से युक्त कुम्भकर्ण बोला जो तुमने लक्ष्मण के सहित रामचन्द्रजी की प्रियभार्या सीता को बलाकर अपहरणकिया है यह उचित नहीं किया, अब राक्षसों का विनाश काल उपस्थित है इसी विषय में विचार करना निष्फल है। हे महाराज! जो आपने वंचना पूर्वक पर स्त्री का हरण किया है इस कारण इस विषय में विचार करना निष्फल है। हे दशानन्! जो राजा न्याय से राज कार्य को करते हैं उनके कार्य में कभी विघ्न नहीं होता है और न तो उनको शत्रुओं से परिताप होवे ऐसी हमारी बुद्धि है। और जो राजा मन्त्रियों के सहित साम आदि उपायों को न जानकर मोह से जो अन्याय व विपरीत कार्य को करता है वह कार्य को करने के बाद दुःख को उठाता है, जैसे अपवित्र हवि को अग्नि ग्रहण नहीं करता है और वह विपरीत कार्य करने के समय उत्तम मालूम होता है किन्तु परिणाम वह विष के समान दुःख को देने वाला होता है। हे राजन्! जिस कारण तुमने सीता को बिना बिचार हरण किये हो इस कार्य से बड़े आनन्द की बात है जो तुम प्रबल रामके हाथ से बच जाओ। जैसे विष से मिला हुआ मांस के ई खाकर बच जावे। जिस पराक्रम से तुमने प्रबल शत्रुओं के सन्मुख यह अनुचित कार्य का आरंभ किया है तो हम लोगों को सामदान आदि उपायों से कुछ काम नहीं है। क्योंकि तुम राजा हो हम लोग तुम्हारे सेवक हैं। तुमारी इच्छा के अनुसार हम लोग सदा कार्य कर सकते हैं, इस लिये तुमारे शत्रु को हम मार कर तुम्हारी चिन्ता को दूर करेंगे। हे निशाचर! यदि तुम्हारा शत्रु इन्द्र वरुण यम कुबेर वायु अग्नि आदि होगा तो भी मैं उसके साथ युद्ध करूंगा। ऐसा कहकर पर्वत के समान विशाल शरीर को धारण करने वाला और इन्द्रादिक देवतों को भी भय देने वाला कुम्भकर्ण अनेक अस्त्र शस्त्र को लिये सभास्थान में बादलके

समान गर्जना किया। जब तक रामचन्द्र हमको एक बाणमार कर दूसरा मारेंगे तब तक मैं उनके शरीर के रक्त को पान करूंगा, तुम धैर्य धारण करो। तुमारे सुख के लिये दशरथ के पुत्र राम लक्ष्मण को हम मारेंगे और सब बानरों को भक्षण कर जायंगे। तुम सुख करो और वारुणी को पान करो तथा अपने राज्य के कार्य को देखो, जब रामचन्द्र आवेंगे तब मैं उनको यमलोक में भेजूंगा, और यह सीता तुमारे अधीन होवेगी।

इति बाल्मीकिये रामायणे लंकाकाण्डे द्वादशः सर्गः ॥१२॥

इसके उपरान्त कुंभकर्ण ने जो कहा था रावण से कि तुमने सीता को लाकर अनुचित कर्म किया है उस कुम्भकर्ण के बचन से क्रोधित रावण को जानकर महाबलवान महापार्श्वनाम राक्षस रावण का मन्त्री हाथ जोड़कर बोला, हे प्रभो! व्याघ्रसिंह हाथी आदि जन्तुओं को रहने योग्य बन में पहुंच कर मधु को लाभ करे लाभ होने पर भी जो उस मधुको नहीं पान करता है उसको अज्ञानी जानना चाहिये। आप शत्रुओं के सिरपर लात मारकर वैदेही के संगरमण कीजिये। क्योंकि आप तो ईश्वर के भी ईश्वर हैं कौन आपका शत्रु है जो आपके सन्मुख युद्ध करने सके। यदि तुम यह कहो कि अभी सीता हमारे अनुकूल नहीं है हम किस प्रकार रमण करें, तो देखो जैसे क्रुद्धा कुक्कुटी के साथ बलात्कार से भोग करके कुक्कुट सुखी होता है वैसे ही आप भी रमण कीजिये। पहिले तो आपको किसी प्रकार का भय नहीं है। यदि भय उपस्थि होगा तो उसको निवारण करने का उद्योग किया जायगा। अभी आप चिन्ता न करें। हम लोगों के सहित कुम्भकर्ण तथा मेघनाद यह बज्र को लिये इन्द्र को भी पराजित कर सकते हैं दूसरों की क्या गणना है। अब इस कार्य के विषय में साम आदि उपायों से कार्य सिद्धि नहीं होगी, अब केवल दण्ड का आश्रय लेना चाहिये। हे महाबल! जब तुम्हारा शत्रु यहां आवेगा तो निश्चय हम लोग अपने अस्त्र के प्रताप

से उसको अपने वश में कर लेवेंगे। राक्षसों के राजा रावण महापार्श्व के इस प्रकार के बचन को सुनकर महापार्श्व की बड़ाई और उसका आदर करके रावण बोला, हे महापार्श्व हम तुमसे अपने मनकी बात को कुछ एकान्त में कहना चाहते हैं ऐसा कहकर महा पार्श्व का एकान्त में बुलाकर रावण कहने लगा कि एक समय ब्रह्माजी के पास पुञ्जिकस्थला जाती रही, अग्नि की शिखा के समान आकाश में हम उसे जाते देखकर दौड़कर हठात् उसको पकड़ लिये और उसके अंग से वस्त्र को उतार कर उसके साथ भोग किये इसके बाद पुंजिकस्थला ब्रह्मालोक में जाकर ब्रह्मजीसे सब हाल कही। तब परम ज्ञानी महात्मा ब्रह्माजी हमारे कर्म से कुपित होकर हमको शाप दिया कि आज से जो तूं पराई स्त्रियों के साथ भोग करेगा तो तेरे मस्तक सौ टुकड़ा होकर गिर जायंगे। हे मन्त्रिन् ! ब्रह्माजी के इस शाप से मैं जबरदस्ती सीता को ग्रहण नहीं कर सकता हूं, हे महापार्श्व ! समुद्र के समान हमारा बेग है वायु के सामन हमारी गति है। दाशरथी राम लक्ष्मण हमारे पराक्रमको नहीं जानते हैं, जो हमारे साथ युद्ध करने को आवेंगे। इस संसार में ऐसा कौन पुरुष है जो अपना प्राण देने की इच्छा से गुहा में सूते हुए सिंह को जगावेगा दो जीभ वाले सर्प के समान जब तक हमारे बाण को रामचन्द्र नहीं देखते हैं तब तक हमारे साथ युद्ध की इच्छा करते होंगे, नहीं तो वज्र के समान हमारे बाण शीघ्र ही उनको नाश कर देवेंगे। हमारे सामने इन्द्रादिक देवते कोई नहीं ठहर सकते हैं। कुबेर से पालित इस लंकापुरी को हमने अपनी भुजा के बलसे उपार्जित किया है ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे त्रयदशो सर्गः ॥१३॥

निशाचरो में इन्द्र रावण के बचन को तथा कुम्भकर्ण के गर्जना को सुनकर राक्षसों में मुख्य विभीषण हित व कल्याणके बचनको बोले, हे राजन् ! बड़े विष को धारण करने वाले सर्प के समान सीता को आपने अपने गले में बांधा है, हे भाई ! नख व दांत वाले वानरों से जब

तक यह लंका घेरी नहीं जाती है तब तक रामचन्द्रजी को जानकी देओ। जब तक रामचन्द्र के बाण राक्षसों को नाश करने के लिये उन के हाथ से नहीं छूटते हैं तब तक सीता को उन्हे देओ। श्रीरामन्द्रजी के बाण के सन्मुख कुंभकर्ण मेघनाद महापार्श्व महोदर आदि राक्षस नहीं ठहरने सकते हैं हे भाई! रामचन्द्र को क्रोध करने से सूर्य वायु इन्द्र पृथिवी पाताल कोई भी तुम्हारे प्राण की रक्षा नहीं कर सकता है, इस प्रकार बिभीषण के बचन को सुनकर प्रहस्त बोला, कि हमलोगों को देवता दानव गंधर्व यक्ष किन्नर पन्नग उरग आदि से भय नहीं है, एक राजा के पुत्र रामसे समरमें हम लोगों को क्या भय होगा। अभिमान पूर्वक प्रहस्त के बचन को सुनकर रावण के कल्याण को चाहने वाले बिभीषण न्याय युक्त बचन को बोले, हे प्रहस्त! महोदर कुंभकर्ण और रावण रामचन्द्र के प्रति जिस पराक्रम को कहते हो वह पराक्रम तुम लोगों में नहीं है, जैसे समुद्र का पार होना कठिन है वैसेही रामचन्द्र के बाण से बचना कठिन है। इक्ष्वाकु वंश में श्रेष्ठ धर्म को जानने वाले रामचन्द्र के सन्मुख संग्राम में देवता नहीं ठहर सकते हैं तो राक्षस की क्या गणना है। हे प्रहस्त! जब तक रामचन्द्रजी के दुरासद के कपत्र से भूषित बाण तुम्हारे हृदय में नहीं लगते हैं तब तक तुम उनको ऐसा कहते हो। रावण कुंभकर्ण इन्द्रजित आदि कोई भी राक्षस संग्राम में रामचन्द्र के सन्मुख खड़े होसकते हो। काल का भी सामर्थ नहीं है जो रामजी से लड़ने सके। यह राजा रावण तो व्यसन के जाल में बंधा है और राक्षसों के नाश को चाहता है, हे मन्त्रियों! जैसे अन्त पराक्रम रखने वाला विषधर सर्प शान्त किया जाता है प्रमत्त गजराज शान्त किया जाता है वैसेही तुम लोग रावण के कल्याण के लिये उसके हित की बात को उपदेश करो। यदि इस लंकापुरी का और राक्षसों का कल्याण चाहते हो तो मैथिली रामचन्द्र के लिये देओ।

इति बाल्मीकीयेरामायणे युद्धकाण्डे चतुर्दशो सर्गः ॥१४॥

विभीषण के इस प्रकार बचन को सुनकर राक्षसों में प्रधान मेघ-

नाद बोला, हे कनिष्ट तात! बहुत भय से भीत होकर आप ऐसे अनर्थ के बचन को क्यों बोलते हैं, इस कुल में न तो कोई आपके समान डराकू पैदा हुआ और न तो इसप्रकार कार्य किया कि ग्रहण की हुई बस्तु को लौटा देवे। तेजस्वी पराक्रमी बलवान रावण के कुल में एक बिभीषण को छोड़कर और कोई शत्रु से पराङ्मुख होने वाला नहीं जन्म लिया है। मनुष्य उन राजपुत्रों को एकही राक्षस युद्ध में जीत सकता है उनसे तुमको इतना भय कहां? देखो देवताओं को स्वर्ग से खींचकर हमने पृथिवी तल में अर्थात लंकापुरी में बन्दी दिया है और हमारे भय को प्रसन्न होकर देवता व दिक्पाल पालन करते हैं। वही हम देवताओं के अभिमान को नाश करने वाले दैत्यों को शोक से छुड़ाने वाले हमको उन राजपुत्रों से क्या भय है? इस प्रकार इन्द्रजित् के बचन को सुनकर महात्मा विभीषण फिर भी बोले, हे तात! बिचार में आपकी बुद्धि दृढ़ नहीं है क्योंकि अभी तुम बालक हो। तौभी अपने विनाश के लिये यह सब अपना बखाना है। हे पुत्र! जिप्रकार रामचन्द्रजी से इस प्रकार के बिनाश को सुनकर भी मोह से राक्षसों के राजा रावण को निवारण नहीं करते हो। हे पुत्र! इस कार्य में तुम्हारा भी नाश होगा और जो वृद्ध मन्त्रियों ने तुम्हें ऐसा उपदेश दिया है उनका भी नाश होगा। हे इन्द्रजित! जो तुम असावधान होकर ऐसा कहते हो इस कहने से तुम परम मूर्ख व अज्ञानी हो। भला कौन ऐसा है कि जो समर में ब्रह्मदण्ड तथा काल चक्र के समान रामके बाण को सहन कर सकै। हे राजन्! धन रत्न भूषण वस्त्र जानकी को देकर शोक और मोह को छोड़कर सीता को रामचन्द्र के लिये दे डालो।

इति बाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डे पंचदशः सर्गः ॥१५॥

इस प्रकार बिभीषण के बचन को सुनकर काल से प्रेरित रावण क्रोधित होकर बिभीषण बोला, कि शत्रु के पक्ष को सेवन करने वाले तुम शत्रुओं के संग में बास करो। तुमको हम लोगों की संगति में रहना उचित

नहीं है, हे राक्षस ! हम दायाद के स्वभाव को जानते हैं। दुःख पड़ने पर दायाद दायाद को नाश करनेही की इच्छा करते हैं। क्योंकि ज्येष्ठ को जीवित रहते कनिष्ठराज्य का अधिकारी नहीं हो सकता चाहे वह कितना बड़ा पण्डित हो शूर बीर हो बलवान हो इस लिये तुम छिद्र को ढूंढ़ते हो। नित्य बन्धुओं का हृदय गुप्त रूप में दुःख देने का रहता है और वह लोग ६ प्रकार से दुःख को देना चाहते हैं आग लगाने से बिष को देने से शस्त्र चलाने से धन को छिपाने से जीविका और स्त्री को हरण करने से पीड़ा देते हैं और दायाद को दुःख में देखकर प्रसन्न होते हैं। जैसे हस्ती अपने बंधन को व्याध के हाथ में देखकर भी प्रसन्न होकर उसके मुख के गीत को सुनता है वह गीत तुम हमारे मुख से सुनो। अग्नि अस्त्र शस्त्र उतने भय को देने वाले नहीं हैं जितने की भय देने वाले दायाद होते हैं उपाय कहने व सुनने में तुम चतुर हो तौभी संपूर्ण भय व कष्ट जाति से प्राप्त होता है, हव्य कव्य ग्रहण करने की साधन गौ में होता है, जाति से भय होता है। स्त्री में चपलता और ब्राह्मण में तपस्या यह स्वाभाविक होता है। हे बिभीषण ! मैं लोक का सत्कार करूं यह मुझको इष्ट नहीं है और मित्रता हमारे लिये तृण है। जैसे पत्र पर गिरा हुआ जल का बुंद क्षण भर भी नहीं ठहरता है वैसेही तुम्हारी मित्रता है। जैसे शरतकाल में बद्दलों के वर्षा करने व गर्जने से पृथिवी गिली नहीं होती है वैसे ही तुमारी मित्रता है। जेसे भ्रमर अभिलाषा से पुष्प रस को जानता हुआ भी वहां नहीं ठरता है वैसे ही तुम दुर्जन की मित्रता है। जैसे मधुकर रस की अभिलाषा से काश पुष्प को पीता हुआ भी उसके रस को नहीं जानता है वैसेही तुम दुष्ट की मित्रता है। जैसे हाथी पहिले स्नान करके फिर अपने सूंड़ से धूली को उठाकर अपने मस्तक पर डाल कर अपने अंग को मलीन कर देता है वैसेही तुम दुर्जन की मित्रता है। हमारी सभा में यदि तुम्हारे समान दूसरा कोई कहता तो अब तक उसका प्राण न बचता,

परन्तु तुम सहोदर भाई हो और इस कुल में उत्पन्न हो इसलिये तुम को धिक्कार है । न्याय वक्ता विभीषण को इस प्रकार कठोर बचन कह कर गदा हाथ में लिये चार मन्त्रियों के सहित वह राक्षस उछल पड़ा। रावण के कठोर बचन को सुनकर विभीषण को क्रोध हुआ बिभीषण सोचने लगे कि कार्य अकार्य को न जानता हुआ कुमार्ग में जानेवाले और बड़ों का अपमान करने वाले पुरुष का परित्याग करना उचित है ऐसा सोचकर विभीषण सभा से उठकर आकाश को चलते समय राक्षसों के राजा रावण से बोले, हे राजन् ! तुम ज्येष्ठ भाई पिता के समान हो इस समय मन्त्रि युक्त परिवार सहित अधर्म मार्ग पर खड़े हो जो इच्छा हो वह कहो । हम तुम्हारे इस कठोर बचन को नहीं सहन कर सकते हैं । हम जो तुम्हारे कल्याण के बचन को कहते हैं वह बचन काल के जाल में फंसे तुमको अच्छा नहीं लगता है । हे राजन् ! मुंह देखी बात कहने वाले अनेक पुरुष राजाओं की सभा में रहते हैं। किन्तु राजा के कल्याण के लिये अप्रिय बचन को उपदेश करने वाले पुरुष जगत में भी दुर्लभ हैं। सकल प्राणियों को नाश करनेवाले काल के जालमें बधे और नाश को प्राप्त तुमारी उपेक्षा नहीं करते हैं इसलिये मैंने तुमारे हितके वचन को कहा है । आग के समान जलते हुए सोने के पुंख से युक्त श्रीरामचन्द्रजी के बाणों से मरते तुमको हम नहीं देख सकते हैं । बड़े बड़े शूरवीर बलवान अस्त्र शस्त्र को जानने वाले काल से युक्त पुरुष नाश को प्राप्त होता है जैसे बालू की भित्ति गिरकर नाश को प्राप्त होता है । तुमारे हित की इच्छा से जो हमने कहा है उसको क्षमा करो । और राक्षसों के सहित इस पुरी की और अपनी रक्षा करो । हे राजन् ! तुम्हारा कल्याण हो, तुम हमारे बिना सुखी होओ । हे निशाचर ! जिसकी आयुष्यक्षय होती है वह अपने हित की और मित्र के वचन को ग्रहण नहीं करता है ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्ध काण्डे षोडशः सर्गः ॥१६॥

रावण का भाई विभीषण इस प्रकार रावण से कह कर क्षण

भर में जहां लक्ष्मण सुग्रीव व बानरों की सेना के सहित रामचन्द्र जी रहे वहां आया। मेरुपर्वत के शिखर के समान उन्नत और मोटा तथा अनेक प्रकार के रत्न को धारण किये अत्यन्त प्रकाश मान आकाश में स्थित विभीषण को आते सुग्रीवजी ने देखा कि अत्यन्त पराक्रमी चार अनुचर उसके साथ हैं, वे विभीषण के सेवक उत्तम भूषण वस्त्र को धारण किये हैं इन्द्रवज्र के समान आयुद्ध को धारण किये हैं। ऐसे चार सेवकों के सहित अस्त्र शस्त्र से उज्वल पंचवें विभीषण को देखकर बानरों के राजा सुग्रीव हनुमान आदि बानरों के सहित चिन्ता करने लगे। क्षण भर चिन्ता करके सुग्रीव हनुमान आदि बानरों से बोले कि अस्त्र शस्त्र से संपन्न चार राक्षसों के सहित यह राक्षस हम लोगों को मारने के लिये आता है इसमें संशय नहीं है। सुग्रीवजी के बचन को सुनकर हनुमान आदि बानर साल वृक्ष को उखाड़कर सुग्रीवजी से बोले, हे राजन्! इन दुरात्मा राक्षसों को मारने के लिये शीघ्र आज्ञा दीजिये, जब तक यह दुष्टराक्षस पृथिवी में उतरता है तब तक मैं इनके प्राणको हरण कर लेता हूं। उन बानरों के परस्पर इस प्रकार के बात चीत को सुनता हुआ समुद्र के उत्तर तीर में आकर आकाशही में खड़ा होगया। बानरों के इस प्रकार के बचन को सुनकर महाप्राज्ञ विभीषण आकाश में ठहर कर सुग्रीव को देखता हुआ बड़े ऊंचे स्वर से बोला, कि राक्षसों के राजा दुरात्मा रावण के हम कनिष्ठ भ्राता हैं, हमारा नाम विभीषण है। दुरात्मा रावणने जनस्थान से जटायु गिद्ध को मारकर सीता को हर ले आया है। इस समय वह जानकी राक्षसियों से सुरक्षित हैं। मैंने उसको अनेक बातों से समझाया कि श्रीरामचन्द्रजीकी महिषी सीता को उन्हे देकर अपने अपराध को क्षमा मांगो। परन्तु काल के वश रावण औषध के समान हमारे बचन को अंगीकार नहीं किया। और हमको अनेक प्रकार से कठोर बचन व दुर्वाद कहा है, सो मैं उस राक्षस से अपमान को पाकर अपने पुत्रकलत्र को छोड़

कर रामचन्द्रजी के शरण में आया हूं। आप लोग हमारी ओर से सब लोक को शरण्य श्रीरामचन्द्रजी से शीघ्र कह दीजिये कि विभीषण आया है। इस प्रकार विभीषण के बचन को सुनकर लघु पराक्रमी सुग्रीव श्रीरामचन्द्रजी के समीप जाकर निवेदन किये कि हे महाराज! कोई हम लोगों का शत्रु राक्षस पहिले रावण की सेना में प्रविष्ट था इस समय बिना कारण आपके शरण आया है इस लिये यह राक्षस हम लोगों को वध करने योग्य है। हे रामजी! हे परन्तप! शत्रुपक्षके और बानरों के अनुग्रह व निग्रहमें समर्थ आप कार्य अकार्य के विचार में सेना के सन्निवेश में और सेना के आनयन में आप सावधान रहने के योग्य हैं, इतने में सावधान रहने सेही आपका कल्याण होगा। हेप्रभो! यह राक्षस लोग अत्यन्त माया को जानने वाले हैं इन राक्षसों का विश्वास शूरवीर और नीति को जानने वाले लोग नहीं करते हैं। यह रावण का दूत बनकर आया है, यह हमारी सेना में प्रवेश करके भेद को अवश्य दिखवेगा। अथवा यह स्वयं छिद्र को देखकर हमारी सेना का नाश करेगा। हेरामजी! मित्रबल, बन्धुबल, भृत्यबल, तथा शत्रुबल यह चार प्रकार का बल है। इसमें शत्रु बल को छोड़कर तीन बलको ग्रहण करना चाहिये। स्वभाव से यह राक्षस है और परम शत्रु रावण का भाई है, और शत्रु के स्थान से आया है, इसलिये यह विश्वास के योग्य नहीं है। यह रावण का कनिष्ठ भ्राता विभीषण इसका नाम है यह चार राक्षसों के सहित आप के शरण में आया है यह विभीषण निश्चय रावण से भेजा गया है इसलिये इसका नाश मैं अवश्य करके मानता हूं। यह राक्षस कपट की बुद्धि से आपके समीप आया है यह अपनी माया से आपके साथ छल करके सेना का नाश करेगा। इस कपटी राक्षस को मन्त्रि के सहित तीव्र दण्ड से नाश कीजिये। सुग्रीवजी इस प्रकार रामचन्द्रजी से कहकर मौन होगये। सुग्रीवजी के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी समीप में बैठे हनुमान अंगद आदि बानरों से बोले, कि बिभीषण के

प्रति जो कपिराज सुग्रीवजी कहते हैं वह आप लोगों ने सुना है, आप लोग भी मित्रों के हित को चाहने वाले बुद्धिमानों में श्रेष्ठ हैं और नीति को जानने बिचार करने में समर्थ हैं, तो इस विषयमें भी आप लोग अपनी अपनी सम्मति को कहिये। श्रीरामजी को इस प्रकार पूछने से अंगद आदि बानर लोग आलस्य से रहित होकर अपनी अपनी सम्मति को कहने लगे कि हेभगवन्! तीनों लोक में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो आपसे छिपी हो परन्तु जो आपने आदर करके हमसे पूछा है तो हम लोग भी अपनी सम्मति को कहता हूं। श्रीरामचन्द्रजीसे यह कहकर विभीषणकी परीक्षाके लिये श्रीमान् अंगदजी युवराज रहे इसलिये पहिले रामचन्द्रजी से बोले, पहिले तो यह सन्देह है कि यह शत्रुके समीप से आया है इस लियेइस विभीषण का सहसा विश्वास नहीं करना चाहिये अभी यह अपने आत्मा को छिपाये है छिद्र को पाकर जब यह राक्षस कठिन कार्य का साधन करेगा तो महा अनर्थ होगा। इस संसार में अर्थ अनर्थ का बिचार करके उद्योग का सेवन करना चाहिये। कैसा व्यवसाय है। गुण का संग्रह करना चाहिये और दोष का परित्याग करना चाहिये। राजाको चाहिये कि यदि पुरुष में दोष की अधिकता हो तो उसका त्याग करे यदि गुण अधिक हो तो उनका संग्रह करे, इसके बाद शरभनाम बानर उपपत्ति युक्त बचन को बोला, हे पुरुष श्रेष्ठ रामजी! इस निशाचर के यहां दूत को भेजिये, दूत वहां जाकर अपनी सूक्ष्म बुद्धि से उसके हृदयगम बातों को बिचार करे इसके उपरान्त उस राक्षस का निग्रह अथवा उस पर अनुग्रह करना चाहिये। इसके बाद नीति शास्त्र को जानने वाले परम बुद्धिमान गुण और दोष से हीन अर्थ में श्रेष्ठ बचन को बोले, विरोध को बढाने वाला राक्षसों के राजा रावण के समीप से यह बिभीषण देश काल के विपरीत होकर आया है इसलिये सब प्रकार से इसकी शंका करना चाहिये, यह राक्षस विश्वास के योग्य नहीं है। इसके बाद न्याय को जानने वाले मैन्द अर्थ युक्त बचन

रामचन्द्रजी से बोले, हे रामजी ! उस दुरात्मा रावण का भाई यह विभीषण है इससे सौम्यभाव से मिलकर रावण का वृत्तान्त पूछना चाहिये । यह दुष्ट है अथवा शिष्ट है पहिले इस बात को जानकर पीछे इसका उपाय करना चाहिये । इसके बाद संस्कार से संपन्न मन्त्रियों में श्रेष्ठ हनुमानजी प्रिय व मधुर तथा लघु बचन को बोले, हे राघव ! आपके समान बुद्धिमान समर्थ वक्ता दूसरा कौन है आप तो बिचार करने में बृहस्पति से भी श्रेष्ठ हैं, तौ भी तर्कवाद में हम कुशल हैं इससे भी नहीं मन्त्रियों में स्पर्धा है इससे भी नहीं अधिक बुद्धिमता से भी नहीं वक्ता बनने की इच्छा से भी नहीं केवल श्रीरामचन्द्रजी के कार्य गौरव से मैं यथार्थ बचन को कहूंगा । जैसा कि अंगदजी कहते हैं कि गुण दोष का निश्चय कर इसका निग्रह अथवा इस पर अनुग्रह कीजिये यह उचित नहीं है क्योंकि इस राक्षस की यथार्थ परीक्षा एका एक नहीं हो सकती है । यदि यह कहो कि इस राक्षस को अपने समीप में बुलाकर इसके मनोगत् को जान लेवें यह भी बिना सामर्थ्य के सिद्ध नहीं होगा । यदि यह कहो कि दूत को भेजकर इसके मनके भावको जान लेवें तो यह भी नहीं हो सकेगा, इस समय दूत को भेजने का अवसर नहीं है क्योंकि वह राक्षस समीप में नहीं है उसका वृत्तान्त भी प्रकट नहीं है यदि ऐसे रहस्य को जानने के लिये दूत भेजा जावे तो उससे भी कार्य का पता नहीं लगेगा । देशकाल के विरोध में यह विभीषण यहां आया है इसलिये मारने के योग्य है सो भी उचित नहीं है क्योंकि हमारी सम्मति से विभीषण का आगमन बहुत ठीक है इस विषय में हम ऐसा बिचार करते है कि यह बिभीषण दुरात्मा रावण से आपको धर्मात्मा और उत्तम पुरुष जानकर आपके समीप आया है यही इसकी बुद्धिमानी है । क्योंकि रावण की अपेक्षा आप में पराक्रम अधिक है, जो बालि बानर रावण को कांख में दबाकर चारो समुद्र सहित पृथिवी की प्रदक्षिण किया था उस बालि बानरको आपने एक बाणसे मारकर सुग्रीव

को राज्य दिये इसलिए आपको अधिक बलवान जानकर वह आपके समीप आया है। यहि आप दूत को भेजकर समाचार जानना चाहते हो तो उसमें दोष की आशंका है, क्योंकि अनजान दूत जाकर विभीषण से पूछेगा कि आप कौन हैं, कहां से आये हैं, क्यों आये हैं यह सब पूंछने से उसके मनमें यह शंका होगी कि हम नहीं जानते हैं कि यह दूत कहां से आया है और क्या पूछता है इस प्रकार के सन्देह से युक्त होकर वह आकुल होगा परन्तु उसको कुछ उत्तर नहीं देसकेगा। वरन् मित्र भाव की हानी हो जायेगी। यदि यह कहो कि मित्र भावसे शत्रु भाव में स्थित होकर वह दूत इस राक्षस के अभिप्राय की जानेगा यह भी अशक्य है क्योंकि अज्ञात मनुष्य के पूछने पर यथार्थ उत्तर दान नहीं होता है, यदि यह मालूम होजावे कि यह दूत शत्रु पक्षका अवलंबन करता है तो प्रत्युत उसके लिये दण्डका विधान होता है इस प्रकार दूत का भेजना निष्फल होता है, हां दूत को भेजने से इस प्रकार कार्य सिद्धि होती है जैसे दूत जावे और उसके पास चिरकाल तक रहकर उसके वचन से तथा व्यवहार से उसके मन के भाव को जान सकता है, तो इससे भला यही है उसके कण्ठध्वनि के स्वर से उसके सद् असद् व्यवहार का निश्चय आपही कर सकते हैं, केवल उसके वचन मात्र से उसके अन्त की दुष्टता नहीं ज्ञात हो सकती, उसके आकार और चेष्टा आदि की प्रसन्नता से भी जाना जाता है। यदि आपके शरणमें आने से उस दुष्ट की स्थिर व स्वस्थ होगा शंकासे रहित होगा तो वह अपनी दुष्टता से रहित होगा। कितना भी कोई अपने आकार छिपा रखे परन्तु भीतरके भाव एकाएक खुलही जाते हैं। मिथ्या बल से गर्वित रावण की अपेक्षा आपके दृढ़ उद्योगको देखकर बड़े पराक्रमी बालिके बधनको तथा सुग्रीवके अभिषेकको सुनकर दुरात्मा रावण को नाश करनेकी इच्छा मनमें रखता हुआ और अपने लिये राज्य की प्रार्थना करता हुआ यह राक्षस आपके शरण में आया है मैं ऐसा जानता हूं। हे रामजी! हमको जो कुछ ज्ञान

बुद्धि शक्ति रही उसके अनुसार इस राक्षस के विषय में हम कह चुके अब इससे अधिक कहने की सामर्थ्य हमको नहीं है, अब हम लोगों के वचन को भली भांति सुनकर शेष कार्य के लिये आपही प्रमाण हैं।

इति वाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डे सप्तदशः सर्गः ॥१७॥

इसके बाद प्रसन्नात्मा रामचन्द्रजी वायुपुत्रके वचनको सुनकर अपने स्वरूप में स्थित रामजी बोले, हे मन्त्रियों! विभीषण के प्रति जो कुछ हमको विवक्षा है वह हम आप लोगों से कहते हैं सुनिये। यदि इस राक्षस में अनेक दोष हैं तो भी इस समय यह राक्षस मित्र भाव से आया है, इसका निग्रह हम नहीं करना चाहते हैं। क्योंकि शरणमें आये हुए का निग्रह करना शास्त्र में निषेध और लोक में निन्दनीय है। इसके उपरान्त रामचन्द्रजी के वचन को अच्छी तरह विचार करके बानरों में श्रेष्ठ सुग्रीवजी बोले, कि यह निशाचर चाहे सदोष हो अथवा दोष से रहित हो परन्तु ग्रहण करने के योग्य है। क्योंकि यह निशाचर शत्रु से घोर व्यसन को पाकर जो अपने भाई रावण का त्याग करके यहां आया है तो फिर ऐसा कौन मनुष्य है कि जो संकट में पड़े हुए इसको त्याग करे। शरणागत का त्याग करना विश्वासघाति व कृतघ्न का कार्य है। बानरों के राजा सुग्रीवजी सब बानरों को तथा लक्ष्मणजी को देखते हुए बोले, लक्ष्मणजी सुग्रीवजी के पूर्व वचन की प्रशंसा करने के लिये प्रसन्न मन से सत्य पराक्रमी रामचन्द्रजी से बोले, इस समय बानरों के राजा सुग्रीवजी जो कहते हैं यह बहुत न्याय है क्योंकि बिना वेद शास्त्र को पढ़े, बिना बड़ों की सेवा किये इस प्रकार वचन दूसरा कोई नहीं कह सकता है। इसके विषय में जो कुछ हमारी बुद्धि में आता है वह मैं भी कहता हूं, यहां पर भाई को परित्याग करना सर्व राष्ट्र में प्रत्यक्ष सिद्ध है, फिर हमको जो कुछ ज्ञात होता है वह मैं कहता हूं। राजाओं के शत्रु दो प्रकार के होते हैं, पहिले कुल वाले तथा ज्ञाति वाले होते हैं। दूसरे राज्यवासी होते हैं। यह दोनों प्रकार के शत्रु राजा से पीड़ा को पाकर उसके नाशकी इच्छा करके

राजा के शत्रु से मिलने को जाते हैं, राजाओं को अपने जात से सदा शंका रहती है. क्योंकि वे ज्ञाति वाले राज्य धन के लोभ से राजा के अनिष्ट की चिन्ता किया करते हैं, इस कारण रावण से यह अपना अनिष्ट देखकर उसको त्याग करके यहां आपकी शरण आया है। रावण को नाश करने की इच्छा से यदि इसका आगमन है तो भी दोष नहीं है। यदि यह कहो कि यह क्रूर स्वभाव से तमोगुण प्रधान सहित मूर्ख यह राक्षस है इसको इतना विचार कहां तो सकल चराचर जीवों में मूर्ख व पण्डित होते हैं। देखिये इसके कुलमें रावण रजोगुणी है कुंभकर्ण तमोगुणी है इसलिये यह विभीषण सतोगुणी अवश्य है और इसको रावण से भय है इसलिये यह अपनी रक्षा चाहने के लिये यह यहां आया है। जगत में सबके भाई भरत के समान नहीं हैं जो राज्य के लोभ से ज्येष्ठ भाई का त्याग किया है और आपके समान दूसरे पुत्र नहीं होंगे जो सुख की लिप्सा से भी पिता के बचन का उल्लंघन नहीं किया है, और आप लोगों के समान मित्र होना भी कठिन है, जो सब प्रकार के सुख को छोड़कर अनेक प्रकार के प्रयत्न से मित्र के कार्य का साधन करना चाहते हैं। इस सब प्रकारके न्याय से विभीषण भी ग्रहण करने योग्य है। इस प्रकार रामचन्द्रजी से कह कर सुग्रीव व लक्ष्मण आसन से उठकर रामचन्द्रजी को प्रणाम करके बचन को बोले, हे भगवन्! रावण से भेजा हुआ दूत इसको जानो इस लिये इस राक्षस को बध करना चाहिये। हे क्षमा करने वालों में श्रेष्ठ रामजी! यह राक्षस कपट की बुद्धि से यहां आया है, यह राक्षसविश्वास देकर छल करने के लिये आया है, हे महाबाहु लक्ष्मण! कठोर पापी रावण का भाई यह विभीषण मन्त्रियों के सहित मारने के योग्य है। रघुकुल में श्रेष्ठ रामचन्द्रजी से सेनापति सुग्रीव इस प्रकार कहकर मौन हो गये। सुग्रीवजी के बचन को सुनकर विचारयुक्त होकर सुन्दर बचन से सुग्रीवजी बोले, यह राक्षस चाहे सदोष हो चाहे निर्दोष हो परन्तु यह हमारा कुछ भी अनिष्ट नहीं कर सकता। पिशाच हो दानव हो

यक्ष हो और पृथिवी के राक्षस हों उनको मैं अपने अंगुली के आगे के भाग से नाश कर सकता हूं, और एक पुरातन इतिहास सुना है कि एक कपोत की स्त्री को मारकर एक बहेलिया उस वृक्ष के नीचे जा बैठा कि जिस वृक्ष पर उस कपोतनी का पति कबूतर रहता था। उसने बहेलिये को अपने शरण में आया जानकर यथा विधि से अग्नि आदि को लाकर उसको शीतसे बचाया पीछे अपने मांससे उसको भोजन दिया तो इस कारण शरण में आये हुए शत्रु की भी रक्षा करना चाहिये। यदि यह कहो कि वह पक्षी था उसकी चेष्टा व क्रिया का धर्म में कैसे प्रमाण हो सकता है तो इस प्रकार की गाथा कण्व ऋषि के पुत्र महर्षि कण्डुमुनि भी कहे हैं कि प्राण मारने वाला भी यदि अपने शरण में आजावे तो उसके प्राण को न मारकर उसकी रक्षा करनी चाहिये। यह राक्षस चाहे पीड़ा से आया हो चाहे अभिमान से इसकी रक्षा करना चाहिये यह सज्जनों की न्याय है। जो कोई भय मोह अथवा काम से शरण आये की रक्षा नहीं करता है वह पापी लोक में निन्दा के योग्य होता है। जो कोई शरण में आये हुए की रक्षा नहीं करता और पीड़ित को सन्मुख देखकर उसका उपकार नहीं करता है वह उसके सुकृत को लेकर चले जाते हैं। शरण में आये हुए की जो रक्षा नहीं करता है उसका बल यश कीर्ति पराक्रम भी नाश होता है। इस कारण अपने धर्म यश कीर्ति स्वर्ग के मार्ग को कलुषित नहीं करके यथा सामर्थ्य कण्डुमुनि के बचन को पालन करूंगा। इसके अतिरिक्त चराचर जीवों को अभयदान देने का हमारा व्रत है जीव मात्र में किसी को भय न होवे, जो भय से पीड़ित होगा उसकी रक्षा हम करेंगे। हे बानरों के स्वामी सुग्रीव! इसको बुलाइये हम इस राक्षस के भय मोचन करूंगा यह चाहे विभीषण हो अथवा स्वयं रावणही हो यदि यह शरण में आया है तो इसकी रक्षा अवश्य करूंगा। बानरों में श्रेष्ठ सुग्रीवजी श्रीरामचन्द्रजीके बचन को सुनकर सौहार्दसे पूरित होकर श्रीरामचन्द्रजी से बोले, हे धर्म को जानने वाले! हे राजकुल के शिरोमणि! सन्मार्ग

पर स्थित होकर आप जो यह कल्याण के बचन को कहते हैं इस में क्या चित्र है, हे महाप्राज्ञ रामजी! यह विभीषण मित्रता के लिये आया है आप भी हम सब मन्त्रियों के समान् इसको देखिये। इसके उपरान्त सुग्रीवजी विभीषण को लिवाकर श्रीरामजी के सन्मुख खड़ा करके बोले स्वामी! यही विभीषण है।

इति वाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डे अष्टदशःसर्गः ॥ १८ ॥

श्रीरामचन्द्रजी से अभयदान को पाकर परम पण्डित विभीषण नीचे को शिर किये पृथ्वीको देखता हुआ अपने चार सेवकों के सहित प्रसन्नता पूर्वक आकाश से पृथिवी पर उतर पड़ा और अपने चार मन्त्रियों के सहित श्रीरामचन्द्रजी के चरण को ग्रहण करके रामचन्द्रजी के प्रतिबोला, हे भगवन्! हम दुष्टात्मा रावण के भाई हैं इस कारण दर्शन मिलने में इतना बिलम्ब हुआ है। परन्तु आपतो सकल प्राणियों को शरण्य हैं, शरण में आये हुएको रक्षा करने वाले हैं, मैं मित्रको धनको व लंकापुरी को छोड़कर आपके शरण आया हूं अब आप ही के आधीन हमारा राज्य और हमको सुख है। विभीषण के इस प्रकार बचनको सुनकर रामचन्द्रजी बोले, हे विभीषण! रावण के और हमारे बलाबल को विधिपूर्वक हमसे कहिये। श्री रामचन्द्रजी के मुख से इसप्रकार के बचन को सुनकर रावण के बलको विस्तार पूर्वक विभीषण कहने लगे कि हे राजपुत्र! ब्रह्माजी से बरदान को पाकर देवता दैत्य गंधर्व यक्ष किन्नर पतग उरग आदि सकल जीवों से अपने को अमर समझता है। रावण से छोटा और हमसे बड़ा हमारा भाई कुम्भकर्ण अत्यन्त वीर्यवान व पराक्रमी है। युद्धमें इन्द्रके समान बलवान है और रावण का मन्त्री प्रहस्तनाम राक्षस है, वह महापराक्रमी है, वह प्रहस्त कैलास पर रहने वाले मणिभद्रनाम यक्षको समर में पराजय किया है। इसके बाद रावणका पुत्र इन्द्रजित अनेक अस्त्र शस्त्र को जानने वाला तथा कवच बक्तर को धारण करने वाला है और माया युद्धको भली भांति जानता है, समर के व्यूह में अग्निको आ-

हुति देकर श्रीमान् इन्द्रजित् अन्तर्धान होजाता है और छिपकर शत्रु को नाश करता है और महोदर महापार्श्व आदि अनेक बलवान राक्षस संग्राम में लोकपाल के समान हैं। रक्त मांस को खाने वाले दश करोड़ राक्षस लंकापुरी में निवास करते हैं। उन राक्षसों के सहित रावण ने इन्द्रादि लोकपालों के साथ युद्ध करके उनको अपने आधीन कर लिया है। इस प्रकार विभीषण के बचन को सुनकर उसके बातों को मनसे विचार करके इस प्रकार बोले, हे विभीषण ! रावण की जो कुछ वीरता है वह तुम्हारे कहने से हम जान गये। अब यह मैं सत्य प्रतिज्ञा तुमसे करता हूं उसको सुनो । पुत्र और मन्त्रियों के सहित रावण को मारकर लंकापुरीका राज्य तुमको देवेंगे, यदि रावण अपने प्राणको लेकर रसातल में जावे व पाताल में जावे अथवा स्वयं ब्रह्मा जी भी उसकी रक्षा करना चाहें तौ भी मैं उसको जीता हुआ नहीं छोड़ूगा। हम अपने तीनों भाइयों का शपथ खाकर कहते हैं कि पुत्र मन्त्रि तथा बन्धुबान्धव सहित रावण को युद्धमें बिना मारे हम अयोध्यापुरी को नहीं जावेंगे। दुष्कर कर्म को करने वाले श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर विभीषण साष्टाङ्ग दण्डवत किया और रामजी को सन्तोष के लिये कुछ अपने भी कहने को उद्यत हुआ। कि हे राघव ! जबतक हमारे शरीर में प्राण रहेगा तबतक मैं रावण की सेना में प्रवेश करके आपकी सहायता करूंगा। इस प्रकार विभीषण के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी विभीषण को हृदय से लगा लिये और प्रसन्न होकर लक्ष्मणजी से बोले कि आप समुद्र से जलको मंगाकर विभीषणको अभिषेक कीजिये। श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी ने समुद्र के जलसे अभिषेक करके बानरों के मध्य में विभीषण को भी अपना मन्त्री बनाया। इस प्रकार रामजी की प्रसन्नता विभीषण के ऊपर देखकर बानर लोग सन्तोष पूर्वक किलकिला शब्द करने लगे और साधु साधु कहने लगे। इसके उपरान्त रामचन्द्रजी हनूमान सुग्रीव विभीषण आदि मन्त्रियों से बोले कि इस दुर्गम समुद्र

के पार होने का क्या उपाय है कि जिसमें हम इन बानरों की सेना के सहित समुद्र के पार होजावें । रामचन्द्रजी के बचन को सुन कर विभीषण बोले, हे स्वामी ! समुद्र के शरणमें चलनेसे सेना को उतरने का मार्ग हो सकता है क्योंकि महाराज सगर के सन्तानों से इस समुद्रकी उत्पत्ति है, आपका परिचय पाकर यह समुद्र अवश्य आपके कार्यको साधन करेगा । राक्षसों में पण्डित विभीषण के बचन को सुनकर लक्ष्मण सहित जहां रामचन्द्रजी बैठे थे वहां सुग्रीव जी आये और विभीषण के कहे हुए बचन को रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीसे कहने लगे । समुद्र के शरण में जाना यह विभीषण का बचन श्री रामचन्द्र जी को उत्तम जान पड़ा इसी बातको लक्ष्मणजो व सुग्रीव ने भी स्वीकार किये । इसके उपरान्त रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले, कि कार्य व बिचार में चतुर विभीषण की राय यह हमको बहुत अच्छी मालूम पड़ती है अब हे लक्ष्मणजी ! आप और बिचार में प्रवीण सुग्रीव आप दोनो सोच बिचार कर जो बात हो वह निश्चय कीजिये। इस प्रकार रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर लक्ष्मण व सुग्रीव बोले, हे राघव ! हे पुरुष श्रेष्ठ ! आपके मुखकी बात हमलोगों को क्यों नहीं रुचेगी, विभीषण जो बात कहते हैं वह इस समय सुखको देने वाली है क्योंकि इस दुर्गम समुद्र में बिना सेतु को बांधे इन्द्रादिक देवता भी लंकापुरी में नहीं पहुंच सकते हैं । इसलिये विभीषण के बचन को अंगीकार करके समुद्र के शरण में जाना उचित है जिसमें यह सेना रावणकी पुरीमें पहुंचजावे, यहां किनारे पर बैठकर समय को बिताना उचित नहीं हैं । मन्त्रियोंको ऐसा कहकर रामचन्द्रजी समुद्रके किनारे कुशासन पर इस प्रकार बैठे जैसे वेदीपर अग्नि प्रकाशित होता है

इति वाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डे एकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥

इसके उपरान्त शार्दूलनाम बलवान राक्षस सुग्रीव से पालि सेना को समुद्र के तटपर पड़ी देखकर राक्षसराज रावण की लंकापुरी में प्रवेश करके रावण से बोले, हे राजन् ! दूसरे समुद्र के समान

गंभीर वानरों की सेना लंकापुरी को विध्वंस करने के लिये समुद्र के किनारे पड़ी है । और उसी सेना के मध्य में रामचन्द्र व लक्ष्मण सूर्य चन्द्रमा के समान विराजमान हैं वह दोनों राजकुमार उत्तम रूपसे सम्पन्न हैं और सीता देवी की रक्षाके लिये सेना को लेकर समुद्र के तटपर आये हैं । उन वानरों की सेना आकाशको स्पर्श करती हुई दशयोजन के घेरे में पड़ी है । इस तत्वको कहने के लिये मैं शीघ्र आया हूं अब आप चाहे सीता को देवें, अथवा सुग्रीव आदि मन्त्रियों से साम व भेद का आश्रय लेवें इसमें आपही प्रमाण हैं । राक्षसों के राजा रावण शार्दूल के वचन को सुनकर पहिले तो व्यग्र होगया पीछे से अपने को संभाल कर शुकनाम मन्त्री को बुलाकर रावण बोला, हे शुक ! तुम हमारी आज्ञा से सुग्रीव के पास जाओ और हमारा सन्देश यथार्थ और सुमधुर बचन से उनसे कहो कि रावण ने आपको यह सन्देश कहा है कि आप उत्तम कुलमें उत्पन्न हो और महा बलवान तथा पराक्रमी हो, तथा ऋक्षराज के पुत्र हो यह सब श्रेष्ठता होते हुए भी रामचन्द्रकी सहायता करने में तुम्हारा क्या प्रयोजन है और तुमको कौन से उत्तम फल का लाभ है, यदि रामचन्द्रजी से आपका कोई प्रयोजन सिद्ध है तौ भी आप हमारे भाई के समान हैं, हमारे विषय में आपको उदासीनता करना उचित नहीं है । हमने अगर स्त्री हरण किया तो राम की स्त्री को हरण किया उसमें तुम्हारी क्या हानी है । तुम व्यर्थ हमारे साथ विरोध करने को प्रस्तुत होते हो तुम सब वानर प्रसन्नता पूर्वक किष्किन्धापुरीको लौट जाओ । यदि तुम हमारे बचनको न मानकर लंकापुरीमें प्रवेश करनेकी इच्छा करोगे तौ भी इस राक्षसोंकी पुरी पर तुम्हारा कुछ भी बश व पराक्रम नहीं चल सकेगा, क्योंकि यह लंकापुरी इन्द्रादि देवताओं को भी दुर्गम है, मनुष्य और वानरकी क्या गणना है । राक्षसों के राजा रावण से इस प्रकार की आज्ञा को पाकर शुक रावण का मन्त्री पक्षी का रूप धारण करके आकाशमार्ग होकर

उड़ता हुआ चला। समुद्र के ऊपर ऊपर पार में आकर आकाश में ठहरकर सुग्रीव से बोला, हे सुग्रीव बानर! दुरात्मा रावण ने जो कुछ सन्देश कहा है उस को सुनो, ऐसा कहकर रावण के समस्त वृत्तान्त को सुग्रीव से कह सुनाया, इधर बानर लोग उस को रावण का दूत जान कर कुछ बानर उसको आकाश में से पकड़ लाये और उसके को बांधकरपंख लातों मुक्कों से उसको दण्ड देने लगे। जब बानरों से अत्यन्त पीड़ा को शुक पाया तब हाथ जोड़कर रामचन्द्रजी से बोला कि, हे रामजी! इन बानरों को मना कीजिये, क्योंकि दूत को मारना उचित नहीं है। जो स्वामी के समाचार को यथार्थ नहीं कहता है और अपने इच्छा के अनुसार कार्य करता वह दूत स्वामी को नाश करने वाला है, और जो दूत अनूक्तवादी है वह बध करने के योग्य है। शुक के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी बानरों से बोले कि आप लोग इस दूत को मत मारिये। इस तरह रामचन्द्रजी के बचन जो सुनकर निर्भय होकर शुक पहिले के समान उड़ता हुआ रावण की सभा की ओर चलते समय बोला, हे सुग्रीव! तुम महाबलवान व पराक्रमी हो, परन्तु मैं रावण के समीप जाकर क्या कहूंगा। अत्यन्त बुद्धिमान सुग्रीव शुक के बचन को सुनकर बोले, हे दूत! तुम जाकर रावण से हमारा यह समाचार कह देना कि जिस प्रकार रामजी से विरोध करके बालि नाश को प्रात हुआ उसी प्रकार परिवार के सहित रावण का भी नाश होगा और भी कहना कि हे रावण! तुमको पुत्र बंधु ज्ञाति और मित्रों के सहित बध करके इन बानरों की सेना लंकापुरी सेको भस्म करूंगा। सिवायइसके और भी कहना कि हे मूढ़! यदि तुम्हारी रक्षा इन्द्रादिक देवता करें अथवा तुम सूर्य लोक में चले जाओ या पाताल में निवास करो चाहे साक्षात् शिवजी भी तुम्हारी रक्षा करना चाहें तौ भी तुम रामचन्द्रजी के बाण से परिवार सहित नहीं बचोगे। देवता गंधर्व दैत्यों के मध्य में तथा तीनों लोक में ऐसा कोई नहीं है जो तुम्हारी रक्षा करसके, तुम बुड्ढे जटायु को

मार कर राम लक्ष्मण से शून्य स्थान से जानकी को हरण किये इसी से अपने को बलवान् जानते हो, क्या तुम देवताओं को भी त्रास देने वाले रामचन्द्रजी की महिमा को नहीं जानते हो, जो तुम्हारे भी प्राण को हरण करने वाले हैं। सुग्रीवजी के बात चीत को सुनकर अंगदजी बोले, हे राजन्! हमको ऐसा मालूम होता है कि यह रावण का दूत नहीं है बरन रावण का यह गुप्त चर जान पड़ता है यह हमारी सेना का पता लगाने आया है इसको विशेष दण्ड देना चाहिये। अंगदजी के बचन को सुनकर सुग्रीवजी ने आज्ञा दिया कि यदि यह शुक राक्षस ऐसा है तो इसको इतना कठिन दण्ड देओ जिसमें फिर यह लौट कर लंकापुरी को न जावे? सुग्रीव के बचन को सुनकर बानर अनाथ के समान विलाप करते हुए उस राक्षस को पकड़ कर उसे दण्ड देने लगे। शुक बानरों से दण्ड को पाकर महाराज दशरथ के पुत्र महात्मा रामचन्द्रजी के शरण को पुकारने लगा। और कहने लगा कि हमारे पक्ष (पंख) कटगये और हमारी आंखे फूट गईं। जो कुछ हमने जन्म जन्मान्तर में अशुभ कर्म किया था उसका फल पागये। हे रामजी! अब कृपा करके इन बानरों के हाथ से हमारा प्राण बचाइये। उस राक्षस के करुणामय बचन को सुनकर रामचन्द्रजी अङ्गद आदि बानरों से बोले कि आये हुए दूत को छोड़ दीजिये, उसका प्राण मारना उचित नहीं है॥

इति वाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डेविंशः सर्गः॥ २०॥

इसके उपरान्त समुद्र के तटपर कुशासन के ऊपर सेना को उतरने के लिये हाथ जोड़कर समुद्र से मार्ग को प्रार्थना करते हुए रामचन्द्र जी पूर्व मुख होकर शयन किये। श्री रामचन्द्रजी का बाहु सर्प के फणके समान विशाल है और उत्तम मणियों के तथा मोतियों के अलंकार से वह भुजा भूषित है और उस भुजामें मलयागिर चन्दन का लेप हुआ है। वह रामजी समर में शत्रुको शोक बढाने वाले हैं और मित्रों को आनन्द देने वाले हैं, जैसे पृथिवी के चारों ओर समुद्र प्रतिष्ठित

है वैसे ही समुद्र के समान रामचन्द्रजी भी प्रतिष्ठा व मर्यादा को धारण किये हैं। इस प्रकार रामचन्द्रजी धैर्य को धारण करके हजारों गौ को दान देने वाले हैं और इस प्रकार की प्रतिज्ञा किये हैं कि या तो आज समुद्र से मार्गको पाकर हमारी सेना उस पार उतरेगी, अथवा हमारा मरण होगा। इस भांतिकी प्रतिज्ञासे कुशासन पर शयन किये तीन रात्रि पर्यन्त समुद्रकी उपासना करते रहे, परन्तु अज्ञानी समुद्र अपनी पूजाको भी पाकर श्रीरामचन्द्रजी को दर्शन नहीं दिया। इसके उपरान्त क्रोधित होकर रामचन्द्रजी आंख को लाल किये समीपमें स्थित लक्ष्मणजी बोले, हे सौमित्रेय! देखिये समुद्र अपने अभिमानके मारे हमारे समीप नहीं आया है, शान्ति क्षमा और नम्रता तथा सुन्दर बचन यह सज्जनों के गुण हैं दुर्जन प्राणिमें ये सब निष्फल हो जाता हैं। लोक में बिना दण्ड को धारण किये पुरुष की कीर्ति नहीं रहती यदि कहिये कि यह कीर्ति साम (शांति) से रह सकती है तो सामको ग्रहण करने से कीर्ति व यश नहीं रहता और न तो शान्ति से कार्य करने वाले का लोक में आदर होता है। इसलिये लक्ष्मण जी! इस लोक में संग्राम में प्राप्त हमारा चाहे विजय हो अथवा पराजय हो परन्तु मैं अपने बाण से समुद्र में रहने वाले मछली आदि जन्तुओं को मृतक करके सर्पराज के फण के समान समुद्रके जलको ढांप देवेंगे देखिये इन मछलियों के विशाल शरीर को, इनके विशाल शरीर ऐसे हैं जैसे जंगली हाथियों के सूंड विशाल होते हैं, इन जन्तुओं को अपने बाण से नाश करके समुद्र के जलको व्याकुल कर देवेंगे। आज बड़े भारी राक्षसों के युद्ध में समुद्र को शोषण करूंगा, यह समुद्र क्षमा करने के योग्य नहीं है, क्योंकि यह हमको असमर्थ जानता है। ऐसे दुर्जन पर क्षमा करने वालेको धिक्कार है। आज हम तीन दिन से इसकी उपासना करते हैं तौ भी इसने अपना दर्शन नहीं दिया है। हेसौमित्र! विषैले सर्पके समान संसार को नाश करने वाले हमारे बाण को दीजिये, मैं अपने बाण से समुद्र को सुखाकर मार्ग

को बनाऊंगा कि जिस मार्ग से इन बानरों की सेना पैदल उतर कर उस पार में पहुंचे । इतने दिन तक समुद्र को क्षोभ नहीं हुआ है परन्तु आज इस समुद्र को क्षभित करूंगा और अपने बाण से इस प्रकार मर्यादा को बनाऊंगा कि जिसमें आज से सकल प्राणी समुद्र लांघ सकै इनकी मर्यादा को नष्ट करूंगा और महा दानव के सहित इस समुद्र को पाताल पुर में भेजूंगा । ऐसा कह कर धन्वा को धारण करने वाले रामचन्द्रजी अपने भौंह को चढ़ाकर क्रोध के मारे प्रलय काल के आग के समान जलने लगे और अपनी कठिन धन्वा को चढ़ाने से चराचर जीवों के सहित पृथिवी कांपने लगी । जैसे इन्द्र को क्रोधित हुए हाथ में वज्र उठाये देखकर सकल जीवों के सहित पृथिवी कांपने लगती है वैसेही रामचन्द्रजी के कठोर बाण को देखकर भूकंप होगया और समुद्र के तरंग निश्चल होगये समुद्र में रहने वाले जलचर जन्तु व्याकुल होगये, समुद्र के अन्तर्गत रहनेवाले महादानव भयके मारे पातालपुरमें जानेकी इच्छा किये विन्ध्य पर्वत और मन्दराचल आदि अनेक पर्वत समुद्रमें रहनेवाले क्षुभित होगये कि श्रीरामजीके बाणके भयसे उनके शिखर अपने आप टूटकर गिरने लगे । समुद्र के किनारे पर निवास करने वाले मुनिजन सम्भ्रान्त होकर अपने अपने लोक को भाग लगे, और कहने लगे कि महाकष्ट पहुँचा, समुद्रका गर्जना बन्द होगया । इधर रामचन्द्रजी धनुष पर बाण को चढ़ाकर सकल जगत को त्रास देही रहे थे और उनके बाण के भय से सकल चराचरजीव अपना प्राणनाश जानकर त्राहि २ करते थे, तब तक लक्ष्मणजी सबके त्राहिको सुनकर और रामचन्द्रजी को उग्रबाण धन्वापर चढाये देखकर उनके समीप में जाकर बोले, हे प्रभो ! मुझको जानकर ऐसा न कीजिये । बाण को विना सन्धान किये समुद्र आपके कार्यको सम्पादन करेगा आपके समान बीर पुरुष को इस प्रकार क्रोध करना चाहिये आकाश मार्ग से ब्रह्मर्षि देवर्षि आदि सब लोग बड़े कष्ट के शब्दसे शरण को पुकारते

हैं आप अपने बाण को रोकिये आपको बिना क्रोध किये समुद्र आपके कार्य को साधन करेगा ।

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे एकविंशसर्गः ॥२१॥

श्रीलक्ष्मणजी के इस प्रकार के वचन को सुनकर क्रोधयुक्त रामचन्द्रजी दारुण शब्द से बोले, कि आज मैं समुद्र को पाताल के सहित सुखावेंगे, जब हमारे बाण से यह समुद्र सुख जावेगा और शंख शुक्ति ग्राह मकर मछली आदि जन्तु जब मर जायेंगे इस समुद्र के मध्य में जब धूली उड़ने लगैगी तब हमारी सेना प्रसन्न होकर उतर जावेगी । हे सागर ! जब तुम जल की राशि से पूर्ण हो तौभी हमारे बाण से तुम्हारे प्राण का अवश्य नाश होगा । इस प्रकार रामचन्द्रजी कहकर ब्रह्मास्त्र से प्रयोग कर के दण्ड का श्रेष्ठ धन्वा के ऊपर चढ़ाये, जब उत्तम ब्रह्मसर को चढ़ाकर डोरी खैंच तब पर्वत सहित पृथिवी कांपने लगी, नदी आदि जलाशय क्षुभित होकर उमग उठे, दिशायें मलीन हो गईं । आकाश से नक्षत्र टूट कर गिरने लगे । सूर्य का प्रकाश अन्धकारमय होगया । वज्र का पतन होने लगा । वायु इतने वेग से चलने लगा कि उसके चलने से वृक्ष टूटकर गिरने लगे और पर्वतों के शिखर टूट कर गिरने लगे और आकाश भयंकर बद्दलों की गर्जना होने लगी तथा बिजुली गिरने लगी । सकल प्राणियों में मूर्छा होने लगी । समुद्र भय के मारे अपना किनारा छोड़कर एक योजन हट गया तौभी रामचन्द्रजी अपनी धन्वा से बाण को नहीं उतारे और न तो अपने हृदय में क्षुभित हुए । इसके बाद समुद्र के मध्य से सागर स्वयं उठकर अत्यन्त विष को धारण करने वाले सर्पों के सहित चारो ओर देखा, तब रामचन्द्रजी को अपने ऊपर क्रोधित देखकर रत्नों का माला धारण किये शुक्ल वस्त्र को पहिने कमल नयन और उत्तम उत्तन पुष्पों की माला को गले में पहिने ब्राह्मण का रूप धारण करके गंगा आदि नदियों के सहित श्रीरामचन्द्रजी के समीप में आकर बोला ।

कवित्त-एहो रघुबीर भय भीरु हौ कहत तोतैं मोते कंह परी चूक छपा कर सुनाइये ।
सीता दशकन्धहरी कौन जाने कौन घरी छुपी होय मोले तब हमको बताइये ॥

कहो सुखि जांव कहो तरे बिन नाव से न कहो लंका बोरौं नेकु आयसु जोपाइये।
कारन करन हौं तो सागर तरन आयो लागत चरण मोहि काहे को जराइये॥

इस प्रकार बिनती करके समुद्र रामचन्द्रजी के चरणों पर गिर पड़ा और कहने लगा कि हे प्रभो! पृथिवी वायु आकाश जल व तेज ये सब सदा अपने स्वभाव में स्थित रहते हैं इसी तरह सज्जन लोग भी सदा अपने स्वभाव की मर्यादाको नहीं छोड़ते हैं। इसी कारण इतने दिनोंतक मैं भी अगाध रहता था परन्तु आज अपने को तुच्छ समझ कर मैं आप को पार होने का उपाय बताता हूं। हे रामजी! जल जन्तुओं के सहित ये जल काम लोभ और भय से स्तंभित नहीं होंगे। ऐसा उपाय करना चाहिये जिसमें मेरा नाश न हो और यह सेना आनन्द से पार चली जावे। बानरों को जाने के लिये ऐसा मार्ग बनाइये जिसमें जल ग्राह बानरों को खा न जावें इसके उपरान्त रामचन्द्रजी समुद्र से बोले, हेसागर! तुम हमारे बचन को सुनो कि मैं अपने इस अमोघ बाण को अब कहां छोड़ूं। श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर समुद्र बोला, हेस्वामी! इस हमारे उत्तर देश में द्रुमकुल्य नाम एक नगर है वहां पर अत्यन्त पापी मनुष्य रहते हैं वह सदा आकर हमारे से स्नान किया करते हैं उनके स्पर्श से हमको अत्यन्त दुःख होता है इसलिये आप अपने अमोघ बाण को उसी प्रदेश में छोड़िये, समुद्र के इस प्रकार बचन को सुनकर रामचन्द्रजी समुद्र के उत्तर तीर में अपने उस बाण को छोड़ा है उसी बाण को छोड़ने से वह आज तक मरुदेश कहा जाता है। उस रामचन्द्रजी के बाण से पीड़ित होकर जल आदि के सहित उतनी भूमि रसातल को चली गई। और उस बाण के आघात से पीड़ित पृथिवी गर्जना करने लगी। और खन्धा होकर रसातल से जल को लेकर ऊपर में पूरा हो गई, उस खन्धा का नाम ब्रह्मकूप हुआ। और उस खन्धे का जल दूसरे समुद्र के समान विस्तारित हुआ। उस जल को भी रामचन्द्रजी ने अपने बाण से सुखादिया। उसी से उसको मरूकान्तार कहते हैं। उस मरुकान्तार में बाण से उत्पन्न खन्धे के जल को भली भांति रामचन्द्रजी

अपने बाण से सुखा दिया। उसीसे उसको मरुकान्तर कहते हैं। उस मरुकान्तर में बास से उत्पन्न स्कन्धे के जलको भली भांति रामचन्द्रजी अपने दूसरे बाण से सुखाकर उस देशके लिये बरदान दिये कि इस कान्तार में अनेक प्रकार के पशु पक्षी तथा अनेक सुगन्धित औषधी अधिक दूध देने वाली गौओं से यह देश परिपूर्ण हो जावे, इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी के बरदान से वह देश धनरत्न से परिपूर्ण होगया। उस स्कन्धा के जलको सुखाना देखकर ब्राह्मण का रूप धारण किये समुद्र श्रीरामचन्द्रजी से बोला, हे प्रभो! इन विश्वकर्मा के पुत्र श्रीमान् नलको ब्रह्माजी ने प्रसन्न होकर बरदान दिया है, उस बरदान के प्रभाव से यह नल नामके बानर हमारे ऊपर सेतुको बांधे और मैं उस सेतुको धारण करूंगा। ऐसा कहकर विप्र रूप धारी समुद्र अन्तर्धान होगया। इसके बाद बिश्वकर्मा के पुत्र नल उठकर रामचन्द्रजी से बोले, जलसे अधिक विस्तार को दिखाने वाले समुद्र में पिता के बरदान से मैं सेतु को बाधूंगा। समुद्र जो कहा है वह सत्य है। परन्तु लोक में दण्ड की प्रशंसा है क्षमा की नहीं ऐसी हमारी मति है। क्योंकि जो लोग का तथा सामर्थ्य को नहीं जानते हैं उनके लिये दण्ड श्रेष्ठ है, सामर्थ्य को न जानने वाले पुरुष में क्षमा उचित नहीं है क्योंकि देखिये कि यह सागर महाराज रामचन्द्रजी के पुरुषों में महाराज सगर से उत्पन्न हुआ है फिरभी इनके सामर्थ्य और कार्य को न जानकर इस समय केवल रामजी के क्रोध से अपना नाश जानता हुआ अपने जल को थाह कर दिया और सेतुके भारको सहन करने में सहमत हुआ इसलिये लोक में दण्डका आदर होता है क्षमा की मर्यादा को दुष्टजन नहीं जानते हैं। इस प्रकार दण्ड व क्षमाका विचार करके नल नाम बानर अपनी उत्पत्ति को कहने लगे कि एक समय मन्दराचल पर्वत पर हमारी माता को हमारे पिता ने बरदान दिया कि हे देवि! तुमको हमारे समान बलवान पुत्र उत्पन्न होगा, उसी बरदान के प्रभाव से हमने विश्वकर्मा से और सपुत्र उत्पन्न हुआ, इसलिये वस्तुकी रचना करनेमें

हमको हमारे पिताके समान सामर्थ्य है मैं अपनी सामर्थ्यसे समुद्रमें सेतु को बांधूंगा अब यह बानर लोग पर्वत आदिको इकट्ठा करें। इस प्रकार नल के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी अंगद हनुमान द्विविद मैन्द आदि बानरों को आज्ञा दिये कि आप लोग सेतु बांधने की सामग्री को इकट्ठा करो। श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर वे बानर गण अपनी अपनी सेना लेकर समुद्र के समीप के बनमें चले गये और साल, अश्वकर्ण, खैर, बांस. कुटज, अर्जुन, ताड़, तिलक, विल्व, छतून, कन्नैल, आम्र, अशोक, अमोसरी, निम्ब, कदम्ब, बट, ताल, दीडिम, नारि, केल, करीर, बकुल आदि के वृक्षों को उखाड़ कर समुद्र के किनारे ले आये, इसके बाद बड़े बड़े पहाड़ों को तथा पत्थल के शिलाओं को इकट्ठा किये और उन्हीं वृक्षों तथा पहाड़ों से सेतु को नल बांधने लगे। बानर लोग बड़े बड़े पहाड़ों को उखाड़ कर आकाश मार्ग से दौड़ते हुए आवे नलको देकर फिर उछलते फलांग देते हुए चले जावें। इस तरह समुद्र में पर्वतों को फेक कर समुद्र को बानरों ने क्षुभित कर दिया और कोई लोग सूत्र को लेकर पूल की ऊंचाई लंबाई चौड़ाई को नापते हुए पर्वतों को ठीक करते जाते हैं. क्योंकि सौ योजन लंथा सेतु को बाधना है। घोर कर्म करने वाले बानरों ने सेतु बांधने की ऋण और काष्ठ आदि सामग्री को एकत्र किये और बानरों में श्रेष्ठ विश्वकर्मा के पुत्र नल सेतु को बांधते जाते थे, बड़े बड़े पत्थल के चट्टानो को तथा पर्वतों को फेंकने से समुद्र में बड़ा संकुल शब्द होता था। इस प्रकार परिश्रम करने वाले बानरों ने पहिले दिन में चौदह योजन तक काष्ठ व पत्थल तथा पर्वतों से पूल को बांधा, फिर इसके बाद प्रसन्न होकर वृक्ष पर्वत शिखर शिला आदि को इकट्ठा करने लगे। दूसरे दिन इसी प्रकार से बीस योजन तक सेतु बंधा तीसरे दिन इकीस योजन तक चौथे दिन बाईस योजन तक पांचये दिन तेईस योजन तक पूल को बांध कर सौ योजन के समुद्र में श्रीमान् नल ने सेतू को बांधकर पांच दिन में बानरों की सेना को उतरनेका मार्ग बना दिया। जिस प्रकार

कर्य करने में विश्वकर्मा को सामर्थ्य व चतुरता है वैसेही पिता के समान कुशलता से नल ने भी श्रीरामचन्द्रजी का कार्य किया। नल से बनाया गया वह सेतु समुद्र के मध्य में अद्भुत शोभा को पाने लगा। यह सेतु बांधने का अद्भुत चरित्र देखने के लिये अपने अपने लोक से बिमानों पर चढकर देवता गंधर्व सिद्ध किन्नर चारगर आदि देवता कौतुक देखने को आये और सौ योजन के समुद्र में दश योजन चौड़ा नल के बनाये दुष्कर सेतु को देखे और वानरों में श्रेष्ठ विश्वकर्मा के पुत्र नल को धन्यवाद देने लगे इसके उपरान्त सुग्रीव अंगद आदि बलवानों के यश को गान करने लगे। इधर समुद्र में सेतु को बांधने से बानर लोग प्रसन्न होकर गर्जना करने लगे तथा आपस में अनेक प्रकार की क्रीड़ा से आनन्द करने लगे। इसके बाद विभीषण अपने मन्त्रियों के सहित गदा हाथ में लेकर शत्रु के भारको उठा लिये उस पारमें सेतु के ऊपर खड़ा हुआ। तब बानरों के राजा सुग्रीव सत्य पराक्रमी रामचन्द्रजी से बोले, हेरामजी! आप हनुमान के कन्धे पर सवार हो और लक्ष्मणजी अंगद के कन्धे पर सवार होकर आकाश मार्ग से अपनी सेना के आगे आगे चलिये, ये दोनो बानर आप लोगों को आकाश मार्ग से ले चलेगें इस प्रकार सुग्रीव के बचन को सुनकर श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी हनुमान व अंगद के कन्धे पर बैठकर सुग्रीव के सहित सेना के आगे लंका पुरीको चले, जाम्बवान नील नल द्विविद मैन्द आदि बानर बानरों की सेना को संभालते हुए चले, समुद्र उतरने के समय वह बानरों की सेना प्रसन्न होकर इस प्रकार गर्जना करने लगी कि जिस गर्जना के समीप समुद्र अपने गर्जने व अभिमान को भूल गया। नलके बांधे हुए सेतु से बानरों की सेना अनेक पुष्प व फल युक्त समुद्र के उस पारमें पहुंची। श्रीरामचन्द्रजी के इस अद्भुत कर्म को देखकर देवता गंधर्व सिद्ध चारण आदि विस्मित होकर श्रीरामचन्द्रजी के समीप आये और समुद्र के जल से उनको अभिषेक करके उनकी स्तुति करने लगे कि हे नरदेव! इस राक्षस शत्रु को संग्राम में बधकरके

समुद्र पर्यन्त धर्म पूर्वक इस पृथिवीको पालन कीजिये और हम लोगों के दुःख को छुड़ाइये। हम सब देवगण आपकी शरणागत हैं। ऐसा कहकर देवतों ने श्रीरामजी की पूजा किया।

इति वाल्मीकिये रामायणे लंकाकाण्डे द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥

श्रीरामचन्द्रजी अशुभ निमित्त को देखकर लक्ष्मणजी को हृदय से लगा कर इस प्रकार के वचन को बोले हेलक्ष्मणजी! जब यह सैनिक वानर बनके फूल फल को खाकर स्वच्छ व सुन्दर जल को पी चुकें तब इन बानरों की सेना को यथा क्रम से विभाग करके व्यूह की रचना कीजिये। राक्षस व वानर तथा भालुओं की सेना के भय से हमको महा भय उपस्थित जान पड़ता है,देखिये, कलुषित वायु चलरहा है, पृथिवी कांप रही है, पर्वतों के शिखर और वृक्ष अकस्मात् हिलते हैं, आकाश मार्ग में मेघ धूसर वर्ण के होगये हैं और उसवती गर्जना को करते हैं तथा रक्त की वर्षाकर रहे हैं। लाल चन्दन के समान परम दारुण संध्याकाल सूर्य से अग्नि मण्डल प्रज्वलित होता है, मृगा व पक्षी आदि दीन होकर सूर्य के संमुख दीन स्वर से शब्द को करते हैं। रात्रि काल में चन्द्रमा के किरण गर्म होगये हैं, वे किरण अनेक रंग के होकर लोक को पीड़ा देते हैं। रात्रि काल में आकाश मार्ग से तारे टूट कर गिरते हैं इन सब प्रकार के अशुभ से जान पड़ता है कि मानो युग के अन्तकी अग्नि से लोक का नाश होगा कौवा बाज गिद्ध आकाश से पृथिवी पर आकर भयानक बोली को बोलते हैं, बानरों के तथा राक्षसों से फेंके गये पर्वत शूल मुद्गर आदि अस्त्रों से निहत होकर शत्रु अपने रक्त व मांससे पृथिवी पर कीचड़ कर दिया है। हे लक्ष्मणजी! दुधर्ष रावण की लंकापुरी में इन बनारों की सेना को लेकर शीघ्र चलना चाहिये, ऐसा कहकर धन्वा को धारण करने वालों में श्रेष्ठ रामचन्द्रजी सेना के सहित सेना के आगे होकर लंकापुरी को चलने को तइयार हुए। शत्रु को नाश करने का उपाय निश्चय करके विभीषण व सुग्रीव आदि मन्त्रि चले,

अत्यन्त पराक्रमी बलवान बानरों के पराक्रम को देखकर रामचन्द्रजी सन्तुष्ट होगये ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे लंकाकाण्डे त्रयोविंशः सर्गः ॥ २३ ॥

वह वीर बानरों की सेना के व्यूह में रामचन्द्रजी इस प्रकार शोभा को प्राप्त हुए जैसे आकाश मार्ग में पूर्णिमा के चन्द्रमा शोभित होते हैं, उन वीर बानरों के वेग से वसुन्धरा त्रस्त होगई। इसके बाद लंका कानन में निवास करने वाले राक्षसोंके भेरी व मृदङ्ग आदि बाजों के सहित शब्द सुनाई देने लगे। उस लंकापुरी के बाजों के शब्द को सुनकर ये बानर लोग प्रसन्न होते हुए और उन वीर राक्षसों के शब्द को न सहन करते हुए ये अंगद आदि बानर घनघोर गर्जना करने लगे। इधर राक्षस लोग बानरों की सेना को देखकर तथा गर्जना को सुनकर इस भांति अभिमान से गर्जना करने लगे कि जिस गर्जना से नभ मण्डल भर गया अनेक प्रकार की ध्वजा पताकाको धारण करने वाली लंकापुरी को देखकर श्रीरामजी को जानकीजी का स्मरण आगया और सीताजी के परिताप से रामचन्द्रजी विह्वल होगये और मनमें चिन्ता करने लगे कि इसी लंकापुरी में मृगनयनी सीताजी रावण से रोकी गई हैं जैसे ग्रहों से अभिभूत होकर मंगल से पीड़ा को पातीं हुई रोहिणी रोकी जाती है, इस प्रकार श्रीरामजी अपने मनमें चिन्ता करते हुए लंबी श्वांस लेकर लक्ष्मणजी को देखते हुए तत्काल में हित करने वाले बचन को रामचन्द्रजी बोले, हेलक्ष्मणजी इस लंकापुरी को देखो यह पुरी आकाश में चित्र के समान है, मालूम होती है कि पर्वत के ऊपर विश्वकर्मा ने अपने मनसे इस पुरीको बनाया है क्योंकि यह पुरी सप्त भूमिक प्रासाद से संकीर्ण है, जैसे बड़े बादल आकाश मार्ग को अच्छादित कर लेते हैं वैसेही यह पुरी अपनी ऊंचाई से ब्रह्म लोक को स्पर्श करना चाहती है, कुबेर के चित्र रथ बनके समान इस लंकापुरी के चारो ओर अनेक पुष्प फल से शोभित बन लगा है, उस बनमें अनेक प्रकार की पक्षियों का कलरव सुनाई देता है

हेलक्ष्मणजी ! देखिये अनेक मतवाले पक्षी शब्द कर रहे हैं तथा भांति भांति के पुष्पों पर भँवरे बैठे गुँजते हैं और इस बनमें चलने वाले त्रिविध पवन वृक्षों को हिलाता है । इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से लंकापुरी की शोभा के विषय में कहकर नीति शास्त्र के अनुसार सेनाओं का विभाग करके व्यूह की रचना करने की आज्ञा दिये कि बानरों की सेना से अपनी सेना को लेकर अंगदजी नील के सहित सेना व्यूह के आगे स्थित होवें, और ऋषभ नाम बानर अपनी सेना को लेकर सेना के दक्षिण भाग में रहैं। तथा बानरों के समूह को एकत्र करके बेगवान गन्धमादन अपनी सेना से सेना के वाम भाग में स्थित रहें और जाम्बवान व सुषेण तथा लक्ष्मण के सहित हम सेना के सिखर पर स्थित रहूंगा और तीन प्रधान ऋक्ष सेना के कुक्षी की रक्षा करें और कपिराज सुग्रीव सेना के पृष्टदल की रक्षा करें । जैसे तेज से युक्त प्रचेता पश्चिम दिशा की रक्षा करते हैं । इस प्रकार सेना के व्यूह की रचना करके तथा उसके प्रत्येक स्थानों पर बानरों को श्रीरामचन्द्रजी अभिरक्षित किये । इस प्रकार व्यूह रचना से बानरों की सेना अपूर्व सेना को धारण किया जैसे बड़े बड़े बद्दलों से अच्छादित आकाश विचित्र शोभा को धारण करता है । संग्राम में लंकापुरी को नाश करने की इच्छा से वे बानर बड़े बड़े पर्वतों के शिखर को तथा विशाल वृक्षों को ग्रहण किये और मनमें सोचने लगे कि इस लंकापुरी को विध्वंस करके राक्षसों का नाश करूंगा। इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीव से बोले, कि हेसुग्रीव ! आपकी सेना युद्ध करनेके योग्य तैयार है अब आप रावणके भेजे हुए दूत शुकको जो अंगदजी बांधे हैं छोड़ देओ । बानरों में श्रेष्ठ सुग्रीवजी श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर उनकी आज्ञा से शुकरूपी राक्षस को सुग्रीव छोड़ दिया । बानरों से पीड़ा को पाया हुआ और रामचन्द्रजी की आज्ञा से छूटा हुआ राक्षस रावण के समीप पहुंचा । राक्षसों के राजा रावण दूत को देखकर हंसते हुए बोला, हेशुक ! यह तुम्हारे दोनों पंख कटे हुए के समान दिखाई

पड़ता है, क्या तुम इतने दीनों तक चंचल बानरों के अधीन में पड़ा था। इस प्रकार रावणके बचनसे और बानरोंके भयसे संविग्न होकर राक्षसों के स्वामी रावणसे बोला कि सागरके उत्तर तीरमें पडी हुई बानरों की सेनाके रक्षक सुग्रीवसे हमने आपके बचनको कहने लगे, उन बानरोंने आपके सन्देश को सुनकर हमको देखते भरमें क्रोध पूर्वक पकड़ कर लातों मुक्कों से मारने लगे कोई किसी बचन को न तो मानता है और न तो यह पूछता है कि तुम कहां से आये हो। केवल स्वभाव से चपल बानर हमको भली भांति ताड़ित करके अपने अधीन में बांध कर रखा इसके उपरान्त विराध कबंध खरदूषण त्रिशिरा मारीच आदि राक्षसों का नाश करने वाला रामचन्द्र सुग्रीव आदि बानरों के सहित सीता को खोजने के लिये समुद्र में सेतु को बांधकर लंकापुरी के समीप में आया है और राक्षसों के पराक्रम को तृण के समान जानकर द्वार पर खड़ा है। जैसे देवता व दानवों का महा युद्ध हुआ है उसके समान इन राक्षसों का समूह और सुग्रीव आदि बानरों का बल संधि करने योग्य नहीं है, हमारे जान में अब दोही उपाय है जो आपकी इच्छा हो सो करो या तो शीघ्र सीता देवी को उन्हे देकर उनसे सन्धि करो अथवा उनको युद्ध प्रदान करो। इस प्रकार शुक के बचन को सुनकर क्रोध से युक्त आंख को लाल किये रावण बोला, कि यदि हमारे साथ देवता गंधर्व दानव आदि सभी युद्ध करें और उनके युद्ध से सब लोक के राक्षसों को पीड़ा हो तौ भी मैं सीता को नहीं दूंगा। जैसे बसन्त कालमें सुगन्ध के लोभ से भँवरे वृक्षों के समीप दौड़ते हैं वैसे रामचन्द्रजी के बाण कब हमारे सन्मुख गिरेंगे कि जिस बाण को देखकर शत्रुओं को नाश करने वाले और रक्त मांस को भोजन करने वाले मैं अपने तीखे बाण को छोड़ूँगा। हमारे में समुद्र समान और वायु के समान बल है जिस हमारे बल को दशरथ का पुत्र नहीं जानता है जो हमारे साथ युद्ध की इच्छा करके यहां आया है अभी वह राम हमारे ओजस्वी बाणों को संग्राम में नहीं देखा है जिससे वह युद्ध

करने को लंकापुरी में आया है। महा शब्द को देने वाले हमारे बाण को न जान कर राम हमारे साथ युद्ध करने की इच्छा करता है, इन्द्र वरुण यम कुबेर आदि आठो लोकपाल देवताओं की सेना सहित रण में हमारे सामने नहीं ठहर सकते हैं मनुष्य व बानरों की क्या गणना है जो सामना करने सके ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्ध काण्डे चतुर्विंश सर्गः ॥ २४ ॥

समुद्र में सेतु को बांधकर बानरों की सेना सहित रामचन्द्रजी का समुद्र पार होना जानकर राक्षसों का राजा रावण अपने मन्त्रियों में से शुकशारण नाम दो मन्त्रियों को बुलाकर आज्ञा दिया कि समस्त समुद्र में सेतु को बांधकर इस कठिन कर्म से रामचन्द्र ने बानरों की सेना सहित समुद्र को पार करके लंकापुरी के समीप में आये हैं, यह समुद्र को बांधना आज तक किसीसे नहीं सुना गया है और न तो समुद्र को कभी ऐसी श्रद्धा हो सकती है कि वह अपने पराक्रम के सामने सेतु को सहन कर सके इससे हमको मालूम होता है कि बानरों के साथ हमको अवश्य युद्धकरना पड़ेगा। इसलिये तुम लोग अपनी बुद्धि से वहां जाकर उन बानरों की सेना में प्रवेश करो और उसमे प्रवृष्ट होकर विचार करो कि उन बानरों की कितनी संख्या है और उन में कितने बलवान व कार्य करने में कुशल व प्रधान बानर हैं और उनमें किस प्रकार पराक्रम है, और रामन्द्रजी के कौन कौन मन्त्रि हैं उन मन्त्रियों का किस प्रकार विचार है, और उन बानरों के सेनापति कौन हैं सेनापति का कैसा प्रभाव है, श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी का किस प्रकार उद्योग व पराक्रम है इस सबको भलीभांति जानकर शीघ्रहमारे पास चले आओ। इस प्रकार रावणकी आज्ञाको पाकर वे दोनो रावणके मन्त्रि बानरका रूप धारण करके श्रीरामचन्द्रजी की सेना में प्रवेश किये तौ भी त्रास देने वाली बानरों की सेना की संख्या नहीं कर सके युद्ध सागर से पार होने की इच्छा करने वाला बानरों की सेना पर्वत पर गुहा कन्दरा आदि स्थानों को अच्छादित किये समुद्र के समान क्षोभ रहित बानरों की सेना

को राक्षसों ने देखा है। इसके उपरान्त गुप्त रूप को धारण करने वाले उन दोनों रावण के मन्त्री राक्षसों को देखकर विभीषण ने उनको पकड़कर रामचन्द्रजी से निवेदन किये हे प्रभो ! हे शत्रुओं के नाश करने वाले ! यह दोनों राक्षस राजा रावण के मन्त्री हैं, और आपके पक्ष के तत्व को जानने के लिये गुप्तचर बनकर लंकापुरी से आये हैं, वे दोनो राक्षस अपनी जीवन से निराश होकर भय व व्यथित होकर हाथ जोड़े रामचन्द्रजी से बोले, हे सौम्य ? हमदोनों आपकी सेना के तत्व जानने के लिये रावण से भेजे गये यहां आये हैं। उन दोनों के वचन को सुनकर सकल जगत् के कल्याण को चाहने वाले रामचन्द्र जी हँसकर बोले, अच्छा अब तुम लोग हमारे बलको समाहित होकर जान गये अब अपने इच्छानुकूल रावण के पास चले जाओ। अथवा जो कुछ नहीं देखने में आया हो उसको पुनः देख लेओ और विभीषण को भी भलीभांति देखलेओ। विभीषण को देखकर डरोमत विना अस्त्र के दूत मारने के योग्य नहीं होता है, विभीषण से पकड़े गये इन दोनों गुप्तचर राक्षसों को छोड़ देओ। तुम दोनों राक्षस लंकापुरी में जाकर रावण से हमारे वचनको कह देना कि जिस पराक्रम के भरोसे पर तुमने सीताको हरण किया है उस पराक्रम से बन्धुओं से और सेना से सज्जित रहो, कल्ह प्रातःकाल इस लंकापुरीको और राक्षसों की सेनाको अपने बाणसे विध्वंस करूंगा और तुम देखोगे। हे रावण ! सेनासहित तुम्हारे ऊपर मैं अपने भयंकर क्रोधको छोड़ूंगा जैसे इन्द्र दानवों के ऊपर वज्रको छोड़ते हैं। अमित पराक्रमी रामचन्द्रजी की आज्ञा से छूटे हुए वे दोनों राक्षस रामचन्द्रजी के दर्शन से अपने राक्षसी भावको भूल गये, इधर लोकपालों के समान पराक्रमी अस्त्र शस्त्र को जानने में कुशल रामचन्द्र लक्ष्मणजी तथा सुग्रीव व विभीषण एक स्थान पर जाकर बैठे और वे दोनों रावण के मन्त्री लंकापुरी में आकर सकल वृत्तान्त रावण से कहने लगे कि जब हम दोनों बानरों का रूप धारण करके बानरों की सेनामें प्रवेश किये तब विभी-

षण हमलोगों को आपका गुप्तचर जानकर बध करने की इच्छा से पकड़ लिया । किन्तु धर्मात्मा रामचन्द्रजी ने हम दोनों को विभीषण के हाथ से बचाया है और इस प्रकार समाचार आपसे कहा है रामचन्द्र व लक्ष्मण तथा सुग्रीव व विभीषण ये चारो पुरुष लंकाको विध्वंस करने में समर्थ हैं । हे राक्षसाधिप ! इन लोगों में ऐसी सामर्थ्य है कि ये चाहें तो इस लंकापुरी को पातालपुरमें भेज देवें और इसी स्थान पर दूसरी लंकापुरी को स्थापन करैं । जिस प्रकार रामचन्द्र का नाम है उस प्रकार उनका रूप व गुण भी है । इनचारों पुरुषों में एकही लंकापुरी को नाश कर सकते हैं सुग्रीव में महा पराक्रम है, क्योंकि सेना के स्वामी सुग्रीवही है । वह सुग्रीव से पालित बानरों की सेना देवलोक के स्वामी इन्द्रादि देवतों को भी अगम्य है । इसलिये युद्ध की इच्छा करने वाले बलवान बानरों की सेना सहित रामचन्द्रजी से विरोध करने में आपका कल्याण नहीं है, आप जानकी को श्रीराम जी को देकर इस विरोध को शान्त कीजिये ॥

इति वाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डे पंचविंशःसर्गः ॥ २५ ॥

सारण के बचन को सुनकर राक्षसों के राजा रावण सारण से बोला कि यदि हमारे साथ देवता गन्धर्व यक्ष आदि एक साथ मिलकर युद्धकरें और सब लोकके राक्षसों को पीड़ा होजावे तौ भी मैं सीता को नहीं छोड़ सकता हूं । हे सारण ! तुम आज बानरों से पीड़ा को पाकर सीताको लौटा देनेको उचित जानते हो । कौन हमारा शत्रु है जो हमको संग्राम में जीतने सके इस प्रकार पुरुष बचन को राक्षसों के राजा रावण ने कहकर रामचन्द्रजी की सेना को देखने के लिये एक ऊंचे छतपर सारण के सहित चढ़गया । उन दोनों राक्षस मन्त्रियों के सहित क्रोधसे मूर्छित रावण समुद्र पर्वत व बनकी शोभा को देखने लगा, पृथिवी में परिपूर्ण अपार बानरों की सेना को देख कर राक्षसों के राजा रावण सारण से पूंछने लगा, कि इन बानरों की सेना में कौन शूरवीर बलवान व मुख्य हैं और बानरों की सेना के

मुख्य सुग्रीव कौन हैं, हे सारण ! इन बानरों के मध्यमें जिनमें जो प्रभाव हैं वह सब हमसे कहो। रावण के पूछने पर सारण उन बानरों में मुख्य बानरों के प्रभाव को कहने लगा, कि यह बानरों के मध्यम में जो गर्जना करता है और जिसके चारो ओर बानरों के समूह खड़े हैं जिसकी गर्जना से लंकापुरी प्रतिहति होजाती है वही महात्मा सुग्रीव हैं और सेना के आगे भुजाको फैलाकर पगसे पृथिवी को चलारहा है वही शूरबीर नील सेनापति है। पर्वत के शिखर के समान कमल के पराग के समान पीतवर्ण यह अंगद नामका बानर है जो कि बार बार अपनी पूंछको पटकर शब्द करता है कि जिसके शब्द से दशो दिशा पूरित होजाती है। इसी अंगद बानर को सुग्रीव ने अभिषेक किया है, वही युवराज अंगद तुमको युद्धमें बुला रहा है। यह बालिका पुत्र बालिके समान पराक्रमी व सुग्रीव को सदा प्रिय है, जैसे वरुण इन्द्रकी सहायता के लिये प्रस्तुत होते हैं वैसेही यह बानर रामचन्द्रजी की सहायता के लिये लंकापुरी के सन्मुख खड़ा होकर जँभाई लेरहा है और यह सुग्रीव बानर के समीप में वायुके पुत्र अत्यन्त पराक्रमी हनुमान हैं, जो लंकापुरी में आकर सीताजी को देखा और लंकापुरी तथा राक्षसों को विध्वंस किया है और अंगद के पीछे बानरों के यूथकी रक्षा करने वाले बड़े विशाल सेना के साथ समुद्र में सेतुको बांधने वाले विश्वकर्मा के पुत्र यह नल हैं और जो यह अपने अंगको पसारे पूंछ फैलाये कूदता है और गर्जना करता है यह कुमुद नाम का बानर बानरों का यूथपति हैं और चन्दन बनका रहने वाला है, इस सेनामें बड़े बलवान बानर हैं जो सब कुमुद नाम बानर के आधीन हैं यह बानर के बल अपनी ही सेना से लंकापुरी को नाश करना चाहता है, यह अत्यन्त बुद्धिमान व बलवान है इसका पराक्रम तीनो लोकमें विख्यात है, यह कुमुद बानर पहिले अपनी बानरी सेना से युक्त होकर प्रसन्नता पूर्वक गोमती नदी के किनारे पर्वतो में श्रेष्ठ संरोत्रन नाम पर्वत पर रहता था और यह

उस देशके भूमिका राजा है। जो यह लक्ष २ बलवान बानरों की सेना को लेकर अभिमान पूर्वक खड़ा होकर लंकापुरी को देखता है और अपने सेनाही के द्वारा लंकापुरी को ध्वंस करने की इच्छा करता है और जिसकी सेनामें अनेक रंगके बानर हैं वह चण्डनाम बानर बानरों का राजा है। यह जो सिंहके समान पराक्रमी व कपिल वर्ण है जिसके गर्दना परसिंह के समान बड़े बड़े केसर (रोम) है और जो साक्षात् कालके समान लंकापुरी को देखता है, जिसके साथ असंख्य बानरी सेना है वह शरभनाम बानर बानरों का सेनापति है और यह जो तीसलाख अत्यन्त पराक्रमी बानरों की सेना को लेकर घूमता है जिसको घूमने से तीसलाख बानर उसके साथ घूमते हैं, वह शरभनाम बानर बानरों का यूथपति है। इसके सन्मुख रणमें मृत्यु भी नहीं ठहर सकता है, इसको वरदान है। यह क्रोधके मारे आंखको टेढी किये लंकापुरी को देखता है और अपनी पूंछको पटकता है यह बानर अत्यन्त बल वानहै और सात्वेप पर्वत का रहने वाला है और यह चालीस लाख बानरों की सेनाको लेकर जोकर पर्वत के समान स्थित है वह विहारा नाम बानर बानरों का सेनापति है और यह जो असंख्य बानरों की सेना को लेकर इन्द्रके समान बानरो के मध्यमें खड़ा है जिसकी सेना पृथिवी से आकाश को स्पर्श करती है और संग्राम को चाहने वाले जिन बानरों के शब्द भेरी शब्द के समान है जो युद्धमें दुःख से जीतने के योग्य है यह पनसनाम बानरो का स्वामी है। यह पारिपात्र पर्वत का रहने वाला है और यह जो पचास लाख सेनाको लेकर जो प्रत्येक सेनाका विभाग करके भयंकर सेनाके सहित दूसरे समुद्र के तटपर खड़ा हैं यह विनत नाम सेनापति है। यह बानर बेणानदी के किनारे पर रहने वाला है और यह जो साठलाख बानरों की सेना युद्ध करने के लिये जो तुम्हे निमन्त्रण दे रहा है वह क्रथन नाम बानर बानरों का यूथ पति हैं। अत्यन्त पराक्रमी बलवान असंख्य बानरों की सेना के सहित अभिमान से तुमको तर्जना देता हुआ तेजस्वी गवयनाम का बानरहै

ये बानर अपनी प्रबल सेना सहित गैरिक पर्वत पर रहता है और सब बानर उस पर्वत पर रहने से लाल रंग के हैं और यह सत्तर हजार बानरों की सेना को अलग अलग विभाग करके उस सेनाके रक्षक अलग अलग सेनापति भी बना लिया है। यह बानर अपनी सेना के बल से इस लंकापुरी को ध्वंस करने की इच्छा करता है॥

इति वाल्मीकिये रमायणे युद्धकाण्डे षड्विंश सर्गः॥ २६॥

सारण इन बानरों की सेना को तथा प्रधान सेनापति को परिचय रावण को देकर बोला कि यह बानर रामचन्द्रजी के लिये अपने जीवन को नाश करने की इच्छा करते हैं इनके अतिरिक्त लाल पीले चित कबरे उज्वल आदि रंग के बानर कठिन कर्म करने में समर्थ तारनाम सेनापति है। सूर्य के किरण के समान प्रकाश मान हर नाम का लंगूर है यह असंख्य लंगूरों का सेनापति है। जिसको चलने से यह दश लाख बानर उसके पीछे चलते हैं और वृक्षों को उखाड़ कर सहसा लंकापुरी पर आक्रमण करने को तइयार है वह धूम्र नाम बानर की सेना है, वह धूम्र बानर महा मेघ के समान सेना के मध्य में स्थित है, यह बानर युद्ध में अत्यन्त बलवान व पराक्रमी है, इसकी असंख्या सेना समुद्र के पार में स्थित रेणु के समान है। पर्वत पृथिवी बन नदी कन्दरा गुहा दरी आदि में निवास करने वाले भालुओं की सेना के मध्य में बद्दल के समान धूम्र का छोटा भाई जाम्बवान नाम का भालू है, इसमें भी धूम्र के समान बल व पराक्रम है, यह देखने में बड़ा प्रशान्त व गंभीर है युद्ध करने में अत्यन्त प्रवीण है, यह जाम्बवान नर्मदा नदी के तट पर निवास करने वाला है। यह जाम्बवान् भालू देवता व असुरों के संग्राम में इन्द्र की अनेक सहायता करके बहुत सा बरदान को लाभ किया है। इनकी सेना पर्वतों के शिखर व शिलाओं को उखाड़ कर राक्षस व पिशाच के समान युद्ध करने में पराक्रमी है। यहां तक की मृत्यु को भी त्रास देने वाले हैं। इसकी सेना पृथिवी पर देवतों के समान विहार करते हैं। यह सदंभ नाम सेनापति महाबली व पराक्रमी है,

जिसकी सेना समूह एक टक होकर हेराजन् ! आपको देखते हैं । यह इन्द्र के बरदान से बलवान व प्रमत्त रंभ नाम सेनापति सेना के सहित उपस्थित है, जिसके बैठने से योजन भरके पर्वत दंप जाते हैं और चलने से तथा शरीर को घुमाने से भी योजन भरके पर्वत ढँपजाते हैं, इसके समान पराक्रमी चौपायों में दूसरा कोई नहीं है, इसके गर्जना को सुनकर देवलोक के राजा इन्द्र की सहायता में ब्रह्माजी ने इसे बरदान दिया है कि युद्ध कभी तुम्हारा प्रान नहीं होगा इसी बरदान से यह सामर्थ्यवान है । यह क्रथन नाम बानर बानरों का सेनापति है, यह बानर इन्द्र के समान पराक्रमी है, यह गंधर्व की कन्या में अग्नि से उत्पन्न है, यह क्रथन नाम बानर देवताओं की सहायता करके कुबेर तुम्हारे भाई जिस पर्वत पर बिहार करते हैं उसी पर्वत पर यह बानर भी बिहार करता है, यह अपने समान पराक्रमी एक अरब बानरों की सेना लेकर लंकापुरी को ध्वंस करने की इच्छा से स्थित है । यह प्रमाथी नाम बड़ा बलवान व बलवान बानरों का सेनापति है, एक समय गंगाजी के समीप में हाथी व बानरों से युद्ध होने लगा, उस समय यह सेनापति बानरों की सहायता के लिये पर्वत की गुहा से गर्जना किये कि जिस गर्जना से हाथीयां डर कर मर गई वृक्ष टूट पड़े जब हाथी व बानरों का युद्ध समाप्त हुआ तब वे बानर आनन्द पूर्वक गंगाजी के किनारे उशीरबीज नाम पर्वत पर निवास करने लगे, उन बानरों के मध्यमें यह प्रमाथी नाम बानर इस प्रकार सुख भोग करने लगा जैसे इन्द्र देवलोक में आनन्द करते हैं, अत्यन्त पराक्रमी व अभिमान को रखने वाले ताथ बाहु बल के भरोसे पर जगत को तृण जानने वाले बानरों का यह राजा है । यह प्रमाथी समर में दुर्जय है । जैसे वायु के चलने से बद्दलों का समुदाय एकत्र हो जाता है वैसेही यह बेगवान बानर बद्दल के समान उद्धृत होकर स्थित हैं । जिसकी सेना को हिलने मात्र से आंधी के समान समुद्र की रेत उड़ती है और यह एक करोड़ लंगूरों की सेना लेकर नलके समीप लंगूरों के

सेनापति महाराज गवाक्ष हैं, यह सेना के मध्य में खड़े होकर अपने बलसे लंका को त्रास देते हुए गर्जना करते हैं। यह रमणीय सुमेरु पर्वत पर निवास करने वाले केसरी नाम के बानर हैं, यह असंख्य बानरों की सेना के सेनापति हैं। जिस पर्वत पर यह निवास करते हैं उस पर्वत पर सदाछओ ऋतुओं के फूल फल लगे रहते हैं और मुनि जन तथा गंधर्व सदा उस पर्वत पर निवास करते हैं, उसी पर्वत की प्रदक्षिणा सूर्य नारायण करते हैं, सूर्य भगवान के संसर्ग से वहां के सभी जीव सूर्य के समान हैं, इसी से यह केसरी बानर भी। असंख्य बानरों की सेना सहित सूर्य के समान है, वह सुमेरु पर्वत सुख भोग करने के योग्य भूषण भोजन वस्त्र चन्दन आदि को समय पर देता है। और यह शतबलि नाम सावर्णि मेरु नाम पर्वत पर रहता है, इसकी बानरी सेना बड़े तीखे नख व दांत वाले हैं इन बानरों को चार दांत वज्र के समान कठोर हैं ये बानर प्राण को मारने में व्याघ्र के समान हैं, इनके पूँछ बड़े बिशाल हैं, शरीर में मतवाले हाथी के समान हैं, इनकी गर्जना प्रलय कालके बद्दल के समान है, इनबानरों के नेत्र भयानक व पीले रंग के हैं, इनकी गति बड़ी बेगवाली है, यह सब विशाल बानर अपने बलके प्रमाद से लंकापुरी के निवासी राक्षसों को तृण के समान जानते हैं, इन्हीं बानरों शतबली नाम बानरों के सेनापति बैठे हैं। ये गज गवाक्ष गवय नल नील आदि बानर दश दश करोड़ बानरों की सेना को लेकर आये हैं ये लोग श्रीरामचन्द्रजी के कार्य को साधन करने में अपने प्राण तक को भी दया नहीं करने वाले हैं, इनके अतिरिक्त और भी विन्ध्यपर्वत पर रहने वाले अनेक बलवान बानर अपनी अपनी सेना लेकर आये हैं जिसकी बर्णन नहीं हो सकती है, हेमहाराज! सबबानर पर्वत के समान विशाल शरीर को धारण करने वाले बड़े प्रभावशाली हैं यह सब क्षण भरमें पृथिवी को नाश कर सकते हैं इसमें संशय नहीं है॥

इहि वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे सप्तविंश सर्गः॥२७॥

इस प्रकार सारण के वचन को सुनकर और श्रीरामचन्द्रजी की सेना को देखकर राक्षसों के राजा रावण से शुक नाम के मन्त्री बोले हिमालय पर्वत पर गंगाजी के किनारे पर तथा और भी पर्वत व बन में रहने वाले मतवाली हाथी के समान इन बानरों की सेना को देखो, हेराजन्! ये स्वेच्छाचारी बलवान बानर देवताओं के समान पराक्रमी हैं, जैसे दैत्य दानव के युद्ध में देवताओं ने पराक्रम किया है वैसेही पराक्रमी ये बानर हैं। पंचानबे हजार करोड़ तथा सत्तर हजार करोड़ तथा दश अरब व वृन्द बानर सुग्रीव के मित्र हैं यह सदा सुग्रीव के साथ किष्किन्धापुरी में रहते हैं, ये काम रूपी बानर देवता व गंधर्व से उत्पन्न हैं और यह दोनों जो अश्विनी कुमार के समान बैठे हैं वह मैन्द व द्विविद हैं इनके सन्मुख युद्ध में कोई नहीं ठहर सकता है ब्रह्माजी की आज्ञा से यह दोनो अमृत भोजन किये हैं, यह केवल अपने पराक्रम से राक्षसों को मारकर लंकापुरी को ध्वंस कर सकते हैं और यह जो मतवाले गज के समान बैठा हैं इसको देखिये यह अपने क्रोध से हठात समुद को भी क्षुभित कर सकता है। पहिले यही बानर सौ योजन के समुद को लांघकर आपकी लंकापुरी में आया और सीताजी को यहां देखकर राक्षसों से संग्राम किया तथा लंकापुरी को विध्वंस भी किया है सो उत्पाती यह बानर फिर भी आया है। यह केसरी नाम बानर के स्त्री में वायु से उत्पन्न है इसका नाम हनुमान है, यह बानर स्वच्छा चारी व बलवानो में श्रेष्ठ है, जैसा पराक्रम वायु में है वैसाही इसमें भी पराक्रम है। यह बानर जन्म काल में क्षुधित होकर भोजन की बस्तु की इच्छा करता हुआ उदय काल में सूर्य के प्रतिविम्ब को लाल वर्ण देखकर उनको अपने भोजन के योग्य पका हुआ फल जानकर तीन सौ योजन कूद कर उदयाचल पर्वत पर चढ गया जहां कि गंधर्व राक्षस आदि भी नहीं पहुंच सकते हैं परन्तु वहा सूर्य नारायण को न पाकर पर्वतसे गिर पड़ा, गिरते समय उसका एक हनु (गाल) एक पर्वत की शिलापर पड़कर कुचिल गया इस कारण इस बानर का नाम

हनुमान हुआ है। इस बानर के वृत्तान्त को हम जानते हैं, इसके समान बल व प्रभाव दूसरे में नहीं है, जो इस बानर ने अपनी पूंछ से अग्नि को प्रज्वलित करके लंकापुरी को जलाया है तो इस बानर की करणी कैसे भूल सकती है। इन हनुमान के समीप यह श्याम वर्ण कमल नयन इक्ष्वाकुबंश के शिरोमणि रामचन्द्रजी बैठे हैं, जो सदा धर्म को पालन करने वाले हैं जो सकल अस्त्र शस्त्र को जानने वालों में श्रेष्ठ हैं, जो अपने बाण से आकाश वा पृथिवी की मर्यादा को नाश करने वाले हैं, जिनके क्रोध मृत्यु के समान हैं जिनके पराक्रम इन्द्र के बराबर हैं, जिसकी प्रिया सीता को तुमने जन स्थान से हरण किया है, हेराजन्! यही रामजी युद्ध की इच्छा से तुम्हारे सन्मुख उपस्थित हैं। और इनके दाहिने तरफ शुद्ध सोना के समान गौर वर्ण विशाल हृदय लाल नेत्र काले केश वाले रामचन्द्र के भ्राता लक्ष्मणजी हैं, यह लक्ष्मण नीति शास्त्र को जानने वालों में पण्डित व युद्ध में विशारद हैं अनेक अस्त्र शस्त्र जानने वालों में कुशल हैं। यह किसी के दर्प को देखने वाले नहीं हैं युद्ध में दुःख से जीतने के योग्य हैं अत्यन्त पराक्रमी व बलवान हैं, रामचन्द्रजी की दाहिनी भुजा हैं तथा बाहर में भ्रमण करने वाले रामचन्द्रजी के प्राण के समान ये लक्ष्मणजी हैं, यह लक्ष्मण रामचन्द्रजी के लिये अपने जीवन की रक्षा नहीं कर सकते हैं, युद्ध में समस्त राक्षसों को मारने के लिये यह अपने ही पुरुषार्थ करना चाहते हैं और रामचन्द्रजी के बायीं ओर राक्षसों को छोड़कर यह राजा विभीषण बैठा है। इस विभीषण को राजा रामचन्द्रजी ने लंकापुरी का अभिषेक किया है, यह विभीषण भी आप से युद्ध की इच्छा करता है। इन सबों के मध्य में यह जो हिमालय पर्वत के समान बैठा है, यह संपूर्ण बानरों का स्वामी अमित पराक्रमी सुग्रीव है, यह तेज में यश में बल में बुद्धि में श्रेष्ठ है, जो सुग्रीव पर्वतों के दुर्ग में दुर्गम्य किष्किन्धापुरी का स्वामी है, जिसके गले में यह सौपद्म की कांचनी माला देवता व मनुष्य की लक्ष्मी के समान प्रतिष्ठित है, इस माला को

और किष्किन्धापुरी के राज्य को तथा तारा नाम बाली की स्त्री को श्रीरामचन्द्रजी ने वालि को मारकर सुग्रीव को दिया है। सौ हजार का एक लाख सौ लाख का एक करोड़ इसी प्रकार शंकु महा शंकु वृन्द महा वृन्द पद्म महा पद्म खर्व समुद्र इसके उपरान्त महौघ तक की गणना का प्रकार जानना चाहिये, जितनी संख्या जिस प्रकार से ऊपर में कहीं है उतनी संख्या से युक्त बानरों की सेना विभीषण आदि मन्त्रियों के सहित तुम्हारे साथ युद्ध करने के लिये तइयार है। हेमहाराज! प्रज्वलिक ग्रह के समान इन बानरों को देखकर ऐसा उपाय कीजिये जिसमें राक्षसों का विजय होवे, शत्रुओं से पराजय न होवे ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे अष्टविंश सर्गः ॥२८॥

शुक शारण से दिखाया गई बानरी सेना को तथा रामचन्द्रजी की दाहिनी भुजा महा पराक्रमी लक्ष्मणजी को और रामचन्द्रजी के समीप में अपने भाई विभीषण को वा बानरों के राजा सुग्रीव को तथा वालि के पुत्र अंगद को हनुमान और जाम्बवान सुषेण कुमुद नल नील गज गवाक्ष शरभ मैन्द द्विविद आदि बलवान बानरों को देखकर क्रोधित रावण शुकसारण नाम अपने मन्त्रियों को तर्जना देने लगा वे दोनों रावण के मन्त्री शुकसारण नीचे को मुख करके हाथ जोड़े राजा के परुष बचन को सुनने लगे, कि हेमन्त्रिन्! राजा के निग्रह व विग्रह में जीविका को प्राप्त करने वाले मन्त्रियों को स्वामि के लिये इस प्रकार प्रिय बचन तुम्हारे समान सेवक को नहीं कहना चाहिये, क्यों कि शुद्ध की इच्छा करने वाले शत्रुओं की बड़ाई बिना पूछे नहीं करना चाहिये, अचार्य व गुरु तथा वृद्ध जन तथा तुम दोनों के समान सेवक को इस प्रकार कठोर बचन राजा से नहीं कहना चाहिये। इस प्रकार के अज्ञान व मूर्ख मन्त्रियों को जो हमने अपने राज्य में स्थान दिया यह अत्यन्त अनुचित किया। इस प्रकार शत्रु की बड़ाई हम से करते समय तुम दोनों को अपने मृत्यु से भय नहीं हुआ, जो हमारी जिह्वा आज्ञा देवे तो वही शुभ अशुभ तुम दोनों को भोगना

पड़े। जैसे अग्नि के स्पर्श से बन में वृक्ष जल कर नाश हो जाते हैं वैसेही राजा के क्रोध से अपराधी का नाश हो जाता है। यदि तुम दोनों ने हमारा कुछ उपकार पहिले किया है तौभी इस समय हमारी क्रोध तुम दोनों को बध करने से शान्त होगा, क्योंकि तुम दोनों शत्रु के पक्षकी बड़ाई करने वाले हो, तुम दोनों शीघ्र हमारी राजसभा से बाहर चले जाओ नहीं तो मैं तुम दोनों के प्राण का बध करूंगा, हमारे स्नेह से पराङ्मुख होकर हमारे दृष्टि से अदर्शन हो जाओ। राजा रावण के इस प्रकार के कठोर बचन को सुन कर शुकसारण दोनो मन्त्री राजा के जय शब्द को कहकर चले गये। इसके उपरान्त राक्षसों के राजा रावण ने महोदर नाम अपने मन्त्री को बुलाकर आज्ञा दिया कि जितने हमारे गुप्तचर व मन्त्री हैं वह शीघ्र हमारे पास आवें। राजा की आज्ञा को पाकर जितने मन्त्री व सेवक रहे सब राजसभा में राजा के सन्मुख आकर जय जय शब्द को करके खड़े होगये। विश्वास के योग्य शूरबीर उन बलवान सेवकों से रावण बोला कि रामके उद्योग की परीक्षा करने के लिये उसके सेना निवेश में जाओ और उनको तथा उनके मन्त्रियोंको देखो कि वे लोग रात्रि में कब तक जागते हैं कब शयन करते हैं और किस प्रकार उनके मन्त्रियों का विचार तथा उनकी सेना का उत्साह है यह सब भली भांति जानकर तुम लोग शीघ्र चले आओ। क्योंकि सेवकों के शत्रुके मर्म का पता चलता है। रावण के सेवकों ने रावण के बचन को स्वीकार करके शार्दूल को आगे करके राक्षसों के राजा रावण की प्रदक्षिणा करके जहां रामचन्द्र व लक्ष्मणजी के सेनाका शिबिर था उस स्थान को चला, अपने राक्षसी भाव को छिपाकर सुबेल पर्वत के समीप जहां सेनाके सहित सुग्रीव व विभीषण के समीप रामचन्द्रजी व लक्ष्मण जी तथा उनकी सेना को देखकर भय से विह्वल होगया, उस शार्दूल राक्षसको रावण का भेजा जानकर विभीषण ने उसे पकड़ कर श्रीरामचन्द्रजी के समीप लेजाकर बोले. यह पापी राक्षस रावणका गुप्तचर होकर आया है। इधर बानरों

ने उसे रावण का दूत जानकर ताड़ना दिये, बानरों को दण्ड देते देखकर दया की वाह उसे शत्रु का दूत जानकर रामचन्द्रजी ने उसे छोड़ा दिये, बानरों के हाथ से छूटकर वह राक्षस लंकापुरीमें फिर भी रावण के पास आया और श्रीरामचन्द्रजी के बल व पराक्रम तथा सेनापति व सेना आदि के सारांश को और उनके उद्योग को कहने लगा॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे एकोनत्रिंश सर्गः॥२९॥

जब शार्दूल रामजी की सेना निवेश से लौट कर फिर लंकापुरी में आया तब राक्षसों के राजा रावण के समीप में आकर सुवेल पर्वत पर बैठी श्रीरामचन्द्रजी के सेना के तत्व को कहने लगा। गुप्तचरों के मुख से श्रीरामचन्द्रजी के सेना की बड़ाई तथा उनके बल व पराक्रम की प्रशंसा को सुनकर कुछ रावण के हृदय में उद्वेग हुआ पुनः अपने को संभाल कर शार्दूल से बोला, कि क्या तुम क्रोधित हमारे शत्रुओं के अधीन में होगया था, इस प्रकार रावण को पूंछने से रावण का मन्त्री शार्दूल राक्षसोंमें शार्दूल रावण से मन्द (धीरे२) बचन को कहने लगा हेराजन्! अत्यन्त बलवान व पराक्रमी रामचन्द्रजी से रक्षित शूरवीर बानरों के तत्व को तुमारे मन्त्रीगण नहीं जान सकते हैं और न तो हमें कुछ कहने को सामर्थ्य है, तथा कुछ अधिक विचार करने का भी अवसर नहीं है, क्योंकि पर्वतों के समान विशाल बानरोंने चारो ओर से मार्ग अवरोध कर लिया है। सेना निविश में प्रवेश करके ज्यों ही हमने वहां के तत्व को जानने के लिये विचार का आरंभ किये त्योंही विभीषण ने मुझे कपटी राक्षस पहिचान कर पकड़ लिया, जब चारो ओर से घूमकर रामजी के सन्मुख ले गये तब हमारे मुख से रुधिर बहने लगा अंग सब सिथिल होगये इन्द्रियां व्याकुलित होगई तब बानरों के हाथ में हमको बंधा देखकर सब लोक के कल्याण को चाहने वाले रामचन्द्रजी ने बानरो के हाथ से हमारी रक्षा किये, अब यह बलवान बानर पर्वत की शिलाओं से समुद्र को पाटकर लंकाके द्वार को रोक करखड़े हैं अब स विषय में शीघ्र एक कार्य करो चाहे सीता को

रामजी के लिये लौटाकर उनको प्रसन्न करो चाहे उनसे युद्ध की आग्रह करो, शार्दूल के बचन को मनसे बिचार करके रावण बोले, मन्त्रीन् ! यदि हमारे देवता गंधर्व आदि सभी युद्ध करें और सब लोक के राक्षसोंको भय पहुंचे तब भी मैं सीता को नहीं दे सकूंगा। महातेजस्वी व पराक्रमी रावण इस प्रकार कहकर फिर भी बोला, कि यह जो बानरी सेना यहां आकर उपस्थित हैं उसमें कितने शूरबीर बानर हैं और उनकी क्या प्रभा है और किस प्रकार का उनमें बल व पराक्रम है और किसके वह सब पुत्र व पौत्र हैं हे सुव्रत ! इस तत्व को कहो। उसके अनुसार बलाबल को जानकर युद्ध चाहने वालों के साथ युद्ध करने का उद्योग अवश्य करूंगा। रावण के इसप्रकार के बचन को सुनकर मन्त्रियों में श्रेष्ठ शार्दूल रावण के समीप सेना के तत्वको कहने लगा। कि भालुओं के राजा गदगद के क्षेत्रज पुत्र जांबवान हैं जिनका पुरुषार्थ लोकमें विख्यात हैं यद्यपि जांबवान की उत्पत्ति भगवान के मुखसे है यह कथा पुराणों में प्रसिद्ध है तौभी भगवान के जंभाई के समय वह शक्ति उनके मुखसे निकल कर गदगद के क्षेत्र में समावेशित हुआ उसी शक्तिसे यह जांबवान उत्पन्न हैं, हे राजन्! यह युद्ध में दुःखसे जीतने के योग्य है और गदगद का दूसरा पुत्र धूम्रनामका भालू है जो बल व पराक्रममें जांबवान के सदृश है। और वृहस्पति के पुत्र कैसरी नामका बानर है वह भी अत्यन्त पराक्रमी है कि जिसके सरी बानर का पुत्र हनुमान अकेला आकर पहिलेही राक्षसों के साथ महायुद्ध किया है। हे सौम्य ! धर्म के पुत्र धर्मात्मा व पराक्रमी सुषेण नाम बानर हैं। तथा चन्द्रमा के पुत्र दधिमुख नाम का महाबीर बानर है। अधिक बेगवान सुमुख व दुर्मुख नामके बानर को मृत्युके तुल्य ब्रह्माने निर्माण किया है। अग्नि के पुत्र नील सकल सेना के प्रधान सेनापति हैं। वायु के पुत्र हनुमान प्रसिद्ध ही हैं। इन्द्रके पुत्र बलवान अंगद किष्किन्धा पुरीके युवराज हैं। मैन्द व द्विविदये दोनो बलवान कालके समान अश्विनी कुमार के पुत्र हैं। गज, गवाक्ष, गवय, शरभ,

गन्धमादन ये पांच पुत्र यमराज के हैं । इनमें पिता के समान बल व पराक्रम है । युद्धकी इच्छा करने वाले दश करोड़ शूर वीर बानर देवताओं के पुत्र हैं । इनसे अतिरिक्त बानरों की उत्पत्ति को मैं नहीं कहते की सामर्थ्य रखता हूं । इनके अतिरिक्त सिंहके समान दशरथ के पुत्र रामचन्द्रजी हैं । जिन्होंने जनस्थान में खरदूषण व त्रिशिरा आदि राक्षसों का बध किया है, जिसने यमराज के तुल्य विराध व कबन्ध आदि राक्षसों को मारा है उनके समान पृथिवी में और कोई दूसरा पराक्रमी नहीं है । रामचन्द्रजी के गुणोंकी प्रशंसा दो हजार जिह्वासे शेषनाग भी नहीं कर सकते हैं दूसरे की क्या गणना है । देखिये जनस्थान में जितने राक्षस रहे उनसबों का नाश किया है । महाबलशाली नीतिशास्त्र को जानने में पण्डित युद्धमें उत्साही अस्त्र शस्त्रको जानने में कुशल लक्ष्मणजी रामजी के वैमात्रेय कनिष्ठ भ्राता हैं, जिनके बाणके सन्मुख इन्द्र भी जीते नहीं बच सकते हैं । सूर्यके पुत्र सुग्रीव व ज्योतिमुख नामके बानर अपनी असंख्य सेना सहित आये हैं । वरुण के पुत्र हेमकूट नामके बानर आये हैं । विश्वकर्माके पुत्र बानरों में श्रेष्ठ नल नामके बानर हैं । वसुके पुत्र अत्यन्त बेगवान दुर्धर नामके बानर हैं । राक्षसों में श्रेष्ठ आपके भाई विभीषण रामचन्द्रजी के कल्याण के चाहने वाले हैं । यह बानरों का बल जो कुछ हमको मालूम था वह सब मैंने कहा, इसके अतिरिक्त निर्णायक अब आप हैं ॥

इति बाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डे त्रिंशसर्गः ॥ ३० ॥

राक्षसों के राजा रावण के मन्त्री सुवेल पर्वत पर बैठे श्रीरामजी की सेनाके तत्व व बलको रावण से निवेदन किये, इस प्रकार मन्त्रियों के मुखसे बानरों के विख्यात बल व पौरुष को सुनकर रावण के हृदय उद्विग्न होगया और वह अपने मन्त्रियों से बोला, हे मन्त्रिन् ! तुम सब समाहित मनसे शीघ्रसभा में आओ अब इस विषय में विचार करने का अवसर है । इस प्रकार रावण के शासन को सुनकर सकल

मन्त्रिगण समाहित होकर शीघ्रता से राजसभामें प्रवेश किये, इसके बाद दशानन राक्षस मन्त्रियों के सहित विचार करके सभाको विसर्जित किया और अपने उठकर राजमहल में चला गया, इसके उपरान्त कुछ समय बीतजाने पर अत्यन्त मायावी विद्युज्जिह्वनाम राक्षसको संग लेकर जहां सीताजी बैठी थी वहां पहुंचा और माया को जानने वाले विद्युज्जिह्व राक्षस से रावण बोला कि तुम अपनी माया से जनक की कन्या सीताको मोहित करो जिसमें यह हमारे अधीन हो जावे। तुम रामचन्द्रजी के शिरको माया का बना और कटे हुए शिर से रुधिर बहता हुआ लेकर धनुष बाणके सहित हमारे पास आओ। रावण की इस प्रकार की आज्ञा को अंगीकार करके वैसाही माया से रामचन्द्रजी के मस्तक के समान कटा हुआ मस्तक बनाया, इसप्रकार. राक्षस की माया को देखकर रावण सन्तुष्ट होकर उसके लिये आभूषण को दिया और सीताजी को देखने की इच्छा से प्रमदा वनमें पहुंचा। इसके बाद दुःख से दीन सीताजी को रावण देखा कि नीचे को मुख किये शोकसे पीड़ित पृथिवी पर बैठी अशोक वनिका में पति के चरण रजका ध्यान करती हैं। और राक्षसियों से घेरी गई बन्दी के समान पड़ी हैं ऐसी सीताजी के नगीच में जाकर रावण रामजी के नामका कीर्तन करता हुआ धृष्टता पूर्वक यह बचन बोला, हे सीते! जिसके लिये तुम दुःख को सहन करती हो उसके मोह को छोड़ कर हमसे प्रसन्न होओ, जिस रामचन्द्र के अभिमान से तैंने हमारा अपमान किया था वह खरदूषण को मारने वाले रामको समर में मार कर तेरे अभिमान को मैंने नष्ट कर दिया है। हे सीते! इस प्रकार के दुःख से तू मेरी भार्या होगी, अब रामकी इच्छा को छोड़ देओ उस मृतक रामको क्या करोगी। हे भद्र! तुम हमारी रानियों के मध्य में ईश्वरी होकर हमको अंगीकार करो, हे मूढ़! रामचन्द्रकी अभिलाषा तेरी नष्ट होगई है। यदि तुम यह कहो कि तुमने रामचन्द्र को कैसे नाश किया उसके वृत्तान्त को सुनो। जैसे इन्द्र ने वृत्रासुर का बध किया था वैसे

ही तुम्हारे पतिका वध हुआ है, बड़ी भारी बानरों की सेना को लेकर सुग्रीव आदि के सहित समुद्र के उत्तर किनारे पर आकर उपस्थित हुए। जब सूर्य्य भगवान अस्त होगये तब रात्रि कालमें मार्ग चलने से थकी हुइ सेना सुखसे निद्रा को पाकर शयन करने लगी। इतने में हमारे प्रधान मन्त्री प्रहस्त हमारी सेना को लेकर जहां राम लक्ष्मण है वहां अर्धरात्रि को पहुंचे और पट्टिश, परिघ, चक्र, नृष्टी, दण्ड, बाण, शूल, कूट, मुद्गर, यष्टी, तोमर, प्रास, मुसुल आदि अस्त्रों से सूते हुए बानरों का वध राक्षसों ने किया। इसके प्रादप्रहस्त व प्रमाथी ने अपने खड्ग से असक्त रामचन्द्र के शिरको काटलिया, भागते हुए विभीषण को भी राक्षसों ने पकड़ कर ताडित किया है। लक्ष्मण बची हुई बानरों की सेनाको लेकर भाग गया। बानरों के राजा सुग्रीव का गर्दना टूट गया है। हनुमान को राक्षसोंने निहत करडाला है, जैसे कुल्हाड़ा के काटने से वृक्षटूट कर गिरता है वैसे जांबवान की जंघा टूटगई है। मैंने व द्विविद रुधिर की धाराको बहाते पृथिवी पर शयन किये हैं, जैसे वृक्षसे पत्ता सूखकर पृथिवी पर शयन करता है वैसे खड्ग से छिन्न होकर पनसनाम का बानर पृथिवी पर पड़ा है। अनेक बाणके आघात से महा तेजस्वी कुमुद नाम का बानर मरा है। राक्षसों के बाण से पीडित होकर रुधिर से लिप्त अंगद भूमि में पड़ा है। जैसे वायु के बेगसे वद्दल मृदित होजाते हैं वैसे राक्षसों के अस्त्र से बानर मृदित होगये है। जैसे सिंहको देखकर हाथी भाग जाता है वैसे राक्षसों के भयसे बानर भाग गये हैं। कोई तो समुद्र में गिरे हैं कोई आकाश में उड़गये हैं। भालु वृक्षोंपर चढ़कर बैठे हैं। इसप्रकार प्रबल हमारी सेना से सेना सहित तुम्हारा पति मारागया है उसके रक्त टपकते हुए शिरको हमारी सेना आहरण किया है। सीताजी को सुनाकर रावण ने एक राक्षसी से बोला कि कठोर कर्म करनेवाले विद्युज्जिह्व से कहो कि संग्राम से कटकर जो रामचन्द्रजी का मस्तक लाया है उसको ले आवे, इसके उपरान्त विद्युज्जिह्वने बाणके सहित श्रीरामचन्द्रजी के मस्तक

को लाकर रावणको प्रणाम करके उसके सामने रखदिया, उस मस्तक को देखकर राक्षसोंके राजा रावणने समीपमें खड़े विद्युज्जिह्व से बोला कि रामके सिरको सीताके आगे रख देओ, यह कृपण सीता अपने पतिके पश्चिमावस्था अर्थात् मरण दशाको देखी, इस प्रकार रावणके बचनको सुनकर प्रिय दर्शन श्रीरामजी के शिरको सीताके आगे फेंककर अपने लौट आया। रावण भी रामचन्द्रजी के बाण के समान माया के बने हुए बाण को सीताजी के आगे फेंककर बोला कि तीनों लोक में विख्यात राम का बाण यही है। रात्रि काल में प्रहस्त ने राम को मारकर इस धनुष बाण को ले आया है। श्रीरामचन्द्रजी के मस्तक तथा बाण को सीताजी के आगे रख कर जानकीजी से बोला कि तुम मेरे अधीन में होकर रहो ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे एकत्रिंश सर्गः ॥३१॥

वह सीताजी रामजी के मस्तक तथा उनके बाण को देखकर और हनुमानजी के कहे अनुसार राम सुग्रीव के मिलाप को स्मरण करके और पति के नयन तथा मुख व चूड़ामणि के सहित केश देश को देखकर दुःख पूर्वक केकयी के चरित्र में युक्त होकर विलाप करने लगी हेकेकयी! तुम्हारा मनोरथ सफल हुआ जो रघुकुलको आनन्द देनेवाले रामचन्द्रजी राक्षसों के हाथ से मारे गये। हेकलह करने वाली केकयी ! तैंने समस्त कुल को नाश किया है। श्रीरामचन्द्रजी का अनिष्ट चिन्तन केकयी ने किया है जो हमारे साथ उनको भी चीर देकर बनवास दिया है। इस प्रकार बचन को कहकर तपस्विनी सीताजी कांपने लगी जैसे वायु के झकोरे से टूटकर केलाका पत्र हिलता है। इसके बाद मुहूर्त भर दुःख सागर में डूब कर फिर धैर्य व चेतना को लाभ करके उस मस्तक को हाथमें लेकर विलाप करने लगी। हे महाबाहु ! पिता के बचन रूपी को पालन करने वाले आज इस दशा को प्राप्त हुए हो, जिस कारण हमको विधवा बनाया है पति के पहिले स्त्री का मरना पतिव्रत को नष्ट करता है क्योंकि पतिव्रता स्त्री पति के साथ सती होती हैं, इस दुःख

सागर में डूबती हुई मुझको प्राण का नाश करना श्रेष्ठ है, क्योंकि आपही हमारी रक्षा करने वाले थे सो आप को भी राक्षसों ने इस दशाको पहुंचाया हमारी सासु कौसल्या आपको पुत्र पाकर वत्सला बनी थी सो आज तुमारा वध राक्षसों के हाथ से सुनकर बिना बछड़े के गाय के समान हो जायंगी। वसिष्ठ आदि मुनियों ने आपकी दीर्घायु कही थी सो आज उन लोगों के भी बचन मिथ्या हुए जो आपकी अल्पायु हुई है। क्या आप ऐसे पण्डित की भी बुद्धि मलीन होगई थी कि जिस मलीनता के कारण आप रात्रि में शयन करके शत्रु के हाथ में पड़कर नष्ट हुए, पण्डित पुरुष सदा निद्रा रूपी शत्रु को शत्रु के समान जानते हैं। अथवा काल से प्राणियों की उत्पत्ति पालन व नाश होता है कालही ईश्वर है इसलिए साधारण प्राणियों के समान आपको भी कर्म का फल भोगना पड़ा। आप व्यसन से तो रहित थे उपायको जानने में कुशल थे फिर किस कारण आप मृत्यु को प्राप्त हुए। आपके मरण का हम कोई कारण नहीं देखती हूं। क्या मुझ काल रात्रि को स्पर्श करके भी तुम इस प्रकार नष्ट हुए यह बड़ा आश्चर्य है। क्या आपने अपनी प्रिया तपस्विनी सीता को छोड़कर पृथिवीका आलिंगन करके शयन किये हो। मेरे सहित आप से पूजा की गई यह धनुष आज इस दशा को पहुंची है जो आप के हाथमें इसका रूप शोभित होता था वह आज भूमि पर पड़ा है समस्त पितरों के सहित महाराज दशरथ स्वर्गबास करते हैं उन्हीं के शरण में तुम भी पहुंचे हो। क्या आप अपनी धर्मचारिणी स्त्री सीता को नहीं देखते हो और न तो वार्तालाप करते हो। पाणिग्रहण (कन्यादान) के समय आपने जो प्रतिज्ञा किये कि हम तुम्हारे साथ सकल कार्य को संपादन करेंगे उस प्रतिज्ञा को स्मरण करो। हेबुद्धिमानों में श्रेष्ठ! आप हमको छोड़कर जो इस लोक से लोकान्तर को गये तो मुझ दुःखिता को भी अपने साथ ले चलो। मनोहर यह आपकी शरीर इतने दिन तक मेरेही अंगसे स्पर्श करती थी सो आज इस सुन्दर आपके शरीर को मांस खाने वाले जन्तु स्पर्श करेंगे। अग्निहोत्र अग्निष्टोम इष्टि

सर्वस्व दक्षिणा आदि यज्ञों के गोता आपको किस कारण अग्नि का लाभ नहीं हुआ है। हम तीन बनवासियों में से एक लक्ष्मणही को शोकाकुल कौसल्या देखेंगी। कौशल्या के पूंछने पर लक्ष्मण तुम्हारे मित्र बानरों का और रात्रिकाल में निशाचरों से तुम्हा बध को अवश्य कहेंगे। जैसे कोई समुद्र को लांघकर छोटी गड़हिया में गोता खा जावे वैसेही हम कुल पासिनी के लिये राजपुत्र रामचन्द्रजी समुद्र को पार करके गड़हिया में डूब गये यह लोक की कहावत के समान कार्य हुआ। जनक के कुल में दोष लगाने वाली दशरथ की पुत्रवधू सीता मृत्यु रूपी होकर उत्पन्न हुई। जन्मान्तरमें मैंने कन्यादान गौ भूमि हिरण्य आदि का उत्तम दान नहीं दिया है जिससे इस फल को पाया हैं जिस कर्म फल को शोचती हूं। हे रावण! तैंने अच्छा किया अब मुझको भी रामचन्द्रजी के ऊपर काट डालो जिसमें पति पत्नीका संयोग हो जावे। जानकीजी रामचन्द्रजीके मस्तक तथा धनुष को देखकर दुःख से संतप्त हो विलाप करने लगीं। इधर अशोक वनिका में बैठे रावण के समीप सेनापति प्रहस्त से भेजा हुआ एक राक्षस रावण से हाथ जोड़ कर बोला आर्य पुत्र आप का विजय होवे यह कह कर वहां उपस्थित हुआ और प्रहस्त के समाचार को कहने लगा। किसकल मन्त्रियों के सहित प्रहस्त राज सभा में उपस्थि होकर आपके दर्शन की अभिलाषा करते हैं इसी कारण हम आप के समीप आये हैं। राजकार्य के कारण जो हम बिना अवसर के आप के समीप में उपस्ति हुआहूं। इस प्रकार मन्त्रिके आदेश को सुनकर राक्षसों अधिपति रावण अशोकवनिका को छोड़कर मन्त्रियों को देखने के लिये गया, सब कार्य में समर्थ प्रहस्त के साथ एकान्तमें समस्त कृत्य का विचार करके सभामें प्रवेश करके पहिले के विचार को प्रगट किया। इधर रावण के अशोकवनिका से जाते समय वह जो माया का मस्तक व धनुष बाण बना था वह सब अन्तर्धान होगया। राक्षसेन्द्र रावण भी व पराक्रमी मान्त्रियों के साथ रामचन्द्रजी के काय को निश्चय किया, कि रामचन्द्र के विषय में राक्षसों को यह काय करना

चाहिये। रावण के हितको चाहने वाले समीप में स्थित सेनापति के सहित सेना को कालके सदृश राक्षसों के राजा रावण आज्ञा दिया कि शीघ्र बड़े तीक्ष्ण भेरी के शब्द से सेना को बुलाओ उनसे कुछ कारण कहने की आवश्यकता नहीं हैं। इस प्रकार रावण के बचन को स्वीकार करके एकाएक रावण की सेनाको एकत्र करके युद्ध की इच्छा करने वाले रावण के समीप निवेदन किया॥

इति वाल्मीकियेरामायणे लंकाकाण्डे द्वात्रिंशसर्गः॥ ३२॥

रावण को प्रमदावन से चले जाने के बाद विभीषण की स्त्री सरमा नामकी राक्षसी जानकी कि प्रिय सखी सीताजी को दुःखिता देखकर उनको धैर्य देने के लिये उनके समीप में आकर बोली, राक्षसेन्द्र रावण से मोहित परम दुःखिता सीताको मधुर बचन बोलने वाली सरमा धैर्य देने लगी, हे सखी! रावणने जो कुछ तुमसे कहा है और तुमने भी जो कुछ रावण से उत्तर दिये हो वह सब मैंने सुना है। यदि यह कहो कि विभीषण तुम्हारा पति रावण के विरुद्ध कोटि में प्राप्त है तो तुम उसकी स्त्री होकर रावण के समीप में खड़ी होकर कैसे सुना है, तो इस अशोक के गहन बनमें पहिले तो उसके बनाये माया के स्वरूप को सुनकर फिर तुम्हारी रक्षा के लिये यही आकर रावण के भयको छोड़कर अपने को छिपाकर मैं यहां खड़ी थी इसलिये मैंने सब सुना है। हे सखि? तुम्हारे वास्ते मैं रावण के भयको कुछ नहीं जानती हूं। और रावण भी जिस कार्य के लिये व्याकुल होकर यहां से चला गया है वह भी कारण हमको मालूम है। ऐसा कोई पराक्रमी राक्षस नहीं है जो रामचन्द्रजी के समीप जाने सके और सकल शास्त्र तथा अस्त्र को जानने वाले रामचन्द्रजी ने निद्रा को त्याग दिया है और राक्षसों में इतना बल नहीं है जो रामचन्द्रजी से रक्षित बानरों को जीतने सके। लम्बीभुजा वाले दृढहृदय वाले धनुष को धारण करनेवाले प्रतापी धर्मात्मा रामचन्द्रजी का बल व पराक्रम पृथिवी में विख्यात है। उसीप्रकार तेजस्वी श्रीमान् कुलीन नीति शास्त्र को जानने वाले

अपनी और दूसरे की रक्षा करने में समर्थ लक्ष्मणजी उनके साथ हैं किस राक्षस को सामर्थ्य है जो उनको जीत सकता है। शत्रुकी सेना को नाश करने वाले श्रीमान् रामचन्द्रजी जीवित हैं तुम चिन्ता नहीं करो। यह मायावी राक्षस तुमको मोहने के लिये माया किया था। हे सीते! अब तुम्हारे शोकके दिन बीत गये कल्याणका समय आया है, लक्ष्मी तुम्हारी सेवा करने के लिये निश्चय तय्यार हैं अब तुम अपने हितके बचन को सुनो। रामचन्द्रजी बानरों की सेना के सहित समुद्र को पार करके समुद्र के दक्षिण किनारे पर आगये हैं यह मैंने अपने गृह की अटारी परसे देखा है कि सागर के तीरमें रामचन्द्रजी अपनी महिमा से सेनाकी रक्षा करते हुए उपस्थित हैं। इस रावण ने सेना के बलको जानने के लिये जिन राक्षसों को भेजा था व राक्षस रामचन्द्रजी की प्रवृत्ति को ले आये हैं उसीको सुनकर मन्त्रियों के सहित बिचार करने के लिये यह राजा रावण यहां से चला गया है। सीता के साथ सरमा राक्षसी इस प्रकार वार्तालाप कर रही थी कि इतने में सेनाओं के भयंकर शब्द सुनाई दिये। भेरी के भयंकर शब्द को सुन कर मधुर बचन को कहने वाली सरमा सीताजी से बोली, हे माता! युद्ध के लिये यह बद्दल के गर्जने के समान भेरी का शब्द सुनाई देता है। और मतवाली हाथी घोड़ा रथ व अस्त्र शस्त्रको धारण करने वाले पैदल सेना तइयार होते हैं। और वह सेना राजमार्ग का अवरोध करगे, अस्त्र शस्त्र को लेनेसे समुद के समान गंभीर व बेगवान् वह सेना का सन्नाह है। रथ घोड़ा हाथी व पैदल सेनाके बेगसे यह राक्षसों को व्याकुलता हो गई है। देखो जैसे घामसे बन सूख जाता है, जैसे अग्नि सकल वस्तुको जला देता है वैसे रथके चक्र व घण्टा के शब्द को सुनो। हे देवी! अब तुम्हारे शोकका नाश हुआ और राक्षसों के लिये महाभय उपस्थित हुआ है। जैसे युद्ध में दैत्यों को मारकर इन्द्र ने उनकी लक्ष्मी को हरण किया है वैसेही राक्षसों को समर में रामचन्द्रजी मारकर इनकी लक्ष्मीको ग्रहण करेंगे और प्रबल

शत्रुके हाथसे तुमको छुड़ावेंगे। जैसे शत्रुओं को नाश करने वाले विष्णु इन्द्रकी रक्षा करते हैं वैसेही शत्रुओं के मध्यमें लक्ष्मणजी रामचन्द्रकी रक्षा करेंगे। शत्रुओं को नाश होने पर जब तुम रामजी के गोद में बैठोगी तब मैं तुमको देखूँगी। अब रामचन्द्रजी के अमोघ बाण रावण के हृदय को अवश्य विदीर्ण करेंगे। हे सीते! अब तुम शीघ्र रामचन्द्रजी के चन्द्रमुख को देखोगी और अपने प्रियके समस्त सुखको लाभ करोगी, जैसे सुन्दर वर्षा को पाकर पृथिवी प्रसन्न होती है वैसे रामचन्द्रजी को पाकर तुम भी प्रसन्न होओगी। जैसे मेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करके सूर्य नारायण उदय होकर सकल प्रजाओं के दुःख को नाश करते हैं वैसेही रामचन्द्रजी राक्षसों के सहित रावण को मार कर देवताओं के दुःख को हरण करेंगे॥

इति वाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डेत्रयस्त्रिंशसर्गः॥३३॥

रावण के वाक्य से मोहित सीता संताप की आगसे जलती हुई सीताको सरमाने धैर्य दिया जैसे जलती हुई भूमिको मेघ लोग वर्षा करके सन्तुष्ट करदेते हैं। सीताजी के हितकी इच्छा करने वाली सरमा से बोली, हे सखी! तुम्हारे सु मधुर बचन से हमारा पूर्वशोक नाश होगया, तुम आकाश में और रसातल में भी जानेकी सामर्थ्य रखती हो इसलिये जो हम पूछती हूं उसको सत्य कहो, मैं यह जाना चाहती हूं कि शत्रुओं को ताप देने वाला अत्यन्त मायावी रावण यहां से जाकर क्या उपाय करता है, देखो मुझको तर्जना व भर्त्सना से पीड़ित करके सदा भय देने वाली राक्षसियों को हमारी रक्षा के लिये नियुक्त किया है। उसके भय से हम सदा उद्विग्न रहती हूं, हमारा मन कभी नहीं स्वस्थ होता है। रावण के बन्दी से हमारा छुटकारा होगा या नहीं होगा इसमें तुमको जो कुछ निश्चय भया हो वह सब हम से कहो, क्योंकि इस कथा को सुनकर हमको श्रेष्ठ वरदान के समान होगा। इस प्रकार सीताजी के बचन को सुनकर सु मधुर बचन बोलने वाली सरमा आंसू को बहाती हुई बोली, हे जानकी! यदि तुम्हारा इस प्रकार अभिप्राय

है तो मैं अभी जाती हूं और शीघ्र इस शत्रु का पता लगाकर आऊंगी इस प्रकार कहकर रावण के समीप जाकर रावण से मन्त्रियों के कहने को सुनने लगी। मन्त्रीयों के और रावण के विचार को सुनकर सीताजी के अभिप्राय को निश्चय करके शीघ्र अशोक वनिका में आई। अशोक वृक्ष के नीचे मलीन दशा में बैठी जानकी सरमा को देखकर इस प्रकार प्रसन्न होगई जैसे सूर्य को देखकर कमल अपनी शोभा को धारण करता है। जानकीजी उठकर सरमा को गले से लगा कर अपने हाथ से उसे बठने क लिये आसन दिया। हेसखि! तुम इस आसन पर बैठकर दुरात्मा रावण के निश्चय किये हुए तत्व को हमसे कहो। इस प्रकार भय से कांपती हुई सीताजी के बचन सुनकर रावण के मन्त्रियों का तथा रावण के मर्म को कहने लगी। राक्षसेन्द्र रावण की माता और मन्त्रियों में वृद्ध माल्यवान् इस प्रकार रावण को उपदेश देते हैं, कि सत्कार पूर्वक जानकी रामचन्द्रजी के समर्पण करो जो रामजी ने जन स्थान में खर आदि राक्षसों के बध किया है वही कठिन किया है। देखो हनुमान समुद्र को लांघकर सीता को देखा और युद्धमें कितने राक्षसों का नाश किया यह कौन मनुष्य में सामर्थ्य है जो इस प्रकार कठिन कार्य को करेगा। इसलिये उनकी उन्हे सत्कार पूर्वक दे डालो इस प्रकार माता व मन्त्री को समझाने परभी अत्यन्त लोभी रावण कालके फांस में बंधकर अपनेही अर्थ को देखता है उस निर्दय रावण ने यही निश्चय किया है कि बिना युद्ध के सीता को नहीं छोड़ूंगा। इस क्रूर रावण को मन्त्रीयों के सहित यह निश्चय है कि युद्ध में बिना मृत्यु को पाये तुम को नहीं छोड़ेगा। हे सीते! समस्त राक्षसों के सहित रावण को रामचन्द्रजी अपने तीखे व अमोघ बाणों से मार कर तुम्हे अयोध्या पुरी को लै जावेंगे इसके बाद सकल सेनाओं के शंख व भेरी के शब्द इस प्रकार भयानक सुनाई देने लगाकि जिस शब्द से पृथिवी कांप उठी। उन बानरों के भयानक गर्जना को रावण के मन्त्रीयों ने सुन कर अपने बल व उद्योग से हीन होगये और रावण के दोष से अपने कल्याण लाभ से निराश होगये॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे चतुस्त्रिंश सर्गः ॥३४॥

उस शंख व भेरी के शब्द से शत्रु के पुर को जीतने वाले महा बाहु रामचन्द्रजी लंका को चलने को तइयार हुए। उस बाजा के शब्द को सुनकर राक्षसों के राजा रावण क्षण भर ध्यान करके मन्त्रियों को बुलाया इसके बाद उन आये हुए मन्त्रियों को सभा में इकट्ठा करके इस प्रकार महा पराक्रमी संसार को ताप देने वाला रावण बोला, इस राम के समुद्र को तरण का और इसके बल व पराक्रम का जो बड़ाई आप लोग ने किया वह सब मैंने सुना. अब रामचन्द्रजी के पराक्रम को जानकर अब अपने में विचार करो कि कौन किस प्रजारका बलवान है और उन बलवानों के संग क्या करना चाहिये। रावण के इस प्रकार वचन को सुनकर माल्यवान नाम रावण का मामा और मन्त्रियों में श्रेष्ठ तथा वृद्ध होकर बोला, जो राजा चौदह विद्या को जानकर नीति शास्त्र के अनुसार कार्य को करता है वह चिरकाल तक ऐश्वर्य का भोग करता है और शत्रु को अपने बश में करता है। और काल के अनुसार संधि विग्रह आदि कार्य को जो करता है वह अपने पक्ष को बढ़ाता हुआ बड़े भारी ऐश्वर्य का भोग करता है। हीन और बराबर में सन्धि करना हमको अच्छा जान पड़ता है। जिस सीता के लिये हम लोगों को युद्ध करना पड़ैगा उस सीता को सत्कार पूर्वक उन्हें देकर सन्धि करना चाहिये। देवता ऋषि गंधर्व जय की इच्छा करने वाले रामजी की सहायता में आये हैं इसलिये इनके साथ विरोध करना उचित नहीं है सीता को देकर इनसे सन्धि करना श्रेष्ठ है। माल्यवान् अपने पक्षको दिखाने के लिये सामान्य रूप से जगत की क्षय व वृद्धि के कारण को दिखाने लगा कि भगवान पितामह देवता असुरों के हित अहित के परिहार के लिये विधि निषेध रूप दो पक्षको बनाया है उसका नाम धर्म व अधर्म हैं। महात्मा देवताओंका पक्ष धर्म है और असुरोंका पक्ष अधर्म है। सतयुग आदि समयमें कालके अनुसार धर्म बढकर अधर्म को नाश करता है और कलयुगमें अधम बढकर धर्म को नाश करदेता है। क्योंकि कलियुगमें धर्म एक पैरसे खड़ा रहता है। सब काल में सुख

देने वाला धर्म एक रूपसे स्थित है। और अधर्म तीन प्रकार का है। वह धर्म युग के अनुसार क्षीण होकर कलियुग में एक पग से रह जाता है। इसलिये धर्म से राक्षसी व्यवहार का लाभ होता है। समस्त ऐश्वर्य को साधन करने वाले धर्म से लोक में दिग्विजय करने के लिये यज्ञ तपस्या व दानमें बिघ्न करने वाले अधर्म युक्त राक्षसों को राम ने मारा है। अनेक देवर्षि व ब्रह्मर्षि आदि को पीड़ देने से और लोक में अधम करने से यह शत्रु हम लोगों से बलवान है। क्योंकि विषय में आसक्त होकर तुमने जो कुछ अत्याचार व पाप किया है उससे देवता व मुनियों को अत्यन्त पीड़ा पहुंचा है, उन लोगों का प्रभाव जलती हुई आग के समान दुर्धर्ष है। वह लोग सदा धर्म को संपादन करने में रत रहते हैं और वे ऋषि गण ध्यान यज्ञ तपस्या अग्निहोत्र आदि को संपादन करके ऊंचे स्वर से वेद पाठ करते हैं। जिस वेद के शब्द को सुनकर राक्षस पिशाच आदि योजन भर दूर भाग जाते हैं। यदि यह कहिये कि और राक्षस उन लोगों की तपस्या को सन्ताप देते हैं हमने तो स्वयं ब्रह्माजी से वरदान को लाभ किया है। तो यह भी जानना चाहिये कि यह बानर नहीं हैं किन्तु साक्षात् देवगण हैं। हे राजन्! मैं अनेक प्रकार के उत्पात को देखने से जानता हूं कि राक्षसों के विनाश का समय नगीच में उपस्थित है। मेघ के समान गदहे गर्जना करते हैं, बदल लंकापुरी पर रक्त वर्षा करते हैं। जितने हाथी व घोड़े हैं उनके आंख से आंसू की धारा बहती है। धूली उड़कर प्रभा को मलीन करदिया है। सर्प अथवा मांस खानेवाले पशु गिद्ध आदिके झुंड लंकापुरी में तथा बाग आदिमें भयंकर शब्द करते हैं। महाकाली आदि देवियां स्त्रियों को स्वप्न में दीख पड़ती हैं और उन स्त्रियों से स्वप्नमें संभाषण करके दांत बाय कर हंसती हैं। गृहमें जो बलि दियाजाता है उसको श्वान खाजाते हैं कौआ उसको स्पर्श नहीं करते हैं। नीले व लाल रंगके कपोत आकाश में बिहार करते हैं। सूर्य के उदय काल में पक्षि व मृगा रोने के समान बोलते हैं। कौआ सबके गृह को संध्याकाल

में देखता है। इस प्रकार के अनेक अशकुन दिखाई पड़ते हैं। हम मनुष्य का रूप धारण किये श्रीरामचन्द्रजी को साक्षाद् विष्णु मानते हैं। जो रामचन्द्र ने समुद्र में सेतु को बांधकर ऐसा अद्भुत कर्म किया है इस प्रकार के कर्म को मनुष्य कभी नहीं कर सकता है इसलिये हे रावण! नरराज राम के साथ संधि करो। अब उत्तर काल में सुख देने वाले कार्य को निश्चय करके जो उचित हो सोई करो माल्यवान रावण से इस प्रकार कहकर उसके मनके भाव को जान कर कि हमारी कही बात इस को भली नहीं लगती है ऐसा जान कर रावण को देखता हुआ माल्यवान् मौन होगया ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे पंचत्रिंश सर्गः ॥३५॥

इस प्रकार माल्यवान के वचन को सुनकर काल के वश में प्राप्त रावण भौंह चढ़ाकर क्रोध युक्त होकर माल्यवान से बोला, हे मन्त्रीन्! हितकी बुद्धि से जो तुमने हमारे अहित व कठोर बचन को अर्थात् हमारे सामने शत्रु पक्ष की जो बड़ाई करते हो यह हमारे सुनने के योग्य नहीं है। पिता की आज्ञा से बनमें निकासे गये मनुष्य व कृपण राम को तुम समर्थ कैसे मानते हो। उनके साथ एक बानरी सेना के अतिरिक्त और कोई दूसरा समान नहीं है। देवता असुरों में पराक्रमी देवताओं को भय देने वाले राक्षसों के ईश्वर हमको निर्बल किस प्रकार जानते हो। हे माल्यवान्! तुमने जो यह शत्रु की बड़ाई किया है वह हमारे द्वेष से अथवा शत्रु के पक्षपात से अथवा शत्रु की प्रशंसा हमारे सामने करके युद्ध के लिये हमें प्रोत्साहित करने की इच्छा से तुमने इस प्रकार कठोर बचन कहा है। युद्ध आदि में समर्थ अपने अव्याहत राज में स्थित प्रोत्साहन के विना राजा को शास्त्र के तत्व को जानने वाले ऐसा कौन पण्डित पुरुष है जो इस प्रकार परुष बचन को कहेगा। राम चन्द्र के भय से सीता को हम क्यों राम को देवें? लक्ष्मण व सुग्रीव के सहित इन बानर कोटि को मैं एक दिन में नाश कर सकता हूं, अरे जिस रावण के सन्मुख इन्द्रादि देवता नहीं ठहर सकते वह रावण राम

के युद्ध से भयको प्राप्त होगा। जैसे अग्नि कभी शीतल नहीं होती है वैसे रावण कभी किसी से विनीत नहीं होसकता है। क्योंकि इस रावण का स्वभाव ही यही है। यदि यह कहो कि रामने समुद्र में सेतु को बांधकर इस पार में आये हैं यही हम लोगों को विस्मय का कारण है तो उस सेतु को समुद्र ने अपनी इच्छा से अंगीकार किया है न कि राम के सामर्थ्य से कि जिस सेतु को बांधना देखकर तुमको भय हुआ है। वह रामचन्द्र बानरों की सेना सहित जो इस पार में लंकापुरी के समीप सुबेल पर्वत पर आये हैं तो मैं यह सत्य कहता हूं कि जीवित यहां से लौटकर नहीं जा सकेंगे। इस प्रकार क्रोध युक्त रावण के बचन को सुनकर लज्जा के मारे माल्यवान नीचे देखने लगा और निरुत्तर होकर मौन हो गया इसके बाद राक्षसों ने रावण का जै जै कार मनाया और रावण सभा को विसर्जित कर अपने भवन को चलागया। रावण सभा को विसर्जन करने के समय अपने मन्त्रियों के साथ बिचार करके लंकापुरी की रक्षा करने के लिये आज्ञा दिया कि प्रधान मन्त्री प्रहस्त अपनी सेना को साथ लेकर पूर्व दिशा के फाटक पर रक्षा करे, और दक्षिण फाटक की महापार्श्व व महोदर रक्षा करे, और पश्चिम द्वार की रक्षा अपनी सेना के साथ इन्द्रजित (मेघनाद) करें। उत्तर द्वारकी रक्षा शुक व सारण व मैं करूंगा। और महा पराक्रमी विरूपाक्ष अपनी राक्षसों की सेना को लेकर मध्य भाग की रक्षा करें। इसप्रकार लंकापुरी की रक्षा करके अपने को कृत कृत्य जानकर महल में चलागया। सभा विसर्जन के समय राक्षसेन्द्र रावण की आज्ञा को शिरोधार्य करके रावण के चलने के समय जै जै शब्द मन्त्रियोंने किया, इस प्रकार मन्त्री गणों से पूजित होकर अन्तःपुर को चला गया॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे षटत्रिंश सर्गः॥३६॥

इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्र व सुग्रीव तथा हनुमान, ऋक्षराज, जांबवान, विभीषण, वालिपुत्र अंगद, लक्ष्मण, शरभ, सुषेण, मैन्द, द्विविद गज गवाक्ष कुमुद नल पनस आदि बानर शत्रु देश में पहुंच कर बिचार

करने को उपस्थित हुए। रावणसे पालित यह लंकापुरी देवता गंधर्व असुर आदिको दुर्जय सुना जाता है सो यही लंकापुरी है। इसलिये शत्रुके नाश रूपी कार्य सिद्धि को आगे करके उसके उपाय को निश्चय करने के लिये विचार करो। जहां नित्य सन्निहित रावण है। सो यही लंकापुरी है उन लोगोंके इसप्रकार बचनको सुनकर विभीषणबोले, कि अनल, पनस, संपाति, प्रमिति ये चार हमारे मंत्री लंकापुरी से होकर यहां आये हैं उन लोगों के द्वारा जो कुछ वृत्तान्त हमको ज्ञात है वह कहता हूं। जो कुछ रावण ने अपने नगरकी रक्षा के लिये प्रबन्ध किया है वह सुनो। हे रामचन्द्रजी! रावण ने जिस प्रकार विधान किया है उसको यथातथ्य से कहता हूं सुनो। नगर के पूर्व द्वारपर महाबलवान प्रहस्त अपनी सेनाके सहित रक्षा करता है और महापराक्रमी महापार्श्व महोदर नगरके दक्षिण द्वारकी रक्षा करता है। बहुत से बलवान राक्षसों को लेकर इन्द्रजित पश्चिम द्वार की रक्षा करता है और शुक तथा शारणके सहित रावण स्वयं उत्तर द्वार पर स्थित है और धनुष, बाण, शूल आदि अस्त्रों को लेकर विरूपाक्ष अनेक रक्षसों के सहित मध्य भाग में स्थित है। शूल मुद्गर पहिश धनुष बाण आदि प्रहार करनेवाले अनेक योधाओंके सहित रावण का पुत्र उपस्थित है। इस लंकापुरी के विधान को देखकर हमारे मन्त्रियों लोग अभी आये हैं और रावण की सेना में दश हजार हाथी सवार और दश हजार रथी अर्थात हाथी घोड़ा रथ पैदल आदि की सेना को लेकर कुछ लाख अधिक एक करोड़ है, यह सैनिक अत्यन्त बलवान व पराक्रमी तथा रण में आततायी है। हे राजन्! एक एक राक्षसों के संग लक्ष लक्ष राक्षस सैनिक हैं। इस प्रकार लंका की प्रवृत्ति मन्त्रियों के मुख से सुनकर विभीषण ने कहकर उन चार अपने मन्त्रियों को दिखाया। वे सब विभीषण के मन्त्री लंका की प्रवृत्ति को रामचन्द्रजी से निवेदन किये, इसके बाद रामजी के प्रिय को चाहने वाले विभीषण रामचन्द्रजी से बोले, हेभगवन्! शत्रु के उत्कर्ष को सुनकर क्रोध व दीनता नहीं करना चाहिये। जिस प्रकार रावण ने अपने नगर की

रक्षा के लिये प्रबन्ध राक्षसों का किया है उसी प्रकार आप भी इन बानरों की सेना को विभाग करके चतुरंग बल से रावण को स्थगित करो। इस प्रकार विभीषण के बचन को सुनकर शत्रु को नाश करने के लिये रामचन्द्रजी बोले, पूर्व द्वार की रक्षा प्रहस्त नाम का योधा करता है वहां बानरी सना को लेकर हमारे सेनापति नील जावें और जहां महापार्श्व व महोदर दक्षिण द्वार पर हैं वहां अपनी सेना लेकर अंगदजी जावें। अनेक बानरों की सेना को लेकर वायु पुत्र हनुमान पश्चिम द्वार से प्रवेश करें और देवता दान व ऋषि आदि को सन्ताप देने वाला बरदान के प्रभाव से बलवान प्रजाओं को पीड़ा देने वाला राक्षसेन्द्र रावण के सन्मुख लक्ष्मण के सहित मैं उत्तर द्वार पर उपस्थित होऊंगा और विभीषण मध्य में पराक्रम करें। चार मन्त्रियों के सहित विभीषण पांचवा हमारे मन्त्री रामचन्द्रजी अपने कार्य सिद्धि के लिये विभीषण को इस प्रकार सान्त्वना देकर सुबेल गिरि से लंकापुरी को चलने की इच्छा किये। इसके बाद शत्रु के नाश करने के लिये महात्मा रामचन्द्रजी अपनी बानरी सेना से पृथिवी को पूर्ण करते हुए लंकापुरी को चलने को तइयार हुए॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे सप्तत्रिंश सर्गः॥३७॥

सुबेल पर्वत से लंकापुरी को चलने की इच्छा करने वाले रामचन्द्रजी सुग्रीव व धर्म को तथा मन्त्र व कार्य को जानने वाले विभीषण से बोले, कि यह सुबेल पर्वत बड़ा सुन्द है और अनेक प्रकार के धातु से विभूषित है आज की रात्रि और हम लोग इस पर्वत पर निवास करें और उस रावण के पुरी को भली भांति देखें, कि जिस राक्षस ने मरण पर्यन्त तक दुःख देने का अनुभव किया है। जिस रावणने धर्म आचार और कुलीनता को जानकर राक्षसी नीच बुद्धि से सीता को हरण के इस प्रकार निन्दित कर्म को किया है। इस प्रकार के अनेक बिचार से रावण के प्रति क्रोधित राम सुबेल पर्वत पर निवास करने की इच्छा से ठहरे। रामचन्द्रजी के पीछे लक्ष्मण धनुष बाण को लेकर तथा सुग्रीव

और मन्त्रियों के सहित विभीषण सुवेल पर्वत पर स्थान लिये इसके बाद और भी बानर जहां रामचन्द्रजी रहे वहां चले गये और शीघ्रता से पर्वत के शिखर पर चढ़कर आकाश को स्पर्श करने वाली लंकापुरी को देखने लगे, बड़े बड़े प्राकार से शोभित राक्षसों से परिपूर्ण लंकापुरी को बानरों ने देखा, युद्ध की इच्छा करने वाले उन राक्षसों को देखकर बानरों ने बड़े सघन व कठोर शब्द से किलकारी देने लगे, इसके बाद सूर्य का प्रकाश अस्त होगया और चन्द्रमा के प्रकाश से युक्त रात्रि की शोभा होने लगी। इसके बाद बानरों की सेना सहित विभीषण से सत्कार को पाकर रामचन्द्रजी तथा सेनापति लक्ष्मणजी सुख पूर्वक रात्रिकाल में उस पर्वत पर निवास किये।

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्ध काण्डे अष्टत्रिंश सर्गः ॥ ३८ ॥

उस रात्रिमें सेना सहित रामचन्द्र तथा लक्ष्मणजी सुवेल पर्वत पर निवास करते हुए बानर वीरों ने लंकापुरी के बन व उपवन को देखे, कि यह पुरी आयाम व विस्तार में बराबर है और दुष्टजन्तुओं से रहित होने के कारण मनोहर है और बड़े विशाल विशाल अनेक स्थान हैं, इस प्रकार लंकापुरी की मनोहरता देखकर बानरों को विस्मय होगया कि इस पुरी के उपवन में चंपक, अशोक, बकुल, शाल, ताल, तमाल, पनस, नागवृक्ष, हिन्ताल, अर्जुन, छछून, तिलक, कार्णिकार, अढौल आदि के वृक्षों से परिपूर्ण हैं, उन वृक्षों पर पुष्पित लतायें आलिंगन किये हैं। यह लंकापुरी इन्द्र की अमरावती के समान है, इस बन में चित्र बिचित्र के पुष्प तथा रक्त व कोमल पल्लव तथा नीले रंग के बेत आदि से विचित्र शोभा को बनकी पंक्ति प्राप्त है। यह उपवन मनुष्यों के आभूषण के समान सुगन्धित पुष्प व मनोहर फल को धारण किये हैं यह उपवन कुबेर व इन्द्र के उपवन समान है इसमें अनेक जलाशय हैं उन जलाशयों में भांति भांति के कमल फूले हैं उन फूलों पर भवरे बैठकर आनन्द मचाते हैं। मयूर कोकिला आदि पक्षी कलरव कर रहे हैं। इस प्रकार बनकी शोभा को देखकर कामरूपी बा-

नर प्रसन्न होकर आपस में वार्तालाप करने लगे कि देखो पुष्प के सुगन्ध को लेकर यह वायु कैसे मन्द मन्द चलता है। इसके अतिरिक्त और बलवान वानर सेना से बाहर निकल लंका को देखने के लिये चले गये। वहां जाकर उस उपवन में रहने वाले पक्षियों को तथा मृगा आदि जन्तुओं को त्रास देने लगे और अपनी गर्जना से लंकापुरी को भय भीत कर दिये और अपने चरण के महावेग से पृथिवी को इस प्रकार ताडित किया कि पृथिवी से धूलि उड़कर आकाश को स्पर्श करने लगी। भालूसिंह महिष वनहाथी मृगा व पक्षी भयके मारे व्याकुल होकर दिशाओं में भाग चले, इसके बाद त्रिकूट पर्वत के शिखर से एक आंधी उठकर चांदी के पर्वत के समान आकाश मार्ग को सैकड़ों योजन तक आवृत करलि। ऐसा आश्चर्य देख कर रामजी विस्मित होगये और कहने लगे कि यह पुरी मनसे भी अतीत है कर्म से क्या इसको होसकता है। रावण से पालित लंका त्रिकूट पर्वत पर शोभित है, (दश योजन की लंबाई और बीस योजन के बिस्तार में) यह पुरी बद्दल समुदाय के बराबर है। अथवा यह पुरी तीस योजन की लंबाई में और सौ योजन के विस्तार में है यह अन्य पुराण की कथा प्रसिद्ध है। प्रासाद व विमान से यह लंकापुरी परम भूषित है। इस लंकापुरी के हजार खंभो से युक्त यह रावण का प्रसाद कैलास पर्वत के समान शोभित है। राक्षसेन्द्र का गृह इस नगर के भूषण के समान है। जिसकी रक्षा लाखों राक्षस किया करते हैं। मनोहर स्वर्ण मयी यह पुरी पर्वत पर शोभित है और अनेक प्रकार के रत्न से भूषित और उद्यान से शोभित है और इसमें अनेक प्रकार के पक्षी व मृगा आदि से सेवित हैं। श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार धन धान्य से पूर्ण लंकापुरी को देखकर विस्मित होगये ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे एकोनचत्वारिंश सर्गः ॥३९॥

इसके बाद रामचन्द्रजी सुबेल पर्वत पर सुग्रीव आदि वानरों के सहित बठकर चारो ओर से लंकापुरी को देखने लगे कि रमणीय कानन से शोभित विश्वकर्मा से निर्मित रावण के लंका पुरी को रामचन्द्रजी

देखे, इसी त्रिकूट के शिखर के ऊपर लंका के छत पर सफेद छत्र व चमर से शोभित रावण को देखे, वह रावण अंग में लाल चन्दन को लगाये तथा लाल मणियों के बने गहने को पहिने थे। हेम माला पर काम दार डुपट्टा ओढे था। ऐरावत हाथी का किया आघात उसके हृदय पर विराज मान था। लाल वस्त्र को धारण किये था। जैसे संध्या काल में बदलोंसे छिपे सूर्य की शोभा होती है। वैसे रक्त वस्त्रसे रावण शोभित होने लगा। उस प्रकार के वस्त्र व अलंकार से भूषित होकर रावण सुग्रीव व रामचन्द्रजी को देखने लगा, और यह लोग भी रावण को देखने लगे। रावण को भली भांति देखकर सुग्रीव एका एक आसन से उठकर क्रोध के वेग से पराक्रम व बल से संयुक्त होकर सुबेल पर्वत के शिखर से उछलकर रावण के स्थान पर पहुंच गये, और क्षण भर ठहरकर उस राक्षस को तृण के बराबर भी न जानकर कठोर बचन को बोले, मैं लोकनाथ रामचन्द्रजी के दास अथवा मित्र हूं। उन रामजीके तेजसे अब बचकर यहां से नही जा सकेगा। ऐसी कहकर सुग्रीवजी ने रावण के ऊपर एका एक कूद पड़े और उसके शिर के मुकुट को मस्तक से उतार कर पृथिवी पर फेंक दिये और रावण को भूमि पर पटक दिये, एका एक आये सुग्रीव बानर को देखकर रावण बोला, हे सुन्दर गर्दना वाले सुग्रीव! जब हमारे परोक्ष में आये तक सुग्रीव रहे अब हमारे दृष्टि के सामने से सुन्दर गर्दना के सहित नहीं जा सकोगे। ऐसा कहकर बल पूर्वक उठकर एका एक गेंदा के समान सुग्रीव को उठाकर पृथिवी पर पटक दिया। सेमर व पलाश के फूले वृक्ष के समान वे दोनो अर्थात् सुग्रीव व रावण रुधिर तथा पसीना से अनिष्ट होकर परस्पर युद्ध करने लगे। उस युद्ध मे लात मुका थपड़ा आदि से बानरेन्द्रसुग्रीव व राक्षसेन्द्र रावण ने युद्ध किया। इसके बाद बाहु युद्ध करके वे दोनो गो पुर (अटारी) पर गिर पड़े, प्राकार व परिखा के मध्य में गिरकर निश्वास पूर्व आलिंगन किये रण में खड़े रहे। सिंहव हाथी के करभके समान लड़ते हुवे दोनों एक साथ पृथिवी पर गिर पड़े। इसके बाद वे दोनो बीर आपस के

युद्ध से शान्त होकर इस प्रकार परस्पर देखने लगे कि जैसे क्रोधित बिलार आपस में युद्ध करने के बाद खाने वाले वस्तु को देखते हैं वैसे सुग्रीव व रावण आपस में देखने लगे और जिस प्रकार एक हाथी दूसरे हाथी को रोकता व युद्ध करता हुआ मार्ग को गोलाकार मण्डल के समान बना लेता है वैसे अनेक स्थानों से रावण सुग्रीव के, सुग्रीव रावण के मार्ग को मंडलाकार करते हुए सुग्रीव चलनेको तइयार हुए। वे दोनों वीर कभी दाहिने बायें से लड़ते, कभी कोई किसी को मारकर चलने के उद्योग को भ्रष्ट करता हुआ एक को एक तरफ खड़ा देख कर दूसरा दौड़ता हुआ, कभी उसके सन्मुख से शीघ्रता से गमन करता हुआ कभी अवसर को बचाकर पैर को उठाता, कभी पीछे से भागता कहीं अगल बगल से भागने की इच्छा करता हुआ इस प्रकार के फलांग (कवायत) से युद्ध करते हुए दोनों वानर व राक्षस परस्पर में हठित होते थे। इसके बाद सुग्रीव ने अपने को बल से रावण के हाथ से छूटने को अशक्य जानकर माया से छुड़ाने का उपाय किये, सुग्रीवने अपनी श्वास रोककर संकर आकाशमें जाकर श्रीरामचन्द्रजी की सेना में चले आये, इस प्रकार सुग्रीव से वंचित होकर रावण विस्मय को प्राप्त हुआ। इसके बाद सूर्य के पुत्र सुग्रीव रावण से घोर युद्ध करके वायु के गति के समान आकाश मार्ग होकर अपनी सेना में चले आये। सुग्रीव के इस कर्म से रामचन्द्रजी लक्ष्मण के सहित अत्यन्त प्रसन्न होगये और वानरों ने सुग्रीव की पूजा किया ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे चत्वारिंश सर्गः ॥४०॥

इस प्रकार के निमित्त को देखकर श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीव को गले से लगाकर इस प्रकार के वचन को बोले—हेसुग्रीव! पहिले विचार न करके यह जो कार्य इस समय आपने किया है ऐसा साहस राजाओं को नहीं करना चाहिये। हेसाहस प्रिय! इस प्रकार कि चिन्ता में हम व विभीषण तथा सेना सब होगई कि उन राक्षसों के मध्य में क्रोध युक्त आप चले गये यह महा कष्ट हुआ। शत्रु के समीप आप जाक फिर

कैसे लौटकर आये। हेशत्रु को ताप देने वाले! हेवीर! इस समय आप को साहस करना उचित नहीं है राक्षसों के हाथ से आप कुछ विपत्ति में पड़ जायँगे तो मैं सीता को लेकर क्या करूंगा? इन्द्र वरुण के समान तुमारे पराक्रम को हम जानते हैं तौ भी यदि तुम राक्षसों के समूह में विपद ग्रस्त हो जाते तो महा बाहु भरत तथा लक्ष्मण और शत्रुओं को नाश करने वाले शत्रुघ्न व आपने शरीर से मैं नाश को प्राप्त होऊंगा तुम्हारे आने के पहिले यह हमारी बुद्धि में निश्चय हुआ था। मैं स्वयं परिवार व सेना सहित रावण को मारकर लंकापुरी का अभिषेक विभीषण को करके तथा अयोध्यापुरी का राज्या भरत को देकर मैं अपने शरीर को त्याग करूंगा। इस प्रकार रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर सुग्रीवजी बोले—हेरामजी! सीताजी को हरण करने वाले अपराधी रावण को देखकर मैं अपने पराक्रम के अनुसार किस प्रकार क्षमा कर सक्ते हैं। इस प्रकार कहने वाले सुग्रीव की प्रशंसा करके लक्ष्मी संपन्न रामजी इस प्रकार के वचन को बोले—हे! सुन्दर जल व बन के फल से सैनिक बानर जब तृप्त हो जावें तब इनको विभाग कर दीजिये। क्योंकि बड़ाभारी अशुभ दिखाई पड़ रहा है, धूलि को लेकर हवा चलती है, भूकंप हो रहा है। पर्वतों के शिखर हिलते हैं, बदल घन घोर गर्जना करते हैं। संध्याकाल रक्त चन्दन के समान लाल रंग होगया है! सूर्य मण्डल में एक नीला चीन्ह। दिखाई पड़ता है। रात्रि काल में चन्द्रमा के किरण से गरमी निकलती है। मृगा आदि जन्तु दीन होकर भयानक शब्द को बोलते हैं आकाश से तारा गण टूटते हैं। कौवा बाज गिद्ध आदि जन्तु पृथिवी पर आकर अशुभ बचन को बोलते हैं। बानर व राक्षसों के युद्ध से पृथिवी में रक्त मांस का कीचड़ होगया है। इस प्रकार लक्ष्मणजी से कहकर बोले, कि इन सेनाओं को शीघ्र आज्ञा दीजिये कि पर्वत के शिखर से उतर कर एकत्र हो जावें, रामजी के बचन के अनुसार पर्वत से उतर कर सेना समुदाय एकत्र होगया इसके बाद रामचन्द्रजी भी अपने आसन को विसर्जित

करके पर्वत के शिखर से नीचे उतर कर अपनी प्रबल सेना को देख कर आनन्दित होगये और सुग्रीव के सहित बानरी सेना का सन्नाह करके ज्योतिष शास्त्रोक्त समय के अनुसार अपनी सेना को युद्ध करने की प्रेरणा किये। उस शुभ समय में अपनी बड़ी भारी बानरों की सेना को लेकर धनुष को धारण करने वाले, रामचन्द्रजी लंकापुरी को प्रस्थान किये। रामचन्द्रजी के पीछे विभीषण, सुग्रीव, हनुमान, जांबवान, नल, व लक्ष्मणजी चले। इसके बाद प्रबल बानरों भालुओं की सेना चली। रामचन्द्र व लक्ष्मणजी शीघ्रही रावण से पालित लंकापुरी के द्वार पर पहुंचे। अनेक प्रकार की ध्वजा व पताका से तथा ऊंचे ऊंचे महल से भूषित देवताओं को भी दुष्प्राय लंकापुरी में रामचन्द्रजी के बचन से प्रेरित अनेक स्थानों से बलवान बानर प्रवेश करने के लिये उपस्थित हुए। पर्वत के शिखर के समान लंकापुरी के उत्तर फाटक पर लक्ष्मणजीके सहित रामचन्द्रजी अपनी सेनासहित उपस्थित होगये, जिस फाटक पर राक्षसी सेना सहित पुरी की रक्षा करने के लिये रावण स्वयं खड़ा था। वहां पर रामचन्द्रजी के सिवाय दूसरे की गति नहीं थी। अनेक प्रकार के आयुध व कवच से वेष्टित पूर्व के द्वार पर सेनापति नील अपनी सेना सहित पहुंचे, महापराक्रमी मैन्द व द्विविद के सहित अंगद जी बानरी सेना को लेकर दक्षिण द्वार पर आक्रमण किये। ऋषभ गवाक्ष गजवयके सहित बानरी सेनासे पर्याप्त होकर हनुमानजी पश्चिम द्वार पर पहुंचे। रावण मेघनाद के मध्य में अर्थात् उत्तर व पश्चिम दिशा के मध्यमें सुग्रीव खड़े हुए। वे सब छत्तीस करोड़ प्रधान बानर रहे जिनके बल गरुड़ इव पवन के समान थे, इसके अतिरिक्त जो बानरों की सेना थी उनकी गणना नहीं हुई। युद्धमें नियुक्त होने पर भी जो कुछ बानर अवशेष बचे उनको रामचन्द्रजी की आज्ञासे विभीषण ने करोड़ करोड़ बानरों को और भी हरएक द्वार पर विभाग किये। और पश्चिम द्वार के समीप सुषेण के सहित जाम्बवान महा सेना भालुओं की लेकर खड़े भये ये सब बानर वृक्ष व पर्वत के टुकड़ों को लेकर

युद्ध करने की प्रसन्नता से विह्वल होगये । वे सब बानर बड़े पूंछ व दांत तथा नख वाले विशाल मुखवाले बानर थे । उनमें किसी को दश हाथी का बल था किसीको सौ हाथी का किसी के हजार हाथी का बल था । किसी के ओघसंख्या के हाथी के समान बल था किसीको लाख हाथी के समान बल था । किसी में अप्रमेय बल था उन बानरों का पतंग के समान उद्गम हुआ । इस प्रकार बानर भालु व लंगूर की सेना युद्ध करने की अभिलाषा से लंकाके द्वार को घेर लिया । वह बानरी सेना हाथ में वृक्षोंको लिय दुष्प्रवेश लंका पुरी में प्रवेश किये। इस प्रकार बानरों के साहस को व पराक्रम को देखकर राक्षस गण विस्मित होगये । जिस प्रकार अपने जलके तरंग व अभिमान से समुद्र गर्जना करता है वैसेही बानरों की सेना गर्जना करने लगी । उन बानरों के गर्जना के शब्द से त्रिकूट पर्वत सहित लंकापुरी कांपने लगी । रामचन्द्र व लक्ष्मणजी से तथा सुग्रीव से रक्षाकी गई सेना देवताओं को भी दुर्धर्ष होगई । रामचन्द्रजी अपनी सेनाओं के द्वारा राक्षसों के बधमें मन्त्रियों के सहित बार बार बिचार करने लगे और विभीषण इस प्रकार अनुमति देने लगे कि यदि रावण आपकी शरण में आवेगा तो राज्य उसीका रहेगा अथवा राजधर्मके अनुसार सामादि उपाय से दण्ड उसको अवश्य दिया जायगा नहीं तो उसके आचारण से प्रजा नाश हो जायगी । वा बालिको मारनें का दोष भोगना पड़ेगा । इस प्रकारों के अनेक विचार मन्त्रियों के संग रामचन्द्रजीका हुआकरत था इसके बाद विभीषण की अनुमति से अंगदजी को बुलाकर इसप्रकार बोले कि हे कपि ! आप दशग्रीव के समीप जाकर हमारे सन्देश को कहिये । कि उपद्रव से रहित रामचन्द्रजी समुद्र को पार करके तुमारी सेना व बलको तृणके समान देखते हुए राक्षसों का विग्रह करने के लिये लंका पुरी के द्वारपर धनुष बाण लिये खड़े हैं । वह रामचन्द्रजी सुरासुर लोक के राजा हैं । हे राघव ! ब्रह्माजी के वरदान के प्रभावसे अपने अभिमान के द्वारा जो तैंने रामचन्द्रजी की स्त्री सीताको एकान्त में हरण

करके उनका अपमान किया है उसतेरे कर्मसे तेरा अभिमान निश्चय नष्ट होगा। और तैं उनके बाण से हत होकर महर्षियों की पदवी को पावेगा। क्योंकि ऐसा धर्मशास्त्र का बचन है कि राज भिधृतदण्डास्तु कृत्वा पापानिभानवाः। निर्मलाः स्वर्गमायान्ति सन्तः सुकृतिनोयथा अर्थात् जिस प्रकार पुण्य करने वाले पुण्यात्मा लोग मरने पर स्वर्ग लाभ करते हैं वैसेही धर्मात्मा राजा के हाथ से दण्डको पाकर पापी मनुष्य भी स्वर्ग को पाता है। राक्षसों में अधम! जिस अभिमान व माया के बल से तैंने सीता को हरण किया है उस बलको प्रगट करो। मैं अपने इन तीक्ष्ण बाणों से इस लोकको राक्षसों से हीन करदूंगा। यदि तूं अपने मरण के भयसे युद्ध करना नहीं चाहता तो हमारे शरण में आकर जानकी को समर्पण करो। नहीं तो धर्मात्मा विभीषण तुमारे नाश होने पर इस अकंटक राज्य को भोग करेगा। तुम अपने अभिमानी व मूर्ख मन्त्रियों के सहित अधर्म से क्षण भर भी इस राज्यको नहीं भोगकर सकोगे। हे राक्षस! अपनी बीरता को धारण करके युद्ध करो मेरे बाणों से तुम रणमें शान्त होओगे तुमारे शान्त होने से जगत् शान्त होजायगा। हे निशाचर! यदि तुम पक्षी होकर भी तीनों लोक के अन्तर अपने जीवन की रक्षा को चाहेगा तौ भी मेरे दृष्टि के सामने से जीता हुआ नहीं बचेगा। रामचन्द्रजी इस प्रकार अंगदजी से कहकर मौन होगये। रामचन्द्रजी के बचन को सुन कर मूर्तिमान अग्नि के समान आकाश मार्ग से उछल कर क्षण भर में श्रीमान् अंगदजी रावण के मन्दिर पर पहुँचे। वहा पहुँच कर मन्त्रियों के सहित सिंहासन पर बैठे रावण को देखे। उसके समीप में अग्नि के सदृश अङ्गद जी पहुंच कर रामजी के सन्देश को कहने लगे और रावण मन्त्रियों के सहित रामचन्द्रजो के बचन को सुनने में उत्सुक हुआ मैं अयोध्यापुरी के राजा रामचन्द्रजी के दूत हैं और बालि बानर के पुत्र अङ्गद हमारा नाम है। कौसल्या को आनन्द देने वाले रामचन्द्रजी ने तुमको इस प्रकार कहे हैं, कि इस महल के बाहर निकल

कर पुरुषार्थ करो। तुमको पुत्र जाति और मन्त्रियों को नाश करने को आये हैं. तुमारे नाश होने पर तीनों लोक सुखी हो जायेगा। देवता दैत्य दानव यक्ष राक्षस किन्नर पन्नग उरग गंधर्व राक्षस और ऋषियों को पीड़ा देने वाले शत्रुका आज उद्धार करूंगा। तेरे नाश होने पर इस ऐश्वर्या को विभीषण भोग करेगा। नहीं तो रामचन्द्रजी को सत्कार पूर्वक वैदेही को समर्पण करो। इस प्रकार कठोर बचन अङ्गदजी के मुखसे सुनकर राक्षसों के राजा रावण क्रोधित होकर मन्त्रियों से बोला कि इस बानर को पकड़ कर मार डालो। रावण के बचन को सुनकर प्रज्वलित अग्नि के समान तेजस्वी राक्षस अङ्गदजी को पकड़ लिये। अङ्गदजी अपनी इच्छा से राक्षसों के बलको जानने के लिये भुजाओं को पकड़े हुए उन राक्षसों को लेकर पक्षीके समान आकाश में जाकर ऊंचे प्रासाद से उन चारो राक्षसों को ऐसा झटका दिया कि वे चारो राक्षसेन्द्र रावण के सन्मुख गिरकर मर गये। और पर्वत के शिखर के समान लंकापुरी के ऊँचे प्रसाद को लांघकर और पुरीके कनगुरों को तथा ध्वजा पताका को गिराते और बड़ी भारी घनघोर गर्जना के साथ बानरों को आनन्द देते हुए रामचन्द्रजी के समीप आये (इधर रावण राक्षसों का मरण लंकापुरी के प्रासाद का टूटना आदि देखकर अपने विनाश की चिन्ता से चिन्तित होगया। और रामचन्द्रजी प्रसन्नता से गर्जना करते हुए बानरी सेना के सहित युद्ध करने की व शत्रुको बध करने की इच्छा से लंकापुरी को घेरलिये। पर्वत के समान विशाल सुषेण अनेक बानरों की सेना को लेकर सुग्रीव की आज्ञानुसार सज्जित होकर द्वारको घेरे खड़े रहे। जैसे नक्षत्रों के मध्य में चन्द्रमा की शोभा होती है वैसेही बानरी सेना के मध्य में सुषेण शोभित होने लगे। रामचन्द्रजी की लाखों अक्षौहिणी बानरों की सेना लंकापुरी से समुद्र पर्यन्त वर्तमान है। इस प्रकार की सेनाको देखकर कितने राक्षस विस्मय को प्राप्त हुए कितने भयके मारे विह्वल होगये। कितने समर की लालसा से आनन्द मचाने लगे। चारो ओर से बानरों को व्याप्त

देखकर भयसे पीड़ित राक्षस हाहाकार करने लगे। इस महा भयंकर कोलाहल से राक्षस योधा महा आयुध को लेकर इस प्रकार वेगयुक्त हो गये जैसे प्रलय कालकी आँधी चली आते ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे एकचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥

इसके उपरान्त वे राक्षस रावण के मन्दिर में जाकर रामचन्द्र के सहित बानरों की से घेरी गई लंकापुरी का निवेदन किये कि रामचन्द्र व लक्ष्मणजी अपनी बानरी सेना लेकर लंकापुरी के द्वारों पर खड़े हैं और वे बानर चहरदीवारों पर तथा महल व छतों पर व्याप्त होगये हैं। और लंकापुरी के प्राकार खंभ परिघ आदि को विध्वंस करते हैं। बानरों से व्याप्त लंकापुरी के समाचार को सुनकर अमर्षिरावण क्रोध युक्त होकर अपने महल के छत पर चढ़गये। और देखा कि ये युद्ध की इच्छा करने वाले असंख्य बानरों की सेना सर्वत्र लंकापुरी में व्याप्त होगई है। इन बानरों ने अपने समुदाय से पृथ्वी को कपिला वर्ण करदिया है। इनको किस प्रकार रोका जावे ऐसा अपने मनमें सोचकर रावण बार बार चिन्ता करने लगा। रामचन्द्रजी के यूथ को देखकर कुछ अपने हृदय में धैर्य का अवलंबन किया। रामचन्द्र जी सेना के सहित हर्षित होकर राक्षसों से पूरित पुरी को देखकर सीता जी के वियोग से मनमें सन्ताप करने लगे। कि कमल नयनी जनक नन्दिनी सीताजी हमारे कारण शोक से सन्तप्त होकर पृथिवी पर शयन करती है, ऐसा शोचकर शत्रु राक्षसों को मारने के लिये बानरों को आज्ञा दिये। रामचन्द्रजी की इस प्रकार की आज्ञा को सुन सिंहनाद के समान गर्जना करते हुए पर्वत की शिला वृक्ष आदि को हाथ में लिये शत्रुओं के नाशकी उपाय को सोचने लगे और रावण की सेना को देखते हुए रामचन्द्रजी की कार्य सिद्धि के लिये लंकापुरी पर वे बानर आरोहण किये। वेबानर कोई तो तांबे के समान लाल मुख के हैं कोई सोने की प्रतिमा के समान हैं और रामचन्द्रजी के कार्य के वास्ते अपने जीवन को नाश करना चाहते हैं। इसके बाद वे बानर पत्थर वृक्ष मुष्टि आदि अस्त्रको धारण करने

वाले लंकापुरी के प्राकार व शिखर पर चढ़कर तोरण पताका आदि को विध्वंस करने लगे । जलाशय आदिको धूलिसे तृणसे भरदिये । सुमेरू पर्वत के सानेके कनगुरों से युक्त लंकाको भ्रष्ट करने लगे महलों को ढ़हाने लगे और उस कंगूरे से कूदकर उस कंगूरे पर कूदते व गर्जना करने लगे और बार बार यह कहने लगे कि महाबली रामचन्द्र व लक्ष्मणजी बलवानों में श्रेष्ट हैं, और रामचन्द्रजी से पालित राजा सुग्रीव की जय हो इस प्रकार कहते व गर्जना करते काम रूपी बानर लंकामें चारोंओर दौड़ने लगे। बीर बाहु नल सुबाहु पनस नामके बानर और बानरों को इसप्रकार का उपद्रव करते देखकर बानरों को एकत्र करके व्यूह की रचना किया । दश करोड़ बानरी सेना को लेकर पूर्व द्वार पर कुमुद नाम के बानर स्थित हुए । कुमुद की सहायता के लिये महाबाहु पनस अनेक सेना के सहित ईशान कोण पर स्थित भये । बानरों में बलवान शतबलि बीस करोड़ बानरी सेना को लेकर दक्षिण द्वार पर ठहरे । तारा के पिता सुषेण कोटि कोटि बलवान् बानरों की सेना को लेकर पश्चिम द्वार पर खड़े हुए । लक्ष्मण व बानरों के राजा सुग्रीव जी बानरी सेना सहित रामचन्द्रजी उत्तर द्वार पर खड़े हुए । और लंगूरों के स्वामी महाकाय अत्यन्त पराक्रमी गवाक्ष करोड़ो बानरी सेना सहित रामचन्द्रजी के समीप स्थान पर खड़े हुए । शत्रुओं को दमन करने में प्रवीण धूम्र नाम के भालू अपनी भालुओं की सेना सहित रामचन्द्रजी के बायें तरफ खड़े हुए । महा बली विभीषण गदा को हाथ में लेकर मन्त्रीयों की भांति जहां रामचन्द्रजी रहे वहीं खड़े थे । गज गवाक्ष गवय शरभ गन्धमदन आदि सेना कि रक्षा के लिये इधर उधर दौड़ते थे । इसके उपरान्त कोप के प्रभाव से विह्वल रावण अपनी संपूर्ण सेनाओं को युद्ध करने कि आज्ञा दिया । इस प्रकार आज्ञा रावण के मुख से सुनकर निशाचरों ने बड़े हाहाकार के साथ अपने स्थान से आगे को चले । और शंख भेरी मृदंग आदि मारु बाजा को बजाते रामचन्द्रजी की सेना के सन्मुख उपस्थित होगये । उन राक्षसो के हाहाकार शब्द से व मारू

बाजा के महा शब्द से दिशायें भर उठी। जैसे जल से पूर्ण बद्दलों के मध्य में बिजली की शोभा होती है वैसे काले राक्षसों के मध्य में बिजली के समान उनके भूषणों की शोभा होती थी। जैसे समुद्र अपने वेग से शरद् पूर्णिमा को पूर्ण होकर ऊपर को उछलता है वैसे युद्ध की इच्छा करने वाले राक्षसों की सेना प्रसन्न होकर समुद्र के वेग के समान वेग को धारण किया था। जैसे वायु के जोर से गुहा में से गंभीर शब्द होता है वैसे बानर गण राक्षसों की सेना को देखकर गंभीर नाद करने लगे। उसी गर्जना के साथ राक्षसों की सेना में तइयार हाथी घोड़ा व रथ आदि के पहियों की गर्जना भी गंभीर होने लगी। इस प्रकार दोनों दल को एक भाव होने पर राक्षस व बानरों का घोर संग्राम आरंभ हुआ। जैसे देवता दैत्यों का संग्राम पहिले हुआ था वैसेही इन राक्षस व बानरों का संग्राम होने लगा। वे राक्षस गदा शूल परशु शक्ति तोमर खड्ग आदि अस्त्रों कों चलाते और अपने पराक्रम की बड़ाई करते बानरों पर प्रहार करने लगे। इधर बानर भी वृक्ष व पर्वत तथा नख दन्त आदि से राक्षसों को पीड़ित करने लगे और महाराज सुग्रीव का जय हो यह शब्द बार बार कहा करते थे। इसके बाद प्रतापी व बलवान राक्षसों ने परिघ शूल मुद्गर आदि से बानरों को मारने लगे। और बानर भी क्रोधित होकर अपने भुजा से राक्षसों को पटक पटक कर मारने लगे। इन राक्षस व बानरों के अद्भुत युद्ध से और रक्त मांस के पतन से पृथिवी पर कीचड़ होगया॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे द्विचत्वारिंश सर्गः॥ ४२॥

इस प्रकार घोर पराक्रम बानरों का देखकर राक्षसगण बड़े रोष व क्रोध से बानरों पर अस्त्र प्रहार करने लगे और घोड़ों से और आग की ज्वाला के समान हाथियों से, सूर्य के समान रथ से और दृढ़ कवच से बानरों को मारने का उद्योग करने लगे और भयंकर कर्म करने वाले राक्षसों ने रावण के विजय की इच्छा से युद्ध करते व इस प्रकार गर्जना करते कि जिनकी गर्जना के शब्द से दशो दिशायें पूर्ण होगयी।

इधर बानरों की बड़ी भारी सेना जय की इच्छा करने वाली राक्षसों के ऊपर धावा करने लगी। इसके बाद राक्षस बानरों पर बानर राक्षसों पर धावा करके द्वन्द्व युद्ध करने लगे। राक्षसों की सेना के सहित रण में उपस्थित मेघनाद के साथ वालि के पुत्र अंगदजी अपनी बानरी से युद्ध करते थे। जैसे शिवजी का अन्धक के साथ युद्ध हुआ था वैसे मेघनाद अंगद के युद्ध की शोभा होने लगी। संग्राम में जैसे संपाति वज्र जंघ नाम राक्षस का दुर्धर्ष युद्ध हुआ था, वैसे प्रहस्त के साथ हनुमान का युद्ध होने लगा। राक्षस राज रावण के भाई विभीषण संग्राम में तीक्ष्ण वेग से शत्रुघ्न के साथ लड़ने लगे। तपन नाम राक्षस व महा बली निकुंभ नाम राक्षस के साथ नील युद्ध करने लगे। बानरों के राजा सुग्रीव प्रघस नाम राक्षस के साथ युद्ध करने लगे। लक्ष्मणजी विरूपाक्ष पर अस्त्र छोड़ने लगे। अग्नि केतु व दुर्धर्ष रश्मिकेतु मित्रघ्न व यज्ञकोप ये चार राक्षस सेना के सहित रामचन्द्रजी से लड़ने लगे। मैन्द व द्विविद वज्र मुष्टि तथा अशनिप्रभा नाम के राक्षस से लड़ते थे तपन नाम का बलवान राक्षस अपनी सेना सहित नल नाम बानर से युद्ध करने लगा। विद्युन्माली के साथ सुषेण का युद्ध हुआ और जितने बानरों के प्रधान योधा थे व सब राक्षसों मे प्रधान भट से घना घोर युद्ध करने लगे। अपने अपने विजय की इच्छा करने वाले राक्षस व बानर तुमुल युद्ध को करने लगे। जैसे हरे काष्ठ में धार लगने से जल की धारा बहती है वैसेही राक्षस व बानरों के शरीर से रुधिर की धारा बहने लगी। शत्रुओं की सेनाओं को बिदारण करने वाले मेघनाद क्रोध करके अंगदजी पर इस प्रकार बाण प्रहार करने लगा जैसे इन्द्र दैत्यों पर बज्र प्रहार करते हैं। वेग युक्त बानरों में बलवान बालि के पुत्र अङ्गदजी भी मेघनाद के कांचन मय रथ घोड़ा व सारथी को प्रहार किये। रथ पर बैठा जंबुमाली अपनी महाशक्ति से समर में क्रोधित होकर हनुमानजी के स्तन में बाण से घाव किया। हनुमान भी अपने पराक्रम से रथ सहित उस राक्षस को ऐसा सम्मर्दन किया कि उस राक्षस

का प्राण निकल गया। गजना करता हुआ प्रतपन नाम का राक्षस अस्त्रो को छोड़ता हुआ नल की ओर दौड़ा। महाबली नल अपनी गदा से उस राक्षस की आंख को शीघ्र फोड़दिया। आंख फूटने पर भी वह राक्षस बाण की बर्षा करता हुआ बानरों के काल के समान पहुंचा ऐसे भय देने वाले राक्षस को महा पराक्रमी बानरों के राजा सुग्रीव सप्तपर्ण (छतून) के वृक्ष से उसको मारकर पीड़ित किये। विरूप नाम राक्षस को लक्ष्मणजी एक बांण से मूर्छित किये। अग्निकेतु रश्मि केतु मित्रघ्न व यज्ञकोप इन चार राक्षसों को श्रीरामचन्द्रजी अपने बाण से उनके शिर को काट लिये। मैन्द ने अपने शत्रु राक्षसों को रण में बज्र के समान अपनी मुष्टि से रथ सहित मार डाले। अधिक बाण की बर्षा करने वाले निकुम्भ को नील ने बिदारण किया। फिर भी वह राक्षस उठकर अपने बाण से समर में नील को प्रहार करने लगा। उसी राक्षस के रथ की पहिया से बिष्णु के समान नील निकुम्भ के शिर को सारथी के सहित काट लिया। बज्र के समान कठोर मुष्टि से मैन्द ने राक्षसों को निहत करने लगे। वृक्षों से युद्ध करने वाले बानरों में श्रेष्ठ द्विविद बानर को बज्र के समान बाणों से पीड़ित किया। उसके बाण से पीड़ित द्विविद क्रोध से मूर्छित होकर साल वृक्ष को उखाड़ कर रथ व सारथी सहित राक्षसका प्राण नाश किया। रथ पर स्थित बिद्युन्माली कांचन मय अपने बाणोंसे सुषेण को ताड़ित करके बार बार गर्जना करने लगा। बिद्युन्माली को रथ परास्थित और बाण की बर्षा करते देखकर बानरों में श्रेष्ट सुषेणपर्वतके शिखरसे उसके रथकोरथि कर दिया। रथको नष्ट हो जाने पर बिद्युन्माली गदाको लेकर रथसे भूमि पर उतर पड़ा। और सुषेण के ऊपर गदा को छोड़ने लगा। राक्षस के गदा के आघात से पीड़ित सुषेण एक बड़ी भारी शिलाको लेकर उस राक्षसको घायल किया। शिला के आघात को सहन करके बिद्युन्माली अपनी गदा से एक सुषेण के हृदय में मरा। बिद्युन्माली के घोर गदा प्रहार से पीड़ित बानरों में श्रेष्ठ सुषेण अपनी पूर्व की शिलाको उठाकर उस राक्षस के हृदय में मारे।

उस शिला के घाव को लगतेही वह राक्षस चिल्लाकर पृथ्वी में गिर पड़ा और मरगया । जैसे स्वर्ग में देवता व दैत्यों का महा युद्ध हुआ था वैसे राक्षस व बानरों का महा युद्ध होने लगा । इस राम रावण के युद्ध में गदा शक्ति तोमर शूल मुद्गर बाण आदि से निहत होकर संग्राम के घोड़ा व हाथी व रथ तथा मतवाले राक्षस व बानर मरकर रुधिर से व मांस से वहांकी भूमि पर कीचड़ कर दिया । उस रक्त व मांस को सियार व गिद्ध आदि जन्तु प्रसन्नता से भोजन करने लगे । रक्त के बहने से मूर्छित राक्षस बानरों से पीड़ित होकर रात्रि काल की उपेक्षा करने लगे, क्योंकि रात्रि काल में राक्षसों का बल अधिक हो जाता है ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे त्रिचत्वारिंश सर्गः ॥४३॥

युद्ध करते हुए बानर व राक्षसों के समय में सूर्य अस्त को प्राप्त हुए प्राण को अपहरण करने वाली रात्रि का उदय हुआ । परस्पर में वैर को बांधे युद्ध की इच्छा करने वाले बानर व राक्षस निशा युद्ध में भी संप्रवृत होगये । जैसे पौष शुक्ल पूर्णिमासी को रामचन्द्रजी की सेना सुवेल पर्वत से लंकापुरी को आवृत किया वह युद्ध माघकृष्ण प्रतिपदासे आरंभ हुवा इसलिये दुष्पार अन्धकारके आरंभमें रात्रि युद्ध प्रवृत्त हुआ । निशा युद्धमें बानरोंके मुख से निकलता था कि यह राक्षस है और राक्षसों से यह ध्वनि निकलती थी कि यह बानर है इस प्रकार के शब्द से तुमुल युद्ध होने लगा । जैसे पर्वत के मध्य में ओषधी अग्नि के समान जलती व प्रकाशित होता है वैसे कांचन के अलंकार को धारण किये काले राक्षस रात्रि काल में दिखाई पड़ते थे । उस घोर अन्धकार में क्रोध से मूर्छित राक्षस बानरों को भक्षण करने के लिये बड़े वेग से बानरों के ऊपर गिरते थे । बलवान बानर राक्षसी सेना को क्षुभित करते हुए हाथियों को पताका व ध्वजा वालों को रथि आदि राक्षसों को खींच खींचकर क्रोधपूर्वक दांतो से काट काट कर प्राण को नाश करने लगे । रामचन्द्र व लक्ष्मणजी इंद्र के वज्र के समान तीखे बाणों से

राक्षसों को देखकर और जो मायावी माया से लड़ते थे उन्हे बिना देखे भी मारने लगे। इसप्रकार क घोर संग्राम रुधिरकी नदी बह चली इसके बादभेरी मृदंग व शंखतथा रथका शब्द एकमेंमिलकर अद्भुत उपमाको धारणकिय और ठहनाते हुए घोड़ोंतथा राक्षसों व बानरोंके शब्दसे महादारुण शब्द सुनाई देने लगा। शक्ति शूलपरशु खड्गभुदगर गदा आदिअस्त्रोंको धारण करने वाले पर्वत के समान काम रूपी राक्षस मुख्य बानरों के हाथ से मरकर रुधिर की नदी में बहते हुए पृथिवी मण्डल को भूषित कर दिया और उनकी लोथ तथा उनके अस्त्र शस्त्र पृथिवी पर पुष्प के समान शोभित होने लगा। जैसे संहार रात्रि समस्त चराचर प्राणियों को पीड़ा देती है वैसेही वह युद्धकी रात्रि बानर व राक्षसों को पीडित करने में काल रात्रि के बराबर होगई। इसके बाद उस घोर अन्धकार में महाबली राक्षस बाणों की वृष्टि करते हुए रामचन्द्रजी पर आक्रान्त होगये जैसे दीपक के प्रकाश पर पतंग आक्रान्त होजाते हैं। उन राक्षसों के गर्जना के शब्द समुद्र के गर्जने के समान था। उन छओ प्रधान राक्षसों को आगकी ज्वाला के समान बाणों से रामचन्द्रजी क्षण भरमें नाश कर दिये। महापार्श्व, महोदर, वज्रदंष्ट्र, महाकाप, शुक व सारणये छओ रामजी के बाणसे घायल होकर रणभूमि से बाहर जाकर प्राणको छोड़ दिया। क्षण भरके बाद वह मायावी छओ राक्षसों का युद्ध समाप्त हुआ अर्थात् काल रात्रिकी समाप्ती हुई। दिशायें प्रसन्न होगईं। महारथी घायल होकर जिधर तिधर अधीर हो अपनी सहायता व रक्षा की इच्छा करने लगे। इसके अतिरिक्त और जो अवशेष राक्षस बचे थे वे सब रामचन्द्रजी के सन्मुख आये जैसे अग्निकी ज्वाला के सम्मुख पतंग गिरते हैं और रामचन्द्रजी के ऊपर चारो ओर से बाणों की बर्षा करने लगे, उस बाण वृष्टि से वह रात्रि इस प्रकार की शोभा को धारण किया जैसे शरत् कालकी अंधियारी रात तारागण से शोभित होती है। और राक्षसों की गर्जना से तथा मारूबाजा के शब्द से फिर भी वह रात्रि पहिले समान घोर होगई।

उस कठोर शब्द से प्रवृद्ध त्रिकूट पर्वत की कन्दरा की प्रतिध्वनि से वह शब्द और भी भयानक होजाता था। अन्धकार के समान पर्वताकार शरीर वाले लंगूर राक्षसों को पकड़ पकड़ कर खाने लगे। शत्रुको नाश करने वाले अंगदजी मेघनाद के रथ व सारथी को विरथ करदिया, इसके बाद मेघनाद रथ सारथी के नष्ट होने पर रथको छोडकर अन्तर्धान हो गया। इस प्रकार के कठोर युद्ध को करने में समर्थ बालि के पुत्र अंगदजी के अद्भुत कर्म को देखकर देवता लोग उनकी स्तुति करने लगे और रामचन्द्र तथा लक्ष्मणजी मनमें हर्षित हुए। रणमें इन्द्रजित का पराक्रम सबको विख्यात है तौभी अंगदजी की बड़ाई सुग्रीव आदि बानर करने लगे व शत्रुको पराजित देखकर मनमें हर्षित हुए। इधर मेघनाद अंगद के कर्म से लज्जित होकर महा क्रोधको धारण किया और अन्तर्धान होकर रणसे कर्शित पाप करने में उत्सुक ब्रह्माके बरदान के प्रभाव से प्रबल बीर रावणि बाणको गुप्त भावसे छोड़ने लगा नागके समान बिशाल बल के तुल्य कठोर बाणों को छोड़ने लगा। और रामचन्द्र व लक्ष्मणजी के संपूर्ण शरीर में बाणको भेदने लगा। कूट युद्ध करने वाला निशाचर आदर्शन होकर रामचन्द्र व लक्ष्मणजी को नागफाश से बांध लिया। विषधर सर्प के समान क्रोधित बाणको छोड़ने वाले लक्ष्मणजी के सहित रामचन्द्रजी और बानर नागफांस में बंधा उन दोनों राजपुत्रों को देखकर चिन्ता करने लगे। जब मेघनाद सन्मुख होकर लड़ता तो रामचन्द्रजी को नागफांस में नहीं बांध सकता क्योंकि रामचन्द्रजी के पलक भांजते भरमें जगत् का पालन व नाश हो सकता है तौभी ब्रह्मा के बरदान को सत्य करने के लिये रामचन्द्रजी ने नागफांस को अंगीकार किया है! इसलिये दुरात्मा रावण का पुत्र माया से आकाश में जाकर लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी को नागफांस में बांधा और ये लोग बंध गये॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे चतुश्चत्वारिंशसर्गः। ४४॥

उस राक्षस मेघनाद की गतिको जानने के लिये सुषेण अंगद

नील शरभ द्विविद हनुमान आदि दश बानरों को आज्ञा दिये कि आपलोग आकाश में जाकर उसको खोजिये कि वह राक्षस कहां से बाणको छोड़ता है, श्री रामचन्द्रजी की इस प्रकार की आज्ञाको शिरोधार्य करके वे बलवान बानर हाथ में पर्वत व वृक्षों को लेकर आकाश में जाकर दशो दिशाओं में उस राक्षस को ढूढने लगे। मेघनाद उन बेगयुक्त बलवान बानरों को अस्त्र को जानने वाला राक्षस अपने तीखे बाणों से निवारण किया। तौ भी वे पराक्रमी बानर बाणसे क्षत होते हुए भी मेघ से छिपे सूर्य के समान अन्धकार में छिपे उस राक्षस को देखा रामचन्द्रजी के सकल शरीर में बाण के आघात होगये, इन्द्र जित् के क्रोध से इतने बाण छूटे कि अंगुल भर स्थान विद्ध होने से बाकी न रहा। और उनलोगों के शरीर से रुधिर की धारा बहने लगी। जैसे पलाश पुष्प की शोभा होती है वैसे रामचन्द्रजी के शरीर की शोभा होने लगी। इसके बाद लालनेत्र किये काली घटा के समान रावणि अन्तर्धान होकर रामचन्द्र जी से बोला. कि एकान्तमें लक्ष्य कर के बाण को छोड़ते हुये हम को इन्द्रभी नहीं देख सकते आप दोंनों की क्या गणना है। उसके बचन को सुनकर रामचन्द्रजी बोले कि हम दोनों बाणके सामने प्राप्त होने से हमारे बाण तुमको यमलोक में लेजावेंगे। इस प्रकार कहकर रामचन्द्रजी अपने बाणों को रावणि के ऊपर छोड़ने लगे और हर्षित होकर गर्जना करने लगे और श्याम वर्ण कमल नयन रामचन्द्रजी अनेक बाणों को एक साथ युद्ध में वर्षा करने लगे और बार बार गर्जना करने लगे। नाग फांशमें बंधे हुए रामचन्द्र व लक्ष्मणजी के सामने से क्षण भरमें वह रावणि अन्तरिक्ष को चलागया। और अपने अमोघ बाणों से राम लक्ष्मण जी के मर्मको बाणयुक्त करदिया, जैसे रस्सी से छूटकर इन्द्रकी ध्वजा कांपने लगती है वैसेही रावणी बाण से रामचन्द्र व लक्ष्मणजी कांपने लगे। मर्मभेद न करने से कर्शित श्रीराम व लक्ष्मण पृथिवी के स्वामी होने पर भी उसके बाणसे पीडित होकर पृथिवी पर गिर पड़े। बाण से

विद्ध सर्वाङ्ग से पीडित रामचन्द्रजी रुधिर की धारा को बहाते लक्ष्मण के सहित बाण की शय्या पर शयन किये और उनके अंग से इस प्रकार रक्त बहने लगा कि जैसे पर्वत के झरने से जलकी धारा गिरतीहै। इन्द्रको जीतने वाले मेघनाद के बाण से पहिले रामचन्द्रजी मूर्छित होकर बाणकी शय्यापर शयन किये। पीछे वायु के समान विस्तीर्ण धूलिके समान बाणकी बर्षा करते हुए बड़े मुख वाले गणको लक्ष्मणजी को त्रासित किया, रणको सन्तुष्ट करने वाले कमल नयन रामचन्द्रजी बाणके आघात से पीडित पृथिवी-पर शयन किये लक्ष्मणजी को देखकर अपने व्यथा को त्याग करके लक्ष्मणजी के वास्ते चिंता व बिलाप करने लगे। रामचन्द्रजी के नयन से आंसुको बहते हुए देखकर बानरगण भी परम विस्मय को पहुंचे। नाग फांसमें बंधे बाणसे व्यथित बाण शय्यापर शयन किये रामचन्द्र व लक्ष्मणजी को देखकर सुग्रीव अंगद आदि बानर उनके चारो ओर बैठकर परम बिषाद को पहुंचे ॥

इति वाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डे पंचचत्वारिंशसर्गः ॥ ४५ ॥

इसके बाद वे बानर आकाश व पृथिवी को देखते हुए बाण से व्याप्त राम लक्ष्मणजी को देखने लगे। देवेन्द्र के समान बाणकी बर्षा करते हुए कठोर राक्षसों के कर्मको देखकर सुग्रीव के सहित विभीषण उसी स्थान पर आये और नील द्विविद मैन्द सुषेण कुमुद अङ्गद और हनुमान के साथ शीघ्र चिन्ता करने लगे। चेष्टा से रहित मन्द श्वास लेते हुए रुधिर से लिप्त इन दोनों बीरोंको बण पर शयन किये रामचन्द्र व लक्ष्मणजी को देखकर आंसू को बहाते बानरों के सहित बिभीषण पीड़ा से व्याकुल होगये। और वे बानर आकाश मार्ग से दिशाओं को देखने लगे कि वहां मायासे अन्तरिक्ष में पहुंचा राक्षस को चारो ओर देखने लगे कि वह रावणि जानने वाला राक्षस कहां है। परन्तु माया से गुप्त रावणि को वे बानर नहीं देख सकते थे। किन्तु माया से छल रावणि को जानने में पण्डित रावण के पुत्रको

विभीषण ने अपनी माया से देखा। मेघनाद ब्रह्मा के वरदान से प्रबल होकर रामचन्द्र व लक्ष्मणजी को बाणासन पर पड़े परम प्रसन्न होकर सब राक्षसों से बोला कि दूषण व खर को मारने वाले रामलक्ष्मण हमारे बाण से व्यथित होकर पृथिवी पर शयन किये हैं। हमारे बाण बन्धन से देवता दैत्य गंधर्व आदि नहीं छुट सकते हैं, इन दोनों राजकुमारों की क्या गणना है जिस राम के कर्म से हमारे पिता सदा शोकित रहते हैं वह रामचन्द्र व्याकुलता से रात्रिको व्यतीत करते हैं जिस रामचन्द्र ने वर्षाकाल की नदी के समान समस्त लंकापुरी को आकुल कर दिया है वह रामचन्द्र को शान्त होनेसे लंकापुरी का समस्त उपद्रव शान्त होगया। जैसे शरत् कालमें बद्दलोंका उद्योग निष्फल होता है। वैसे रामचन्द्र व लक्ष्मण तथा बानरों का उद्योग निष्फल हो गया है। इस प्रकार राक्षसों से कहकर आनन्द पूर्वक उनको देखने लगा और कहने लगा कि नील को नव बाण तथा मैन्द व द्विविद को भी उतना ही बाण और बानरों को तीन तीन बाण मारे। जांबवान के हृदय में कई एक महाबाण को मारे और हनुमान को दश बाण मारे। अमित पराक्रमी गवाक्ष व शरभ को दोदो बाण मारकर संग्राममें व्यथित किये। इस प्रकार के बाणों से पीड़ित करके वह रावणि गर्जने लगा। उन बानरों को बाण से घायल करके महाबाहु मेघनाद हँसकर राक्षसों से बोला, हेराक्षसों! घोर जाल में बँधे संग्राम के मध्य में इन दोनों भाइयों को बानरों के सहित देखो। कुट युद्ध करने वाले राक्षसों से इस प्रकार कहकर शान्त होगया, उसके कर्म से हर्षित राक्षस विस्मित हो गये और बद्दल के समान गर्जना करके राम को मरा हुआ जानकर वे राक्षस रावणीकी पूजा करने लगे। समरको जीतने वाले इन्द्रजीत हर्षसे युक्त होकर समस्त राक्षसोंके सहित लंकापुरीमें प्रवेश किया। बाणसे पीड़ित रामलक्ष्मणजी को देखकर सुग्रीव जी भय से व्याकुल होगये। सुग्रीव को व्याकुल देखकर विभीषण बोले कि आपको त्रास नहीं करना चाहिये, क्योंकि इस प्रकार के भयंकर युद्ध में नैष्ठिक विजय को नहीं चाहना

चाहिये। हेवीर! इस संग्राम में जो कुछ हमलोगों के भाग्य होगा वही होगा। हेमन्त्रिन्! अनाथ मुझको और इन बानरोंको धैर्य दीजिये। क्योंकि आप तो अपने देशके स्वतन्त्र राजा हैं हमतो अनाथ व अशरण हैं, तौ भी हेसुग्रीवजी! यह सत्य जानिये कि सत्यधर्मको पालन करने वाले रामचन्द्रजी की मृत्यु का भय इन राक्षसों के हाथ से नहीं है। इस प्रकार विभीषण सुग्रीवजी से कहकर हाथ में जल लेकर सुग्रीवजी के आंख को धोया। उनके आंख को धोकर विभीषण उनसे सान्त्वना पूर्वक बोले कि हेसुग्रीवजी! आपको व्याकुल होनेका यह समय नहीं है, इसलिये अब आप अपनी विकलता को छोड़कर रामचन्द्रजी के कार्य सिद्धि के लिये सेनाओं की चिन्ता करो और जब तक राम चन्द्रजी की मूर्छा नहीं व्यतीत होती है तब तक उनकी रक्षा करो, जब लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी को चेतना होजायेगी तब हम लोगों का यह भय नष्ट होजायगा। क्योंकि इनको राज्यलक्ष्मी नहीं त्याग करेगी इसलिये अपने चित्त को धैर्य युक्त करो और सभाओं को समाहित करो। इस प्रकार विभीषण को धैर्य देने से सुग्रीव भय को त्याग करके बानरों को समाहित करने की आज्ञा दिये। इधर विभीषण सुग्रीव को समझाकर बानरों की सेना को उत्साहित करने का उद्योग करने लगे। इधर माया से सबल मेघनाद अपनी राक्षसी सेनाओं के सहित लंका-पुरी में प्रवेश करके रावण के समीप गया। वहां जाकर अपने पिता रावण को प्रणाम किया और रामलक्ष्मण की शक्ति का समाचार कह सुनाया। रामलक्ष्मण के बाण शय्या के शयन को देखकर रावण अपने आसन से उठकर राक्षसों के मध्य में मेघनाद को गले से लगाया और उसके शिर को सूंघकर युद्ध के वृत्तान्त को पूंछने लगा, उसके पूंछने पर मेघनाद यथा क्रमसे कहने लगा। हर्ष युक्त महारथी मेघनाद के बचन को सुनकर रामचन्द्रजी से उत्पन्न ज्वर का त्याग करके आनन्द के बचन से पुत्र की बड़ाई करने लगे॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे षट्चत्वारिंश सर्गः॥४६॥

मेघनाद को युद्ध समाप्त करके लंकापुरी में जाने के बाद बानरों में श्रेष्ठ बानर रामचन्द्रजी की रक्षा करने लगे। इसके अतिरिक्त हनुमान अंगद नील सुषेण कुमुद नल गज गवाक्ष पनस जांबवान ऋषभ सुन्द रंभ शतबलि आदि बानर वृक्षों को लेकर उस राक्षस को चारो ओर खोजने लगे। इधर रावण इन्द्रजित अपने पुत्र की प्रशंसा करके बिदा किया और सीताजी की रक्षा करने वाली त्रिजटा नाम की राक्षसी को बुलाकर प्रसन्नता पूर्वक राक्षसों के राजा रावण उससे बोला कि मेघनाद ने रण में रामलक्ष्मण को मारा है, इसलिये सीता को पुष्पक पर बैठाकर उन दोनों राजकुमारों को दिखा देओ। जिस रामचन्द्र के बल से वह सीता हमको नहीं चाहती थी, सो वह रामचन्द्र लक्ष्मण के सहित आज समर में मरा पड़ा है। जब मैथिली रामचन्द्रजी के मरण को देखेगी तब उनसे निराश होकर मुझे अवश्य अपना पति बनावेगी और हमारे भूषण वस्त्र को धारण करेगी। राक्षस राज रावण के बचन को सुनकर राक्षसी ने स्वीकार पूर्वक पुष्पक के समीप गई और रावण की आज्ञा से पुष्पक को लेकर अशोक बनिका में बैठी जानकी को लेने के लिये वहां पहुंची। प्रमदा वन में पुष्पक बिमान को लेजाकर पति के शोक व चिन्ता में व्याकुल सीताजी को उसी विमान पर बैठाकर ध्वजा व पताका से युक्त लंकापुरी के समर भूमि में लेगई और वहां राक्षसों में बड़ा आनन्द मचा था कि श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मण को इन्द्रजित ने समर में मारा है। बिमान से गई सीता त्रिजटा के साथ राक्षसों की सेना को मरी हुई देखकर मनमें प्रसन्न हुई। इसके बाद बाण की शय्या पर शयन किये चेतना से रहित व बाण से पीड़ित पुरुष श्रेष्ठ रामचन्द्र व लक्ष्मणजी को देखकर दुःख से पीड़ित सीता इस रूप में राम लक्ष्मण को देखतेही विलाप करने लगी। आंसू धारा को बहाती शोक से पीड़ित लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी के मरण की शंका से दुःखी सीताजी रोती हुई इस प्रकार बोली ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥४७॥

पति को तथा लक्ष्मण को निहत देखकर शोक से कर्शित सीता विलाप करने लगी । कि सामुद्रिक के लक्षण को जानने वाले पण्डितों जन्म भरके लिये मुझे सधवा का वरदान दिया है तो यदि रामचन्द्रजी आज समर में शरीर को त्याग करेंगे तो उन लोगों का कहना असत्य हो जायगा । अश्वमेध आदि यज्ञों को करने वाले ब्राह्मणों ने जो रामचन्द्रजी की दीर्घायु का अशीर्वाद दिया है वह उनका बचन असत्य होजायगा । वीर राजाओं की स्त्रियों से पूजित जिन ब्राह्मणों ने सुमंगली पाठ किया है वह भी उन लोगों का कहना असत्य हो जायगा और ज्योतिषियों ने जो कुछ लक्षण और रामचन्द्रजी की दीर्घायु को बताया है वह उन ज्योतिषियों का कहना आज रामचन्द्रजी को समर में निहत होंने से असत्य हो जायगा । जिन लक्षणों से युक्त होकर राजमहिषी पतियों के साथ बैठकर अभिषेक में अभिषिक्त होती हैं सो वह कमल का लक्षण हमारे पैर में आजतक भी वर्तमान है । जिन लक्षणों से प्राप्त होकर स्त्रियां विधवापन को पाती हैं वह लक्षण हमारे में एकभी वर्तमान नहीं है । अभी तो केश भौंह रोमरहित जंघा सघन दांत शंख के समान नयन हाथ पैर जंघा घुटना नख अंगुली स्तन और हृदय वृद्धिको प्राप्त है इस प्रकारके द्वादश लक्षण से युक्त स्त्रियां सदा सौभाग्य के फलको भोगती हैं । ज्योतिषशास्त्र के सिद्धान्त को जानने वाले ब्राह्मणों ने पतिके साथ हमको भी अधिराज्य में अभिषेक किया है इसलिये इन राक्षसों के हाथ से हमारा अनिष्ट नहीं होगा । तौभी जनस्थान में समर्थ राक्षसों को मारकर इस अपार समुद्र को पार करके आप इस दशाको पहुंचे हैं । अथवा समुद्र के समान गंभीर राक्षसों की सेनाको मारकर अब आपने थोड़ी राक्षसों की सेना से इस दशाको भोगते हैं । क्या आजही वारुण आग्नेय ऐन्द्र वायव्य ब्रह्मशिरा आदि अस्त्र रामचन्द्र जी पर प्रयोग हुए हैं । इन्द्र के समान पराक्रमी राक्षस माया से रणमें रामचन्द्रजी को मारा है नहीं तो रामचन्द्रजी के सामने से संसार के

शत्रु कामदेव भी जीते नहीं बच सकते हैं। कालगति से शुभाशुभ फलको भोगने में यह दुःखभार नहीं है कि जिस कालके फलसे रामचन्द्रजी रणभूमि में पड़े हैं। मैं महारथी रामचन्द्र व लक्ष्मणजी तथा अपनी माता मैना की चिन्ता नहीं करती हूं जैसा कि तपस्वीनी अपनी सासु कौशल्याकी चिन्ता करती हूं क्योंकि उनकी जीवन की यही अवधि है कि चौदह बर्ष बनवास के व्रत को समाप्त करके लक्ष्मण व सीता के सहित रामचन्द्रजी को आते हुए देखूंगी। इस प्रकार विलाप व सन्ताप करती हुई सीताजी से त्रिजटा नाम राक्षसी बोली, हे सीते! तुम विषाद मत करो तुम्हारे पतिका पुनर्जीवन होगा। हे देवि! जिस कारण से यह रामलक्ष्मण का जीवन लाभ होगा उस कारण को सुनो। रामचन्द्रजी को निहत होने पर भी कोपसे युक्त योधाओं के मुख नहीं दीख पड़ते हैं और हर्ष देनेवाले मोहकी शान्ति नहीं दीख पड़ती है इससे तुम्हारे पतिका जीवन लाभ अवश्य होगा। हे देवि! इस पुष्पक विमान की प्राप्ति तुमको अवश्य होवेगी रामचन्द्रजी की मूर्छा से व्याकुल सेना इस प्रकार शत्रुके आंगन में घूमती है जैसे नाव चलाने वाले के बिना नौका जलमें घूमती है। हे सीते! तुम हमारे बचन का विश्वास मानो कि श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मण सहित मूर्छा से मुक्त होकर अपने सेना के आगे चलेंगे और थोड़े समय में राक्षसों को मारकर लंकापुरी को अपने अधीन करेंगे। इसलिये तुम शोक युक्त न होओ, हे मैथिली! तुम अपने पतिव्रत धर्मपर आरूढ होने से सदा हमारे हृदय में बास करती हो हम तुमसे असत्य कभी नहीं कह सकती हूं। श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी को देवता व दैत्यों में किसी को ऐसी सामर्थ्य नहीं है जो इनको रणमें जीतने सके। जीवन सूचक रामचन्द्रजी के स्वरूप को देखकर मैं तुमको उनके जीवन लाभ का बरदान देती हूं। हे मैथिली! देखो यह एक बड़ी विचित्र गति है कि जो रामचन्द्रजी बाणकी व्यथा से मूर्छा को प्राप्त हैं तौभी विजय लक्ष्मी इनकी सेवा करती हैं। इसलिये हे जानकी! दुःख शोक व मोहको छोड़

कर श्रीरामचन्द्रजी के वास्ते धैर्यको धारण करो उनका मरण इस युद्ध में नहीं होगा। इस प्रकर त्रिजटा के बचन को सुनकर सीताजी उसके बचन को हाथ जोड़कर अंगीकार किया, उनके अंगीकार करने पर बेगवाले पुष्पक को लौटाकर त्रिजटा सीताके सहित लंकामें प्रवेश किया और पुष्पक से उतरकर राक्षसियों के साथ फिर भी प्रमदा बनमें चली गईं और रामचन्द्रजी की दशाको देखकर विषाद युक्त रोदन करने लगीं।

इति वाल्मीकिये रामायणेयुद्धकाण्डे अष्टचत्वारिंशसर्गः ॥ ४८ ॥

घोर बाणके जालमें बँधे रामचन्द्र व लक्ष्मणजी इस प्रकार मन्द श्वांस को लेने लगे कि जैसे बाण से व्यथित गज पृथिवी पर गिर कर श्वांस लेता है। सुग्रीव आदि बानर उनदोनों राजकुमारों को चारो ओर से घेरकर आंसूको बहाते खड़े थे, इसी के अनन्तर में पराक्रमी वीर्यवान दृढ़ शरीर वाले महा बलवान श्रीरामचन्द्रजी नागपाश में बँधे थे तौभी मूर्छाको त्याग करके चेतना को लाभ किये। जब रामचन्द्रजी जागृत होकर रक्त बहते बाणके आघात से पीड़ित लक्ष्मणजी को देखे तो शोक के मारे महा विलाप को करने लगे। हमको सीताजी के जीवन से क्या होगा जो रणभूमि में पड़े लक्ष्मण जी को आँखसे देखते हैं। सीता के समान स्त्रियां खोजने से संसार में मिल सकती हैं किन्तु सब जगह सहायता देने वाले लक्ष्मण के समान भाई खोजने से भी नहीं प्राप्त हो सकेंगे। यदि लक्ष्मणजी का जीवन नाश हुआ तो हे बानरों तुम लोगों के सामने हम भी अपना प्राण छोड़ देवेंगे। यदि हम जीते हुए अयोध्यापुरीमें जावेंगे तो कौशल्या व केकयी तथा पुत्रको देखने की इच्छा करने वाली सुमित्राजी से क्या कहेंगे। यदि हम लक्ष्मण से रहित होकर अवधपुरी को जावैंगे तो पुत्र के शोकमें विलाप करती हुई उन माताओंको किस प्रकार सन्तोष देवेंगे और यशस्वी भरत तथा शत्रुघ्न से क्या कहेंगे कि वह तो हमारे संग बनमें आये और हम उनको गँवाकर अकेले आये हैं। माता सुमित्रा के उपालंभको नहीं सहन कर सकंगा वरन् शरीर को यहीं

त्याग करूंगा। हमारे इस युद्धरूप कर्मको धिक्कार है कि जो हमारे कार्य के लिये बाण से व्यथित होकर लक्ष्मणजी आज बाणकी शय्या पर मृतक के समान शयन किये हैं। इस प्रकार बानरों से विलाप करके अब लक्ष्मणजी से रामचन्द्रजी बोले, हे लक्ष्मणजी! तुमतो हमारे दुःख को देखकर नित्यप्रति हमको धैर्य देते थे सो आज मुझ दुःखी से क्यों नहीं वार्तालाप करते हो। हे बीर! जो तुमने अपने बाणों से अनेक राक्षसों के प्राणको हरण करके पृथिवी पर शयन कराया वह तुम आज राक्षसों से निहत होकर पृथिवी पर पड़े हो। जैसे अस्तकाल में सूर्य का मुख लाल होजाता है वैसे तुम भी अनेक चमकीले बाणों को अपने अंगमें लपेट कर रुधिर से लिप्त होकर बाणों की शय्यापर शयन करते हो। जिस प्रकार हमारे बन चलने के समय आप हमारे संग आये वैसेही आपके संग हम भी यमलोक को चलेंगे। आपने हमारा कभी कुछ विप्रिय किया है इसका स्मरण हमको नहीं होता है। जैसे सहस्त्रबाहु अपने वेगसे एक साथ पांच सौ बाणको छोड़ते थे सो आप दो भुजा से उनसे भी अधिक बाण को छोड़ते थे। जे आप अपने पराक्रम से इन्द्र के भी अस्त्र को अपने अस्त्र से वारण करते थे सो आज पृथिवी पर शय्या लगाये हो और भी विषाद एक यह है कि विभीषण को राजा न किया यह हमारा मिथ्या बचन हमको जलाता है। इस मुहूर्त में सुग्रीव अपने देशको जा सकते हैं, सेनापति अंगद सुग्रीव नील नल आदि बानर समुद्र को उतर कर अपने नगर को जावें, जो अंगदजी रणमें शत्रुको पराजित किया उनसे हम प्रसन्न हैं, और मैन्द द्विविद केसरी आदि युद्धमें जो घोर पराक्रम किया है, गवय गवाक्ष शरभ गज आदिने अपने जीवन को त्याग करने की इच्छा से जो कार्य किया है वह कार्य हमको अत्यन्त सन्तोष दिया है और हमारे प्रिय वयस्य सुग्रीव धर्म के भयसे जो कार्य किया है वह देवताओंको भी दुर्लभ है, अब आप सब बानर हमारी आज्ञा से अपने इष्ट स्थान को जाइये। इस प्रकार के बचन रामचन्द्रजी के मुखसे सुन

कर वे सब वानर विलाप व रोदन करने लगे । इसके बाद विभीषण ने सब सेना दलको स्थान पर स्थापित करके हाथमें गदा लिये जहां रामचन्द्रजी बैठे थे वहां आये। काली शरीर से युक्त विभीषण को आते देखकर वानरों ने उन्हे रावणि जानकर जिधर तिधर भागचले ॥

इति वाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डेएकोन पंचाशः सर्गः ॥ ४६ ॥

इसके बाद महा तेजस्वी व पराक्रमी वानरों के राजा सुग्रीव बोले, कि यह सेना व्यथित होकर क्यों भागती है सुग्रीव के बचन को सुनकर बालि के पुत्र अंगदजी बोले, कि श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मण तथा आपको न देखकर यह वानरी सेना व्यथित होगई है, बाण की जाल से बँधे दशरथ के पुत्र रामचन्द्र व लक्ष्मणजी को बाण से पीड़ित देखकर भय से भीत होकर भागते हैं। इसके अतिरिक्त और कोई कारण इसमें हम नहीं देखते हैं। यह वानरी सेना त्रास से पीड़ित होकर इधर उधर भागती है। इस सेना में स्थित बलवान वानर जो कभी भी रण से पीछे हटने वाले नहीं हैं उन्हे इन वानरों के संग भागने में लज्जा होती है। इसके बाद हाथ में गदा लेकर वीर विभीषण अपनी जय-ध्वनि से सुग्रीव व रामचन्द्रजी की संवर्धना करने लगे। वानरोंको भय देने वाले विभीषण को देखकर सुग्रीवजी जांबवान से बोले, कि यह विभीषण आये हैं इन्हीं को देखकर मेघनाद की शंका भय से यह वानरी सेना भागती है। आप जाकर भागती हुई वानरी सेनाको समाधान करिये। इस प्रकार सुग्रीवजी के बचन को सुनकर जांबवान वानरोंको इकट्ठा किया। वे वानर जाम्बवानके बचनको सुनकर और विभीषणको देखकर वे सब सैनिक वानर भय को त्याग करके सब लौट आये। इधर बाण से व्यथित लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी को देखकर अत्यन्त दुःखित होगये। और जलसे हाथको भिगोकर उन दोनो राजकुमारों के आंख को धोकर शोक से व्याकुल होते हुए रोदन व विलाप करने लगे। कि रण में पंडित अत्यन्त बलवान श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण के सहित राक्षसों के कुट युद्ध से आज इस दशा को प्राप्त हैं। बाण से यह लोग विद्ध हैं रुधिर इनके अंगसे

देह को नाश के लिये पृथिवी पर पड़े हैं। राज्य व मनोरथ से नष्ट होकर हमने जीवे हुए भी मृतक के समान होगये हैं। और दुरात्मा रावण आज सीता को न देने की प्रतिज्ञा को पूरा किया। इस प्रकार बिलाप करते हुए विभीषणको बानरों के राजा सुग्रीव उनको आलिंगन करके इस प्रकार बोले—हेधर्म को जानने वाले विभीष ! तुम इस लंका-पुरी के राजा होओगे, तुम्हारा मनोरथ सिद्ध होगा परन्तु रावण का मनोरथ सिद्ध नहीं होगा। यह रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी का मरण नहीं होगा केवल ब्रह्माजी के बरदान को सफल करने के लिये इन लोगों ने रावणि को स्वीकार किये हैं जिससे इनको केवल मूर्छा मात्र है। मूर्छा से निवृत्त होकर रण में परिवार सहित रावण को नाश करेंगे। इस प्रकार अनेक बातों से विभीषण को धैर्य देकर अपने श्वसुर सुषेण से सुग्रीवजी बोले,-कि जब रामचन्द्र व लक्ष्मणजी की मूर्छा बीत जाती है तब आप कुछ बीर बानरों की सेना सहित रामलक्ष्मण को लेकर किष्किन्धापुरी को जाइये और मैं परिवार सहित रावण को मार कर मैथिली को लेकर आऊंगा। बानरेन्द्र सुग्रीवजी के बचन को सुनकर परम चतुर सुषेण बोले,-कि इसके पहिले देवता व असुरों का महा युद्ध हुआ था। उस युद्ध में दैत्यों ने माया के युद्ध से देवताओं को पीड़ित किया, उन देवताओं को बाण से नष्टचेतन देखकर विघा मंत्र व औषधी से भगवान बृहस्पति उनकी चिकित्सा किये। उस औषधी को लेने के लिये क्षीरसागर के समीप अत्यन्त वेगवाले संपाति व पनस आदि बानर शीघ्र जावें, क्योंकि वह लोग पुनर्जीवन को देने वाली संजीवनि नाम महौषधी को जानते हैं। वह औषधी क्षीरसागर के किनारे चन्द्र व द्रोण नाम पर्वत में है जहां अमृत की मथानी हुई है वहीं पर वह औषधी है। यद्यपि संपाति पनस आदि बानर जानते हैं तो भी शीघ्रता से आने के लिये वायु के पुत्र हनुमान जावें। इस प्रकार की वार्तालाप के समय में समुद्र के जल से एक लहर ऐसी उठी कि पर्वत हिलने लगे व आकाश मार्ग में मेघ व बिजुली के सहित

दिखाई पड़े वृक्ष टूट पड़े मानो समुद्र की धारा उलट कर पूर्व दिशा को बह चली। भय के मारे सर्प लोग जिधर तिधर भागने लगे। इसके बाद क्षण भर में महा वेग वाले पराक्रमी गरुड़जी को अग्नि के समान आते हुए बानरों ने देखा गरुड़जी को देखतेही जो नाग रामचन्द्र व व लक्ष्मणजी को बांधे थे वह नाग लोग उन लोगों को छोड़ कर भाग चले। इसके बाद गरुड़जी श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी के चन्द्रमुख को स्पर्श करके उनके प्रत्ये अंग को स्पर्श किये। गरुड़जी को स्पर्श करतेही पहिले के समान सोने के रंग उनकी शरीर होगई और अंग के घाव सब पूरे होगये और उनके तेज बीर्य बल कान्ती व उत्साह व स्मरण शक्ति आदि सब गुण द्विगुण होगये। इसके बाद श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी उठकर प्रसन्नता पूर्वक गरुड़जी को गले से लगाकर राम चन्द्रजी इस प्रकार बोले, कि आपके प्रसाद से यह रावणी आपदा का लंघन हुआ। जिस प्रकार हमारे पिता दशरथ और जिस प्रकार ब्रह्माजी के दर्शन से हमारा मन प्रसन्न होता है वैसेही आप के दर्शन से हमारा मन प्रसन्न हुआ। अब आप दिव्य चन्दन व माल्य व आभरण को धारण करने वाले कौन हैं। महाबली रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर हर्ष व प्रसन्नता पूर्वक गरुड़जी बोले—हेरामचन्द्रजी! हम आपके मित्र गरुड़ हैं आप लोगों की सहायता के लिये यहां आये हैं। चाहे महा बलवान राक्षस व बानर देवता व गंधर्व इन्द्र को आगे करके भी हमको संग्राम में नहीं जीतने सकेंगे। सो क्रूर कर्म करने वाले इन्द्रजित ने अपनी माया के बल से नाग फाश के द्वारा आप को बांध लिया। यह आपके अंग में लपटे नाग कद्रु के पुत्र हैं और अत्यन्त विष को धारण करने वाले हैं इन नागों को मायावी राक्षस ने बाण बनाकर आपके अंग को व्यथित कर दिया। समर में शत्रु को नाश करने वाले लक्ष्मणजी के सहित धर्म को सत्य को जानने वाले रामचन्द्र नाग फाश में बंधे हैं, यह आपका वृत्तान्त देवताओं के मुख से सुनकर प्रीति पूर्वक एकाएक यहां आये हैं। सो अब आप लोग इस बाण के बन्धन

से मुक्त होगये हो अब आप दोनों सावधान होजाओ। कूट युद्ध करना यह राक्षसों का स्वभावही है, इसलिये शुद्ध भाव वाले वीरों को इन राक्षसों का विश्वास नहीं करना चाहिये। महाबली गरुड़जी इस प्रकार रामचन्द्रजी से कहकर उनको आलिंगन किये और उनके समाचार को पूंछने लगे और कहने लगे कि हेमित्र रामचन्द्रजी! आप शत्रुओं को भी आनन्द देने वाले हैं अब आज्ञा दीजिये तो मैं अपने स्थान को जाऊं हेरामचन्द्रजी! लोक प्रतारण करने के लिये हमने जो आप को सखा कहा है इसमें आपको विस्मय नहीं करना चाहिये। अब आप लंकापुरी में बालक वृद्ध व स्त्रियों को छोड़कर अपने बाणों से सेना व परिवार सहित रावण को मारकर जानकी को प्राप्त करिये। इस प्रकार रामचन्द्रजी से कहकर शीघ्र गमन करने वाले गरुड़जी लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी को निरोग करके उनकी प्रदीक्षणा किये और पवन के समान आकाश मार्ग से गमन किये। इधर रामचन्द्रजी को निरोग देखकर बलवान बानरी सेना प्रलयकाल के मेघ के समान गर्जना करने लगी और अपनी अपनी पूंछ को पृथिवी पर पटकने लगी और पहिले के समान शंख भेरी मृदंग आदि के बाजा बजने लगे। कितने बानर पर्वत की शिलाओं को उखाड़ कर कितने वृक्षों को उखाड़ कर राक्षसों को मारने के लिये स्थित हुए। युद्ध करने की इच्छा से वे बलवान बानर बड़ी गर्जना करते हुए व राक्षसों को त्रास देते हुए वे बानर लंकापुरी को पहिले के समान घेर लिये। जैसे वर्षाकाल में जल से पूर्ण मेघों की गर्जना होती है वैसेही लंकापुरी के द्वारपर खड़े रात्रि काल में बानरों की गर्जना होने लगी॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे पंचाशः सर्गः॥५०॥

पहिले के समान मारूबाजा के शब्द को तथा प्रलय काल के मेघ के समान बानरों की गर्जना को सुन कर राक्षसों के राजा रावण मन्त्रियों से बोला,—कि प्रसन्नता से द्वार पर उपस्थित बानरों की गर्जना बदल के समान होती है। यह शब्द बड़ी प्रसन्नता के साथ होता है

देखिये इन बानरों की गर्जना से समुद्र क्षुभित हो जाता है। रामलक्ष्मण तो बाण से बंधे हैं और बानर प्रसन्न होकर गर्जना करते हैं इसमें हमको बड़ा भारी सन्देह होता है। रावण मन्त्रियों से ऐसा कहकर और राक्षसों को आज्ञा दिया कि वहां जाकर बानरों के इस प्रसन्नता का कारण जानों कि शोक के समय में यह हर्ष कैसा। इस प्रकार रावण के बचन को सुनकर वे समीप वर्ती राक्षस किला के छत पर चढ़ कर सुग्रीव से पालित बानरी सेना को देखने लगे कि पहिले के समान कोटि सूर्य के प्रकाश को धारण करने वाले कमल नयन श्याम बदन श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी धनुष बाण को लिये घूमते हैं ऐसा उनको देखकर राक्षस गण परम विषाद को प्राप्त हुए और वे राक्षस भय से कांपते हुए मुख को मलीन किये रावण के समीप गये । दीनता को प्राप्त राक्षस समस्त बातों को रावण से कह सुनाया कि जिन रामचन्द्रजी को इन्द्रजित् ने अपने नागबाण से बांधा था वे रामचन्द्रजी उसके बाण से मुक्त होकर रणभूमि में खड़े हैं। उन राक्षसों के बचन को सुनकर महाबली रावण चिन्ता व रोष से मलीन होगया और सोचने लगा कि भयंकर विष को धारण करने वाले सर्पों के समान मेघनाद के बाण से बंधा हुआ हमारा शत्रु किस प्रकार मुक्त होगया, यह बड़ा सन्देह है। जो हमारे समान बलवान इन्द्रजित के अमोघ बाणनिष्फल होगये तो अब शत्रुओं के हाथ से हमारा पराजय अवश्य होगा। ऐसा कहकर बड़ी लम्बी श्वास लिया, इसके बाद राक्षसों के मध्य में बैठा हुआ महा बलवान धूम्रनाम राक्षस से रावण बोला कि हे धूम्राक्ष ! तुम बलवान राक्षसों की सेना को लेकर बानरों के समेत हमारे शत्रु राम लक्ष्मण को मारने के लिये शीघ्र जाओ। इस प्रकार की आज्ञा राक्षसेन्द्र से पाकर धूम्राक्ष ने उनकी प्रदक्षिणा किया, और अपनी सेना सहित रण भूमिमें आया। रावण के द्वार से निकल कर अपने सेनापति से बोला कि युद्ध करने वाले पुरुषों को विलम्ब करना उचित नहीं है। धूम्राक्ष के बचन को सुनकर सेनापति अपनी सेना को रा-

वणकी आज्ञा से शीघ्र उत्तेजित किया। इसके बाद वे घोर रूपी निशाचर घण्टा को बजाते प्रसन्नता से गर्जना करते धूम्राक्ष के आसपास खड़े होगये और अनेक प्रकार के आयुध को धारण करके सेना में प्रवृत्त हुए। कितने बलवान राक्षस कवच को धारण करके रथपर बैठे ध्वजा व पताकाको लगाये हैं, कितने गदहाके मुखवाले हैं कितने घोड़ा के मुखवाले हैं कितने मद से भरे हाथी के समान मुखवाले हैं। व्याघ्र से भी दुरासद राक्षस व्याघ्रके समान बानरों की सेना के सन्मुख आये। जिस द्वार पर बानरों के सहित हनुमानजी खड़े थे वहां ही राक्षसों ने प्रवेश किया। राक्षसों को प्रवेश करने के समय में आकाश से उतर कर सिद्ध रथपर व ध्वजाओं पर माला के समान ग्रथित होगये, रुधिर को बहाते कबंध पृथिवी पर गिरने लगे। सियार आदि मांसको खाने वाले जन्तु भयानक शब्दको बोलने लगे। आकाश से रक्तवृष्टि होने लगी। चारो ओर भूकंप होगया। आंधी के समान भयंकर वायु चलने लगा। अन्धकार चारो ओर इसप्रकार व्याप्त होगया कि जिसमें तारा गण छिपगये। राक्षसों को भय देनेवाले इस प्रकार के उत्पात को देख कर धूम्राक्ष अपने जीवन की आशा छोड़कर उदास होगया। इसके उपरान्त महा वेगवाली भयानक राक्षसी सेना लेकर रणमें उत्सुक धूम्राक्ष रामचन्द्रजी की बाहसे पालित बानरी सेनाको देखा॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे एकपंचाशः सर्गः॥ ५१॥

महाबली धूम्राक्ष को रणांकण में सेना युक्त आते देखकर युद्ध की अभिलाषा रखने वाले वीर्यवान व पराक्रमी बानर प्रसन्नता पूर्वक आपस में गर्जना करने लगे। इसके बाद बानर व राक्षसों का परस्पर तुमुल युद्ध होनेलगा। इधर से बानरगण वृक्ष पर्वत नख व दन्त से राक्षसों को विदीर्ण करते थे उधर से खड्ग शूल मुद्गर शक्ति तोमर बाण आदि से राक्षस गण बान्दरों को व्यथित करते थे। जब बाण व शूल आदि राक्षसों के अस्त्रों से पीडित होते हुए अमर्ष के मारे वे बानर पर्वत व वृक्षों को उखाड़ कर भयंकर कर्म करने वाले राक्षसो

को मारकर पृथिवी पर गिरा दिया और साहस व उत्साहसे पूर्ण होकर गर्जना करने लगे। वानर व राक्षसों का इस प्रकार घोर युद्ध हुआ जैसे नाग व गरुड़ का युद्ध हुआ था। अनेक प्रकार की शिलाओं से और वृक्षों से कितने राक्षसों को ऐसा मारा कि वह मुहसे रुधिर वमन करते हुए प्राणको छोड़दिये। कितने राक्षसों को बलवान वानरों ने नख व दांत से फाड़कर मारडाले और उन राक्षसों की ध्वजा व पताका आदिको तोड़कर रथको विध्वंस कर दिया वे राक्षस कोई बड़े हाथी के सदृश कोई पर्वत के समान कोई पर्वत के ऊँचे शिखर के समान शरीर वाले राक्षस वानरों से घायल होकर रथ हाथी घोड़ा आदिके सहित मरकर पृथिवी को पूर्णकर दिया और बलवान वानर कूदकूद कर कितने राक्षसों को नखसे फाड़ देते थे जिससे की वह रक्त को बहाते मूर्छित होकर भूमिमें गिर पड़ते थे। कितने बलवान राक्षस वज्रके समान आघात करने वाले अस्त्रों से वानरों को मारते थे। वानर गण उनके अस्त्र प्रहार को सहन करके अपने चरण नख मुष्टि (मुक्का) और विशाल वृक्षों से राक्षसों को मार डाले। इस प्रकार के घोर युद्ध से राक्षसी सेना पराजित होकर जिधर तिधर भागने लगी। राक्षसों में श्रेष्ठ धूम्राक्ष अपनी सेना को भागते देखकर वानरो से घोर युद्धको आरम्भ किया। कितने वानर प्रास से व्याकुल होकर रुधिर वमन करने लगे कितने मुद्गर से आहत होकर पृथिवी पर गिरपड़े। कितने वानरों को परिघ व गिन्दिपाल से दलित किया, कितने वानर पट्टिश से ताड़ित होकर मूर्छाको अंगीकार किये। कितने को क्रोधित धूम्राक्ष ने अपने त्रिशूल से नाश किया, और इतने वेगसे वानरों पर बाण वृष्टि करने लगा मानो गन्धर्व लोग गायन करते हैं। इसप्रकार धनुष बाणको लेकर संग्राम में धूम्राक्ष ने वानरों को व्यथित किया। धूम्राक्ष के अस्त्राघात से पीड़ित सेना को देखकर क्रोधयुक्त हनुमान एक बड़ी भारी शिला लेकर उसकी ओर दौड़े। क्रोध से उनका बल व पराक्रम द्विगुण होगया है। ऐसे वायुके समान पराक्रमी हनुमान उस शिलाको धूम्राक्ष के रथपर फेंके। उस शिलाको

आते देखकर युद्धमें कुशल राक्षस रथको छोड़कर हाथमें गदालिये पृथिवी पर खड़ा होगया। वहशिला उसके रथको विरथ करती हुई भूमि में गिर पड़ी, हनुमान शाखा के सहित वृक्षको उखाड़ कर उस राक्षस के मस्तक पर मारे जिससे उसका सिर टूट गया और उससे रुधिर की धारा बहने लगी। तौभी वह राक्षस अपने अस्त्र से उस वृक्षको काटकर गिरादिया। तब हनुमानजी क्रोधित होकर पर्वत के शिखर को लेकर धूम्राक्ष की ओर दौड़े, उस शिखर को अपने ऊपर आते देखकर वह राक्षस एक गदा लेकर हनुमानजी की ओर दौड़ा और हनुमानजी के मस्तक पर वह गदा ऐसी मारी जिससे क्षणभर उनको चिन्ता होगई। उसकी गदा के प्रहार को सहन करते हुए बानरों में श्रेष्ठ हनुमान पर्वत के विशाल शिखर को लेकर उस राक्षस पर ऐसा फेंका कि जिससे वह पृथिवी पर गिर कर मरगया। धूम्राक्ष को मरा देखकर जितने राक्षस शेष रहे वे सब बानरों से त्रासित होकर लंकापुरी में प्रवेश किये। वायु पुत्र हनुमानजी से प्रबल शत्रुका मरण देखकर सुग्रीव आदि बानर उनकी बड़ाई करने लगे॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे द्विपंचाशः सर्गः॥ ५२॥

धूम्राक्ष के मरण को सुनकर राक्षसों के राजा रावण क्रोधसे आविष्ट होकर इस प्रकार श्वास लेने लगा जैसे क्रोधित सर्प श्वास को लेवे। इसके बाद एक लंबीश्वास लेकर राक्षसों में श्रेष्ट व बलवान रण जीतने में चतुर वज्रदंष्ट्र से बोला, हे बीर! तुम अपने योग्य बलवान राक्षसों की सेना को लेकर समरांगण में जाओ, और सुग्रीव आदि बानरों के सहित दाशरथि राम लक्ष्मण को नाश करके शीघ्र चले आओ। मायावी वज्रदंष्ट्र राक्षस बलवान राक्षसों की चतुरङ्गिणि सेना लेकर समर भवन में शीघ्र चलने को अंगीकार किया और हाथी घोड़ा गदहा [खच्चर] और ऊट इन वाहनों से युक्त तथा ध्वजा व पताका आदि से अलंकृत रथपर बैठ कर केयूर व मुकुट से भूषित होकर धनुष बाण को धारण किये कवच से पर्याप्त होकर युद्ध भूमिमें

चलने को प्रस्तुत हुआ । इसके बाद ध्वजा व पताका से भूषित रथ को प्रदक्षिणा करके वह सेना पति चला, और ऋषि तोमर शूल मुसल भिन्दिपाला बाण शक्ति पट्टिश खड्ग चक्र गदा और परशु आदि अस्त्रों को लेकर उसकी पदाति सेना चली । इस सेना के राक्षस अनेक प्रकार के भूषण वस्त्रको धारण किये अस्त्र शस्त्र लिये मतवाले हाथी व घोड़ा पर चढ़े रणभूमि के स्थान पर पहुंचे जैसे वर्षाकाल में मेघ लोग पृथिवी को अच्छादित करदेते हैं वैसे राक्षसी सेना को लेकर युद्ध करने के लिये वज्रदंष्ट्र और दक्षिण के द्वार से निकला जहां अपनी वानरी सेना लेकर अंगदजी शत्रुकी प्रतीक्षा करते खड़े थे वहां ही वह राक्षस अपनी सेना समेत पहुंचा । उस राक्षस को राजभवन से बाहर निकलनेके समय अनेकप्रकारके अशकुन होने लगे कि आकाशसे तारे टूटने लगे आगकी ज्वाला तीव्रता से बढ़ने लगी प्रचण्ड वायु का गमन होने लगा, राक्षसी शब्दको मृगा आदि जन्तु बोलने लगे इतने प्रकार के अशुभ सूचक उत्पात को देखकर भी रण में पण्डित और उत्साही वज्रदन्ट् धैर्य का आश्रय लिया और वानरी सेना पर आक्रमण करने लगा । इधर दौड़ती हुई राक्षसी सेना को देखकर बलवती वानरी सेना इतने हर्ष से गर्जना और किलकिला शब्द करने कि जिसके शब्द व पराक्रम से दिक्पाल कांपने लगे । इसके बाद परस्पर जय की इच्छा करने वाले वानर व राक्षसों का महा संकुल युद्ध होने लगा । कितने का शिर कट कर पृथिवी की माला होगया कितने शूर वीर परिघ आदि अस्त्रों को मारने व सहन करने लगे । कितने पर्वत व वृक्षों की घनाघोर मार को सहने लगे और उस वृक्ष व पर्वतों के गिरने का हृदय विदारक शब्द होने लगे और रथ के चलने का तथा धनुष के आस्फलन का और अनेक प्रकार के बाजों का शब्द एक में मिलकर आकाश मार्ग को शब्दाय मानकर दिया । कितने राक्षस अपने अस्त्रों को फेंककर वानरों से युद्ध करने लगे, वानर लोग लात मुका नख दन्त वृक्ष आदि से राक्षसों को व्यथित करने लगे । कितने राक्षसों को लात

से दबाकर कितनों के ऊपर पर्वतों को गिरा कर मार डाले। वज्रदंष्ट्र अपनी सेना को मरते देखकर क्रोध पूर्वक यमराज के समान बानरों पर बाण की वर्षा करने लगा। राक्षस के पराक्रम से बानरों को समर में पीड़ित देखकर प्रलय काल की प्रचण्ड अग्नि के समान वायु पुत्र हनुमान क्रोधसे द्विगुण होकर एक विशाल वृक्षको लेकर पराक्रमी अंगदजी तथा हनुमानजी इस प्रकार राक्षसों को मारने लगे जैसे सिंह क्षुद्रमृगाओं को नाश करता है, अंगद व हनुमान से नाशकिये गये राक्षस इस प्रकार भूमि पर गिरने लगे जैसे वृक्ष कटकर गिरता है और उनके रथ पताका ध्वजा आदि सभी कटकर गिर गये और रुधिर की धारा बहने लगी। उसमें राक्षसी के मुकुट व केयूर तथा वस्त्र आदि इत भांति शोभा देने लगे जैसे प्रबल नदी के प्रवाह में तरंग की शोभा होती है। जैसे वायु के चलने से बदलका बेग नष्ट होजाता है वैसेही महा पराक्रमी अंगदजी के बेगसे राक्षसों की सेना कांपने लगी॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे त्रिपंचाशः सर्गः॥ ५३॥

अंगदजी के पराक्रम से अपनी राक्षसी सेना का नाश देखकर महाबली वज्रदंष्ट्र क्रोधयुक्त होकर इन्द्र के वज्र के समान अपने कठोर बाणों की वर्षा बानरों की सेना पर बर्षाने लगा। अब उन राक्षसी सेनामें जो प्रधान राक्षस बच गये थे वह रथपर सवार हुए समराङ्गणमें अस्त्र प्रहार करने लगे। इधर बानरी सेनामें जो प्रधान बानर थे वह पर्वत वृक्षों को लेकर उनके साथ लड़ने लगे। उस युद्धमें कपियों के ऊपर राक्षसों ने हजारों बाणों को चलाया। बानरों में श्रेष्ठ व बलवान बानरों ने शिला व पर्वत को लेकर एक साथ उन राक्षसों पर प्रहार करने लगे। रणमें प्राणपण को व्यय करने वाले शूरबीरों ने आपस में परस्पर युद्ध करने में समाकुल होगये। कितने शिर कटने से कितने पैर व हाथ कटने से और शस्त्र के आघात से रक्त की धारा बहती हुई पृथिवी को गीला कर दिया और राक्षस तथा बानर आहत होकर पृथिवी माता की गोदमें शयन करने लगे। उनके मांस व रुधिर

से श्वापद जन्तु सन्तुष्ट होकर आनन्द मचाने लगे। बानरों से नाश किये गये राक्षसों की सेनाको देखकर राक्षसी सेना बानरों के भय से कांपने लगी। राक्षसों के विशेष नाश को देखकर प्रतापी वज्रदंष्ट्र फिर भी धनुष बाणको लेकर बानरों पर इस प्रकार बाण चलाने लगा कि एक एक बाणके साथ ७८–६५ बानर घायल होने लगे। वज्रदंष्ट्र के बाण से त्रस्त बानरगण अंगद की शरण को पुकारने लगे। जैसे प्रजा राजा के शरण का आश्रय लेती है। बानरों को व्याकुल देखकर अंगजी क्रोधसे आविष्ट होकर उस वज्रदंष्ट्र को देखते हुए उसके साथ ऐसे लड़ने लगे कि जैसे हाथी के साथ सिंह लड़ता है। इसके बाद उस राक्षस ने महाबली अंगद के मर्म देशमें हजारों बाण मारे। अङ्गद जी रुधिर को बहाते वृक्षको हाथमें लेकर वज्रदंष्ट्र को मारे। उस वृक्ष रूपी अस्त्रको अपने ऊपर आता देखकर साहसी वह राक्षस अपने बाणों से वृक्षको काटकर पृथिवी में गिरा दिया। राक्षस के अद्भुत पराक्रम को देखकर अङ्गदजी एक विशाल शिला लेकर उस राक्षस के ऊपर फेंक कर गर्जना किये। उस विस्तीर्ण शिलाको अपने ऊपर आते देखकर क्रोध पूर्वक रथसे उतर कर हाथमें गदा लिये भूमि पर खड़ा हुआ। अङ्गद ने शिलाको राक्षस के ऊपर फेंककर उसके रथ सारथी और अश्वको विरथ कर दिये और एक दूसरी महती शिला लेकर अनेक वृक्षों से युक्त पर्वत के शिखर को उखाड़ कर वज्रदंष्ट्र के मस्तक पर पटक दिये। उस शिलाके आघात को पाकर वज्रदंष्ट्र क्षणभर मुर्छित हो कर बाद मूर्छासे निवृत्त होकर गदा को आलिंगन करते हुए अर्थात् गदा को लेकर परम क्रुद्ध राक्षस अङ्गदजी के हृदय स्थल में एक गदा मारा इसके उपरान्त फिर भी गदाको छोड़कर दोनोंशूरबीर मुष्टि युद्ध करने लगे। अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र से पीड़ित बानर व राक्षस के शरीर से रक्त बहता हुआ इस भांति युद्ध करने लगे कि जैसे मंगल व बुधका युद्ध होता है। इधर परम पराक्रमी बानरों में श्रेष्ट अङ्गदजी पुष्पफल से युक्त एक वृक्षको उखाड़कर हाथमें लिये खड़े होगये। और फलक

[मियानी] मेंसे निर्मल खड्ग को निकाल कर बानर व राक्षस दोनों विजय की इच्छा करने वाले एक दूसरे को देखकर गर्जना करने लगे। बानरों में श्रेष्ठ अङ्गदजी निमेष भरमें सब प्रकार होगये जैसे दण्ड से घायल होकर सर्प क्रोधित होता है। इस प्रकार क्रोधित अङ्गदजी सुन्दर खड्ग से वज्रदंष्ट्र के शिरको काट लिया, शिरको काटने से राक्षस मर कर पृथिवी पर गिर पड़ा। वज्रदंष्ट्र को मरा हुआ देखकर भयसे मोहित राक्षसगण भागकर लंकापुरी को चले और बानरों से त्रस्त राक्षस लज्जा के मारे नीचे को मुख करके दीन बदन से रावण के समीप पहुंचे। प्रतापी वज्रदंष्ट्र के मारने से बानरों की सेना के मध्य में हनुमानजी अङ्गद सहित परम हर्षित हुए जैसे दैत्यों के हाथ विजय पाने से देवताओं के मध्यमें इन्द्र प्रसन्न होते हैं॥

इति बाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डे चतुष्पंचाशसर्गः॥ ५४॥

अङ्गद के हाथसे महा प्रतापी वज्रदंष्ट्र मरण को सुनकर राक्षसों का राजा रावण समीप में बैठे सेनापति प्रहस्त से बोले, कि आप सब प्रकार के अस्त्र शस्त्र को जानने वाले हैं इन पराक्रमी राक्षसों को लेकर संग्राम स्थल में जाओ। क्योंकि तुम इन सेनाओं को शासन देनेवाले और रक्षा करने वाले व इनके नियन्ता हो और सदा हमारे कल्याण को चाहने वाले हो हम जानते हैं कि तुम अपने दृढ़ पराक्रम से इन बानरों को राम लक्ष्मण के सहित अपने अधीन कर सकतेहो। इस प्रकार रावण की आज्ञा को पाकर महाबली प्रहस्त सेनाको उस समय आज्ञा दिया। सेनापति की आज्ञा को पाकर समस्त सेना अनेक भांति के अस्त्र शस्त्र को लेकर स्वर्णमय रथको साजने लगे उस रथों को ध्वजा व पताका से अलंकृत करके वे घोर बलवान राक्षस सेनापति के अनुगत हुए। उन राक्षसों को देवता भी संग्राम में नहीं जीतने सकते हैं। ऐसी सब सूर्य से समान चमकने वाली राक्षसी सेना युद्ध करने की अभिलाषा से संग्राम स्थल में आने के लिये दौड़ने लगे। ज्योंही अकंपन अपनी सेना लेकर

रणभूमि को चलने लगा वैसे ही घोड़ों के आंख से आंसू बहने लगा और उनके मुख की कान्ति मलीन हो गई। योधाओं के वाम अङ्ग फरकने लगे और साहस घट कर मुख की प्रभा अस्त हो गई। जैसे सुन्दर समय में दुर्दिन का होने से प्रजा को दुःख होता है वैसे ही बानरों के भय से राक्षस दुःखी और अपने जीवन से निराश हो गये। पक्षी मृगा आदि जन्तु भयानक बोली बोलने लगे तौ भी इन उत्पातों का बिचार करके सेनापति अकंपन के साथ युद्ध की अभिलाषा से शूरवीर राक्षस रणांगण में आये और इस प्रकार अंधकार भयानक गर्जना करने लगे कि जिन राक्षसों की गर्जना को सुनकर बानरगण भय से विह्वल हो गये। वृक्ष पर्वत की शिला नख व दन्त आदि से लड़ने वाले बानरों के साथ उन आये हुए राक्षसों का युद्ध होने लगा। पर्वताकार शरीर वाले बानर व राक्षस राम रावण के लिये प्राण देने को प्रस्तुत होकर परस्पर के बैर से युद्ध को आरंभ किये और प्रलय काल के मेघ के समान परस्पर गर्जना करते थे। दोनों ओर के योधाओं को एक साथ भिड़ने से ऐसी धूली उड़ी कि जिससे दशो दिशाओं में अन्धकार सा हो गया और संग्रामभूमि में रथ ध्वजा पताका आदि सभी छिप गये। एकवादी के अस्त्र को दूसरा वादी नहीं देख सकता है केवल उन वीरों के जोशीले शब्द ही सुनाई देते हैं क्योंकि जो जिसको मारता है वह चिल्ला कर अपने नाम को प्रगट करता है। परन्तु उन वीरों के स्वरूप तथा उनके अस्त्र शस्त्र नहीं दिखाई देते हैं। उस घोर अन्धकार में राक्षस ही राक्षस को और बानर बानर को मारने लगे और प्रत्येक योधाओं के अंग से रुधिर निकल कर भूमि भाग को आर्द्र कर दिया, सब धूली भींग कर कीचड़ हो गयी। गदा प्रास शक्ति तोमर वृक्ष पर्वत व शिला आदि अस्त्रों को परस्पर चलने से मृत शरीर से पृथिवी ढँप गई। तौभी पर्वताकार शरीर वाले राक्षस अपनी लंबी भुजाओं से बाहु युद्ध करने लगे। इधर रण कर्म में कुशल बानरों की सेना युद्ध में राक्षसों के प्राण को नाश करने लगी।

राक्षस भी शक्ति तोमर प्रास पट्टिश आदि अस्त्रोंको लेकर बानरों पर प्रहार करते थे तौ भी सेनापति अकंपन राक्षसों की रक्षा करनेके लिये बानरी सेना पर परम दारुण अस्त्र वृष्टि करने लगे जिससे कितने बानर प्राणपण का व्यय करके पृथिवी माता की गोद में शयन कर लिये और उनके पर्वत आदि अस्त्रों को अपने बाण परिघ पट्टिश शूल आदि से काट दिये। बानरगण भी बड़ी बड़ी शिलाओं की पर्वतों के शिखरों को तथा वृक्षों की वर्षा करने लगे और राक्षसों के अस्त्र शस्त्र को तोड़ कर उनको अनेक छल से मारने लगे। इस प्रकार बलवानों में श्रेष्ठ कुमुद नल मैन्द आदि बानर राक्षसों के कठोर युद्ध से क्रोधित होकर अनेक वृक्षों को उखाड़ कर इस प्रकार राक्षसी सेना में वर्षा किये कि सकल राक्षसों के अस्त्र शस्त्र पृथिवी पर गिर पड़े और वे राक्षस त्रासित होकर भागने लगे॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे पंचपंचाशः सर्गः॥ ५५॥

बानरों के दुष्कर युद्ध को देखकर रावण के सेनापति अकंपन क्रोध व मूर्छा से मुक्त होता हुआ अपनी धन्वा पखाणको रखकर सारथी से बोला, हे सारथी! जहां वे बलवान बानर बेगपूर्वक शिला व वृक्ष आदि से हमारी सेना का नाश करते हैं उनके बीच में हमारे रथको ले चलो यह भयानक कोप करने वाले बानर हमारे सम्मुख होकर लड़ें। समर में प्रशंसा पाने वाले हम इन बलवान बानरों के नाश की इच्छा करता हूँ। क्योंकि इनको संहार करके राक्षसों के पराक्रम को दिखाऊंगा इस प्रकार सेनापति के बचन को सुनकर रथियों में श्रेष्ठ रथ पर सवार सारथी रथ को लेकर बानरों के मध्य में आया और दूरही से बानरों के ऊपर बाणों की वर्षा करने लगा। उस बाण वृष्टिको देवता भी समर में नहीं सहन कर सकते हैं बानरों की क्या गणना है। उसके बाण से व्यथित बानर इधर उधर भागने लगे। अकंपन के बाणों से मृत्यु के वश में प्राप्त बानरों को देखकर जाति के प्रेम से हनुमान उन लोगों को रण में लौटाकर अनेक प्रकार का सन्तोष दिये। बानरों में श्रेष्ठ हनुमानजी

को व्यवस्थित देख कर सब बलवान बानर उनके आश्रय से पहिले के समान युद्ध के अभिलाषी हो गये । पर्वताकार विशाल शरीर हनुमान को अवस्थित देखकर पर्वतकी धाराके समान बाणकी वर्षा हनुमान पर करने लगा । अकंपनकी बाण वर्षाको देखकर महाबली हनुमान अकंपन को वध करने का विचार करने लगे । तबतक अकंपन वायुपुत्र हनुमान पर अस्त्र प्रहार करने के लिये इस प्रकार दौड़ा कि उसके पग रखने से पृथिवी कांपने लगी । इसके उपरान्त तेज व पराक्रमसे दीप्तिमान अकंपन के चिल्लाने को सुनकर अग्निकी प्रबल ज्वालाके समान हनुमानजीकी शरीर बढ़ने लगी और क्रोध से युक्त होकर अपने को विजयी समझ कर एक विशाल पर्वत को उखाड़ कर बानरों में श्रेष्ठ हनुमान वेग से उस पर्वत को एक हाथ में लिये समरांगण में घूमने लगे और प्रलय काल के मेघ के समान गर्जना करने लगे । जैसे देवता व दैत्यों के संग्राम में नमुचि दैत्य को मारने के लिये वज्र को घुमाये थे वैसे ही हनुमान जी अकंपन को मारने के लिये पर्वत को लेकर घूमने लगे । अकंपन पर्वत को हाथ में लिये युद्ध की इच्छा से समर भूमि में खड़े हनुमान को देख कर दूर ही से ऐसा बाण मारा कि वह पर्वत दो टुकड़ा होकर भूमि में गिर पड़ा । पर्वत को फटकर नीचे गिरना देखकर क्रोध से मूर्छित हनुमान पर्वत के समान अश्वकर्ण वृक्षको उखाड़ कर पृथिवी तल में घूमने लगे और परम क्रोधित हनुमान अपने भ्रमण से पृथिवी को खोदने लगे । हाथी सवार घोड़ा सवार रथि सारथि और यदाति राक्षसों को उसी वृक्ष से मारने लगे । प्राण को हरण करने वाले क्रोधित यमराज के समान हनुमान को देखकर राक्षसगण भय के मारे भागने लगे । भय के मारे राक्षसों को भागते देखकर शूरवीर अकंपन क्षुभित होता हुआ गर्जना करने लगा और चौदह बाण हनुमान जी के शरीर पर मारा कि जिस बाण को हनुमानजी के अग से रुधिर बहने लगा, उस रक्त के बहने से हनुमानजी के अंग फूलते हुए पलाश पुष्प के समान शोभा को देने लगा । उस रक्त

के पराक्रम को देखकर हनुमानजी एक दूसरे वृक्ष को उखाड़ कर राक्षसों के स्वामी अकंपन को शिर पर आघात किये। उस वृक्ष को लगते ही वह राक्षस चिल्लाकर अपना प्राण छोड़कर मर गया और पृथिवी पर गिर पड़ा। उस बलवान अकम्पन के मरण को देखकर राक्षसगण इस प्रकार व्यथित होकर भाग जैसे वायु को चलने से वृक्ष हिलने इस प्रकार व्यथित होकर भागे जैसे वायु को चलने से वृक्ष हिलने लगते हैं। बानरों से पीड़ित होकर राक्षसी सेना अस्त्र शस्त्र को छोड़ कर लंकापुरी को भाग चली। उस राक्षसी सेनाको भाग जाने पर समस्तबानरी सेना हनुमानजी की बड़ाई करने लगे। उन बलवान बानरों के प्रशंसा बचन को सुनकर हनुमानजी उन लोगों से अलिगंन कर के यथायोग्य मिले। विजय की इच्छा करने वाले बानर इस प्रकार गर्जनायुक्त घूमने लगे कि उनकी गर्जना को भी सुनकर राक्षसों का प्राण निकलने लगा। इधर मधु व कैटभ नामक दैत्य को मारकर देवतो के मध्य में विष्णुजिस शोभा को धारण किये उसी प्रकार हनुमान अकंपन को समर में मार कर बानरों के मध्यमें अपूर्व शोभा को धारण किये और देवगण तथा रामचन्द्र व लक्ष्मणजी और सुग्रीव आदि बानर तथा रावण के विभीषण आदि सब लोग हनुमान की स्तुति करने लगे।

इति बाल्मीकिये रामायणेयुद्धकाण्डे षट्पंचाशः सगः ॥ ५६ ॥

अकंपन के बधन को सुनकर राक्षसेश्वर कुछ मलीन होकर मन्त्रियों की ओर देखने लगा और क्षणभर ध्यान पूर्वक विचार करके मन्त्रि समूहको देखता हुआ रावण पूर्वाह्न समय में अपने लंकापुरी के ऊपर चढ़कर ध्वजा पताका और राक्षसी सेना के सहित लंकानाम नगरी को देखा। बानरों से रोकी गई नगरी को देखकर राक्षसेश्वर रावण अपने हितको चाहने वाले युद्धमें विशारद सेनापति प्रहस्त से बोले, कि यह द्वारको अवृतकिये शत्रुकी सेना से हठात पीड़ित होते हुए हम दूसरे को नहीं देखते हैं जो इनको समरमें जीतकर लंकापुरी के द्वार से शत्रुसेना को प्रवाहित करें। इस प्रकार के भारको हम अथवा

कुम्भकर्ण या सेनापति तुम और इन्द्रजित् तथा निकुम्भही सहन कर सकते हैं। अब इन राक्षसों में तुम अधिक बलवान हो इसलिये अपने अस्त्र शस्त्र को धारण करके राक्षसी सेना सहित विजय करने के लिये शीघ्र बानरों के सन्मुख जाओ। शीघ्रता से समराङ्गन में जो तुम जाओगे तो चंचल बानरी सेना राक्षसों के गंभीर गर्जना को सुनकर भाग जावेगी। क्योंकि बानर की जाति अत्यन्त चंचल व अविनीत तथा चंचल चित्त वाले होते हैं वह सिंहनाद के समान तुम्हारी गर्जना को नहीं सहन कर सकेंगे जैसे सिंहके नाद से हाथी भाग जाती हैं। जब बानरी सेना भग जावेगी तब हे प्रहस्त वह राम लक्ष्मण अधीर होकर तुम्हारे अधीन होवेगा। यदि तुम यह कहो कि जब युद्ध स्थल में जावेंगे तो हमारे जीवन में स्वयं संदेह है फिर राम लक्ष्मण हमारे वश में कैसे होंगे, तो युद्ध में तुमारी मृत्यु का सन्देह है और तुमारे विजय करने में सन्देह नहीं है क्योंकि तुम अधिक बलवान राक्षसों में श्रेष्ठ मेघनाद के समान पराक्रमी हो। फिर भी युद्ध में दो प्रकार का लाभ होता है यदि शत्रु को जीत लिये तो राज्ज भोग करना है और मरण हुआ तो स्वर्ग लाभ है। रावण के इस भांति बचन को सुनकर सेना पतियों में प्रधान प्रहस्त राक्षसेन्द्र रावण से इस प्रकार बोला जैसे दैत्यों के राजाबलि को शुक्राचार्य ने वामन के विषय में समझाया था। हे राजन्! विचार करने में कुशल विभीषण माल्यवान् आदि मन्त्रियों ने जो कुछ हितके बचन को उपदेश किये वह सह लोगों ने स्वीकार न करके परस्पर विवाद के द्वारा एक सत्य न होकर वैमनस्य कर दिया। उन लोगों का कहना यही था कि रामचन्द्रजी को सीता देवी का प्रदान करना हम सब राक्षसों के लिये कुशल है न प्रदान करने में युद्ध सन्मुख उपस्थित है सो आज वही विभीषण व माल्यवान की बातें आंखों के सामने है। और आपने तो इतने दिनों तक दान व सम्मान से हमारी रक्षा किये हैं मैं आपकी आज्ञा को क्यों नहीं पालन करूंगा। हम को अपने जीवन

की तथा स्त्री पुत्र बधन की लालसा नहीं है। आप देखिये मैं इसी रणकुण्ड में अपने जीवन को हवन करने की इच्छा करता हूं। इस प्रकार रावण से कहकर सेनापति प्रहस्त सन्मुख खड़े सेना के अध्यक्ष से बोला, हमारी राक्षसी सेना को शीघ्र इकट्ठा करो। जिससे हमारे बाण वेग से रणाङ्कणमें ये शत्रु शीघ्र नाश होवें और इनके रक्त व मांस से गिद्ध आदि मांस खाने वाले पक्षी आज संतुष्ट होवें प्रहस्त के इसप्रकार वचन को सुनकर सेना के अध्यक्ष क्षण भर में समस्त सेना को रावणके मंदिर में इकट्ठा कर दिया। वह रावण तब अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्रधरी राक्षसों से भयानक सा हो गया। वह लंकापुरी राक्षस शूरवीरों से समाकुल हो गई। और वह राक्षस वीर अग्नि देवता में समन्त हवन करके उनकी स्तुति किये इसके बाद ब्राह्मणों को नमस्कार किये घी के सुगन्ध को लेकर सुन्दर वायु वहने लगा। शूरवीर राक्षसों ने अभिमन्त्रित अनेक रंग के पुष्पों की माला को धारण किये। अनेक प्रकार के अस्त्र व कवच को धारण करके अपने अपने वाहनों पर बैठने लगे। इसके बाद राक्षसों के राजा रावण प्रहस्त को रोककर शंख भेरी मृदंग आदि बाजों के सहित आमन्त्रित किया। राजा से आमन्त्रित होकर सेना पति प्रहस्त ध्वजा पताका कवच आदि से सज्जित रथ पर बैठा। उसके रथ में अति शीघ्र चलने वाले घोड़े जुते थे। ऐसे रथ सारथी से युक्त मेघ के समान गर्जना करता हुआ साक्षात् सूर्य चन्द्रमा की नाईं सुवर्ण जाल से युक्त सुन्दर रथ पर बैठ कर रावण की आज्ञा को शिरोधार्य करके बड़ी भारी राक्षसी सेना के सहित लंकापुरी से बाहर निकला उसके मृदंग के शब्द मेघ के गर्ज के समान था और युद्ध की बाजा से समस्त भूमण्डल शयमान हो गया और शंख के शब्द को सुनकर घोर गर्जना करते हुए ये चार राक्षस प्रहस्त के रथसे आगे चले, नलिक, कुम्भहनु, महानाद, और समुन्त ये चार प्रहस्त के प्रधान मन्त्री थे। यह भी अपनी सेना लेकर प्रहस्त की सहायता

करने को चले, इस प्रकार अपनी राक्षसी सेना की व्यूह रचना करके पूर्व के द्वार से समर स्थल में पहुंचा। समुद्र के समान तरंग वाली बलवान राक्षसी सेनाके सहित क्रोधित कालकी नाईं बानरोंके सन्मुख आया वह राक्षस निकलनेके समय इस प्रकार भयानक गर्जना सेना सहित करने लगा कि जिसके शब्द से लंकापुरी त्रासित हो गई। उस राक्षस को पुरी के बाहर निकलतेही रक्त मांस को भोजन करने वालेपक्षिगण दाहिनेसे बायें होकर आकाशसे उतरने लगे। आग की ज्वाला धधक उठी। आकाश से तारे टूटने लगे, आंधी के समान वायु चला। आकाश मार्ग में बदल घेरकर गदहे के चिल्लाने के समान गर्जने लगे और रुधिर की वर्षा राक्षस के रथ के उपर करने लगे और गिद्ध पक्षी रथ के दोनों ओर बैठकर अपने अंग को चोंचों से खुजलाने लगे। घोड़ा को चलाने वाले सारथी के हाथ से घोड़ा के लगाम गिरने लगे और राक्षस श्रेणी में सबके मुख की कांति मलीन हो गई। गुण व पौरुष में विख्यात प्रहस्त इतने तरह के अशकुन को देखकर भी उसका मन पीछे को नहीं हटा और अनेक अस्त्र शस्त्र को लिये राक्षसी सेना बानरी सेना के सन्मुख आकर उपस्थित हुई। उसके बाद वृक्ष पर्वत व शिला आदि को लेकर बानरी सेना व राक्षसी सेना आपस में गर्जना करने लगे। अत्यन्त युद्ध करने में समर्थ परस्पर उन लोगों की गर्जना से महा भयंकर शब्द सुनाई देने लगा। मूढ़ बुद्धि प्रहस्त अपने विजय की इच्छा वाले सुग्रीव की बानरी सेना राक्षसी सेना के सन्मुख खड़ी हुई और इस प्रकार के वेग से राक्षसी सेना बानरी सेना के ऊपर आक्रान्त हुई जैसे दीपक के प्रकाश पर पतंग गिरते हैं।

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे सप्तपंचाशः सर्गः ॥ ५७ ॥

समर में प्रवृत्त करने वाले प्रहस्त को आते देखकर शत्रुसूदन रामचन्द्रजी विभीषण से बोले, यह पर्वताकार शरीर वाला एक विशाल राक्षसी सेनाको लेकर आता है यह कौन है और कैसा बलवान व पराक्रमी

है। हे महाबाहु विभीषण! इसके पराक्रमको तत्वतः कहो। श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर राक्षसेन्द्र विभीषण बोले, भगवन्! यह प्रधान मन्त्री प्रहस्त हैं यह राक्षसेन्द्र की सेना के तीसरी भाग की सेना को लेकर आया है यह अत्यन्त वीर्यवान पराक्रमी व शूरवीर है इसके पराक्रम को देवता लोग जानते हैं। समराङ्गण में राक्षसों के सहित प्रहस्त आकर बलवान् बानरी सेना को देखकर और बानरों की गर्जना को सुनकर गर्जता हुआ प्रहस्त खड़ा हुआ। खड्ग शक्ति ऋष्टि तोमर शूल पाश मुसल गदा परिघ परशु धनुष बाण आदि अस्त्रोंको लिये जय की इच्छा करने वाले राक्षसगण बानरोंके मध्यमें धावा करने को प्रस्तुत हुये और बृक्ष पर्वत व शिला आदि को लेकर युद्ध की इच्छा करने वाले बानरगण भी परस्पर राक्षसों के साथ महायुद्ध को आरंभ किये इस युद्ध में अनेक बानर राक्षसों को राक्षस बानरों को परस्पर मारने लगे। राक्षस बाणों से और बानर पत्थलों से युद्ध करने लगे। कितने बानर शूल से कितने परमायुध से कितने परिघि से कितने पशु से नाश होकर पृथ्वीमें गिर पड़े। कितने बानरोंको राक्षसोंने खड्ग से दो टुकड़ा कर दिया। बानर गण भी क्रोधित होकर राक्षसों को पर्वत शिला वृक्ष नख दन्त से मारकर नाश करदिये। बानर व राक्षसों के आर्तनाद तथा सिंहनादका महा भयानक शब्द संसारमें गूंज उठा। क्रोधिक बानर व राक्षस वीर मार्ग का अनुसरण करते हुए निर्भय अस्त्र प्रहार करने लगे। नारान्तक कुंभहनुः महानद समुन्नत ये चार प्रहस्त के मन्त्री बानरों को मारने लगे। बानरोंके नाशको देखकर बानरों में श्रेष्ठ द्विविद एक पर्वत के शिखर को लेकर उसी शिखर से नारान्तक को मारे और दुर्मुखनाम के बानर एक विशाल वृक्ष को लेकर समुन्नत को मारकर नाश किये। महाक्रोधी जांबवान एक बड़ीभारी शिला को लेकर महानाद नाम राक्षस के हृदय में मारे जिससे वह मर गया। इसके बाद अंगद एक वृक्ष से कुंभ के प्राण को हरण किये। क्षणभर में चार मन्त्रियों के मरण को देखकर रथ पर बैठा हुआ प्रहस्त धन्वा

बाण को लेकर कठिन संग्राम में उद्योग करने लगा । दोनों तरफ की सेना समुद्र के भँवर के समान घूमती हुई क्षुभित समुद्र की नाईं गर्जना करती थीं । रण में दुर्मद प्रहस्त राक्षस अपने बाण से बानरी सेना को शिथिल कर दिया । बानर व राक्षस की मरी हुई लोथ से पृथ्वी पर्वत के समान ढप गई और वह पृथ्वी रुधिर से इस प्रकार लाल होगई जैसे चैत्र में पलाशपुष्प फूल कर लाल हो जाता है । यमरूपी समुद्र में पहुँचने वाली शोणित की नदी बड़े प्रभाव से बह चली । जिस नदी में मांसही कीचड़ हो गया है और कटे हुए शिर उस नदी के मछली व मगर हैं और हाथ पैर आदि उस नदी के किनारे के सेवार हैं । उस तटपर बैठे मांस भोजन करने वाले गिद्ध आदि पक्षी हंस सारस के समान हैं । और मेदरूपी फेन से वह आकीर्ण है और उसी आवर्त रूपी शब्द से शब्दायमान है । उस युद्धभूमी मयी नदी में राक्षस व बानर तैरनें लगे । इसके बाद रथ पर बैठा हुआ प्रहस्त बानरों पर बाण की बर्षा करने लगा तबतक वेगवान् नील को पर्वत की शिला लिये देखकर उनके सन्मुख दौड़ा और नील के ऊपर घोर बाणों की बर्षा करने लगा । क्रोधित सर्प के समान अग्नि के समान प्रज्वलित बाणों से नील को बेधने लगा । परम दुर्धर्ष प्रहस्त को मद्य कपि नील वृक्ष को उखाड़कर उसकी ओर गर्जने लगे और राक्षस पुंगव प्रहस्त गर्जना करता हुआ बाण वृष्टि करने लगा । उस दुरात्मा राक्षस के बाण वेग को रोकने में किसी को सामर्थ्य नहीं रही । इस प्रकार दुरासद प्रहस्तकी बाणबर्षा को महाकपि नील सहसा सहन करने लगे । और क्रोधित होकर शाल वृक्ष से प्रहस्त के रथ के घोड़ों को मारे और उस राक्षस के धनुषको तोड़ दिये जब राक्षसकी धन्वा टूटगई तबवह राक्षस मुसल को लेकर रथ से उतर पड़ा और दोनों आपस में लात मुका नख दांत आदि से मतवाले हस्ती के समान लड़ने लगे । वृत्रासुर दैत्य और देवतों के राजा इन्द्रके समान दोनो शूरवीर अपने यश के लिये युद्ध करने लगे । इसके बाद प्रहस्त

ने अपने मुसल से नील के ललाट में मारा जिस आघात से स्रोत के समान रुधिर बहने लगा। शोणित से आर्द्र नील एक महा वृक्ष को लेकर प्रहस्त के हृदय पर मारा! तौभी उस बलवान राक्षस को कुछ पीड़ा नहीं पहुंचा। फिर भी वह क्रोधित राक्षस नील के और मुसल को लेकर दौड़ा। उस राक्षस के पराक्रम को देखकर बानरों मे श्रेष्ठ नील एक बड़ी भारी पत्थर की शिला को लेकर प्रहस्त के मस्तक पर मारा बज्र के समान उस शिला को लगतेही जैसे वृक्ष काटने से भूमिपर गिरता है वैसे प्रहस्त श्रीसत्व से हीन होकर और इन्द्रियों के बल से निर्बल होकर पृथिवी पर गिर पड़ा। मुंह से रुधिर को गिराता हुआ और शरीर से भी रक्त को बहाता हुआ गिर पड़ा। महा बली प्रहस्त के मरण को देखकर राक्षसी सेना उदास व हतास होकर लंकापुरी को लौटी सेनापति प्रहस्त के मरण शोकसे राक्षसों का हृदय विशीर्ण होगया। जैसे सेतु बन्धन से समुद्र का जल विशीर्ण होजाता हैं। मुख्य सेनापति को नाश होने से राक्षसगण निरुद्योग होकर चुपचाप लंकापुरी को चले गये। इसके बाद समर को जीतने वाले बानरों में श्रेष्ठ नील की प्रशंसा सुग्रीव आदि बानर करने लगे और प्रहस्त के मरने पर रामचन्द्र व लक्ष्मणजी प्रसन्न होकर उनकी बड़ाई करने लगे॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे अष्टपंचाशः सर्गः॥५८॥

राक्षस व बानरों के युद्ध में बानरों के हाथ से प्रधान सेनापति प्रहस्त के मरण को देखकर समुद्र के समान वेग वाले और भयंकर युद्ध करने वाले राक्षसराज की सेना भागकर लंकापुरी को गई। वहां जाकर प्रहस्त के मरने का समाचार रावण से कहा राक्षसराज रावण प्रहस्त के मरण को सुनकर क्रोधागार में प्रविष्ट हुआ और शोक से आकुल होकर उन राक्षसों से बोला कि अरे क्या तुमलोग शत्रु से अवज्ञा को सहन करते हो यह बानर क्या करेगे। जो इन्द्र के बल को भी नाश करने वाले हमारे सेनापति बानरों से मारे गये। अब में स्वयं इस

अद्भुत संग्राम को देखने के लिये चलूंगा और आजही वानरी सेना व लक्ष्मण के सहित रामचन्द्र को अपने बाण से भस्म करूंगा जैसे वन की अग्नि वन को जला देती है । इस प्रकार राक्षसों से कहकर राक्षसराज रावण अश्व से संयुक्त उत्तम रथ पर सूर्य वा अग्नि के समान बैठा और शंख भेरी मृदंग आदि बाजा बजने लगे और उसी बाजे के मध्य में राक्षस शूरवीर सिंह के समान गर्जने लगे । इसके बाद रावण के मन्त्रीयों ने पवित्र स्तवन और पूजन आदि करके राक्षसेन्द्र रावण को विदा किये । वह रावण रथपर इस प्रकार शोभा देनेलगा जैसे पर्वतों के ऊपर काले रंग के बद्दल दिखाई देते हैं और उसके नेत्र अग्नि व सूर्य के समान हैं । राक्षसों की सेना के मध्य में ऐसी शोभा को पहुंचा जैसे देवताओं के मध्य में शिवजी की शोभा होती है । इसके बाद महा बलवान रावण एकाएक अपने भवन से निकल कर शिला व वृक्ष को हाथ में लिये युद्ध के अभिलाषी बल वानरों को देखा । बड़ी विशाल व प्रचण्ड राक्षसी सेना को देखकर भुजगेन्द्र बाहु रामचन्द्रजी अस्त्र शस्त्र विद्या में कुशल विभीषण से पूंछने लगे । अनेक प्रकार की ध्वजा व पताका से भूषित और अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र से युक्त महेन्द्रपर्वत के समान विशाल व निर्भय राक्षसों की सेना से युक्त कौन आता है । श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर इन्द्र के समान पराक्रमी विभीषण रावण की सेना का वृत्तान्त रामचन्द्रजी से कह सुनाये कि यह महादेह धारी महात्मा अकंपन अर्थात् जो पहिले मरा है उससे यह दूसरा है देखिये कि ताम्र के समान उसका दिव्य मुख है और अपने शरीर के भार से हाथी के मस्तक को हिला रहा है यह जिसके रथ की पताका पर सिंह बैठा है और वह स्वयं रथ पर बैठकर इन्द्र के समान धन्वा को चढ़ाये है और हाथी के समान जिसके उग्रदन्त हैं वह राक्षसों में प्रधान इन्द्रजीत है और यह जो धनुष बाण को लिये विंध्यगिरी के समान विशाल शरीर से रथपर बैठा है यह राक्षसों में शूरवीर अति कायनाम का राक्षस है । और जिसकी लाल नयन हैं वह हाथी पर

बैठा है उस हाथी के घंट के शब्द से समर भवन शब्दित होरहा है और जो गज व खरके समान गर्जता है वह महोदर नाम राक्षस राज का मन्त्री है। और जिसके रथ के घोड़े स्वर्ण के अलंकार धारण किये हैं और लाल रंग की विशाल काय से रथपर बैठा है तथा हाथ में त्रास को लिये है वह पिशाच नाम का राक्षस है। और जो तीक्ष्ण त्रिशूल को हाथ में लिये एक उत्तम बैल पर चढा है जिसका प्रकाश चन्द्रमा के समान है वह दूसरा त्रिशिरा नाम का राक्षस है और यह जो वज्र के समान काला रंग और दृढ हृदय और धनुष पर बाण को रखे हुए रथपर जो आता है वह कुंभ नाम का राक्षस है और जिसके लंबे दांत सोने के समान चमकते हैं और एक उत्कटपरिघ को हाथ में लिया है वह राक्षसों में श्रेष्ठ निकुंभ नाम का राक्षस है। और जो रथपर बैठा हुआ धनुष बाण खड्ग आदि को लिये है ध्वजा पताका से रथ को विभूषित किये है और अग्नि के समान जिसका स्वरूप है यह माया युद्ध करने वाला मायावी रावण का पुत्र नरान्तक है और जिसके यह अनेक प्रकार के व्याघ्रउष्ट्र सिंह आदि के मुख हैं और भूतों की सेना जिसके संगहै शिव के समान जिसके विषमनेत्र हैं वह देवताओं के अभिमान को नाश करने वाले राक्षसों के राजा हैं। जिनके छत्र चन्द्रमा के समान उज्वल हैं और भूतों की सेना को लिये जो साक्षात् रुद्रके समान दिखाई देते हैं वह राक्षसों के राजा हैं। और जो पर्वतों में श्रेष्ठ विन्ध्यगिरी के समान भयंकर शरीर को धारण करने वाले और इन्द्रकुबेर यम के अभिमान को हरण करने वाले राक्षसों के राजा रावण हैं मुख से लेकर प्रत्येक अंग का वर्णन रावण का है। इस प्रकार विभीषण के वचन को सुनकर रामचन्द्रजी बोले, अहो महापराक्रमी राक्षसों का राजा रावण यही है। इसका स्वरूप तो साक्षात् सूर्य के समान दर्शनीय है। इसके स्वरूप के समान देवता दैत्य व गंधर्वों में किसी का नहीं होगा। इस राक्षस राज के जितने शूरवीर हैं सभी पर्वताकार शरीर वाले हैं और सभी पर्वत से युद्ध करने वाले तथा अनेक

प्रकार के अस्त्र शस्त्र को जानने वाले हैं । यह रावण तो भूतों की सेना सहित साक्षात् यमराज के समान है । बड़े हर्ष की बात हुई जो यह पापी रावण आज हमारे सन्मुख आया । सीताजी के हरण करने से हमको जो क्रोध हुआ है वह क्रोध आज इस राक्षसेन्द्र पर शान्त होगा। यह कहकर रामचन्द्रजी लक्ष्मण के सहित खड़े होगये । इसके राक्षसेन्द्र अपनी महती राक्षसी सेना लेकर निस्विशंक चारो ओर खड़ा होगया । और राक्षसों से बोला कि तुम लोग हमारे सहित इस रणभूमि में आये हो तो इन वानरों के छिद्र को जानकर सहसा इन बानरों से लंकापुरी को मुक्त करो । जैसे बड़ी मछलियों से समुद्र का जल क्षुभित होता है वैसे रावण अपने मन्त्रियों से इस प्रकार कहकर समुद्र के समान बानरी सेना को क्षुभित करने के लिये प्रयत्न करने लगा राक्षसराज रावण को धनुष बाण लिये बानरों पर प्रहार करते देखकर एक वृक्ष को उखाड़ कर बानरों के रजा सुग्रीव रावण की ओर दौड़े । इसके बाद अनेक वृक्ष व पर्वत व शिला आदि को सुग्रीव आदि बानरों ने रावण पर चलाया । रावण उन सबको आते देखकर अपने तीक्ष्ण बाणोंसे सब वृक्ष पर्वत शिला आदिको काटकर पृथिवी पर गिरा दिया और एक बाण सन्धान करके सुग्रीव को मारा, जिस बाण के लगते ही सुग्रीव मूर्छित होकर पृथिवी पर गिरपड़े । इसके बाद गवाक्ष गवय सुषेण ऋषभ ज्योतिमुख नल आदि बानर अनेक पर्वतों को लेकर राक्षसराज रावण पर चलाये परन्तु रावण ने अपने बाण से उन सब पर्वतों को भी काटकर गिरादिया और बानरों को अपने बाण जाल से आकुल करदिया । रावण के अमोघ बाण से पीड़ित बानरगण श्रीरामचन्द्रजी के शरण में आये । उन बानरों की बाण से आकुलता देखकर तीनो लोक के शरण्य धनुर्धरियों में श्रेष्ठ श्रीलक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजी के शरण में आये और हाथ जोड़कर समाचार को कह सुनाये । और और बोले हे रामचन्द्रजी ! इस दुरात्मा रावण को बध करने के लिये समर्थ हमको आज्ञा दीजिये । इस प्रकार उत्साह गंभीर

और उदारता युक्त लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर बानरों की रक्षा के लिये श्रीरामचन्द्रजी ने लक्ष्मणजी को समरांकण में जाने की आज्ञा दिये। और बोले, हे लक्ष्मण ! जाओ परन्तु रावण अद्भुत पराक्रमी है और समर में दुर्धर्ष है उसकी सहायता देव गण भी करते हैं इसलिये विचार पूर्वक अपनी रक्षा करते रहना उसके प्रहार के छिद्र को देखते रहना और अपने प्रहार के अवसर को देखकर लक्ष्य करते रहना और समाहित होकर संग्राम में प्रवृत्त हो अपनी शरीर को रक्षा करते रहना। श्री रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी उनको प्रणाम किये और समर भूमि में चलने को प्रस्थित हुए। यहां समरस्थल में आकर हाथी के सूंड के समान दृढ़ व विशाल रावण की भुजा बानरों पर बाण की बर्षा कर रही है और उसके कठोर बाणों से बनरों के अंग कट रहे हैं। इस प्रकार गवाक्ष आदि बानरों की दशा देखकर हनुमानजी उसके बाण जाल को निवारण करके रावण के समीप गये और उसके रथ को पकड़ कर अपनी दाहिनी भुजा उठाकर बोले, कि देवता गंधर्व यक्ष राक्षस आदि से अपने मरण को जानकर इनके हाथ से न मरने का वरदान तुमने ब्रह्माजी से लिया किंतु आज बानरों के हाथ से तेरी मृत्यु तेरे सन्मुख खड़ी है। यह हमारी दाहिनी भुजा पांच अंगुलियों से युक्त तुमारे सामने खड़ी बहुत दिनसे पालित तुमारी शरीर को आज यह भुजा नाश करेगी। भीम पराक्रमी रावण हनुमानके बचनको सुनकर क्रोध से आंख को लाल किये बोला, कि अपनी कीर्ति को स्थिर चाहते होतो हमारे ऊपर प्रहार करो नहीं तो मैं तुमको यम लोक में भेजूंगा। रावण के बचन को सुनकर वायु पुत्र बोले, कि मैंने पहिले तेरे पुत्र अक्ष को मारा है उसको स्मरण करो। हनुमानजी के इस प्रकार बचन को सुनकर राक्षसेश्वर रावण हनुमान को एक मुक्का मारा जिसको लगतेही हनुमान मूर्छित हो गये। थोड़ी देर में मूर्छा को बिताकर अपने मन को समाहित किया और क्रोध पूर्वक रावण के हृदय में एक मुक्का ऐसा मारे कि पर्वत के समान हिल पड़ा और घोर मूर्छा को अंगीकार

किया। मूर्छित रावण को देखकर देव गण तथा बानर गण हनुमान की स्तुती करने लगे। मूर्छा से निपट कर रावण समस्थल में हनुमान से बोला कि तुम अच्छे पराक्रमी हो। रावण के इस प्रकार बचन को सुनकर हनुमानजी बोले कि हमारे पराक्रम को धिक्कार है जो तू फिर भी जीवित है। अबकी तो हमने हलके हाथ से मारा है। नहीं तो यह हमारा मुक्का तुमको यम लोक में ले जायेगा। इसभांति हनुमान के बचन से क्रोधकी आग में जलता हुआ दहिनी हाथ की मुष्टिका को घुमाकर बड़े वेगसे हनुमानजीके हृदयमें मारा जिससे वह मूर्छित होकर बार बार चलित हो गये। महाबली हनुमान को विह्वल देखकर अपने रथ पर बैठा और शीघ्र बानरों के सेनापति नील के समीप में पहुंचा और सेनापति नील पर अनेक बाणोंकी बर्षा किया। रावण के बाण सन्धान को देखकर सेनापति नील एक हाथ से पर्वत के शिखर को लेकर उस रावण पर चलाये। तब तक तेजस्वी पराक्रमी हनुमान मूर्छासे निवृत्त होकर युद्ध की इच्छा करने वाले रावण को न देखकर क्रोधयुक्त इस प्रकार बोले, हे रावण! एकके संग युद्धको बिसर्जित करके दूसरे के साथ लड़ना उचित नहीं है। हमारे साथ तुमारी लड़ाई होना चाहिये सो तुम हमको छोड़कर जो नील से युद्ध करते हो यह उचित नहीं है। परन्तु हनुमान के बचन पर ध्यान न देकर राक्षसेन्द्र नील की शिरा को सात बाण मार टूकड़ा २ करके पृथ्वी में गिरा दिया। उस पर्वत को निष्फल गिरते देखकर कोप सज्वलित नील अश्वकर्ण आम्र आदि के अनेक वृक्षों को उखाड़कर रावण को मारने लगे। परन्तु राक्षसेन्द्र रावण अपने बाणों से उनसबोंको काट कर गिरा दिया और नील के उपर समूह बाणों की बर्षा करने लगा। उसके बाण जालसे आकुल नील अपने रूप को छोटा बनकर रावणकी ध्वजापर जाकर बैठे ध्वजाके उपर नीलको देखकर क्रोधकी आगसे रावण ज्वलित हो गया, और ध्वजापर बैठकर प्रलय काल के मेघ के समन नील गर्जना करने लगे। और ध्वजा के आगे धनुष के आगे किरटि के आगे घूमते

नील को देखकर लक्ष्मण हनुमान व रामचन्द्रजी विस्मित हो गये। बानरों के सेनापति नील के चरित्र को देखकर रावण विस्मित होकर अग्नि बाण को लेकर नील को लक्ष्य करने लगा और नील के इस अद्भुत कर्मसे बानरी सेना प्रसन्न होकर नाद करने लगी। बानरों के घनघोर शब्दसे संभ्रान्त रावण अपने कार्यसे संरुद्ध होगया। अग्नि के बाण को हाथ में लिये रावण ध्वजापर बैठे नील को देखकर बोला. हे बानर! तूँ अत्यन्त मायावी है अपना लघुरूप बनाकर अनेक प्रकारके चरित्र दिखा रहा है। हे बानर! यदि तुम्हारेमें सामर्थ्य होतो मैं अस्त्र छोड़ता हूं, तूं अपने जीवनकी रक्षा कर। यह हमसे छोड़ा गया अस्त्र तुमारे जीवन को संहार कर देगा। ऐसा कहकर महाबाहु राक्षसेश्वर सेना पति नील पर अग्नि बाण चलाया। वह अग्नि बाण जाकर नील के हृदय में लगा। जिस बाण को लगतेही बानरोंके आधिपति और अग्नि के पुत्र नील जले नहीं किन्तु मूर्छित होकर पृथ्वी में गिर पड़े। क्योंकि आग में आग जलताही नहीं है। नील अग्नि के पुत्र थे इसलिये पिता के माहात्म्य से अग्नि बाण का प्रभाव नील पर नहीं पहुंचा। केवल उस बाणसे उनको मूर्छाही आई। इधर रावण सेनापति नील को मूर्छित देखकर रण में उत्सुक राक्षसों के राजा रावण रथसे लक्ष्मण की ओर दौड़ा। संग्राम के मध्य में उपस्थित होकर प्रतापी राक्षसेन्द्र बनरोंको वारण करके लक्ष्मण की ओर धनुष को फैलाया रावणको धन्वा चढ़ाये देखकर लक्ष्मणजी बोले, हे निशाचर! मैं यहां हूं तुम भी यहां आओ तुमको इन बानरों से क्या होगा? धनुष बाण को चढ़ाये रावण लक्ष्मणजी के उग्र बचन को सुनकर क्रोधित राक्षस बचन को बोला, हे राघव! आज बड़े आनन्द की बात है जो यम लोक में जाने के लिये मेरे सन्मुख खड़े हो, हमारे बाण जाल से तुम इसी समय यम लोक को जावोगे। रावण के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी बोले, हे राक्षस! तुमारे वीर्य बल प्रताप और पराक्रम को जानता हूं। धनुष बाण लेकर खड़ा हूं। सन्मुख आओ बड़ाई करनेसे क्या

होगा ? इस प्रकार लक्ष्मणजी के वचन को सुनकर राक्षसों के अधिपति रावण सात मुख वाले बाण को छोड़े उस रावण के बाण को लक्ष्मणजी अपने बाणों से उसको काटकर गिरा दिये । अपने बाण को निष्फल जानकर क्रोधित राक्षसेश्वर लक्ष्मणजी पर दूसरा बाण चलाया । लक्ष्मणजी भी रावण के बाण को खण्डन करते हुए उस पर बाणों की वर्षा करने लगे और रावण के बाणों को अपने बाण से खण्डन करने लगे । रावण अपने बाणों को नाश होता देखकर विस्मय व क्रोध से महा तीक्ष्ण बाण को चलाया । लक्ष्मणजी उसके बाण को काट कर महेन्द्र के वज्र के समान वेग वाले बाण को रावण के बध के लिये छोड़े रावण अपने बाण से लक्ष्मण के बाण को काट कर लक्ष्मणजी के ललाट में ब्रह्मा से पाये अमोघ ब्रह्म बाण से मारा । उस ब्रह्म बाण को लगतेही लक्ष्मणजी मुहूर्त भर मूर्छा को पाकर पुनः सचेत होगये और अपने अमोघ बाण से रावण के बाण को टुकड़ा टुकड़ा कर दिये । और अपने तीन मुख वाले तीन बाण रावण को मारे जिस बाण के लगतेही रावण मूर्छित होकर गिर पड़ा । उसके शरीर से रुधिर बहने लगा । और अपने जीवन से निराश होगया । किसी प्रकार मूर्छा से छूटकर अमोघ शक्ति वाले ब्रह्म दण्ड को छोड़ने का विचार किया राक्षसों के स्वामी रावण वानरों को त्रास देने वाली ब्रह्म शक्ति को लक्ष्मणजी पर फेंका । उस अमोघ ब्रह्मदण्ड को अपने ऊपर आते देखकर लक्ष्मणजी ने उस ब्रह्मदण्ड को हाथ से पकड़कर भूमि में गिरा दिये । पृथिवी में गिरने से वह शक्ति आग के समान ज्वाला का विस्तार किया । क्योंकि लक्ष्मणजी विष्णु के अंश थे इसलिये ब्रह्मशक्ति उनको पीड़ा नहीं पहुंचा सकी । लक्ष्मणजी उस ब्रह्मशक्ति को हाथ से लेकर समुद्र में फेंक दिया और लक्ष्मणजी के बाण से विकल राक्षसेन्द्र अपनी भुजाओं से लक्ष्मणजी को पकड़ लिया और कहने लगा कि मैंने जिन भुजाओं से हिमालय मन्दराचल सुमेरू आदि पहाड़ों को उठाकर फेंक दिया और त्रैलोक्य के सहित देवताओं को पीड़ा दिया

सो आज इन भुजाओं से यह भरत के लक्ष्मण का नाश नहीं होता है। ब्रह्म शक्ति को भी मैंने इस लक्ष्मण के हृदय में मारा परन्तु वह ब्रह्म शक्ति इस पर विफल होगई इससे जान पड़ता है कि यह सब अवश्य विष्णु के अवतार हैं। इसके बाद दानवों के दर्प को नाश करने वाले लक्ष्मण उस रावण को भी अपनी भुजाओं से इस प्रकार दबाये जिससे वह राक्षस अधमरों के समान होगया। इसके बाद क्रोधित हनुमान दौड़कर वज्र के समान एक मुक्का उस रावण हृदय में मारे जिससे वह अचेत होकर रथ से भूमि में गिर पड़ा और उसके मुख, नेत्र, कर्ण आदि से रुधिर बहने लगा। वह राण इस प्रकार अचेत होगया कि उसको कुछ भी न जान पड़ा कि हम कहां हैं। रावण को अचेत देखकर देवता ऋषि गंधर्व बानर आदि लक्ष्मण व हनुमान की बड़ाई करने लगे। और श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण व हनुमान को बुलाकर उनके अंग में लगे हुए बाणों से उन्हे आरोग्य किये और ब्रह्मशक्ति को लेकर रावण की ओर लौटा दिये। इधर महापराक्रमी रावण मूर्छा हट जाने के बाद पहिले के समान धनुष बाण को उठालिया और बानरों पर लक्ष्य करने को विचारने लगा और शत्रु सूदन लक्ष्मण को आरोग्य देखकर उनको विष्णु का अवतार जाना। बानरी सेना के मध्य में श्रीरामचन्द्रजी को देखकर रावण बड़ी शीघ्रता से उनकी ओर दौड़ा। राक्षस को फिर धावा करते देखकर हनुमान श्रीरामचन्द्रजी से बोले—हेभगवन्! आप हमारे पीठ पर चढ़ कर इस राक्षस को दण्ड दीजिये क्योंकि यह तो रथपर बैठा है। विष्णु जैसे गरुड़ पर चढ़कर दैत्यों का नाश करते हैं वैसे आप हमारे पीठपर बैठ कर इस राक्षस का बध करिये। हनुमान के बचन को सुनकर एकाएक रामचन्द्रजी महा कपि हनुमान के पीठपर चढ़े और सेनाओं के मध्य में रथ पर बैठे रावण को श्रीरामजी देखे। जैसे आयुध लिये विष्णु पर बाणासुर दौड़ा वैसेही श्रीरामचन्द्रजी को देखकर रावण दौड़ा। तब श्रीरामजी अपने धनुष को वज्र गिरने के समान शब्द करके गंभीर बाणी से रावणसे बोले, अरे पापी! जो तूने हमारा अपमान किया है उसके बदले

आज रण भूमि में खड़ा रह। हेराक्षससिंह! कहीं भी जाने से तेरा प्राण नहीं बचेगा। यदि तुम चाहो कि हम इन्द्र वरुण कुबेर यम सूर्य अग्नि अथवा ब्रह्मा या साक्षात् शिव के शरण में जाने से और उनके रक्षा करने से हम बच जायँगे अथवा दशो दिशाओं में जाने से भी तुम हमारे सन्मुख से जीवित नहीं रह सकोगे। जो तुम्हारी ब्रह्मशक्ति के लगने से लक्ष्मणजी मूर्छित होगये इसलिये मैं स्वयं संग्राम में आकर लक्ष्मणजी के दुःख की शान्ति के लिये इस समरमें पुत्र पौत्र सहित तुमारा काल होऊंगा। अर्थात परिवार सहित तुम हमारे हाथ से नाश होओगे। इस हमारे श्रेष्ट बाण को देखो जिसने जन स्थान में चौदह हजार राक्षसों को नाश किया है। श्रीरामचन्द्र जी के बचन को सुनकर क्रोधाविष्ट रावण अपने जन्मान्तर के बैर को स्मरण करता हुआ कालाग्नि के समान प्रभाव शाली बाण श्रीरामजी पर छोड़ा। श्रीरामचन्द्रजी रावण के बाण को अपने अंग में लगते देखकर एक बाण ऐसा मारे कि राक्षस का रथ ध्वजा पताका छत्र और उसके अनेक अस्त्र सब कट कर पृथिवी पर गिर पड़े। और इन्द्र के बज्र के समान कठोर बाण को श्रीरामजी रावण के हृदय में मारे। जैसे क्रोधित इन्द्र अपने शत्रु पर बज्र को छोड़ते हैं। जो रावण इन्द्रादि देवतों के बज्र से कभी क्षुभित नहीं हुआ रावण के ऊपर इन्द्र का बज्र विफल होगया। आज वही रावण रामचन्द्रजी के बाण से मूर्छित हुआ है कि उसके हाथ से उसकी धन्वा नीचे गिर पड़ी है। बाण के लगने से रावण को विह्वल देखकर श्रीरामजी एक बाण और मारे जिससे उसका किरीट व छत्र सब टूट गया और राक्षसेन्द्रका तेज निस्तेज होगया। इस प्रकार किरीट आदि से हीन रावण से श्रीरामजी बोले—हेराक्षसेन्द्र! तूने बड़ा अद्भुत व भयंकर कर्म किया है और बहुत से वीरों को मारा है इस धर्म युद्ध से यह हमारा बाण तेरे प्राण को अभी नहीं हरण करेगा। तुम इस रण भूमि से लंकामें जाओ वहांसे स्वस्थ होकर आओ तो हमारे पराक्रम को देखो। इस प्रकार श्रीरामजी के बचन को सुनकर रथ सारथी को नष्ट हो

जाने पर बाण से पीड़ित रावण एकाएक पुरी में प्रवेश किया। महा बली रावण को लंकापुरी में आने से श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजी को और उन वानरों के बाणके घाव को आरोग्य किये। देवतोंके शत्रु रावण के पराजय को रण में देखकर स्थावर जंगम सभी प्रसन्न होकर श्रीरामजी की स्तुति करने लगे॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे एकोनषष्ठितमः सर्गः॥५९॥

रामचन्द्रजी के बाण से मूर्छित रावण अपने अभिमान को नष्ट जानकर चिन्ता के मारे इस प्रकार आकुल हुआ जैसे सिंह को देखकर हाथी डरती है जैसे गरुड़ से सर्प भय खाते हैं वैसे रामचन्द्रजी से रावण कापने लगा और ब्रह्मदण्ड के समान रामजी के बाणों को स्मरण करने लगा। इसके बाद अपने सिंहासन पर बैठकर सभासद राक्षसों की ओर देखकर बोला, कि हमारी तपस्यासे जो कुछ हमको वरदान था जिस वरदान के प्रभाव से हमारे अमोघ अस्त्र शत्रुओं को जीत सकते थे वह सब अस्त्र आज निष्फल हुए और संग्राम में मनुष्य के हाथ से हमारा पराजय हुआ। आज ब्रह्माजी का बचन हमको सत्य जान पड़ता है ब्रह्माजी यह कहे थे कि मनुष्यके हाथ से तुमारा मरण होगा। हमने बरदान काल में सबको जीतने का बरदान तो मागा परन्तु मनुष्य को जीतने का बरदान नहीं मागे हैंइस कारण मनुष्य से हमको भय है। पूर्व समय में इक्ष्वाकु राजा के बंश में अनरण्य नाम के राजा हुए उनकी स्त्री वेदवतीको मैंने धर्म नास करनेमें उद्यत हुआ तब महात्मा अनरण्य ने मुझे श्राप दिया कि हेराक्षसों में अधमइसी स्त्री से हमारे बंश में उत्पन्न पुरुष से परिवार सहित तेरा मरण होगा। वही बेदवति यह जानकी के नाम से जनके के यहां उत्पन्न हुई हैं। और इसी प्रकार का शाप पार्वती और रंभा अप्सरा तथा वरुण देवता की कन्या पुंजिस्थला ने भी दिया है कि स्त्री के कारण तेरी मृत्यु होगी। सो आज वही शाप का भय हमको उपस्थित है ठीक है इसलिये इसका उद्योग करना चाहिये। अब इसमें क्या उपाय होवे कि

यह राक्षस गण जाकर देवता व दैत्यों के अभिमान को भंजन करने वाले कुम्भकरण को जगावें । और उनसे कहैं कि प्रधान सेनापति प्रहस्त समर में मारे गये और राक्षसेन्द्र का पराजय हुआ यह राक्षस कितने उनके महल में जाकर और कितने बाहर से शंख भेरी और मृदंग आदि को बजाकर उन्हें निद्रा से जगावें। क्योंकि अनेक प्रकारके सुख भोगसे निश्चिन्त कुंभकर्ण निद्रा में अचेत हैं। क्योंकि वह तो छः मांसकी निद्रामें एक दिन जागते हैं उनको ऐसाही वरदान है अभी नव दिन हुआ कि सीता हरण और हनुमान के आगमन तथा सेतुबन्ध आदि के समाचार को सुने हैं इसलिये उनको निद्रा से जगाना चाहिये। वह राक्षसों में श्रेष्ट कुंभकर्ण युद्ध में इन दोनों राज कुमारों को वानरों के सहित अवश्य नाश करैंगे। यह कुंभकर्ण अत्यन्त बलवान राक्षसों में प्रधान है सो अपने सुख की इच्छा से सदा शयन किये रहता है। इसको जगाने से रामके इस दारुण रणका भय हमको नहीं होगा। अब इस प्रकार के दुःखको पड़ने पर भी सहायता को न मांगँ। वे राक्षसगण रावणके वचनको सुनकर सभ्रान्त होते हुए कुम्भकर्ण के स्थान पर पहुचे और रावण की आज्ञा से मांस व रक्त को आहार करनेवाले राक्षस गंध व माल्य तथा धूप और भोजन के योग्य वस्तुओं को लेकर कुम्भकर्ण के स्थान पर गये। जिस स्थान में कुम्भकर्ण रहता था वह स्थान गुहा के समान था और चौगोड़ योजन भरके विस्तारमें था और वह गुहा अच्छे पुष्प फलवाले वृक्षोंसे शोभित थी। कुम्भकर्णके श्वासको लगने से उसकी गुहा में प्रवेश करनेवाले रावणके आज्ञाकारी राक्षस मच्छड़के समान उड़ जाते थे। जैसे वायुके चलनेसे मसा आदि जीव जन्तु उड़जाते हैं वैसेही कुम्भकर्णकी श्वाससे महाबली राक्षस उड़कर बाहर आजाते पुनः लौट कर बड़े क्लेश से गुहा में प्रवेश करते थे। उस गुहा में जाकर रत्न से बनी बेदीपर शयन किये भयंकर पराक्रमी राक्षसों में सिंह कुंभकर्ण को रावण के दूतों ने देखा इस प्रकार निद्रा में अचेत

कुंभकर्ण को जगाने का उद्योग किया। भयानक रोम समूह को फहराये विषधर सर्प के समान पर्वतकी गुहाकी नाईं नासिका के छिद्रसे श्वांस लेते किरीट कुंडल को धारण किये कुंभकर्ण को राक्षसों ने देखा। इसके बाद रावण के मंत्रियों ने कुंभकर्ण के आगे मृगो महिष व बराह आदि के मांस की ढेर को लगा दिया और अनेक प्रकार के पक्वान को उसके सामने रखा इसके बाद अनेक कलश रक्तसे भरकर और अनेक मदिरा से भर कर रखा। इसके उपरान्त अगर चन्दन आदि को उसके अंग में लगाकर सुगंधित फूलों का माला गले में पहिनाया और गुग्गुल आदि की धूप देकर उसके स्तुति किया और राक्षसगण ताली बजाकर मेघ के गर्जने के समान चिल्लाने लगे। कितने राक्षस कुम्भकर्ण को जगाने के लिये महा शंख बजाने लगे। कुम्भकर्ण को जगाने के लिये राक्षसों ने शंख भेरी पणव आदि बाजों को बजाते अपने भी सिंह के समान शब्द करते थे। जिस भयानक शब्द से दिशायें भर गईं और जिस शब्द के सुनतेही आकाश से पक्षियों का पतन होने लगा परन्तु कुंभकर्ण की निद्रा नहीं खुली। जब इस प्रकार भयानक शब्द करने से कुम्भकर्ण नहीं जागा तब राक्षसों ने भुशुंडी मुसल व गदा मुद्गर को लेकर कुम्हकर्ण के वक्षस्थल में मारने लगे तौभी उसकी निद्रा नहीं खुली। विशेषता यह की उसके श्वासके आगे राक्षसों का ठहरना कठिन सा होगया। परन्तु एक हाथीके समान व दस हाथी के समान बल रखने वाले दशहजार राक्षस एक साथ उसको रौंदकर बाजा बजाते हुए सिंह के समान चिल्लाये तौभी उसकी नींद नहीं खुली। जब राक्षसों के जगाने से कुम्भकर्ण की निद्रा नहीं खुली तब राक्षस हार मानकर गदहा घोड़ा ऊंट हाथी आदि जन्तुओं को ले जाकर उसके अंग को रौंदाने लगे और शंख भेरी मृदंग आदि बाजों को ऊंचे ताल स्वर से बजाने लगे और कितने राक्षस मुद्गर गदा आदि से उसको मारने लगे। इस प्रकार राक्षसी ध्वनि से लंकापुरी पूर्ण होगई। परन्तु कुम्भकर्ण की निद्रा नहीं

खुली। क्योंकि ब्रह्मा के शाप के कारण वह राक्षस अति निद्रा से मग्न था। कुम्भकर्ण को न जागने से क्रोधित निशाचर उसको जगाने की दूसरी उपाय करने लगे। कितने राक्षस तो बड़े बड़े दंड को लेकर भेरी बजाने लगे, कितने सिंह नाद के समान नाद करने लगे। कितने कुम्भकर्ण के केशों को पकड़कर खींचने लगे। कितने उसके कानोंमें घड़ों से जल छोड़ने लगे। और बलवान् राक्षस गदा व मुद्गर आदि उसके शिरपर हृदय में और शरीर पर उसको पीटने लगे। तौभी वह राक्षस निद्रा से मुक्त नहीं हुआ। इसके बाद राक्षसों ने सोचा कि अब हम लोगों की गति नहीं है इसलिये दूसरे उपाय से इसको जगाना चाहिये, इसको न जगाने से राक्षस राजका दुःख नहीं छूटेगा। यह सोचकर राक्षसों ने एक हजार बानरों को उसके ऊपर चढ़ाकर रौंदाया तब दूसरे जीव के स्पर्श को जानकर वह राक्षस उसी समय निद्रा से मुक्त होकर उठबैठा। क्षुधा से पीड़ित होकर जंभाई लेने लगा। जैसे सुमेरु पर्वत पर उदित सूर्य की शोभा होती है वैसेही बारबार के जंभाई लेने से सुमेरू पर्वत के समान कुम्भकर्ण के मुख विवर को राक्षसों ने देखा। उसको निद्रा छोड़कर उठते भरमें राक्षसों को इतना भय हुआ जैसे काल को देखकर प्राणियों को भय होता है। अग्नि तथा सूर्य के समान प्रज्वलित व दीप्तिमान कुम्भकर्ण के नेत्र को देख कर राक्षसों ने मद्य मांस व रुधिर अनेक पशुओं का देने लगे और निशाचर शिरोमणि उसको भक्षण करने लगा। जब मृग महिष वराह आदिके मांस व रुधिर तथा अनेक प्रकारके मदिरासे संतुष्ट कुम्भकर्ण को जानकर रावण से भेजे गये राक्षस उसके चारोओर खड़े होकर उसकी स्तुति करने लगे। निद्रा से और मदिरापान से आंख को लाल किये चारो ओर देखता हुआ उन राक्षसों की ओर देखा। इसके बाद राक्षस सिंहकुम्भकर्ण राक्षसों के कुशल क्षेम को पूछने के लिये और कारण अपने जगाने से विस्मित हो उन राक्षसों से बोला, तुमलोगों आदर के सहित हमको क्यों जगाया है। राक्षसों का कुशल तो है

और राक्षसेन्द्र को कुछ भय तो नहीं है। अथवा हमारे जानमें शत्रुओं से कुछ भय राजा को अवश्य है जिससे आपलोगों ने हमको शीघ्र जगाया है। आज मैं राक्षसेश्वर के भय को नाश करूंगा, कहें तो महेन्द्र पर्वत को चूर २ करूं अथवा अग्निको शीतल कर सकता हूं। क्योंकि हमारे समान बीर पुरुष थोड़े कारण राजों के यहां नहीं बुलाये जाते इसलिये हमको जगाने का कारण कहो। शत्रु के अभिमान को नाश करने वाले कुम्भकर्ण के बचन को सुनकर रावणका मन्त्री यूपाक्ष हाथ जोड़कर बोला, हे देव! देवताओं से हम लोगों को कुछ भी भय नहीं है हे राजन्! इस समय हम लोगों को मनुष्य से भय हुआ है। जो पीड़ा देवता व दानवों से नहीं थी वह मनुष्य से हुई है। पर्वताकार शरीर वाले राक्षस लंकापुरी को घेरकर खड़े हैं सीता के हरण से दुःखी रामचन्द्र से राक्षसों का नाश हुआ चाहता है। पहिले एक बानर आकर इसपुरीको जलाया और अक्षकुमार को मारा था। इस समय राम के युद्ध में देवतों के त्रास देनें वाले राक्षसराज स्वयं संग्राम में रामबाण से मूर्छित होकर समर भूमि से लौट आये। यूपाक्ष के बचन से राक्षसेश्वर का पराजय सुनकर मुख बाये कुम्भकर्ण बोला, हे यूपाक्ष! बानरी सेना सहित लक्ष्मण व राम को आज संग्राम में जीत कर रावण का दर्शन करूंगा। बानरों के रक्त मांस से राक्षसों को तर्पण करूंगा और राम लक्ष्मण के रक्त को मैं स्वयं पान करूंगा। अभिमान भरी कुम्भकर्णकी बातोंको सुनकर राक्षसोंमें मुख्य महोदर हाथ जोड़ कर बोला, हे स्वामी! पहिले रावणके बचनको सुनकर गुण व दोषका विचार करिये पीछे संग्राममें जाकर शत्रुकेपराजय करनेका उद्योग करिये। महोदरके बचनको सुनकर राक्षसोंसे आवृतमहाबली कुम्भकर्ण रावणकेसमीप चलनेको प्रस्तुत हुआ। तब तक कुछ राक्षस आगेसे रावणके भवनमें आकर सिंहासन पर बैठे रावण से हाथ जोड़कर वे सब राक्षस बोले, हे राक्षेश्वर। आपके भाई कुम्भकर्ण निद्रा से जागे हैं और युद्ध करने के लिये समर भूमि में जाना चाहते हैं इसलिये आपके दर्शन को भी

चाहते हैं । रावण कुम्भकर्ण को प्रबुद्ध सुनकर प्रसन्नता पूर्वक राक्षसों से बोला, कि मैं भी कुम्भकर्ण को देखना चाहता हूं यथा बिधि उनकी पूजा करके लिवा आवो । रावण के बचनानुसार वह सब राक्षस फिर कुम्भकरणके समीप आकर रावणके कहे हुए बचनको बोले, राक्षसोंके राजा रावण आपको देखना चाहते हैं, इसलिये आप उनके पास चलिये । दुर्धर्ष कुम्भकरण की आज्ञा पाकर शयनासन से उठकर स्नान किया और बलको बढ़ानेवाले पानको खाया । इसके बाद रावणकी आज्ञा से राक्षसों ने अनेक प्रकार के मद्यमांस को दिया कुम्भकरण अपने पराक्रम के अनुसार दोहजार घड़ा मदिरा और इच्छानुकूल मृगा महिष व बराह के मांस को भोजन करके पान खाते हुए तेज व बल से युक्त यमराज के समान राक्षसों के सहित रावणालय को चला इतनी विशाल कुम्भकर्ण की शरीर थी कि जिस के पग रखनेसे पृथवी हिलती थी । जैसेइन्द्र के स्थान पर अपने तेज से मार्ग को प्रकाशित करते ब्रह्माजी जाते हैं वैसेही कुम्भकरण अपने तेजसे लंकापुरी के मार्ग को प्रकाशित करता हुआ रावण के स्थान पर पहुंचा । कुम्भकरण को राक्षसों समेत देख कर नल बानर भय से संभ्रान्त हो कितने तो रामजी शरणको पुकार कर उनके समीपमें चले गये कितने भयके मारे पृथ्वी पर गिर पड़े कितने इधर उधर भाग गये और कुम्भकरण बानरी सेनाओं को देखता हुआ रावणका भाई कुम्भकर्ण समरभूमिको देखने लगा ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे एकषष्ठितमः सर्गः ॥६१॥

इसके बाद महा तेजस्वी व पराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी धनुष बाण को लिये किरीट मुकुट को धारण करने वाले कुंभकर्ण को देखे । जैसे पूर्व युग में पृथिवी को नापने के लिये भगवान ने विराट रूप धारण किया था उसी भांति इस राक्षस का बिशाल मूर्ति को देखकर श्रीरामजी चकित सा होगये और पर्वताकार उस राक्षस को देखकर बानरगण भय के मारे जिधर तिधर भागने लगे । बानरों की सेना को भागते और राक्षसी सेना को आगे बढते देखकर श्रीरामचन्द्रजी विभीषण से

पूछे कि किरीट मुकुट को धारण किये पर्वताकार शरीरवाले यह लंका के कौन बीर हैं इनकी शोभा तो इस तरह है जैसे बिजुली के सहित बद्दल शोभायमान होता है इस राक्षस को देखतेही हमारी सेना खलबला गई है, हेबिभीषण! इसको सत्य कहो यह कोई राक्षस है अथवा देवता है। इसके समान पुरुष तो हमने कभी स्वप्न में भी नहीं देखा है। इस प्रकार श्रीरामजी के बचन को सुनकर विभीषण बोले, जिसने संग्राम में इन्द्र को पराजित किया है यह विश्रवा का पुत्र कुंभकर्ण नाम है। इसके बराबर पराक्रमी और कोई राक्षस नहीं हैं। इस कुंभकर्ण को देवता दैत्य यक्ष गंधर्व राक्षस पिशाच पन्नग उरग विद्याधर आदि पराजित युद्ध में पराजय नहीं कर सकते हैं। महादेव आदि देवता भी इसको नहीं मार सकते हैं। हेरामजी! और राक्षसों को बरदान पाने से बल है और यह राक्षस स्वभाव से बलवान है। यह कुंभकर्ण गर्भ से बाहर होतेही क्षुधा से पीड़ित होकर हजारों प्रजाओं को भक्षण किया। उस राक्षस के भक्षण करने के भय से पीड़ित प्रजा इन्द्र के शरण में जाकर इसके वृत्तान्त को कहा प्रजाओं के नाश को जान कर इन्द्र देवता अपना बज्र इसके ऊपर छोड़े, इन्द्र के बज्र को लगतेही महात्मा कुंभकर्ण क्रोधित हो गर्जना किया कि जिस गर्जन के शब्द से प्रजा और भी भयभीत होगई और कुंभकर्ण इन्द्रके सन्मुख जाकर उनके ऐरावत हांथी का दात उखाड़ कर इन्द्र के छाती में मारा, उसके लगतेही इन्द्र मूर्छित होगये। इन्द्र को मूर्छित देखकर देवगण भय से कांपने लगे। चेतन होने पर इन्द्रदेवता व प्रजाओंके साथ ब्रह्माजीके शरण में गये और कुंभकर्ण के जन्म लेने व प्रजाओं को पीड़ा देने का हाल कह सुनाये कि यदि यह राक्षस इतनी प्रजाओं को नित्य भक्षण करेगा तो थोड़ेही दिनों में संसार खाली हो जायगा। न्द्र के बचन को सुनकर ब्रह्माजी ने उस राक्षस का आवाहन करके उसको देखे, कुंभ को देखकर प्रजाओं की पीड़ा को निवारण करने के लिये उस राक्षस से बोले, कि निश्चय विश्रवा मुनि ने संसार को नाश करने के

लिये तुम्हें उत्पन्न किया है, इसलिये हम तुमको वरदान देते हैं कि आज से तुम मृतक के समान शयन करो । ब्रह्माजी के मुख से शाप को निकलतेही वह कुंभकर्ण मूर्छित होकर वहीं गिर पड़ा । कुंभकर्ण की यह दशा देखकर व्याकुलता पूर्वक रावण ब्रह्माजी से बोला, हेभगवन्! वृक्ष को लगाकर सोने के समान फल फूल के समय वृक्ष को काटना उचित है । रक्षक को इस प्रकार भक्षक नहीं होना चाहिये । आपका वचन भी मिथ्या न हो इसलिये इसके सूतने व जागने में कुछ काल की अवधि करना चाहिये । रावण के बचन को सुनकर ब्रह्माजी बोले, कि यह राक्षस छः महीना सूतैगा और एक दिन जागेगा । यह वही कुंभकर्ण एक दिन क्षुधित होकर मुख बाये पशु पक्षी मनुष्य आदि के के मांस को भक्षण करने के लिये आग की ज्वाला के समान रहता है । जब रावण संकट में पहुंचा है तब महा बली कुंभकर्ण को जगाया है उसके जगाने से यह भयानक मूर्ति वाला राक्षस कन्दरा से बाहर आया है और क्रोधित हुआ बानरों को भक्षण करने के वास्ते इधर उधर देखता है और कुंभकर्ण के भय से बानर भागते हैं । फिर युद्ध में उसके साथ कैसे लड़ैंगे । हेभगवन् ! आप इन बानरों से कहिये कि जिस विभीषिका देने के वास्ते रावण ने यन्त्र का प्रयोग किया था वह भय अब नहीं हैं इस वास्ते बानरोंको समाधान व निर्भय होना चाहिये विभीषण के बचन को सुनकर सेनापति नील से श्रीरामचन्द्रजी बोले– हेसेनापति ! इन सेनाओं को पहिले के समान समाधान कीजिये। यह बानरी सेना अपने अपने द्वारों पर स्थित रहे । और पर्वत वृक्ष शिला आदि अस्त्रों से युक्त रहें । श्रीरामचन्द्रजी के आदेश से सेनापति नील बानरी सेना को पहिले के समान एकत्र कर दिये । इसके बाद गवाक्ष शरभ हनुमान अंगद जांबवान आदि बानर वृक्ष पर्वत व शिला आदि अस्त्रों को लेकर व्यूह के सहित द्वार को रोक कर खड़े होगये । रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर निर्भय बानर राक्षसी सेना को त्रास

देते हुए गर्जना करने लगे। वानरी सेना हाथ में अस्त्र को लिये बड़े भयंकर बादल के समान गर्जने लगे ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे एकषष्ठितमः सर्गः ॥६१॥

वह राक्षस शार्दूल निद्रा व मद से आकुल होकर राज मार्ग की शोभा को देखते हुए विपुल पराक्रमी कुंभकर्ण रावण के भवन को गया। जिस मार्ग से कुंभकरण जाते थे उस मार्ग पर हजारो राक्षस पुष्प की वर्षा करते थे। इसके बाद हेम जाल से परिष्कृत दूसरे सूर्य के समान चमकते हुए रावण के भवन को कुंभकरण ने देखा। रावण के भवन में अनेक प्रकार के रत्न लगे थे इसलिये रावण का मन्दिर सूर्य के समान चमकता था। इस प्रकार रावण के गृह की शोभा को देखते हुए आगे अपने जेठ भाई रावण को बहु मुल्य सिंहासन पर बैठे देखा। कुंभकरण जब पृथिवी पर पग रखता था तो उसके पग भार से पृथिवी खाली ऊंची होजाती थी। इस प्रकार बलवान कुंभकरण राक्षसों के सहित रावण के मन्दिर में गया। कुंभकरण को सभा में उपस्थित देखकर रावण प्रसन्नता पूर्वक विमानों में श्रेष्ठ पुष्पक विमान पर से उतरकर कुंभकरण के समीप आया। रावण को देखकर आनन्द पूर्वक कुंभकरण उनके चरण की वन्दना किया, रावण कुंभकरण को आशीर्वाद देकर गले से लगाया और कुंभकरण को उत्तम आसन पर बैठाया। कुंभकरण रावण के दिये आसन पर बैठकर क्रोधयुक्त आंख को लाल किये रावण से बोले—हेराजन्! किस प्रयोजन के वास्ते आदर पूर्वक तुमने हमको जगाया है। बिना निद्रा को पूर्ण किये जगाने से क्रोधित कुंभकरण रावण से पूंछे कि तुमको क्या दुःख है अथवा किस शत्रु से भय है सो कहो। रावण कुंभकरण को क्रोधित देखकर संकुचित हृदयसे बोला, हेमहाबल! यह तुम्हारे शयन करने का समय था। सो तुम महा निद्रा देवी को अलिङ्गन किये पड़े थे, हमारे दुःख को तो जानतेही नहीं हो कि यह मनुष्य राम से हमको महा संकट पड़ा है। यह दशरथ के पुत्र राम लक्ष्मण बलवान वानरों में

श्रेष्ठ सुग्रीव के सहित हमारे कुल का नाश करना चाहते हैं। देखो हमारे वन उपवन को इन सभों ने नाश करदिया ये सब समुद्र में सेतु को बांधकर सुख पूर्वक लंकापुरी में आये हैं। हमारे राक्षसों में जो प्रधान योधा थे उन सबको संग्राम में बानरों ने मारा परन्तु बानरों का नाश राक्षसों के हाथ से नहीं होता है। इसलिये हेवीर! हमने तुमको जगाया है तुम इस दुःख से रक्षा करने सक्ते हो। बालक व वृद्ध को छोड़कर और समस्त इसपुरी के धन धान्य व जनको नाश कर दिया अब हमारी रक्षा तुम करो। हेमहाबाहु! हमको अपना भाई जान कर इस युद्धसे हमारी रक्षा करो। केवल तुम्हाराही भरोसा अब हमको है तुमने अपने पराक्रम से देवता व असुरों को अपने अधीन करलिया है इस कारण तुम्हारी सहायता से हम युद्ध में विजय लाभ कर सकते हैं। क्योंकि तुमारे समान इस जगत् में और कोई बलवान नहीं है। हेवीर! अपनी भुजा के पराक्रम से शत्रु की सेना को इस प्रकार त्रासित करो जैसे वायु चलकर बद्दल को नाश कर देता है॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे द्विषष्टितमः सर्गः॥६२॥

राक्षस राज रावण के विलाप को सुनकर बड़े जोर से हंसकर कुंभकर्ण बोले, कि विचार करने के समय में राक्षसों के हित को चाहने वाले विभीषण के बचन को जो तुमने नहीं माना और उनका अपमान किया उसी का यह फल भोगना है। पराई स्त्री के हरण रूप पाप का फल तुमको शीघ्र मिला है जैसे पापी मनुष्य पहिले नरक में गिरते हैं हेमहाराज! इस कार्य पर आरूढ हुए। राजा को चाहिये के पहिले कार्य के गुण दोष का निश्चय करके कार्य को आरंभ करे। और जो कार्य विना विचारे किया जाता है उसमें अवश्य आपत्ति होती है। जैसे विना संसकार किये हवि को अग्नि में हवन करने से उस हवि का गुण विफल होजाता है वैसेही देशकाल को विना विचरे कार्य करने से महा आपत्ति आती है। राजा को उचित है कि जय वृद्धि स्थान का विचार करे इसके बाद काम के आरंभ की उपायसोचे

फिर अपने पराक्रम को बिचार करे पुनः देश काल के व्यवहार को देखे और बिपत्ति बारण के उपायको सिद्ध रखे और परिणाम में कार्य की सिद्धी जानकर कार्य करने में कुशल होता है। न्याय अन्याय का बिचार मन्त्रियों के साथ करके अपने इन्द्रियों को बशमें करके राजा राज करने के योग्य होता है और उस राजा पर आपत्ति आक्रमण नहीं कर सकती है और जो राजा श्रेष्ट मंत्रियों के सहित अपने हित व कल्याणकारी कार्यों को बिचार करके करता है उनका राज्य चिरकाल तक रहता है और जो राजा उत्तम मंत्रियोंके राय को न मान कर प्रमादी व अभिमानी तथा बचन मात्र से सामर्थ्य रखने वाले मंत्रियों की जो बात मानता है वह राजा समूल नाश होजाता है, तुमने तो मंत्रियों में श्रेष्ठ बिभीषण के बचन का तिरस्कार करके इन अभिमानी राक्षसों के बचन को जो माने हो उसीका यह फल है। राजाको यह चाहिये कि जो मन्त्री शास्त्र को नहीं जानता केवल अपने बल व पराक्रम के हठसे यह बचन दान देता है, ऐसे मंत्रियों से सलाह कभीं न लेवें। क्योंकि वह अहंकारी दुष्ट मन्त्री राजा के कार्य को बिनाश करदेते हैं। जो राजा शत्रु के अवमानकर के अपनी रक्षा नहीं करता वह अवश्यही अपने स्थानसे भ्रष्टहोता है। मंदोदरी और हमारे भाई बिभीषण ने जो कुछ तुम्हारे हित के लिये कहा तुमने उसके विपरीत ही कार्यका आरंभ किया अब जो तुम्हारी इच्छा हो सो करो। इस प्रकार कुम्भकर्ण के बचन को सुनकर दुरात्मा रावण भौंह चढ़ाकर क्रोधपूर्वक बोला, हमतो तुमारे गुरु अथवा आचार्य के समान हैं हमको क्या समझाते हो इस समय जो कुछ कर्तव्य हो उसको करो। किसी प्रकार की व्याकुलता से अथवा अज्ञानता से तुम लोगों का कहना नहीं किया की फिर इस समय वह कथा कहना व्यर्थ है। इस समय जो उचित हो वह करो जिसमें हमारा यह दुःख छूट जावे। मित्र वही जो विपत्ति पड़ने पर भी न छोड़े और बन्धु वही है जो कुमार्ग में चलने पर भी सहायता करे। इसप्रकार बीर व दारुण रावण के बचन

को सुनकर और शत्रु के कार्य से अपने भाई रावणको व्याकुल देखकर कुम्भकर्ण बोला, हे राजन् ! सावधान होकर हमारे वचन को सुनो, सन्ताप करना उचित नहीं है। तुम अपने मनके क्रोध को छोड़कर स्वस्थ हो जाओ। हमारे जीते हुए आपको कोई दुःख नहीं होगा, जिसके संग्रामसे तुमको इतना कष्ट पड़ा है उसको सेना सहित मैं नाश करूंगा। मैं भाई के स्नेहसे तुमको जो कुछ कहा है उसको पानीकी रेखा के समान जानो। जो कार्य हमारे पराक्रमसे होनेके योग्य है उस कार्य को अर्थात् शत्रुसे मैं लड़ता हूं तुम देखो, हे महाबाहु ! इस संग्राममें देखो जब मैं लक्ष्मण के सहित रामको नाश करता हूं। तब यह बानरी सेना अपने आप भाग जाती है। मैं संग्राम में मारकर रामलक्ष्मणका शिर तुम्हारे पास लाता उसको देखकर तुम प्रसन्न होओगे और सीता राम के मरण से दुःखिता होगी। इस लंकापुरी के जितने राक्षसों का नाश हुआ है उनके परिवार रामलक्ष्मण के मरण से अश्रुप्रमार्जन करेंगे और पर्वताकार शरीर वाले बानरों के राजा सुग्रीव को आज रणभूमि में मरा देखोगे। हमसे पराजय होने के योग्य लक्ष्मण व राम से तुम क्यों डरते हो। तुमको डरना नहीं चाहिये पहिले हमको मारकर तुम को मारेंगे तो हमारा मारना उनके हाथ में नहीं है। तब तुमको राम से नहीं डरना चाहिये। जब तुमने हमसे अपना दुःख सुनाया तब तुम्हें शत्रु की चिन्ता नहीं करनी चाहिये, यदि तुम्हारे शत्रुओं में इन्द्र वरुण यम कुबेर अग्नि वायु होवें तौभी संग्राम में मैं उनको जीत सकूंगा इन मनुष्यों की क्या गणना है। हमारी शरीर व हमारे त्रिशूल तथा वज्र के समान कठोर हमारे दांतों को देखकर इन्द्र भय से भाग जाते हैं दूसरों की क्या सामर्थ्य है जो रण में हमारे सामने ठहरने सके। केवल हाथ से दबाकर मैं इन्द्र को मार सकता हूं क्या हमारे मुक्कों को यह राम लक्ष्मण सह सकेंगे। हमारे रहते आप इन शत्रुओं की चिंता न करें। अब हम तुम्हारे शत्रु को नाश करने के लिये समरांगण में जाता हूं और लक्ष्मण व सुग्रीव व राम को वध करके

आऊंगा अब तुमको चिंता करना ठीक नहीं है और तुमको संसार में यश देने के लिये इन हनुमान आदि बानरों को खाकर अपना पेट भरूंगा। हमारे क्रोध करने से साक्षात ब्रह्मा जी पृथ्वी पर शयन कर सकते है। यमराज को जीत सकता हूं। अग्नि को भक्षण कर सकता हूं नक्षत्र व तारागण के सहित सूर्य को पृथ्वी पर गिरा सकता हूं। अथवा इन्द्र को नाश करके वरुणालय के जल को नाईं पान कर सकता हूं और पर्वतों को चूर्ण करके पृथ्वी को फाड़ सकता हूं। इनको भक्षण करने से अन्नशय न किये कुम्भकर्ण के पराक्रम को देखोगे। इतने बानरों से भी अथवा स्वर्ग के देवतों से हमारे अहार की पूर्ति नहीं होगी। लक्ष्मण सहित राम को बधकरके और बानरों को भक्षण करके आनन्द पूर्वक फिर हम लंकापुरी में आवेंगे। हे राजन्! प्रसन्न होकर वारुणीको पान करो और अपने मनकी व्याकुलता को छोड़ो राम लक्ष्मण के नाश होने पर यह सीता तुम्हारे बश में रहेगी॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे त्रिषष्टितमः सर्गः॥६३॥

महाबलवान व पराक्रमी कुंभकर्ण के बचन को सुनकर रावण के मन्त्रियों में श्रेष्ठ महोदर बोला, हेकुंभकर्ण! तुम बड़े भारी कुल में उत्पन्न हो तौ भी जितना कहते हो उतना जानने व करनेकी सामर्थ्य नहीं है, राक्षसेन्द्र! नीति को जानते हैं और तुम अज्ञानी बालक के समान इस प्रकार कहते हो। राक्षसराज रावण अपनी व शत्रु की वृद्धि तथा क्षय और देश काल को भी जानते हैं। धर्म अर्थ काम को जो तुम अलग अलग कहते हो उनके भी यह लक्षण नहीं हैं उन धर्मादिकों के तत्व को स्वभाव जानने की तुमको सामर्थ्य नहीं है। क्योंकि संपूर्ण सुख के साधन का कारण कर्महीं हैं। कर्महीं के द्वारा मनुष्य को शुभाशुभ फल भोगना पड़ता है। इस लिये धर्म को नहीं छोड़ना चाहिये। धर्म और अर्थसे मोक्षकी सिद्धि होती है कामसे कभी भी सुख नहीं होता है क्योंकि भगवानके बचन हैं कि मोक्ष साधन में यज्ञ दान और तप सुन्दर फल को देने वाला है। धर्म और अर्थ को

भ्रष्ट करने से मनुष्य का पतन होता है, इस लोक में अन्न वस्त्र और ऋण आदि से पीड़ित होता है परलोक में नरक यातना से दुःखी होता है। अधर्म से दुःख और धर्म से सुख लाभ होता है यह सबकी सम्मति है, राजा को यह दुःख पराई स्त्री को हरण करने से हुआ है इसको कौन वारण कर सकता है और जो तुम कहते हो कि मैं अकेले इस शत्रु को जीत लेंगे यह भी तुम्हारा कहना ठीक नहीं है क्योंकि बिना सहायता के अपने पराक्रम पर कोई भी बलवान ऐसे कठिन कार्य करने में साहस नहीं करैंगे। जिन रामचन्द्र ने जन स्थान में अनेक बलवान राक्षसों को नाश किया उनको तुम अकेले किस प्रकार जीत सकोगे। जिसने जनस्थानमें राक्षसों को त्रास दिया वही इसपुरीमें भी आकर राक्षसों का नाश करते हैं। सिंहके समान क्रोधित दशरथके पुत्र रामके सन्मुख जाना मानो सूते हुए सर्प का जगाना है। जो आग के समान क्रोध की आग से नित्य जल रहा है उसके पास मृत्यु कैसे जा सकती है। यह सब बल शत्रु के सन्मुख संशयकारी है सो भी अकेले जाकर संग्राम करना यह तो और भी कठिन है। कौन ऐसा बलवान अकेला पुरुष है जो ऐसे सबल शत्रु का सामना करे। सेना सहित जानेमें तो तृण के समान जीवन का बलिदान देना पड़ता है। इन्द्र व विष्णु के समान जो पराक्रमी है उसके सन्मुख युद्ध करने में कौन ठहर सकता है। महोदर इस प्रकार कुंभकर्ण से कहकर राक्षसों के मध्य में सिंहासन पर बैठे हुए रावण से बोला, जानकी को यहां लेआकर उसके साथ भोग करने विलासमें क्यों विलंब करते हो। यदि इस इच्छासे सीताको लाये होतो वह सीता तुमारे वश में होजायगी। इस विषय में हमको एक उपाय जान पड़ती है हे राक्षसेन्द्र तुम उस उपाय को सुनो। मैं, जिह्व, संहादी, कुंभकर्ण, व वितर्दन यह पांच रामचन्द्र को वध करने के लिये जाते हैं ऐसी घोषणा करो और हम लोग युद्ध करने के लिये जावें यदि संग्राम में उनको जीत लेंगे तो तुमरा मनोरथ सिद्ध ही है, यदि जीतने की आशा जाती रहेगी तो मनमें जैसा उपाय सोचे हैं

वही करेंगे। कि राम के बाण से अपने अंग को कटने से रुधिर को बहाते रण से लौटकर यहां आवेंगे और तुम्हारे चरण को पकड़ कर कहेंगे कि लक्ष्मण व सुग्रीव सहित राम का नाश हुआ अब तुम अपनी इच्छा पूरी करो। तब तुम हमलोगों को हाथी पर चढाकर नगरमें घुमा देना कि बानरी सेना सहित रामलक्ष्मण के इन लोगों ने मारा है। ऐसा कहकर प्रसन्नता पूर्वक हम लोगों को धन रत्न दास दासी आदि को देना और सुन्दर पुष्पमाल्य चन्दन व वस्त्र को देना और अपने अंग में लेप करना व धारण करना। रामलक्ष्मण समर में मारे गये इस प्रकार की लोक कहानी को सुन लेने पर तुम अशोक बन में सीता के पास जाओ और उनको अनेक प्रकार के भूषण वस्त्र धन रत्न आदि का लोभ देकर प्रसन्न करो। इस प्रकार की बचन से बारबार शोक समुद्र में डूबती सीता पतिके मरणको सुनकर तुमार बेशमें अवश्य होगी। दुःखसे पीड़ित सब प्रकार से तुमारे संग में सुख को जानकर अवश्य सीता अधीन हो जावेगी। इस प्रकार तुम्हारे सुखकी उपायको हमने निश्चय किया है। युद्ध से तुमको सुख नहीं होगा। क्योंकि राम को देखने मात्र में राक्षसों का नाश है इसलिये उनके साथ युद्ध करने में तुमको लाभ नहीं होगा। ऐसी उपाय करने से सेना सहित रामलक्ष्मण लौट जायंगे और तुमारी कीर्ति व यश सदा इसी प्रकार रह जायगा॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे चतुषष्ठितमः सर्गः॥६४॥

इस प्रकार महोदर के बचन को सुनकर कुंभकर्ण उसको धिक्कार और राक्षस राज रावण से कुंभकर्ण बोला, कि दुरात्मा राम को मार कर तुम्हारे भय को नाश करूंगा। रामचन्द्र के नाश होने पर शत्रु से हीन होकर राक्षसों के सहित तुम सुख भोग करो। शूरबीर मिथ्या गर्जना नहीं करते, संग्राम में हमारे गर्जने को देखो। अपनी बड़ाई अपने मुख से नहीं करना चाहिये, मौन होकर कार्य करना चाहिये। हेमहोदर! युद्ध से प्राणको बचाना यह तुम्हारे समान कातर लोगों को भला नहीं है बीरों को नहीं, बीरोंकी रुचि तो सदा संग्रामही में रहती

है, वीरों के लिये तुम्हारा यह कहना उचित नहीं है । तुम्हारे समान कुत्सित जो पुरुष हैं वह कार्य के आरंभ में मीठी मीठी बातों को सुनकर बलवान बनते हैं और जब युद्ध काल उपस्थित होता है तब प्राण लेकर भागने की सदा इच्छा रखते हैं, इस प्रकार राजा के मन्त्री राजाओं का नाश कर देते हैं । तुम्हारे ही समान मन्त्रियों के विचार से धन धान्य से पूर्ण लंकापुरी दरिद्र के समान होगई और कितने शूरवीरों का नाश होगया है । तौभी राजा के हितकारी मित्रही बने हो । देखो शत्रु को जीतने के लिये उद्यत मैं समर स्थल में जाता हूं और तुम्हारे ऐसे दुष्ट मन्त्रियों के विचार को भी युद्ध की समाप्ति करके निर्मूल करूंगा इस प्रकार कुंभकर्ण के बचन को सुनकर विहँसता हुआ रावण बोला, हेतात ! हेयुद्धविशारद ! यह महोदर रामबाण से अत्यन्त डर गया है इस कारण यह युद्ध करना नहीं चाहता । हेमहोदर ! तुमारे समान बलवान बानरोंमें कोई नहीं हैं और हमारा मित्र भी तुमारे बराबर नहीं है इसलिये शत्रु को नाश करने के वास्ते और कुंभकर्ण की सहायता के लिये जाओ और हेशत्रुसूदन ! यह समय राक्षसों के वास्ते महा दुःख को पहुंचा है इस प्रकार शयन किये हुए तुमको हठात् हमने जगाया है । अब यमराज के समान त्रिशूल व त्रास को लेकर बानरी सेना में जाओ और शत्रुओं को नाश कर राक्षसों का दुःख दूर करो । तुम्हारे स्वरूप को देखकर सब बानर भाग जायँगे और राम लक्ष्मण का भी हृदय दलित होजायगा । महाबली कुंभकर्ण को तेजस्वी रावण इस प्रकार कहकर अपना नया जन्म समझ लिया । कुंभकर्ण के बल व पराक्रम को जानने वाला रावण प्रसन्नता के मारे चन्द्रमा के समान निर्मल होगया रावण के बचन से प्रसन्न और युद्ध करने में उत्सुक कुंभकर्ण राजा के बचन को सुनकर समराङ्गण में चलने को प्रस्तुत हुआ । अनेक वस्त्र से अलंकृत होकर त्रिशूल को लेलिया । वह त्रिशूल इन्द्रवज्र के समान कठोर था । कि जिस त्रिशूल के सामने देव दानव यक्ष गंधर्व राक्षस कोई नहीं ठहर सकता है । इस प्रकार के कठिन व दृढ़ त्रिशूल को

लेकर कुंभकर्ण रावण से बोला, कि आपकी सेना यहीं ठहरे मैं अकेला ही संग्राम भवन में जाता हूं। आज क्षुधा से पीड़ित मैं उन वानरों से तृप्त होऊंगा। कुंभकर्ण के बचन को सुनकर रावण बोला, कि इन अस्त्र शस्त्रधारी राक्षसी सेना के सहित जाओ क्योंकि वे वानर बड़े शूरबीर व युद्ध करने में उद्योगी हैं। अकेले तुमको वे वानर अपने दांतों से काटकर नाश कर देंगे इसलिये सेनाओं के सहित जाओ और सकल शत्रु पक्ष को नाश करो। इसके बाद राक्षसों के राजा रावण आसन से उठकर सोने की माला के मध्य में गुंथी हुई मणियों की माला को कुंभकर्ण को पहिनाया। अंगुलियों में अनेक प्रकार की मणियों से भूषित अंगूठी कानों में कुण्डल और एक उत्तम हात था और सोने के अलंकार कमर में करधनी और सुगन्धित फूलों की माला आदि से कुंभकर्ण को सज्जित किया उस समय कुंभकर्ण की शरीर ऐसी चमकने लगी जैसे हवि को पाकर अग्नि देवता प्रकाशित होते हैं। वह कुम्भकर्ण वस्त्र व अलंकार से भूषित हो बिजली के समान शोभा को देने लगा। इसके बाद कवच बांधकर त्रिशूल हाथमें लिये ऐसा खड़ा हुआ मानों विष्णुभगवान् ने त्रिविक्रम अवतार को धारण किया है। इसभांति सज्जित कुम्भकर्ण रावण के गलेसे लगकर प्रणाम किया और उसकी प्रदक्षिणा करके समरांकण में चलने को प्रस्तुत हुआ। रावण कुम्भकर्ण को अनेक प्रकार आशीर्वाद देकर बड़ी भारी सेना के सहित कुम्भकर्ण को भेजा। वह राक्षसी चपुरंगिणी सेना शेख दुंदुभी आदि को बजाते अभिमान के साथ इस प्रकार चले मानो अभिमान स्वयं मूर्ति को धारण किये जा रहा है। देवता दानवों के शत्रु कुम्भकर्ण जिस समय त्रिशूल लेकर छत्र लगाये चले उस समय उनपर फूलों की वर्षा को राक्षसों ने किया और महा बलवान पराक्रमी राक्षस अस्त्र शस्त्र को लेकर कुम्भकर्ण के साथ चले, उन राक्षसों में कितने राक्षस तो कुम्भकर्ण के समान विशाल कितने सौ धनुष के परिणाम कितने छ सौ धनुषके परिणाम लंबे कितने महापर्वतके समान विशाल थे। उन

राक्षसोंको देखकर कुम्भकर्ण हँसकर बोला कि आज बलवान बानरोंको इस प्रकार जलाऊंगा। जैसे अग्नि पतंगको जलाता है, अथवा इन बानरोंका क्या अपराध है क्योंकि यह तो बिचारे हमारे जाति की नाईं बन के फल फूल के खाते व बनमें निवास करते हैं, इसमें अपराध राम लक्ष्मणका है क्योंकि उन्हीं दोनों ने लंकापुरी को घेरा है, उनके मरने में सेना का नाश तो बिना प्रयासही होगा। कुम्भकर्ण के इस प्रकार बचन को सुनकर वे राक्षसगण महानाद करने लगे कि उनके नाद से पृथ्वी कांपने लगी। कुम्भकर्ण को युद्ध स्थल में आतेही चारो ओर अशकुन होने लगा। भयानक बादलों में बिजली गिरने लगी, समुद्र सहित पृथ्वी कंपित हो गई। सन्मुख खड़े होकर सियार बोलने लगे। बाज गिद्ध आदि पक्षी बायीं ओर मंडल बांधकर घूमने लगे, मार्ग में चलते हुए कुम्भकर्णके त्रिशूल पर गिद्ध बैठने लगे। उसकी बाईं भुजा और बायां नयन फरकने लगा। आकाश मार्ग से तारा गण टूटने लगे। सूर्य की प्रभा मलीन हो गई आंधी चलने लगी। इसप्रकार के अशुभ को देखकर कुम्भकर्ण आदि राक्षस चिन्ता करने लगे परन्तु भावी को प्रबल जानकर पुरी से बाहर पैदल आकर बिशाल बानरी सेना को देखा। क्योंकि उसके शरीर के भार को रथ हाथी घोड़े आदि नहीं उठा सकते थे। पर्वत के समान बिशाल शरीर वाले बानरों को देखकर उसका हृदय ऐसा कंपित हुआ जैसे वायु को चलने से बहुत हट जाते हैं। कुम्भकर्ण को देखतेही बानरगण प्रलयकालके मेघके समान गर्जना करने लगे और चारो ओर दौड़ने लगे। बानरों की गर्जना को सुनतेही राक्षसों ने इस प्रकार महानाद किया कि दिग्गजों के मस्तक हिल गये और कितने बानर मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। शूल मुद्गर पट्टिश खड्ग परिघ पाश आदि को लिये इस प्रकार समर स्थल में आया जैसे जगत को संहार करने के लिये महारुद्र चलते हैं॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्ध कांडे पंचषष्टितमः सर्गः॥ ६५॥

रावण से सन्मान को पाये कुम्भकर्ण युद्ध भूमि में आकर महा-नाद करने लगा, जो कुम्भकर्ण इन्द्र वरुण यम कुबेर आदि को युद्ध में पराजय किया है वह कुम्भकर्ण राक्षसी सेना के सहित युद्ध करने के लिये आया है। कुंभकर्ण की गर्जना को सुनकर बानरी सेना इधर उधर भागने लगी। बानरों को युद्ध स्थानसे भागते देखकर नल नील गवाक्ष कुमुद आदि से अंगदजी बोले, क्या आप लोग अपने पराक्रम व अपनी सेनाओं के सुधि को भूल गये हो जो यह बानर राक्षस भय से भागते हैं। हेसौम्य! प्राण बचाने वाले इन बानरों को लौटाइये, यह राक्षस के बल डरावनी मात्र देता है यह युद्ध करने में समर्थ नहीं है यह राक्षसों की विभीषिका है इससे डरना शूरवीर का धर्म नहीं है! अनेक प्रकार के सन्तोष देने से वह भागते हुए बानर युद्धस्थल में आकर अधमरे के समान हाथ में वृक्ष लिये ठहरे। जैसे मतवाली हाथी वृक्षों पर अथवा छोटे जन्तुओं पर झपटती है वैसेही कुंभकर्ण उन बानरों पर झपटने लगा और पर्वत शिला वृक्ष आदि को लेकर बानरों पर फेंकने लगा। राक्षसों के अस्त्र पीड़ित बानरी सेना भी राक्षसों को इस प्रकार नाश करने लगी जैसे काष्ठके रगड़ से आग निकल कर काष्ठ को जलादेती है। तौभी प्रबल राक्षसों ने अपने तीखे अस्त्रों से बानरों को इस प्रकार पीड़ा दिया कि कितने पृथ्वी पर अनाथ के समान गिर पड़े कितने आगे पीछे न देख कर भागने ही लगे कितने दौड़ते समय समुद्र में गिर पड़े, कितने आकाश में स्थित होकर देखने लगे। भालुओं की सेना वृक्ष व पर्वत पर चढ़ कर देखने लगे। कोई पृथिवी पर पड़े सूते हुए के समान पड़े थे। इस प्रकार तितर बितर बानरों को देखकर अंगदजी बोले, कि यदि तुम सब बानर युद्ध से पराङ्मुख होते होतो पृथिवी भर में कहीं नहीं रहने का स्थान पाओगे। सुग्रीव की आज्ञा को बिना पालन किये तुम लोगों का जीवन दुर्लभ है। इसलिये सब लोग लौट आओ अस्त्र शस्त्र को छोड़कर जो संग्राम से भागते होतो तुम्हारे इस प्रकार

के पौरुष को देखकर स्त्रियाँ हँसेगी। स्त्रियों का हसना मरण से भी दुःख का है। अरे तुम लोग अच्छे कुलमें उत्पन्न होकर भी प्राकृत बानरोंके समान कहां जाते हो। सभामें आप लोगों ने जो अपनी बड़ाई किये थे वह कहना कहां गया। जिसके जीवन पर सज्जन लोग धिक्कार देवे उसका जीना न जीनेके बराबर है। इसलिये भयको छोड़ कर बीर पुरुषों के मार्ग का आश्रय लेओ। यदि समर मे हम लोग मारे जावेंगे तो भी आनन्द है, क्योंकि जो बीरसंग्राम मे शत्रु के हाथसे मरताहै वह स्वर्ग लोकमे जाता है। इसकारण संग्रामका मरना अच्छा परन्तुसंग्रामसेभागना भागना नहीं भला है। अथवा यदि हम लोगों ने शत्रु का नाश किया तो इस संसार में अचल कीर्ति को लाभ करूंगा। जैसे आग के द्वारा पतंग का नाश होता वैसेही श्रीरामचन्द्रजी के सन्मुख यह कुम्भकर्ण जीता नहीं बचेगा। यह भी देखिये की कहीं वह राक्षस अकेले होकर हमसब बलवान बानरों को त्रास देता है यह कितने बड़े लज्जा की बात है इससे हम लोगोंका यश अवश्य नाश हो जायगा। इस प्रकार अंगद जी युद्ध में खड़े बानरों से कहकर उन भागते हुए बानरों को लौटाने के लिये भेजा। अङ्गदजी से भेजे गये बानर उन बानरों से अङ्गदजी के कहे बचन को कहकर फिरभी लौटाया। सकल बानरी सेना प्रसन्नता पूर्वक वृक्ष पर्वत आदि अस्त्रों को लेकर समर भूमि में आये और श्रीरामचन्द्रजी के पराक्रम व प्रतिज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे षष्टीतमः सर्गः॥ ६६॥

श्रीअंगदजी के बचन को सुनकर सकल बानरगण अपने चित्त स्थिर करके संग्राम करने में उत्सुक हो गये और प्रसन्नता पूर्वक अपने जीवन की आशा को त्याग कर समरमें खड़े हो गये और वृक्ष पर्वत शिला आदि को लेकर कुम्भकर्ण के सन्मुख दौड़ने लगे। बानरों के महा पराक्रम को देखकर बलवान कुम्भकर्ण गदा को लेकर शत्रु पक्ष मे अर्थात् बानरों के ऊपर गदाकी वर्षा करने लगा। इसप्रकार

कुम्भकर्ण से मारे गये सात आठ सौ बानर मृतक हो भूमि पर शयन किये और दश सोलह बीस तीस इस भांति बानरों को हाथ पकड़कर भोजन करने लगा। जैसे गरुड़ सर्पों को खाते हैं। तौभी बानर गण बड़ी भारी कड़ाई के साथ वृक्ष लेकर संग्राम में खड़े थे। इसके बाद बानरों में श्रेष्ठ द्विविद पर्वत को लिये कुम्भकर्ण की ओर दौड़े। द्विविद ने उस पर्वत को कुम्भकर्ण की सेना में फेंके उससे अनेक राक्षसों का नाश हुआ। फिरभी एक पर्वत के शिखर को उखाड़कर कुम्भकर्ण पर चलाये जिससे रथ हाथी घोड़ा व सारथी सहित बहुतेरे राक्षसों का नाश हुआ। उस पर्वत अघात से रथ सारथी हाथी घोड़ा नष्ट हुआ जानकर और राक्षसोंके अङ्ग व मुख से रुधिर बहता देखकर वे रथी राक्षस बानरों पर बाणों की बर्षा करने लगे। बानरगण भी विशाल वृक्षों को लेकर राक्षसों को मारने लगे। बानरों से अलग हनुमान आकाशमें स्थित होकर कुम्भकर्णके उपर वृक्ष पर्वत व शिलाओं को फेकने लगे। युद्ध में विशारद कुम्भकर्ण उन सबको अपने त्रिशूल से काट दिया। इसके बाद वृक्ष व पर्वतों के आघात से पीड़ित कुम्भकर्ण क्रोधित होकर बानरों पर त्रिशूल चलाने लगा। तब हनुमानजी आकाश में से अनेक वृक्ष व पर्वत कुम्भकर्ण को ऐसा मारा कि उसके अङ्ग से रुधिर की धारा बहने लगी। तब अत्यन्त क्रोधित कुम्भकर्ण एक त्रिशूल हनुमान के हृदय में मारा जिसके लगतेही वह मूर्छित हो कर गिर पड़े। हनुमान को समर में गिरा हुआ देखकर राक्षस लोग प्रसन्न होकर बानरों पर धावा किये बानरगण हनुमान को गिरतेही उदास होकर कुम्भकर्ण के भय से भागने लगे। बानरों को समर से पराङ्गमुख देखकर बानरों में बलवान नील भागते हुए बानरों को लौट कर इकट्ठा किये और एक विशाल पर्वत को लेकर कुम्भकर्ण को मारा कुम्भकर्ण पर्वत को ऊपर आता देखकर एक मुका मारकर पर्वत को चूर २ कर दिया। इसके उपरान्त ऋषभ शरभ गंधमादन नील व गवाक्ष ये पाँच बानर अस्त्र को लेकर एक साथ कुम्भकर्ण की ओर दौड़े

और उसके साथ महा युद्ध करने लगे । महाबली कुम्भकर्ण भी उन बानरों को अस्त्रों से मारने लगा परन्तु उन पाँचो बानरों को कुछभी पीड़ा नहीं हुई । तब महा बाहु ऋषभ कुम्भकर्ण को अपनी भुजाओं से ऐसा दबाया कि कुम्भकर्ण अधमरा सा होगया और उसके मुह से रुधिर वह निकला । इसके बाद वज्राकार एक मुक्का शरभ को और एक लात नील को उस राक्षस ने ऐसा मारा कि वह बलवान बानर कटे हुये वृक्ष के समान पृथ्वीपर गिर पड़े । नील व गवाक्ष आदि बानरों को समरांकण में गिरते देखकर हजारों बलवान बानर अपने अस्त्र शस्त्र से कुम्भकर्ण को मारने लगे । उन हजारों बानरों के मारने से मूर्छित होकर बैठगया तौभी उन बानरों को हाथों से पकड़ कर भक्षण करने लगा । कुम्भकर्ण जिन बानरों को खाता था । वह बानर उस राक्षस के नाक कान के राह से निकल कर उस राक्षस को मारते थे। मांस व रक्त से भीगा हुआ वह राक्षस बानर की सेना में इसप्रकार घूमने लगा कि जैसे प्रलयकाल की अग्नि प्रचंड शिखा से घूमती है । जैसे बज्र को लिये पाश मुद्गर को लिये यमराज जीवों का नाश करते हैं वैसेही त्रिशूल को लिये कुम्भकर्ण बानरों का नाश करने लगा । जैसे सूखे हुए बनके काष्ट से आग निकल बनको जला देती है वैसेही त्रिशूल से बानरी सेना को कुम्भकर्ण ने जलाया । कुम्भकर्ण से पीड़ित बानर श्रीरामजी के शरण को पुकारते उनके समीप गये । बानरों को दुःखी देखकर बालि के पुत्र अङ्गद एक पर्वत के शिखर को लेकर गर्जना करते हुए कुम्भकर्ण पर दौड़े और उस पर्वत को कुंभकर्ण के मस्तकपर मारे । उस पर्वतके लगतेही वह राक्षस अत्यन्त क्रोधित होकर अङ्गद की ओर दौड़ा । परन्तु अङ्गद उसके हृदय में उछल कर एक लात ऐसा मारे कि वह राक्षस मूर्छित हो गया । मूर्छा हटने के बाद कुंभकर्ण एक मुक्का अङ्गद को मारा जिससे वह मूर्छित होकर गिर पड़े । अङ्गद को गिरतेही वह राक्षसों में सिंह कुंभकर्ण त्रिशूल को लिये सुग्रीव की ओर दौड़ा । सुग्रीव कुंभकर्ण को त्रिशूल

लिये आते देखकर कूद पड़े। और एक पर्वत को लिये कुंभकरण के सन्मुख आये। कुम्भकर्ण व सुग्रीव अस्त्र के लिये आपस में बातचीत करने लगे। कुम्भकरण से सुग्रीव बोले, हे राक्षस! तुमने बानरों को मार कर और उनको भक्षण करके महा यश को लाभ किया है। अब तुमको इन बानरोंसे क्या होगा तुम हमारे इस पर्वत के घाव को सहन करो। धैर्य युक्त सुग्रीव के बचन को सुनकर कुम्भकर्ण बोला, हे बानर! ब्रह्मा के तुम पौत्र और ऋक्षराज के पुत्र हो और धैर्य और पौरुष से सम्पन्न हो इसलिये हमारे सन्मुख गर्जना करते हो। इसके बाद सुग्रीव ने हाथ में लिये पर्वत को उस राक्षस के हृदय में मारे। उस पर्वत को लगतेही वह राक्षस अचेतन सा होगया। इधर बानरी सेना प्रसन्न होकर सुग्रीव की बड़ाई करने लगे। चेतना को पाकर वह राक्षस क्रोध पूर्वक त्रिशूल को लिये सुग्रीव को मारने के वास्ते दौड़ा और वह त्रिशूल सुग्रीव के भुजा में मारा तब तक हनुमान दौड़ कर उस त्रिशूल को लेकर वेग से जंघा पर रखकर खण्ड२ कर दिये और ऐसी प्रचण्ड गर्जना किये कि जिस गर्जना से पृथ्वी कांपने लगी गर्भिणी स्त्रियोंका गर्भ पतन होगया वृक्ष अपनेसे टूटकर गिर पड़े। राक्षस के त्रिशूल को टूटा हुआ देखकर बानरी सेना प्रसन्न होकर हनुमान की स्तुती करने लगी और अनेक अस्त्रों को लेकर समर में दौड़ने लगी इधर त्रिशूल को टूटा हुआ देखकर वह राक्षस संग्राम से विमुख के समान हो गया। तौभी क्रोधित राक्षस कुम्भकर्ण लंका के समीप में मलय पर्वत के शिखर को उखाड़ कर सुग्रीव को मारा। उसके लगतेही बानरों के राजा सुग्रीव मूर्छित हो पृथ्वी में गिर पड़े। राक्षसगण प्रसन्न होकर युद्ध करने में प्रोत्साहित हुए। तब बानरेन्द्र को मूर्छित करके वह राक्षस ऐसा हटगया जैसे पवन के चलने से बादल हट जाते हैं। इसके सुमेरू पर्वत के समान महा भयंकर कुंभकर्ण गर्जता हुआ मूर्छित सुग्रीव को लिये लंकापुरी को चला, और राक्षस उनकी बड़ाई करते हुए पीछे चले और कुंभकर्ण अपने

मनमें यह सोचता था कि इन्द्रसमान पराक्रमी इस बानर को मरने से रामचन्द्र की सेना अवश्य भाग जावेगी और इधर कुंभकर्ण के भय से बानरी सेना भागने लगी। सुग्रीव की यह दशा और बानरों को युद्ध से भागना देखकर हनुमान चिन्ता करने लगे कि इस प्रकार बंधे हुए सुग्रीव की इस दशा पर हमको क्या करना चाहिये। इस समय जो कुछ हमारा कर्तव्य हो वह अवश्य करना चाहिये! क्यों करें अपनी विशाल मूर्ति से इन राक्षसों को नाश करके सुग्रीव को छुड़ालेवें। क्योंकि जब हम राक्षसों के सहित कुंभकर्ण को मारकर सुग्रीव को छुड़ा लेवेंगे तो हमारी सेना प्रसन्न होकर युद्ध करने में उत्साह को बढ़ावेंगे। अथवा मूर्छा हट जाने पर यह सुग्रीव राक्षस के हाथ से अपनेही छूट जावेंगे क्योंकि यह तो इतने बलवान हैं कि यदि देवता व असुरों की सेना एक में मिलकर इन्हे बांधे तो भी यह अपने बल से अपने को छुड़ा सकते हैं। परन्तु वानरेन्द्र मूर्छा के कारण अपने को दूसरे के हाथ में बंधा हुआ नहीं जानते हैं। नहीं तो अब तक पर्वतों के प्रहार से कुंभकर्ण को नाश करदिये होते। यह सुग्रीव क्षण भरमें जब मूर्छा छूटेंगे तो अपनी व बानरों की जो उपाय होगी सोई करेंगे यदि हम राक्षस के हाथ से सुग्रीव को छुड़ावे तो इस कार्य से उनके मनमें सन्ताप होगा और उनकी शाश्वती कीर्ति नष्ट होजायगी। इसलिये क्षण भर ठहरना चाहिये ऐसा अपने मनमें सोच कर हनुमान युद्ध से भागते हुए बानरों को लौटाने लगे। इधर कुंभकर्ण सुग्रीव को लिये लंकापुरी को चला, यह दशा देखकर राक्षस व राक्षसी कुंभकर्ण पर फूल वर्षाने लगे जब कुम्भकर्ण सुग्रीव को लेकर लंका में प्रवेश किया तब सुग्रीव की मूर्छा हट गई और अपने को राक्षस के कांख के नीचे दबा हुआ जान कर बार बार बिचार करने लगे। इस प्रकार राक्षस के हाथ में पड़े हमको क्या करना चाहिये जिसमें बानरों का हित होवे। सुग्रीव अपने मनमें इस तरह का बिचार करके अपने पराक्रम से राक्षस से छूट कर उसके नाक कान को अपने नख

व दांत से ऐसा फाड़ दिया कि उसके अंग से रक्त धारा के समान बहने लगा। सुग्रीव के नख व दांत से पीड़ित कुम्भकर्ण क्रोधित होकर सुग्रीव को लेकर पृथिवी में पीसने लगा। सुग्रीव भी अपने बल से उस राक्षस को ऐसा दबाया कि उसके शरीर के सब बन्धन टूटगये और सुग्रीव वहां से कूदकर श्रीरामचन्द्रजी के समीप चलेगये। प्रस्रवण पर्वत के समान महाबली कुम्भकर्ण रुधिर बहने से इस प्रकार शोभित हुआ जैसे संध्याकाल में बद्दल लाल हो जाते हैं। सुग्रीव को चले जाने के बाद इन्द्र का शत्रु कुम्भकर्ण फिर भी युद्ध करने की अभिलाषा से एक मुद्गर लेकर समर में इस भांति आया जैसे संसार को संहार करने के लिये प्रलय काल की आग चलती है। रक्त व मांस को भोजन करने वाला राक्षस बानरों की सेना में आकर बानर भालुओं को पकड़ कर खाने लगा। इस प्रकार कुम्भकर्ण युद्ध में प्रमत्त होगया कि बानरों के साथ राक्षसों को भी खाने लगा। उसको बानर व राक्षस चीन्हने की शक्ति नहीं रही कुंभकर्ण के भय से अपना प्राण बचाने के लिये बानर लोग श्रीरामजी के शरण में गये, तौभी सात आठ बीस तीस सौ बानरों को एक साथ कुंभकर्ण भक्षण करने लगा। कुम्भकर्ण को इस तरह रण में पराक्रमी देखकर श्रीरामजी की आज्ञा से लक्ष्मणजी युद्ध स्थल में और एक साथ सात बाण कुम्भकर्ण पर मारे। लक्ष्मणजी के बाण से त्रासित राक्षस और भी क्रोधित हुआ और बद्दल के समान गर्जना करके लक्ष्मण से बोला, हेवीर! संग्राम में सुख से हमने यमराज को जीता है। सो तुमने हमको अपने बाण से पीड़ा दिया। अब तुम इस संग्राम में हमारे इस आयुध को सहन करने के लिये हमारे सन्मुख खड़े रहो। ऐरावत हाथी पर चढे इन्द्र को हमने समर में पराजित किया है। हेलक्ष्मण! सो आज तुम अपने बाल्यावस्था के पराक्रम से युक्त राम के बचन को मानकर आज हमे सन्तुष्ट करते हो। जिस राम के बल वीर्य व पराक्रम को देखकर तुम हमारे साथ संग्राम करते हो मैं उन्ही राम को नाश करने जाता

हूं । उन राम को मार कर तब पीछे तुम लोगों के साथ युद्ध करूंगा। राक्षस श्रेष्ठ कुंभकर्ण के बचन को सुनकर लक्ष्मणजी हंसकर बोले- हे राक्षस ! जो तुम इन्द्रादि देवतों को समर में पराजित किया है वह सत्य है, क्योंकि वही तुम्हारा पराक्रम आज हमने भी देखा है । यहां लक्ष्मण का कहना व्यंग्य है । तुमारे ऐसे राक्षसों को नाश करने के लिये दशरथ के पुत्र राम पर्वत के समान दृढ़ हो समर में खड़े हैं। वह निशाचर लक्ष्मण के मुख से गर्वित बचन को सुनकर लक्ष्मण को अति क्रमण करता हुआ और अपने पग भर से पृथिवी को दबाता श्रीरामचन्द्रजी की ओर दौड़ा । श्रीरामचन्द्रजी कुंभकर्ण को अपने सन्मुख आते देखकर रौद्र अस्त्रसे कुंभकर्ण के हृदयमें मारे। रामचन्द्रजी के बाण से विद्ध राक्षस साहस सहित दौड़ता हुआ अपने मुख से आग की अंगार को छोड़ने लगा और क्रोध की आग में जलता हुआ बानरों को मारने लगा। फिर भी रघुनाथजी के अस्त्र से उसकी भुजा कट गई और गदा भूमि में गिर पड़ी। और राक्षसों के जितने अस्त्र थे वह सब गिर कर पृथिवी को अच्छादित कर लिया । और कुंभकर्ण अपने को अकेला व बिना अस्त्र शस्त्र के समझने लगा। फिर इसके उपरान्त अपने जीवन से निराश होकर लात व मुकों से महा भारी युद्ध करना आरंभ किया । रामबाण से त्रासित उस राक्षस के अंग से ऐसा रुधिर बहता था जैसे पर्वतों के झरनों से जल की धारा गिरती है । तौभी वह शूरबीर कुंभकर्ण बानर भालुओं को भक्षण करने लगा। और एक पर्वत को श्रीरामचन्द्रजी पर फेंका। दैत्य संहारण अपने बाण से उस राक्षस के पर्वत को काट कर नीचे गिरा दिया। तब वह बलवान राक्षस दो सौ बानरो को पृथिवी पर गिराकर ऐसा मर्दन किया कि उन बानरों के प्राणान्त होगये । इस राक्षस की यह दशा देखकर श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले, कि अब इस राक्षस कुंभकर्ण के बध करने का समय आगया है । यह मांस व रक्त का लोभी और प्रमत्त यह राक्षस बानर व राक्षसों का बिचार न करके

सबको भक्षण करता है। तो इस राक्षस को वध करने के लिये जितने प्रधान बानर हैं वह सब एक एक पर्वत को लेकर चारो ओर से खड़े हो जावें और इसी मूढ राक्षस पर प्रहार करें इसके अतिरिक्त और राक्षसों से युद्ध करें। श्रीरामजी के वचनानुसार पर्वतों को लेकर कुम्भकर्ण भी बानरों पर इस प्रकार प्रहार करने लगा जैसे पीलवान हाथी को शिथिल कर देता है। राक्षस को क्रोधित और युद्ध करने में समर्थ जान कर श्रीरामजी धनुष पर बाण को चढ़ाकर वेग से राक्षस की ओर चले, श्रीरामजी को राक्षस के संमुख खड़ा देखकर बानरगण प्रसन्न होगये। श्रीरामचन्द्रजी बानरों को धैर्य देकर उस राक्षस पर बाण को छोड़ने लगे और बानरों के मध्यमें धनुषको बाण पर चढ़ाये खड़े हुए। जैसे मेघ जल वर्षा करके पृथिवी को गिली कर देते हैं वैसे वह राक्षस अपने अंग से बहते हुए रुधिर से पृथिवी को आर्द्र करता हुआ बानरों को पीड़ा देते श्रीरामजी कुंभकर्ण को देखे। पुरुष सिंह श्रीरामजी जलती हुई आग के समान क्रोधित राक्षस को देख कर अपनी बाण को छोड़ने लगे। श्रीरामजीका बाण लगने से कुपित राक्षस श्रीरामजी पर धावा किया। तब समर में धीर और उद्धत तथा शेष के समान बाहू और पर्वत के समान विशाल कुम्भकर्ण से श्रीरामजी बोले—हेराक्षस श्रेष्ठ! तुम यहां आओ मैं यहीं धनुष बाण को लेकर खड़ा हूं राक्षसों के वंश को नाश करने वाला तुम हमको जानो, कुम्भकर्ण क्रोधमें आकुल धनुषधारी रामजी पर दौड़ा और ऐसी गर्जना किया कि जिस गर्जना से बानरों का हृदय कांप उठा। इसके बाद कुंभकर्ण श्रीरामचन्द्रजी से बोला, हेराम! मैं विराध कबन्ध खरदूषण त्रिशिरा बाली व मारीच नहीं हूं। तुम हमको कुंभकर्ण जानो और हमारे इस मुद्गर को देखो। यही हमारा मुद्गर देवता व दानवों को जीत कर सेवा में लगाया है। इस नाक कान के कटने से तुम हमको निर्बल न जानो। इस रुधिर के बहने से और अस्त्र शस्त्र के लगने से हमको कुछ भी पीड़ा नहीं है। हेइक्ष्वाकु कुलकेसिंह! अब

तुम हमारे पराक्रम को देखो, अब हम तुमको अवश्य भक्षण करता हूं। अभिमान से युक्त कुंभकर्ण के बचन को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी उस राक्षस पर अनेक बाण मारे परन्तु उस बाण से भी उस राक्षस को पीड़ा नहीं हुआ। श्रीरामचन्द्र जिस बाण से साल वृक्ष को भेदन किया बालि को मारा वही बाण कुंभकर्ण के शरीर पर निष्फल होगया और वह कुंभकर्ण राम बाण से कुछ भी पीड़ा को न पाकर अपने मुद्गर को लिये श्रीरामजी व बानरों को मारने दौड़ा और अनेक बानरों को उस उग्रवेग वाले मुद्गरसे आहत किया। इसके बाद रामचन्द्रजी ने वायव्य अस्त्रको राक्षस पर मारे उस बाणके लगतेही मुद्गर सहित कुंभकर्ण की भुजा कट कर पृथिवी में गिर पड़ी। भुजा कट जाने पर भी वह राक्षस बाये हाथ से वृक्ष को उखाड़ कर श्रीरामजी पर चलाया। श्रीरामचन्द्रजी ऐन्द्र अस्त्रसे वृक्ष सहित राक्षसकी बाई भुजा भी काटकर गिरादिये। भुजाओं को कट जाने से वह राक्षस अनाथ के समान पृथिवी पर गिर पड़ा। भुजाओं के कटने से असमर्थ कुंभकर्ण के दोनों पैरोंको भी बाणोंसे काट डाले, कुंभकर्णकी यह दशा देखकर राक्षस व बानर इस प्रकार शब्द किये कि जिस शब्द से समस्त पृथिवी शब्दायमान होगई समुद अपना तरंग भूल गया। हाथ पैर से ही नभी कुंभकर्ण बड़वाग्नि के समान मुख को बाय कर गर्जता था। जैसे आकाश मार्ग में चन्द्रमा को देखकर गर्जता हुआ राहु दौड़ता है। सूर्य के किरण के समान कान्ति वाले और ब्रह्मदंडके सामर्थ्यको भी नाश करनेवाले शत्रुओंको भय देनेवाले वायुके समान वेगवाले अस्त्र को श्रीरामचन्द्रजी ने इस राक्षस पर फिर भी चलाये उस बाणके लगते ही राक्षसका शिर कटकर गिर गया। उस समर भूमि में क्रीट कुंडलसे अलंकृत कुम्भकर्ण का शिर ऐसी विचित्र शोभा को धारण किया जैसे दिनमें सूर्य और रात्रि में चन्द्रमा शोभित होते हैं। ब्रह्म व देवताओं के शत्रु कुम्भकर्ण को मारजाने पर देवतागण प्रसन्न होकर दुन्दभी बजाने लगे और गंधर्व यक्ष किन्नर आदि श्रीरामचन्द्रजी के पराक्रम की बड़ाई करने लगे।

कुंभकर्ण के मरने पर लोक में यह आनन्द हुआ जैसे राहु से मुक्त चन्द्रमा प्रसन्न होते हैं। जैसे वृत्रासुर को मरने पर देवतों ने इन्द्र की पूजा किये वैसेही कुम्भकर्ण के मरने पर श्रीरामचन्द्रजी की पूजा किये॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे सप्तषष्टितमः सर्गः ॥६७॥

जब श्रीरामचन्द्रजी ने कुम्भकर्ण का बध किये तब और राक्षस भय के मारे रावण के शरण में जाकर विनय पूर्वक कहने लगे कि हे राजन्! साक्षात् काल के समान कुम्भकर्ण समर में जाकर पहिले तो अपने पराक्रम से बानरी सेना को भगा दिया। जिस कुम्भकर्ण के प्रताप को देखकर रामचन्द्र का प्रताप शान्त हो गया और वह कुम्भकर्ण कबंध के समान विस्तीर्ण देह से राक्षसों को भक्षण करने लगे। इसके बाद जब युद्ध में उनका नाक कान कट गया और उनके अंग से रुधिर बहने लगी तब वह लंकापुरी के द्वार को रोककर खड़े हुए। फिर रामचन्द्र के बाण से जब उनके हाथ पैर कट गये तब कबंध के समान ऐसे पृथ्वी पर गिर कर मर गये जैसे कट जाने पर वृक्ष गिर कर नष्ट हो जाता है। युद्ध में राम बाण से कुम्भकर्ण के मरण को सुनकर राक्षसेन्द्र शोकसे मूर्छित हो गिर पड़ा और अपने चाचा के मरण को सुनकर मेघनाद नारान्तक और त्रिशिरा शोक से रोदन करने लगे और कुम्भकरण के बचन को सुनकर महापार्श्व व महोदर शोक से आक्रान्त होगये। क्योंकि वह दोनों रावण के चचेरे भाई थे। इसके बाद बड़ी कठिनाईसे चेतना को लाभ करके रावण रोदन करने लगा, हे महाबला कुंभकर्ण! हे वीर! हे शत्रु के दमन करने वाले! तुम आज हम हतभाग्य को छोड़कर दैव गति से यम लोक को सिधारे हो। हमारे शत्रुओं को निर्मूल न करके और उनकी सेना में आये सैनिकों को सन्ताप देकर और उनके मांस को छोड़कर अकेले तुम कहां चले गये। तुमारे न रहने से हमभी मरे हुए के समान होगये हैं। जो तुम्हारे भयसे देवता दैत्य यक्ष पिशाच गंधर्व किन्नर आदि तुम्हारी सेवा करते हैं वह तुम रामचन्द्र से मरण को पाये हो। जो तुमको इन्द्र

का बज कुछ नहीं करता था वह राम के बाण से पीड़ा को पाकर पृथ्वी में पड़े हो और यह देवतागण ऋषियों के सहित आकाश मार्ग में खड़े होकर संग्राम में तुम्हारे मरण को देखकर प्रसन्न होते हैं। और अवसर को देखकर वह बलवान बानर लंकापुरी को घेरे आते हैं। अब कुंभकर्णके बिना इस राज्यसे और सीता तथा अपने जीवन को लेकर हमें क्या करना होगा। यदि हम संग्राम में शत्रु को मारकर अपने भाई का बदला न लेवें तो हमारे जीने को वृथा है। जहां कुंभकरण की लोथ पड़ी है हम भी शत्रु के सन्मुख वहीं जाते हैं कुम्भकर्ण को ऐसी दशा में छोड़कर क्षण भर भी हम अपने प्राणको नहीं रख सकते हे कुम्भकर्ण! अब तुम्हारे मरने पर हम इन्द्रको कैसे पराजय करेंगे और हमारे पूर्व अपकार से आज देवलोग भी हमको सेंगे। जो हमने विभीषण के बचन को न मानकर और सभा में उनका अपमान किया उसीका आज यह फल है, क्योंकि जब तक प्रहस्त व कुंभकर्ण का यह दारुण विनाश उत्पन्न हुआ है तब से वह विभीषण का बचन हमको लज्जा देता है। इस प्रकार अनेक बिलाप करके कुंभकरण के मरण रूप शोक से रावण अभिभूत हो गया।

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे अष्टषष्ठितमःसर्गः ॥ ६८ ॥

दुरात्मा रावण को शोक में व्याकुल और बिलाप करते देखकर त्रिशिरा नामक राक्षस बोला, हे राजन्! यह सत्य है कि महाबली हमारे मझिले चाचा युद्ध में मारे गये, परन्तु शूरबीर पुरुषों को आप के समाने मुक्तकंठ से बिलाप करना नहीं चाहिये क्योंकि तुम तीनों लोक को जीतने में समर्थ हो, तुमको प्राकृतिकके समान चिंता नहीं करना चाहिये। ब्रह्मदंड, कवच, बाण सहित धन्वा और तुम्हारे रथमें हजार खच्चर जोते जाते हैं। तुम्हारे रथ चलनेका शब्द मेघ के गर्जने के समान होता हैं। तुमने उन्हीं अस्त्रों से देवता व दैत्यों को बश में किया है, उन्हीं अस्त्रों से यह राम भी शान्त हो जायंगे। आप सावधान हूजिये हम लोग आप के शत्रुओं को संहार करने के

लिये जाते हैं। हम तुम्हारे शत्रुओं को इस प्रकार नाश करेंगे जैसे गरुड़ सर्पों को नाश करते हैं जैसेशंवरासुर को इन्द्र ने मारा नरकासुर को विष्णु ने मारकर निष्कंटक राज्य किया है वैसेही आज इन शत्रुओं को नाश करके लंकापुरी को मुक्त करेंगे। राक्षसों के राजा रावण अपने पुत्र त्रिशिरा के बचन को सुनकर कुम्भकर्ण के मरण को भूलकर पहिले के तरह गर्वित होगया। त्रिशिरा के बचन को सुनकर, देवान्तक व नरान्तक और अतिकाय यह भी रावण के पुत्र अपने बल व पराक्रम से पूर्ण कहने लगे कि हम सब लोग एक साथ समर में जावेंगे और वानरों सहित राम लक्ष्मण को नाश करेंगे। यह चारो रावण के पुत्र इन्द्रके समान पराक्रमी थे। सब माया युद्ध की जानने वाले और अन्तरिक्ष से लड़ने वाले थे। सब देवताओं को जीतने वाले संग्राम में कुशल थे। यह रावण के पुत्र अत्यन्त बलवान व पराक्रमी थे, यह कभी संग्राम से पराङ्मुख नहीं हुए थे। इनके पराक्रम से देवता गंधर्व सदा कांपते थे। जैसे दैत्यों के अभिमान को नाश करने वाले इन्द्र देवतों के मध्यमें शोभित होते हैं वैसेही अपने पुत्रों के मध्यमें बैठा और अभिमान से पूर्ण रावण शोभित होने लगा। इसके बाद रावण ने अपने पुत्रों को हृदय से लगाकर अनेक प्रकार के भूषण वस्त्र से उन्हे अलंकृत किया और चन्दन लेपन पुष्पमाला को पहिना कर बहुत सा आशीर्वाद दिया। जब रावण के पुत्रों ने पिता के आशीर्वाद को ग्रहण करके रावण को प्रमाण किये और उनकी प्रदक्षिणा करके समर में चलने को तइयार हुए तब रावण ने महोदर व महापार्श्व इन दो अपने मन्त्रियों को उन पुत्रों की रक्षा के लिये समर में भेजा। रावण से अनेक सत्कार को ग्रहण करके युद्ध करने में उत्साही त्रिशिरा, अतिकाय, देवान्तक व नरान्तक महोदर और महापार्श्व ये छवो बलवान राक्षस चले, महोदर अनेक अस्त्र शस्त्रको लेकर सुदर्शन नामकी हाथी पर चढ़कर चला, और रावण के पुत्र त्रिशिरा और अतिकाय अस्त्रशस्त्र को लिये सुन्दर

रथ पर बैठ कर चला, देवताओं की सेना में जैसे इन्द्र अग्रसर चलते हैं वैसे राक्षसों से आवृत राजकुमार देवान्तक तूणीर में बाणको लगाये प्रास और परिघ आदि अस्त्रों को लिये सोने के किरीट व कुण्डल को तथा और भी जड़ाऊ गहनों को पहिने सुन्दर रथ पर विराजमान होकर चला और किरीट मुकुट कुण्डल को धारण किये तथा उज्वल घोड़े पर बैठकर नरान्तक चला। जैसे अनेक प्रकार के अस्त्र को धारण किये कार्तिकेय मयूर पर बैठे शोभित होते हैं वैसी शोभा को नरान्तक ने धारण किया। अत्यन्त ओजस्वी प्रास को लिये नरान्तक शक्ति को लिये कार्तिकेय के समान शोभित हुआ। और स्वर्ण मय परिघ को लिये भी देवान्तक दोनों हाथों में पर्वत को लिये विष्णु के समान दीख पड़ता था। महा पराक्रमी महापार्श्व गदा को हाथ में लिये कुबेर के समान शोभित हुआ जैसे अमरावती में देवताओं की सेना निकलती है वैसे महान् अस्त्र शस्त्र को लिये चतुरंगिणी सेना के सहित गर्जना करते हुए समर में आये। जैसे आकाश में ग्रहों का प्रकाश होती है वैसे राक्षसों के कीरिट कुण्डल चमकते थे। और शरत काल के बद्दल के समान उज्वल तथा हंस पक्षी के समान उज्वल भेष को धारण किये राक्षस राज के कुमार शत्रुको पराजय करनेके लिये तथा अपने ही मरण को निश्चय करके राक्षसी सेना के सहित युद्ध भूमी में आये गर्जना करते और बाणों को चमकाते युद्ध करने में चतुर राक्षस ऐसी सेना समूह से आये कि पृथिवी हिलने लगी। और राक्षसों के सिंह नाद से आकाश भर गया। इधर राक्षसी सेना बानरों को वृक्ष पर्वत व शिला लिये युद्ध में उद्यत बानरों को देखा उधर बानरों ने खड्ग पदिश शूल मुद्गर गदा परि प्रास आदि अस्त्रों से चतुरंगिणी सेना राक्षसों को देखा। इस प्रकार समुद्र की नाईं उतंग राक्षसी सेना को देखकर और राक्षसों की गर्जना को न सहन कर बड़े बड़े पर्वतों को लिये बलवान बानर प्रलय काल के बद्दलोंके समान गर्जने लगे। बानरों की घन घोर गर्जना को अभिमानी राक्षस न सहते हुए अट्टहास पूर्वक

बानरों की ओर दौड़े। तब तक महाबली व देवताओं के समान पराक्रमी बानर राक्षसों के मध्य में पहुंच कर पर्वत शिला व वृक्षों की वर्षा करने लगे। कितने बानर आकाश मार्ग से कितने पृथिवी तल से राक्षसों को मारने लगे। राक्षस गण अपने तीक्ष्ण बाण आदि अस्त्रों से बानरों के अस्त्रों को काटते हुए उनको मारने लगे। राक्षसों ने बानरोंके पर्वत वृक्ष व शिला को इस प्रकार चूर २ करदिये कि उन अस्त्रों का नाम मात्र भी नहीं रहा। तब बानरगण क्रोधित होकर लात व मुकों से राक्षसों का प्राण हरण करने लगे। और राक्षसों के नानाविध अस्त्र को खंडन करके बानरगण राक्षसों पर विशेष आक्रमण किये। राक्षस व बानरोंके अंगसे इस प्रकार रुधिर निकला कि पृथ्वी गीली हो गई। और परस्पर युद्ध की भीड़में राक्षस राक्षस को व बानर बानर को मारने लगे। तौभी बानरों के हाथ से इतने राक्षस मारे गये जिनकी गणना नहीं हो सकती, और उन राक्षसों के अंग प्रत्यंग से धारा प्रवाह रक्त बहता था। इस प्रकार राक्षसों को संग्राम में निहत करके निर्भय बानर गर्जना करने लगे, आकाश मार्ग से देवतों ने बानरों पर फूलकी वर्षा करने लगे। आंधी के समान राक्षसों का भय शान्त हो चला, इतनेही में रावण का पुत्र नारान्त इसभांति बानरी सेना में प्रवेश किया जैसे समुद्र में मछलियां पैठती हैं। और क्षण भर में सातसौ बानरों को अपने उज्वल प्रकाश से नाश किया और कितने घायल होकर भूमी में गिर पड़े। जबतक बानर वृक्ष पर्बत अथवा शिला के उखाड़े तबतक वह सैकड़ों बानरों को नाश कर देता था उस नारान्तक के इस कठिन प्रभाव व प्रताप को देखकर व्याकुल हो बानर भागने लगे तब कुम्भकर्ण को नाश करने वाले सुग्रीव बानरों को नाश करते नारान्तक को देखकर और उस राक्षस के भय से सेना को भागती देखकर बानरोंके राजा सुग्रीव इन्द्र के समान पराक्रमी अंगदजी से बोले, हे युवराज! वहां जाकर घोड़ा पर चढे इस राक्षस को शीघ्र मारडालो, प्रास से बानरों को पीड़ा

देता है। सुग्रीव के वचन को सुनकर अपनी सेना से निकल कर अङ्गदजी खाली हाथ नारान्तक के सन्मुख खड़े होकर बोले, हे राक्षस! इन निर्बल बनरों को क्यों मारता है खड़ारह और अपने इस कठोर प्रास को हमारे हृदय में मारो। अङ्गद के वचन को सुनकर क्रोधित नारान्तक एक लम्बी श्वांस लेकर अङ्गद के सन्मुख आया और अपने अमोघप्राससे अङ्गदके हृदयमें मारा, अङ्गदके शरीरमें लगतेही राक्षसका प्रास टूट कर भूमिमें गिर पड़ा। प्रासको टूटा हुआ देखकर गरुढ़के समान पराक्रमी अङ्गद एक पड़ाका उस राक्षसके घोड़ेको मारा। उस पड़ाकाको लगतेही उस राक्षस का घोड़ा जीभ निकाल कर मर गया। घोड़ा को मरा देखकर क्रोधित नारान्तक एक मुका अङ्गदके शिरमें मारा। उस मुष्टि को लगतेही अङ्गदजी के शिर से रुधिर बहने लगा परन्तु उस मूर्छा को क्षणही भर में निवृत्त करके काल के समान पराक्रमी अङ्गद क्रोध पूर्वक एक मुक्का नारान्तक के छाती में मारे, उस मुष्टि को लगतेही वह राक्षस मुंह से रक्त को गिराता हुआ घूमकर पृथ्वी में गिर पड़ा जैसे वज्र को लगतेही पर्वत व्यथित होता है। नारान्तकके मरण को देखकर देवता लोग आकाश में अङ्गदका जय मनाने लगे और बानरों को बड़ा आनन्द व उत्साह हुआ कि जो घायल पड़े थे वह भी युद्ध करनेके लिये तइयार हो गये। अङ्गदजी के इस प्रकार दुष्कर कर्म को देखकर श्रीरामचन्द्रजी विस्मित व हर्षित भये॥

वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे एकोन सप्ततितमः सर्गः॥ ६९॥

नारान्तक को मरा हुआ देखकर राक्षसों ने बड़ा दुख उठाया, और देवान्तक त्रिशिरा व महोदर आदि तीन राक्षस समर में आये, हाथी पर चढ़ाहुआ क्रोधित महोदर अंगद को ओर दौड़ा और भाई के मरणसे पीड़ित देवान्तक भी परिघ को लेकर अङ्गद के सन्मुख आया और उत्तम रथ पर बैठा हुआ त्रिशिरा भी अंगद पर धावा किया। देवताओं के अभिमान को नाश करने वाले महाबलवान ये तीनों राक्षस एक अंगदजी पर आक्रमण किये। अंगद उन तीनों राक्षसों

को अपने ऊपर आते देखकर एक बड़े विशाल वृक्ष को उखाड़ कर देवान्तक के ऊपर बज्र के समान चलाये। तब तक त्रिशिरा अपने बाण से उस वृक्ष को काट डाला। उस वृक्ष को निष्फल देखकर अंगदजी उछलकर अनेक पर्वत व वृक्षोंकी वर्षा करने लगे। परन्तु रावणका पुत्र त्रिशिरा अपने बाणों से पर्वतों को काटकर गिरा दिया और महोदर ने अपने परिघ से वृक्षों को काट दिया। इसके बाद हाथी को दौड़ाकर महोदर एक तोमर अंगद को मारा और क्रोधित देवान्तक एक परिघ अंगद को मारा तो भी इन तीनों राक्षसों के प्रहार से अंगदजी को पीड़ा नहीं पहुंची। संग्राम में दुर्जय अंगद वायु के समान वेग पूर्वक उछल कर महोदर के हस्ती को एक लात मारे, इतने में वह हाथी चिल्ला कर भूमि में गिर पड़ा व मर गया। उसी हाथी के दांत को उखाड़ कर महाबली अंगद उसी दाँत से देवान्तक को मारे। उस राक्षस के अंग से रुधिर बहने लगा और वह मूर्छित होगया। मूर्छा हटजाने के बाद क्रोधित देवान्तक एक परिघ अंगद को मारा कि अङ्गद घूटना के बल से बैठ गये, थोड़ी देरके बाद ज्यों उठने लगे त्योंहीं त्रिशिरा ने तीन बाण अङ्गद को मारा। त्रिशिरा के तीन बाण एक साथ अङ्गद के ललाट में लगा उस बाणसे वह युवराज व्याकुल हो गये। अङ्गदकी व्याकुलता को देखकर हनुमान व नील पर्वत के शिखर को लेकर त्रिशिरा पर फेंकने लगे। युद्ध में पंडित रावण का पुत्र त्रिशिरा अपने बाणोंसे उन पर्वतों को चूर २ करदिया और परिघ को लेकर हनुमान की ओर दौड़ा तब तक हनूमान उछल कर बज्राकार एक मुक्का उस राक्षस के शिरमें मारे और गर्जना किये कि जिस महाशब्दको सुनकर राक्षसों की आंखे ढ़प गई। उस मुष्टि के आघात से उसका शरीर चूर २ हो गया आंख मुंह बायकर पृथ्वी में गिर पड़ा व मरगया। राक्षसों ने शूरवीर देवान्तक को मरा देखकर बानर लोग प्रसन्न हो हनुमान की बड़ाई करने लगे। इधर भाई के मरण से क्रोधित त्रिशिरा बानरों में श्रेष्ठ नील पर बाण चलाने लगा, जिस प्रकार मेघ पर्वत पर वृष्टि करते

व गर्जना करते हैं जलकी धारा की नाईं बाणवर्षा नील पर करने लगे । सेनापति नील को जब राक्षसों ने अपने तीक्ष्ण बाणों उनके प्रत्येक अङ्ग को छेदन कर दिया तब नील क्षणभर के लिये मूर्छित हो गये पुनः मूर्छा हट जाने पर पर्वत को लेकर महोदर के मस्तक पर मारे । उस पर्वत के लगतेही महोदर हाथी से नीचे ऐसा गिरा जैसे इन्द्रवज्र के लगने से वृक्ष टूट कर गिरजाते हैं । महोदर के मरण को देखकर त्रिशिरा धनुष बाण को लिये हनुमान की ओर दौड़ा और उनपर बाणों की वर्षा करने लगा । उसके बाण से क्रोधित हनुमान उस राक्षस को पर्वतों से मारने लगे । परन्तु बाण विद्या में चतुर रावण का पुत्र त्रिशिरा अपने बाणों से हनुमान के सब पर्वतों को काटकर गिरादिया । अपने पर्वतों को निष्फल देखकर हनुमान वृक्षों की वर्षा करने लगे । परन्तु त्रिशिरा ने अपने बाणों से उन वृक्षों को भी काटने लगा । तब हनुमान उछल कर अपने नख से उस राक्षस के रथ के घोड़ों को फाड़ दिये जैसे सिंह हाथी को फाड़ देता है । घोड़ों के मरने से जब वह राक्षस विरथ हुआ तब शक्ति को लेकर हनुमान पर चलाया । हनुमान शक्ति को अपने ऊपर आते देखकर उस शक्ति हाथ से लेकर हनुमान ने खण्ड करदिया राक्षस की चलाई शक्ति को खण्डित को देखकर वानरी सेना ऐसी गर्जना करने लगी जैसे वर्षाकाल में बादल गर्जते हैं । इसके बाद खड्ग को लेकर वह राक्षस हनुमान के सन्मुख आया और एक खड्ग हनुमान के हृदय में मारा उस खड्ग को लगने से कुपित हनुमान एक लात राक्षस को ऐसा मारे कि वह खड्ग उस राक्षस के हाथ से गिर पड़ा और वह राक्षस भी मूर्छित हो गिर पड़ा । उस राक्षस के हाथ से गिरे खड्ग को हनुमान लेकर ऐसी गर्जना किये कि सकल राक्षसी सेना मूर्छित हो समरभूमि में गिर पड़ी । इसके उपरान्त जब राक्षस की मूर्छा हट गई तब त्रिशिरा कूदकर एक मुक्का हनुमान को मारा । इतने में कोपित हनुमान उसी खड्ग से उस राक्षस के शिरको काट लिये ।

शिरको काट जाने से इन्द्र का शत्रु त्रिशिरा ऐसा भूमि में गिरा जैसे आकाश से तारा टूटते हैं। त्रिशिरा के मरण को देखकर देवता व वानर हनुमान की बड़ाई करने लगे और राक्षसी सेना वानर के भय से भागने लगी। देवान्तक नरान्तक व त्रिशिराके मरण को देखकर महोदर एक लोहे की गदा को लेकर वानरों की ओर दौड़ने लगा। तब ऋषभनाम के वानर उसके सन्मुख आये। वानर श्रेष्ठ ऋषभ को पर्वत के समान आगे २ बढ़ा देखकर राक्षस ने एक गदा ऋषभ को मारा उस गदा के आघात से ऋषभ के शरीर से रुधिर की धोत बहने लगी और वह मूर्छित हो गये। थोड़ी देर के बाद मूर्छा बीत जाने पर वानर ऋषभ महापार्श्व को वीर भाव से देखते हुए घूमकर एक मुक्का महोदर के हृदय में ऐसा मारे कि वह कटे हुए वृक्ष के समान चिल्ला कर भूमि में गिर पड़ा ऋषभ उसकी गदा को लेकर समर में गर्जने लगे। फिर भी वह राक्षस उठकर वरुण के पुत्र ऋषभ नामके वानरको मारा। ऋषभ भी मूर्छित होकर भूमिमें गिर पड़े, फिर उठकर उसी गदासे एक गदा राक्षसको मारे। उस गदासे उसके छाती की हड्डी टूट गई। और उसके मुंहसे रुधिर बहने लगा तो भी वह राक्षस बार बार ऋषभसे लड़ने लगा। ऋषभ उसी गदासे उस राक्षसको बार बार मारने लगे। उस गदाके अनेक बारके आघातसे वह राक्षस पृथ्वी पर गिर कर मर गया। महोदरके मरणको देखकर जितने शेष राक्षस थे वह सब अपने अस्त्र को फेंक कर अपना जीवन लेकर लंकापुरी को भागे॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे सप्ततितमः सर्गः॥ ७०॥

राक्षसी सेना को भागते और अपने भाइयों व चाचा के मरण को देखकर ब्रह्मा के वरदान से प्रबल महापराक्रमी अतिकाय हजारों सूर्य के समान प्रकाशित अस्त्र शस्त्र के लिये किरीट कुंडल को धारण किये गर्जना करते वानरों पर आक्रमण किया। उस राक्षस के धनुष बाण के शब्द से तथा गर्जनासे वानरोंने यह जाना कि पर्वताकार यह

कुंभकर्ण फिर भी युद्ध में आया है । कुम्भकर्ण उसको जानकर वानरी सेना भागने की इच्छा किये परन्तु वीर पुरुषों को समर से भागना अधर्म है इस कारण सब वानर श्रीरामजी के शरण में आये। पर्वताकार शरीर को धारण किये और अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र को लिये गर्जना करते रथ पर चढ़े राक्षस को देखकर विस्मय पूर्वक श्रीरामचन्द्रजी विभीषण से बोले, हे राक्षसेन्द्र ! यह पर्वतके समान विशाल अस्त्र शस्त्र से युक्त कौन राक्षस है । इसके रथ में हजार घोड़े जुते हैं । जैसे भूतों को सङ्गलिये शिवजी चलते हैं। वैसेही यह राक्षस शूल प्रास तोमर आदि अस्त्रों को संग लिये है । जैसे धनुष बाण को चढ़ाये इन्द्र आकाश में शोभित होते हैं वैसे यह राक्षस सोने के धनुष बाण लिये इन्द्रके समान देखाई देता है । और इसकी ध्वजा राहु की ध्वजा के समान है । इसके बाण का प्रकाश दिशाओं में व्याप्त होरहा है । अठारह बीस हजार तूणीर इसके रथपर रक्षित है, और इस राक्षसकी शरीर सूर्य के समान चमकती है। दश हाथके लम्बे खड्ग इसके दोनों बगल रखे हैं, इसका मुख छिद्रकाल के मुखके समान है । इसकी भुजाओं में सोने के केयूर बधे हैं । इसके दोनों विशाल शृंग हिमालयके दोनों शिखर के सदृश हैं । इस राक्षस का भयंकर मुख उज्वल कुंडल के प्रकाश से शोभित हो रहा है । हे महाबाहु विभीषण ! इस राक्षस के नाम व गुण को कहो । इसको देखकर भय के मारे यह सब वानर भागने की इच्छा करते हैं । श्रीरामचन्द्र को विस्मययुक्त पूंछने से विभीषण विनयान्वित होकर उस राक्षस के नाम व गुण को कहने लगे । हेभगवन् ! कुबेरके भाई राक्षसेन्द्र रावणका यह पुत्र है । इसमें पिता के समान बल व पराक्रम है । यह सब अस्त्र शस्त्र को जानने वाला है और यह राक्षस घोड़ा से हाथी से पैदल खड्ग से और रथ से युद्ध करना जानता है और साम दान दण्ड भेद आदि राजनिति को भी जानने में महा चतुर है । इसी के भुजा के पराक्रम को देख कर लंकापुरी के राक्षस सदा निर्भय रहते हैं । यह धान्यमालिनी का पुत्र

है और इसका नाम अतिकाय है। इसने अति कठिन तपस्या करके शत्रु को पराजय करने वाले अस्त्र को ब्रह्मा से लिया है। ब्रह्मा ने अस्त्र सहित इसे बरदान दिया है कि देवता व दैत्यों से तेरी मृत्यु न होगी। यह कहकर इसको एक दिव्य कवच दिया है जो सामने रथ पर सूर्य के समान चमकता है। उसी बरदान के प्रभाव से अनेक देवता दैत्य व राक्षस यक्ष आदि को पराजय किया है और इसने इन्द्र वज्र को तथा वरुण के पाश को भी छीन लिया है। यह अतिकाय राक्षसों में श्रेष्ट व देवता दानवों के अभिमान को नाश करने वाला है। इसलिये हे रामजी! पहिले से प्रयत्न कर लीजिये क्योंकि यह बलवान राक्षस अपने बाणोंसे पहिलेही बानरों नाशका करेगा। तब तक बलवान अतिकाय बानरी सेना में आकर बार बार धनुष को चमकाने लगा और गर्जना करने लगा। पराक्रमी अतिकाय को समर में आया देखकर कुमुद द्विविद मैन्द नील और शरभ आदि बानरोंमें प्रधान वृक्ष पर्वत व शिला आदि को लेकर उस राक्षस की ओर दौड़े। परन्तु अस्त्र शस्त्र विद्या में कुशल राक्षस बानरोंके सकल अस्त्रों को अपने बाण से काट डाला और बानरोंपर इतना बाण मारा कि वह बानर बाण से पीड़ित हो युद्ध करने में असमर्थ हो गये। जैसे अभिमान से भरा क्रोधित सिंह मृगाओं के झुण्ड को क्षणभर में नाश कर देता है वैसेही वह अतिकाय राक्षस अपने बाणों से बानरों को थकित कर दिया। जब वह राक्षस अपने बाण से बानरों को पीड़ित कर चुका तब श्रीराम चन्द्रजी के समीप आकर अभिमान युक्त बचन को बोला धनुष बाण को लेकर मैं रथपर आया हूं, परन्तु इन प्राकृत बानरों के साथ युद्ध करना नहीं चाहते, अब जिसको शक्ति हो और जो व्यवसाय में युक्त हो वह हमको युद्ध दान देवे। उस राक्षस के अभिमान भरी बात को सुनकर शत्रुओं को नाश करने वाले क्रोध युक्त लक्ष्मणजी शत्रु के उत्कर्ष को न सहन करके धनुष बाण को लिये राक्षस के सन्मुख आये और तूणीर से बाण को निकाल कर धनुष पर रख कर राक्षस के सन्मुख

खड़े होगये। लक्ष्मणजी के धनुष के शब्द से आकाश समुद्र दशो दिशा व्याकुल होगया और उस शब्द से राक्षसों का हृदय कांप उठा भय को देने वाले लक्ष्मणके धनुषके शब्दको सुनकर रावण का पुत्र अतिकाय विस्मित होगया और अपने भी धनुष पर बाण को चढ़ाकर लक्ष्मण से बोला, हेलक्ष्मण ! तुम पराक्रम में न्यून हो और अभी बालक हो हमारे सामने से चले जाओ, क्यों काल के वश होकर हमारे हाथ अपना प्राण देते हो देखो हमारे बाण वेग को हिमवान पृथिवी व आकाश नहीं सहन कर सकता है। तुमको उचित नहीं है कि शयन किहुई कालाग्नि को अपने नाश के लिये अपनेही जगावे। धनुष बाण को उतार देओ और अपना प्राण लेकर हमारे सामने से भाग जाओ। यदि तुम अपने बल व पराक्रम के अभिमान से नहीं जाना चाहते हो तो क्षण भर में यम पुरी को जाओगे शत्रुओं के अभिमान को नाश करने वाले हमारे इन बाणों को देखो, और सब अस्त्रों में श्रेष्ठइस शिव के त्रिशूल को देखो। सर्प के समान हमारे यह बाण तुमारे रुधिर को इस भांति पान करेंगे जैसे क्रोधित सिंह हाथी के रक्त से तृप्त होता है। ऐसा कहकर रावण का पुत्र अतिकाय अपनी धन्वा पर बाण को रखकर खींचा रोष युक्त गर्वित राक्षस के बचन को सुनकर क्रोध की अग्नि से प्रज्वलित लक्ष्मण बोले—हेराक्षस! इस प्रकार प्रलाप करने से तुम प्रधान नहीं हो, और अपनी बड़ाई अपने मुख से करने पर कोई सत्पुरुष नहीं गिना जाता, मैं धनुष बाण को लेकर तुमारे सन्मुख खड़ा हूं जो कुछ तुमारे में पराक्रम हो सो हमको दिखाओ। अपना कार्य करके उतीर्ण होओ वृथा प्रलाप करना नहीं अच्छा। जो पुरुषार्थ करके दिखलाता है वही शूरवीर है। तुमारे पास अनेक अस्त्र शस्त्र हैं और रथ पर बैठे हो, चाहे धनुष बाण से चाहे अन्य अस्त्रों से अपना पराक्रम दिखाओ। देखो यह हमारे बाण आज तुमारे शिर को इस प्रकार गिरावेंगा जैसे वायु अपने झकोरोंसे ताक फल को गिराता है। आज हमरे स्वर्ण मय यह बाण तुमारे शरीर

के रुधिर को पीवैगा। हेराक्षस! हमको बालक जानकर तुम हमारी अवज्ञा न करो, संग्राम में बालक व वृद्ध सभी का मरण होता है। बालक विष्णु तीनो लोक को नाप लिया है। लक्ष्मण के वचन को सुनकर क्रोधित राक्षस धनुष पर बाण को रखकर लक्ष्मण पर चलाने को प्रस्तुत हुआ। लक्ष्मण व उस राक्षस के युद्ध कुतूहल को देखने के वास्ते देवता गंधर्व यक्ष दानव आदि युद्ध विमानों पर बैठकर आकाश में स्थित होगये। इसके बाद अतिकाय कुपित होकर लक्ष्मण पर इस प्रकार बाण को छोड़ा कि जो बाण आकाश को भेदन करता हुआ लक्ष्मण की ओर चला, लक्ष्मणजी राक्षस के बाण को अपने ऊपर आते देखकर अपने बाण से उसको काट कर गिरा दिये। बाण का कटना देखकर राक्षस ने पांच बाण को एक साथ छोड़ा। लक्ष्मणजी राक्षसे उस बाण को भी अपने तीक्ष्ण बाण से काट दिये। और अपने बाण को धनुष पर चढ़ाकर बड़े वेग से राक्षस को मारे, वह लक्ष्मण से छुटा हुआ बाण राक्षस के ललाट में जाकर लगा, उस भयंकर बाण के लगतेही राक्षस के मस्तक से रुधिर धारा के समान बहने लगा। रुद्र बाण के लगने से आकुल अतिकाय मूर्छा हटजाने पर सोचने लगा कि यह हमारा शत्रु युद्ध करना अच्छा जानता है, ऐसा शोचकर मुह बाये रथ को और नीरुच में ले आया और एक तीन पांच और सात बाण को एक साथ अपने धनुष पर चढ़ाया और क्रम से एक को छोड़ा तीनको धारण किया पांचको खींचा सातको उत्सर्जन किया, तौभी युद्धविशारद लक्ष्मणी अग्नि के समान ओजस्वी अपने बाणों से राक्षस के सम्पूर्ण बाणों को छेदन किये। रावण का पुत्र अतिकाय अत्यन्त क्रोधित होकर त्रिशूल को छोड़ा जो त्रिशूल आकर लक्ष्मणजी के हृदय में लगा। जैसे मतवाली हाथी के मस्तक से मद गिरता है वैसे लक्ष्मणजी के हृदय से रक्त बहने लगा परन्तु उस त्रिशूल से कुछ भी पीड़ा को न पाकर लक्ष्मणजी अग्नि बाण को धनुष पर रखकर राक्षस पर छोड़े, रावण का पुत्र अतिकाय रौद्र

अस्त्र लक्ष्मण को मारा । लक्ष्मणजी दिव्यास्त्र को छोड़े, वह दिव्यास्त्र शत्रु के प्राण को हरण करने में यमराज के समान है । राक्षस ने अग्नि बाण को अपने ऊपर आते देखकर सूर्यास्त्र से प्रयोग करके रौद्र अस्त्र को छोड़ा अब वह रौद्र अस्त्र और अग्नेयास्त्र ये दोनों अस्त्र परस्पर लड़ने लगे जैसे क्रोधित दो सर्प एक साथ लड़ते हैं । वह दोनों अस्त्र आपस में लड़कर पृथिवी पर गिर पड़े । इसके उपरान्त राक्षस ने यम राज के ऐषीक एक अस्त्र को चलाया परन्तु लक्ष्मणजीने ऐन्द्र अस्त्र से उस राक्षस के बाण को काट कर गिरादिये । रावणात्मज अपने बाण को विफल देखकर याम्यास्त्र को लक्ष्मण के ऊपर छोड़ा । लक्ष्मणजी वायव्यास्त्र से उस राक्षस के अस्त्र को छेदन किया तब क्रोधित लक्ष्मण इस प्रकार बाणों की वर्षा राक्षस के ऊपर किया जैसे बद्दल गण जल की वृष्टि करते हैं । परन्तु कवच के प्रभाव से वह बाण निष्फल होकर भूमि में गिर पड़े । तब लक्ष्मणजी फिर भी एक हजार बाण को छोड़े परन्तु उन बाणोंसे कुछ भी राक्षस का सामार्थ्य नहीं क्षीण हुआ । और लक्ष्मणजी अपने बाणों से अतिकाय को व्यथित नहीं कर सके । लक्ष्मणजी को चिन्ता में देखकर वायू देवता इनके समीप में आकर बोले, कि यह राक्षस ब्रह्माजी के वरदान से पराक्रमी है, और उन्हीं के दिये हुए कवच को लगाया है । इस कवच के प्रभाव से यह राक्षस शत्रु से पराजित नहीं होगा । इसको ब्रह्मास्त्र से मारिये, तब यह राक्षस मरेगा क्योंकि ब्रह्मास्त्र के सामने यह कवच कुछ काम नहीं करेगा । वायू देवता के वचन को सुनकर शत्रु को दमन करने वाले लक्ष्मण अपने धनुष पर ब्रह्मास्त्र को जिस समय चढ़ाये उस समय सूर्य चन्द्रमा आकाश तारा गण ग्रह नक्षत्र और पृथिवी कांपने लगी । लक्ष्मणजी कठोर व उग्र ब्रह्मास्त्र को राक्षस को नाश करने के लिये छोड़े उस बाण को रावण का पुत्र अतिकाय आने ऊपर आते देखकर अपनी रक्षा के लिये अनेक अस्त्र शस्त्र को छोड़ा परन्तु वह ब्रह्मास्त्र सबको काटता हुआ राक्षस के समीप में आया और पहिले उस राक्षस के कीरिट को काटकर उसके शिर को काट लिया ।

शिर के कटने से वह राक्षस रथ से ऐसा गिरा जैसे पर्वत का शिखर टूटकर गिरता है। अतिकाय के मरण को देखकर राक्षसी सेना अत्यन्त आकुल हो गई और बानरों के भय से युद्धसे भागने की इच्छा किया अपने स्वामी के मरण से पीड़ित राक्षस रोदन करते मलीन हृदय क्षीण कान्ती से युक्त लंकापुरी को चले, इधर बलवान बानरी सेना लक्ष्मणजी की पूजा व स्तुति करने लगे॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे एकसप्ततितमः सर्गः॥ ७१॥

देवान्तक, नरान्तक, त्रिशिरा, अतिकाय, महोदर आदि राक्षसों को समरमें मरनेसे शेष निशाचर संग्रामका समाचार कहनेके लिए रावण के समीप गये। उन शेष राक्षसों के मुखसे इन बलवान प्रतापी योधाओं के मरण को सुनतेही राक्षसेन्द्र के आंख से आंसू बहने लगे, और वह राक्षसेश्वर चिन्ता के मारे आकुल होगये। राक्षस रावण को दीन व मलीन देखकर रावण के पुत्र इन्द्रजित सन्तोष पूर्वक बोले—हेराक्षसेन्द्र! हेपिता! जब तक आपका पुत्र इन्द्रजित जीवित है तब तक आप को चिन्ता नहीं करनी चाहिये, क्योंकि संग्राम में इन्द्रजित के बाण से अपने प्राण को कोई भी बचाने नहीं सकता है आज देखिये कि हमारे बाण से लक्ष्मण सहित राम के अङ्ग कटेंगे तब गतायुष होकर वे दोनों पृथिवी में शयन करेंगे, हेपिता! इन्द्र के शत्रु मेघनाद की प्रतिज्ञा निज पौरुष से और शंकर तथा ब्रह्मा के वरदान रूपी वचन से युक्त है कि इसी अमोघ बाणों से आज राम लक्ष्मण को उन्हीं मरे हुए पितरों के लिये तर्पण करूंगा। जैसे बलि के यज्ञ में विष्णु ने अपना पराक्रम दिया था वैसेही आज इस समर में इन्द्र विष्णु रुद्र अग्नि चन्द्रमा सूर्य यक्ष गंधर्व साध्य आदि देवता हमारे पराक्रम को देखेंगे। इस प्रकार की प्रतिज्ञा करके और राक्षसेन्द्र से आज्ञा लेकर वायु के समान तेज चलने वाले खच्चर जोते हुये रथ पर बैठकर समर में चलने की इच्छा किया और उनके पीछे अनेक बलवान राक्षस अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र को लिये चले, कितने राक्षस हाथी से

कितने घोड़ों से कितने व्याघ्र बिल्ली सर्प बिडाल गदहा ऊंट शूकर सिंह सियार कौवा हंस मयूर आदि पशु पक्षियों पर चढ़े और नाना विधि शस्त्र लिये शंख भेरी मृदंग आदिको बजाते देवतोंके शत्रु मेघनाद राक्षसी सेना से पर्याप्त होकर समर देखने को चला । उज्वल छत्र चमर से तथा उज्वल शंख से उस राक्षस की ऐसी शोभा हुई जैसे आकाश में पूर्ण चन्द्रमा की शोभा होती है सोने की मुठिया जड़ी चमर उस राक्षस के दोनों ओर हिलते थे, जिस प्रकार आकाश में सूर्य तपते हैं वैसेही युद्धस्थल में प्रकाशित होता था । इस प्रकार चतुरंगिणी सेना को लिये हवन करने की भूमि पर अर्थात निकुम्भिला नाम स्थान पर आकर ठहरा । वहां आकर अनेक मन्त्रों से अग्नि में आहुती देने लगा । पहिले तो गंध माला और लावा आदि से पूजा करके पीछे बकरा के मांससे हवन किया और अनेक बाणोंको बिछा दिया, तथा विभीतक वृक्ष के काष्ट की समिधा से हवन किया और रक्त वस्त्र को धारण किया क्योंकि अभिचार कर्म में रक्त वस्त्र को धारण करना चाहिये । पहिले कहे हुए बाण पत्रों से जीवित बकरों को उन्हीं बाणपत्रों से उठाकर हवन किया । सजीव बकरा के हवन करने से आहवनीय अग्नि के प्रकाश इतने बढ़े कि जिसप्रकाश से राक्षस ने पहिले के समान अपना विजय माना । और अग्नि की प्रदक्षिणा करके अग्नि देवता से दी हुई हविको प्रसन्नता पूर्वक ग्रहण किया । उस यज्ञ से प्रसन्न होकर ब्रह्माजी स्वयं आये और अपने अस्त्र को फिर भी मेघनाद के लिये उपदेश दिया । मेघनाद ब्रह्माजी के उपदेश को पाकर अपने सब अस्त्रों को उसी ब्रह्मास्त्रसे अभिमान्त्रित किया, अभिमंत्रित करने से उन अस्त्रों में ऐसा तेज बढ़गया कि जिससे आकाश पृथ्वी और देवगण त्रासित होने लगे । अचिन्त्य पराक्रमी राक्षस अग्नि को प्रसन्न करके यज्ञभूमि से राक्षसी सेना सहित युद्धभूमि में आया । समर में आतेही तोमर अंकुश और बाण को बानरों पर छोड़ने लगा । रावणि को क्रोधित देखकर समस्त राक्षस प्रसन्न होकर बानरों को मारने लगे ।

और जयकी इच्छा करने वाले राक्षस वानरी सेनाके मध्य में गर्जना करने लगे। और वानरों पर बाणोंकी वर्षा करने लगे। राक्षसों के अस्त्र शस्त्र से पीड़ित वानर शिला पर्वत वृक्ष आदि की वर्षा राक्षसों पर करने लगे। फिर क्रोधित रावण का पुत्र मेघनाद बाणों से वानरों के अंग को छिन्न भिन्न कर दिया बाणसे पीड़ित वानरों का संकल्प हरण होगया अर्थात् युद्ध से वानरों की अभिलाषा घटने लगी। तौभी संग्राम के द्वारा रामचन्द्रजी के कार्य सिद्धि के लिये अपने जीवनकी आशा को छोड़ कर वृक्ष पर्वत व शिला आदि को लेकर राक्षसों से युद्ध करने लगे तथा गर्जने लगे। वानरों के महा अस्त्र से पीड़ित राक्षसों को देखकर रावणी अन्तर्ध्यान होकर ऐसी माया युद्ध किया कि वानरी सेना व्याकुलता से मूर्छित होगई। इन्द्रजीत ने अठारह अमोघ बाण गंधमादन को नव बाण नल को सात बाण मैन्द को पांच बाण गज नाम वानर को दश बाण जाम्बवान को तीस नील को मारकर मूर्छित किया इसके बाद सुग्रीव अङ्गद द्विविद और ऋषभ को ब्रह्मास्त्र से मृतक सा बना दिया और जितने प्रधान वानर रहे उनको भी अपने तीक्ष्ण बाणों से पीड़ित करदिया। बाण से आकुल वानरों को देखकर बलवान रावण का पुत्र और भी बाण मारा। बाणकी वर्षासे तथा अस्त्र की वर्षा से वानरों को असमर्थ कर दिया। युद्धमें वीर मेघनाद अपनी सेना को छोड़कर वानरी सेना में आया और अन्तरध्यान होकर इस प्रकार बाणोंकी वर्षा करने लगा जैसे बदल जल की वर्षा करते हैं। जैसे इन्द्र के वज्र से पंख कट जाने पर पर्वत असमर्थ हो गये वैसे इन्द्रजीत के माया युद्ध से पीड़ित वानर असमर्थ हो गये। और मेघनाद के बाण की वर्षा में सूर्य छिप गये। तौभी राक्षस ने शूल खड्ग परशु आदि को वानरी सेना पर चलाने से नहीं रुका। उन वानरों के अङ्ग से रुधिर बहकर ऐसी शोभा को बढ़ाया जैसे फूलाहुआ पलाश शोभित होता है। जो वानर ऊपर को देखते थे उनकी आंखको बाणसे नष्ट करदेता था। हनुमान सुग्रीव अङ्गद गंधमादन जांबवान सुषेण

वेगदर्शी मैन्द द्विविद नील गवाक्ष गवय शरभ ऋषभ पनस केसरी हरिलोभ विद्युदेष्ट्र सूर्यमुख ज्योतिमुख दधिमुख यावकाक्ष नल कुमुद आदि प्रधान व बलवान बानरों को इस प्रकार पीड़ित किया कि समर में इन लोगों की उठने की सामार्थ्य तक नहीं रही। तब राक्षस ने श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी पर बाणों की वर्षा किया। राक्षस की बाण वर्षा से अपने को आच्छादित जानकर श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मण! ब्रह्मास्त्र को लेकर फिरभी रावण का पुत्र मेघनाद आया है, और अपने उज्वल बाणों से हमारी बानरी सेना का संहार कररहा है। ब्रह्मा से वरदान को पाकर दुष्कर्म करने में समाहित राक्षस अन्तर्ध्यान होकर युद्ध करता है इस राक्षस को मारने के लिये कौनसी उपाय करनी चाहिये। यदि कहो कि राक्षस अदृश्य है तो भी दिव्यास्त्र से इसको नाश करना चाहिये सो होना ठीक नहीं है। क्योंकि भगवान ब्रह्मा की आज्ञा से हम लोगों की रक्षा हनुमान करेंगे इसलिये हम ऐसा मानते है कि संसार को सृष्ट व संहार करने वाले ब्रह्माजी के अस्त्र की महिमा को हम जानते हैं, इस लिये इस ब्रह्मास्त्र को हमारे साथ ध्यानावस्थित होकर आपनी सहन करिये। क्योंकि हमारी रक्षा करने वाले बानर शूरबीर राक्षस के बाण से निहत होकर पृथ्वी में पड़े हैं तो हम लोगों को राक्षस का बाण अंगीकार करना चाहिये। अथवा जब हम लोग भी ध्यान पूर्वक इस अस्त्र को सहन करेंगे तब ब्रह्माजी के अनुग्रह से हम लोगों का भी बिजय होगा। जब हम लोग भी इस अस्त्र के लगने से इन शूरबीरों के समान पीड़ित होंगे तो यह राक्षस अवश्य लंकापुरी को चला जायेगा पीछे इसको बध करने का उपाय किया जायेगा। इसके बाद मेघनाद के बाणजाल से जब रामचन्द्र व लक्ष्मण जी पीड़ित हुए तब रावणात्मज गर्जना करता हुआ रावणके समीप चला गया और प्रसन्न होकर लक्ष्मण तथा बानरों सहित श्रीरामचन्द्रजीकी बाणव्यथाको कह सुनाया॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे त्रिसप्ततितमः सर्गः॥ ७२॥

श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी को सुग्रीव नील अंगद जांबवन्त आदि के सहित मूर्छित करके मेघनाद ने अपने कर्तव्य को सफल जाना, किन्तु सब लोगों को कठिन मोह में प्राप्त देखकर बुद्धिमानों में श्रेष्ठ विभीषण प्रधान बानर भालुओं को धैर्य देने वाले बचन को समय के अनुसार बोले—हेवीरो! यह समय विषाद करने का नहीं है, देखो ब्रह्मास्त्र की मर्यादा को पालन करते हुए श्रीरामचन्द्रजी ने लक्ष्मण के सहित घोर मूर्छा में प्राप्त हैं तौभी श्रीरामचन्द्रजी को प्राण पीड़ा नहीं है इसलिये तुम लोगोंको विषाद करना और राक्षसों का भय मानना उचित नहीं है। क्योंकि उस राक्षस को ब्रह्माजी ने यह महा अस्त्र दिया है। उस अस्त्र के पराक्रम को अमोघ जानकर श्रीरामचन्द्रजी ने क्षमा पूर्वक उस अस्त्र को सहन किये है। फिर तुम लोगों को इन बाणों के लगने से विषाद नहीं करना चाहिये। विभीषण के बचन को सुनकर परम बुद्धिमान हनुमान ब्रह्मास्त्र की पूजा करके बोले, इस ब्रह्मास्त्र के लगने से जोजो बलवान बानर पीड़ित हुए हैं उनमें जिनकी मूर्छा हट गई हो उनको विचार पूर्वक धैर्य देना चाहिये। इसके बाद विभीषण व हनुमान लुकारी को हाथ में लेकर समराङ्गण में घूमने लगे। हाथ पैर और पूंछ को पसारे अंग से रुधिरको बहते पर्वतके समान विशाल बानरों को रणभूमि में परे देखने लगे। सुग्रीव अंगद नील शरभ गंधमादन जांबवान सुषेण वेगदर्शी मैन्द नल सूर्यमुख द्विविद आदि बानरों को समर में अचेत पड़ा देखे। इस प्रकार सरसठ ६७ करोड़ बानरों को एक ब्रह्मास्त्र से अकेला मेघनाद पराजित व अममर्थ कर दिया। समुद्र के समान अमोघ व गंभीर बानरी सेना में खोजते हुए बाण की व्यथा से अत्यन्त पीड़ित ब्रह्मा के पुत्र बुड्ढे जाम्बवान को देखकर विभीषण बोले—हेआर्य्य! इस राक्षस के तीखे बाणों से आपके प्राण की हानि तो नहीं हुई। विभीषण के बचन को सुनकर भालुओं में श्रेष्ठ जाम्बवान बड़े कष्ट से बोले—हेराक्षसेन्द्र! तुमारे बचन से हमने तुमको जाना है, नहीं तो बाणसे हमारे अंग ऐसे वेधित हैं कि

आंख से तुमको देखने की सामर्थ्य हमारे में नहीं है। हेविभीषण! यह तो कहो कि वानरों में श्रेष्ठ हनुमान तो जीवित हैं। जांबवान के वचन को सुनकर विभीषण बोले—हेऋक्षराज श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी को न पूंछकर आपने हनुमानको पूंछा है इसका कारण क्या है अथवा राजपुत्र से और सुग्रीव आदि से हनुमान पर आपका प्रेम अधिक है विभीषण के वचन को सुनकर जांबवान बोले—हेराक्षसेश्वर! हमने हनुमान को जो पूंछा है उसका कारण सुनो। हनुमानको जीने से हम सब जीवित हैं और हनुमान को मरने से हम सब भी जीते हुए मरे के समान हैं। वायु व अग्नि के समान बलवान हनुमान से हम वानरों की तथा श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी के जीवन की आशा हो सकती है। जांबवान के इस प्रकार वचन को सुनकर हनुमान ने उनके दोनो चरण को पकड़ कर प्रणाम किये। हनुमान को वचन से जानकर अपने नया जन्म पाने के समान हर्षित होकर बोले, आइये आप वानरों की रक्षा करने में समर्थ हैं। हेमित्र! तुमारे समान पराक्रमी दूसरा कोई है, यह समय तुमारेही पराक्रम का है इस में दूसरे वीर की गति नहीं है। इस समय श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी को बाण की व्यथा से रक्षा करके वानरों को प्रसन्न करने योग्य हो। हेहनुमान! समुद्र के ऊपर ऊपर हिमालय पर्वत पर चले जाओ, वहां सोने के शिखर को धारण करने वाला ऋषभ नाम का पर्वत है। उस पर्वत में सिंह आदि जन्तु भी नहीं प्रवेश कर सकते हैं। उसी पर्वत के समीप में कैलास है। तो ऋषभ व कैलास पर्वत के शिखर के मध्य में अनेक औषधियां प्रकाशित रहती है, नामके अनुसार औषधियों में महा गुण हैं। उन्हीं औषधियों के मध्य में ब्रह्मा से उत्पन्न संजीविनी नाम की औषधि है। उस में इतना अधिक प्रकाश है कि उस औषधी के प्रकाश से दिशायें प्रकाशित होती हैं। वह मरे हुए भी प्राणी के प्राण को देने वाली है और बाण की पीड़ा को क्षण भर में हरण करने वाली है। उस औषधी में इतना विशेष गुण है कि कटे हुए शिर को मिला देती है। हे वायु पुत्र हनुमान

तुम उस औषधी को लेआने के लिये शीघ्रही जाने में समर्थ होओ और इन बानरों के प्राण की रक्षा करो। वायु के पुत्र हनुमान जांबवान के बचन को सुनकर समुद्र के समान बलके उद्रेक से गंभीर होगये और दूसरे पर्वत के समान विशाल हनुमान त्रिकूट पर्वत के शिखर पर चढ़कर हिमालय को देखने लगे। हनुमान के चरण के भार से त्रिकूट पर्वत के अनेक वृक्ष टूट गये और कपिराज के भार को वह त्रिकूटपर्वत नहीं सहन कर सका। जब हनुमान त्रिकूट पर्वत से उछले तो उनके चरण के धका लगने से वृक्ष टूट कर गिर पड़े और उन वृक्षों के रगण से आग बरने लगी। पर्वत का शिखर हिलने लगा। त्रिकूट पर्वत को हिलने से राक्षस व बानर सभी व्याकुल होगये, क्योंकि लंकापुरी त्रिकूट ही पर बनी थी और लंकापुरी की खाई व छत कनगुरे आदि टूट पड़े। हनुमान पर्वत को पीड़ित करते बड़वाग्नि के समान मुखवाले इस प्रकार गर्जना किये कि राक्षसों की निद्रा खुल गई और शूरबीर द्वारपालकों के हाथ से अस्त्र गिर गया, शेष राक्षस भय से कांपने लगे। इसके बाद हनुमानजी त्रिकूट पर्वत के शिखर से उछल कर समुद्र को प्रणाम किये और रामचन्द्रजीकी सहायता के लिये समुद्र के ऊपर ऊपर गमन किये। पूंछ और कान उठाये पीठ व गर्दन को नीचा किये मुख बाये प्रचण्ड वेग से युक्त आकाश मार्ग से हनुमान चले, वृक्ष पर्वत व शिला आदि को त्रास करते हुए त्रिकूट बानरों के अनुगत जो वृक्ष खण्ड आदि को बाहु के वेग से प्रेरणा करते हुए इस प्रकार समुद्र के पार आये जैसे सर्प को भक्षण करने के लिये गरुड़ जाते हैं। समुद्र के जल के तरंग के मध्य में घूमते हुए जन्तुओं को देखते हुए ऐसा घूमकर पार होगये जैसे विष्णु का चक्र विष्णु के हाथ से छूट कर घूमता है। इसके बाद वृक्ष पर्वत नदी तालाब पशु पक्षी और नगर ग्राम को भी देखते हुए पिता के समान पराक्रमी हनुमान सूर्य नारायण के मार्ग से हिमालय को चले। किंश्चित् मात्र वायु की सहायताको पाकर अपने गर्जनाके शब्दों से दिशाओं

को पूर्ण करते हिमालय के समीप पहुंचे । वह हिमालय पर्वत दरी कन्दरा गुहा झरना सोता आदि से संपन्न है, चांदी के समान उज्वल उसका शिखर हैं उस पर्वत पर अनेक प्रकार के वृक्ष व लतायें लगी हैं । तथा अनेक रंगके पशु व पक्षी हिमालयके शिखर पर बिहार करते हैं, तथा देवता गंधर्व विद्याधर व अप्सरा भी सदा हिमालय के शिखर पर बास करते हैं । इसके बाद हिरण्य गर्भ के स्थान को रुद्र के रहने योग्य कैलास को और भगवान हयग्रीव के स्थान को चतुर्मुख ब्रह्मा के लोक को देखे इसके उपरान्त उनके सेवकों के अग्नि वरुण सूर्य कुबेर इन्द्र आदि प्रधान देवतों के लोक को देखे, इन देवताओं के लोक को देखकर कैलास व ऋषभ पर्वत के मध्य में उन दिव्य औषधियों को देखे आग की ढेर के समान औषधियों के प्रकाश को देखकर हनुमान विस्मित होगये कि इन औषधियों के मध्य में संजीविनी को किस उपाय से लाभ करेंगे । ऐसा अपने मन में विचार करके उन औषधीयों के खोजने में प्रवृत्त हुए । एक हजार योजन मार्ग का अति क्रमण करके दिव्य औषधियों को धारण करने वाले पर्वतों को हनुमान अन्वेषण किये, परन्तु अर्थि को आया हुआ जानकर वह संजिवनी गुप्त हो गई । खोजने से औषधी को न पाकर हनुमान गर्जना किये और क्रोध से युक्त हो पर्वत राज से बोले, हे पर्वत राज जो आपने रामचन्द्रजी पर दया नहीं करते हो इस उदासीनता का क्या कारण है । यदि तुम अपने बलके अभिमान से श्रीरामचन्द्रजी की सहायता नहीं करते हो तो तुम हमारे बल को देखो । ऐसा कहकर हनुमानजी वृक्षलता पशु पक्षी आदि के सहित उस पर्वत के शिखर को साहस पूर्वक हिलाये और अपनी पूँछ में लपेट कर पर्वत के शिखर को उखाड़ लिये जैसे गरुड़ सर्प को उठा लेते हैं इस प्रकार उस पर्वत को लेकर रात्रि काल में आकाश मार्ग से लंकापुरीके समीप पहुँच कर गर्जना किये और बानरी सेना के मध्य में उस पर्वत को रख दिये । हनुमान जी के इस दुष्कर कर्म को देखकर देवगण उनपर पुष्प वर्षा किये और

दुन्दुभी बजाकर उनकी स्तुति करने लगे। इधर जांबवान आदि वानर तथा विभीषण हनुमान को साष्टाङ्ग प्रणाम करके गले से मिले। इसके बाद उस महौषधी से युक्त वायुके लगनेसे रामचन्द्र व लक्ष्मणजीकी मूर्छा हट गई शरीर से बाण का घाव नष्ट हो गया उसी प्रकार वानर गण भी चैतन्य हो गये जैसे रात का सोया हुआ मनुष्य प्रातःकाल जागता है और इधर जब लंकापुरी में वानर राक्षसों का युद्ध आरंभ हुआ तब से रावण ने यह आज्ञा दिया था कि वानरों के हाथ से जो राक्षस मरें वे शीघ्रही समुद्र में फेंके जावें परन्तु मरेहुये वानर उसी रणभूमि में पड़े थे इस कारण उस महौषधी की हवा लगने से सब वानर जाग उठे ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे चतुः सप्ततितमः सर्गः ॥७४॥

इसके उपरान्त उसी वेग से हनुमान पर्वत के शिखर को हिमालय के समीप पहुंचाकर फिर श्रीरामचन्द्रजी के समीप चले आये । इस प्रकार कठिन कर्म तीसघटिका के मध्य में हनुमान ने किया, इसके बाद वानरों के राजा सुग्रीव आगे के कर्तव्य को विचार कर वानरों को सूचना देने के लिये हनुमान से बोले, कि जिस प्रकार कुम्भकर्ण मारा गया और रावण के अनेक मन्त्री व उसके पुत्र मारे गये अब यह राक्षस वैसा युद्ध नहीं करेगा । यह मायावी है इसके साथ कठिन युद्ध का आरम्भ करना होगा । इसलिये हमारी सेना में जितने बलवान् वानर हैं शीघ्र कार्य करनेमें समर्थ हैं वह सब लंकापुरी पर चढ़कर अग्नि की वर्षा करें ? जब सायंकाल में सूर्य अस्त हो गये तब वानरों ने लंकापुरी को जलाने के लिये प्रस्थान किये और लंकापुरीको हाथमें लिये वानर लोग दौड़कर द्वारपर अटारियोंपर मार्गों पर और महलों पर चढ़कर आग की अंगार को छोड़ने लगे । वानरों की संबन्धी अग्नि लंकापुरी को जलाने लगा । और लंकापुरी के छत व कंगूरे टूटकर पृथ्वी में गिरने लगे । वानरों ने पहिले चन्दन अगर मोतीकी माला रत्न व मूंगा आदि को जलाया । फिर साड़ी

पिताम्बर दुशाला कम्बल आदि रखने वाले गृह को जलाया । इसके बाद लंकापुरी में जितने सोने के बर्तन रहे उनको जलाये । इसकेबाद घोड़ा हाथी ऊंट आदि अलंकार को जलाये । फिर जितने अस्त्र शस्त्र रहे उनको जलाये । फिर उनके आसन मृगचर्म व्याघ्रचर्म आदि आसन के ढेर को जलाये । फिर जिस गृह में कस्तूरी केसर मोती आदि रखी थी उस गृह को जलाये । इसके उपरान्त राक्षसों के उत्तम गृह को जलाये । फिर राक्षसों के भूषण वस्त्र व अलंकार तथा अस्त्र आदि को उनके घरों में जाकर अलग अलग जलाया । अर्थात् पहिले रावण की जो कुछ संपत्ति जिन जिन घरों में पर्वत के समान ढेर लगी थी पहिले उनको जलाकर पीछे और राक्षसों के घर में जो वस्तु अलग अलग रही उसको और उनके घरों को जलाने लगे । अब मदिरा पान से विह्वल राक्षसों की जितनी स्त्रियां उत्तम भूषण वस्त्र को पहिने थी अब उसको जलाने लगे और जितने राक्षस अस्त्र शस्त्र को रखकर अपनी स्त्रियों के साथ भोजन मदिरा पान और भोगविलास करतेथे उसको भी वानरगण जलाये । आग के भय से वे राक्षस राक्षसी अपने बालकों को लेकर प्राण बचाने के लिये भागते थे । इस प्रकार लाखों राक्षसों के गृह को बानरों ने जलाया । वह वानरों से छूटी अग्नि बार बार प्रज्वलित होकर कट्या प्राकार तोरण आदि को जलाने लगे । अटारी व खिड़कियों तथा द्वारों पर जितने मणि मुक्ता व सोने के तोरण बँधे थे बानरों ने उन सबको जलाने लगे । जो राक्षसों की स्त्रियां अत्यन्त विहार करने की अभिलाषा से भूषण वस्त्र को धारण करके पुष्पक आदि विमानों पर शयन किये थीं और अपने अङ्ग से भूषण वस्त्र को उतार कर रख दिये थीं इधर बानरों की आग से वह सब भी बिमानों के सहित जलने लगीं । जैसे इस लोक को प्रलय काल की अग्नि जलाकर भस्म कर देती है वैसेही क्षण भर में बानरों के मुख से आग निकल कर संपूर्ण लंकापुरी को भस्म करदिया । आग के भय से घोड़ों की बन्धन खुलगया तब

वह घोड़े दौड़कर हाथियों की झुंड में जाते थे उनको देखकर हाथियां भी अपने २ बन्धन को तोड़कर इधर उधर दौड़ने लगीं। बानरों की प्रचण्ड आग से जलती हुई लंकापुरी के बालक वृद्ध व स्त्रियां इस प्रकार रोती व चिल्लाती थी कि उनके चिल्लाने का शब्द सौयोजन तक सुनाई पड़ने लगा। युद्ध की अभिलाषा करने वाले बानरों के इस भाव को देखकर कितने राक्षस लंकापुरी से बाहर भागने की इच्छा किये और कितने बलवान राक्षस अस्त्र शस्त्र को लेकर बानरों की सेना में प्रवेश किये, बानर व राक्षसों का इस प्रकार तुमुल शब्द हुआ कि जिस शब्द से दशो दिशा व पृथ्वी पूरित हो गई। जब राक्षसों ने श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी को विशल्य और धनुष बाण को लिये देखा तो राक्षसगण असंभ्रान्त हो गये। और रामजी के धनुष के टंकार को सुन कर कितने राक्षस दूरही से प्राण को त्याग किये। बानर व राक्षसों का शब्द तथा रामचन्द्र व लक्ष्मणजी के धनुष के शब्द से तीनो लोक कांपने लगा। और लंकापुरी में सब जगह श्रीरामचन्द्रजी के बाण गिरने लगे। एकाकार बानरी सेना सिंहनाद करती हुई लंकापुरी के अनेक स्थानों में व्याप्त होगई और जो राक्षस जहां मिलते थे उनको वहीं पर विध्वंस करने लगी। हाथ में लुकारी को लिये और द्वार पर खड़े राक्षसों से युद्ध करते उन बानरों को सुनकर क्रोधागार में प्रवृष्ट रावण, कुम्भकर्ण के पुत्रों को आज्ञा दिये कि तुम दोनों राक्षसी सेना लेकर संग्राम में जा और शत्रुओं से युद्ध करके इनको परास्त करो। रावण की आज्ञा को पाकर कुम्भकर्ण के पुत्र कुम्भ व निकुम्भ राक्षसी सेना को साथ लेकर समर में आये और उन बालकों की रक्षा करने के लिये यूपाक्ष शोणिताक्ष प्रजंघन व प्रकंपन इन चार मंत्रियों को भी आज्ञा दिये कि तुम लोग भी अपनी सेना लेकर चले जाओ। रावण की आज्ञा को पाकर वे चार मन्त्री और दो राज कुमार बलवान राक्षसों की सेना लेकर समर में आये, और बद्दल के गर्जने के समान गर्जना करने लगे। बानरों की उल्का से और राक्षसों के

आभूषण से आकाश उज्वल होगया । उन राक्षसों में कितने चन्द्रमा के समान कितने तारागण के समान आभूषण को धारण किये पृथिवी व आकाश को प्रकाशित करने लगे राक्षसों के आभूषण के प्रकाश से तथा बानरों की उल्का से और अर्धचन्द्रमा के प्रकाश से समुद्र के जल की एक उत्तम शोभा हुई । राक्षसी सेना अनेक प्रकार के रथ ध्वजा व पताका से तथा अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र से परिपूर्ण थी । इस प्रकार घोर राक्षसों की सेना समर में आई देखकर बानरों की सेना गर्जना करके बड़े वेग व पराक्रम के सहित राक्षसों पर आक्रमण किये । जैसे अग्नि के ऊपर पतंग गिरते हैं वैसेही बानरों पर राक्षसों ने अपनी भुजाओं से अस्त्र चलाना आरंभ किया । बानरगण भी वृक्ष पर्वत शिला नख व दन्त से राक्षसों को प्रहार करने लगे । राक्षसों ने अपने तीक्ष्ण बाणों से बानरों के शिर को काटने लगे । दांत व नख से बानरों ने भी राक्षसों का नाश किया । मारने वाले से मारना दांत से जो काटे वह भी उसे दांत से काटे इस प्रकार परस्पर बानर व राक्षसों का युद्ध होने लगा जैसे टिड्डी उड़कर एक में मिलजाते हैं ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे पंचसप्ततितमः सर्गः ॥ ७५ ॥

बानर व राक्षसों के संकुल युद्ध में रावण के मन्त्रियों के साथ अंगद आदि बानरों का युद्ध प्रवृत्त हुआ । कंपन नाम रावण का मन्त्री अंगद को पुकार कर एक गदा मारा, उस राक्षस की गदा को लगतेही अंगद ने पर्वत के शिखर को उठाकर उस राक्षस पर चलाये उस पर्वत के लगतेही राक्षस के अंग से रक्त बहने लगा और मूर्छित होकर गिर पड़ा व मर गया । कंपन को मरते देखकर शोणिताक्ष ने अपने अनेक बाणों से अंगद को व्यथित किया परन्तु बालि के पुत्र प्रतापी अंगद उसके रथ व घोड़ा तथा सारथी को मार डाले । तब वह राक्षस क्रोधित होकर अंगद को खड्ग से मारा । अंगदजी उछल कर उसके हाथ से खड्ग को लेलिये और एक खड्ग उस राक्षस को मारे परन्तु उस खड्ग से भी राक्षस नहीं मरा । तब तक शोणिताक्ष एक महा

गदा को लेकर अंगद की ओर दौड़ा प्रजंघ शोणिताक्ष और यूपाक्ष ये तीनो अंगदजी से गदा युद्ध करने लगे। अंगद को राक्षसों के मध्म में देखकर वानरेन्द्र द्विविद और मैन्द आकर अंगद की सहायता किये और उन राक्षसों से युद्ध करने लगे। तीन बलवान वानरों के साथ तीन राक्षसों का तुमुल युद्ध होने लगा। अंगदादि वानर वृक्षों से उन राक्षसों को मारने लगे परन्तु बलवान प्रजंघ अपने बाणों से उन वृक्षों को काट डाला। जितने वृक्ष व पर्वत शिलाओं से वानरगण राक्षसों को मारते थे उन सबको राक्षसों ने अपने अस्त्रों से काट कर गिरा दिया करते थे। रावण के मन्त्रियोंके भयानक युद्ध से क्रोधित द्विविद व मैन्द एक विशाल वृक्ष को उखाड़ कर शोणिताक्ष को मारे परन्तु प्रतापी शोणिताक्ष अपनी गदासे उस वृक्ष को खंड२ कर दिया। और प्रजंघ एक विस्तीर्ण खड्ग को लेकर अंगद की ओर दौड़ा। खड्ग सहित राक्षस को अपने ऊपर आते देखकर अंगदजी अश्वकर्ण के वृक्ष को उखाड़ कर राक्षस को मारे, वृक्ष के आघात से पीड़ित राक्षस के हाथ से खड्ग भूमि में गिर पड़ा। प्रजंघ अपने खड्ग को हाथ से गिरा देखकर एक मुक्त अंगद के मस्तकमें मारा जिससे अंगदजी क्षण भर मूर्छित होगये क्षण भर के बाद बालि के पुत्र बलवान अंगद एक मुक्का उस राक्षस को ऐसा मारे कि वह राक्षस चिल्लाकर भूमि में गिरा व मर गया। अपने चाचा को मरते देखकर यूपाक्ष रथ पर चढ़ कर एक खड्ग अंगद को चलाया तब तक वानरों में श्रेष्ठ द्विविद रथ से यूपाक्ष को खींचकर एक मुक्का छाती में मारे तब यूपाक्ष व द्विविद के युद्ध को देखकर महा पराक्रमी शोणिताक्ष द्विविद पर धावा किया और एक गदा द्विविद को मारा। दो राक्षसों के मध्य में द्विविद को लड़ते देखकर मैन्द आये और दो बलवान वानर दोनो राक्षसोंसे युद्ध करने लगे। इसके बाद द्विविद ने अपने नख से फाड़ कर शोणिताक्ष को मार डाले, और मैन्द ने अपनी भुजाओं से दबाकर यूपाक्ष के प्राण को नाश किये इन चार रावण के मन्त्रीयों के मरण को देखकर शेष

राक्षस समर में खड़े कुंभकर्ण के पुत्रों से इनके मरने का समाचार कहा राक्षसों के मुख से मन्त्रियों के मरण को सुनकर संग्राम में महावीर कुंभ राक्षसोंकी चतुरंगिणी सेना लेकर बानरों के सन्मुख आया और लगते भरमें प्राण को नाश करने वाले बाणों को छोड़ने लगा। जैसे ऐरावत हाथी पर चढ़े इन्द्र अपने धनुष को दैत्यों पर छोड़ते हैं, वैसे इन्द्र धनुष के समान धनुष को कुंभ बानरों पर छोड़ना आरंभ किया और उन बानरों में शोणिताक्ष को नाश करने वाले द्विविद बानर को एक बाण ऐसा मारा कि वह मूर्छित होकर गिर पड़े जैसे इन्द्र के बज्र के लगने से वृक्ष गिर जाते हैं। संग्राम में भाई को मग्न देखकर मैन्द एक महा शिला को लेकर राक्षस को मारे परन्तु युद्ध में विशारद राक्षस अपने पांच बाणों से उस शिला को काट कर गिरा दिया, और विषैले सर्प के समान एक बाण मैन्द के हृदय में मारा उस अमोघ बाण के लगने से मैन्द के मर्म बन्धन कट गये और वह भी मूर्छा से विह्वल होकर भूमि में गिर पड़े। द्विविद मैन्द को समर में निहत देखकर अङ्गदजी क्रोध पूर्वक वृक्ष को लिये कुंभ के सन्मुख दौड़कर उस राक्षस को मारे परन्तु राक्षस ने अपने पांच मुख वाले बाण से वृक्ष को खण्डन करके अङ्गद को तीन तीन मुख वाले बाणों से प्रत्येक अङ्ग में मारा परन्तु उस राक्षस के बाण से अङ्गदजी को कुछ भी पीड़ा नहीं हुई। इसके बाद अङ्गदजी उछल कर आकाश में चले गये और उस राक्षस पर पत्थल की वर्षा करने लगे, परन्तु महाबली कुंभ अपने पिता के समान पराक्रमी उन सब पर्वत व वृक्षों को अपने बाणों से काट कर गिरा दिया। इसके उपरान्त कुम्भकर्ण का पुत्र कुम्भ अङ्गदके नेत्र में दो बाण को मारा उसको लगतेही अङ्गद की आंख से रक्त बहने लगा किन्तु अङ्गद ने अपनी आंख को पोछ कर एक शाल वृक्ष को उखाड़ कर राक्षस को मारे परन्तु वह राक्षस उस वृक्ष को पकड़ कर ऐसा ऐंठ दिया कि उस वृक्ष की शाखायें सब टूट गई और वह वृक्ष निष्फल पृथिवी में गिर पड़ा। इसके बाद अङ्गदजी और भी वृक्षों

को उपार कर उस राक्षस को मारे, राक्षस अपने बाणों से अङ्गद के पर्वत व वृक्षों को काट कर गिरा दिया और अङ्गदको काटने वाले सात मुख वाले बाणों से अङ्गद को ऐसा मारा कि अङ्गदजी मूर्छित होकर पृथिवी में गिर पड़े। अङ्गद को गिरते देखकर बानरों ने राक्षस को बलवान जाना और श्रीरामचन्द्रजी के शरण में जाकर राक्षस के महा प्रभाव को और द्विविद मैन्द अङ्गद की मूर्छा का समाचार कह सुनाये बानरों के मुख से कुंभ के प्रताप को सुनकर जाम्बवान आदि बानरों को श्रीरामजी आज्ञा दिये कि तुम शीघ्र जाकर उस राक्षस से युद्ध करिये। श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा को सुनकर जांबवान सुषेण और वेगदर्शी आदि बानर बृक्ष व शिला आदि को लिये कुंभ के सन्मुख आये, उन बलवान और क्रोधित बानरों को अपने ऊपर आते देख कर उनके बृक्ष व शिला की वर्षा को कुंभकर्ण का पुत्र कुंभ ऐसा रोका जैसे पर्वत से गिरते हुए झरने के जल का बेग रोका जाता है। उस राक्षस के बाण में इतना बल था कि उस बाण के सन्मुख ठहरना बानरों को कठिन होगया। राक्षस ने अपने अमोघ बाणों से जांबवान आदि महा बलवान बानरों को पीड़ित देखकर सुग्रीवजी अङ्गद को पीछे करके कुंभ के सन्मुख दौड़े। जैसे पर्वत पर विहार करने वाली मतवाली हाथी पर सिंह दौड़ता है। सुग्रीवजी अश्वकर्ण आदि अनेक बृक्षों को उखाड़ कर उस राक्षस पर महा बृष्टि करने लगे। परन्तु कुंभकर्ण का पुत्र कुंभ अपने अमोघ बाणों से उसे काट कर गिरा दिया और सुग्रीव पर भी अमोघ बाणों को छोड़ने लगा परन्तु महाबलवान व पराक्रमी सुग्रीव राक्षस के बाण से पीड़ित नहीं हुए और कुम्भ के धनुष को पकड़ कर सुग्रीव ने खण्ड कर दिये जैसे शिव धनुष को श्रीरामन्द्रजी ने तोड़ा है। उस राक्षस के धनुष को तोड़कर सुग्रीवजी उछल गये और राक्षस पर लात मुक्का की बृष्टि करते हुए बोले—हे राक्षस! तुम्हारा और रावण का प्रभाव एक समान है, तुम अपने पिता कुम्भकर्ण के सदृश बलवान व पराक्रमी

हो, देवगण समर में तुमको नहीं हटा सके हैं तौ भी तुम हमारे पराक्रम को देखो । तुम्हारा चाचा रावण और तुम्हारे पिता कुम्भकर्ण वरदान के प्रभाव से देवता व असुरोंको अधीन किया है। बाण विद्या में तुम मेघनाद के समान हो और प्रताप में रावण के बराबर हो, तुम अपने बल व पराक्रम से राक्षसों में श्रेष्ठ हो । आज इस संग्राम में हमारे साथ महा युद्ध होगा जैसे इन्द्र के साथ सम्बरासुर दैत्य की लड़ाई हुई थी । तुमने इन बानरों पर अस्त्र वर्षा कर खूब अपना पराक्रम दिखाया है और बहुतों के साथ युद्ध करने से तुम अभी थके हो इस लिये हे बीर ! अभी तुम को हम नहीं मारते हैं । क्योंकि इसमें हमारी निन्दा होगी कि थके हुए कुम्भ को सुग्रीव ने मारा है, थोड़ी देर में तुम अपनी थकाइट को मिटालो तब हम तुम्हारे प्राण को नाश करें । सुग्रीव के इस प्रकार बचन को सुनकर राक्षस को क्रोध इतना बढ़ा जैसे घी को पाकर आग की ज्वाला बढ़ती है । इसके उपरान्त राक्षस ने अपनी भुजाओं से सुग्रीव को जकड़ लिया वे दोनों बलवान बीर मतवाली हस्ती के समान मल्ल युद्ध करने लगे, वह दोनों बीर परस्पर में इस प्रकार एक एक की शरीर को रगड़ने लगे कि परिश्रम के मारे सुग्रीव व राक्षस के मुख से आग की ज्वाला निकलने लगी । और बानरेन्द्र व कुम्भ के चरण की घसीट से इतनी धूलि उड़ी कि समुद्र अपने तरंग से निस्तब्ध होगया और शेषनाग के फण हिलने लगे । इसके बाद सुग्रीव ने कुम्भ को उठाकर समुद्र में फेंक दिया जिस समय वह राक्षस समुद्र में गिरा उस समय उसके अंग से ऐसी ज्वाला निकल कर फैल गई जैसे विन्ध्य पर्वत से आग की ज्वाला निकलती हो । महा प्रतापी कुम्भ समुद्र से भी उछल कर बड़े वेग से दौड़ कर आया और क्रोध पूर्वकी सुग्रीव को एक मुका ऐसा मारा कि चमड़ा फूटकर अंग से रक्त बहने लगा । जैसे वज के रगड़ से पर्वत में से आग निकलती है वैसे राक्षस के रगड़से सुग्रीव के अंग से भी आग निकलने लगी । उस राक्षस के मुष्टि प्रहार को महाबली सुग्रीव सहन करके बज्र

के समान दृढ़ एक मुक्का कुम्भ को ऐसा मारे कि विह्वल होकर आग के अंगार के समान भूमि में गिर पड़ा, कुम्भ के मरण को देखकर देवगण दुन्दुभी बजाने लगे और लंकापुरी के निवासी राक्षसों ने बानरों के हाथ से अपना मरण जानकर भय से व्याकुल हो गये ॥

इति बाल्मीकीये रामायणेयुद्धकाण्डे षड्सप्ततितमः सर्गः ॥ ७६ ॥

इसके बाद निकुम्भ अपने भ्राता के मरणको देखकर क्रोध की आग से जलता हुआ सुग्रीव को देखने लगा, वह राक्षस पांच अंगुल प्रमाण का एक पट्टा बांधे था और परिघ आदि अस्त्रों को लिये था और सोने का माला गले में धारण किये तथा अनेक प्रकार के अलंकारों को भुजाओं में पहिने था। कानों में कुण्डल किरीट लगाये ऐसी विचित्र शोभा को धारण किये था जैसे बद्दलों के मध्य में बिजली की शोभा होती है। इसके उपरान्त महादेव से लब्ध जो परिघ उस परिघ के आगे के भाग में सात वायु को बांधे था, समर में आने के समय उन सन्धियों को खोला उसको खुलते ही वायु के वेग से वह परिघ बहुत विस्तीर्ण होगया और उसमें से आग की ज्वाला निकलने लगी। जिस समय वह राक्षस अपने परिघ को घुमाने लगा उस समय नक्षत्र तारागण व ग्रहमंडल के सहित पृथिवी चक्र के समान घूमने लगी। परिघ के आभूषण की प्रभा से वह राक्षस महा प्रभावशाली जान पड़ता था। निकुम्भ से पराक्रम को राक्षस व बानर न सहन करके भय से भागने की इच्छा किये, परन्तु महा बली हनूमान अपनी दृढ़ता से उसी राक्षस के सन्मुख खड़े हुए। वह राक्षस परिघ के समान विशाल बाहू हनुमान को देखकर एक परिघ उनकी छाती में मारा वह परिघ हनुमानजी के हृदय में लगतेही टूट कर सौ टुकड़ा होगया और उस परिघ में से आग की ज्वाला निकलने लगी जैसे पर्वत के ऊपर काष्ट के पटकने से पर्वत नहीं टूटता वरन काष्ट ही फट जाता है वैसे महा प्रभावशाली और ओजस्वी राक्षस का परिघ टूट कर निष्फल होगया, जब राक्षस के पराक्रम को हनुमान देख चुके तब एक मुक्का उस राक्षस की छाती में ऐसा मारे कि उसके हृदय

का चमड़ा फटकर रुधिर बहने लगा और वह राक्षस मुर्छित होगया पुनः मूर्छा हट जाने पर उठा और हनूमान को पकड़ एक मुक्का ऐसा मारा जैसे इन्द्र का वज्र गिरता है। हनूमान राक्षस के बल को देखकर उसे भुजाओं से लपेट लिया और पृथिवी में गिराकर पहिले खूब रगड़े पीछे उस राक्षस के लिये आकाश में उछल गये और उसकी गर्दना को पकड़कर ऐसा मरोड़ दिये कि वह राक्षस चिल्ला कर मर गया ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे सप्तसप्ततिमः सर्गः ॥ ७७ ॥

कुम्भ निकुम्भ के मरण को सुनकर अमर्षी रावण इसप्रकार क्रोध की आग में जलने लगा जैसे इँधन को पाकर अग्नि प्रज्वलित होती है। क्रोध व शोक से मूर्छित राक्षसेन्द्र खर के पुत्रों को अर्थात् मकराक्ष व विशालाक्ष को आज्ञा दिये कि हे पुत्र सेना लेकर हमारी आज्ञा से तुम दोनों समर में चले जाओ और राम लक्ष्मण सहित वानरों को विजय करके आओ। रावण के वचन को सुनकर शूरवीर व अभिमानी मकराक्ष रावण को प्रणाम व प्रदक्षिणा करके रावण की आज्ञा से घर के बाहर निकल कर अपने सेनापति को बुलाकर मकराक्ष ने आज्ञा दिया कि रथ सहित सेना को युक्त करके हमारे समीप शीघ्र आओ। मकराक्ष की आज्ञा से उसका सेनापति शीघ्रही रथ व सेना को तय्यार करके उसके समीप में लेकर आया। मकराक्ष ने रथ की प्रदक्षिणा करके रथ पर बैठा और सारथी से बोला कि शीघ्रही हमारे रथ को समर में ले चलो। इसके उपरान्त सैनिक राक्षसों को बुलाकर कहा कि आप सब बलवान राक्षस हमारे से आगे वानरों से युद्ध करना और हम महात्मा रावण की आज्ञा से उन दोनों राम लक्ष्मण को समर में अपने तीक्ष्ण बाणों से नाश करूंगा। जैसे सूखे इँधन को आग शीघ्रही जलाता है वैसे हम अपने उज्वल इस त्रिशूल से उन वानरों को भस्म करूंगा। मकराक्ष के वचन को सुनकर अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र को धारण करने वाले मकराक्ष के सैनिक निशाचर शंख भेरी मृदंग आदि को बजाते केश व दांत को फैलाये और मतवाली हस्ती के

समान गर्जना करते मकराक्ष के संग चले, चलते हुए मकराक्ष के सारथी के हाथ से घोड़ों का लगाम गिर गया और उसकी ध्वजा अनायास गिर पड़ी। रथ के घोड़ों के आंख से आंसु की धारा बहने लगी और आकाश से आंधी का चलना आरम्भ हुआ। इतने प्रकार के अशकुन को देखकर भी प्रमाद युक्त राक्षस श्रीरामचन्द्रजी का बानरी सेना के सन्मुख आये और युद्ध करने में प्रवीण राक्षस समुद्र के तरंग के समान समर में घूमने लगा॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे अष्टसप्ततितमः सर्गः॥७८॥

सेना सहित मकराक्ष को समर में आया देखकर बलवान् बानर अनेक अस्त्र को लिये युद्ध की अभिलाषा से समर में खड़ेहोकर राक्षसों पर प्रहार करने लगे। राक्षस व बानरों का इस प्रकार युद्ध होने लगा जैसे देवता व दानवों का युद्ध हुआ था। वृक्ष पर्वत शिला नख व दांत आदि से बानरगण राक्षसों का प्राण हरण करते थे और परिघ गदा शूल मुद्गर पट्टिश आदि से राक्षसगण बानरों पर प्रहार करते थे। इसके बाद मकराक्ष ने अपने ओजस्वी बाणों से बानरों को पीड़ा देने लगा और उस बाण भय से बानर इधर उधर भागने लगे। बानरों को युद्ध से भागते देखकर अभिमान पूर्वक राक्षस गर्जना करने लगे बानरों को राक्षस के बाण से त्रासित देखकर श्रीरामचन्द्रजी उन दुःखी बानरगण को धैर्य देते हुए अपने अमोघ बाणों से राक्षसों को मारने लगे। श्रीरामचन्द्रजी को बाण चलाते देख क्रोधित मकराक्ष रामजी से बोला, हेराम! खड़े रहो हमारे साथ तुमारा द्वन्द युद्ध होगा। आज मैं अपने बाणों से तुमारे प्राण को नाश करूंगा। दण्डकारण्य में जो तुमने हमारे पिता को मारा है तुमारे उस दुष्कर्म को स्मरण करके हमारा क्रोध तुमारे ऊपर अधिक है हे दुरात्माराम? तुमको देखकर हमारी शरीर जलती है। क्या कहैं दण्डकारण्य में हमारे तुमारे युद्ध का समय नहीं मिला, हे राम! आज बड़े हर्ष की बात है जो हमारे सन्मुख आये हो! जैसे

भूखा सिंह मृगा को मार कर अपनी क्षुधा को शान्त करता है वैसे आज तुमारे रक्त से पितरों को तर्पण करके अपने क्रोध को शान्त करूंगा । हे राम ! बहुत क्या कहैं सुनो हमारे तुमारे युद्ध को सकल चराचर देखेंगे, तुमको बाण चलाने में अथवा गदा व खड्ग तथा मल्ल युद्ध आदि जिसमें अभ्यास अधिक हो उसी में युद्ध करो । मकराक्ष के अभिमान युक्त बचन को सुनकर श्रीरामजी हँसकर उत्तर दिये । हे राक्षस ! वृथा प्रलाप क्यों करते हो, संग्राम में युद्ध करने से जीत सकोगे, व्यर्थ कि बड़ाई से तो नहीं जीत सकते हो । देखो चौदह हजार राक्षसों के सहित तुमारे पिता खरदूषण त्रिशिरा आदि को मार कर उस अरण्य में रहने वाले गिद्ध सियार कौवा आदि के लिये तर्पण किया है, वही पक्षीगण आज भी तुम पापी के रक्त व मांस को भोजन करके तृप्त होंगे श्रीरामचन्द्रजी के सारयुक्त बचन को सुनकर अनेक बाण को श्रीरामजी पर चलाया रामचन्द्रजी अपने अमोघ बाणों से राक्षस के बाणको काटकर गिरादिये, मकराक्ष व रामचन्द्रजी का परस्पर युद्ध होने लगा । राक्षस अपने पराक्रम से रामचन्द्रजी के बाणों को काटने लगा और रामचन्द्रजी राक्षस के बाणों को छेदन करने लगे। खर के पुत्र मकराक्ष रघुवंशकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजी के युद्ध महोत्सव को देवता गंधर्व विद्याधर अप्सरा सिद्धचारण आदि अपने विमानों पर बैठकर आकाशमार्ग में देखने लगे, दोनों ओरकी बाण वृष्टि से संसार में अंधियारा हो गया सूर्य छिपगये । राक्षस के घोर पराक्रम को देखकर महाबाहु रामचन्द्रजी आठ मुखवाले बाण से राक्षस के सारथी और घोड़ों को मारा । सारथी और घोड़ा को मरने से अकुलाकर रथ से उतर पड़ा और शिव से पाये हुए त्रिशूल को लेकर श्रीरामचन्द्रजी के सन्मुख चला । उस त्रिशूल को देखकर देवता भय से कांपने लगे । वह त्रिशूल प्रलयकाल की अग्नि के समान भयानक था । उस त्रिशूल को क्रोधित मकराक्ष श्रीरामचन्द्रजी पर चलाया परन्तु शत्रसंहारण रघुवंश कुलभूषण त्रिशूल को अपने ऊपर

आते देखकर चार बाण से उस त्रिशूल को काटकर गिरादिया वह त्रिशूल रामचन्द्रजी के बाण से कटकर आग के अंगार के समान पृथ्वी पर गिर पड़ा। रामचन्द्रजी के अद्भुत पराक्रम को देखकर देवता स्तुति करने लगे और रामजी पर फूल बर्षाये। शिव के त्रिशूल को निष्फल देखकर श्रीरामजी के बाण के भय से खड़ारह २ यह कहता हुआ मुक्का मारने को दौड़ा तब तक रामचन्द्रजी अग्नि बाण को अपने धनुष पर रखकर राक्षस को मारे अग्नि बाण के लगतेही उसराक्षस का हृदय कटकर टुकड़ा २ हो गया और पृथिवी में गिरकर मर गया। शेष राक्षस भाग कर रावण के समीप गये॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे नवसप्ततितमः सर्गः॥७६॥

राक्षसों के मुख से मकराक्ष के मरण को सुनकर क्रोध से अविष्ट रावण दांतों को पीसकर बिचार करने लगा कि इस घोर विपत्ति के उपस्थित में क्या करना चाहिये, ऐसा अनेक तर्कना करके महा प्रतापी अपने पुत्र मेघनाद को आज्ञा दिया कि हेपुत्र! हेबीर! महा बाहु रामलक्ष्मण को अब तुम नाश करो। तुम राक्षसों में सबसे अधिक बलवान हो। तुमने अपने बल से युद्ध में इन्द्र को जीत लिया है फिर इन मनुष्यों को देखकर संग्राम में बानरों सहित इनका नाश क्यों नहीं करते हो। रावण का पुत्र मेघनाद पिता की आज्ञा को सादर अङ्गीकार करके यज्ञ भूमि में आया और विधि पूर्वक मन्त्रों के सहित अस्त्रों का अभिमन्त्रण करके अग्नि में हवन करने लगा। जहां रावणि हवन करता था वहां होम की परिचारिका स्त्रियां रक्त वस्त्र को शिर में बांधे व्यग्रता से युक्त वहां आई। मेघनाद ने शस्त्रों को तथा अनेक प्रकार के अस्त्रों को यज्ञ स्थान में बिछाकर जीते हुए बकरों के साथ हवन करने लगा। समिधा के स्थान पर बाण हवन करने अग्नि देवता प्रसन्न होकर उसके अस्त्र को अभिमन्त्रित किया। उन अस्त्रों को प्रसन्नता से इन्द्रजित ने ग्रहण कर चार घोड़ा के रथपर आकर बैठा और धनुष बाण शक्ति तोमर गदा शूल आदि

अस्त्रों को रथपर रख कर विचित्र शोभा को धारण किया। मेघनाद के अङ्ग के प्रकाश से वह रथ सूर्य के प्रकाश के समान चमकने लगा भांति भांति के मृगाओं से और अनेक सोने के अलंकारों से रथ को भली भांति अलंकृत किये था और ब्रह्मास्त्र से वह राक्षस समर में दुर्जय होगया कि जिसको संग्राममें उपस्थित देखकर इन्द्रादिक देवता भाग जाते थे। वही मेघनाद निऋति देवता के मन्त्र से अग्नि को प्रसन्न कर संग्राम में चलने के समय बोला, रण में खड़े रामलक्ष्मण को आज वध करके "जय पत्र" अपने पिता राक्षसेन्द्र को देवेंगे, और इन वानरों को नाश करके वानरों से पृथिवी को खाली कर पिता को प्रसन्न करेंगे। ऐसा कह कर अन्तर्धान होगया, और संपूर्ण राक्षसों को नाश करने वाले श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी को जानकर धनुष पर बाण को रख के वर्षा काल के बद्दल के समान बाण वर्षा करने लगा। आकाश में रथ सहित छिपकर वह राक्षस वानरी सेना में इतनी बाण वर्षा किया कि दिशाओं में अन्धकार होगया, और अंधेरी रात में अपने अमोघ बाणों से रामलक्ष्मण सहित वानरो को पीड़ित कर दिया श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण सहित मेघनाद के बाण वेग देखकर अपने २ धनुष को उठाये और इतनी बाण वर्षा किये कि उनके बाण आकाश में प्रकाश करते हुए सर्वत्र व्याप्त होगये। परन्तु रावणि के प्रभाव से श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी के बाण उस राक्षस को स्पर्श नहीं कर सकते थे। क्योंकि मन्त्र के बल से वह राक्षस रथ सहित आकाश में छिपा था। श्रीरामचन्द्रजी के अमोघ बाणो से बचकर वह राक्षस माया के बल से घोर अन्धकार को प्रगट किया, उसके अन्धकार से दिशायें व्याप्त होगई। उस अन्धकार में राक्षस के धनुष का शब्द व रथ का शब्द और उसका स्वरूप कुछ भी सुन नहीं पड़ता है और वह उसी घोर अन्धकार में पत्थरों की वर्षा के समान बाण की वर्षा करने लगा और वरदान से पाये अस्त्रों से क्रोधित रावणी रामलक्ष्मण के अङ्ग को वेध दिया। बाण की धारा से पीड़ित रामचन्द्र व लक्ष्मणजी भी

अपने तीखे बाणों को छोड़ने लगे। सूर्य के समान प्रकाशमान वे रामचन्द्रजी के बाण आकाश स्थित रावणि को वेधकर पृथिवी में गिरा दिया, वह राक्षस रुधिर को बहाता आकाश से भूमि में आ गिरा और रावणि के बाण को भी छेदन कर दिये। जिस दिशा में ठहर कर वह राक्षस बाण को छोड़े उसी दिशा में खड़े होकर रामचन्द्र व लक्ष्मण उसके बाण का वारण करने लगे। रावणि अनेक दिशाओं में रथ को लेजाकर बाण को छोड़ने लगा परन्तु रामचन्द्रजी हर एक दिशाओं में उसको अपने बाण से पीड़ित करने लगे। राक्षस के बाण से अति विद्ध शरीर वाले रामचन्द्रजी फूले हुए पलाश के समान शोभित होने लगे। रावणि के बाण से पीड़ित बानर निष्प्राण होकर पृथिवी में गिरने लगे। बानरों की महा दुरवस्था को देखकर लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजी से बोले, कि समस्त राक्षसों को बध करने के लिये अब हम भी ब्रह्म अस्त्र को धनुष पर चढाकर छोड़ते हैं। लक्ष्मणजी के वचन को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी बोले—हेलक्ष्मण! एक राक्षस को मारने के लिये पृथिवी संहार करना उचित नहीं है। जो आप के साथ युद्ध नहीं करते हैं जो अपना प्राण लेकर छिपे हैं जो आप के शरण को पुकारते हैं और जो आप के भय से भागते हैं उन सबको एक राक्षस को मारने के लिये सबका नाश करना उचित नहीं है। हेमहाबाहु! उस राक्षस को नाश करने का उद्योग करना चहिये, इसलिये अपने कठोर और वेग वाले अस्त्रों का प्रयोग करो। इस मायावी राक्षस के मरण को बानरगण देखेंगे। यदि यह राक्षस पृथिवी आकाश पाताल वा रसातल में जाकर छिपे तो भी हमारे अस्त्र दग्ध होकर भूमि में गिरेगा। श्रीरामचन्द्रजी महा अर्थ युक्त बचन लक्ष्मण से कह कर कठोर कर्म करने वाले राक्षस के बध का उपाय सोचने लगे॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे अशीतितमः सर्गः॥८०॥

इधर राक्षस ने यह जाना कि हमारे दिव्यास्त्र के सब प्रकार से हम सब बानरों का नाश करेंगे यह जान कर युद्ध स्थान से लौट कर लंकापुरी

को चलागया और कुंभकर्ण आदि बलवान राक्षसों के बध को स्मरण करके क्रोध से आंख को लाल किये रावणि फिर प्रगट होकर पश्चिम द्वार से राक्षसी सेना को लेकर निकला और युद्ध में उत्कण्ठित रामचन्द्र व लक्ष्मण को बानरी सेना सहित खड़ा देखकर मन में सोचने लगा कि यह सब हमारे मार्ग में विघ्न करेंगे ऐसा शोचकर वह राक्षस माया के बल से मोहशक्ति को प्रगट किया, मेघनाद पश्चिम के द्वार से निकल कर माया की सीता को बनाकर रथ पर बैठा दिया और बल के अभिमान से उसी मायामयी सीता को बध करने का विचार किया और दुर्बुद्धि राक्षस सब बानरों को मोहनी करके सीता को मारने के लिये बानरों के सन्मुख आये। मेघनाद को निकलते देखकर समस्त बानरी सेना हाथ में पर्वत व शिला आदि को लिये उस राक्षस की ओर युद्ध करने की अभिलाषा से दौड़े। इतने मे हनुमान एक पर्वत को हाथमे लिये उस बलवान मेघनाद के आगे चले गये। वहां जाकर राक्षस के रथ पर उपवास करने से अत्यन्त दुर्बल सीता को बैठी देखे। एक वेणी को धारण करने से सीता को मुख मलीन होगया है और मलीन वस्त्र को धारण किये हैं। तथा उनके सर्वाङ्ग धूलि से व्याप्त हैं। क्षण भर सीताजी की दशा को देखकर मन मे सोचने लगे कि पहिले इन्ही जानकी को अशोकवन मे हमने देखा है। शोक से पीड़ित तपस्विनी सीता को मेघनाद केवश में रथ पर बैठी देखकर सोचने लगे कि इस सीता को यह राक्षस क्या करेंगे। ऐसा विचार कर बानरों के सहित हनुमान रावणी की ओर दौड़े। बानरी सेना को अपनी ओर आते देख कर क्रोध से मूर्छित मेघनाद मियानी से खड्ग को निकाल कर सीता के शिर पर लगाया वह रथ पर बैठी माया की सीता रामराम इस शब्द को स्मरण करने लगी। माया रूपी सीता के केश को पकड़े राक्षस को देखकर हनुमान के आंख से आंसू गिरने लगे। और इस दशा में प्राप्त राम की महिषी जानकी को जानकर क्रोध से युक्त बचन मेघनाद से बोले क्योंकि माया की जानकी छल से बनाया है इस बातका स्मरण

हनुमानको नहीं हुआ। हेदुरातमन्! जो तुमनें पराई स्त्री का केश पकड़ा है इससे तुम्हारा नाश अवश्य होगा, ब्रह्मर्षि पुलस्त्य के वंश में उत्पन्न होकर राक्षसी योनी को स्वीकार किया है। जो तुमारी ऐसी दुष्टबुद्धि है कि पराई स्त्री को बध करने के लिये केश पकड़कर खींचते हो तुमारे इस कर्म पर धिक्कार है हे अधम! कूटयुद्ध के करने वाले स्त्री के मारने में क्या तुझे दया नहीं है, हे निर्दय! तुमारे इस कर्म को धिक्कार है। हे निर्दय! पथ मैथिली राज्य से व गृह से निकाली गई है तथा अपने पति रामचन्द्र से भी विरहिणी है फिर किस अपराध से इसको बध करने की इच्छा करते हो। हेराक्षस! सीता को मारकर तू भी जीता नहीं बचेगा। क्योंकि तू भी हमारे हाथ में आया है। लोकमें जितने कुत्सित कर्म करने वाले नरक भोग करते हैं उन सब नरक बास को स्त्री मारने वाले भोगते हैं। ऐसा कहकर हनूमान वृक्ष पर्वत शिला आदि आयुध के लिये क्रोधित बानर मेघनाद पर दौड़े बलवान बानरी सेना को अपने ऊपर आते देखकर राक्षसों ने उन बलवान बानरों कोरोकने में प्रस्तुत हुए और हजारों बाण मारकर बानरों को व्यथित किया। तब बानरों में श्रेष्ट हनूमान से इन्द्रजित बोले, हेबानर! तुम सुग्रीव और रामचन्द्र जिस सीता के कारण आये हो उन वैदेही को तुमारे देखते भर में आजही नाश करैंगे। इस सीता को नाश करके तुम सब बानरों के सहित रामचन्द्र व लक्ष्मणको नाश करैंगे और कुल दूषण उस बिभीषणको भी अपने खड्गसे इसके प्राणको नाश करैंगे। हेबानर! यह जो तुम कहते हो कि स्त्रियां बधकरने योग्य नहीं है, सो जिस कार्य से शत्रुओं को पीड़ा होवे उस कार्य को हमें अवश्य करना चाहिये। इस प्रकार मेघनाद हनूमान से कहकर माया की बनी हुई सीता को अपने खड्ग से इन्द्रजीत ने मारा। तपस्वनी सीता राक्षस के हाथ से कटकर पृथ्वी में गिर पड़ी। मेघनाद सीता को मारकर हनूमानसे बोला, देखो यह रामकी स्त्री सीताको मैंने अपने शस्त्र से बध किया है। अब यह जानकी मारी गई अब तुम लोगों का

परिश्रम व्यर्थ होगा । खड्ग से सीता को मारकर प्रसन्नता पूर्वक मेघनाद महानाद शब्द से गर्जना करने लगा ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे एकाशीतितमः सर्गः ॥८१॥

इन्द्रवज्र के समान राक्षस की गर्जना को सुनकर दिशाओं के देखते हुए वानरी सेना मलीन व दीन होती हुई भागने लगी। उन वानरों को भागते देखकर हनूमान उनसे बोले कि तुम लोग दीन व हतोत्साह होकर युद्ध से क्यों भागते हो। संग्राम से पीठ दिखाकर भागना शूरवीरका कर्म नहीं है। ऐसा कहकर उन वानरों को लौटाये और वृक्ष पर्वत शिला आदि को लेकर वानरों के सहित राक्षसों पर इस प्रकार आक्रमण किये जैसे अग्नि सूखे काष्ठ के जगाने में आक्रान्त हो जाती है राक्षस वानरों का युद्ध काल व यम के समान हुआ। इसके बाद क्रोधाविष्ट हनूमान रावणी के रथ पर एक महती शिला को फेंके। मेघनाद एक विशाल शिला को अपने ऊपर आते देखकर मेघनाद ने रथ सारथी के संयुक्त उस शिला को व्यर्थ कर दिया। फिर वही शिला राक्षसी सेना पर गिरकर अनेक राक्षसों को विध्वंस किया राक्षसों के नाश करने से संलग्न वानर गर्जना करते हुए अनेक वृक्ष व पर्वतों के शिखरे आदि की वृष्ट राक्षसों पर करने लगे। जिस शस्त्रघात से राक्षसों के प्राण निहत होने लगा। मेघनाद अपनी सेनाओं की क्षति को देखकर क्रोध पूर्वक अपनी सेना सहित वानरों पर बाण वर्षा करने लगे और कुछ वानरों को अनेक अस्त्र शस्त्र से पीड़ित किया। तब हनूमान अपने बलसे राक्षसों को बलहीन करके वानरों से बोले, हे वानरो ! हम लोगों का परिश्रम व्यर्थ है, क्योंकि जिस सीता के कारण हम लोग अपना प्राण त्याग करके श्रीरामचन्द्रजी के कार्य का साधन करना चाहते हैं वह सीता इस राक्षस के हाथ से मारी गई तो हम लोग चलकर यह समाचार श्रीरामचन्द्रजी व सुग्रीवजी से देवें, वह लोग इस विषय में जो सम्मति देवें वैसा कार्य हम लोगों को करना चाहिये । ऐसा और वानरों से कहकर हनूमान

श्रीरामचन्द्रजी के समीप को चले इधर हनूमान को लौटा देख कर मेघनाद भी निकुंभिला स्थान पर आया वह स्थान मेघनाद के यज्ञ करने का था। मेघनाद निकुंभिला पर आकर अग्नि को प्रज्वलित किया और सविधि आहुति अग्नि देवता को समर्पण किया। रक्त मांस के हवन से तृप्ति अग्नि राक्षस के मन्त्रों को अभिमंत्रित किया जिस से वह राक्षस अग्नि के समान चमकने लगा। विधि को जानने वाला मेघनाद राक्षसों के कल्याण के लिये अग्नि में हवन करके राक्षसों के मध्य में शोभित हुआ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे द्व्यशीतितमः॥ ८२॥

श्रीरामचन्द्रजी मेघनाद व हनूमान के युद्ध में महाशब्द को सुन कर जांबवान से बोले, हेसौम्य! हनूमान निश्चय घोर युद्ध करते हैं क्योंकि उनके आयुध के महाशब्द सुनाई देते हैं। इसलिये हेऋक्षराज अपनी सेना सहित तुम भी चले जाओ और हनुमान की सहायता करो। श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा को पाकर अपनी सेना सहित जांबवान पश्चिम के द्वार पर आये जहां मेघनाद के साथ हनुमान बानर की लड़ाई होती थी। इसके बाद सीता के नाश से श्रान्त व मलीन हनुमान को बानरों के सहित मार्ग में लौटते आते देख जांबवान ने अपनी सेना रोककर खड़े होगये, अब बानर भालुओं की सेना समेत हनुमान व जांबवान श्रीरामचन्द्रजी के समीप आकर दुःख पूर्वक बोले, हेभगवन्? समर में हमलोगों के साथ युद्ध करता हुआ रावण का पुत्र मेघनाद हमलोगों के सन्मुख रोदन करती हुई सीता को अपने खड्ग से मार डाला है। राक्षस के इस कठिन कर्म को देखकर हम लोगों का चित्त उद्भ्रान्त और विषण्ण होगया यह वृत्तान्त आप से कहने के लिये यहां आप के समीप आये हैं। हनुमान के मुख से सीता के मरण को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी पृथ्वी पर गिर पड़े जैसे कटा हुआ वृक्ष गिरता है। पृथ्वी पर भगवान को गिरे देखकर अंगद सुग्रीव आदि बानर दौड़कर आये और चारो ओर घेरकर खड़े होगये। और

फूले हुए कमल से सुगन्धित जल को लेकर श्रीरामचन्द्रजी के मुखपर व आंख को धोने लगे। और लक्ष्मणजी दुःख पूर्वक श्रीरामचन्द्रजी को गोद में लेकर सायुक्त बचन को अस्वस्थ रामचन्द्रजी से बोले, हे भाई! पिता के बचन को पालन करने के लिये आप धर्म मार्ग पर बर्तमान है। और हाथ में आये राज्य को छोड़कर जो आप बनवास करते हैं इसकारण जितेन्द्री हैं। तो धर्ममार्ग चलने वाले पुरुषों को अधर्मी राक्षस पीड़ा नहीं पहुंचा सकते हैं यदि यह कहिये कि स्थावरादिक में कुछभी धर्म नहीं है परन्तु वह अत्यन्त सुखी हैं, और धर्म को न जानने वाले जंगमादिक भी अधिक सुखी हैं परन्तु उनका सुख स्वरूपनहीं है क्योंकि जो सुख धर्म से हीन हैं और आप के समान धर्मज्ञ व दृढ़ पुरुषों के सुख भोगने में विपत्ति की संभावना नहीं हो सकती। यदि रावण इसप्रकार अधर्मयुक्त कर्म करेगा तो कठिन विपत्ति भोग करेगा और आप जो इसी प्रकार धर्म में प्रवृत रहेंगे तो इस विपत्ति से छूट जावेंगे और यह तो कभीनहीं हो सकता कि अधर्मी रावण सुख को भोगे और धर्ममार्ग को अवलंबन करने वाले आप दुःख को प्राप्त हों। क्योंकि धर्म करने से सुख लाभ होता है और अधर्म से दुःख लाभ होता है, इस प्रकार वेद की मर्यादा है। इस शास्त्रीय मर्यादा से अधर्म करने वाले राक्षस अवश्य दुःख को भोगेंगे और धर्म को पालन करने वाले आप सब प्रकार की आपत्तियों से छूट कर सुख लाभ करेंगे। जिनका मन अधर्म करनेमें लगा है उनको अर्थ तो बढ़ते हैं परन्तु धर्म व शील उनका क्षीण होजाता है इसलिये धर्म व शील अपना विपरीत फल देते हैं पाप कर्म करने वाले पुरुष जिस प्रकार के पाप को करते हैं, वह पाप करने वाले अपनेही पाप के फल से नष्ट हो जाते हैं। अथवा जो पुरुष दूसरे से कहकर वा अपने स्वयं हत्या कर व कराता हैं वह उस पाप से लिप्त होकर फिर शुभ कर्म करने के योग्य नहीं होता। यदि कहो कि पुत्र के किये हुए पाप से पिता की हानी नहीं होती तो धर्म अधर्म कर्म के अनुसार

फल देने वाले ईश्वर का नियम व्यर्थ है। यदि कहो कि दुर्जनों के अदृष्ट अपकार का कोई प्रतीकार नहीं है फिर धर्म से उसको कैसे जीत सकोगे तो सज्जनों को धर्म मार्ग में प्रवृत्त रहने से पापियों का जय नहीं होता है। हेपुरुष श्रेष्ठ रामजी! यदि सत्कर्म से उत्पन्न अदृष्ट सत सुख है तो तुमको कुछ भी दुःख नहीं होगा और यदि इस प्रकार का दुःख तुमको लाभ हो तो फिर इस पिता के वचन आदि को मानना रूप धर्म को धर्म नहीं जानना चाहिये। यदि कहो कि धर्म स्वभाव से दुर्बल है वह कुछ पुरुषार्थ की सहायता को चाहता है तो ऐसे मर्यादा हीन दुर्बल धर्म का सेवन नहीं करना चाहिये। यह हमारा सम्मति है यदि कार्य की सिद्धि केवल बल व पुरुषार्थ के अधीन होवै तो धर्म को त्याग करके केवल बल व पुरुषार्थ की सहायता से शत्रु की पराजय करनी चाहिये। तब धर्म व पुरुषार्थ में कुछ भी अन्तर नहीं जानना चाहिये। यदि यह कहो कि सत्य बध को न पालन करने से भी अनर्थ की निवृत्ति होती है, तो पिता के सत्य बचन बनवास को अंगीकार न करने के पहिले भी आप पिता के बचन रूपी बन्धन में बंधे हैं, क्योंकि महाराज का यह कहना था कि हमारे पुत्रों में श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी को अभिषेक होगा, तो महाराज के पूर्व बचन के अनुसार फिर बनवास को अंगीकार करना आप को उचित नहीं था। यदि आप पिता के पूर्व बचन को मिथ्या जानते हैं तो अपने कहने के अनुसार तुमारे विना राज्य किये महाराज ऋणी हैं। परन्तु महाराज अपने पूर्व वाक्य से बद्ध नहीं हो सकते हैं क्योंकि उनके उत्तर वचन को धर्म जानकर जो आप ने ग्रहण किया है। हेपरन्तप! यदि अधर्म ही पालन करने योग्य है तो इन्द्र ने विश्व रूप मुनि को बल से मार कर पीछे सौ अश्वमेध यज्ञ किया है इससे अधर्म पालन करने योग्य नहीं होता। हेरामचन्द्रजी! अधर्म से मिला हुआ भी जो धर्म है वह भी शत्रुओं को नाश करता है यदि आप यह कहै कि तुमारी सम्मति के अनुसार तो हम धर्म ही का पालन

करते हैं फिर हमको दुःख कहां तो दुःख लाभ होने का कारण सुनिये, पहिले तो धर्म का मूल अर्थ है और अर्थ का मूल राज्य है सो आप ने राज्य को पहिले तिरस्कार करके धर्म को निर्वल किये हैं इसीसे आप को आपत्ति झेलनी पड़ती हैं और जब अर्थ की वृद्धि होती है तो अनेक देशों से प्राप्त अर्थ उपस्थित होते हैं, उन अर्थ के विषय में यदि निष्काम रहे तो वेही अर्थ पुरुष को योग प्रधान होते हैं और सकाम होने से पुरुष को भोग प्रधान होते हैं। और जिसके पास अर्थ (धन शक्ति) नही है उनकी सब क्रियायें इस प्रकार नष्ट होती हैं जैसे ग्रीष्म काल में छोटी नदी सूख जाती है यदि कहिये कि धन को परित्याग करने में केवल धर्म ही की हानि होती है। जो पुरुष मिले हुए धन को परित्याग करके पीछे सुख की इच्छा करता है वह भ्रष्ट है। क्योंकि बिना अवसर के जब कोई पुरुष सुख की अभिलाषा करेगा तो अन्याय से धन को उपार्जन करने की चेष्टा करेगा। तब उसके लिये अनेक राज दण्ड आदि दोष उपस्थित होवेंगे। क्योंकि जिसके पास धन है उसी को मित्र और बन्धु है धनवान नहीं लोक में श्रेष्ट और पण्डित कहा जाता है। जिसके पास धन है वही पराक्रमी व बुद्धिमान है, धनवान ही पुरुष महा बाहु और लोक में गुणवान भी होता है। हे राघव! धन को परित्याग करने में इतने दोष होते हैं, सो आपने जिस विचार से हाथ में आये राज्य को परित्याग किया है आप के उस बुद्धि को हम नहीं जानते हैं। नहीं तो जिसके पास अर्थ है धर्म काम अर्थ सभी अनुकूल रहते हैं और निर्धन पुरुष धर्म को खोजता हुआ भी अर्थ और काम के बिना पौरुष रूप अर्थ को नहीं प्राप्त कर सकता है। हर्ष काम अभिमान धर्म क्रोध शाम दाम ये सब गुण राजाओं को अर्थ से सुलभ होते हैं। जिस राजा के हृदय में हर्ष रहता है। वह कृतकार्य होता है और जिसमें क्रोध अधिकांश होता वह नाश को प्राप्त होता है। सकल वस्तुओं का मूल अर्थ है। देखिये धर्म का आचरण करने वाले तपस्वी सदा धर्म को अनुपान करते हैं परन्तु धन के अभाव से

इस लोक के ऐहिक सुख उनको नहीं प्राप्त होते हैं। इस लोक में सुख को देने वाले वह तुमारे पास भी नहीं हैं इसी से आपत्ति भोगनी पड़ती है। हेवीर! पिता के वचन को धर्म मानकर जब तुम वानरों आये तभी से राक्षसों के उत्पात हो रहे हैं। देखो राक्षस ने प्राण के समान प्रिया तुमारी स्त्री राक्षस ने हरण किया है। इसलिये हेवीर! इन्द्रजीत के कर्म से यह दुःख हम लोगों को आये हैं इस दुःख का नाश पुरुषार्थ से होगा आप चिन्ता को छोड़ कर उठिये। हेपुरुषसिंह! हेदीर्घबाहु! हेसत्य को पालन करने वाले महात्मा अर्थात् परमात्मा होकर प्रकृत मनुष्य के समान दीनता को धारण करना उचित नहीं है, चिन्ता को छोड़ कर उठो। हेनिष्कलंक! तुमारे कार्य को साधन करने में सलग्न यह हमारा बाण जानकी के मरण को सुनकर अत्यन्त रुष्ट है, अब रवी बाण से हम चतुरंगिणी सेना व राक्षसेन्द्र रावण को परिवार सहित नाश करेंगे॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे त्र्यशीतितमः सर्गः॥८३॥

श्रीरामचन्द्रजी को अनेक बातों से धैर्य देकर लक्ष्मणजी गोद में लिये श्रीरामचन्द्रजी को धीरे धीरे आंसू बहाते थे इतने में अनेक अस्त्र शस्त्र को धारण करने वाले राक्षस वीरों के सहित काली हाथी के झुंड के समान विभीषण श्रीरामचन्द्रजी के समीप आये। यहां आकर श्रीरामजी के शोक में रोदन करते हनुमान आदि वानरों को देख और लक्ष्मणजी के गोद में बैठे मूर्छा से आकुल श्रीरामचन्द्रजी को देखकर लज्जा व शोक से सन्तप्त विभीषण मनमें सोचने लगे कि श्रीरामचन्द्रजी को यह क्या हुआ और श्रीरामजी की दशा से विभीषण के मुख सूख गये। लक्ष्मण सुग्रीव आदि वानरों और विभीषण की ओर देखते हुए बोले—हेसौम्य! मेघनाद ने सीता को मार डाला है यह वृत्तान्त हनुमान के मुख से सुनकर मूर्छित होगये हैं। विभीषण कहते हुए लक्ष्मण को रोक कर मोह में प्राप्त श्रीरामजी से बोले—हेमनुजेन्द्र! दीन वेश से जो हनुमान ने कहा है वह सत्य

नहीं है जैसे समुद्र का सूखना सत्य नहीं होता हम दुरात्मा रावण के अभिप्राय को जानते हैं हेमहाबाहु ! वह सीता का बध नहीं करेगा । इस युद्ध के पहिले रावण के कल्याण के लिये मैंने उसे बहुत समझाया कि यह सीता श्रीरामचन्द्रजी को देकर अपराध क्षमा करालो परन्तु उसने उस वचन को नहीं किया और इस समय साम दाम भेद से भी वह सीता देखने में नहीं आसकती, हम ऐसा अनुभव करते हैं कि वानरों को मोह कर वह राक्षस मेघनाद जाता था इसलिये माया की सीता बना कर बध किया है इस में आप को चिन्ता नहीं करना चाहिये वह मेघनादे युद्ध भूमि से लौटकर निकुम्भला में पहुंच कर यज्ञ करता है और उसके यज्ञ भाग को लेने के लिये इन्द्रादिक देवता आते हैं, जब यज्ञ समाप्त होजायगा तब रावण का पुत्र मेघनाद समर में नहीं मारा जासकेगा । क्योंकि वह अपनी माया से युद्ध करके वानरों के पराक्रम को नष्ट करदेगा । इसलिये हेभगवन् ! इस शोक को मिथ्या जानकर छोड़िये और वानरी सेना को निकुम्भिला पर जाकर उसके यज्ञ में विघ्न देवे जिसमे समाप्ति न होवे । हेरामजी ! आप को शोक में देख कर आप की समस्त सेना शोक से कर्शित हो निस्तब्ध होगई है, इ लिये आप अपने सत्व की प्रधानता के मोह को छोड़ कर स्वस्थ पूर्वक उठिये । और हम लोगों के सहित हम लोगों की रक्षा करने वास्ते लक्ष्मण को भेजिये । हेरामजी ! जब वह रावण लक्ष्मण के बाण से पीड़ित होगा तब यज्ञ को बिना समाप्त किये उस स्थान से उठेगा । और तभी उस राक्षस का बध भी होसकेगा । अत्यन्त तीखे लक्ष्मण के बाण जब गिद्ध आदि पक्षियों की नाईं मेघनाद के अंग के रुधिर को पान करेंगे तभी वह मरेगा । हेमहा बाहु ! इसलिये आप लक्ष्मणजी को आज्ञा दीजिये कि इन वानरों के सहित उस राक्षसों का नाश करें हेरामजी इस समय आप अपने धनुष बाण को उद्यत करके शत्रु के नाश करने का पूर्ण उद्योग करिये, जैसे देवतों के शत्रु दैत्यों को नाश करने के लिये इन्द्र उपाय करते हैं । यदि रावण का पुत्र मेघनाद इस

यज्ञ को समाप्त कर लेवेगा तो देवता व असुर इसको समर में नहीं देख सकेंगे और यह अन्तरिक्ष के युद्ध से बानरों के पराक्रम को नष्ट कर देवेगा और इसके यज्ञ की समाप्ति से देवतों को महा संशय हो जायगा ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे चतुरशीतितमः सर्गः ॥८४॥

शोक व मोह में आपन्न श्रीरामचन्द्रजी विभीषण के बचन पर ध्यान नहीं दिये, कुछ समय के बाद शत्रु के पुर को नाश करने वाले श्रीरामचन्द्रजी कुछ धैर्य का अवलंबन करके सुग्रीव के समीप बैठे विभीषण से बोले, हेराक्षसेन्द्र ! जो कुछ आपने कहा है उसको फिर से कहिये अब हम विचार पूर्वक सुनेंगे। श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक विभीषण अपनी उक्ति को विनीत भाव से से कहने लगे। हे महाबाहु ! आपने अपनी सेनाको जो आज्ञा देकर जैसा विभाग करके जिन जिन स्थानों पर रहने को कहे हैं वहसेना व सैनिक सब अपने बल व पराक्रम के अनुसार अपने अपने स्थानों पर विराजमान हैं, आपसे अब और कुछ सूचना देना है उसको सुनिये परन्तु आप के इस मिथ्या शोको देखकर हम लोगों का भी हृदय पीड़ित होता है । इसलिये हेराजन् ! इस मिथ्या संताप से उत्पन्न शोक व मोह को छोड़िये, यदि आप इस मिथ्या चिन्ता को नहीं छोड़ियेगा तो शत्रुओं को बड़ी प्रसन्नता होवेगी। नहीं तो चिंता को छोड़कर प्रसन्नता पूर्वक राक्षसों के नाश का उद्योग करिये और निशाचरों से मारी गई सीता फिर भी आपको मिलेंगी। हेरघुनन्दन ! मैं आपके हित के बचन को कहता हूं आप सुनिये, कि लक्ष्मणजी एक विशाल सेना लेकर निकुम्भिला पर जावें और अपने तीक्ष्ण बाणों से रावणी के बध करने का उद्योग करें। नहीं तो इन्द्रजीत अपनी तपस्या से ब्रह्मा को प्रसन्न करके जब वरदान को लाभ करलेवेगा और निकुम्भिला में देवी होम की जब वह समाप्ति करेगा आकाशमें गमन करने वाले घोड़ों से युक्त रथ को और अग्नि देवता से ब्रह्मशिर नामक अस्त्र

को लाभ करने में फिर आपसे नाश नहीं होगा । सो वह मेघनाद राक्षसों के सहित निकुम्भिला में जाकर यज्ञ का आरंभ किया है, यदि होम को समाप्त करलेगा तो हम लोगों का नाश हुआ आप जानिये । जब उसके यज्ञ की समाप्ति नहीं होती तब वह राक्षस मर सकता है । सकल लोक के सृष्टि कर्ता ब्रह्माजी ने इसको ।ब्रह्मास्त्र देकर वरदान दिया है इसलिये यह राक्षस ब्रह्मास्त्रही से मरेगा । हे रामचन्द्रजी ! इन्द्रजीत को बध करने के लिये लक्ष्मण सहित सेनाको आज्ञा दीजिये इस मेघनाद को मरने से रावण सहित सकल राक्षसों को आप मरा जानिये । बिभीषण के बचन को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी बोले, कि उस मायावी राक्षस के कठिन कर्म को हम जानते हैं । वह रावण का पुत्र ब्रह्मास्त्र को जानने वाला अत्यन्त मायावी और बलवान् है वह समर में वरुण आदि देवताओं को भी जीत सकता है, रथ सहित आकाश में गमन करने से वह दिखाई नहीं देता जैसे बद्दलों में सूर्य नहीं दीख पड़ते । दुरात्मा राक्षस के मायामय पराक्रम को देखकर कीर्ति संपन्न लक्ष्मणजी से श्रीरामजी बोले, सुग्रीव की जो बानरी सेना है उसके सहित हनुमान आदि सेनापतियों को लेकर तथा राक्षस राज रावण के पुत्र मेघनाद को नाश करो और मंत्रियों में श्रेष्ठ बिभीषण राक्षस की माया को जानने के लिये तुमारे पीछे रहैंगे । श्रीरामचन्द्र के बचन को सुनकर बिभीषण के सहित लक्ष्मणजी श्रेष्ठ धनुष बाण को लिये और कवच आदि धारण करके खड्ग आदि अनेक उज्वल अस्त्रों को धारण करके श्रीरामचन्द्रजी के चरण को ग्रहण कर प्रणाम किये और प्रसन्नता पूर्वक बोले, आज हमारे धनुष से छूटकर बाण रावणी के बाण को छेदन करते हुए लंकापुरी में इस प्रकार गिरैंगे जैसे हंसगण सरोवरपर जाते हैं । आज महारौद्रे मेघनाद के शरीर कोभदेन करके नाश करैंगे । श्रीरामचन्द्रजी के समीप ऐसा कहकर रावणी को बध करनेके लिये शीघ्र चले, श्रीरामचन्द्रजीको प्रणाम करके व प्रदक्षिणा करके हनुमान आदि बानरों को तथा राक्षसेन्द्र बिभीषण को

संग लिये बानरी सेना सहित रावण से पालित निकुम्भिला को चले बानर की बिशाल सेना से मार्ग में चलते हुए लक्ष्मणजी जांबवान को भालुओं की सेना को भी मार्ग में देखे। शत्रुओं को आनन्द देने वाले लक्ष्मण कुछ दूर तक जा मतवाली हाथियों के समान काले राक्षसों की सेना के व्यूह को देखे। और माया युद्ध से युद्ध को जीतने वाले मेघनाद की सेना के समीप बिभीषण और अङ्गद हनुमान नील नल आदि के संग बानरों की सेना सहित धनुष बाण को लिये लक्ष्मणजी राक्षसी सेना में प्रविष्ट हुए॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे पंचाशीतितमः सर्गः॥ ८५॥

लक्ष्मणजी राक्षसी सेनाके सन्मुख प्रवेश करके शत्रु को पराजय और अपने बिजय के औसर को देखकर विभीषण लक्ष्मणजी से बोले, कि ये बद्दल के समान काली राक्षसी सेना अस्त्र को लिये खड़ी है इनके साथ वृक्ष पर्वत शिला आदि आयुधको लेकर ये बलवान बानर युद्ध करें। हेलक्ष्मणजी! इन राक्षसों को नाश करने में आप भी संयत हूजिये। क्योंकि आप के बाण प्रहार को देख कर मेघनाद भी यज्ञ को बिना समाप्त किये आपके सन्मुख आवेगा। हेबीर! लोक को पीड़ा देने वाले और माया से युद्ध करने वाले राक्षस को आप शीघ्र नाश कीजिये। विभीषण के बचन को सुन कर शुभ लक्षण लक्ष्मणजी मेघनाद पर बाण वृष्टि करना आरंभ किये और वृक्ष पर्वत शिला आदि को लेकर बानर भालू राक्षसों को मारने लगे। राक्षस गण भी अपने अस्त्र शस्त्र को बानरों पर छोड़ने लगे। बानर व राक्षसों के महायुद्ध से लंकापुरी में हाहाकार मच गया और अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र तथा बाण वृक्ष पर्वत आदि से आकाश अच्छादित होगया। मेघनाद की सेना वाले बलवान राक्षसों को अपने अस्त्रों से बानरों ने उनकी भुजा आदिको काट कर विकृत करने लगे, उनके विकृत अंस से समर में महा भय उपस्थित हुआ मेघनाद अपनी सेना को बानरों से पीड़ित सुन कर यज्ञ को बिना समाप्त

किये यज्ञ स्थान से क्रोधित होकर निकला और पहिले से सज्जित रथ पर बैठ कर धनुष बाण को धारण किया और आंख को लाल किये साक्षात काल के समान लक्ष्मण की ओर चला, लक्ष्मण के साथ युद्ध करते और रथ पर बैठे राक्षसी सेना सहित देखकर एक महा वृक्ष को लेकर हनुमान राक्षसी सेना को पीड़ित करने लगे। कालाग्नि के समान राक्षसी सेना को हनुमान जलाने लगे और अपने वेग से पवन के पुत्र हनुमान वृक्ष आदि की वर्षा से हजारों राक्षसों को नाश किया। इसके उपरान्त राक्षसों ने अपने अनेक अस्त्रों को धारण करके बानरों के साथ महा युद्ध किया, पर्वत के समान बानरों में श्रेष्ठ हनुमान को राक्षसी सेना को त्रासित करते देखकर मेघनाद अपने सारथी से बोला, कि हमारे रथको हनुमान बानरके सन्मुख ले चलो यह बानर हमारी राक्षसी सेनाको नाश करता है। इन्द्रजितके बचनको सुनकर सारथी ने रथ को हांक कर हनुमानके सन्मुख लेगया। हनुमानके सन्मुख इन्द्रजित जाकर खड्ग परशु पट्टिस आदि अस्त्रों को लेकर हनुमान को मारने लगा। राक्षस के घोर उन अस्त्रों को लेकर क्रोध से आकुल हनुमान राक्षस से बोले—हेरावण के पुत्र मूढ! यदि अपने को शूरबीर मानते होतो हमारे साथ युद्ध करो, अब वायु पुत्र हनुमान के सन्मुख से जीते नहीं बचोगे। यदि हमारे साथ द्वन्द्व युद्ध करने की इच्छा होतो मल्ल युद्ध करो और जब हमारे वेग को सहन कर लोगे तब में तुमको राक्षसों में श्रेष्ठ मानूंगा। हनुमान को मारने के लिये अस्त्र सहित समुद्यत राक्षस को देखकर विभीषण लक्ष्मणजी से बोले, इन्द्रको जीतने वाला रावण का पुत्र रथ पर बैठा हनुमान को अस्त्र से मार रहा है। हेलक्ष्मणजी! शत्रु को नाश करने वाले अपने बाण से अपा इस राक्षस को शीघ्र नाश कीजिये। शत्रु को भय देने वाले विभीषण के बचन को सुनकर पर्वत के समान रथ पर बैठे दुरात्मा राक्षस को देखे ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे षट्शीतितमः सर्गः ॥ ८६ ॥

इस प्रकार लक्ष्मणजी से कह कर विभीषण हर्षित हुए, लक्ष्मणजी धनुष बाण को लेकर शीघ्र मेघनाद की ओर चले, थोड़ी दूर पर जाकर निकुंभिला बन में घुस कर राक्षस के यज्ञ स्थान को विभीषण ने लक्ष्मण को दिखाने लगा। काले बद्दल के समान भयंकर न्यग्रोध द्वार को तेजस्वी विभीषण लक्ष्मणजी को दिखाये। रावण के पुत्र मेघनाद यहीं पर भूत गणों को उपहार देकर पीछे संग्राम करने के लिये समर भूमि में आता है। और उसी के प्रभाव से यह राक्षस अन्तर्धान होकर समर में शत्रुओं को नाश करता है तो जिसमें यह राक्षस निकुंभिला न्यग्रोध द्वार में न प्रवेश करे तब तक आप अपने तीक्ष्ण बाणों से रथ सारथी के सहित राक्षस को नाश करो। मित्रों को सुख देने वाले लक्ष्मणजी से इस प्रकार विभीषण ने कहा, विभीषण के बचन को सुनकर उसी द्वार पर खड़े होकर धनुष को प्रसारित किये। बलवान् रावण का पुत्र अग्नि के समान उज्वल रथ पर बैठा कवच को लगाये ध्वजा पताका से भूषित खड्ग आदि अस्त्र को लिये मेघनाद को देखकर न्यग्रोध द्वार को रोके बानरों सहित लक्ष्मणजी इन्द्रजीत से बोले—हेराक्षसेन्द्र! हम तुमको समर में निमन्त्रण देते हैं हमको अपनी कला पूर्वक युद्ध प्रदान करो। मेघनाद इस प्रकार लक्ष्मण के बचन को सुनकर और लक्ष्मण के समीप में खड़े विभीषण को देख कर मनस्वी मेघनाद परुष बचन को बोला, हेराक्षस! इसी राक्षस बंश में उत्पन्न हुए हो और पालन पोषण को पाये हो व हमारे पिता के साक्षात् भाई हो हमारे चाचा हो फिर पुत्र से क्योंकर द्रोह मानते हो कि अपने पक्ष को त्याग कर दूसरे के पक्ष का आश्रय लेते हो। हेधर्म में दोष देने वाले—हेमूढ! न तुमको जाति का अभिमान है न तुमको अपनी मर्यादा बंश का लाज है और न तो रावण के प्रताप का स्मरण है और न तूं कुछ धर्म विशेष को जानता है जो अपने परिवार को छोड़कर दूसरे की सेवकाई करता है। जब कार्य्य अकार्य को विवेक करने में तेरी बुद्धि शिथिल है तब तुझे अपने जन का त्याग व पराई सेवा करना सुलभ है। परन्तु तेरे इस विचार में महा अन्तर है। कहां अपने जन का संवास और

कहां नीच बानरों की सेवा कैसे सुलभ हो सकती है। यदि अपने परिवार वाले निर्गुण हों और दूसरा कितना भी गुणवान हो परन्तु अपने घर का निर्गुण अच्छा, परन्तु जो पर है वह परही है। हेविभीषण! जो अपने पक्ष को त्याग करके दूसरे के पक्ष को पालन करते हैं वह अपने पक्ष को पहिले क्षय करके पीछे अपने भी नाश होजाते हैं। हेनिशाचर! यह जो तुमारी निर्दयता है कि हमारे होम कर्म को नष्ट करनेके लिये न्यग्रोधमें लक्ष्मण को प्रवेश कराया है यह तुमारे ही पुरुषार्थ का कार्य है और दूसरे से यह नहीं हो सकता। भ्रातृ पुत्र मेघनाद के इस प्रकार बचन को सुन कर विभीषण बोले, कि हमारे स्वभाव को जानते हुए भी क्यों अन जान के समान प्रलाप करते हो। हेराक्षसेन्द्र! हम तुमारे पितृव्य हैं इस गौरव को लेकर हमारे विषय के क्रोध को छोड़ो। अथवा अपने को शूरवीर मान कर जो तुमको क्रोध है उसको भी छोड़ो और यद्यपि हम क्रूर कर्म करने वाले राक्षसों के वंश में उत्पन्न हुए हैं और उनके सहवास से पालन पोषण को पाये हैं तौभी राक्षसी स्वभाव से हमारा स्वभाव अन्य है क्योंकि राक्षसों का स्वभाव रजो गुण व तमोगुण के अनुसार होता है और हमारा स्वभाव तो सतो गुण के अनुसार है। सतो गुण प्रकृति वाले राक्षसों के कुल में दुर्लभ हैं और स्वजन को जो त्याग करना है यह भी तुमारे पिता का दोष है क्योंकि लोक व बेद मे दुःशील भी भ्राता का त्याग नहीं करना चाहिये सो तुमारे पिता ने किया है। जो अधर्म व पाप में रुचिर करने वाले पुरुष की संगति को त्याग करता है वही सुखी होता है। जैसे आग से जलते हुए घर को मनुष्य छोड़ देता है वैसे पराये धन को तथा पराई स्त्रियों को हरण करता पापी को भी छोड़ देना चाहिये। पराये धन को तथा पराई स्त्री को हरण करने वाले और मित्रों से अनिष्ट की शंका करने वाले ये तीनों क्षय होते हैं। महर्षियों का बध करना देवतों के साथ विरोध करना और मित्रों के कहने के अनुसार कार्य नहीं करना इन्हीं तीन प्रकार के दोष से हमारे भाई रावण अपने जीवते ऐश्वर्य को नाश करते हैं।

यदि हमारे भाई और तुमारे पिता रावण इन उक्त दोषों को त्याग कर देवें तो लंकापुरी के सहित तुमारा और उनका कल्याण होसकता है। हेराक्षस! तुम अभिमान से युक्त दुर्विनीत व बालक हो और काल की पाश में बधे हो जोकुछ तुमारी इच्छाहो सो कहो। हेराक्षसाधम! आज इस प्रकार की आपत्ति में आकर जो हमको दुर्वचन कहते हो इससे निकुम्भिला में अब नहीं प्रवेश कर सकते हो और लक्ष्मण के सन्मुख से जीते लौट कर फिर लंकापुरी को नहीं जाओगे। यदि तुमको अपने बल का अभिमान होतो इस संग्राम में लक्ष्मण के साथ युद्ध करो। लक्ष्मण अपने बाण से तुमको यम लोक भेजकर देवतों के कार्य की सिद्धी करेंगे॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे सप्ताशीतितमः सर्गः॥ ८७॥

विभीषण के बचन को सुनकर क्रोध से मूर्छित मेघनाद विभीषण को परुष बचन से बोला, कि रावण का पुत्र यह शत्रुओं को नाश करने वाला अनेक आयुध को उद्यत करके यह रथपर बैठा है यम राज के धनुष बाण के समान हमारे धनुष बाण को देखो, उदय काल के सूर्य के समान हनुमान के पीठ पर चढ़े लक्ष्मणजी व विभीषण तथा तुम सब बानर हमारे पराक्रम को देखो, आज हमारे धनुष से छूटे दुरासह बाण को स्मरण करो। जैसे आग की एक चिनगारी रूई के ढेर को जला देता है वैसे धनुष से छूटे हमारे बाण तुम लोगों के शरीर को भस्म कर देवेंगे। शूल शक्ति व बाण से निर्भिन्न होकर तुम सब यम लोक को जाओगे। समर बाण को छोड़ते और बद्दल के समान गर्जना करते समय ऐसा कौन बीर है जो हमारे सन्मुख ठहर सके। रात्रि के समय में जो युद्ध हमने किया उसमें बज्र के समान अपने बाणों से तुम दोनों राम लक्ष्मण को पृथ्वी पर शयन करादिये परन्तु वह हमारा पराक्रम तुम लोगों को स्मरण नहीं है अब हमारे बाण से शरीर सहित यमलोक को जाने की इच्छा करते हो जो हमारे साथ युद्ध करने की अभिलाषा से अस्त्र शस्त्र को लेकर आये हो।

रावण के पुत्र मेघनाद के अभिमान की बात को सुनकर लक्ष्मणजी निर्भीक बदन से क्रोधित होकर मेघनाद सो बोले, हे राक्षस! अपने मुख से तो अपने पराक्रम की बड़ाई करके तुमने सकल शत्रुओं का संहार कर दिया परन्तु कर्म से उसको पूरा नहीं किया, और बुद्धिमान उसीको कहना चाहिये जो कर्म से कार्य को सिद्ध करे। क्रिया करने में असमर्थ केवल मुखसे कहकर तुम अपने को कृतार्थ मानते हो। हेवीर! अन्तर्धान होकर जो तुमने युद्ध किया वह तस्कर का काम है वीर का धर्म सन्मुख युद्ध करने का है हे राक्षस! तुमारे बाण के सन्मुख हम खड़े हैं तुम अपना पराक्रम हमको देखाओ, अपने बचन से अपनी बड़ाई क्यों करते हो। इसप्रकार लक्ष्मण के गंभीर व कठोर बचन को सुनकर महाबली मेघनाद विचार करके अपने तीक्ष्ण बाण को लक्ष्मण पर चलाया। विषैले सर्प के समान वेग पूर्वक राक्षस से छूटा बाण लक्ष्मण को आकर लगा. परन्तु कवच धारण किये लक्ष्मण के अंग को स्पर्श न करके केवल कवच के आघात से टूट कर गिर पड़ा। इसके बाद मेघनाद अनेक तीक्ष्ण बाणों से एक साथ लक्ष्मण को मारकर पीड़ित किया, राक्षस के बाण प्रहार से लक्ष्मण के अंग से रुधिर बहने लगा, उस समय लक्ष्मणजी की शरीर ऐसी चमकती थी जैसे बिना धूआं की अग्नी, मेघनाद लक्ष्मण के ऊपर अनेक बाण को छोड़कर बल के अभिमान से गर्जने लगा और फिर भी लक्ष्मण से बोला, हे लक्ष्मण? यमराज के समान हमारे छूटे हुए बाण आज तुमारे जीवन का अन्त करेंगे। और सियार बाज गिद्ध आदि पक्षी तुमारे रक्त व मांस से तृप्त होवेंगे और संग्राम में तुमारे मरण को तुमारे भाई दुर्मति राम देखेंगे। जब तुमारे कवच टूटकर गिर जावेंगे और तुमारे हाथ से धनुष बाण गिरजावेगा और तुमारी यह प्रतिभा मलीन हो जावेगी अर्थात् जब तुम मर जाओगे तब तुमको तुमारे भाई राम देखेंगे। रावणात्मज मेघनाद के परुष

बचन को सुनकर श्रीलक्ष्मणजी बोले, हेकपट युद्ध करने वाले राक्षस! यह सब वृथा प्रलाप क्यों करते हो, अपने कार्य को कर्म से संपादन करो। हे राक्षस! कर्म को न करके क्यों अपना पराक्रम बखानते हो, कर्म को करो जिसमें तुमारी बड़ाई सुनने में हमारी भी श्रद्धा होवे। ऐसा कह कर लक्ष्मणजी पांचबाण को एक साथ राक्षस के हृदय में मारे, बिष से ज्वलित सर्प के समान पंखसहित लक्ष्मण के बाण राक्षस के हृदय में ऐसी शोभा दिये जैसे सूर्यके किरणसे सूर्यकी शोभा होती है। लक्ष्मणके बाणसे आहतराक्षस क्रोध पूर्वक तीन बाण एकसाथ मारकर लक्ष्मणको पीड़ित किया। इसके बाद नरराज व राक्षसराजका परस्पर ऐसा तुमुल युद्ध होनेलगा जैसेबनके मध्य में दो सिंह एक साथ लड़ते हैं। राक्षस व लक्ष्मण दोनों बीर अतुल बल व पराक्रम को धारण करने वाले हैं और दोनों समर में दुःख से जीतने के योग्य हैं, तथा तेज व बल में राक्षस लक्ष्मण के बराबर है जैसे आकाश में ग्रहों का युद्ध होता है वैसे लक्ष्मण व राक्षस का युद्ध आरंभ हुआ असंख्य बाणकी बर्षा समर में करने से दोनों बीर सिंह के समान जान पड़ते थे। लक्ष्मण व रावण का पुत्र मेघनाद दोनों बीर प्रसन्नता से आपस में युद्धको आरंभ किये॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे अष्टाशितितमः सर्गः॥८८॥

इसके बाद मित्रों को आनन्द देनेवाले लक्ष्मण अपने धनुष पर अनेक बाणों को चढ़ाकर क्रोधित सर्प के समान श्वास लेते हुये धनुष पर बाण चढाये। इस बाण के शब्द को सुनकर मेघनाद के मुखकी क्रान्ति मलीन हो गई और वह लक्ष्मण की ओर देखने लगा। मेघनाद को मलीन देखकर लक्ष्मण के पीछे खड़े बिभीषण लक्ष्मणजी से बोले, हे लक्ष्मणजी! इस राक्षस की कान्ति बाण के शब्द को सुनतेही मलीन हो गई है इस कारण इस राक्षस का शीघ्र बध होगा। बिभीषण के बचन को सुनतेही लक्ष्मणजी बाण को राक्षस पर चलाये। इन्द्र बज्र के समान लक्ष्मण के कठोर बाण को

अंग में लगने से उस राक्षस की समस्त इन्द्रियां क्षुभित हो गईं और वह क्षण भर के लिये मूर्छित होगया । पुनः मूर्छा छूटकर रण में दशरथ के पुत्र लक्ष्मण को देखकर क्रोध से आंख को लाल किये लक्ष्मण के सन्मुख आकर बोला कि पहिले युद्ध के हमारे पराक्रम का स्मरण तुमको नहीं है क्या, जो हमारे नाग पाश में बँधकर तुम दोनों मृतक के समान पृथ्वी में पड़े थे । हम जानते हैं कि उस महा युद्ध का स्मरण तुमको नहीं है, अब हमारे बाण से निहत होकर इसी शरीर से यमलोक को जाना चाहते हो जो फिर भी हमारे साथ युद्ध करने के लिये सन्मुख आये हो । यदि पहिले युद्ध में तुमने हमारा पराक्रम नहीं देखा है तो खड़े रहो आज मैं अपने बल व पराक्रम की मर्यादा को तुम्हें दिखाता हूं । ऐसा कह कर मेघनाद ने सात बाण लषण को मारा और दश बाण हनुमान को मारकर पीड़ित किया और अत्यन्त क्रोध के वश होकर सौ बाण बिभीषण को मार कर गिरा दिया । इन्द्रजीत के इस कठोर पराक्रम को देख लक्ष्मणजी मुसकुरा कर कुछ भी न बोले और अपने धनुष पर महा बाण को चढ़ाकर रावण के पुत्र से बोले, हे निशाचर ! संग्राम में आये शूरवीर इतना लघुबाण नहीं चलाते हैं, तुमारे यह बाण हमको पुष्पमाला के समान मालूम होते हैं इन बाणों से तो हमको कुछ भी व्यथा नहीं है । युद्ध की अभिलाषा करने वाले शूरवीर ऐसा युद्ध समर में नहीं करते हैं जैसा युद्ध अज्ञानी बालक के समान तुम करते हो । ऐसा कहकर लक्ष्मणजी अपने बाण को उस राक्षस पर छोड़ने लगे, लक्ष्मण के बाण से मेघनाद का कवच ऐसा कट गया जैसे आकाशमें तारागण के समूह तितर बितर हो जाते हैं और लक्ष्मण के बाण से उस राक्षस के अंग में जितने घाव हो गये थे वे सब प्रातःकाल के सूर्य की नाईं चमकते थे । इसके बाद क्रोधित मेघनाद अपने हजार बाण को मारकर लक्ष्मण के कवच को भी विध्वंस किया, दोनो शूरवीर समर में कवच से रहित होकर बार बार श्वांस लेने लगे और अपने

अपने तीक्ष्ण बाण का प्रयोग परस्पर करने लगे कि जिन बाण प्रयोग से दोनों शूरवीरों के प्रत्येक अंग कट गये और रुधिर की धारा बहने लगी। तौभी दोनों शूरवीर अपने विजय की इच्छा से युद्ध में संयुत हो रहे थे। जैसे प्रलय काल मेघ जल वृष्टि से संसार को ताप देते हैं वैसे लक्ष्मण व मेघनाद अपने बाण वृष्टि से संसार को तपित किये। लक्ष्मण व मेघनाद का युद्ध बहुत देर तक हुआ तौभी दोनों शूरवीर न तो युद्ध से विमुख हुए और न तो उनको थकावट आई अस्त्र विद्या को जाननेवालों में श्रेष्ठ लक्ष्मण व मेघनाद अपने बाण से आकाश में सेतु बांध दिये और उन अमोघ बाणों के अलग २ दारुण शब्दसे पृथ्वी बार २ कांपने लगी। समरमें खड़े व रावणीके बाण बद्दलोंकी गर्जनाके समान शब्दायमान होते थे और सुवर्ण पुंख से युक्त दोनों तरफ के बाण दोनों शूरवीरों के शरीर को भेदन करने लगे, तौभी दृढ़ उत्साह वाले शूरवीर अपने अंग से ऐसी रक्त की धारा छोड़ने लगे जैसे पर्वत से पानी गिरता है और उन बाणों के घाव से मांस भी कटकर बाण के साथ गिरते थे। परन्तु कभी लक्ष्मण के बाण को रावणी काट देता कभी राक्षस के हजारों बाण को लक्ष्मण काटकर गिरा देते थे। जैसे बन में बिना पत्र के सेमर व पलास पुष्प की शोभा होती है वैसे रुधिर के बहने से लक्ष्मण व मेघनाद के शरीर की शोभा होने लगी। लक्ष्मण राक्षस को और राक्षस लक्ष्मण को अस्त्र हार करने में अपने परिश्रम से सफल नहीं होते थे। अनेक दिन पर्यन्त लक्ष्मण व रावणी का युद्ध हुआ परन्तु वह दोनों युद्ध से विमुख होने की इच्छा नहीं करते थे। मृत्युञ्जय लक्ष्मण के परिश्रम को समर में देखकर रावण के भाई महात्मा बिभीषण युद्ध की अभिलाषा से समर में आकर खड़े हुये॥

इति बाल्मीकिये युद्धकांडे एकोननवतितमः सर्गः॥८९॥

लक्ष्मण व रावणी को मतवाले मतंग के समान जय की इच्छा करने वाले वीरों को समर में भिड़े देखकर महाबली बिभीषण धनुष

बाणको लिये संग्राम में खड़े होकर युद्ध के कौतुक को देखने लगे। इसके बाद बिभीषण ने भी अपने धनुष पर बाणको चढाकर रावणी पर चलाये। जैसे इन्द्र के बज्र से पर्वत टूट जाते हैं वैसे बिभीषण के बाण से मेघनाद की शरीर और भी व्यथित हो गई। और बिभीषण के अनुचर जितने राक्षस थे वह मेघनाद की सेना वाले राक्षसों को मारने लगे। इसके बाद बिभीषण बानरों को राक्षसों को मारने के लिये और भी प्रेरणा करके समय के अनुसार बचन को बोले, हेबानरों! रावण के बंश में यही एक उत्तम योधा है, इसके शेष होने पर रावण की सेना का शेष जानना चाहिये जैसे आप लोगों ने अपने पराक्रम से प्रहस्त निकुम्भ कुम्भकर्ण कुंभ धूम्राक्ष जंबुमाली महामाली सुमघ्न यज्ञकोप बज्रदंष्ट्र संह्रादी बिकट तपन मन्द प्रधास प्रघस प्रजंघ जंघ अग्निकेतु रश्मिकेतु विद्युज्जिह्व द्विजिह्व सूर्य शत्रु अकंपन सुपार्श्व चक्रमाली कंपज देवान्तक नरांतक आदि बलवान व अभिमानी राक्षसों के साथ आप लोगों ने युद्ध करके नाश किया है, समुद्र के समान रावण की राक्षसी सेना को पार करके अब इस गड़हिया को लांघने में शिथिल होते हैं, बस इसी मेघनाद को शेष होने में आप लोगों का विजय है। देखिये भाई के पुत्र को नाश करना कितना अयोग्य काम है तौभी मेघनाद के ऊपर से दया को हटाकर हमने उसको नाश करने का उपाय करते हैं। इसको मारने के लिये हमारे आँख की आंसू बन्द होगई है। हेबानर गण! इस राक्षस की सेना को अपने बलसे आप लोग नाश कीजिये यही आप लोगों का महायश है। बिभीषण के बचन को सुनकर बानरी सेना प्रसन्न होकर पूंछ पटककर कूदने लगे और बार २ गर्जना करने लगे और जांबवान की सेना भी अपने आयुध को लेकर राक्षसों को मारने लगे। महबलवान राक्षस भी अनेक अस्त्र शस्त्र को लेकर भय को छोड़कर बानर भालुओं को नाश करने लगे। राक्षस व बानर परस्पर इसप्रकार लड़ने लगे। जैसे देवता व असुरों

ने युद्ध किया था। लक्ष्मण को पीठपर लिये हनुमान भी एक महा पर्वत को उखाड़कर हजारों राक्षसों को नाश किये। शत्रु के बलको हरण करनेवाले मेघनाद फिर भी लक्ष्मण की ओर दौड़े लक्ष्मण व मेघनाद में तुमुल युद्ध पहिले के समान होने लगा। और वे दोनों शूरवीर परस्पर बाण की बर्षा करने करने लगे। जैसे बर्षा कालमें वृष्टिका संयोजन होता है वैसे युद्ध स्थान में लक्ष्मण व मेघनाद के बाण वृष्टि का सन्धान होने लगा और वे अमोघ बाण के जाल से किसी का लक्ष्य किसी पर दृढ़ नहीं है। लक्ष्मण व रावणी के बाण से आकाश में अन्धकार व्याप्त होगया। सूर्य चन्द्रमा छिप गये और वे बाण दिशाओं में इस प्रकार फैल गये जैसे आकाश से तारागण टूटकर पृथ्वी में प्रकाश करते हैं और रक्त की हजारों नदियां बहचलीं अर्थात् वीरों के अंग से निकला हुआ अनेक स्थानों से बहचला। रक्त मांस को भोजन करने वाले पशु पक्षी रक्त मांस से तृप्त होकर भयानक गर्जना करते थे। भय के मारे वायु का चलना बन्द होगया। अग्नि की ज्वाला शान्त होगई। महर्षिगण लोकका कल्याण मनाने लगे। गंधर्व व चारण भय के मारे आकुल होगये इसके बाद सोने के अलंकार को धारण करने वाले राक्षस सिंह मेघनाद के रथ में जुतेहुए काले रंग के घोड़ों को लक्ष्मण अपने चार बाणों से पीड़ित किये। लक्ष्मण के बाण को लगतेही घोड़ों के अलंकार ध्वस्त होगये सारथी के हाथ से बाग छूट गया घोड़ों का बन्धन शिथिल होगया। इसके बाद वज्राकार लक्ष्मण एक बाण से मेघनाद का सारथी मारगया। सारथी को निहत देखकर महा बलवान मेघनाद अपने स्वयं घोड़ों की बाग को पकड़ कर रथको चलाने लगा। जब मेघनाद बाण सन्धान छोड़कर घोड़ोंको चलाने लगे तब लक्ष्मण अपने बाणसे राक्षसको पीड़ित करें। और तब राक्षस घोड़ों का चलाना बन्दकर लक्ष्मण पर बाण की वर्षा करने लगे। तब लक्ष्मण अपने बाण से राक्षस के बाणों को

काटदेते थे । इसप्रकार लक्ष्मण उस राक्षसको व्यथित करदिये । रावण का पुत्र मेघनाद समर में सारथी के मरने से उदास होगया और अत्यन्त मलीन होकर प्रबल संग्राम को छोड़ने की इच्छा किये । राक्षस को उदास देखकर बानरगण लक्ष्मण की बड़ाई करनेलगे । इसके बाद प्रमाथी शरभ रभस गंधमादन ये चार बानर क्रोध पूर्वक उछल कर राक्षस के रथके समीप चले गये और चारो बलवान बानर राक्षस के रथ के घोड़ों को ऐसा मरोड़ा कि वे रथ के घोड़े मुख से रुधिर गिराकर पृथिवी में गिर पड़े और चिल्लाकर मरगये और उस राक्षस के रथ को विरथकरदिये और फिर कूदकर लक्ष्मण के समीप चले आये राक्षस के रथ सारथी को नष्ट होने पर बाण से रावणी को लक्ष्मणजी मारने लगे । इन्द्र के समान पराक्रमी लक्ष्मण पैदल राक्षस पर अपने बाण को मारकर अत्यन्त घायल कर दिये ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे नवतितमः सर्गः ॥ ९० ॥

रथ सारथी को नष्ट होने से समर में क्रोधित मेघनाद और भी क्रोध की आग से जलने लगा और लक्ष्मण पर अमोघ बाण को छोड़ने लगा । क्रोधित दोनों शूरवीर सिंह के समान आपस में बाण और इन दोनो शूरवीरों के महा युद्ध में अपने अपने स्वामी के पक्ष को लेकर बानर राक्षसों को राक्षस बानरों का संहार करने लगे । उन सेना वाले राक्षसों के पराक्रम को देखकर मेघनाद प्रसन्नता पूर्वक उन राक्षस की बड़ाई करके बोला, कि इस समय अन्धकार से दिशायें व्याप्त होगइ हैं, इस घोर अन्धकार में अपना पक्ष व शत्रु का पक्ष नहीं मालूम पड़ता है । इसलिये आप लोग निर्भय होकर युद्ध करें, और मैं दूसरी रथ को लेकर अभी आता हूं । आप लोग इन बानरों को ऐसा मोहित कीजिये जिसमें हमारे जाने का वृतान्त इन बानरों को न मालुम होवे कि हमको लंकापुरी में प्रवेश करने के समय हम से युद्ध करें । अपनी सेना वालों राक्षसो से इस प्रकार कहकर बानरों को प्रतारण करके शत्रु को नाश करने वाले मेघनाद रथ लेने के

लिये लंकापुरी में प्रवेश किया। लंकापुरी में प्रवेश करके भूषण से अलंकृत घोड़ों से जोते हुए रथ पर अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र को रख कर उसी रथपर अपने बैठा। और फिरभी बलवान राक्षसों की सेना को लेकर काल के वश हो नगर से बाहर निकला, और बड़े वेग के सहित लक्ष्मण व विभीषण की ओर आया। रावण के पुत्र मेघनाद को फिर भी रथ पर बैठे देखकर लक्ष्मणजी और बानरों के सहित विभीषण परम विस्मय को प्राप्त हुए। तब तक क्रोधित रावणी सैकड़ों बाण को एक साथ छोड़ने लगा। परम लघु होकर बानरों को भी नाश करने लगा। राक्षस के बाण से व्यथित बानर समर से भाग कर लक्ष्मण की शरण में गये। समर के कोप से प्रज्वलित रघु-नन्दन अपने बाण से राक्षस के पाणि लाघव व कार्मुक को काट कर गिरा दिये। मेघनाद अपने बाण को कटा देखकर फिरभी तीन बाण लक्ष्मणको मारे, लक्ष्मणजी उनको भी काट कर दिये। औरअपने अमोघ पाच बाण को रावणी के हृदय में मारे। वेबाण राक्षस के शरीर को भेद कर पृथिवी में गिर पड़े।। उस बाण को लगने से रावणी मुखसे रुधिर को गिराता हुआ एक महा कठिन बाण को ग्रहण किया और लक्ष्मण को लक्ष्य करके वृष्टि करने लगा। और लक्ष्मणजी अपने बाण से राक्षस के बाण का वारण करने लगे। लक्ष्मण के पराक्रम को देखकर रावण का पुत्र मेघनाद विस्मित होगया। इधर लक्ष्मणजी राक्षस के बाण से आकुल होकर तीन बाण से अनेक राक्षसों को बेध डाले। बलवान शत्रु के बाण के आघात से अपने सहित राक्षसों को पीड़ित देखकर असंख्य बाण वर्षा लक्ष्मण पर किया, परन्तु लक्ष्मणजी अपने बाण से राक्षस के बाण समूह को काट कर गिरा दिये और अपने एक तीक्ष्ण बाण से राक्षस के सारथी के शिर को काट लिये। सारथी के मरने पर भी राक्षस का रथ आकुल नहीं हुआ और अपने बाण से मंडल करके बानरों के सहित विभीषण व लक्ष्मण को त्रासित किया। राक्षस के क्रूर कर्मसे क्रोधित लक्ष्मण बाणसे मेघनाद

के रथ के घोड़ों को विध्वंस किया, लक्ष्मणके पराक्रम से आकुल रावणी दश बाण उनको मारा। बज्र के समान कठोर राक्षस के बाण लक्ष्मण के समीप आकर उनके कवच से टूट कर भ्रष्ट होगये। लक्ष्मण के कवच को अमोघ जानकर रावण का पुत्र मेघनाद तीन बाण लक्ष्मण के ललाट में मारा वे तीनों बाण लक्ष्मण के ललाट में इस प्रकार शोभा देने लगे जैसे पर्वत त्रिकूट के तीन शिखर शोभित होते हैं। इस प्रकार बाणाघात से लक्ष्मण का पीड़ित करता हुआ भी अनेक बाण उन पर छोड़ने लगा। राक्षस की कठोर निर्दयता को देखकर पांच बाण से लक्ष्मण उसको त्रासित किये। वह दोनो वीर एक एक को लक्ष्य कर इस प्रकार बाण वृष्टि करने लगे जैसे इन्द्र की आज्ञा से कुपित मेघ मुसलधार पानी बरसता है और उन बाणों के लगने से लक्ष्मण व रावणी के अंग फूले पलास के समान लाल होगये। इसके उपरान्त समर के कोप से आकुल मेघनाद तीन बाण विभीषण को मारा। और एक एक बाण हनुमान आदि बानरों को मारकर क्रोध की मूर्छा में मग्न होगया। तब तक महात्मा विभीषण एक विशाल व दृढ गदा लेकर मेघनाद के घोड़ों को मार कर रथ को नष्ट कर दिया। विभीषण की यह दशा देखकर रावणी ने शक्ति को लेकर विभीषण पर चलाया, उस शक्ति को विभीषण के ऊपर आते देख कर लक्ष्मणजी ने अपने बाण से उस शक्ति को दश टुकड़ा करके गिरा दिये और विभीषण ने बज्र के समान कठोर पांच बाण को एक साथ मार कर उस राक्षस के रथ के घोड़ों को नष्ट कर दिया, बाण के लगने से रुधिर को बहाते व हरण्य के घोड़ा मर गये अत्यन्त क्रोधित रावणी यमराज से दिये महा अस्त्र को विभीषण पर चलाया, लक्ष्मण अपनी सेना में काल अस्त्र को आते देखकर उसी काल बाण के समान अपना अमोघ बाण छोड़े, तब लक्ष्मण के बाण और राक्षस के बाण आपस में लड़कर पृथिवी में गिर गये। इसके बाद मेघनाद ने स्वप्न में दिये कुबेर के कठोर बाण को लक्ष्मण पर चलाया। वह बाण इतना पराक्रमी था कि जिसके

सन्मुख से इन्द्रादिक देवता नहीं बच सकते हैं। राक्षस के हाथ से छूट कर वह बाण क्रौञ्च पक्षी के समान शब्द करता हुआ लक्ष्मण की ओर चला लक्ष्मणजी भी कुबेर के बाण पराक्रम को नष्ट करने के लिये अपने अमोघ बाण को छोड़े, लक्ष्मण व राक्षस के अमोघ बाण आपस में महा भयंकर युद्ध किये परन्तु लक्ष्मण का बाण कुबेर बाण के पराक्रम को नष्ट करना चाहा तब कुबेर का अस्त्र आकाश में चला गया और अन्तरिक्ष से शत्रु की सेना में आना चाहा परन्तु लक्ष्मण के बाण अपने मुख से उस बाण को पकड़ कर उसके बल को ऐसा नष्ट किया कि जैसे गरुड़ सर्प के पराक्रम को नष्ट करता है, कुबेर का बाण अपने पराक्रम से नष्ट होकर पृथिवी पर गिर पड़ा। उस बाण को गिरते ही भूमि से चिनगारी उड़कर आकाश को अच्छादित कर दिया। दोनों बाण को समर में प्रतिहत देखकर मेघनाद लज्जित होगये और लक्ष्मणजी का क्रोध और भी बढ़ चला। पुनः लक्ष्मणजी क्रोध के अधीन हो बारुणास्त्र को अपने धनुष पर चढा कर राक्षस को मारे। इन्द्रजित् अपने उपर बारुणास्त्र को आते देखकर क्रोधित रावणी आग्नेय अस्त्रको इस प्रकार छोड़ा मानो यह अग्नि बाण संसार को जलाने के समान शत्रु की सेना को संहार करने के लिये जाता है। राक्षस के आग्नेय अस्त्र को जलाते हुए आते देख कर लक्ष्मणजी सूर्यास्त्र को छोड़े वह सौर्यास्त्र आग्नेय अस्त्र को निवारण करने के लिये सौ टुकड़ा कर दिया और वह अस्त्र निष्फल होकर गिर पड़ा। अस्त्र को निष्फल देखकर क्रोध से मूर्छित रावणी शत्रु को संहार करने में समर्थ आसुरास्त्र को छोड़ा, उसके धनुष से छूट कर मुद्गर शूल भुशुंडी गदा खड्ग परशु आदि के सहित वह बाण चला, समर में अनिवार्य अस्त्र को आते देखकर लक्ष्मणजी ने अत्यन्त द्युतिमान माहेश्वर अस्त्र को प्रयोग किया तो राक्ष के आसुरास्त्र और माहेश्वरास्त्र आपस में लड़ने लगे उन दोनो अस्त्रों के भयंकर युद्ध से आकाश मंडल आवृत होगया। ऋषि पितर देवता गंधर्व गरुड़ उरग आदि इन्द्रादि देवतों को आगे करके लक्ष्मण की रक्षा करने लगे। इसके

बाद रामचन्द्रजी के भाई लक्ष्मणजी राक्षस को नाश करने के लिये अग्नि के समान प्रज्वलित बाण को छोड़े वह अस्त्र जाकर राक्षस के अंग भूषण को नष्ट कर दिया और राक्षसों को भय देने वाले ऐन्द्र अस्त्र को धनुष पर चढ़ाये, वह ऐन्द्र अस्त्र दानवों के युद्ध में दानवों को संहार किया था। उसी अस्त्र को धनुष पर चढ़ाकर अस्त्र के अधिष्ठात्री देवताओं से लक्ष्मी को धारण करने वाले लक्ष्मण अपने कार्य सिद्धी के लिये प्रार्थना किये। हे अस्त्र देवता! धर्मात्मा सत्यप्रतिज्ञ दशरथ के पुत्र रामचन्द्रजी यदि युद्धमें अग्रसर बीर होंतो तुम लोग इस रावणी को संहार करो। ऐसा कहकर निष्कुटिल इन्द्र बाण को राक्षस के ऊपर चलाये। वह अस्त्र जाकर राक्षस के शिरको काट लिया। शिर को कटजाने से वह राक्षस पृथ्वी पर गिर पड़ा और उसके अंग से रुधिर की धारा बहने लगी। राक्षस को मरा देखकर बिभीषण सहित बानरी सेना प्रसन्न होकर बिह्वल होगई। जैसे वृत्रासुर के मरने पर देवतों को आनन्द हुआ। मेघनाद के क्षय से देवलोक में दुन्दुभी बजने लगी। देवतों ने रामचन्द्र व लक्ष्मणजीकी जय २ की ध्वनि किये। गंधर्वोंने इनकी स्तुति की। अप्सरों ने देवलोकमें नृत्य किया इधर मेघनाद के मरणसे राक्षस भयभीत होकर भाग चले। राक्षसोंके हाथसे छूटकर अनेक प्रकारके अस्त्र गिर गये। जैसे सूर्यके अस्त होने पर किरण भी साथही अस्त होजाती हैं वैसे राक्षस के साथही राक्षसी सेना नष्ट हो गई। इन्द्रादिक देवता राक्षस के मरने पर प्रसन्न होकर आनन्द मचाने लगे और राम लक्ष्मण पर पुष्प बर्षा करने लगे। ऋषिमंडल प्रसन्न होकर अपना अग्नि होत्र करने लगे। नदी आदि तीर्थों के क्लुषित जल शुद्ध होगये। त्रिविध वायु चलने लगा। और बिभीषण हनुमान जांबवान आदि बानर भालू हर्षित होकर आनन्द मचाने लगे और लक्ष्मण की स्तुति करने लगे। सैनिक बानर आपस में परस्पर गर्जने दौड़ने लगे। और रामचन्द्र व लक्ष्मणजी के गुन को गान करने लगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे एकनवतितमः सर्गः ॥ ९१ ॥

शुभ लक्षण को धारण करने वाले लक्ष्मण के अङ्ग से रुधिर बहता था तौभी संग्राम में शत्रु को जीतकर अत्यन्त हर्षित हुए। और जांबवान हनूमान बिभीषण के सहित लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजी के समीप आये और रामचन्द्रजी की प्रदक्षिणा करके प्रणाम किये और रामचन्द्रजी के पार्श्व में मन्त्री के समान आसन को ग्रहण किये और रावण के पुत्र बलवान मेघनाद के बध को बिस्तार से कहने लगे। राक्षस के युद्धके समाचार व राक्षसके नाशको कहकर बिभीषण अति प्रसन्न हुए। महाबली मेघनाद के बध को लक्ष्मण के हाथ से सुनकर श्रीरामचन्द्रजी आनन्द के मारे गद् गद् होगये और प्रसन्नता पूर्वक लक्ष्मण की बड़ाई करने लगे। हे लक्ष्मण! धन्य हो जो तुमने बड़ा कठिन काम किया है इस समय तुमने अपने कर्मसे हमको जीतलिया है अर्थात् परम भक्ति के कारण तुमने हमको अधीन करलिया है। ऐसा कहकर श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजी को स्नेह के मारे गोद में ले लिये और बार २ लक्ष्मणजीके मुखको देखने लगे। लक्ष्मणजी अनेकानेक बाण से पीड़ित होकर श्रीरामचन्द्रजी के गोद में बैठे लंबी श्वांस छोड़ने लगे लक्ष्मणजी को दुःखी देखकर दुःख से सन्तप्त श्रीरामजी लक्ष्मणजी के मुख को चूमे और उनके अंग को स्पर्श करके बोले, हेलक्ष्मणजी! आपने इसप्रकार भयानक राक्षस के साथ युद्ध करके समरमें उस राक्षसको मारकर बड़ाकठिन कर्म किये हैं, इस राक्षसके मरने से आज हम अपने को विजयी मानते हैं, और आपकी सहायता इस संग्राम में बिभीषण व हनुमान ने भी किया है, दिन रात तीन दिन के युद्ध करने से यह राक्षस मरा है, एक बड़ी भारी बलवान राक्षसी सेना के सहित पुत्रके मरण को सुनकर राक्षसेन्द्र रावणभी बड़ी भारी राक्षसों की सेनाको लेकर आवेगा। तो पुत्र शोक से सन्तप्त राक्षसाधिप को सेना सहित में अपने बाण से नाश करूंगा। हेलक्ष्मणजी! जबतक तुम हमारे स्वामी हो तबतक सीता और राज्य हमको कुछ भी दुष्प्राप्य नहीं है। इसप्रकार लक्ष्मणजीको धैर्य देकर गलेसे लगाये और

सुषेण को बुलाकर आज्ञा दिये कि मित्र को आनन्द देने वाले लक्ष्मणजी के अङ्ग के घाव जिसप्रकार अच्छे हों वही उपाय करो। इनके अतिरिक्त और भी जितने बानर भालू घाव से पीड़ित हों उनको निरोग करने का प्रयत्न करो। श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा को पाकर परमधी संजीवनी का नास लक्ष्मण को दिये, उस औषधी को नास लेते भरमें लक्ष्मण की शरीर स्वस्थ होगई। इसके बाद विभीषण व हनुमान आदि की भी चिकित्सा सुषेण ने किया, इनलोगों का भी घाव अच्छा होगया। लक्ष्मणजी की जब बाण व्यथा हट गई तब अरोग्य लक्ष्मण विभीषण व हनुमान आदि को देखकर श्रीरामचन्द्रजी अत्यन्त प्रसन्न होगये। और लक्ष्मणजी की बड़ाई करके आनन्द मग्न होगये॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे द्विनवतितमः सर्गः॥ ९२॥

रावण के मन्त्रियों ने मेघनाद के बध को राक्षसों से सुनकर शीघ्रही दशानन के समीप जाकर रावणी मरणका सामाचार कहे, कि मेघनाद के साथ लक्ष्मण का युद्ध समर में होता था, परन्तु विभीषण की सहायता से इन्द्रजीत को लक्ष्मण ने मारा हैं। पुत्र के बध को सुनकर राक्षसेन्द्र पहिले तो मूर्छित होगया पीछे चेतना को लाभकरके पुत्र शोक से आकुल रावण विलाप करने लगा। हा राक्षसों में श्रेष्ठ! महाबली! हमारे पुत्र! तुमने देवतों के सहित इन्द्रको जीत कर भी लक्ष्मण के वश में पड़ गये। तुमारे बाण के सन्मुख काल की भी शक्ति नहा जो ठहरने सके। सो तुम लक्ष्मण के बाण से मरकर स्वर्ग को गये, इसलिये, आज वह वैवस्वत राजा अत्यन्त प्रशंशनीय हैं, जिस यमराज के काल धर्म से संयुक्त होकर तुम भी जगतके स्वामी के हाथ से मारे गये हो इसकारण तुमको स्वर्ग अवश्य मिला होगा, क्योंकि जो लोग स्वामी के हाथ से मारे जाते हैं उनको स्वर्ग लाभ होता है यही मार्ग देवता मनुष्य राक्षस बानर आदि योधाओं के लिये है। हे पुत्र! तुम युद्ध में मारे गयेहो स कारण तुम्हारी चिन्ता हम नहीं करते हैं। आज तुम्हारे मरण से इन्द्रादिक लोकपाल

निर्भय होकर सुखसे सोवेंगे। एक मेघनाद के बिना आज तीनों लोक का सुख व संपत्ति हमारे लिये उजाड़ के समान है। जैसे पर्वतों की गुहा में हाथियों का चिल्लाना सुनाई पड़ता है वैसे श्रेष्ठ लंकापुरी में राक्षस की स्त्रियों के रोदन सुनाई देते हैं। हेमेघनाद! लंकापुरी के राज्य को और इन राक्षसों को तथा अपनी माता व स्त्री और हमको छोड़कर कहां चले गये। हेपुत्र! आज हमको तुमारा प्रेत कर्म करना पड़ा यह विधाता की सृष्टि वाम होगई, हमारे प्रेत कर्म करने वाले तुमने मार्ग को विपरीत करदिया। राम लक्ष्मण व सुग्रीव को जीते छोड़कर इन बैरियों से बिना बदला लिये तुम कहां चले गये। इसप्रकार अनेक बिलाप करता हुआ रावण पुत्र शोक से आकुल होगया। और रावण के शरीर में वह शोकाग्नि अत्यन्त संदीप्त होगई। पुत्रवध से संतप्त रावण क्रोध के बश में होकर जानकी को बध करने का विचार करने लगा। पहिले राक्षसेन्द्र के स्वभाव से उनकी आंखें लाल रहती थी दूसरे महाक्रोध से और भी लाल होगईं और साक्षात् क्रोधित शिव के समान राक्षस के आंख से आंसू की धारा गिरने लगी और कट कटाकर राक्षस दांत को पीसने लगा मानो यह समस्त संसार को भक्षण कर जायगा। इस प्रकार क्रोधित राक्षसों से बोला, कि युद्ध में चलने के लिये तइयार होओ। मैंने हजार हजार वर्ष की तपस्या कर ब्रह्मा को कई बार प्रसन्न किया है, उस तपस्या के प्रभाव से और ब्रह्माजी के अनुग्रह से देवता व दैत्यों में किसी से हमको भय नहीं है ब्रह्माजी ने यह जो उज्वल कवच हमको दिया है इस कवच के प्रताप से शत्रुओं के बाण हमारे अंग में नहीं प्रवेश कर सकेंगे। यह ब्रह्माजी से दिये कवच व धनुष बाण को लेकर हम रथपर बैठते हैं। अब संग्राम में हमारे सन्मुख इन्द्र भी नहीं ठहर सकते हैं। और अनेक मंगल ध्वनि करने वाले इस धनुष को लेआओ, यही धनुष रामलक्ष्मण को विध्वंस करेगा। इसके उपरान्त पुत्र शोक से अत्यन्त आकुल राक्षस सीता को बध करने

का प्रयत्न करने लगा। रावणके प्रयत्नको देखकर समरसे भागकर रावण के मन्त्रियों ने हाथ जोड़ कर कहने लगे कि वानरों को वंचना करने के लिये मेघनाद भी माया की सीता का बध किया है यह हम लोगों ने देखा है। राक्षसों के बचन को सुनकर रावण ने कहा आज हम सीता को नाश करके मेघनाद के प्रयत्न को सत्य करेंगे। ऐसा राक्षसों से कहकर मियानी से खड्ग को निकाला और बड़े वेग से स्त्री और मन्त्रियों के सहित प्रमदावन में पहुंचा। क्रोध युक्त रावण को प्रमदावन में जाते देखकर राक्षसेन्द्र के मन्त्री प्रसन्नता से गर्जना करके आपस में आलिंगन करने व परस्पर कहने लगे कि आज इस राक्षसेन्द्र को देखकर अपनी सेना सहित रामलक्ष्मण अवश्य भाग जावेंगे। क्योंकि राक्षसेश्वर ने अपने क्रोध से इन्द्र, वरुण, यम, कुबेर इन चार लोकपालों को जीत लिया है, और कितने शत्रुओं को संग्राम में पराजित किया है। इसके समान बलवान व पराक्रमी पृथिवी में दूसरा कोई नहीं है। क्योंकि यह राक्षसेश्वर तीनो लोक के धन रत्न का उपभोग किया है। इस प्रकार अनेक तर्कवितर्क के वार्तालाप से रावण अशोक बनिका में पहुंच कर खड्ग को लिये सीताजी की ओर दौड़ा। परन्तु उसके हितको चाहने वाले उसके मन्त्रियों ने क्रोधित रावण को हत्या से रोकने का उद्योग किया। जानकीजी खड्ग लिये राक्षस व राक्षसियों के सहित रावण को आते देखकर अत्यन्त भय से विह्वल होगई और अपनी तरफ राक्षस को दौड़ते देखकर शोकाकुल जानकी विलाप करने लगीं, कि यह राक्षस क्रोध पूर्वक खड्ग लिये हमारे मारने को आया है। श्रीरामचन्द्रजी के रहते यह राक्षस अनाथ के समान हमको त्रास देता है। इसने बहुत बार हमसे कहा कि तुम हमको अंगीकार करो, परन्तु मैंने अपने पति व्रत धर्म के अनुसार इस राक्षस को धिक्कार ही देती गई। सो अब यह राक्षस हमसे निराश हो हमको बध करने में उद्यत है। अथवा हमारे ही कारण संग्राम करने के लिये आये श्रीरामलक्ष्मण को इन राक्षसों ने

समर मे मारा हो। क्योंकि अभी राक्षसों का बड़ा भारी कोलाहल सुन पड़ा है। और बहुत सी स्त्रियों के रोने के भी शब्द सुनाई देते हैं। यदि हमारे लिये श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी यदि समर में मारे गये हों तो हमको धिक्कार है, अथवा श्रीरामचन्द्रजी के बाण से इस रावण का पुत्र मरा हो जिसके शोक मे यह हमको मारने का विचार किया हो। हनुमान हमारे दुःख को देखकर पहिलेही अपने पीठ पर बैठाकर हमको श्रीरामजी के पास पहुंचाने को कहते थे, परन्तु मैंने अपनी क्षुद्रता के कारण उसको अङ्गीकार नहीं किया जिसका फल आज यह है। यदि आज हम श्रीरामचन्द्रजी के गोद में होती तो हमको राक्षसों का भय क्योंकर होता। एक पुत्रा कौसल्या यदि रामचन्द्रजी के विनाश को सुनेंगी तो उनका हृदय ऐसा फलेगा कि जिस फलको स्मरण करके जन्म भर रोवेंगी। अथवा पुत्र के दिये श्राद्ध से निराश होकर अग्नि अथवा जल में प्रवेश करके मर जावेंगी। पाप करने वाली कुटनी मंथरा को धिक्कार है जिसके कारण कौसल्या को इतना दुःख भोगना पड़ेगा। इस प्रकार विलाप करती हुई मैथिली को देखकर रावण का मन्त्री सुपार्श्व रावण को सन्तोष देने के लिये बोला, हेदशग्रीव! तुम साक्षात् कुबेर के भाई हो क्रोध से धर्म को छोड़कर सीता को बध करने की इच्छा करते हो। हेराक्षसेश्वर! वेद को जानने वाले हो और सदा चार व्रत नियम व धर्म को पालन करने वाले हो फिर हेवीर! स्त्री को बध करना कैसे अंगीकार करते हो। रुप से संपन्न इस सीता पर जो क्रोधको शान्त करने वाले हो वही क्रोध रामपर शान्त करो जिसमें यह सीता तुमारे अनुगामी होवे। आज कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी है आज अपनी सेना तइयार करके कल्ह अमावास्या को समर में चलिये, युद्ध में श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मण को मारकर सीता के सहित सुख भोग कीजिये। राक्षसों का राजा अपने मन्त्री के बचन को मानकर सबके सहित अशोक बन से लंकापुरी में आया, और वहां से तुरत अपनी सभा में आन कर बैठा॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे त्रिनवतितमः सर्गः॥ ९३॥

राक्षसों के राजा रावण अपनी सभा में राज सिंहासन पर बैठ कर क्रोधित सिंह के समान लंबीश्वास को लेकर अपने सभासद राक्षसों से बोले, आप सब बलवान व प्रधान राक्षस हाथी घोड़ा रथ आदि के सहित अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र को लेकर युद्ध भूमि में जाओ, और अपने पराक्रम से अकेले राम को मार कर चले आओ। अथवा तुम सब राम को न मार कर यदि घायल आओगे तोमैं तुम लोगों के सामने कल्ह राम को नाश करूंगा। वे बलवान राक्षस रावण के बचन को मानकर सेना तइयार किये, दश हजार अपूर्व रथ औरअठारह हजार मतवाली हाथी और चौदह हजार घोड़ा सवार और दो लाख पैदल राक्षसी सेना अमावास्या के प्रातःकाल युद्ध भूमि में आकर बानरों पर प्राण को नाश करने वाले परिघ, पदिश, खड्ग, बाण परशु आदि अस्त्रों को आते भर में बानरों पर छोड़ने लगे। बानर गण भी राक्षसों के आनन्द मचाते विशाल राक्षसी सेना को देखकर गर्व के मारे उन राक्षसों को वृक्ष पर्वत व शिला आदि से मारने लगे। पहिले रक्त से कीचड़ मई भूमि इन बलवान बीरों के संघर्ष धूलि होगई, पीछे अस्त्राघात से जब फिर रुधिर बहाते अनेकों रक्त की नदियां बह चलीं। राक्षसों के त्रास से बानर और बानरों से राक्षस आहत होकर मरने लगे। और एक एक राक्षसों पर सैकड़ों बानर मारने लगे जैसे एक वृक्ष पर हजारों पक्षियां आकर बैठती हैं। बानर गण अपने नख व दांत से राक्षसों के नाक कान मुख आदि को फाड़ कर विरूप करनें लगे तौभी राक्षसी सेना रावण की बानरों को इस प्रकार पीड़ा पहुंचाई कि बानर युद्ध करने से असमर्थ होकर श्रीरामचन्द्रजी के शरण में आये। राक्षसों के हाथ से बानरों को आहत व रण में असमर्थ देखकर महा पराक्रमी संसार के दुःख को नाश करने वाले श्रीरामचन्द्रजी धनुष बाण को लेकर समर में आये और राक्षसों पर बाण वर्षा करने लगे। और राक्षसों की सेना में इस प्रकार प्रवेश किये जैसे बद्दलों के बीच में सूर्य प्रवेश करते हैं। वे राक्षस रामचन्द्रजी के बाण से ऐसे जलने लगे जैसे आग को देख

कर पतंग जलते हैं। जैसे आंधी चलने से मनुष्य को कोई वस्तु दिखाई नहीं पड़ता वैसे श्रीरामचन्द्रजी के बाण वृष्टि में राक्षसी की आंखें बन्द होगई। जैसे आत्मा इन्द्रियों पर अस्त्र प्रहार करके अपने सांसारिक कामों में लगा देता है परन्तु वह आत्मा आंखों से दिखाई नहीं देता वैसे श्रीरामचन्द्रजी के बाण राक्षसों के अंग टुकड़ा टुकड़ा कर देते थे, परन्तु वे अज्ञानी राक्षस समर में लड़ते श्रीरामचन्द्रजी को नहीं देखते थे और रामचन्द्रजी प्रलयाग्नि के समान अपने तीक्ष्ण बाणों से राक्षस के रथ हाथी घोड़ा आदि को संहार कर दिये। इसके बाद राक्षसों ने समर में युद्ध करते थे श्रीरामजी को देखकर महाबली राक्षस श्रीरामजी से लड़ने लगे तब भगवान ने गांधर्व अस्त्र से राक्षसों को मोहित करके संहार करने लगे। वे राक्षस समर में लड़ते हजारों राम को देखते हैं और फिर एकही रामचन्द्र अपने बाण से समस्त सेना को काल के समान भक्षण करते हैं। रामचन्द्रजी अपने धनुष को मंडलाकार बनाकर राक्षसों को नाश किये। जैसे काल चक्र से सकल प्रजायें नाश होती हैं वैसे श्रीरामचन्द्रजी से सकल राक्षसी सेना नाश होगई। तीन अक्षौहिणी राक्षसी सेना को अकेले रामचन्द्रजी ने दिन भर में नाश करदिये। उन निशाचरों में जो शेष बच गये वे सायंकाल में लंकापुरी में जाकर राक्षसी सेना को नाश होने का समाचार रावण से कह सुनाया। इधर देवता सिद्ध गंधर्व ऋषि मुनि श्रीरामचन्द्रजी की बड़ाई करने लगे। सुग्रीव विभीषण जांबवान मैन्द द्विविद आदि बानरों ने श्रीरामचन्द्रजी की पूजा व स्तुति किया और देवगण प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्रजी पर फूल बर्षाये और दुन्दुभी बजाकर गंधर्वों ने भगवान का गुणानुवाद गाया। अप्सरों ने नृत्य किया। इन्द्रादिक देवता प्रसन्न होकर अपने लोक को गये।

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे चतुर्नवतितमः सर्गः॥ ९४॥

जब रावणकी आज्ञा से रथ हाथी घोड़ा व पैदल आदि से सजी

चतुरंगिणी सेना राक्षसों की पराजित होगई और रथ हाथी घोड़ा सहित सब राक्षसों के नाश को देख व सुनकर रावण संभ्रान्त होगया और उन राक्षसों के घर की स्त्रियां अपने अपने पति व पुत्र के शोक में रोदन व विलाप करने लगीं। कामदेव के समान सुन्दर रामचन्द्रजी को वनमें कराला सूपर्णखा ने कैसे पाया। यह रामजी देखने में सुकुमार परन्तु यह बड़े बलवान व पराक्रमी हैं और सकल लोक के कल्याण को चाहने वाले हैं, सो सर्व गुण संपन्न इन रामचन्द्रजी को देख कर कुरूप सुपर्णखा कैसे मोहित होगई। यह सूपर्णखा तो राक्षसियोंमें वृद्धा है फिर इसके भाग्य भी बलवान नहीं हैं, इसमें कुछ गुण विशेष भी नहीं हैं फिर यह रामचन्द्र पर कैसे आसक्त भई। इसराक्षसी ने लोक निन्दा का कार्य किया है। यह केवल खरदूषण त्रिशिरा आदि समस्त राक्षसों को नाश करने की इच्छा से इसने यह उपाय किया। देखो इसी सूपर्णखा के कारण रावण ने ऐसे महा पुरुष के संग विरोध करके राक्षसों का नाश किया क्योंकि रावण ने जनक की कन्या सीता को नहीं पाया, वरन महाबली रघुनाथ के संग अक्षय बैर को बाँधा। कबंध ने सीता के स्वरूप को देखकर केवल प्रार्थना किया सो अकेले रामने इतने बलवान राक्षस को क्षण भरमें मारडाला यही एक इनका चरित्र अद्भुत है भयंकर कर्म करने वाले चौदह हजार राक्षसों को जन स्थान में खड़की आग के समान जला डाले, खरदूषण त्रिशिरा आदि बलवानराक्षसोंको मारे यही चरित्र इनका भयानक था। योजन भर के पशु पक्षी को ग्रहण करके मांस खाने वाले कबंध को इन्होंने मारा यही दुष्कर कर्म किया था इन्द्र के पुत्र महा बली वानर को इन्होंने मारा यही कठिन कार्य किया था। ऋष्यमूक पर्वत पर रहने वाले दीन धनहीन सुग्रीव ने राज्य पाया, श्रीरामजी ने यह कठिन कर्म किया। इस रामचन्द्र के पूर्ण पराक्रम व इनके मर्म को जानने वाले बिभीषण राक्षसों के कल्याण के लिये जो कुछ रावण को समझाया वह सत्य हुआ, परन्तु मोहवश बिभीषण के बचन रावण

को अच्छे नहीं मालूम पड़े। कुबेर का भाई यह रावण यदि विभीषण के बचन को मान लेता तो आज यह लंकापुरी श्मशान न होती। कुंभकर्ण अतिकाय इन्द्रजीत आदि के मरने पर भी रावण को भय नहीं हुआ जो हमारे पति और हमारे पुत्रों को समर में भेजकर नाश किया है इस प्रकार अनेक विलाप से राक्षसियां लंकापुरी के घरघर में रोदन करने लगीं। ब्रह्मा रुद्र इन्द्र अर्थात साक्षात् कालही क्यों न हों संग्राम में रामचन्द्र को नहीं जीत सकता है। रामने लंकापुरी के बलवान व शूरवीर राक्षसोंको संहार करदिया है, अब हम सब अनाथके समान विलाप करती हूं। बरदान के प्रभाव से मानी व शूरवीर रावण रामचन्द्रजी से राक्षसों के नाश को नहीं जाना। उस रावण को बरदान के बल से देवता दानव गंधर्व यक्ष आदि रण में नहीं जीत सकते हैं और रामचन्द्र को आने के पहिले जो कुछ उत्पात लंकापुरी में दिखाई पड़ते थे उन सबको भी माल्यवान आदि ने रावण से कहा परन्तु इस अभिमानी रावणको कुछ नहीं जान पड़ा। ब्रह्माजी रावण की तपस्या से प्रसन्न होकर देवता व दानवोंमें रावणको अजेय करदिया परन्तु मनुष्यके जीतने का बरदान न तो इसने मांगा और न तो उन्होंने दिया। इसलिये मनुष्य के हाथ से रावण सहित राक्षसों का नाश हुआ जब ब्रह्माजी के बरदान से यह राजा देवतों को पीड़ा दिया तब देवतों ने ब्रह्माजी से प्रार्थना किये, ब्रह्माजी देवताओं के कल्याणके लिये यह मनुष्य की रचना कर देवतों का दुःख छुड़ाया है। क्योंकि दानव व राक्षसों के भय से देवताओं को अत्यन्त पीड़ा पहुंची तो इन्द्र को आगे करके सब देवगण कैलास पर्वत पर आये और महादेव को प्रसन्न किये। महादेवजी प्रसन्न होकर देवतों से कहे कि तुम लोग चिंता मत करो राक्षस कुल को बिनाश करने के लिये एक स्त्री उत्पन्न होगी और उसी से इन प्रबल राक्षसों का नाश होगा। महादेवजी के बरदान के अनुसार देवताओं से प्रयुक्त यह सीता रावण के सहित हम सब राक्षस राक्षसियों को भक्षण करैगी। इस अज्ञानी रावण के अन्याय से हम

लोगों को भी यह शोक प्राप्त हुआ है महाकाल राम के हाथ से बचाने वाला ऐसा कोई नहीं है कि जिसके शरण में चलने से हम लोगों का प्राण बचे । जैसे बन में आग लग जाने से बनमें रहने वाली हाथी उसी में जलकर मर जाती है वैसे हम लोग भी अब राम के हाथ से बच नहीं सकैगी । समय के अनुसार विभीषण ने राक्षसों को समझाया जब काल के अधीन अभिमानी राक्षस विभीषण का कहना नहीं माने तो वह रावण से अपमान को पाकर राम की शरण में गया है । समस्त राक्षसों की स्त्रियां आपस में इस प्रकार के विलाप कर अपने पति व पुत्रों का नाम लेकर रोदन करती थी ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे पंचनवतितमः सर्गः ॥९५॥

दुःख से युद्ध विधवा इन राक्षसियों का रुण्यमय विलाप को घर घर में सुनकर राक्षसेन्द्र रावण एक लम्बी श्वांस लेकर ध्यानमें मग्न होगया । इसके बाद संसार को ताप देने वाला रावण क्रोध से आंख को लाल किये दांत पीसने लगा, उस समय राक्षस की शरीर ऐसी होगई जैसे मूर्ति को धारण किये साक्षात् काल बैठा है । वह क्रोधित रावण समीप में बैठे महोदर महापार्श्व विरूपाक्ष आदि राक्षसों से बोला कि तुम लोग राक्षसी सेना लेकर समर में जाओ । राक्षस राज की आज्ञा को शिरोधार्य करके वे राक्षस अपने २ अस्त्र शस्त्र को लिये चतुरंगिणी सेनाके साथ तइयार होकर स्वस्त्ययन किये । और उन महारथी राक्षसों की यथाविधि से रावण ने पूजा किया और हँसकर बोला, कि आप लोग अपने बाण से राम लक्ष्मण का अवश्य नाश करना, जिसमें खर कुम्भकर्ण इन्द्रजीत आदि के बध का बदला फिर जावे और हमारे बाण की वर्षा से दिशा आकाश स्वर्ग व समुद्र में भी प्रकाश नहीं मिलेगा । आज मैं अपने बाण जाल से बानर सेनापति मुख्य बानरों का संहार करूंगा । जैसे कमल के वृक्ष को हाथी भङ्ग करदेता है वैसे राम लक्ष्मण सहित इन बानरों को भङ्ग कर देवेंगे ।

आज शिला पर्वत वृक्ष आदि से युद्ध करने वाले बानरोंको एक एक बाण से सैकड़ों बानर को नाश कर देवेंगे। जिन बानरों ने हमारे भाई व पुत्र तथा मंत्रियों को मारा है उन बानरों को अपने बाण से मारकर अपनी आंसू को पोंछूगा और मांस खाने वाले गिद्ध कौआ आदि पक्षी उनके मांस से तृप्त होंगे। तुम हमारे लिये शीघ्र एक रथ लेआओ और जितने राक्षस बचे हों उनकी सेना तइयार करो। वे सब राक्षस अस्त्र शस्त्र को लेकर हमारे साथ चलें, राक्षसेश्वर के बचन को सुनकर महापार्श्व रावण के सेनापति को बुलाकर आज्ञा दिया की चतुरंगिणी सेना तइयार करिये। रावणकी आज्ञा को सुनकर सेनापति घर घरसे राक्षसोंको बुलाकर इकट्ठा किया। युद्धके अभिलाषी राक्षस खड्ग शूल पट्टिश गदा मुसल शक्ति कूट मुद्गर परशु यष्टि भिन्दिपाल शतघ्नी आदि अस्त्रोंको धारण किये रावणके समीप आये। इसके बाद एक लाख रथी तीन लाख हाथी सवार साठ करोड़ घोड़ा सवार तथा इतनेही ऊट गदहा आदि वाहन वाले और असंख्य पदाति सेना सजकर तइयार होगई। इसके उपरान्त अनेक प्रकार के रत्न जटित भूषण वस्त्र को धारण किये सारथीने एक उत्तम रथ को राजा के सामने ले आया। जिस पर अनेक प्रकार के ध्वजा व पताका लगे हैं और दिव्य अस्त्र शस्त्र रखे गये है। नाना प्रकार के रत्नों से जटित उस रथ के खंभे हैं और उस पर सोने के हजारों कलसे लगे हैं। और उसमें आठ घोड़े जुते हैं उस रथ की बिलक्षणता को देखकर राक्षस-गण विस्मित होगये। और उस उत्तम रथको देखकर अग्नि के समान तेजस्वी रावण एकाएक उस रथपर छत्र चमर लगाये आकर बैठ गया। इसप्रकार विशाल सेना के सहित चलते समय रावण के भार से शेष मस्तक नीचा होगया। और पृथ्वी नौका के समान हिलने लगी। भेरी मृदंग शंख आदि मारु बाजा बजाते व गर्जना करते राक्षसी सेना युद्ध भूमि के समीप आ गई। इतने में देवताओं में कल कल ध्वनि होने लगी। कि सीता को चुरामे वाला ब्राह्मणों मारने वाला

और देवताओं को त्रास देने वाला श्रीरामचन्द्रजी से लड़ने के लिये समर में आया हैं यह कहते हुए देवता लोग अपने विमान पर बैठ कर युद्ध देखने के लिये आकाश में स्थित हुए । इधर रावण के सहित राक्षसों की गर्जना को सुनकर भय के मारे वानरगण युद्ध से भागने लगे । रावण गर्जना करता हुआ अपने मन्त्रियों के सहित समर भूमि में आया और उसके पीछे रथ पर चढे महोदर महापार्श्व व विरुपाक्ष ये तीनो रावण के मन्त्री आये। रावण को समर में अतेही सूर्य की प्रभा नष्ट होगई सर्वत्र अँधियारा सा होगया । पृथिवी भय से हिलने लगी । आकाश से रुधिर वर्षने लगा । ध्वजा के ऊपर गिद्ध बैठकर क्रूर शब्द से बोलेंगे । रावण का वाम नयन व बाम भुजा फड़कने लगी । और राक्षसेन्द्रकी मुख कान्ती मलीन होगई । आकाश से तारागण टूटने लगे । कौआ गिद्ध सियार ये सन्मुख बोलने लगे, यह इतने मरण सूचक उत्पात को देखकर जय की इच्छा करने वाले क्रोधित दशानन वानरी सेना पर बाण वृष्टि करना आरंभ किये । राक्षसराज के अमोघ बाण से बानरों के शिर भुजा नाक कान आंख आदि कटकर और बानरों की मृत देह से युद्ध भूमि भरगई । क्रोधित दशग्रीव के अमोघ बाण से बानरों का सामर्थ्य घट गया ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे षट्नवतितमः सर्गः ॥ ९६ ॥

रावण के बाण से मरे हुए बानरों से वहां की भूमि व्याप्त होगई जैसे अग्नि के प्रताप को पतंग नहीं सह सकते वैसे रावण के बाण वेग को बानरगण नहीं सहन कर सकते थे। जैसे बन में जलते हुए हाथी अपने प्राण के भय से दूसरे बन में जाने की इच्छा करते हैं वैसे राक्षसराज के बाण के भय से बानरगण भी अपने को शरण खोजने लगे । जैसे प्रचण्ड बायू के वेग से बहुत हट जाते है । वैसे रावण के बाण भय से बानर भागने की इच्छा किये । सुग्रीव संग्राम से बानरोंको पराङ् मुख देखकर सुषेणको सेनाकी रक्षा करनेमें नियुक्त

करके अपने समान बलवान बीर रावण को तथा उनके मन्त्रियों को जानकर हाथ में एक विशाल वृक्ष लिये राक्षसो सेना के सन्मुख खड़े होगये। और सुग्रीव के आस पास अंगद हनुमान आदि वानर वृक्ष को लिये गर्जने लगे और उन्हीं वृक्षों से राक्षसी सेना का संहार करने लगे। जैसे बद्दल पत्थल की बर्षा करते हैं अथवा जैसे पर्वत से टिड्डी उड़ कर संसार में सर्व व्याप्त होजाती हैं वैसे राक्षसी सेना पर वानरों ने पत्थल वृष्टि करके रावण की सेना को विध्वंस कर दिये राक्षसी सेना को संग्राम में अधिकांश निहत देखकर रावण का मन्त्री विरुपाक्ष रथ से उतर हाथी पर चढ़ा और सु.ीव आदि वानरों को बाण से मारने लगे। राक्षस के बाण लगने से क्रोधित सुग्रीव राक्षस के बध का बिचार किये और एक महा वृक्ष को हाथ में लिये विरुपाक्ष के सन्मुख जाकर एक वृक्ष उसकी हाथी को मारे जिससे हाथी मर गया। हाथी के मरने से राक्षस कूदकर सुग्रीव को एक खड्ग मारा सुग्रीव उसके खड्ग से व्यथित न होकर एक बड़ी भारी शिला लेकर राक्षस पर चलाये। परन्तु राक्षस ने अपने खड्ग से उस शिला को काट कर गिरा दिया और फिर भी कूदकर एक खड्ग सुग्रीव को मारा जिससे उनको क्षण भर तक मूर्छा आगई। मूर्छा हट जाने के बाद सुग्रीव ने एक मुक्का राक्षस के हृदय में मारे। राक्षस ने एक खड्ग सुग्रीव को मारा जिससे फिरभी वह मूर्छित होगये। फिर उठकर एक पटाका उस राक्षस को मारे परन्तु वह राक्षस कवच के प्रभाव से बच गया। राक्षस की बचना को देखकर क्रोधित सुग्रीव एक पटाका बज्र के समान राक्षस के मस्तक पर मारे जिससे वह राक्षस मुख से रुधिर गिराने लगा व चिल्लाकर मर गया। इसके बाद शत्रु को पराजय करके सुग्रीव ऐसी गर्जना किये कि कितने राक्षसों का भय से प्राणान्त हो गया कितने हाथसे अस्त्र गिर गये और शत्रुको मारकर सुग्रीव गंगाजी के समान स्वच्छ होगये॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे सप्तनवतितमः सर्गः॥ ९७॥

अपनी सेना का क्षय और विरुपाक्ष के बध को देखकर रावण का क्रोध और भी धधक उठा और अत्यन्त क्रोधित रावण समर में खड़े महोदर से बोला, हेमहाबाहु! अब संग्राम में विजय की आशा तुमारेही ऊपर है। हेवीर! तुम अपने पराक्रम से शत्रु की सेना का नाश करो और हरेमा पालन पोषण से आज उऋण हो जाओ। इस प्रकार रावण के वचन को सुनकर महोदर इस प्रकार बानरी सेना में घुसा जैसे पतंग के मध्य में अग्नि प्रज्वलित हो जावे। इस तरह सेना में प्रवेश करके रावण के वचन अनुसार अपने पराक्रम से महा युद्ध करके बानरों को शिथिल कर दिया बानरभी शिलाओं को लेकर राक्षसों को नाश करने लगे। क्रोधित महोदर अपने तीक्ष्ण बाण से बानरों के हाथ पैर को काटने लगा। राक्षस के महा युद्ध से पीड़ित बानर कितने तो दिशाओं में भागने लगे और कितने सुग्रीव की शरण में चले आये। महोदर के बाण से समरमें पीड़ित व पराङ्मुख बानरों को देखकर उनकी सहायता के लिये एक बड़ाभारी शिला लेकर सुग्रीव महोदर के सन्मुख जाकर उस पर वह शिला चलाये। युद्ध में कुशल राक्षस अपने बाण से शिला को काटकर गिरा दिया। शिला को निष्फल देखकर क्रोध से मूर्छित सुग्रीव एक शाल वृक्ष को उखाड़ कर राक्षस को मारे, परन्तु उसने अपने बाण से उसे भी काट कर गिरा दिया। इसके बाद सुग्रीव ने पृथिवी में गिरे एक परिघ को लेकर उस राक्षस के रथ के घोड़ों को मारडाला। तब वह राक्षस एक गदा लेकर रथ से उतर पड़ा और उसी गदा से सुग्रीव को मारा। सुग्रीव परिघ से राक्षस को मारने लगे। सांड़ के समान गदा व परिघ से महोदर व सुग्रीव महा युद्ध किये। इसके बाद राक्षस ने अपनी गदा से सुग्रीव को मारा सुग्रीव परिघ से राक्षस को मारे। वे दोनो अस्त्र चूर होकर पृथिवी में गिर पड़े फिर सुग्रीव ने एक महा मुसल को लेकर राक्षस को मारे, राक्षस ने सुग्रीव को फिर भी गदा से मारा। जब सुग्रीव व महोदर के अस्त्र टूट गये तब ये दोनो बीर आपस में मुष्टि युद्ध करने लगे। मुक्का व

थप्पड़ के आघात से बार बार गिरें उठें फिर लड़े। इस प्रकार बाहु युद्ध करने से थकित सुग्रीव व महोदर पृथिवी में खड्ग को देखकर दोनो वीर दौड़े और युद्ध करने में विशारद राक्षस व बानर श्रेष्ठ सुग्रीव एक एक खड्ग को लेलिया। इसके बाद रणश्लाघी महोदर सुग्रीव को एक खड्ग मारा। खड्ग लगने से क्रोधित सुग्रीव अपने मियानी से खड्ग निकाल कर उस राक्षस को ऐसा मारा कि किरीट कुण्डल से भूषित राक्षस का शिर कट गया। राक्षस के शिर को कट कर गिरतेही राक्षसी सेना अनाथ के समान भागने लगी। इधर बानरगण सुग्रीव की बड़ाई करने लगे और प्रसन्नता के मारे अट्टहास से गर्जना किये। सूर्य के पुत्र सुग्रीव अपने शत्रु को परास्त करके बानरों के मध्य में सूर्य के समान शोभित हुए॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे अष्टनवतितमः सर्गः॥९८॥

महोदर को मरनेके उपरान्त महाबली महापार्श्व सुग्रीव को देखता हुआ अंगद की सेना को अपने बाण से आकुल कर दिया महापार्श्व के बाण वृष्टि से पीड़ित राक्षस विषाद युक्त होकर संग्राम करने से विमुख के समान होगये। अंगदजी अपनी सेना को राक्षस के बाण से क्षुभित देखकर अपने में बड़ा वेग किये, जैसे पूर्णिमा को समुद्र का वेग बढ जाता है वैसे अपने वेग को बढ़ाकर एक लोहे का घोर परिघ लेकर बानरों में श्रेष्ठ अंगद उस राक्षस को मारे। उस परिघ को लगतेही सारथी सहित महापार्श्व मूर्छित होकर गिर पड़ा। तब तक अङ्गदजी एक शिला लेकर राक्षस के घोड़ों को मार डाले जब महापार्श्व की मूर्छा नष्ट होगई तब वह राक्षस उठकर समर में अङ्गद के ऊपर फिर भी बाण को छोड़ा और तीन बाण जांबवान को तथा अनेक बाण गवाक्ष को मार कर पीड़ित किया। गवाक्ष व जांबवान को बाण से पीड़ित देखकर क्रोध से मूर्छित अङ्गद फिर भी वही परिघ लेकर दोनों हाथ से घूमाकर महापार्श्व को मारे उस परिघ से अस्त्र सहित राक्षस का हाथ कट गया। इसके बाद क्रोधित अङ्गद एक

पटाका उसके मुख में मारे परन्तु राक्षस का प्राण नहीं निकला। बरन एक हाथसे परशुको लेकर अङ्गद पर चलाया। इन्द्रके समान पराक्रमी अङ्गद वज्र के समान एक मुक्का उस राक्षस को मारे, उस वज्राकार मुक्का को लगतेही राक्षस का हृदय फट कर पृथिवी में गिर पड़ा और वह राक्षस पृथ्वी में गिर कर मर गया। महापार्श्व के मरण को देखतेही राक्षस राज रावण का क्रोध और भी बढ़गया। इधर बानरों ने प्रसन्नता पूर्वक आनन्द मचाते अंगद की बड़ाई करने लगे और देव लोक में देवता भी प्रसन्न होकर दुन्दुभी बजाने लगे। व बानरों का विजय मनाने लगे॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे नवनवतितमः सर्गः ॥९९॥

महोदर महापार्श्व व निरूपाक्ष आदि के मरण को देखकर संग्राम के मध्यमें रावण क्रोधागार में प्रविष्ट हो अपने सारथी से कहा कि हमारे मन्त्रीगण इसी समर में मारे गये हैं और हमारे नगर को शत्रुओं ने घेर लिया है। आज इन राम लक्ष्मण को मारकर उन मरे हुये लोगों के दाह की शान्ति करूंगा। इस संग्राम के वृक्ष राम हैं और इस वृक्ष के पुष्प फल को देने वाली सीता है। इस वृक्ष की शाखा सुग्रीव आदि बानर हैं इसलिये पहिले राम लक्ष्मणको मारकर सीता को नाश करूंगा, पीछे सुग्रीव आदि बानरों को मारकर अपने हृदय के दाह को मिटाऊंगा। यह सारथी से कहकर अपनी रथ को रामजी के सन्मुख लेकर चला, रावण के रथ के शब्द से दशो दिशा गूंज उठी। दिग्पाल हिल गये। पशु पक्षी भय के मारे अपना स्थान छोड़कर भागने लगे। राक्षसों का राजा रावण क्रोध की आग से जलता हुआ समर में आकर तामस अस्त्र से बानरों को भस्म करने लगा। बानरी सेना ब्रह्माजी के अस्त्र से दुःखी होकर इसप्रकार भागी की उनके भागने से धूलि उड़कर आंधी के समान चली। राक्षस राज रावण अपने बाण से बानरों को भगाकर श्रीरामचन्द्रजी के सन्मुख आकर देखा कि विष्णु के समान धनुष बाण को लिये रामचन्द्रजी

बैठे हैं। और उनके बगलमें सुस्त लक्ष्मणको धारण करनेवाले लक्ष्मण जी बैठे हैं राक्षस राज रावण के भय से भागते हुए बानरोंको देखकर तथा रावण को धनुष बाण लिये सन्मुख खड़ा देखकर श्रीरामचन्द्रजी अपने उत्तम धनुष को चढ़ाये। श्रीरामजी के धनुष के महाशब्द से हजारों राक्षस गिरकर प्राण छोड़ दिये। रावण के बाण का शब्द और श्रीरामचन्द्रजी के धनुष के घोर शब्द को पृथ्वी न सहन कर हिलने लगी, सर्प राज कांपने लगे दिग्पाल उस शब्द से भयभीत हो नारायण के शरण को पुकारने लगे। समुद्र का वेग अवरुद्ध हो गया, समुद्र में रहने वाले जलचर जन्तुओं का कल्लोल और समुद्र की लहरें निस्तब्ध सा होगईं। आकाश में तारे टूटने लगे। सूर्य चन्द्रमाके समीपमें पहुंचकर राहुकी जो दशा हुई। होती है, श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी के समीप में पहुंचकर रावण की भी वही दशा रावण को अस्त्र लिये देखकर लक्ष्मणजी अपने धनुष को चढ़ाकर पहिले राक्षस के साथ युद्ध करने की इच्छा प्रगट किये, रावण जो अस्त्र श्रीराम व लक्ष्मणजी पर चलाता था श्रीलक्ष्मणजी अपने अस्त्र से राक्षस के अस्त्र को नष्ट कर देते थे। एक बाण से एक को तीन से तीन को और दशबाण से राक्षस के दशबाण को लक्ष्मणजी वारण करने लगे। तौभी राक्षसेन्द्र अपने बाण से लक्ष्मण को व्याकुल करके युद्ध में पर्वत के समान दृढ़ श्रीरामचन्द्रजी पर अस्त्र को चलाया। रावण के धनुष से च्युत बाण की वर्षा को अपने ऊपर एकाएक गिरते देखकर श्रीरामचन्द्रजी अपने अमोघ बाण से राक्षस से प्रयुक्त अस्त्र को नष्ट करदिये। श्रीरामचन्द्रजी रावणको और रावण श्रीरामचन्द्रजी पर बाण प्रयोग करने लगे। राम रावण के युद्ध से सकल चराचर जीव कांपने लगे। इसप्रकार युद्ध करते हुए रामचन्द्र व राक्षस रौद्र अस्त्र को छोड़े, वह अस्त्र दोनों ओर से छूटकर संसार में अँधियारा कर दिया और उसी अन्धकार में से बिजली की माला के समान संसार को जलाने वाली आग की चिनगारी उड़ने लगी। राम रावण

से छूटकर वह अस्त्र ऐसा शोभाय मान होता था जैसे काले बद्दलों के संग बिजुलीकी मालिका चलती है । जैसे इन्द्र व वृत्रासुरका महा युद्ध हुआ था वैसे राम रावण के युद्ध में छूटे हुए बाण अनेक प्रकार के स्वरूप को धारण करके राक्षस व बानरों का संहार करते थे । यह दोनों बीर बाण विद्यामें कुशल युद्ध विशारद और अस्त्र शस्त्र जानने वालोंमें मुख्य और युद्ध भूमिमें खड़े थे । इनके युद्ध कौतुकको देखनेके लिये देवलोक से इन्द्रादि देवता अपने अपने विमानों पर बैठकर गंधर्व अप्सराओं के सहित आये थे । यह दोनों बीर मण्डलाकार जिधर को घूमते थे उसी ओर जलकी धारा के समान बाण बर्षा होती थी । इसके बाद संसारको दुःख देने वाला रावण बाण छोड़नेमें आसक्त था तौभी रौद्र धनुष से प्रयोग करके रौद्रास्त्र को छोड़ा । शत्रु को नाश करने दक्ष रौद्रास्त्र आकर श्रीरामचन्द्रजीके मस्तकमें धस गया । उस अस्त्र के आघात से सकल लोक को पालन करने वाले श्रीरामचन्द्रजी को कुछ भी व्यथा नहीं हुई । क्रोध युक्त रामचन्द्रजी उस अस्त्र के मन्त्र को स्मरण करके उसी अस्त्र से राक्षस को मारे, वह अस्त्र राक्षस के समीप जाकर उसके धारण किये हुए कवच को नष्ट कर दिया । परन्तु अवध्य रावण को पीड़ित नहीं किया । फिर भी रामचन्द्रजी परम अस्त्र को लेकर रावण के ललाट में मारे किन्तु सकल अस्त्र विद्या को जाननेमें प्रवीण रावण अपने बाणसे रामजीके इष्टास्त्र को निवारण कर दिया । तौभी महाबली वे अस्त्र पांच मुख वाले क्रोधित सर्प के समान श्वांस लेते पृथ्वी में प्रवेश किये । श्रीरामचन्द्रजी के अस्त्र को निवारण करके क्रोध से मूर्छित रावण महाघोर आसुरास्त्र को धनुष पर रखकर श्रीरामचन्द्रजी के लिये छोड़ा । वह अस्त्र सिंह व्याघ्र वक गिद्ध सियार काम आदि के मुख के समान मुख को धारण किये बानरों को भक्षण करते हुए श्रीरामचन्द्रजी के ओर दौड़े। श्रीरामचन्द्रजी गदहा शूकर आदि के मुख को धारण किये असुरास्त्र को अपने ऊपर आते देखकर पावकास्त्र का प्रयोग किये, वह पावकास्त्र अपने

प्रताप से आसुरास्त्र को इसप्रकार जलाने लगा जैसे सूखे काष्ठ को आग जला देता है। इसके बाद रावण अग्नि मुख बाण को छोड़ा तब श्रीरामचन्द्रजी ने सूर्य मुख बाण को छोड़कर राक्षस के अस्त्र का बारण किये। तब क्रोधित राक्षस जितने ग्रह नक्षत्र हैं उनसे उत्पन्न बाणों को छोड़ा परन्तु रामचन्द्रजी अपने बाण से बारण करते गये। तौभी वे अस्त्र सर्वथा निष्फल न होकर बानरों का नाश करते थे। रावण अपने अत्यन्त घोर अस्त्रों के प्रभाव को नष्ट देखकर चिंता से आकुल हो मलीन होगया। इधर सुग्रीव आनि बानर श्रीरामचन्द्रजी के अद्भुत पराक्रम को देखकर उनकी स्तुति व बड़ाई करने लगे

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे शततमः सर्गः ॥ १०० ॥

राक्षसाधिप रावण अपने प्रयोग किये अस्त्र को श्रीरामचन्द्रजी से विफल जानकर पहिले से द्विगुण क्रोध किया, महा सिद्ध किये रौद्र अस्त्र को श्रीरामजी पर चलाया, रावण के धनुष से छूटकर वह रौद्र अस्त्र शूल गदा मुसल मुद्गर कूट पाश व वज् आदि अस्त्रों का रूप धारण करके श्रीरामजी की सेनामें आया। सेना को मारता हुआ श्रीरामजी की ओर दौड़ा। अस्त्र विद्या जानने वालों में श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्र महापराक्रमी गान्धर्व अस्त्र को छोड़कर राक्षस के अस्त्र को मोहित करलिया। तब रावण ने सौर अस्त्र को छोड़ा यह रावण से छूटकर पहिले आकाश में चला गया और अपने तेजसे आकाश को प्रकाशित करता हुआ वहां से फूटा और रामचन्द्रजी की सेना में आकर सेनाको भस्म करने लगा। तब रामचन्द्रजी उस चकाकार सौरास्त्र को सेना के मध्य में श्रमण करते देखकर एक साधारण बाण से उस अस्त्र को काट दिये। तब क्रोधित रावण दश बाण श्रीरामचन्द्रजी को मारा, परन्तु सकल जगत् के स्वामी श्री रामचन्द्रजी राक्षस के बाण से पीड़ित न होकर क्रोध पूर्वक रावण के सेना में असंख्य बाणको छोड़े। इतने महा बलवान व पराक्रमी लक्ष्मणजी, सात बाण को लेकर एक एक साथ मारे! लक्ष्मण के छोड़े हुए बाण रावण की

सेना में जाकर उसके ध्वजा को काट दिया, और राक्षस राज रावण के सारथी का भी शिर काट लिये और अपने पांच बाण से रावण के बाणको नष्ट कर दिये । लक्ष्मण के बाण से सारथी को निहत देखकर विभीषण ने अपनी गदा से रावण के घोड़ों को मार डाला, सारथी व रथको नष्ट हो जाने पर राक्षसेन्द्र रावण रथ से उतर कर विभीषण के ऊपर महा क्रोध किये महाशक्ति को लेकर विभीषण पर चलाया, उस महा शक्ति को विभीषण के ऊपर आते देखकर श्रीलक्ष्मणजी ने अपने तीन बाणसे उस महाशक्ति को ध्वंस करदिये । लक्ष्मण जी के इस अमोघ पराक्रम को देखकर बानर समर में महानाद किये और वह रावण की महाशक्ति तीन टुकड़ा होकर इस प्रकार पृथिवी पर गिरी जैसे आकाश से तीन तारागण टूटकर गिरजावें । वह महाशक्ति सब लोकमें अमोघ है सो लक्ष्मण ने उस महाशक्ति को वारण किया, इससे चिन्तित राक्षस एक और दूसरी महामहा शक्ति को लेकर वज्र के समान विभीषण पर चलाया, प्राण नाश करने वाली उन महा शक्ति को विभीषण के ऊपर आते देखकर लक्ष्मणजी ने अपने पराक्रम से उस महा शक्ति को वारण किये और अपने अमोघ बाणों से राक्षसेन्द्र को आकुल करदिये । तब लक्ष्मण के पराक्रम से विभीषण को मारने में रावण कुण्ठित होकर लक्ष्मण से बोला, रणमें प्रशंसा करने योग्य लक्ष्मण तुमने अपने पराक्रम से इस शक्ति को नष्ट करके विभीषण का प्राण बचाया है । फिर भी यही शक्ति हमारे हाथ से छूटकर तुमारे प्राणको हरण करेगी । राक्षसराज रावण लक्ष्मण से इस प्रकार कहकर मय दानव से लब्ध आठ घंटा से युक्त महाशब्द से पूरित महाशक्तिको लक्ष्मण के ऊपर चलाया । स्पर्श करनेमात्रसे शत्रुओंके प्राण को हरण करनेवाली उस महाशक्तिको लक्ष्मणके ऊपर आते देखकर श्री रामचन्द्रजी शक्ति के अधिष्ठात्री देवता से बोले, लक्ष्मण के लिये कल्याण करो । हेशक्ति देवता ! तुमारे स्पर्शसे लक्ष्मणको केवल पीड़ा मात्र होवेउनके प्राणको हरण करनेमें तुमारे पराक्रम निष्फल होजावें । लक्ष्मण

को लक्ष्य करके रावण के हाथ से छूटी हुई महाशक्ति लक्ष्मण के हृदय में लगी। उस शक्ति को लगतेही लक्ष्मणजी मूर्छित होकर पृथिवी में गिर पड़े। समीप में स्थित लक्ष्मण की दशा को श्री रामचन्द्रजी देख कर उदास होगये और आंसू को बहाते क्षणभर ध्यान करके युद्ध करने में उत्साही रामचन्द्रजी राक्षसों को नाश करने के लिये प्रलय कालकी अग्नि के समान युद्धभूमि में दृढ होगये और मनमें विचार करने लगे कि यह विषाद करने का समय नहीं है, इस युक्त में रावण का बध अवश्य करना चाहिये, यह सोचकर रावण से तुमुल युद्ध करना आरम्भ किये। महाबली और संसार के दुःख को नाश करने वाले श्री रामचन्द्रजी लक्ष्मण के हृदय में धसी हुई शक्ति को अपने बलसे खीचकर तोड़ दिये और जो लक्ष्मण के हृदय में घाव होगया था उसको अपने अंग स्पर्शसे मिटादिये। लक्ष्मण को उठाकर अपने हृदय में लगाकर उनको निरोग करके सुग्रीव हनुमान आदि बानरों से बोले, हे बानर श्रेष्ठ! आप लोग यहीं लक्ष्मणकी रक्षा करिय बहुत दिनके बाद हमको युद्ध करने का अवसर मिला है। जैसे चातक पक्षी ग्रीष्म कालके अन्त में मेघको देखकर अपने चिरकालके सन्ताप को नष्ट करता है, वैसे मैं भी इसपापी रावण को मारकर निश्चय अपने सन्ताप को नष्ट करूंगा। इस हमारे बचन को शीघ्रही सत्य जानो। हे वानरगण! आजही इस संसार में रावण के नाशको अथवा राम के नाश के देखोगे। पहिले राज्य का नाश पीछे बनवास बाद दण्डक बनका भ्रमण फिर वैदेही हरण फिर राक्षसों को समागम रूप दुःख नरककी यातनाके समान हमको भागना पड़ा है। आज इस समर में दुरात्मा रावण को वधकर अपने सब प्रकार के दुःख से मुक्त होऊंगा। जिस राक्षस को नाश करनेके लिये बालिको मारकर सुग्रीव से मित्रता किये और इतनी बानरों की सेनाको इकट्ठा करके समुद्र में सेतुको बांधे सो आज वह पापी राक्षस संग्राम में हमारी आंख के सामने आया है, अब हमारे सामने से यह राक्षस जीता नहीं जा

सकता है। जैसे गरुण को देखते भरमें सर्प नहीं बच सकते हैं वैसे हमारे सन्मुख से यह राक्षस नहीं बचेगा। हे बानरगण! अब हमारे युद्धको आपलोग सुख पूर्वक बैठकर देखें, इस राक्षसके संग्राम में देवता गंधर्व सिद्ध चारण आदि रामके पराक्रम को देखें। आज हम वह कर्म करेंगे कि जब तक पृथिवी सूर्य चन्द्रमा रहैंगे तब तक देवता गंधर्व आदि चराचर जीव इस कथा को कहते रहैंगे। श्री रामचन्द्रजी इस प्रकार बानरों से कहकर स्वर्णमय अपने तीक्ष्ण बाणों को समाहित होकर रावण पर छोड़ने लगे। श्रीरामचन्द्रजी राक्षसों को नाश करने के लिये मुसलधार बाणकी वृष्टि रावण पर छोडने लगे। रामचन्द्र व रावणसे छूटे हुए महाबाणके शब्दसे आकाश पृथिवीदशो दिशायें पूरित होगईं और राम रावण पहिले आकाशको प्रदीप्त करके पीछे पृथिवीको आच्छादित करदिये। राम रावण के महायुद्ध से सकल चराचर प्राणी त्रासित होगये जब युद्ध करते सायंकाल समय आया तो श्रीरामजी के बाणभय से अपना प्राण लेकर रावण समरभूमि से भागकर लंका पुरी में चला गया।

इति वाल्मीकीयेरामायणेयुद्धकाण्डे एकाधिकशततमः सर्गः ॥ १०१ ॥

शक्ति लगने से मूर्छित लक्ष्मणजी को देखकर सुषेणबानर को बुलाकर श्री रामचन्द्रजी बोले, यह हमारे भाई लक्ष्मण शूरबीरों में श्रेष्ठ राक्षस की शक्ति से पृथिवी में पड़े हैं। यदि हमारे भाई लक्ष्मण इस शक्तिसे मर जायँगे तो हमको अपना जीवन और सुख लेकर क्या करना होगा। हमारा पराक्रम लज्जित के समान है, तौभी शत्रुको देखकर हमारे बाण हमारे हाथ से छूटते आते हैं और हमारी शरीर लक्ष्मण की दशा से ऐसी होती जाती है जैसे कोई मनुष्य स्वप्न में घोड़ापर चढ़े उस पर से गिरे उस मनुष्य की जो गति होती है वही गति हमारी जानना चाहिये, इस चिन्ता से हम मुर्छ के समान हुआ चाहते हैं। दुरात्मारावण ने शक्ति लेकर हमारे भाई लक्ष्मण को मारा जिससे उनके भीतर के सब बन्धन कटगये हैं और हृदय

कटकर टुकड़ा होगया है। इसप्रकार कहते रामचन्द्रजी समर में लक्ष्मण को पड़ा देखकर विलाप करने लगे। लक्ष्मण को यह दशा देखकर संग्राम का विजय हमको प्रिय नहीं है, क्योंकि बिना चन्द्रमा के कौन प्रीति को उत्पन्न कर सकेगा। जब तक यह शूरवीर लक्ष्मण संग्राम में पड़े हैं तब तक हमको संग्राम करना अच्छा नहीं लगता है। यह लक्ष्मण बन चलने के समय हमारे साथ आये हैं, तो हम भी इनके साथ यमलोक को चलेंगे। यह हमारे इष्ट बन्धुजन नित्य हमारे साथ रहते हैं सो क्रूट युद्ध करने वाले राक्षसों ने इन्हें इस दशा को पहुंचाया है। स्त्री व बन्धु समय समय पर देखे जाते हैं, हम ऐसे समय को नहीं देखते हैं कि सहोदर भाई लक्ष्मण को इस दशा में देखकर हम स्त्री के लिये युद्ध को आरंभ करें। लक्ष्मण के बिना अयोध्यापुरी का राज्य हमारे किस काम के लिये है और हम यहां से अयोध्या चलकर भी पुत्रवत्सला सुमित्रा से क्या कहेंगे सुमित्रा के दिये उपालंभ को हम नहीं सहन कर सकेंगे और कौशल्या केकयी से भी क्या कहेंगे और भरत शत्रुघ्न से क्या उत्तर देवेंगे वह लोग कहेंगे कि यहां से तो लक्ष्मण तुमारे साथ गये फिर तुमने उनको छोड़कर अकेले कैसे आये। इसलिये यहां का मरण अच्छा परन्तु बन्धु वियोग को सहना उत्तम नहीं है। जन्मान्तर में हमारा कोई कठिन पाप है, जो हमारे धार्मिक भाई हमारे सामने इस दशा में पड़े हैं। मनुष्य में श्रेष्ठ! शूरवीरों में प्रधान लक्ष्मणजी! हमको अकेले त्याग करके क्या तुम परलोक को गये। विलाप करते हुए हम से क्यों नहीं संभाषण करते हो। हेवी! उठो क्यों सोये हो मुझ दीन को आंख खोल कर देखो। श्रीरामचन्द्रजीके कारुण्य युक्त विलाप को सुनकर वानरों में उत्तम सुषेण श्रीरामचन्द्रजी को धैर्य देकर बोले, हेरामचन्द्रजी! बुद्धि को सावधान करिये, लक्ष्मणजी जीवित हैं। इनके अंग पर कोई विकृत नहीं है, इनके सब अङ्ग पहिलेही के समान हैं। मरे हुए पुरुषका लक्षण ऐसा नहीं होता है। हेवीर! आप विषाद

मत करिये, इनके संधि बन्धन सब शक्ति के आघात से ढीले पड़ गये हैं इससे श्वांस धीरे चलता है। इसप्रकार रामचन्द्रजी से कहकर सुषेण समीप में खड़े हनमान से बोले, हेवीर! तुम शीघ्र हिमालय के दक्षिण शिखर को चले जाओ और जांबवान की बनाई हुई औषधी को शीघ्र ले आओ। वह औषधी अपने प्रभाव से मनुष्य को पहिले के समान बना देती है। इसलिये लक्ष्मण के जीवन के लिये उस औषधी को ले आओ। सुषेणके इसप्रकार बचनको सुन कर हनुमान औषधी पर्वतके शिखरपर चलेगये परन्तु औषधीको न जानते हुए चिंता के मारे आकुल हो गये। कुछ देर के बाद उनको यह स्मरण हुआ कि इस पर्वत के भी शिखर को ले चलें, इसी शिखर में वह संजिविनी औषधी है ऐसा हम अनुमान करते हैं उस औषधी के समान प्रकाशमान यदि दूसरी औषधी को कहीं अनुमान से ले चलें तो महा अनर्थ होगा और बिचार करके ले चलने में अधिक समय बीतेगा, तो अधिक समय बीतने में लक्ष्मण का प्राण नाश होजायगा इस प्रकार अनेक बातों का बिचार करके तीन बार शिर व पूंछ को हिलाये, फिर हाथ से उस शिखर को उखाड़कर आकश मार्ग से सुषेण के समीप चले आये और सुषेण से बोले, कि हे बानर श्रेष्ठ! हम वहां जाकर उस औषधी को नहीं पहिचान सके इसकारण पर्वत के शिखर को उखाड़ कर लाये हैं। इसप्रकार हनुमानजी के बचन को सुनकर सुषेण ने हनुमान की बड़ाई किये और उस पर्वतके शिखर में प्रवेश करके औषधी को उपार कर कूट डाले रस सहित उस औषधी को लक्ष्मणजी को नास दिया। उस रस के नास से एकाएक लक्ष्मण पृथ्वी से उठकर खड़े होगये लक्ष्मण को मूर्छा से उठा देखकर बानर लोग हनुमान के अद्भुत कर्म को देखकर बानरगण हनुमान की स्तुती करने लगे। रामचन्द्रजी लक्ष्मण को प्रसन्नता से देखकर गाढ आलिंगन करके प्रेम की आंसू बहाने लगे। हेवीर! हे लक्ष्मण! बड़े आनन्द की बात है जो हम तुमारे पुनर्जन्म को देखा है।

हे बीर ! तुमारे मरने पर हम युद्ध व सीता तथा राज्य आदि को छोड़कर हम अपना प्राण नष्ट कर देते। श्रीरामचन्द्रजीके खिन्न बचन को सुनकर लक्ष्मणजी बोले, हे भगवन् ! रावण को मारकर बिभीषण को राज्य देने की प्रतिज्ञा जो आप पहले कर चुके हैं उसको शिथिल करना सत्यवादी का धर्म नहीं है ! विपत्ति आनेपर भी सज्जन अपनी प्रतिज्ञा को नष्ट नहीं करते हैं। आप संग्राम में रावण को बध करके अपनी प्रतिज्ञा को पालन करिये। जैसे सिंह के सामने हाथी जीती नहीं बचती, वैसे आपके बाण के बश होकर शत्रु नहीं जिवित बचेगा। जब तक सूर्य नहीं अस्त होंगे तब तक आज मैं शत्रु को नाश करूंगा। यदि रण में रावण को बध करने की इच्छा हो और बिभीषण को राज्य देकर प्रतिज्ञा पालन करने की इच्छा हो और सीता की अभिलाषा होतो आज हमारे बचन को पूर्ण कजिये।

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे द्व्यधिकशततमः सर्गः ॥१०२॥

श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजी के बचन को सुनकर समर के मध्य में रावण पर अनेक बाण को छोड़े। रावण भी पहिले रथ को विध्वंस होने के कारण दूसरे रथ पर बैठकर आया और श्रीरामचन्द्रजी के तरफ ऐसा दौड़ा जैसे सूर्य के संग प्रभा दौड़ती है दशानन रथ पर से बाण बर्षा राम पर करता था पैदल श्रीरामचन्द्रजी वज्र के समान अमोघ बाण राक्षस पर छोड़ते थे। भूमि में खड़े राम और रथ पर बैठा रावण इनके युद्ध के समान देवता गंधर्व किन्नर आदि में किसी का युद्ध नहीं हुआ था। इसके बाद देवलोक के राजा इन्द्र, श्रीरामचन्द्रजी से कहते समय लक्ष्मण के बचन को सुनकर मातलीनाम अपने सारथी को बुलाकर इन्द्र बोले, हे सारथे ! प्रभावशाली हमारे रथ को यहां से लेजाकर श्रीरामचन्द्रजी को देओ और देवताओं का कार्य शीघ्र करो, इन्द्र के आज्ञा को सुनकर सारथी ने इन्द्र देवता को साष्टांक प्रणाम करके कहा भगवन् ! मैं शीघ्र रथ सहित जाकर श्रीरामचन्द्रजी का सारथी बनूंगा यह कहकर इन्द्र देवता सें बिदा

होकर एक उत्तम रथ में बलवान घोड़ों को जोता और अनेक प्रकार के अलंकार से घोड़े को भूषित किया और अनेक प्रकार के रत्न जटित अलंकार से रथ को अलंकृत किया और श्वेत छत्र व चमर आदि से रथ को विभूषित करके तोरण ध्वजा व पताका व अस्त्र शस्त्र आदि से सज्जित करके इन्द्र देवता की आज्ञा से स्वर्ग से मर्त्य लोक में देवराज के सुन्दर रथ को लेकर आया। श्रीरामचन्द्रजी के समीप में आकर हाथ जोड़कर श्रीरामचन्द्रजी से इन्द्र का समाचार कहा कि हे रामजी! आपको यह समर जीतने के लिये देवलोक के राजा इन्द्र ने यह रथ आप को दिया है। यह ऐन्द्र धनुष हैं और यह अग्नि के समान भारचर कवच है और शत्रु को नाश करने वाले ये बाण हैं। अब आप इस रथ पर बैठकर रावण को वध करिये और हम आप के रथ को हाकेंगे। सारथी के इसप्रकार वचन को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी ने उस रथ की प्रदक्षिणा किये और उसको प्रणाम करके उस रथ पर बैठे। तब दोनों रथी अर्थात् रामचन्द्र व रावण का युद्ध होने लगा। अस्त्र को जानने वालों में श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी गंधर्व अस्त्र से गंधर्व अस्त्र को और दैवास्त्र से दैवास्त्र को वारण करने लगे। क्रोधित रावण नाग पाश को श्रीरामचन्द्र पर छोड़ा, वह रावण वासुकि व तक्षक आदि सर्पों के समान विशाल फण को धारण किये अनेक दिशाओं में भर गये और सब मुंह बाये रामचन्द्रजी की सेना को नष्ट करते हुए श्रीरामचन्द्रजी की ओर चलें, श्रीरामचन्द्रजी सर्परूपी रावण के बाण को अपने ऊपर आते देखकर उन सर्पों को नाश करने के वास्ते गारुड़ास्त्र को छोड़े। गरुड़जी के समान पराक्रमी राम का बाण राक्षस के सर्परूपी बाण को नष्ट करदिया। रावण अपने बाण को निष्फल देखकर और भी क्रोधित हुआ, श्रीरामचन्द्रजी पर एक हजार बाण एक साथ चलाया जिससे सारथी सहित श्रीरामचन्द्रजी व्यथित होगये। तब राक्षस ने एक बाण मारकर रामचन्द्रजी के रथ के पताका को गिरा दिया और

अनेक बाण से घोड़ों को आकुल किया। राक्षस के इस अद्भुत पराक्रम से देवता गंधर्व विस्मित होगये। जैसे राहु से ग्रस्त चन्द्रमा को देखकर रोहिणी दुःखी होतीहै, वैसे रामरूपी चन्द्रमाको रावणरूपी राहुसे ग्रसे देखकर विभीषण के सहित सकल बानरी सेना व्याकुल हो हाहाकार करने लगी और प्रजाओं को पीड़ा देनेवाला अपनी माया इस प्रकार फैलाया कि उसके मायारूपी अन्धकार में क्रोधित रावण उछल पड़ा और संसारको भस्म करनेके लिये दशमुख बीसभुजा से धनुष बाणको धारण किये ऐसा सेनाको संहार करके ऐसा स्थित हुआ जैसे मंगलग्रहको पराजित करके विशाखनक्षत्र निर्मल होजाता है, ऐसे वहरावण धनुष बाणके सहित मैनाक पर्वतके समान अदृश्य होकर युद्धकरने लगा, कि अब उसके सामने बाण चलानेकी सामर्थ्य किसी को नहीं रही। थोड़ी देरके बाद श्रीरामचन्द्रजी सारथी सहित चैतन्यहोकर भय देनेवाले राक्षसके उत्पावको देखकर क्रोधित रामचन्द्र जी अपने क्रोध को इस प्रकार बढाये कि श्रीरामचन्द्रजी के क्रोधसे सूर्यका प्रकाश घट गया और शेषनाश के फण हिलने लगे दशो दिग्पाल अनाथके समान नारायण के शरणको पुकारने लगे, संपूर्ण चराचर प्राणियोंको मूर्छा आगयी। वृक्षपर्वत सहित पृथिवी कांपनेलगी, श्री रामचन्द्रजी के क्रोधसे समुद्र क्षुभित होगया। आकाश में मेघउत्पात कीगर्जना करनेलगे रावणके भयसे पीडित स्थावर जंगमआदि प्राणी श्रीरामचन्द्रजी के क्रोधसे किसीको अपना रक्षक न जानकर और भी व्याकुल होगये। श्रीरामचन्द्र व रावणके युद्ध कौतुकको देखनेके लिये समरमें आये देवता व दैत्य इस महायुद्धको देखकर असुर कहने लगे कि रावणका विजय होवे और देवताओं में यह ध्वनि होती थी कि इस राक्षसका नाशहो और श्रीरामचन्द्रजी का विजयहोवे। इसकेब द दुरात्मारावणने श्रीरामचन्द्र को वध करने की इच्छासे एक त्रिशूलको निकाला। वह त्रिशूल शिवजीके वरदानसे लाभ किया था। देखते भरमें शत्रुको नाशकरने वाला अत्यन्त ओजस्वी त्रिशूलको निकाल

कर ऐसी गर्जना किया कि इसकी घोर गर्जना से गर्भिणियों के गर्भ पात होगये उस त्रिशूलको हाथमें लिये गर्जना करके श्रीरामचन्द्रजी से बोला, हेराम! हमारे क्रोधसे यह त्रिशूल उद्यतहै यह लक्ष्मण सहित तुमारे प्राणको नाश करेगा। इससे ग्राममें जितने राक्षसों को तुमने मारा है वह बदला तुम दोनों को मारकर आज मैं बराबर करूंगा। हेराघव! खड़ेरहो तुमको इसी त्रिशूल से नाश करैंगे। ऐसा कहकर वह त्रिशूल श्रीरामचन्द्रजी पर चलाया। श्रीरामचन्द्रजी उस रावणके त्रिशूलको अपने ऊपर आते देखकर धनुष पर चढाकर एक बाणऐसा मारे उस त्रिशूल का पहिला वेग भङ्ग होगया। पीछे मातली से लाई गई इन्द्रशक्तिको उठाकर घुमाये और रावणके महास्त्रको नाश करने केलिये छोड़े,वह शक्ति श्रीरामचन्द्रजी के हाथसे छूटकर घंटाके समान शब्द करती और अपने तेजसे आकाश मण्डलको प्रकाशित करती हुई प्रलयकाल की उल्काके समान राक्षससे प्रयुक्त त्रिशूलको खण्ड खण्ड कर दिया, वह त्रिशूल अपने पराक्रम से नष्टहोकर पृथिवीमें गिर पड़ा। और शब्द करती हुई वह महाशक्ति त्रिशूलको भङ्ग करके रावण के रथके घोड़ों को व्यथित करते राक्षसके हृदय व ललाटमें लगी। उस शक्तिके लगते ही रावण के अंगसें रुधिर की धारा बहने लगी, वह राक्षसेन्द्र राक्षसोंके समान फूले अशोक वृक्षके शोभित हुआ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे अधिकशततमःसर्गः॥ १०३॥

श्रीरामचन्द्रजीके बाणसे अत्यन्त व्याकुल समरको जीतने वाला राक्षसेन्द्र रावण अत्यन्त क्रोधित हुआ और आंखको लाल किये धनुष पर बाणको चढाकर मेघके समान सेना सहित रामचन्द्रजी पर वर्षा करने लगा। जैसे मेघकी वृष्टिसे तड़ाग भर जाताहै वैसे रावण के बाणसे श्रीरामचन्द्रजी पीड़ित होगये। जैसे मुसलधार जल वर्षासे पर्वत नहीं हिलता, वैसेही रावणके अमोघ बाणसे भी रामचन्द्र जी त्रासित नहीं हुए। जैसे सूर्य अपने किरणका संकोच कर लेते हैं वैसे श्रीरामचन्द्रजी रावण के बाण को वारण किये। अपने बाणका

गिरना निष्फल देखकर रावण अत्यन्त वेग से महात्मा रामचन्द्रजीके हृदयमें एक हजार बाण मारा। उन बाणों को लगने से श्रीरामजीके अंगसे रक्त बहने लगा। उस समय श्रीरामचन्द्रजी की ऐसी शोभा हुई, जैसेबनमें फूले पलाशकी शोभा होतीहै। रावणके बाणसे क्षुभित रामचन्द्रजी बाणको अपने धनुष पर चढ़ाकर रावणका लक्ष्य करने लगे, परन्तु बाण वर्षासे जो अन्धकार समराङ्गणमें व्याप्त था उससे किसीके अस्त्रका किसीको लक्ष्य नहीं होता था। तौ भी क्रोधाविष्ट रामचन्द्रजी जब बाणको धनुष पर चढ़ाये तब रामचन्द्रजीके बाणके प्रकाशसे समर भवनको ऊँजियाला कर दिया। जब बाणके प्रकाश से रामचन्द्रजीको रावण दीखपड़ा तब रामचन्द्र हंसकर समरमें रावण से बोले, हेराक्षसाधम! तूँ हमारे पराक्रमको न जानता हुआ अकेली-हमारी स्त्रीको जनस्थान से हरण किया है, इस कर्म से तू बलवान नहीं है। मुझसे विरहित दीन दशा में वर्तमान महाघोर वनमें बैठी वैदेहीको हरणकरके तू अपनेको शूरवीर जानता है। अनाथ व पराई स्त्रीको हरण करके इस दुष्ट कर्म करने के अभिमान से तूं अपने को शूरवीर जानते हो। हे निर्लज्ज! मर्यादा व चरित्रसे नीचकर्म करके और अभिमान से अपने मृत्युको बुलाकर अपने को शूरवीर जानते हो। वाह तुम बड़े प्रशंसनीय यशस्वी व बलवान और समरमें शूरवीर हो, तौ भी आज अपने उस निन्दित कर्म के फलको भोग करोगे। हेमूढ! तुझको लज्जा नहीं है जोचोरके समान सीताको चुराकर आज शूरवीरके समान समरमें खड़ा है। यदि तू अपने बलसे हमारे सामने सीताको चुराता तो खरदूषण के समान तू भी यमपुरी को पहुंचता। आज बड़े आनन्दकी बातहै जो तू हमारे सन्मुख खड़ा है, आज हम अपने बाणसे तुमको यमलोक का अतिथि बनावैंगे। किरीट कुण्डल व मुकुट आदि से भूषित उज्वल तुमारे मस्तक हमारे बाणसे कटकर इस समर भूमिमें गिरेगा और तुमारे रक्तसे क्रव्यादगण तृप्त होंगे। जब तुम हमारे बाणसे नष्ट होकर पृथिवी में गिरोगे तब तुमारे मांस

यह गिद्धगण इस प्रकार खींचेंगे जैसे सर्पको गरुड़ खैंचकर खा जाते हैं । इस प्रकार रावण से कहकर श्रीरामचन्द्रजी उसके ऊपर बाणको छोड़ने लगे । शत्रुको नाश करनेकी अभिलाषा करने वाले रामचन्द्र जीका बलवीर्य और प्रसन्नता पराक्रम ये सब द्विगुण होगये । अस्त्र देवता श्रीरामचन्द्रजी के समीप आकर उपस्थित हुए । उन अस्त्रदेवता की सहायतासे श्रीरामचन्द्रजी शीघ्रही बाणको रावणपर चलाने लगे। रावणके वधके शुभचिन्हको देखकर फिर भी रावण को रामचन्द्रजी पीड़ित किये । बानरों के पर्वतकी वर्षासे और रामचन्द्रजी के बाणसे व्यथित दशानन विकल हृदय होगया और उसका बाणका चलाना व रामके बाणका वारण करना बन्द होगया और रावण निश्चल होकर मूर्छित होगया । सारथी रावणको मूर्छित देखकर समरसे उसका रथ हटाकर बाहर ले गया ॥

इति वाल्मीकीये रामायणे युद्धकाण्डे चतुरधिकशततमःसर्गः ॥ १०५ ॥

मूर्छाको नाश हो जाने के बाद जागृत्त काल से प्रेरित रावण सारथी से बोला, बलसे हीन असमर्थके समान अस्त्र शस्त्र से रहित तेजसे निर्बल के समान तूने यह हमारी रथको समर से बाहर लाया है यह हमारा अपमान तूने अपनी इच्छा से किया है । जो शत्रुके सन्मुख से हमारे रथको पराङ्मुख किया । हमारी शूरताके विषय में जो लोकको विश्वास है उसको तूने नष्ट कर दिया । शत्रुको देखते हुए तुमने हमको कुत्सित पुरुष बनाया है । जिस कारण इस रथ दुःख से भी नहीं चला सके अथवा ज्ञानता से शत्रुके सन्मुख नहीं खड़े रहे सो तुम अपने कर्म रूपी अंकुशको हमारे हृदय में गड़ाकर हमको मूर्छित किया है ऐसे तर्क करने वाली हमारी बुद्धि सत्य है, क्योंकि हितको चाहनेवाले मित्र शत्रुके समान कार्य्य नहीं करेंगे, कि संग्राम के मध्य से रथको हटा कर शत्रुसे किसी शूरवीर पुरुष को जन्म भरके लिये कलंक देवें, यह केवल तेराही कर्तव्य है । हमारे रथको शीघ्र लौटाकर हमारे शत्रुके सन्मुख ले चलो जिसमें हमारा शत्र हमको

लौटाकर अपनी विजयसे प्रसन्न न होता हुआ संग्राम से न लौटा हो इतना दिनतक हमारा सारथी होते हुए तैंने हमारेगुणको स्मर्ण नहीं किया, यह कैसी चिंता की बात है। इसप्रकार रावण के परुष वचन को सुनकर हाथजोड़ विनीत भाव से सारथी बोला, हेराजन्! न तो हमको कुछ भय हुआ और न तो अज्ञानता न तो शत्रु का पक्ष हमको श्रेय जान पड़ा न हमको प्रमाद है और नतो आपके सत्कार को विस्मरण होगये, केवल आपके यश की रक्षा करने के लिये और आपके कल्याण की इच्छा से स्नेह युक्त व प्रसन्न मनसे हमने अपने ज्ञान पूर्वक यह आपका हित व उपकार किया है। हेमहाराज इस युद्धरूपी कार्य में बिना विचार किये क्षुद्र पुरुष के समान हमको दोष देने के योग्य आप नहीं हैं। नदी के जल धारा के समान आपके वेगवान रथ को हमने संग्राम से बाहर जिस कारण लेआये उसको सुनो। समर में युद्ध करते हुए आपको शत्रु के अस्त्र से मूर्छा आगई उस शत्रु के प्रबल बाण प्रहार को और आपकी मूर्छित दशा को देखकर हमने रथ को संग्राम से बाहर हटाया है और जितने प्रकार के युद्ध में शकुन होते हैं वह सब शकुन आपके प्रतिकूल होता है और हे वीर! देश काल को जानने वाले अपने पक्षमें और शत्रु के पक्षमें शुभ अशुभ का विचार शकुन से कहते हैं वह आज हमारे पक्ष में हर्ष उत्साह व उत्तम विचार नहीं है, केवल दीनता कादरता आदि दोष धीरे धीरे बढते जाते हैं। रथपर बैठे स्वामी के उपयान अपयान स्थान अपसपण ये चार गुण को सारथी जानते हैं। आपको अविश्राम देने के लिये जो हमने आपके रथ को समर से हटाकर रौद्र कर्म किया है उसको क्षमा करो। हेवीर! हमने अपनी इच्छा से रथ को नहीं हटाया है, बल्कि आपके अत्यन्त स्नेह से हमने यह कार्य किया है। हेप्रभो! आप जो आज्ञा दीजिये सोई मैं करूं जिसमें हमारा दोष छूट जावे। सारथी के बचन से संतुष्ट रावण उस सारथी की अत्यन्त प्रशंसा करके युद्ध के लोभ से बोला, हेसारथी! हमारे इस उत्तम रथ को शीघ्र राम

के सन्मुख ले चलो, जब तक हम अपने शत्रु का बध नहीं करेंगे तब तक संग्राम से न लौटेंगे । इस प्रकार सारथी से कहकर सारथी को एक सोने का कंकण हाथ में पहिरा दिया । रावण के दिये पुरस्कार को ग्रहण करके उसके बचन के अनुसार सारथी ने रथको हांककर क्षणभर में श्रीरामचन्द्रजी के सन्मुख समर में लाकर रथ को खड़ा किया ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे पंचाधिकशततमः सर्गः ॥१०५॥

इधर ब्रह्माजी के बरदान से युक्त रावण के विभव को देखकर त्रस्त रामचन्द्रजी की सहायता के लिये ब्रह्माजी के अनुग्रह से सकल मंत्र के ज्ञाता अगस्त मुनि आकर आदित्य हृदय स्तोत्र को श्रीरामचन्द्रजी को उपदेश किया । इसकेबाद रावण को युद्ध के लिये समुपस्थित रावणको सन्मुख श्रीरामचन्द्रजी देखकर धनुष बाण को लिये सन्मुख खड़े हुए इतने में अगस्त मुनि समर में श्रीरामचन्द्रजी के समीप आकर रामजी से बोले हेमहाबाहु राम ! हमारे इस सनातन व गुह्य मंत्र को सुनो यह समर में शत्रु को जीतने वाला है, यह कहकर श्रीरामचन्द्रजी को आदित्यहृदयस्तोत्र को उपदेश किये और अपने स्थान को चले गये, उस मुनि के स्तोत्रको सुनकर श्रीरामचन्द्रजीका शोक नष्ट हुआ और श्रीरामजी प्रातःकाल के सूर्यनारायण को देखतेही प्रसन्नता पूर्वक मुनि के बताये मन्त्र को जप करके आचमन किये और धनुष बाण को लेकर समर जीतने के लिये रावण के सन्मुख खड़े हुए, सूर्य मन्त्र को धारण करके रामचन्द्रजी को समर में खड़ा देखतेही राक्षस के नाश को जानकर देवतों ने श्रीरामजी पर फूल बरसाये और जय जय ध्वनि किये ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे षडुत्तरशततमः सर्गः ॥१०६॥

इसके उपरान्त ध्वजा पताका अस्त्र शस्त्र से भूषित रावण के रथ को उसका सारथी श्रीरामचन्द्रजी की सेनाके सन्मुख खड़ा किया, उस शब्द करने वाले उत्तम घोड़ा व ध्वजा पताका किंकिणी अलंकार अस्त्र शस्त्र से भूषित उत्तम रथ पर धनुष बाण को लिये राक्षस राज

को बैठा नरराज रामचन्द्रजी देखे। कि यह राक्षसों का राजा रावण काले मेघ के समान रथपर बैठा हुआ बिजली के समान चमकता हुआ अनेक बाण की धारा प्रमाण वर्षा करता है। अपने प्रबल शत्रु रावण के साहस को इसप्रकार देखकर श्रीरामचन्द्रजी भी अपने धनुषको चढ़ाकर इन्द्रके सारथी मातलीसे बोले, हेसारथे! साहस पूर्वक समरमें आये शत्रुके रथको देखो। यह राक्षस अपने अत्यन्त पराक्रमसे अपसव्य भागसे रथको ले आया है कि हम शत्रुका संहार करें इस बुद्धिसे यह राक्षस समरमें खड़ा हुआ बाण को प्रहार करता है। इसलिये सावधान होकर इस शत्रुके सन्मुख हमारे रथ को ले चलो जिसमें देवताओं को भी पीड़ा देने वाले इस शत्रु को मारकर अपना व संसार के दुःख को नाश करूं। इसलिये हेसारथी! भय क्षोभ घोड़ों की रक्षा और लगाम को आधीन करना इन चार गुणों से युक्त होकर समर के मध्य में चलो। आप इन्द्र देवता के सारथी हैं यद्यपि रथों के इच्छानुकूल रहने की शिक्षा को नहीं ग्रहण किये हैं तौभी हम अकेले युद्ध करने वाले हैं इसलिये हम सहज सारथी के कर्म को सिखलाते नहीं हैं किन्तु आप को स्मरण दिलाते हैं। श्री रामचन्द्रजी के बचन से अत्यन्त संतुष्ट मातलि रथ को प्रेरणा करके प्रदक्षिणा प्रचार से ले गये, और चक्राकार रथ के मंडल से रावण पर बाण का प्रहार करने लगे। सन्मुख बाण को छोड़ते श्री रामचंद्र को देखकर अपने भी बाण का प्रचण्ड प्रहार करने लगा। राक्षस के धर्षण से अमर्षि रामचंद्र रोष पूर्वक धैर्य को धारण करके रथ पर रखे इंद्रके अथवा परम ऐश्वर्य से संपन्न अपने आयुध को लेकर छोड़ने लगे। रामचंद्र व रावणके सूर्य के समान चमकने वाले तथा अमोघ बाण को परस्पर के जय की इच्छा से वह उनको और वह उनको मारने लगे। जैसे अभिमान को धारण करने वाले दो सिंह परस्पर युद्ध करते हैं। रावण के नाश की इच्छा करने वाले देवगण युद्ध के कौतुक को देखने के लिये विमान पर बैठकर आकाश मार्ग में आये। उस युद्ध समय में रावण के विनाश के लिये और

रामचंद्रजी के विजय के लिये अनेक प्रकार के अशकुन होने लगे। रावणके रथके ऊपर देवगण रक्तकी वर्षा करने लगे, प्रचण्ड आंधी चली, गिद्ध बाज काग आदि मांस खानेवाले जन्तु बामभागसे चक्राकार घूम कर रावणके रथ पर गिरने लगे। जिधर २ रावणके रथ घूमते हैं उधर वे मांसहारी पक्षिगण भी दौड़ते हैं दिनमें लंकापुरी का स्वरूप इसप्रकार लाल होगया जैसे सायंकाल में सूर्य की छाया पड़ने से पर्वत आदि लाल दिखाई पड़ते हैं। अनायास आकाश मार्ग से तारागण टूटने लगे और बद्दलों का महा भयानक शब्द होने लगा जिस अशकुन को देखकर राक्षसों सहित रावण का हृदय विषाद युक्त होगया। लंका के समीप की भूमि स्तब्धसा होगई। जैसे पर्वतों के शिखर पर अनेक रंगके धातु देखे जाते हैं वैसे रावणके रथके सामने सूर्यकी किरण अनेक रंगकी दिखाई देने लगी और गिद्धगण खमुसे आगकी अंगार को गिराते हुए रावण के मुख को देखते थे। रण में धूलि के सहित ऐसा वायु चला जिससे राण के दृष्टि का आवरण होगया। धूलि की वर्षा से दिशाओं में अन्धकार ने आच्छादित कर लिया। उस घोर अन्धकार में वज्र के समान सेना में गिरते हुए श्रीरामचंद्रजी के बाण के शब्द सुना पड़ते थे। रावण के रथके प्रति सारिका बड़े कठोर शब्द से रोदन करती हुई आकाशसे गिरती थीं। रावणके रथ में जोते हुए घोड़ों की जंघा से आग की चिनगारी और आंख से आंसू की धारा बहते थे। रावण के विनाश के लिये अनेक प्रकार के उत्पात समर में होने लगे औ रामचंद्रजी के रथ के आगे बिजय लाभ के शकुन होते थे। उन शकुन को देखकर श्रीरामचंद्रजी का मन इतना बिह्वल होगया कि वह रावण को अपने बाण से मरा हुआ जाने। श्रीरामचंद्रजी शकुन से अपना विजय और अशकुन से रावण का क्षय को जानकर श्रीरामचंद्रजी का पराक्रम शत्रु के सामने और भी बढ़ गया॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे सप्तोत्तरशततमः सर्गः॥१०७।

अनेक दिनसे आरंभ राम रावणके युद्धसे सकल चराचर जीव भयसे कांपने लगे और महाबलवान बानरोंकी सेना तथा अनेक प्रताप को धारण करने वाली राक्षसों की सेना अस्त्र शस्त्र को लिये एक टक होगये और श्रीरामचंद्रजी के व राक्षसराज रावण के भयानक युद्ध को देखकर बानर विस्मित नयन से इसप्रकार देखने लगे जैसे चित्र (फोटो) में खींचा हुआ हो। वे बानर व राक्षस अनेक प्रकारके आयुध को लिये हैं तौभी रावण के पराक्रम को देखकर बानर व राक्षसों की भुजा निश्चल होगई। राघव व रावण अनेक प्रकार के निमित्त को देखकर युद्ध में बुद्धि को निश्चित करके निर्भय युद्ध करने लगे। रामचंद्रजी यह सेचने लगे कि रावण मरेगा और समर में हमारा विजय होगा इस बुद्धि से अपने पराक्रम से शिथिल नहीं हुए। इसके बाद क्रोधित दशानन अपने धनुष पर बाण को चढाया और रामचंद्रजी के रथमें लगा हुआ ध्वजाका लक्ष्य करके उस बाण को छोड़ा परन्तु राक्षसके बाण इनके रथपर आक्रमण नहीं करके पृथिवी पर गिर पड़ा। क्रोधित रामचंद्रजी भी रावण की ध्वजा का लक्ष्य करके बाण को छोड़े, वह राम का बाण विषधर सर्प के समान आग की ज्वाला को छोड़ता हुआ रावण की ध्वजा को काट कर गिरादिया। इसके उपरान्त रामचन्द्रजी ने राक्षस के केतुका लक्ष्य करके बाण मारे बाण को लगतेही वह भी टूटकर गिर पड़ा। राक्षस राज रावण अपनी ध्वजा पताका का विध्वंस देखकर हजारों बाण से राम के रथ में जोते हुए घोड़ों को मारा, परन्तु इन्द्रलोक के वह घोड़े जो रामचन्द्रके रथ में जोते हुए थे पुष्प के समान राक्षसके बाण से उन घोड़ों को कुछ भी पीड़ा नहीं हुई। उन घोड़ों में विकलता को न देख रावण ने फिर भी हजारों बाण मारकर गदा, परिघ, मुसल, व चक्र आदि अस्त्रों को चलाया। परन्तु वे सब अपने कार्य में सफल नहीं हुए, क्योंकि जब विनाशकाल आता है तो सबकी सामर्थ्य घट जाती है। इसके बाद मायावी रावण अपनी माया से रामचन्द्र

पर पर्वत व वृक्ष आदि की वर्षा रामचन्द्र के रथ व सेना पर किया। रामचन्द्रजी जीवन की आशा से रहित रावण के माया युद्ध को देख कर मुसकुराते हुए अपने बाण को उठाये और क्षण भर में राक्षस के सकल अस्त्र को नाश करने का प्रयत्न करनें लगे। परन्तु रावण ने अपनी माया से इतना अस्त्र प्रयोग किये था, मानो यह एक दूसरा आकाशही निर्माण किये है। जब रामचन्द्रजी के अमोघ बाण छूटने लगे तब रावण के बाण कटकर पृथिवी पर गिरने लगे। जब रावण के बाणजाल रामके बाण से नष्ट हुए तब रामचन्द्रजी ने रावण के रथ में जोते हुए घोड़ों का लक्ष्य करके बाण मारे और रावण अपने बाण से रामचन्द्र के घोड़ों को नष्ट करने का उद्योग करने लगा। इस प्रकार घोर युद्ध राम रावण का एक प्रहर पर्यन्त हुआ। रामचंद्र व रावण अपने २ शस्त्र से महाघोर युद्ध किये परन्तु राम के बाण से अपनी ध्वजा का गिरना देखकर राक्षसेन्द्र रावणकी क्रोध बढ़ने लगी जैसे बनको भस्म करने के लिये वनाग्नि अपने तेज को बढ़ाती है ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे अष्टाधिकशततमः सर्गः ॥ १०८ ॥

राम रावण को इस प्रकार अद्भुत युद्ध करते देखकर सकल चराचर प्राणी भय से विस्मित व निश्चल के समान होगये। रामचन्द्र रथ पर बैठे धनुष बाण को अपने बाण से पीड़ा देने लगे और रावण उत्तम रथी अस्त्र शस्त्रधारी राम को अपने बाण से त्रासित करने लगा। एक २ को बध करने की अभिलाषा से मण्डल बाध कर युद्ध स्थल में सपत्न होगये गति के वेग को संपन्न रामचन्द्र व राक्षसेन्द्र अपने पराक्रम के अनुसार एक दूसरे को रथ सहित विध्वंस करने के लिये मेघ की जल धारा के समान बाणकी वर्षा करने लगे। सारथी २ से घोड़ा घोडा से पहिया पहिया से रथी रथी से परस्पर क्रोध युक्त युद्ध का आरंभ हुआ। इस प्रकार के घोर युद्ध में स्थित रामचंद्रजी चार बाण रावण के घोड़ों को मारे, बाण से त्रासित रावण के अश्वरथ सहित भाग चले, घोड़ों को अवश भागते देखकर क्रोधित रावण एक उज्वल

अस्त्र को निकाल कर श्रीरामचंद्रजी पर चलाया, परंतु राक्षसेन्द्र के बाण से घोड़ा सारथी वरथी आदि किसी को व्यथित न देखकर वज्र के समान अमोघधारी बाण से फिर भी रामचंद्र के रथ पर मारा, वह रावण का बाण आकर अपने पराक्रम से आहत न होता हुआ श्रीरामजी के सारथी के अंग में प्रवेश किया परंतु मातलि में दिव्य शक्ति रहीइस कारण वह रावण के बाण से पीडित नहीं हुए। मातलि को राक्षस के बाण को लगते देखकर श्रीरामचंद्रजी को इतना क्रोध हुआ जितना कि अपने अंग में बाण लगने से क्रोधित नहीं होते थे। क्रोधित रामचंद्रजी रण से पराङ्मुख शत्रु पर हजारों बाण को एक साथ मारे श्रीरामचंद्रजी के बाण से आकुल राक्षस रथ को लौटाकर गदा व मुसल की वर्षा से श्रीरामजी को पीड़ित किया। रावण की गदा व मुसल तथा बाण आदि के शब्द से सातो समुद्र क्षुभित होगये रण से पराङ्मुख रावण फिर भी लौटकर श्रीरामचंद्रजी से घोर युद्ध करने लगा। राम रावण के युद्ध से क्षुभित समुद्र पाताल में रहने वाले दानवों को व्याकुल कर दिया। पृथिवी को कंपित होने से वन पर्वत नदी आदि सभी कंपित होगये। सूर्य का प्रकाश मन्द होगया। वायु का चलना बंद होगया। देवता गंधर्व किन्नर सिद्ध चारण ऋषि मुनि आदि चिन्तित होगये। और प्रार्थना पूर्वक कहने लगे कि इस भयानक युद्ध गो ब्राह्मण के सहित सकल लोक का कल्याण हो और राक्षसेश्वर रावण से श्रीरामजी का विजय होवे इस प्रकार जपते हुए ऋषि मुनि के सहित युद्ध के कौतुक को देखने लगे। देवताओं की भीड़ आकाश में इस प्रकार की हुई कि आकाश तो समुद्र के समान और समुद आकाश के समान दिखाई पड़ने लगा। यह राम रावण का युद्ध राम रावण ही के योग्य है इस प्रकार कहते हुए देवगण राम रावण के युद्ध को देखने लगे। इसके बाद रघुवंस के यश को बढ़ाने वाले क्रोधित श्रीरामचन्द्रजी उत्तम बाण को धनुष पर चढ़ाकर कुण्डल किरीट मुकुट से भूषित रावण के शिर को काट लिये। रावण के

प्रथम सिर को कटते देखकर देवता मनुष्य सभी प्रसन्न होगये फिर रामचंद्रजी ने रावण के दूसरे शिर को काटकर गिरा इस प्रकार अपने उज्वल अस्त्र से जितने सिर को रावण ने बरदान से लाभ किया था उन सब रावण के शिर को काट डाले केवल एक सिर रावण को शेष रह गया इतने शिर को कटने से भी रावण को मरा न देख कर शूरवीर कौशल्या को आनंद देने वाले श्रीरामजी चिन्ता करने लगे कि इसी अस्त्र से मारीच, सुबाहु, खरदूषण, त्रिसिरा, विराध, वाली, आदि को बध किया हैं और यह हमारे अमोघ बाण हमको विश्वास देने वाले और शत्रु को नाश करने वाले हैं, सो आज कारण क्या है जो इन अस्त्रों को छोड़ने पर भी रावण अभी तक जीता है। इस प्रकार की चिन्ता करते हुए भी रामचन्द्रजी अनेक बाण रावण के हृदय में मारे। क्रोधित राक्षसेश्वर रथपर बैठा हुआ गदा व मुसल आदि की वर्षा से रामचन्द्रजी को आकुल कर दिया। इस प्रकार शिर कटने पर भी रावण का युद्ध राम के साथ पुनः आरंभ होगया आकाश पर्वत व भूमि आदि से ऋषि मुनियों के सहित देवगण रात्रिकाल के युद्ध को देखने लगे। दिन रात्रि क्षण मुहूर्त कभी भी राम रावण के युद्ध का विराम नहीं हुआ। श्रीरामचन्द्र व राक्षसेन्द्र रावण के घोर युद्ध को देखकर देवराज इन्द्रके सारथी मातली श्रीरामचन्द्रजी से बोले ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे नवोत्तरशततमः सर्गः ॥१०९॥

युद्ध का अभिलाषी बरदान से संपन्न राक्षस के युद्ध कौतुक को देखकर मातली नाम इन्द्र का सारथी श्रीरामचन्द्रजी को स्मरण दिलाया कि हेवीर ! इस राक्षस के संग युद्ध करके क्यों इतना दुःख उठाते हो। और इस दुरात्मा राक्षस को शीघ्र मारकर पृथ्वी का दुःख क्यों नहीं छुड़ाते हो। ब्रह्माजी ने तीनों लोक को जीतने के लिये जो अस्त्र ब्रह्माजी ने इन्द्र को दिया था, इन्द्र देवता ने अगस्य मुनि के द्वारा आपके पास भेजा है आप उसी अस्त्र से इस राक्षस का बध करो। वह ब्रम्ह अस्त्र वेग में वायु के समान फल में अग्नि व सूर्य

के बराबर गौरव में सुमेरु व मन्दरा चल के समान है और वह अस्त्र पृथिवी जल अग्नि वायु आकाश के तेज मय अंश से निर्माण है, वह बानरों को आनन्द देने वाला और राक्षसों को नाश करने वाला है, हेरामजी ! लोक में यह उत्तम अस्त्र शत्रु को नाश करने वाला अपने यश को बढ़ाने वाला है मातलि के बचन को सुनकर वेदोक्त मन्त्र से अभिमंत्रित करके श्रीरामचन्द्रजी उस बाण को उठाये। उस ब्रह्मास्त्र को धनुष पर सन्धान करने से सकल स्थावर जंगम आदि प्राणियों के सहित पृथ्वी कांपने लगी। क्रोधित रामचन्द्रजी उस ब्रह्मास्त्र को अपने धनुष पर चढ़ाकर रावण पर चलाये, जैसे इन्द्र के हाथ से छूटकर बज्र शत्रुओं को नाश करता है वैसे काल के समान वह ब्रह्मास्त्र श्रीरामचन्द्रजी के हाथ से छूटकर रावण के हृदय में लगा वह प्रचण्ड अस्त्र रामचन्द्रजी के हाथ से छूटकर दुरात्मा रावण के हृदय को भेदन करके रावण के प्राण को हरण किया और रावण के अङ्ग से रुधिर की धारा बहने लगी, प्राण निकलने से वह राक्षस पृथिवी में गिर पड़ा और रावण के हाथ से धनुष बाण भ्रष्ट होकर गिर पड़े, जैसे इन्द्र के बज्र से वृत्रासुर का नाश हुआ था उसी प्रकार ब्रह्माजी के उज्वल अस्त्र से रावण का नाश हुआ। रावण को मराहुआ देखकर शेष निशाचर अपना प्राण लेकर अनाथ के समान दिशाओं में भाग चले और वृक्ष पर्वत आदि से युद्ध करने वाले बानरगण राक्षस के नाश और श्रीरामजी के बिजय को देखकर गर्जना करने लगे कि उनकी गर्जना से लंकापुरी टूटकर मानो समुद्र में गिरती है। बानरों के भय से आंसू को बहाते राक्षसगण इस प्रकार भागने लगे जैसे सूर्य के उदय होने से अन्धकार नष्ट होता है देवताओं को त्रास देने वाले राक्षस को मरते देखकर आकाश से श्रीरामचन्द्रजी पर देवगण पुष्प बर्षा किये, गंधर्वों ने दुन्दुभी बजाकर रामजी के गुण को गान किया मन्द सुगन्द वायु बहने लगा। आकाश निर्मल होगया। सूर्य चन्द्रमा के प्रकाश उज्वल होगये। ब्राह्मणों के अग्निहोत्र की अग्नि सुन्दर

हवि को ग्रहण करने लगा और चारो ओर रामचन्द्रजी की जय २ ध्वनि होने लगी । इसके बाद सुग्रीव बिभीषण आदि बानर एकत्र होकर बिधि पूर्वक श्रीरामचन्द्रजी की पूजा व स्तुति किये, उधर देवताओं के सहित प्रसन्न इन्द्र शत्रु को देखकर स्वर्ग को चले गये ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे दशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११० ॥

संग्राम में मृतक देह पड़ी रावण की देखकर शोक से युक्त बिभीषण अपने भाई के बीर्य व पराक्रम को स्मरण करके संग्राम में बिलाप करने लगे । हेबीर ! पराक्रम में बिख्यात नीति जानने में समर्थ बहुमूल्य शय्या पर शयन करते थे सो आज प्राण व अभिमान से रहित होकर पृथ्वी में पड़े हो । केयूर से भूषित तुमारी भुजा मरते हुए सर्प के समान फैली हैं, और सूर्य के समान चमकने वाला तुमारा मुकुट रामबाण से बिसर्जित होगया है हेबीर ! तुमारे कल्याण के लिये जो कुछ हमने तुमको समझाया, वह सब काम और मोह से युक्त तुमको नहीं स्वीकार हुआ । जिस अभिमान से प्रहस्त इन्द्रजीत कुंभकर्ण देवान्तक नरान्तक आदि राक्षसों ने हमारे बचन का तिरस्कार किये और तुम भी हमारे बचन को न मानकर हमारा अपमान किये उसका उत्तर काल में उपस्थित फल यह मिला है । हेबीर ! आज धार्मिकों का सेतु गत हुआ अधर्म का बिग्रह समाप्त हुआ, आजही जीवों के बलिदान की समाप्ती हुई और वीरों के गति को तुम प्राप्त हुए । आज तुमारे नष्ट होने से मानो सूर्य पृथ्वी पर गिरा है चन्द्रमा अन्धकार में मग्न है आगकी ज्वाला प्रशान्त होगई है और धर्म अपने व्यवसाय से निरुद्यम होगया है । तुमको संग्राम की धूलि में शयन करने से इस लंका में बर्तमान जीवों का कुछभी शेष नहीं रहा सर्वस्व नष्ट होगया । धैर्यही है पत्र जिस वृक्ष का दृढ पुष्प तपस्या बल शूरता है साधन जिस वृक्ष का ऐसे राक्षसों के राजा वृक्षराज रावण को राम रूपी वायु ने अपने झकोरों से नष्ट करदिया । आज यह रावण रूपी हस्ती इक्ष्वाकु नाम सिंह से निहत होकर लंका के बन में पड़ी है। जलती हुई राक्षस रूपी

अग्नि को बद्दल रूपी रामने बुझाया है। आजही अपने खुर व सींग से त्रैलोक्य को दमन करने वाले बैलरूपी रावण को व्याघ्ररूपी रामने नाश किया है। इसप्रकार रावण आदि राक्षसों के शोक में आकुल बिभीषण को देखकर श्रीरामचन्द्रजी बोले, कि यह राक्षस केवल युद्ध में असक्त होने के कारण चेष्टा से रहित होगया है, अपने पराक्रम के वेग से मृत्यु की शंका से रहित है, वृद्धि व जय की इच्छा करने वाले जो क्षत्र धर्म में स्थित होकर नाश को प्राप्त होता है उसके लिये शोच करना वृथा है, क्योंकि वह तो पुष्प लोक को लाभ किया है। जिस रावण ने समरमें इन्द्रादि देवतों को बिजय किया है, काल के बश होने के कारण उसकी चिंता नहीं करनी चाहिये। इसके पहिले कभी भी इस प्रकार का बिजयी बीरों ने नहीं किया। जिस गति को रावण ने लाभ किया है उस गति को पूर्वाचार्य मनु आदि ने कहा है कि क्षत्रिय से बध किये गये को उत्तम पद प्राप्त होता है इसलिये युद्ध में मरे मनुष्य की चिंता नहीं करनी चाहिये। अब इनके लिये शोच व चिंता को छोड़कर इसका प्रेत संस्कार करो श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर शोक से संतप्त बिभीषण बोले, जो रावण रण में इन्द्रादि देवतों को अपने आधीन में किये था, वह रावण आज आपके हाथ से रणभूमि शयन किये हैं। यह रावण ने मित्र व भृत्यको धन रत्न वस्त्र भोजन देकर प्रसन्न करता था और शत्रुओं को बैर से शान्त करत था हेरामजी! यह रावण अग्निहोत्र करने वाला तपस्वी वेद ज्ञाता और सदाचार में कुशल था। अब इसके प्रेतकृत्य को भलीभांति करने की इच्छा करता हूं। करुणामय बिभीषण के बचन को सुनकर श्रीरामजी बिभीषण को धन्यवाद दिये और आज्ञा दिये इसको स्वर्ग लाभ के लिये प्रेतकृत्य का साधन करो इसका हमारा वैर इसके मरणही तक था अब इसका संस्कार करो, रावण इस मृतक देह पर जैसा स्नेह तुमारा है वैसाही हमारा है॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे एकादशाधिकशततमः सर्गः॥१११॥

महात्मा रामचन्द्रजी के बाण से रावण के मरण को देखकर राक्षसी निवास से निकल कर युद्ध भूमि में आई और केशको छोड़े शोक से पीड़ित होती हुई लंका के उत्तर द्वार से सेवक राक्षसों के सहित निकल कर संग्राम में मरे हुए अपने २ पति के मृत देह को खोजने लगीं। आर्य पुत्र! हा नाथ! इसप्रकार कहती हुई रक्त मांस से लिप्त शरीर को गोद में लेकर हाथी के समान चिल्लाकर रोदन करने लगीं। इसके बाद रावण की स्त्रियों ने महा बलवान व पराक्रमी विशाल शरीर वाले रावण को मरकर काले पर्वत के समान युद्धभूमि में गिरा देखकर उसके अङ्गपर प्रत्येक स्त्रियां गिर पड़ीं, जैसे बन की लता कटकर वृक्ष को आलिंगन करलेती है। कोई स्त्रियां रावण को गोद में लेकर कोई उसके चरण को पकड़ कर कोई कटे हुए शिर को लेकर उनके मुख देखती हुई अपने आंसू की धारा छोड़ने लगीं जैसे कमल पुष्प पर तुषार गिरता है। इसप्रकार रावण के मृत शरीर को लेकर रावण की सब स्त्रियां विलाप करने लगीं। कि जिस रावण ने इन्द्र को यम को जीत लिया और जिसने कुबेर को जीतकर उसका पुष्पक विमान अपने आधीन कर लिया, जिसने देवता गंधर्व ऋषि मुनि को भय दिया था सो रावण की आज यह दशा है जो मरकर समर में पड़े हैं। जो रावण देवता दैत्य राक्षस पन्नग आदि के भय को नहीं जानते थे वह मनुष्य से भय को पाकर आज इस दशा में पड़े हैं। जो देवता व दैत्य राक्षस आदि से अवध्य हैं सो पदाति मनुष्य से यह रावण समर भूमि में पड़े हैं। जिन राक्षसेन्द्र को समर में देवता असुर यक्ष आदि नहीं जीत सकते हैं सो आज दुर्बल प्राणी के समान मनुष्य से मृत्यु को पाया है। इसप्रकार अनेक करुणा युक्त बचन से वे रावण की स्त्रियां बार बार विलाप करने लगीं और कहने लगीं कि सदा हित को चाहने वाले मित्रों के बचन को न मानकर राक्षसों के नाश के लिये सीता को ले आये, और अपने सहित इन राक्षसों को नाश किये। बिभीषण के हित के बचन को सुनकर जो तुमको क्रोध हुआ

उसी के फल को आज आंख से देखा है। यदि तुम सीता को रामचन्द्रजी के हाथ समर्पण करदेते तो आज हमलोगों को इस प्रकार की विपत्ति नहीं भोगनी पड़ती। विभीषण के बचन को मानने से विभीषण के मनोरथ सिद्ध होजाते, रामचन्द्र से मित्रता होती और हम सब स्त्रियां विधवा होने से बचती शत्रुओं के मनकी बात मनहीं में सदा सन्ताप को देती। सो तुम अपनी निर्दयता व अभिमान से सीता को रोक कर राक्षसों को अपने देहका और हमलोगों का बराबर नाश किया है। फिर भी हे राक्षसेन्द्र! यह सब कार्य तुमारी इच्छा से नहीं हुआ है यह दैव की इच्छा से हुआ। क्योंकि दैव प्राणिमात्र को कर्म के अनुसार फल देता है, इसलिये किसी निमित्त को पाकर कालने अपने पराक्रम से राक्षसों का नाश किया है। हे राक्षसराज! तुमारे संग्राम में बानरों का तथा तुमारे सहित राक्षसों का नाश दैव योग से हुआ है। यह विपत्तिधन इच्छा पराक्रम और तुमारी आज्ञा से तुमको नहीं मिली है, लोकमें जो दैवकी गति उद्यत है उसको कोई नहीं हटा सकता॥

इति बाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डे द्वादशाधिकशततमः सर्गः॥११२॥

रावण के और स्त्रियों के विलाप से आकुल रावण की ज्येष्ठ पत्नी मन्दोदरी रावण के मृत देह को देखकर शोक से मूर्छित होगई और करुणा मय वचन से रावण के कर्म को स्मरण करके पति के यश के सहित विलाप करने लगी। हेमहाबाहु! कुबेर के भ्राता! तुमारे क्रोध से इन्द्र भयभीत हो जाते थे और गंधर्व चारण ऋषि मुनि अपने स्थान को छोड़कर भाग जाते थे, सो तुम पैदाति मनुष्य राम से संग्राम में पराजित हुए हो। हेराक्षसेश्वर! क्या तुमको लज्जा नहीं है। तुमने अपने पराक्रम से तीनों लोक को अपने वश में कर लिया था सो मनुष्य के अविषय देश में अर्थात् लंका द्वीप में मनुष्य से मरण को प्राप्त हुए हो। मनुष्यों के अगोचर देश में काम रूपी निशाचर विहार करते थे, सो इस राक्षसों की लंकापुरी में मनुष्य के संग्राम से तुमारी यह गति हुई है। हम तो यह जानती हैं कि तुमारे

विनाश के लिये अचिन्तनीय माया की पुतलिका को निर्माण करके काल स्वयं राम के स्वरूप में आकर तुमारा नाश किया है। अथवा अपने बल के अभिमान से तुमने इन्द्र को महा दुःख दिया है इसलिये राम के स्वरूप में इन्द्र स्वयं आकर अपनी शक्ति से तुमको विध्वंस किया है। अथवा परमात्मा सनातन आदि अन्त से रहित शंख चक्र गदा पद्म को धारण करने वाले प्रकृति के भी स्वामी सत्य पराक्रमी साक्षात विष्णु मनुष्य का रूप धारण करके और देवताओं ने सकल जगत के कल्याण के लिये मनुष्य का रूप धारण करके राक्षसों समेत तुमको इस दशा को पहुंचाया है। पहिले तुमने तपस्या करने के समय इन्द्रियों को जीत कर तीनों लोक को जीत लिया और देवता आदि को त्रासित करने लगे उसी का यह फल है। नहीं तो जिस लंकापुरी में देवता नहीं प्रवेश कर सकते थे, वहां हनुमान ने प्रवेश किया और खर तुमारे भाई को सेना समेत क्षण भर में रामजी ने मारा तब तक तुम क्या श्रीरामजी को विष्णु छोड़कर मनुष्य जानते जो तुमने हम लोगों के वचन को नहीं माना है उसी का यह फल है। हेदुर्मते ! अपनी देह को तथा धन व परिवार को नाश करने की इच्छा से अरुन्धती अथवा रोहिणी के समान सीता पर आसक्त हुए वह सीता जगत की उपास्य देवता है क्षमा करने से पृथिवी के समान और लक्ष्मी के लक्षण से भूषित हैं। उन सीता अकेली बन में बैठी को छल से तुमने लंकापुरी में लिवाकर अपने दोष से अपने परिव देहों को नाश किया है। उन पतिव्रता मैथिली का तुमने जो स्पर्श किया था उसी से सीताजी के तपस्या रूपी आग से तुम भस्म हुए हो। इन्द्र अग्नि आदि देवता तुमकोदेखकर भय मानते थे, यदि तुम सीता की धर्षणा न करते तो आज इस दशा को न पहुंचते। काल के परिपाक समय को उपस्थित हो जाने पर कर्ता अपने पाप किये कर्म को अवश्य भोगता है। पुण्य करने वाले उतम फल को और पाप करने वाले पाप के फल को भोग करते हैं। तुमारे पास अनेक महा सुन्दरि स्त्रियां रहीं तौभी

काम के बश होकर मोह से तुमको कुछ भी ज्ञान नहीं था। मैथिली हमसे सुन्दरी व कुलीन गुणवती नहीं हैं परंतु तुमने कुछ भी विचार नहीं किया है। तुमारी यह मृत्यु जानकी के कारण हुई है। यदि सीता के आने वाली मृत्यु को जो तुम त्याग कर देते तो मैथिली के सहित रामचन्द्रजी विशोक विहार करते। थोड़ी पुण्य करने वाली अनाथ मैं इस समय शोक सागर में डूबती हैं, नहीं तो तुमारे साथ विमान पर बैठ कर कैलास मन्दराचल सुमेरु आदि पर्वतों पर विहार करती थी और इन्द्र के नन्दन बन में कुबेर के चैत्र रथ बन में तथा देवताओं के अनेक उधान व बगीचों में विमान पर बैठ कर तुमारे साथ विहार किया है और अनेक देशों को देखा है तथा अनेक भूषण वस्त्र को धारण करके तुमारे साथ क्रीड़ा आदि से अंश किया है सो आज वही मैं एक दीन व अनाथ के समान होगई हूं। राजाओं के बचन लक्ष्मी को धिक्कार है। हेराजन्! चन्द्रमा व सूर्य के समान प्रकाशमान किरीट कुण्डल से युक्त मुख कान्ति और मद से व्याकुल तुमारे चंचल नयन व मुख की वैसी शोभा नहीं दीख पड़ती है। वरन् राम के बाण से भिन्न रक्त व रुधिर को लेप किये मस्तक में धूलि लगाये संग्राम भूमि में पड़े हो, यह बेधका देने वाली दशा आज हमारे सामने खड़ी है। इस दशा का स्वप्न मे भी हमको स्मरण नहीं हुआ था। क्योंकि दानव राज हमारे पिता शंकर समान बलवान तुम हमारे स्वामी औरइन्द्रको जीतनेवाला हमारापुत्रइसके गर्वसे हम सदा गर्वित हो इस उपस्थित दशा का स्मरण नहीं करती थी हमको इसका कभी भय नहीं होता था, सो वह भय मनुष्य से हमको मिला। जो तुमारे अंग अनेक प्रकार के आभूषण वस्त्र को धारण करने से हजारों सूर्य के समान चमकते थे, सो आज वही तुमारे अंग में राम बाण चमकते हुए दिखाई देते हैं। हेस्वामी! अब तुमारे अंग का स्पर्श हमको दुर्लभ हो जायगा तौभी तुमारे अंग में धसे हुए तीखे राम के बाण से हम तुमको आलिंगन नहीं करने सकती हैं। यह राम के बाण तुमारे धर्म बन्धन को काट दिया है। तुम पृथ्वी पर शयन किये हो इस समय तुमारे देह की

कान्ति रुधिर के समान श्याम होगई है। क्या तुम वज्र आहत पर्वत के के समान पड़े हो, क्या यह विलाप हमने स्वप्न में तो नहीं किया है तुमारा मरना राम से कैसे होगा। तुम तो काल के भी काल हो सो कैसे काल के अधीन हुए। क्योंकि तुमतो तीनो लोक के संपत्ति को भोग करने वाले और तीनो लोक को उद्वेग देने वाले हो। लोकपालों को जीतनेवाले और अपने पराक्रम से अभिमानी के अभिमान को नष्ट करने वाले हो। तीनों लोक को क्षोभ देने वाले सज्जनों को विदारण करने वाले हो, और शत्रु के सन्मुख भी अभिमान भरी बात को कहने वाले राक्षसों की रक्षा करने वाले हो, हजारों दानव व यक्षों की रक्षा करने वाले हो। संग्राम में कवचधारी शत्रु को जीतने वाले, देवताओं के यज्ञ भाग को हरण करने वाले और स्वजन की रक्षा करने वाले हो। धर्म से विरोध रखने वाले समर में माया युद्ध करने वाले देवता दैत्य व नाग मनुष्य आदि की कन्याओं को हरण करने वाले हो शत्रु की स्त्रियों को सन्ताप देने वाले लंकापुरी की रक्षा करने वाले और लोक में भयंकर कर्म करने वाले हो। और हम सब स्त्रियों को काम भोग से सन्तुष्ट करने वाले रथीयों श्रेष्ट इस प्रकार के प्रभाव वाले हमारे स्वामी आज समर में अनाथ के समान पड़े हैं। सो आपके इस प्रिय शरीर को नष्ट देखकर जो मैं अब तक जीती हूं इसलिये हम से कठोर हृदय की और स्त्रियां नहीं होगी। बड़े बहु मूल्य शय्या पर शयन करने वाले राक्षसेश्वर रण की धूलि में क्यों पड़े हो, इन्द्रजीत हमारे पुत्र को जब लक्ष्मण ने नाश किया तब उस शोक से मूर्छित होती हुई भी आज तुमारी दशा से मृतक के समान होगई हूं इसलिये शोक से पीड़ित मैं तुमारे विना अपने जीवन को नही देख सकती हूं, तुम मुझ कृपणा को छोड़कर कहां जाने का इच्छा करते हो। क्या तुम हमसे इतने क्रोधित हुए हो जो इस प्रकार धूलि में लेटती व विलाप करती मुझ दीन से नहीं बोलने की इच्छा

करते हो। हेस्वामी! मैं दल नगर से बाहर निकल कर यहां तक हम लोगों की लज्जा नष्ट होगई हम सब स्त्रियों को बाहर निकलते देख कर क्या तुमको क्रोध नहीं होता है, अब इन स्त्रियों का लालन कौन करेगा हमको विधवा करके अब आप हमको धैर्य क्यों नहीं देते हो। हेस्वामी! पतिव्रता के धर्षण से तुमारा नाश होगा सो तुम उस शापके अधीन होकर परलोक को गये। स्त्री को धर्षण करने के समय जो तुमको शाप हुआ उसका फल तुमको मिला, पतिव्रता स्त्रियों के आंख से अकस्मात आंसू गिरने से अनर्थ होता है यह लोक की कहावत तुमारे लिये सत्य हुई। हेवीर! मृगा के छल से राम लक्ष्मण को आश्रम से दूर लेजाकर उनकी स्त्री सीता को चुराये इसी पाप से युद्ध में तुमारा पराजय हुआ है, और तुम इस प्रकार नाश हुए हो। मैथिली को लंकापुरी में आते देखकर सत्यवादी हमारे देवर विभीषण ने जो कुछ कहा था सो हुआ। उन्होंने कहा था कि काम क्रोध के प्रसंग से जो यह सीता लंकापुरी में आई तो संपूर्ण राक्षसों का नाश जानो, यह पराई स्त्री को हरण करके तुमने जो अनर्थ किया है उससे राक्षसों का विनाशकाल जानो। परन्तु तुमने अपने बल व पुरुषार्थ के अभिमान से हमारे व विभीषण के बचन को जो नहीं माने उसी का यह फल है सुकृत अथवा दुष्कृत कर्म के फल को लेकर तुमतो अपनी गति को पहुंचे परन्तु तुमारे विनाश से दुःखिता हम अनेक प्रकार की चिन्ता को भोगती हूं। तुमने हित को चाहने वाले विभीषण कुँभकर्ण मारीच और हमारे पिता आदि के बचन को न मान कर जो कर्म किया उसी का यह फल है। यह पीताम्बर के फर किरीट मुकुट आदि को उतार कर रुधिर लपेटे रणमें सोये के समान पृथिवी में पड़े हमसे क्यों नहीं बोलते हो। हे स्वामी! समर से उठो, नवीन तिरस्कार को पाकर क्यों पड़े हो और सुमाली दानव की कन्या से क्यों नहीं बोलते हो। आज इस लंकापुरी में सूर्य के किरण निर्भय प्रवेश करते हैं इनको वारण करो। जिन इन्द्र को तुमने अनेक अस्त्र शस्त्र से कई बार

रणमें प्रहार किया है वह इन्द्र तुमारी निरन्तर पूजा करते हैं तुम संग्राम में क्यों पड़े हो उठो । हे प्रभो ! तुमारी यह दशा देखकर भी जो हमारे हृदय हजारों टुकड़ा नहीं होजाते हैं इस लिये हमको धिक्कार है । तुमारे मरने पर शोक रूपीफल से पीड़ित वह तुमारी प्रिया मन्दोदरी रोदन करती है ऐसा कहकर शोक से आकुल मन्दोदरी मूर्छित हो रावण के हृदय पर इस प्रकार गिरी जैसे काले बद्दल को बिजुली आलिंगन किये हो । मन्दोदरी की यह दशा देखकर रावण की और स्त्रियों ने उसे उठाकर अनेक प्रकार से धैर्य देने लगी । हे देवी ! संसार की यही गति है इसमें चिन्ता व शोक करना उचित नहीं है, इसी प्रकार पुण्य के अनुसार सबकी दशा बदलती जाती है इसलिये इस संसार का सुख व गति चंचला है । इस प्रकार कहकर रावण की सब स्त्रियां एक साथ रोदन करने लगीं और मोती के उज्वल आंसू की धारा से अपने स्तन को स्नान कराई । स्त्रियों के करुणा युक्त विलाप को सुनकर श्री रामचन्द्रजी विभीषण से बोले, हे राक्षसेन्द्र ! इन स्त्रियों को धैर्य देओ और अपने भाई रावण का प्रेत कार्य करो श्रीरामचन्द्रजी के प्रिय बचन को सुनकर धर्म अर्थके सहित विचार पूर्वक विभीषण बोले, हे रामजी ! इस रावण ने धर्म को छोड़कर निर्दयता का कार्य किया और असत्य भाषण किया है तथा पराई स्त्री को धर्षण किया है इसलिये यह हमारे संस्कार करने योग्य नहीं है । यह भाई रूपी हमारा शत्रु था और यह अपने स्वभाव से सदा सबको पीड़ा दिया करता था । यह रावण हमारा ज्येष्ठ भ्राता व पूजा करने के योग्य पूज्य है तो भी इसका संस्कार हम नहीं कर सकते, क्यों कि सकल मनुष्य हमको नृशंस क्रूर व निर्दय कहैगे । परम प्रीति युक्त विभीषण के बचन को सुनकर धर्मात्मा रामचन्द्रजी विभीषण से बोले, हे विभीषण ! सुग्रीव के समान तुमको भी हमने राज्य का तिलक किया है और तुमारे प्रभाव से इस रावण को संग्राम में हमने पराजित किया है, इस लिये हम जो कहते हैं वह तुमको अवश्य कर-

णीय है। अधर्म में प्रवृत्त होना असत्य व कपट का व्यवहार करना स्वेच्छाचारी होना यह तुमारे राक्षस जाति का धर्म हीं है। परन्तु यह रावण अत्यन्त बलवान व शूरवीर था और समर में इन्द्रादिक देवतों को पराजय करने वाला था और महात्मा तथा तीनों लोकको त्रास देने वाला था। हमारा उसका बैर उसके मरण हीत कथा। अर्थात् उस बलवान रावण का बध करनाही हमारा प्रयोजन था। अब हमारा कार्य सिद्ध हुआ। उस रावण से जैसा तुमारा स्नेह था वैसा हमारा भी है, तुम इसके मत देहका अग्नि संस्कार करो, तुम भी इसके साथ का पूर्व बैर छोड़कर भ्राता के स्नेह से इसका धर्म युक्त संस्कार करो, तुमारा यश संसार में अचल रहेगा। श्री रामचन्द्रजी के बचन को सुनकर विभीषण ने मरे हुए रावण को अग्नि संस्कार करने में शीघ्र प्रस्तुत हुए। लंकापुरी में जाकर रावण के अग्निहोत्र की अग्नि को और यज्ञ भाग लेने वाली अग्निको लिवा आये। और दारुकाष्ठ चन्दन आदि अनेक काष्ठ को इकट्ठा किये इसके बाद अगर चन्दन कस्तूरी कर्पूर घृत आदि सुगन्धित सामग्रियों को इकट्ठा किये और मणि मोती आदि से शव शिविका को भूषित किये और माल्यवान आदि राक्षसों के सहित मृत देहकी क्रिया करन के लिये मणि मोती पीताम्बर गंधमाल्य आदि से रावण के मृतकायको भूषित करके स्वर्णमयी शिविका पर आरोपण किये और शंख भेरी मृदंग आदि बाजों को बजाते ब्राह्मण लोग वेद ध्वनि करते शिविका रोहियों के साथ चले, पताका आदि से चित्रित शिविका को लेकर विभीषण आदि राक्षस नगर से दक्षिण प्रज्वलित अग्निहोत्रकी अग्नि तथा गाडियों पर लदी सामग्री के सहित नगर से दक्षिण स्मसान मार्ग को चले, शिविका पर स्थित रावण की मृत देहको देखकर रावण की स्त्रियां रोदन करती हुई शिविका के पीछे शोकाकुल होकर दौड़ी परन्तु चलने का अभ्यास न होने के कारण दौड़ती हुई शिविका रोहियों के पीछे स्मसान तक आई। श्मशान पर आकर विभीषण आदि राक्षसों ने

शिविका को उतार पितृ मेध करने का प्रयत्न करने लगे। पहिले पद्मक वृक्ष की चिता को लगाकर उसपर कालेमृग चर्म को बिछाया, इसके बाद पितृयज्ञ करने के लिये दक्षिण पश्चिम की बेदी बनाकर उसमें यथा स्थान पर अग्नि को अलंकृत किये अर्थात् दक्षिण व पूर्व मार्ग में आहवनीय को उत्तर पश्चिम में गार्हपत्य को दक्षिण पश्चिम में दक्षिणाग्नि को स्थापन किये, और घृत से पूर्ण श्रुवाको स्कन्ध दशमे स्थापित किये और पैर के स्थान में उलापलको स्थापन किये, और योग्य स्थान पर दारुपात्र को रखकर यथोचित स्थान पर मुसल को रखे। महर्षियों के कहे नुसार शास्त्र विधिसे राक्षसेन्द्रको लिये पशु मेध्य पशुको बलि दिये, इसके बाद रावण को घृतसे स्नान कराकर गंधमाल्य भूषण वस्त्र आदि से अलंकृत करके चिता स्थान पर शयन कराये स्त्रियां चिता पर लज्या की वर्षा किया, विभीषण उस चिता पर अग्नि देकर स्नान किया और गिले वस्त्र से तिलसे मिश्रित जल को राक्षस व राक्षसियों ने दिया। इसके बाद उन स्त्रियों को विभीषण बार बार धैर्य देकर अपने नगर को लिवा आया, राक्षसेन्द्र विभीषण की अनुमति से वे स्त्रियां रनिवास में चली गईं, स्त्रियों को महल में जाने के बाद राक्षसेन्द्र विभीषण श्री रामचन्द्रजी के समीप आकर विनीत भावसे खड़ा हुवा। इधर रामचन्द्रजी लक्ष्मण सुग्रीव आदि बानरों के सहित अत्यन्त हर्षित हुए। रामचन्द्रजी अस्त्र शस्त्र व कवच को उतार कर इस प्रकार निर्मल होगये जैसे राहुको हट जाने से चन्द्रमा निर्मल होजाते हैं।

इति वाल्मीकियेरामायणेयुद्धकाण्डे त्रयोदशाधिकशततमःसर्गः ॥११३॥

युद्ध के कौतुको देखने के लिये विमान पर बैठकर आकाश में आये देवगण रावण के बधको देखकर श्री रामचन्द्रजी के गुणको गाते अपने अपने लोकको चले, और रामचन्द्रजी के पराक्रम से रावण के बधको, बानरों के युद्धको सुग्रीव के विचार को, लक्ष्मण के स्नेह को, हनूमान के पराक्रम को और सीता के पतिव्रतापनको आपस में कहते

हुए अपने लंकाको चलेगये, इसके बाद इन्द्र के सारथी मातली को भगवान रामचन्द्रजा ने सत्कार पूर्वक आज्ञा दिये कि अब इन्द्र के इस उत्तम रथ को देवलोक में लेजाओ। श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा से मातली ने रथको लेकर इन्द्र लोक को चले गये, तब परमहर्षित रामचन्द्रजी सुग्रीवके हृदय से लगाये और लक्ष्मण को प्रणाम करने से आशीर्वाद दिये। इसके उपरान्त अंगद हनुमान आदि वानरोंसे यथोचित पूर्वक सबसे मिल भेट किये। इसके अनन्तर शुभ लक्षणको धारण करने वाले समीप में खड़े लक्ष्मण जीसे श्रीरामचन्द्रजी बोले, हे लक्ष्मणजी! इस विभीषण को लंका में अभिषेक करो, इनके अनुराग व भक्ति तथा उपकारसे हम अत्यन्त प्रसन्न हैं। श्रीरामचन्द्रजी के बचन को अंगीकार करके लक्ष्मणजी सोने के चार घडा को लेकर वानरों को दिये और कहे कि विभीषण को अभिषेक करने के लिये चारो समुद्र के जलको आपलोग लेआवें। लक्ष्मणजी की आज्ञा से कामरूपी वानर शीघ्रही चारो समुद्र को ले आये, वानरों के एक एक घड़ाके जलको लेकर विभीषण को सुन्दर आसन पर बैठाये और उसी जलसे लंकाके मध्य में विभीषण को स्नान कराये, और शास्त्र विधि से राक्षस व वानर विभीषण के अभिषेक से प्रसन्न होकर रामचन्द्रजी की स्तुति करने लगे, लंकापुरी में विभीषण के अभिषेक को देखकर रावण के मन्त्री व विभीषण के मन्त्री सब प्रसन्न होगये, रामचन्द्रजी की आज्ञा से लंकापुरी की समस्त प्रजा दही अक्षत लाजा पुष्प आदि से विभीषण को सन्तुष्ट किया। विभीषण की आज्ञा से लंकापुरी के समस्त प्रजा अपने लियाये उपायन को लक्ष्मणजी के वास्ते निवेदना किया। इसके बाद प्रजाओं के सहित विभीषण श्रीरामचन्द्रजी के समीप में आकर श्रीरामचन्द्रजो की पूजा किये, विभीषण की पूजा को स्वीकार करके विभीषण को विदा किये, तब हनूमानजी श्री रामचन्द्रजी से बोले, हे महाराज! विभीषण को आज्ञा दीजिये कि लंकापुरी में जाकर मैथिली से आपकी लक्ष्मण व सुग्रीव अंगद आदि वानरों के सहित हमारी कुशलता को और

संग्राम में रावण के नाशको कहे, और उनका सन्देश जो कुछ हो आपसे कहे उस सन्देश के अनुसार जो कुछ कार्य हो वह करिये ॥ इतिवाल्मीकियेरामायणे युद्धकाण्डेचतुर्दशाधिकशततमः सर्गः ॥११४॥

श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा से राक्षसों से पूज्यमान हनुमान लंकापुरी में प्रवेश कर बिभीषण के समीप गये उनसे अनुमति लेकर अशोक बनिका में जाकर स्नानादि संस्कार से रहित होने के कारण दुर्बल वृक्ष के नीचे बैठो, सीताको देखे, उनके चारो ओर रावण की आज्ञा से नियुक्त राक्षसियां उनको घेरे खड़ी थी । हनूमान सीता जी के समीप पहुँचकर विनय पूर्वक प्रणाम किये । सीताजी महाबली हनूमान को आते देखकर प्रसन्नता के मारे मौन रहीं । हनूमानजी सीताजी की मुख कान्ति को प्रसन्न देखकर श्रीरामचन्द्रजी के कुशलता पूर्वक वचन को कहने लगे, हे देवी ! श्रीरामचन्द्रजी ने रावण को पराजय कर तुमसे कुशल कहा है कि लक्ष्मण व सुग्रीव अङ्गद आदि बानरों के सहित रामका कुशल है । सुग्रीव आदि बानरों की सेना के सहित और विभीषण व लक्ष्मण की सहायता से श्रीरामचन्द्रजी ने रावण का वध किया है। हे देवि ! यह तुमारे मनोरथ की सिद्धि को हमने तुमसे कहा है, तुमारे पतिव्रत के प्रभाव से श्रीरामचन्द्रजी ने इस समर में विजय को पाया है, अब तुम स्वस्थ होओ और अपने शोक सन्ताप से मुक्त होओ । क्योंकि महाशत्रु रावण को मारकर लंकापुरी को श्रीरामचन्द्रजी ने अपने वशमें कर लिया है । शत्रु से तुमारे निर्जन को सुनकर मैंने निद्रा का त्याग करके यह निश्चय प्रतिज्ञा किया कि शत्रु रावण को मारकर सीता को ले आवेंगे इस प्रतिज्ञा के बल से समुद्रमें सेतु को बाँधा है । रावण के गृह में बैठी तुम किसी प्रकार का भय न करना, जैसे बिभीषण ने लंका के ऐश्वर्य को लाभ किया है वैसे तुम भी अपने गृह में चलकर ऐश्वर्य का भोग करोगी इसलिये धैर्य की रक्षा करो । अब हमारा मन तुमारे दर्शन के लिये उत्कंठित होरहा । हे देवि ! श्रीरामचन्द्रजी इसप्रकार सन्देशा तुमसे कह

कर हर्ष के मारे आकुल होकर फिर कुछ कहने को समर्थ नहीं हुए। इस प्रकार बानरों में श्रेष्ठ हनूमान सीता जी से कहकर बोले, हेदेवि! तुम कौनसी चिंता में मग्न हो जो हमसे नहीं भाषण करती। इसप्रकर हनूमानजी के बचन को सुनकर आंसू को बहाती व्याकुलता की वाणी से सीताजी हनूमान से बोलीं, हेवानरोत्तम! तुमारे मुख से अपने पति के बिजय को सुनकर प्रसन्नता के मारे क्षणभर के लिये, हमारा मन मुग्ध होगया है। हेवानरश्रेष्ठ! केवल हर्ष हीसे हम मौन नहीं हैं किन्तु हमारे इस प्रिय सन्देश को सुनकर तुमारे देने के योग्य हमारेपास कोई ऐसी बस्तु नहीं है जो तुमको अभिनन्दन देवें इसकी चिंता से हमारा हृदय और भी मुग्ध है पृथिवी में ऐसी कोई उत्तम बस्तु नहीं हैं। जो इस उपकार के बदले तुमको देकर हम सुखी होंवें। हिरण्य सुवर्ण तथा अनेक प्रकार के धन व रत्न और तीनों लोक का राज्य भी तुमारे देने योग्य नहीं हैं फिर हम कौनसी वस्तु तुमको देकर हृदय को सन्तुष्ट करूं। श्री जानकी जी के इसप्रकार वचन को सुनकर हाथ जोड़े हनुमान बोले—हेदेबी। तुम स्वामी के हितको चहने वाली और उनके बिजयकी इच्छा करने वाली हो, तुमारे स्नेह युक्त बचन से हमको सन्तोष हुआ इसके अतिरिक्त और कोई बस्तु हमको सन्तोषजनक होगा। हनुमान के बचन को सुनकर जनकराजकी कन्या जानकी वायु पुत्र हनुमान से बोली, हे हनुमान! तुम अति लक्षण सम्पन्न हो बिद्या जानने वालों में श्रेष्ठ हो और आठ प्रकार के बुद्धि के गुण से युक्त हो और वायु के पुत्र अत्यन्त श्लाघनीय हो, मधुरता तुम्हारा भूषण है बलवानों में श्रेष्ठ युद्ध में उत्साही तेज से शत्रु को पराजय करने की सामर्थ्य को रखने वाले यह सब तुमारे में अनेक गुण हैं। तुमारे समान गुणवान जगत में दूसरा कोई नहीं है। सीताजी के मुख से अपनी बड़ाई को सुनकर हनूमान विह्वल नहीं हुए, वरन पहिले के समान बिनीत से सीताजी के सन्मुख खड़े हुए बोले, हे देवि! यदि वे सब राक्षसी तुमारा बहुत अपमान किया है व तुमको तर्जना दिया है

इसलिये हम इन सब राक्षसियों को नाश करने की इच्छा करता हूं। पति के विरह से तुम दुःखिता सीता को ये क्रूरा राक्षसी अत्यन्त पीड़ा दिया है और रावण की आज्ञा से अनेक कठोर बचन को कहा है इसलिये इन राक्षसियों को बध करने की हमारी इच्छा है, क्योंकि इन सबों ने तुमारा अत्यन्त विप्रिया किया है आप आज्ञा दीजिये ते।मुक्का व लात व भुजा से जंघा व घुटना तथा दांत व नख से केश पकड़ कर खींचने व नाक कान काटने से इन राक्षसियों के मारने की हमारी इच्छा है। हनुमानजी के बचन को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी के वियोग से कृपण और दीन पर दया करने वाली सीताजी विचार कर हनूमान से बोलीं, जो राजा के आश्रय से अपनी जीविका चलाते हैं वह राजा के शुभ अशुभ आज्ञा को पालन करते हैं। राजा की आज्ञा को पालन करने वाली इन दासियों पर क्रोध नहीं करना चाहिये। हमारा पूर्व जन्म का जो दुष्कृत था उसके अनुसार भाग्य के दोष से रावण की दासियों के द्वारा फल को पाया है। हेमहाबाहू ! इस प्रकार के हमारे दुःख में आपको चिन्ता नहीं करना चाहिये, दैवीगति बलवान है, सो भी काल के अनुसार इनके कठोर बचन को क्षमा किये हैं क्योंकि राक्षस ने जैसी आज्ञा देता था राक्षसी वैसी करती थीं, अब उस राक्षस को नाश होजाने पर राक्षसी तर्जना करने में नहीं समर्थ होंगीं। देखिये व्याघ्र के समीप से भालु ने बहेलिया की रक्षा किया कि इस पौराण की कथा को सुनो। एक बन में व्याघ्र भय से भागता हुआ कोई बहेलिया एक वृक्ष पर चढ़गया, उस पेड़पर भालू पहिले से बैठा था, वृक्षके नीचे व्याघ्र आकर भालू से कहा कि यह बहलिया हम सब बन जन्तुओं का शत्रु है इसलिये तुम इस बहलिया को नीचे गिराय दो व्याघ्र के बचन को सुनकर भालू ने कहा कि यह हमारी गोद में आया है अब इसको वृक्ष से नीच नहीं गिरा सकता, शरण में आये हुए को नाश करने में धर्मकी हानि होती है यह कहकर भालू वृक्षकी शाखा पर सोगया, तब व्याघ्र ने बहेलिये से कहा कि तुम इससोय हुए

भालू को वृक्ष से नीचे गिरा दो, व्याघ्र के वचन से मूढ़ बहेलिया वृक्ष से नीचे भालु को गिराने लगा। वृक्ष पर चढ़ने में भालुओं को अत्यन्त अभ्यास होता है वह भालू अपने अभ्यास बल से दूसरी शाखा पर चला गया। तब व्याघ्र ने फिर भालु से कहा कि इस बहेलिये ने तुमारे साथ अपराध किया है तुम इस अपराधी बहेलिया को अवश्य नीचे गिरादो, तब फिर भालू ने कहा कि बहुत अपराध करने पर भी इस व्याधा को तुमारे वास्ते हम नहीं देवेंगे, व्याघ्र से ऐसा कहकर भालू ने उस बहेलिया की रक्षा किया। दूसरे को अपराध करने पर भी पण्डित पुरुष उस अपराधी का अपकार नहीं करते वरन् उपकारही करते हैं। पाप करने वाले पर भी दया करना चाहिये, राक्षसों को पराई हिंसा करना स्वभावही है इसलिये इनका बध नहीं करना चाहिये, वक्ताओं में श्रेष्ठ हनुमानजी सीताजी के धर्म युक्त वचन को सुनकर फिर भी सीताजी से बोले, भगवति! अब मैं श्रीरामचन्द्रजी के पास जाता हूं, हम से कुछ सन्देश कहिये जिसमें हम जाकर श्रीरामजी से निवेदन करें। हनुमानजी के वचन को सुनकर जानकी ने कहा कि हमारा वही सन्देस है कि भक्त वत्सल श्रीरामचन्द्रजी के मुख कमल को देखना चाहती हूं। सीताजी के वचन से हर्षित हनुमान फिर भी सीताजी से बोले—हेभगवति! पूर्ण चन्द्र के समान कमल मुख श्रीराम चन्द्रजी का लक्ष्मण के सहित देखोगी। यह कहकर साक्षात् लक्ष्मी के समान विराजमान सीताजी से बिदा होकर हनुमान सीताजी के प्रति वचन को लेकर श्रीरामचन्द्रजी के पास आये और विनीत भाव से सीताजी के वृतान्त को कह सुनाये॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे पंचदशाधिकशततमः सर्गः॥११५॥

हनुमानजी सीताजी के सन्देश को लेकर श्रीरामचन्द्रजी को प्रणाम किये और सीताजी के वृतान्त को कहने लगे, हेरामजी! जिसके कारण सेतु बँधा और रावण का वध आदि हुआ, उस उद्योग के फल का उदय हुआ कि शोक से पीड़ित जानकी आपके दर्शन

की अभिलाषा करती हैं। शोक से पीड़ित आंसू को गिराती जानकी युद्ध से आप के विजय को सुनकर तुमारे दर्शन की अभिलाषा करती हैं। हमको पूर्व सन्देश कहने व सुनने को उन्होने अपना जन जानकर अपने मनोरथ को कहा है। हनुमान के बचन को सुनकर धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी चिन्ता मग्न होकर सोचने लगे कि पर गृह के निवास से लोक में महान् अपवाद हुआ है, तो लोक के भय से सीता को नहीं ग्रहण करना चाहिये और निर्दोष सीता को परित्याग करने में भी महान् दोष है इसलिये क्या करना चाहिये इस प्रकार की चिन्ता से श्रीरामजी ध्याना व स्थित होगये। इसके बाद श्रीरामचन्द्रजी लंबी श्वांस को लेकर पृथिवी को देखते हुए समीप में खड़े विभीषण से बोले दिव्य शरीर वाली जानकी को सिर सहित स्नान करने के उपरान्त दिव्य भूषण वस्त्र से भूषित सीता को शीघ्र हमारे समीप ले आओ। श्रीरामचन्द्रजी के इस प्रकार बचन को सुनकर शीघ्रता से विभीषण रनिवास में जाकर अपनी स्त्री से श्रीरामजी के सन्देश को कहकर अपने स्त्री के सहित अशोक बनिका में विराजमान श्रीजानकीजी के समीप गया और सीताजी को देख कर साष्टाङ्ग दण्डवत किया और हाथ जोड़ कर सीता जी से बोले—हेवैदेही! दिव्य स्नान व भूषण वस्त्र से भूषित होकर इस रथ पर बैठो तुमारे पति श्रीरामचन्द्रजी तुमको देखना चाहते हैं। विभीषण के बचन से सीताजी ने उत्तर दिया कि हेराक्षसेश्वर! हम बिना स्नान किये ही स्वामी का दर्शन करूंगी सीताजी के बचन से विभीषण फिर बोले, श्रीरामचन्द्रजी ने जैसी आज्ञा दिया है वह तुमको पालन करना चाहिये। पतिव्रता सीता श्रीरामजी की अनुमति को अंगीकार करके स्नान करने के उपरान्त भूषण वस्त्र को धारण करके शिविका पर बैठी, विभीषण की आज्ञा से राक्षसों ने शिविका को उठा कर श्रीरामचन्द्रजी के समीप ले चले, सीताजी के आगमन से गुप्त प्रसन्न श्रीराम ध्यान में मग्न होगये और सोचने लगे कि इसके उपरान्त क्या कहना और क्या करना चाहिये। तब प्रणाम

करते हुए प्रसन्नता पूर्वक विभीषण आकर सीताजी को निवेदन किये। चिरकाल तक राक्षस के गृह में निवास की हुई सीता के आगमन को सुनकर शत्रु को नाश करने वाले श्रीरामचन्द्रजी शोष हर्ष और दीनता से युक्त होगये। रोष उनको यह हुआ कि यही सीता इन सब अनर्थ का मूल है इसी के कारण हमारे भाई व मित्रों को दुःख उठाना पड़ा है। हर्ष उनको हुआ कि चिरकाल के विरह से सन्तप्त हमको आज सीता का दर्शन होगा। और दीनता उनको यह हुई कि हमारे मिलने की प्रतीक्षा से यह जानकी राक्षस के गृह में अनेक प्रकार के दुःख को भोगा है। इसके उपरान्त शिविका पर आरूढ़ सीता को देखकर रूढ़े मन से विभीषण से बोले—हे राक्षसाधिपति! हे सौम्य! नित्य हमारे विजय को चाहने वाले हो, हमारे समीप में जानकी शीघ्र आवें। श्रीरामजी के बचन को सुनकर राक्षसों के राजा विभीषण और जितने राक्षस व बानर रामचन्द्रजी के सभा में बैठे थे उन लोगों को उत्सारण (उठादेना) करना आरंभ किये टोपी व पगड़ी को धारण वेत की छड़ी को हाथ में लिये जितने सैनिक योधा श्रीरामजी की सभा में बैठे थे वे सब विभीषण की आज्ञा से एका एक उठ कर दूर पर चलने की इच्छा किये। इसके बाद जितने बानर व भालू बैठे थे उनको भी सभासे उठने की अनुमति विभीषणने किया। विभीषणकी आज्ञा से समस्त बानर भालू इस प्रकार झासे उठे की उनके उठने का एक महा शब्द हुआ। जैसे वायु के वेग से शब्द करता हुआ समुद्र का तरंग अधिक बढ़ता है उन लोगों के उत्साह को देखकर विभीषण पर श्रीरामजीको क्रोध हुआ कि यह राक्षसेन्द्र विना हमारी आज्ञा इनलोगों को उत्सारण करता है, इस प्रकार अमर्षसे इनलोगों को अपना भक्त जानकर फिरभी यथा स्थान पर सबको बैठने की आज्ञा दिजिये और क्रोध युक्त उपालंभ पूर्वक विभीषण से बोले,—हे राक्षसेन्द्र! विना हमारी आज्ञा इन लोगों का उत्सारण क्यों करते हो, इन लोगों को लौटाकर सभास्थान पर बैठाओ, यह लोग तो अपने जन हैं, हे राक्षसेन्द्र! घर वस्त्र चहारदीवार और

तंबूआ और राज सत्कार यह सब स्त्रियों के लिये आवरण (परदा) नहीं है, केवल स्त्रियों का सच्चरित्रही उनके लिये आवरण परदा है। फिरभी विपत्ति में दुःख में युद्ध व स्वयंवर में तथा विवाह व यज्ञ में लोक को देखने से स्त्रियां दूषित नहीं होती हैं। सो यह सीता विपत्ति व पीड़ा से समन्वित है, देखने से इसमें दोष नहीं होगा विशेष करके हमारे समीप और भी दोष नहीं। यह सीता अब शिविका से उतर कर पैदल हमारे समीप तक आवे और हमारे समीप में बैठे यह वानरगण इस वैदेही का दर्शन करें। श्रीरामचन्द्रजी के वचन को सुनकर विचार पूर्वक विभीषण सीता को शिविका से उतार कर रामचन्द्रजी के अनुमति के अनुसार पैदल वहां तक ले आने का उद्योग किये, सीताजी लज्जा में लीन होकर अपने अनेक अंग को छिपाती हुई संकोच से पैदल श्रीरामजी के समीप तक आईं और विभीषण दास के समान सीताजी के पीछे सीताजी की रक्षा करता था। स्त्रियों के पति देवता हैं इसलिये विस्मय हर्ष व स्नेह से श्रीरामजी के कमल मुख को देखने लगीं। बहुत दिन के दर्शन के विरह से पीडित सीता श्रीरामचन्द्रजी के कमल मुख को देखकर पूर्ण चन्द्रमा के समान निर्मल मुख कान्ति को स्मरण किया॥

इति बाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे षोड़शधिकशतमः सर्गः ॥११६॥

सीता को प्रसन्न व विनीत भाव से अपने बगल में बैठी देखकर श्रीरामचन्द्रजी अपने हृदय के भाव को प्रगट करने के लिये सीताजी से बोले,—हे भद्रे! तुमको निर्जित करने वाले शत्रु को समर में नाश करके फिरभी हमने अपने पुरुषार्थ से तुमको लाभ किया है। शत्रु ने तुम्हारे प्रधर्षणा से जो हमारा अवमान किया था वह क्रोध उसके नाश होने से शान्त होगया। आज हमारे पराक्रम को लोगों देखा है और हमारा उद्योग भी आजही सफल हुआ, तथा हमारी प्रतिज्ञा भी आजही पुरी हुई। तुम हमसे अलग होकर चंचल स्वभाव से राक्षस से हरी गई यह दुःख दैव से तुमको मिला, परन्तु हमने मनुष्य

के करने योग्य पराक्रम से उस दुःख को हमने हटाया है कौन ऐसा पुरुष है जो अपने अवमान को तेज से दूर करता। समुद का लंघन लंकापुरी का मर्दन और हनुमान के श्लाघनीय कर्म सब आजही सफल हुए हैं। युद्ध में पराक्रम करते और युद्ध को विजय करने का विचार करते सेना सहित सुग्रीव का परिश्रम भी आजही सुफल हुआ। अपने दुष्ट भ्राता को छोड़कर जो स्वयं हमारे पक्ष को ग्रहण किया ऐसे विभीषण का भी उद्योग आजही सफल हुआ। इसप्रकार श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर सीताजी का मन अत्यन्त हर्षित हुआ, उनके नयन से हर्ष के आसू बहने लगे हृदयप्रिया सीता को समीप में देखते हुये श्रीरामजी का हृदय मलीन व चिन्तित होगया। सीताजी के स्नेह व प्रेम से तो रामजी अंगीकार किये। परन्तु लोग निन्दा के भय से सीता को त्याग करने का भी विचार करने लगे। बानर व राक्षसों के समाज में कमल नयनी सीताजी से श्रीरामजी कहने लगे, कि तुमको धर्षण करने के प्रति जो कर्तव्य था वह प्रायश्चित्त हमने रावण को नाश करके लिया। जीवलोक को पीड़ा देने वाले इल्वल व वातापी को भगवान् अगस्त्यमुनि ने नाश किया, उसीतरह जीव लोक को त्रास देने वाले रावण को संग्राम में हमने नाश किया। रण में हमारा जो कुछ परिश्रम है वह तुमको विदित है परन्तु मित्रों सहित वह पराक्रम मैंने तुमारे लिये नहीं किया है, यह परिश्रम व उद्योग इसलिये किया है, कि क्षत्रिय धर्म को पालन करने वाले और दुष्टका निग्रह और भक्तोंकी रक्षा करनेवाले रामने अपने समय में पराई स्त्री को हरण करने वाले को दण्ड नहीं दे सके। इसलिये मित्रों के सहित यह घोर युद्ध कर के अपने कुल कलंक को तथा अपने शरीर के दोष की शुद्धि कियाहै। जैसे नेत्र रोगी को दीपक से विरोध होता है वैसे दुराचारी रावण के कर्म से हमारा विरोध हुआ। हेजानकी! अब जिस देश में जिस स्थान में तुमको जानेकी अभिलाषा हो तुम वहां जाओ, हमारे लायक तुम नहीं हो। कौन ऐसा कुलीन पुरुष है जो

चिरकाल तक दूसरे के गृह में बास की हुई स्त्री को लोभ से पुनः अंगीकार करे तुम रावण के काम से युक्त दृष्टि से देखी गई हो इसलिये विष से मिले हुए अन्न के समान तुमारा त्याग करना चाहिये। हम जिस कारण शत्रु से निर्जित हुए उसको उपलाभ किये, अब तुमारी संगति हमारे योग्य नहीं है इस कारण जहां तुमारी इच्छा वहां जाओ। हम यह अपने निश्चित बुद्धि से कहते हैं कि जहां तुमारी इच्छा हो तुम वहां जाओ। लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न सुग्रीव बिभीषण आदि के यहां जहां तुमको सुखहो वहां मन को प्रवेश करो। अथवा अपने पिता माता के गृह चली जाओ। जैसे हाथी से तोड़ी गई लता विकर्ण होजाती है वैसे रामचन्द्रजी के बचन से मलीन सीता रोदन करने लगीं॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे सप्तदशाधिकशततमः सर्गः ॥११७॥

रोमाञ्च होने वाले परुष बचन को श्रीरामचन्द्रजी के मुख से सुनकर सीता अत्यन्त पीड़ित हो गईं और पति के कठोर बचन से लज्जा पूर्वक सिर को नीचा किये राम के बचन रूपीबाण से आंसू की धारा छोड़ने लगीं और धीरे २ श्रीरामचंद्रजी से बोलीं हेवीर! सुनने में कटु अयोग्य यह बचन हमको क्यों कहते हो हम अपने सच्चरित्र की प्रतिज्ञा से यह कहती हूं कि आप के अतिरिक्त हमारा दूसरे में प्रेम नहीं है। इसका विश्वास मानिये। आप अपने से अलग होने के कारण जो हमको दुष्ट स्वभाव वाली जानते हैं यह अनुचित है। आप इस शंका को छोड़कर हमारी परीक्षा कर लीजिये। जो हमारी स्वाधीनता को प्राप्त होने में रावण ने हमारे अंग को स्पर्श किया उस समय हमको इच्छा पूर्वकता नहीं थी और हठात् रावण के स्पर्श में दैव का अपराध है उसमें हमारा अपराध नहीं जानना चाहिये। पराये आधीन में पड़ने से भी हमारा हृदय तुमारेही आधीन था हेभगवन्! जब आप हनुमान को हमको खोजने के वास्ते भेजे थे, तो फिर हनुमान से हमारे

वृत्तान्त को सुनकर आपने क्यों नहीं हमारा त्याग किये यदि इस बानर के प्रत्यक्ष में हमको त्याग करना चाहते हो तो मैं भी अपने जीवन को त्याग करूंगी और आपने रावण के युद्ध में जो परिश्रम किये वह व्यर्थ है और आपके मित्रों ने भी जो कुछ उद्योग किया है वह विफल है हे नृपशार्दूल ! यह रोष आपका एक प्राकृत स्त्री के समान है वैदेही आदि व्यवहार हमारा जनक की यज्ञ भूमि से संबन्ध रखता है जनक से उत्पत्ति को नहीं कहता, क्योंकि हमारी उत्पत्ति पृथिवी से है जनक की प्राकृत स्त्री से नहीं है सो हमारे अनेक चरित्र को आपने नहीं विचार कर इसप्रकार कठोर बचन कहते हैं बाल्यकाल में जो आपने हमारा पाणिग्रहण किया है उसका भी प्रमाण नहीं रहा और हमारी भक्ति व शील इन सब को आपने विस्मरण करदिया है इसप्रकार बोलती और रोदन करती सीता ध्यान युक्त होकर लक्ष्मणजी से बोलीं, हेलक्ष्मण ! इस दुःख औषधी हमारे लिये आप काष्ट की एक चिता बनाइये और इस मिथ्या पवाद से हम अपने जीवन को नष्ट करूंगी। जो सभा के मध्य में हमारे स्वामी हमारा त्याग करते हैं तो क्षमा की गति से हम अग्नि में प्रवेश करना चाहती हूं। सीताजी के बचन को सुनकर क्रोधित लक्ष्मण श्रीरामजी के मुख को देखने लगे फिर रामचंद्रजी की इच्छा इस प्रकार देखकर लक्ष्मणजी वहां काष्ठ की चिता बनाये, चिता निर्माण होने पर सीताजीने उठकर श्रीरामचन्द्रजीकी प्रदिक्षणा किये और अग्नि के समीप चलीं गईं वहां खड़ी होकर ब्राह्मण देवता आदि को प्रणाम करके अग्नि से इसप्रकार कहने लगीं कि जो हमारा हृदय नित्य श्रीरामचंद्रजी के चरण कमलमें लीन रहता हो तो हेलोक के साक्षी अग्नि देवता तुम हमारी रक्षा करना। हम शुद्ध चरित्र से रहने वाली स्त्री को श्रीरामचंद्रजी दुष्टा जानते हैं तो लोक के साक्षी तुम हमारी रक्षा करो, यह कहती हुई सीताजी अग्नि की प्रदक्षिणा किया और निशंक हो उस जलती हुई आग्नि में प्रवेश

किया । सीताजीके अग्नि प्रवेशको देखकर सभामें महान् कोलाहल मचा और वहांके आबाल वृद्ध वनिता सभी आकुल हो गये । अग्निमें प्रवेश करते समें सीता जी के स्वरूप स्वर्णके समान उज्वल हो गये यज्ञकी पूर्णाहुति के समान सीता को अग्नि में प्रवेश करते ऋषि मुनी देवता गंधर्व आदि देख कर हाहाकार किए । लङ्कापुरी की समस्त स्त्रियां सीताजी को अग्नि में प्रवेश करते देख स्नेह से रोदन करने लगीं । जैसे स्वर्ग से भ्रष्ट होकर देवता क पतन नर में होत वैसे सीता जी के प्रतिज्ञा पूर्वक अग्नि प्रवेश कर तीनों लोक के निवासी प्राणियों ने देखा और सभा में बैठे राक्षस व बानर तो बार बार बिलाप करने लगे । इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे अष्टादशाधिकशततमः सर्गः ॥११२

सभा के हाहाकार व विलाप को सुनकर धर्मात्मा रामचन्द्र जी आंसू से आकुल नयन को क्षण भर रोक लिये, इतने में कुबेर यम पितर वरुण इन्द्र श्रीशंकरजी तथा जगत् की उत्पत्ती करने वाले साक्षात ब्रह्मा जी अपने अपने बिमान पर बैठकर लंकापुरी श्रीरामचन्द्रजी के समीप में आये और सभा में हाथ उठा कर बोले कि सब लोक के कर्ता धर्ता व हर्ता अर्थात उत्पत्ति पालन व नाश करने वाले श्रीरामजी हैं सो अग्नि में प्रवेश करती हुई सीता की क्या उपेक्षा करते हो । हे देवगण में श्रेष्ठ रामजी ! अपने स्वरूप को क्यों भूलते हो क्या तुम प्रकृत के समान चिन्ता व व्याकुलता को धारण करते हो । इन्द्रादि लोकपाल के इस प्रकार बचन को सुनकर मनुष्य लोक के स्वामी श्री रामचन्द्रजी बोले कि हम अपने को दशरथ का पुत्र मनुष्य राम जानते हैं । श्रीरामजी के इस प्रकार बचन को सुनकर देवतों से ब्रह्मा जी बोले, तुम लोग हमारे बचन को सुनो । यह साक्षात नारायण हैं इनके विराट रूप में सकल चराचर जीव वर्तमान हैं यह शंख चक्र गदा पद्म को धारण करने वाले हैं भूत भविष्य वर्तमान में साधुओं को पीड़ा देने वाले जितने दुष्ट उत्पन्न होते हैं उनके नियन्ता हैं । अक्षर के आदि अन्त मध्यमें जो सत्य स्वरूप ब्रह्म है वह आपहीं हैं सकल स्थावर

ने जंगमस्वरूप प्राणियों के साक्षात् धर्म हैं दुष्ट का निग्रह और उत्पत्ति सज्जनों पर अनुग्रह करना यह सदा इनके अधीन है। शरीर के मध्य में इन्द्रियों के स्वामी हैं तीनों लोक को पालन व नाश करने वाले हैं, पुरुषों में श्रेष्ठ हैं, सर्वत्र व्यापक परमात्मा इनके रोम रोम में हजारों ब्रह्माण्ड बंधे हैं, हम सब इनकी आज्ञा से कार्य करते हैं। तीनो लोक की रक्षा कर अपने मस्तक पर लिये हो, तुम्हारे आधार पर तीनों लोक का स्थित है। हेरामजी! हम तुम्हारे हृदय हैं सरस्वती तुम्हारी जिह्वा है, देवता तुम्हारे शरीर हैं, यह वृक्ष व लता आदि तुमारे रोम हैं, निमेष रात्रि है उनमेष तुमारा दिन है। अग्नि आपके कोप हैं चन्द्रमा आपकी प्रसन्नता हैं, आपने इन्द्र के उपकार के लिये अपने तीन पग में तीनों लोकको नाप दैत्यों के राजा बलिको भी बांध लिये और इन्द्रको स्वर्ग का राज्य दिये, सीता जी साक्षात लक्ष्मी हैं आप स्वयं विष्णु हैं, केवल रावण को नाश करने के लिये मनुष्य तनको धारण किये हैं, आपने इस दुष्ट रावणको मारकर देवतों का दुःख छुड़ाया है। हे देव! आपमें अमोघ वीर्य है आपका पराक्रम कभी निष्फल नहीं हो सकता। आपके दर्शन व आपकी स्तुति अमोघ फल को देने वाली है। आपकी भक्ति करने वाले पुरुष पृथिवी में अमोघ पुण्य को लाभ करैंगे। हे भगवन्! जो निश्चय मन से आपकी भक्ति करैंगे वह संपूर्ण सुख को लाभ करैंगे। इस पुरातन इतिहासको जो कहैंगे व सुनैंगे उनका पराजय नहीं होगा।

इति श्रीवाल्मीकीये रामायणे युद्ध काण्डे एकोनविंशाधिकशततमःसर्गः ११९

ब्रह्माजी के इस प्रकार स्तुति को सुनकर अग्नि देवता सीताजी को गोदमें लिये चिता से बाहर आये और सूर्य तथा अग्नि के समान दिव्य रूपको धारण करने वाली रक्तोवस्त्र व भूषण माल्य आदिको धारण किये साक्षात लक्ष्मी के समान सीताजी को अग्निदेवताने श्रीरामचन्द्रजी को दिया और रामजी से कहा कि हेरामजी! यह सीता

निर्दोष हैं इनमें कोई पाप नहीं है इनको ग्रहण करो । सीता मन वचन कर्म से तथा बुद्धि और इन्द्रियों से दूसरे की चेष्टा नहीं किये इस लिए सीताको अंगीकार करो । अपने बलके अभिमान से रावण ने बन में अकेली सीताको लंकापुरी में रक्षित किया और राक्षसियाँ सदा इन को त्रास देकर रावण के लिये प्रेरणा करती और अनेक भांति से तर्जना देतीं तो भी इनका मन सदा तुमारे मेलीन रहता था, यह सीता अपने विशुद्ध भाव से निष्पाप हैं तुम इनको ग्रहण करो । इनके विषय में कोई सन्देह नहीं है तुम हमारी आज्ञा से सीताजीको अंगीकार करो । प्रसन्न मन राम इस प्रकार अग्नि देवता के वचन को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी क्षण भर ध्यान युक्त हो बोले, यह सीता लोक में अवश्य पावन के योग्य हैं, परन्तु रावण के अन्तःपुर में जो इनका चिरकालीन वास है इससे लोक निन्दा के भय से अज्ञानी दशरथ का पुत्र राम अग्नि में सीताको शुद्ध किया है । यह सीता हमारे हृदय के अनुकूल सदा रहती हैं यह हमको भी विख्यात है परन्तु विना शुद्ध किये सीताको ग्रहण करने में लोक यही कहते कि चिरकाल तक सीता ने राक्षस के गृहमें वास किया है सो रामचन्द्रने बिना शुद्ध किये सीता को ग्रहण किया है । इन्होंने अपने पतिव्रत के तेज से अपनी रक्षा किया था, इनके तेजके प्रभाव से इनकी मर्याद को दुरात्मा रावण नष्ट नहीं कर सका । प्रज्वलित आगकी शिखा के समान मैथिली को दुष्टात्मा रावण मन से भी प्रधर्षण नहीं कर सका । यह जानकी तीनो लोक व तीनों काल में पवित्र हैं इनको हम अपने हृदय से अलग नहीं चाहते जैसे सूर्य के साथ प्रभा आत्मवान के संग कीर्ति और चन्द्रमा के साथ रोहिणी रहती है, वैसे यह सीता सब अवस्था में हमारे साथ रहती हैं । हे देवगण ! लोकमान्य आप लोगों का वचन हमको अवश्य पालनीय हैं, सीता को ग्रहण करने के विषय में जो अनुरोध आप लोगों ने किया है वह हम अव-

श्य करैंगे। इस प्रकार देवतों से कह कर श्रीरामचंद्रजी सीता के सहित सुखी हुए।

इति श्रीवाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डेविंशोत्तरशततमः सर्गः॥१२०॥

श्रीरामचन्द्रजी के सुन्दर वचन को सुनकर शुभतरवाणी को शिवजी बोले, हे कमल नयन महाबाहु परंतप! बड़े हर्ष की बात है आपने संसार के दुःख को मोचन किया, रावण के भय से जो अन्धकार संसार में छाये था उसको रामरूपी सूर्य ने नष्ट किया, अब आप अयोध्या में जाकर भरत व कौशल्या केकयी तथा लक्ष्मण की माता सुमित्रा को सन्तुष्ट करो। और अयोध्यापुरी के राज्य को स्वीकार कर मित्रों को आनन्द देओ और अपने निर्मल यश से इक्ष्वाकुवंश की स्थापना करो और अश्वमेध यज्ञ करके उत्तम यशको लाभ करो तथा ब्राह्मणों को धनरत्न को दक्षिण देकर ब्रह्म लोक में चले आये देखो, तुमारे पिता महाराज दशरथ यह विमान पर इन्द्रके बराबर बैठे हैं, लक्ष्मणके सहित तुम इनको प्रणाम करो। महादेवके वचन को सुनते ही लक्ष्मणके सहित श्रीरामचन्द्रजी विमान पर बैठे पिता को प्रणाम करके सुन्दर वस्त्र को धारण किये देवता के समान विमान पर बैठे महाराज का दर्शन किये, श्रीरामचन्द्र लक्ष्मणजी को देखते भरमें स्नेह से युक्त महाराज दशरथ राम लक्ष्मण को अपने हृदय से लगाये और सुन्दर आसन पर बैठकर कहने लगे कि हे पुत्र! तुमारे विरह मेंयह स्वर्ग और देवतों के सहवास का हमको कुछ भी सुख नहीं हुआ। तुमारे वनवास के लिये केकयी ने जो वचन हमसे कहा वे वचन हमारे हृदय में पीड़ा देते थे, परन्तु लक्ष्मण सहित तुमको कुशल से देखकर आज हमारा वह दुःख इसप्रकार छूटा है जैसे राहु के मुखसे सूर्य से सूर्य छूटते हैं। जैसे कोहल ब्राह्मण को अष्टावक्र ने तारा, वैसे अपने शुभ चरित्र से तुमने भी हमको तारदिया। हे सुरेश्वर! अब हम जान गये कि रावण को नाश करने के लिये आपने अपने स्वरूप को छिपाकर हमारे यहां अवतार लिये हो, हे पुरुषोत्तम!

आपके भेदको ब्रह्मादि देवता नही जानने सकते हैं हे रामजी ! अब आप घरको जाओ। तुमारे जाने से कौशल्या पुत्रजीविन होगा। तुमको अयोध्यापुरी में जाने से सकल अयोध्यावासी अपने दुःख से युक्त जियेंगे। हे रामजी ! धर्मचारी भरत तुमारे आगमन की अभिलाषा से तुमारी प्रतीक्षा करते हैं, हमारी प्रसन्नता के वास्ते सीता व लक्ष्मण के सहित चौदह वर्ष पर्यन्त आपने वनवास किये। और रावण को रणमें मार कर देवताओं के दुःखको छुड़ाये और अपनी प्रतिज्ञा को पूरी किये। अब वनवास से लौटकर अयोध्या की सुधि लीजिये। और अपने भाइयों के सहित राज्य को लाभ करके दीर्घायुको प्राप्त हूजिये। महाराज दशरथ के इस प्रकार वचन को सुनकर हाथजोड़े श्रीरामचन्द्रजी बोले, हे धर्मज्ञ ! केकयी व भरत पर प्रसन्न हूजिये, और जो आपने केकयी को शाप दिये हैं उसको क्षमा करिये, रामजी के वचन से दशरथजी ने केकयी के शापको क्षमा करके लक्ष्मणको हृदय से लगालिये और प्रेमपूर्वक बोले, हे धर्मज्ञ ! श्रीरामजी की सेवा से पृथिवी में धर्म यश और प्रतिष्ठा तुमको मिले, बाद स्वर्ग की प्राप्ति होवे। सुमित्रा को आनन्द देनेवाले लक्ष्मण ! तुमने रामजी की सेवा किया है तुम को अनुत्तम फल मिलेगा, देखो पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी को इन्द्रादि देवता ऋषिमुनि प्रणाम व पूजा करते हैं। इनकी सेवा करने से तुमको सम्पूर्ण धर्म का फल मिला। लक्ष्मणजी को समझा कर हाथ जोड़े खड़ी राम पत्नी सीताजी पुत्री ! ऐसा कहकर धीरे धीरे सीताजी से कहने लगे। रामचन्द्रजी ने जो तुमारी विशुद्धि अग्नि में किया है इसमें क्रोधित नहीं होना चाहिये, यह दुष्कार वचन रामजी ने जो तुमको कहा है उसको चित्तमें न रख कर पहिले के समान अनुराग उनमें करना, हम तुमारे परम गुरु हैं हमारा वचन तुमको अवश्य पालन करना चाहिये। इस प्रकार सीता व रामचन्द्र तथा लक्ष्मणजी को समझाकर महाराज दशरथ विमान पर बैठकर इन्द्रलोक को चलेगये॥

इति वाल्मीकीयेरामायणेयुद्धकाण्डे एकविंशाधिकशततमः सर्ग॥१२१॥

महाराज दशरथ को चले जाने के बाद देवलोक के राजा इन्द्र हाथ जोड़ कर श्रीरामजी से बोले, हे पुरुषश्रेष्ठ रामजी ! उपकार करने से हमलोगों को दर्शन तुमको अमोघ है. अब हम आपका प्रत्युपकार करना चाहते हैं, जिससे आप भी चरितार्थ होजावें, हे पुरुषश्रेठ हमारा मन आपसे प्रसन्न है, जो आपको अभिलाषा हो वह वरदान मागे, प्रसन्नता युक्त इन्द्र के बचन से हर्षित श्रीरामजी बोले, हे विबुधेश्वर ? यदि आप हमसे प्रसन्न हैं तो हमारे बचन को सत्य करिये। कि हमारे कार्य की सिद्धि के लिये रावण के युद्ध में जिन बानरों ने अपना देह त्याग किया है वे सब बानर पुनर्जीवन को लाभ करके उठजावें, हमारे कार्य में जिन बानरोने अपना पुत्र स्त्री गृह आदिको छोड कर इस समर में जीवन दान दिये हैं उन बानरों को उनके परिवार वाले देखें, आपकी कृपा से हमारा युद्ध समाप्त हुआ अब जो सेना वाले बानर मरे हैं उनसे बानरी सेना में मृत्युकी गणना न होवे, बल पौरुष से सपन्न जो बानर व लंगूर हैं उनको निरोग और निर्गुण हम देखना चाहते हैं। और उन लोगों की रक्षा के लिये विना समय के भी पुष्प फल मूल और नदीका जल वहां जावे जहां वे बानर भालू व लंगूर पड़े हैं। श्रीरामचन्द्रजी के बचन को सुनकर प्रीति पूर्वक इन्द्र बोले, हे रामजी ! आपने तो बडा कठिन वरदान मागे हैं, परन्तु हम अपने बचन को दोबार नहीं कह सकते इस वास्ते आपके कहे नुसार मारे हुए बानर भालू जीवित होजायँगे। जैसे सोया हुआ मनुष्य निद्रा को त्यागकर जागृत होजाता है वैसे तुमारे युद्धमें मरे हुए बानर भालू व लंगूर आदि जीवनको लाभ करके उठजायगे। और उनलोगों के रक्षा के लिये समर में गिरे हुए बाण पुष्प फल व जल होकर प्राप्त होंगे। इन्द्र के बचन से घायल व मृतक बानर भालू पहिले के समान सुन्दर शरीर उठ खड़े हुए और आनन्द पूर्वक अपनी सेनामें आनमिले, यह चरित्र देखकर सुग्रीव हनूमान अंगद जांबवान आदि बानर भालू विस्मित होंगये। और लक्ष्मण सीता सहित श्रीरामचन्द्रजी की शोभा

को देवगण दर्शन करके स्तुति किये और हर्षित हो श्रीरामजी से बोले, कि हे राजन् ! अब बानरों को आज्ञा दीजिये यह लोग अपने स्थान को जावें और यशस्विनी मैथिली को धैर्य और सन्तोष दीजिये, तथा अयोध्या में जाकर आपके शोक से पीडित भरत को सुखी कीजिय और शत्रुघ्न सहित कौशल्या केकयी व सुमित्रा को प्रणाम कीजिये और अभिषेक लेकर पुरवासियों को सुख दीजिये । इस प्रकार रामचन्द्र व लक्ष्मणजी से कहकर देवराज इन्द्र अपने विमान पर बैठ कर देवतों के सहित देवलोक को चले; लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी देवताओंके प्रणाम करके विदा किये। राम लक्ष्मणसे पालित यशस्विनी बानरी सेना पृथिवी में चारो तरफ व्याप्त होगई जैसे रात्रिकाल में चन्द्रमा का प्रकाश व्याप्त होजाता है ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे द्वाविंशाधिक शप्ततमःसर्गः १२२

इसके उपरान्त विभीषण श्रीरामजी के समीप आकर प्रार्थना किया कि हेभगवन् ! आप स्नान करके चन्नन माल्य और अनेक प्रकार के भूषण वस्त्र व भोजन को स्वीकार कीजिये, इस प्रकार विभीषण के वचन को सुनकर श्रीरामचन्द्र जी बोले, हे विभीषण ! सुग्रीव आदिको स्नान कराने का उद्योग करो, हम बिना भरतको देखे स्नान वस्त्र अलंकार व चन्दन आदिको नहीं धारण करेंगे । क्योंकि सुकुमार महाबाहु भरत हमारे लिये तपस्या करते हैं, हम उनको शीघ्र देखना चाहते हैं। अब परमदुर्गम अयोध्याके मार्ग का आश्रय लेना चाहते हैं । श्रीरामजी के इसप्रकार वचनको सुन फिर विभीषण बोले, हेराजन् ! आप दिन भर में अयोध्यापुरी में पहुंच जावेंगे । कुबेर देवता के पुष्पक विमानको हमारे भाई बलवान रावण ने अपने बलसे छीन लिया था, वह उत्तम विमान दिनभरमें आपको अयोध्या-पुरी पहुंचावेगा । अब वह विमान आपकी सेवा करेगा । यदि आप का अनुग्रह हमारे ऊपर हो और आपको हमारा गुण स्मरण हो तो और हमारे साथ आपकी मित्रता हो तो आज आप यहां निवास

करिये और सीता लक्ष्मणके सहित हमारे सत्कारको अंगीकार करिये। हेरामचन्द्रजी! सेना व मित्रके सहित हमारे सत्कारको ग्रहण कीजिये। हेरामजी! प्रणय से मान व मित्रता से हम आपके दास हैं हमारे वचनको सत्य करिये। विभीषणके बचनको सुनकर श्रीरामजी बोले, कि राक्षस व बानर हमारे बचनको सुनो, हेविभीषण! तुम हमारे मन्त्री होकर हमको अत्यन्त पूजित किया है, तुमारे भावसे सब प्रकार से हम तुमारे अधीन हैं, इसमें सन्देह नहीं, जानना चाहिये। परन्तु हेराक्षसेश्वर! तुमारे इस बचनको हम अंगीकार नहीं करते, क्योंकि हमारा मन परमप्रिय भाई भरतको देखने में उत्कंठित है, भरत जी चित्रकूट से हमको लौटाने के लिये कौशल्या कैकयी सुमित्रा और प्रिय सुहृद गुह तथा शत्रुघ्न व पुरवासियों के सहित आये और अत्यन्त प्रार्थना करने पर भी हम उनके वचनका पालन नहीं किया है इसलिये हेविभीषण! हमको पूजित जानिये, हेमित्र! इस विषय में तुमको क्षोभ नहीं करना चाहिये। इस विषयमें हम तुमारी प्रार्थना करते हैं। हेराक्षसेश्वर! तुम शीघ्र विमानको मंगाओ हमारा कार्य हो चुका अब यहां रहनेकी सम्मति उचित नहीं है। श्रीरामचन्द्रजी के बचनको सुनकर विमानों में श्रेष्ठ पुष्पक को शीघ्र विभीषण मंगाये, उस विमान में अनेक शालागृह बने हैं चारो तरफ चांदीके दीवार बने हैं, सोने के पताका लगे हैं, उसमें अनेक सोने के कमल लटके हैं। उस विमान के गवाक्ष मणियों से विभूषित हैं, चारो ओर मोतियों की झालरी लगी है, घंटाके जालसे वह विमान अलंकृत है। सुमेरू के शिखरके समान वह विमान विस्तीर्ण है। स्फटिक व वैदूर्यमणि के फरस बने हैं, उस फरस पर बहुमूल्य आसन लगे हैं, ऐसे वेग वाले सुन्दर विमानको श्रीरामचन्द्र जीके लिये निवेदन करके हाथ जोड़े विभीषण श्रीरामजी के सन्मुख खड़े हुए। इच्छानुसार भूषण वस्त्र आसन आदिसे संपन्न वायु के समान चलने हार सुन्दर विमानको देखकर लक्ष्मण के सहित रामचन्द्रजी विस्मित होगये॥

इति बाल्मीकीये रामायणे युद्धकाण्डे विंशाधिक शततमःसर्गः॥ १२३॥

पुष्पसे विभूषित पुष्पकको श्रीरामचन्द्रजी के समीप स्थित करके विभीषण श्रीरामचंद्रजी से बोले, हेभगवन् ! पुष्पक आपकी प्रतीक्षा करता है। त्वरामें संपन्न आप क्यों विलंव करते हो। लक्ष्मणजी से कह हे विभीषण के वचनको श्रीरामचंद्रजी सुनकर स्नेह युक्त बचन विभीषण से बोले, हे विभीषण ! यह सब बानरगण अत्यन्त प्रयास व उद्योग किये हैं, इनको यथाशक्ति धन रत्न देकर संतुष्ट करो, जब तुम इन बानरोंका सम्मान करोगे तब प्रसन्नता पूर्वक अपने देशको जावेंगे। जो जिस योग्य हैं उसको वैसा धन रत्न देकर विदा करो, और सत्कारको नचाने से इन वीरोंके मनमें यह क्षोभ होगा कि हम लोगों ने यह वृथा परिश्रम करके युद्ध किया है इस प्रकार सेना से विग्न होकर राजाको त्याग देती हैं। श्रीरामचन्द्रजी के बचनको अंगीकार करके विभीषण अनेक धन रत्न बानरों को भेट देकर सन्तुष्ट किया। तब श्रीरामचन्द्रजी जानकी को गोद में लेकर लक्ष्मण के सहित धनुष बाणको लेकर विमान पर बैठे। श्रीरामचन्द्रजी महाबली सुग्रीव आदि बानरों को धन रत्नसे सम्मानित करके विभीषण के सहित बोले,—हे बानर श्रेष्ठ ! आप लोगों ने मित्र कार्यको समाप्त किया है, अब हमारी अनुमतिसे आप सब अपने इष्टदेशको जाओ। हेसुग्रीवजी ! जैसा कार्य संपादन मित्रको करना चाहिये आपने अपने धर्मके भय से वैसाही संपादन किये हो। अब अपनी सेना सहित किष्किन्धापुरी मे जाकर सुखभोक करो। हे विभीषण ! हमारे दिये हुए लंकापुरी का राज्यकरो, तुमको इन्द्रादिक देवता भी हमारे प्रसाद से धर्षण नहीं कर सकते हैं। और हम अपने पिताकी राजधानी अयोध्यापुरीको जाना चाहते हैं। श्रीरामजी के विनय युक्त बचनको सुनकर सुग्रीव आदि बानर और विभीषण बोले, हे भगवान् ! हम लोग भी आपके साथ अयोध्यापुरीको चलना चाहते हैं, आपके अभिषेक महोत्सवको देखकर और भरत तथा कौशल्या आदिसे प्रणाम व दर्शन भेंट करके आवेंगे तब अपने अपने इष्टदेशको जायंगे। विभी-

षण और सुग्रीवने कहा कि अयोध्या से लौटकर आने पर हम लोग अपने नगर व राज्यकी रक्षा करेंगे। सुग्रीव आदि बानरों के सहित विभीषण के बचनको उन लोगों से श्रीरामचन्द्रजी बोले, कि कार्यको शेष करके अयोध्यापुरी का प्रवेश ही हमको अत्यन्त प्रिय है उसमें भी आप सब मित्रों के सहित भरत शत्रुघ्न आदि के प्रीति को लाभ करके राज्याभिषेक से अत्यन्त सन्तुष्ट हो जावेंगे, हे सुग्रीव! बानरों के सहित शीघ्रही इस विमान पर बैठो और राक्षसेश्वर विभीषण तुम भी बैठो। श्रीरामचन्द्रजी की अनुमति को पाकर बानरेन्द्र सुग्रीव बानरों के सहित और श्रीरामजी के मन्त्री राक्षसेन्द्र विभीषण भी विमान पर बैठ गये। सब लोगो को यथा स्थान पर बैठने के उपरान्त कुबेरजी का विमान श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा को शिरोधार्य करके आकाश मार्ग से अयोध्यापुरी को चला॥

इतिवाल्मीकियेरामायणेयुद्धकाण्डेचतुर्विंशाधिक शततमः सर्गः॥१२४॥

श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा से वह अनुत्तम विमान देवके समान शब्द करता हुआ आकाश मार्ग से चला, तब श्रीरामचन्द्रजी चारो तरफ देखकर चन्द्रमुखी सीताजी से श्रीरामचन्द्रजी बोले, हे वैदेही! विश्वकर्मा से बनाई गई त्रिकूट पर्वत पर विराजमान इस लंकापुरी को देखो, यह बानर व राक्षसों की युद्ध भूमि है देखो रक्त मांस से यहां कीचड़ होगया है। देखो ब्रह्मा के बरदान से विजयी राक्षसेश्वर रावण को तुमारे कारण हमने मारा है, कुम्भकर्ण प्रहस्त व धूम्राक्षको बानर श्रेष्ठ हनूमान ने नाश किया है, विद्युन्माली को महात्मा सुषेणने मारा है और रावण के पुत्र मेघनाद रावणी को लक्ष्मणजी ने नाश किया है। विकट नाम राक्षस को अङ्गदजी, विरुपाक्ष महापार्श्व महोदर अकंपन आदि अनेक बलवान राक्षसों को बानरों ने निहत किया है। त्रिशिरा अतिकाय देवान्तक नरान्तक युद्धोन्मत्त मत्त निकुम्भ कुम्भ आदि को बानरेन्द्र ने नाश किया है। वज्रदंष्ट्र दंष्ट्र मकराक्ष आदि को हमने बध किया है। अकम्पन शोणिताक्ष यूपाक्ष प्रजंघ विद्युज्जिह्व यज्ञ शत्रु

सुप्तघ्न सूर्य शत्रु ब्रह्म शत्रु आदि बलवान राक्षसों के साथ इन बानरों ने युद्धकरके उनका नाश किया है । यह रावण की भार्या मन्दोदरी विलाप करती है । शत्रुकी हजार से भी अधिकास्त्रियां से युक्त यह समुद्र का घाट है, समुद्र को उतर कर उस रात्रि में यहीं पर निवास किये थे । समुद्र में यह सेतुको हमने बांधा है । हे विशालाक्षी ! तुमारे कारण इससे तुको बांधने में नल ने दुष्कर कर्म किया है । हे वैदेही ! गम्भीर वरुण देवता के स्थान समुद्र को देखो । शंख मुक्ति से युक्त अपार के समान गर्जना करते हुए समुद्र को देखो । हे मैथिली ! सोने के शिखर से युक्त समुद्र के मध्यमें वर्तमान इस मैनाक पर्वत को देखो । यह पर्वत समुद्र के गर्भ में रहता था, जिस समय हनूमान समुद्र को लांघकर लंकापुरी को जाते थे उस समय यह पर्वत समुद्र से ऊपर आया और हनुमान को विश्राम के लिये प्रार्थना किया । इस सेतु बांधने के पहिले महादेव ने हमारे ऊपर बडी कृपा किया है, अर्थात् सेतुको बान्धने में विघ्न होवे यह सोचकर श्रीरामचन्द्रजी ने स्वयं शिवको स्थापित किया है इन्हीकी कृपासे हमने समुद्र में निर्विघ्न सेतु बांधकर पार उतरे हैं। इसीसे इनका नाम सेतुबंध है इन शिवजी की पूजा देवता दैत्य व मनुष्य करेंगे, इनके दर्शन से मनुष्य के सकल पाप नाश होजावेंगे । यहीपर मित्रता के लिये राक्षस राज बिभीषण आये थे । यह सुन्दर वनसे युक्त किष्किन्धा नाम सुग्रीव की पुरी है, जहां पर मैंने बाली नाम बानर को मारा है । वालिकी किष्किन्धापुरी को देखकर विनय व भय से श्रीरामचन्द्रजी से बोली, हे स्वामी । वालिकी स्त्री तारा के सहित तथा और बानरों के स्त्रियों के सहित तुमारे साथ मैं अयोध्यापुरी को चलना चाहती हूं । श्रीजानकीजी के बचन को स्वीकार कर किष्किन्धा में पहुँचतेही भगवान ने विमान को ठहरा दिये, और सुग्रीव से बोले, हे बानराधिप । किष्किन्धा में रहने वाली श्रेष्ट बानरों की जो स्त्रियाँ हों उन सबके सहित सीताजी और तुमलोगों के सहित अयोध्यापुरी को चलैंगे । इसलिये तुम शीघ्र जाकर यह समाचार तारा से

कहो। श्रीरामजी का आज्ञानुसार तारा पूर्व सुग्रीव किष्किन्धा में प्रवेश किये और अन्तःपुर (रनिवास) में जाकर तारा से बोले, कि हे प्रिये। तुमारे सहित श्रेष्ठ बानरों की जितनी स्त्रियां हैं उनको श्री रामचन्द्रजी ने आज्ञा दिया है, वह सब शीघ्र आवें और सीताजी के सहित अयोध्यापुरी को चलें, उन लोगों के संग जानकीजी अयोध्यापुरी को देखेंगी। सुग्रीव के वचन को सुनकर सर्वाङ्ग सुन्दरी तारा समस्त बानरी को बुलाकर आज्ञा दिया कि सुग्रीवजी के अनुमति से हमारे साथ अयोध्या को चलो, अयोध्यापुरी को तथा दशरथ की महारानियों को और श्रीसीताजी को देखने की हमारी उत्कट अभिलाषा है। नगरवासियों के सहित जिस समय श्रीरामचन्द्रजी नगर में प्रवेश करेंगे उस समय की विलक्षण शोभा को हमलोग भी देखेंगे, और महाराज दशरथ के स्त्रियों के ऐश्वर्य को भी देखेंगे। तारा की अनुमति से समस्त बानरी भूषण वस्त्र से भूषित होकर तारा के सहित सीताजी के दर्शन की अभिलाषा से आई सीताजी के दर्शन से अपने नयन को सफल जानकर उनके साथ विमान पर बैठी। श्रीरामजी सबको विमान पर बैठा देखकर विमान को अनुशासन किये। श्रीरामजी के अनुशासन से वह विमान आकाश मार्ग से चला। इसके बाद ऋष्यमूक पर्वत को देखकर श्रीरामजी जानकीजी से बोले, प्रिये यह ऋष्यमूक नाम पर्वत है, इसका शिखर सोने का है और यह अनेक प्रकार के धातु से मण्डित है। यहीं पर हमारे सुग्रीव की मित्रता हुई है और इसी पर्वत पर हमने बालि को मारने की प्रतिज्ञा किये थे और तुमको खोजने की प्रतिज्ञा सुग्रीव किये थे। यह पंपासर तालाब है, यहां पर कमल का बन है, इस सरोवर की रमणीय शोभा को देखकर तुमारे विरह में हमने विलाप किया है। इसी तालाब के तीरपर धर्मचारिणी शबरी को मैंने देखा। यहां एक योजन तक भुजा को फैलाये कबन्ध का नाश हमने किया है। हेसीते! जन स्थान में यह वट वृक्ष है इसका दर्शन करो। यह जटायु की

हड्डी पड़ी है, यह वृद्ध गिद्ध तुमारे लिये अपना प्राण बलिदान किया है । इस पक्षी प्रवर को रावण ने अपने बाण से बध किया है । हेसीते ! पंचवटी में यही हम लोगों का आश्रम है, यही पर्णशाला है इसको देखो । यहीं से दुरात्मा रावण ने हठात् तुमारा हरण किया यह प्रसन्न जल से संयुक्त गोदावरी नदी है । और यह जो कदली का बन दीख पड़ता है वही अगस्त्य मुनि का आश्रम हैं । उसके समीप में यह शरभंगमुनि का आश्रम दिखाई पड़ता है । हेतनुमध्यमे ! इन तपस्वी ब्राह्मणों को देखो यह भगवान अत्रि मुनि का आश्रम है । यह मुनि सूर्य व अग्नि के समान तेजस्वी हैं । इसी प्रदेश में विराध राक्षस को हमने बध किया है । हे संतनु ! यहीं पर तुमने अत्रिमुनि के स्त्री का दर्शन किये हो । यह आगे चित्रकूट पर्वत है । यह यमुना नदी के तट के सुन्दर बन हैं । और यह रमणीय जल से युक्त यमुना नदी हैं । हेमैथिली ! यह भरद्वाज मुनि का आश्रम है । यह सकल संसार को पवित्र करने वाली पुण्यमयी गंगाजी हैं । यह शृङ्गवेर पुर है जहां हमारे परम मित्र गुहराज रहते हैं । हेसीते ! यह हमारे पिता की राजधानी अयोध्यापुरी है इसको तुम प्रणाम करो । अयोध्यापुरी का नाम सुनकर वानर वानरी तथा राक्षस उत्कण्ठित होगये, और उठ उठ कर उन नगरी की शोभा को देखने लगे । स्वर्ग में जैसी इन्द्र की अमरावती पुरी है वैसी मर्त्यलोक में रामचन्द्रजी की अयोध्यापुरी को देखने में उत्सुक वानर व राक्षस होगये ॥

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकांडे पंचविंशोत्तरशततमः सर्गः ॥ १२५ ॥

कार्तिक शुक्ल चतुर्थी को किष्किन्धापुर में निवास करके पंचमी को इष्ट मित्र के सहित श्रीरामजी भरद्वाज मुनि के आश्रम में आये, वहां विमान को रोक कर मुनि के आश्रम में प्रवेश किये लक्ष्मण व सीता के सहित श्रीरामजी ने मुनि को दण्डवत् करके अयोध्यापुरी के कुशल को पूछने लगे भगवन् ! अयोध्या के सुमित्र व अनामय को कुछ आप सुने हैं भरत शत्रुघ्न के सहित माता लोग जीतीतो हैं । श्रीरामजी के

बचन से प्रसन्न मुनि बोले—हेराजन्! तुमारी आज्ञा से तपस्वी भरत जटा वल्कल को धारण किये हैं और तुमारी पादुको आग रखकर पुरब नगर की रक्षा करते हुए और तुमारे आगमन की प्रतीक्षा करते हैं। और तुमारे गृह में सब कुशल है। तुम जटा व चीर को धारण करके राज्य को छोड़स्त्री व भाई के सहित बन में पैदल आये जैसे संपूर्ण सुख भोग को छोड़कर देवता मर्त्यलोक में आते हैं। वैसे पिता के बचन को पालन करने के लिये समस्त सुख भोग का त्याग कर आप बन में आये। और कैकयी के बचन से बनके फल मूल से अपनी जीविका करने लगे, इस समय शत्रु को जीतकर अपने इष्ट मित्रों के सहित आये हैं इससे हमारी उत्तम प्रीति और भी बढ़ती है। हे रामचन्द्रजी! तुमारे सकल सुख दुःख हमको विदित है जो तुमने जन स्थानवासी राक्षस से संधाये, फिर तपस्वियों को पीड़ा देने वाले रावण से नियुक्त राक्षसों का जब तुमने नाश किया तब बलवान रावण कपटी मृगारूपी मारीच से सीता के हृदय को मन्थन करके रावण ने उनका हरण किया, उसी वियोग में भ्रमण करते आपनेका बंधको मार कर पंपासर में गये, वहां सुग्रीवके साथ मित्रता करके वालि को बध किये, फिर सुग्रीव की आज्ञा से हनूमान ने सीता की खोज किये, जानकी का समाचार मिलने पर समुद्र में सेतु को बांधे और बानरी सेना सहित समुद्र को पार करके पुत्र मन्त्रि व सेना आदि के सहित राक्षसेश्वररावणका नाश किये। रावणके मरने पर निष्कंटक देवलोक हो गया, फिर इसके बाद ब्रह्मा आदि देवता आपके समीप आकर आपको वरदान दिये। यह सब समाचार तपस्या के बल से हमको विदित है, और हमारे शिष्यगण भी आकर यह सब समाचार हम से कहे हैं और आपके आगमन समाचार को कहने के लिये वह लोग आपकी राजधानी अयोध्या में भी गये हैं। अब हम भी आप को अर्घ्य देते हैं आज यहां निवास कीजिये कल्ह अयोध्या की यात्रा करना। मुनि की आज्ञा को रामचन्द्रजी सादर स्वीकार करके भरद्वाज

मुनि से वरदान मांगे हे भगवान् ! अयोध्याको चलते समय इन वानरों के विश्राम के लिये ये वृक्ष सुन्दर फल को देने वाले होवें, भरद्वाज मुनि श्रीरामचन्द्रजी को वही वरदान दिये । मुनि के प्रभाव से वह वृक्ष स्वर्गीयी वृक्ष के समान हो गये । जिनमें फल नहीं था वे फल से पूर्ण हो गये, जो पुष्प से हीन थे वे पुष्पित हो गयें । जो सूख गये थे वह हरे हो गये, पर्वतों से मधुकी धारा बहने लगी । यह दशा तीन योजन तक मुनि के प्रभाव से वर्तमान हो गई । इसके बाद वानर गण प्रसन्नता पूर्वक अपने इच्छानुसार उस दिव्य फल पुष्प व मूल को भोजन करने के स्वर्गीय देवता के समाहर्षित हुए ॥

इति श्रीबाल्मीकीये रामायणे युद्धकाण्डेषड्विंशोत्तरशततमः सर्गः ॥१२६॥

भरद्वाज मुनि की आज्ञा से उनके आश्रम में वानरव विभीषण सहित निवास करते हुए श्रीरामचन्द्रजी अयोध्यापुरी को देखकर चिंता करने लगे कि हम तो यहाँ मुनि के अनुरोध से इनके आश्रम में विलम्ब करते हैं और हमारे व भरतजी के इस प्रकार का अभियोग है कि यदि चौदहे वर्ष के समाप्ति के दिन हम तुमको अयोध्यापुरी में नहीं देखेंगे तो हम अग्नि में प्रवेश करेंगे । इस कारण भरतको अपने आगमनका समाचार देना चाहिये यह सोचकर श्रीरामचन्द्रजी वानरों की ओर देखकर बुद्धि विशारद हनूमानसे बोले, हे वानरोत्तम ! तुम शीघ्र अयोध्यापुरीको जाओ और राजमन्दिर पर वर्तमान जनों के कुशलको जानकर हमारे आगमनका सन्देश कहो और शृङ्गवेरपुर में जाकर वन केस्वामी निषादोंके अधिपति गुहसे लक्ष्मण व सीता के सहित हमारे कुशल को कहो । निषादराज हमारे परम मित्र हैं, वह हमारी कुशलता को सुनते ही अत्यन्त हर्षित हो जायेंगे और आपको अनेक धन्य-वाद देवेंगे और आपको अयोध्या जाने का मार्ग तथा भरत की प्रवृत्ति [व्यवहार] को भी कहेंगे । उनसे भेंट करके तब भरत के समीप जाना, भरतजी से सीता व लक्ष्मण सहित हमारी कुशलता को कहना । इसके उपरान्त सीता हरण सुग्रीव मिलन बालि बधन

सीता अन्वेषण समुन्द्र का लंघन समुन्द्र में सेतुबन्धन परिवार सहित रावणवध, ब्रह्मा इन्द्र वरुण के वरदान से वानरों का जीवन महादेव जी के प्रसाद से दशरथ दर्शन और परिवार सहित सुग्रीव व विभीषण से युक्त श्रीरामचन्द्रजी का नगर के समीप आगमन यह सब वृत्तान्त भरतजी से कहना। इसको सुनने पर भरतजी की जैसी चेष्टा हो उसकी परीक्षा भली भांति कर लेना। क्योंकि लोक में राज्य संपत्ति का लोभ सब के मन को नहीं हरण कर लेता है। यदि चिरकाल के हमारे वनवास से केकयी के समान भरत की भी बुद्धि बदल गई हो तो पृथिवी का भोग वही करें, हम लक्ष्मण के सहित तपस्वियों के समान वनवास करके अपने जीवन के समय को व्यतीत करेंगे। इस लिये यह सब भरत के मनोगत बात को जानकर आप इतनी शीघ्रता से आइये जिसमें हम अयोध्यापुरी के समीप तक न पहुँचा सकें। इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा को सादर शिरोधार्य करके वायु के पुत्र हनुमान मनुष्य का रूप धारण करके पवन के समान आकाश मार्ग से गमन किये और गंगा यमुना को लांघते हुए शृङ्गवेरपुर में गुह के समीप पहुँचे और श्रीरामचन्द्रजी के आगमनके सुन्दर वचन को गुहसे कहने लगे। हे निषादराज! तुमारे सखा सत्यपराक्रमी श्रीरामचन्द्र लक्ष्मण व सीता के सहित तुम से अपना कुशल कहे हैं, कि आज पंचमी की रात्रि मुनि के आश्रम में निवास करके मुनि की आज्ञा से कल्ह प्रातःकाल चलते समय तुम से भेट करेंगे। निषादराज से इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी के समाचार को कहते हुए प्रसन्नता पूर्वक मार्गके परिश्रमको न विचार करते हुए आगेको चले, इसके बाद परशुराम तीर्थ वालुकिनी गोमती आदि नदी तथा शाल वृक्ष के बनको देखते हुए मार्गको अति क्रमण करके वानर श्रेष्ठ हनूमान नन्दिग्राम में पहुँचे, नन्दिग्रामके बन वृक्ष तालाब नदी अपने फल पुष्प व जलसे परिवार के समान भरतकी सेवा करते थे। एक कोशकी मर्यादा पर नन्दिग्राम में जटाचीर वल्कलको

धारण किये श्रीरामचन्द्रजीके व्यसन से पीड़ित फल मूल के भोजन से तथा तपस्वियों के आचरण से ब्रह्मर्षि के समान श्रीरामचन्द्र जी की पादुकाको आगे धरकर पृथिवीको पालन करते हुए मन्त्रि पुरोहित व सेना के सहित चारो वर्ण को यथाधर्म की रक्षा करते हुए भरत जी को देखकर हनुमानजी दण्डवत् किये और हाथ जोड़ कर बोले, हे काकुत्स्थ ! जटा चीर को धारण किये दण्डकवन के निवासी जिन रामचन्द्रजीकी तुम चिन्ता करते हो वह रामचन्द्रजी लक्ष्मण व सीता के सहित तुमसे अपना कुशल कहा है। वह हम तुमसे कहेंगे तुम अपनी चिन्ता को अब छोड़ दो। रावणको परिवार सहित नाश करके सीताजी के सहितक्षण भरमें आपकी संगति श्रीरामचन्द्र जीसेहोजावेगी श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण व सीताके सहित तथा सुग्रीव व विभीषण आदि मित्र व सेनाके सहितश्रीरामचन्द्रजी नगरके समीप आगये हैं। इसप्रकार हनुमानके वचन को सुनकर केकयी के पुत्र भरत हर्षकी गुरुता से विवश हो गये। क्षण भरमें उठकर प्रेम की आंसू को बहाते हनुमानजी को हृदयसे लगाये और हर्षकी आंसूसे हनूमान जी को स्नान कराने लगे और प्रसन्नतासे बोले हे भगवन्! आप देवता हैं अथवा मनुष्य जो आपने अपनी कृपासे यहां आकर श्रीरामचन्द्रजी के आगमनको सुना कर अमृत वर्षाके समान हमको तृप्त किये हो। हम आपको कौनसी प्रिय वस्तु देवें, आपको लाख गऊ हजार नगर और उत्तम भूषण वस्त्र से अलंकृत कुलीन सोलह कन्या देने की इच्छा करते हैं, कपि प्रवीर हनुमानजी के मुखसे रामचन्द्रजीके आगमनको सुनकर श्रीरामचन्द्रजी के दर्शनकी उत्कट अभिलाषासे भरतजी बोले।

इति वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे सप्तविंशाधिकशततमः सर्गः ॥१२७॥

आज मैं बहुत दिन से बनमें गये हुए स्वामीके कीर्तन (समाचार) को सुने हैं, यह लौकिकी गाथा कल्याणी की तरह हमको दिखाई पड़ती है कि जीवित मनुष्यको सैकड़ों वर्षके बाद भी आनन्द देने वाली है। भला यह तो कहिये श्रीरामचन्द्रजी की और बानरों की मित्रता किस

देश में और किस कारण हुई है। भरतजी का इस प्रकार पूछने से हनुमान जी आसन पर बैठ गये और रामचन्द्रजी वन में जो कार्य किये थे उसको यथाक्रम से कहने लगे। केकयीके वरदान से रामचन्द्र जी वनको गये, उनके शोक में महाराज दशरथने अपने प्राणको त्याग किये, इसके उपरान्त दूत यहां से जाकर केकयपुर से आपको लिवा आया। आप अयोध्यापुरी में आकर राज्यकी इच्छा करके चित्रकूट पर्वत गये, वहां जाकर धर्मको पालन करनेवाले श्रीरामचन्द्र जी को निमंत्रित किये, परन्तु पिताके वचन पर आरूढ़ श्रीरामचन्द्र जी की पादुका को लेकर राज्य भार को स्वीकार करके आप यहां आये, हे महाबाहु! यह सब आपको विदित है, अब आपको लौट कर आने के बाद जो कुछ कार्य रामचन्द्रजी किये हैं वह सब हमारे से आप सुनो। आपको अयोध्यापुरी आने के बाद वनको पीड़ित देखकर सिंह व्याघ्र मृगा आदि से युक्त घोर दण्डक वन में पहुँचे। वहां पहुँचतेही सीता लक्ष्मण सहित श्रीरामचन्द्रजी के सन्मुख महाबलवान विराधनाम का राक्षस गर्जना करता हुआ श्रीरामजी की ओर दौड़ा। श्रीरामचन्द्रजी गड्ढा खोदकर उस राक्षस को गर्त में गाड़कर मार डाले, इस प्रकार दुष्कर कर्मको समाप्त करके सायंकाल में लक्ष्मण के सहित शरभंग मुनिके आश्रम में पहुँचे और जनस्थान निवासी मुनियों को प्रणाम करके जनस्थान में निवास किये। श्रीरामजी को वहां रहने से उस स्थान के पशुपक्षी व मनुष्य निर्भय के समान विहार करने लगे। मांस भक्षण करने वाली मायाविनी राक्षसी श्री रामचन्द्रजी के समीप कपट रूपसे आई। रामजी राक्षसी के कपट को जानकर लक्ष्मणजी को आज्ञा दिये, लक्ष्मणजी उनकी आज्ञा से उठकर अपने खड्ग से राक्षसी के कान व नाक को काट डाले उस राक्षसी को विरूप देख खरदूषण त्रिशिरा आदि बलवान राक्षस चौदह हजार राक्षसों की सेना सहित श्रीरामजी के सन्मुख आये। श्रीराम जी क्षणभर में उन राक्षसों को नाशकर जन स्थान निवासी मुनियों

को अभयदान दिये । इसके बाद विलाप करती हुई शूर्पणखा रावण के समीप गई । राक्षसराज रावण अपने सेवक मारीच के सहित जनस्थान में आया । मारीच रत्नमय मृगाका रूप धारण करके श्रीजानकीजी को प्रलोभन देने के लिये आश्रम के समीप आया । उस मृगाको देखते ही श्रीजानकीजी श्रीरामजी से बोली, भगवन् ! इस मृगा को पकड़ लीजिये । इस मृगा के रहने से यह आश्रम मनोहर हो जायगा । श्रीसीताजी की अनुमति से धनुषबाण को लिये मृगया के कारण उस मृगाके पीछे दौड़े । श्रीरामजी को अति दूर जाने की आशंका से लक्ष्मणजी भी बन देवताओं को सीताजी के रक्षा में नियुक्त करके चले गये । उस एकान्त आश्रम में रावण प्रवेश करके सीताको ग्रहण किया । सीताजी की रक्षा करने के वास्ते वृद्ध जटायु गिद्ध रावण के साथ महायुद्ध किये परन्तु रावण समरमें जटायु को मार कर विमान के द्वारा सीताजी को लेकर चला गया सीता सहित राक्षसको जाते समय पर्वत के शिखर पर बैठे बानरों ने देखा । रावण सीता के सहित पुष्पक विमान पर बैठकर स्वर्णमयी लंकापुरी में प्रवेश किया और अनेक प्रकार की बातें कहकर श्रीसीताजी को धैर्य देने लगा । परन्तु श्रीजानकीजी राक्षस के बचन को तृण के समान जानकर श्रीरामचन्द्रजी के शोक में डूबती हुई अशोक बाटिका में स्थान लिये । मायारूपी मृगाको मारकर लौटते समय श्रीरामजी मार्ग में बाण से निहत जटायु को देखे । पिता के समान प्रिय जटायु की दशा देखकर उनको परमधाम दिये और करुणा तथा शोक पूर्वक सीताजीको खोजने लगे । गोदावरी के समीप वर्ती बनमें सीताजी को प्रावेषण कहते हुए कबंध राक्षस को देखे, उसी राक्षस के बचन से ऋष्यमूक बनमें आये, उस बन में बालि के भय से राज्य आदि को छोड़कर सुग्रीव बानर रहते थे, वही सुग्रीव से श्रीरामचन्द्रजी की मित्रता हुई । श्रीरामचन्द्रजी अपनी भुजाके बलसे समर में बालिको मार कर सुग्रीव को राज्य दिये, सुग्रीवजी अपने मनोरथको सिद्ध होने पर श्री

रामजी की कार्य सिद्धि के लिये दशकरोड़ बानरों को सीताजी को खोजने के लिये दिशाओं में भेजे। उसमें हम लोग विन्ध्यपर्वत में खोजते हुए विप्रनष्ट होगये इसीसे अधिक विलम्ब हुआ। इसके बाद गिद्धराज जटायु के भाई महाबली संपाति ने समाचार दिया कि सीताजी रावण की अशोक वाटिका में बैठी हैं संपाति के बचन से अपने जाति के दुःख को दुःख हटाने के वास्ते और रामजी के कार्यको सिद्ध करने के लिये सौयोजन के समुद्र को लांघकर लंकापुरी में पहुँचे और अशोक बन में मलीन पीताम्बर को धारण किये रामचन्द्रजी के विरह में कृश व दीन सीताजी को देखकर यथा तथ्य से समाचार को पूछकर श्रीरामजी की मुद्रिका को दिये और श्रीजानकीजी की मणि को लेकर श्रीरामजी के समीप चले आये और सीताजी के वृत्तान्तको कह कर वह मणि प्रदान किये। श्रीरामजी सीताजी के अमृतमय समाचार को सुनकर पुनरजीवित को धारण किये और सुग्रीव के प्रभाव से असंख्य बानरोंकी सेनाको लेकर प्रलयकालकी अग्निके समान क्रोधित श्रीरामचन्द्रजी लंकापुरी को भस्म करने के लिये समुद के तटपर पहुँचे। वहां पहुंच कर नल ने समुद में सेतुको बांधे उसी सेतु से समुद उतर कर बानरी सेना लंकापुरी में पहुंची और राक्षसों के साथ युद्ध करके पहस्तको नील कुम्भकर्ण को श्रीरामजी रावण के पुत्र मेघनाद को लक्ष्मणजी और राक्षसेन्द्र रावण को श्रीरामजी बध किये। परिवार सहित रावण [illegible] से प्रसन्न इन्द्र वरुण यम कुबेर आदि के सहित शिव व ब्रह्मा महाराज दशरथ को संग लिये श्रीरामजी के पास आये और उनको अनेक प्रकार का बरदान दिये ऋषिमुनि के सहित इन्द्र के बरदान से युद्धमें मृतक बानर अपने जीवन को पुनर्लाभ किये। अब श्रीरामजी उन बानरों के सहित पुष्पक विमान पर बैठे किष्किन्धापुरी से होते हुए गंगाजी के समीप भरद्वाज मुनिके आश्रम में आगये हैं। कल्ह पुष्य के योगमें आपसे भेट करेंगे। इसप्रकार हनु-

मानजी के सुन्दर वचन से प्रसन्न होकर हाथ जोड़े भरतजी हर्षपूर्वक बोले, अब हमारी चिरकाल की अभिलाषा पूर्ण होगई ॥

इतिवाल्मीकीयेरामायणे युद्धकाण्डेअष्टविंशाधिकशततमःसर्गः ॥१२८॥

सत्य पराक्रमी भरत हनूमानजी के मुखसे आनन्द भरी बातें सुनकर प्रसन्नता पूर्वक शत्रुको नाश करने वाले शत्रुघ्न को आज्ञा दिये कि जितने कुलदेवता व ग्राम देवता हैं उनकी विधिवत पूजा करो और स्तुति करने वाले सूत और वंशके गुणको गान करने वाले वैतालिक तथा अनेक प्रकार के बाजा बजाने वाले और समस्त गणिका और सब रानी तथा मन्त्रियों की स्त्रियां और परिवार सहित मन्त्रीगण तथा सेना और सैनिकों की स्त्रियां और ब्राह्मण राजा और नितने राजकार्य में नियुक्त पुरुष हैं उन सबको सज्जित करिये, हम श्रीरामचन्द्रजी के दर्शन को चलैगे । भरतजी के बचन को सुनकर शत्रुघ्नजी हजारों कर्म करने वाले मनुष्यों को आज्ञादिये कि नन्दिग्रामसे लेकर राजभवन तक जितनी खाली ऊची भूमि है उसको बराबर करो, और सड़कों पर खूब सुगन्धित जलका छिडकाव करो। और दूसरे पुरुषों को आज्ञा दिये कि तुमलोग हर एक मार्गमें चला जा और पुष्प से भूषित करो और स्थान स्थान पर ध्वजा व ऊची पताका को अलंकृत करो और नगर के द्वारपर तोरण माल्य आदि से अलंकृत करो। यहां पुष्पके स्थान पर सोने का तोरण और पांच प्रकार के रत्नों की झालरी को शत्रुघ्नजी ने आज्ञा दिये कि धृष्टि जयन्त विजय सिद्धार्थ अर्थसाधक अशोक मन्त्रपाल व सुमन्त्र राजेमार्ग को भली भांति अलंकृत करके ध्वजा पताका से विभूषित लाखों हाथी से युक्त होकर चलें, और पताका ध्वजा के सहित एक करोड घोड़ा सवार उत्तम घोड़ों से और अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र से युक्त होकर चलें। इस प्रकार शत्रुघ्न की आज्ञा से अलंकृत राजा की सेना निकली और असंख्य पैदल सवारों से आवृत कौशल्या आदि स्त्रियां विमान पर बैठकर चली, तथा नगर के सेठ साहुकार धनीगण को पीछे करके ब्राह्मण

मण्डली मंगलमय स्तवन करते आगे चले, शंख भेरी मृदंग के महा शब्द के साथ कोलाहल करते हुए बन्दीजन चले। इस प्रकार सज्जित हो अयोध्याबासी नन्दिग्राम में पहुंचे। उन सबके सहित अपने मन्त्रियों के साथ महात्मा भरतजी श्रीरामचन्द्रजी की पादुका को विमान पर रखकर छत्र चमर से युक्त होकर श्रीरामजी के दर्शन में लोलुप हो मार्ग देखने लगे। इधर भरतजी की सेना के भार से पृथिवी हिलने लगी। हनूमानजी रामजी के पूर्व बचन से भरतजी के वृत्तान्तको जानकर श्रीरामचन्द्रजी के समीप गये और भरतजी के संपूर्ण वृत्तान्त को श्रीरामजी से कहकर फिर भरतजी के आश्रममें चले आये। भरतजी समस्त प्रजाओं को राम दर्शन में उत्कण्ठित जानकर हनूमानजी से बोले, बानरों का स्वभाव अत्यन्त चंचल होता है चंचलता के कारण क्या आपने रामजीके आगमन को मिथ्या तो नहीं कहा है क्योंकि अभी तक श्रीरामचन्द्रजी की बानरी सेना नहीं दीख पड़ती है। भरतजीके बचनको सुनकर हनूमानजी बोले, कि फल पुष्प व मधुसे युक्त जो भरद्वाजमुनि के आश्रम समीपवर्ती बन है उसी बनके उत्तम फल पुष्पको बानर लोग ग्रहण करते चले आते हैं। उनके आनेका महाशब्द सुनाई देता है इस लिये आप भी चलिये। वह बृक्ष भरद्वाज मुनिकी कृपासे फल पुष्पको लाभ किये। है सकल गुणकी खानि भरद्वाज मुनिने बानरोंका सत्कार किये हैं। परन्तु अब बानरों के आगमन का महाशब्द सुनाई देताहै, और धूलिभी उड़ती है इससे हम जानते हैं कि बानरगण गोमती नदी को पार कर रहे हैं। हम ऐसा मानते हैं कि गोमती उतर कर मनोहर साल बनकी शोभाको बानरगण देखते होंगे। इतनेही में श्रीरामचन्द्रजी का पुष्पक विमान दिखाई पड़ा। विमानको देखतेही हनूमानजी कहने लगे कि विश्वकर्मा के बनाये इस कुबेरजी के उत्तम विमानको रावणने अपने पराक्रम से लियाथा सो परिवार महित रावणको नाश करके श्रीरामचन्द्रजीने इस विमानको लाभ किया है। देखिये सीताके सहित

श्रीराम लक्ष्मण बैठे हैं । और बगल में सुग्रीव व विभीषण बैठे हैं। इसके बाद आकाशमें आते हुए विमानको देखकर बालक बृद्ध स्त्री पुरुष सभी एक शब्दसे प्रसन्नता के मारे कोलाहल किये कि यही रामचन्द्रजी आये। ऐसा कहकर सकल अयोध्यावासी रथ हाथी घोड़ा आदिसे पृथिवी पर उतर पड़े और आकाश की ओर दृष्टि लगाकर विमानको देखने लगे। भरतजी श्रीरामजीके सन्मुख हाथ जोड़कर उनके स्वागतमें अर्घ्यपाद्य आदिको देकर उनकी पूजा किये। विमान पर बैठे श्रीरामचन्द्रजी की शोभा इस प्रकार हुई जैसे देवतोंके मध्यमें इन्द्रकी शोभा होती है। भरतसे युक्त सकल नगरवासी जनको देखते ही श्रीरामजीने विमानको पृथिवीमें उतरनेकी आज्ञा दिये। श्रीरामजी की आज्ञा से वह विमान पृथिवी में उतर पड़ा । विमान से उतरते श्रीरामजी को देखकर भरत व शत्रुघ्न साष्टांग दण्डवत् किये । श्री रामचन्द्रजी भरतको उठाकर आनन्द पूर्वक हृदय से लगाये और शत्रुघ्नजी लक्ष्मणजी से मिले इसके बाद भरत व शत्रुघ्न सीताजी को दण्डवत किये । इसके बाद भरतजी सुग्रीव जांबवान अंगद मैन्द द्विदिद नील आदि बानरों से मिलकर उनके कुशलको पूछने लगे। सुग्रीवजी अपना कुशल कहकर भरतजीके कुशलको पूंछे, भरतजी अपने प्रेम से पूर्णहो सुग्रीवजी से बोले, हम सब आपको मित्र पाकर पांच भाई हुए हैं । हे सुग्रीवजी ! सौहृदयसे मित्रता और अपकारी से शत्रुता होती है । इसके बाद विभीषण को देखकर भरत जी मिले और विभीषण से बोले कि बड़े आनन्द की बात है जो आपकी सहायता से श्रीरामचन्द्रजी ने समरमें विजय को पाया। शत्रुघ्न जी श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी को प्रणाम करके सीताजी को विनय पूर्वक दण्डवत किये। इसके बाद श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण सीताके सहित कौशल्या केकयी सुमित्रा आदिके चरणको ग्रहण करके प्रणाम किये यशस्विनीकौशल्या सुमित्राकेकयी आनन्द पूर्वक आशीर्वाद प्रदानकिये। इसके उपरान्त पुरोहतको साष्टांग दण्डवत् करके ब्राह्मण मण्डलको प्रणाम

किये, सुमन्त्र आदि मन्त्रियोंको प्रणाम करके नगरवासी जनोंसे यथा योग्यमिले। फिर भरत जी रामचन्द्रजी की पादुका को लेकर श्रीराम जी को समर्पण किये कि इतने दिनतक मैंने इस पादुका के आश्रय पर धरोहरके समान राज्य भारको निर्वाहित किये, अब आप अपने निजराज्य को अंगीकार करिये। और आप अपने खजाना, सेना और गृहको देखिये, आपकी कृपा से मैंने इन सबको दशगुणा अधिक बढाया है। भरतजी के प्रेमपूर्ण बचन से सुग्रीव आदि बानर तथा राक्षसेन्द्र विभीषण व सकल अयोध्यावासी के आंख से आँसू बहने लगे। इसके बाद भरतजी को गोदमें लेकर उसी विमान पर श्रीरामचन्द्रजी बैठे और सेना के सहित भरतजी के आश्रम में आये। वहाँ विमान से उतर कर श्रीरामजी विमान को आज्ञा दिये कि अब तुम कुबेरजी की सेवा में चले जाओ। पुष्पक श्रीरामजी की आज्ञा को शिरोधार्य करके उत्तर दिशामें कुबेर लोकको चलागया। श्रीरामचन्द्रजी वसिष्ट के पुत्र सुयज्ञ को दण्डवत् व प्रणाम किये और उनके सहित आसन पर बैठकर वार्तालाप करने लगे॥

इति बाल्मीकीयेरामायणेयुद्धकाण्डे एकोनत्रिंशसर्गः॥ १२९॥

इसके बाद केकयी के आनन्द को बढाने वाले भरतजी हाथजोड़ कर सत्य पराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी से बोले, हे रामजी! आपने हमारी माता के बचन को पालन करके उनको पूजित किये हैं और हमको चित्रकूट में बनवास की अवधितक यह राज्य समर्पण किये थे अब आप बनसे लौटकर आये हैं अब आप अपने राज्य को स्वीकार करिये। मैं आपको देता हूं जैसा कि आपने पहिले मुझे दिये थे। जैसे गुरू भार से युक्त गाड़ी को बैल से अतिरिक्त बछडा नहीं ढोसकता है वैसे इस राज्य के गुरुभार को हम नहीं सहन कर सकते हैं। जैसे जलके बेगको रोकना कठिन होता है वैसे इस राज के गुरुभार को हम नहीं सम्हाल सकते हैं। जैसे घोड़ेकी चालको गदहा नहीं चल सकता है, हंस के समान कौआ नहीं चलता वैसे आपके मार्गको हम नहीं ग्रहण

करसकते हैं। आप सकल वस्तुके अर्थको जानने वाले हैं और आप इस जगत् के स्वामी हैंआप इसको मध्यान्हकालके सूर्य के समान पालनकरिये और राजाके योग्य उपचार से शयन व जागरण कीजिये। जब तक सूर्य चन्द्रमण्डल व पृथिवी है तब तक आप इस पृथिवीको पालन करिये। सुन्दर आसन पर बैठे श्रीरामजी भरतजी के बचन को अंगीकार किये, इसके बाद शत्रुघ्नजीकी आज्ञा सेनापतिने श्रीराम व लक्ष्मण जीका क्षौर किया, बाद सुग्रीव व विभीषण के सहित श्रीरामजी स्नान करके उत्तम वस्त्र व भूषण को धारण किये। इसके बाद कौशल्या आदि ने सीता का प्रति कर्म किया और सुग्रीव की तारा आदि स्त्रियों को पुत्र वत्सला कौसल्या प्रति कर्म कराया। फिर शत्रुघ्न के बचन से सारथी सुमन्त्र एक उत्तम रथ को ले आये। उसी सुन्दर रथ पर सीता के सहित श्रीरामचन्द्रजी बैठे और सकल सेना व नगरबासी तथा पुरोहित मन्त्रि आदि तथा परिवार सहित सुग्रीव आदि बानर नगर देखने के लिये श्रीरामजी को साथ चले, भरतजी रश्मी को पकड़ शत्रुघ्न श्रीरामजी को छत्र लगाये लक्ष्मणजी पंखा व चमर को हिलाने लगे। दूसरे चमर को विभीषण ले लिये, ऋषिमुनि श्रीरामचन्द्रजी की स्तुति मधुर ध्वनि से करने लगे। बानर राज सुग्रीव शत्रुजयनाम हाथी पर बैठे तथा और बानरगण उत्तम भूषण वस्त्र से भूषित होकर नव हजार हाथियों पर बैठे और शंख भेरी मृदंग आदि के शब्द से संयुक्त होते हुए पुरुष श्रेष्ठ रामचन्द्रजी नन्दिग्राम से अयोध्यापुरी को चले, इधर नगरवासी स्त्री पुरुष श्रीरामजी के आगमन काल में अपने अपने द्वार को केला तोरण उत्तम माल्य से अलंकृत करके श्रीरामजी की शोभाको देखनेमें व्यग्रहोगये। और नगरवासी जनोंकी स्त्रियां अपनी २ अंटारियों से अक्षत व लाजा तथा पुष्पको छोड़ने लगीं। पुरुष अनेक प्रकार के मंगलामय वस्तु को लेकर श्रीरामजी को आगे से स्वागत करने लगे। इसके मन्त्रिगण रामचन्द्र व सुग्रीव की मित्रता तथा हनुमानजी के प्रभाव को और बलवान बानरों के इस अद्भुत कर्म को नगरवा-

सियों से कहने लगे। बानरों के द्वारा राक्षसों के नाश को सुनकर नगरवासी विस्मित हो गये और अनेक प्रकार के शुभाशीर्वादको श्रीरामजी को समर्पण करने लगे। श्रीरामजी आनन्दपूर्वक अपने समाज के सहित पुरी में प्रवेश किये। ध्वजा पताका से संपन्न महाराज दशरथ के भवन में प्रवेश करके धार्मिक श्रेष्ठ भरतजीसे श्रीरामचन्द्रजी बोले, हे भरतजी! सुग्रीव आदि बानरों को कौशल्या केकयी व सुमित्रा आदि के स्थान पर ले जाइये, यह लोग भी उन लोगों को प्रणाम करेंगे। श्रीरामजी के बचन को सुनकर भरतजी ने सुग्रीव के हाथको पकड़ लिये और धन रत्न आसन दीप आदिसे पूर्ण कौशल्या केकयी आदिके भवन में सुग्रीवको लिवा ले गये, सुग्रीव आदिने उन लोगों को भली भांति दण्डवत् व प्रणाम के बाद आशीर्वाद को ग्रहण किये। इसके उपरान्त सुग्रीवने श्रीरामजी को अभिषेक कार्य के लिये चार सोनेका कलश जांबवान आदि बानरों को दिये, कि इन कलशों में चारो समुद्र का जल प्रातःकाल आ जाना चाहिये। सुग्रीव व भरत जी के बचन को सुनकर जांबवान सुषेण गवय आदि पांच सौ बानर कलश लेकर अनेक दिशाओं में गरुड़ के समान चले गये। नदी व समुद्र के जलसे कलशको पूर्ण किये। जांबवान हनूमान वेगदर्शी और ऋषभ यह चार बलवान बानरों में से जांबवान पूर्व के समुद्र से पांच सौ नदियों के जल सहित कलश को इकट्ठा किये। ऋषभ नदियों सहित दक्षिण समुद्र के जलको लाये। गवय नदियों समेत पश्चिम समुद्रके जलको लाये, वायु पुत्र हनूमान तीर्थ व नदियों के जल से युक्त उत्तर दिशाके समुद्रके जलको लाये। बानरोंके द्वारा सकल तीर्थके जलको इकट्ठा देखकर मन्त्रियों सहित शत्रुघ्न पुरोहित श्रेष्ठ वसिष्ठ जीको निवेदन किये। वसिष्ठ जी ब्राह्मणों के सहित आकर सीता युक्त रामको रत्नमय सिंहासन पर बैठाकर वसिष्ठ विजय जाबालि कश्यप कात्यायन गौतम वामदेव आदिने उसी तीर्थके जल से अभिषेक किये। इसके

बाद वसिष्ठ जीकी अनुमति से सोलह कन्याओं ने श्रीरामजी को अभिषेक किया । इसके उपरान्त सेनापति व सेठ साहुकार आदि भी श्रीरामजी को अभिषेक किये । आकाशमें स्थित देवगण भी सर्वोषधी से श्रीरामजी को अभिषेक किये । इसके बाद रत्नमय पीठ से युक्त श्रेष्ठ आसन पर श्रीरामचन्द्रजीको बैठाकर वसिष्ठ जीने जिस किरीट से मनुको अभिषेक किये थे उसी किरीट से उनके वंशमें और भी राजाओं को अभिषेक हुआ था, वही किरीट को वसिष्ठ जीने श्रीराम जी को भूषित किये । ऋत्विक् गण अनेक प्रकार के अलंकार से श्रीरामजी को अलंकृत किये । शत्रुघ्न ने छत्रको सुग्रीव व विभीषण ने चमर को ग्रहण किये इन्द्रने मणिकी माला वायु देवता से श्रीराम जी के लिये भेजा । वायुने इन्द्र की मणिमयी मालाको श्रीरामजी के लिये दिये । श्रीरामजी के अभिषेक काल में देवगण पुष्पकी वर्षा किये गंधर्वों ने गाना सुनाया, अप्सराओं ने नाच दिखाया । पृथिवी धन धान्य से पूर्ण होगई । फल पुष्पसे समृद्ध वृक्ष होगये । श्रीराम जीके अभिषेक महोत्सव कालमें असंख्य गौ घोड़ा हाथी रथ दास दासी धन रत्न भूमि ब्राह्मणों को दान मिला । मन्द सुगन्ध शीतल वायु चलने लगा । दान देने के उपरान्त तीस करोड़ हिरण्य की भूपसी दक्षिणा ब्राह्मणको दिये । अनेक प्रकारके भूषण वस्त्रसे युक्त सोनेके तारसे गुथी मणिकी मालाको श्रीरामजीने सुग्रीव को दिये । और उत्तम भूषण वस्त्र से संपन्न व दूर्ष मणिसे जटित के पुरको अंगद जी को दिये बीच बीचमें मनोहर रत्नजगे चन्द्रमा के समान उज्वल मोती की माला को श्रीरामजी ने सीताजी को दिये । वही हार उपकारी हनूमान को देनेकी अभिलाषा से सीताजी श्रीरामजी के मुख को देखने लगीं । सीताजी की चेष्टाको लखकर श्रीरामजी बोले, हे सुभगे! जिस हारको तुमने लाभ किया है उस हारको हनूमान को देकर प्रसन्न होओ । श्रीरामजी की अनुमति से सीताजी ने वह हार गलेमें से निकाल कर हनूमान को दिये उसदिव्य हारसे हनूमानजी की

ऐसी शोभा हुई जैसे आकाश के मध्यमा चन्द्रमा शोभित होते हैं। इसके अतिरिक्त और जितने वानरगण थे उनको यह मूल्य भूषण वस्त्र देकर सन्तुष्ट किये। विभीषण सुग्रीव जांबवान आदि श्रीरामजी से उत्तम पूजाको ग्रहण करके अपने अपने स्थानको चलने के लिये प्रस्तुत होगये। द्विविद मैन्द व नील को भगवान ने सब प्रकार के फलको देने वाले अनेक बहुमूल्य रत्नको दिये। इसप्रकार सब लोग सत्कार को ग्रहण करके श्रीरामजी से बिदा होकर अपने अपने स्थान को चले गये। सुग्रीव वानरों के सहित किष्किन्धा पुरी में आये। विभीषण उत्तम सत्कार को लेकर मन्त्रियों सहित लंकापुरी को गये और यथा विधि राज्य को भोगने लगे। लोगों को विदा करके प्रसन्नता पूर्वक लक्ष्मणजी से बोले, हे भाई! अब आप पिता के वचन के अनुसार युवराज पदको ग्रहण करिये। श्रीरामजी के अनुनय से लक्ष्मण जी कहे कि ज्येष्ट भरत को युवराज पद दीजिये, भरत को रहते हमारा अधिकार युवराज पद पर नहीं हो सकता। लक्ष्मणजी के नामसे श्री रामजी ने भरत को युवराज पद दिये। और पौंडरीक अश्वमेध गोमेध आदि अनेक यज्ञ से देवताओं को सन्तुष्ट किये। दशहजार वर्षतक पृथिवी को पालन किये। श्रीरामजी के राज्य में स्त्रियां पति के वियोग जे विधवा नहीं होती थी। प्रजाओं में सर्प व रोगका भय नहीं होता था। पिता के रहते पुत्रका मरण नहीं होता था। सब लोग प्रसन्न होकर धर्मका पालन करते थे। किसी में हिंसा व डाह परस्पर नहीं था। वृक्षों में नित्य पुष्प फल लगे रहते थे। समय पर मेघलोग जलकी वर्षा करते थे। वसन्त कालकी हवा सदा चलती थी। सकल प्रजा अपने अपने कर्म धर्म में सदालीन रहती थी। इस प्रकार दश हजार वर्ष तक भगवान ने पृथिवी को पालन किया। यह वाल्मीकि मुनिका पुरातन वेद धर्म यश आयुष्य और आरोग्य तथा विजय को देने वाला है। जो कोई मनुष्य धन पुत्रकी इच्छा करके इस रामायण पाठ को कहे सुनेगा वह सकल पापों से छूटकर अपने मनोरथ के फलको

पावेगा । जो लोग श्रीराम जीके अभिषेक की कथा को कहैं व सुनैंगे, वह अपने शत्रुको विजय करके पृथिवीको भोग करेगा । जैसे राम लक्ष्मण तथा भरत को लाभ करके पुत्रवती हुई वैसे इस कथा के प्रभाव से सब स्त्रियां सुन्दर पुत्रको लाभ करेंगी जो लोग इस रामायण का नित्यपाठ करेंगे, वह सकल दुःख से छूटकर दीर्घ आयुष्य को पावेंगे । इस रामायण कथा को कहने सुनने वालों से देवतालोग प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते हैं । जो राजा इस रामचन्द्रजी के विजय की कथा को कहै व सुनेगे वह सकल आपदा से छूटकर चिरकाल पर्यन्त पृथिवी का सुख भोगेगे । इस रामायण पाठ करने से देवता पितर सदा सन्तुष्ट रहते है । जो लोग इस रामायण को हाथ से लिखैंगे वह प्राणी कल्प भर स्वर्ग वास करेंगे । और उनके वंश में भी श्रीरामचन्द्रजी की अचल भक्ति रहेगी । जो इस रामायणरूपी महाकाव्य को कहैंगे अथवा प्रेम से सुनेगे वह धन धान्य परिवार आदि के सुखको पावेगे ॥

इति श्रीमद्वाल्मीकिये रामायणे युद्धकाण्डे त्रिशोत्तर शततमःसर्गः ॥

❋ इति श्रीयुद्धकाण्ड समाप्तिमगात ❋

जयत्रि जगदीश्वर त्रिपुरनाशन अम्बक
त्रिताप भय भंजन त्रिगुण सिन्धुनिस्तारक ।
त्रिविग्रह विनाशनीं त्रिवपुषः कुरुष्वाद्यनो
भवच्चरण पंकज स्थिरमतीन् मुकुन्द प्रिय ॥

कुण्डलिया ।

श्रीसर्वेश्वरदेवजू राघवेन्द्र वरभूप ।
नितमंगलगिरिपरवसैं सदानन्दधरिरूप ॥
सदानन्दधरिरूप भक्त जनको सुख देहीं ।
जो अनन्य ह्वै रहैं तिन्हे आपन करि लेहीं ॥
सुनो सुनो सब धनी गुनी मानी मनुजैश्वर ।
श्रीनन्दन मन लाई भजो इक श्रीसर्वेश्वर ॥

दोहा।

विरच्यों भाषाबन्धमह, सकललोक उपकार।
बाल्मीकि सागर सरिस, कथा बूझि भवपार॥

सोरठा।

जे जन परम सुजान, भूलोलेब सुधारिमम।
बाल बुद्धि अज्ञान बेद, शास्त्र जानो नहिं॥

श्रीमत् सरयूपारी णधुरीण वैदिक पं० बद्रीनाथ पाण्डेय शर्मा जी के पुत्र
श्री काशीराज कोय संस्कृत पाठशाला ध्यक्ष बाबू गोपीनाथ
कविराज महोदय चरणाश्रयी पाण्डेय कुलभूषण
साहित्य व्याकरणविद् पं० रामेश्वरदत्त
पाण्डेयजी इस रामायण ग्रन्थ
का भाषा नुवाद किया।

हमारे यहां हर प्रकार का पुस्तक मिलता है।

गरूड़पुराण भाषा टीका	१॥)	प्रेत मंजरी भाषा टीका	॥)
पाराशरी धर्मशास्त्र ग्रंथ	॥।)	कर्म बिपाक संहीता	१॥)
बृहत्स्तोत्र रतनाकर	१।)	भर्थरी सतक भा० टी०	॥।)
दुर्गा भाषा टीका	१।)	रसराज महोदधी वैद्यक	१।)
अमृतसागर वैद्यक भाषा में	२॥)	इलाजुल गुरबा वैद्यक	१॥)
नर्राही प्रकाश वैद्यक „	२)	रशहजारा वैद्यक	१।)
बूटी प्रचार वैद्यक	१)	नीघट वैद्यक भाषा	१।)
हँसराज नीदान वैद्यक	१।)	चरकसंहीता भाषा टीक	१२)
शुश्रुत वैद्यक भाषा टीका	१०)	बागभट वैद्यक भाषा टीका	१०)
भाईलज्यरत्नावली भाषा में	२॥)	रसराज महोदधी चारो भाग	४॥)
तिबइसानी वैद्यक भाषा में	१)	मनुश्मृती भाषा टीका	२॥)
ऊस्टादशअस्तमृती भाषा टीका	२॥)	जनेऊ कराने की पुस्तक	॥)
बिवाह कराने की पुस्तक	॥)	श्राधबिवेक मूल	१)
शिद्धान्त कौमदी मूल	१।)	बृजबीलाश कृष्णचरित्र	२॥)
प्रेमसागर	१।)	सुखसागर	४॥)

हर प्रकार की पुस्तक नाटक व उपन्यास मिलने का पता—

बाबू हरीनारायण बर्मा बुकसेलर,
कचौड़ी गली बनारस सिटी।

मैनेजर महेशप्रसाद द्वारा-सत्यनाम प्रेस, मैदागिन बनारस सिटी में मुद्रित।

लीजिये छपगया ! लीजिये छपगया !!

श्रीमद्भगवद्गीता भाषा।

प्रिय महाशय !

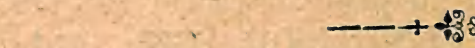
हम एक ऐसे ग्रन्थ को आपके सन्मुख उपस्थित कर रहे हैं वह यह है कि श्रीमद्भगवद्गीता भाषा अस्तु ! कृष्णचन्द्र और अर्जुन के सम्वाद रूप श्रीमद्भगवद्गीता की उत्तमता किसी से भी छिपी नहीं है कि जिसके द्वारा ईश्वर में प्रेम साथही भुक्ति मुक्ति का साधन होता है तथापि सांसारिक कार्य भी इसीके आधार से होते हैं ऐसे परमोपयोगी ग्रन्थ को संस्कृत में होने से विद्वानजन नहीं समझ सकते हैं। यद्यपि इस आदरणीय पूज्य श्रीगीता पर अनेक टीकायें भी हुई हैं तिस पर भी इस अथाह ग्रन्थ को समझना अति कठिन है। इस कठिनता को दूर करने के लिये यह श्रीमद्भगवद्गीता भाषा एक नये ढंग से प्रकाशित किया है इसमें प्रथम गीता का पूर्ण माहात्म्य, गीताके श्लोक का सरल भाषा, प्रत्येक अठारहों अध्याय का पुराणोक्त पृथक २ माहात्म्य लगा हुआ है। यह हम हठ पूर्वक कहेंगे कि इस गीता भाषा के द्वारा बाल, वृद्ध स्त्रियां आदि सभी वर्णों के मनुष्य कुछ भी पढ़ने से श्रीमद्भगवद्गीता को भली भांति समझ सकते हैं। इसके प्रकाशन का मुख्य यही उद्देश्य है कि स्त्रियां भी इसे पढ़कर ज्ञान को प्राप्त होवैं, विशेष प्रशंसा करना व्यर्थ है प्रत्येक गृहस्थ व विरक्त को एक २ प्रति अवश्य लेना चाहिये, यह मुझे पूर्ण आशा है कि अगर आपके पास एक प्रति होगा तो आप अपने इष्टमित्रों को खरीदने के लिये अवश्यही सलाह देंगे। पुस्तक बहुत मोटे अक्षरों में सुपुष्ट कागज पर उत्तम छपी है, इतने पर भी सर्व साधारण के उपकारार्थ कीमत भी अति थोड़ी है। दोहा सहित उपरोक्त।

पुस्तक की कीमत १।।।=) बिना दोहे समेतका दाम १।=)

श्रीगणेशाय नमः ।

भाषा बाल्मीकी रामायण ।

उत्तर काण्ड ।



श्रीमच्चन्द्रनिभा विभाति विमला कीर्तिस्तु यस्य प्रभो ।
यो लोकान् सुखिनोव्यधात्खलुबधा द्धोरस्यदेवद्विष ॥
पित्र्यं राज्यमुपास्य यश्चितरतरंकलं स्वधिष्ण्यं परं ।
प्रागात्सप्रणतार्तिनाशनपरो रामोस्तुनः श्रेयसे ॥

भाषा बाल्मीकी रामायणे उत्तरकांडे प्रथम सर्गः प्रारम्भः ॥ १ ॥

रामचन्द्र के राज्याभिशेष होने पर चारों दिशाके बड़े बड़े प्रतापी और तपस्वी मुनि शिष्यों के सहित राक्षसों के बध के विषयमें हर्ष प्रगट करने को आये । जिनमें उत्तर दिशा के यह मुनि वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि, भरद्वाज, यह सातों ऋषि भी आनकर रामचन्द्र के द्वार पर उपस्थित हुये । वह सातों ऋषि अग्नी के सदृष्य तेजस्वी, बेदबेदांग के जानने वाले और भी सब शास्त्रों में निपुण थे । तब अगस्तजी ने द्वारपाल से कहा कि महाराज रामचन्द्र से निवेदन करो कि बहुत से ऋषि लोग द्वार पर उपस्थित हैं । ऐसे बचन अगस्त के सुनकर श्रीमान् रामचन्द्र के पास जाकर बड़े नम्रता पूर्वक द्वारपाल बोला कि श्रीमान् अगस्त ऋषि के सहित अनेकों ऋषि द्वार पर उपस्थित हैं । द्वारपाल का बचन सुनतेही श्रीमान् रामचन्द्र जी बोले उन लोगों को बड़े आदर के साथ ले आओ । द्वार पालने लौटकर ऋषियों से निवेदन किया कि महाराज आप लोग भीतर चलिये । ऐसी अनुमति पाय ऋषि लोग राजमन्दिरमें गये, ऋषि गणों को आते देख

रामचन्द्र हाथ जोड़ उठ खड़े हो गये तथा आर्घ पाद्य से उन सबका सत्कार किया और सबको बैठने के लिये उत्तम २ आसन प्रदान किये। ऋषि लोग बोले हे महाबलि हम लोगों को आज इस बात का अत्यन्त हर्ष है कि आपने महान् शत्रु रावण को सकुटुम्ब नाश किया, इससे बढ़कर आनन्द संसार में दूसरा नहीं हो सक्ता, हे प्रभो यह आपके लिये कोई बड़ी बात नहीं थी। आप धनुष बाण ले कर तीनों लोक का विजय कर सक्ते हैं। आज हम लोगों का धन्य भाग्य है जो आप को सीता और चारों भाइयों के सहित देखते हैं। इन्द्रजीत का मारा जाना अति दुस्तर था। इन्द्रजीत के लिये हम लोग लक्ष्मण को भी धन्यवाद दिये बिना नहीं रहेंगे। हे त्रैलोकी नाथ इस विजय से हम ऋषियों को जितना सुख और हर्ष भया है, हम लोगों की जिह्वा में शक्ती नहीं है कि उस गुण का बर्णन करे, आपको धन्य है, धन्य है। इस प्रकार उन ऋषियों का बचन सुनकर अति बिनीत शब्दों में श्रीरामचन्द्र जी बोले कि हे महात्मा ओं आप लोगों ने रावण कुम्भकर्ण के बिषय में कुछ न कहकर इन्द्रजीत का मारा जाना अति कठिन बतलाया, इसका क्या कारण है। इन्द्रजीत कैसा प्रभाव, कैसा बल, और कैसा पराक्रम रखता था? और किस कारण से वह रावण से भी बढ़कर के था। यदि यह विषय मेरे सुनने योग्य हो तो कृपाकर कहिये। यह मेरी प्रार्थना है। किस प्रकार उसने इन्द्र को भी जीत लिया और बरदान पाया, पुत्र ऐसा पराक्रमी कैसे हुआ जिस के सदृश उसका पिता भी न था।

इति श्रीबाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे प्रथम सर्गः ॥ १ ॥

महाराज रामचन्द्र का बचन सुन अगस्त मुनि बोले कि हे प्रभो सुनिये जिस कारण से उसका तेज और बल ऐसा उत्कृष्ट था, वह चाहे जिसे मारता परन्तु वह मारा नहीं जाता था। इसके प्रथम मैं रावण का कुल और जन्म तथा बर प्रदान का हाल कहता हूं।

सत्ययुग में ब्रह्माके पुत्र पुलस्त्य नाम ऋषि जो साक्षात् ब्रह्मा ही के तुल्य थे उत्पन्न हुये उनका गुण और शील तथा कीर्ति वर्णन करने की सामर्थ नहीं, बस यही समझिये कि वह साक्षात् प्रजापति के पुत्र थे इसी से सबको अत्यन्त प्रिय थे, एक समय तपस्या करने की इच्छा से मेरु पर्वत के पास तृणबिन्दु के आश्रम में जाकर बसे और तप साधने में तत्पर हुये, उस अस्थानपर ऋषियों नागों और गन्धर्वों की कन्यायें और अप्सराएँ, आय आय कर बिघ्न करने लगीं। वह अस्थान अत्यन्त रमणीक और सब रितुओं में सेवन करने योग्य था। इस लिये वे सब नित्य वहां आवें और खेला करें। नाचें गावें, आदि नाना भांति की क्रीड़ायें करें जिससे पुलस्त्य जी के तपस्या में बिघ्न उपस्थित हो। एक दिन ऋषिको क्रोध चढ़आया और उन कन्याओं से बोले कि आज के बाद जो मेरे साम्हने आवेगी वह गर्भवती हो जायगी, ऐसा बचन रिषी के मुखसे सुनते ही सब कन्यायें तो डरगई पर तृणबिन्दु राजर्षि की कन्या ने उस बात की तरफ ध्यान भी न दिया और दूसरे दिन पूर्व की भांति उसी जगह जाय निर्भयता से खेलने लगी परन्तु वहां पर और किसी दूसरी अपनी सखी को उसने न देखा। उस काल में महात्मा पुलस्त्य स्वाध्यायन कर रहे थे और वह वेद घोष उसके कानमें जा पड़ा उसी समय वह कन्या पांडुवर्ण हो गई और गर्भ का चिह्न उसके शरीर में लक्षित हुआ, अब अपने उस दोषको देख वह बड़ी घबराई और मन में सोचने लगी कि यह मुझे क्या हुआ, ऐसा मनमें सोचती हुई अपने पिताके आश्रम में जाकर बैठी। तृणबिन्दु ने उसकी यह दशा देखकर पूछा कि ऐसा अनुचित रूप तेरा क्यों हो गया। तब वह कन्या अत्यन्त दीनता से बोली कि हे पिता मैं इसका कारण नहीं जानती, परन्तु मैं इतना जानती हूं कि पुलस्त्य मुनी के आश्रम में अपनी सखियों को ढूंढने गई थी परन्तु मैंने और किसी सखी को वहां नहीं पाया और मेरी वहीं ऐसी दशा होगई, तब मैं त्रासके मारे

वहां से भाग आई कन्या का ऐसा बचन सुन राजर्षि तृणबिन्दुने तपोबल से ध्यान करके देखा तो यह कार्य उन्हे ऋषी का जान पड़ा। तबतो तृणबिन्दु कन्या को साथ लेकर मुनि के पास जाकर बोले कि हे महर्षि भगवन् मेरी यह कन्या जो अपने गुणोंसे भूषित है आप ग्रहण करिये मैं भिक्षा देता हूं। आप तपस्या में तत्पर रहते है इस लिये आपकी इन्द्रियां सान्त हो जाती होंगी उस समय यह आप की सेवा करेगी। ऐसा बचन सुन ऋषीने उसे अङ्गीकार किया, उसके सेवा गुणोंसे प्रसन्न होकर एक दिन मुनि बोले कि हे सुन्दरी मैं तेरे गुणो से अति प्रसन्न हुआ। इस लिये आज मैं अपने तुल्य पुत्र तुझे देता हूं, जो दोनों बंशो को बढ़ावेगा और पौलस्त्य कहलावेगा। और तूने मेरे वेद के शब्दों को सुनकर गर्भ धारण किया है इस लिये उस पुत्र का नाम बिश्रवा होगा। ऐसा बचन सुनकर वह कन्या अति हर्षित हुई और थोड़े ही कालके अन्तर विश्रवा नाम पुत्र को जनती भई, यह विश्रवा तीनों लोक में विख्यात हुआ।

इति वाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे द्वितिय सर्गः ॥ २ ॥

थोड़े ही काल में बिश्रवा नाम के पुलस्त्य के पुत्र पिता के सदृश्य तपश्या करने लगे, ये सब बातोंमें पिताके ही सदृश्य दिखाई देते थे। इस प्रकार इनका चमत्कार देख भरद्वाज मुनि ने अपनी कन्या जिसका नाम देववर्णि था इनसे व्याह दी और ये प्रजोत्पत्ति के बुद्धि से उसके मंगल का बिचारकर अत्यन्त प्रसन्न हुये और उस अपनी पत्नी से संपूर्ण ब्राह्मण के गुणों से युक्त वीर्य सम्पन्न किया और परम अद्भुत एक पुत्र उत्पन्न किया अब उसके उत्पन्न होने से ब्रह्मा अति हर्षित हुये और उसकी बुद्धि की तीव्रता देखकर बोले कि यह धनाध्यक्ष होगा और देव ऋषियों के साथ इसका नामकर्ण ब्रह्मा ने किया और कहा कि यह पुत्र विश्रवा से उत्पन्न हुआ है और विश्रवा के तुल्य भी है और इस लिये वैश्रवण इस नाम से विख्यात होगा। अब वह वैश्रवण उसी बन में आहूती दिये

अग्नी के सदृश्य प्राप्त हुये। और उनकी ऐसी बुद्धि हुई कि मैं तपस्या करूं, क्योंकि तप जो है वही परम गति है, ऐसा सोचकर बड़े उग्र नियमों के साथ सहस्र वर्ष तक वे तपस्या में स्थित हुये और जलाहार वाताहार उपवास आदि उन्होंने किया। सहस्र वर्ष ऐसे व्यतीत हुये जैसे एक वर्ष, उस उग्र तपसे प्रसन्न होकर ब्रह्मा, इन्द्र आदि के सहित उनके समीप आकर बोले कि हे वत्स मैं तुम्हारे इस कर्म से अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ। और तुम वरदान पाने के योग्य हो इसलिये जो चाहो वर मांगो और तब वैश्रवण बोले कि हे भगवन् मैं लोकपाल होना चाहता हूं और मैं यह भी चाहता हूं कि मेरे अधिकार में कोष रहे तब प्रसन्न होकर ब्रह्मा बोले एवमस्तु ऐसा ही होगा। मैं चौथे लोकपाल की रचना करने में तत्पर था बड़ी अच्छी बात है तुम वही होना चाहते हो, हे वत्स तुम निधियों के स्वामी हो, इन्द्र, वरुण, और यम, ये तीन हैं चौथे तुम हुए, आज से तुम्हारा नाम कुबेर हुआ और यह पुष्पक नाम का विमान जो सूर्य के सदृश्य प्रकाशमान है इसको तुम अपने सवारी के लिये लेओ और देवताओं के तुल्य हो, अब हम जाते हैं तुम्हारा मंगल हो। हे तात तुम्हें तुम्हारी योग्यता अनुसार वरप्रदान कर हम कृतकृत्य हुए। ऐसा कह ब्रह्मा सब देवताओं के सहित अन्तर ध्यान हो गए। सबके चले जाने पर धनेश हाथ जोड़कर अपने पिता से बोले कि हे भगवन् मैंने पितामह से इष्ट वरको पाया परन्तु मेरे रहने के लिये पितामह ने कुछ भी प्रबन्ध न किया। सो अब आप उसके लिये कोई प्रबन्ध कर दीजिए। मैं जिस अस्थान पर रहूं मेरे कारण वहां किसी प्राणी को पीड़ा न हो, ऐसा पुत्र का बचन सुन विश्रवा मुनि बोले कि दक्षिण समुद्र के तीर पर त्रिकूट नाम पर्वत है उसके अग्र भाग में इन्द्र की पुरी के सदृश्य लंका नाम की पुरी है, जिसको विश्वकर्मा ने राक्षसों के रहने के लिए बनाया था वहां तुम निवास करो और वह सुवर्ण के प्रकार परिखा अस्त्र और शस्त्रों से भरपूर

और सुवर्ण पत्रों के तोरणों से भूषित है, पहले राक्षस लोग वहां रहते थे अब विष्णु के डरसे छोड़कर रसातल में भाग गए और वहीं पर बसे हैं। सो वह सून सान बिना श्वामी के उजाड़ पड़ी है। सो हे पुत्र तुम जाकर वहां सुख से निवाश करो और तुम्हारा बास वहां निसंदेह होगा और वहां कोई बाधा का करने वाला नहीं है। ऐसा पिता का बचन सुन धनाध्यक्ष ने जाकर उस पुरी को बसाया और सहस्रों बर्ष हर्ष पूर्वक वहां जाय बसे और थोड़े ही काल में बैश्रवण के शासन से वह पुरी भरपूर हो गई और चारों तरफ समुद्र से बेष्ठित उस पुरी में अति प्रसन्न हो बिश्रवा मुनि के पुत्र रहने लगे और समय समय पर पुष्पक बिमान पर चढ़ वह बैश्रवण अपने पिता और माता को देखने जाते थे। देव और गन्धर्वों की स्तुति सुनते और अप्सराओंके नृत्यसे अपने गृहको बिभूषित करते और विमान किरणों से सूर्य्य की तरह प्रकाश करते हुए वैश्रवण पिता के पास आने जाने लगे ॥

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे तृतीय सर्गः ॥ ३ ॥

इस प्रकार अगस्त मुनि से कथा सुन रामचन्द्र बड़े विश्मय को प्राप्त हुए, कि लंका में पहिले भी राक्षस रहते थे यह क्या बात है? यह विचार रामचन्द्र मुश्कराकर महर्षि की तरफ देखकर बोले हे भगवन्! पहिले भी इस लंका में राक्षसों ही की बस्ती थी। आपका यह बचन सुन मुझे बड़ा विश्मय हुआ। क्योंकि हमने तो सुना है कि राक्षस पुलस्त्य ही के वंश से उत्पन्न हुए हैं और आपने उनकी उत्पत्ती प्रथम भी बताई। क्या वे कुम्भकर्ण और रावण के पुत्रों से भी अधिक बलवन्त थे? और हे भगवन् इन सबों का मूल राक्षस और महाबली कौनसा राक्षस था और किस अपराध से विष्णु ने इनको मार भगाया? सो हे महर्षे इसको आप विस्तार पूर्वक कहिए और मेरे भ्रम को दूर कीजिए। रामचन्द्रका ऐसा बचन सुन अगस्त जी विस्मित होकर बोले, हे राम! जब ब्रह्मा जी कमल से उत्पन्न

हुए तब पहिले उन्होंने जल की सृष्टि किया और उस जल की रक्षा के लिये अनेकों जीव उत्पन्न किए। तब वह सब जीव ब्रह्मा के समीप खड़े होकर अत्यन्त नम्रता पूर्वक बोले। परन्तु वे सब जीव क्षुधा और त्रिषा से अत्यन्त पीड़ित हो रहे थे। तब ब्रह्मा ने हँस कर उन सबसे कहा कि तुम लोग सब की रक्षा करो। ऐसी ब्रह्मा की आज्ञा पाय उन भूखों और बिन भूखों में से कितने बोले कि "रक्षामः" अर्थात् हम रक्षा करेंगे और बहुत से बोल उठे "यक्षामः" अर्थात् हम उत्तरोत्तर वृद्धि करते हैं। ऐसा उनका बचन सुनकर ब्रह्मा बोले कि "रक्षामः" ऐसा जिन्होंने कहा है वह राक्षस हो जायँ, और जिन्होंने "यक्षाम" कहा है वे यक्ष हों। तब उनमें हेति और प्रहेति दो भाई जो मधुकैटभ के सदृश्य थे राक्षसों के राजा हुए उसमें से प्रहेति जो धार्मिक था, सो तपोबनमें चला गया और हेतिने अपने विवाह के लिए बहुत परिश्रम करके भया नाम जो काल की बहिन थी उससे विवाह कर लिया। उस स्त्री से विद्युत्केश नाम पुत्र जो सूर्य के सदृश्य चमकीला था उत्पन्न हुआ और इस प्रकार बढ़ा जैसे जल में कमल। जब वह जवान हुआ तब उसका पिता उसके विवाह के लिए प्रयत्नवान् हुआ और संध्या की पुत्री जो प्रभाव में संध्या ही के तुल्य थी, पुत्र के लिए मांगा। संध्या ने भी सोंचा कि इस कन्या को अन्ततोगत्वा किसी को देना ही है इसलिए इसी को दे देना ठीक है। अब विद्युत्केश उस पत्नी को पाय आनन्दपूर्वक विहार करने लगा। जैसे इन्द्र इन्द्राणी के संग विहार करता है। सो हे भगवन् कुछ काल में उस संध्या की बेटी जिसकी नाम अलंकटंकटा था विद्युत्केश से गर्भवती हुई। समय होने पर उस राक्षसी ने मेघगर्भके सदृश एक बालक मन्दराचल पर जाय के जना। जो गंगा और अग्नीसे त्यागे हुए गर्भके सदृश थ अर्थात् स्वामीकार्तिक के रूप का वह हुआ। अब पर्वत पर उस लड़के को छोड़कर संध्या की पुत्री रती की आकांक्षा से पति के पास आकर विहार करने लगी

और वह बालक जो सरत्काल के सूर्य के सदृश दीप्तमान था और मेघ के गर्जन तुल्य शब्द से धीरे धीरे रोता और मूठी मुंह में दिये वहां पड़ा था । उस काल में पार्वती के सहित शिव बैलपर चढ़े वायु मार्ग से चले जाते थे सो उस बालक के रोने का शब्द उनके कान में पड़ा तब शंकर ने वहां जाकर देखा कि राक्षस का बालक रो रहा हैं । यह देखकरपार्वती को उस पर बड़ी दया आई और शिव से बोली कि इस परकुछ दया कर दीजिए । तब त्रिपुरारी ने प्रसन्न होकर उसे उसकी माता के तुल्य वय देकर अमर होने का बरदान दिया और पार्वती के प्रसन्नता के लिए एक आकाशगामी नगर उसको दिया । उसी समय पार्वती ने यह कहा कि जिस राक्षस की स्त्री गर्भवती हो और पुत्र जने बालक उत्पन्न होतेही माता के वय के समानहो जाय । सो हे भगवन् अब वह सुकेश नाम राक्षस का पुत्र शंकरके बरदान से बड़ा गर्वित हुआ और उस पुर तथा लक्ष्मी को पाकर उस नगर विमान में बैठा हुआ इन्द्र की तरह चारों तरफ घूमने लगा ।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे चतुर्थो सर्गः ॥ ४ ॥

अब सुकेश को बर पाये देख ग्रामणी नाम गन्धर्व ने अपनी कन्या देववती जो कि संसार में अद्वितिय थी व्याह दी देववती ऐसे पती को पाय अत्यन्त हर्षित हुई, हे राघव कुछ काल में सुकेश के तीन पुत्र माल्यवान् सुमाली और माली उत्पन्न हुए । तीनों पिता की बर प्राप्ती और ऐश्वर्य को देख तपस्या करने के लिए मेरू पर्वत पर और महाघोर तपस्या करने लगे जिससे तीनों लोक थर्रा उठा, ऐसे तप को देख ब्रह्मा देवतों सहित विमान पर चढ़कर वहां आए और उनसे बोले बर मांगो ऐसा बचन सुन तीनों बोले हे प्रभो यदि आप हम पर प्रसन्न हैं तो हम तीनों अजेय शत्रु के मारने में सामर्थवान् चिरंजीवी और परस्पर में मेली हों । एवमस्तु कह कर ब्रह्मा चले गए । अब बर पाने से निर्भय हो देव और दैत्यों को

बाधा देने लगे। इनके दुःख से बड़े बड़े महर्षि और ब्राह्मण बेचारे अनाथ की तरह शरण ढूढ़ने लगे। हे रघुवर अब वे तीनों विश्वकर्मा से जो शिल्प कर्म में प्रसिद्ध था, बोले कि तुम देवताओं के लिये अत्यन्त सुन्दर गृह बनाया करते हो? हमारे लिये भी एक उत्तम गृह का शीघ्र निर्माण करो। उनका ऐसा बचन सुन विश्वकर्मा ने अमरावती के तुल्य निवास स्थान बतलाया, कि दक्षिण समुद्र के तीर पर त्रिकुटाचल पर्वत है और वहां एक दूसरा भी सुबेल नाम का पर्वत है सो इन दोनों के मध्य शिखर पर जो बड़ा ही ऊंचा है और जहां पक्षी भी नहीं पहुंच सक्ते। तीस योजन चौड़ी और सौ योजन लंबी सुवर्ण से भूषित लंका नाम नगरी मैंने इन्द्र की आज्ञा से बनाई है वहां जाय कर तुम रहो, जैसे देवता अमरावती में रहते हैं और जब उस लंका में तुम रहोगे तब बहुत से राक्षस तुम्हारे पास इकट्ठे हो जायँगे और तुम लोग शत्रुओं से भी निर्भय रहोगे। विश्वकर्मा का ऐसा बचन सुन सहस्रों अनुचरों के सहित वे तीनों वहां जा बसे। हे राघव उस समय में नर्मदा नाम की एक गंधर्वी थी, जिसके तीन कन्यायें थी, उन तीनों को उसने उन तीनों से विवाह दिया। उन तीनों को पाय वे तीनों अति आनन्द पूर्वक रहने लगे। कुछ काल में माल्यवानने अपनी भार्या से सात पुत्र और एक कन्या उत्पन्न की। सुमाली ने अपनी भार्या से सात पुत्र और चार कन्यायें उत्पन्न की। मालो ने अपनी भार्या से चार पुत्र उत्पन्न किया। अब वे तीनों राक्षस बहुत से राक्षसों और सैकड़ों पुत्र पौत्र के सहित देवता ऋषियों और नागों तथा पक्षी को कष्ट देने लगे।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥

अब इनसे पीड़ा पाये हुये लोग कैलास पर्वत पर श्री शंकर जो कि सृष्टि के उत्पन्न करने वाले हैं उनके शरण गये और बहुत सी स्तुतीकर बोले कि हे नाथ सुकेश के तीनों पुत्रों ब्रह्मा से वर पाकर बड़े उद्दंड हो गये हैं और हमारे लोगों के गृह और आश्रम

सब उजाड़ कर जंगल कर दिये, और तीनों कहते हैं, कि विष्णु मैं, ब्रह्मा मैं, शिव मैं, यम मैं, वरुण मैं, सूर्य मैं, चन्द्रमा मैं, केवल वही नहीं उनके पुत्र पौत्र आदिकों ने भी घोर उपद्रव उठाया है। सो हे शंकर इसी लिये हम सब आप के शरण आये हैं हम लोगों को अभय प्रदान कर भयंकर रूप धारण कर उन का नाश वृन्दों कीजिये। शुकेश का पक्ष लेते हुये शिव बोले कि हे देव और मुनी मैं उन्हें नहीं मारूंगा, एक उपाय बताता हूं जो उन्हें मार सकेगा उसके पास तुम लोग जाओ। वो और कोई नहीं विष्णु भगवान हैं तुम लोग उन्हीं की शरण जाओ। शिव की आज्ञा से सब लोग विष्णु के समीप गये और जाकर डंडवत् कर अत्यन्त घबराहट से बोले कि हे प्रभो शुकेश के तीनो पुत्रों ने जो लंका नामक नगरी में निवास करते हैं जोकि दक्षिण समुद्र के त्रिकुटा चल नाम के पर्वत पर बसी है हम लोगों को अत्यन्त सता रक्खा है। सो हे मधुसूदन हमारे लोगों के हित के लिये आप उनका बध कीजिये। हम लोग सब आप के शरण आये हैं आपके बिना हमलोगों की रक्षा करने वाला और कोई नहीं है। देवताओं का ऐसा बचन सुन जनार्दन बोले कि हे देवताओं मैं सुकेश और उनके पुत्रों को जानता हूं यदि उन लोगों ने मर्यादा का उलंघन किया है तो मैं अवश्य मारूंगा तुम लोग सब निर्भय रहो। विष्णु भगवान् का ऐसा अभय बचन सुन देव तथा ऋषिगण अत्यन्त हर्ष सहित उनकी स्तुति करते अपने अपने आश्रम को गये। अब देवताओं के उपरोक्त उद्योग की खबर इन तीनों को भी लगी, और सब कोई बैठ कर बिचार करने लगे, माल्यावान् ने कुल समाचार शंकर और विष्णु का सबसे कहा और यह भी कहा कि बिष्णु ने हमारे बध की प्रतिज्ञा की है। अब तुम लोग जो उचित हो सो कहो क्योंकि नारायण ने बड़े बड़े राक्षसों को मारा है यदि वही हम लोगों को मारना चाहते हैं तो हम लोगों

का उनको जीतना कठिन है। यह बात सुमाली और माली बोले हम लोगों ने बड़े बड़े कार्य किये, अब इस समय हम लोगों को मृत्यु का भय उपस्थित हुआ है बिष्णु भगवान् से और हमसे तो कोई द्वेष का कारण नहीं है हां इन देवताओं के उभाड़ने से उन का मन फिर गया होगा। इस लिये हम लोगों को चाहिये, कि इन देवताओं के मारने का उद्योग करें। क्योंकि दोष भी इन्हीं का है। ऐसा बिचार कर इन लोगों ने एक बिशाल सैना सजाई और डंका बजाते हुये देवताओ के युद्ध के लिये चढ़ दौड़े। ए सब बिशाल-काय रथ, हाथी, घोड़ों अनेको यन्तुओं पर सवार थे। इस प्रकार लंका को छोड़कर अहंकार के बस ये सब देव लोक पर चढ़ दौड़े। यह समाचार सुन देव गण देवपुरी छोड़ भाग गये। उस राक्षसों की सैन्य के चलतेही काल से प्रेरित भूमि और आकाशमें अनेकों अपसगुन होने लगे। परन्तु इन बातों पर कुछ भी ध्यान न देकर राक्षस गण जो मृत्यु की फांसी से फंसे थे आगे चले ही जाते थे, वे तीनों भाई सैना के आगे आगे चलते थे। इस प्रकार मेघ के सदृश गर्जती हुई यह राक्षस सैना देवताओं के जीतने की आशा से काल के बसमें हो देव लोक में पहुंची। अब इधर इन राक्षसों के उद्योग को बिष्णु भगवान् ने उनसे सुना और उन सब से युद्ध की इच्छाकर सब शस्त्रों से सुसज्जित हो भगवान् गरुड़ पर सवार हुये। भगवान् ने सैकड़ों सूर्य के सदृश्य प्रकाश मान कवच को धारण किया। और देव लोक में पहुंचे। गरुड़ के पक्षों की वायु से सेना के सब हल हलाय उठे जैस नील वर्ण पर्वत का शृंग पृथ्वी कंपसे हिल उठे।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥

अब मेघरूपी राक्षस अस्त्र रूप जलसे नारायण रूप पर्वत पर वृष्टी करने लगे। बड़े बड़े कठोर बाण आ आ कर बिष्णु के शरीर पर गिरने लगे। यहां तक बाणों की बर्षा राक्षसों ने की नारायण को

ढाप दिया । उस समय बिष्णु भगवान् उन राक्षसोंके प्रहारो को सहते हुये अपने शार्ङ्ग धनुष से बाणों को चलाने लगे, नारायण के वज्र तुल्य बाणों से हजारों राक्षस निर्जिव होकर पृथ्वी पर गिरने लगे, बस उस समय प्रभु ने अपने पंचजन्य संख को बजाया, उसका ऐसा शब्द हुआ कि तीनों लोक कंपाय मान हो गया । उसके शब्द से राक्षसो क घोड़े हाथी आदि भाग चले रथ पर बड़े बड़े योधा गिर गये । शार्ङ्ग धनुष से ऐसे बाण छूटे जो राक्षसों के शरीर की बध कर वज्र के समान पृथ्वी में घुस जाते थे। नारायण के बाण से व्याकुल हो कर राक्षसी सेना बिष्णु के सन्मुख से लंका की तरफ भाग चले । अब सुमाली अपनी सैन को भागते देख बिष्णु पर बाण चलाने लगा और ऐसे बाणों की बर्षा की कि नारायण उसमें ढप गये । सुमाली का पराक्रम देख भागती भई शैन्य पुनः लौटी । उसे अपने बल पर बड़ा गर्व था उस समय वह ऐसा गर्जा जैसे मेघ का शब्द होता है । तब बिष्णु भगवान् ने उसके सारथी का मस्तक काट गिराया, सारथी के मरते घोड़े इधर उधर भागने लगे । सुमाली की ऐसी दशा देख माली धनुष लेकर दौड़ा और माली के चलाये हुये बाण जो स्वर्ण भूषित थे, माली ने सहस्रों बाण बिष्णु पर मारे परन्तु बिष्णु को उस से कुछ भी व्यथा न हुई । तब भगवान् ने धनुष टंकार करके मालीपर बाण चलाये वह बाण बिजुली के समान घुसघुस कर राक्षस का रुधिर पीने लगे। इस प्रकार बिष्णु ने माली को बिमुख कर उसका मुकुट ध्वज, धनुष, और घोड़ों को काट फेंका । अब माली क्रोधित हो गदा हाथ में लेकर रथपर से कूदा और गदा से गरुड़ के ललाट देश में उसने ऐसा मारा कि उसकी चोट खाकर गरुड़ ठहर नहीं सका और भगवान् बिष्णु को पराङ्ग मुख करदिया, क्योंकि मारे पीड़ा के गरुड़ व्याकुल हो गया, यह देख राक्षसों को अत्यन्त हर्ष हुआ, राक्षसों का हर्ष नाद सुन बिष्णु अत्यन्त कुपित हुये और पीछे की तरफ मुख करके अपने सुदर्शन चक्र को छोड़ते भये । वह

चक्र सूर्य की तरह प्रकाश करता काल चक्र की भांति झट जाकर सुमाली के मस्तक को काटता भया उसका मस्तक कटतेही देवता गण भगवन् साधु कहते हुये सिंघनाद करने लगे । अब माली का नाश देख बचे हुए दोनों भाई लंका को भाग चले । इधर गरुड़ भी पीड़ा से स्वस्थ हो क्रोध कर अपने पंख के प्रहार से लगे राक्षसों का नाश करने । इधर भगवान् ने बाणों से उन्हें त्रसित कर दिया, ऐसे त्रासको पाते गिरते पड़ते कटते मरते लंका की तरफ भागे जाते थे ।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

अब भागते हुये राक्षसों को पीछे से बिष्णु भगवान् को मारते देख माल्यवान् बिष्णु के सन्मुख लौट आया और लाल लाल नेत्र किये आय कर बोला कि हे नारायण ! तुम प्राचीन क्षत्रियों के धर्म को नहीं जानते क्योंकि अज्ञानों की तरह तुम हम लोगों को जोकि युद्ध से निवृत्त और भीत हो रहे हैं मार रहे हो । हे सुरेस्वर परांग मुख को बध करना महान् पाप है इससे यदि तुम्हें युद्ध की इच्छा है तो मैं खड़ा हूं मेरे ऊपर अपना बल दिखाओ । ऐसा उसका बचन सुन भगवान् बोले सुनो मैंने देवताओं से प्रण किया है कि मैं तुम लोगों का नाश करूंगा इस लिये तुम लोग चाहे कहीं जाओ मैं छोड़ूगा नहीं । भगवान् का ऐसा वचन सुन माल्यवान ने बिष्णु पर शक्ती चलाई वह शक्ती जाकर बिष्णु के छाती में लगी बिष्णु ने उस शक्ती को वहीं थाम लिया और माल्यवान् को उसी से मारा. बिष्णु भगवान् के हाथ से छूटी शक्ती उसके वक्षस्थल पर गिरी जिसके प्रहार से उसका कवच फट गया और वहमूर्छा को प्राप्त हुआ परन्तु थोड़ी देर स्वस्थ होकर पुनः खड़ा हुआ और लोहे का शूल जो बहुत से कांटों से भरा था, हरी की छाती में मारा और ऊपर से मुष्टि प्रहार भी किया और चार हाथ पीछे हट गया उसका ऐसा साहस देख कर आकाश से वाह वाह ऐसा शब्द हुआ । उसी समय उसने गरुड़ को भी मारा उसके प्रहार से गरुड़ अत्यन्त क्रोधित हुये

और अपने पंखकी वायूसे लगे राक्षसोंको उड़ाने गरुड़के पंखकी वायूसे भागते हुये अपने बड़े भाई को देख सुमाली अपनी सेनालेकर लंकाकी तरफ फिरा, और माल्यवान भी हार मानकर सैन्य सहित लंकाको लौट आय और अति लज्जित हुआ। हे राघव इस प्रकार विष्णु भगवान् ने राक्षसोंको बहुत बेर मारा और उनके प्रधानोंका नाश किया जबतो सब विष्णु का सामना न कर सके तब पाताल में चले गये और आपने जिनको मारा वे पुलस्त्य के वंश के थे। सुमाली, माली और माल्यवान् यह सब रावण से ज्यादा बली थे, हे रामचन्द्र इन देव कंटक राक्षसों को बिना भगवान् के और कोई दूसरा मारने वाला नहीं, इस लिये हम लोग यह जानते हैं कि आप साक्षात् भगवान् का अवतार है राक्षसों को मारने के वास्ते मनुष्य रूप धारण किया है। जब जब धर्म्म की व्यवस्था नष्ट होती है तबर प्रजा और ऋषियों तथा देवताओं की रक्षा के लिये आप साक्षात् अवतार धारण करते हैं और दुष्ट राक्षसों का नाश करते हैं। सो हे प्रभु मैंने आपको पूर्व के दैत्यों की उत्पति कह सुनाई अब रावण के जन्म का हाल कहता हूं।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे अष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

कुछ काल बीतने पर सुमाली रसातल से निकल मनुष्य लोक में सर्वत्र घूमने लगा और साथमें अपनी कुवारी कन्या को जो पद्म आदि चिन्हों से भूषित और अत्यन्त रूपवती थी लिये था एक रोज धनाधिप कुबेर को पिता के दर्शन के लिये जाते देख अति विस्मय को प्राप्त हुआ। रसातल में जा अपने मनमेंसोचने लगा कि कौन उपाय करूं जिससे मेरा कल्याण हो और हम लोग वृद्धि को प्राप्त हो। ऐसा विचार आनी केकसी नाम कन्या से बोला कि हे पुत्री अब तुम्हारे विवाह का समय आ गया और तुम्हारी यौवनावस्था बीतती जाती है न करने के डर से कोई वर तुमको मांगने के लिये अपना मुख नहीं खोलता तुम्हारे विषय में हम सब धर्म बुद्धि से बध रहे हैं, मानी जनों के लिये कन्या जाति बड़ी दुःख की कारण है। क्यों

कि यह नहीं जाना जाता कि कन्या का विवाह कैसे वरके साथ होगा। माता पिता और जिसके साथ विवाही जाती है उन तीनों के कुलों को कन्या संशय में डाले रहती है सो हे पुत्री मेरा विचार है कि तू ब्रह्मा के कुल में उत्पन्न पुलस्त्यके पुत्र विश्रवा मुनी कोस्वयं जाकर वर। हे पुत्री जैसा वह धनेश है वैसेही पुत्र तुझे भी उत्पन्न होंगे। पिता का ऐसा वचन सुन वह कन्या विश्रवा मुनि के आश्रम में गई उस समय मुनि अग्नि होत्र कर रहे थे। वह कन्या प्रदोष काल के दारुण वेला कि ओर न देखकर ऋषी के सन्मुख जाय अपने पैरों की तरफ दृष्टि किये और अपने अंगूठे के अग्रभाग से पृथ्वी खोदती खड़ी हो गई। जब मुनी की दृष्टि उस पर पड़ी मुनी उस चन्द्रमुखी युवती को देखकर बोले कि हे भद्रे तू किस की कन्या है? और यहां किस लिये आकर खड़ी है यह ठीकर मुझे बता? विश्रवा मुनि का ऐसा वचन सुन वह कन्या हाथ जोड़ कर बोली कि हे भाई आप अपने प्रभाव से मेरे अभिप्राय को समझ सक्ते हैं परन्तु हे मुने मेरा नाम केकसी है और मैं पिता की आज्ञा से आप के पास आई हूं शेष जो कुछ है वह आप विचार कर देखिये। तब मुनि ने अपने तप बल से उसके हृदय की बात जान कर कहा कि हे भाई हमने तेरे मन की बात जान ली। तू पुत्र की अभिलाषा रखती है परन्तु इस दारुण बेला में तू हमारे पास आई जैसे पुत्रों को तू जनेगी सो मैं बतलाता हूं कि तू महा क्रूर कर्म वाले राक्षसों को जो दारुण, कार, और दारुणा बन्धु गणों पर प्रीति रखने वाले होंगे जनेगी। ऐसा बचन सुन कर प्रणाम कर वह बोली हे भगवन् आप जैसे ब्रह्मवादी से ऐसे दुराचार, पुत्रों को मैं नहीं चाहती सो मेरे ऊपर कृपा कीजिये। ऐसा बचन सुन मुनि उससे बोले अच्छा सुन्दरी तेरा पिछला पुत्र मेरे वंश के योग्य धर्म्मात्मा होगा। सो हे राघव कुछ काल बीते केकसी ने महा दारुण राक्षस पुत्र जिसके दश मस्तक और बड़े बड़े दांत, पर्वत के संदृश आकर, लाल लाल

ओंठ और बीस भुजा बड़े भारी विशाल मुख और चम चमाते माथे के बाल थे जनती हुई । उसके जन्म से चारों तरफ अशगुन होने लगा । अब ब्रह्म देव के तुल्य उसके पिता ने कहा कि यह दश मस्तक धारी उत्पन्न हुआ है इस लिये इसका नाम भी दशानन होगा । जिसके बाद महाकपरामी कुम्भकर्ण को जनती हुई और उसके पीछे सूर्पणखा नाम की एक कन्या को प्रसव किया तब एक पुत्र और विभीषण नाम का जनती भई जिसके जन्म काल में आकाश से देवता गण दुंदभी बजाते हुये और पुष्प वृष्टि करते हुये । अब संसार को त्रास देने वाले रावण और कुम्भकर्ण उसी जंगल में बढ़ने लगे । कुम्भकर्ण प्रयत्न होकर धर्म्म वत्सल महर्षियों को पकड़ पकड़ कर खाता और स्वछंदता पूर्वक घूमा करता, परन्तु भोजन से उसको संताप नहीं होता और विभीषण अपने आचार विचार से रहता था । कुछ काल बीते एक दिन पुष्पक विमान पर चढ़ धनेश पिताके दर्शन को आये उस काल तेज से प्रज्वलित कुंवर को देखकर केकसी रावण से बोली कि हे पुत्र अपने भाई वैश्रवण को देखो कि तेजसे कैसे प्रज्वलित हैं और एक तुम हो देखो कितना अन्तर है सो हे दुराग्रीव ऐसा उपाय करो कि जिसमें तुम भी वैश्रवण के तुल्य हो जाओ । माता का ऐसा बचन सुन रावण को बड़ी डाह उत्पन्न हुई और उसने माता से उसी समय प्रतिज्ञा की कि हे माता मैं तुझ से सत्यता पूर्वक प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं भी वैश्रवण के तुल्य वा उससे भी अधिक अपने पराक्रम से हो जाऊंगा । इस लिये तुम अपने हृदय के संताप को परित्याग करो, अब उसी क्रोध में छोट भाई कुम्भकर्ण के साथ ले सब कामों को छोड़ तपस्या करने पर उद्यत हुआ और गो कर्ण के आश्रम में जाता भया ।

इति वाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

रामचन्द्र फिर बोले कि हे मुने इन महाबली तीनों भाइयों ने कैसी तपस्या की सो कहिये । ऐसा बचन सुन अगस्त्य मुनि बोले

हे राघव ! वो तीनों भाई गोकर्ण में जाय तपस्या करने में तत्पर हुए कुंभकर्ण तो धर्ममार्ग पर स्थिर हो ग्रीष्म कालमें पंचाग्नि सेवन करता वर्षा काल में वीरासन बैठ जलकी धारा को सहता और शीत कालमें जल का अवलंबन करता था। इस प्रकार दश सहस्र वर्ष बीत गये और धर्म्मात्मा विभीषण नित्य धर्म्म में तत्पर हो पांच सहस्र वर्ष तक एक पैरसे भूमिपर खड़ा रहा और उसका नीयम जब समाप्त हुआ उस समय अप्सरागण नाचने लगीं पुष्प वृष्टी हुई और देवगण स्तुती करने लगे। उसके उपरांत पांच सहस्र वर्ष सूर्य्य की तरफ दृष्टि करके वह एकटक देखने लगा। इस प्रकार विभीषण के भी दस हजार वर्ष बीत गये और दशग्रीव दस हजार वर्ष तक योहीं निराहार रहा और जब एक हजार वर्ष बीतता था तब वह अपना एक सिर काटकर अग्निमें हवन कर देता था। इस प्रकार उसने नव हजार वर्ष में अपने नौ मस्तक अग्निमें होम किये दसवें हजार वर्ष में जब वह अपना दसवां मस्तक काटने को उद्यत हुआ तब वहां ब्रह्मा देवताओं के सहित आनकर उपस्थित हुये और बोले कि हे दशग्रीव मैं प्रसन्न हूं शीघ्र बर मांगो ऐसे बचन सुन दशानन अति हर्षित हो पितामह को प्रणाम कर गद्गद बाणी से बोला कि हे भगवन् संसारमें मरने से अधिक भयदायक दूसरी बात नहीं है। क्यों कि मृत्युके समान दूसरा शत्रु नहीं है। इस लिये मैं अमरत्व चाहताहूं। ऐसा बचन सुन ब्रह्मा बोले कि सम्पूर्ण अमरत्व तुमारे वास्ते हो नहीं सकता इस लिये तुम कोई दूसरा बर मांगो। ब्रह्मा का ऐसा बचन सुन रावण हाथ जोड़कर बोला कि हे प्रजापति, गरुड़, नारायण, दैत्य दानव, राक्षस और देवता इनसे मैं अवध्य होऊँ और इनसे अन्य जीवों की मुझे कुछ चिन्ता नहीं क्यों कि मनुष्य इत्यादि को तो मैं तृण के समान समझता हूं। ऐसा सुन ब्रह्माने कहा कि ऐसा ही होगा। ऐसा कहकर ब्रह्मा फेर बोले कि देख मैं तुझसे प्रसन्न हूं इससे अपनी ओर से भी मैं तुझे बर देता हूं। कि जितने मस्तक तूने अग्नि में डाले हैं वे सब

ज्यों के त्यों पूर्ववत तुमको प्राप्त होंगे एक और भी दुर्लभ वर तुझे देता हूं कि जिस समय तू जैसा रूप चाहेगा तैसा पावेगा। ऐसा वर देतेही रावण के मस्तक फेर जैसे के तैसे उग आये। हे राघव! फेर ब्रह्मा बिभीषण के पास जाकर बोले कि हे वत्स धर्म्मात्मन्! तुम्हारे धर्म्माचरण से मैं अति प्रसन्न हूं इस लिये वर मांगो, ऐसा सुन बिभीषण बोले कि हे भगवन् यदि आप मुझ पर संतुष्ट हैं तो मैं सब गुणों से परिपूर्ण हुआ और जो आप वर मांगने को कहते हैं तो मैं यही वर मांगता हूं कि हर समय मेरी बुद्धि स्थिर रहे। तथा धर्म्म में तत्पर रहे और बिना सिखाये हुये भी ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करना मैं जानूं। यह सुन ब्रह्मा प्रसन्न होकर बोले कि हे वत्स धर्मिष्टि तो तुम हुई हो और जैसा तुम चाहते हो वैसा ही होगा। और राक्षस योनी में उत्पन्न होकर भी अधर्म्म में तुमारी बुद्धि नहीं है इस लिये मैं तुमको अमरत्व भी देता हूं। ऐसा कह कर जब ब्रह्मा कुंभकर्ण के पास चले उस समय सब देवते मना करने लगे कि हे भगवन् आप जानते हैं कि यह बिना वर पाये कैसा उदंड था और जब यह वरदान पा जायेगा तब संसार के लोगों के प्राण कैसे बचेंगे? ऐसी बात सुन ब्रह्मा ने सरस्वती का चिन्तन किया, वैसेही वह आकर उनके सन्मुख उपस्थित हुई और बोली कि भगवन् क्या आज्ञा है, तब ब्रह्मा बोले कि तू इसके हृदय में प्रवेश कर और जो मैं चाहता हूं सो इससे कहलादें। ब्रह्मा की आज्ञा पा सरस्वती उसके मुख में घुस गई। तब ब्रह्मा कुंभकर्ण से बोले कि हे वत्स जो तुम चाहते हो सो वर मांगो। यह बचन ब्रह्मा का सुन कुंभकर्ण बोला कि हे देव मैं बहुत वर्ष तक सोया करूँ, यही मेरी इच्छा है, यह सुन ब्रह्मा बोले "एवमस्तु" ऐसा ही होगा। ऐसा कह कर ब्रह्मा देवों को साथ ले अपने लोक को चले गये, और सरस्वती ने भी उसे छोड़ दिया। जब सब लोग चले गये और वह सचेत हुआ और दुखित मन से सोचने लगा कि ऐसे बचन मेरे मुख से कैसे निकले मैं जानता हूं कि इन देवताओं ने मुझे मोहित कर दिया, इस

प्रकार तीनों भाई बरदान को पाय लसोड़े के बन में जाकर बसे।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे दशमः सर्गः ॥ १० ॥

अब सुमाली इन तीनों भाइयों को बर पाये देख भय को छोड़ अपने अनुचरों और सचिवों को साथ ले रसातल से निकला और रावण के पास आया और बड़े प्रेम से बोला हे वत्स बड़े हर्ष का दिन है कि हम लोगों के इष्ट मनोरथ का लाभ हुआ जो तुमने पितामह से बरदान को प्राप्त किया, जिस कारण से हम लोग लंका को छोड़ रसातल में जाकर बसे थे वह विष्णु का भय अब निवृत्त हुआ अब वह लंकापुरी जो हम लोगों की है और अब उसमें धनाधिप तुम्हारे भाई रहते हैं सो जिस प्रकार होसके साम, दाम. या युद्ध से उसको तुम उनसे ले लो। मुझे पूर्ण बिश्वास है कि तुम्ही लंका के स्वामी और राजा होगे, क्यों कि तुम्ही ने राक्षस बंश का पुनः उद्धार किया है। ऐसे बचन सुन रावण बोला कि धनाध्यक्ष तो हमारे पूज्यहैं हम उनसे किस प्रकार लड़ सक्ते हैं। इस प्रकार मातामह को बिनय पूर्वक रावण ने समुझाय दिया। एक दम जवाब पाकर सुमाली चुप होगया। कुछ काल बीतने पर प्रहस्त जो कि सुमाली का सचिव था रावण से बोला कि हे महाबाहो शूर बीरों के लिये सौभ्रात नहीं है। मैं तुम से पूर्वकाल की एक कथा कहता हूं। दिति और अदिति यह दोनों बहिन और परस्पर में अत्यन्त हितकारणी थीं और दोनों कश्यप प्रजापति को ब्याही थीं। उसमें अदिति ने देवतों को उत्पन्न किया और दिति ने दैत्यों को सो हे बीर पूर्वकालमें यह सम्पूर्ण पृथ्वी दैत्यों ही की थी। पीछे से बिष्णु ने दैत्यों को मार देवताओं को दे दिया। सो आपही उलट पलट करियेगा, ऐसा नहीं है, आदि से सु और असुर इसी प्रकार लड़ते झगड़ते आये हैं। इस लिये जो मैं कहता हूं उसे करिये। उसका ऐसा बचन सुन दशमुख कुछ देर तक सोचकर बोला कि अच्छा जैसा तुम कहोगे मैं वैसाही करूँगा। और उसी दिन उन्हीं राक्षसों के साथ हर्ष सहित लंका पर चढ़ चला। जब लंका के

समीप बन में गया तब प्रहस्त को दूत बनाकर कुबेर के पास भेजा और कहा कि हे प्रहस्त तुम कुबेर के पास जाकर साम पूर्वक यह बात कहो कि हे सौम्य राजन् यह लंकापुरी राक्षसों की है इसको आप ने बसाया है यह उचित नहीं है । सो यह लंकापुरी आज हम को देदो तो हमारी तुमारी अत्यंत प्रीति बढ़ेगी । और धर्म्मका भी पालन होगा । ऐसा बचन सुन प्रहस्त वहां गया और दशकंधर का संदेशा कह सुनाया । प्रहस्त का बचन सुन वैश्रवण देव बोले कि यह पुरी सून्य पड़ी थी और कोई राक्षस इसमें नहीं रहता था, तब पिताने मुझे रहने के लिये दी और मैंने भी इसे तन मन धन लगा कर बसाया, सो तुम जाय कर दशग्रीव से कहो कि यह पुरी और मेरा राज्य यह सब तुम्हारा ही है, इस लिये हे महाबाहो तुम चाहो इस अकंटक राज्य का भी भोग करो, क्यों कि यह राज्य और यह धन हमारा तुमारा एकही है । ऐसा कह कर प्रहस्त को बिदाकर धनाध्यक्ष अपाने पिता के पास आये और प्रणाम करके रावण की सब बातें कह सुनाई और अति नम्रता से बोले कि अब मुझे जो आज्ञा दीजिये सो मैं करूँ । कुबेर का बचन सुन मुनि बोले हे बत्स उसने यह बात मेरे से भी कही रही, मैंने तो उसे बहुत कुछ नीचा ऊंचा भी कहा अन्त में मैंने उसे कहा कि जा तू नष्ट होजायगा । वह बरदान पाकर उन्मत्त होगयाहै, इस लिये मेरी अनुमति यह है कि तुम कैलाश नामक पर्वत पर जाकर बसो, वहीं एक पुरी बनवा लेना अति पवित्र मंदाकिनी बह रही है, वहां तरह तरह के पुष्पों और कमलों से पर्वत सोभित होरहा है, तहां गंधर्व और बिद्याधरों की कन्यायें आ आ कर बिहार किया करती हैं । हे धनेश मेरी सम्मति से उस राक्षस से बैर करना ठीक नहीं । पिता का ऐसा बचन सुन धनेश पुत्र, आमात्य, धन और बाहनों को साथ लेकर पिता के कहे हुये स्थान पर जा बसे । इधर लंकापुरी को खाली पाकर दसशीश ने उसमें प्रवेश किया, और सुख पूर्वक रहने लगा । जैसे स्वर्ग में इन्द्र निवास करता है । निशा-

चरों से राज्याभिषेक पाय वह उस नगरी को बसाने लगा। काले काले मेघ के सदृश राक्षसों से वह नगरी भर उठी

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे एकादश सर्गः ॥ ११ ॥

राज्य पाय प्रथम उसने अपाने बहिन के बिवाह के सम्बन्ध में बिचार किया और कालकेय बंश के विद्युज्जिह्व से शूर्पणखा का बिवाह कर दिया और आप मृगया करता बनों में घूमने लगा। वहां दितिका पुत्र मयनाम दानव एक कन्या को साथ लिये एक रोज उसे मिला। तब रावण ने पूछा कि आप इस घनघोर जंगल में अकेले घूमते हैं, कृपया यह कहिये कि आप कौन हैं? और इस कन्या को क्यों साथ लिये हैं। रावण का ऐसा बचन सुन उसने कहा कि हेमानाम की एक अप्सरा थी उसे देवतों ने मुझे दे दिया था सो उस अप्सरा में हजार वर्ष पर्यन्त मैं आशक्त था सो वह देवतातों के किसी कार्य बस तेरह वर्ष के लिये चली गई और अब इतना समय बीत गया। चौदवें वर्ष में मैंने अपनी माया के बल से सुवर्ण मय और हीरों तथा पन्नों से जड़ित एक नगरी बसाया उस स्त्री के वियोग से दीन और दुखित हो उस नगरी में रहने लगा। इस समय मैं वहीं से इस कन्या को संग लेकर यहां आया हूं। हे महाबाहो यह कन्या उसी के उदर से उत्पन्न हुई है और मैं इसके लिये पति ढूंढ़ रहा हूं। इस कन्या के अलावे दो पुत्र भी मुझे हैं। एक का नाम मायावी, दूसरे का नाम दुन्दुभि है। मैंने अपानी सब कथा कह सुनाई अब तुम बताओ कि तुम कौन हो? उसका ऐसा बचन सुन दशानन बोला कि मैं पुलस्त्य मुनि के पुत्र का पुत्र हूं और मेरा नाम दशग्रीव है। और मेरे पिता का नाम विश्रवा है ये ब्रह्मा से तीसरे पुत्र हैं। ऐसा सुन और उसको महर्षि का पुत्र जान वह मय दानव अपनी पुत्री उसको देने के लिये उद्यत हुआ। और दशग्रीव से उसका पाणी ग्रहण कराय यह बात बोला कि हे राजन् यह मेरी पुत्री हेमा अप्सरा के उदर से उत्पन्न हुई है और इसका नाम मंदोदरी है सो तुम पत्नीके लिये

इसे आप ग्रहण कीजिये। तब रावण अंगीकार बचन बोला और वहां पर अग्नि को प्रज्वलित कर मंदोदरी का पाणी ग्रहण किया। हे रामचन्द्र! यद्यपि वहामय नामक दानव, रावण के ऊपर ऋषि का श्राप है यह जानता था, परन्तु ब्रह्मा के कुल में उत्पन्न है ऐसा विचार अपनी कन्या उसी को ब्याह दी। और एक शक्ती जो अमोघ परमाद्भुत और बड़ी तपस्या से उसने पाई थी रावण को दी जिससे उसने लक्ष्मण पर प्रहार किया था। इस प्रकार दशग्रीव ने विवाह कर दोनों छोटे भाइयों के विवाह का भी विचार किया और वैरोचन दैत्य अर्थात् बलि के पुत्र की पुत्री कुम्भकर्ण के लिये और गन्धर्वराज शौलूष की कन्या जो बड़ी धर्मज्ञ थी और जिसका नाम शर्मन थी बिभीषण के लिये ल्याय दी। हे रामचन्द्र इस प्रकार से सब विवाह कर अपानी स्त्रीयों के साथ विहार करने लगे। कुछ काल में मंदोदरी ने मेघनाद को जना। जिसे कि आप लोग इन्द्रजीत कहते हैं। इसका यह कारण है कि माता के गर्भ से निकलतेही उसने मेघ के सदृश गर्जन की जिस से की सम्पूर्ण लंका जढ़ की नाई होगई तब पिता ने उसका नाम मेघनाद रक्खा, हे रामचन्द्र वह मेघनाद उसी लंकापुरी में लालन पालन होकर खूब वृद्धि को प्राप्त हुआ।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे द्वादश सर्ग॰ ॥ १२ ॥

अब ब्रह्मा की दी हुई निद्रा कुम्भकर्ण के पास आई तब उसने रावण से कहा कि हे भाई मुझे निद्रा ने बहुत सताया है मेरे सूतने का कोई स्थान ठीक करो उसी समय रावण ने विश्वकर्मा को बुलाकर आज्ञा दी कि अभी रत्नों से जड़ित एक, योजन चौड़ा और दो योजन चौड़ा स्थान इसी लंका में निर्माण करो उसी समय उसने अति उत्तम स्थान बनाकर तैयार कर दिया कुम्भकर्ण उसी में जाकर सूता और कई हजार वर्ष तक सूता पड़ा रहा। कुछ काल में रावण उन्मत्त हो देव ऋषी और गन्धर्बों को मारता फिरता था, उनके गृह और वाटिकाओं को नष्ट भ्रष्ट करता फिरता था। उसका यह सब चरित्र धने-

शर ने सुना और अपाने कुल की मर्यादा को बताने के लिये अपाने भाईपन के बड़पन जताने के लिये अपना दूत रावण के पास भेजा। दूत जाकर पहिले बिभीषण से मिला। तब बिभीषण ने उसके आगमन का कारण पूछा और उसका मान सन्मान भी किया पीछे रावण की सभा में लेजाकर उसे दिखा दिया। वह दूत रावण को देख कर जो अपाने तेज से प्रदिप्त होरहा था जै महाराज की कह कर चुप हो रहा। इसके उपरान्त समाचार कहने के लिये प्रवृत्त हुआ और बोला कि हे राजन्! आपके भाई कुबेरने चरित्र और कुल इन दोनों के बिषय में जो कहा है सो सुनिये। कि अब तक जो कुछ तुमने किया उतनाही बहुत है और अब बस करो और अच्छे चरित्र का संग्रह करो। और शक्ती पूर्वक धर्म में अपनी प्रवृत्ती करो। हे भ्राता मैंने नन्दन बन का भंग और ऋषीयों का बध और तुम्हारे लिये देवताओं का उद्योग सह सब सुना है। हे राक्षसराज यद्यापि तुमने बहुत बार मेरा निरादर किया है तथापि अपराध करने वाले बालक की भी रक्षा उसके बांधव को करना उचित है। और मैं हिमालय पर जाकर रुद्र सम्बंधी व्रत कर रहा था वहां मैंने पार्वती सहित शिव का दर्शन पाया, मेरे मूं से इतना निकला कि यह कौन है? इसी से क्रोधित होकर देवी ने मेरे सव्य नेत्र का नाश कर दिया, इसके बाद मैं उसी पर्वत के एक स्थान में जाकर आठ सौ वर्ष तक मौन महाव्रत को धारण कर बैठा रहा जब समय समाप्त हुआ तब भगवान् महेश्वर ने प्रसन्न होकर कहा कि हे धर्मज्ञ मैं तुम्हारे इस तपस्या से प्रसन्न हुआ, हे धनाधिप मैंने इस व्रत को धारण किया था और तुमने भी इसको निवाहा, तीसरे पुरुष की सामर्थ नहीं है जो इस कठिन व्रत को करे इस व्रत को मैंने ही उत्पन्न किया सो हे धनाधिप आज से मेरी तुमारी मैत्री हुई। और जो पार्वती ने के क्रोध से तुमारा एक नयन हो गया और सरीर पीला होगया इससे आज से तुमारा नाम एकाक्षी पिंगली ऐसा विख्यात होगा। इस प्रकार मैं शिव की मैत्री पाय

अपने स्थान पर आया, तब मैंने यह तुम्हारा पाप सुना सो तुम कुल के दूषण रूप मत हो, क्यों कि ऋषीगण सहित देवते तुम्हारे बध का उपाय सोंच रहे हैं। दूत से ऐसा बचन सुन दशकंधर के क्रोध से नेत्र लाल होगये, हाथों को और दांतों को पीसता हुआ बोला हे दूत मैंने तेरे बचन को समझा जो तू कह रहा है सो अब न तू है और न वह भाई जिसने तुझे भेजा है, धनाध्यक्ष मेरे हित की बात नहीं कहता बल्कि मुझे महेश्वर की मैत्री सुनाता है, यह अपराध मेरे क्षमा करने योग्य नहीं है, जो तूने कहा और हे दूत! जो मैंने इतने काल तक यह समुझ के क्षमा किया कि वह मेरा बड़ा भाई है, इस लिये उसका बध अनुचित है। परन्तु इस समय उसके वाक्यों को सुनकर मैंने यही ठाना है कि अपने बाहूवीर्य से तीनों लोकों को जीतूं और उसीके कारण चारों लोक पालों को मारकर इसी महूर्त में यमपुरी को भेज दूँ। ऐसा बचन कह रावण ने खड्ग से दूत का सिर काट डाला और दुष्टात्मा राक्षसों को उसके भक्षण की आज्ञा दी।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

अब रावण, महोदर, प्रहस्त, मारीच, शुक, सारण और धुम्राक्ष इन छ सचिवों को साथ ले क्रोध से लोकों को जलाता नगर नदी पर्वत बन और उपबनों को लांघता महूर्त भर में कैलाश पर्वत पर पहुंचा। यह समाचार यक्ष लोगों ने सुना कि रावण मन्त्रियों को लेकर युद्ध करने के लिये चढ़ आया है तब बड़े भयभीत हुये और यह भी सुना कि वह राजा का भाई है तब सब ने दौड़ कर राजा को खबर दी। समाचार सुनतेही कुबेर ने युद्ध की अनुमति दी, अनुमति देतही सैन्य में बड़ी खलबली मची। उसके बाद यक्ष और राक्षसों का घोर संग्राम हुआ। जिससे रावण के सचिव एक बार व्याकुल होगये, उनकी ऐसी दशा देख स्वयं रावण गदा लेकर यक्ष सेना में घुस गया हजारों हजार यक्ष चारों तरफ से अस्त्र सस्त्र से उसे मारने लगे परन्तु रावण को उनका प्रहार कुछ नहीं मालुम होता था और रावण

के प्रहार से अपने कौं यक्षों का नाश होने लगा। उधर रावण के मंत्री गणों ने इतने यक्षों को मारा कि यक्ष अब थोड़े से रह गये, इन राक्षसों ने यक्षों को इतना मारा कि यक्ष सेना भग्न हो गई आकाश से देवते इस युद्ध को देखते थे इतनी भीड़ भई की उन्हें देखने की जगह नहीं मिलती थी। धनाध्यक्षने पेस्तर के भेजे हुये यक्षों का नाश देख और बहुत से यक्षों को भेजा। उधर से धनाध्यक्ष की मदद के लिये संयोधकंटक नाम महावली यक्ष राजने एक बड़ी सैना भेजी, परन्तु रावण के प्रताप के आगे यक्षों की कुछ भी न चली। इधर रावण धनाध्यक्ष के कोट में घुसा, उसका ऐसा पराक्रम देख यक्ष सेना इधर उधर भाग गई।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकाण्डे चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥

उस सेना को तितिर बितिर होती देख कुबेर ने मणीभद्र नामक महायक्ष से कहा कि यक्षेंद्र इस दुष्ट रावण को मारो, और इन वीर यक्षों की रक्षा करो। ऐसा बचन सुन वह यह चार हजार यक्षों को साथ ले रावण से लड़ने को उपस्थित हुआ, महाघोर युद्ध हुआ, प्रहस्त ने एक हजार महोदर ने एक हजार मारीच ने दो हजार यक्षों को एक निमेष में मार गिराया। इधर धूम्राक्ष ने मणीभद्रको मूशल से छाती में मारा परन्तु वह जरा न हिला, उधर मणीभद्रने गदासे उसके सिरमें मारा उस चोट से वह मूर्छित होकर गिरा मणीभद्रके प्रहार से धूम्राक्ष को रुधिर से नहाये और मूर्छित देख रावण यक्ष पर दौड़ा। यक्षने रावण को आते देख तीन शक्तियों से उस पर प्रहार किया उस प्रहार को सहते हुये, रावण ने उस यक्ष के मुकुट पर प्रहार किया, उसका मुकुट पार्श्व में गिरा जिस से वह मुकुट पार्श्वमौलि कहलाने लगा और वह महाबलवान् यक्ष युद्ध से भाग गया। इसके बाद धनाध्यक्ष शुक्र और पौष्ठपद ये दोनों मंत्रियों के साथ दिखाई दिये, ये आतेही बोले हे दुर्मते मेरी मना की हुई बात तू नहीं मानता इसका फल पीछे पावेगा। मैं तेरे से जादा

भाषण नहीं करूंगा ऐसा बड़ों की आज्ञा है। ऐसा कहकर धनाध्यक्ष ने मारीच आदि मंत्रियों पर ऐसा प्रहार किया कि वे सब भाग खड़े हुये और बड़े क्रोध युक्त रावण के ऊपर भी गदा मारी, परन्तु वह स्थान से न हटा इसके बाद दोनों परस्पर प्रहार करने लगे, न तो कोई व्याकुल और न कोई शांत होते थे। धनद ने आग्नेयस्त्र रावण पर चलाया, तब उसने वरुणास्त्र से उसका निर्वाण किया। तब रावण ने राक्षसी माया फैलाई अनेको यन्तु वहां उत्पन्न हो गये और आप अलक्षित हो गया कुछ देर में प्रगट होकर धनेस के सिर पर ऐसा गदा का प्रहार किया जिससे धनेस बेहोश होकर भूमिपर गिर पड़े, तब निधियों ने इनको उठाया और नन्दन बनमें लाय सचेत किया, इस प्रकार दशाननने धनद को जीत बड़ा हर्ष पाया, और धनद के जय लक्षण पुष्पक बिमान को जो सुवर्ण खंभों से रचित तथा मणियों से जड़ित सब गुणों से भूषित जो था हर लिया और दुर्मति ने अपने मनमें यह दृढ़ किया कि अब मैंने तीनों लोक को जीत लिया, इस प्रकार वैश्रवणदेव को जीत कैलास से उतरा।

इति वाल्मीकिये रामायणे उत्तरकाण्डे पंचदशः सर्गः ॥ १५ ॥

हे रामचन्द्र अपने भाई धनद को जीत वह खल कैलाश पर स्वामिकार्तिक के उत्पत्ति स्थान सुवर्ण की सरहरी के जंगल में घुसा और देखने लगा कि सरहरी का जंगल अति अद्भुत और किरणों से वेष्टित जैसे सूर्य्य के सदृश चम चमा रहा है? ऐसा पर्वत पर चढ़ देखही रहा था कि इतने में क्या देखता है कि पुष्पक बिमान चलने से रुक गया। तब तो वह अति चकित हुआ और बिचारने लगा कि क्या कारण है? जो कि मैं समझता हूं कि इस पर्वत पर रहने वाला कोई जीव का कारण है, मरीची बोला कि बिना कारण तो ऐसा हो नहीं सकता, कहीं यह तो नहीं हैं कि धनद के सिवा दूसरे को लेकर यह न चले। अभी यह लोग इस प्रकार बात चीत करही रहे थे, कि नन्दीश्वर जो शिव की सेवा में सदा तत्पर रहते हैं रावण

के पास आयकर बोले कि हे दशग्रीव तू यहां से चला जा, इस पर्वत पर श्री भगवान् शंकर पार्वती के सहित क्रीड़ा कर रहे हैं इस लिये यह पर्वत जीव मात्र से अगम्य है इससे तुम अपना बिमान लौटा ले जाओ। ऐसा नदीश्वर का बचन सुन रावण अधिक क्रोधित हो पुष्पक पर से पर्वत पर उतर पड़ा और बोला कि वह शंकर कौन है? वहां देखता क्या है कि नंदीश्वर एक प्रज्वलित शूल को लेकर खड़े हैं। उनका मुख बानर के समान देख बड़े जोर से ठठा करके हंसा, जैसे मेघ गर्जे। उसका हंसना देख नंदीश्वर बोले अरे दशानन तू मेरा बानर सा मूं देख कर हंसा है इस लिये मेरे तुल्य पराक्रम वाले बानरों द्वारा ही तेरे कुल का नाश होगा, नंदीश्वर के ऐसा कहते ही आकाश से फूल बर्षने लगे और बाजे बजने लगे, नन्दीश्वर की बातों पर ध्यान न देता हुआ रावण क्रोध कर बोला, शंकर जिसके कारण मेरे बिमान की गति रुकी है देखो मैं तुम्हारे इस पर्वत को ही उखाड़ फेंकता हूं। मैं देखता हूं शंकर किस प्रभाव से नित्य राजा की भांति क्रीड़ा किया करते हैं। हे रामचन्द्र! ऐसा कह दशानन अपने भुजाओं को पर्वत के नीचे घुसेड़ लागा उसको उठा कर तौलने यह काम उसने बड़ी शिघ्रता से किया, अब उसके उठाने से पर्वत हिलने डोलने लगा और शिव के सब गण कांपने लगे और पार्वती भी चकित होकर शिवके शरीर में लपट गई। उस समय शंकर ने हंसके खेलवाड़ के रूप में अँगूठे से उस पर्वत को दवादिया। उनके दवातेही पर्वत के नीचे जो दशग्रीव की भुजा खंभों के सदृश लगीं थी मर मरा उठीं, यह चमत्कार देख दशानन के सचिव बिस्मित हो गये। भुजाओं के दबने से और क्रोध से दशाननने ऐसा भयंकर नाद किया कि तीनों लोक कांपने लगा। उस समय आकाश से यह आवाज आई कि हे दशानन तुम शंकरकी स्तुतिकरो और उन्ही के शरण जाओ, उन्हें संतुष्ट करो, तब तुम्हारा उद्धार होगा, तुम बल और बरदान के घमंड में मत रहो, ऐसा बचन सुन दशग्रीव प्रणामकर शाम वेदों के स्तोत्रों से शिव की स्तुति करने

लगा और रोते रोते हजार वर्ष दशग्रीव को बीत गये । तब भगवान् सन्तुष्ट भये और दाब से भुजाओं को छुड़ा दिया और उस से बोले हे दःशासन बीर तेरे पराक्रम से मैं प्रसन्न हुआ शैल के दाब से जो तुमने महानाद किया जिस से संसार भय भीत होगया इससे तुम्हारा नाम रावण ऐसा लोग पुकारेंगे । ऐसे अब तुम जिधर से जाना चाहते हो चले जाओ, शिव का ऐसा बचन सुन राक्षस बोला कि हे महादेव ! यदि आप प्रसन्न हुए हैं तो मैं जो बर मांगूं सो मुझे दीजिये अर्थात् मुझे कोई ऐसा शस्त्र दीजिये जिस से मेरे आयुर्बल की रक्षा हो । ऐसा उसका बचन सुन शिव ने एक महाप्रदीप्त चन्द्रहास इस नाम से विख्यात खड्ग उस को दिया और शेष आयुर्बल भी उसे दिया, जिसमें शाप आदि से नष्ट न हो और यह आज्ञा दिया कि इस मेरे शस्त्र का अनादर न हो, नहीं तो यह मेरे पास चला आवेगा। इस प्रकार शंकर से शस्त्र और नाम करण पाय प्रणाम कर पुष्पक विमान पर चढ़ा, हे रामचन्द्र ! इस के बाद वह पृथ्वी पर घूमने और क्षत्रियों को पीड़ा देने लगा, कितने बिचारे तेजस्वी शूर और बड़े लड़ाके क्षत्री उस की आज्ञा को न मानकर सपरिवार बिनाश को प्राप्त हो गये और दूसरे जो चतुर और पंडितों के संमन्त राजे थे वो इस को दुर्जय जान बोले कि भाई मैं तुम से हार मान गया वे बचगये ।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे षोडशो सर्गः ॥ १६ ॥

हे रामचन्द्र इस प्रकार घूमता घूमता वह हिमालय के बनमें जा घुसा, वहां उसने एक कन्या को देखा जो कृष्ण चर्म और जटा को धारण किये ऋषियों के सदृश आचरण करती देवताओं की भांति प्रदिप्त थी । रावण उस कन्या को देख कामसे व्याकुल हो गया और हँस कर पूछने लगा कि हे भद्रे यह तुम क्या कर रही हो ? यह सब काम तो तुमारे यौवन और रूप के लिये बिरुद्ध है । भला तुम यह बताओ कि तुम किसकी पुत्री हो और यह तप क्यों कर रही हो ? और तुमारा पति कौन है ? रावण का ऐसा बचन सुन वह कन्या

उसका अतिथी सत्कार कर बोली, हे दशग्रीव ! बड़े तेजस्वी और महर्षि कुशध्वज नाम मेरे पिता थे। जो वृहस्पति के पुत्र और बुद्धि में भी वृहस्पति के सदृश्य थे। उनकी मैं कन्या हूं और वेदवती मेरा नाम है इसके अनन्तर देव, गन्धर्व यक्ष, राक्षस, नाग, मेरे पिता के पास आय आय कर मेरा बिवाह चाहने लगे। परन्तु हे राक्षेश्वर मुझे उन्हों ने किसी को न दिया, इसका कारण मैं कहती हूं सुनो मेरे पिता चाहते थे कि बिष्णु मेरे जामाता हों, इसी से उन्हों ने दूसरे के साथ मेरा बिवाह नहीं किया। इसी से एक शंभु नाम दैत्यों के राजा ने क्रुद्ध हो रात्रि मे सूते हुये मेरे पिता को मार डाला। इसके बाद मेरी माता बिचारी दुखित हो पति के साथ भस्म होगई। तब मैंने बिचार किया कि नारायण के विषैका पिता का संकल्प मैं पूरा करूँगी। इसी से मैं इस तप को कर रही हूं और मन में दृढ़ संकल्प है कि बिष्णु के सिवाय दूसरे को नहीं बरूँगी। हे राक्षस ! मैंने तुम्हें जान लिया तुम पौलस्त्य के कुल में उत्पन्न हो, मैं अपने तपोबल से त्रैलोक्य में क्या होता है सब जान सक्ती हूं। उसका ऐसा बचन सुन काम से पीड़ित रावण उसके पास चला आया और बोला, हे सुन्दरी तू गर्विणी है, पुण्य बटोरना बृद्धों का काम है, मैं लंकापति हूं तू मुझे बर और संसार के सब सुखों का भोगकर बिष्णु कौन है? चाहे वह कोई हो वह मेरे बल और ऐश्वर्य को नहीं पा सक्ता, जिसको कि तू चाह रही है। ऐसा सुन वह बोली नहीं नहीं तुमारे सिवाय और ऐसा कोई नहीं है जो त्रैलोक्य के स्वामी को ऐसा कहे। उसका ऐसा बचन सुन रावण उसके पास चला गया और उसके सिर के जटा पर हाथ लगाया। उसी समय देववती ने क्रुद्ध होकर अपने केशों को काट डाला, और वह क्रोध से ऐसी प्रदिप्त होगई कि मानो वह राक्षस को अभी जला डालेगी और उसी समय उसने उसी स्थान पर अग्नी को प्रदिप्त किया और उसमें प्रवेश करते करते बोली कि हे दुष्ट, तूने जो मेरी घर्षणा की है इसी से मैं जीना नहीं चाहती, इससे इस अग्नि में

प्रवेश करती हूं । हे पापात्मन् इस घर्षणा के लिये! मैं तेरे बध के निमित्त फेर जन्म लूंगी । यदि मैं शाप देती हूं तो मेरी तपस्या में हानि होगी । यदि मैंने इस जन्म में कुछ भी पुण्य किया है तो आगे के जन्म में किसी पुण्यवान् के घर में अयोनिज जन्म लूं, यही मेरी अंतिम अभिलाषा है । ऐसा कह वह अग्नि में प्रवेश कर गई, उसी समय आकाश से पुष्पों की वृष्टि हुई । सो हे रामजी ! वही देववती सीता होकर जनक के घर में अयोनिज जन्मी थी, जो कि तुमारी पत्नी है।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकाण्डे सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥

जब वह देववती अग्नी में जल गई तब वह रावण फेर उसी पुष्पक बिमान पर चढ़ चारों तरफ घूमने लगा । और उसने जाकर राजा मारुत को देखा, जो उसी बीज नाम देश में देवताओं के साथ यज्ञ कर रहा था और संबर्त नाम महर्षि जो वृहस्पति के भ्राता थे सब देवतों को साथ लेकर यज्ञ करवा रहे हैं । ब्रह्मा के बरदान से दुर्जय ऐरावण को देख सब ने डर के मारे पक्षियों का रूप धारण किया और सब इधर उधर सरक गये । हे राम उस समय में यह रावण यज्ञशाला में घुस गया और राजा से बोला कि मुझे युद्ध देओ या कहो कि मैं तुमसे हारा । मरुत बोले कि आप कौन हैं ? यह सुन रावण हंसा और बोला कि मैं तुमारी सुधाई से बहुत प्रसन्न हूं, तुम मुझे नहीं जानते कि मैं धनद का अनुज रावण हूं । तीनों लोक में ऐसा कौन है जो मुझे नहीं जान्ता, देखा मैंने धनद को जीत उसका यह बिमान हर लिया । ऐसे बचन सुन मरुत बोले कि आप धन्य हैं, जिसने बड़े भाई के जीतने में अपाना गौरव समझा प्रथम तो धर्म्माचरण करके बरदान प्राप्त किया, अब नीच कर्म करने लगा, इससे हे दुर्मते खड़े रहो अब तुम मेरे समीप से जीते नहीं जा सकते, आज तुम्हें मैं यमपुर भेजता हूं । ऐसा कह राजा धनुष और बाण को ले बड़े क्रोध से युद्ध करने के लिये चला, परन्तु सम्बर्त राजा के मार्ग को रोक को खड़े हो गये और बोले राजन् जब तक यज्ञ समाप्त न हो तुम्हें यहां से जाना

उचित नहीं, नहीं तो यक्षेश्वर कुल समेत भस्म कर देंगे। कहीं दीक्षित भी क्रोध या युद्ध करता है ? फ़ेर भी जय में सर्वदा संशय ही है, क्यों कि यह राक्षस बड़ा दुर्जय है। ऐसा गुरु का बचन मान वह राजा युद्ध से निवृत्त हुआ। और धनुष का त्याग कर यज्ञ करने में तत्पर हुआ। इसके अनन्तर उसको जीता हुआ समझ रावण ने जीता ऐसा चारों ओर घोषणा कर दिया और हर्षनाद किया। रावण ने जो यज्ञ में ऋषी आये थे उनको भक्षण कर और उनके रुधिर से तृप्त हो फेर पृथ्वी मंडल में घूमने लगा। अब इन्द्रादि देवतों ने अपने अपने शरीर को धारण कर उन पक्षियों और पशुओं को बरदान दिये। और यज्ञ समाप्त करके राजा के सहित सब अपने अपने घर गये।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तर काण्डे अष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥

अब रावण मरुत को जीत अगाड़ी बढ़ा और नाना नगरों में घूमता फिरता बड़े बड़े राजाओं को जो महेन्द्र और वरुण के सदृश थे उन को पाय उनसे कहता कि मुझे युद्ध देओ या कहो कि हार गये, कुछ राजाओं ने आपस में सल्ला की और रावण से स्पष्ट कह दिया कि हम तुम से हारे, क्यों कि वे सब जानते थे कि इसको बरदान का बल है। जिन में प्रधान प्रधान राजा ये थे, दुष्यन्त, सुरथ, गाधि और गय। इसके उपरान्त रावण अयोध्यापुरी में गया जहां कि उस समय में अनरण्य नाम राजा राज्य करता था और वहां जाकर उस राजा से बोला कि मुझे युद्ध देओ अथवा कहो कि मैं हार गया। ऐसा बचन सुन वह बोला कि ठहरो मैं तुम्हें युद्ध देता हूं तुम भी सावधान होजाओ। मैं भी सावधान होता हूं। प्रथम तो राजा ने सेना को लड़ाया यद्यपि नदी की प्रवाह की तरह राजा की सेना थी परन्तु राक्षसी सेना के आगे वह सेना नष्ट होगई। तब राजा ने इन्द्र धनुष की तरह टंकोर करते हुये स्वयं धनुष उठाया और रावण का साम्हना किया। और रावण के चारों मंत्रियों को जो प्रधान सेनाध्यक्ष थे, मार भगाया और रावणपर आठ सौ बाणों का प्रहार किया परन्तु रावणकी जरा

भी छती न हुई। इतने में रावण ने राजाके सिर पर एक थप्पड़ मारा जिस से कि राजा उसी समय रथ पर लोट गया। होश होने पर रावण हँस कर बोला राजन् ! मेरे साथ युद्ध करने में तुझे क्या मिला, त्रैलोकीमें ऐसा कोई नहीं है जो मेरे साथ युद्ध करे। मैं समझता हूं तू अपने सुख भोग में लपटा था जिससे तुझे मेरे बलका कुछ पता नहीं लगा था। तब राजा बोला कि हे रावण ! मैं तेरे ऐसे आत्म प्रशंसा करने वाले के हाथों नहीं जीता गया, परन्तु काल महान् बली है। उसी काल के द्वारा मुझे विपत्ती प्राप्त हुई है। इस समय तो मैं मर रहा हूं तूने मुझे युद्ध बिमुख नहीं मारा है बल्कि मैं युद्ध सन्मुख मर रहा हूं परन्तु मैं कुछ कहूंगा, वह यह कि यदि मैंने दान धर्म्म होम और संयम तथा न्याय पूर्वक यदि प्रजा का पालन किया हो तो इस इक्ष्वाकु के बंस में दशरथ के पुत्र रामचन्द्र पैदा हों और उनके द्वारा तेरा बध हो। ऐसा बचन राजा अनरण्य के मुख से निकलतेही आकाश से मेघ के सदृश्य दुन्दुभी बजी, और पुष्पों की वर्षा हुई। ऐसा कह कर राजा तो स्वर्गलोक गामी हुये और रावण आगे को चलता हुआ।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तर काण्डे एकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥

इस प्रकार मनुष्यों को त्रास देते बन में रावण ने नारद मुनि को पाया। उनसे प्रणाम और कुशल प्रश्न किया। नारद मुनि मेघ की पीठ पर से पुष्पक पर चढ़े और रावण से बोले हे राक्षाधिपते विश्रवा के पुत्र तुम्हारा भला हो, मैं तुम्हारे और तुम्हारे सचिवों के पराक्रम से बड़ा प्रसन्न हूं। मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूं और वह बात तुम्हारे सुनने योग्य है हे तात चित्त को सावधान करके मेरी बात को सुनो। तुम देव, यक्ष, गन्धर्व आदि सब से अबध्य हो फेर इस मर्त्य लोक के जीवों को क्यों मार रहे हो, तुमको यह उचित नहीं कि मनुष्यों को क्लेश देओ, क्यों कि यह बेचारे तो आपी अपने क्लेशों से पीड़ित रहते हैं। भला कौन ऐसा बुद्धिवान् पुरुष होगा जो इन पर हाथ उठावेगा। हे रावण काल के द्वारा इनका प्रतीक्षण नाश होरहा

है। फेर इन बिचारों को तुम दुःख मत देओ। देखो कोई तो इनमें प्रसन्न घूम रहे हैं और कोई बन्धु बांधवों के दुःख से रो रहे हैं। मोह के फांस में फँसे हुये त्रस्त हो रहे हैं। इस लिये अब इन लोगों को क्लेश देकर क्या करोगे और एक प्रकार इन सबको तुम जीत तो चुकेही हो ? क्यों कि यह सब तो स्वयम् ही एक न एक दिन यमपुरी को जायेंगे ही इस लिये तुम यमपुरी पर चढ़ाई करो उसके जीतने से सब जीता हुआ ही समझो। नारद का बचन सुन रावण हाथ जोड़ बोला हे देवर्षे मैंने गन्धर्वलोक, देवलोक, मृत्युलोक जीता, अब आपके उपदेश से मैं रसातल को जाने में तत्पर हूं। मैं चाहता हूं कि संसार को विजय कर अमृत जो सब रसों में प्रधान है उसे समुद्र मथ कर निकालूं। तब नारद बोले कि यदि तुम रसातल में जाना चाहते हो तो क्यों दूसरे मार्ग से जाते हो यह दुर्गम मार्ग ठीक यमराज की नगरी में चला जाता है। इसी मार्ग से चलो ऐसा नारद का बचन सुन रावण ठठाय कर हँसा और बोला भया यह काम भी मेरा पूरा भया। तो हे प्रभु अब मैं यमही के बध के लिये दक्षिण दिशा में चलता हूं। फेर बोला मैंने चारों लोक पालों को जीतने की पहलेही से प्रतिज्ञा कर ली है। ऐसा कह और मुनि को प्रणाम कर दक्षिण दिशा को चला। उसके चले जाने पर नारद सोचने लगे कि यह काल इन्द्र से लेकर पशु पक्षी तक सबको क्लेश देता है यह काल किस प्रकार जीता जायगी। फेर जिसके डर से संसार कांपता है उसके पास यह राक्षस राज आप से कैसे पहुंचेगा। फेर जो पुण्य और पाप का स्वयं न्याय करता है वह कैसे जीता जायगा। अच्छा देखेंगे कि यह दूसरा क्या बिधान करता है।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकाण्डे विंशः सर्गः ॥ २० ॥

ऐसा बिचार नारद शीघ्र यम के पास इस वृत्तान्त के कहने के लिये पहुंच गये। वहां जाकर क्या देखते हैं कि यमराज अग्नि को साक्षी करके सबका यथोचित न्याय कर रहे हैं। नारद को देख उनका

यथोचित सत्कार कर यमराज बोले कहिये महर्षि जी सब कुशल तो है। धर्म में किसी प्रकार की बांधा तो नहीं है और आपका आने का क्या कारण है? ऐसा धर्म्मराज का बचन सुन नारद बोले सुनिये और शीघ्र यत्न कीजिये। दशकन्धर राक्षस अपने पराक्रम से आप को बश में करने के लिये आ रहा है, इसी लिये मैं यहां आया हूं, कि काल दण्ड के प्रहार करने वाले आपका इस घड़ी क्या होगा। जय या पराजय, एतने में सूर्य के सदृश प्रकाश करता रावण का बिमान दूर से आता दिखाई दिया, रावण अपने बिमान के प्रताप से उस देश के अंधकार का नाश करता हुआ समीप में आ पहुंचा। वहां आकर रावण ने प्राणियों को अपने पुण्यों और पापों को भोगते देखा, यमराज के अनुचरों को नाना भांति के दुःख देते देखा, उन प्राणियों का घोर नाद चीखते चिल्लाते सुना। एक तरफ से गाने और बजाने का शब्द भी सुना, वह सब पुण्य का फल भोग रहे थे। पहले वह उस जगह पहुंचा जहां प्राणी मारे और काटे जाते थे, वहां जाकर उसने अपने बल से उन्हें छोड़ा दिया। उसे ऐसा करते देख यम के दूत क्रोधकर रावण के ऊपर दौड़े उस समय चारों तरफ बड़ा कोलाहल मचा सैकड़ों सहस्त्रों गण अपने अपने अस्त्र शस्त्र लेकर रावण पर दौड़े और बिमान को लगे तोड़ने फोड़ने परन्तु बिमान कुछ साधारण तो था नहीं देवताओं के अंश से बना था, इससे उस पर कितनी गदा और अस्त्रों का घात भया परन्तु वह जरा भी नहीं टूटा, अब रावण की सैना और यम की सैना खूब लड़ने लगी, रावण स्वयं भी लड़ रहा था। रावण के प्रहार से वह सब रुधिर से तर थे परन्तु स्वामी के लिये लड़ते जाते थे। उस काल दोनों तरफ के बीर खूब युद्ध कर रहे थे। अब यम के गण और राक्षसों को छोड़ रावणके ही ऊपर दौड़े। और रावण पर ऐसा प्रहार किया कि वह तमाम रुधिर से नहा उठा, रावण भी बिमान पर बैठा अस्त्र शस्त्रों से प्रहार कर रहा था जिससे कि यम की सैना भी कट कट

कर गिर रही थी। परन्तु वे सब उन प्रहारों और अस्त्रों की परवाह न करके लाखों मिलकर एक अकेले रावण को मारने लगे। यहां तक कि उन सबके प्रहारों से उसका कवच टूट गया, उस काल उसने पुष्पक छोड़ दिया और पृथ्वी पर उतर पड़ा और धनुष बाण लेकर सचेत हो काल की तरह युद्ध करने लगा और यम के दूतों से बोला कि खड़े रहो, ऐसा कह उसने पशुपतास्त्र का प्रयोग किया वह उग्रास्त्र सूर्य्य की तरह प्रकाश करता वृक्षों को भस्म करता यमराज की सैना पर पहुँचा जिससे लड़ने वाले सब योधा उस बाण के तेज से भस्म हो वहीं गिर गये। उस समय रावण ने अति गर्जना की।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे एकविंशः सर्गः ॥ २१ ॥

उसका घोर नाद सुन यमराज ने जाना कि रावण की जै और मेरी सैना का नाश हुआ। योधाओं के मारे जाने से क्रोध से यम के नेत्र लाल हो गये और सूत को आज्ञा दी कि जल्दी मेरा रथ ले आओ, आज्ञा पा सारथी रथ को ले आया और उस पर यमराज सवार हुये पाश और मुद्गर हाथमें ले मृत्यु उनके आगे हुआ जो त्रैलोक्य का नाश करता है और मूर्तिमान कालदंड यमके पार्श्व में खड़ा हुआ, जो यम का दिव्य अस्त्र है और जो तेजसे अग्नि की तरह सदा प्रकाशमान रहता है। उस समय तीनों लोक थरथरा गया, कि यह यम संसार को भय देने वाला है यह क्रोध को प्राप्त हुआ तो न जाने क्या होगा। सारथी ने रथ को हांका जिसका बड़ा भयंकर शब्द हुआ। मुहूर्त मात्र में रथ रणभूमि में जा पहुँचा। अब उस विकराल रथ को देख जिसके साथ साक्षात् मृत्यु ही थी रावण के सचिव तो शीघ्रही भाग चले, क्यों कि वे बेचारे थोड़े साहस वाले ऐसे भयपीड़ित हो गये कि अचेत से होकर इधर उधर भाग गये। परन्तु रावण न तो उस भयंकर रथ को देखकर घबराया और न कुछ डरा, यमराज ने आते ही तोमरों और शक्तियों से रावण के मर्मों को विदीर्ण कर डाला। रावण भी यमके रथ पर बाण वृष्टि करने लगा।

यमराज की चोट से जो थोड़ासा रावण पीड़ित हुआ उसका बदला लेने में वह असमर्थ ही रहा । सात दिन और रात युद्ध हुआ, यम ने मारे सस्त्रों के उसे बिमुख कर दिया, परन्तु उसने समर का त्याग नहीं किया । दोनों अपने अपने जय की आकांक्षा से डटे रहे । इतने में ब्रह्मा वहां आनकर उपस्थित हुये । उस समय दोनों में घन-घोर युद्ध हो रहा था, राक्षसराज ने उस वख्त बड़ा पराक्रम किया, मृत्यु को चार बाण, सारथी को सात बाण, यमराज को लक्ष बाण मर्म स्थान में मारे । उस प्रहार से यमराज अति क्रोधित हुये, जिससे कि उनके मुखसे ज्वाला धूम्रयुक्त क्रोधाग्नि उत्पन्न हुई । इस आश्च-र्य्य को देखकर देव दानव के समीप में मृत्यु और काल अति हर्षित हो युद्ध के लिये तत्पर हो गये । तब मृत्यु बोला हे भगवन् ! मुझे आज्ञा दीजिये मैं इस पापी राक्षस को अभी मार डालता हूं । आगे मैंने किस प्रकार इससे भी बड़े बड़े पराक्रमियों का नाश किया है । जो मेरी दृष्टी के नीचे पड़ा वह एक क्षण भी नहीं बच सकता, उसका बचन सुन धर्म्मराज बोले तुम ठहरो मैं स्वयं इसे अभी मारता हूं । अब सूर्य्य के पुत्र यमने क्रोध कर काल दंड को उठाया, जिसके दर्शन मात्र से जीवधारियों का जीव क्षण में निकल जाता है, स्पर्श और प्रहार की तो कुछ बातही नहीं । यमराज के हाथ में काल दंड देख जितने लोग थे सब भाग चले और देवते भी डर को प्राप्त हुये । यम उसका प्रहार करना ही चाहते थे उसी समय ब्रह्मा उनके सन्मुख आकर खड़े हो गये और बोले हे सूर्य्य पुत्र इस दंड से तुम इस राक्ष-को मत मरो । क्यों कि मैंने इसे बरदान दिया है सो तुम्हें यह उचित नहीं है कि तुम मेरे बचन को मिथ्या करो । इसमें संदेह नहीं की यह काल दंड जब क्रोध से चलाया जायगा तब जीवका नाश करेगा ही, क्यों कि मैंने इसको इसी प्रकार का बनाया ही है, यह अमोघ और मृत्यु देने वाला है । परन्तु संभव है कि मेरे बरदान के प्रभाव से वह न मरा अथवा मरही गया, दोनो प्रकार मैं असत्य हो

जाऊँगा । ऐसा बचन ब्रह्मा का सुन यमराज बोले बहुत अच्छा महाराज यद्यपि मैंने इसे उठा लिया है परन्तु आपकी आज्ञा मैं टाल नहीं सक्ता । अब मुझे आज्ञा दीजिये कि संग्राम में क्या करूँ, क्यों कि यह तो बरदान के बल से मारा जायेगा ही नहीं, ब्रह्मा बोले तुम इस संग्राम से अदृश्य हो जाओ । ब्रह्मा की आज्ञा सुन यमराज रथ समेत अदृश्य हो गये । इस प्रकार रावण यमराज को जीत और अपना नाम सुना उसी पुष्पक पर चढ़ यमपुरी से चला गया ।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥

यमको जीत कर रावण जब नगरी के बाहर आया नब उसने अपने सहायकों को देखा, सब रुधिर से भीगे, अंगों से कटे, घावों से शरीर जर्जरित, वे लोग रावण को देख बड़े आश्चर्ययुक्त हो एक दम जय जय कार कर उठे । रावण ने सबों को आश्वासन दे पुष्पक पर बैठा लिया, तब रावण समुद्र में घुस कर रसातल में पैठा जहां पर दैत्य और उरग लोग रहते थे । उन सब की रक्षा वरुण करते थे । बासुकी नाग की भोगवती नगरी में जाय नागों को जीत अपने बश में कर मणिमयपुरी में गया जहां बरदान पाये * नितान्त कवच एक प्रकार के दैत्य बास करते थे । वहां इस ने उन को युद्ध के लिये ललकारा । वे दैत्य भी महाबली थे. युद्ध का नाम सुनते ही नानास्त्र शस्त्र लेकर लड़ने के लिये तैयार हो गये । उन से युद्ध करते करते इसे एक बर्ष बीत गया, परन्तु दोनों में से कोई न हारे । तब वहां ब्रह्मदेव आकर उपस्थित हुये और युद्ध को रोक कर बोले कि हे नितान्त कबच लोगों यह रावण देव दानव कोई से भी जीता नहीं जायगा और न तुमारे लोगों का कोई नाश करेगा इस लिये मैं चाहता हूं कि तुम लोग परस्पर मैत्री करलो मित्रों के पदारथ परस्पर एकही है अर्थात् जो तुमारा है सो उनका और जो उनका है वह तुमारा, पितामह का ऐसा बचन सुन रावण ने अग्नि की साक्षी दे-

* अभेद्य कवच

कर मैत्री करली। वर्ष भर उन लोगों ने रावण को और रक्खा तथा बड़ा सत्कार किया। वहां से चलकर रावण वरुण के नगर को ढूढ़ता हुआ रसातल में घूमने लगा, उसी ढूढ़ खोज में उसने अश्म नामक नगर पाया, जहां कालकेय नामक असुर राज्य करता था। और बड़ा बलवान् था रावण ने उसे भी युद्ध में मार गिराया। उसी युद्ध में सूर्पणखा का पती जिसका नाम विद्युज्जिह्वा था रावण की खड्ग से काटा गया। वहां से आगे चलकर कैलास के सदृश चमचमाता वरुण का भवन राक्षस राज ने देखा और वहां ही अपने स्तनों से दूध बहाती हुई सुरभी नाम गौ को रावण ने देखा, कि जिस सुरभी के दुग्ध से क्षीरसागर हुआ, उसी सुरभी के दुग्ध से सीतल किरण वाला चन्द्रमा उत्पन्न हुआ। जिसका अवलम्बन कर वे फेन के पीने वाले महर्षि गण जीते हैं। और जिस दुग्ध से अमृत उत्पन्न हुआ। और स्वधा भोजियों अर्थात् पितृगण की स्वधा उत्पन्न हुई जो सुरभी वृषेन्द्र की माता है रावण उसे देखकर महान् हर्षित हुआ और उसकी परिक्रमा की। आगे उसने महा भयंकर सेना से सुरक्षित वरुण का भवन देखा वहां पहुंचते ही रावण ने सेना पतियों को मारना सुरू किया। और उधर से उन्हों ने भी प्रहार करना शुरु किया। तब रावण ने उन योधाओं से कहा कि तुम जाकर वरुण से कहो कि युद्धार्थी रावण आन पहुंचा है सो या तो युद्ध करो या हाथ जोड़ कर कहो कि मैं हार गया, यह बात सुन वरुण के पुत्र और पौत्र बड़े क्रोध से युद्ध के लिये निकले उनके सौ गौ और पुष्कर ये दोनों सेनापति भी थे। अब ये सब बड़े गुणवान् अपने सेनाओं को साथ लिये उद्यत्सूर्य के समान रथों पर चढ़े युद्ध के लिये दौड़े। अब वरुण के पुत्रों का रावण के साथ बड़ा घोर और रोमांच कारक युद्ध प्रारंभ हुआ। रावण के सचिवों ने वारुणी सेना को मार गिराया। वरुण के पुत्रों ने अपनी सेना का नाश देखकर और अपने को बाणों से पीड़ित देख तथा रावण को पुष्पक पर तथा आप भूमि पर से लड़ते

देख सबके सब रथ सहित आकाश पर उड़ गये। और वहां से युद्ध करने लगे। अब बराबर का स्थान पाय देवासुर संग्राम की तरह इन लोगों का युद्ध आरम्भ हुआ। अब इन लोगों ने ऐसे घोर बाण चलाये कि रावण संग्राम से बिमुख हो गया। इससे वे सब बड़े हर्ष नाद करने लगे। अब मारे लज्जा के रावण मृत्यु का भय छोड़ गदा लेकर उन पर दौड़ा और गदा से घोड़ों को ऐसा मारा कि वे सब रथ से भूमि पर आ गिरे और योधों पर भी प्रहार किया। उनके सारथियों को भी मारा उस मार से सबको व्याकुल देख बड़े नाद से गर्जना की। घोड़े तथा रथ चूर होजाने पर भी बरुण के पुत्र अपने प्रभाव से आकाश मेही स्थिर रहे भूमि पर नहीं आये। और धनुष को चढ़ाय मारे बाणों के महोदर को बिदिर्ण कर दिया। तथा रावण को भी छेद डाला। तब तो रावण क्रुध होकर लगा उनके मर्म स्थानों में बाणों का प्रहार करने। अब वे बिचारे बिना रथ के उस प्रहार से अत्यन्त पीड़ित हुये। रावण उन सब को पीड़ित और विह्वल देख बड़े हर्ष से मेघ की तरह गर्जा। वो बिचारे रण से विमुख हो पृथ्वी पर गिर पड़े, तब भृत्य लोगों ने उठाकर घर पहुँचाया। तब रावण भृत्यों से बोला कि मेरा संदेशा बरुण से जाकर कहो। रावण का बचन सुन प्रहास नाम बरुण का मंत्री बोला हे राक्षस राज महाराज बरुण तो ब्रह्म लोक में गायन सुनने गये हुये हैं तुम किसको ललकारते हो। जब राजा ही नहीं है तब क्यों परिश्रम करते हो कुमार लोगों को तो तुमने जीतही लिया। ऐसे बचन सुन रावण अपने नामकी घोषणा करके और हर्षनाद सुनाय बरुण के भवन से निकला और जिस मार्ग से आया था उसी मार्ग से लौट लंकाके तरफ पुष्पक बिमान चलाया।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे त्रयोविंश सर्ग: ॥ २३ ॥

अब फेर वे सब उसी अश्म नगर में युद्धान्मत्त हो घूमने लगे। रावण ने वहां एक अति प्रकाशमान गृह देखा, जिसमें पन्नों के तोरण

लगे थे और मोतियों की मालायें लटक रही थीं। सोने के खंभे और हीरे तथा स्फटिककी सिढ़ियों से सोभायमान हो रहा था। इस भवन को देख रावण ने विचारा कि यह किसका राज भवन है, और प्रहस्त को पता लगाने के लिये भेजा। प्रहस्त भीतर गया एक डेवढ़ी लांघा कोई नहीं इसी प्रकार छ डेवढ़ी लांघता चला गया, जब सातवीं डेवढ़ी पर गया तो उसे एक ज्वाला देख पड़ी और एक पुरुष दिखाई पड़ा, वह पुरुष उसे देखते ही हँसा, उसके हँसते ही प्रहस्त के रोयें खड़े हो गये और वह मारे डरके वहां से भागा और व्याकुलता में आकर रावण से सब वृत्तान्त कहा। हे रामचन्द्र यह समाचार सुन रावण पुष्पक पर से उतर पड़ा और जैसेही उस घर में पैठने चाहता था कि इसके समीप सरीरधारी एक पुरुष खड़ा हो गया। जिसकी जिह्वा में ज्वाला थी, भयंकर लाल लाल नेत्र, सुन्दर दन्त, रक्त बिम्बोष्ठ, मनोहर रूप, शंख के समान ग्रीवा, बिशाल ठुड्डी, मूछ से सुसोभित परन्तु रोमांच देने वाला हाथ में लौह का मूसल लिये द्वार रोककर रावण के आगे खड़ा हो गया। जिसको देखते ही रावण के रोयें खड़े हो गये, शरीर थरथराने लगा, इस प्रकार अमंगल चिन्हों को देख रावण खड़ा होकर सोंचने लगा, इतने में वह पुरुष बोला कि हे राक्षसराज तू क्या सोंच रहा है मन को सावधान कर कहो। क्या तू बलि से लड़ना चाहता है? अथवा तेरा क्या विचार है, इतना वचन उस के मुंह से निकते ही रावण के रोमांचित हो गया, और कुछ कालतक धैर्य धारण कर बोला मैं यह जानना चाहता हूं कि इस गृह का स्वामी कौन है? मुझे बतलाओ मैं उसी के साथ युद्ध करूँगा रावण का ऐसा बचन सुन वह पुरुष बोला, कि इस घर में दानव राज बलि रहते हैं, जिनके समान उदार और सत्यव्रती, तथा धर्म्मात्मा तीनों लोक में नहीं है। यदि तुम ऐसे पराक्रमी और शूर से युद्ध करना चाहते हो तो भीतर जाकर संग्राम करो। ऐसा बचन सुन रावण घरमें घुसा, बलि रावण को देखते ही ठठाय कर हँसे और सूर्य्य

के सदृश रूप वाले बलि रावण को पकड़ गोद में बैठाय कर बोले हे दशग्रीव यह बताओ कि तुम यहां कैसे आये। बलि पराक्रम देख रावण युद्ध का नाम तो ले न सका, तब बात बनाता हुआ बोला कि मैंने सुना है कि विष्णु ने तुम को बांध रक्खा है सो मैं तुम को बन्धन से छोड़ा ने आया हूं। उस का ऐसा बचन सुन बलि हँस कर बोले अच्छी बात है, मैं बताये देता हूं तुम उस से युद्ध करो, सुनो वह जो श्याम पुरुष मेरे द्वार पर तुम्हें मिला था उसी ने हमारे पूर्व पुरुषों का संघार किया है, इसी ने मुझे बांध रक्खा है। क्या कहा जाय काल बड़ा बली है परन्तु मुझे ऐसा कोई पुरुष नहीं दिखाई पड़ा जो उस पर आक्रमण करके जीते, सुनो यह जो पुरुष द्वार पर खड़ा है वही संसार का हर्त्ता कर्त्ता है हम और तुम उसे नहीं जान सक्ते, यही सब लोकों का ईश्वर है, भूत भविष्य और वर्तमान तीनों का प्रभू है तीनों लोक का कर्त्ता और नाश करने वाला है, सब संसार इसी के वश में है, हे पौलस्त्य कुल भूषण हमारे तुम्हारे पूर्व पुरुषों का नियन्ता यही है, जिस प्रकार मनुष्य पशु के गले में डोरी बांध कर वश में रखता है। हे रावण बृत्र, हनु, शुम्भ निशुम्भ, कालनेमि, बैरोचन, कंस मधुकैटभ, इत्यादि बड़े बड़े पुण्यवान्, कीर्त्तिवान्, तेजस्वी, जिन्हों ने संग्राम से कभी मुंह न मोड़ा हज़ारोंबार देवताओं को जीत कर उनका राज्य स्वयं किया और सूर्य के समान तपते थे। हे रावण भगवान् विष्णु यही हैं, जो देवों से बैर करता है उस का उपाय पूर्वक नाश करना यही जानते हैं, ऐसा किसी को उत्पन्न कर देता है जो देवोंसे बैर करने वाले का नाश कर देता है और आप अधिष्ठाता ही बने रहते हैं। हे रावण वही पुरुष जो बाहर खड़े हैं इन्हींने मेरे ऊपर कहे हुए दानवों का नाश किया है। सब दानव ऐसे थे जिन्हों ने कहीं हार खाई ही नहीं। उसे भी इन्हों ने यमपुरी भेज दिया। इतना कह कर बली बोले हे रावण यह जो सामने चक्र प्रदीप्त अग्नी की तरह चमकता हुआ देख पड़ता है उस को मेरे पास उठा लाओ। तब मेरे बन्धन

से छूटने का उपाय मैं तुम से बताऊँगा। ऐसा सुन रावण हँसकर वहां गया, जहां वह कुंडल पड़ा था। हे रघुनंदन! उसने उस कुण्डल को अपने बलके अहंकार से सहज में उठाना चाहा, परन्तु उठाने की कौन कहे हिला भी न सका। तब तो लज्जित होकर बड़े यत्न और बलसे उसने उसे उठाया परन्तु उठाते ही मूर्छा खाकर वहीं गिर पड़ा और मुंसे लहू की धारा बहने लगी। परन्तु थोड़ी देरमें सचेत हो लज्जा से मुख नीचा किये बलि के पास लौट आया, तब बलि फेर रावण से बोले। हे रावण देखो यह मेरे पूर्व पुरुषों के एक कान का कुण्डल है दूसरा कहीं पहाड़ पर गिरा है। हे रावण वे हिरण्यकश्यपु नाम मेरे प्रपितामह थे उनके लिये न काल, न मृत्यु, न रात्रि में, न न दिन में, न अस्त्र से, न शस्त्र से, न भूमि में न अकाश में, किसी प्रकार उनकी मृत्यु ही न थी। ऐसा पितामह ब्रह्मा ने बरदान दिया था। सो उनके लिये ऐसा हुआ कि प्रहलाद जो उनके पुत्र थे उन्हीं से दारुण बिवाद उन्हों ने किया, सो भगवान् ने अपने भक्त प्रहलाद कादुःख देख कर नृसिंह रूप धारण किया, वह रूप ऐसा भयंकर था जिसके प्रगट होतेही चारों तरफ खलबली मच गई। ऐसे बलवान् हिरण्यकश्यपु को भगवान् ने हाथों पर उठालिया और गोदी में लेटा कर हाथ के नखूनों से पेट चीर डाला, वेही बासदेव द्वारपर खड़े हैं। ऐसा बलि का बचन सुन रावण बोला हे बले मैं ने प्रेतराज यम को मृत्यु के सहित देखा, जिनके हाथ में महा तेजस्वी कालदंड उर्धरोम, भयंकर बड़े बड़े दांत, सूर्यकी तरह जिनका तेज, समर से कभी मुंन मोड़ने वाले, पुण्यवान् और पापियों के यथोचित शासन कर्ता, ऐसे यमको मैंने जीत लिया, परन्तु इस पुरुष को मैं नहीं जान्ता कि कौन है? ऐसा रावण का बचन सुन विरोचन के पुत्र बलि बोले यही त्रैलोक्य के त्राण कर्ता, साक्षात् हरि, नारायण, प्रभु, विष्णु भगवान् हैं। येही लोगों का पालन पोषण करते, सृजते, तथा तथा संहार करते हैं। हे रावण येही यज्ञ और यज्ञ भोक्ता, चक्रायुध

धारी, बड़े बड़े बीरों के मारने वाले जितने ऋषी मुनि हैं सब इन्हीं से मोक्ष पाने की इच्छा करते हैं ये पापों में लिप्त नहीं होते और जो इनका स्मर्ण करते हैं वो सब मनोरथ का लाभ करते हैं। ऐसा बचन सुन रावण क्रोध से रक्त नेत्र हो अपाने अस्त्र को लेकर वहां से उठा। अब मूसलधारी प्रभु ने सोंचा कि इस समय इस पापात्मा को क्या मारूं ऐसा सोंच और ब्रह्मा के हितको बिचार वहीं पर अन्तर ध्यान हो गये। जब रावण ने दरवाजे पर उस पुरुष को नहीं देखा तब हर्ष युक्त वहां से निकल कर चला आया।

इति बाल्मीकिय रामायणेउत्तरकांडे चतुर्विंशः सर्गः ॥ २४ ॥

अब लंकेश कुछ बिचार करके सूर्य लोक को चला, बीच में मेरू के शृङ्ग पर रात्री भर निवास कर सवेरे पुष्पक पर जो सूर्य के घोड़ों के सदृश था सवार होकर विचित्र गति से अकाश में बिहार करता सूर्य मंडल में पहुंचा और वहां श्रीसूर्य जो सब तेजो से सहस्र किरणों से उज्वल थे देखा, अब श्रीआदि देव उच्चैश्रवा जाति के घोड़ों से जोते रथ पर सवार आदि अन्त मध्य से रहित ऐसे सूर्य को देख तथा तेजो बल से पीड़ित हो, रावण प्रहस्त से बोला कि हे प्रहस्त तुम जाकर मेरा सन्देशा सूर्य से कहो कि रावण युद्ध के लिये आया है उसको युद्ध दीजिये। अथवा कहो कि मैं हारा, इन दो बातों में से एक बात का शीघ्र ही निपटारा कीजिये। ऐसा बचन सुन प्रहस्त रवि के पास गया, वहां रविके पिंगल और दण्डी इन दो द्वारपालों को पाय और उनसे रावण के संदेशे का निवेदन कर चुप चाप खड़ा रहा, क्यों कि मारे रवि के किरणों के ताप के कारण उसका चित्त तो ठिकाने थाही नहीं। अब डंडी ने रवि के निकट जाय रावण का सन्देशा कहा। उसका बचन सुन भगवान् भास्कर बोले, हे डंडिन तुम जाकर उसको जीतो अथवा कहो कि मैं हार गया, जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा उसके संग व्यवहार करो। क्यों कि थोड़े ही समय के अनन्तर उसका नाश है। ऐसा प्रभु का बचन डण्डी

ने जाकर रावण को सुनाया । सुनकर रावण अति प्रसन्न हो जै का डंका बजाय कर सचिवों के सहित पुष्पक पर चढ़ चला गया ।

इति वाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांड़े पंचविंशः सर्गः ॥२५॥

अब रावण कुछ सोंच बिचार मेरू के शिखर पर एक रात बिताय सबेरे सोम लोक को गया और वहां उसने देखा कि एक पुरुष रथ पर चढा दिव्य मालाओं से भूषित अप्सरा गणों से सेया जाता है । जब रतिसे श्रमित हो जाता है तब अप्सरा गण उसे चुम्बन करती हैं जिससे वह पुनः सचेत हो जाता है । रावण उस पुरुष को देख कर अति बिस्मित हुआ । उसी समय वहां एक ऋषि दिखाई दिये, जिनका स्वागत कर रावण बोला हे महर्षे आपने बड़े उचित समय पर दर्शन दिया कृपया यह बताइये कि यह पुरुष कौन है ? जो रथ पर चढा अप्सराओं के संग निर्लज्ज की तरह चला जा रहा है ? यह सुन पर्वत रिषी बोले कि हे रावण इस पुरुष ने तीनों लोकों को जीता और ब्रह्मा को भी संतुष्ट किया अब मोक्ष के लिये सुमुख स्थान में जाता है । हे रावण जैसे तुमने तप बल से तीनों लोक को जीता, उसी प्रकार इस पुण्यात्मा ने यज्ञ में सोम का पान कर अपनी मुक्ती को प्राप्त कीया है । इसके अन्यथा रावण ने एक दूसरे रथ पर बड़े बिशाल और बड़े पराक्रमी शरीर से जाज्वल्य मान एक पुरुष को और देखा, जो गीत और बाद्य के शब्दों से सुशोभित चला जाता था । उसको देख रावण मुनि से फेर पूछने लगा कि हे देवर्षे यह कौन है ? ऐसा बचन सुन पर्वत रिषी बोले कि यह शूर रण का योद्धा कभी पीठ न दिखाने वाला है, समर में कुशल बहुतों को मार आप शत्रु के हाथ से मारा गया, अपने स्वामी के लिये अपने प्राण का त्याग किया है अब यह इन्द्र का अतिथि हुआ वहीं जाता है, इसी से गीत बादित पुरुषों के सेया जाता है। ऐसेही एक को और देखा, उसके बिषे में रिषी बोले कि इसने स्वर्ण दान दिया है इससे यह अति शीघ्र गामी बिमान पर चला जाता है । यह सब बातें सुन

रावण बोला कि हे रिषे भला यह सबों में से ऐसा कोई भी है जो मुझे युद्ध दे। रावण का ऐसा बचन सुन रिषी बोले कि हे राक्षसराज यह सब राजे स्वर्गार्थी हैं युद्धार्थी नहीं। हां एक राजा है जो सप्तद्वीप का स्वामी मांधाता नाम से बिख्यात है वह तुमसे युद्ध करेगा। यह सुन रावण बोला हे रिषी राज कृपया यह बताइये कि वह कहां रहता है वहां मैं जाऊं। रिषी बोले कि हे राजन्! वह युवनाश्व का पुत्र मांधाता सातों द्वीपों को बश में कर यहां ही आवेगा तुम ठहरे रहो, अभी रिषी यह कहही रहे थे कि अयोध्याधिपति मांधाता आता दिखाई पड़ा जो बिचित्र तथा इन्द्र के रथ के तुल्य प्रकाश मान स्वर्ण के रथ पर चढ़ा रूप में जाज्वल्य उत्तम सुगन्धों से भूषित था। उसे देखते ही रावण बोला हे राजन्! मुझे युद्ध देओ, ऐसा उसका बचन सुन मांधाता हँसा और बोला। हे राक्षस यदि तुम जीना न चाहते हो तो मुझसे युद्ध करो। मांधाता का ऐसा बचन सुन रावण बोला कि हे राजन्! जो रावण कुबेर, यम, से व्यथा को न प्राप्त हुआ सो तुझ मनुष्य से डरेगा। ऐसा कह उसने अपने मंत्रियों को आज्ञा दी वे सब मांधाता पर लगे बाण बृष्टि करने। राजा ने भी धनुष उठाय उन लोगों के बाणों का उत्तर दिया, जिससे वे सब छेदे गये। इसके बाद मांधाता ने यम के सदृश भयंकर मुग्दर को घुमाय के रावण के रथ पर फेंका, यह बज्र तुल्य मुग्दर रावण के रथ पर जाकर गिरा, जिसकी चोट से रावण बिमान से गिर पड़ा, उस समय मांधाता अति हर्षित हुये। उस समय रावण के सेना के लोग अचेत से होकर हा हा कार कर रावण को चारों तरफ से घेर कर खड़े हो गये। बहुत बिलंब में रावण सचेत हुआ और क्रुध हो मांधाता पर अत्यन्त प्रहार करने लगा और दुःख देने लगा। बहुत प्रहारों से सहते सहते मांधाता भी अचेत हो गये उस समय राक्षसों ने अत्यन्त गर्जना की। अब महूर्त मात्र में अयोध्याधिपति सचेत हुये और उन्हों ने देखा कि निशाचर लोग शत्रु की स्तुति कर रहे हैं उस समय वे अत्यन्त क्रुध हो ऐसी

वृष्टि करने लगे जिससे रावण की सैना व्याकुल हो उठी। उस समय ऐसा घोर युद्ध हुआ कि कहा नहीं जा सकता, नरराज और राक्षसराज अपना अपना प्रहार कर रहे थे, और दोनों शरीर से छिन्न भिन्न हो रहे थे। रावण ने रौद्रास्त्र का प्रयोग किया, मांधाता ने आग्नेयास्त्र से उसका बारण किया, फेर राक्षस ने गान्धार्व चलाया उसको राजा ने बारुण से रोका। तब क्रोधित हो माधांत ने ब्रह्मास्त्र का जो सब प्राणियों को भय देने वाला है प्रयोग किया और इधर रावण ने पशुपतास्त्र जो घोर रूप और त्रैलोक को भयङ्कर था जिसे उसने तपोबल से शिव से पाया था। इन अस्त्रों का प्रयोग देख स्थावर जंगम दोनों त्रास को प्राप्त हुये और त्रैलोक्य थर थराने लगा। देवता गण कांप उठे नाग पतालों में घुस गये। पुलस्त्य और गालब जो इनके पूर्व पुरुष हैं दोनों रिषीयों ने ध्यान से इस अनर्थ को जाना और समर भूमि में आये और दोनों को युद्ध से रोक दिया तथा रावण को बहुत धिक्कार दिया तब उन दोनों ने युद्ध का त्याग कर आपुस में मित्रता कर ली। दोनों की मित्रता देख रिषीगण हर्षयुक्त अपने अपने आश्रम में चले आये।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे षड्विंशः सर्गः ॥ २६ ॥

अब दोनों रिषीयों के चले जाने पर रावण दश हज़ार योजन जो प्रथम वायु मंडल है, उसके ऊपर चला, वह बायु मंडल भी दश सहस्र योजन गिना जाता है, ऊपर तृतिय वायु मार्ग है, वह भी दश सहस योजन है वहां पहुंच फेर उसके ऊपर चला, यह चतुर्थ वायु मार्ग कहा जाता है, वहां से आगे पंचम वायु मार्ग पर चला वहां भी उतनाही है, वहां से षट बायु मार्ग पर चला, वह भी उतनाही है इसी प्रकार वह अष्टम वायु मंडल तक गया, जहां कि अकाश गंगा बहती है, जिसका महा बेग और महा शब्द है। उसके ऊपर अस्सी सहस्र योजन पर नक्षत्रों के सहित चन्द्रमा विराजमान हैं, उनकी सहस्रों किरणें निकल संसार को सुख देती है। अब श्री चन्द्रदेव रावण को

देखते ही शीताग्नि से इसको भस्म करने लगे उस वख्त उसके सचिव उस शीत को न सहसके और रावण की जै बोल कर बोले कि महाराज हम लोग तो यहां ठहर नहीं सक्ते यहां से लौट जाते हैं। प्रहस्त का ऐसा बचन सुन रावण ने क्रोध से धनुष उठाय अस्त्र शस्त्र चन्द्रमा पर छोड़ने लगा। उस समय ब्रह्मा वहां आनकर उपस्थित हुये और बोले हे रावण तुम यहां से शीघ्र लौट जाओ चन्द्रमा को पीड़ा मत देओ। क्यों कि यह द्विजराज दिन रात संसार के उपकार में ही लगे रहते हैं। और मैं तुम्हें एक ऐसा मन्त्र बताता हूं जब कि महान् संकट उपस्थित हो प्राण नाश का समय आवे उस समय माला लेकर जपे अवश्य बिजयी होगा। ऐसा कह ब्रह्मा उसको मंत्र देकर अंतरध्यान हो गये और राक्षस राज भी लौट आया।

इति वाल्मीकिये रामायणे उत्तरकाण्डे सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥

हे रामचन्द्र इस प्रकार ब्रह्मा उस को मन्त्र दे अपने लोक को चले गये। अब रावण ने ब्रह्मा से यह दूसरा बर पाया और अपनी पुरी का मार्ग लिया। कुछ काल बीते अपने मन्त्रियों को लेकर उस ने पश्चिम समुद्र की यत्रा की। वहां पर एक द्वीप में उसे अग्नि के सदृश एक पुरुष दिखाई पड़ा जो कि अपना सानी दूसरा नहिं रखता था। एक स्थान पर बैठा था। उस पुरुष को देख कर रावण उस से कहने लगा कि तुम मुझ से युद्ध करो। इतना कह कर लगा उस पुरुष पर प्रहार करने परन्तु वह पुरुष जरा भी उस के प्रहार से विचलित न हुआ और बोला हे दुर्मते ठहर मैं तेरी युद्ध श्रद्धा का अभी नाश करता हूं। इतना कह उस ने रावण को हाथ से पकड़ दाब दिया। उस के दाब से रावण मूर्छित हो भूमि पर गिर पड़ा जब उस पुरुष ने जाना कि यह मूर्छित हुआ तब राक्षसों को भी उसने मार भगाया और आप पर्वत की कन्दरा के मार्ग से पाताल में घुस गया। थोड़े काल में रावण मूर्छा से जगा अपने सचिवों से पूछ ने लगा कि वह पुरुष कहां गया तब वे सब बोले कि वह इसी कन्दिरा में प्रवेश कर गया।

ऐसा सुन रावण भी उसी में पैठ, भीतर जाकर एक द्वार मिला उस में भी निर्भय होकर चला । भीतर जाकर उस ने रक्तमाला और रक्त चन्दन से अलंकृत श्रेष्ठ सुवर्ण और रत्न समूहों से प्रकाशमान बहुत से पुरुषों को उस ने देखा और तीन कोटि स्त्रियां जो नित्य उत्सव युक्त भय रहित विमल अग्नि तुल्य प्रकाशमान थीं नाचती हुई देख पड़ीं । यह कौतुक देख रावण निर्भय हो उन के बीच चला गया । बाहर उस ने जैसे पुरुष को देखा था वैसे पुरुष वहां बहुत से देख पड़े, देखते ही रावण के शरीर के रोम खड़े हो गये । परन्तु ब्रह्मा के बरदान के बल से वहां से जीता जी निकल कर चला आया नहीं तो मर ही जाता । तथापि वहां भी उस ने ढिठाई की उस ने देखा कि एक पुरुष श्वेत गृह और स्वेत शय्या पर सो रहा है और उस के ऊपर अग्नि ज्वाला निकल रही है और उस के पास एक दिव्य वस्त्र और भूषणों से युक्त एक स्त्री बैठी चवर कर रही है । उस स्त्री को देख वह काम से मोहित हो हाथ बढ़ा उस देवी को छेड़ना चाहता था । अकेला होने पर भी ढिठाई करने से बाज नहीं आता था । उस पुरुष ने जाना कि यह ऐसी नीचता करना चाहता है झट उस ने अग्निपट देह पर से हटा रावण को देखा और बड़े जोर से हँसा । उस समय उस के तेज से रावण भस्म होने लगा और कटे हुये वृक्ष की तरह भूमि पर गिर पड़ा । तब वह पुरुष रावण से बोला कि हे राक्षस उठ मुझे ब्रह्मा का वचन मानना जरूरी है इस से तू जीता बच गया । सो हे रावण ! तू इस समय बे खटके चला जा, इस वक्त तेरी मृत्यु नहीं है । क्षण भर में उठा परन्तु इतना डर गया था कि उस के सारे शरीर में रोमांचित हो गया था, तब उस पुरुष से बोला हे पुरुष श्रेष्ठ कृपाकर मुझे यह बताइये कि आप कौन हैं ? ऐसा उस का वचन सुन वह पुरुष हँस कर बोला हे दुरात्मा तू मुझ से यह पूछ कर क्या करेगा, अब बहुत दिन नहीं हैं तू मेरे हाथ से बध पाने योग्य है । उस पुरुष का बचन सुन रावण बोला केवल प्रजापति के

बचन से मैं मृत्यु को प्राप्त नहीं हुआ। जहां तक मैंने देखा कि तीनों लोक में कोई ऐसा पुरुष नहीं है जो प्रजापति के बचन का उलंघन कर सके, हे पुरुष श्रेष्ठ मैं अमर हूं इस लिये यह भय मेरे शरीर में प्रविष्ट नहीं हुआ। परन्तु मेरी यही प्रार्थना है कि अगर मेरी मृत्यु हो तो आप ही के हाथ से दूसरे से नहीं। इस के बाद रावण ने उस पुरुष के शरीर में चराचर जगत् को देखा। यह वृत्तान्त सुन श्री रामचन्द्र ने अगस्त्य मुनि से पूछा कि हे भगवन् उस द्वीप में रहने वाला पुरुष कौन है? और वे तीन कोटि स्त्रियां कौन हैं? तथा वह सैन्य किये हुये पुरुष कौन था? जो दैत्य और दानव के मद को दूर करने की सामर्थ्य रखता था। ऐसा रामचन्द्र का बचन सुन श्री अगस्त्य मुनि बोले कि हे देवदेव मैं कहता हूं सुनिये। वह द्वीप बासी पुरुष कपिल नाम द्वीपस्थान पर कहलाते हैं और वहां जो अप्सरागण नृत्य करती थीं वे सब तुल्य तेज प्रभाव वाली उसी पुरुष की थी। हे राघव क्रोध पूर्वक उस पुरुष ने इस को नहीं देखा नहीं तो उसी क्षण वह पापी भस्म हो जाता। परन्तु जब वह भूमि पर गिरा और पसीज उठा उस काल में उस पुरुष ने इसको बहुत कठोर बचन सुनाये जिसने उसके मन का भेदन कर दिया। जैसे चुगुल खोर गुप्त बात को प्रगट कर देता है। बहुत समय के अनन्तर वह स्वस्थ चित्त हो जहां उसके सचिव थे वहां आया। इतना नीचा देखने पर भी दुष्ट लज्जा को प्राप्त नहीं हुआ। जैसे पानी मिलने से सन की गांठ जादा मजबूत होती है।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकाण्डे अष्टविंशः सर्गः ॥ २८ ॥

अब वह दुरात्मा रावण हर्षित हो वहां से लौटा और मार्ग में से राज रिषी, देव और दानवों की कन्यायें हरण करता चला। दशकंठ जिस सुन्दरी कन्या वा स्त्री को मार्ग में देखता उसके बन्धू जनों को मार उसका हरण कर अपने बिमान पर बैठाय लेता। इस प्रकार बहुत सी नाग, राक्षस, दैत्य, मनुष्य, यक्ष और दानव, इन सभों की

कन्याओं को उसने अपने विमान पर बैठाया वे सबकी सब दुःख के आंसू बहा रहीं थीं। वे स्त्रियां जो सम्पूर्ण अङ्गों से परम सुन्दरी थीं विमान भर गया। वे सब भांति भांति से बिलाप भी करती जाती थी। कितनी पतिव्रताओं ने उसे इस प्रकार श्राप दिया कि हे दुष्ट तैंने पराई स्त्रियों को अकारण दुःख में डाला है सो तू पराई स्त्री के ही कारण मारा भी जायगा। ऐसा बचन उन लोगों के मुं से निकलते ही अकाश से दुन्दुभी बजने लगी। इन स्त्रियों के श्राप से रावण श्री हीन सा हो गया उसका मन कुछ उदास सा हो आया, परन्तु फेर भी अधम उन स्त्रियों का बिलाप सुनता मंत्रियों के सहित लंका में आन पहुंचा। उस समय उसके पास सूर्पणखा आकर बिलाप करने लगी। रावण ने उसे उठाया और समझा कर उसके बिलाप का कारण पूछने लगा, तब उसने कहा हे भाई तुमने मुझे बिधवा कर दिया, तुम भ्रातृ रूप में मेरे शत्रू हो, तुमने चौदह सहस्र कालकेय दैत्यों के साथ मेरे पती को भी मार डाला जो मुझे प्राणों से भी प्यारा था। तुम्हें चाहता था कि जामाता को संग्राम में से बचा लेते सो तुमने उसे मार डाला लज्जित नहीं होते। उसका ऐसा बचन सुन रावण बोला-हे बहिन अब रोना वृथा है, मैं तुम्हें हमेशा प्रसन्न रक्खूंगा। युद्ध काल में अपने और पराये का ज्ञान नहीं रहता उस समय तो जो सामने आया कि उसे मारा। इस प्रकार वह अनजान में मारा गया। हे बहिन अब तो जो होना था हुआ अब तो जो तेरे हित की बात होगी सोई मैं करूंगा। तू अब ऐश्वर्यवान् खर नाम अपने भाई के पास जायकर निवासकर। वह चौदह सहस्र राक्षसों का स्वामी है युद्ध में बड़ा निपुण है खर अपनी मौसी का लड़का है, सब दिन तेरी आज्ञा का पालन करेगा। अब वह दंडकारण्य की रक्षा को जायगा। और दूषण उसका सेनापति होगा। वे दोनों तेरे हुकुम में सर्बदा रहेंगे। ऐसा कहकर चौदह सहस्र राक्षसों की सैना उसे दी, वह सेना सहित दंडकारण्य में आय निष्कण्टक राज्य करने

लगी।

इति वाल्मीकिये रामायणे उत्तरकाण्डे एकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥

इस प्रकार रावण खर को सेना दे और सूर्पणखा का अश्वासन कर स्थिर हुआ। इसके उपरांत राक्षस राज निकुंभिला नाम एक स्थान जो लंका का उपबन था। अपने अनुचरों को साथ ले गया और वह स्थान जो सैकड़ों यज्ञ स्तंभों से और नाना यज्ञ शालाओं से अति सुशोभित हो रहा था यज्ञ से सुशोभित देखा। इसके अनन्तर कृष्ण मृग चर्म को पहिने कमंडलू शिखा और ध्वजा को धारण किये अपने पुत्र मेघनाद को उसने देखा, और झट भुजाओं से पकड़ कर गले लगा लिया और बोला, हे पुत्र यह तुम क्या कर रहे हो सब ठीक ठीक कहो यह बात सुन कर मेघनाद तो कुछ भी नहीं बोला क्यों कि यज्ञ की दीक्षा के समय मौन रहना चाहिये। किन्तु उसका प्रोहित शुक्र जो महा तपस्वी और श्रेष्ठ था बोला। हे लंकेश्वर मैं सब बृत्तान्त आपको सुनाता हूं, तेरे पुत्र ने विस्तार पूर्वक सात यज्ञ किये, अग्निष्टोम, अश्वमेध, राजसूय, गोमेध, वैष्णव इन छवों के अनन्तर जब महेश्वर यग में प्रवृत्त हुआ तब साक्षात् शंकर उपस्थित हुये औ बड़े प्रसन्न होकर नीचे लिखे बरदान दे गये। १ इच्छानुसार गमन करे २ आकाश चारी एक रथ, ३ तामसी नाम एक माया, जिसके द्वारा अंधकार फैल जाता है। हे राजन् इस माया वाले की गति कोई भी नहीं जान सक्ता। अक्षय बाणों से पूर्ण दो तरकस दुर्जय धनुष और बड़ा बलवान शस्त्र जो संग्राम में शत्रु का नाश करता है, इन सब पदार्थों को आपके पुत्र ने पाया और आज यज्ञ समाप्ति का दिन है आज हम लोग आप को देखना भी चाहते थे। यह बात सुन रावण बोला, कि यह तो अच्छा नहीं हुआ। जो इन्द्रादि मेरे शत्रु मेरे घर से पूजे गये, अस्तु जो भया सो भया, यह कह कर लंका को चला विभीषण भी वहीं था उसको सङ्ग ले लिया और उन स्त्रियों के बिमान के पास गया, वे सब स्त्रियें रो और बिलाप

कर रहीं थीं। उस वक्त विभीषण रावण के इस कर्म को देखकर
बोला, हे राजन् तुम यश, अर्थ, और कुल के नाशक इन आचरणों
को जानकर भी मनोनुसार व्यवहार करते हो, तुम इन स्त्रियों के
बंधुओं को नीचा दिखाकर इन सबको हर लाये देखो इस पाप का
फल तुम्हें हाथों हाथ प्रत्यक्ष मिल गया। तुम्हारी कुंभीनसी नामक
बहिन को मधु नाम दैत्य यहां से हरण करके ले गया। तब रावण
बोला कि मैं नहीं समझता कि तुम क्या कह रहे हो, और वह कौन
मधु है जिसका नाम तुम ले रहे हो। यह सुन बिभीषण बोला, हमारे
मातामह सुमाली के ज्येष्ठ भ्राता माल्यवान् जो हमारे माता के ज्येष्ठ
पिता, हमारे मान्य है उनकी कन्या कुंभीनसी अर्थात् हमारी मौसी
अनला की पुत्री जो हमारी बहिन है, हे राजन् उसको महाबली मधु
नाम राक्षस हर ले गया, तुम्हारा पुत्र यज्ञ करने में लगा था। मैं
जल शयन तपस्या में लगा था। और कुम्भकर्ण की निद्रा तो प्रसि-
द्ध ही है, उधर मधु घात लगाये था राज्य सून्य नगरी पाय भीतर
घुस आपके सामंतश्रेष्ठ २ अमात्यों को मार आपके अन्तःपुर से ज-
हां बड़ी ही रक्षा रहती है घुसकर उसको हर ले गया। उसके इस
नीचता पूर्ण व्यवहार को मैंने सुना और क्षमा करदिया, मारा नहीं
क्यों कि मैंने सोंचा कि अन्ततोगत्वा कन्या किसी को दीही जायगी
और भाई लोग देहींगे। इससे यह लेगया तो ले जाने देओ। आ-
पके स्त्रियों के हरण रूपी पाप का फल यहीं आनकर उपस्थित हुआ
इस बात को सुन रावण अपने कर्म से अति दुखित भया, फेर क्रोध
से दोनो नेत्र लाल हो गये और सारथी से बोला कि मेरा रथ तैयार
करो सब शूर बीर तैयार हों आज मैं उस मधु को जो रावण से भी
नहीं डरता मारकर देवलोक में युद्ध के लिये जाऊंगा। ऐसी आ-
ज्ञा सुनकर एक हजार चार अक्षौहणी सेना युद्ध के लिये निकली,
इन्द्रजीत सेना की रक्षा करता हुआ आगे चला, बीच में रावण, पी-
छे कुम्भकर्ण, बिभीषण लंका में ही रहे। रावण मधु के नगर में पैठा

परन्तु मधुको वहां न पाकर केवल बहिन कुम्भीनसी को पाया, वह भाई को देखतेही चरणों पर गिर पड़ी, क्यों कि वह रावण से बहुत डरती थी। उसको चरण पर गिरते देख रावण बोलाउठा कि तू भय मतकर, ऐसा बचन कहकर रावण ने उसे उठाया और बोला बोल तेरे हित के लिये मैं क्या करूं। तब बोली हे भाई यदि तुम मेरा हित चाहते हो तो मेरे पति को मत मारो क्यों कि स्त्रियों के लिये विधवा पन से बढ़कर संसार में दूसरा दुःख नहीं है। उसका ऐसा बचन सुन रावण बोला, कि तेरा पति कहां है शीघ्र बता मैं उसको साथ लेकर स्वर्ग विजय के लिये जाऊंगा। तेरे बातों से मैंने जीवदान दिया। रावण का बचन सुन उसने सोते हुये अपने पति को जगायकर कहा कि देखो यह मेरा भाई रावण आया है और स्वर्ग जीतने के लिये जाता है और तुम्हारी सहायता चाहता है सो हे पति उसकी सहायता के लिये तुम जाओ बल्कि अपने बन्धू गण को भी साथ ले जाओ। ऐसा उसका बचन सुन मधु तैयार हो गया और रावण के पास आ उसका पूजन किया, रावण ने अतिथी सत्कार पाय एक रात वहां टिककर दूसरे दिन सुरपुर की यात्रा की और कैलाश पर पहुच वहां अपनी सेना टिकाई।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकाण्डे त्रिंशः सर्गः ॥ ३० ॥

इस प्रकार सूर्य्यास्त काल में राक्षस पति ने अपनी सेना को वहां ठिकाया और जब चन्द्रोदय हुआ उस समय सेना वाले सब सो गये और रावण तो महा पराक्रमी था उसको निद्रा कहां सो यह उस पर्वत के शृङ्ग पर बैठा अनेक प्रकार के बृक्षों और उस पर्वत पर चन्द्रोदय के कारण अनेक शोभाओं को देख रहा था। किन्नर गण अपनी स्त्रियों के संग मधुर कंठ से गीत गा रहे थे। मतवाले विद्याधर स्त्रियों के संग बिहार कर रहे थे। और उधर कुबेर के घर में जो अप्सरा गण गा रही थी उनका अति सुन्दर मधुर ध्वनि घंटा के शब्द की तरह सुन पड़ता था वायु के झकोरों से बृक्ष से पुष्पों की वृष्टि हो रही थी।

जिससे तमाम पर्वत सुगंध को प्राप्त हुआ था। ऐसे समय में रावण को काम देव ने मस्त कर दिया अर्थात् रावण काम के वस में हो गया। इतने में उसे संपूर्ण भूषणों से भूषित अप्सराओं में श्रेष्ट रंभा नाम की अप्सरा उसे देख पड़ी अब रावण तो काम के वस में था ही तुरंत उठकर उसके पास जाकर उसका हाथ पकड़ लिया, और बोला हे प्रिये तू कहां जाती है और तेरी क्या आकांक्षा है किसके अभ्युदय का समय है। कौन भाग्यवान् तेरा उपभोग करेगा। हे सुन्दरी भला बतलाओ तो सही इस संसार में मुझसे बढ़कर कौन पुरुष है? इन्द्र या विष्णु जो तुम मुझे छोड़ कर दूसरे के पास जाना चाहती हो आओ इसी पर्वत की सिला पर बिश्राम करें। हे चन्द्रमुखे देखो यह दशानन जिसके बराबर संसार में दूसरा कोई नहीं है वह नम्रता पूर्वक हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता है उसकी बात मानो। रावण का ऐसा बचन सुन वह बेचारी हाथ जोड़ कर बोली दया करो, तुम्हें ऐसी बात मुझसे कहना उचित नहीं तुम तो हमारे श्वसुर हो। यदि दूसरा कोई मेरे साथ अनुचित व्यवहार करें तो तुम्हें मेरी रक्षा करनी चाहिये। ऐसा बचन सुन रावण रम्भा से जो नीचे मुंह करके खड़ी थी और रावण को देखते ही रोमांचित हो गई थी। उसकी बात सुन रावण उससे बोला हे सुन्दरी यदि तू मेरे पुत्र की भार्या होती तब पुत्र वधु कहलाती। ऐसा बचन सुन रम्भा ने उत्तर दिया कि हे राक्षस श्रेष्ठ मैं तुम्हारे पुत्र की धर्म्म भार्या हूं सुनो तुम्हारे भ्राता कुबेर का पुत्र नलकूवर जो तीनों लोक में विख्यात और प्राणों से भी अधिक प्यारा है उससे मेरा संकेत है। ऐसा उसका बचन सुन अति नम्रता पूर्वक रावण बोला कि तुमने जो कहा वह बात ठीक नहीं एक की पत्नी के लिये यह नियम है अप्सराओं के पति कहां? और न वे एक की पत्नी बनके रह सकती हैं। ऐसा कहकर वह राक्षस काम से व्याकुल और अन्धा तो था ही उसको पर्वत सिला पर बैठा संभोग करने लगा। कुछ काल के अनन्तर जब वह उससे छूटी तब उसकी ऐसी

दशा हुई कि माला और भूषण सब छितिर वितिर हो गये। अत्यन्त विह्वल और डरी तथा कांपती हुई लज्जा से युक्त नलकुंवर के पास गई और हाथ जोड़ पैर पर गिर पड़ी। तब नलकुंवर बोले आज ऐसी क्या बात है जो तू मेरे पैर पर गिर रही है। तब उसने सब वृत्तान्त उनसे कहा। उससे सब वृत्तान्त सुन नलकुंवर क्रोधित हो कुछ ध्यान करने लगे। मुहूर्त मात्र में सब वृत्तान्त को जानकर क्रोध से रक्त नयन हो गये, हाथ में जल लेकर सम्पूर्ण इन्द्रियों का स्पर्शकर रावण को श्राप देने के लिये उद्यत हुये। और बोले कि हे भद्रे जिस लिये कि तुझ बिना चाहती हुई पर उसने बलात्कार किया इस लिये फेर वह दूसरी स्त्री पर इस प्रकार हाथ न डाल सकेगा। यदि वह फेर किसी अकामा स्त्री पर ऐसा व्यवहार करेगा तो उसका मस्तक सात टुकड़े होकर चूर हो जायगा। इस प्रकार प्रज्वलित अग्नि की तरह श्राप उसके मुख से निकलते ही आकाश से देवतों की दुन्दुभी बजने लगीं और पुष्पवृष्टी होने लगी। रावण ने जब इस श्राप को सुना तब से अकामा स्त्रियों पर बलात्कार करना छोड़ दिया। जिन पतिव्रताओं को वह हर ले गया था उन्होंने जब उस श्राप को सुना सुनकर अति हर्ष को प्राप्त हुईं। रावण का तेज अग्नि तुल्य श्राप को सुनकर नष्ट हो गया। परन्तु खल का स्वभाव नहीं जाता चाहे साक्षात् शंकर भी उसके गुरू क्यों न हो।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे एक त्रिंशः सर्गः ॥ ३१ ॥

अब कैलास को लांघकर रावण स्वर्ग लोक में पहुंचा और चारों ओर से राक्षसी सेना पहुंच गई वहां ऐसा कोलाहल हुआ जैसे मथन काल में समुद्र का सब्द हो। अब रावण का आना सुन इन्द्र का आसन डग मगाया, और सब देवते इकट्ठे होकर आये। उनसे इन्द्र बोले कि हे देव गणों तुम लोग इस दुष्ट रावण से युद्ध के लिये तैयार हो जाओ। इन्द्र की ऐसी आज्ञा सुनते ही देवते कवचों को पहिन युद्ध के लिये तैयार हुये। इन्द्र बिचारा दीन तथा रावण के

डर से डरा हुआ विष्णु के पास जाकर बोला हे प्रभु इस रावण राक्षस के विषय में मैं क्या करूं। बरदान के गर्व से यह इतना उपद्रव कर रहा है। हे प्रभो जिस प्रकार नमुचि, बृत्र, बलि, नरक और शंबर इन सबको मैंने तुम्हारा बल पाय भस्म कर दिया वैसाही कुछ आप करिये। क्यों कि हे मधुसूदन इस जगत में सिवाय तुम्हारे और दूसरा कोई नहीं है। हे प्रभु आपी ने इस संसार को उत्पन्न किया है और प्रलय काल में यह सब आपी में लीन हो जाता है, मुझे ठीक ठीक बतलाइये कि खड्ग और चक्र लेकर क्या आप रावण से लड़ेंगे? इन्द्र को ऐसा भयभीत देख नारायण बोले हे इन्द्र तुम इतना मत डरो। यह दुष्ट रावण इस समय बरदान पाकर मस्त होगया है। तुम जो मुझे युद्ध करने कहते हो सो मैं इससे युद्ध न करूंगा, क्यों कि मेरा नियम है कि मैं शत्रु को बिना मारे संग्राम से नहीं लौटता इससे ब्रह्मा का बरदान नष्ट हो जायगा। परन्तु मैं तुमारे समीप प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं ही इस राक्षस की मृत्यु का कारण होऊंगा और स परिवार इस दुष्ट को मार देवताओं को हर्षित करूंगा। परन्तु अभी नहीं समय आने पर। हे देवराज! जो ठीक बात थी वह मैंने तुमको बता दी और तुम भी जाओ डर को छोड़कर देवताओं को साथ ले युद्ध करो। प्रातः काल होने पर रावण की सैना के बीर गण जागे और बड़े हर्ष के साथ युद्ध करने के लिये प्रबृत्त हुये। इधर देवते भी प्रसन्न हो राक्षसों के सन्मुख निकले। परन्तु देवतों की सैना रावण की उस अक्षय सेना को देख कुछ भयाकुल होगई। उस समय नाना अस्त्र शस्त्रों से देवता और राक्षसों में बड़ा भारी संग्राम उपस्थित हुआ। अनेकों बड़े बड़े योधाओं को संग लेकर रावण का मंत्री सुमाली और रावण देवताओं की सैन्य में घुस गया और लगा विध्वंस करने। उनके प्रहारों को सहन न करके देव सैना भाग चली। इतने में अष्टम बसु जो सावित्र इस नाम से प्रसिद्ध है अपनी सेना ले संग्राम में आये, तथा त्वष्टा और पूषा ये दोनों आदित्य भी निर्भ-

यंता से राक्षसी सेनामें घुस गये फिर उन सभों का महाघोर संग्राम आरम्भ हुआ। इतने में सुमाली शूल लेकर लगा देव सैन्य का विनाश करने जिसके आगे सैनाके छक्के छूट गये। सैनाको विचलते देख अष्टमवसु साविच ने सुमाली का सामना किया और इन दोनों का अत्यन्त युद्ध होने लगा। वसुने क्षणमात्र में उसके सर्व रथको चूर कर डाला और जब रथ टूट फूट गया तब वसुने उसके घातके लिये गदा उठाई और प्रज्वलित तथा काल डण्डके सदृश्य गदा को सुमाली के मस्तक पर मारा, उस गदा का प्रहार उसके ऊपर ऐसा भया कि जैसे इन्द्र का वज्र पर्वत पर गिरता है उस प्रहार से सुमाली की न हड्डी न मस्तक न मास वहां देख पड़ा अर्थात् गदा ने सम्पूर्ण भस्मकर दिया। उसका मरण देख राक्षस चिल्लाकर भागे और वहां एक क्षत्र भी न ठहर सके।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे द्वात्रिंशः सर्गः ॥ ३२ ॥

सुमाली का नाश देख और अपनी सेना को भागती देख रावण का पुत्र मेघनाद क्रोधित हो दौड़ा और भागते हुए राक्षसों को रोक देवताओं की सैनामें घुस गया। बड़े बड़े वीर देवते मेघनाद को देखते ही भाग खड़े हुये उसके सन्मुख कोई भी योधा खड़ा न रह सका। इनको भागते देख इन्द्र ने सबको रोका और कहा कि देखो यह मेरा पुत्र उसके सन्मुख जाता है। इसके बाद जयंत अति विलक्षण रथ पर चढ़कर संग्राम में आये और सब देवते उसे घेर कर मेघनाद पर प्रहार करने लगे। अब पुनः देवताओं और राक्षसों का तथा मेघनाद और जयन्त का युद्ध होने लगा। दोनों बाण वर्षा करने लगे बाणों की चोट खाकर मेघनाद जयन्त और देवसैन्य पर घोर बाण वृष्टि करने लगा। उसके बाणों से देवते विचलित से हो गये उस पर से उसने अपनी मायासे अन्धकार फैला दिया। अब कोई किसी को देख नहीं सक्ता था ऐसे समय में देवते देवतों से और राक्षस राक्षसोंसे ही लड़ने लगे। क्योंकि घोर अन्धकार से कुछ सूझता तो था ही नहीं। ऐसे

समय में इन्द्र के ससुर पुलोमा नाम दैत्यराज ने देखा कि इस प्रकार मेघनाद जयन्त का बधकर डालेगा बस झट उसे लेकर सागर में घुस गये, यह पुलोमा शत्री [इन्द्राणी] का पिता है। जब देवतों ने जयंत को न देखा तो भाग चले, ऐसे समय में मेघनाद ने भी उन्हें लखेद लिया। जब इन्द्र ने भी अपने पुत्र को न देखा तब मातली को आज्ञा दी कि मेरा रथ लाओ। इन्द्रकी आज्ञा पातेही मातली ने उस दिव्य रथ को ला उपस्थित किया जिसकी जोड़ी संसार में न थी। उस रथ के अग्र भाग में बिजली मेघ और वायू यह सब उत्तम रीति से लगाये गये थे। उस समय अप्सरायें और गन्धर्व मंगल गान करने लगे। सब देवते देवराज को घेरकर चले। उस समय कई प्रकार के आपू सगुन होने लगे। इधर बिश्वकर्म्मा के बनाये दिव्य रथ पर दशानन भी सवार हुआ। जिसके प्रकाश से संग्राम भूमि जगमगा उठा। बड़े बड़े दैत्य उस रथ को घेर कर चले। अब दशानन स्वयं इन्द्रके सन्मुख चला पुत्र मेघनाद को रोक दिया जिससे वह संग्राम भूमिसे अलग जाकर विश्राम करने लगा। अब फिर देवताओं और दैत्यों का घोर युद्ध आरम्भ हुआ। और बड़े बड़े बाणों की भयंकर वृष्टि होने लगी। दुष्ट कुम्भकरण जो नाना शस्त्रों को लिये गया था परन्तु हत बुद्धि को इतना ज्ञान न था कि किन अस्त्रों से युद्ध करूं वह हाथसे, पैर से दांतसे जिसे पाता नीच डालता इस प्रकार वह देव सैन्या का नाश करने लगा। अब वह लड़ता लड़ता बहुत सी सैना के सहित मरुद्-गणों के सन्मुख पहुंचा. उन्होंने ऐसे पराक्रम से युद्ध किया कि कुम्भ-कर्ण के सरीर को विदीर्ण कर डाला उनकी मारसे वह दुष्ट वहां ठहर न सका तथा उसकी तमाम सेना को भी उन्होंने मार गिराया। उस समय वहां श्रोणित की नदी बह चली, जब रावण ने देखा कि देव-ताओं ने हमारी तमाम सेना को मार डाला उस समय देवताओं की सैनामें स्वयं घुस गया और इन्द्रके सन्मुख जा उपस्थित हुआ। इसको देखते ही इन्द्र ने अपने धनुष पर बड़े बिकराल बाण चढ़ा इस पर प्रहार

किया तथा रावण भी इन्द्र पर इसी प्रकार प्रहार करने लगा। दोनों के बाणों से सूर्य तक छिप गये और सब तरफ अन्धकार फैल गया।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे त्रयविंशः सर्गः ॥ २३ ॥

जब उस घोर अन्धकार में देवते और राक्षस परस्पर युद्ध कर रहे थे और इन्द्र रावण और मेघनाद ये तीनों सचेत ही रहे। जब रावण ने देखा कि मेरी यह दूसरी सेना भी क्षण मात्र में मारी गई तब अत्यन्त क्रोध से गर्जा और सारथी से बोला कि मेरा रथ देव सेना के बीच में ले चलो। मैं अपने पराक्रम को अभी दिखाता हूं। ऐसा सुनते ही सारथी ने सेना के बीच में रथ को हांक दिया। रावण की बात सुन इन्द्र देवतों से बोला, कि हे देवगणों! इस समय जो मैं कहता हूं सो उपाय तुम लोग करो। यह राक्षस बरदान के कारण मारा तो जायगा नहीं इसे जीता पकड़ लो। जैसे बलि बांधा गया था उसी प्रकार इसको भी बांध लो। इतनी आज्ञा दे इन्द्र राक्षसी सेना में घुस उसे त्रास देने लगा। उत्तर से रावण देव सैनामें घुसा और मारे बाणों के देव सैना को उसने विदीर्ण कर डाला, अब इन्द्र अपनी सेनाका नाश होते देख रावणको घेर उधर से लौटाते आप भी लौटे। इतने में राक्षसी सेना में बड़ा हाहाकार मचा "हाय हम मारे गये,,। क्योंकि उन लोगो ने देखा कि इन्द्र के हाथ रावण पकड़ा गया। ऐसा हाल देखकर मेघनाद रथ पर सवार होकर उस सेना में घुस गया और उसने वह माया फैलाई जो पूर्व में शिव से पाई थी और देव सैना को छोड़ इन्द्र पर दौड़ा। परन्तु अन्धकार के कारण देवराज उस शत्रु के पुत्र को देख नहीं पाते थे। मेघनाद कवच रहित और देवताओं के बाणों से मारा जाता भी न डरा, मातलि को बाणों से मार इन्द्र पर बाण वृष्टि करने लगा। तब इन्द्र रथ को छोड़ ऐरावत पर चढ़ गया और मेघनाद को खोजने लगा। परन्तु वह तो माया के बलसे आकाश में अदृश्य था। झट उसने इन्द्र को अपनी माया बलसे लपेट बाण वृष्टि करने लगा जब उसने जाना कि इन्द्र क्लान्त हो गया तब माया से इन्द्र को बांध अपनी

सेना में ले आया। इन्द्रको बंधा देख देवते बिचार करने लगे कि अब क्या होगा अब देवते अत्यन्त क्रोधित हुये और रावण को संग्राम से बिमुख कर उस पर बाण वृष्टि करने लगे। रावण बसु तथा मरुद्गणों की चपेट में पड़ ऐसा ध्वस्त हुआ कि बिल्कुल युद्ध नहीं कर सकता था। तब मेघनाद पिता को अति दुखित और प्रहारों से जर्जरित देख पास आय दिखाई दे बोला। हे तात! अब चलिये संग्राम छोड़ दीजिये हम लोगों की जीत हुई। वह देखिये देवताओं का स्वामी जो इन्द्र है वह पकड़ लिया गया। अब आप तीनों लोक का भोग करिये। मेघनाद का बचन सुन देवते रण से अलग होगये। अब रावण मेघनाद से बोला, हे पुत्र तू मेरे कुल और बंशका बर्द्धक है आज तूने सुरराज को और असुरों को भी जीत लिया अब तुम इन्द्र को रथ पर चढाय लंका में ले चलो मैं भी तेरे पीछे अपने सचिवों तथा सैना को लेकर आता हूं।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥

इस प्रकार इन्द्र पकड़ कर जब लंकामें लाया गया उस समय सब देवते ब्रह्मा को अगाड़ी कर वहां आये। ब्रह्मा वहां खड़े होकर बोले हे पुत्र रावण! मैं तेरे पुत्रके संग्रामसे अति संतुष्ट हूं। मैं इसके पराक्रमकी बड़ाई क्या करूं। यह तुमसे भी बढ़कर हुआ। तुमने अपाने तेज से त्रैलोक्य को जीता और अपानी प्रतिज्ञा सफल की इसलिये मैं तुम्हारे और तुम्हारे पुत्र के ऊपर प्रसन्न हूं। हे रावण यह तेरा बेटा आजसे इन्द्रजीत नामसे प्रसिद्ध हुआ और अब तुम इन्द्रको छोड़ देओ। ब्रह्मा का बचन सुन इन्द्रजीत बोला हे प्रभु! जो आप इसे छोड़वाते हैं तो इसके एवज में मुझे अमरत्व दीजिये तब ब्रह्मा बोले कि मेघनाद पृथ्वी तल पर कोइ भी अमर नहीं रह सक्ता। ब्रह्मा का ऐसा बचन सुन मेघनाद बोला कि अच्छा जो सिद्धी मैं चाहता हूं वही दीजिये जब मैं शत्रु विजय के लिये चलूं तब मैं अग्नि का होम कर पूजन कर उस समय अग्नि मेरे लिये अग्नि घोड़ो सहित

रथ दे। उसरथ पर जब तक मैं रहूं अमर रहूं। यही मेरा वर है। उस जप और होम की समाप्ति के बिना मैं युद्ध करूंतो मेरा नाश हो। हे देव! सब लोग तपके द्वारा अमरबना चाहते हैं और मैं पुरुषार्थके द्वारा, पितामह बोले "एव मस्तु" तब उसने इन्द्रको छोड़ दिया, और देवता लोग इन्द्र सहित स्वर्ग में चले गये। हे राम! इन्द्र छूटे तो सही परन्तु कांति रहित और अत्यन्त चिंतित थे। ऐसी दशा देख ब्रह्मा बोले कि हे शक्र क्या सोचते हैं? अपने किये हुये पाप का स्मर्ण करो। जब मैंने अहल्या की बनाया उसको बनाकर मैंने सोचा कि अद्वितीय सुंदरी किसकी होगी। उधर तुम मनमें विचारने लगे कि मैं त्रैलोक्यका स्वामी हूं इसलिये यह मेरी पत्नी होती तो अच्छा होता। पर मैंने एक धरोहर की तरह गौतम के पास उसे रखदियाबहुतवर्ष पर्यन्त वह मुनि केपास रही फेरमुनिने मुझेवह लौटादी मुनिकि स्थिरता और सिद्धिको देखमैंने मुनिको देदिया। मुनि उसे पत्निबना रमण करने लगे। सब देव ते निरास हो गये। परन्तु तुमने काम के बस में मुनि के आश्रम में जाय छलकर उस स्त्री से संभोग किया। जब मुनि ने छाल जाना तब तुम्हें श्राप दिया, कि हेदेवराज! तुम रणमें शत्रुसे पकड़े जाओ तुम्हे यह श्राप देकर मुनिने अपनी स्त्री को बहुत धिकारा परन्तु उसके उसने अपानी निरदोषिता जाहिर की। तब मुनि ने उसे भी श्राप दिया कि तेरे जैसा रूप संसार में बहुतों को होता। जा तू पत्थर हो जा। तब अहिल्याने बहुत बिनती की तब रिषी बोले कि इक्ष्वाकु के बंश में "राम" इस नाम से साक्षात् भगवान् एक राक्षस के बध के लिये अवतार लेंगे जब उनका दर्शन करेगी तब पबित्र होगी उसी समय तू फेर हमारे समीप प्राप्त होगी सो हे इन्द्र उसी श्रापके कारण आज तुम्हारी यह दशा हुई है। तुम अपने दुष्कर्म का स्मर्ण करके अब तुम जाकर वैष्णव यज्ञ करो और उस यज्ञ से पवित्र होकर पुनः स्वर्ग को जाओ। तुम्हारा पुत्र संग्राम में नष्ट नहीं हुआ किन्तु तुम्हारा श्वशुर उसको समुद्र में उठा लेगया है। तब इन्द्र वैष्णव यज्ञ करके स्वर्ग को गये। सो हेरघुनंदन! इस प्रकार

का बल उसका था जिसने इन्द्र को भी जीत लिया दूसरे प्राणी की कौन बात है। अगस्त्यजी का ऐसा बचन सुन रामचन्द्र और लक्ष्मण तथा बानर सभी आश्चर्य को प्राप्त हुये। बिभीषण जो वहीं बैठा था बोला कि जो मुनिजीने कहा है वह सब वृतान्त यथार्थ ही है इसके आश्चर्य की कोई बात नहीं है।

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे पंचत्रिंशः सर्गः ॥३५॥

रामचन्द्र विस्मय पूर्वक हाथ जोड़ अगस्त्य मुनिसे बोले कि हेभगवन्! यह क्रूर राक्षस जबसे पृथिवी पर्यटन करने लगा उस काल में क्या यह पृथ्वी वीर पुरुष से शून्य थी क्या कोई ऐसा पुरुष न था जो उसका मुकाबला करता? ऐसा महाराज रामचन्द्र का बचन सुन मुनि हँस कर बोले कि इस प्रकार वह लोगों को पीड़ा देता पृथिवी पर घूम रहा था घूमते घूमते वह महिष्मती नगरी में जो स्वर्ग के समान थी जहां अग्नि सर्वदा निवास करते थे जा पहुंचा। वहां का राजाका नाम सहस्रार्जुन था राजा भी अग्नि के प्रभाव से उसी के तुल्य था। जिस दिन वह वहां पहुंचा उसी दिन वह राजा स्त्रियों को साथ ले नर्मदा नदी में जल क्रीड़ा करने गया था। रावण जाकर राजा के मन्त्रियों से पूछने लगा कि तुम्हारा राजा कहां है मेरा नाम रावण है मैं उससे शुद्ध लेने आया हूं। ऐसा बचन सुन वे बोले कि राजा राजधानी में नहीं हैं। यह समाचार पाय रावण बिंध्य पर्वत पर गया, वहां से घूमता हुआ नर्मदा नदी पर पहुंचा वहां पुष्पक से उतर मन्त्रियों से बोला, कि हम लोगों ने बहुत दिनों से स्नान नहीं किया, तमाम रुधिर सूखकर चंदन की तरह शरीर में लपट रहा है इससे आज इस पवित्र नदी में तुम लोग भी स्नान कर डालो। मैं भी स्नान करके शिवका पूजन करूंगा ऐसा रावण का बचन सुन सब राक्षस नदी में घुस गये और लगे उसका जल हिंडोलने। इस प्रकार राक्षस स्नान करके निकले तब रावण के लिये फूल इकट्ठा करने लगे। क्षण मात्र में राक्षसों ने पुष्पों का ढेर वहां लगा दिया। जब पुष्प इकट्ठे हो गये तब रावण नदी में स्नान

करने के लिये उतरा। स्नान और जप से निवृत्त होकर नदी के बाहर निकल ओदे वस्त्र को त्याग दूसरे श्वेत वस्त्र को धारण कर स्वर्ण का शिव लिंग बालुका की बेदी पर ध्यान पूर्वक हाथ जोड़ पूजन करने लगा॥

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे षट्विंशः सर्गः ॥ ३६ ॥

नर्मदा के तट पर जहां रावण शिव का पूजन कर रहा था वहां से थोड़ी दूर पर महा विजयी महिष्मति नगरी का राजा सहस्रार्जुन स्त्रियों के सहित जलक्रीड़ा कर रहा था। राजा ने अपने सहस्रों भुजाओं का बल जानने के लिये नर्मदा के बेग को रोका और जब उसे छोड़ा तब ऐसी तरंग उठी जैसे सावन भादों की नदी का बेग होता है। उसी बेगसे नदी तट पर कुशा, पुष्प, लकड़ी इत्यादि वस्तुयें तीर पर आगई। रावण ने जो पुष्प रखवाये थे वे सब बह चले। रावण पूजा को पूरा न करने पाया और आधे में ही उठकर नदी के तट पर देखने लगा। तो क्या देखता है कि पूर्व दिशा से पश्चिम दिशा की तरफ जल का बेग बढ़ रहा है, थोड़े काल में नदी का वह बेग समाप्त होगया। रावण मुख से कुछ शब्द न बोलकर दक्षिण हाथ की उंगलियों के मंत्रियों को संकेत द्वारा यह जानने के लिये भेजा कि यह जल कहां से आता है। शुक और सारंग पूर्वाभि मुख उड़े और दो कोश पर जाकर उन्होंने देखा कि एक पुरुष बहुत सी स्त्रियों के साथ जलक्रीड़ा कर रहा है। अपने भुजाओं से जल को रोकता है और छोड़ देता है। यह आश्चर्य वे दोनों लौटे और रावण से आकर सब समाचार कह सुनाया, उन दोनों का ऐसा बचन सुन रावण बोला वही सहस्रार्जुन है। ऐसा कह गर्व सहित उसी ओर चला, क्योंकि उसे तो युद्ध की बड़ी लालसा थी। अब रावण अपने मन्त्रियों के सहित वहां पहुंचा, वहां जाकर क्या देखता है कि राजा स्त्रियों को घेरे हुये जल विहार में आशक्त हो रहा है देखते ही क्रोधसे नेत्र रक्त होगये और मन्त्रियों से बोला कि तुम लोग शीघ्र राजासे जाकर कहो कि रावण युद्धकी आकांक्षा से आया है! ऐसा रावण का बचन सुन मंत्री बोले बाहरे रावण

वाह तुमने युद्ध के लिये अच्छा समय विचारा है कहां तो राजा मतवाले हो विहार में तत्पर हैं कहां तुम युद्ध चाहते हो! अगर ऐसी इच्छा हो तो आज की रात तुम यहीं टिक रहो, कल राजा तुम्हसे समर करेंगे। नहीं तो अगर ज्यादा इच्छा प्रबल हुई हो तो आओ हम लोगों से युद्ध करो। उनका ऐसा बचन सुन रावण ने उन सचिवों में से बहुतों को मार डाला और बहुतों को भक्षण कर गया। क्योंकि वे सब बहुत भूखे थे। इस प्रकार नर्मदा के तीर पर बड़ा कोलाहल भया। तब कुछ लोगो ने जायकर रावण के कर्म को राजासे कहा, क्योंकि वे सब अत्यन्त भयसे विह्वल हो रहे थे। राजा ने सुनकर उनसे कहा डरो मत, ऐसा कह स्त्रियों को नदी के बाहर कर आप क्रोध युक्त लाल लाल नेत्र अग्नि रूप, प्रबल की अग्नि की भांति भभक उठा और गदा लेकर राक्षसों के ऊपर दौड़ा। अब राजा को आते देख प्रहस्त बीचही में मूशल लेकर खड़ा होगया और उस लोह मूशल को उसने राजापर चलाय दिया। परन्तु राजा ने सहज में गदा के पैतरे से उस मूशल को व्यर्थ कर दिया और असली गदा जो पांच सौ हाथ ऊंची थी घुमा कर प्रहस्त को मारी जिसकी चोट खाकर प्रहस्त लोट पोट होगया। प्रहस्त की ऐसी दशा देख बाकी मन्त्री संग्राम से भाग गये। उनका भागना देख, रावण सहस्त्रार्जुन पर दौड़ा। उस समय सहस्रा भुज वाले और बीस भुज वाले का बड़ाही घोर संग्राम हुआ। दोनों गदा लेकर युद्ध कर रहे थे और दोनो दोनों का प्रहार सह रहे थे। परन्तु दो में से कोई भी सुमित न होते थे। इतने में अर्जुन ने क्रोधकर रावण के दोनो स्तनों के बीच में डाहा मारी परन्तु बरदान के बल से उसका वक्षस्थल तो नहीं फटा परन्तु गदा टूट कर दो टुकड़े होगई। परन्तु उस गदा की ऐसी चोट बैठी कि रावण धनुष भर पीछे हट गया और मारे पीड़ाके चीखने और तड़फड़ाने लगा। जब राजा ने देखा कि यह चोट खाकर व्याकुल हो रहा है तब उसके समीप जाकर रावण को पकड़ लिया। जैसे गरुण सर्प को पकड़ता है सिंह मृगा को पकड़ लेता है। यह हाल देख आकाश

से वाह वाह का शब्द हुआ बाजे बजने तथा पुष्प वृष्टि हुई । उसे पकड़ कर राजा मेघकी तरह गर्जने लगा अब प्रहस्त भी मुर्छा से सचेत हुआ और उसने देखा कि रावण तो पकड़ गया तब सब मिलकर सहस्रार्जुन पर दौड़े और भांति भांति के अस्त्र चलाने लगा परन्तु राजा ने एक भी अस्त्र को अपने पास आने न दिया बीचही में थाम थाम लिया, और अपाने दारुण आयुधों से सब राक्षसों को मार भगाया । बड़े हर्ष के सहित रावण को पकड़े अपने मित्रों मन्त्रियों तथा भृत्यों के साथ नगर में प्रवेश किया उस समय पुरवासी पुष्पों की वर्षा करने लगे । राजा ने आकर रावण को बन्दीखाने में बन्द कर दिया ॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७॥

हैं हम नरेश ने रावण को क्या पकड़ा मानो वायु को बांध डाला इस बात को स्वर्ग में देवते कह रहे थे उनके मुखसे इस समाचार को सुन पुलस्त्य मुनि पुत्र स्नेहसे कांप उठे और झट महिष्मति नगरी में सहस्रार्जुन के पास वायु मार्ग से पहुंचे और घबराये हुये चट पट भीतर घुस गये राजा ने इस प्रकार दूरसे आते देखा, उधर अनुचरों ने दौड़कर राजाको खबर दी पुलस्त्य मुनि का नाम सुनतेही राजा अगवानी को चले पोहित अर्घ और मधुपर्क की सामग्री ले राजाके साथ हुये। राजा ने सूर्य के सदृश प्रकाश मान ऋषि को बड़े आदर से प्रणाम किया और मधुपर्क अर्घ पाद्य कर बड़े हर्ष और गद्गदवाणीसे निवेदन किया । हेऋषे ! मैंने जो आज आपके दर्शन पाये इससे मेरी यह पुरी अमरावती के तुल्य हो गई । हेऋषे ! आज मैं कृत कृत हुआ । यह राज्य, यह धन स्त्री, पुत्र यह सब आपी का है आज्ञा कीजिये आपका आगमन किस प्रकार हुआ । राजा का ऐसा बचन सुन मुनि ने प्रथम सब कुशल मंगल पूछा पीछे बोले कि हेराजन् तुम्हारा बल अतुल है जो तुमने दशकंधर को सहज में ही पकड़ लिया । जिसके भयसे सागर और वायू भी चुप रहने के लिये तैयार हैं । उस मेरे रणदुर्जय पौत्र को संग्राम में तुमने बांध लिया और उसके यश को पीकर अपना नाम प्रख्यात किया सो वत्स

मैं तुमसे यह मांगता हूं कि अब रावण को छोड़ देओ। ऋषी का ऐसा वचन सुन मस्तक नीचे कर दिया और उसी समय रावण को छोड़ दिया। तथा उसका बहुत तरह से सत्कार किया। रावण को पुलस्त्यजी ने विदा किया। यद्यपि रावण और अर्जुन की मैत्री होगई गले से गले भेंटे तथापि हारसे लज्जा को प्राप्त होता हुआ लंका में आया। तथा ऋषी भी उसे छुड़ाय कर आश्रम में आये। राजा ऋषी को विदा कर अपने राजमहल में गये। सो हे प्रभु! श्रृष्टि में एक से एक बली उत्पन्न होते हैं यदि अपना कल्याण चाहे तो किसी से भी शत्रुता न करे ॥

इति बाल्मीकिये उत्तरखंडे अष्टत्रिंशः सर्गः ॥ ३८ ॥

अब फेर रावण साहसार्जुनसे छुटकारा पाय, हारका कुछ भी पश्चाताप न करके निर्लज्जता पूर्वक पृथ्वी मंडल में घूमता फिरता था और जहां कहीं सुनता कि मनुष्य वा राक्षस अधिक बलवान् है वहां दौड़ता और उसको युद्ध के लिये ललकारता, अब वह घूमता घामता किष्किन्धा नगरी में गया, वहां सुवर्ण मालाधारी बाली से युद्ध करना चाहा। उसको देख ताराके पिता तार नाम बानरबोले हेराचेन्द्र! बाली तो कहीं बाहर गया है, वह तुम्हारा प्रतिबली है, और यहां कोई बानर नहीं है जो तुम्हारा मुकाबला करसके। वह चारों समुद्रके तीर जाय सन्ध्योपासन करके महूर्त भरमें आवेगा और यह स्वेत हड्डियों का ढेर देखो यह उनकी हड्डी है जो बानर राज बालीसे युद्ध करने आये थे। हे रावण! यदि अमृत रस पीया हो तो बालीके साथ युद्ध करो। नहीं तो यह समझ रखना कि आजही तुम्हारे जीव का अन्त है। हे विश्रवा के पुत्र! आज तुम बाली का पराक्रम देखोगे! क्षण भर ठहरो और यदि तुम्हारा मृत्यु काल आ उपस्थित हुआ हो तो तुम दक्षिण समुद्र के तट पर जाओ। वहीं बाली को पाओगे। तारका ऐसा वचन सुन और उसे दुरदकार रावण विमान पर बैठकर दक्षिण समुद्र की तरफ चला। वहां जाकर रावण ने बाली को सन्ध्योपासन में तत्पर देखा। तब रावण पुष्पक पर से धीरे से उतर बाली को पकड़ने की इच्छा से पैर दबाकर ऐसा चला कि पैर का शब्द भी न हो। परन्तु बाली

ने भी अचानक रावण को देख लिया। उसका दुष्ट अभिप्राय जानकर भी कुछ न घबराया। जैसे गरुड़ बड़ी से बड़ी सर्प को कुछ नहीं समझता, उसी तरह बाली ने भी रावण को कुछ नहीं समझा। अब बाली ने अपने मनमें यह तार लगाया कि जब यह पास आवेगा तब इसे कांख में दबाकर तीन समुद्रोंकी सन्ध्या कर आऊंगा। तब लोग देखेंगे कि शत्रु के अंग मेरे कांख में किस तरह लटक रहे हैं। यह बात मनमें दृढ़कर बाली मंत्रों को जपता हुआ पर्वत की तरह निश्चल हो खड़ा रहा। इस प्रकार दोनों परस्पर पकड़ने के प्रयत्न में लगे अपने अपने बलका अहंकार कर रहे थे। जब उसके पैर के शब्द से बाली ने एक हाथ का अन्तर जाना तब पीछे की तरफ मुख करके झपटकर उसे कांख में दबा बड़े वेग से आकाश में उड़ा उस समय रावण ऐसा दबा था कि उसका कुछ बस नहीं चलता था। परन्तु नखों से उसको खसोटता था। जब राक्षसों ने रावण की ऐसी दशा देखी तब उसके छुड़ाने के वास्ते आकाश में उड़े। राक्षसों ने बहुत परिश्रम किया परन्तु बाली के पराक्रमके आगे वहां तक नहीं पहुंच सके बीचमें ही थक कर रह गये। बाली उसको दबाये सहस्रों कोस उड़ता भया चारो समुद्रों की संध्या करके किष्किन्धा के उपवन में आन पहुंचा, जिस समय बाली उसे लिये घूम रहा था उस समय आकाश से वानरराज की जै शब्द के साथ चारो तरफ से पुष्प वृष्टि हो रही थी। वहां रावण को बगल से अलग कर हँसता हुआ रावण से पूछने लगा कि हे वीरो तुम कहां से आये हो और क्या चाहते हो? रावण भी बगल में दबा, दबा, और हवाओं के झकोरे से थक गया था उसकी आखें चंचल हो रही थी। बोला हेइन्द्र! तुम वनरेन्द्र मैं राक्षसेन्द्र रावण हूं और युद्धकी इच्छासे यहां आया था सो तुम्हारे हाथ से पकड़ा गया। हेवानर राज मुझे तुम्हारे बल पर बड़ा आश्चर्य है तुमने मुझे पशुकी भांति पकड़ कर चारो समुद्रोंमें घुमाया। सो हेवीर! तुम धन्य हो। हेवानर सिंह तीनही चीजकी ऐसी गति हो सक्ती है, मन, वायु और हो। हेवानर सिंह तीनही चीजकी ऐसी गति हो सक्ती है, मन, वायु और गरुड़ और आज तुम चौथे दिखाई पड़े। सो हेहरि मैंने तुम्हारा बल देखा मैं चाहती हूं कि अग्नि को साक्षी करके तुम्हारे साथ मैं भी करूं। हेकपि

श्रेष्ठ! स्त्री पुत्र पुर राष्ट्र भोग इत्यादि सब कुछ हमारा और तुम्हारा एकही होगा अर्थात् जो हमारा है वह तुम्हारा और जो तुम्हारा है वह हमारा। ऐसा विचार कर दोनों अग्नि को प्रज्वलित करके मैत्री को प्राप्त हुये। गले से गले लगे हाथ से हाथ मिलाने लगे। उसके बाद दोनों किष्किधा में गये और महीने भर तक रावण वहां रहा जैसे सुग्रीव वहां रहता था। उसके उपरान्त रावण के मंत्री वहा आकर दशकंठ को लिवा ले गये सो हे प्रभो रामचन्द्र! यह प्राचीन वृत्तान्त है रावण ने बाली से इतना नीचा देखा पीछेसे अग्निको साक्षी करके भाई बनाया, सो हे प्रभु! ऐसा बलवान बाली भी तुम्हारे बाण से तृण की तरह भस्म हो गया। सो हेप्रभु! तुम साक्षात विष्णु का रूप हो संसार को पावन करके साधु भक्त, सुर, धेनु के हित के लिये भांति भांति के अवतार धारण करते हो।

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे एकोन चत्वारिंशः सर्गः॥३९॥

इसके बाद रामचन्द्र हाथ जोड़कर अगस्त मुनि से बोले हेभगवन्! बाली और रावण इन दोनो का बल तो अतुल था परन्तु हनुमानके तुल्य ये नहीं थे।ऐसो में समझता हूं शोचे चतुर्यता बलधैर्य पंण्डित नीतिशीघ्रता विक्रय और प्रभाव ये सब गुण हनुमान में निवाश करते हैं? देखिये सीता के ढूढ़ने के समय जब बानरी सेना समुद्र के तीर पर दुःख पाय रही थी उस काल यह बीर सौ योजन डांक गये और लंकापुरी में जाय रावण के अंतः पुर में पैठ सीता को देखा, और आदर पूर्बक मिले। फेर सेना अगामी मंत्री पुत्र किंकरों और रावण के पुत्र को भी मारा और बंधनसे छूट रावण से बात की, अग्निसे लंकाको भस्म किया। इसी के पराक्रम से लंकापर बिजय और सीता को मैंने पाया। हे भगवन्! बानर राज्य का मित्र हनुमान जो मेरा सहाय न होता तो मैं इस संग्राम को जीत नहीं सकता था। परन्तु मैं एक बात पूछता हूं कि जब सुग्रीव और बाली का बैर उत्पन्न हुआ उस काल में हनुमान् ने क्यों नहीं बाली को अपने पराक्रम से भस्म कर डाला। सायत् हनुमान ने अपने बलको नहीं जाना, नहीं तो अपने इष्ट

मित्र सुग्रीव के इतने क्लेशको देख चुप न रह जाते। सो हे भगवन्! यह सब बातें जरा विस्तार पूर्वक मुझे कह कर सुनाइये। ऐसा बचन रामचन्द्र का सुन वायु पुत्र के समीप ही अगस्त्य मुनि बोले। हे रघुनंदन! हनुमान के विषय में जैसा आप कहते हैं वैसा ही है, इनकी बलगति और बुद्धि जैसी है वैसी किसी की नहीं। परन्तु मुनियों ने इनको ऐसा भारी श्राप दिया है कि जिससे इनको सर्वदा अपने बलका ज्ञान नहीं रहता। हे राघव बाल्य अवस्था में इन्होंने ऐसे ऐसे काम किये हैं जो मैं वर्णन नहीं कर सकता। परन्तु वह सब काम इन्होंने बाल्य बुद्धि से किये हैं। यदि आपकी सुनने की इच्छा है तो मैं कहता हूं सुनिये। सुमेरू नाम एक सुवर्ण का पर्वत है जिसने सूर्य से बरदान पाया है जहां पर को इनके पिता केशरी राज्य करते थे, इष्ट भार्या अंजना नाम थी। उस अंजना में वायु ने इस पुत्रको उत्पन्न किया। जब इनकी माता फलों के लिये बनमें गई उस काल में यह माता के वियोग से अति क्षुधा पीडित हुआ। और अत्यन्त रोदन करने लगा। इतने में सूर्य का उदय हुआ। अड़हुल की नाईं बिम्ब निकलते इन्होंने देखा और जाना कि कोई फल है, सो लोभ से यह उसी की तरफ उड़े, सूर्य को पकड़नेको मध्य आकाश में पहुंचे। उस समय देव दानव और यक्षों को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने देखा ऐसा बेग न तो वायू में है, न गरुड़ में है, न मनमें है जैसे यह वायु पुत्र उड़े जाते हैं। अभी जन्मते ही इनकी ऐसी गति है तो जवानी में कैसा होगा। बालक के पीछे वायू भी पुत्र स्नेह से चला जाता और सूर्य के दाह के भयसे अति शीतलता देता था। अब जाते जाते यह सूर्य के समीप पहुंचे, सूर्य ने सोचा कि एक तो यह अभी बालक कुछ ज्ञान नहीं रखता दूसरे इसके द्वारा अगाड़ी बहुत कार्यों को करेगा। ऐसा विचार कर उन्होंने इसे भस्म नहीं किया। जिस दिन यह सूर्य के समीप उड़े उसी दिन राहुग्रास अर्थात सूर्य ग्रहण था। जब इन्हों ने जाकर सूर्य के रथ पर उनको

पकड़ लिया । उस घड़ी राहू बिचारा डरकर वहां से हट गया और इन्द्र से जाकर बोला, कि हे इन्द्र ! चन्द्र और सूर्य इन दोनों को मेरी क्षुधा दूर करने के लिये तुमने दिया था इस समय उनको क्यों दूसरे के आधीन कर दिया । देखिये आज मेरा पर्वकाल था सो मैं सूर्य को पकड़ने के लिये गया जैसे ही पहुंचा तैसे ही एक दूसरे ने आय कर सूर्य का ग्रहण कर लिया, ऐसा राहुका बचन सुनते ही इंद्र घबरा-कर अपनी सुवर्ण माला को पहिने आसन पर से उठे और ऐरावत पर सवार हो राहू को अगाड़ी किये वहां पहुंचे जहां हनुमान और सूर्य इकट्ठे थे । परन्तु राहू इन्द्र से शीघ्रही पहुंच गया । हनुमान ने राहू के देख जाना कि यह भी एक फल है, सो वे सूर्य को छोड़ राहू पर दौड़े। जब राहू ने देखा कि यह तो मेरे ही ऊपर दौड़ा, तब तो वह मारे डरके वहां से भागा और इंद्र के समीप जाकर बड़े जोर से चिल्लाया कि हे इंद्र मेरी रक्षा करो । इन्द्र बोले डरो मत मैं इसे मारता हूं । इधर हनुमान ने ऐरावत को देखा, और सोचने लगे कि यह तो बहुत ही बड़ा फल आन कर उपस्थित हुआ । ऐसा सोच ऐरावत पर दौड़े उस समय हनुमान का रूप इंद्रादि देवतों से भी अधिक प्रकाशमान था। अब इनको अपने ही ऊपर आते देख इन्द्रने निजास्त्र बज्र का प्रयोग किया, जिसकी चोट इनकी बांई ठुड्डी पर लगी और वह मग्न होगई तथापि हनुमान पर्वत पर गिर पड़े । इनको गिरते देख वायु इन्द्र पर क्रुध हुये और प्रजाओं के अहित पर मन दिया । अब वायु अपने पुत्र हनुमान को गोद में लेकर गुहा में जाय चुप चाप बैठे । अब (अधोवायु) याने विष्टा मूत्र का वायु रुक जाने से, प्रजा को अति पीड़ा उत्पन्न हुई । लोग ऊपर को स्वांस भी नहीं ले सकते थे अब न तो कहीं स्वाध्याय और न कहीं वषटकार और न कहीं क्रिया देख पड़ती थी । सारा त्रैलोक्य धर्म रहित और नरक यातना के भोग में पड़ा । चारों तरफ से देव, गंधर्व, यक्ष, किन्नर, देवते, मनुष्य सब हा हा कार कर रहे हैं और इस दुःख से छूटने के लिये ब्रह्मा के पास

दौड़े। पेट फुलाये हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगे। तब ब्रह्मा ने सबको धीरज दिया और ध्यान करके देखा और बोले, आज एक प्रबल कारण हुआ है जिससे वायु कोप को प्राप्त हुआ है। वह कारण यह है कि इन्द्र ने राहू के लिये वायुके पुत्र को बज्र से मारा है। इसी से वायु क्रुध हुआ है। देखो वायु यद्यपि सरीर रहित है तथापि संसार का रक्षक है। देखो आजही उसने छोड़ दिया तो संसार की क्या दशा हो रही है। अच्छा चलो मैं उसके पास चलता हूं। ऐसा कह प्रजापति प्रजाओं को साथ लेकर वहां पहुंचे जहां पर वायु अपने पुत्र को लिये बैठा था। उसे देख कर ब्रह्मा को अत्यन्त दया लगी।

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे, चत्वारिंश सर्गः ॥ ४० ॥

वायुदेव ब्रह्मा को देखते ही पुत्रको लिये उठ खड़े हुये और प्रजापति के पांव पर गिरपड़े परन्तु हृदय से तो पुत्र शोक से पीड़ित थे। उस समय ब्रह्माके हाथ फेरतेही हनुमान पुनः जीवित होगये। अपने पुत्रको जीवित देख वायु उसी क्षणसे प्रसन्न हो सब प्राणियों में संचार करने लगे। इस प्रकार सारा संसार क्लेश मुक्त हुआ। तब ब्रह्मा बोले, हे इन्द्र! हे अग्ने! हे बरुण! हे धनेश! हे सूर्य! हे यम! हे शंकर यद्यपि तुम लोग बड़े ज्ञानवान हो तथापि मैं तुम्हारे हितुकी बात कहता हूं। सुनो यह वायु का पुत्र तुम्हारे लोगों के कार्य को करेगा। इसलिये इसके पिताको संतुष्ट करने के लिये तुम सब इसे वर प्रदान करो। तब इन्द्र प्रसन्न होकर कमल की माला देकर बोले मेरे बज्र की चोट से जो इसकी ठुड्डी टेढ़ी हो गई है इस लिये इसका नाम हनुमान होगा और अब मेरे बज्र से भी इसका घात न होगा। तब सूर्य बोले कि मैं अपने तेज की सौवीं कला इसे देता हूं और जब इसे शास्त्रोंको पढ़नेकी शक्ति होगी तब मैं इसे शास्त्र पढ़ाऊंगा जिससे यह बाग्मी होगा। बरुण बोले मेरे पास से तथा जलसे दश लक्ष वर्ष पर्यंत भी इसकी मृत्यु न होगी। तब यमराज बोले मेरे

डंड से इसकी मृत्यु न होगी और न कोई रोग इसे सतावेगा। कुबेर बोले मैं यह वर देता हूं कि संग्राम में इसे विषाद न होगा। तब शंकर बोले मेरे त्रिशूल और पशुपतास्त्र से भी यह अवध्य रहेगा। तब विश्वकर्म्मा बोले मेरे बनाये जो दिव्यास्त्र हैं उनसे भी इसका अंग भंग न होगा। तब ब्रह्मा बोले यह दीर्घायू थाने (चिरंजीवी) अमर तथा ब्रह्मदंडी से भी अवध्य होगा। इस प्रकार ब्रह्मा जो जगत के गुरू हैं। देवताओं से वर दिला हर्षित हो वायुसे बोले। हे वायो! यह मारुति तुम्हारा पुत्र अमित्रों को भय देने वाला और मित्रों को अभय करने वाला, वानरों में श्रेष्ठ और कीर्तिमान् होगा। यह संग्राम में रावण के नाश के लिये रामके प्रति रोमांच कारक कामों को करेगा। इस प्रकार वरदान दे ब्रह्मा वायुसे बिदा हो देवों को साथ ले अपने लोक को सिधारे। वायु पुत्र को लेकर आये, और अंजना से सब वरों को सुनाया और अपना मार्ग लिया। सो हे रामचन्द्र यह हनुमान वरों को पाय, वरदान के बलसे युक्त हो वेगसे पूर्ण हुये। अब निर्भय ऋषियों के आश्रमों में जाय जाय उपद्रव करने लगे। कहीं पत्तों को पाच, अग्निहोत्र में पहिनने के छल्ले, जुवा आदि को छिन्न भिन्न करने लगे। महर्षि विचारे तो शान्त स्वभाव थे क्या करें और इसको सम्भुने सब ब्रह्मण्डों से अवधही कर दिया था। सो वे ऋषि लोग इन बातों को जानकर सहते थे। फेर केशरी ने और वायुने इसको बर्जा भी परन्तु यह मर्यादा का उलंघन करना ही जाता था। अब भृगु और अङ्गिरा के वंश वाले महर्षि इनके अपराधों को न सहकर साधारण क्रोध से यह शाफ वचन बोले हे वानर जिस बलके सरोसे पर तू हमलोगों को बाधा देता है वह बल मुझे बहुत काल पर स्मर्ण होगा। जब तुझे कोई स्मर्ण करावेगा और तेरी कीर्तिका वर्णन करेगा। तब ऋषियों के वचन सामर्थ से हनुमान का तेज और पराक्रम दोनों दीन हो गया, इस लिये यह साधारण वानर की तरह घूमने लगे और सब उपद्रव करना छूट गया। अब ऋक्षराज नाम

बानर जो बाली और सुग्रीव का पिता और तेजमें सूर्य के सदृश था वह सब बानरों पर राज्य करता था और बहुतकाल पर्यन्त राज्य शासन कर जब वह मृत्यु को प्राप्त होने लगा, तब बाली को राजा और सुग्रीव को युवराज बनाया। इनसे और सुग्रीव से बाल्यकाल से ही मैत्री थी। यह शापके कारण अपना बल नहीं जानते थे। हे रामचन्द्र! जब बाली और सुग्रीव का बैर उत्पन्न हुआ उस कालमें बाली सुग्रीव को अत्यन्त दुःख देता, बलके स्मर्ण न रहने से यह भी कुछ नहीं कर सकते थे। जब इन्हे व्याकरण के पढ़ने की इच्छा हुई तब यह सूर्यके पास गये और जाकर व्याकरण पढ़ा और भी सब शास्त्रों को पढ़ा। समर में ऐसा कोई नहीं है जो हनुमान का साम्हना करे। इनके तुल्य बहुत से महाबलवान् बानरोंको जैसे सुग्रीव, मैन्द, द्विविद, नील, तार, तारेष, नल और रम्भ इनको तुम्हारे लिये देवतों ने उत्पन्न किया और गज, गवाक्ष, गयव, सुदेष्ट्र मैन्द जौतिमुख और जामवंत इन भालुओं को सिरजा। ऐसा अगस्त का बचन सुन राम और लक्ष्मण, ये दोनो भाई और बानर तथा राक्षसें ये सब बड़े आश्चर्य को प्राप्त हुये। इतना कहकर अगस्त्य ऋषि बोले कि हे राम! अबतो सब वृत्तान्त तुमने सुना और हमलोगों ने तुमको देखा और सम्भाषण किया। अब हम लोग जाते हैं। ऐसा मुनिका बचन सुन और हाथ जोड़ नम्रता पूर्वक प्रणामकर रामचन्द्र बोले। हे प्रभु! आप लोगों के दर्शन से मैं कृत कृत हुआ, अब मेरी एक प्रार्थना है मेरे पर अनुग्रह करके उसे अंगीकार कीजिये। मैं पुरवासियों को कार्योंमें लगा कर यहां आया हूं मैं यज्ञ करना चाहता हूं इसलिये आपलोग मेरे ऊपर अनुग्रह करके सदृश्य होइये। आप लोग तपोबल से सर्व पाप हीन हैं इसलिये आपलोगों के आश्रय से मैं पितरों का अनुग्रह पात्र होऊं और अपने मनको आनन्दित करूं सो आपलोग रोज यहां आया करें। राघव का ऐसा बचन सुन अगस्त्य इत्यादि ऋषियों ने "एवमस्तु" कह कर निज निज आश्रम को सिधारे उनके जाने पर

रघुनन्दन ऋषिकी कही बातों को स्मर्ण करके आश्चर्य करने लगे। इतने में सूर्य अस्ताचल को प्राप्त हुये तब रामचन्द्रजी ने बानरों को आराम करने की आज्ञा देकर सन्ध्या बन्धन में प्रवृत्त हुये। इसके बाद अंत पुर में चले गये।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे एकचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥

यह रात्री प्रभुके अभिषेक की पहिली थी, जो पुरवासियों के हर्ष को बढ़ाने वाली हुई। अब कुछ रात्री शेष रहते हुये बन्दीगण भवन में आये यशगाने लगे, गायक मधु मधुर धुनिसे बाध्य बजाय सुन्दर भैरवी अलपने लगे। अरुणोंदय के पेस्तर दग्धसी स्वेत सैया पर से प्रभु उठे, उत्तम रत्नजड़ित सुवर्ण की झारियोंमें सेवक जल ले लेकर खड़े थे महाराज ने उस जलसे सम्पूर्ण कार्यकर शौच आदि क्रिया से निवृत्त हो, पवित्र हो अग्नि कुण्डमें हवन कर, इक्ष्वाकु बंस से सेवित और पवित्र देवालय में गये। तब बिधि पूर्वक दर्शनकर बाहर की शाला में पधारे, वहां मंत्रिगण और गुरुवशिष्ठ, नाना देश के स्वामी बड़े बड़े क्षत्री प्रभुके निकट उपस्थित हुए। भरत शत्रुघ्न तथा लक्ष्मण भी आनकर उपस्थित हुए और सुग्रीव इत्यादि मुख्य मुख्य बान भी प्रभुके समीप आनकर बैठे। एक तरफ चार मन्त्रियों के सहित बिभीषण भी आन बैठे। ऋषि मुनि भी आन उपस्थित हुये उस समय उस सभा की ऐसी शोभा थी जिसके बर्णन करने की शेष नागके सहस्र जिह्वा में भी शक्ती नहीं है मनुष्य बिचारे की कौन कहे।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४२ ॥

ऐसे समय में रामचन्द्र अगस्त्यजीसे बोले हे ऋषिराज! वह जो ऋक्षराज नाम बालि और सुग्रीव का पिता था उसके स्त्री अर्थात् बालि और सुग्रीव की माता का क्या नाम था और उसका घर कहां था यह सब बातें मुझे समझाय कर कहिये। ऐसे बचन सुन अगस्त मुनि बोले कि हे राम! सुनिये, मैंने इसे नारदसे सुना था। एक समय घूमते घूमते मेरे आश्रम में नारद आये मैंने विधि पूर्वक उनका पूजन

किया और जब वे सुखसे बैठे तब मैंने यह कथा उनसे पूछी। तब वह कहने लगे कि सुवर्ण भूप जो सुमेरु पर्वत है उसपर ब्रह्मा की सभा सौ योजन की बनी है उस सभामें ब्रह्मदेव सर्वदा बैठते हैं, किसी कालमें ध्यान में बैठे तपकर रहे थे कि उनके आंख से पानी बहा जिसे उन्होंने हाथ से पोंछकर पृथ्वी पर पटक दिया उस जलसे एक बानर उत्पन हुआ। उस बानर को देखकर ब्रह्मा बोले हे कपि! इस पर्वत पर देवतों की बस्ती है और इसपर कन्द मूल फल बहुत मिलते हैं वह तुम खाया करो और मेरे समीप रहा करो। कुछ काल पर्वतपर ठहरे रहो फेर तुम्हारा कल्याण होगा। ब्रह्मा की आज्ञा सुन बानर बोला बहुत अच्छा जो आज्ञा हो वही करूंगा। इसी प्रकार वह बानर दिन भर उसी पर्वत पर घूमता सायंकाल को ब्रह्मा के पास चला जाता। इस प्रकार उसे पर्वत पर घूमते बहुत काल बीत गये। एकदिन जेष्ट की उष्णता से बहुत तृषित हुआ तब मेरू के उत्तर शिखर पर गया वहां जाकर क्या देखता है कि नाना प्रकार के पुष्पों से सुगंधित तथा नाना पक्षियों से सेवित एक सरोवर जिसमें स्वच्छ मोती के सदृश्य जल भर रहा है प्रसन्नता पूर्वक उसके तीर पर चला गया। उस घड़ी दैव संयोग से उसने अपना प्रतिविम्ब उस जलमें देखा। उसे देखते ही उसने जाना कि यह कोई मेरा शत्रु है। ऐसा मनमें बिचार बानर के चपलता स्वभाव से उछल कर पानी में जाय रहा और फेर वहां से उछल कर ऊपर आया। हे राम! उसी क्षण वह बानर से परम सुन्दरी स्त्री हो गया। उसी समय ब्रह्मा के चरणों की उपासना कर देवराज इन्द्र उधर से लौट रहे थे। उसी समय आकाश में परिभ्रमण करते सूर्य नारायण की दृष्टि भी उस स्त्री पर जाय पड़ी। अब ये दोनों देवते उस नारी को देखते ही कामवश हो गये, ये दोनों देवतो के सम्पूर्ण अंग क्षोभ को प्राप्त हुये और दोनों का धैर्य छूट गया, इन्द्र तो उस नारी तक पहुंचते २ बीचही में स्खलित हो गये। इनका वीर्य जो च्युतभया वह उसके बाल पर गिरा, परन्तु वह देवराज का अमोघ वीर्य था निष्फल कैसे हो। उससे जो

पुत्र उत्पन्न हुआ उससे बालि हुआ। उधर से सूर्य का वीर्य भी गले पर स्खलित हुआ, ऐसा चमत्कार की दूससेही दोनों के काम की निवृत्ति हो गई। अब गलेपर गिरे वीर्य से पुत्र उत्पन्न हुआ वह सुग्रीव हुआ। इस प्रकार वे दोनो दो पुत्र उत्पन्न कर निवृत्त हुये, तब इन्द्रने बाली को सुवर्णमयी माला दे आप स्वर्ग का मार्ग लिया। यह माला अक्षय और नाना गुणों से युक्त थी। सूर्य अपने पुत्र के कार्य्यों और उद्योगों में हनुमान को अग्रगण्य कर आकाश में उड़ गये। अब रात बीतने और प्रातःकाल होने पर वह स्त्री बानर रूप ज्यों की त्यों होगई और ऋक्षराजने अपने दोनों पुत्रों को जो पिंग नयन बानर श्रेष्ठ बली और कामरूपी थे अमृत के तुल्य मधु लायकर मिलाया और फेर उन दोनों को साथ लिये ब्रह्मा के पास आनकर उपस्थित हुआ। ब्रह्मा ने अपाने दोनों बालकों के सहित उसको देख बहुत धैर्य दिया और देव दूत को यह आज्ञा दी कि तुम ऋक्षराज और इन दोनों पुत्रों को साथ ले किष्किन्धा नगरी में जो अनेक गुणों से सपम्न है और जो बहुत से बानरों से युक्त है। नाना प्रकार के फल फूलों से सुशोभित दुर्ग सहित जो मेरी आज्ञा से विश्वकर्मा ने बनाई थी। जाओ और वहां जाकर यूथपति बानर और साधारण बानरों को एकट्ठा कर और उन सभों को आदर दे ऋक्षराज को राज्य सिंहासन पर बैठाय राज्याभिषेक करो। ब्रह्मा की आज्ञा पाय वह देव दूत ऋक्षराज के सहित किष्किन्धा में आया और ऋक्षराज को राज्य तिलक दिया। अब राज्य पाय ऋक्षराज अति प्रसन्न हो, सब बानरों को यथोचित कार्यों में नियुक्त कर राज्यशासन आरंभ किया। हेराघव! इस प्रकार बाली और सुग्रीव का जो पिता था वही माता थी॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे त्रयचत्वारिंशः सर्गः ॥४३॥

रामचन्द्र इस कथा को सुन भाइयों के सहित परम विस्मय को प्राप्त हुये और बोले हेऋषे! मैंने आपके प्रसादसे इस आश्चर्यप्रद कथाको सुना सुनकर मुझे बड़ा ही कौतुक हुआ। जब यह दोनों देवताओं के

पुत्र हैं तब बाली और पराक्रमी हुआ चाहें। ऐसा रामचन्द्र का बचन सुन अगस्त्यजी बोले हां महाराज यह ऐसा ही वृत्तान्त है अब मैं कुछ प्राचीन वृत्तान्त कहता हूं सुनिये जिस कारणनेसे रावण सीता का हरण किया, किसी समयकी बात है कि रावण, ब्रह्माके पुत्र, श्रीसनत्कुमार जो तेज में सूर्य के सदृस प्रकाशमान् और बड़े सत्यवादी थे, हाथ जोड़ प्रणाम कर बड़ी नम्रता पूर्वक बोले कि हेभगवन् इस लोक में सब देवतों में अति बलवान् और श्रेष्ठ कौन है जिसका अवलंबन कर देवते अपने शत्रु को जातते हैं। और ब्राह्मण लोग नित्य जिसका ध्यान करते हैं। हेतपोधन! यह बात बिस्तार पूर्वक मुझे बताइये। ऐसा रावण का बचन सुन और ध्यान दृष्टि से उसके हृदय का अभिप्राय समझ ऋषि बोले। हेपुत्र जो इस संपूर्ण जगत् का भर्ता और जिसकी उत्पत्ति हम नहीं जानते और जो सुर और असुर से नित्य पूजित है वह नारायण प्रभु हैं जिसकी नाभि से ब्रह्मा देवकी उत्पत्तिहैं जो जगत के पति हैं, जिसने इस स्थावर जंगमात्मक जगत् को सिरजा है जिसके अवलंबनसे देवगण यज्ञ में अमृत का पान करते हैं और आदर पाते हैं, तथा उसी प्रभु की सेवा में तत्पर रहते हैं, योगी जिसका ध्यान करते हैं यज्ञों के द्वारा जिसको संतुष्ट करते हैं, महर्षि का ऐसा बचन सुन रावण नमस्कार करके फेर मुनि से बोला। हे गुरो! दैत्य दानव राक्षस जो उनके हाथ से मारे जाते हैं वह किस गति को प्राप्त होते हैं। रावण का ऐसा बचन सुन मुनि बोले, जो देवों के हाथ से मृत्यु पाते हैं वह स्वर्ग को जाते हैं। परन्तु पुण्य जब क्षीण हो जाता है तब वहां से च्युत हो पूर्व जन्मोंपार्जित सुख दुःख के द्वारा उत्पन्न होते और मरते हैं परन्तु हेराजन्! जिसको वे चक्रधर भी जनार्दन मारते हैं, वे सब उसीके लोक में जाते हैं, इससे यह जान पड़ता है कि उनका क्रोध भी बरही के तुल्य है॥

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥४४॥

यह सुनके वह दुरात्मा रावण सोचही रहा था कि ऋषि फिर बोले।

हेमहाबाहो !जो तुम्हारे मनका अनिष्ट है सो अवश्य संग्राम में होगा। तुम कुछ समय तक प्रतिक्षा करो । ऐसा मुनि का बचन सुन वह फिर बोला कि उनका कैसा लक्षण है सो संपूर्ण आप कहिये तब मुनि बोले हेरावण !सुनो मैं सब बाते बिस्तार पूर्वक कह सुनाता हूं। वे सर्व व्यापी हैं, उन्ही की इच्छो से यह संसार चल रहा है। देवत, राक्षस, यक्ष, पर्वत, नदी, मनुष्य, जो कुछ तुम देखते हौ सब बेही हैं, कोई भी जप तप यज्ञ दान, करके भी उन्हे नहीं देख सक्ता, परन्तु जो उनके भक्त हैं अहंकार, मोह, लोभ, क्रोध से परे हैं, और जिनका मन दिन रात उन्हीं में लगा है, जिनके ज्ञान द्वारा संपूर्ण पाप नष्ट हो गये हैं, वेही उन्हे देख सक्ता है। यदि तुम उनके देखने की आकांक्षा रखते हौ तो सुनो। सत्ययुग के बीतने पर त्रेतायुगमें देव और मनुष्यों के हित के लिये राजा के रूप में अवतार लेंगे। इक्ष्वाकु के बंश में राजा दशरथ होंगे उनके पुत्र महा तेजस्वी रामचन्द्र होंगे । सो हे रावण इस प्रकार वे नारायण प्रभु राम रूप होकर अवतार लेंगे और उनकी पत्नी जो श्रीलक्ष्मी हैं वे सीता नामसे भूतल से अवतीर्ण हो जनक की पुत्री कहलावेगी हेरावण यह सब बातें बिस्तार पूर्वक मैंने तुमको कह सुनाया। जैसे वह नारायण अवतार लेंगे! हेराघव यह सब बात सुनकर महा बाहु और प्रतापवान वह राक्षसराज तुम्हारे बिरोध के बिषय में बिचारने लगा और बार बार सनत्कुमार के बचनों पर ध्यान करना अति हर्ष को पाप युद्ध के लिये इधर उधर घूमने लगा। ऐसी कथा सुन और विस्मय से प्रफुल्लित नेत्र हो श्रीरामचन्द्र अत्यन्त हर्ष को प्राप्त हुये ॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे पंचचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४५ ॥

इसके अनंतर फेर अगस्त्य मुनि रामचन्द्र से बोले हेराघव ! इसी कारण से रावण ने जानकी का हरण किया इस कथा को नारद मुनि ने सुमेरुपर्वत पर देव, गंधर्व, सिद्ध और महात्मा ऋषियों के समीप कहा था, और इसके अनंतर भी कुछ और शेष कथा सुनाई। सो हेराम यह कथा महा पापोंको नाश करती है। जिसको सुनकर ऋषि लोग बड़े हर्षसे बोले कि जो

इस कथा को श्रवण करेगा और जो सुनावेगा वे दोनो पुत्र पौत्र सहित स्वर्ग लोक में पूजित होते हैं। इस पवित्र इतिहास को नारद ने मुझसे कहा था और मैंने आप से कहा॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे षट्चत्वारिंशः सर्गः ॥३६॥

इसके बाद राक्षसों को साथ ले रावण पृथ्वी पर घूमने लगा और दैत्य दानव और राक्षसों में जिसको अधिक बलवान् सुन पाता उसे युद्ध के लिये ललकारता। किसी समय में नारद ब्रह्म लोक से लौटे चले आते थे रावण ने देखा और पास जाकर प्रणाम करके बोला। हेमहर्षे आपने भ्रमण करते करते इस ब्रह्माण्ड को कई बार देखा है सो मुझे बतलाइये कि किस लोक के मनुष्य अति बली हैं। मैं उनके साथ युद्ध करना चाहता हूं ऐसी उसकी बात सुन एक महूर्त भर सोचकर नारद बोले हे रावण क्षीर समुद्र के समीप एक द्वीप है वहां के प्राणी चन्द्र के तुल्य चम कीले बड़े बली मेघके समान गर्जने वाले और बड़े पराक्रमी हैं। हे राक्षसपति ऐसा चमत्कार मैंने स्वेत द्वीपमें देखा है, जैसे बली तुम चाहते हो वे सब वैसेही हैं। नारद से यह समाचार सुन झट रावण मुनिसे बिदा होकर स्वेत द्वीप की ओर चला और मुनि भी आश्चर्य देखने के लिये वहां ही गये क्योंकि ये भी बड़े कौतुकी और समर देखने के प्रेमी थे। अब रावण राक्षसों के साथ लिये बड़ा सिंहनाद करता और अपने घोर शब्द से दशों दिशाओं को कंपायमान करता वहां पहुंचा मुनिराज भी वहां ही आन पहुंचे। पुष्पक विमान वहां पहुंचा तो सही परन्तु वहां का वायु ऐसा बेगसे बह रहा था कि वह विमान मारे झटके के ठहर नहीं सकता था। उसके मन्त्री उस दुर्दश द्वीपको पाय, डरते हुए रावण से बोले, कि महाराज इस वायू से हम लोग तो अचेत हो गये हैं किसी प्रकार हम यहां ठहर नहीं सकते युद्ध की बात तो दूर रही। यह बात सुन रावण ने पुष्पक बिमान और उन राक्षसों को छोड़ दिया विमान द्वीप के बाहर चला गया। तब रावण महा भयंकर रूप धर द्विपमें घुसा, प्रवेश करते समय उसे बहुत सी स्त्रियों ने देखा

और उस झुण्ड में से एक स्त्री ने हँसकर रावण के हाथ को पकड़कर पूछा कि तू यहां क्यों आया क्या प्रयोजन है, तू कौन किसका पुत्र है और तुझे किसने भेजा है। ऐसी बात सुन बड़ा क्रोधित हो लाल लाल नेत्रकर रावण बोला मैं विश्रवा मुनिका पुत्र हूं और मेरा नाम रावण है, और मैं युद्धकी इच्छासे यहां आया हूं। परन्तु क्या कारण है कि यहां कोई पुरुष दिखाई नहीं पड़ता। उस दुष्ट का ऐसा बचन सुन वह स्त्रिया उच्चस्वर से हँसने लागी और उनमें से एक स्त्री अतिक्रोध हो, रावण को छोटे बालक के सदृश्य पकड़ सखियों के बीच में घुमाने लगी। और दूसरी सखी को बुलाय कहने लगी कि देखो मैंने एक कीड़े को पकड़ा है देखो यह कैसा कीट है। इसके दशमुख और बीस भुजा है और इसका रंग काजल राशिके तुल्य कैसा सुन्दर है। अब इसके हाथसे एक दूसरी ने लेलिया और घुमाने लगी। फेर इस प्रकार तीसरी ने इसी तरह एक के बाद एक पकड़ पकड़ कर घुमाने फिराने लगीं। तब रावण अति चकित हुआ और किचकिचाय के अति क्रोध से उसमें से एक स्त्री को दांत से काट लिया। तब तो उस स्त्री ने झट इसको छोड़ दिया और दरद से लगी हाथ झाड़ने। इतने में एक स्त्री रावण को पकड़ आकाश में उड़गई परन्तु रावण ने क्रुध हो अपने नखों से उसको भी बहुत बकोटा। तब उसने उसको झटकार कर ऐसा फेका कि वह समुद्र में धड़ाम से जा गिरा। मारे भय के तो व्याकुल था ही और भी डरगया। हे राम! इस प्रकार वह रावण श्वेत द्वीपककी स्त्रीयों से दुर्दशा को प्राप्त हुआ, उस समय नारद मुनि इसकी दुर्दशा देख बड़े प्रसन्न हुये और नाचने लगे। सो हेराघव आपके हाथ से मरने की आकांक्षा से उसने सीता का हरण किया। हे रघुनंन्दन! आप साक्षात् नारायण हैं। रावण को मारने के निमित्त मनुष्य का शरीर धारण करके यहां आये हैं। आपने समय समय पर बड़े बड़े कार्य किये हैं। हे प्रभो! आपने देवतों का कार्य सिद्धकर दिया जो इस पापी रावण को सकुटुम्ब मार गिराया। और

यह जो सीता हैं साक्षात् लक्ष्मी हैं देवताओं के कार्य साधने के लिये जनक की पुत्री कहलाईं । हे प्रभो ! रावण ने इनको लंका में लेजाकर माता के समान रक्खा था । हे प्रभू ! यह सम्पूर्ण कथा मैंने ने कह सुनाई जो कि मुझसे नारद ने कही थी । श्री सनत्कुमार जैसे रावण से कहा था वैसेही उसने किया । अब इस कथा को सन जितने लोग वहां उपस्थित थे बड़े विस्मय को प्राप्त हुये और आनन्द से प्रफुल्लित हो गये और रामचन्द्र की तरफ देखने लगे । इसके बाद अगस्त्य मुनि ने रामचन्द्र से निज आश्रम में जाने के लिये आज्ञा मांगी आज्ञा पा अपाने अपाने आश्रम को सिधारे । इस प्रकार रामचन्द्र सम्पूर्ण पृथ्वी का शासन करते और नित्य नित्य पुरवासियों और देश बासियों का प्रबन्ध करते राज्य सिंहासन पर विराजमान थे । थोड़े दिनो के अनंतर रामचन्द्र मिथिलाधिपति राजा जनक से हाथ जोड़ कहने लगे । हे महाराज ! आप सर्वथा मेरे गति रूप हैं आर आपही का पाला हुआ मैं हूं और आपही के उग्र तेज से मैंने रावण को मारा । हे राजन् ! मिथिला देशवासी और इक्ष्वाकु बंश वालों को इस सम्बन्ध के द्वारा बड़ी प्रीति है, सो अब आप अपानी राजधानी में पधारिये और रत्नों को लेकर भरत आप के सहायता के लिये पीछे पीछे जायँगे । ऐसा प्रीति बचन सुन जनक बोले बहुत अच्छा, मैं आपके दर्शन और नीति से बहुत प्रसन्न हूं । आप जिन रत्नों को मुझे देते हैं वह सब रत्न मैं अपनी दोनो कन्याओं को दीये जाता हूं । ऐसा कह वह अपाने देश मिथिलाको सिधारे । उसके बाद रामचन्द्र केकय देशाधिपति अपने मामा से हाथ जोड़ बोले । हे मातुल ! यह राज और मैं भरत और लक्ष्मण ये सब आपके बंशगत हैं और सब प्रकार से आप हमारे उपकारक है ? आपके पिता वृद्ध है आपके लिये संताप करते होंगे इसलिये मैं चाहता हूं कि आप लक्ष्मण को साथ ले और अनेक प्रकार के रत्नों को ले अपने देश की यात्रा करें । ऐसा बचन सुन युधाजित् अपने गमन का अंगी-

कार कर बोले कि हे रामचन्द्र! यह धन और यह रत्न आपही के पास रहे। ऐसा कह प्रदक्षिणा कर जाने को तैयार हुये संगमें लक्ष्मण गये। इनको विदाकर रामचन्द्र काशी के राजा प्रतर्दन जो रामचन्द्र के सम वयस्क थे गले लगा कर बोले। हे राजन्! अब तुम भी अपनी पुरी को जाओ। आज्ञा पाकर काशी नरेश भी निज नगरी को सिधारे। उन लोगों को विदाकर और जो ३००तीन सौ राजे वहां बर्तमान थे (जिन्हे भरत ने सीता हरण सुनकर बुला लिया था) उनसे बोले आप लोगों को निज नगरी छोड़े बहुत दिन हो गये इसलिये मैं चाहता हूं कि आपलोग भी अपने अपने देशको जायँ। आप लोगों का उपकार मैं जन्म भर हृदय में रक्खूंगा। यद्यपि आप लोगों ने युद्ध नहीं किया तथापि मेरी मदद के वास्ते आये तो काम पड़ने से युद्ध करते ही। वह लोग भी ऐसी आज्ञा सुन हाथ जोड़ जोड़ के सब अपने २ देश की यात्रा में तत्पर हुये। और भरत शत्रुघ्न तथा लक्ष्मण उनको कुसलता पूर्वक राजधानी तक पहुंचा आने के लिये तैनात हुये।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे अष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४८ ॥

अब वे राजा लोग सहस्रों गज हय के झुण्डों से पृथ्वी को कम्पायमान करते चारों दिशाओं में चल निकले और अपाने अपाने नगर में पहुंच कर उन राजों ने अनेकों प्रकार के रत्न, उत्तम घोड़े, हाथी, चन्दन काष्ट, दिव्य भूषण, मणि, मुक्ता, मूगे, दास, दासी, कम्बल, दुशाले, रथ, इत्यादि अनेक प्रकार के भिजवाये, जिन सब चीजों को लेकर लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, उन्हें पहुंचा कर निज पुरी में आये और उनसब पदार्थों को महाराज के समीप में रख दिया, रामचन्द्र ने उन सब वस्तुओं को लेकर अति उपकारी सुग्रीव, बिभीषण, और और बानरों को बांट दिया, क्योंकि उन्हीं लोगों की सहायता से उन्होंने शत्रु पर विजय पाई थी। उन रत्नों को और आभूषणों को पाय कपि तथा राक्षसों ने निज निज अंगमें पहन लिया। इसके बाद महाराज ने हनुमान् और अंगद को गोदमें ले

उनके भुजाओं में विजायट और बहुत से आभूषण अपने अंगसे उतार कर पहिनाया और सुग्रीव से कहा कि हे सुग्रीव! यह अङ्गद आपका सुपुत्र और यह वायु पुत्र आपका मंत्री हैं। इसलिये यह अनेक प्रकार के सत्कार पाने के योग्य हैं। परन्तु इसमें मुख्य निहोरा आपही का है। इसके बाद नील, नल, केशरी, गंधमादन, सुषेण, पनस, मैन्द, द्विविद, जाम्बवान्, गवाक्ष, विनत, धूम्र, बलिमुख, प्रजंघ, सन्नाद, दरिमुख, दधिमुख, इन्द्रजानु, इन यूथपतियों की ओर मुख करके प्रेम दृष्टि से देखते हुये, अत्यन्त मधु, वाणि से बोले कि आपलोग मेरे मित्र और परम उपकारी अङ्ग और भ्राता हैं, हे जंगल निवासी बानर लोगों! तुम लोगों ने हमको बड़े दुःख से छुड़ाया है और धन्य है राजा सुग्रीव को जिनके आप लोग मित्र हैं। ऐसा कहकर यथोचित आभूषणों को पहिराया और उन सबको बारी बारी से गले लगाया।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे एकोनपञ्चाशः सर्गः ॥ ४९ ॥

दूसरे दिन जब फेर राजसभा बैठी तब महाराज रामचन्द्रजी बोले हे! मित्र अब तुम भी किष्किन्धा में जाकर मंत्रियों के साथ निष्कंटक राज्य करो और अङ्गद को परम प्रीति से देखो और जो बानर हैं उन पर भी कृपाकी दृष्टि रखना। कभी इनको उदास मत करना। क्योंकि समर में इन लोगों ने मेरे साथ प्राण देकर काम किया है। सुग्रीव से ऐसा कह और गले से लगाय फेर राघव विभीषण से बोले। हे राक्षाधिप! तुम धर्म्मज्ञ और मेरे प्यारे हो सो अब जाइये और लंका का धर्मरीत्या शासन कीजिये। पुर और राक्षसों और भाई कुबेर के विषय में धर्म बुद्धि रखना और अधर्म में कभी दृष्टि न करना क्यों कि बुद्धिवान राजे अवश्य पृथ्वी का भोग पाते हैं। और हे राजन्! मेरा और सुग्रीव का नित्य स्मरण करते रहना और प्रीति बुद्धि रखना, सो अब आनन्द से यात्रा कीजिये। अब हनुमान प्रणाम कर बोले—हे राजन्! मेरी एक प्रार्थना है, उस पर ध्यान दीजिये, मेरा स्नेह सर्वदा आपके ऊपर बना रहे। मेरी भक्ती नियम से आपके ऊपर स्थिर रहे

और मेरा हृदय उन्यत्र न जाने पावे और हे रघुनन्दन ! आपकी कथा जब तक इस भूतल पर रहे तब तक मेरे प्राण इस सरीर को त्याग न करें। हनुमान का ऐसा प्रीति पूर्वक बचन सुन महाराज ने आसन से उठ कपि को गले से लगा लिया। और स्नेह से बोले कि हे कपि श्रेष्ठ जैसा तुम चाहते हो वैसाही होगा। हे कपि ! तुम्हारे एक एक उपकार के लिये मैं अपने प्राण देने को उपस्थित रहूँगा। ऐसा कहकर महाराजने अपने गले से चन्द्र के तुल्य प्रकाश मान और हरिन्मणि से सुशोभित हार को उतार कपिको पहिनाय दिया। उसको पहिन कर वायु पुत्र की शोभा द्विगुणी हो गई। रामचन्द्र से आज्ञा ले सब बानर उठ उठ कर प्रणामकर अपने अपने घर को गमन करने लगे। सुग्रीव और बिभीषण को महाराज ने गले लगाय लिया। उस समय सबकी आंखें आंसुओं से भर गई और सबकी बाणी गदगद हो गई और बड़े दुख से महाराज को छोड़ वे सब अपने अपने घरको गये और उस समय उनको ऐसी पीड़ा जान पड़ी जैसे प्राणी को प्राण निकलते समय जान पड़ती है।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे पञ्चाशः सर्गः ॥ ५० ॥

इस प्रकार सबको बिदा कर महाराज भाइयों सहित आनन्द पूवक राज्य करने लगे। अब अर्थात् तीसरे पहर के समय भगवान् ने एक मधुर बाणी सुनी। कि हे सौम्य हे प्रभु आप प्रसन्न दृष्टि से मेरी तरफ देखिये। मैं पुष्पक नाम विमान कुबेर के भवन से आता हूं। मैं आपकी आज्ञा से कुबेर के पास गया था। परन्तु उन्हों ने मुझसे यह कहा कि तुमको तो श्रीरामचन्द्र ने रावण को मारकर जीत लिया, उसके मारे जाने से मैं अति प्रसन्नहुआ हूं तुम परमात्मा राघवका जीताहुआ है इसलिये, उन्ही के पास जा, और उन्ही की सवारामें उपस्थित रह। सो हे प्रभु मैं कुबेर की इस प्रकार आज्ञा पाय, आपके पास आया हूं आप मुझे ग्रहण कीजिये। ऐसा विमान का बचन सुन रघुनन्दन बोले—हे पुष्पक ! तुम जहां चहो तहां चले जाओ मंगल पूर्वक आकाश में तुम्हारा गमन

होगा न कहीं ठोकर लगेगी। न कोई उपद्रव तुम्हे सतावेगा। जहां चाहो तहां सुख पूर्वक विश्राम और भ्रमण कर सक्ते हो। हां जब मैं तुम्हारा स्मर्ण करूं तब आनकर उपस्थित होना। रामचन्द्र की ऐसी आज्ञा पा पुष्पक वहां से चला गया। पुष्पकके चलेजाने पर भरत हाथ जोड़कर बोले। हेराघव! आपके राज्य काल को अभी ज्यादा से ज्यादा एक मास हुआ है। इतनेही में मनुष्य रोगहीन और हृष्ट पुष्ट दिखाई देते हैं। जीर्ण मनुष्य भी मृत्यु को नहीं प्राप्त होते। स्त्रियों को सुख पूर्वक प्रसव होता है। मेघ अमृत के तुल्य वृष्टि करते हैं। वायू अच्छे स्पर्श वाले सुखदाई बहते हैं पुर और राष्ट्रवासी लोग यही कहते हैं कि इस प्रकार का राजा हमारे लिये बहुत काल पर्यन्त स्थिर रहे॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे एकपंचाशः सर्गः॥५१॥

इस प्रकार पुष्पक को विदाकर रघुपति अशोक वाटिका विहार करने के लिये चले जो उस वाटिका की शोभा वर्णन करने में चतुर्मुख ब्रह्मा भी असमर्थ है। उसमें संसार के जितने सुगंधित पुष्प और फल तथा नागकेशर चंदन अगर इत्यादि जो मनको प्रफुल्लित करनेवाले द्रव्य हैं सभी स्थान स्थान पर सुसोभित हो रहे थे। बीच बीच में स्फटिक और हीरे तथा पन्नों की सिढ़ियों से युक्त बावलियों में रंग विरंग की मछलिये कलोल कर रही थीं। हंस अलग सोभा बढ़ा रहे थे। अनेकों पक्षि मधुर धुनि से बोलने वाले, बोल रहे थे। भ्रमर तथा तितलियें पुष्पों का रस पान कर रहे थे। वृक्षों में पुष्प ऐसे लदे थे जिनका वर्णन करना दुस्तर है पवन के झकोरों से जो पुष्पों की सुगंध उड़ती थी उससे मनुष्य तनमय रहित होरहे थे। अब एक अत्यन्त मनोहर मालती की लता कुंज में रघुवीर सीता सहित पधारे और एक आसन पर बैठ गये। उस समय महाराज ने सीता को मैरकेय नामक मद्य पिलाया उसी स्थान पर अनेक प्रकार के फल तथा अत्यन्त सुस्वादु मांस सेवकों ने प्रभु के सन्मुख ला उपस्थित किया एक तरफ से अप्सरायें अपने संसार के मोहने वाले गायन से प्रभु को प्रसन्न कर रही थीं। उस समय सीता के सहित

प्रभु ऐसे शोभा को प्राप्त हो रहे थे जिसकी उपमा साक्षात् सरस्वती भी नहीं देसकती । इसी प्रकार रोज रोज राज्य काज और सीता के सहित प्रभु विहार करने लगे इसी प्रकार दश सहस्र वर्ष बीत गये और भोग के सुख को देने वाली अनेकों शरदऋतु बीत गई । प्रातःकाल प्रभुदेव काज करते, मध्यान्ह तक प्रजाका कार्य करते और अपराह्न काल में वाटिका विहार करते । एक दिन भगवान ने सीता से पूछा कि हे प्रिये! तुमारे मनमें किस बात की इच्छा है, जो तुम्हारे मनमें हो मैं उस मनोरथ को परिपूर्ण करूं । ऐसा बचन सुन सीता कुछ हंसकर बोली । हेप्रभु मैं उन पवित्र बनों को देखना चाहती हूं और उन उग्रतेज वाले ऋषिगण जो गंगा तटके निवासी हैं और कन्द मूल फल का अहार करते हैं, उनके चरणों का स्पर्श यदि कर पाऊं और एक रात्री भी मैं निवास करूं तो मेरा चित्त प्रसन्नता को प्राप्त हो । इस प्रकार सीता का बचन सुन प्रभु बोले हे वैदेही ! तुम निश्चिन्त रहो मैं तपोबनमें तुम्हे भेजूंगा । इस प्रकार सीता को संतोष दे रामचन्द्र अपने भ्रातृ गणों के साथ मध्य राजभवन की शाला में चले गये ॥

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे द्विपंचाशः सर्गः ॥ ५२ ॥

अब वहां पर महाराज के समीप में बहुत लोग जो अनेक प्रकार की कथाओं में कुशल और हँसावने में बड़े दक्ष थे । आप बैठे और अनेक प्रकार की हास्य कथाओं को कह रहे थे। अब किसी कथा के बीच में महाराज बोले कि हेभद्र आज कल्ह नगर और राष्ट्रो में कौनसी बात चीत फैल रही है पुरवासी लोग मेरे और सीता, भरत, शत्रघ्न तथा लक्ष्मण, मेरी माता, केकयी तथा राज्य प्रबंध के लिये क्या कहते हैं ? ऐसा बचन सुन भद्रनाम जन हाथ जोड़कर बोला कि हेमहाराज ! सब पुरवासी आपकी प्रसंसा हीकरते हैं तथा दशग्रीवके बध की बात विशेष कहते हैं । उसका ऐसा बचन सुन रघुनंदन बोले—ऐसा नहीं वह लोग जो जो बात कहते हैं उन बातों को यथा पूर्वक सुनाओ । हे भद्र ! तुम निशंक होकर कहो, किसी बात की मनमें चिन्ता मत करो । ऐसा

प्रभु का निर्भय बचन सुन वह बोला अच्छा महाराज मैं कहता हूं सुनिये। बैठक, हाट, गली, बन, उपबन, में यही बात फैल रही है कि श्री राघव ने यह बड़ा आश्चर्यित कार्य्य किया कि समुद्र में सेतु बांधा, ऐसी बात आज तक पुराने लोगों ने कभी कान से न सुनी, और देव तथा दैत्य भी ऐसा कठिन कार्य नहीं कर सकते और सेना तथा बाहन के सहित रावण का भी मरना बड़ा भारी काम था सो भी महाराज ने किया और बानरों, भालुओं और राक्षसों को अपने बश में किया। रावण को मार सीता को अपने घर ल्याये सो इससे सीता के संभोग का सुख श्री रघुनन्दन के हृदय में कैसा उत्कृष्ट प्रकाशित होता है कि जिस सीता को रावण अपने गोदमें उठाय ले गया और अशोक बाटिका में रक्खा और सीता राक्षसों के बशमें इतने दिनों तक पड़ी रही इन सब बातों पर दृष्टि करके महाराज को कुछ भी कोप नहीं होता। सो हे भाइयों सो हम लोगों को भी अपने अपने स्त्रियों के विषय में ऐसी बात सहनी पड़ेगी। क्यों कि राजा के अनुसार प्रजा भी व्यवहार करते हैं। हे महाराज इस प्रकार बहुधा प्रजा लोग कहते हैं। इस प्रकार भगवान् अपने सुहृदों की तरफ देख परम आर्त कि भांति बोले—कि क्या प्रजालोग मुझे ऐसा कहते हैं। ऐसा राघव का बचन सुन जितने लोग वहाँ बैठे थे, हाथ जोड़ और शिर नवाय दीन रूप श्री राघव से बोले कि हे पृथ्वी नाथ! यह बात ऐसीही है इसमें संशय नहीं। तब भगवान सबके बचन को सुनकर मनमें विचार करने लगे और जितने सभासद बैठे थे सबको अपने अपने घर जानेकी आज्ञा दे बिदा किया।

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे त्रिपंचाशः सर्गः ॥५३॥

इस प्रकार सबको बिदा दे और बुद्धि से निश्चय को कर समीप ही में खड़े द्वारपाल से महाराज बोले कि शीघ्र लक्ष्मण भरत और शत्रुघ्न को बुला लाओ। यह आज्ञा सुन द्वारपाल प्रथम लक्ष्मण के भवन में गया और बे रोक भीतर जा, प्रणाम करके राजाज्ञा कह सुनाई। उससे

यह समाचार पाय लक्ष्मण रथ पर चढ़ राजभवन की तरफ चले। वहांसे वह भ तके गृहमे गया, उन्हे भी प्रणाम करके महाराज की आज्ञा कह सुनाई, सुनते ही भरत पैरही से शीघ्रतापूर्वक चले। तब शत्रुघ्नके मन्दिर में जाय नम्रता पूर्वक वही उपरोक्त आज्ञाको सुनाया, सुनतेही वे विचारे हाथ जोड़ तुरत घर से निकले। तब द्वारपाल ने उन तीनों भाइयो का आगमन कह सुनाया, महाराज तीनों भाइयों का आगमन सुन चिन्तासे व्याकुलेंद्रिय, और आधो मुखही द्वारपाल से बोले कि शीघ्र उनको मेरे पास ले आओ। क्योंकि इन्हीमें मेरा जीवन बसता है। यही मेरे प्रणा प्रिय हैं। ऐसी आज्ञा सुन उसने तीनों को प्रवेश कराया और वे लोगप्रभु की अनुमति पाय हाथ जोड़े समीपमें उपस्थित हुये। अब उन लोगोंने महाराज का कमल मुख एकदम से मुरझाया हुआ चिन्त युक्त देख चरणों पर शिर रख हाथ जोड़ खड़े हो गये।उस समय प्रभुके दोनों आखों से आंसू बहने लगे। और दोनों भुजाओं से खड़े होकर सबको गले लगा लिया। और आशन पर बैठे तुम लोग मेरे सर्वस्व और जीवन हो और तुम्हारे ही लिये मैं राज्य का पालन करता हूं। सो तुम लोग शास्त्रों के पारंगत और बुद्धि में बड़े कुशल हो इस लिये तुम लोग मिलकर मेरे इस बात का बिचार करो।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे चतुः पंचाशः सर्गः ॥ ५४ ॥

रामचन्द्रजी शुष्क मुखसे बोले कि हे भाइयों तुम्हारा मंगल हो मेरी बात सावधान चित्तसे सुनो। पुरवासी लोग सीता के विषय में जो कहते हैं। ऐसा विभत्स अपवाद मेरे हृदय को चीर रहा है। देखो मैं इक्ष्वाकु के वश में उत्पन्न हूं और सीता जनक के बंश में है, सो हेलक्ष्मण सो तुमतो जानतेही हो कि दण्डक वनमें निर्जन से जानकी को रावण लेगया। रावण को तो मैंने मारही डाला परन्तु फेर वहां मेरी बुद्धि ऐसी हुई कि राक्षस के घरमें रही हुई सीता को फेर कैसे अपनी पुरी में ले चलूं, फेर तुम्हारे साम्हने की बात है कि विश्वास के लिये सीता ने अग्नि में प्रवेश किया। अग्नि ने सीता को दोष रहित ठहराया, और

वायु ने भी यही बात कही फेर देवते और ऋषियों के प्रत्यक्ष चन्द्र और सूर्य ने भी यही बात कही कि सीता पाप रहित है। ऐसी शुद्ध बहिया सीता को देवता और गन्धर्वों के समीप इन्द्र ने मेरे हाथ में सौंपा और मेरा अन्तरात्मा भी यही कहता है कि सीता शुद्ध है। इसलिये मैं उसे अयोध्या में लेआया। परन्तु पुरवासी और देश वासी का यह महान अपवाद, मेरे हृदय को क्षोभ रहा है और सुनो जिसके विषय में लोग अकीर्ति करते हैं सो अधम लोकमें जायकर गिरता है और जब तक शब्द लोक से सुन पड़ता है तब तक वह प्राणी वहां ही पड़ा रहता है। हेभाइयों! देवता लोग अकीर्ति की निंदा करते हैं और कीर्ति लोकों में पूजी जाती है और महात्माओं का भी यही समारंभ है। सो कीर्तिही के लिये मैं इस अपवाद के भय से अपना प्राण दे देऊंगा अथवा तुम लोगों का त्याग कर देऊंगा और जानकी की तो बातही क्या है! इस घड़ी तुम इस शोक सागर में निमग्न जो मुझे देखते हो, ऐसा दुःख किसी प्राणी को नहीं देखोगे! सो हेलक्ष्मण! कल्ह प्रातःकाल सुमंत्र से रथ जोतवाय, उस पर सीता को चढ़ाय, बाहर लेजाकर छोड़ आओ गंगा के उसपार महर्षि वाल्मीकि का दिव्य आश्रम है जहां तमसा नदी बहती है वही निर्जन देश में इसको छोड़ फेर मेरे पास चले आना। इतनी मेरी आज्ञा मानो इस विषय में रास्तेमें सीता से कुछ मत कहना। सो हेलक्ष्मण! तुम अब जाओ और इस विषय में दूसरा विचार मत करना और इस बात में मुझे रोकोगे तो मैं अति दुःखि होऊंगा। हेभाइयों! मैं अपने चरणों और प्राणों की सपथ तुम लोगों को देता हूं कि इस विषय में मेरे से कुछ मत कहना। जो मेरे अभिष्ट का विघात करेगा वह विघात सब दिन मेरे साथ शत्रुता करेगा। अगर तुम लोग मेरी आज्ञा पर आरूढ़ हो! और मेरे वचन को मानते हो तो सीता को यहां से लेजाओ। हां इसके प्रथम सीता ने मुझसे कहा भी था कि मैं जंग तीर के आश्रमों को देखना चाहती हूं। सो इसमे उसका भी मनोरथ सिद्ध होगा। ऐसा कहकर रघव ने आंखों में आंसू भर लिया और

सबको विदाकर आप भी अपने भवन में जाकर सो रहे॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे पंचपंचाशः सर्गः॥५५॥

अब प्रातःकाल होने पर अति मलीन चित्त से लक्ष्मण सुमंत से बोले! हेसारथे! शीघ्र चलने वाले घोड़ों को रथमें जोतो और सीताके बैठने योग आसन बिछाओ। क्योंकि महाराज की आज्ञा से सीता को पवित्र ऋषियों के आश्रम में पहुंचाना होगा। ऐसा लक्ष्मण का बचन सुन सुमंत रथको सजाकर लेआये और कहा कि प्रभु रथ उपस्थित है। ऐसा सारथी का बचन सुन, लक्ष्मण राजभवन में जाय सीता से बोले-हेमाते! आपने महाराजसे गंगा तीरके ऋषियोंके आश्रम में जानेको कहा था। सो महाराज की आज्ञा से मैं तुम्हे ले चलनेको प्रस्तुत हूं। ऐसा लक्ष्मण का बचन सुन सीता अति हर्ष सहित चलने को प्रस्तुत हुई। अपने साथमें अच्छे अच्छे वस्त्रों तथा नाना प्रकार के धनों को ले रथपर सवार हुई। तब सुमंत्र ने रथ चलाया। उस समय सीता लक्ष्मण से बोली-हेरघुनन्दन! मैं इस यात्रा में बहुत अशुभ देख रही हूं। सो दक्षिण नेत्र फरफरा रहा है, मेरे शरीर में कंपा होता है, मेरा धैर्य्य मुझे बाधा देता है। इस पृथ्वी को सून्य देख रही हूं। सो तुम्हारे ज्येष्ठ भ्राता का मंगल हो! और मेरी सास लोगों का विषेश करके कल्याण हो, और नगर तथा देश के प्राणियों का कुशल हो। ऐसा कह सीता हाथ जोड़ देवतों की प्रार्थना करने लगी तब लक्ष्मण हाथ जोड़ कर बोले! कि हेदेवि! सब मंगलही होगा। परन्तु लक्ष्मणका हृदय सूखता जाता था। पर ऊपर से हर्षित की नाईं अपने को दिखाते थे। अब चलकर पहिला दिकान गोमती के तीर के आश्रम में हुआ। प्रातःकाल में लक्ष्मण ने सारथी से कहा कि रथ जोतो आज भागीरथ के जल को मैं मस्तक से धारण करूंगा। ऐसी आज्ञा पाय सुमंत ने घोड़ों को टहलाय रथ में जोता और जानकी से हाथ जोड़ कर कहा कि आइये चढ़िये। तब सीता और लक्ष्मण उस पर सवार हुये, उसी समय सुमंत्र ने रथ को हांका। मध्यान्ह होते भागीरथी के तीर पर जाय कर पहुंच गये।

अब गंगा को देख लक्ष्मण से न रहा गया, बड़े ऊंचे स्वर से रोदन करने लगे। तब सीता लक्ष्मण की दशा देखकर बोली। हेलक्ष्मण तुम क्यों रोते हौ! भला सुनो तो मेरी बहुत दिनों से यह इच्छा थी कि जान्हवी को देखूं। सो यह मेरे हर्ष का काल है। परन्तु तुम क्यों बिषाद को प्राप्त हुये हौ! क्या तुम सर्वदा राघव के पास रहते हौ और दो दिन के अंतर पड़ने से तुम शोक ग्रस्त हुये हौ! अरे वे मेरे भी प्राणों से अधिक प्यारे हैं, देखो मैं तो इस प्रकार से शोक नहीं करती। सो देखो तुम ऐसी मूढ़ता मत करो मुझे झटपट गंगा के पार ले चलो और तपस्वियों का दर्शन करवाओ, मैं उन्हे वस्त्र और आभूषण देकर प्रणाम करूंगी और एक रात्री वहां रहकर फेर अयोध्या को हम सब लौट आवेंगे। मेरा भी मन श्रीरामचन्द्र को देखने को व्याकुल हो रहा है। ऐसा बचन जानकी की सुन लक्ष्मणने अपनी आंखोंको पोछ मल्लाहोंको बुलाया उन लोगों ने नाव लाकर उपस्थित की तब लक्ष्मण ने प्रथम सीता को नाव पर चढ़ाकर फेर आप भी सवार हुये॥

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे षट्पंचाशः सर्गः॥ ५६॥

इस प्रकार लक्ष्मणने नाव पर चढ़ सुमंत्र से कहा कि तुम रथ लेकर इसी पार रहो और मल्लाहसे कहा कि तुम नाव चलाओ। जब उस पार नाव पहुंची तब लक्ष्मण आंखोंमें आंसू को डब डबाते हाथ जोड़ बैदेही से बोले—हेदेवि! ऐसे बुद्धिवान् महाराज ने इस निन्दित कर्म को मेरे सपुर्द कर संसारमें मुझे निन्दनीयकर दिया यह बात मेरे हृदय में कंटक रूपहो गड़रही है। बल्कि मेरी मृत्यु हो जाती तो बहुत अच्छा होता, परन्तु इस अधम कार्य में मैं न डाला जाता सो हेमाता तुम मेरे ऊपर किसी बात का दोष मत देना। ऐसा कह लक्ष्मण भूमिपर गिर पड़े। उस समय रोते और अपने मरण को चाहते लक्ष्मण को देख सीता अत्यन्त उद्वेगको प्राप्त हुई। और बोली। कि हेलक्ष्मण! यह क्या बात है! मेरे समझ में कुछ नहीं आता, ठीक ठीक मुझे बतलाओ। मैं तुमको स्वस्थ नहीं देखती, सो प्रभु के बिषय में तो सब कुशल है!

मैं तुमको महाराज की सपथ देकर पूछती हूं। कि तुम जो संताप को प्राप्त हुये हो इसका क्या कारण है ठीक ठीक कहो! मैं तुम्हे आज्ञा देती हूं! इस प्रकार सपथ पूर्वक महारानी से पूछे गये लक्ष्मण अत्यन्त दीन और नीचे मुख किये अति दीनता से बोले। हेजनक नन्दनी महाराज ने आपके विषय में अति दारूण अपवाद सुना, उसके द्वारा अत्यन्त पीड़ित हो मुझे समाचार सुनाया और राजभवन में चले गये। सो हेदेवि! वह सब बातें आप के समीप कहने की नही, महाराज ने अपने हृदय में ही सब गोप्य कर रक्खा है, इसी कारण मैं भी उस अपवाद को प्रकाश करके नहीं कहता सब बातें पीठ पीछे डाल रक्खी है। मुख्य बात यह बात है कि प्रभु ने आप का त्याग कर दिया। आप मेरे समीप दोष रहित हो, और महाराज के समीपसे यही बात है परन्तु वे क्या करें पुरवासियों के अपवाद से डरते हैं। सो आप दूसरी बात न समझना त्याग करने का यही प्रधान कारण है। मैं रामचन्द्र की आज्ञा से और आपकी इच्छा के अनुसार आश्रम के पास आपको छोड़ दूंगा। हेमाता! इस गंगा के तीर पर महर्षियों का तपोवन अति पवित्र और अति रमणीय है आप विवाद न करें और यहां श्रीवाल्मीकि मुनि रहते हैं ये पिताजी के मित्र हैं, सो तुम इन्हींकी चरण छायामें रहकर उपवास में तत्पर हो सावधानी से निवास करो। और आप पतिव्रता हो सर्वदा हृदय में श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान करती रहना। इससे अपका परम कल्याण होगा॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे सप्तपंचाशः सर्गः॥ ५७॥

लक्ष्मण का ऐसा कठिन वचन सुन जानकी परम विषादको पाय भूमि पर गिर पड़ीं और महुर्त भर अचेत रही फिर उठकर और आंखों में आंसू भर दीन बाणी से बोली। हे लक्ष्मण! ब्रह्मा ने मेरे इस शरीर को दुखही के लिये सिरजा है। मैंने पूर्व जन्म में क्या पाप किया, और किसकी स्त्री से वियोग करवाया, जो मैं शुद्ध चारित्रा और पतिव्रता रहने पर भी पति से परित्याग की गई देखो

पहले भी मैंने आश्रम में वास किया और दुखोंको भोगा। सो अब मैं कैसे आश्रम में वास करूंगी और अपने दुखों को किससे कहूंगी। और फेर मुनि लोगों के साम्हने किस अपने असत्कर्म को कहूंगी। कि किस कारण से राघव ने मेरा त्याग किया इस गंगा जल में अपना प्राण भी नहीं त्याग सकती क्योंकि यदि मैं ऐसा करूं तो मेरे पति का राज्य बंश नष्ट हो जाय। हे लक्ष्मण! महाराज की आज्ञानुसार कार्य्य करो मुझदुःख भावनीको छोड़ देओ तुम राजाकी आज्ञामें रहना, और जो मैं कहती हूं उसको सुनो मेरी तरफ से हाथ जोड़ चरणों पर शीश नवाय मेरी तरफ से सासुओं से और महाराज से कुशल पूछना और महाराज से कहना कि तुम तो सब बात जानतेही हो, सो तुमने अपवाद के भय से जो मेरा त्याग किया इससे यदि आपका अपवाद छुटे तो मैं अति प्रसन्न हूं। क्योंकि आप पति हैं आपही मेरी परम गति हैं, पति नारी का देवता, बन्धु और गुरु हैं, इसलिये नारी को उचित है कि प्राणोंको भी देकर पतिका हित करै। और यह भी कहना कि मैं अपने शरीर की कुछ भी चिन्ता नहीं करती। हे लक्ष्मण! यह संदेशा महाराज से जरूर जरूर कह देना भूलना मत। हां एक बात मैं तुमसे और कहती हूं वह यह कि मैं गर्भवती हूं। सीता के ऐसे बचन सुन लक्ष्मण अति दीन चित्त होकर चरण पर मस्तक रखकर कुछ न बोल सके। परन्तु सीता के प्रदक्षिणा करके ऊंच स्वर से रोने लगे। और सीता को वहीं आश्रम के समीप छोड़ नाव पर चढ़ नाव वाले से बोले कि उस पार ले चलो जब पार उतर के आये तब शोक से अत्यन्त पीड़ित हुये और शीघ्र रथ पर चढ़े परन्तु बार २ पीछे फिर कर अनाथ की तरह सीता को देखते थे कि यह बिचारी उस पार छटपटाय रही थी। जब सीता ने रथ को दूरा गये देखा तो बहुत दुखी भई।

इति बाल्मीकीये, उत्तरकांडे, अष्टपंचाशः सर्गः ॥ ५८ ॥

वहां बहुत से मुनियों के बालक खेलते भये आये और सीता को रोदन करती देख बाल्मीकी मुनि के पास दौड़े गये और मुनि के

चरणों पर प्रणाम कर सीता के रोदन का समाचार कहने लगे कि हे भगवन्! हमने ऐसी एक किसी महात्मा की पत्नी देखा है जो अत्यन्त रूपवती है रो रही है। हें महर्षे आप उसको नदी के तीर पर चलकर देखिये वह ऐसी जान पड़ती है कि जैसे कोई देव पत्नी पृथ्वी पर आ गई है। दुःख शोक से व्याकुल अनाथ की भांति अति दीन स्वर से चिल्ला रही है। आप के आश्रम के समीप है वह आपही के शरण में आई है, चलकर उसका सत्कार कीजिये। ऐसा उन बालकों का बचन सुन और अपनी बुद्धिसे निश्चय कर वह मुनि मैथिली की ओर चले। साथ में शिष्य लोग भी हो लिये। ऋषी थोड़ी दूर जाय अर्घ्य हाथमें ले गंगा तट पर जानकी के पास पहुंच गये। वहां जाकर मुनि ने देखा कि श्रीरामचन्द्र की पत्नी श्रीजनक नन्दनी शोक में पीड़ित हो रुदन कर रही है। बाल्मीकिजी अपने तेजसे सीता को प्रबोध देते हुये मधुर बाणी से बोले कि हे पुत्री तू चक्रवर्ती दशरथ जो कि मेरे परम मित्र के उनकी पुत्रबधू तथा महा प्रताप रामचन्द की भार्या और महातमा जनक की पुत्री है सो हेपतिव्रते! तेरा स्वागतहै। हे सीते! मैंने तपचक्षु से तमाम बातें जानली तू पाप रहित है इसलिये तू सावधान हो, अब तेरा भार मेरे उपर हुआ। मेरे आश्रम के पास में बहुतसी तपसिनी तप करती हैं सो हे बत्से वह सब तुझे अपनी पुत्री की तरह पालेंगी। अब इस अर्घ को तू ले और संताप रहित हो जा। जैसे अपाने घर में रहती थी वैसे ही यहां निवास कर। मुनी की ऐसी आज्ञा पा मुनि की चरण बन्दना कर जानकी ने उस बात को अंगीकार किया। अब मुनि आश्रम को चले और सीता भी उनके पीछे २ होलीं। मुनियों की पत्नियां सीता को मुनि के पीछे देख, आगे बढ़कर बोलीं कि हे मुनि श्रेष्ट तुम्हारा स्वागत हो। आप का दर्शन बहुत दिनों पर हम लोगों को हुआ। हम सब आदर पूर्वक प्रणाम करती हैं। हम लोगों को जो आज्ञा हो वह हम सब करने को प्रस्तुत हैं। उनका ऐसा बचन सुन मुनि बोले देखो यह सीता यहां आई

हैं यह श्रीरामचन्द्रजी की पत्नी तथा दशरथ की बहू और जनक की पुत्री है, यह बेचारी पाप रहित है, परन्तु अपवाद से पती ने त्याग दिया है, सो अब मैं इसका परिपालन करूंगा। तुम लोग परम स्नेह से और मेरे बचन के गौरव से इसकी सन्मान सहित रक्षा करना। इस प्रकार मुनि बैदेही को उन तपस्विनीयों के हाथ सौंप अपने आश्रम को गये।

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे एकोनषष्टितमः सर्गः ॥५९॥

अब सीता को अकेली जंगल में छोड़ लक्ष्मण को बड़ा संताप हुआ। तब सुमंत्र से कहने लगे कि हे सारथे देखो! सीता के संताप का रामचन्द्र को कैसा दुःख होगा। इससे बढ़कर और दुःख क्या होगा कि शुद्धा चरित्रा और पतिव्रत, निर्दोष पत्नी का त्याग करना पड़ा देखो पहिले पिता के बचन से चौदह वर्ष निर्जन बन में रहे और दुःख भोगा। परन्तु उससे भी अधिक यह सीता का त्याग रूप दुःख है। हे सुमन्त्र हीनार्थवादी! पुरबासियों के कहने पर ऐसा कर्म का करना कौन सा धर्म संग्रह है। ऐसे २ बहुत से लक्ष्मण के बचन सुन सुमंत्र बोले कि हे लक्ष्मण! मैथिली के विषय में सन्ताप मतकरो ब्राह्मण लोगोंने तुम्हारे पिता के समीप ही इस बात का बिचार पूर्वक निश्चय कर रक्खा है। कि रामचन्द्र प्रायः दुःख भागी और सुख से रहित होंगे। अपने प्रिय जनों के वियोग से दुःखी रहेंगे। हे लक्ष्मण यह बात किसी से मत कहना और भरत से भी न प्रकाश करना, यह बात दुर्वासा मुनि की कही हुई है। मुझे महाराज दशरथ बहुत मना कर गये हैं यदि तुम सुनना चाहते हो तो कहता हूं परन्तु भरत वा शत्रुघ्न के साम्हने इस बात को प्रकाश मत करना।

इति बाल्मीकिये रामायणे उत्तरकांडे षष्टितमः सर्गः ॥ ६०॥

लक्ष्मण को बचन बद्ध कराकर सुमंत्र कहने लगे। हे लक्ष्मण एक समय अत्रि के पुत्र दुर्वासा, चार महीने वशिष्ठ के पवित्र आश्रम में जायकर बसे और उसी काल में तुम्हारे पिता भी वशिष्ठ के दर्शन के

लिये उसी आश्रम मे प्राप्त हुये। वहीं पर वशिष्ठ के बाइ ओर दुर्वासा मुनि बैठे थे। महाराज ने दोनो मुनियों को प्रणाम किया और दोनों ने राजा का स्वागत किया आसन दे कुशल मंगल पूछ फल फूलों से अतिथि सत्कार किया; राजा सत्कार को पाय, उन लोगों के साथ मिलकर बैठ गये। दोपहर के समय अनेक प्रकार की मधुर कथा होने लगी। अब किसी कथामें प्रसंग बश राजा हाथ जोड़ अत्रि के पुत्र दुर्वासा मुनि से बोले। कि हेभगवन् मेरा बंश किस रीति से होगा और मेरे राम का आयुर्बल कितना है और शेष पुत्रों का क्या होगा और रामचन्द्र के पुत्रों को जीवन कितना होगा। और मेरे बंश की गति किस ढबसे होगी! दशरथका बचन सुन मुनि ने कहना आरंभ किया कि हेराजन् प्राचीन वृत्तान्त सुनो देव और असुरों के संग्राम में जब दैत्य लोग देवतों से आक्रमण किये गये तब भृगुपत्नि के शरण में प्राप्त हुये। उसने उनको अभयदान देकर अपने पास बसाया तब बिष्णु ने क्रोधित हो चक्र से उसका शिर काट डाला, ऐसा बिष्णु का कर्म देख भृगु मुनि क्रुद्ध हो बोले कि जिस कारण अवध्य मेरी पत्नि का तूने बध किया इसी लिये हेजनार्दन तू मनुष्य लोक में औतार पावेगा। और जैसे तूने मुझे पत्नी से हीन किया है इसी प्रकार बहुत बर्षों का बियोग तुझे भी होगा। इस प्रकार श्राप तो मुनि ने दिया परन्तु पीछे से वे अत्यन्त पीडित हो बिष्णु की अति भक्ती में पूजन कर उनकी तपस्या में तत्पर हुये और कुछ काल के अनन्तर भक्तवत्सल श्रीबिष्णु प्रसन्न हुये और संसार के हितके लिये उस श्राप को भी अंगीकार किया। सो हेराजन्! इस प्रकार भगवान् बिष्णु भृगु के श्राप बश से मनुष्य लोक में आये और आपके पुत्र हुये। और राम ऐसा नाम हुआ। सो भृगु के श्राप के फलको पावेंगे और बहुत काल पर्यन्त अयोध्यामें राज करेंगे और ग्यारह हजार बर्ष पर्यन्त राज्य कर फेर ब्रह्मलोक में चले जायँगे। और ये बड़े भारी अश्वमेध करेंगे। और परम दुर्जय होंगे। इनके दो पुत्र होंगे! सो हेलक्ष्मण इस प्रकार मुनि ने राजा के बंश का सब वृत्तान्त

कह सुनाया और फेर चुपहो रहे उसके उपरान्त राजा दोनों मुनियों को प्रणाम कर घर चले आये। हेलक्ष्मण! मैंभी वही बैठा था सो इस प्रकार मुनि का बचन सुन मैंने अपने मन में रक्खा था सो मिथ्या न होगा और मुनि ने एक बात और भी कही थी कि रामचन्द्र सीता के दोनों पुत्रों को अन्यत्र राज्य देगे। अयोध्या में नहीं। इसलिये आप सीता के विषय में अथवा रामचन्द्र के विषय में कुछ भी संताप न कीजिये। मनको दृढ़ कीजिये भावी टल नहीं सक्ती। सारथी का ऐसा बचन सुन लक्ष्मण अत्यन्त हर्ष को प्राप्त हुये॥

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे एकषष्टितमः सर्गः॥ ६१॥

अब लक्ष्मण रात्री केशनी नगरी में बिताय प्रातःकाल होते ही रथ जोतवाय यात्रा में प्रवृत्त हुये और मध्यान काल में अयोध्या पहुंच गये। परन्तु लक्ष्मण अति दीन होगये थे मनमें यही बिचारते थे कि रामचन्द्र के चरणों के पास जायके मैं कौन सा सन्देशा सुनाऊंगा ऐसा बिचारते राजभवन में पहुंच गये और रथ से उतर नीचे मुख किये बे रोक भीतर चले गये और जाय कर देखते क्या हैं कि महाराज एक अच्छे आसन पर दीन मुख और नत्रों में आंसूओं भरे बैठे हैं। तब लक्ष्मण अत्यन्त दीनता से चरणों पर गिरकर हाथ जोड़कर बोले कि हेराघव! आपकी आज्ञानुसार गंगा के उस पार बाल्मीक के आश्रम के निकट में सीता को छोड़ आया। हेप्रभु! अब आप शोक परित्याग कीजिये। क्योंकि काल की गति ऐसीही है। इसलिये बुद्धिवान लोग शोक को नहीं प्राप्त होते। संयोग का अंत वियोगही है। जीवन का अन्त मरणही है। इसलिये पुत्रों कलत्रों मित्रों और धनमें आशक्ति न करना चाहिये। क्योंकि एक न एक दिन इससे बियोगही है। हेराघव! आप अपने से आपही अपाने मनको समझाने के लिये सामर्थ हैं। हेपुरुष श्रेष्ठ! आपके सदृश महानुभाव ऐसे कार्यों में मोह को नहीं प्राप्त होते। अब यदि आप ऐसी दीनता को प्राप्त होंगे तो फेर वही अपवाद आय कर प्राप्त होगा। जिस अपवादके भयसे आपने मैथिली का त्याग

किया वही अपवाद फेर नगर में फैल जायगा। इसमें कुछ संदेह नहीं। सो हेप्रभु! धीरज धरिये और इस दुर्बल बुद्धि का परित्याग कीजिये। इस प्रकार लक्ष्मण का बचन सुन परम प्रीति पूर्वक भगवान् बोले—हेलक्ष्मण तुम ठीक कहते हो इसमें कुछ सन्देह नहीं। हेबीर! तुम्हारे बचनसे मैंने अपने कार्यानुसार संतोष पाया। तथा मेरी संताप निवृति हुई॥

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे द्विषष्टितमः सर्गः॥६२॥

अब लक्ष्मण के वाक्यों से प्रसन्न हो महाराज बोले कि इस समय में ऐसे बन्धू का मिलना अति दुस्तर हैं। जैसे तुम हो। अच्छा अब जो मेरे हृदय की बात है उसको सुनो। चार दिन हुये मैंने पुरवासियों का कुछ भी कार्य नहीं किया। से।मेरा मन अत्यन्त कचोट रहा है। सो तुम मंत्रियों को बुलाओ और जो कार्यार्थी पुरुष अथवा स्त्री उपस्थित हो उनको मेरे सन्मुख उपस्थित करो। क्योंकि जो राजा पुरवासियों का कार्य नहीं करता वह घोर वायु रहित नर्क में डाला जाता है। ऐसा सुनने में आता है कि प्राचीन काल में कोई नृग नाम राजा ने ब्राह्मणों को बत्सके सहित और सुवर्ण से भूषित कोटि गौ दान दी उनमें से एक गौ अपने बछड़े के सहित जो एक अग्निहोत्री दरिद्र, (*उञ्छजीवी) ब्राह्मण को दी थी कहीं बहक कर निकल गई। अब वह ब्राह्मण क्षुधा से पीड़ित उस खोई हुई गौको इधर उधर खोजने लगा। सो अनेकों वर्ष-पर्यन्त संपूर्ण राष्ट्रों में खोज मारा पर गौ का पता न पाया दैवयोग से कलखल प्रान्त में जो हरिद्वार प्रान्त में इस नाम का कोई देश विशेष है, वह ब्राह्मण जाय निकला तो वहां एक ब्राह्मण के घरमें अपनी गौया को जो अच्छी निरोग और जिसका बछवा बहुत बड़ा होगया था देखा। तब उस ब्राह्मण ने अपने रक्खे हुये नाम से कि हेशबले! आओ ऐसा पुकारा और उस गौया ने सुना और उस बत्रक्षुत अग्नि तुल्य तेजस्वी ब्राह्मण के स्वर को पहिचान उसके पीछे चला। अब जो उसे पालता था वह भी उसके पीछे चला और कहने लगा कि यह गौ मेरी है।

* उञ्छजीवी उसे कहते हैं कि जो खेत कट जाने के बाद उसमें से दाना दाना बीनकर अपनी जीवका चलाते हैं।

तब वह ब्राह्मण बोला कि नहीं इसको तो नृग ने मुझे दिया था। अब उन ब्राह्मणों का महा विवाद हुआ और झगड़ते झगड़ते दाता नृग की राजधानी में गये। द्वार तक पहुंचने पाये परन्तु राजा के पास न पहुँच सके। अनेक दिन पर्यन्त प्रत्याशामें पड़े पड़े वे दोनों क्रुद्ध होकर बोले कि हे राजन्! जिस लिये तू प्रयोजन वालों को दर्शन नहीं देता इसलिये तू गिरगिट होकर ऐसे स्थल में रहेगा कि कोई तुझे देख न सकेगा। तू अनेक सहस्र और अनेक शत वर्ष पर्यन्त गड्ढे में गिरगिटान होकर पड़ा रहेगा। जब भगवान विष्णु मनुष्य के शरीर में वासुदेव इस नाम से यदुकुल में जन्म लेंगे तब वे तुझे श्राप से छोड़ावेंगे और तू उद्धार पावेगा। कलिके प्रारंभ में भूमिका भार उतारने के लिये महावीर नर और नारायण अवतार लेंगे। इस प्रकार शाप देकर वे दोनों शान्त क्रोध हुये और उस वृद्धा और दुर्बल गौ को अन्य किसी ब्राह्मणको दे डाला। इस प्रकार वह राजा ब्राह्मण के श्रापसे गिरगिट योनि को भोग रहाहै सो हे लक्ष्मण! कार्यार्थियो की कलह राजाके दोषको उत्तपन्न करता है। इसलिये ऐसा करो कि जितने कार्यार्थी हैं मेरे समीप तक आवें॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे त्रिषष्टतमः सर्गः॥६३॥

ऐसा बचन महाराज का सुन लक्ष्मण हाथ जोड़कर बोले कि हेप्रभु! ऐसे अल्प अपराधके लिये ब्राह्मणोंने ऐसा शाप दिया कि जैस दूसरा यमदंड हो। ऐसे श्राप को सुन भला राजा ने उन ब्रह्मणों क क्या कहा। ऐसा बचन लक्ष्मण का सुन रामचन्द्र बोले कि राजा ने कुछ न कहा और जब ब्राह्मण चले गये तब नृप ने मंत्रियों महाजनों और प्रोहितों को बुलाय कर महा दुःख युक्त बचन बोले कि हेभाइयों! नारद और पर्वत ये दोनों ऋषि मुझे बड़े भय की बात सुनाकर ब्रह्म- लोक को चले गये। वह बात यह है कि दो ब्राह्मण मुझे श्राप दे गये हैं। (राजा ने वह श्राप सबको सुना दिया) सो अब इस वसुनाम राज- कुमारको राज्याभिषेक दे और शिल्पी लोग बहुत अच्छा सुखद

एक गढ़ा मेरे लिये बनावें, जहां रहकर मैं ब्राह्मणों के श्राप को काटूं । तीन बिल मेरे लिये बनाये जायें, एक वर्षा काल के लिये दूसरा शीत काल और तीसरा उष्ण काल के बिताने के योग्य और फल वाले, पुष्प वाले, छापावाले और घने घने वृक्ष उनमें रोपे जायँ और उन गड़हों के चारों ओर रमणीय भूमि बनाय दीजाय और मैं शाप के काल तक वहां सुख से रहूं । दो कोश चारों तरफ से सुगंध वाले वृक्ष लगा दीये जायँ । इस प्रकार सब विधानों का संपादन कर और अपने पुत्र को राज्य पर बैठाय राजा बोले—हेपुत्र ! सर्वदा धर्म में तत्पर हो क्षत्र धर्म से प्रजाओं का पालन करो । देखो मुझे ब्राह्मणों ने शाप दिया और अपराध भी मुझसे वैसाही हुआ और मेरे लिये सन्ताप मत करना, परमात्मा की जैसी इच्छा होती है वह अवश्यमेव होकर रहता है । पूर्व जन्म के पाप पुन्य भी तो आनकर उपस्थित होते हैं । हेपुत्र ! मेरे लिये विषाद न करो ऐसा अपने पुत्रको समझाय राजा ने उस गढ़े के पास जाय मनुष्य शरीर का त्याग किया और श्राप के बस उसी समय गिरगिट होकर उसमें चला गया ॥

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे चतुषष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥

इतनी कथा सुनाय रामचन्द्र लक्ष्मण से बोले, हे सुहृद ! मैंने यह नृग के शाप की कथा तुम्हें कह सुनाई और कुछ यदि सुनने की इच्छा होतो मैं दूसरी कथा कहता हूं सुनो । ऐसा बचन सुन लक्ष्मण बोले । हे राजन् ! इस आश्चर्य कथाओं के सुनने से मेरी तृप्त नहीं होती ऐसा लक्ष्मण की इच्छा देख महाराज ने एक दूसरी कथा कहना आरंभ किया । हे लक्ष्मण ! एक राजा निमि जो इक्ष्वाकु बंश के बारहवें पीढ़ीमें और धर्म में बड़े तत्पर थे । इस राजा ने गौतम मुनि के आश्रम के पास देवपुर के सदृश एक वैजपत्र नामका नगर बसाया और वहां आपभी रहने लगे । अब नगर बसाने के अनंतर उसकी बुद्धि ऐसी उत्पन्न हुई की बहुत काल में समाप्त होने वाला यज्ञ करूं । इस प्रकार पिता के मन को हर्ष देते हुये मनु के पुत्र इक्ष्वाकु नाम अपने पिता से पूछ

पहिले बसिष्ठ को बरण किया। फेर अत्रि अंगिरा और भृगु को भी बरण किया। परन्तु उसमें से बसिष्ठ मुनि बोले कि हे राजन्! तुमसे पहिले मुझे इंद्र ने बरण किया है, सो जब तक मैं उसका यज्ञ पूरा करवाय कर आऊं तब तक मेरी प्रतिक्षा करो। ऐसा कहकर बसिष्ठ तो इन्द्र लोक में चले गये परन्तु महर्षि गौतम ने बसिष्ठ का होत्रार्त्विज्य उठाय लिया यानो गौतमही यज्ञ के मुख्याधिकारी बने। अब बसिष्ठ जायकर इन्द्र का यज्ञ कराने लगे। इधर महाराज निमि ने भी सब ब्राह्मणों को इकट्ठा कर हिमवान् के बगल में अपने पुर के समीप यज्ञ में पांच सहस्र बर्ष के लिये दिक्षा ली। अब इन्द्र का यज्ञ समाप्त कराय बसिष्ठ राज निमि के पास आये, जब उन्होंने देखा कि मेरे स्थान पर गौतम कर्म करा रहे हैं परन्तु राजा के लिये महूर्त भर ठहर गये। परन्तु दैववश से उसी दिन राजा निद्रा से भरे अचेत की नाईं हो रहे थे। वशिष्ठ मुनि राजा से भेंट न होनेके कारण अति क्रुद्ध होकर बोले कि हे पापित्र जिस लिये तूने मेरी प्रतिक्षा न करके दूसरे का बरण किया, इसलिये तेरा शरीर चेतन हीन हो जायगा। इतने में राजा जाग उठे और इस शाप को सुन क्रुद्ध हो बोले—हे ऋषे! जिस लिये अनजान और सूते हुये मुझे यमदण्ड की भांति इस शापाग्नि को देते दया न की इसलिये तुम भी विदेह हो जाओ। परस्पर के शाप से दोनों देह हीन हो गये। परन्तु प्रभाव कुछ कम न भया।

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे पंचषष्टितमः सर्गः ॥ ६५ ॥

ऐसी कथा सुनकर लक्ष्मण बोले हे राघव! फेर वह किस प्रकार देह संयुक्त भये? लक्ष्मण का प्रश्न सुन रामचन्द्र बोले कि हे लक्ष्मण! इस प्रकार शापबस से परस्पर के दोनो देह बिहीन वायुरूप हो गये। उनमें से बसिष्ठ तो अपने पिता ब्रह्मा के पास जाय हाथ जोड़ बोले हे भगवन्! मैं तो निमि के शाप से देह रहित होगया और देह के न रहने से बड़ाही दुःख है। क्योंकि देहही से सम्पूर्ण कार्य हो सकते हैं। और देह हीन कुछ नहीं कर सकता, सो आप मेरे दूसरे देह के

लिये कोई प्रबन्ध कीजिये। वसिष्ठ का बचन सुन पितामह बोले कि तुम जायकर मित्रा बरुण के बीर्य में प्रवेश करो। यहां भी तुम अयोनिज ही उत्पन्न होगे और महा धर्म से युक्त होकर फेर मेरे बश में प्राप्त होगे। ऐसा पिता का आदेश पाय और उनकी प्रदिणा और प्रणाम कर शीघ्र बरुण के घर पर गये उसी समय मित्र देवता क्षीर सागर के साथ देवेश्वरोंसे सराहना पाय, बरुण धर्मका सम्पादन किया था। इतने में अकशमात उर्वशी नाम अप्सरा, सखियों को साथ लिये वहां आई। वहां उसे क्रीड़ा करते देख और उसके सौंदर्य से मोहित हो बरुण ने चाहा कि उसके साथ संभोग करें। परन्तु उसने हाथ जोड़कर कहा कि हेसुरेश्वर! मैं मित्र से पहिले ही बरी गईहूं अर्थात् बाग्दान हो चुका है। ऐसा उसका बचनसुन बरूण जो कामसे अत्यन्त पीडित हो रहेथे. बोले। कि अच्छा अगर तू मेरे साथ संभोग को नहीं चाहती तोमैं अपने तेजको इस देव निमित्ति घट में त्याग करूंगा और ऐसा करने से मैं कृत कृत्य हो जाऊंगा। इस प्रकार उस लोकनाथ बरुण के बचन को सुन उर्वसी बोली बहुत अच्छा ऐसाही करिये। परन्तु मेरा हृदय आपही में है। और विशेष करके मेरे मनका भाव आपही के लिये है केवल देह मित्र का है। ऐसा उर्वशी का बचन सुन उस अद्भुत और प्रज्वलित अग्नि के सदृश प्रकाशमान अपने वीर्य को वरुण ने उस घड़े में डाल दिया और उर्वसी वहां से मित्र देवता के पास चली गई परन्तु मित्र उसे देखते ही अति क्रुद्ध हो बोले। रे दुष्ट दुराचारिणी तू पहिले मुझे बरकर क्यों खसक गई और क हां जायकर तू ने दूसरा पति किया सो तू इस पाप के द्वारा मेरे क्रोध से शापित हो कुछ काल पर्यन्त मनुष्य लोकमें जायकर बास करेगी। हे दुर्बुद्धे! बुध के पुत्र राजर्षि काशिराज पुरूरवा के पास तू जो वही तेरा पति होगा। इस प्रकार शाप पाय वह उर्वशी प्रतिष्ठान नाम नगर में बुध के पुत्र महाराज पुरूरवा के पास चली गई और उससे श्रीमान् और महाबली आयु नाम का पुत्र हुआ, इसी आयु के पुत्र राजा नहुष

हुये जो इन्द्र के समान तेजस्वी थे । जब इन्द्र ने वज्र से वृत्रा सुर को मारा और आप श्रापित होगये तब इन्ही महाराज नहुष ने इन्द्र के राज्य को लक्ष बर्ष पर्यन्त सँभाल और यथोचित शासन किया । मित्रा के शाप से उर्वसी पृथ्वी पर आई और शाप भोगकर फेर स्वर्ग में इन्द्र के पास चली गई ।

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे षट्षष्टितमः सर्गः ॥ ६६ ॥

ऐसी अद्भुत कथा सुन लक्ष्मण बोले कि महाराज फेर दोनों किस प्रकार देह पाया, ऐसा लक्ष्मण का प्रश्न सुन राघव बोले कि हे सौमित्रे ! वह जो कुंभ तेज से पूर्ण था उसमें से दो तपस्वी ब्राह्मण उत्पन्न हुये, पहले तो भगवान् अगस्त्यऋषि, वह उसमें से निकलते ही बोले मैं तेरा पुत्र नहीं हूं । ऐसा कह वह वहां से चले गये। हे लक्ष्मण! यह तेज वही था जो उर्वशी के लिये कुंभ में स्थापन किया गया था और जो वरुण सम्बन्धी था उससे बसिष्ठ उत्पन्न हुये जो मित्रावरुण के पुत्र कहलाये, और जिस क्षत्र में ये उस घट से बाहर भये उसी क्षण मे इस हमारे कुल के हित के लिये बसिष्ट इक्ष्वाकु से प्रोहित माने गये हे भाई ! यह मैंने बसिष्ठ की देह प्राप्ति कह सुनाई अब निमि की कहता हूं सुनो अब ऋषि लोग महाराज निमि को बिदेह देख उसी शरीर से दीक्षा पूरी करवा करवाने लगे और उस देह को गन्ध पुष्प और वस्त्रो के द्वारा अनेक प्रकार की रक्षा करने लगे । इसके बाद यज्ञ के समाप्त होने पर भृगु मुनि बोले कि हे पार्थिव ! इस तुम्हारे शरीर में मैं चेतना न्याय देऊंगा क्योंकि मैं संतुष्ट हुआ और देवता लोग भी प्रसन्न होकर बोले कि हे राजन् तुम वर मांगो यह तुम्हारा चेत कहां रक्खा जाय। ऐसा देवों का वचन सुन निमिका चेत बोला कि मैं सब प्राणियों के नेत्रों पर निवास करने चाहता हूं। ऐसी प्रार्थना सुन देव लोग बोले "एवमस्तु" तुम वायु रूप होकर प्राणियों के नेत्र पर विचरोगे । हे पृथ्वीपते ! तुम्हारे विचरने से प्राणियों के नेत्र विश्राम के लिये बार बार ढपेंगे । ऐसा कहकर देवते सब चले गये । इसके बाद ऋषि लोग निमि के देह को न्याय पुत्र के

लिये उसी देह को अरणी बनाय, मंत्र पूर्वक मथन करने लगे। मथन से एक महा तपस्वी पुरुष उत्पन्न हुआ, इस लिये इसका नाम मिथि और जनन से अर्थात् ऋषि लोगों के द्वारा केवल पिता से उत्पन्न हुआ उसका नाम जनक भी हुआ और विदेह से अर्थात् मृत शरीर से निकला इस लिये वैदेह हुआ। इस प्रकार विदेहराज जनम की प्रथम उत्पत्ति मैंने कही और मिथि से मैथिल हुआ ॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे सप्तषष्टितमः सर्गः ॥६७॥

ऐसी कथा सुन, लक्ष्मण बोले कि यह विदेहाधिपति का वृत्तान्त और वशिष्ठ मुनि की कथा बड़ी अद्भुत है, परन्तु मैं पूछता हूं कि राजा निमि तो क्षत्रिय शूर और विशेष कर यज्ञ में दिक्षित थे तो क्यों नहीं उन्होंने महर्षि पर क्षमा की। ऐसा प्रश्न सुन श्री रामचन्द्र बोले। हे वीर सब पुरुषों में क्षमा नहीं देख पड़ती, क्रोध बड़ा दुसह होता है। देखो पूर्व में एक ययाति नाम राजा ने सत्व गुण कर अवलंबन कर क्रोध को नहीं उभाड़ने दिया सो उनकी कथा मैं कहता हूं। यह ययाति राजा नहुष का पुत्र प्रजा पालन में और प्रजा बृद्धि में अत्यन्त तत्पर था, उसकी दो पत्नी थी। जो पृथ्वी मंडल में परम सुन्दरी और अनुपम थीं। उनमें से एक तो वृषपर्वा नाम की दैत्य की कन्या जिसका नाम शर्मिष्ठा था। यह स्त्री राजा की बड़ी प्यारी थी और दूसरी शुक्राचार्य की पुत्री, देवयानी थी, यह राजा को वैसी प्यारी न थी। दोनों को एक एक पुत्र प्रसव हो चुके थे, सर्मिष्ठा के पुत्र का नाम पुरु, और देवयानी के पुत्र का नाम यदु था। इन दोनों मेंसे पुरु राजा को अत्यन्त प्रिय था एक तो वह गुणवान् थाही, दूसरे प्यारी रानी से उत्पन्न था। अब यह दुःखित हो अपनी माता देवयानी से बोला कि हे माता तू ऐसे सामर्थवान् भावि के कुल में उत्पन्न हो ऐसे दृश्य के दुःख को और ऐसे अनादर को सहती है। इसलिये हे देवि आओ हम तुम दोनों अग्नि में प्रवेश करें। और राजा दैत्यपुत्री के संग में बहु रात्रि पर्यन्त बिहार करें और यदि तुमको सहना हो

तो सहो परन्तु मुझे आज्ञा देओ, मैं न सहूंगा। अब मैं अपना प्राण त्याग करूंगा। इस प्रकार पुत्र का बचन सुन जो रो रहा था। देवयानी क्रुद्ध हो ध्यान द्वारा अपने पिता का स्मर्ण करने लगी, उसी क्षण भगवान् शुक्राचार्य वहां आनकर उपस्थित हुये और आकर देखा कि पुत्री दुःखित और अनादरको प्राप्त हो रही है। तब शुक्रने पुत्री से पूछा तो देवयानी क्रुद्ध होकर बोली। मैं अग्नि वा तीक्ष्ण विष अथवा जल से अपने प्राणों का त्याग करूंगी। क्या तुम नहीं देख रहे हो कि मैं अति दुःखित और अनादर को प्राप्त हूं। यह मेरा नहीं आपका अनादर है। पुत्री का ऐसा बचन सुन मुनि ने क्रोध से लाल हो गये और ययाति को श्राप देने लगे कि जिस लिये तूने मेरी पुत्री का अनादर किया है वह सुख तुझे न रहे, अर्थात तू जरावस्था (बुढौती) को प्राप्त हो और तू इंद्रियों से सिथिल हो जाय। ऐसा शाप दे तथा देवयानी को धैर्य दे शुक्र अपने स्थान को चले गये।

इति बाल्मीकिये उत्तरकांण्डे अष्टषष्टितमः सर्गः ॥ ६८ ॥

जब शुक्राचार्य के श्राप से राजा को जराने आनकर घेरा तब क्या करना चाहिये इसपर बिचार करने लगे। अब बिचार करके राजा ने अपने पुत्र यदु से कहा कि हे बत्स! यदि तू धर्मज्ञ है तो मेरी इस बुढौती को कुछ दिन के वास्ते तू ले ले और अपनी जवानी मुझे देदे? मैं आनन्द से बिहार करूं क्योंकि अभी तक मेरा मन बिषयों से भरा नहीं है। मैं बिषयों का भोग कर फेर तुमको जवानी दे अपनी जरा फेर लूंगा। ऐसा पिता का बचन सुन यदु बोला कि तुम्हारा प्रिय पुत्र तो पुरु है वह तुम्हारी जरा को लेगा। मैं अर्थों से और निकट से भी हटा दिया गया हूं तुम्हारी वही लेगा जो तुम्हारे साथ बैठकर भोजन करेगा। ऐसा उसका निरस्कार का बचन सुन राजा पुरुसे बोले, हे पुत्र! तू मेरी जरा ले ले? ऐसा पिता का बचन सुन पुरु हाथ जोड़ बोला कि मैं धन्य और अनुगृहित हुआ। मैं आप की आज्ञा मानने को उपस्थित हूं। ऐसा बचन सुन राजा अत्यन्त

हर्षित हुये, और अपनी जरा उसको दे और उसका यौवनसे सुख विलास करने लगे। अनेक सहस्र वर्ष पर्यन्त पृथ्वी का शासन किया और सहस्रों यज्ञ किये तथा युवावस्थाका सुख भी लिया। अब एक दिन राजा पुरु से बोले कि अब मेरी जरा मुझे देओ और अपना तारुण्य लेओ। हे वत्स मेरी आज्ञा को पालन करने से मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ इसलिये तुमको मैं राज्याभिषेक देऊँगा। ऐसा पुरुसे कह राजा यदु से बोले! रे यद्यपि तू मुझसे क्षत्रिय रूप दुःसह राक्षस उत्पन्न हुआ, क्योंकि मेरी आज्ञा का तू ने विघात किया, इसलिये तू प्रजा के विषय में निष्फल होगा। मैं तेरा पिता और सरवस्व हूं तू ने मेरा अपमान किया इसलिये तू दारुण राक्षसों को उत्पन्न करेगा और हे दुर्मते! तू इस सोम बंशमें नहीं रह सकेगा और तेरा बंश भी तेरेही ऐसा दुष्ट चरित्र होगा। ऐसा उसको शापदे और पुरुको राज्यासन दे आप आश्रमवासी होगये। इसके बाद बहुत काल बीतने पर राजा काल धर्म को पाय स्वर्गगामी हुये और पुरु बड़े धर्म से संयुक्त हो काशिराज्य प्रतिष्ठान पुरमें रहकर राज्यशासन करने लगे और यदुसे क्रौंचके बनमें महा दुर्गमें सहस्रों यातुधान उत्पन्न हुए और वह सोम बंशसे वहिष्कृत होगया। सो हे सुमित्रा नन्दन! इस प्रकार शुक्रके शाप को ययाति ने आपने क्षत्रिय धर्म से चुपचाप ग्रहण कर लिया और निमिसे क्षमा न की गई। सो यह सब वृत्तान्त मैंने तुमसे कह सुनाया। अब हमको उचित है कि कार्यार्थियों को देखें, ऐसा न हो कि नृगकी तरह हमको भी दोष भोगना पड़े।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे एकोन सप्ततितमः सर्गः ॥ ६९ ॥

अब प्रातःकाल के नित्य कृत्यों से निवृत्त हो महाराज धर्मासन पर बैठे और राज धर्मोंको देखने लगे। वहां पर ब्राह्मण महाजन पुरोहित, वशिष्ठ कश्यप बड़े बड़े ऋषि व्यवहारज्ञ मंत्रीगण, धर्मपाठक, नीतज्ञ और सभासद सामन्त राजा सब महाराज की उपासना में तत्पर हो रहे थे। अब महाराज रामचन्द्र लक्ष्मण से बोले—कि हे महाबाहो! तुम

बाहर जाओ और कार्यार्थियों को ले आओ। आज्ञा पा लक्ष्मण द्वार देश पर जाय कार्यार्थियों को पुकारने लगे। परन्तु वहां कोई न बोला कि मेरा कुछ कार्य है। क्योंकि महाराज के राज में न आधि न व्याधि किसी को बाधा देते थे सम्पूर्ण पृथ्वी अन्न और औषधियों से पूर्ण थी और न बालक न युवा न मध्यम और न वृद्ध कोई मृत्यु को नहीं प्राप्त होते थे। क्योंकि महाराज का ऐसा ही धर्मशासन था कि किसी प्रकार की बाधा प्रजाओं को पीड़ा नहीं दे सकती। इस प्रकार के धर्मराज में किस प्रकार कार्यार्थी देख पड़े। अब लक्ष्मण ने इधर उधर ढूंढ और तादृश आर्थी को न पाय सभामें आय, हाथ जोड़ सब समाचार कह सुनाया कि कोई कार्यार्थी द्वार पर नहीं है। फेर रामचन्द्र प्रसन्न हो बोले। हे लक्ष्मण! तुम फेर जाओ और कार्यार्थी को देखो? क्योंकि अच्छी प्रकार नीति रीति से राज्यशासन में कहीं अधर्म तो है नहीं इस लिये वे राजभय से परस्पर रक्षा करते हैं। देखो राजधर्म्म मेरे हाथ से छूटे बाणों की तरह प्रजा लोगों की रक्षा करते हैं तौ भी तुम उनके खोज में तत्पर रहो। ऐसा बचन सुन लक्ष्मण फेर द्वार पर गये। वहां क्या देखते हैं कि एक कुत्ता खड़ा लक्ष्मण की तरफ बार बार देखता और चिल्लाता है। तब लक्ष्मण उससे बोले हे स्वान! तुम्हारा क्या कार्य है सो सावधानी से कहो? तब वह बोला कि मैं श्रीरामचन्द्र के साम्हने कहना चाहता हूं। ऐसा उसका बचन सुन उसे ठहरा लक्ष्मण प्रभु से यह बात कहने के लिये फेर भीतर गये और प्रभु को इस बात का सन्देशा दे फेर बाहर आय कुत्ते से बोले कि जो तुम्हे कहना हो वह चलो महाराज से कहो। ऐसा सुन कुत्ता बोला कि महाराज देव मन्दिर, राजमन्दिर, यज्ञ मन्दिर, इसमें अग्नि, इन्द्र, सूर्य, वायु, रहते हैं, और मैं अधम योनि हूं इसलिये नृप मन्दिर में कैसे प्रवेश करूँ आप उनसे जाकर मेरा सन्देशा कहकर जब आज्ञा ले आवें तब मैं चलूँगा। ऐसा उसका बचन सुन कृपा पूर्वक लक्ष्मण फेर महाराज के पास गये और जाकर बोले हे प्रभु! आपकी आज्ञानु-

सार में द्वार पर गया वहां एक कुत्ता कार्यार्थी खड़ा है, परन्तु वह धर्म्म शास्त्र के अनुसार नृप मन्दिर में नहीं आता आपकी आज्ञा चाहता है यदि आप आज्ञा दें तो वह भीतर आवे, तब महाराज बोले कि कोई कार्यार्थी हो शीघ्र मेरे पास ले आओ ।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे सप्ततितमः सर्गः ॥ ७० ॥

ऐसा प्रभु का बचन सुन लक्ष्मण उस कुत्ते को रांग में लेकर महाराज रामचन्द्र के समीप ला उपस्थित किया । राघव उसे देख बोले कि हे स्वान! तुझे जो वक्तव्य है सो निर्भय होकर कहो अब स्वान जिसका मस्तक टूट गया था रामचन्द्रकी तरफ दृष्टि करके बोला, कि हे महाराज आप संसारके स्वामी और राजा हैं, संसार जब सूतता है तब आपही जागते हैं। इस प्रकार जगत की रक्षा आपही करते हैं और नीतिधर्म का प्रतिपालन करते हैं । इस प्रकार उस स्वान ने बहुत स्तुति की तब भगवान बोले तुम्हारा क्या कार्य है सो स्पष्ट कहो । मैं उसे अभी पूरा करूंगा । तब स्वान बोला, कि हे प्रभु ! ब्राह्मणशाला में रहने वाले सर्वार्थ सिद्ध नाम एक भिक्षुक ने बिना कारण निर अपराध मेरे सिर को तोड़ा है । इतना सुन कर महाराजने द्वारपाल को आज्ञा दी कि उस भिक्षुक को ले आवो, आज्ञा पा द्वारपाल उसे ले आया, वह आय कर महाराज से बोला कि प्रभो मुझसे आपको क्या प्रयोजन है ? उसका ऐसा बचन सुन रघुनन्दन बोले तुमने इस कुत्ते पर प्रहार किया सो इसने तुम्हारा क्या अपराध किया था । जो दण्डसे तुमने इसको मारा । देखो क्रोधही सब अनर्थों का मूल है, इसलिये मनुष्य का कर्म है कि क्रोध को सब काल में रोके । राघव का ऐसा बचन सुन वह भिक्षुक बोला । हे राजन्! मैंने इसको मारा है इसमें संदेह नहीं । परन्तु जो कारण है सो सुनिये । मैं भिक्षाके लिये घूम रहा था और भिक्षाका समय निकल गया था । यह गलीके मध्य में बैठा था मैंने इसे "हटजा, हटजा" ऐसा कहा सो यह अपनी इच्छानुसार चलकर फेर गली के अन्त में विषम स्थल में

खड़ा हो गया। सो क्षुधासे पीडित तो मैं था ही क्रोधसे मार बैठा। सो हे महाराज! मुझ अपराधी पर जो डंड हो सो दीजिये। क्योंकि आप से दण्ड पाय मुझे फेर नरक का भय न रहेगा। ऐसा उस ब्राह्मण का बचन सुन श्रीरामचन्द्र मंत्रीगणों सभासदों से पूछने लगे कि क्या करना चाहिये और इसके लिये क्या डंड है, क्योंकि शास्त्रानुसार दंड देने से प्रजा की रक्षा होती है। उस समय सभा में भृगु, अंगिरा, कुत्स, इत्यादि बड़े बड़े ऋषि भगवान बसिष्ठ कश्यप मुख्य मुख्य धर्म पाठक मन्त्रिगण, बड़े बड़े महाजन और बड़े बड़े पंडित बैठे थे। ये सब लोग बोले कि हे महाराज, दण्डोंके द्वारा ब्राह्मण अवध्य है ऐसा शास्त्रकार लोग मानते हैं। इस प्रकार राज धर्माधिकारियों ने कहा और मुनि लोग बोले कि हे महाराज! आप राजा और शासनकर्ता हैं, भूमंडलही के नहीं वर्ना तीनों लोकके क्योंकि आप सनातन साक्षात् विष्णु हैं। ऐसा वे लोग कही रहे थे कि वह कुत्ता बोला कि हे राजन्! आप यदि जो तुष्ट हैं और मुझे वर देना योग्य समझें तो मेरा मनोरथ सिद्ध कीजिये। क्योंकि आपने पहले ही प्रतिज्ञा बचन कहा था कि उसे अभी पूरा करूंगा। अब यही मेरा मनोरथ है कि इस भिक्षुक को कालंजर प्रदेश का महन्थ बनाय दीजिये। ऐसा सुन महाराजने उसे उस प्रदेश के महन्थका तिलक लगा दिया और हाथी पर चढ़वा उसको प्रतिष्ठा पूर्वक भेज दिया। ब्राह्मण मनमें अति प्रसन्न हुआ और मंत्री तथा सब सभासद बोले महाराज इसको तो दण्ड के बदले बर दिया गया। ऐसा सबका बचन सुन राघव बोले कि इस बात के तत्व को तुम नहीं जानते इसका कारण स्वान ही जानता है ऐसा कह महाराजने उस स्वानसे उसका कारण पूछा। तब स्वान बोला कि राजन् सुनिये! मैं पूर्व जन्म में उसी स्थान का महन्थ था और मेरा यह कार्य था कि देवता और ब्राह्मणका सत्कार करना तथा दासी और दासोंका पालन करना, उन्हीं लोगोंकी भलाई में तत्पर रहना। मैं देव द्रव्य की रक्षा करनेवाला था और उसी में

से बचे अन्न से अपना उदर भरता था। हे महाराज मैं नम्रता, सुशीलता, और सबकी हितकारिता में तत्पर रहता तब भी इस घोर और अधमगति को प्राप्त हुआ, इस प्रकार वह क्रोधी ब्राह्मण, जो विवेक रहित, हिंसक, रूखा, मूर्ख और तत्पर है, सात मातृकुल और सात पितृकुलको नरक में ले जाता है। हे प्रभु! कैसी भी बिपत्ती में मनुष्य ग्रसित रहे तब भी महन्थही न करे। हे पृथ्वीनाथ! जिसको पुत्र, स्त्री, बांधव सबके सहित नरक में भेजना चाहे उसको देव मंदिर, ब्राह्मणों और गौवों का अधिष्ठाता बनावे। हे राघव! देवस्व सद्य प्राणी को अवीची नाम नरक में डालता है। ऐसा उसका बचन सुन श्रीराघव विस्मय से प्रफुलित नयन हो गये और कुत्तेने अपना मार्ग लिया। पूर्वकाल में वह श्वान उत्तम जाति वाला था परन्तु इस जन्म में वह अधम योनी को प्राप्त था। सो उसने काशी में जाय शरीर त्याग के लिये अनसन व्रत को धारण किया।

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे एकसप्ततितमः सर्ग ॥७१।

अयोध्या नगरी के समीप में ही किसी रमणीक बन में, जो पुष्पों फलों करके सुशोभित था। तथा अनेकों प्रकार के पक्षी तथा हिंसक जंतुओं से परिपूर्ण था। बहुत काल से उसमें एक गिद्ध और एक उल्लू निवास करते थे। अब गीध के मन में कुछ पाप आया सो वह उल्लू के घर में जाकर कहने लगा कि यह घर तो मेरा है। ऐसा कह वह उसके साथ कलह करने लगा। अन्त में दोनों ने निश्चय किया कि श्री रामचन्द्र राजा हैं चलो वहीं न्याय करावें वह जिसका ठहरावें यह भवन उसी का होगा। ऐसी बात ठान वे दोनों क्रोध से भरे राघव के दर्बार में आये और दोनों ने महाराज के चरणों के आगे शीश नवाया। तब गिद्ध बोला हे भगवान् नृप! आप पशु, पक्षी, जड़ चेतन, मनुष्य, ऋषि सबके रक्षक हैं, सो मेरी एक प्रार्थना है सुनिये। मेरे अपने बाहुबल से बनाया गृह यह उलूक हरण करने चाहता है। सो आप मेरी रक्षा कीजिये। ऐसा बचन जब गृध कह

चुका तब उलूक अनेकों तरहसे भगवान् की स्तुति तथा प्रार्थना करके बड़े नम्रता पूर्वक बोला—हे नाथ! मेरी यह प्रार्थना है कि यह गृद्ध जबरदस्ती मेरे गृह में घुसकर मुझे पीड़ा देता है। दोनों की बातें सुनकर महाराज ने अपने मंत्रियों को बुलाया। आठों मंत्री जो महाराज दशरथ के भी मंत्री थे आन कर उपस्थित हुये। यह सब बड़े नीतज्ञ थे। उनके आने पर महाराज इन दोनों के विवाद के विषय में पूछने लगे। तब सबने एक राय करके गृद्ध से पूछा कि यह गृह तुम्हारा कितने दिनों का है। इस बातको ठीक ठीक समझा कर कहो। तब वह गृद्ध कहने लगा कि हे प्रभु! यह पृथ्वी जब चारों तरफ मनुष्यों से जो सृष्टि प्रारम्भ में उत्पन्न हुये भर गई तब से यह मेरा गृह है। इसके बाद यही बात उलूक से पूछी गई तब वह बोला, कि हे राजन् जिस काल में यह पृथ्वी वृक्षों से भर गई थी तब से यह मेरा गृह है। ऐसा बचन सुन रामचन्द्र बोले कि वह सभा सभा नहीं जहां वृद्ध न हो। जो धर्म की बात नहीं बोलते वह धर्म धर्म नहीं। वह सत्य सत्य नहीं जो छल से मिश्रित है और जो सभासद मर्म को समझ कर भी चुप चाप ध्यान करते बैठे रहते हैं और ठीक ठीक नहीं बोलते वे सब मिथ्यावादी हैं। और जो काम से अथवा क्रोध से या भय से जान बूझकर प्रश्नों का उत्तर नहीं देते वे सहस्र वर्ष तक वरुण के पास का दण्ड अपने ऊपर लेते हैं। इसलिये सत्य सत्य बोलना चाहिये जो बात बुद्धिमें आ गई हो। इतनी बात सुनकर सचिव लोग बोले इन दोनों में से उलूक सच्चा मालूम पड़ता है। इसके ऊपर राजा मुख्य है जो वह न्याय पूर्वक डंड देदे फिर उसके दन्ड को भोगकर जीव यम डंड से भी छुटकारा पा जाता है। तब भगवान् बोले मेरी बुद्धी से भी यह गृह उलूक का मालुम पड़ता है गृद्ध का नहीं। इसलिये इस गृद्ध को दण्ड देना चाहिये, क्यों कि यह पापात्मा दूसरेका घर लेना चाहता। और इसको पीड़ा देता है। यह बड़ा धृष्ट है। इस प्रकार प्रभु दन्ड आज्ञा देना ही चाहते थे कि आकाशसे शब्द आया कि हे रामचन्द्र! इस गृद्धको

मतमारो क्योंकियहतपोबलसे पहिलेही भस्महो चुका है सो सुनिये यह ब्रह्म दत्त नाम शूर सत्यव्रत और पवित्र राजा था। सो इसको कालगौतम नाम ऋषि ने श्राप दग्ध कर दिया। इसका कारण यह हुआ कि वह महर्षि इस इस राजा के यहां आये और कुछ अधिक सौ वष पर्यन्त मैं आपके यहां भोजन करूंगा ऐसा बोले। तब राजा ने उस बातको अंगीकार करके मुनिको पाद्य अर्घ से पूजनकर भोजने के लिये पाक बनवाया। परन्तु उसमें मांस भी था सो उस मांस को देख मुनि क्रुद्ध हुये और बड़ा दारुण शाप राजा को दिया कि तुम गृद्ध होगे। तब तो राजा ने अति बिनती की और कहा कि महाराज यह काम मैंने विना जाने किया इसलिये इस शाप का अन्त कीजिये और मेरे ऊपर दया कीजिये। मुनि ने भी उस बातको समझकर राजा से कहा कि हे राजन्! इक्ष्वाकु बंश में महा यशस्वी रामनाम का कोई राजा होगा। उसके स्पर्श से शाप मुक्त होगे। ऐसी आकाशवाणी सुन राम ने उसका स्पर्श किया छूतेही वह गृद्ध रूप परित्याग दिव्य गंधको लगाये दिव्य रूप हो गया और रामचन्द्र से बोला—हे धर्मज्ञ राघव! आपके स्पर्शसे मैं घोर नर्कसे छूटा और आपने मेरे शाप का अन्त किया। इतने में आकाश से बिमान आया उस पर वह चढ़कर इन्द्रपुरी को चला गया।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे द्विसप्ततितमः सर्गः ॥ ७२ ॥

इस प्रकार महाराज रामचन्द्र को प्रजा पालन करते बसन्त काल की रात्री आन पहुंची जो न ठंडी और न गरम थी एक दिन प्रातःकाल के समय महाराज सन्ध्योपासनादि प्रातः कृत्य करके पुरवासियों के व्यवहार को देखने के लिये धर्मासन पर आन बैठे। उस कालमें सुमंत ने आनकर कहा हे राजन्! ऋषि लोग आये हैं और द्वार पर रुके खड़े हैं। भार्गव और च्यवन को अग्रगण्य कर आपका दर्शन चाहते हैं। हे प्रभु ये सब प्रसन्न मुख ऋषिगण यमुना तीर के निवासी हैं। ऐसा सुमन्त का बचन सुन महाराज बोले अच्छा उन सबको आदर पूर्वक ले आवो ऐसी प्रभु की आज्ञा पाय सुमन्त्र ने उनलोगों को महाराज

कै समीप उपस्थित कर दिया। वे सब अपने तेजसे प्रकाशमान सौ से अधिक थे। संम्पूर्ण तीर्थों के जलों से पूर्ण कलशों और अनेक फल फूलों को न्याय प्रभुके आगे भेट रखने और मधुर बचन बोलने लगे। अब महाराज उन भेंटों को लेकर प्रसन्न हुये और बोले कि हे ऋषिलोग इन उत्तमोत्तम आसनो पर आप बैठ जाइये। ऐसा महाराज का बचन सुन वे सब उन सुवर्ण निमिति आसनों पर बैठ गये। तब रामचन्द्र हाथ जोड़कर बोलें कि आप लोगों के आगमन का क्या कारण है, मैं आप लोगों का क्या हित करूं सो कहिये क्योंकि मैंतो आप लोगों का आज्ञाकारी हूं। जेा कार्य हो सो करूं। और मैं सत्य सत्य कहता हूं कि यह सम्पूर्ण राज्य और हृदय स्थित मेरा जीवन भी यह सब कुछ ब्राह्मणों ही के लिये है। ऐसा प्रभु का बचन सुन ऋषि लोग चारों तरफ से धन्य धन्य करने लगे और कहने लगे कि हे नरश्रेष्ठ! भूमंडल में यह बात आपहीमें है दूसरे में नहीं। क्योंकि बहुत से राजे कार्य में गुस्सा देख उत्तर भी न दे सके। प्रतिज्ञा की कौन कहै और आपने तेा ब्राह्मणों के गौरवके कारण को जाने बिना ही प्रतिज्ञा की। इसलिये हमलोगों को भरोसा है कि आप हमारे कार्य को अवश्य करेंगे? इसमें कुछ संदेह नहीं। हम ऋषियों ब्राह्मणों को यहां से छोड़ावैंगे।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे त्रिसप्ततितमः सर्गः॥ ७३॥

तब रामचन्द्र बोले कि हे महात्माओं! आप लोगोंका क्या कार्य है उसको कहिये। आपका भय दूर हो, ऐसा बचन सुन भार्गव मुनि बोले। हे राजन्! देशका और हमारे भय का जो मूल है सो सुनिये। सतयुग में बड़ा बुद्धिमान् लीला नाम कोई दैत्य पत्नी का ज्येष्ठ पुत्र मधुनाम दैत्य हुआ। वह ब्राह्मण भक्त, रक्षक और स्थिर बुद्धि था, इसी कारण परम उदार देवतों से उसकी परम प्रीति हुई। अब वह वीर्य सम्पन्न और धर्मनिष्ठ था इसलिये भगवान् रुद्र ने बड़े आदर से उसे एक अद्भुत वर दिया और अपने शूलमें से एक शूल उत्पन्न

कर अति प्रसन्नता से उसे देकर बोले—हे मधु ! तुमने जो यह अतुल धर्म जो मेरी प्रसन्नताका करने वाला है किया, इस कारण मैं ही तुझे यह शस्त्र देता हूं। हे महासुर ! जब तक देवों और विप्रों से बैर न करोगे तब तक यह तुम्हारे पास रहेगा । अन्यथा यह नष्ट हो जायगा और जो कोई तुमसे संग्राम करने को आवेगा उसे यह शूल व भस्म कर फेर तुम्हारे पास चला आवेगा। ऐसा रुद्रसे वरको पाय फेर वह दैत्य महादेवको प्रणाम करके बोला। हे भगवन् ! यह अनुपम शूल मेरे वंश में सर्वदा के लिये हो, ऐसा मैं चाहता हूं। आप देवों के देव हैं। ऐसा उस दैत्य का बचन सुन सर्व भूतपति शिव बोले कि यह बात ऐसी न होगी। परन्तु अच्छा मेरी प्रसन्नता तेरे ऊपर है इसलिये तेरी बात मैं निष्फल न होने देऊंगा । एक तेरे पुत्र के लिये यह शूल होगा । जब तक शूल तेरे पुत्र के हाथ में रहेगा तब तक वह सब प्राणियोंसे अवध्य रहेगा। ऐसा अद्भुत वरपाय, उस मधु ने अपना गृह जो अति प्रकाशमान था बनवाया, उसकी पत्नी कुम्भीन सी अति प्यारी थी जो विश्वावसुके अनलासे उत्पन्न हुई थी। और कुछ काल में उस दैत्य को एक पुत्र उत्पन्न, हुआ, जिसका कि नाम लवण रक्खा गया। वह लड़कपन से पाप कर्म करने में प्रवृत्त हुआ। ऐसे दुराचारी पुत्र को देख मधु बहुत ही क्रुध हुआ। परन्तु पुत्र को कुछ न कह केवल शोक को प्राप्त हुआ। और इस लोक को छोड़ समुद्रमें घुस गया। परन्तु जाती समय शूल अपने पुत्रका सब वृत्तान्त सुना गया। अब वह लवण शूलके प्रभाव से और अपने दुराचार से तीनो लोक तथा विशेष कर तपस्वीयोंको सन्ताप दे रहा है। सो हे प्रभु ! इस प्रकार का वह लवणासुर है और उसका शूल इस प्रकारका है। यह सब सुनकर प्रमाण आप हैं क्यों कि आपही हमारे परमगति हैं, इसके पहिले ऋषि लोग बहुत राजों के हम लोग शरण गये परन्तु अभयदाता किसी को न पाया, तो जब हम लोगों ने सुना कि रावण परिवार सहित मारा गया तब

हमको आशा हुई कि श्री रामचन्द्रजी हमारे इस भय को दूर करेंगे। सो हे रघुनन्दन! आप से यही प्रार्थना है कि लवण के भय से हमें बचाइये।

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे चतुःसप्ततितमः सर्गः ॥७४॥

ऐसी ऋषि लोगों की प्रार्थना सुन महाराज हाथ जोड़कर बोले कि वह असुर क्या खाता है और किस आचरण से कहां रहता है। ऐसा महाराज का बचन सुन ऋषि बोले कि वह प्राणी मात्रको और विशेष कर तपस्वियोंको खाता है, उसका आचरण दुष्टता तथा निवास मधुबनमें है। नित्य अनेक सहस्र सिंह, व्याघ्र, मृग, पशु, पक्षी और मनुष्यों को मार मार वह भोजन करता है और बहुतसे जंगली जीवों को मार मार खाया करता है। ऐसा उसका वृत्तान्त सुन महाराज बोले मैं उसका बध करवाऊंगा। आप लोग निर्भय हो जायँ। उन लोगोंसे ऐसी प्रतिज्ञा कर भाइयोंकी तरफ देखकर बोले कि भाई लवण सुर को कौन मारेगा? किसके जिम्मे वह किया जाय भरत के या शत्रुघ्नके ऐसा प्रभुका बचन सुन भरत बोले कि मैं उसको मारूंगा। भरत का ऐसा बचन सुन शत्रुघ्न सुवर्णके सिंहासनसे उतर पड़े और हाथ जोड़कर बोले हे प्रभो! ये अपना काम कर चुके हैं क्योंकि जब आप बनवास में थे तब इन्होंने अयोध्याकी रक्षाकी थी और आपके वास्ते अत्यन्त दुःखों को भोगा। देखिये नन्दिग्राम में दुःख शयन पर यह सोये, फल मूल भोजन और जटाचीर धारण किया सो इस प्रकार के दुःख को सह चुके हैं। सो अब मेरे रहते फेर यह क्लेशको न प्राप्त हों। ऐसा शत्रुघ्न का बचन सुन महाराज बोले अच्छा अब तुम हमारे कहने पर आरूढ़ हो सुनो। मैं मधुके नगर का तुमको राजा बनाऊंगा। अगर तुम भरत को यहां रखना चाहते हो तो वहां नगर बसाना होगा। देखो तुम शूर बिद्वान् तथा नगर बसाने में भी सामर्थ हो? इसलिये यमुना के तीर और सुन्दर देशों को बसाओ। क्योंकि एक राजा की बस्ती उजाड़ दूसरा राजा उसका प्रबन्ध नहीं

करता वह नरक में जाता है सो तुम उस पापी मधुपुत्र लवणासुर को मार धर्म से राज्य पालन करो । हे शूर ! इस मेरे बचन को बीच में कोई उत्तर प्रति उत्तर मत करना । क्योंकि छोटे भाई को ज्येष्ठ भ्राता की आज्ञा अवश्य माननी चाहिये । इसलिये वशिष्ठ आदि ब्राह्मणों के हाथ से अभिषेक को ग्रहण करो ।

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे पंचषष्टितितमः सर्गः ॥७५॥

ऐसा महाराज का प्रबंध सुन शत्रुघ्न बड़ी लज्जाको प्राप्त हुये और धीरे से बोले । हे रघुनन्दन ! इस बात में अधर्म समझता हूं क्योंकि बड़े भाइयों के रहते छोटा किस प्रकार से अभिषेक के योग्य होता है । परन्तु हे राघव ! आपका शासन दुर्लंघ्य है कौन उसको टाल सक्ता है । इसलिये अवश्यही करना पड़ेगा । तुमसे जो मैंने शासन सुना और बेदोंसे भी यही बात पाई जाती है इसलिये उत्तर मैं न देऊंगा । देखो भरत प्रतिज्ञा कर चुके थे तिस पर मैं बोल उठा कि मैं लवण को मारूंगा तिस घोर दुर्वचन का यह दुर्गतिरूप, फल मुझे मिला । परन्तु ज्येष्ठ के बचन का उत्तर न देना चाहिये क्योंकि उत्तर देनेमें अधर्म है और परलोक बिगड़ता है । हे पुरुष श्रेष्ठ ! जैसी आपकी इच्छा हो तैसा करिये परन्तु राज्याभिषेक में जो कुछ मुझे अधर्म प्राप्त होगा उससे मुझे बचाइये । ऐसा शत्रुघ्न का अंगीकार बचन सुन महाराज भरत और लक्ष्मण से बोले कि अभिषेक की सामग्री ले आओ । इसी क्षत्रमें मैं इनको अभिषिक्त करूंगा और मेरी आज्ञा से पुरोहित महाजनों ऋत्विजों और मन्त्रियों को ले आओ । ऐसी आज्ञा पातेही पुरोहितको अगाड़ी कर अभिषेककेसब संचारको ले राजा और ब्राह्मण भवन में आये । और शत्रुघ्न का अभिषेक होने लगा । जो रामचन्द्र और पुरवासियों का हर्ष देने वाला था । उस समय शत्रुघ्न अभिषेक पाय सूर्य की तरह शोभा को प्राप्त हुये । उस समय पुरवासी, कौशिल्या, कैकेयी, सुमित्रा और २ राजस्त्रियां सब मंगलाचार करने लगीं । उधर यमुना तटवासी ऋषियों ने यह निश्चय

किया कि लवणासुर मारा गया। इसके अनन्तर महाराज अभिषेक पाये शत्रुघ्न को गोद में उठाय एक बाण दे उनके तेज बढ़ाते मधुर बाणी बोले कि यहबाण अमोघ दिव्य और शत्रुको जीतने वाला होगा। हे भाई! इससे तुम लवणको मारोगे।इस बाणको विष्णुने सिरजा है जब वह प्रलयके समुद्रमें सोते जिनको उस समय देव, दैत्य, कोई नहीं देख सकता था। उस समयमधु और कैटभ और सबदैत्योंके नाशके लिये इसे उत्पन्न किया। इसीसे तमाम दुष्टों को मार तीनों लोकको बसाया। हे शत्रुघ्न! लवण के बध कालमें मैंने इसे नहीं चलाया। क्योंकि चलाने से बहुत से प्राणियों का नाश होजाता। शिवने जो शूल मधुको दिया था लवण उसको घरमें रखकर अहार लेने जाता है। उस शूल का वह नित्य पूजन करता है और जब कोई उसे युद्ध की इच्छासे जाकर ललकारता है तब वह उसका नाश कर देता है। सो तुम इस बात का ध्यान रखना कि बिना आयुध लिये और पुना पुरमें पैठेही पुरके फाटक को रोक कर और शस्त्र को ले खड़े हो जाना और उसे ललकारना ऐसा करोगे तब वह मारा जायगा। नहीं तो वह अवध्य ही है और जैसा उपाय मैंने बताया है वैसा करोगे तो उसका बिनास होगा। सो यह सब मैंने तुमको कह सुनाया और शूल का परिहार भी कह सुनाया। क्योंकि भगवान् शिव के सब काम अति कठिन होते हैं।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे षष्टसप्ततितमः सर्गः ॥ ७६ ॥

अब श्री रघुनन्दन शत्रुघ्न से बोले कि ये चार सहस्र घोड़े दो सहस्र रथ, और सौ हाथी, और नगर के मध्य की हाट जो नाना क्रय विक्रय के योग्य पदार्थों से सुशोभित है तथा नर और नर्तक ये सब तुम्हारे साथ जायँगे और तुम दशलक्ष स्वर्णमुद्रा अपने साथ लेते जाओ। धन और वाहन से पूर्ण हो यात्रा करो और हृष्ट पुष्ट और बहुत उद्धत नहीं ऐसी सेना संग में लेलो और मीठे बचन से उनको प्रसन्न रखना, क्योंकि जहां भृत्यवर्ग सुप्रसन्न नहीं रहते वहां न अर्थ, न कुलवधू, न बांधव स्थिर रहते, इसलिये हर्ष युक्त जनों से पूर्ण ऐसी सेनाको किसी

स्थान में स्थापित कर तुम अकेले धनुष हाथ में ले मधुवन में जाना, जिसमें उसको यह न जान पड़े कि यह युद्ध के लिये आता है इसी प्रकार उसका मरण होगा, दूसरा कोई उपाय नहीं है और यदि पहले ही उसने जान लिया कि यह मुझसे युद्ध करने आया है, तो फेर वह क्षणमात्र में मार लेगा। सो तुम ग्रीष्म की समाप्ति और वर्षा के प्रारंभ में उसे मारना वही उसके नाश का समय है, अब महर्षियों को अगाड़ी करके तुम्हारी सेना की यात्रा हो जिसमें कुछ ग्रीष्म रहते ही गंगापार होजाय और नदी के तीर पर सब सेना स्थापन कर धनुष ले शीघ्र चले जाओ। ऐसा प्रभुका बचन सुन शत्रुघ्न सेना प्रधानों को बुलाय उनसे बोले, कि देखो यह तुम्हारे ठिकान नियत किये गये हैं! वहां ही तुम निवास करना जिसमें किसी की हानि न हो,। ऐसी उसको आज्ञा दे और विदाकर आप कौशल्या सुमित्रा और केकई को प्रणामकर तन्दतर महाराज की प्रदक्षिणाकर, लक्ष्मण और भरत को हाथ जोड़ प्रोहित वसिष्ठ को अनवादन कर रामचन्द्र का अनुमोदन पाय फेर प्रदक्षिणा कर शत्रुघ्न ने प्रस्थान किया।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे सप्तसप्ततितमः सर्गः ॥ ५७ ॥

सेना पेस्तर ही चली गई थी, अब सब कार्यों से निवृत्त हो महाराज की आज्ञानुसार शत्रघ्न भी चले बीचमें दो रात्री निवास कर तीसरे दिन बाल्मीकि के आश्रम में पहुँचे और मुनिको प्रणाम कर हाथ जोड़ बोले कि हे भगवन्! मैं महाराज के किसी कार्यके लिये आया हूं और आज के दिन यहां रहना चाहता हूं और कल्ह पश्चिम की यात्रा करूंगा। यह बात सुन मुनि बोले कि हे महायशस्विन् तुम्हारा स्वागत हो और रघुबंशियों के कुल का आश्रम है इसको अपना ही समझो और आसन पाद्य अर्घ्य जो मैं देता हूं इसको निशंक होकर ग्रहण करो। ऐसा मुनि का बचन सुन और मुनिके अतिथ्य को पाय और फल मूल भोजन कर शत्रघ्न तृप्त हुये और पूछने लगे कि हे भगवन्! इस आश्रम के समीप में पूर्व की ओर यह यज्ञ सूचक

स्तम्भ जो देख पड़ते हैं वह किसके हैं ? ऐसा बचन सुन मुनि बोले कि हे शत्रुघ्न ! तुम्हारे कुल में एक राजा सौ हास हुये और उनके पुत्र वीर्यवान् और अति धार्मिक वीर्यसह नाम थे। वे राजा बाल्यावस्था ही में मृगया में तत्पर थे सो एक समय की बात है कि राजाने बनमें घूमते घूमते दो राक्षसों को देखा, जो भयंकर व्याघ्र का रूप धर बहु सहस्रों मृगों को खाते तिसपर भी तृप्ति को प्राप्त नहीं होते थे और वह बन मृग रहित हो गया। ऐसी दशा देख राजा ने महाक्रुद्ध हो बाण से एक राक्षस को मोरडाला। उसे मार कर राजा सौहास उस मरे राक्षस की तरफ देखने लगा। तब राजा की ओर देख देख दूसरा राक्षस बड़े संताप को प्राप्त हो नृपसे बोले कि हे पापिष्ठ! जिस लिये तूने बिना अपराध मेरे साथी को मारा है इसलिये मैं तुझसे बदला लूंगा। इतना कह वह राक्षस अन्तरध्यान होगया। अब कुछ काल बीते उस राजा का पुत्र वीर्यसह नाम राजा हुआ और इसी आश्रम के समीप में उसने अश्वमेध करना आरंभ किया और उस यज्ञकी रक्षा में वशिष्ठ मुनि तत्पर थे और वह यज्ञ बड़ी धूम धामसे बहुत वर्ष पर्यन्त और बड़ी समृद्धि से युक्त देवयज्ञ के सदृश्य होता था। अब वही राक्षस जो बच गया था पूर का बैर स्मर्ण कर और वशिष्ठ का रूप धारण कर राजा के पास आय कर बोला कि आज इस यज्ञ की समाप्ति में मांस के सहित मुझे भोजन देओ। ऐसा उस कपटी का बचन सुन उसके छल को न जानते राजा ने रसोइयों को जो पाक कर्म में बड़े चतुर थे बुलाकर कहा कि आज मांस सहित हविष्य अन्न शीघ्र बनाओ और गुरुको खिलाओ। जिसमें वे सन्तुष्ट हों ऐसी राजा की विलक्षण आज्ञा पाय वह लोग घबरा उठे परन्तु स्वामी की आज्ञा किस प्रकार से टालै। इधर राक्षस दूसरे रसोई-दार का रूप धारण कर और पाकशाला में जा अन्न के सहित मनुष्य का मांस पकाय कर राजाके पास जायकर बोला कि हे राजन्! देखिये मैंने अति स्वादु हविष्य अन्न और मांस प्रस्तुत कर रक्खा है। तब राजा

ने अपनी स्त्री दमयंती के सहित सपत्निक वसिष्ठ को बुलाय उस अन्नको निवेदन किया । जब वसिष्ठ भोजन पर बैठे तब उन्हें जान पड़ा कि यह मनुष्य का मांस है । तब तो मुनि परम क्रुद्ध हो उस वीर्यसह से बोले कि राजन् जिस लिये तू मुझे ऐसा भोजन देना चाहता है इसलिये यह तेरा भोजन होगा । तब राजा ने भी क्रुद्ध हो हाथ में जल ले वसिष्ठ को शाप देना चाहा, परन्तु रानी ने उसको रोककर कहा कि हे राजन्! वसिष्ठ हमारे प्रोहित है इनको शाप देना उचित नहीं है क्योंकि ये हमारे लिये देव तुल्य हैं । तब राजा ने उस क्रोधमय और तेज बलसे युक्त जल को अपने पैर पर डाल लिया और उस जलके गिरने के राजा के दोनो पैर काले हो गये । तबसे वह राजा कल्मष पाद इस नाम से विख्यात हुआ । तब राजा मुनिसे प्रार्थना करने लगे तब मुनिने ध्यान पूर्वक सब कर्म राक्षस का जान कर बोले कि हे राजन्! क्रोध के कारण जो मेरे मुख से निकल गया सो अन्यथा नहीं हो सकता । परन्तु मैं तुझे वर देता हूं बारह वर्ष में इस शाप का अन्त हो जायगा । जब तुम शापसे मुक्त होजाओगे तब तुम्हे बीती बात का स्मर्ण न रहेगा । इस प्रकार उस राजाने उस शाप का फल भोगकर पीछे से फेर राज्य पाया । और प्रजाका यथोचित पालन किया । सो हे रघुनन्दन ! उसी कल्मषपाद राजाका यह पञ्चस्थान है ।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे अष्टसप्ततितमः सर्गः ॥ ७८ ॥

जिस रात्री को शत्रुघ्न ने पर्णशालामें वास किया उसी रातमें सीता को दो पुत्र उत्पन्न हुये । अर्धरात्री के समय मुनि बालकों ने आकर वाल्मीकि मुनि को यह समाचार सुनाया । कि हे भगवन्! राजपत्नी को दो पुत्र हुये । ऐसा बालकों का बचन सुन महर्षि वहां गये जहां वे दोनों बालक चन्द्र के सदृश प्रकाशमान हुये थे । मुनि ने कुशमुष्टि और लव से उन दोनोंकी रक्षा वृद्ध मुनि पत्नियों से करवाई । इसलिये यथा क्रम कुश और लव उन दोनों के नाम

हुये । उसके उपरान्त उन्हीं वृद्धाओं ने गोत्र का और रामचन्द्र के नाम का कीर्तन किया । उसी समय समाचार को पाय शत्रुघ्न सीताजीके पर्णशाला में जाय बोले कि हे मातः यह बड़े ही आनन्द की बात हुई । इस प्रकार शत्रुघ्न की वह श्रावण मासकी रात्री अति शीघ्र बीत गई और प्रातः! काल के समय पूर्वान्हकालकी क्रिया और मुनिको प्रमाण करके पश्चिमकी तरफ प्रस्थानित हुये । सप्तरात्री मार्ग में निवास कर यमुनाके तटपर पहुंच उन पुण्यकीर्ति मुनियों के आश्रममें टिके वहां भार्गव इत्यादि महर्षियों की अतियोग्य कथाओं को सुनते वास करने लगे ।

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे नवसप्ततितमः सर्गः ॥७९॥

अब रात्री के समय शत्रुघ्न भृगुनन्दन च्यवनसे लवण के बल के विषय में पूछने लगे और बोले कि हे मुनि! उसके शूल का प्रभाव कैसा है और युद्ध में कितने लोग उस शूल से मारे गये । ऐसा शत्रुघ्न का बचन सुन च्यवन मुनि बोले । हे रघुनन्दन! उस शूल से असंख्य कर्म हुये । परन्तु इक्ष्वाकु कुलके विषय में जो हुआ सो सुनो पूर्वकाल में अयोध्या का राजा युवनाश्व का पुत्र मांधाता नाम हुआ जो महा बली और त्रैलोकी में महावीर्यवान् विख्यात था । उसने संपूर्ण पृथ्वी मंडल को अपने बस में कर स्वर्ग लोकको जीतने का उद्योग किया । इस बातको सुन इन्द्र और सब देवतों को भी बड़ा भय उत्पन्न हुआ । तब राजा से इस बात पर प्रण ठहरा कि इन्द्र का अर्द्धासन और अर्द्ध राज्य पावैं और देव लोक इनके समीप झुकै । इस प्रकार की प्रतिज्ञा जब ठीक होगई तब राजा स्वर्ग में गये परन्तु इन्द्र इनका यह दुष्ट चरित्र देख धीरे से इनके प्रति बोले । कि हेपुरुष श्रेष्ठ! अभीतो आप संपूर्ण पृथ्वी के राजाही राजा न हुये और संपूर्ण पृथ्वी को बिना बशमें किये किस प्रकार देव राज्य की आकांक्षा करते हो । सो हेवीर ! पहिले संपूर्ण पृथ्वी को अपने बश में करलेओ तब अपने भृत्य सैन्य और वाहनों के सहित देव राज्य करो । ऐसा देवराज्य का बचन सुन मांधाता बोला

कि हेशक्र! पृथ्वी मंडल में ऐसा कौन है जो मेरी आज्ञाके विरुद्ध करता है। ऐसा बचन सुन सुरेन्द्र बोले कि देखो मधु का पुत्र लवण तुम्हारे वश में नहीं हैं। ऐसा अप्रिय बचन सुनतेही मांधाता लज्जित हो नीचे मुख कर कुछ उत्तर न दे सका और इंद्र से बिदा हो फेर भूमंडल पर आये और हृदय में तो क्रोध भरा था ही सेना ले झट लवणासुर पर चढ़ दौड़ा। पहिले उसके पास दूत भेजा, दूत वहां जाय बहुत अप्रिय बचन बोलने लगा। तब उस लवण ने क्रोध को प्राप्त हो उस दूत को भक्षण कर लिया। जब दूत लौटकर न आया तब राजा ने मारे बाणों के उस राक्षस को पीड़ित कर दिया। तब उस राक्षसने उसी शूल को राजा और सैना के नाश के लिये चलाया। सो उस शूल ने आकर राजा समेत तमाम सैन्यका नाश कर दिया। और फेर दैत्य के पास लौट गया सो हेरघुन्दन! इस प्रकार वह महान् राजा उस शूलसे मारा गया उस शूल का बल बड़ा प्रबल है। कल्ह प्रातःकाल वह मांस लेने जायेगा तब तुम चैतन्य रहना॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे अशीतितमः सर्गः॥ ८०॥

इसीप्रकार कथा वार्तामें रात्रि बीतगई प्रातःकाल हुआ और प्रातःकाल में वह राक्षस अपने अहारके लिये नगर के बाहर निकला। इतनेमें शत्रुघ्न यमुना नदीके पार हो हाथमें धनुष ले मधुपुरके फाटक पर जाय सन्नद्ध हो खड़े होगये। अब मध्यान्ह कालमें वह दुष्ट राक्षस कई सहस्र जीवोंका भार लिये आय पहुंचा और देखा कि द्वार पर धनुषलिये शत्रुघ्नखड़े हैं! तब राक्षस बोला इस धनुषसे क्या करेगा। हेनराधम! ऐसे आयुधधारी सहस्रों मैंने खाय डालें। अच्छा भया कि तू समय पर आया। हेपुरुषाधम दुर्मते! मेरा पूर्ण अहार रूप तू क्यों मेरे मुख में स्वंय आय कर घुसा। जब कि वह इस प्रकार कटु बचन बकने और हास्य करने लगा उस घड़ी मारे क्रोध के शत्रुघ्न के दोनों नेत्र रक्त वर्ण होगये और शरीर से चिंगारियां निकलने लगी तब शत्रुघ्न बोले। हेकुबुद्धे! मैं तेरे साथ द्वन्द युद्ध चाहता हूं। मैं दशरथ का पुत्र और राम का भ्राता हूं और मेरा

नाम शत्रुघ्न है और मैं तेरे बधकी इच्छा करके आया हूं। अब तू मेरे हाथ से बचकर जीता न जाने पावेगा। ऐसा शत्रुघ्न का बचन सुन राक्षस हंसकर बोला। बड़ी अच्छी बात है बड़े भाग्य से तू आया है। देख मेरे मौसा रावण को एक स्त्री के वास्ते तेरे भाई राम ने मार डाला परन्तु रावण के कुल का क्षय मैं अपने दृष्टि पर नहीं लाया और लाकर के भी क्षमा करदिया। मैंने बड़े बड़े शत्रुओं को मार डाला, सो तू क्षण मात्र खड़ा रह मैं अपना शस्त्र लेकर अभी आता हूं और जो तू युद्ध चाहता है सो मैं अभी दूंगा। तब शत्रुघ्न बोले अब तू मेरे साम्हने से जीता नहीं जा सक्ता। चतुर लोग साम्हने आये हुये शत्रु को नहीं छोड़ सक्ते और जो मूढ़बुद्धि हैं वह शत्रु के अवकाश देते हैं। इसलिये इस जीव लोक को भली भांति देख ले। तुम तीनों लोक के और रघुबंश के भी शत्रु हो इससे इसी क्षण मैं मारे बाणों के तुम्हें यमराज की पुरी में पहुंचाय देता हूं॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे एकाशीतितमः सर्गः॥ ८१॥

ऐसा शत्रुघ्न का बचन सुन उसने अति क्रोध किया और कहा खड़े रहो और मारे क्रोध के वह हाथ से हाथ और दांत से दांत रगड़ने लगा। अब उस लवण के प्रति शत्रुघ्न बोले जैसे तुमने औरों को जीत लिया वैसे शत्रुघ्न को न समझना। आज मैं तुम्हें मृत्यु के मुख में करता हूं। हेपापी! मेरे हाथ से आज ऋषि, ब्राह्मण, तुझे मरा हुआ देखेंगे जैसे राम के हाथ से रावण को मरा हुआ देखा था, तब देश में मंगल होगा। देख मेरे हाथ से छुटा बाण तेरे हृदय को आज चीर डालेगा। ऐसे बचन सुन लवण क्रोधित हो शत्रुघ्न पर एक महान् वृक्ष उखाड़ कर मारा परन्तु उन्होंने उसके सैकड़ों टुकड़े कर डाले। अब उस प्रहार को निष्फल देख वृक्षों की वृष्टि करने लगा और शत्रुघ्न उसे काटने लगे तथा राक्षस पर बाणों की वृष्टि करने लगे। तब उसने घुमाकर धोखे से एक वृक्ष शत्रुघ्न के सिर पर मारा जिससे वे अचेत हो भूमिपर गिर पड़े, इनके गिरने पर ऋषियों और देवताओं में बड़

हाहाकार मचा । इनके मुर्छा के अवसर पर भी वह घर शूल लेने न गया । क्योंकि वह अपने मनमें यही समझता था कि यह क्या चीज है इसको तो मैंने योंही मार लिया । और शत्रुघ्न को मरा जान अपने भक्षजंतुओं को घर जाने के लिये समेटने लगा, परन्तु महूर्त मात्र में शत्रुघ्न सचेत हुये और अपने अस्त्र को संभाल उसी अमोघ बाण को जो अपने तेज से दशों दिशा को प्रकाश करता, किसी स्थल में जिसने पराजय नहीं पाया, रुधिर रूप चंदन से लीपा हुआ, सुन्दर दानवेन्द्र अचलेन्द्र और दैत्यों के लिये दारुण और प्रलय के कालाग्नि के सदृश प्रदीप्त अपने धनुष पर चढाया । जिसका तेज देख सब प्राणी देव, गंधर्व, यक्ष, व्याकुल होकर ब्रह्मा के पास गये और इस विपत्ति को कह सुनाया । तब ब्रह्मा बोले तुम्हारे लोगों के ही हेतु लवण को मारने के वास्ते शत्रुघ्न ने धनुष पर चढाया है उसी के तेज से तुम लोग मूढ़ होगये हो । हेवत्स ! यह लोक के कर्ता देव देव श्रीविष्णु का तेजोमय बाण है । जिसके द्वारा तुम भयभीत हो रहे हो यह बाण प्रभु ने मधुकैटभ के मारने को बनाया था । इस बाण को केवल वेही जानते हैं यह बाण रूप उनका पूर्व शरीर है । सो तुम लोग जायकर देखो कि वह लवणासुर उस बाण से भाग जाता है । ऐसा ब्रह्मा का बचन सुन वे सब वहां आये जहां वे दोनों युद्धकर रहे थे और शत्रुघ्न के हाथ में वही कालाग्नि के सदृश्य बाण को देखा । जब शत्रुघ्न ने देखा कि देवों से आकाश पूर्ण होगया तब सिंहनाद करके लवण की ओर देख और ललकारा तथा कान तक प्रत्यंचा को खींच उस बाण को उनकी छाती में मारा और वह बाण उस राक्षस के वक्षःस्थल को विदीर्ण कर रसातल में घुस गया और फेर वहांसे निकल रघुनन्दन के तूणीर में आय गया । उस प्रहार से लवण प्राण रहित कटे वृक्ष की तरह गिर गया और वह शूल भगवान् शिव के पास चला गया । इस प्रकार शत्रुघ्न ने एकही बाणसे त्रैलोक्य के भय को

दूर कर भगवान् सूर्य की तरह प्रकाशमान् हुये। देवते आकाश में से पुष्प वृष्टि करने लगे॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे द्व्राशीतितमः सर्गः॥८२॥

लवण के मारे जाने पर इन्द्र अग्नि आदि देवते आकर शत्रुघ्न से मधुर वाणी बोले। इस दुष्ट के मारे जाने से बड़ा आनंद हुआ इस से तुम वर मांगो तुम्हारे विजय की आकांक्षा से आते हैं हमारे दर्शन अमोघ हैं। तब शत्रुघ्न बोले कि यदि आप लोगो के यही इच्छा है तो यही मेरे लिये बहुत है कि यह पुरी शीघ्र बस जाय। ऐसा सुन "एवमस्तु" ऐसाही होगा कहकर सब स्वर्ग को चले गये। शत्रुघ्न ने जो सेना दूर छोड़ दी थी उसे वहां ले आये। सब सेना एकट्ठी हुई और श्रावण में उन्होने उस पुरी को बसाने का आरंभ किया। बारह वर्ष में वह पुरी अच्छी तरह बस गई। उस पुरी और देश में अन्नों से पूर्ण क्षेत्र समय पर वृष्टि रोग रहित और बीर पुरुष वहां देख पड़ने लगे। यह पुरी यमुना के तीर पर अर्द्धचन्दाकार बसी हुई और सुन्दर सुन्दर गृहों, हाटों, और नाना प्रकार के बाणिज्यों से सुशोभित जिस भवन को लवण ने स्वेत रंग से रंगा था उसे शत्रुघ्न ने सुन्दर रंग से रंगवाया। अच्छे अच्छे उद्यानो से सुशोभित थी। वह पुरी नाना प्रकार के बाणिज्यों से भरगई। यहां तक कि नाना देश के मनुष्य व्यापार के लोभ से आने लगे। इस प्रकार उस पुरी को बसी हुई देख शत्रुघ्न अति हर्षित हुये। उनके मनमें यह संकल्प उठा कि बारहवां वर्ष है चलके रामचन्द्र के चरणों को देखूं॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे त्र्यशीतितमः सर्गः॥८३॥

अब थोड़े से मनुष्यों को साथ ले शत्रुघ्न अयोध्या को चले सौरथ जिनमें उत्तम घोड़े जुते थे साथ ले लिया। सात आठ रोज मार्ग में टिकान करके बाल्मिकी के आश्रम में पहुंच गये। वहां निवास किया और मुनिको प्रणाम कर और उससे अर्घ्य पाद्य पाथ सुख पूर्वक वहां टिक रहे और मुनि अनेक प्रकार की मधुर कथाओं को कहने लगे। और लवण के बध के विषय में बोले कि तुमने खेल

वाड़ही से उसको मारा। तुम्हारे तेज से जगत का भय शांत हुआ। रावण के बध करने में बड़ा प्रयत्न करना पड़ा और तुमने उस से भी भारी दैत्यको सहज में मार गिराया। तुम देवताओं और संसार के मनुष्यों के अति प्रीति भाजन हुये। हे राघव! जिस समय यह युद्ध हो रहा था उस समय मैं इन्द्र की सभा में बैठा था और मैंने सब देखा इससे मुझे अत्यन्त प्रीति उत्पन्न हुई है सो मैं तुम्हारे मस्तक को सूंघूंगा। यही स्नेह की सबसे बढ़के बात है। ऐसा कह मुनिने सत्रुघ्न का मस्तक सूंघा। इसके बाद उनका अतिथि सत्कार किया। रात्री में संस्कृत में वीणा और मृदंग के वाद्य सहित रामचंद्र का चरित्र गान होने लगा जिसे सुनकर शत्रुघ्न और उनके सब अनुचर चकित हो गये। परन्तु यह नहीं मालुम भया कि यह गान कहां पर हो रहा था। शत्रुघ्न ने इस विषयमें कुछ पूछना भी उचित न जाना। और मुनिको प्रणाम करके सैन करने चले गये।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे चतुरतितस सर्गः ॥ ८४ ॥

अब शत्रुघ्न विस्तरे पर सोये परन्तु बहुत रात्री तक रामचरित्र और संगीत सुनते रहे सो कर उठे तो प्रातःकाल होगया था। उठकर प्रातःकृत्य से छुट्टी पाय हाथ जोड़ मुनिसे बोले। हे भगवन्! मैं अब रामचन्द्र का दर्शन करना चाहता हूं सो मुझे आज्ञा दीजिये। ऐसा सुन मुनिने शत्रुघ्नको गले लगाय विदा किया। शत्रुघ्न प्रमाण कर झट रथ पर सवार हो अयोध्या चले। क्योंकि इन्हें रामचन्द्र के दर्शन की परम उत्कंठा थी। अब शत्रुघ्न अयोध्या में पहुंचे और जहां रामचन्द्र मंत्रियों के सहित बैठे शोभा को प्राप्त हो रहे थे वहां जा भगवान् को प्रणाम कर हाथ जोड़ बोले कि महाराज की आज्ञानुसार मैंने सब काम किया, लवणको मारा, पुरी बसाई और बारह वर्ष बिताये, सो हे प्रभु आपके बिना मुझे रहने का उत्साह नहीं होता। सो हे प्रभु अब मेरे ऊपर दया कीजिये। ऐसा बचन सुन भगवान् बोले वत्स! विषाद न करो क्योंकि यह बात क्षत्रिय धर्मके विपरीत है।

देखो राजा लोग प्रकासों में खेद नहीं करते किन्तु धर्म से प्रजा पालते हैं। समय समय पर तुम मुझसे मिलने आ जाया करो फेर मिलकर चले जाया करो। तुम मुझे प्राणों से भी प्रिय हो, परन्तु प्रजा का पालन करना भी तो आवश्यक है। अस्तु सात रात्री तुम मेरे पास रहो बाद अपने भृत्यों बाहनों को लेकर पुरी में चले जाना। इस प्रकार महाराज की धर्म युक्त आज्ञा सुन और सात दिन रह शत्रुघ्न भरत लक्ष्मण तथा रामचन्द्र और माता आदि से विदा हो रथपर सवार हो चले गये। भरत और लक्ष्मण प्रेमवस पैदल उनके साथ गये और कुछ दूर तक पहुंचा कर लौट आये।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे पंचाशीतितमः सर्गः ॥ ८५ ॥

इस प्रकार शत्रुघ्नको बिदाकर आनंद पूर्वक रामचन्द्र राज करने लगे। कुछ दिन बाद एक अयोध्या बासी वृद्ध ब्राह्मण मृत बालक को ले द्वार पर आया और अत्यन्त दुःख पूर्वक रोने और चिल्लाने तक अनेक प्रकार के बचनों को कहने लगा। तथा बोला कि क्या मैंने पूर्व जन्म में एसा पाप किया था जो एकी एक पुत्र को मैं मरा देखता हूं। देखो इसने जवानी न देखी और आकाल में मरण को प्राप्त हुआ सो हे पुत्र! अब थोड़ेही दिन तेरे शोक सो मैं और तेरी जननी भी मरणको प्राप्त होंगे। मैं विचारता हूं कि क्या कारण जो यह बालक पिता के मरण क्रिया किये बिना यमलोक में प्राप्त हुआ। ऐसा पूर्वकाल में मैंने न देखा और न सुना। रामचन्द्र के राज्य में ऐसा घोर अनर्थ देख पड़ता है इसमें कोई रामचन्द्रका भारी दुसकर्म है। जिससे कि बालक को मृत्यु आकर घेरती है क्योंकि और देशों में यह बात नहीं दीख पड़ती। सो हे राम इस बालक को जिलाइये नहीं तो पत्नी सहित अनाथ की भांति मर जाऊँगा तब ब्रह्म हत्या लेकर आप सुखी होंगे। राजा के दोष से प्रजा पर विपत्ती आती है। जो राजे बिधि पूर्वक प्रजाका पालन नहीं करते और जब राजा दुराचारी होता है तब अकाल में लोग मरते हैं। पुरों और देशों

में जब लोग उचित आचरण नहीं करते तब प्रजा की रक्षा नहीं होती और काल कृत दोष उत्पन्न होता है । सो मैं इस विषय में अवश्य राज दोष ही समझता हूं । क्योंकि अन्यथा इस बालक का बध नहीं हो सकता, इस प्रकार वह अनेक प्रकार के वचनों से वह राजा को दोष और ओरहना देता, तथा मृत लड़के को बार बार गले लगाता । भगवान् सब बातों को जानते हैं परन्तु संसार के दिखाने को लीला कर रहे है ॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे षडशीतितमः सर्गः ॥ ८६ ॥

इस प्रकार भगवान् ने उस ब्राह्मण का बिलाप दुःख और शोक श्रवण कर मंत्रीयों को और बसिष्ठ बामदेव और महाजनों को सभा में बुलवाया तदन्तर बसिष्ठके साथ आठ ब्राह्मण सभा में आये बोले कि महाराज का अभ्युदय हो । फेर मारकंडे मौद्गल्य, वामदेव, कश्यप, कात्यायन, जाबलि गौतम और नारद ये सब आसन देकर बैठाये गये और महाराजने इन महर्षियों को हाथ जोड़कर प्रणाम किया, मंत्री और महाजनों को यथोचित प्रतिष्ठा की और सब कोई बैठ गये तब महाराज ने उसी ब्राह्मण के लड़के की चर्चा निकाली, उस बात को सुनकर और महाराज को दुःखित देख कर नारद बोले—हेराजन् ! अकाल में जो इस बालक का नाश भया है उसके विषय में सुनिये फेर इस विषय में जो कर्तव्य हो सो कीजिये । पहिले सत्ययुग में ब्राह्मण ही तपस्वी होते थे और कोई दूसरा नहीं उस युग में ब्राह्मण ही प्रधान और अज्ञान रहित थे और लोग मृत्यु रहित हो बहुत काल पर्यन्त जीते थे । फेर त्रेतायुग प्रारंभ हुआ । जिसमें तपोबल से युक्त क्षत्री लोग भये और उस काल में भी वेही महात्मा मनुष्य देख पड़ते थे । ब्राह्मण क्षत्री का समुदाय इन दोनों युग में देख पड़ता था । अब लोगों ने सर्व लोक संमत चारो वर्ण का स्थापन किया । इसी त्रेतायुग में अधर्म ने एक पैर पृथ्वी पर रक्खा, इसी से सबका तेज मंद होगया । पहिले लोग बिना जोते बोये खाते थे, । अब ऋषीरूप व्यापार हुआ, अब मनुष्यों की आयुष्य परमित हो गई । जब पाप ने एक पैर रक्खा तब लोग सन्य धर्म में तत्पर होगये

और अच्छे कर्म होने लगे। ब्राह्मण क्षत्री की शुश्रुषा में शेष दो वर्ण तत्पर होगये। चारों वर्णों का जो धर्म था उसी अनुसार लोग लगे रहते थे। शूद्र का यही काम था कि तीनों वर्णों की सेवा करै इस बीच में पिछले दो वर्णोंका जब अनरीत बढ़ा तब पहिले दो वर्ण घट गये और अधम ने दूसरा पैर रक्खा तब उस युग का नाम द्वापर हुआ। अब द्वापर में अधर्म और अनृत दोनों बढ़ चले और तीसरा वर्ण भी तपस्या करने लगा। क्रम से तीनों वर्ण तपस्वी हुये, तीनों युगों में तीनों वर्ण का धर्म ठीक ठीक रहा। शूद्र इन तीनों से प्रथक रहा। कलियुग में शूद्र भी तपस्या करता है। सो मुझे मालुम होता है कि आप के में कहीं कोई शूद्र घोर तपस्या कर रहा है, इस कारण से यह बालक मरा जिस राजा के राज्य में अनीति होती है वहां रोग और मृत्यु आती है और जो राजा धर्म पूर्वक प्रजा पालन करता है वह प्रजा के धर्म के छठे भाग को पाता है। इससे हेराजन्! आप इसकी खोज करिये। ऐसा पाप कर्म जहां देख पड़े उसकी शांति कीजिये। ऐसा करने से यह बालक जी उठेगा। जिसके स्वांस मात्र से संसार का पालन और प्रलय होता है वही लीला रूप धारण करके ऋषियों का उपदेश सुन रहे थे॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे सप्ताशीतितमः सर्गः॥ ८७॥

श्रीरामचन्द्र नारद की इस बात से बहुत प्रसन्न हुये और लक्ष्मण से बोले कि लक्ष्मण तुम जायकर उस ब्राह्मण को अश्वासन देकर उस मृत बालक के शरीर को तैल में रखवा देओ जिसमें उसका शरीर नष्ट न होने पावे, यह काम बड़ी सावधानी से करना। ऐसा लक्ष्मण को सहेज आप भगवान ने पुष्पक का स्मर्ण किया स्मर्ण करतेही वह आन कर उपस्थित हुआ। तब प्रभु धनुष तरकस और खड्ग लेकर उस पर सवार हुये भरत और लक्ष्मण को नगर रक्षाका भार भी देदीया और आप उस अविचार को ढूढने लगे उस दिशा में कहीं न पाकर, उत्तर दिशा को गये। वहां भी न देखा, तब पूरब दिशा में ढूंढ़ने लगे। परन्तु वहां भी कुछ न दिखाई पड़ा। तब महाराज ने दक्षिण की तरफ प्रस्थान

किया। वहां विंधगिरी के एक भाग शैवल नाम पर्वत पर एक बड़ा भारी सरोवर देखा और वहां एक तपस्वी को तपस्या करते देखा। जैसा की आज तक कोई ऋषि को भी न देखा था। जो कि नीचे माथा किये पेड़ से लटक रहा था। तब रामजी उसके पास जाकर बोले—हेसुव्रत! तुम धन्य हो। कहो तो सही तुम किस योनी में उत्पन्न हुये हो! और तुम्हारा क्या अनिष्ठहै, क्या तुम स्वर्ग चाहते हो? अथवा कोई दूसरे वस्तु की अभिलाषा से ऐसा घोर तप कर रहे हो। यह कार्य अति कठिन है। तुम सच सच बतलाओ कि किस योग में उत्पन्न है, क्योंकि तुम तपनेष्ठ हो॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे अष्टाशीतितमः सर्गः॥ ८८॥

ऐसा प्रभु का बचन सुन वह मुनि नीचेही मुख किये बोला। हेप्रभुक! मैं शूद्र हूं, मैं इस शरीर से स्वर्ग जाने की कामना से ऐसी उग्र तपस्या कर रहा हूं। हेप्रभु! मैं देव लोक की प्राप्ति की इच्छासे मिथ्या नहीं बोलता मेरा नाम शंबुक है। ऐसा उसका सुन महाराज ने झट कोश से उस प्रभाववान् खड्ग को निकाल उसका मस्तक काट डाला और उसके मस्तक को काटतेही इन्द्र इत्यादि देवते धन्य धन्य कहने लगे और रामचन्द्रकी प्रशंसा करने लगे। ऊपर से अति दिव्य पुष्पों की वर्षा होने लगी और प्रसन्न हो देव लोग बोले—हेराघव! देवोंका यह एक बड़ा भारी काम आप ने किया। अब जो वर चाहिये सो लीजिये यह शूद्र जाति हमारे स्वर्ग में नहीं आने पाया यह बड़ा भारी कार्य हुआ। ऐसा बचन सुन श्रीरामचन्द्र बोले—हेदेवगणों! मैं यही चाहता हूं कि वह मरा हुआ ब्राह्मण पुत्र जी उठे। आप लोग वर देना चाहते हैं तो यही वर दीजिये क्योंकि मेरेही दोष से उस ब्राह्मण का एकही बालक असमय में मरण को प्राप्त हुआ है और मैं उस ब्राह्मण से प्रतिज्ञा कर आया हूं कि तेरे बालक को जिला दूंगा। सो आप लोग ऐसा करिये जिसमें मैं मिथ्यावादी न होऊं। ऐसा प्रभु का बचन सुन सब देवते प्रीति पूर्वक बोले—हेराघव! आप अब लौट जाइये। वह बालक तो उसी

समय जी गया जब कि इस शूद्र का शिरच्छेदन हुआ। उसके घरवालों और उसके बन्धुओंने उसे ग्रहण कर लिया। हेरामचन्द्र! आपका मंगल हो अब हम लोग अगस्तमुनि के आश्रम में जायँगे। क्योंकि उन महर्षि की व्रतदीक्षा समाप्त भई है। वे जलशयन करते थे सो आज बारह वर्ष बीत गये। सो यदि इच्छा हो तो आप भी चलिये। ऐसी उन देवताओं की बात सुन और अंगीकार कर महाराज विमान पर सवार हुये। आगे आगे देवों का विमान चला पीछे पीछे रामचन्द्र इस प्रकार मुनि के आश्रम में पहुंचे। मुनि ने देवों को देख उनका पूजन किया और देव लोग स्वर्ग को चले गये। तब रामचन्द्रजी ने बिमान से उतर मुनि को प्रणाम किया और मुनि ने अति प्रसन्नता पूर्वक राघव का सत्कार किया, तब अगस्त मुनि बोले—हेराघव! आपका स्वागत हो बड़े आनंद की बात है जो आप आये। हेरामचन्द्र आप अपने गुणोंसे हमारेबड़े प्यारे अतिथी पूजनीय और हृदयबासी हैं। देवतों ने आपके आने का संदेशा पहिले दियाही हमको और आपने अपने धर्मसे विप्र बालक जीवान्त किया। सो हे राघव! आज की रात मेरे आश्रममें रह जाइये। कल्ह प्रातःकाल पुष्पक पर चढ़ अपनी पुरी को पधारियेगा और मेरी भेंट विश्वकर्मा के बनाये यह दिव्य आभूषण को लीजिये। जो अपने तेज से प्रकाशित हो रहा है। आप यदि ग्रहण करेंगे तो मुझे बड़ा हर्ष होगा, फेर पाई हुई चीज का दान अति फलदायक होता है। इस आभूषण के धारण करने के योग्य आपही हैं। इसलिये इसको लीजिये। मुनिका बचन सुन महाराज बोले कि यह प्रतिग्रह ब्राह्मणों के लिये आनन्दित है, परन्तु क्षत्री किस प्रकार प्रतिग्रह ग्रहण कर सक्ते हैं। सो भी ब्राह्मण का दिया हुआ। इस बात का पहले मुझे प्रति उत्तर दीजिये। तब मुनि बोले कि हे राजन्! जो मैं कहता हूं सो सुनिये। पहले सत्ययुग में प्रजालोग बिना राजा ही के थे, और देवतों में साधारण रूप इन्द्र थे सब मनुष्य ब्रह्मा के पास गये और जाकर बोले कि तुमने देवों का राजा तो इन्द्र बनाया, परन्तु हमे भी एक राजा

देओ । जिसकी पूजाकर हम लोग सुख से रहें, बिना राजा हम नहीं रह सकते । तब ब्रह्मा से इन्द्र आदि लोकपालों को बुलाया, और कहा कि अपने अपने अंशों में से कुछ कुछ भाग देओ । ऐसी ब्रह्मा की आज्ञा पाय, देवों ने अपने अपने तेज में से कुछ कुछ अंश दिया, तब ब्रह्मा छींके और उनकी छींक से एक पुरुष उत्पन्न हुआ, जिसका नाम छुप हुआ । तब ब्रह्मा ने देवांस भी संयुक्त कर दिया । उन देवांशों में से राजा इन्द्र के भाग से आप आज्ञा देना वरुण के भाग से शरीर को पुष्ट करना कुबेर के भाग से प्रजाओं को धन देना, यम के भाग से प्रजाओं का शासन करना सो आप इन्द्र के भाग से यह अमरण लीजिये । ऐसा बचन सुन रघुनंदन ने उस आभूषण को जो विचित्र और सूर्य की भांति चमक रहा था लिया और पूछा कि हे ऋषे ! यह आपके पास कहां से आया !

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे नवाशीतितमः सर्गः ॥ ८९ ॥

हे रामचन्द्र ! इस त्रेतायुग के पूर्व काल में एक बन जो चारो ओर सौ योजन पक्षी औ मृग से रहित था उसमें मैं तपस्या करने लगा और मैंने चाहा कि इस बनका थाह लूं कि यह कितना बड़ा है, परन्तु पता न पाया । हे राघव ! उस बन में फल मूल अति स्वादू और विविध प्रकार के जंगल देख पड़ते थे । सो उसमें एक तालाब चार कोश के विस्तार का था, जिसमें हंस, चक्रवाकों से सुशोभित, कमल और कुमुदन के पुष्पों से पूर्ण उसका जल भी अति स्वादु उसके समीप एक प्राचीन आश्रम था परन्तु उसमें कोई भी तपस्वी न था । सो हे रामचन्द्र ! मैं ग्रीष्मकाल की एक रात्री में टिक रहा प्रातःकाल के समय उस सरोवर के तीर पर गया । वहां एक मृत शरीर को पड़ा मैंने देखा, सो मैं एक महूर्त भर खड़ा सोंचा किया, इतमे में क्या देखता हूं कि ऊपर से एक बिमान जो अति विशाल हंसयुक्त था उतरा, उस पर एक स्वर्गीय पुरुष देखने में आया, जिसके साथ सहस्र अप्सरा दिव्य भूषणों को पहिने कोई गाती कोई मृदंग बीण और ढोलक बजाती,

और कोई नाचती, कोई चंवर डुलाती, थीं। इतने में वह पुरुष अपने सिंहासन को छोड़ नीचे उतरा, और मैं देख रहा कि उसने मुरदे के शरीर को जो बड़ा मोटा था यथेष्ट भोजन किया और तृप्त हो उस तालाब पर हाथ मुं धोकर उस बिमान पर सवारी की। तब मुझसे न रहा गया। और मैं उस दिव्य पुरुष से बोला कि आप कौन हैं, ऐसा दिव्य स्वरूप पाय ऐसा निन्दित अहार करते हैं और जिस लिये आप इसको खाते हैं यह सब बात मुझे बताइये। ऐसा शरीर पाय के ऐसा अहार को करते देख मुझे बड़ा आश्चर्य होता है।

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे नवतितमः सर्गः ॥ ९० ॥

हे रघुपते! मेरे बचन को सुन वह पुरुष बोला हे ब्रह्मन्! मेरा यह पूर्व वृत्तान्त जो सुख और दुःख के विषय में हुआ और जिसका उलंघन किसी प्रकार नहीं हो सक्ता सो सुनिये। पूर्व कालमें सुदेव नाम राजा जो तीनों लोक में विख्यात वीर्यवान् था विदर्भ देश में हुआ जो कि मेरा पिता था। उसके दो पुत्र दो स्त्रीयों से उत्पन्न हुये। एक श्वेत नाम मैं, दूसरा जो मेरे से छोटा था वह सुरथ था। जब मेरे पिता स्वर्गबासी हुये तब पुरबासियों ने मुझे राजा बनाया, मैं धर्म और सावधानी से राज्य करने लगा। इस प्रकार राज्य करते और प्रजा का पालन करते सहस्र वर्ष बीत गये सो मैं किसी प्रकार से अपने आयुष्य काल को जान बनमें आया और इसी पशु पक्षी रहित बन में इसी तालाब के तीर पर तपस्या के लिये पहुँचा और सुरथ को राज्य पर बैठाय कर मैंने बहुत काल तक तपस्या की मुझे तीन सहस्र वर्ष बीत गये उस तपस्या से मैंने ब्रह्मलोक पाया, परन्तु मुझे क्षुधा और पिपासा वहां भी बाधा देने लगी। तब मेरी इंद्रियां अति पीड़ित हुईं। तब मैंने ब्रह्मदेव से जाय कर कहा, कि हे भगवन्! यह लोक तो क्षुधा और पिपासा से वर्जित है सो मेरे किस कर्म का यह परिपाक हुआ जो मैं भूख और प्यास से मर रहा हूं और मेरे लिये क्या आहार है सो बतलाइये। ऐसा बचन सुन पितामह बोले

कि हे सुदेव के पुत्र ! तुम्हारे लिये सुन्दर स्वादु मांस आहार है, सो उसी का भक्षण करो, तुमने तपस्या करती समय अपने शरीर को पुष्ट किया है, सो तुम निश्चय जानो कि बिना बोया कभी उत्पन्न नहीं होता। तुमने कुछ अल्प भी दान न किया केवल तपस्या ही करते रहे। इसलिये स्वर्ग में आने पर भी क्षुत्पिपासा से दुःखी हो रहे हो। अब तुमने जिस अपने शरीर को अहारों से तृप्त और पुष्ट किया था उसी को अमृत रस के तुल्य भक्षण करो। वही तुम्हारी जीविका के लिये होगा। हे स्वेत! जब उस बनमें अगस्त्य मुनि आवेंगे तब तुम इस क्लेश से मुक्त होगे। इस प्रकार ब्रह्मदेवका बचन मान अपने मृत शरीर का नित्य भक्षण करता हूं और बहुत वर्ष बीत गये कि यह मेरा मृत शरीर नाश को भी नहीं प्राप्त होता और मेरी तृप्ती उत्तम रीत से हो जाती है। सो हे द्विजोत्तम! अब इस क्लेश से मेरा उद्धार करिये क्योंकि कुंभयोनि महर्षिके बिना इस जंगल में दूसरे की गति नहीं है, मैंने जान लिया कि आप महर्षि अगस्त्य नहीं हैं। सो हे सौम्य! यह आभरण धारण करिये और मेरे ऊपर दया कीजिये। इस प्रकार हे राघव! उस स्वर्गीय का दुःख युक्त बचन सुन उसके तारने के लिये मैंने वस्त्र और आभूषण उससे ले लिया, उन पदार्थों के लेते ही वह उसका पूर्व मृतक शरीर नष्ट हो गया और उसके नष्ट होते ही उस महर्षि को तृप्ति प्राप्त हुई और वह हर्षित होकर स्वर्ग को सिधारा सो हे राघव! यह उसी का दिया आभरण है।

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे एकनवतितमः सर्गः ॥ ९१ ॥

ऐसी कथा सुन कर राघव बोले हे भगवन्! वह बन क्यों ऐसा निर्जन हुआ, जहां वह राजा वैदर्भश्वेत तप करने गया। ऐसा रघुपति का बचन सुन मुनि बोले। हे राम! सतयुग में राजा मनु इस संपूर्ण पृथ्वी के शासनकर्ता थे। उनके पुत्र इक्ष्वाकु भी बड़े महान हुए। तब मनु इनको कहा कि तुम राजा होकर इस पृथ्वीपर राजवंशो का

स्थापन कर्ता हो। इक्ष्वाकु ने पिता का वचन स्वीकार किया। तब मनु अति प्रसन्न हो पुत्र से बोले हे परमोदार! तुम इस राज के कर्ता हो, इसमें संशय नहीं तुम दंड के द्वारा प्रजाका रक्षण भी करोगे। यह मैं जानता हूं परन्तु अकारण किसी को दण्ड न देना। सुनो अपराधियों को जो यथोचित दण्ड दिया जाता है वह राजा को स्वर्ग में पहुंचाता है। इसलिये हे महाबाहो! दण्ड के विषय में बहुत सावधान रहना। यथो चित शासन करने से बड़े धर्म की प्राप्ती तुम्हें होगी इस प्रकार पुत्रको उचित रीति से समुझाय मनु ब्रह्मलोक को सिधारे। अब पिता के जाने पर इक्ष्वाकु को चिन्ता हुई कि मैं पुत्रों को किस प्रकार उत्पन्न करूं। परन्तु अनेक प्रकार के यस दान और तप के द्वारा राजा को सौ पुत्र उत्पन्न हुये। जो देव पुत्रों के तुल्य थे। उनमें से जो सबसे छोटा था वह महामूढ़ और विद्या रहित उत्पन्न हुआ। और अपने बड़े भाइयों के सेवा में कदापि नहीं रहता था। पिता ने उस अल्प तेज अपने पुत्र का नाम दण्ड रक्खा। क्योंकि पिता ने समझा कि उस मूढ़पर अवश्य दंड पानहोगा। अब राजा उसके लिये कोई घोर प्रदेश ढूंढ़ता था। परन्तु न मिला। अब विध और शैवल के मध्य का राजा उसको बनाया सो दण्ड उस रमणीय पर्वत स्थली का राजा हुआ। वहां उसने अति उत्तम पुर बसाया और भार्गव मुनि को अपने लिये पुरोहित बनाया। इस प्रकार वह राज्य करने लगा। जैसे इन्द्र अमरावती का पालन करते हैं और उसके प्रजागण भी अति सुखी देख पड़ते थे।

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे द्विनवतितमः सर्गः ॥ ९२ ॥

फेर अगस्त्यमुनि उसी राजा की कथा कहने लगे। हेराघव! इस प्रकार बहुत वर्ष पर्यन्त जितेन्द्रियता से वह दंड राज्य करता था। अब कदाचित् चैत्र मासमें राजा अपने प्रोहित के आश्रम में जो अति रमणीय था गये। वहां पर इस राजा दंडने भार्गव की कन्या को देखा जो इस पृथ्वी पर रूप में अद्वितीय थी। उसी वन में घूम रही

थी। उसे देखते ही यह मूढ़ बुद्धि राजा काम पीड़ित हो गया और व्याकुल चित हो उस कन्या के पास जाकर बोला कि हे सुन्दरी! तू यहां कहां से आई और किसकी पुत्री है। हे चन्द्रमुखी! मैं काम से अति पीड़ित हो रहा हूं। इस लिये तुझसे पूछता हूं। इस प्रकार कामी की आज्ञानोनन्मत उस राजाका बचन सुन वह कन्या विनती पूर्वक यह बचन बोली। हे राजन्! मैं भार्गव मुनि की जेठी कन्या हूं। मेरा नाम अरजा है और इसी आश्रम में रहती हूं। हे राजन्! बलात्कार से मेरा स्पर्श न करो क्योंकि मैं कन्या के पिता बंशमें हूं। वे चाहें तिससे, मुझे व्याह दें। मेरा स्वयं किसी बातमें अधिकार नहीं और तुम भी उनके शिष्यही हो। यदि कोई बात अन्यथा तुम करोगे अथवा मैं करूंगी तो वे अति क्रुद्ध होंगे। इसलिये जो करना हो वह धर्म मार्ग से किय जाय सो तुम मेरे पितासे मुझे मांगो यदि बलात अन्यथा करोगे तो बड़े भयंकर फल को पाओगे। क्योंकि मेरे पिता क्रोध से तीनों लोक भस्म कर सक्ते हैं और यदि विनय पूर्वक मांगोगे तो वे अवश्य दे देंगे। ऐसा अरजा का बचन सुन वह कामी मदोत्मत्त राजा हाथ जोड़ उस कन्या से कहने लगा। हेसुन्दरी मेरे ऊपर दया कर, इस समय तेरे बिना मेरे प्राण निकले जाते हैं, तुझे पाय कर चाहे मेरा बध हो जाय चाहे मुझे घोर पापहो तू मुझे ग्रहण कर मैं बहुत विह्वल हूं। ऐसा कहकर और बलात्कार पूर्वक दोनों हाथों से उसे पकड़ यथेष्ट विहार करने लगा। इस प्रकार वह दण्ड इस घोर और दारुण अनर्थ को कर शीघ्र अपने मधुमन्त नगर को चला गया॥

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे त्रिनवतितमः सर्गः॥ ९३॥

महूर्त भरमें वह देवर्षि भार्गव इस वृत्तान्तको सुन शिष्योंको साथ लिये क्षुधासे पिड़ित अपने आश्रममें लौटे और आश्रममें आयकर क्या देखते हैं कि अरजा दीन और रज से भरी बैठी है। उसे देखतेही ऋषिको क्रोध उत्पन्न हुआ। उसमें विषेश कारण यह था कि भूखे थे। उस समय ऋषि ऐसे क्रोधित हुये कि मानों तीनों लोकों को भस्म कर देंगे।

हार में बीत गया। अब महीना बीतने पर वह प्रजापति का पुत्र प्रातःकाल में पुत्र बन गया और बिछौने पर जायकर क्या देखता है कि चन्द्र का पुत्र उस सरोवर में उर्ध्व बान्दुहो तप कर रहा है। तब राजा बोले कि हेभगवन्! सैन्य सहित इस दुर्ग पर्वत पर आया सो मैं नहीं जानता कि मेरी सेना कहां गई ऐसा उस राजर्षि का जो अब तक अचेत थे वचन सुन अश्वासन दे बुध बोले कि बड़ी पत्थर की वृष्टि भई सो तेरे भृत्यगण सब मारे पड़े और तू वायुवृष्टि के भय से पीड़ित हो इस आश्रम में सोगया सो अब तुम निर्भय रहो किसी बात की चिन्ता न करो। इस आश्रम में फल मूल का भोजन करके निवास करो। ऐसा बचन सुन राजा स्थिर हुये परन्तु अपने अनुचरों के क्षय से अति दीन हो बोले—हेमुने! यद्यपि मैं भृत्य रहित होगया हूं तथापि राज्य को तो नहीं त्याग सकता। हेमुने! मेरा ज्येष्ठ पुत्र शशबिंदु धर्मतत्पर और राज्य शासन के योग्य है सो वही राज्य पर बैठेगा। क्योंकि मेरा अब यह उत्साह नहीं होता कि मैं राज्य करूं। क्योंकि अपने भृत्यों के पुत्र कलत्र इत्यादि को मैं क्या समाश्वासन देऊंगा अथवा उनके प्रति कैसे अमंगल बचन का उच्चारण करूंगा। ऐसा राजा का बचन सुन बहुत सरलता पूर्वक मुनि बोले—हेकर्दम के पुत्र तुम संताप न करो वर्ष भर बीते पर तुम्हारे हित की बात मैं करूंगा। ऐसे मुनि का बचन सुन राजा वहां रहने लगे। महीने भर स्त्री होकर मुनि के साथ रमण करते और महीने भर पुरुष हो धर्माचरण करते थे। अब नवें महीने में वह स्त्री एक पुत्र जनी जिसका पुरुरवा नाम हुआ और उत्पन्न होतही उसने बुध के हाथ में उस लड़के को देदिया जब राजा पुरुष होता तब बुध अनेक प्रकार की कथा सुनाय आनन्दित रखते थे ॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे द्व्यधिकशततमः सर्गः ॥१०२॥

ऐसी अद्भुत कथा सुन लक्ष्मण और भरत फेर पूछने लगे कि महाराज वर्ष भर तक राजा को वहां रखकर फेर बुध ने क्या किया। रामचन्द्र बोले कि वर्ष बीतने पर राजा जब फेर पुरुष हुये तब बुध ने

संवर्त, च्यवन, भार्गव, अरिष्टनेमी, प्रमोदन, मोदनकर और दुर्वासा, इन सब ऋषियों को बुलाय विनय पूर्वक कहा। हेभाइयों यह महाबाहु राजा इलनाम कर्दम का पुत्र है। सो जो इनकी दशा है सो आप लोगों को विदितही है सो जिसमें इनका मंगल हो सो काम आप लोग कीजिये ऐसा वे लोग बात चीत करही रहे थे कि इतने में बहुत से ब्राह्मणों को साथ लिये कर्दम ऋषि भी आगये, पुलस्त्य, कुतु, वषट्कार, ओंकार, यह सब भी वहां इकट्ठे होगये। ये सब के सब वाल्हिपति राजा के विषय में प्रसन्नता पूर्वक विचार करने लगे। अब कर्दम मुनि अपने पुत्र के हित के विषय में बोले कि हेब्राह्मण लोगों इस राजा के कल्याण के विषय में जो मैं कहता हूं सो सुनिये। बिना शिव के प्रसन्न हुये इसका मंगल हो नहीं सकता और शिव को अश्वमेध छोड़ दूसरा यज्ञ प्यारा नहीं है इसलिये आओ हम लोग सब मिलके अश्वमेध करें ऐसा कर्दम का बचन सुन सभों ने अंगीकार किया और संवर्त ऋषि के शिष्य राजर्षि मरुत ने यज्ञ का भार लिया और बुध के आश्रम के पास वह यज्ञ प्रारंभ हुआ। भगवान शिव अति संतुष्ट हुये। यज्ञ समाप्त होनेपर ब्राह्मणों से बोले कि हेब्राह्मण श्रेष्ठ इस यज्ञ से और आप लोगों की भक्ति से मैं प्रसन्न हुआ। सो इस बाल्हीश्वर के विषय में मैं क्या करूं। ऐसा शिव के मुख से निकलते ही सब ऋषि गण बोले कि हेप्रभो! इसको संपूर्ण रूप से पुरुष बना दीजिये। ऐसी ब्राह्मणों की प्रार्थना सुन। "तथास्तु" ऐसा कह शिव अन्तरध्यान होगये। उधर यज्ञ तो समाप्त हो ही चुका था। ब्राह्मण लोग भी अपने अपने घर को सिधारे। तब राजा ने अपनी पहिली राजधानी बाल्ही को छोड़कर मध्य देश में एक अति उत्तम यशकर पुर को बसाया और राजा ने बाल्हि में अपने पुत्र शशबिंदु को राजा बनाया। आप उस नये प्रतिष्ठान पुर के राजा हुये। जब राजा कालपाय ब्रह्म लोक को सिधारे तब पुरुरवा जो बुधके द्वारा उत्पन्न हुआ था, प्रतिष्ठा पुर का राजा हुआ॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे त्र्यधिकशततमः सर्गः॥१०३॥

इस प्रकार सब कथा सुनाय महाराज बोले—हेलक्ष्मण! बसिष्ठ वामदेव, जाबालि, और कश्यप और अश्मेध में कुशल ऐसे ब्राह्मणों को बुलाओ तब मैं सुलक्षित घोड़े को अभिमन्त्रित करके छोड़ूंगा। ऐसा राजा का बचन सुन लक्ष्मण ने सब ब्राह्मणों को बुलाया तब रामचन्द्र ने सभों को प्रणाम किया और वे सब आशीर्बाद देने लगे तदन्तर राघव हाथ जोड़ ब्राह्मणों से बोले कि महाराज अश्वमेध यज्ञ में करने चाहता हूं। यह बात सुन ब्राह्मणों ने शिव को प्रणाम कर प्रशंसा पूर्वक महाराज के उस बचन को अंगीकार किया तब रघुनंदन अति प्रसन्न हो लक्ष्मण से बोले—हेभद्र! सुग्रीव के पास दूत भेजो कि बानर और भालुओं को लेकर यज्ञ का महोत्सव देखने आवें और बिभीषण के पास भी संदेशा भेजा जाय और उन राजों को भी जो मेरे हितैषी हैं देश देशांतरों के रहने वालों को भी निमंत्रण देओ और ऋषियों को भी पत्नियों के सहित बुलाओ। गाने बजाने वाले नट और नर्तकों को भी कहलाय भेजो। गोमती के तीर नैमिष बन में यह यज्ञ होगा स्थान के प्रबंध के लिये भृत्यों से कहो और सावधानी करो। जिसमें कुछ विघ्न न हो सबको निमंत्रण दिया जाय। जिसमें वे आयकर यज्ञ देखें। और आदर पाय तुष्ट पुष्ट होकर जायँ। और अच्छे अखंडित चावलों के लक्ष और मूंगों तिलों के दश सहस्र बैल वा गाड़ी लदवाय कर आगे भेजो। और इसी अनुसार चना, कुटकी, उरद, लवण, घृत तैल और कुछ सुगंध द्रव्य भी भेजो, और अनेक संतकोटि सुवर्ण मुद्रा और रजत मुद्रा लेकर भरत आगे चले और सावधानी करें। साथ में और मार्ग के लिये हाट लेकर बनियें चलें और नट नर्तक रसोई करने वाले और बहुत सी युवती स्त्रीयां ये सब भरथ के साथ चलें। आगे आगे सैन्य चले और महाजन बाल वृद्ध, ब्राह्मण, गृहशिल्पी, बढ़ई कोशाध्यक्ष, (खजानची) इन सभों को और मेरी माताओं को और अंतःपुरों को, लेकर बड़े सावधानी से रक्षा करते चलें और दीक्षा के लिये सुवर्ण की सीता बनाय लेते चले ऐसी आज्ञा दे फेर परिजनों के सहित निमंत्रित

बड़े बड़े पराक्रमी राजों के लिये महाराज ने बड़े बड़े वस्त्र, मंडयों (तंबू) के लिये आज्ञा दी और उनके भृत्य और परिजन इत्यादिकों के लिये अन्न, पान, और वस्त्र के लिये भरत को कहदिया, इतने में शत्रुघ्न भी आय गये तब भरत और शत्रुघ्न दोनों इन सामग्रियों को लेकर चले और सुग्रीव इत्यादि बड़े बड़े बानर भी आय पहुंचे अब बड़े बड़े ब्राह्मण परोशने पर थे। विभीषण बहुत से राक्षसों और बहुत सी स्त्रीयों को साथ ले बड़े बड़े तेजस्वी ऋषियों की सेवा में थे॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे चतुरधिक शततमः सर्गः॥ १०४॥

इस प्रकार सब पदार्थों को आगे भेजवाय महाराजने सुलक्षण काले घोड़े को छोड़ा और सृत्विजों के साथ लक्ष्मण को घोड़ेकी रखवाली करने को कहा और आप भी सेना ले नैमिष की ओर चले। वहां पहुंच और अद्भुत यज्ञ मण्डलको देख अति हर्षित हुये। अब वहां पर जो राजे आये थे वे सब महाराज के वास्ते भेंट ले आये थे। महाराज ने उन सबको ग्रहण किया, राजों का सत्कार किया और उनके लिये खाने पीने का प्रबन्ध कर दिया। अब भरत शत्रुघ्न अतिथी राजाओं के सत्कार पर नियुक्त हुये। और सुग्रीव के सहित बड़े बड़े बानर बड़ी सावधानी से ब्राह्मणों की सेवापर नियुक्त हुये। राक्षसों के सहित विभीषण महर्षियों के किंकर बने। बड़े बड़े डेरे वहां खड़े किये गये जिसमें सकुटुम्ब और फौज सहित राजे लोग निवास करें। इस प्रकार बड़ी धूमधाम के साथ रघुनन्दन का यज्ञ प्रारम्भ हुआ। उस यज्ञमें यही आज्ञा थी कि जो कोई जो मांगे उसे देओ। बानर और राक्षस देने में ऐसे तेज थे कि याचक के मुंहसे जो शब्द निकले झट पट देही देते थे। अनेकों प्रकार की मिठाइयां बनी थी लोग आनन्द पूर्वक खाते थे। उस स्थान पर कोई मलीन दीन और दुर्बल देख नहीं पड़ते थे। जिसको देखो हृष्ट पुष्ट ही देख पड़ते थे उस यज्ञमें जो ऋषी, मुनि, ब्राह्मण आये थे वे सब कहते थे कि हम लोगों ने ऐसा दूसरा यज्ञ नहीं देखा, क्यों कि इस प्रकार मुँह मांगा दान कहीं नहीं

दिया गया। जिसको सुवर्ण की इच्छा थी वह सुवर्ण पाता था। जिस को रत्न की इच्छा थी वह रत्न पाता था। जिसको वस्त्र की इच्छा थी वह वस्त्र पाता था। जिसे अन्न की इच्छा थी वह अन्न पाता था। रात दिन ये सब वस्तु दी जाती थी सब पदार्थों के ढेर लगे थे।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे पञ्चोत्तर शततमः सर्गः ॥ १०५ ॥

अब उस अद्भुत यज्ञमें महर्षि वाल्मीकि शिष्यों को साथ लिये आय कर उपस्थित हुये। इनका आगमन देख सब ऋषियों ने एकान्त में जो पर्ण शाला बनी थी उसीमें स्थान दिया, फल मूल, छकड़ोंपर लदवाय भोजन के लिये कुटी में भेजवा दिया। अब वाल्मीकि ने कुश और लव इन दोनों शिष्यों से कहा कि तुम यज्ञमें जाय कर संपूर्ण रामायण सुनाओ। ऋषियों के स्थान में, ब्राह्मणों के समीप, गल्लियों में, राजमार्ग में, राजों के डेरा पै, रामचन्द्र के भवन के द्वार पर, जहा कर्म हो रहा है तहां, विषेश कर ऋत्विजों के समीप में गान करो। हे वत्स इन फलों को जो पर्वतों के अग्र भागमें उत्पन्न हुये हैं भक्षण करना जिसमें तुमको गाने में श्रम नहो। यदि रामचन्द्र बुलावें और सुनने चाहैं तो जाना और वहां ऋषियों से यथोचित व्यवहार करना, एकदिन में मधुर वाणी से बीस सर्ग गान करना और उन्हीं प्रमाणों के सहित सुनाना। जैसा मैंने पहिले उपदेश किया है और धन का लोभ मत करना क्यों कि आश्रम बासियों को धन से क्या लाभ है हमारे लिये फल मूलही सब है, यदि महाराज पूछें कि तुम किसके बालक हो तो तुम यही कहना कि हम दोनों बाल्मीक के शिष्य हैं। इस बीणा को लेते जाओ। इसके स्थानों को तुम जानते ही हो, सो मिलायकर मधुर बजाय प्रथम कथा से गान करना। ऐसी नम्रता से रहना जिसमें राजा का अनादर किसी बातमें न हो क्यों कि धर्म से राजा सब प्राणियों का पिता है। सो हे वत्स कल्ह प्रातःकाल के समय से सावधानी के साथ बीणा लेकर तुम दोनों गाना आरम्भ करो। ऐसा उपदेश कर महर्षि चुप हो गये।

ऐसी आज्ञा पाय हाथ जोड़ दोनों लवकुश "बहुत अच्छा हम आपकी आज्ञा नुसार ही करेंगे" ऐसा कहकर रात्री में विश्राम को प्राप्त हुये।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे षडधिकशततमः सर्गः ॥ १०६ ॥

अब वे दोनों मैथिली के पुत्र प्रातःकाल में स्नान अग्नि हवन इत्यादि कर्म करके ऋषिके वचनानुसार संपूर्ण गान करने लगे। तब इस बातको महाराज ने सुना कि भारताचार्य की रीतिसे और अच्छी परिपाटी से भूषित बहुत से प्रमाणों से संयुक्त और वीणा के स्वर से अलंकृत ऐसी गीतको दो बालक गाते फिरते हैं। ऐसी बात को सुन महाराज को बड़ा कौतुहल उत्पन्न हुआ। तब महाराज ने यज्ञके कर्मों से अवकाश पाय, बसिष्ठ मुनिको बुलाय भेजा। बहुत से राजोंको पंडितों को, महाजनों को, पौराणिकों को, शब्दों के जानने वालों को वृद्ध ब्राह्मणों को, स्वरों के लक्षणों के पहिचानने वालों को उत्कंठित ब्राह्मणों और लक्षणों में सावधान गवैयों को, वैदिकों, पदाक्षर समके जानने वालोंको, छन्द विद्या के विशारदोंको कला और मात्रा के विशेषज्ञों और ज्योतिषियों को क्रिया विधिके दक्षों को, कार्यों में चतुर और हेतु के भेदों के जानने वाले को और तार्किक बहुश्रुत शास्त्र के छन्दों को जानने वाले, वेदों में चतुर वृत्तों के पहिचानने वाले कल्प सूत्र में चतुर और गीत नृत्यों में पण्डित इन सभोंको बुलाय कर इकट्ठा कर उन दोनों लड़कों को, उनके बीचमें बैठाय दिया और वे दोनों गाने लगे। अब उन दोनों का अलौकिक गान आरम्भ हुआ। ऐसा कि जिसके सुनने से सुनने वालों के तृप्ति भी नहीं होती थी। और जितने मुनिगण और राजे बैठे थे वे दोनों बार बार उन बालकों की ओर देखते और आश्चर्य करते थे। और सब यही कहते थे कि देखो महाराज और इन दोनों का कैसा एकही रूप देख पड़ता है जैसे महाराज ही की मूर्ति का प्रतिबिम्ब हो, यदि ये दोनों जटा वल्कल न धारण किये होते तो महाराज से इनका कुछ भी अन्तर न था। इस प्रकार पुरवासी और देश वासी कह रहे थे और इधर नारद के उपदेश

के अनुसार ये दोनों लड़के पहिले से रामायण गारहे थे। मध्यान्ह पर्यन्त बीस सर्ग गायकर उन्होंने समाप्त कर दिया। तदनन्तर जब बीसों सर्ग समाप्ति पर्यन्त महाराज सुन चुके तब भाई से कहा कि अठारह सहस्त्र सुवर्ण मुद्रा ल्याय कर इन दोनों को देओ। इससे विषेश जो कुछ ये चाहे सो सब कुछ शीघ्र ल्यायकर देओ। ऐसी महाराज की आज्ञा पाय भरत झटपट द्रव्य ले आय पृथक् २ दोनों को देने लगे। परन्तु उन दोनों ने उस द्रव्य को ग्रहण न कर बोले कि हमको इससे क्या प्रयोजन क्योंकि हम बनवासी हैं केवल बनके फल मूल से हमारा भोजन निर्वाह होता है जंगल में धन क्या होगा। ऐसा उन दोनों का बचन सुन।सबके सब बिस्मित हो रहे और महाराज को भी बड़ा आश्चर्य हुआ। अब रामचन्द्र उस काव्य के आगम को सुनने के लिये बालकों से पूछने लगे कि यह काव्य कितना बड़ा है और उसके कवि कौन मुनि हैं और वे कहां रहते हैं। ऐसा प्रश्न सुन बालक बोले। महाराज इस काव्य के कर्त्तावान् बाल्मीकि हैं और आपके यज्ञके पासही हैं और इस ग्रन्थ में चौबिस सहस्त्र श्लोक हैं और इलोपख्यान तक सौ कथा और पांच सै सर्ग छ, काण्ड, सातवां उत्तर है यह हमारे गुरु ऋषि बाल्मीकि ने बनाया है, इसमें सब आपही का चरित है यदि आप सब सुना चाहैं तो कर्मों से जब जब आवकाश हो तब तब सुना करैं। रामचन्द्र बोले बहुत अच्छा।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे सप्ताधिक शततमः सर्गः॥ १०७॥

अब संगीत सुनते सुनते महाराज ने जाना कि ये दोनों सीता ही के पुत्र हैं तो दूतों को बुलाय कर आज्ञा दी कि तुम महामुनि बाल्मीकि के पास जाय कहो कि यदि सीता शुद्ध चरित्रा और पाप रहित हो तो मुनि की अनुज्ञा ले और मुनिके मनोनुसार अपने शुद्धि की प्रतीत दे ऐसा कहने पर देखो मुनि क्या कहते हैं और सीता का मनोगत क्या है। सो सब समाचार मुझे सुनाओ। कल्ह प्रातः काल सभा के मध्यमें सीता अपनी शुद्धि के निमित्त सपथ

करें । ऐसा महाराज का बचन सुन दूत लोग महर्षि के पास गये और राजा के कहे हुये बचनों को प्रणाम करके बड़ी नम्रता से कह सुनाया । दूतों का बचन सुन मुनि बोले कि बहुत अच्छा सीता वैसाही करेगी । क्योंकि स्त्रियों का देवता तो पति ही हैं । ऐसा मुनि का बचन सुन दूत लोगों ने आय रघुनंदन से कह सुनाया । तब महाराज प्रसन्न हो वहां के ऋषियों और राजों से बोले—हेमुनि लोगों अपने शिष्यों के सहित और राजे सब अपने अनुगामियों के साथ सीता के शपथ को सुनें और जो लोग सुनने की आकांक्षा रखते हो वे भी सब इकट्ठे होजायँ । ऐसा महाराज का बचन सुन सब वाह वाह करने और सब राजे महाराज की प्रशंसा करने और कहने लगे । हेनर श्रेठ इस भूतल पर ये सब बातें आपही में पाई जाती हैं दूसरे में नहीं । इस प्रकार सब बात का निश्चय कर महाराज ने सब को बिदा किया ॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे अष्टाधिकशततमः सर्गः ॥१०८॥

अब रात बीतने पर महाराज ने सब ऋषियों को बुलाया और उस यज्ञ में बशिष्ठ वामदेव, जाबालि, कश्यप, बिस्वामित्र, महातपस्वी दुर्वासा, पुलस्त्य, शक्ति, भार्गव, वामन, दीर्घायु मकण्डेय, मौद्गल्य, गर्ग, च्यवन, शतानन्द, भरद्वाज, अग्निपुत्र, सुप्रभ, नारद, पर्वत गोतम इत्यादि तथा बड़े बड़े महाव्रती, ऋषि लोग यह अद्भुत चरित देखने की आकांक्षा से वहाँ पर आये महापराक्रमी राक्षस और बड़े बली बानर कुतुहल पूर्वक वहाँ आयकर इकट्ठे हुए । क्षत्री वैश्य शूद्र सहस्र नाना देश के ब्राह्मण गण ये सब भी सीता की सपथ देखने की अकांक्षा से उस सभा में भर गये और ये सब के सब वहां आकर ऐसे चुप चाप हो बैठे जैसे पाषाण की मूर्तियां हों । अब इस समाचार को सुन सीता को साथ ले भगवान् वाल्मीकि वहां आय पहुंचे । सीता मुनिके पीछे पीछे नीचे मुख किये हाथ जोड़े आखों से आँसुओं को भरे और रामचन्द्र का मनमें ध्यान करती चली आती थी । उस समय मुनिके पीछे

सीता ऐसी देख पड़ती थी जैसे ब्रह्मा के पीछे श्रुति चली आती हो। उस काल में लोगों के मुह से धन्य धन्य यही सब्द सुनने में आता था। इसके अनंतर लोगों का बड़ा कोलाहल हुआ। क्योंकि सीता की दीनता देख उनको बड़ा दुःख शोक उत्पन्न हुआ। सो इससे चुप न रह सके। अब इस उस भीड़ के बीच में महर्षि बाल्मीकि सीता को लिये रघुनंदनके पास आयकर बोले। कि हेदशरथे! यह सीता सुव्रता और धर्मचारिणी है जिसको तुमने अपवाद से मेरे आश्रम के समीप में छोड़ दिया था सो हेरामचन्द्र! आप लोकापवाद से डरते हैं। इसलिये सीता अपनी शुद्धता का प्रत्यय देने चाहती है सो आप अनुज्ञा कीजिये और ये दोनों बालक सीता ही के हैं साथ ही में दोनों की उत्पत्ति है। हेरघुनंदन! मैं वरुणका दशम पुत्र हूं। मिथ्या न कहूंगा। ये दोनों तुम्हारे ही पुत्र हैं और मैं भी शपथ पूर्वक कहता हूं कि मैंने बहुत सहस्र बर्ष पर्यन्त तप किया है उसका जो फल है सो मैं न पाऊं जो यह मैथिली दुष्ट चरित्र हो। और मनसे कर्म से और बाणी से भी कोई पापाचरण मुझसे नहीं हुआ है सो उसका फल भागी मैं होऊं यदि यह मैथिली पाप रहित हो। हेराघव! पांच ज्ञानेन्द्रिय और छठवां मन इन सभों में जब सीता को शुद्ध जाना तब उस बनमें मैंने इसका ग्रहण किया सो हेरामचन्द्र! यह सीता शुद्धाचरण युक्त पाप रहित और पतिव्रता है परन्तु आप लोकापवाद से डर रहे हैं इसलिये यह आपको विश्वास करावेगी॥

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे नवाधिकशततमः सर्गः॥१०९॥

ऐसा मुनि का बचन सुन महाराज हाथ जोड़ बोले—हेभगवन्! जैसा आप कहते हैं वह सब ठीक है और आप के दोष रहित बचनों ही से मुझे प्रमाण हो गया और देवतों के समीप भी इसने मुझे प्रमाण दिया और शपथ खाई इसी कारण मैं इसको घर ले आया, परन्तु हेभगवन्! लोकापवाद बड़ा बलवान है इस कारण मैंने फेर इसका त्याग किया केवल अपवाद हीके भयसे जान बूझकर मैंने इसका त्याग किया

सो आप क्षमा किजीये। यह भी मैं जानता हूं कि ये दोनों मेरे ही पुत्र है और एक साथ उत्पन्न हुये हैं परन्तु अब इस वन समूह में यह सीता शुद्ध हो जाय तो मेरी अत्यन्त प्रीति इस पर हो। अब महाराज के अभिप्राय को जानकर देव लोग भी उस जन समूह में आये ब्रह्मा को आगे कर आदित्य, वसु, रुद्र, विश्वदेव, मरुद्गण, साध्य बड़े बड़े महर्षि नाग, सुपर्ण, सिद्ध आदि उपस्थित हुये। इन सबको देखकर महर्षि वाल्मीकिसे रामचन्द्र बोले—हेमुनि! श्रेष्ठ मुझे तो आप के वाक्योंही से विश्वास हुआ। पर इन सभों के मध्य में सीता अपनी शुद्धि दिखावे तो इनके विषय में मेरी अत्यन्त प्रीति हो। क्योंकि ये सब भी सीता ही के शपथ को देखने के लिये आये हैं। उसी समय मंगलकारी पवित्र और दिव्य गंध को लिये मनोहर वायु बहने लगा और उस मंडली के चारों ओर बड़ाही आनंद हुआ। सब लोग उस वायु का बहना देख बड़ेही आश्चर्य में हुये। क्योंकि ऐसी वायु सतयुग में ही बहता था। अब वैदेही इस मण्डली के बीच में कषाय वस्त्र पहिने हाथ जोड़ नीचे मुख किये बोलीं कि यदि मैं केवल राघव का ही मनमें ध्यान रखती होऊं तो पृथ्वी मुझे अपने भीतर पैठने के लिये बिवर दे। सीता के इतना कहते ही पृथ्वी फटगई और उसमें से एक अद्भुत सिंहासन प्रगट हुआ जिसको बड़े पराक्रमी और दिव्य रत्नों से भूषित अनेक नाग अपने मस्तक पर धारण किये थे और उस पर मूर्तिमती पृथ्वी बैठीं थीं उन्होंने दोनों भुजों से सीता को थाम और तुम्हारा स्वागत हो ऐसे बचन से अनुमोदन कर उस सिंहासन पर बैठाय लिया और वह सिंहासन रसातलमें घुस चला। उस कालमें आकाशसे पुष्प वृष्टि होने लगा और कहने लगे कि हेसीते देवि! तू धन्य है जो तेरा इस प्रकार का शील है। इस प्रकार आकाश में स्थित देवता लोग बड़े हर्ष से सीता के विषय में अनेक प्रकार की स्तुतियां कर रहे थे और उस भूमि में जितने ऋषिगण और जितने राजे बैठे थे वे सबके सब इस आश्चर्य से निवृत्त नहीं होते थे। आकाश के और भूमि के स्थावर

जंगम विशाल रूप बड़े बड़े दानव और पाताल के बड़े बड़े नाग अति विस्मित हो कितने तो हर्ष नाद कर रहे और बहुतेरे कुछ सोच रहे थे और बहुत से राम की ओर और बहुत से पृथ्वी की ओर देख रहे थे ॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे दशाधिकशततमः सर्गः ॥११०॥

इस प्रकार जब सीता रसातलमें चली गईं तब बानर लोग और मुनिगण धन्य धन्य ऐसा शब्द बोलने लगे। उस समय में महाराज उस दीक्षाकाष्ठ को हाथ में लिये आंखों से आंसुओं को भरे नीचे मस्तक किये, अत्यन्त दीन और दुःखित होगये और बहुत काल पर्यन्त रोते और अश्रुपात करते क्रोध और शोक से भरे यह बचन बोले कि देखो यह शोक जो मुझे कभी नहीं हुआ था मेरे मन को स्पर्श करने चाहता है क्योंकि मेरे देखते सीता जो लक्ष्मी की भांति सुंदरी थी नष्ट होगई और मैं तो इसको समुद्र के पार से भी ले आया तब पृथ्वी में से लाना क्या कठिन है। हेपृथ्वी! तू मेरी सीता को दे दे नहीं तो मैं अपना क्रोध तेरे ऊपर प्रगट करूंगा और तू मेरे बल को जानती है तू मेरी सास भी है क्योंकि जनक के जोतने के समय तेरे ही भीतर से सीता को पाया था। नहीं तो मुझे भी अपने भीतर प्रवेश करने का मार्ग दे। वह जहां रहेगी मैं भी वहीं रहूंगा इस समय मैं उसके बिना पागल हो रहा हूं। यदि तू मेरी बात न मानेगी तो मैं तुझे नष्ट कर डालूंगा। इस प्रकार शोक और क्रोध से पूर्ण महाराज का पृथ्वी को धमकाते देख देवतों सहित ब्रह्मा महाराजसे आन कर बोले—हेराम! आप संताप करनेके योग्य नहीं हैं। आप अपने पूर्व भावका स्मर्ण करिये मैं आपको स्मर्ण करानेके वास्ते आया हूं। इस समय आप अपाने विष्णु रूप का स्मर्ण करिये। शुद्ध और पतिव्रता सीता आपके रूप का स्मर्ण करती हुई आपकी बाट देख रहीं हैं। आप से स्वर्ग में भेंट होगी। अब जो मैं आप से कहता हूं सो सुनिये। यह काव्यों में उत्तम काव्य जो भगवन् वाल्मीकि ने रचा है जन्म से लेकर आज पर्यन्त जो आप

को सुख दुःख हुआ है वर्णन किया है और जो भविष्य में होगा वह भी कहा है । हेराम ! यह आदि कव्य सब तुम्हारा वर्णन करता है । आप से अन्य पुरुष काव्योंके यशको नहीं प्राप्त कर सकता आपने और देवों के सहित मैंने भी इस काव्य को सुना अब जो भविष्य है उसको भी सुनिये यह काव्य का उत्तर भाग है । इसलिये यह उत्तर कहलायेगा। अब आप ऋषियों के साथ बैठकर इसको सुनिये । ऐसा कह ब्रह्मा देवों को साथ लेकर अपने लोक सिधारे ये सब लोग ब्रह्मऋषि और तपस्वी ब्रह्मा की अनुमतिसे भविष्य काव्य सुनने के लिये वहां ठहर गये । अब रामचन्द्र ब्रह्मा का वचन सुन वाल्मीकि मुनि से बोले कि हेभगवन् ! सब महर्षिगण मेरे भविष्य काव्य को सुनने चाहते हैं सो जो कुछ मेरी भविष्य कथा हो सो कल्ह से प्रारंभ की जाय ॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे एकदशोत्तरशततमः सर्गः ॥१११॥

अब प्रातःकाल में नित्य कृत्यसे छुट्टी पाय महाराज ने मुनियों को इकट्ठा कर अपने पुत्रों से कहा कि भविष्य कथाका गान करो । ऐसे पिता की आज्ञा पाय वे दोनों गाने लगे अब सीता के भूतल में प्रवेश कर जाने में यज्ञ की समाप्ति में महाराज अत्यन्त उदास हो गये और सीता को न देखने से यह जगत उनको शून्य सा जान पड़ा और ऐसे शोक से पीड़ित हुये कि मनमें कुछ भी शांति न होती थी । महाराज ने सब राजों भालुओं राक्षसों और बानरों को कुछ धन देकर उन ब्राह्मणों के समूहों को विदा देकर सीता का ध्यान करते अयोध्या में प्रवेश किया । परन्तु महाराज ने दूसरी भार्या न की और जितने यज्ञ करते गये उनमें सुवर्ण की जानकी पत्नी के लिये बनी और दश हजार वर्ष पर्यन्त जो वाजिमेध यज्ञ होता रहा । इसके बाद उससे दश गुणे वाजपेय हुये । जिनमें बहुत सा सुवर्ण का व्यय हुआ । उसके बाद अग्नि ष्टोम, अतिरात्र, गोसव, इन यज्ञों को और इनसे अन्य यज्ञ भी बहुत से हुये और सभों में पूर्ण दक्षिणा दी । इन कर्मों और राज्य शासन में महाराज को बहुत

काल बीत गये। ऋक्ष, वानर, राक्षस ये सब महाराज के आज्ञा का अनुसरण कर रहे थे और सब राजे महाराज पर प्रेम बढ़ाते जाते थे। महाराज के राज्य में समय पर वृष्टि होती थी। सर्वदा सुभिक्ष, दिशाओं में निर्मलता और हृष्ट पुष्ट प्रजागण और न अकाल में मृत्यु और न प्राणियों को व्याधि बाधा होती और न कोई अनर्थ होता था। बहुत काल के अनन्तर रामचन्द्र पुत्र और पौत्र का आनन्द देखते काल धर्म्म को प्राप्त हुए। उसके बाद सुमित्रा और कैकयी भी अनेक प्रकार के धर्मों को आचरण कर स्वर्गगामिनी हुईं। और सब की सब हर्ष पूर्वक महाराज दशरथ से जा मिलीं। उनके नाम से महाराज समय समय पर ब्राह्मणों और तपस्वियों को दान देते थे और पितरों के निमित्त अनेक रत्नों का दान और अनेक प्रकार के दुस्तर यज्ञों को करते थे।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे द्वादशाधिक शततमः सर्गः ॥११२॥

कुछ काल के अनन्तर युधाजित् ने अपने गुरु को महाराज के पास भेजा ये गर्ग कुलके गुरु महर्षि अंगिराके पुत्र महा तेजस्वी ऋषि थे। महाराज के लिये उन्होंने दस हजार घोड़े उत्तम कंबल, दुशाले, रत्न, चित्र विचित्रके वस्त्र और उत्तम उत्तम भूषण भेजे थे जब रामचन्द्र ने सुना कि गार्ग्य महर्षि बहुत से पदार्थों को लेकर अश्वपति मातुल के घर से आ रहे हैं तब कोश भर आगे से स्वयं महारजा ने जाय बिधि पूर्वक उनका पूजन किया और भेट को ले कुशल प्रश्न पूछ फेर मुनि से आगमन प्रयोजन पूछने लगे कि मेरे मातुल ने क्या संदेशा दिया है जिससे आप जैसे महर्षियों को इतना क्लेश करना पड़ा। ऐसा महाराज का बचन सुन महर्षि बोले। हे महाबाहो! तुम्हारे मामा ने कहा है कि सिन्धु नदी के दोनों तट पर गन्धर्व लोगों का देश है और वह अति सुन्दर फल फूलोंसे भरा है और वे सब बड़े युद्ध बिशारद हाथों में आयुध लिये उस देशकी रक्षा किया करते हैं। ये सब शैभूष नाम गंधर्व के पुत्र हैं। और गणनामें तीन कोटि और

महा बली हैं सो हे काकुस्थ ! मैं चाहता हूं कि आप इनको जीत कर वह देश अपने अधिकार में लाइये, क्योंकि यह देश मेरे देश के पास ही में है और अति सुन्दर है आपके छोड़ और दूसरे की गति इस विषयमें नहीं हो सकती सो इस बातको आप अंगोकार करें क्योंकि मैं किसी प्रकार का अहित आपको न कहूंगा। ऐसा ऋषि का वचन सुन राघव प्रसन्न हो बोले कि बहुत अच्छा, ऐसा कह भरत की ओर देखने लगे और हाथ जोड़ मुनि से बोले कि भरत के ये दोनों कुमार तक्ष और पुष्कल उस देशमें विचरेंगे और मातुल इनकी रक्षा करेंगे। ये दोनो लड़के भरत को साथ ले सैना के सहित गन्धर्वों को मार दो पुर बसावेंगे और वहां पर इन दोनों को स्थापन कर फेर भरत मेरे पास चले आवें। ऐसा महर्षि से कह भरत को सैन्य सहित जाने की आज्ञा दे महाराज दोनों कुमारों को वहां के लिये राज्याभिषेक कर दिया और अच्छे महूर्त में भरत ने ब्रह्मर्षि को आगे कर सेना के सहित यात्रा की।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे त्रयोदशोत्तर शततमः सर्गः ॥११३॥

अब भरत को सैन्य सहित आये देख युधाजित गर्ग के सहित अति प्रसन्न हुये और केकय नरेश भी अपनी सेना ले गन्धर्वों पर चढ़ दौड़े और ये दोनों गन्धर्व के नगर में पहुंच गये और गन्धर्व लोग भी वीरनाद करते युद्ध करने के लिये बाहर निकल आये और इन सभों का महाघोर युद्ध प्रारम्भ हुआ। सात रात्रि दिन युद्ध होता रहा, परन्तु किसीने जय न पाया, रुधिर की नदियां बह निकलीं। जिनमें खड्ग शक्ति और धनुष ग्राह के तुल्य थे और मनुष्य के शरीरों को बहाने वाली चारों ओर फैल चलीं। इतने में भरत ने बड़ा दारुण कालास्त्र जिसका नाम संवर्त है गन्धर्वों पर चलाया और वे काल पाश में बँध गये और संवर्त ने सम्पूर्ण रूप से उनका विदारण किया क्षणमात्र में वे तीनों करोड़ गन्धर्व मारे पड़े और युद्ध ऐसा भयंकर हुआ कि देव लोग भी आश्चर्य करते रह गये कि ऐसा युद्ध कभी

देखने में न आया। इस प्रकार उन सभों को मार भरत ने दो पुरों को बसाया। एक तक्षशिला और दूसरा पुष्कलावत और पहिले में तक्ष को और दूसरे में पुष्कल को स्थापन किया और ये दोनों नगर उस गान्धार देशमें अत्यन्त मनोहर थे एक दूसरे से चढ़ बढ़ के थे अर्थात् धन और रत्नों से पूर्ण और उपवनों से सुशोभित थे मानो अपने गुण समूहों से एक दूसरे को दबाय लेने चाहते थे और दोनों में सत्य व्यवहार बगीचे सवारियां और नाना प्रकार के पदार्थ भरे रहते थे अच्छे अच्छे गृह, बाजार, देव मंदिर सब प्रस्तुत हुये। इस प्रकार दोनों नगरों को बसाय और पांच वर्ष तक वहां निवास कर फेर अयोध्या में महाराज के पास चले आये और आयकर श्री रामचन्द्रजी को जो धर्मरूप थे प्रणाम किया।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे चतुर्दशोत्तर शततमः सर्गः ॥११४॥

ऐसा भरत का बचन सुन महाराज प्रसन्न हुये और बोले कि हे लक्ष्मण! तुम्हारे ये दोनों कुमार अंगद और चन्द्रकेतू जो हैं इनके लिये कोई देश सिद्धि करो जहां के राज्य पर इन दोनों को अभिषेक दिया जाय। वह देश रमणीय और उपद्रव रहित हो जहां ये धनुर्द्धर सुखसे रमें जहां राजों को पीड़ा न हो और आश्रमों का बिनाश भी न हो ऐसा देश बिचारो क्यों कि मैं नहीं चाहता कि किसी प्रकार से हम अपराधी ठहरें। ऐसा बचन सुन भरत बोले कि महाराज यह कारुपथ नाम देश रमणीय और दोष रहित है वहाँ अंगद का स्थापन हो और चन्द्रकेतु के लिये चन्द्रकान्त नियत किया जाय। यह बचन भरत का महाराज ने मान लिया और कारुपथ में अङ्गद को अभिषेक कर दिया और उस पुरी का नाम अङ्गद की पुरी रक्खा और बड़े बलवान् चन्द्रकेतु मल्ल के लिये मल्ल भूमि में चन्द्रकान्ता नाम पुरी को बसाया। वह पुरी स्वर्ग पुरी की भांति बड़ी रमणीय थी और यह सब प्रबन्ध कर तीनों भाई अति प्रसन्न हुये और उन दोनों को अभिषेक कर अङ्गद को पश्चिम भूमि में और चन्द्रकेतू को

उत्तर भूमिमें प्रस्थान करवाय दिया । अङ्गद के साथ लक्ष्मण और चन्द्रकेतू के साथ भरत चले । लक्ष्मण अङ्गदीया पुरीमें अपने पुत्रको बैठाय और वर्षभर वहां रहकर फेर अयोध्यापुरी में लौट आये । इसी प्रकार भरत भी कुछ अधिक वर्ष तक चन्द्रकेतूके साथ रह फेर अयोध्या में आय रामचन्द्र के चरणों में लगे । इस प्रकार लक्ष्मण और भरत दोनों रामचन्द्र के शुश्रूषा में तत्पर रहते और धर्म्म से सम्पूर्ण व्यवहार करते स्नेह से बहुत काल का बीत जाना न जानते भये । इस प्रकार राज्यशासन करते महाराज के दश हजार वर्ष बीत गये ।

इति वाल्मीकिये उत्तरकाण्डे पञ्चदशोत्तर शततमः सर्गः ॥ ११५ ॥

कुछ काल बीतने पर काल जो है सो तपस्वीका रूप धारण किये राजद्वार पर आनकर उपस्थित हुआ और वहाँ खड़े हुए लक्ष्मण से बोला कि मेरे आने का संदेशा महाराज को देओ और कहो कि अतिबल महर्षि का दूत कुछ कार्यवश से आपके देखने की इच्छा से आया है सो क्या आज्ञा है । ऐसा उसका बचन सुन लक्ष्मण ने शीघ्र जाय महाराज से इस बात का निवेदन किया कि हे महाद्युते ! राजधर्म से आप दोनों लोकों का जप कीजिये । सूर्य के समान तेजस्वी एक तापस रूप दूत आपके देखने के लिये आया है । ऐसा लक्ष्मण का बचन सुन महाराज बोले शीघ्र उसको ले आओ । ऐसी आज्ञा पाय लक्ष्मण ने जाय तपस्वी से कहा जाइये महाराज बुलाते हैं । ऐसी आज्ञा पाय महर्षि भीतर जाय मधुर बाणी से "आप वृद्धि को प्राप्त होइये" ऐसा बचन बोला । अनन्तर महाराज ने अर्घ्य पाद्यार्घ्य इत्यादि से मुनि की पूजाकर कुशल पूछने को आरम्भ किया और मुनि अच्छे दिव्य सुवर्ण के आसन पर बैठे । तब महाराज ने कहा हे महर्षि ! तुम्हारा स्वागत हो अब कहिये क्या संदेशा है । इस प्रकार महाराज का बचन सुन मुनि बोले हे राजन् ! इस संदेशे को एकान्त में मैं कहना चाहता हूं । जहां कि हम और आप दोही रहैं और हम दोनों की बात चीत में यदि तीसरा सुने वा देखे तो अपवाह

का वध्या हो । ऐसाही मुनि का कहना है। ऐसा ऋषि का बचन सुन
महाराज ने अंगीकार कर लक्ष्मण से कहा कि हेसौमित्रे ! तुम जाय
कर द्वार पर खड़े रहो । और द्वार पाल को बिदाकर देओ हम दोनों
को बतियाते कोई देखने वा सुनने न पावे, और यदि कोई ऐसा करेगा
तो मेरे हाथ से मारा जायगा। ऐसी प्रभु कि आज्ञा पाय, लक्ष्मण द्वार
पर जाय खड़े भये। तब महाराज ने मुनि से कहा कि अब आप कहिये ॥

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे षोड़शोत्तरशततमः सर्गः ॥११६॥

मुनि बोले—हेमहापराक्रम सुनिये, जिस लिये मैं आया हूं मैं आप
के पूर्वावस्था का अर्थात् हिरण्य गर्भ की उत्पत्ती काल में माया संकल्प
से उत्पन्न किया गया तुम्हारा पुत्र हूं। और सब जगत् का संहार
करने वाला काल मेरा नाम है। हेमहाराज ब्रह्मा ने कहा है कि इन
लोकों की रक्षा के लिये आपही ने समय का स्थापन किया है।
आपही पूर्व काल में माया के द्वारा लोकों को बटोर महा सागर में
सोये और उसी समय में एक बड़े नाग को जो रसातल का बासी है आपने
उत्पन्न किया। और दो जीवों को जिनका नाम मधु और कैटभ है
जिनके हड्डियों से यह संपूर्ण पृथ्वी भर गई और मेदनी कहलाई और
आपही ने अपनी नाभी से दिव्य कमल को उत्पन्न कर प्रजा पत्य कर्म
का भार मेरे ऊपर स्थापन किया सो तब मेरे ऊपर भार स्थापन किया
गया। तब मैंने उपास्य और जगत्पति ऐसे आप से प्रार्थना की कि
हे प्रभो सृष्टि का भार तो मेरे ऊपर आपने रक्खा परन्तु अब इसकी
रक्षा का भार आप अपने ऊपर [illegible]। क्योंकि मेरे तेज के दाता
आपही हैं तब आपने उस सनातन और दुर्धर्ष भाव को छोड़ जगत्
की रक्षा के लिये बिष्णु रूप को धारण किया और अदिति के गर्भ
से उत्पन्न हुये अपने भाइयों के वीर्य को बढ़ाते कार्य कालों में आप
उनकी सहायता करते रहे। सो जब यह रावण प्रजाओं को बहुत दुःख
देने लगा तब आपने मनुष्य रूप धारण किया और उसके पहिले
ग्यारह हजार बर्ष पृथ्वी पर मैं रहूंगा ऐसा नियम आपही ने किया था।

सो आप तो केवल आत्ममनः संकल्प रूप किसी के पुत्र हुये और आप के आयुष्य का संकल्प भी पूरा हो चुका इस बात की सूचना देने के लिये मैंने यह दूत भेजा है, अब इसके उपर फेर आप प्रजा पालन करना चाहते हैं तो बहुत अच्छी बात है रहिये, अथवा इसी शरीर से देव लोक के शासन की इच्छा यदि महाराज को हो तो बहुत अच्छी बात है। आपके शासन से देव लोक कृतार्थ और ताप रहित हो जायँगे। सो ब्रह्मा ने कहा है इसके ऊपर जैसी महाराज की इच्छा ऐसी पितामह का वचन काल के मुख से सुनकर महाराज हँसकर बोले कि देव देव का वचन सुन मैं बहुत प्रसन्न हुआ। तीनों लोकों के कार्य के लिये मेरा अवतार है सो बहुत अच्छा जहां से मैं आया हूं वहां मैं जाऊंगा। तुम मेरे हृदय ही में थे अर्थात मैं तुम्हारी बाट जो रहा था। इसलिये मुझे इस बात में कुछ विचारना नहीं है॥

इति वाल्मीकिये उत्तरकांडे सप्तदशोत्तरशततमः सर्गः॥११७॥

इधर तापस और महाराज की बात चीत होही रही थी कि इतने में रामचन्द्र के दर्शन की आकांक्षा से दुर्वासा मुनि आय के द्वार पर उपस्थित हुये और लक्ष्मण से बोले कि मुझे रामचन्द्र को शीघ्र दिखलाओ नहीं तो मेरा प्रयोजन नष्ट होता है। ऐसा मुनि का वचन सुन लक्ष्मण हाथ जोड़ बोले—हे भगवन्! आपका क्या कार्य है और प्रयोजन है सो कहिये मैं कर दूं क्योंकि महाराज इस घड़ी किसी कार्य में व्यग्र हैं। मुहूर्त मात्र ठहर जाइये। ऐसा लक्ष्मण का वचन सुन ऋषि क्रोध से लाल होगये और लक्ष्मण के ओर ऐसा देखने लगे कि मानो भस्म कर देंगे और बोले—हे लक्ष्मण! इसी क्षण में रामचन्द्र से मेरा निवेदन करो नहीं तो मैं तुम्हारे देश पुर और रामको भी शाप दूंगा। भरत को और तुमको तथा तुम्हारी संतति को भी क्योंकि अब मैं इस क्रोध को हृदय में धारण नहीं कर सक्ता। ऐसा मुनि का उग्र वचन सुन लक्ष्मण ने अपने मनमें सोचा कि एक मेरा ही मरना ठीक है, ऐसा न हो कि सर्व नाश हो। ऐसा मनमें सोच झट जाय महाराज से मुनि

का निवेदन किया। लक्ष्मण का वचन सुनतेही महाराज ने काल को विदाकर शीघ्र बाहर आय अत्रि के पुत्र दुर्वासा को देखा और प्रणाम करके पूछा भगवन् क्या कार्य है। ऐसा राघव का वचन सुन मुनि बोले—हेराघव! आज मेरी हजार वर्ष की समाप्ति हुई है सो मैं भोजन चाहता हूं। जो आप के यहां इस घड़ी सिद्ध हो सो दीजिये। तब रामचन्द्र अति प्रसन्न हो सिद्धान्न मंगवाय मुनि को भोजन दिया और मुनि ने उस अमृत तुल्य अन्न का भोजन कर साधु रामचन्द्र साधु ऐसा कह अपने आश्रम की यात्रा की। परन्तु रामचन्द्र काल के वाक्यों को स्मरण कर हृदय में अति दुःखित हो नीचे मुखकर सोचने लगे और सोच विचार कर निश्चय किया कि बस हो चुका अब मेरे भृत्य और परिजनों की समाप्ति का समय आ पहुंचा॥

इति बाल्मीकिये उत्तरकांडे अष्टदशोत्तरशततमः सर्गः॥११८॥

अब नीचे मुख किये दीन ऐसा रामचन्द्रको देख हर्षित हो लक्ष्मण बोले। मेरे लिये आप संताप न कीजिये क्योंकि काल की गति ऐसी ही है और पहिले ही से इसका निर्मण हो चुका है। अब आप अपनी प्रतिज्ञा का पालन करें और मेरा घात करें। क्योंकि प्रतिज्ञा हीन नर नरक में जाते हैं। जो आप मेरे ऊपर प्रीति रखते हों और अनुग्रह दृष्टि करें तो मुझे मारें और शंका को छोड़ देवें। ऐसा लक्ष्मण का वचन सुन रामचन्द्र व्याकुलेन्द्रिय होगये। तब रामचन्द्र ने मंत्री और पुरोहितों को इकट्ठा कर उनसे यह सब वृत्तान्त लक्ष्मण के विषय की सुनाई तब वे मंत्री और उपाध्याय इन बातों के सुन चुप हो रहे। परन्तु वसिष्ठ मुनि बोले कि हे महाबाहो तुम्हारा यह महान् क्षय देख पड़ा जिसके देखने से रोयें खड़े होगये हैं। सो लक्ष्मण से आप का वियोग होगा। आप इनका त्याग कर दीजिये काल बलवान है आप अपनी प्रतिज्ञा को वृथा न कीजिये। क्योंकि प्रतिज्ञा नाश करनेसे धर्मका लोप होता है और जब धर्म नष्ट हुआ तो चराचर देवर्षिगण सहित यह त्रैलोक्य नाश को प्राप्त होगा। इसलिये हेपुरुष शार्दूल त्रैलोक्य के पालन के लिये इस जगत

को लक्ष्मण के बिना करके स्वच्छ कर दीजिये। इस प्रकार धर्मार्थ युक्त उस भुन्ड का वचन सुन राम लक्ष्मण से बोले—हे सौमित्रे मैं तुम्हें बिदा करता हूं। जिसमें धर्म की बाधा न हो, साधु लोगोंने त्याग और बध दोनों बराबर कहा है, ऐसा प्रभु का बचन सुन लक्ष्मण आंखोंमें आंसू भर व्याकुलेन्द्रिय हो झट महाराज की सभा से बाहर निकल गये और अपने घर में भी प्रवेश न किया और उसी क्षण में उन्हों ने सरयू तट पर जाय आचमन कर हाथ जोड़ सब इन्द्रियों को रोक स्वास बन्द कर दिया। इनको इस प्रकार योगाभ्यास करते देख इन्द्रादि देवते, अपसरागण, और महर्षि गण इनपर पुष्प वृष्टि करने लगे और इन्द्र वहां आय उस मनुष्य शरीर के सहित लक्ष्मण को उठाय अपनी अमरावती में चले गये। यह बात किसी मनुष्य ने न देखा इस प्रकार विष्णु के चतुर्थांसरूप लक्ष्मण के आप जाने से देवगण अति प्रसन्न हो राम की सराहना करने लगे ॥ इह।

इति वाल्मीकिये उत्तराकांडे उनविंशत्यधिकशततमः सर्गः ॥११९॥

इस प्रकार श्रीराघव लक्ष्मण को बिदा कर दुःख शोक से पीड़ित हो पुरोहितों से और मंत्रियों और महाजनों से बोले। देखो अब मैं अयोध्या के राज्य पर भरत को अभिषेक देकर स्वयं बनमें प्रवेश करूंगा। सो शीघ्र अभिषेक के संभार इकट्ठे किये जायें। जिसमें बिलंब न हो क्यों कि आजही मैं लक्ष्मण [illegible] का अनुसरण किया चाहता हूं। ऐसा प्रभुके मुखसे निकलते [illegible] उतने लोग उस सभा स्थान में इकट्ठे थे अर्थात् मंत्री सचिव आमात्य, महाजन, मित्रगण, ब्राह्मण मुनि सबके सब अधोमुख हो गिर पड़े और प्राण रहित की तरह हो गये और भरत भी मूर्छित हो गये। परन्तु क्षणमें सचेत हो राज्य निदा करते यह बोले। हे रघुनन्दन मैं सत्य की और स्वर्ग भोग की सपथ खाकर कहता हूं कि तुम्हारे बिना मैं राज्य नहीं चाहता आप अपने इन दोनों पुत्रों को अभिषेक कीजिये। कोशल देशों का राजा कुशको और उत्तर भागके देशों में लवको स्थापन कीजिये और शत्रुघ्न के

पास दूत भेजे जायें और उनको हमारे महा प्रस्थान का संदेश दिया
जाय । ऐसा भरत का बचन और पुरबासियों को अति दुःखित संतप्त
देख बसिष्ठ मुनि बोले । हे बत्स राम ! इन अपनी प्रकृतियों की ओर
देखो कि ये भूमि पर लोट रही हैं, सो इनको जो अकांक्षित हो सो
आपको करना उचित है । नकि इनके मन के विरुद्ध कोई बात आप
करें ऐसा बसिष्ठ का बचन सुन महाराजने प्रकृतियों को उठाया और
पूछने लगे कि मैं तुम्हारे लिये क्या करूं ? ऐसा प्रभुका बचन सुन
सबके सब बोल उठे कि हे राम ! जहां आप चलेंगे तहां आपके पीछे
पीछे हम सब भी चलेंगे । यदि पुरबासियों पर आपकी प्रीति और
उत्तम स्नेह होतो हम सब पुत्र कलत्र के सहित आपके साथ सत्पथ
को चलेंगे । हे प्रभु ! यदि आप हम सबको छोड़ना न चाहें तो चाहे
आप तपोबन में वा दुर्गम स्थान में वा नदी में वा समुद्र में जायँ वहां
भी हमको ले चलिये इसी में हम लोगों पर परम प्रीति है और यही
हमारे लिये परम बर है और हे राजन् आपके अनुचर होने में सर्वदा
हमारी प्रीति बनी रहती है । ऐसी पुरबासियों की दृढ़ भक्ती देख और
अपने सिद्धान्त को बिचार महाराज ने अङ्गीकार कर लिया । और
पूर्वोक्त स्थानों में अपने दोनों पुत्रोंको अभिषेक कर दिया । अभिषेक
दे उन दोनों को गोदी में बैठाय उनका मस्तक सूँघ अपने अपने
नगरों में बिदा किया और हजार धन वाले रथ दश दश हजार हाथी,
लाख लाख घोड़े एक एक के सहित दिये और बहुत बहुत रत्न बहुत
बहुत धन की राशिके सहित हृष्ट पुष्ट जनों को संग कर सावधानी
करदी और इधर शत्रुघ्न के पास दूतों को भेजा ।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे बिंशत्यधिक शततमः सर्गः ॥१२०॥

अब वे दूत मधुरा नगरी को चले, मार्ग में कहीं न टिककर तीन
रात्रि दिन में वहां जाय पहुंचे और लक्ष्मण का त्याग रामचन्द्र की
प्रतिज्ञा, पुत्रों का अभिषेक, पुरबासियों का महाराज के साथ चलना,
कुश के लिये बिंधपर्वत के तटपर कुशावती, लवके लिये श्रावस्ती इन

दोनों नगरियों का बसाना रामचन्द्र और भरत का अयोध्या नगरी को निर्जनकर स्वर्ग जाने के लिये उद्योग करना। यह सब समाचार दूतों ने शत्रुघ्न को कह सुनाया और कहा कि अब शीघ्रता कीजिये। इस प्रकार का घोर कुलक्षय का समाचार सुन शत्रुघ्न ने अपनी प्रकृतियों को और कांचन नाम प्रोहित को बुलवाय यह सब समाचार उनसे कहा और भाइयों के साथ अपना भी भविष्य कह दिया। तदन्तर अपने पुत्रों को मधुरा में सुबाहु को और बैदिश नगर में शत्रुघाती को स्थापन किया और सेना तथा धनका दो विभाग करके दोनों को बाँट दिया, इस प्रकार से प्रबन्धकर एक रथ पर बैठ अयोध्या को चले अयोध्या में आय महाराज का दर्शन किया। जो सूक्ष्म क्षौम वस्त्र को पहिने मुनियों के साथ विराज मान होरहे थे और हाथ जोड़ कर बोले। हे राजन्! मैं अपने दोनों पुत्रों को राज्य दे आप के साथ चलने को उपस्थित हूं और इसके ऊपर आप कुछ दूसरी बात न कहियेगा। क्यों कि मैं [illegible] चाहता कि आपके शासन का उल्लंघन करूं। इस प्रकार शत्रुघ्न का निश्चय देखकर महाराज बोले बहुत अच्छा। अब इधर उधर की बात होती ही थी कि इतने में आगे सुग्रीव को किये बानर और भालुओं के झुण्ड आन पहुंचे। और देवते तथा ऋषियों के पुत्र और गन्धर्वों के पुत्र सब रामचन्द्र के परम पद जाने का समाचार पाय इकट्ठे हुये से बोले कि हे रामचन्द्र यदि आप हमको छोड़कर चले जायँगे तो [illegible] यमदण्ड से हमारा घात करेंगे। इसके अनन्तर सुग्रीव भी अति नम्रतासे प्रणाम कर बोले कि हे प्रभु! मैं अङ्गद को राज्य दे आपका अनुगामी होने को आया हूं ऐसा बचन सुन प्रभु ने अङ्गीकार किया। इसके बाद रामचन्द्र विभीषण से बोले कि हे राक्षसेन्द्र जब तक यह प्रजागण हैं तब तक आप लंका में स्थित रहिये। और जब तक यह सूर्य चन्द्रमा हैं और जब तक यह मेरी कथा लोकमें स्थित रहेगी तब तक आपका राज्य स्थिर रहेगा। और भी सुनो इक्ष्वाकु वंश के इष्ट देव श्री जगन्नाथ हैं जो सर्वदा आराध

नीय है इन्द्रादि देवतों ने पूजा हैं उनकी आप आसधना करते रहिये। एसा महाराज का बचन विभीषण ने अङ्गीकार किया तब महाराज हनुमान् से बोले। हे हनुमान् तुमने अपने जीवन के लियें निश्चय कर रक्खा है सो प्रतिज्ञा वृथा न कीजिये। सो जब तक लोकमें मेरी कथा का प्रचार रहै तब तक तुम आनन्द करो ऐसा बचन सुन वायु पुत्र बोले हां महाराज यह पवित्र करने वाली आपनी कथा जब तक भूतल पर रहेगी तब तक मैं जीता रहूंगा। तब जाम्बवान् से जो वृद्ध ब्रह्मा के पुत्र थे और मयन्द से तथा द्विविद से भी प्रभु बोले कि कलि तक तुमलोग जीते रहो। अर्थात् कलिके प्रलय में कृष्णावतार तक तुम देह त्याग करोगे।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे एकविंशोत्तरशततमः सर्गः ॥ १२१ ॥

अब प्रातःकाल होतेही महाराज ने पुरोहित से कहा कि ब्राह्मणों के सहित मेरा अग्नि होत्र प्रज्जलित आगे चले और बाजपेय का अति शोभित छत्र भी मेरे साथ चले। वसिष्ठ मुनि ने महाप्रस्थान के लिये जो धर्म विधि रही सो सबकर दिया। उसके बाद महाराज बेदों उपनिषदों को पढ़ते हाथ में कुशों को ले सरयू की ओर चले और मार्ग में न कुछ बोलते न चेष्टा करते उदासीनता को धारण किये प्रकाशमान सूर्यकी नाईं चले जाते थे बड़े बड़े ऋषि और ब्राह्मण मंडली ये सबके सब अनुसरण करते जाते थे महाराज के पीछे पीछे अंतःपुरकी सब स्त्रीयां वृद्धा दासी चली जाती थी। उस समय स्वर्ग में ब्रह्म लोक का फाटक खुल गया। अंतः पुरके सहित भरत और शत्रुघ्न भी अग्निहोत्र के सहित रामचन्द्र के अनुगामी हो रहे थे। और सब मन्त्री गण और भृत्य गण ये सब स्त्री पुत्र पशु और बांधवों के साथ लिये बड़े हर्ष से अग्नि होत्र को प्रज्वलित किये सब प्रजागण अपने हृष्ट पुष्ट जनों को साथ लिये और अपने सब पशु पक्षियों के सहित निष्पाप हर्ष से भरे महाराज के रूप गो एक हो पीछे चले जाते थे। इसके बाद स्नान किये और

हर्ष युक्त हृष्ट पुष्ट ऐसे सब बानर किलकिला शब्द करते रघुनन्दनके पीछे दौड़े जाते थे । उस समय बड़े आश्चर्य की बात तो यह थी कि न कोई दीन न लज्जित न दुःखित कोई देख पड़ता था । जिसे देखा वही प्रसन्न दिखाई देता था । अब यह बात तो अयोध्या बासी लोगों की हुई । मार्ग में इतर नगर बासी लोग जो उस प्रस्थान कालमें प्रभु को देखने के लिये आते थे व सब भी महाराज के पीछे हो लेते थे । और कहां तक कह जाय स्थावर जंगम पशु पक्षी जो राघव को जाते देखता वह भी महाराज के संग होते ।

इति बाल्मीकिये उत्तरकाण्डे द्वाविंशाधिक शततमःसर्गः ॥ ११२ ॥

इस प्रकार चलते चलते दे० काश पर जाय श्रीरामचन्द्र ने सरयू नदी को जो पश्चिम वाहिनी और पवित्र प्रवाह से बह रही थी देखा और प्रजा लोगों के सहित महाराज हो गये । उस काल देव मंडली को साथ लिये ब्रह्मदेव आकाश में आकर उपस्थित हुये । उनके साथ दिव्य सौ कोटि विमान थे और उस समय आकाश ऐसे दिव्य तेजों से भर गया था मानो ज्योतिर्मय होगया । स्वर्ग बासी जो अपने ही तेजों से प्रकाश मान थे पिता के संग आये थे उस समय सुगंध युक्त सुखद और पवित्र वायु बहने लगे । गंधर्व और अप्सराओं से आकाश भर गया । चारों तरफ से दुंदुभी बजने लगी । रामचन्द्र सरयू के जल में चले । उस समय पितामह ने आकाश में से बोले कि हे विष्णो आइये आपका आगमन बड़ा आनन्ददायक हुआ । आप इन देव तुल्य भाइयों के साथ आइये और अपने शरीरमें प्रवेश कीजिये । हेदेव ! आप लोक गति हैं आपको कोई नहीं जानता केवल यह माया देवी जो आपकी पूर्व पत्नी आदि शक्ति हैं आप को जानती हैं । आप अचिंत्य महा भूत, अक्षय और जरा रहित हैं । ऐसी पिता महकी स्तुति सुन महाराज ने शरीर और अपने दोनों भाइयोंको लिये वैष्णव तेजमें प्रवेश किया उस कालमें विष्णु रूप देव को साध्य मरुद्गण और इन्द्र के सा । और देवते अग्नि को आगे कर पूजने लगे और दिव्य ऋविदा आराध

अप्सरा सुपर्ण नाग यक्ष दैत्य दानव राक्षस इत्यादि सब हृष्ट पुष्ट और पूर्ण मनोरथ हो धन्य धन्य ऐसे शब्द से स्तुतिकरने लगे। स्वर्ग संपूर्ण पवित्र हो गया। इसके बाद विष्णु भगवान पितामहँ से बोले कि हे ब्राह्मण! इन जन समूहों को स्वर्ग में ठहराओ जहां ये सब आनन्द से रहें। क्योंकि ये सब स्नेह पूर्वक मेरे पीछे चले आये ये सब मेरे भक्त होने के कारण प्रीति प्राप्तता के योग्य हैं। ऐसा विष्णु का वचन सुनकर ब्राह्मण बोले। हे भगवन्! ये सब लोग संतानक नाम लोकों में जायकर सुख से निवास करेंगे और हे प्रभो तिर्यग्योनि वाले ने भी जिन्होंने आपका ध्यान करते हुये प्राणों को त्यागा है वे भी इन्हीं सन्तान लोक में निवास पावेंगे। ये सन्तान लोक ब्रह्म लोक के पार है। सब सुख इसी लोक के सदृश्य उसमें भी है। वहां के संपूर्ण वासी ब्रह्माही के साथ मुक्त हो जाते हैं। अब इसके बाद बानर और भालु जिन जिन देवसे रों से निकले थे, उन उनमें लीन हो गये। सुग्रीव सूर्य मंडल में ये हो कर गया। जिस समय यह सब बातें हो रहीं थी सब देवते भी खड़े देख रहे थे। अब ब्रह्मा ऐसी बात चीत करही रहे थे कि महाराज के अनुगामी लोग गोप्रतार तीर्थ में पहुचे हर्ष के आंखोंमें आंसू के सरयू नदीमें पैठ गये। उसी क्षण में मनुष्य देह का त्यागकर जगत्में शरीर को पाय, विमानों पर जाय चढे। कहां तक कहैं क्षुद्रधन, तिर्यग्योनि वाले भी सैकड़ों अति प्रकाशमान दिव्य शरीरकी सृष्टि न देवतों की भांति प्रकाशमान हो गये। स्थावर जंगम जितने जीव थे सब सरयू जल के स्पर्श से स्वर्ग गामीहुये। ऋक्ष बानर और राक्षस ये लोग भी स्वर्ग में गये और इनके शरीर सरयू में रह गये

अर्षमीकिये उत्तरकांडे त्रयोविंशाधिक शततमः सर्गः ॥१२३॥

रूप ग

उपसंहार ।

उत्तर काण्ड के [illegible] इतनी यह कथा रामायण इस नाम से प्रसिद्ध है और ब्रह्म देव भी इस कथा की बड़ी प्रसंसा की श्रीवाल्मीकी महर्षि के मुख से यह कथा संपूर्ण हुई । अब पूर्व की नाईं स्वर्ग लोक में श्रीविष्णु भगवान् जन्होंने संपूर्ण चराचर त्रैलोक्य को व्याप्त कर लिया [illegible] हुये । देव, गंधर्व, सिद्ध, और महर्षि, ये सब इस रामायण काव्य को सुनने लगे यह कथा पापों के नाश करने वाली है इसके भक्ति पूर्वक सुनने से अपुत्री को पुत्र और निर्धन को धन मिलता है । जो पुरुष [illegible] पापी है या जो रोज पाप कमाता है वह भी पढ़े तो संपूर्ण पापों से छूट जाता है इससे आयु बढ़ती है । इसका नित्य पाठ करने वाला [illegible] लोक में यश और परलोक में मुक्ती को पाता है । [illegible] प्रातःकाल वा मध्यानकाल, वा सायंकाल में जो पढ़ते हैं वे [illegible] पाते । अयोध्यापुरी बहुत काल तक जन शून्य रहेगी इस [illegible] राजा फिर इसको बसावेगा ।

इस कथा को [illegible] और उत्तर के सहित प्रचेना के पुत्र श्रीवाल्मीकि ने बनाया और श्रीब्रह्मदेव ने इसको अंगीकार किया ॥

इति [illegible] उत्तरकांडे समाप्त ॥

[illegible]

[illegible]

नोटिस ।

हमारे यहां काशी का उत्तम जनेऊ मिलता है [illegible] गांठ उत्तम ९६ चउवा का बना हुआ १ कोड़ी का दाम ॥) से लेकर १) रुपैया तक मिलता है ब्राह्मण गाठ का चउवा ९६ दर १) से लेकर १० रुपया तक वैश्यगांठ का [illegible] आने से लेकर एक रुपया तक जिस महाशय को मंगाना हो वह जिस वर्ण का चाहिये [illegible] और बैपारी भाई अगर हमारा तो पत्र में लिख दें कि बैपाराना भाव से चाहिये । [illegible] पो० जिला साफ २ होना किरी हर प्रकार की पुस्तक नाटक व [illegible] मिलने का पता—

बाबू हरिनारायण बर्मा [illegible] आराध

[illegible] गली